ऐतिहासिक स्थानावली

लेखक

विजयेन्द्र कुमार माथुर, एम० ए०

वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी,
वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग,
शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग

शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार

प्रथम संस्करण, वर्ष 1969

मूल्य 18.00

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, शिक्षा मंत्रालय द्वारा प्रकाशित
शाहदरा प्रिंटिंग प्रेस के 18 द्वारा मुद्रित

प्रस्तावना

भारत सरकार की निश्चित और दृढ नीति है कि शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाओ को होना चाहिए। यह निश्चिय भारतीय विश्वविद्यालयो के कुलपतियो द्वारा तथा सघ की ससद् द्वारा अनुमोदित है और यह प्रयत्न है कि शीघ्रातिशीघ्र अग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषाएँ माध्यम का रूप ग्रहण कर लें। इस अभिप्राय को कायरुप देने के लिए यह आवश्यक है कि भारतीय भाषाओ मे पारिभाषिक शब्दावली निश्चित हो जाय और तब आवश्यक साहित्य उपस्थित किया जाय। इस आयोग की स्थापना इसी अभिप्राय स 1961 मे हुई थी और और तब से प्रथमत पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण इस आयोग का मुख्य ध्येय रहा है। यह शब्दावली अब प्राय सर्वांश मे तैयार है और इसका उपयोग ग्रथो के निर्माण मे किया जा रहा है। विश्वविद्यालय स्तर के उच्च कोटि के प्रामाणिक ग्रथो को उपस्थित करना भी इस आयोग का उद्देश्य है। इस निमित्त आयोग ने विविध साधना के द्वारा अग्रेजी आदि भाषाओ से ग्रथो का अनुवाद कराया है और कुछ मौलिक ग्रथ भी उपस्थित किये हैं। प्रस्तुत ग्रथ इतिहास और भूगोल की दृष्टि से बहुत महत्व रखता है। इसके पूव अग्रेज विद्वानो ने इस दशा मे काम किया था। अब हिन्दी मे भी यह सामग्री श्री विजयेन्द्र कुमार माथुर द्वारा प्रस्तुत की जा रही है। श्री माथुर इस आयोग मे वरिष्ठ अनुसधान अधिकारी हैं और इन्होने इस विषय का बडे परिश्रम से अध्ययन किया है। हमे विश्वास है कि इस ग्रथ से हिन्दी साहित्य की श्रीवद्धि होगी और इसका सभी क्षेत्रो मे स्वागत किया जायगा।

बाबूराम सक्सेना
अध्यक्ष
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

26-2-69
नई दिल्ली

दो शब्द

प्राचीन भारतीय साहित्य की एक महत्त्वपूण विशेषता यह है कि उसमे प्रतिबिंबित जनजीवन मे भौगोलिक चेतना का पूण रूप से सन्निवेश है। इसका एकमात्र कारण यही हो सकता है कि हमारे पूवपुरुष अपने विशाल देश के प्रत्येक भाग से भली प्रकार परिचित थे तथा उनको भारत के बाहर के ससार का भी विस्तृत ज्ञान था। वाल्मीकि रामायण, महाभारत, पुराणादि ग्रथो तथा कालिदास आदि महाकवियो की रचनाओ मे प्राप्त भौगोलिक सामग्री की विपुलता इस बात की साक्षी है। वास्तव मे प्राचीन भारतीय सभ्यता और सस्कृति एकता के जिन सुदृढ सूत्रो मे निबद्ध थी उनमे से एक सूत्र भारतीयो की व्यापक भौगोलिक भावना भी थी जिसके द्वारा सारे भारत के विभिन्न स्थान—पर्वत, वन, नदी नद, सरोवर, नगर और ग्राम उनके सास्कृतिक एव धार्मिक जीवन का अभिन्न अग ही बन गए थे। वाल्मीकि, व्यास और कालिदास के लिए हिमालय से कन्याकुमारी और सिंधु से कामरूप तक भारत का कोई कोना अपरिचित या अजनबी नही था। प्रत्येक भूभाग के निवासी, उनका रहन-सहन, वहा के जीवजन्तु या वनस्पतिया और विशिष्ट दृश्यावली—ये सभी तथ्य इन महाकवियो और मनीषियो के लिए अपने ही और अपने घर के समान ही प्रिय एव परिचित ह। वाल्मीकि रामायण के किष्किधाकाड, महाभारत के वनपव और कालिदास के मेघदूत और रघुवश के चतुथ एव त्रयोदश सर्गो के अध्ययन से उपर्युक्त धारणा की पुष्टि होती है। इनने प्राचीन काल मे जब भारत मे यातायात की सुविधाए अपेक्षाकृत बहुत कम थी, भारतीयो की स्वदेश विषयक भौगोलिक एकता की भावना को जगाए रखन मे इन राष्ट्रीय एव लोकप्रिय कविगणो ने जो महत्त्वपूण योग दिया था उसका मूल्य आकना भी हमारे लिए आज सभव नही है।

बौद्ध साहित्य में, विशेषकर जातका मे, तथा जैन साहित्य के तीथग्रथा मे भी हमे इसी भौगोलिक चेतना के दशन होत है।

ग्रंथ के नामकरण में मैंने 'ऐतिहासिक' शब्द में इतिहास के अतिरिक्त प्राचीन साहित्य, परंपरा और अनुश्रुति का भी समावेश किया है। मध्यकालीन स्थान-नामों को भी इस कोश में रखा गया है क्योंकि भारतीय इतिहास की परंपरा के निरंतर प्रवाह ने उसकी अविच्छिन्न सांस्कृतिक एकता को सभी कालों में अनुप्राणित किया है और इस दृष्टि से सारे इतिहास की मूलधारा को कालों में विभाजित नहीं किया जा सकता। केवल आधुनिक समय (ब्रिटिशकाल के पश्चात) को ही मैंने प्राचीन इतिहास के क्षेत्र से बाहर समझा है।

ग्रंथ की रचना में मूल स्रोतों के अतिरिक्त वर्तमान समय में हिन्दी, अंग्रेजी या अन्य भाषाओं में लिखे गए अनेक ग्रंथों, कोशों, और पत्र-पत्रिकाओं से सहायता ली है (देखें सहायक ग्रंथ सूची), जिनके लेखकों के प्रति मैं धन्यवाद प्रकट करता हूं।

इस पुस्तक के लिखने की प्रेरणा अनेक वर्ष हुए 1945 में, प्रसिद्ध भाषाविद डा० सिद्धेश्वर वर्मा से मुझे मिली थी। उन्होंने इसकी प्रगति में भी सदा ही अपनी गहरी अभिरुचि रखी है और भांति भांति के, विशेषकर स्थान-नामों की व्युत्पत्ति के संबंध में, सुझाव देकर मुझे अनुगृहीत किया है। [illegible] डा० बाबूराम सक्सेना (भूतपूर्व उपाध्यक्ष तथा वर्तमान अध्यक्ष वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग) ने इस पुस्तक को [illegible] की मानक ग्रंथ प्रकाशन-योजना के अंतर्गत [illegible]

ऐतिहासिक स्थानावली

अक्लेश्वर (गुजरात)

भड़ौच से पाच मील है। प्राचीन समय मे नर्मदा यही बहती थी, अब तीन मील दूर हट गई है। कहा जाता है कि माडव्य ऋषि और शाडिली जिनकी कथा महाभारत मे है, इसी स्थान के निवासी थे। यह कथा महा० आदि० 106–107 मे वर्णित है जहा माडव्याश्रम का उल्लेख इस प्रकार है—'बभूव ब्राह्मण कश्चिन्माडव्य इति विश्रुत, धृतिमान सर्वधर्मज्ञ सत्य तपसि च स्थित। स आश्रमपदद्वारिवृक्षमूले महातपा।' 'ऊर्ध्व बाहुर्महायोगी तस्थौ मौनव्रतान्वित।' अक्लेश्वर मे माडव्येश्वर नामक प्राचीन शिवमदिर है।

अकाईतकाई = अर्णाकिटणकी

अकोटक (ज़िला बड़ौदा, गुजरात)

गुप्तकाल मे अकोटक की गणना लाट देश के मुख्य नगरो मे की जाती थी। खुदाई म अनेक प्राचीन जैन धातु-प्रतिमाए यहा से प्राप्त हुई थी जिनमे से कुछ का परिचय जरनल ऑव ओरियटल इस्टीटयूट, बड़ौदा, जिल्द 1, पृ० 72–79 मे दिया गया है। एक जिनाचार्य की प्रतिमा पर यह अभिलेख उत्कीर्ण है – 'आ देव धर्मोऽय निवृत्ति कुले जिनभद्र वाचनाचार्यस्य'। गुजरात के पुरातत्त्व के विद्वान् श्री उमाकात प्रेमानद शाह का कथन है कि ये जिनभद्र क्षमाश्रमण-विशेषावश्यक भाष्य के रचयिता ही हैं। वे इस प्रतिमा का निर्माणकाल, अभिलेख की लिपि के आधार पर, 550–600 ई० मानते हैं।

अग (उत्तर बिहार)

अग देश का सर्वप्रथम नामोल्लेख अथर्ववेद 5,22,14 मे है—'गधारिभ्यो मूजवद्भयाङ्गेभ्यो मगधेभ्य प्रैष्यन जनमिव शेवधि तक्मान परिदद्मसि।' इस

अप्रशसात्मक कथन से सूचित होता है कि अथर्ववेद के रचनाकाल (अथवा उत्तर-वैदिक काल) तक अग मगध की भाति ही, आर्य सभ्यता के प्रसार के बाहर था जिसकी सीमा तब तक पजाब से लेकर उत्तर प्रदेश तक ही थी। महाभारतकाल मे अग और मगध एक ही राज्य के दो भाग थे। शाति० 29, 35 ('अग बृहद्रथ चैव मृत सृ जय शुश्रुम') मे मगधराज जरासध के पिता बृहद्रथ को ही अग का शासक बताया गया है। शाति० 5, 6–7 ('प्रीत्या ददौ स कर्णाय मालिनी नगरमथ, अगेषु नरशार्दूल स राजासीत सपत्नजित। पाल्यामास चपा च कर्ण परबलार्दन, दुर्योधनस्यानुमते तवापि विदित तथा') से स्पष्ट है कि जरासध ने कर्ण को अगस्थित मालिनी या चपापुरी देकर वहा का राजा मान लिया था। तत्पश्चात दुर्योधन ने कर्ण को अगराज घोषित कर दिया था। वैदिक काल की स्थिति के प्रतिकूल, महाभारत के समय, अग आर्य सभ्यता के प्रभाव मे पूर्णरूप से आ गया था और पजाब का ही एक भाग—मद्र—इस समय आर्य सस्कृति से बहिष्कृत समझा जाता था (दे० कर्ण शल्य सवाद, कर्ण०)। महाभारत के अनुसार अगदेश की नीव राजा अग ने डाली थी। सभवत ऐतरेय ब्राह्मण 8, 22 मे उल्लिखित अग-वैरोचन ही अगराज्य का सस्थापक था। जातक-कथाओ तथा बौद्धसाहित्य के अन्य ग्रन्थो से ज्ञात होता है कि गौतमबुद्ध से पूर्व, अग की गणना उत्तरभारत के षोडश जनपदो मे थी। इस काल मे अग की राजधानी चपानगरी थी। अगनगर या चपा का उल्लेख बुद्धचरित 27, 11 मे भी है। पूर्वबुद्धकाल मे अग तथा मगध मे राज्यसत्ता के लिए सदा शत्रुता रही। जैनसूत्र—उपासकदशा मे अग तथा उसके पडोसी देशो की मगध के साथ होने वाली शत्रुता का आभास मिलता है। प्रज्ञापणा सूत्र मे अन्य जनपदो के साथ अग का भी उल्लेख है तथा अग और बग को आर्यजनो का महत्त्वपूर्ण स्थान बताया गया है। अपने ऐश्वर्यकाल मे अग के राजाओ का मगध पर भी अधिकार था जैसा कि विधुरपडितजातक (कॉवेल 6, 133) के उस उल्लेख से प्रकट होता है जिसमे मगध की राजधानी राजगृह को अगदेश का ही एक नगर बताया गया है। किंतु इस स्थिति का विपर्यय होने म अधिक समय न लगा और मगध के राजकुमार बिंबिसार ने अगराज ब्रह्मदत्त को मारकर उसका राज्य मगध मे मिला लिया। बिंबिसार अपने पिता की मृत्यु तक अग का शासक भी रहा था। जैन ग्रथो मे बिंबिसार के पुत्र कुणिक अजातशत्रु को अग और चपा का राजा बताया गया है। मौर्यकाल मे अग अवश्य ही मगध के महान साम्राज्य के अतर्गत था। कालिदास ने रघु० 6, 27 मे अगराज का उल्लेख इदुमती-स्वयवर के प्रसग मे मगध-नरेश के ठीक

पश्चात् किया है जिससे प्रतीत होता है कि अग की प्रतिष्ठा पूवगुप्तकाल मे मगध से कुछ ही कम रही होगी। रघु० 6, 27 मे ही अगराज्य के प्रशिक्षित हाथिया का मनोहर वणन है—'जगाद चैनामयमगनाथ सुरागनाप्राथित यौवनश्री विनीतनाग किल्सूत्रकारैरेन्द्र पद भूमिगतोऽपि भुक्ते'। विष्णु० अ ग 4, अध्याय 18 मे अगवशीय राजाओ का उल्लेख है। कथासरित्सागर 44, 9 से सूचित होता है कि ग्यारहवी शती ई० मे अगदेश का विस्तार समुद्रतट (बगाल की खाडी) तक था क्याकि अग का एक नगर विटकपुर समुद्र के किनारे ही बसा था।

अगकोरथोम

प्राचीन कबुज (कबोडिया) का सबसे अधिक प्रसिद्ध नगर जहा बारहवी शती ई० के बने अनेक विख्यात स्मारक हैं जिन्हे कबोडिया के हिंदू नरेशो ने बनवाया था। अगथोम की अधिकाश महान् शिल्पकृतियो के निर्माण का श्रेय राजा जयवमन् सप्तम (राज्याभिषेक 1181 ई०) को दिया जाता है।

अगकोरवाट

यह प्राचीन कबुज (कबोडिया) मे स्थित ससार-प्रसिद्ध विशाल विष्णुमदिर है। इसका निर्माण कबुजनरेश सूयवमन् ने बारहवी शती ई० के प्रथम चरण म करवाया था। सूयवमन् विष्णुभक्त था और उसने अपने गुरु दिवाकर पडित की प्रेरणा से अनेक यज्ञ किए थे। वास्तुकला के आश्चर्य, इस देवालय के चारो ओर एक गहरी खाई है जिसकी लबाई ढाई मील और चौडाई 650 फुट है। खाई पर पश्चिम की ओर एक पत्थर का पुल है। मदिर के पश्चिमी द्वार के समीप से पहली वीथि तक बना हुआ माग 1560 फुट लबा है और भूमितल से सात फुट ऊचा। पहली वीथि पूव से पश्चिम 800 फुट और उत्तर से दक्षिण 675 फुट लबी है। मदिर के मध्यवर्ती शिखर की ऊचाई भूमितल से 210 फुट से भी अधिक है। अगकोरवाट की भव्यता तो उल्लेखनीय है ही, इसके शिल्प की सूक्ष्म विदग्धता, नक्शे की सममिति, यथाथ अनुपात तथा सुदर अलकृत मूर्तिकारी भी उत्कृष्ट कला की दृष्टि स कम प्रशसनीय नही है।

अगदीया

वाल्मीकि रामायण के अनुसार कारपथ की राजधानी—'अगदीयापुरी रम्याप्यगदस्य निवेशिता, रमणीया सुगुप्ता च रामेणाक्लिष्टकमणा' उत्तर० 102, 8। यह नगरी लक्ष्मण के पुत्र अगद के नाम पर कारुपथ नामक देश मे बसाई गई थी। आनदराम बरुआ के मत म वतमान शाहाबाद (उ० प्र०) अगदीय नगरी के स्थान पर बसा है।

अगनगर

सभवत चपा। बुद्धचरित 21,11 के अनुसार बुद्ध ने अगनगर म पूणभद्र यक्ष तथा कई नागो को प्रव्रजित किया था।

अगारस्तूप दे० पिप्पलिवाहन

अजनपवत

वराहपुराण 80 म उल्लिखित सभवत पजाब की सुलेमान गिरिशृखला।

अजनवन

साकेत के निकट एक घना वन जिसमे हरिणो का निवास था। यहा गौतमबुद्ध और कौंडलिय नामक परिव्राजक मे दाशनिक वार्ता हुई थी (सयुत्त० 1,54,5,73)।

अजनी (म० प्र०)

नर्मदा की सहायक नदी। नमदा और अजनी का सगम गौरीतीथ नामक स्थान के निकट हुआ है जहा पिपरिया होकर माग जाता है।

अडोल (जिला मेदक, आ० प्र०)

यह स्थान प्राचीन मदिरो के अवशेषो के लिए उल्लेखनीय है।

अतर्गिरि

हिमालय पवत श्रेणी का सर्वोच्च भाग जिसमें गौरीशकर, नदादवी, केदारनाथ, बदरीनाथ, त्रिशूल, धवलगिरि आदि चोटिया अवस्थित है जो समुद्रतल से 20 सहस्र फुट से अधिक ऊची हैं। महा० सभा० 27,3 मे अतर्गिरि का उल्लेख इस प्रकार है—'अतर्गिरि च कौतेयस्तथैव च वहिर्गिरिम् तथैवोपगिरिं चैव विजिग्ये पुरुषपभ'। इस प्रदेश को अजुन ने दिग्विजययात्रा के प्रसग मे जीता था। पाली साहित्य म अतर्गिरि को महाहिमवत भी कहा गया है। अग्रेज़ो मे इसी को 'दि ग्रेट सेंट्रल हिमालया' कहा जाता है। जैन सूत्र ग्रथ जबुद्वीप प्रज्ञप्ति मे भी इसका महाहिमवत नाम से उल्लेख है।

अतर्वेदी (उ० प्र०)

गगा-यमुना के बीच का प्रदेश अथवा दोआबा। अतर्वेदी नाम प्राचीन सस्कृत अभिलेखो म प्राप्त है। स्कदगुप्त के इदौर म प्राप्त अभिलेख मे अतर्वेदिविषय के शासक सवनाग का उल्लेख है।

अताखी

सिरिया या शाम देश म स्थित ऐंटिओक्स नामक स्थान का प्राचीन सस्कृत रूप जिसका उल्लेख महाभारत म है— अताखी चैव रोमा च यवनाना पुर तथा,

दूतैरेव वशचक्रे कर चैनानदापयत्' सभा० 31,72, अर्थात् सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा मे प्रतासी, रोम और यवनपुर के शासको को केवल दूत भेज कर ही वश मे कर लिया और उन पर कर लगाया (टि० इस श्लोक का पाठातर—'अटवी च पुरी रम्या यवनाना पुरतथा' है)।

अतूर (ज़िला औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

यहा एक पहाडी पर निजामशाहीकाल का एक दुर्ग अवस्थित है। इसके भीतर मसजिद पर और स्तभो पर 1591,1598,1616 और 1625 ई० के फारसी अभिलेख उत्कीर्ण हैं।

अध

श्रीमद्भागवत मे उल्लिखित एक नदी 'नर्मदा चर्मण्वती सिंधुरधशोणश्च' 5,19,18। सिंधु, यमुना की सहायक सिंध है और शोण वर्तमान सोन। इन्ही के समीप बहने वाली किसी नदी का नाम अध हो सकता है। सभव है, यह वर्तमान केन या शुक्तिमती ही का नाम हो। इसका सबध अधक से भी हो सकता है जो श्री डे के अनुसार भागलपुर के निकट गगा मे गिरने वाली चदन नदी है।

अधउ (कच्छ, गुजरात)

इस स्थान से प्राप्त एक अभिलेख मे शकनरेश चष्टन और क्षत्रप रुद्रदामन का उल्लेख है। द्वितीय शती ई० मे इन नरेशो का राज्य महाराष्ट्र तथा गुजरात के अनेक भागो म था। रुद्रदामन का एक प्रसिद्ध अभिलेख गिरनार से प्राप्त हुआ है।

अधक

(1) महाभारतकालीन गणराज्य जिसकी स्थिति यमुनातट पर थी। यह मथुरा के परवर्ती प्रदेश मे सम्मिलित था। श्रीकृष्ण का जन्म इसी प्रदेश के निवासी अधकों के वश मे हुआ था। महाभारत अनुशासन पर्व के अतर्गत तीर्थ-वर्णन मे अधक नामक तीर्थ का नैमिषारण्य के साथ उल्लेख है—'मतगवाप्या य स्नानादेकरात्रेण सिद्धयति, विगाहति ह्यनालबमधक वै सनातनम्'। शाति० 81, 29 मे अधको एव वृष्णियो को कृष्ण से सबधित बताया गया है—'यादवा कुकुरा भोजा सर्वे चाधकवृष्णय, त्वय्यासक्ता महाबाहो लोका लोकेश्वराश्च ये। कृष्ण को इस प्रसग म सघमुख्य भी कहा गया है—'भेदाद् विनाश सघाना सघ मुख्योसिकेशव (शाति० 81, 25) जिससे सूचित होता है कि अधक तथा वृष्णि गणराज्य थे।

(2) दे० अध

अधकारक

विष्णुपुराण 2,4,48 के अनुसार क्रौचद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस

द्वीप के राजा द्युतिमान के पुत्र के नाम पर है। क्रौंच द्वीप के एक पर्वत का नाम भी अंधकारक कहा गया है—'क्रौंचश्चवामनश्चैव तृतीयश्चाधकारक'—विष्णु० 2,4,50।

अंधपुर

सेरीवनिजजातक में, पूर्वबुद्धकालीन इस नगर की स्थिति तैल्वाह नदी के तट पर बताई गई है। सेरी नगर से व्यापारी लोग अंधपुर आते-जाते रहते थे जिससे स्पष्ट है कि यह उस समय का प्रमुख व्यापारिक स्थान रहा होगा। रायचौधरी का मत है कि अंधपुर वर्तमान बेजवाडा है और तैल्वाह, तुंगभद्रा-कृष्णा नदी ही का प्राचीन नाम है (दे० पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एंशेंट इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 78), किंतु भंडारकर के मत में तैलवाह नदी आंध्र की तैल या तैलगिरि नदी है और अंधपुर इसी के तट पर रहा होगा।

अंधवन

श्रावस्ती के निकट एक वन जिसका बौद्धसाहित्य में उल्लेख है (संयुत्त० 5,302)।

अंबट्ठकोल (लंका)

महावंश 28,20 में अंबट्ठकोलगुहा नामक बौद्ध विहार का उल्लेख है जिसका अभिज्ञान अनुराधपुर से 55 मील दूर रिदिविहार से किया गया है। यहां चांदी की खानें थी (सिंहाली 'रिदि'=चांदी)।

अंबतीर्थ (लंका)

महावंश 25,7 में उल्लिखित महावैलिगंगा का एक घाट।

अंबर दे० आमेर

अंबरनाथ (महाराष्ट्र)

बंबई नगर से 38 मील पर अंबरनाथ स्टेशन के निकट है। यहां शिलाहार-नरेश मांबणि द्वारा निर्मित अंबरनाथ शिव का मंदिर है जिसे कोंकण का सर्व-प्राचीन देवालय माना जाता है। इसकी वास्तुकला उच्चकोटि की है।

अंबरीषपुर दे० आमेर

अंबलट्ठिका

राजगृह नालंदा मार्ग पर स्थित उद्यान। दे० अंबवन।

अंबलौद दे० भुमरा

अंबवन

राजगृह के निकट स्थित एक आम्रोद्यान। दीघनिकाय, 1,47 49 के अनुसार गौतमबुद्ध यहां कुछ समय के लिए ठहरे थे। यह उद्यान राजवैद्य जीवक का था।

अंबष्ठ

पंजाब का प्राचीन जनपद। महाभारत में इसका उल्लेख इस प्रकार है—'वशातय शाल्वका केकयाश्च तथा अबष्ठा ये त्रिगर्ताश्च मुख्या' उद्योग० 30, 23। विष्णुपुराण में भी अंबष्ठों का मद्र और आराम जनपदवासियों के साथ वर्णन है—'माद्रारामास्तथाम्बष्ठा पारसीकादयस्तथा' 2,3,17। बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र (टॉमस, पृ० 21) में अंबष्ठों के राष्ट्र का वर्णन कश्मीर, हूणदेश और सिंध के साथ है। अलक्षेंद्र के आक्रमण के समय अंबष्ठनिवासियों के पास शक्तिशाली सेना थी। टॉल्मी ने इनको अबुटाई (Ambutai) कहा है।

अंबाजी (राजस्थान)

आबूरोड स्टेशन से 12 मील दूर राजस्थान का प्रसिद्ध तीर्थ है। यहां सरस्वती नदी, कोटेश्वर महादेव और अंबाजी का मन्दिर है। स्थानीय किंवदंती है कि बालकृष्ण का मुंडन संस्कार यहीं हुआ था। एक अन्य जनश्रुति के आधार पर यह भी कहा जाता है कि रुक्मिणीहरण इसी अंबाजी के मंदिर से हुआ था। यह पिछली जनश्रुति अवश्य ही सारहीन है क्योंकि महाभारत के अनुसार रुक्मिणी विदर्भ की राजकुमारी थी।

अंबाजोगई (ज़िला भीड़, महाराष्ट्र)

यह नगर जीवंती नदी के तट पर बसा है। नदी के दूसरे तट पर मोमिनाबाद नामक कस्बा है। अंबा के पंचम जैनों के पूर्वज चालुक्यों के सामंत थे। नगर में एक प्राचीन मंदिर है जिसका निर्माण देवगिरि नरेश सिंहन के शासनकाल में हुआ था। इस पर 1240 ई० का एक अभिलेख है। नगर के आसपास हिंदू तथा जैन मंदिरों के खण्डहर हैं। जीवंती के तट पर ही अंबाजोगई का प्रसिद्ध मंदिर है जो चट्टान में से काट कर बनाया गया है। इसका मंडप 90 फुट × 45 फुट है। यह मंदिर स्तंभों की चार पंक्तियों पर आधारित है। मराठी कवि मुकुंदराम की समाधि भी यहां स्थित है। दे० भीड़।

अंबिकानगर दे० **अमरोल**

अंबु (ज़िला शिमोगा, मैसूर)

शरावती नदी इस स्थान से उद्भूत हुई है। किंवदंती है कि यहां श्रीरामचन्द्र के बाण मारने से शरावती प्रकट हुई थी। अंबु की तीर्थ के रूप में मान्यता है।

अंभा

विष्णुपुराण 2,8,45 में उल्लिखित कुशद्वीप की एक नदी—'विद्युदंभा मही चान्या सर्वपापहरास्त्विमा'।

अंशुधान

वाल्मीकि रामायण 2,71,9 के अनुसार, भरत ने केकय देश से अयोध्या आते समय, इस स्थान के पास, गंगा को दुस्तर पाया था और इस कारण उसे प्राग्वट के निकट पार किया था—'भागीरथी दुष्प्रतरां सोऽंशुधाने महानदीम'। अंशुधान गंगा के पश्चिमी तट पर कोई स्थान था जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है।

अंशुपा (उड़ीसा)

वर्तमान सुवर्णपुर ग्राम के निकट एक झील है जिसके तट पर रह कर उड़ीसा के प्रसिद्ध केसरीवंश के अंतिम नरेश सुवर्णकेसरी ने (12 वी शती या मध्यकाल) अपने आखरी दिन बिताए थे (हिस्ट्री ऑव उड़ीसा, पृ० 67)।

अंशुमती

ऋग्वेद 8,96, 13-14 मे वर्णित एक नदी—'अव द्रप्सो अंशुमती मतिष्ट-दियानः कृष्णो दशभि सहस्रैः आवत्तमिन्द्र शच्याधमन्तमप स्नेहितीर्नृमणा अधत्त। द्रप्समपश्य विषुणे चरन्तमुपह्वरे नद्यो अंशुमत्या। नभो न कृष्णम वतस्थिवांसमिष्यामि वो वृषणो युष्यताजो।' भावार्थ यह है कि अंशुमती के तट पर इंद्र ने किसी कृष्ण नामक व्यक्ति को दस सहस्र योद्धाओं के साथ लड़ाई मे हराया था। डा० भंडारकर के मत में अंशुमती यहा यमुना को ही कहा गया है और कृष्ण महाभारत के कृष्ण ही हैं। संभव है, वैष्णव धर्म के उत्कर्षकाल मे इसी वैदिक कथा के विपर्यय रूप मे श्रीमद्भागवत, विष्णुपुराण तथा अन्यत्र वर्णित वह कथा प्रचलित हुई जिसके अनुसार कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत धारण करके इंद्र को पराजित किया था।

अकतेश्वर

नर्मदा के उत्तर तट पर अवस्थित है। कहा जाता है कि यह वही स्थान है जहा दक्षिण दिशा की ओर जाते हुए महर्षि अगस्त्य ने, विंध्याचल को बढ़ने से रोक दिया था। महाभारत वन० 104 तथा अनेक पुराणों म इस कथा का उल्लेख है। महर्षि अगस्त्य के नाम से एक प्राचीन शिवमंदिर भी यहा स्थित है (दे० विंध्य)।

अकेश दे० **ओसिया**

अकोना (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

यह स्थान मध्ययुगीन, विशेषत चंदेलकालीन, इमारतों के अवशेषों के लिए उल्लेखनीय है।

अक्लमा

प्लक्षद्वीप की सात मुख्य नदियों मे है—अनुतप्ता शिखी चैव विपाशा

त्रिदिवाक्लमा । अमृता सुकृना चैव सप्तैतास्तत्र निम्नगा ', विष्णु० 2 4 11 सम्भवत यह नदी काल्पनिक है ।

अक्तग्राम (ज़िला देहरादून, उ० प्र०)

1953 मे इस स्थान से तीसरी शती ई० के गोढय-वशी राजा शीलवमन द्वारा विए गए अश्वमेधयज्ञ के चिह्न प्राप्त हुए थे । शीलवमन ऐतिहासिक काल के उन थोडे से राजाओ मे से है जिन्हे महान अश्वमेधयज्ञ करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था । प्रथम शती ई० पू० मे इतिहास प्रसिद्ध शुगनरश पुष्यमित्र ने भी अश्वमेधयन किया था । यह वह समय था जव प्राचीन वैदिक धम बौद्ध-धम के सवग्रास से धीरे-धीरे मुक्त हो रहा था । सभव है शीलवमन ने भी प्राचीन परपरा का निर्वाह करते हुए ही इस स्थान पर अश्वमेधयज्ञ का अनुष्ठान किया था । अक्तग्राम से शीलवमन् के सस्कृत अभिलेख के अतिरिक्त अश्वमेध के यूपादि के भी अवशेष प्राप्त हुए हैं ।

अगस्त्यतीर्थ

'अगस्त्यतीर्थं सौभद्र पौलाम च सुपावनम, कारधम प्रसन्न च हयमेधफल च तत' । महा० 1,215,3 । अगस्त्यतीथ दक्षिण-समुद्र तट पर स्थित था—'तत समुद्रे तीर्थानि दक्षिणे भरतपभ'— महा० 1,215,1 । इसकी गणना दक्षिण सागर के पचतीर्थों (अगस्त्य सौभद्र, पौलोम, कारधम और भारद्वाज) मे की जाती थी —'दक्षिणे सागरानूपे पचतीर्थानि सन्ति वै'— महा० 1,216,17 । महाभारत के अनुसार अजुन ने इस तीथ की यात्रा की थी । वन० 118,4 मे अगस्त्यतीथ का नारीतीथ के साथ द्रविड देश मे वणन है—'ततो विपाप्मा द्रविडेषु राजन् समुद्रमासाद्य च लोकपुण्य, अगस्त्यतीर्थं च महापवित्र नारीतीर्थानि यत्र वीरो ददश ।' अगस्त्यतीथ को अगस्त्येश्वर भी कहत थे । **अगस्त्याश्रम** इससे भिन्न था और इसकी स्थिति गया (विहार) के पूव मे थी ।

अगस्त्यवट

महाभारत आदि० 214,2 म अगस्त्यवट का उल्लेख इस प्रकार है—'अगस्त्यवटमासाद्य वशिष्ठस्य च पवत, भृगुतुगे च कौतेय कृतवाञ्छौचमात्मन ' । अपने द्वादशवर्षीय वनवासकाल मे अर्जुन ने इस तीथ की यात्रा, गगाद्वार—हरद्वार से आगे चलकर की थी । यह स्थान हिमालयपवत पर था—'प्रययौ हिमवत्पाश्व ततो वज्रधरात्मज ।' आदि० 214,1 ।

अगस्त्याश्रम

(1) तत सम्प्रस्थितो राजा कौतेयो भूरिदक्षिण अगस्त्याश्रममासाद्य दुजयायामुवास ह— महा० वन० 96,1 । पाडव अपनी तीथयात्रा के प्रसग मे गया

(बिहार) से आगे चलकर अगस्त्याश्रम पहुंचे थे। यहीं मणिमती नगरी की स्थिति थी। शायद यह राजगृह के निकट स्थित था। अगस्त्यतीर्थ जो दक्षिण समुद्रतट पर स्थित था इससे भिन्न था। जान पड़ता है कि प्राचीनकाल में अगस्त्य के आश्रमों की परंपरा, बिहार से नासिक एवं दक्षिण समुद्रतट तक विस्तृत थी। पौराणिक साहित्य के अनुसार अगस्त्य ऋषि ने भारत की आर्य-सभ्यता का सुदूर दक्षिण तथा समुद्रपार के देशों तक प्रचार किया था। दे० दुजया।

अगस्त्येश्वर दे० अगस्त्यतीर्थ

अग्निपुर=महिष्मती

अग्निमाली

शूर्पारक जातक में वर्णित एक सागर—'यथा अग्गीव सुरियो व समुद्दोपति दिस्सति, सुप्पारक तं पुच्छाम समुद्दो कतमो अयंति। भरुकच्छापयातानं वणि-जानं धनेसिनं नावाय विप्पनट्ठाय अग्गिमालीनि वुच्चतीति।' अर्थात् जिस तरह अग्नि या सूर्य दिखाई देता है वैसा ही यह समुद्र है, शूर्पारक, हम तुमसे पूछते हैं कि यह कौन सा समुद्र है? भरुकच्छ से जहाज पर निकले हुए धनार्थी वणिकों को विदित हो कि यह अग्निमाली नामक समुद्र है। इस प्रसंग के वर्णन से यह भी सूचित होता है कि उस समय के नाविकों के विचार में इस समुद्र से स्वर्ण की उत्पत्ति होती थी। अग्निमाली समुद्र कौन सा था, यह कहना कठिन है। डा० मोतीचंद के अनुसार यह लालसागर या रेड सी का ही नाम है किंतु वास्तव में शूर्पारक जातक का यह प्रसंग जिसमें क्षुरमाली, नलमाली, दधिमाल आदि अन्य समुद्रों का इसी प्रकार से वर्णन है, बहुत कुछ काल्पनिक तथा पूर्व बुद्धकाल में देशदेशांतर घूमने वाले नाविकों की रोमांस-कथाओं पर आधारित प्रतीत होता है। भरुकच्छ या भड़ौच से चल कर नाविक लोग चार मास तक समुद्र पर घूमने के पश्चात् इन समुद्रों तक पहुंचे थे। (दे० क्षुरमाली, बड़वा मुख, दधिमाल, कुशमाल, नलमाली)।

अग्रवन दे० आगरा

अग्राहा (जिला हिसार, हरियाणा)

वर्तमान अग्राहा या अग्राहा प्राचीन अग्रोदक या अग्रोतक है। स्थानीय किंवदंती के अनुसार महाभारतकाल में यहां राजा उग्रसेन की राजधानी थी और स्थान का नाम उग्रसेन का ही अपभ्रंश है। यवन-सम्राट अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के समय (327 ई० पू०) यहां आग्रेय गणराज्य था। चीनी यात्री युवानच्वांग ने भी अग्रोदक का उल्लेख किया है। अग्राहा हिसार के निकट है।

अग्रोदक दे० अग्राहा

अग्रोहा दे० अग्राहा

अचलगढ (राजस्थान)

आबू के निकट स्थित है। मालवा के परमार राजपूत मूलरूप से अचलगढ और चद्रावती के रहने वाले थे। 810 ई० के लगभग उपेंद्र अथवा कृष्णराज परमार ने इस स्थान को छोड कर माल्वा मे पहली बार अपनी राजधानी स्थापित की थी। इससे पहले बहुत समय तक अचलगढ मे परमारो का निवासस्थान रहा था।

अचलपुर (बरार, महाराष्ट्र)

मध्यकाल मे विशेषत 9वी शती स 12वी शती ई० तक अचलपुर जैन-सस्कृति के केन्द्र के रूप मे विख्यात था। जैन विद्वान धनपाल ने अचलपुर मे ही अपना ग्रन्थ 'धम्म परिक्खा' समाप्त किया था। आचाय हेमचद्रसूरि ने भी अपने व्याकरण मे (2,118) अचलपुर का उल्लेख किया है—'अचलपुरे चकारल कारयोर्व्यत्ययो भवति' अर्थात् अचलपुर के निवासियो के उच्चारण मे च और ल का व्यत्यय (उलटफेर) हो जाता है। आचाय जयसिहसूरि ने 9वी शती ई० मे अपनी धर्मोपदेशमाला मे अयलपुर या अचलपुर के अरिकेसरी नामक जैन नरश का उल्लेख किया है—'अयलपुरे दिगबर भत्तो अरिकेसरी राजा'। अचलपुर से 7वी शती ई० का एक ताम्रपट्ट भी प्राप्त हुआ है।

अचित=**अजता**

अचिरवती=**अचिरावती**

अचिरावती=**अजिरावती**

बौद्ध साहित्य मे विख्यात नदी है। इस नदी के तट पर बौद्धकाल की प्रसिद्ध नगरी श्रावस्ती बसी हुई थी। इसका अभिज्ञान छोटी राप्ती से किया गया है जो गडक मे मिलती है। सगमस्थान नेपाल मे स्थित है (द० विसेंट स्मिथ—अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया, पृ० 167) बौद्ध साहित्य मे नदी का नाम अचिरवती भी मिलता है। शायद अतितवती भी अचिरवती का ही अपभ्रष्ट रूप है। जैन ग्रथ कल्पसूत्र (पृ० 12) मे इस नदी का इरावइ या इरावती कहा गया है। श्री बी० सी० लॉ के अनुसार यह सरयू की सहायक राप्ती नदी है (द० हिस्टॉरिकल ज्याग्रेफी ऑव एशेंट इडिया, प०61)।

अच्छोद सरोवर

बाणभट्ट रचित कादबरी तथा विल्हण के विक्रमाकचरित 8,53 मे उल्लिखित इस सरोवर का अभिज्ञान कश्मीर म मातड मदिर से 6 मील दूर

अच्छावट नामक झील से किया गया है (दे० न० ला० डे) ।

अच्युतस्थल

महाभारत मे उल्लिखित एक स्थान जो सभवत यमुना नदी के तट पर स्थित था । महा० वन० 129, 9 से सूचित होता है कि महाभारत काल म प्रचलित प्राचीन परपरा मे इस स्थान को अपवित्र समझा जाता था—'युगधरे दधिप्राश्य उपित्वा चाच्युतस्यले' आदि । महाभारत के टीकाकारो ने अच्युतस्थल मे वणसकर जातियो का निवास बताया है ।

अजता (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

जलगाव स्टेशन से 37 मील और औरगाबाद से 55 मील दूर फरदापुर ग्राम के निकट ये ससार प्रसिद्ध गुफाए स्थित है जो अपने भित्तिचित्रो तथा मूर्तिकारी के लिए बेजोड समझी जाती हैं । अजता नाम का एक ग्राम यहा से 2 मील पर बसा है—इसी के नाम पर ये गुफाए भी अजता की गुफाए कहलाती हैं । बाघोरा नदी की उपत्यका मे अवस्थित ऊची शैलमाला के बीच, एक विस्तृत पहाडी के पाश्व म, 29 गुफाए काटकर बनाई गई है । इनका समय पहली शती ई० पू० से 7 वी शती ई० तक है । ये गुफाए शिल्पी बौद्ध भिक्षुओ ने बनाई थी । इनमे से कुछ तो चैत्य है अर्थात् पूजा के निमित्त इनमे चैत्य की आकृति के छोटे छोटे स्तूप बने हुए हैं और कुछ विहार है । ये दोनो प्रकार की गुफाए और इनमे का सारा मूर्ति-शिल्प एक ही शैल मे कटा हुआ है किंतु क्या मजाल कि कही पर एक छैनी भी अधिक लगी हो । गुफा स० 1 जो 120 फुट तक पहाडी के अदर कटी हुई है वास्तुकला कौशल का अद्भुत नमूना है । प्राचीनकाल मे प्राय सभी गुफाओ मे भित्ति चित्रकारी थी किंतु कालप्रवाह मे अब मुख्यत केवल स० 1,2,16,17 मे ही चित्रो के अवशेष रह गए हैं । किंतु इन्ही के आधार पर यहा की कला की उत्कृष्टता की रूपरेखा भली भाति जानी जा सकती है । यद्यपि अजता की चित्रकारी मूलत धार्मिक है और सभी चित्रो के विषय किसी न किसी रूप मे गौतमबुद्ध या बोधिसत्वो की जीवन कथाओ से सबधित हैं फिर भी इन कथाओं की अभिव्यजना मे चित्रकारो ने जीवन और समाज के सभी अगो का इस बारीकी, सहृदयता और सहानुभूति से चित्रण किया है कि ये चित्र भारतीय सभ्यता और सस्कृति के उत्कर्षकाल की एक अनोखी परपरा हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं । केवल यही नही, विस्तृत दृष्टिकोण से परखने पर इन चित्रो के पीछे कलाकारो के हृदय मे चराचर जगत के प्रति जो सौहार्द्र की भावना छिपी हुई है उसका भी दर्शन सहज रूप मे ही हो जाता है । यहा अजता के केवल कुछ ही चित्रो का निदर्शन किया जा सकता है । गुफा स० 1 मे दाहिन की लबी भित्ति पर

अजंता गुफा सं० 17
(भारतीय पुरातत्व विभाग के सौजन्य से)

मारविजय का प्राय 12 फुट लबा और 8 फुट चौडा चित्र है। इसमे कामदेव के सैनिको के रूप मे मानो मानव-हृदय की दुबलताओ के ही मूत चित्र उपस्थित किए गए है। इनमे विकट-रूप पुरुप तथा मदविह्वला कामिनियो के जीवत चित्रो के समक्ष आत्मनिरत बुद्ध की सौम्य मुखाकृति उत्कृष्ट रूप से उज्ज्वल एव प्रभावशाली बन पडी है।

गुफा स० 16 मे बुद्ध के गृहत्याग का मार्मिक चित्र है। मोहिनी निद्रा मे यशोधरा, शिशु राहुल और परिचारिकाए सोई हुई हैं। उन पर अतिम दृष्टि डालते हुए गौतम के मुख पर दृढ त्याग और साथ ही सौम्यता से भरपूर जो छाप है उसने इस चित्र को अमर बना दिया है। इसी गुफा मे एक अन्य स्थान पर एक म्रियमाण राजकुमारी का दृश्य है जो शायद गौतम के भ्राता परिव्रजितनद की नव विवाहिता पत्नी सुदरी की दशा का चित्रण है। चित्रकला के अनेक मर्मज्ञो ने इस चित्र की गणना ससार के उत्कृष्टतम चित्रो मे की है।

गुफा स० 17 मे भिक्षुक बुद्ध के मानवाकार चित्र के आगे अपने एकमात्र पुत्र को तथागत के चरणा मे भिक्षा के रूप मे डालती हुई किसी रमणी—शायद यशोधरा ही—का चित्र है। इस चित्र मे निहित भावना का मूतस्वरूप इतनी मार्मिकता से दशको के सामने प्रस्फुटित होता है कि वह दो सहस्र वर्षों के व्यवधान को क्षणमात्र मे चीर कर इस चित्र के कलाकार की महान् आत्मा से मानो साक्षातकार कर लेता है और उसकी कला के साथ अपने प्राणो की एकरसता का अनुभव करने लगता है। इस गुफा की अन्य उल्लेखनीय कलाकृतिया मे वेस्सतरजातक और छदतजातक की कथाओ पर बन हुए जीवत चित्र हैं। अजता मे तत्कालीन (विशेप कर गुप्तकालीन) भारत के निवासियो, स्त्री व पुरुषो के रहन-सहन, घर मकान, वेश-भूषा, अलकरण, मनाविनोद, तथा दैनिक जीवन के साधारण कृत्यो की मनोरम एव सच्ची तस्वीरें हैं। वस्त्र, आभूपण, केश-प्रसाधन, गृहालकरण आदि के इतने प्रकार चित्रित हैं कि उन्ह देखकर उस काल के भरे पूरे भारतीय जीवन की झाकी आखो के सामने फिर जाती है। गुप्त कालीन अजता-चित्रो और महाकवि कालिदास के अनेक काव्यवणनो मे जो तारतम्य और भावैक्य है वह दोनो के अध्ययन से तुरत ही प्रतिभासित हो जाता है।

अजता म मूर्तिकला के भी उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं। शैल कृत्त होने के कारण गुफाओ मे जो अदभुत प्रकार की इजीनियरी और वास्तुकला विद्यमान है वह भी किसी से छिपी नही है। अजता जिस रमणीक और एकात गिरिप्रातर मे स्थित है उसका रहस्यात्मक प्रभाव भी दशक पर पडे बिना नही रहता।

कहा जाता है कि चित्रकारो ने जिन रगो का अपने चित्रो मे प्रयोग किया है वे उन्होने स्थानीय द्रव्यो से ही तयार किए थे—जैसे लाल रग उन्होने यही पहाडी पर मिलने वाले लाल रग के पत्थर और नारगी रग इस घाटी मे बहुतायत से होने वाले पारिजात के पुष्प-वृतो से बनाया था। रगो के भरने म तथा आकृतियो की भाव भगिमा पदर्शित करने मे जिस सूक्ष्म प्राविधिक कुशलता का प्रयोग किया गया है वह सचमुच ही अनिर्वचनीय है। भौहो की सीधी, वक्र, ऊची-नीची रेखाए, मुख की विविध भगिमाए और हाथ की अगुलियो की अनगिनत मुद्राए, अजता की चित्रकारी की एक विशिष्ट और सजीव शैली की अभिव्यक्ति के अपरिहार्य साधन है। और सर्वोपरि, अजता के चित्रो मे भारतीय नारी का जो सौम्य, ललित एव पुष्पदल के समान कोमल तथा साथ ही प्रेम और त्याग एव सास्कृतिक जीवन की भावनाओ और आदर्शों से अनुप्राणित रूप मिलता है वह हमारी प्राचीन कला परपरा की अक्षय निधि है। अजता की गुफाओ का हमारे प्राचीन साहित्य मे निर्देश नहीं मिलता। शायद चीनी यात्री युवानच्वाग ने अपनी भारत-यात्रा के दौरान (615 630 ई०) इन गुहामदिरो को देखा था। तब से प्राय 1200 वर्षों तक ये गुफाए अज्ञात रूप से पहाडियो और घने जगलो मे छिपी रही। 1819 ई० म मद्रास सेना के कुछ यूरोपीय सैनिको ने इनकी अकस्मात ही खोज की थी। 1824 ई० मे जनरल सर जेम्स अलक्जेंडर ने रायल एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका मे पहली बार इनका विवरण छपवा कर इन्हे सभ्य ससार के सामने प्रकट किया था।

अजकूला

वाल्मीकि-रामायण (अयोध्याकाड) मे उल्लिखित नदी जिसका अभिज्ञान स्यालकोट (पाकिस्तान) के पास बहने वाली आजी नदी से किया गया है।

अजमती=अजय

अजमेर (राजस्थान)

ऐतिहासिक परपराओ से ज्ञात होता है कि राजा अजयदेव चौहान ने 1100 ई० म अजमेर की स्थापना की थी। सभव है कि पुष्कर अथवा अना-सागर झील के निकट होने से अजयदेव ने अपनी राजधानी का नाम अजयमेर (मेर या मीर—झील, जैसे कश्यपमीर=कश्मीर) रखा हो। उन्होंने तारागढ की पहाडी पर एक किला गढ बिटली नाम स बनवाया था जिसे कर्नल टाड ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रथ म राजपूताने की कुजी कहा है। अजमेर म, 1153 मे प्रथम चौहान नरेश बीसलदेव ने एक मदिर बनवाया था जिसे 1192 ई० मे मुहम्मद गोरी ने नष्ट करके उसके स्थान पर अढाई दिन का झोपडा नामक मसजिद

बनवाई थी (कुछ विद्वानो का मत है कि इसका निर्माता कुतुबुद्दीन एबक था। कहावत है कि यह इमारत अढाई दिन मे बनकर तैयार हुई थी किंतु ऐतिहासिकों का मत है कि इस नाम के पडने का कारण इस स्थान पर मराठाकाल मे होने वाला अढाई दिन का मेला है। इस इमारत की कारीगरी विशेषकर पत्थर की नक्काशी प्रशसनीय है) इससे पहले सोमनाथ जाते समय (1124 ई०) महमूद गजनवी अजमेर होकर गया था। मुहम्मद गौरी ने जब 1192 ई० मे भारत पर आक्रमण किया तो उस समय अजमेर पृथ्वीराज के राज्य का एक बडा नगर था। पृथ्वीराज की पराजय के पश्चात दिल्ली पर मुसलमानो का अधिकार होने के साथ अजमेर पर भी उनका कब्जा हो गया, और फिर दिल्ली के भाग्य के साथ साथ अजमेर के भाग्य का भी निपटारा होता रहा।

मुगलसम्राट् अकबर को अजमेर से बहुत प्रेम था क्योकि उसे मुईनउद्दीन चिश्ती की दरगाह की यात्रा मे बहुत श्रद्धा थी। एक बार वह आगरे से पैदल ही चलकर दरगाह की जियारत को आया था। मुईनउद्दीन चिश्ती 12वी शती ई० मे ईरान से भारत आए थे। अकबर और जहागीर ने इस दरगाह के पास ही मसजिदें बनवाई थी। शाहजहा ने अजमेर को अपने अस्थायी निवास-स्थान के लिए चुना था। निकटवर्ती तारागढ की पहाडी पर भी उसन एक दुग-प्रासाद का निर्माण करवाया था जिसे विशप हेबर ने भारत का जिब्राल्टर कहा है। यह निश्चित है कि राजपूतकाल मे अजमेर को अपनी महत्त्वपूण स्थिति के कारण राजस्थान का नाका समझा जाता था।

अजमेर के पास ही अनासागर झील है जिसकी सुदर पवतीय दृश्यावली से आकृष्ट होकर शाहजहा ने यहा सगमरमर के महल बनवाए थे। यह झील अजमेर पुष्कर माग पर है।

अजमेर मे, चौहान राजाओ के समय मे सस्कृत साहित्य की भी अच्छी प्रगति हुई थी। पृथ्वीराज के पितृव्य विग्रहराज चतुथ के समय के सस्कृत तथा प्राकृत म लिखित दो नाटक, ललित विग्रहराज नाटक और हरकली नाटक छ काले सगमरमर के पटलो पर उत्कीर्ण प्राप्त हुए हैं। ये पत्थर अजमेर की मुख्य मसजिद म लगे हुए थे। मूलरूप से ये किसी प्राचीन मदिर मे जडे गए होगे।

अजय (प० बगाल)

गीतगोविंद के विश्रुत कवि जयदव क निवास स्थान केंदुबिल्व या वतमान केंदुली के निकट बहने वाली नदी।

अजयगढ (म० प्र०)

बुदेलखड की एक प्राचीन रियासत। कहा जाता है इस नगर को दशरथ

के पिता अज ने बसाया था। अजयगढ का प्राचीन नाम अजगढ ही है। नगर केन नदी के समीप एक पहाडी पर बसा हुआ है। पहाडी पर अज ने एक दुर्ग बनवाया था—ऐसी किंवदंती भी यहा प्रचलित है। कुछ लोगो का कहना है कि किला राजा अजयपाल का बनवाया हुआ है पर इस नाम के राजा का उल्लेख इस प्रदेश के इतिहास मे नही मिलता। यह दुर्ग कालिंजर के किले के समान ही सुदृढ समझा जाता है। पर्वत के दक्षिणी भाग मे हिंदू बौद्ध तथा जैन मंदिरो तथा मूर्तियो के ध्वंसावशेष मिलते हैं। खजुराहो शैली मे बने हुए चार विहार तथा तीन सरोवर भी उल्लेखनीय हैं। अजयगढ चंदेल राजाओ के शासनकाल मे उन्नति के शिखर पर था। पृथ्वीराज चौहान के समकालीन चंदेलनरेश परमर्दिदेव या परमाल के बनवाए कई मंदिर और सरोवर यहा हैं। पृथ्वीराज ने परमाल को पराजित करने के पश्चात धसान नदी के पश्चिमी भाग को अपने अधिकार मे रखकर अजयगढ को उसी के पास छोड दिया था। चंदेलो का अजयगढ पर कई सौ वर्षों तक राज्य रहा था और यह नगर उनके राज्य के मुख्य स्थानो मे से था।

अजितवती=**अजिरावती** दे० **अचिरावती**

अजोधन

सतलज नदी से 10 मील पर बसा हुआ प्राचीन नगर है। इसका वर्तमान नाम पाकपाटन है जो अकबर का रखा हुआ कहा जाता है। अकबर के पूर्व इसका नाम पाटनफरीद था क्योंकि यहा प्रसिद्ध मुसलमान संत शेख फरीदुद्दीन शक्करगंज का निवासस्थान था। इब्नबतूता ने इस नगर का उल्लेख 14वी शती मे अपनी यात्रा के विवरण मे किया है—(दे० दि रेहला ऑव इब्नबतूता, पृ० 20)।

अज्जाहर (गुजरात)

काठियावाड के दक्षिण समुद्रतट पर वीरावल के निकट प्राचीन जैनतीर्थ है। इसका नामोल्लेख तीर्थमाला चैत्यवंदन म भी है—सिंहद्वीप घनेर मंगलपुरे चाज्जाहरे श्रीपुरे।

अटक (प० पाकिस्तान)

इसका प्राचीन नाम हाटक कहा जाता है (दे० हिस्टॉरिकल ज्याग्रेफी आव एशेंट इंडिया—बी० सी० लॉ, पृ० 29)। अटक सिंधु नदी के तट पर स्थित है। यहा का सुदृढ किला जो नदीतट पर ऊंची पहाडी के शिखर पर स्थित है अकबर ने बनवाया था। मध्य युग मे अटक को भारत की पश्चिमी सीमा पर स्थित माना जाता था। कहा जाता है कि राजा मानसिंह ने अकबर द्वारा अटक के

पार यूसुफ्जाइयो से लडने के लिए भेजे जाते समय वहा अपने जाने की सम्मति देते समय कहा था कि मुझे अन्य लोगो की तरह वहा जाने मे आपत्ति नही है क्योकि 'जाके मन मे अटक है सो ही अटक रहा।'

अटक बनारस

उडीसा का एक नगर जिसे अक्बर ने वाराणसी कटक या कटक बनारस के अनुकरण पर बसाया था (दे० हिस्ट्री ऑव उडीसा, पृ० 66)।

अटवी

प्राचीन काल मे बेतवा नदी के दोनो ओर के प्रदेश का जो विध्याचल की तराई मे बसे होने के कारण वनाच्छादित था, इस नाम से अभिधान किया जाता था। महाभारतकाल म यहा पुलिंदो की बस्ती थी। महाभारत सभा० 29, 10 म पुलिंदनगर पर भीम ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसग मे अधिकार कर लिया था। वायुपुराण 45, 126 मे भी आटवियो का उल्लेख है—'काल्पाश्च सहैपीकाटव्या शवरास्तथा।' गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त ने चौथी शती ई० मे अटवी के सब राजाओ पर विजय प्राप्त करके उन्हे 'परिचारक' बना दिया था ('परिचारकीकृतसर्वाटिवीकराजस्य'—समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति) हर्षचरित मे बाणभट्ट ने भी विध्याटवी का सुदर वणन किया है। यही राज्यश्री की खोज करते समय हर्ष की भेट बौद्ध भिक्षु दिवाकरमित्र से हुई थी। इसे आटविक प्रदेश भी कहा गया है (दे० **कोटाटवी, वटाटवी**)।

अटदूर (जिला सेलम, मद्रास)

इस स्थान पर एक प्राचीन दुग है जिसके भीतर दरबार भवन तथा कल्याण महल नामक प्रासाद कलापूण शैली मे निर्मित हैं।

अटेर (म० प्र०)

पुरानी रियासत ग्वालियर मे चबल के दक्षिणी तट पर बसा हुआ प्राचीन नगर। अटर का किला नदी की शाखाओ के बीच के एक ऊचे स्थान पर स्थित है। किला मिट्टी, इट और चूने का बना है। एक अभिलेख के अनुसार इसको भदौरिया राजा बदनसिंह ने बनवाया था। इस लेख मे अटर का प्राचीन नाम **देवगिरि** लिखा है।

अडडाकी (आ० प्र०)

14वी शती ई० म आध्र देश के एक भाग की पुरानी राजधानी था जिसे रेड्डी लोगो ने बसाया था (दे० **कोंडाविडू**)।

अणकिटणकी (वला तालुका, महाराष्ट्र)

जैनधम स सबद्ध सात गुफाए यहा एक पहाडी के भीतर कटी हुई हैं जिनम

अनेक मूर्तिया बनी हैं। गुफाओ का अधिकाश भाग नष्ट हो चुका है किंतु फिर भी अनेक मूर्तिया शिल्प की दृष्टि से प्रशसनीय हैं। गुफाओ की अवशिष्ट भित्तिया सवत्र मूर्तिकारी से पूण हैं। यह स्थान जो अब अकाईतकाई नाम से प्रसिद्ध है, मध्यकालीन जैन सस्कृति का एक केन्द्र था। जैनकवि मेघविजय ने अपने एक विज्ञप्ति पत्र म इस स्थान का वणन इस प्रकार किया—'गत्यौ-त्सुवयेऽप्यणक्टिणकी दुगयास्थेयमेवपाश्व स्वामी स इह विहुत पूवमुर्वाश-सेव्य जाग्रद्युये विपदिशरण स्वगलोकेऽभिवन्द्यम। अत्यादित्य हुतवहमुखे सभृत तद्वितेज।' विज्ञप्ति लेखसग्रह, पृ० 101।

अतरजी खेडा (तहसील कासगज, जिला एटा, उ० प्र०)

एटा से लगभग दस मील दूर, काली नदी के तट पर बसा हुआ अति प्राचीन नगर है। इस नगर की नीव डालने वाला राजा वेन कहा जाता है जिसके विषय म रहेलखड मे अनक लोककथाए प्रचलित हैं। कहा जाता है कि राजा वेन ने मु० गौरी को उसके कन्नौज आक्रमण के समय परास्त किया था किंतु अत मे बदला लेकर गौरी न राजा वेन को हराया और उसके नगर को नष्ट कर दिया। एक ढूह के अन्दर से हजरत हसन का मकबरा निकला था—जो इस लडाई म मारा गया था। कुछ लोगो का कहना है कि अतरजी खेडा वही प्राचीन स्थान है जिसका वणन चीनी यात्री युवानच्वाग ने पिलोशना या बिला-सना नाम से किया है किंतु यह धारणा गलत सिद्ध हो चुकी है। यह दूसरा स्थान बिलसड नामक प्राचीन नगर था जो एटा से 30 मील दूर है। किन्तु फिर भी अतरजी खेडे के पूव मुसलमान काल का नगर होने मे कोई सदेह नही है क्याकि यहा के विशाल खडहरो के उत्खनन मे, जो एक विस्तृत टीले के रूप मे हैं (टीला 3960 फुट लम्बा, 1500 फुट चौडा और प्राय 65 फुट ऊचा है) शुग कुषाण और गुप्तकालीन मिट्टी की मूर्तिया, सिक्के, ठप्पे, ईंटो के टुकडे आदि बडी सख्या मे प्राप्त हुए हैं। खडहर के एक सिरे पर एक शिवमदिर के अव-शेष हैं जिसम पाच शिवलिंग है। इनमे एक नौ फुट ऊचा है। टीले की रूपरेखा से जान पडता है कि इसके स्थान पर पहले एक विशाल नगर बसा हुआ था।

अतिवती

बौद्ध साहित्य मे उल्लिखित नदी जो कसिया या प्राचीन कुशीनगर के निकट बहती थी। बुद्ध का दाहसस्कार इसी नदी के तट पर हुआ था। यह गडक की सहायक नदी है जा अब प्राय सूखी रहती है। बौद्ध साहित्य मे इस नदी का हरिण्या भी कहा गया है। सभव है अतितवती और अचिरवती म केवल नाम भेद हा।

अधिराज

महाभारत सभा० 31,3 के अनुसार सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे इस देश के राजा दतवक्र को पराजित किया था—'अधिराजाधिप चैव दतवक्र महाबलम, जिगाय करद चैव कृत्वा राज्ये न्यवेशयत'। अधिराज का उल्लेख मत्स्य के पश्चात होने से सूचित होता है कि यह देश मत्स्य (जयपुर का परवर्ती प्रदेश) के निकट ही रहा होगा। किंतु श्री न० ला० डे का मत है कि यह रीवा का परवर्ती प्रदेश था।

अधोनी (ज़िला रायचूर, मैसूर)

मध्यकाल के दुग के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। इस दुग पर 1347 ई० म अलाउद्दीन खिलजी और 1375 ई० में मुजाहिदशाह बहमनी ने अधिकार कर लिया था। तत्पश्चात कुछ समय तक अधोनी का क़िला विजयनगर-राज्य के अतगत रहा किंतु तालीकोट के युद्ध (1565 ई०) के पश्चात यहा बीजापुर रियासत का अधिकार हो गया। अधोनी मे 13वी शती का पत्थर-चूने का बना एक मदिर भी है जिसकी दीवारो पर मूर्तिया उकेरी हुई हैं। एक काले पत्थर पर देवनागरी लिपि मे एक अभिलेख खुदा हुआ है।

अनतगिरि (1) (महाराष्ट्र)

मध्यरेल्वे के वाडा-बेज़वाडा माग पर बिकाराबाद स्टेशन से 5 मील दूर यह पहाडी स्थित है। कहा जाता है कि प्राचीन काल मे यह मार्कंडेय ऋषि की तपाभूमि थी।

(2) (ज़िला करीमनगर, आ० प्र०) एक पहाडी पर एक प्राचीन दुग अवस्थित है जो अब प्राय खण्डहर हो गया है।

अनतनाग

कश्मीर की प्राचीन राजधानी। नगर से 3 मील पूव की ओर प्रसिद्ध मातड मदिर स्थित है। यह मदिर 725–760 ई० मे बना था। इसका प्रागण 220 फुट × 142 फुट है। इसके चतुर्दिक लगभग 80 प्रकोष्ठो के अवशेष वतमान है। पूर्वी किनारे पर मुख्य प्रवेशद्वार का मडप है। मदिर 60 फुट लबा और 38 फुट चौडा था। इसके द्वारो पर त्रिपार्श्वित चाप (महराब) थे जो इस मदिर की वास्तुकला की विशेषता हैं। यह वैचित्र्य सभवत बौद्ध चैत्या की रचना के अनुकरण के कारण है किंतु मार्तंड-मदिर मे यह विशिष्ट महराव सरचना का भाग न होकर केवल अलकरण-मात्र है। द्वारमडप तथा मदिर के स्तभो की वास्तु शैली रोम की डारिक शैली से कुछ अशो म मिलती जुलती है। स्तभो के शीष तथा आधार अनेक भागो को जोड कर बनाए गए हैं। इन पर

अधिकतर सोलह नालिया उत्कीर्ण है। दरवाजो के ऊपर त्रिकोण सरचनाए हैं और उनके बाहर निकले हुए भाग पर दुहरी ढलवा छतो की बनावट प्रदर्शित की गई है जो कश्मीर की आधुनिक लकडी की छतो के अनुरूप ही जान पडती है। नेपाल के अनेक मदिरो की छतें भी लगभग इसी सरचना का अतिविकसित रूप है। मार्तंड-मदिर पर बहुत समय से छत नही है किंतु ऐसा समझा जाता है कि प्रारभ मे इस पर ढलवा लकडी की छत अवश्य रही होगी। मदिर के प्रागण के छोटे प्रकोष्ठ पत्थर के चौको से पटे हुए थे। मार्तंड मदिर सूर्य की उपासना का मदिर था। उत्तर-पश्चिम भारत मे सूर्यदेव की उपासना प्राय 11वी शती ई० तक प्रचलित थी। मुसलमानी शासन के समय यहा के शासको ने अनतनाग के मदिर को नष्ट करके नगर को इसलामाबाद नाम दिया था किंतु अभी तक प्राचीन नाम ही प्रचलित है।

अनतवरम् (केरल)

केरल की वर्तमान राजधानी त्रिवेंद्रम का प्राचीन पौराणिक नाम जिसका उल्लेख ब्रह्मांडपुराण और महाभारत मे है। इसे तिरु अनतपुरम भी कहते थे।

अनथानली (जिला परभणी, महाराष्ट्र)

यहा एक प्राचीन दुर्ग के अवशेष है। यह दुर्ग सभवत देवगिरि के यादव-नरेशो द्वारा 13वी शती मे बनवाया गया था।

अनयतत दे० **अनोत्तत**

अनवा (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

सिल्लोद ताल्लुके मे स्थित इस छोटे से ग्राम मे 12वी शती ई० मे बना एक सुदर मदिर स्थित है जिसके महामडप की वर्तुल छत मे मनोहर नक्काशी व मूर्तिकारी प्रदर्शित की गई है।

अनालब

महाभारत, अनुशासन पर्व मे इस तीर्थ का नैमिषारण्य के साथ उल्लेख है जिससे इसकी स्थिति का कुछ अनुमान किया जा सकता है। 'मतगवाप्या य स्नानादेकरात्रेण सिद्धयति विगाहति ह्यनाल्बमधक वै सनातनम्'—अनुशासन०, 25,32।

अनास्त (जिला कागडा, पजाब)

यह प्राचीन तीर्थ धौम्यगगा के तट पर स्थित है। इसका आधुनिक नाम जगतसुख है। पाडवो के पुरोहित धौम्य से, जो दशभ्रमण मे उनके साथ रहे थे, इस ग्राम का सबध बताया जाता है।

अनिंदितपुर

8वी शती ई० मे दक्षिण कबोडिया या कबुज का एक छोटा सा भारतीय

औपनिवेशिक राज्य जिसका उल्लेख कबोडिया के प्राचीन इतिहास मे है। अनिंदितपुर के राजा पुष्कराक्ष द्वारा शभुपुर नामक पार्श्ववर्ती राज्य को हस्तगत करने का उल्लेख भी मिलता है।

अनिरुद्ध (जिला गोरखपुर, उ० प्र०)

कसिया अथवा प्राचीन कुशनीनगर के निकट एक छोटा ग्राम है। खुदाई मे यहा इटो का एक द्रूह मिला है जिसका क्षेत्रफल लगभग 500 वर्गफुट है। कहा जाता है कि ये खण्डहर कुशीनगर मे स्थित मल्लनरेशो के प्रासाद के है। (दे० अनुपिया)।

अनुतप्ता

विष्णुपुराण 2,4,11 के अनुसार प्लक्षद्वीप की सात मुख्य नदिया मे से एक— अनुतप्ता शिखी चैव विपाशा त्रिदिवा क्लमा अमृता सुकृता चैव सप्तैतास्तत्र निम्नगा'। सभवत यहा अधिकाश नदिया के नाम काल्पनिक ह।

अनुप=**अनूप** (म० प्र०)

नर्मदा-तट पर स्थित माहिष्मती के परवर्ती प्रदेश या निमाड का प्राचीन नाम। गौतमीबलश्री के नासिक अभिलेख मे अनुपदेश को शातवाहन नरेश गौतमीपुत्र (द्वितीय शती ई०) के विशाल राज्य का एक अग बताया गया है। कालिदास ने रघु० 6,37 मे, इदुमती के स्वयवर के प्रसग मे माहिष्मती नरेश प्रतीप को अनूप राज कहा है—'तामग्रतस्तामरसा तराभामनूपराजस्यगुणैर-नूनाम, विधायसृष्टि ललिता विधातुजगाद भूय सुदती सुनन्दा'। रघु० 6,43 मे माहिष्मती का वणन है। गिरनार-स्थित रुद्रदामन् के प्रसिद्ध अभिलेख मे इस प्रदेश को रुद्रदामन् द्वारा विजित बताया गया है—'स्ववीर्यार्जितानामनु रक्त प्रकृतीना—आनत सुराष्ट्र श्वभ्रभरुकच्छ सिंधुसौवीर कुकुरापरात निषादा-दीनाम'—अनुप या अनूप का शाब्दिक अथ 'जल के समीप' स्थित देश है। दे० अनुपक

अनुपिया

बुद्धकाल मे मल्लक्षत्रियो का एक नगर जो पूर्वी उत्तर-प्रदश मे वतमान कसिया या कुशीनगर (जिला गोरखपुर) के आसपास ही कही स्थित होगा (दे० लॉ,—सम क्षत्रिय ट्राइब्स, पृ० 149)। सभवत यह नगर वतमान अनिरुद्ध के स्थान पर ही बसा था।

अनुमकुडपट्टन=**वारगल**

अनुविंद

महाभारत सभा० 31,10 म अवतिजनपद के विद तथा अनुविंद नामक

नगरों की स्थिति नर्मदा के समीप बताई गई है—'ततस्तेनैव सहितो नर्मदामभितो ययौ, विन्दानुविन्दावावन्त्यौ सैन्येनमहतावृतौ'। अभिज्ञान अनिश्चित है।

अनुराधपुर (लंका)

सिंहल देश की प्राचीन राजधानी है। महावंश 7,43 में इसका उल्लेख है। इस नगर को राजकुमार विजय (जो भारत से सिंहल में जाकर बस गया था) के अनुराध नामक एक सामंत ने कदंब-नदी—वर्तमान मलवत्तुओय—के तट पर बसाया था। महावंश 10,76 से यह भी विदित होता है कि यह नगर अनुराधा नक्षत्र के मुहूर्त में बसाया गया था। एक अन्य बौद्ध किंवदंती के अनुसार अनुराधपुर मगध सम्राट् अजातशत्रु के पुत्र उदायी, उदयन या उदयाश्व (496–480 ई० पू०) के समय में बसाया गया था। उदायी के पुत्र अनिरुद्ध ने दक्षिण भारत के अनेक देशों को जीत कर लंका पर भी आक्रमण किया तथा उसे विजित कर वहां अनिरुद्धपुर नामक नगर बसाया जिसका नाम कालांतर में अनुराधापुर या अनुराधपुर हो गया।

अनुराधपुर के विस्तृत खंडहरों में बौद्धकालीन अनेक अवशेष प्राप्त हुए हैं। इनमें देवानांप्रिय तिस्सा का बनवाया थूपाराम स्तूप, दुतुगमुनु द्वारा निर्मित रुआनवेलिसिया और सावनी स्तूप और तिस्सा के पुत्र वातागामनीय का बनवाया अभयगिरि स्तूप प्रमुख हैं।

अनूप (1)=अनुप

(2) कच्छ (गुजरात) का एक प्राचीन नाम जिसका उल्लेख महाभारत में है (दे० अनूपक)।

अनूपक

'अनूपका किराताश्च ग्रीवाया भरतर्षभ, पटच्चरैश्च पौंड्रैश्च राजन पौरव कैस्तथा', महा० भीष्म० 50, 48। महाभारत युद्ध में इस जनपद के निवासियों का पांडवों की ओर से लड़ने का वर्णन मिलता है। अनूपक या तो कच्छ या माहिष्मती के परवर्ती प्रदेश का नाम हो सकता है (दे० अनुप अनूप)।

अनूपशहर (जिला बुलंदशहर, उ० प्र०)

अनूपराय बडगूजर ने इस नगर को जहांगीर के राज्यकाल में बसाया था। यह कस्बा गंगा के दक्षिण तट पर स्थित है।

अनेगुंडी (जिला रायचूर, मैसूर)

तुंगभद्रा के तट पर बसा हुआ अत्यंत प्राचीन नगर। नगर के दूसरी ओर हंपी के खंडहर हैं जहां 16वीं सदी का प्रसिद्ध ऐश्वर्यशाली नगर विजयनगर स्थित था। तालीकोट के निर्णायक युद्ध (1565 ई०) के पश्चात हंपी और

अनेगुडी दोनो ही नगरो को मुसलमान विजेताओ ने लूट कर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। अनेगुडी शब्द का अथ हाथी-घर है। यहीं विजयनगर दरबार के हाथी रखे जाते थे। अब यह जगह बिलकुल खण्डहर हो गई है। कुछ विद्वाना के मत मे चीनो यात्री युवानच्वाग द्वारा वर्णित 'कोगकीनयापुल' या कुकुनपुर यही अनेगुडी था। विजयनगर के नरेशो द्वारा बनवाए हुए भवनो के चिह्न यहा अब भी वतमान हैं। 'ओचा अप्पमठ' के स्तभ और गणेश मदिर की पाषाणजालिया तथा सुदर उत्कीण मूर्तिया प्राचीन कला वैभव के ज्वलत उदाहरण है। स्तभ काले पत्थर के बने हुए हैं और उन पर गहरी नक्काशी है। स्तभो की नक्काशी और उन पर मूर्तियो का उत्किरण बिलारी ज़िले के हुविना हदगट्ट मदिर की याद दिलाते हैं। आचाअप्प मठ की छत पर प्राचीन चित्रकारी के अश भी मिले हैं। एक फलक पर हाथी की मुद्रा मे स्थित पाच नतकियो के ऊपर शिव को आसीन दिखाया गया है। इसी प्रकार घोडे तथा पाल्की की आकृतिया के रूप मे स्त्रियो का अकन किया गया है। यह चित्रकारी शायद 17 वी शती की है।

जनश्रुति के अनुसार रामायण मे वर्णित वानरा की राजधानी किष्किधा अनेगुडी के स्थान पर ही बसी हुई थी।

अनोत्तत

हिमाल्य पवत पर स्थित एक सरोवर जिससे गगा, वक्षु, सिंधु और सीता नदियो का उद्गम माना गया है। बौद्ध एव जैन साहित्य तथा चीनी ग्रथो म इसका उल्लेख है। इसका मूल नाम सभवत अनवतप्त था। श्री बी० सी० लॉ के मत मे यह सरोवर वतमान रावणह्रद है। यह भी सभव है कि मानसरोवर ही का बौद्ध एव जैन साहित्य मे अनोतत्त-सरावर कहा गया हा।

अनोमा

बौद्ध साहित्य म प्रसिद्ध नदी। बुद्ध की जीवन कथाओ मे वर्णित है कि सिद्धाथ ने कपिलवस्तु को छोडने के पश्चात् इस नदी को अपने घोडे कथक पर पार किया था और यही से अपने परिचारक छदक को विदा कर दिया था। इस स्थान पर उन्होने राजसी वस्त्र उतार कर अपने केशो को काट कर फेंक दिया था। किवदती के अनुसार ज़िला बस्ती, उ० प्र० मे खलीलाबाद रेलस्टेशन से लगभग 6 मील दक्षिण की ओर जो कुदवा नाम का एक छोटा सा नाला बहता है वही प्राचीन अनोमा है और क्योंकि सिद्धाथ के घोडे ने यह नदी कूद कर पार की थी इसलिए कालातर मे इसका नाम 'कुदवा' हो गया। कुदवा से एक मील दक्षिण पूव की आर एक मील लम्बे चौडे क्षेत्र मे खण्डहर हैं

जहा तामेश्वरनाथ का वतमान मदिर है। युवानच्वाग के वणन के अनुसार इस स्थान के निकट अशोक के तीन स्तूप थे जिनसे बुद्ध के जीवन की इस स्थान पर घटने वाली उपर्युक्त घटनाओ का बोध होता था। इन स्तूपो के अवशेष शायद तामेश्वरनाथ मदिर के तीन मील उत्तर पश्चिम की ओर बसे हुए महा थानडीह नामक ग्राम के आसपास तीन डूहा के रूप म आज भी देखे जा सकते हैं। यह डह मगहर स्टेशन से दो मील दक्षिण पश्चिम मे हैं। श्री बी० सी० लॉ के मत म जिला गोरखपुर की ओमी नदी ही प्राचीन अनोमा है।

अन्हलवाडा (गुजरात)=पाटन

प्राचीन गुजरात की महिमामयी राजधानी पाटन या अन्हलवाडा की स्थापना चावडा वश के वनराज या वदाज द्वारा 746 ई० मे हुई थी। उसे इस काय म जैनाचाय शील्गुण से विशेष सहायता मिली थी। वनराज के पिता जयकृष्ण का राज्य, कच्छ की रन के निकटस्थ पचमर नामक स्थान पर था। वनराज ने नए नगर का सरस्वतीनदी के तट पर स्थित प्राचीन ग्राम लखराम की जगह बसाया था। यह सूचना हमे जैन पट्टावलियो से मिलती है। धमसागर कृत प्रवचनपरीक्षा मे 1304 ई० तक अन्हलवाडा के राजाओ का वणन है। एक किंवदती के अनुसार जब 770 ई० के लगभग अरब आक्रमणकारियो न काठियावाड के प्रसिद्ध नगर वल्लभीपुर का नष्ट कर दिया ता वहा के राजपूतो ने अन्हलवाडा बसाया था। अन्हलवाडा मे चावडावश का शासनकाल 942 ई० तक रहा। इस वप चालुक्य अथवा सोलकी वश के नरेश मूलराज ने गुजरात के इस भाग पर अधिकार कर लिया। चालुक्य शासनकाल मे गुजरात उन्नति के शिखर पर पहुच गया। मूलराज ने सिद्धपुर मे रुद्रमहालय नामक देवालय निर्मित किया था। इस वश मे सिद्धराज जयसिंह (1094–1143 ई०) सबम प्रसिद्ध राजा था। यह गुजरात की प्राचीन लोक कथाओ मे मालवा के भाज की तरह ही प्रसिद्ध है। जैनाचाय हमचद्र, सिद्धराज के ही राज्याश्रय मे रहते थे। हेमचद्र और उनके समकालीन सोमश्वर के ग्रथो मे 12वी शती के पाटन के महान् ऐश्वय का विवरण मिलता है। सिद्धराज के समय मे इस नगर म अनेक सत्रालय और मठ स्थापित किए गए थे। इनमे विद्वानो और निधनो को नि शुल्क भोजन तथा निवासस्थान दिया जाता था। इस काल म पाटन, गुजरात की राजनीति, धम तथा सस्कृति का एकमात्र महान केन्द्र था। जैन धम की भी यहा 12वी शती म बहुत उन्नति हुई। सिद्धराज विद्या तथा कलाओ का प्रेमी था और विद्वानो का आश्रयदाता था।

सिद्धराज क पश्चात मुसलमान आक्रमणकारियो न इस नगर की सारी

श्री समाप्त कर दी। गुजरात में किंवदंती है कि महमूद गजनवी ने इस नगर को लूटा ही था किंतु मु० तुगलक ने इसे पूरी तरह उजाड कर हल चलवा दिए थे। मु० तुगलक से पहले अलाउद्दीन खिलजी ने 1304 ई० में पाटन-नरेश कर्णबघेला को परास्त किया था और इस प्रकार यहा के प्राचीन हिंदू राज्य की इतिश्री कर दी थी। 15वी शती मे गुजरात का सुलतान अहमदशाह पाटन से अपनी राजधानी उठा कर नए बसाए हुए नगर अहमदाबाद मे ले गया और इसके साथ ही पाटन के गौरव का सूर्य अस्त हो गया।

पाटन या पाटण अब भी एक छोटा सा कस्बा है जो महसाणा से 25 मील दूर है। स्थानीय जनश्रुति है कि महाभारत मे उल्लिखित हिडिंबवन पाटन के निकट ही स्थित था और भीम ने हिडिंब राक्षस को मारकर उसकी बहिन हिडिंबा से यही विवाह किया था। पाटन के खण्डहर सहस्रलिंग झील के किनारे स्थित है। इसकी खुदाई म अनेक बहुमूल्य स्मारक मिले है—इनमे मुख्य हैं भीमदेव प्रथम की रानी उदयमती की बाव या बावडी, रानी महल और पार्श्वनाथ का मदिर। ये सभी स्मारक वास्तुकला के सुदर उदाहरण हैं।

अपान्तर

पाणिनि 4,3,32 मे उल्लिखित यह स्थान सिंध नदी (पाकिस्तान) के तट पर स्थित भक्खर जान पडता है।

अपग

ब्रह्मांडपुराण 49 मे उल्लिखित सभवत वर्तमान अफगानिस्तान है। (न० ला० डे)।

अपरकाशि

महाभारत मे वर्णित है। गगा गोमती के बीच का प्रदेश प्राचीन काल मे काशी कहलाता था। अपरकाशि इस प्रदेश का पश्चिमी भाग था। (दे० वा० श० अग्रवाल का कादंबिनी, अक्तूबर 62 मे प्रकाशित लेख)।

अपरताल

वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाड 68,12 मे इस स्थान का उल्लेख अयोध्या के दूतो की केकय देश (पजाब के अतगत) की यात्रा के प्रसग मे है—'ययुर्मध्येन नापरतालस्य प्रलम्बस्योत्तर प्रति निषेवमाणाजग्मुनदीमध्येन मालिनीम्'। इस देश के सबध मे मालिनी-नदी का उल्लेख होने से यह जान पडता है कि इस देश मे जिला बिजनौर और गढवाल (उ० प्र०) का कुछ भाग सम्मिलित रहा होगा। मालिनी गढ़वाल के पहाडो से निकल कर बिजनौर नगर से 6 मील दूर गगा मे रावलीघाट के निकट मिलती है। इसके आगे दूतो के हस्तिनापुर

जहा तामेश्वरनाथ का वतमान मदिर है। युवानच्वाग के वणन के अनुसार इस स्थान के निकट अशोक के तीन स्तूप थे जिनमे बुद्ध के जीवन की इस स्थान पर घटने वाली उपयुक्त घटनाओ का बोध होता था। इन स्तूपो के अवशेष शायद तामेश्वरनाथ मदिर के तीन मील उत्तर पश्चिम की ओर बसे हुए महा-यानडीह नामक ग्राम के आसपास तीन डूहा के रूप मे आज भी देखे जा सकते हैं। यह डूह मगहर स्टेशन से दो मील दक्षिण पश्चिम मे हैं। श्री बी० सी० लॉ के मत मे जिला गोरखपुर की आमी नदी ही प्राचीन अनोमा है।

अहलवाडा (गुजरात)=पाटन

प्राचीन गुजरात की महिमामयी राजधानी पाटन या अहल्वाडा की स्थापना चावडा वश के वनराज या वदाज द्वारा 746 ई० मे हुई थी। उसे इस काय मे जैनाचाय शीलगुण से विशेष सहायता मिली थी। वनराज के पिता जयकृष्ण का राज्य कच्छ की रन के निकटस्थ पचमर नामक स्थान पर था। वनराज ने नए नगर को सरस्वतीनदी के तट पर स्थित प्राचीन ग्राम लखराम की जगह बसाया था। यह सूचना हमे जैन पट्टावलियो से मिलती है। धमसागर कृत प्रवचनपरीक्षा मे 1304 ई० तक अहल्वाडा के राजाओ का वणन है। एक किवदती के अनुसार जब 770 ई० के लगभग अरब आक्रमणकारियो ने काठियावाड के प्रसिद्ध नगर वल्लभीपुर को नष्ट कर दिया तो वहा के राजपूतो ने अहल्वाडा बसाया था। अहल्वाडा मे चावडावश का शासनकाल 942 ई० तक रहा। इस वष चालुक्य अथवा सोलकी वश के नरेश मूलराज ने गुजरात के इस भाग पर अधिकार कर लिया। चालुक्य शासनकाल मे गुजरात उन्नति के शिखर पर पहुच गया। मूलराज ने सिद्धपुर मे रुद्रमहालय नामक देवालय निर्मित किया था। इस वश मे सिद्धराज जयसिंह (1094–1143 ई०) सबसे प्रसिद्ध राजा था। यह गुजरात की प्राचीन लोक कथाओ मे मालवा के भोज की तरह ही प्रसिद्ध है। जैनाचाय हेमचद्र, सिद्धराज के ही राज्याश्रय मे रहते थे। हेमचद्र और उनके समकालीन सोमेश्वर के ग्रथो मे 12वी शती के पाटन के महान ऐश्वय का विवरण मिलता है। सिद्धराज के समय मे इस नगर मे अनेक सत्रालय और मठ स्थापित किए गए थे। इनमे विद्वानो और निधनो का नि शुल्क भोजन तथा निवासस्थान दिया जाता था। इस काल म पाटन, गुजरात की राजनीति, धम तथा सस्कृति का एकमात्र महान केन्द्र था। जन धम की भी यहा 12वी शती म बहुत उन्नति हुई। सिद्धराज विद्या तथा कलाओ का प्रेमी था और विद्वानो का आश्रयदाता था।

सिद्धराज के पश्चात मुसल्मान आक्रमणकारियो ने इस नगर की सारी

श्री समाप्त कर दी। गुजरात म किंवदंती है कि महमूद गजनवी ने इस नगर को लूटा ही था किंतु मु० तुगलक ने इसे पूरी तरह उजाड कर हल चलवा दिए थे। मु० तुगलक से पहले अलाउद्दीन खिलजी ने 1304 ई० मे पाटन नरेश कणबघेला को परास्त किया था और इस प्रकार यहा के प्राचीन हिंदू राज्य की इतिश्री कर दी थी। 15वी शती मे गुजरात का सुलतान अहमदशाह पाटन से अपनी राजधानी उठा कर नए बसाए हुए नगर अहमदाबाद मे ले गया और इसके साथ ही पाटन के गौरव का सूर्य अस्त हो गया।

पाटन या पाटण अब भी एक छोटा सा कस्बा है जो महसाणा से 25 मील दूर है। स्थानीय जनश्रुति है कि महाभारत मे उल्लिखित हिडिंबवन पाटन के निकट ही स्थित था और भीम ने हिडिंब राक्षस को मारकर उसकी बहिन हिडिंबा से यही विवाह किया था। पाटन के खण्डहर सहस्रलिंग झील के किनारे स्थित हैं। इसकी खुदाई मे अनेक बहुमूल्य स्मारक मिले हैं—इनमे मुख्य हैं भीमदेव प्रथम की रानी उदयमती की वाव या बावडी, रानी महल और पार्श्वनाथ का मंदिर। ये सभी स्मारक वास्तुकला के सुंदर उदाहरण है।

अपाकर

पाणिनि 4,3,32 मे उल्लिखित यह स्थान सिंध नदी (पाकिस्तान) के तट पर स्थित भक्खर जान पडता है।

अपग

ब्रह्मांडपुराण 49 म उल्लिखित संभवत वर्तमान अफगानिस्तान है। (न० ला० डे)।

अपरकाशि

महाभारत म वर्णित है। गगा गोमती के बीच का प्रदेश प्राचीन काल मे काशी कहलाता था। अपरकाशि इस प्रदेश का पश्चिमी भाग था। (द० बा० ना० अग्रवाल का कादंबिनी, अक्तूबर 62 मे प्रकाशित लेख)।

अपरताल

वाल्मीकि रामायण अयोध्याकांड 68,12 मे इस स्थान का उल्लेख अयोध्या के दूतो की केकय देश (पजाब के अंतर्गत) की यात्रा के प्रसंग मे है—'यते नापरतालस्य प्रलम्बस्योत्तर प्रति निषेवमाणाजग्मुर्नदीमध्येन मालिनीम्'। इस देश के सबध मे मालिनी नदी का उल्लेख होने से यह जान पडता है कि इस देश मे जिला बिजनौर और गढवाल (उ० प्र०) का कुछ भाग सम्मिलित रहा होगा। मालिनी गढवाल के पहाडो से निकल कर बिजनौर नगर से 6 मील दूर गगा मे रावलीघाट के निकट मिलती है। इसके आगे दूतो के हस्तिनापुर

मे पहुच कर गगा को पार करने का उल्लेख है (68,13) । इससे भी यह अभिज्ञान ठीक ही जान पडता है । प्रलब बिजनौर ज़िले का दक्षिण भाग था क्योकि उपर्युक्त उद्धरण मे उसे मालिनी के दक्षिण मे बताया गया है । मालिनी इस ज़िले के उत्तरी भाग मे बहती है ।

अपरनदा

'तत प्रयात कौन्तेय क्रमेण भरतर्षभ, नन्दामपरनन्दा च नद्यौ पापभयापहे' महा० वन० 110,1 पाडवो की तीर्थयात्रा के प्रसग मे नदा और अपरनदा नामक नदियो का उल्लेख है जो सदर्भानुसार पूर्वबिहार या बगाल की नदियां जान पडती है । अभिज्ञान अनिश्चित है ।

अपरमत्स्य

'सुकुमार वशे चक्रे सुमित्र च नराधिपम, तथैवापरमत्स्याश्च व्यजयत् स पटच्चरान्' महा० वन० 31 4 । इस उद्धरण से सूचित होता है कि सहदेव ने अपनी दिग्विजययात्रा मे अपरमत्स्य देश को जीता था । इससे पूव उन्होने शूरसेन और मत्स्य नरेशो पर भी विजय प्राप्त की थी (वन० 31,4) । इससे जान पडता है कि अपरमत्स्य देश मत्स्य (जयपुर-अलवर क्षेत्र) के निकट ही, सभवत उससे दक्षिण पूव की ओर था जसा कि सहदेव के यात्राक्रम से सूचित होता है । उपयुक्त उद्धरण से यह भी स्पष्ट है कि अपरमत्स्य देश मे पटच्चर या पाटच्चर (यह अपरमत्स्य के पार्श्ववर्ती प्रदेश का नाम हो सकता है) नामक लोगो का निवास था । सभवत ये लोग चोरी करने मे अभ्यस्त थे जिससे 'पाटच्चर' का सस्कृत मे अर्थ ही चोर हो गया है । रायचौधरी के मत मे यह देश चबल-तट के उत्तरी पहाडो मे स्थित था (दि पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एशेंट इडिया, चतुर्थ सस्करण, पृ०116) दे० **पटच्चर** ।

अपरसेक

'सेकानपरसेकाश्च व्यजयत सुमहाबल' महा० सभा० 31,1 । सहदेव ने दक्षिण दिशा की विजययात्रा मे सेक और अपरसेक नामक देशो पर विजय प्राप्त की थी । प्रसग से जान पडता है कि ये देश चबल और नर्मदा के बीच मे स्थित होगे ।

अपरान्त

(1) महाराष्ट्र के अतर्गत उत्तर कोकण (गोआ आदि का इलाका) । अपरान्त का प्राचीन साहित्य मे अनेक स्थानो पर उल्लेख है—"तत शूर्पारक देश सागरस्तस्य निर्ममे, सहसा जामदग्न्यस्य सोऽपरान्तमहीतलम्' महा० शान्ति० 49,66-67 । 'तथापरान्ता सौराष्ट्रा शूराभीरास्तथार्बुदा '—विष्णु०

2,3,16। 'तस्यानीकैर्विसर्पद्भिरपरान्तजयोद्यतै' रघु० 4,53। कालिदास ने रघु की दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे पश्चिमी देशो के निवासियो को अपरात नाम से अभिहित किया है और इसी प्रकार कोशकार यादव ने भी 'अपरान्तास्तु-पाश्चात्यास्ते' कहा है। रघुवश 4,58 मे भी अपरात के राजाओ का उल्लेख है। इस प्रकार अपरात नाम सामान्य रूप से पश्चिमी देशो का व्यजक था किंतु विशेषरूप से (जैसे महाभारत के उपर्युक्त उद्धरण मे) इस नाम से उत्तर-कोकण का बोध होता था। महावश 12,4 के उल्लेख के अनुसार अशोक के शासनकाल मे यवन धमरक्षित को अपरात मे बौद्धधम के प्रचार के लिए भेजा गया था। इस सदभ मे भी अपरात से पश्चिम के देशो का ही अर्थ ग्रहण करना चाहिए। महाभारत शान्ति० 49,66 67 से सूचित होता है कि शूर्पारक नामक देश को जो अपरातभूमि मे स्थित था, परशुराम के लिए सागर ने छोड दिया था ('तत शूर्पारक देश सागरस्तस्य निममे, सहसा जामदग्नस्य सोपरान्त-महीतलम')। सभा० 51 28 से सूचित होता है कि अपरात देश मे जो परशुराम की भूमि थी तीक्ष्ण फरसे (परशु) बनाए जाते थे—('अपरात समुदभूतास्तथैव परशून्छितान्) गिरनार-स्थित रुद्रदामन के प्रसिद्ध अभिलेख मे अपरात का रुद्रदामन द्वारा जीत जाने का उल्लेख है—'स्ववीर्याजितनामनुरक्त सवप्रकृतीना सुराष्ट्रश्वभ्रभरुकच्छसिधुसौवीरकुकुरापरान्तनिषादादीना'—यहा अपरात कोकण का ही पर्याय जान पडता है। विष्णुपुराण मे अपरात का उत्तर के देशो के साथ उल्लेख है। वायुपुराण म अपरात को अपरित कहा गया है।

(2) ब्रह्मदेश (बमा) के एक प्राचीन नगर का नाम जो आज भी भारतीय औपनिवेशिको का स्मरण दिलाता है।

अपरातिक

लैटिन भाषा के पैरिप्लस नामक यात्रावृत्त (प्रथम शती ई०) मे अपरातिक या अपरात को ही शायद एरिआके नाम से अभिहित किया गया है। रायचौधरी के अनुसार एरिआके वराहमिहिर की बृहत्सहिता मे उल्लिखित अयक भी हो सकता है—(पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एशेंट इडिया—चतुथ सस्करण, पृ० 406)।

अपरित दे० **अपरात**

अपसढ (जिला गया, बिहार)

इस स्थान से मगधवशीय राजा आदित्यसेन का एक महत्त्वपूण अभिलेख प्राप्त हुआ था। इसमे आदित्यसेन की माता श्रीमती द्वारा एक विहार और उसकी पत्नी कोणदेवी द्वारा एक तडाग बनवाए जाने का उल्लेख है। अभिलेख तिथिहीन है। इसमे अतिम गुप्तनरेशो के बारे मे और उनकी मौखरियो से

पतिद्वद्विता का जिक्र है जो ऐतिहासिक दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण है। इसमें दी गई वंशावली इस प्रकार है—कृष्णगुप्त, हर्षगुप्त, जीवितगुप्त, कुमारगुप्त (इसने मौखरी नरेश ईश्वरवमन् को पराजित किया), दामोदरगुप्त (इसने हूणों के विजेता मौखरियों को परास्त किया, यह स्वय भी युद्ध मे मारा गया था,) महासेनगुप्त (इसने कामरूप-नरेश सुस्थिववमन् को पराजित किया), माधवगुप्त (यह कन्नौजाधिप हर्ष के साहचय म रहा था) और आदित्यसेन।

अपापापुर=पावापुरी (बिहार)

बिहारशरीफ स्टेशन से 9 मील पर स्थित है। अतिम जैन तीर्थंकर महावीर के मृत्युस्थान के रूप मे यह स्थान इतिहास प्रसिद्ध है। महावीर की मृत्यु 72 वप की आयु मे अपापापुर के राजा हस्तिपाल के लेखकों के कार्यालय मे हुई थी। उस दिन कार्तिकमास के कृष्णपक्ष की अमावस्या थी। विविध तीर्थ कल्प के अनुसार अतिम जिन या तीर्थंकर महावीर की वाणी इस स्थान के निकट स्थित एक पहाडी की गुफा मे गूजती थी। इस जैन ग्रन्थ के अनुसार महावीर जृंभिका से महासेनवन मे आए थे। यहा उन्होने दो दिन के उपवास के पश्चात अपना अतिम उपदेश दिया और राजा हस्तिपाल के करागृह मे पहुच कर निर्वाण प्राप्त किया। (दे० पावापुरी)

अफगानिस्तान दे० गधार

अफजलगढ़ (जिला बिजनौर, उ० प्र०)

इसे नवाब अफजलखा पठान (1749 1794 ई०) न बसाया था।

अबोहर (जिला फिरोजपुर, पजाब)

भट्टी राजपूत राजा जार का बसाया हुआ नगर। कहा जाता है कि नगर का नाम उमाहर अथवा उमो (राजपूत रानी का नाम) का नाम है। अलाउद्दीन खिल्जी के समय यह नगर राजामल भट्टी के अधिकार मे था। 1328 ई० मे मुहम्मद तुगलक और हिन्दुओ की सेनाओं में यहां निर्णायक युद्ध हुआ था। तारीख फीरोजशाही का लेखक शम्सशिराज अफीफ अबोहर निवासी ही था। अबोहर का उल्लेख इब्नबतूता ने अपने यात्रा विवरण म किया है।

अभयवापी (लका)

महावश 10 88 म उल्लिखित स्थान यनमार यमयप्रुम। इसे सिह-रेश पाण्डुकाभय ने बनवाया था।

अभिकाल

वाल्मीकि रामायण 2,68,11 म इस स्थान का उल्लेख अयोध्या के दूतों की यात्रा के प्रसग मे है—'अभिकालतत प्राप्य तेजोभिभवनाच्च्युता। ...

पड़ता है कि यह स्थान पंजाब में व्यास नदी के पूर्व की ओर स्थित होगा क्योंकि इस नदी का वर्णन 2,68,19 में है जो दूतों को अभिकाल में पश्चिम की ओर चलने पर मिली थी।

अभिसारी

महाभारत सभा० 27,19 में अभिसारी नामक नगरी पर अर्जुन द्वारा विजय प्राप्त करने का उल्लेख है—'अभिसारी ततो रम्या विजिग्ये कुरुनन्दन । उरगावासिन चैव राचमान रणेऽजयत'। प्रसंग से सूचित होता है कि अभिसारी ग्रीक लेखकों का आब्रिसारिस नामक नगर या राज्य है जो तक्षशिला के उत्तर के पर्वतों में बसा हुआ था। अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के समय (327 ई० पू०), यहां के राजा तथा तक्षशिलानरेश आंभी ने बिना युद्ध किए ही यवनराज से मित्रता की संधि कर ली थी। यह छोटा-सा राज्य चिनाब नदी के पश्चिम में पूंछ, राजोरी और भिंमर की पहाड़ियों में स्थित था। इस इलाके को छिमाल भी कहा जाता है। महाभारत के उद्धरण में उरगा या उरशा वर्तमान हज़ारा (प० पाकिस्तान) है।

अमरकंटक (म०प्र०)

रीवां से 160 मील और पेंड्रा रेलस्टेशन से 15 मील दूर नर्मदा तथा शोण या सोन के उद्गम-स्थान के रूप में प्रख्यात है। यह पठार समुद्रतट से 2500 फुट से 3500 फुट तक ऊंचा है। नर्मदा का उद्गम एक पर्वतकुंड में बताया जाता है। अमरकंटक में नर्मदा के उदगम स्थान के पर्वत को सोम भी कहा गया है। (दे० सोमोद्भवा) अमरकंटक ऋक्षपर्वत का एक भाग है जो पुराणों में वर्णित सप्तकुलपर्वतों में से एक है। अमरकंटक में अनेक मंदिर और प्राचीन मूर्तियां हैं जिनका संबंध पांडवों से बताया जाता है किंतु मूर्तियों में से अधिकांश पुरानी नहीं हैं। वास्तव में प्राचीन मंदिर थोड़े ही है—इनमें से एक त्रिपुरी के कलचुरि-नरेश कर्णदेव (1041-1073 ई०) का बनवाया हुआ है। इसे कर्णदहरिया का मंदिर कहते हैं। यह तीन विशाल शिखरयुक्त मंदिरों के समूह में मिलकर बना है। ये तीनों पहले एक महामंडप से संयुक्त थे किंतु अब यह नष्ट हो गया है। बेगलर के अनुसार तीन कलश-युक्त भास्कर्य तथा मूर्तियों से अलंकृत शिखर सहित इस मंदिर की अलौकिक सुंदरता केवल देखने से ही अनुभूत की जा सकती है। इस मंदिर के बाद का बना हुआ एक अन्य मंदिर मच्छींद्र का भी है। इसका शिखर भुवनेश्वर के मंदिर के शिखर की आकृति का है। यह मंदिर कई विशेषताओं में कर्णदहरिया के मंदिर का अनुकरण जान पड़ता है।

नर्मदा का वास्तविक उदगम उपर्युक्त कुंड से थोड़ी दूर पर है। बाण ने

इसे चद्रपवत वहा है (दे० चद्र, सोमोद्भवा) यही से आगे चलकर नमदा एक छोटे से नाले के रूप मे बहती दिखाई पडती है। इस स्थान से प्राय ढाई मील पर अरडी सगम तथा एक मील और आगे नमदा की कपिलधारा स्थित है। कपिलधारा नमदा का प्रथम प्रपात है जहा नदी 100 फुट की ऊचाई से नीचे गहराई मे गिरती है। इसके थोडा और आगे दुधधारा है जहा नमदा का शुभ्रजल दूध के श्वेत फेन के समान दिखाई देता है। शोण या सोन नदी का उद्गम नमदा के उद्गम से एक मील दूर सोन मूढा नामक स्थान से हुआ है। यह भी नमदा स्रोत के समान ही पवित्र समझा जाता है—(दे० अमरकूट, आम्रकूट) महाभारत वन० 85,9 मे नमदा शोण उद्भव के पास वशगुल्म नामक तीथ का उल्लेख है। यह स्थान प्राचीन काल मे विदभ देश के अतगत था। वशगुल्म का अभिनान वासिम मे किया गया है।

अमरकुण्ड

जैन ग्रथ विविध तीथकल्प मे आध्रप्रदेश के इस नगर को जैनतीथ माना गया है। ग्रथ के अनुसार इस स्थान के निकट एक पहाड पर एक सुदर मदिर स्थित था जिसमे ऋषभदेव और शातिनाथ की मूर्ति प्रतिष्ठापित थी।

अमरकूट (म० प्र०)

रीवा से 97 मील दूर एक पहाडी है जो अमरकटक का ही एक भाग है। यह गहनवनो से आच्छादित है। कई विद्वानो का मत है कि मेघदूत 1,16 मे वर्णित आम्रकूट यही है।

अमरकोट (सिंध, प० पाकिस्तान)

दिल्ली से सिंध जाने वाले माग पर जिला थरपारकर का मुख्य स्थान है। 1542 ई० मे जब दुर्भाग्यग्रस्त हुमायू और हमीदा बेगम दुश्मनो से बचकर यहा भागते हुए आए थे, तो भावी मुगल सम्राट अकबर का जन्म इसी स्थान पर हुआ था (रविवार, 15 अक्टूबर, 1542 ई०)। इस घटना का सूचक एक प्रस्तर-स्तभ आज भी अकबर के जन्मस्थान पर गडा हुआ है। कहा जाता है कि पुत्रजन्म का समाचार हुमायू को उस समय मिला जब वह अमरकोट से कुछ दूरी पर ठहरा हुआ था। वह इस समय अकिंचन था और उसने अपने साथियो को इस शुभ समाचार को सुनने के पश्चात् कस्तूरी के कुछ टुकडे बाट दिए और कहा कि कस्तूरी की सुगध की भाति ही बालक का यश सौरभ ससार मे भर जाए। उसका यह आशीर्वाद आगे चलकर भविष्यवाणी सिद्ध हुआ।

अमरगढ (जिला परभणी, महाराष्ट्र)

मध्यकालीन, (सभवत देवगिरि के यादवनरेशो के समय का) एक दुग यहा

स्थित है।

अमरनाथ (कश्मीर)

हिमाच्छादित शैलमालाओ के बीच समुद्रतल से लगभग 12000 फुट की ऊंचाई पर पहलगाव से 27 मील दूर प्राचीन महत्त्वपूर्ण तीर्थ है। गुफा म ऊपर से जल टपकने के कारण नीचे हिमनिर्मित शिवलिंग की आकृति उच्च्यवाश्म (Stalagmite) बन जाती है जिसके लिए कहा जाता है कि यह शुक्लपक्ष मे स्वय निर्मित होकर कृष्णपक्ष मे धीरे-धीरे विगलित हो जाती है। अमरनाथ की यात्रा वर्ष म केवल एक दिन श्रावणपूर्णिमा—रक्षाबधन दिवस को होती है (दे० अमरपवत)।

अमरपवत

'कृत्स्न पचनद चैव तथैवामरपवतम्, उत्तरज्योतिप चैव तथा दिव्यकट पुरम्-द्वारपाल च तरसा वशेचक्रे महाद्युति' महा० सभा 32, 11-12। नकुल ने अपनी पश्चिम दिशा की विजय यात्रा के प्रसग मे अमरपवत को विजित किया था। प्रसग से यह पजाब का कोई पवत जान पडता है। सभव है अमरनाथ को ही इस उद्धरण मे अमरपवत कहा गया हो।

अमरपुर (ज़िला कोल्हापुर, महाराष्ट्र)

कोल्हापुर से 33 मील दूर स्थित नृसिंहवाडी का प्राचीन नाम है। यहा अमरेश्वरमहादेव का प्राचीन मदिर है। अमरपुर पचगगा और कृष्णा के सगम पर स्थित है।

अमरवेलि (गुजरात)

गुजरात की एक छोटी नदी जो मेहसाणा तालुके मे स्थित परसोडा ग्राम के निकट साबरमती मे मिलती है। सगम पर विभाडक के पुत्र शृगी ऋषि के आश्रम की स्थिति मानी जानी है। इनका उल्लेख वाल्मीकि रामायण तथा महाभारत मे है। इसे ऋपितीर्थ भी कहा जाता है। चर्मरी और सुरसरि नामक अन्य दो सरिताए भी यहा साबरमती मे मिलती है।

अमराबाद (ज़िला मेहबूबनगर, आ० प्र०)

इस तालुके मे वारगल के राजा प्रतापरुद्र के समय म बना हुआ प्रतापरुद्र-काट नामक दुग स्थित है जो अब खडहर हो गया है। अमराबाद के पठार की पहाडियो पर प्राचीन मदिर भी है जिनमे महेश्वर का मदिर एक ऊचे शिखर पर बना ह। इस तक पहुचने के लिए नौसौ सीढिया है।

अमरावती (1)=धान्यकटक (आ० प्र०)

कृष्णा नदी के तट पर अवस्थित, प्राचीन आध्र की राजधानी है। आध्र-

वंशीय सातवाहन नरेश शातकर्णी ने संभवत 180 ई० पू० के लगभग इस स्थान पर अपनी राजधानी स्थापित की थी। सातवाहन-नरेश ब्राह्मण होते हुए भी बौद्ध—हीनयान—मत के पोषक थे और उन्हीं के शासन काल में अमरावती का प्रख्यात बौद्ध स्तूप बना था जो 13वीं शती तक अनेक बौद्ध यात्रियों के आकर्षण का केन्द्र बना रहा। इस स्तूप की वास्तुकला और मूर्तिकारी सांची और भरहुत की कला के समान ही सुंदर, सरल और परमोत्कृष्ट है और संसार की धार्मिक मूर्तिकला में उसका विशिष्ट स्थान माना जाता है। बुद्ध के जीवन की कथाओं के चित्र जो मूर्तियों के रूप में प्रदर्शित हैं, यहां के स्तूप पर सैकड़ों की संख्या में उत्कीर्ण थे। अब यह स्तूप नष्ट हो गया है किंतु इसकी मूर्तिकारी के अवशेष संग्रहालय में सुरक्षित है। धान्यकटक की निकटवर्ती पहाड़ियों में श्रीपर्वत या नागार्जुनीकोंड नामक स्थान था जहां बौद्ध दार्शनिक नागार्जुन काफी समय तक रहे थे। आंध्रवंश के पश्चात अमरावती में कई शतियों तक इक्ष्वाकु राजाओं का शासन रहा। इन्होंने इस नगरी को छोड़कर नागार्जुनीकोंड या विजयपुर को अपनी राजधानी बनाया। अमरावती अपने समृद्धिकाल में प्रसिद्ध व्यापारिक नगरी भी थी। समुद्र से कृष्णा नदी होकर अनेक व्यापारिक जलयान यहां पहुंचते थे। वास्तव में इसकी समृद्धि तथा कला का एक कारण इसका व्यापार भी था।

(2) उज्जयिनी का एक प्राचीन नाम।

(3) कावेरी की सहायक नदी। अमरावती-कावेरी संगम से 6 मील पर करूर या तिरुआनिलै नगर बसा है जो अमरावती के वाम तट पर है।

(4) (अनाम) प्राचीन भारतीय उपनिवेश चंपा का उत्तरी भाग। 7वीं शती ई० के प्रारंभ में यहां चंपा के राजा प्रमहाराज श्रीभद्रवर्मन का आधिपत्य था। इसकी मृत्यु 493 ई० में हुई थी। चंपापुर तथा इंद्रपुर यहां के दो प्रसिद्ध नगर थे।

अमरेंद्रपुर (कंबोडिया)

प्राचीन कंबुज का एक नगर जहां 9वीं शती ई० के हिंदू राजा जयवर्मन् द्वितीय की राजधानी कुछ कालपर्यंत रही थी। यह नगर वर्तमान अंगकोर-थाम के उत्तर पश्चिम में 100 मील की दूरी पर स्थित था।

अमरेश्वर दे० ओंकारेश्वर

अमरोल (म० प्र०)

इस स्थान से 7वीं शती ई० से 9वीं शती ई० तक के मंदिरों के अवशेष मिले हैं।

अमरोहा (जिला मुरादाबाद, उ० प्र०)

प्राचीन नाम अविकानगर कहा जाता है। यह पहले बडा नगर था।

अमित तोसल

गडव्यूह नामक ग्रन्थ मे इस जनपद का उल्लेख है। यह सभवत तोसल या तोसलि का प्रदेश था जो उडीसा मे भुवनेश्वर के निकट स्थित वर्तमान धौली नामक स्थान है।

अमीन (पजाब)

थानेसर से लगभग 5 मील देहली अम्बाला रेलमार्ग पर कुरुक्षेत्र के प्रदेश मे स्थित है। कहा जाता है कि महाभारतयुद्ध के समय द्रोणाचार्य ने चक्रव्यूह की रचना इसी स्थान पर की थी और अभिमन्यु ने इसीको तोडते समय वीर गति प्राप्त की थी। अभिमन्यु वध का वर्णन महा० द्रोण० 49 म इस प्रकार है—'उत्तिष्ठमान सौभद्र गदया मूर्ध्न्यताडयत्। गदावेगेन महता व्यायामेन च मोहित। विचेता न्यपतद भूमौ सौभद्र परवीरहा। एव विनिहतो राजन्नेको बहुभिराहवे—(द्रोण० 49,13–14)। अमीन शब्द को अभिमन्यु के नाम से सबधित कहा जाता है। अमीन ग्राम के निकट ही कर्णवध नामक एक खाई है। जनश्रुति है कि इसी स्थान पर कर्ण को अर्जुन ने मारा था। जयद्रथ के मारे जाने का स्थान जयधर भी अमीन गाव के निकट ही है।

अमृतसर (पजाब)

यह सिखो का महान तीर्थ है। किंवदती है कि रामायणकाल मे अमृतसर के स्थान पर एक घना वन था जहा एक सरोवर भी स्थित था। श्रीरामचन्द्र के पुत्र लव और कुश आखेट के लिए एक बार यहा आकर सरोवर के तीर पर कुछ समय के लिए ठहरे थे। ऐतिहासिक समय मे सिखो के आदिगुरु नानक ने भी इस स्थान के प्राकृतिक सौन्दर्य से आकृष्ट होकर यहा कुछ देर के लिए एक वृक्ष के नीचे विश्राम तथा ध्यान किया था। यह वृक्ष वर्तमान सरोवर के निकट आज भी दिखाया जाता है। तीसरे गुरु अमरदास ने नानकदेव का इस स्थान से सबध होने के कारण यहा एक मदिर बनवाने का विचार किया। 1564 ई० मे चौथे गुरु रामदास ने वर्तमान अमृतसर नगर की नीव डाली और स्वय भी यहा आकर रहने लगे। इस समय इस नगर को रामदासपुर या चक रामदास कहते थे। 1577 मे मुगलसम्राट अकबर ने रामदास को 500 बीघा भूमि नगर को बसाने के लिए दी जो उन्होने तुग के जमीदारो को 700 अकबरी रुपए देकर खरीदी। कहा जाता है कि सरोवर के पवित्र जल मे स्नान करने से एक कौवे के पर श्वेत हो गए थे और एक कोढी का रोग जाता रहा था।

इस दंतकथा से आकृष्ट होकर सहस्रों लोग यहां आने-जाने लगे और नगर की आबादी बढ़ने लगी। 1589 में गुरु अर्जुनदेव के एक शिष्य शेखमियां मीर ने सरोवर के बीच में स्थित वर्तमान स्वर्णमंदिर की नींव डाली। मंदिर के चारों ओर चार दरवाजों का प्रबंध किया गया था। यह गुरु नानक के उदार धार्मिक विचारों का प्रतीक समझा गया। मंदिर में गुरुग्रंथसाहब की जिसका संग्रह गुरु अर्जुनदेव ने किया था, स्थापना की गई थी। सरोवर को गहरा करवाने और परिवर्धित करने का काम बाबू बूढ़ा नामक व्यक्ति को सौंपा गया था और इन्हें ही ग्रंथसाहब का प्रथम ग्रंथी बनाया गया।

1757 ई० में वीर सरदार बाबा दीपसिंह जी ने मुसलमानों के अधिकार से इस मंदिर को छुड़ाया किंतु वे उनके साथ लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। उन्होंने अपने अधकटे सिर को सम्हालते हुए अनेक शत्रुओं को तलवार के घाट उतारा। उनकी दुधारी तलवार मंदिर के संग्रहालय में सुरक्षित है। स्वर्ण-मंदिर के निकट बाबा अटलराय का गुरुद्वारा है। ये छठे गुरु हरगोविंद के पुत्र थे और नौ वर्ष की आयु में ही संत समझे जाने लगे थे। उन्होंने इतनी छोटी सी उम्र में एक मृत शिष्य को जीवन दान देने में अपने प्राण होम दिए थे। कहा जाता है कि गुरुद्वारे की नौ मंजिलें इस बालक संत की आयु की प्रतीक हैं। पंजाबकेसरी महाराज रणजीतसिंह ने स्वर्णमंदिर को एक बहुमूल्य पटमंडप दान में दिया था जो संग्रहालय में है। वास्तव में रणजीतसिंह की सहायता से ही मंदिर अपने वर्तमान रूप को प्राप्त कर सका। इसके शिखर पर सुवर्ण पत्र चढ़वाने का श्रेय भी उन्हें ही दिया जाता है। 1919 की जलियांवाला बाग की घटना के कारण अमृतसर का नाम भारत की स्वतंत्रता के इतिहास में भी चिरस्थायी हो गया है।

अमृता

विष्णुपुराण 2,4,11 के अनुसार प्लक्षद्वीप की एक नदी—'अनुतप्ता शिखी चैव विपाशा त्रिदिवा क्रमा, अमृता सुकृता चैव सप्तैतास्तत्रनिम्नगा'।

अयक

स्यालकोट (प० पाकिस्तान) के निकट बहने वाली छोटी नदी जिसका *अभिज्ञान प्राचीन साहित्य की आपगा नामक नदी से किया गया है।*

दे० आपगा

अयोध्या (जिला फैज़ाबाद, उ० प्र०)

यह पुण्यनगरी श्रीरामचंद्रजी की जन्मभूमि होने के नाते भारत के प्राचीन साहित्य व इतिहास में सदा से प्रसिद्ध रही है। इसकी गणना भारत की

प्राचीन सप्तपुरियो मे प्रथम स्थान पर की गई है—'अयोध्या मथुरा माया काशी काचिरवन्तिका, पुरी द्वारावती चैव सप्तैते मोक्षदायिका'। पूर्वी उत्तरप्रदेश के जनसाधारण मे अयोध्या की महत्ता के बारे मे निम्न कहावत प्रचलित है—'गगा बडी गोदावरी, तीरथ बडो प्रयाग, सबसे बडी अयोध्यानगरी जहँ राम लिया अवतार'। रामायण-काल मे अयोध्या कोशल-देश की राजधानी थी। कोशल या कोसल सरयू के तीर पर बसा हुआ एक धनधान्यपूर्ण राज्य था—'कासलो नाम मुदित स्फीतो जनपदा महान् निविष्ट सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान्, । अयोध्यानाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता। मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम। रामा० बाल० 5,5-6 के अनुसार इसका विस्तार लबाई मे बारह योजन, और चौडाई मे तीन योजन था,—'आयता दश च द्वे च योजनानि महापुरी, श्रीमती त्रीणिविस्तीर्णा सुविभक्तमहापथा'—बाल० 5,7। वह अनेक राजमार्गों से सुशोभित थी। उसकी प्रधान सडको पर जो बडी सुन्दर व चौडी थी प्रतिदिन फूल बखेरे जाते थे और उनका जल से सिंचन हाता था—'राजमार्गेण महता सुविभक्तेन शोभिता, मुक्तपुष्पावकीर्णेन जलसिक्तेन नित्यश' बाल० 5 8। सूत और मागध उस नगरी मे बहुत थे। अयोध्या बहुत ही सुन्दर नगरी थी। उसमे ऊची अटारिया पर ध्वजाए शोभायमान थी और सकडो शतघ्निया उसकी रक्षा के लिए लगी हुई थी—'सूतमागधसबाधा श्रीमतीमतुलप्रभाम, उच्चाट्टालध्वजवती शतघ्नीशतसकुलाम' बाल० 5,11।

अयाध्या रघुवशी राजाओ की बहुत पुरानी राजधानी थी। बाल० 5,6 के अनुसार स्वय मनु ने इसका निर्माण किया था। वाल्मीकि० उत्तर० 108,4 से विदित होता है कि स्वर्गारोहण से पूव रामचद्रजी ने कुश का कुशावती नामक नगरी का राजा बनाया था। श्रीराम के पश्चात अयोध्या उजाड हो गई थी क्याकि उनके उत्तराधिकारी कुश ने अपनी राजधानी कुशावती मे बना ली थी। रघु० सग 16 से विदित होता है कि अयोध्या की दीन-हीन दशा देखकर कुश ने अपनी राजधानी पुन अयोध्या मे बनाई थी। महाभारत मे अयोध्या के दीघयज्ञ नामक राजा का उल्लेख है जिसे भीमसेन ने पूवदेश की दिग्विजय मे जीता था—अयोध्या तु धमज्ञ दीघयज्ञ महाबलम्, अजयत् पाडवश्रेष्ठो नातितीव्रेणकमणा—सभा० 30-2। घटजातक मे अयोध्या (अयोज्झा) के काल्सेन नामक राजा का उल्लेख है (जातक स० 454)। गौतमबुद्ध के समय कोसल के दो भाग हो गए थे—उत्तरकोसल और दक्षिणकोसल जिनके बीच मे सरयू नदी बहती थी। अयोध्या या साकेत उत्तरी भाग की और श्रावस्ती दक्षिणी भाग की राजधानी थी। इस समय श्रावस्ती का महत्त्व अधिक बढा हुआ था। शायद

बौद्धकाल में ही अयोध्या के निकट एक नई बस्ती बन गई थी जिसका नाम साकेत था। बौद्ध साहित्य में साकेत और अयोध्या दोनों का नाम साथ साथ भी मिलता है (दे० रायसडेवीज बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 39) जिससे दोनों के भिन्न अस्तित्व की सूचना मिलती है।

शुंग वंश के प्रथम शासक पुष्यमित्र (द्वितीय शती ई० पू०) का एक शिला लेख अयोध्या में प्राप्त हुआ था जिसमें उसे सेनापति कहा गया है तथा उसके द्वारा दो अश्वमेध यज्ञों के किए जाने का वर्णन है। अनेक अभिलेखों से ज्ञात होता है कि गुप्तवंशीय चंद्रगुप्त द्वितीय के समय (चतुर्थ शती ई० का मध्यकाल) और तत्पश्चात काफी समय तक अयोध्या गुप्त साम्राज्य की राजधानी थी। गुप्तकालीन महाकवि कालिदास ने अयोध्या का रघुवंश में कई बार उल्लेख किया है—'जलानि या तीरनिखातयूपा वहत्ययोध्यामनुराजधानीम्' रघु० 13,61, 'आलोकयिष्यन्मुदितामयोध्या प्रासादमभ्रंलिहमारुरोह'— रघु० 14,29। कालिदास ने उत्तरकोसल की राजधानी साकेत (रघु० 5,31,13,62) और अयोध्या दोनों ही का नामोल्लेख किया है, इससे जान पड़ता है कि कालिदास के समय में दोनों ही नाम प्रचलित रहे होंगे। मध्यकाल में अयोध्या का नाम अधिक सुनने में नहीं आता। युवानच्वांग के वर्णनों से ज्ञात होता है कि उत्तर बुद्ध काल में अयोध्या का महत्त्व घट चुका था। जैन ग्रन्थ विविधतीर्थकल्प में अयोध्या को ऋषभ, अजित, अभिनंदन, सुमति, अनन्त और अचलभानु—इन जैन मुनियों का जन्मस्थान माना गया है। नगरी का विस्तार लम्बाई में 12 योजन और चौड़ाई में 9 योजन कहा गया है। इस ग्रन्थ में वर्णित है कि चक्रेश्वरी और गोमुख यक्ष अयोध्या के निवासी थे। घघर दाह और सरयू का अयोध्या के पास संगम बताया है और संयुक्त नदी को स्वर्गद्वारा नाम से अभिहित किया गया है। नगरी से 12 योजन पर अष्टापद या अष्टापद पहाड़ पर आदि गुरु का कैवल्यस्थान माना गया है। इस ग्रन्थ में यह भी वर्णित है कि अयोध्या के चारों द्वारों पर 24 जैन तीर्थकरों की मूर्तियां प्रतिष्ठापित थीं। एक मूर्ति की चालुक्य नरेश कुमारपाल ने प्रतिष्ठापना की थी। इस ग्रन्थ में अयोध्या को दशरथ, राम और भरत की राजधानी बताया गया है। जैनग्रन्थों में अयोध्या को विनीता भी कहा गया है।

मध्यकाल में मुसलमानों के उत्कर्ष के समय अयोध्या बेचारी उपेक्षिता ही बनी रही, यहां तक कि मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर के एक सेनापति ने बिहार अभियान के समय अयोध्या में श्रीराम के जन्मस्थान पर स्थित प्राचीन मंदिर को तोड़कर एक मसजिद बनवाई जो आज भी विद्यमान है।

ममजिद मे लगे हुए अनेक स्तभ और शिलापट्ट उसी प्राचीन मदिर के हैं। अयोध्या क वतमान मदिर कनकभवन आदि अधिक प्राचीन नही हैं और वहा यह कहावत प्रचलित है कि सरयू को छोडकर रामचद्रजी के समय की कोई निशानी नही है। कहते हैं कि अवध के नवाबो ने जब फैजाबाद मे राजधानी बनाई थी तो वहा के अनेक महलो मे अयोध्या के पुराने मदिरो की सामग्री उपयोग मे लाई गई थी।

(2) (स्याम या थाइलड)सुखादय राज्य की अवनति के पश्चात 1350 ई० म स्याम मे अयोध्याराज्य की स्थापना की गई थी। इसका श्रेय उटाग के शासक को दिया जाता है जिसने रामाधिपति की उपाधि ग्रहण की थी। अपने राज्य की राजधानी उसन अयुठिया या अयोध्या मे बनाई। इस राज्य का प्रभुत्व धीरे धीरे लाओस और कबाडिया तक स्थापित हो गया था किंतु बमा के राजाओ ने अयोध्या के विस्तार को रोक दिया। 1767 ई० मे वर्मा क स्याम पर आक्रमण के समय अयोध्या नगरी को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया और तत्पश्चात स्याम की राजधानी बैंकाक मे बनी।

अयोमुख

चीनी यात्री युवानच्वाग ने जो 630 ई० से 645 ई० तक भारत मे रहा, इस स्थान को अयोध्या स लगभग 300 मील पूव की ओर बताया है। उसके वृत्त के अनुसार यह स्थान अयोध्या और प्रयाग के माग पर अवस्थित था। युवान की जीवनी से विदित होता है कि अयोमुख के माग मे ठगो ने युवान को पकड कर अपनी देवी पर उसकी बलि देने का प्रयत्न किया किंतु एक तूफान आ जाने स वह बच गया। जान पडता है कि इस समय इस प्रदेश मे शाक्तो का विशेष जोर था। कनिघम के अनुसार यह स्थान प्रतापगढ (उ० प्र०) से 30 मील दक्षिण पश्चिम की ओर था—(दे० तुषारण-विहार)।

अरग (जिला रायपुर, म० प्र०)

इस स्थान से गुप्तकालीन ताम्रदानपट्ट प्राप्त हुआ था। दानपट्ट मे महाराज जयराज द्वारा पूवराष्ट्र मे स्थित एक ग्राम को किसी ब्राह्मण के लिए दान म दिए जाने का उल्लेख है। यह दानपट सरभपुर नामक नगर से प्रचलित किया गया था। इसमे सवत 5 का उल्लेख है जो अनुमानत जयराज के शासन-काल का अनात सवत जान पडता है।

अरगदाधीर दे० हारहूण।

अरगाव (जिला अकोला, महाराष्ट्र)

यह एक छोटा-सा ग्राम है जहा 1803 ई० मे अग्रेजो न मराठो को हराया

था। इस विजय से गाविल्गढ का किला अंग्रेजो के हाथ आ गया था।

अरब दे० आरब, बनाबु।

अरवाल

इस सरोवर का उल्लेख महावश 12 9-11 मे है। इसका अभिज्ञान जिला मडी (हिमाचल प्रदेश) म स्थित रवालसर के साथ किया गया है। महावश के वणन के अनुसार मुज्झतिक स्थविर ने इस सरोवर के निकट रहने वाले एक क्रूर नागराज का गव चूर किया था। सरोवर की स्थिति कश्मीर गधार देश मे बताई गई है।

अराकान दे० ताम्रपट्टन

अराड

डा० होए (Dr Hoye) के अनुसार यह वतमान आरा (जिला शाहबाद, बिहार) का प्राचीन नाम है। उनके अनुसार गौतमबुद्ध का समकालीन दाश निक अराडकलाम यही का निवासी था (दे० आर्कियोलाजिकल सर्वे रिपोर्ट जिल्द 3, पृ० 70)।

अरिगेंउ

अलक्षेद्र के भारत-आक्रमण के समय (327 ई० पू०) सिंध नदी के पश्चिम की ओर बजौर की घाटी मे बसा हुआ एक नगर। यवनराज के आक्रमण की सूचना मिलने पर नगरवासी नगर को जलाकर छोड गए थे। इसकी स्थिति सभवत बजौर के वतमान मुख्य नगर नवगई के निकट थी (दे० स्मिथ— अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया, चतुथ सस्करण, पृ० 55)।

अरिट्ठपवत (लका)

उम्मदन्तिजातक मे शिविजाति के क्षत्रियो के इस नगर का उल्लख है। शिविराष्ट्र की स्थिति सभवत जिला झग (प० पाकिस्तान) के अतगत शोरकोट के प्रदेश मे थी। इस उपकल्पना के आधार पर इस नगर की स्थिति इसी स्थान के आसपास मानी जा सकती है। दीपवश 3, 14 म यहा के राजा सिटठी का उल्लेख है। (दे० शिवि)।

अरिमदनपुर (बमा)

वतमान पगन नगर का प्राचीन भारतीय नाम। इसकी स्थापना 849 ई० मे हुई थी। यह नगर ताम्रद्वीप की राजधानी था। यहा का सबसे अधिक प्रसिद्ध राजा अनिरुद्ध महान था जिसने पगन के छोटे से राज्य को बढाकर एक महान् साम्राज्य मे परिवर्तित कर दिया था। इस साम्राज्य मे ब्रह्मदेश का अधिकाश भाग सम्मिलित था। अनिरुद्ध कट्टर बौद्ध था और उसने सिहल-

नरेश से बुद्ध का एक धातुचिह्न मगवा कर श्वेजिगोन पेमोडा मे सरक्षित किया था। अनिरुद्ध की मृत्यु 1077 ई० मे हुई थी।

अरिष्ट

वाल्मीकि रामायण सुदर० 56, 26 के अनुसार लका मे समुद्रतट पर स्थित एक पवत, जिस पर चढकर हनुमान ने लका से लौटते समय, समुद्र को कूद कर पार किया था—'आरुरोह गिरिश्रेष्ठमरिष्टमरिमदन, तुगपदमकजुष्टाभिर्नीलाभिवनराजिभि'। इसी के सामने भारत मे समुद्र के दूसरे तट पर महेद्र पवत की स्थिति थी (दे० सुदर० 27, 29)। हनुमान के अरिष्ट पर आरूढ होने के पश्चात् इस पवत की दशा का अदभुत वणन वाल्मीकि ने किया है।

अरिष्टपुर

पाणिनि अष्टाध्यायी 6, 2, 100 मे उल्लिखित है। बौद्ध साहित्य मे इसे शिवि राज्य के अतगत माना है।

अरुणा

(1) गोदावरी की सहायक नदी। यह नासिक-पचवटी के निकट गोदावरी मे मिलती है।

(2) पजाब की सरस्वती की सहायक नदी। इसका और सरस्वती का सगम पृथूदक के निकट था।

(3) ताम्र के साथ सुनकोसी म मिलने वाली नदी। इसके सगम पर कोकामुख तीथ था।

अरुणाचल (मद्रास)

विल्लुपुरम् गुड्र रेल मार्ग पर तिरुवण्णमलै स्टेशन के निकट एक पवत है। इसके निकट ही अरुणाचलेश्वर शिव का अति विशाल मदिर है। इसके चतुर्दिक् दस खडो वाले चार गोपुर हैं। अरुणाचल का वणन स्कदपुराण मे है—'अस्ति दक्षिणदिग्भागे द्राविडेपु तपोधन, अरुणाख्य महाक्षेत्र तरुणेदु शिखामणे,—उत्तराखड 3, 10।

अरुणोद

गढवाल का वह भाग जिसमे अलकनदा बहती है। श्रीनगर इसकी राजधानी है।

अरोर=अलोर

अकक्षेत्र=पद्मक्षेत्र=कोणाक

अधपुर (जिला नादेड, महाराष्ट्र)

प्राचीन जैन मदिरो के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

अर्नाकुलम (केरल)

प्राचीन कोचीन नरेशों की राजधानी। इन्होंने पूणथ्री अथवा वर्तमान त्रिपुणितुरे नामक स्थान पर राजप्रासाद बनवाए थे। यह अर्नाकुलम नगर से 6 मील दूर है।

अर्बुद=आबू (राजस्थान)

महाभारत में, अर्बुद की गणना तीर्थस्थानों में की गई है। अर्बुद निवासियों का उल्लेख विष्णु० 2, 13, 16 में है—'पुंड्रा कलिंगमागधा दक्षिणात्याश्च सर्वशः तथापरान्ता सौराष्ट्रा शूराभीरास्तथार्बुदा'। चंदबरदाई लिखित पृथ्वीराजरासो में वर्णित है कि अग्निकुल के चार राजपूतवंश—पवार, परिहार, चौहान, और चालुक्य आबू पहाड़ पर किए गए एक यज्ञ द्वारा उत्पन्न हुए थे। क्रुक (Crook) के मत में यह यज्ञ विदेशी जातियों का क्षत्रियवर्ण में सम्मिलित करने के लिए किया गया होगा (दे० टॉड रचित राजस्थान)।

अर्बुदावली=अरावली पर्वतश्रेणी (राजस्थान)=दे० अर्वली

अर्यक

बृहत्संहिता में उल्लिखित इस स्थान का अभिज्ञान पेरिप्लस नामक लटिन यात्रा वृत्त के 'एरिआके' से किया गया है—(रायचौधरी—पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एंशेंट इंडिया, पृ० 406)।

अर्वली

राजस्थान की मुख्य पर्वत श्रेणी जिसकी छोटी छोटी शाखाएं दिल्ली तक फैली है। अर्वली शब्द अर्बुदावली का अपभ्रंश कहा जाता है। अर्बुद या आबू पर्वत इस गिरि शृंखला का महत्त्वपूर्ण भाग होने के कारण ही इसका यह नामकरण हुआ जान पड़ता है।

अर्सीकेर (मैसूर)

यहां का प्राचीन मंदिर चालुक्यवास्तुकला का सुंदर उदाहरण है।

अलंदी (जिला पूना, महाराष्ट्र)

पूना से 13 मील दूर महाराष्ट्र का प्राचीन नगर है। यहां इंद्राणी नदी के तट पर जैनेश्वर का प्राचीन मंदिर है। अलंदी का संबंध महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संतकवि तुकाराम से बताया जाता है।

अलकनंदा

कैलास और बद्रीनाथ के निकट बहने वाली गंगा की एक शाखा। कालिदास ने मेघदूत में जिस अलकापुरी का वर्णन किया है वह कैलास

पवत के निकट अलकनदा के तट पर ही बसी हागी जैसा कि नाम साम्य से प्रकट भी होता है। कालिदास ने अलका की स्थिति गगा की गोदी म मानी है और गगा से यहा अलकनदा का ही निर्देश माना जा सकता है। सभवत प्राचीन काल मे पौराणिक परपरा मे अलकनदा को ही गगा का मूलस्रोत माना जाता था क्योकि गगा को स्वग से गिरने के पश्चात सवप्रथम शिव ने अपनी अलको अर्थात् जटाजूट मे बाध लिया था जिसके कारण नदी को शायद अलकनदा कहा गया। अलकनदा का वणन महाभारत वन० के अनगत तीथयात्रा प्रसग मे है जहा इसे भागीरथी नाम से भी अभिहित किया गया है और इसका उदगम बदरिकाश्रम के निकट ही बताया गया है—'नर नारायणस्थान भागीरथ्योपशोभितम'—वन० 145,41। यह भागीरथी अलकनदा ही है क्योकि नर नारायण आश्रम अलकनदा के तट पर ही है। वास्तव मे महाभारत ने इस स्थान पर गगा की दानो शाखाओ—भागीरथी जो गगोत्री से सीधी देवप्रयाग आती है और अलकनदा जो कैलास और बदरिकाश्रम होती हुई देवप्रयाग मे आकर भागीरथी से मिल जाती है—को अभिन्न ही माना है। विष्णु० 2,2,35 मे भी अलकनदा का उल्लेख है—'तथैवाल्कनदापि दक्षिणेनैत्य-भारतम्'। अलकनदा और नदा के सगम पर नदप्रयाग स्थित है।

अलका

कालिदास ने मेघदूत मे इस नगरी को यक्षो के राजा कुबेर की राजधानी माना है—'गतव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणाम्'—पूवमेघ, 7। कवि के अनुसार अलका की स्थिति कैलासपवत पर थी और गगा इसके निकट प्रवाहित होती थी—'तस्योत्सगे प्रणयिनइव स्रस्तगगादुकूल, न त्व दृष्ट्वा न पुनरलका ज्ञास्यसे कामचारिन। या व काले वहति सलिलोद्गारमुच्चैर्विमानैर्मुक्ताजाल ग्रथितमल्क कामिनीवाभ्रवृन्दम्' पूवमेघ, 65। यहा तस्योत्सग का अथ है उस पवत अर्थात् कैलास (पूवमेघ, 60 64) की गादी मे स्थित। कैलास के निकट ही कालिदास ने मानसरोवर का वणन भी किया है— हेमाम्भोजप्रसविसलिल मानसस्याददान पूवमेघ, 64। सभव है कालिदास के समय मे या उससे पूव कैलास के क्रोड मे (वतमान तिब्बत म) किसी पावतीय जाति अथवा यक्षो की नगरी वास्तव मे ही बसी हा। कालिदास का अलका वणन (उत्तरमेघ के प्रारभ मे) बहुत कुछ काल्पनिक होते हुए भी किन्ही अशो मे तथ्य पर आधारित है—यह अनुमान असगत नही कहा जा सकता। उपयुक्त पद्य म कालिदास ने गगानदी का उल्लेख अलका के निकट ही किया है। वतमान भौगोलिक स्थिति के अनुसार गगा ही का एक स्रोत—अलकनदा—कैलास से

पश्चिमी तट पर बसा हुआ था। प्राचीन नगर के खण्डहर रारी से पांच मील दक्षिण पूर्व की ओर स्थित हैं। यह नगर अलक्षेन्द्र के भारत पर आक्रमण करने के समय मुचुकर्ण या मूषिक की राजधानी था (दे० कैंब्रिज हिस्ट्री आव इंडिया, पृ० 3/7) यूनानी लेखकों ने इसे मौसीकानास लिखा है। इनके वर्णन के अनुसार मूषिकों की आयु 130 वर्ष होती थी (दे० मूषिक)। 712 ई० में अरब सेनापति मुहम्मद बिनकासिम ने इस नगर का राजा दाहिर से युद्ध करने के पश्चात जीत लिया था। यहां ब्राह्मण राजा दाहिर की राजधानी थी। दाहिर इस युद्ध में मारा गया और सतीत्व की रक्षा के लिए नगर की कुलवधुएं चिताओं में जलकर भस्म हो गईं। एक प्राचीन दंतकथा के अनुसार 800 ई० के लगभग यह नगर सिंध नदी की बाढ़ में नष्ट हो गया था। कहा जाता है कि सेफुलमुल्क नामक व्यापारी ने एक सुन्दर युवती की एक क्रूर सरदार से रक्षा करने के लिए नदी का पानी नगर की ओर प्रवाहित कर दिया था जिससे नगर तबाह हो गया (स्मिथ—अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 369)।

अल्मोड़ा (उ० प्र०)

कुमायूं की पहाड़ियों में बसा हुआ पहाड़ी नगर। 1563 ई० तक यह अज्ञात स्थान था। इस वर्ष एक स्थानीय पहाड़ी सरदार चंदराजा बालो कल्याणचंद ने इसे अपनी राजधानी बनाया। उस समय इस राजापुर कहते थे। ऐतिहासिक आधार पर कहा जा सकता है कि कुमायूं का सर्वप्राचीन राजवंश कत्यूरी नामक था। हेनरी इलियट ने कत्यूरी शासकों को खसजातीय सिद्ध करने का प्रयत्न किया है किंतु स्थानीय परंपरा के अनुसार वे अयोध्या के सूर्यवंशी नरेशों के वंशज थे। 7वीं शती में कुमायूं में चंदराजाओं का शासन प्रारंभ हुआ था। 1797 ई० में अल्मोड़े को गोरखों ने कत्यूरियों से छीन लिया और नेपाल में मिला लिया। 1896 ई० में अंग्रेजों और गोरखों की लड़ाई के पश्चात सिगौली की संधि के अनुसार अन्य अनेक पहाड़ी स्थानों के साथ ही अल्मोड़े पर भी अंग्रेजों का अधिकार हो गया।

अल्लकप्प

बौद्ध-साहित्य के अनुसार यह स्थान —
भगवान् बुद्ध के अस्थि अवशेषों को लेने के,
यह अल्प्पा का ही रूपांतर हो। अल्लकप्प में
क्षत्रियों की राजधानी थी। यह
के सन्निकट ही रहा होगा क्योंकि

अलवाई (आलवाय) (केरल)

परियार नदी के तट पर एक छोटा-सा कस्बा और रेलस्टेशन है जो अद्वैतवाद के प्रचारक और महान दार्शनिक शंकराचार्य (9 वीं शती ई०) का जन्मस्थान माना जाता है।

अलसद

अलक्षेंद्र द्वारा काबुल के निकट बसाए हुए नगर अलेग्जेंड्रिया का भारतीय नाम। दे० महावंश (गैगर Geiger का अनुवाद) पृ० 194। मिलिंदपन्हो में अलसद को द्वीप कहा गया है और इसमें स्थित कालसीग्राम नामक स्थान को मिलिंद अथवा यवनराज मिनेंडर (दूसरी शती ई० पू०) का जन्मस्थान बताया गया है। पर्शुस्थान की राजधानी तृपियन या वर्तमान ओपियन इसी स्थान पर थी (न० ला० डे)।

अलाविराष्ट्र

दक्षिण-पूर्व एशिया का प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक राज्य जिसकी स्थिति युनान (प्राचीन गन्धार) के पूर्व और स्याम के पश्चिम में थी। इस राष्ट्र का उल्लेख इस देश के प्राचीन पाली इतिहास-ग्रन्थों में है। अलावि के दक्षिण में सेमराष्ट्र की स्थिति थी।

अलिना (गुजरात)

वल्भिराज ध्रुवभट्टशीलादित्य सप्तम का एक ताम्रदान-पट्ट इस स्थान से प्राप्त हुआ था जिसमें उनके द्वारा श्वेतक-अहार—वर्तमान कैरा में स्थित महिल्लाभिग्राम का ब्राह्मणों को पंचयज्ञ के प्रयोजनार्थ दान में दिए जाने का उल्लेख है

अलीगंज (जिला एटा, उ० प्र०)

1747 में याकूत खां ने बसाया था। यहां बहुत बड़ा मिट्टी का किला है।

अलीगढ़ (उ० प्र०)

प्राचीन नाम कोल है। कोल नाम की तहसील अब भी अलीगढ़ जिले में है। अलीगढ़ नाम नजफ खां का दिया हुआ है। 1717 ई० में साबितखां ने इसका नाम साबितगढ़ और 1757 में जाटों ने रामगढ़ रखा था। उत्तर मुगलकाल में यहां सिंधिया का कब्ज़ा था। उसके फ्रांसीसी सेनापति पेरन का किला आज भी गण्डहरों के रूप में नगर से तीन मील दूर है। इसे 1802 ई० में लार्ड लेक ने जीता था। यह किला पहले रामगढ़ कहलाता था।

अलोर (सिंध, प० पाकिस्तान)=अरोर=रोरी

...से छः मील पूर्व एक छोटा-सा कस्बा है। यह हकरा नदी के

पास प्रवाहित होता है और अलका की स्थिति अल्कनदा के तट पर ही रही होगी जैसा सभवत नाम साम्य से इगित होता है। अलकनदा गगा ही की सहायक नदी है (दे० अलकनदा)। दूसरे, यह भी सभव है कि कालिदास ने क्रौचरध्र के उस पार भी हिमालयश्रेणियो को सामान्यरूप से कैलास कहा हो (दे० पूर्वमेघ 64) न कि केवल मानसरोवर के निकटस्थ पवत को जैसा कि आजकल कहा जाता है। यह उपकल्पना उत्तरमेघ, 10 से भी पुष्ट होती है जिसमे वर्णित है कि अलका मे स्थित यक्ष के घर की वापी मे रहने वाले हस बरसात मे भी मानसरोवर नही जाते। हसो के लिए अलका से मानसरोवर पर्याप्त दूर होगा नही तो इन पक्षियो के प्रव्रजन की बात कवि न कहता। इसलिए अलका की पहाडी के नीचे गगा की स्थिति इस प्रकार स्पष्ट हो जाती है कि कालिदास के अनुसार कैलास हिमाचल को पार करने के पश्चात अर्थात गगोत्री के उत्तर मे मिलने वाली पवतश्रेणी का सामान्य नाम है, न कि आजकल की भाति केवल मानसरोवर के निकट स्थित पहाडो का, जैसा कि भूगोलविद जानते है। गगा का मूलस्रोत गगोत्री के काफी उत्तर मे, दुगम हिमालय की पहाडिया से प्रवाहित होता है। यह सभव है कि ये ही पवतश्रेणिया कालिदास के समय मे कैलास के नाम से प्रसिद्ध हो। पौराणिक कथाओ मे यह भी वणन है कि कैलास स्थित शिव की जटाजूट म ही प्रथम गगा अवतरित हुई थी। अलका वती नामक यक्षो की नगरी का उल्लेख बुद्धचरित 21,63 मे भी है जिसका भावार्थ यह है कि 'तब अलकावती नामक नगरी म तथागत ने भद्र नाम के एक सदाशय यक्ष को अपने धम म प्रव्रजित किया'।

अलकावती=अलका

अलप्पा

सभवत यह नगर गडक नदी के तट पर बिहार म स्थित था। बौद्धकाल मे यहा वृज्जियो की राजधानी थी। जिला चपारण म स्थित लौरियानदनगढ नामक ग्राम के पास ही अलप्पा की स्थिति रही होगी (दे० अल्लकप्प)।

अलवर (राजस्थान)

प्राचीन नाम शाल्वपुर। किवदती के अनुसार महाभारतकालीन राजा शाल्व ने इसे बसाया था। अल्वर शायद शाल्वपुर का अपभ्रश है। महाभारत के अनुसार शाल्व ने जो मार्तिकावतक का राजा था तथा सौभ नामक अदभुत विमान का स्वामी था द्वारका पर आक्रमण किया था। मार्तिकावतक नगर की स्थिति अल्वर के निकट ही मानी जा सकती है।

अलवाई (आल्वाय) (केरल)

परियार नदी के तट पर एक छोटा सा कस्बा और रेल्स्टेशन है जो अद्वैतवाद के प्रचारक और महान दार्शनिक शंकराचार्य (9 वीं शती ई०) का जन्मस्थान माना जाता है।

अलसद

अलक्षेंद्र द्वारा काबुल के निकट बसाए हुए नगर अलेग्जेंड्रिया का भारतीय नाम। दे० महावंश (गेगर Geiger का अनुवाद) पृ० 194। मिलिंदपन्हो में अलसद को द्वीप कहा गया है और इसमें स्थित कालसीग्राम नामक स्थान को मिलिन्द अथवा यवनराज मिनेन्डर (दूसरी शती ई० पू०) का जन्मस्थान बताया गया है। पर्शुस्थान की राजधानी कृपियन या वर्तमान ओपियन इसी स्थान पर थी (न० ला० डे)।

अलाविराष्ट्र

दक्षिण पूर्व एशिया का प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक राज्य जिसकी स्थिति युनान (प्राचीन गंधार) के पूर्व और स्याम के पश्चिम में थी। इस राष्ट्र का उल्लेख इस देश के प्राचीन पाली इतिहास-ग्रंथों में है। अलावि के दक्षिण में खेमराष्ट्र की स्थित थी।

अलिना (गुजरात)

बलभिराज ध्रुवभट्टशीलादित्य सप्तम का एक ताम्रदान पट्ट इस स्थान से प्राप्त हुआ था जिसमें उनके द्वारा श्वेतक अहार—वर्तमान कैरा में स्थित महिलाभिग्राम का ब्राह्मणों को पंचयज्ञ के प्रयोजनार्थ दान में दिए जाने का उल्लेख है

अलीगंज (जिला एटा, उ० प्र०)

1747 से याकूत खां ने बसाया था। यहां बहुत बड़ा मिट्टी का किला है।

अलीगढ़ (उ० प्र०)

प्राचीन नाम कोल है। कोल नाम की तहसील अब भी अलीगढ़ जिले में है। अलीगढ़ नाम नजफ खां का दिया हुआ है। 1717 ई० में साबितखां ने इसका नाम साबितगढ़ और 1757 में जाटों ने रामगढ़ रखा था। उत्तर मुगलकाल में यहां सिंधिया का कब्जा था। उसके फ्रांसीसी सेनापति पेरन का किला आज भी खण्डहरों के रूप में नगर से तीन मील दूर है। इसे 1802 ई० में लार्ड लेक ने जीता था। यह किला पहले रामगढ़ कहलाता था।

अलोर (सिंध, प० पाकिस्तान)=**अरोर**=**रोरी**

सक्खर से छः मील पूर्व एक छोटा सा कस्बा है। यह हकरा नदी के

पश्चिमी तट पर बसा हुआ था। प्राचीन नगर के खण्डहर रोरी से पाच मील दक्षिण पूर्व की ओर स्थित है। यह नगर अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण करने के समय मुचुकण या मूषिका की राजधानी था (दे० कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया पृ० 3 7) यूनानी लेखकों ने इसे मोसीकानोस लिखा है। इनके वर्णन के अनुसार मूषिका की आयु 130 वर्ष होती थी (दे० मूषिक)। 712 ई० म अरब सेनापति मुहम्मद बिनकासिम ने इस नगर को राजा दाहिर से युद्ध करने के पश्चात जीत लिया था। यहां ब्राह्मण राजा दाहिर की राजधानी थी। दाहिर इस युद्ध म मारा गया और सतीत्व की रक्षा के लिए नगर की कुलवधुए चिताओ म जलकर भस्म हो गईं। एक प्राचीन दतकथा के अनुसार 800 ई० के लगभग यह नगर सिंध नदी की बाढ मे नष्ट हो गया था। कहा जाता है कि सेफुल्मुल्क नामक व्यापारी ने एक सुदर युवती की एक क्रूर सरदार से रक्षा करने के लिए नदी का पानी नगर की ओर प्रवाहित कर दिया था जिससे नगर तबाह हो गया (स्मिथ—अर्ली हिस्ट्री आव इंडिया, चतुर्थ सस्करण, पृ० 369)।

अलमोडा (उ० प्र०)

कुमाऊ की पहाडियो मे बसा हुआ पहाडी नगर। 1563 ई० तक यह अज्ञात स्थान था। इस वर्ष एक स्थानीय पहाडी सरदार चदराजा बालो कल्याणचद ने इसे अपनी राजधानी बनाया। उस समय इसे राजापुर कहते थे। ऐतिहासिक आधार पर कहा जा सकता है कि कुमायू का सर्वप्राचीन राजवश कत्यूरी नामक था। हेनरी इलियट ने कत्यूरी शासको का खसजातीय सिद्ध करने का प्रयत्न किया है किंतु स्थानीय परम्परा के अनुसार वे अयोध्या के सूर्यवशी नरेशो के वशज थे। 7वी शती म कुमायू म चदराजाओ का शासन प्रारभ हुआ था। 1797 ई० म अलमोडे को गोरखो ने कत्यूरियो से छीन लिया और नेपाल मे मिला लिया। 1896 ई० मे अंग्रेजो और गोरखो की लडाई के पश्चात सिगौली की सधि के अनुसार अन्य अनेक पहाडी स्थानो के साथ ही अलमोडे पर भी अंग्रेजो का अधिकार हो गया।

अल्लकप्प

बौद्ध साहित्य के अनुसार यह स्थान उन आठ स्थानो म है जहा के नरेश भगवान बुद्ध के अस्थि अवशेषो को लेने के लिए कुशीनगर आए थे। सभव है यह अल्लप्पा का ही रुपातर हो। अल्लकप्प म बुलिय (वृज्जियो की एक शाखा) क्षत्रियो की राजधानी थी। यह राज्य वेठदीप या बेतिया (जिला ... के सन्निकट ही रहा होगा क्योकि धम्मपदट्ठ ... दे० हावर्ड शार्प

28 पृष्ठ 24) मे जल्लकप्प के राजा और वेठदीपक नाम के 'वठदीप' के राजाओ म परम्पर घनिष्ठ सबध का उल्लेख है। अल्लकप्प की स्थिति लारियानदनगढ के पास स्थित विस्तृत खण्डहरो के स्थान पर मानी जाती है।

अवतिपुर (कश्मीर)

कश्मीर का प्राचीन नगर। यहा का मन्दिर कश्मीर के प्रसिद्ध मार्तंड मदिर की वास्तुपरपरा मे बनाया गया था।

अवती = उज्जयिनी (म० प्र०)

प्राचीन सस्कृत तथा पाली साहित्य म अवती या उज्जयिनी का सैकडो वार उल्लेख हुआ है। महाभारत सभा० 31,10 म सहदेव द्वारा अवती का विजित करन का वणन है। बौद्धकाल म अवती उत्तरभारत क षोडश महा जनपदो मे से थी जिनकी सूची अगुत्तरनिकाय मे है। जैन गथ भगवतीसूत्र मे इसी जनपद को मालव कहा गया है। इस जनपद मे स्थूल रूप स वतमान मालवा, निमाड, और मध्यपदेश का बीच का भाग सम्मिलित था। पुराणा के अनुमार अवती की स्थापना यदुवशी क्षत्रियो द्वारा की गई थी। बुद्ध क समय अवती का राजा चडप्रद्योत था। इसकी पुत्री वासवदत्ता से वत्सनरेश उदयन ने विवाह किया था जिसका उल्लेख भासरचित 'स्वप्नवासवदत्ता' नामक नाटक मे है। वासवदत्ता को अवती से सबधित मानते हुए एक स्थान पर इस नाटक मे कहा गया है—'हम्! अतिसहशी खल्वियमार्याय अवतिकाया' अक 6। चतुथ शती ई० पू० मे अवती का जनपद मौय साम्राज्य मे सम्मिलित था और उज्जयिनी मगध-साम्राज्य के पश्चिम प्रात की राजधानी थी। इससे पूव मगध और अवन्ती का सघष पर्याप्त समय तक चलता रहा था जिसकी सूचना हमे परिशिष्टपवन (प० 42) से मिलती है। कथासरित्सागर (टॉनी का अनुवाद जिल्द 2, पृ० 484) से यह भी ज्ञात होता है कि अवतीराज चडप्रद्योत के पुत्र पालक ने कौशाम्बी को अपने राज्य मे मिला लिया था। विष्णुपुराण 4,24,68 से विदित होता है कि सभवत गुप्तकाल से पूव अवती पर आभीर इत्यादि शूद्रो या विजातियो का आधिपत्य था—'सौराष्ट्रावति विषयाश्च—आभीर शूद्राद्या भोक्ष्यन्ते'। ऐतिहासिक परपरा से हमे यह भी विदित होता है कि प्रथम शती ई० पू० मे (57 ई० पू० के लगभग) विक्रम सवत के सस्थापक किसी अनात राजा ने शको को हराकर उज्जयिनी को अपनी राजधानी बनाया था। गुप्त काल मे चद्रगुप्त विक्रमादित्य न अवती का पुन विजय किया और वहा स विदेशी सत्ता को उखाड फेंका। कुछ विद्वानो के मत मे 57 ई० पू० मे विक्रमा दित्य नाम का कोई राजा नही था और चद्रगुप्त द्वितीय ही ने अवती

के पश्चात् मालव सवत् को जो 57 ई० पू० मे प्रारम्भ हुआ था, विक्रम सवत् का नाम दे दिया।

चीनी यात्री युवानच्वाग के यात्रावृत्त से ज्ञात होता है कि अवन्ती या उज्जयिनी का राज्य उस समय (615–630 ई०) मालवराज्य से अलग था और वहा एक स्वतन्त्र राजा का शासन था। कहा जाता है शकराचाय के समकालीन अवन्तीनरेश सुधन्वा ने जैन धम का उत्कप सूचित करने के लिए प्राचीन अवन्तिका का नाम उज्जयिनी (=विजयकारिणी) कर दिया था किंतु यह केवल कपोलकल्पना मात्र है क्योकि गुप्तकालीन कालिदास को भी उज्जयिनी नाम ज्ञात था, 'वक्र पथा यदपि भवत प्रस्थिस्योत्तराशा, सौधोत्सगप्रणय विमुखोमास्म भूरुज्जयिन्या ' पूवमेघ० 29। इसके साथ ही कवि ने अवन्ती का भी उल्लेख किया है—'प्राप्यावन्तीमुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्' पूवमेघ 32। इससे सभवत यह जान पडता है कि कालिदास के समय मे अवन्ती उस जनपद का नाम था जिसकी मुख्य नगरी उज्जयिनी थी। 9 वी व 10 वी शतियो मे उज्जयिनी मे परमार राजाओ का शासन रहा। तत्पश्चात उन्होंने धारानगरी मे अपनी राजधानी बनाई। मध्यकाल म इस नगरी को मुख्यत उज्जैन ही कहा जाता था और इसका माल्वा के सूबे के एक मुख्य स्थान के रूप मे वणन मिलता है। दिल्ली के सुलतान इल्तुतमिश ने उज्जैन को बुरी तरह से लूटा और यहा के महाकाल के अतिप्राचीन मन्दिर को नष्ट कर दिया। (यह मदिर सभवत गुप्तकाल से भी पूव का था। मेघदूत, पूवमेघ 36 मे इसका वणन है—'अप्यन्यस्मिन् जलधर महाकालमासाद्यकाले') अगले प्राय पाचसौ वर्षों तक उज्जैन पर मुसलमानो का आधिपत्य रहा। 1750 ई० मे सिंधियानरेशो का शासन यहा स्थापित हुआ और 1810 ई० तक उज्जैन मे उनकी राजधानी रही। इस वष सिंधिया ने उज्जैन से हटाकर राजधानी ग्वाल्यिर मे बनाई। मराठा के राज्यकाल मे उज्जैन के कुछ प्राचीन मन्दिरो का जीर्णोद्धार किया गया था। इनमे महाकाल का मदिर भी है।

जैन ग्रथ विविध तीथ कल्प मे माल्वा प्रदेश का ही नाम अवति या अवती है। राजा दावर के पुत्र अभिनदनदेव का चत्य अवन्ति के मेद नामक ग्राम मे स्थित था। इस चैत्य को मुसल्मान सेना ने नष्ट कर दिया था किंतु इस ग्रन्थ के अनुसार वैज नामक व्यापारी की तपस्या से खण्डित मूर्ति फिर से जुड गई थी।

उज्जयिनी के वतमान स्मारको मे मुख्य, महाकाल का मदिर शिप्रा नदी के तट पर भूमि के नीचे बना है। इसका निर्माण प्राचीन मदिर के स्थान पर रणोजी सिंधिया के मन्त्री रामचन्द्र बाबा ने 19वीं शती के उत्तराध म करवाया

का जिक्र किया था—'का पर विष्णुपाद, अवमुक्त ौम्राज, वदीमय हस्तिवर्मा —अवमुक्त कांजी या कांजीवरम के पास कोई नगर था।

अवष्ठ अवष्ठ

अवष्ट अवष्ठ का पाठांतर है। महा० सभा० 32, 8 में इसका उल्लेख है।

अवाकीर्ण

'जुहाव धृतराष्ट्रस्य राष्ट्रं नरवर पुरा, अवाकीर्णे सरस्वत्यास्तीर्थे प्रज्वाल्य पावकम्' शल्य० पर्व 41, 12। इस उद्धरण से ज्ञात होता है कि अवाकीर्ण सरस्वती नदी के तटवर्ती तीर्थों में गिना जाता था। इसकी यात्रा बलराम ने की थी। प्रसंगवश से ज्ञात पड़ता है कि अवाकीर्ण पंजाब में कहीं स्थित होगा।

अविमुक्त

समवत वाराणसी का एक नाम—(दे० लिंगपुराण 41, मत्स्यपुराण 182 184)।

अविस्थल

महाभारत उद्योग० 31-19 में उल्लिखित पांच स्थानों में से एक जिसे युधिष्ठिर ने दुर्योधन से पाण्डवों के लिए मांगा था। उन्होंने यह संदेश दुर्योधन के पास संजय द्वारा भिजवाया था—'अविस्थलवृकस्थले माकन्दी वारणावतम् अवसानं भवत्वत्र किंचिदेकं च पंचमम्' अर्थात् हम पांच अविस्थल, वृकस्थल माकंदी, वारणावत तथा पांचवां कोई भी ग्राम दे दें। वृकस्थल या वृकप्रस्थ (वर्तमान बागपत, जिला मेरठ, उ० प्र०), माकन्दी और वारणावत (वर्तमान बरनावा जिला मेरठ) हस्तिनापुर के निकट ही स्थित थे। अविस्थल भी इनके निकट ही होगा यद्यपि इसका ठीक ठीक अभिज्ञान संदिग्ध है। कुछ विद्वानों के अनुसार अविस्थल का शुद्ध पाठ कपिस्थल या कपिष्ठल होना चाहिए। कपिस्थल वर्तमान कैथल (जिला करनाल पंजाब) है।

अशोक मालव (दे० मालमाल)

अशोकवनिका

वाल्मीकि रामायण के अनुसार लंका में स्थित एक सुंदर उद्यान था जिसमें रावण ने सीता को बंदी बनाकर रखा था—'अशोकवनिकामध्ये मैथिली नीयताम् इति, तत्रेयं रक्ष्यतां गूढं युष्माभिः परिवारिता' अरण्य० 56, 30। अरण्य० 55 से ज्ञात होता है कि रावण पहले सीता को अपने राजप्रासाद में लाया था और वहीं रखना चाहता था। किंतु सीता की अडिगता तथा अपने प्रति उसका तिरस्कार भाव देखकर उसे धीरे धीरे मना लेने के लिए प्रासाद से कुछ दूर अशोकवनिका में कैद कर दिया था। सुंदर० 18 में अशोकवनिका का सुंदर वर्णन है—'ता

नगैर्विविधैर्जुष्टा सवपुष्पफलापगं, वृता पुष्करिणीभिश्च नानापुष्पोपशोभिताम्। सदा मत्तैश्च विहगैर्विचित्रा परमाद्भुतैं ईहामृगैश्च विविधैवृ ता दृष्टिमनोहरैं। वीथी सप्रेक्षमाणश्च मणिकाचनतोरणाम नानामृगगणाकीर्णा फलैं प्रपतितैंवृताम्, अशोकवनिकामेव प्राविवशत्सततद्रुमाम, सुदर०, 18, 69। अध्यात्मरामायण मे भी सीता का अशोकवनिका या अशोकविपिन म रखे जाने का उल्लेख है—'स्वात पुरे रहस्ये तामशोकविपिने क्षिपत, राक्षसीभि परिवृता मातृवुद्धया वपाल्यत्' अरण्य०, 7, 65। वाल्मीकि ने सुदर० 3,71 मे हनुमान् द्वारा अशोकवनिका के उजाडे जाने का वणन है— इतिनिश्चित्य मनसा वृक्षखडा महावल, उत्पाट्याशोकवनिका निवृक्षामकरोत क्षणात' सुदर० 3, 71। अशोकवनिका मे हनुमान ने साल, अशोक, चपक, उद्दालक, नाग, आम्र तथा कपिमुख नामक वृक्षो को देखा था। उन्होने एक शीशम के वृक्ष पर चढ कर प्रथम बार सीता को देखा था—'सुपुष्पिताग्रा रुचिरास्तरुणाकुरपल्लवान, तामारुह्य महावेग शिशपापणसवृताम—सुदर० 14 41। इसी वृक्ष के नीचे उन्होने सीता से भेट की थी—(दे० अध्यात्म० सुदर० 3, 14—'शनैरशोकवनिका विचिन्वन्' शिशपातरुम, अद्राक्ष जानकीमत्र शोचय ती दु खसप्लुताम')

अशोक वाटिका दे० अशोकवनिका

अशोकाराम

महावश 5, 80 के अनुसार पाटलीपुत्र मे अशोक द्वारा निर्मित विहार। इस विहार का निरीक्षण इन्द्रगुप्त नामक थेर भिक्षु के निरीक्षण मे हुआ था। यही तीसरी बौद्ध सगीति (सभा) अशोक के समय मे हुई थी।

अश्मक, अस्सक, अश्मत

बौद्ध साहित्य मे इस प्रदेश का, जो गोदावरी तट पर स्थित था, कई स्थानो पर उल्लेख मिलता है। महागोविन्दसूत्तन्त' के अनुसार यह प्रदेश रेणु और धतराष्ट्र के समय मे विद्यमान था। इस ग्रन्थ मे अस्सक के राजा ब्रह्मदत्त का उल्लेख है। सुत्तनिपात, 977 मे अस्सक को गोदावरी तट पर बताया गया है। इसकी राजधानी पोतन, पौदन्य, या पैठान (प्रतिष्ठान) मे थी। पाणिनि ने अष्टाध्यायी (4, 1, 173) मे भी अश्मको का उल्लेख किया है। सोननद जातक मे अस्सक को अवती से सबधित कहा गया है। अश्मक नामक राजा का उल्लेख वायुपुराण, 88, 177 178 और महाभारत मे है—'अश्मको नाम राजर्षि पौदन्य योन्यवेशयत'। सभवत इसी राजा के नाम से यह जनपद अश्मक कहलाया। ग्रीक लेखको ने अस्सकेनोई (Assukenoi) लोगो का उत्तर-पश्चिमी भारत मे उल्लेख किया है। इनका दक्षिणी अश्वको से ऐतिहासिक सम्बन्ध रहा

होगा या यह अश्वका का रूपांतर हो सकता है (दे० अश्वक)।

अश्व

महाभारत मे अश्व नामक नदी का उल्लेख चमण्वती की सहायक नदी के रूप म है। नवजात शिशु कर्ण को कुंती ने जिस मंजूषा मे रखकर अश्व नदी मे प्रवाहित कर दिया था वह अश्व से चंबल, यमुना और फिर गंगा मे बहती हुई चंपापुरी (जिला भागलपुर–बिहार) जा पहुची थी—'मंजूषा त्वश्वनद्या सायया चमण्वती नदीम चमण्वत्याश्च यमुना ततो गगा जगाम ह। गगाया सूतविषय चम्पामनुययौ पुरीम्' वन० 308, 25 26। अश्व नदी का नाम शायद इसके तट पर किए जाने वाले अश्वमेध-यज्ञो के कारण हुआ था। अश्वमेधनगर इसी नदी के किनारे बसा हुआ था, इसका उल्लेख महाभारत सभा० 29 मे है। यह नदी वतमान कालिंदी हो सकती है जो कन्नौज के पास गगा मे मिलती है।

(2) अश्वतीर्थ का वणन महाभारत, वन० के तीथपव क अतगत है—'तत्रदेवान पितृन विप्रास्तपयित्वा पुन पुन , कन्यातीर्थेऽश्वतीर्थे च गवा तीर्थे च भारत' वन० *95,3*। *यह स्थान कान्यकुब्ज या कन्नौज (उ० प्र०) के निकट गगा-*कालिंदी सगम पर स्थित था। कान्यकुब्ज को इस उल्लेख मे कन्यातीर्थ कहा गया है। यहा गाधि का तपोवन था। स्कदपुराण, नगरखण्ड 165,27 के अनुसार ऋचीक मुनि को वरुण ने एक सहस्र अश्व दिए थे जिनको लेकर उन्होने गाधि की पुत्री सत्यवती से विवाह किया था। इसी कारण इसे अश्वतीर्थ कहा जाता था—'तत प्रभृति विख्यातमश्वतीर्थं धरातले, गगातीरे शुभे पुण्ये कान्यकुब्जसमीपगम'। महाभारत, अनुशासन 4,17 मे भी इसी कथा क प्रसग मे यह उल्लेख है—'अदूरे कान्यकुब्जस्य गगायास्तीरमुत्तमम्, अश्वतीर्थं तदद्यापि मानवै परिचक्ष्यते'। पीछे कान्यकुब्ज का ही एक नाम अश्वतीर्थ पड गया था। वास्तव मे यह दोनो स्थान सन्निकट रह होंगे।

अश्वक

यह गणराज्य अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण क समय (327 ई० पूव) सिंध और पजकोरा नदियो के बीच के प्रदेश मे बजौरघाटी के अतगत बसा हुआ था। ग्रीक लेखकों के अनुसार यहा की राजधानी मसागा नाम के सुदृढ एव सुरक्षित नगर मे थी। कैंब्रिज हिस्ट्री ऑव इडिया के अनुसार अश्व या फारसी अस्प से ही इस जाति का नाम अश्वक हुआ था। अलक्षेंद्र मसागा की लडाई म तीर लगने से घायल हो गया था और वह वीरो की इस नगरी को केवल धोखे से ही जीत सका था।

अश्वत्थामा (उडीसा)

भुवनेश्वर से 2 मील पर स्थित धवलागिरि की पहाडी को ही अश्वत्थामा-पवत कहा जाता है। यहा मौयसम्राट् अशोक का एक अभिलेख उत्कीण है। कहते हैं कि इतिहास प्रसिद्ध कलिंग युद्ध जिसने अशोक के हृदय को बदल दिया था, इसी स्थान पर हुआ था। पवत पर पहले अश्वत्थामा विहार स्थित था।

अश्वत्थामागिरि=असीरगढ़

अश्वत्थामापुर=असोथर

अश्वबोधतीथ (भडौच, गुजरात)

भृगुकच्छ के निकट एक जैनतीथ जिसका उल्लेख विविधतीथ कल्प मे है। जिन सुव्रत यहा प्रतिष्ठानपुर से आए थे और इस स्थान के निकट वन मे उन्होने राजा जितशत्रु को उपदेश दिया था। जितशत्रु उस समय अश्वमेध-यज्ञ करने जा रहे थे। जैनधम मे दीक्षित होने के उपरात उन्होने यहा एक चैत्य बनवाया जो अश्वबोधतीथ कहलाया। जैनग्रथ प्रभावकचरित मे अश्वबोध मदिर का इतिहास वर्णित है। इसमे इसका अशोक के पौत्र सप्रति द्वारा जीर्णोद्धार कराए जाने का उल्लेख है। 1184 ई० के लगभग रचे गए सोमप्रभ सूरि के ग थ कुमारपाल प्रतिबोध मे भी इस तीथ मे हेमचद्रसूरि द्वारा प्राचीन मदिर का पुनर्निर्माण करवाने का उल्लेख है। इस तीथ को शकुनिकाविहार भी कहते थे।

अश्वमेधेश्वर

'सोऽश्वमेधेश्वर राजन् रोचमान सहानुगम् जिगाय समरे वीरो बलेन बलिनावर' महा० सभा० 29,8। सभवत यह तीथ अश्व नदी के तट पर स्थित था। अश्व चबल की सहायक नदी है।

अश्विनी, अश्विनीकुमार क्षेत्र

महाभारत, अनुशासन पव मे इस तीथ का वणन है। प्रसग से, वेदिकाकुण्ड के निकट इसकी स्थिति मानी जा सकती है। देविका नदी सभवत पजाब की देह है। 'देविकायामुपस्पृश्य तथा सुदरिकाह्लदे, अश्विन्या रूपवर्चस्क प्रेत्य वै लभते नर' अनुशासन०, 25,21।

अष्टनगर=हश्तनगर

प्राचीन पुष्कलावती के स्थान पर बसा हुआ वतमान कस्बा।

अष्टभुजा (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

मध्यकालीन मूर्तियो के अवशेष यहा प्राप्त हुए है। यह देवी का स्थान है।

अष्टापद

जैन साहित्य के सबसे प्राचीन आगमग्र थ एकादशअगादि मे उल्लिखित

तीर्थ जिसको हिमालय मे स्थित बताया गया है। सभवत कैलास को ही जैन-साहित्य मे अष्टापद कहा गया है। इस स्थान पर प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव का निर्वाण हुआ था।

असनी (जिला फतहपुर, उ० प्र०)

फतहपुर से 10 मील पर है। किवदती के अनुसार असनी का नामकरण अश्विनीकुमारो के नाम पर हुआ है। इनका मदिर भी यहा है। कहा जाता है कि मु० गौरी के कन्नौज पर आक्रमण के समय जयचद ने राजधानी छोडने से पूर्व अपना राजकोष यहा छिपा दिया था। यहा का पुराना किला अकबर के समकालीन हरनाथ ने बनवाया था।

असम दे० कामरूप, प्राग्ज्योतिषपुर

असम शब्द अहोम शब्द का रूपातर है। यह असम मे प्रारभिककाल म राज्य करने वाली जाति का नाम था।

असाई (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

1803 ई० म अग्रेजो ने मराठो को असाई के युद्ध मे पराजित किया था। इस विजय से अग्रेजो का दक्षिण मे काफी प्रभुत्व बढ गया था। असाई के युद्ध म मराठो की सेना मे फ्रासीसी सैनिक भी थे और सेना फ्रासीसी ढग पर प्रशिक्षित थी।

असाई खेडा (जिला इटावा, उ० प्र०)

महमूद गजनी 1018 ई० मे यहा आया था। उस समय इस स्थान को महानगरी कन्नौज का एक द्वार माना जाता था।

असावल (गुजरात)

अहमदाबाद का प्राचीन नाम। यह नगर साबरमती—प्राचीन साभ्रमती के तट पर बसा हुआ था। 1411 ई० मे अहमदशाह प्रथम बहमनी न अहमदाबाद की नीव डाली थी। इससे पूर्व गुजरात के हिंदू नरेशो की राजधानी वलभि, पाटन, अन्हलवाडा और असावल मे रही थी। असावल आशापल्ली का अपभ्रश माना जाता है।

असिक=आर्षिक

इस स्थान को, महारानी गौतमीबलश्री के नासिक अभिलेख (द्वितीय शती ई०) मे उसके पुत्र शातवाहननरेश गौतमीपुत्र के राज्य के अतर्गत बताया गया है। आर्षिक का उल्लेख पतजलि के महाभाष्य 14, 22 म भी है। यह असिक यदि महाभारत मे तीर्थरूप मे वर्णित आर्षिक का ही अपभ्रश रूप है तो इसकी स्थिति पुष्कर के पार्श्ववर्ती प्रदेश म रही होगी।

असिक्नी

वतमान चि नाब नदी (पाकिस्तान) का वैदिक नाम। ऋग्वेद 10, 75, 5 6
मे नदीसूक्त के अतगत इसका उल्लेख इस प्रकार है—'इम मे गगे यमुने
सरस्वति शतुद्रि स्तोम सचता परुष्ण्या। असिक्न्या मरुद्वृधे वितिस्तयार्जीकीये
शृणुह्या सुषोम या'। यह नदी अथववेद मे वर्णित त्रिककुद (त्रिकूट) पवत की
घाटी मे बहती है। ऋग्वेद से ज्ञात होता है कि पूव-वैदिक काल मे सिंधु और
असिक्नी नदिय के निकट क्रिवि लोगो का निवास था जो कालातर मे वतमान
पश्चिमी पजाब और मध्यउत्तरप्रदेश मे पहुच कर पाचाल कहलाए। पश्चवर्ती
साहित्य मे असि क्नी को च द्रभागा कहा गया है किंतु कई स्थानो पर असिक्नी
नाम भी उपल ब्ध है, यथा—श्रीमद्भागवत, 5, 19, 18 मे—'मरुद्वृधा वितस्ता
असिक्नी विश्वे नं महानद्य' दे० चद्रभागा।

असिताजन

घटजातक (कॉवेल स० 454) मे वर्णित एक नगर जिसकी स्थिति उत्तरापथ
मे मानी गई है। इसे कस (वासुदेव कृष्ण का शत्रु) की राजधानी माना गया
है। कृष्ण ने क स को मारकर असिताजन पर अधिकार कर लिया था। इसे
उत्तर मथुरा म थुरा से भिन्न माना गया है। असिताजन नामक नगर का
अस्तित्व वास्त विक जान पडता है।

(2) यह (बर्मा) ब्रह्मदेश का प्राचीन नगर है। इस स्थान पर अतिप्राचीन
काल से मध्ययु ग तक भारतीय औपनिवेशिको का शासन रहा। भारतीय
सस्कृति का प्रस ार भी इस प्रदेश मे दूर दूर तक हुआ। असिताजन बर्मा मे
प्राचीन भारतीय ों का एक प्रमुख स्मारक है।

असी

वाराणसी के निकट गगा नदी मे मिलने वाली एक प्रसिद्ध छोटी शाखानदी।
कहते है इस नग री का नाम असी और वरुणा नदियो के बीच मे स्थित होने के
कारण ही वारा णसी हुआ था। असी को असीगगा भी कहते है—'सवत् सोलह
सौ असी असी गग के तीर, सावन शुक्ला सप्तमी तुलसी तज्यौ शरीर'—इस
प्रचलित दोहे से यह भी ज्ञात होता है कि महाकवि तुलसी ने इसी नदी के तट
पर सभवत वर्तमान अस्सी घाट के पास अपनी इहलीला समाप्त की थी।

असीरगढ

प्राचीन ना म अश्वत्थामागिरि कहा जाता है। यहा का किला मुगलो के
समय मे बहुत प्रसिद्ध था। अकबर इसे बडी कठिनाई से जीत सका था। किले के
अदर शिवमदि र है जिसका सबध अश्वत्थामा से बताया जाता है। यह बुरहान-

पुर (महाराष्ट्र) के निकट स्थित है। बुरहानपुर मुगलकाल मे दक्षिण भारत पहुचने का नाका समझा जाता था। किला 850 फुट ऊची पहाडी पर है। आसा अहीर के नाम पर इस किले को पहले आसा अहीरगढ कहा जाता था। 1370 ई० से 1600 ई० तक यहा का शासन बुरहानपुर के फारखी वश के हाथ मे था।

असोथर (जिला फतहपुर, उ० प्र०)

प्राचीन नाम अश्वत्थामापुर है। 18वी शती मे महाराष्ट्र-केसरी शिवाजी के समकालीन भगवतराय खीची यहा के महाराज थे। इन्होने कुछ दिन तक शिवाजी के राजकवि भूषण और उनके भ्राता मतिराम को आश्रय दिया था जिसके कारण हिंदी रीतिकालीन काव्य की बहुत उन्नति हुई थी। यहा अरारुसिंह का 17वी शती के प्रारभ मे बना किला है।

अस्तगिरि

'पूर्वस्तत्रोदय गिरिजला धारस्तथापर, तथा रैवतक श्यामस्तथैवास्त गिरिर्द्विज' विष्णु० 2, 4, 61। इस उद्धरण के प्रसग के अनुसार अस्तगिरि शाकद्वीप के सात पर्वता मे से एक था।

अस्थि=हड्डी=हिड्डा (अफगानिस्तान)

वर्तमान जलालाबाद या प्राचीन नगरहार से 5 मील दक्षिण म है। बौद्ध काल मे यह प्रसिद्ध तीर्थ था। फाह्यान तथा युवानच्वाग दोनो ने ही यहा के स्तूपो तथा गगनचुबी विहारो का वर्णन किया है। यहा कई स्तूप थे जिनमे बुद्ध का दात तथा शरीर की अस्थियो के कई अश निहित थे। जिस स्तूप म बुद्ध के सिर की अस्थि रखी थी उसके दर्शन करने वालो से एक स्वर्णमुद्रा ली जाती थी फिर भी यहा यात्रियो का मेला सा लगा रहता था। नगर 3 4 मील के घेरे म एक पहाडी के ऊपर स्थित था। पहाड़ी पर एक सुदर उद्यान के भीतर एक दुमजिला धातुभवन था जिसमे किंवदती के अनुसार बुद्ध की उष्णीष अस्थि, शिरकपाल, एक नेत्र, क्षात्र दड और सघटी निहित थी। धातुभवन के उत्तर मे एक पत्थर का स्तूप था। जनश्रुति के अनुसार यह स्तूप एक अदभुत पाषाण का बना था कि उगली से छूने से ही हिलने लगता था। हिड्डा म फ्रासीसी पुरातत्त्वज्ञो ने एक प्राचीन स्तूप को खोज निकाला है जिसे पश्तो म थायस्ता या विशाल स्तूप कहते हैं। यह अभी तक अच्छी दशा मे है।

अस्थि ग्राम

जैन ग्रन्थ कल्पसूत्र के अनुसार तीर्थकर महावीर जी ने इस स्थान पर रह कर प्रथम वर्षाकाल बिताया था। यह स्थान वैशाली के निकट था।

अस्सक=अश्मक

अस्सपुर

चेतिय जातक के अनुसार चेदि-प्रदेश का एक नगर जिसकी स्थापना उपचर नरेश के पुत्र ने की थी।

अहमदाबाद (गुजरात)

साबरमती या प्राचीन साभ्रमती के तट पर बसा हुआ नगर। 1411 ई० म अहमदशाह बहमनी ने इस नगर की नीव प्राचीन हिंदू नगर असावल या आशापल्ली के स्थान पर रखी थी। इससे पहले गुजरात की राजधानी अन्हलवाडा या पाटन और उससे भी पहले वलभि मे थी। जैन स्तोत्र तीर्थमालाचैत्य वदन मे सभवत अहमदाबाद का करणावती कहा गया है—'वेदे श्रीकर्णावती शिवपुरे नागद्रहे नाणके'। 1273 ई० से 1700 ई० तक अहमदाबाद की समृद्धि गुजरात की राजधानी क रूप मे बढी चढी रही। 1615 ई० मे सर टामस रो ने अहमदाबाद को तत्कालीन लदन के बराबर बडा नगर बताया था। 1638 ई० मे एक यूरोपीय पर्यटक ने अहमदाबाद के विषय मे लिखा था कि ससार की कोई जाति या एशिया की कोई वस्तु ऐसी नही है जो अहमदाबाद मे न दिखाई पडे—There is scarce any nation in the world or any commodity in Asia but may not be seen in this city' आश्चर्य नही कि शाहजहा ने मुमताजमहल से विवाह के पश्चात अपने जीवन के कई सुखद वर्ष यही बिताए थे। अहमदाबाद की तत्कालीन समृद्धि का कारण इसका सूरत आदि बडे बदरगाहो के पृष्ठ प्रदेश मे स्थित होना था। इसीलिए इसे गुजरात की राजधानी बनाया गया था। गुजरात के सुलतानो के बनवाए हुए यहा अनेक भवन आज भी वर्तमान है जो हिंदू-मुसलिम वास्तुकला के सगम के सुदर उदाहरण हैं। गुजरात म इस मिश्र-शैली की नीव डालने वाला सुलतान अहमदशाह ही था। इन भवनो म पत्थर की जाली और नक्काशी का काम सराहनीय है। यहा के स्मारको मे जामा मसजिद (1424 ई०) मुख्य है।। इसमे 260 स्तभ है। अहमदशाह की बगमो के मकबरो को रानी की हजरा कहा जाता है। रानी सिप्री की मसजिद 50×20 फुट के परिमाण मे बनी है। सीदी सैयद की मसजिद पत्थर की जालिया से सज्जित खिडकियो के लिए प्रख्यात है। नगर के दक्षिण फाटक—राजपुर से पौन मील पर काकरिया झील है जिसे 1451 म सुलतान कुतुबुद्दीन ने बनवाया था। झील के मध्य मे एक टापू है। यहा एक दुर्ग का निर्माण भी किया गया था। अहमदाबाद मे समृद्धि की विपुलता होते हुए भी एक बडा

दोष यह था कि यहा धूल बहुत उडती थी जिसके कारण जहागीर ने नगर का नाम ही गर्दाबाद रख दिया था।

अहल्याश्रम

वाल्मीकि-रामायण, बाल० 48 मे वर्णित गौतम और अहल्या का आश्रम मिथिला या जनकपुर (उत्तरी बिहार या नेपाल) के निकट ही था—'मिथिलोपवने तत्र आश्रम दृश्य राघव पुराण निजन रम्य पप्रच्छ मुनिपुगवम्' बाल० 48,11। *रामायण के वणन से ज्ञात होता है कि गौतम के शाप के कारण अहल्या इसी* निजन स्थान मे रह कर तपस्या के रूप मे अपने पाप का प्रायश्चित कर रही थी। तपस्या पूण होने पर रामचद्रजी ने उसका अभिनदन किया और उसको गौतम के शाप से निवृत्ति दिलाई। रघुवश 11,33 मे कालिदास ने भी मिथिला के निकट ही इस आश्रम का उल्लेख किया है—'ते शिवेषु वसतिगताध्वभि सायमाश्रमतरुष्व गृह्यत येषु दीधतपस परिग्रहोवासव क्षणकलत्रता ययौ।' कालिदास ने अहल्या को शिलामयी कहा है—(रघु० 11,34) यद्यपि ऐसा कोई उल्लेख वाल्मीकि रामायण मे नही है। जानकीहरण मे कुमारदास ने भी इस *आश्रम का वणन किया है (6,14–15) अध्यात्म-रामायण मे विस्तारपूर्वक* अहल्याश्रम की प्राचीन कथा दी हुई है (बाल० सग 51)। एक किंवदती के अनुसार उत्तर-पूव-रेलवे के कमतौल स्टेशन के निकट अहियारी ग्राम अहल्या के स्थान का बोध कराता है। इसे सिंहेश्वरी भी कहते हैं।

अहार (उदयपुर, राजस्थान)

1954–55 मे भारतीय पुरातत्त्व विभाग द्वारा की गई खुदाई मे यहा से काले और लाल रग के मिट्टी के बतनो के अवशेष प्राप्त हुए थे। इस प्रकार के मृदभाड दक्षिण भारत के महापाषाण (Megalithic) मृदभाडो के सदृश हैं और ये प्रागैतिहासिक और ऐतिहासिक काल के अतवर्ती युग से सबधित माने जाते हैं। यह स्थल उदयपुर के स्टेशन के निकट है।

अहिक्षेत्र=अहिच्छत्र (जिला बरेली, उ० प्र०)

आवला नामक स्थान के निकट इस महाभारतकालीन नगर के विस्तीण खण्डहर अवस्थित हैं। यह नगर महाभारतकाल मे तथा उसके पश्चात पूव-बौद्धकाल म भी काफी प्रसिद्ध था। यहा उत्तरी पाचाल की राजधानी थी। 'सोऽध्यावसद्दीनमना काम्पिल्य च पुरोत्तमम्। दक्षिणाश्चापि पचालान याव-च्चमण्वती नदी। द्रोणेन चैव द्रुपद परिभूयाथ पातित। पुनज म परीप्सन वै पथिवीम वसचरत्, अहिच्छत्र च विषय द्रोण समभिपद्यत' महा० आदि०, 137,73–74–76। इस उद्धरण से सूचित होता है कि द्रोणाचाय न पाचाल

नरेश द्रुपद को हरा कर दक्षिण पाचाल का राज्य उसके पास छोड दिया था और अहिच्छत्र नामक राज्य अपने अधिकार मे कर लिया था। अहिच्छत्र कुरुप्रदेश के पाश्व मे ही स्थित था—यह उद्योग० 29 30 से भी सिद्ध होता है—'अहिच्छत्र कालकूट गगाकूल च भारत'। सम्राट अशोक ने यहा अहिच्छत्र नामक विशाल स्तूप बनवाया था। जैनसूत्र प्रज्ञापणा मे अहिच्छत्र का कई अय जन पदो के साथ उल्लेख है।

चीनी यात्री युवानच्वाग जो यहा 640 ई० के लगभग आया था, नगर के नाम के बारे मे लिखता है कि किले के बाहर नागह्रद नामक एक ताल है जिसके निकट नागराज ने बौद्ध धम स्वीकार करने के पश्चात इस सरोवर पर एक छत्र बनवाया था। अहिच्छत्र के खण्डहरो मे सबसे अधिक महत्त्वपूण ढह एक स्तूप है जिसकी आकृति चक्की के समान होने से इसे स्थानीय लोग 'पिसनहारी का छत्र' कहते है। यह स्तूप उसी स्थान पर बना है जहा किंवदती के अनुसार बुद्ध ने स्थानीय नाग राजाओ को बौद्धधम की दीक्षा दी थी। यहा से मिली हुई मूर्तिया तथा अय वस्तुए लखनऊ के सग्रहालय मे सुरक्षित हैं। वेबर ने शतपथ ब्राह्मण (13,5,4,7) मे उल्लिखित परिवक्रा या परिचक्रा नगरी का अभिनान महाभारत की एकचक्रा (सभवत अहिच्छत्र) के साथ किया है (दे० वैदिक इडेक्स 1,494)। महाभारत मे इसे अहिक्षेत्र तथा छत्रवती नामो से भी अभिहित किया गया है। जैन-ग्रथ विविधतीथकल्प मे इसका एक अय नाम सख्यावती भी मिलता है (दे० सख्यावती)। एक अय प्राचीन जैन ग्रथ तीथमाला-चैत्यवदन मे अहिक्षेत्र का शिवपुर नाम भी बताया गया है—'वदे श्री करणावती शिवपुरे नागद्रहे नाणके'। जैन ग्रथो मे इसका एक अय नाम शिवनयरी भी मिलता है (दे० एशेंट जैन हिम्स पृ० 56)।

टॉल्मी ने अहिच्छत्र का अदिसद्रा नाम से उल्लेख किया है (दे० ए क्लासिकल डिक्शनरी ऑव हिंदू माइथोलोजी एण्ड रिलीजन, ज्योग्रेफी, हिस्ट्री, एण्ड लिटरेचर—सप्तम सस्करण)।

(2) सपादलक्ष या सिवालिक पहाडियो (पश्चिमी उ० प्र०) मे बसे हुए देश की राजधानी। डा० भडारकर के अनुसार दक्षिण के चालुक्य मूलत यही के निवासी थे।

अहियारी दे० **अहल्याश्रम**

अहिवरण दे० **बुलदशहर**

अहिस्थल दे० **ग्रासदीवत**

अहीरवाडा

झासी और ग्वालियर के बीच का प्रदेश जहा गुप्तकाल मे आभीरो का

निवास था।

अहोगग

महावंश 4 18 मे उल्लिखित हिमाचल श्रेणी। संभवत यह हरिद्वार की पर्वत माला का नाम है।

अहोबिल (मद्रास)

मसलीपट्टम—हुबली रेलमार्ग पर नंदयाल स्टेशन से लगभग 34 मील दूर है। इस प्राचीन तीर्थ का संबंध श्रीराम तथा अर्जुन से बताया जाता है। किंवदंती के अनुसार नृसिंह भगवान का अवतार इसी स्थान पर हुआ था।

आंजनग्राम (बिहार)

रांची लोहरदगा रेलमार्ग पर लाहरदगा स्टेशन से गुमला जाने वाली सड़क पर स्थित टोटो ग्राम से 3 मील दूर है। इसे स्थानीय जनश्रुति मे श्रीराम के भक्त अंजनापुत्र हनुमान् का जन्मस्थान बताया जाता है। अंजना के नाम पर यहा एक अजनी-गुफा भी है। वाल्मीकि रामायण किष्किंधा० 66 मे अंजना की कथा वर्णित है—'अंजनेति परिख्याता पत्नी केसरिणा हरे'। 66,20 के अनुसार अंजना ने हनुमान् को पर्वतगुहा म जन्म दिया था—'एवमुक्ता ततस्तुष्टा जननी ते महाकपे, गुहायां त्वां महाबाहो प्रजज्ञे प्लवगर्षभ।

आंध्र

दक्षिण भारत का तेलुगुभाषी प्रदेश। ऐतरेय ब्राह्मण, 7,18 मे आंध्र, शबर पुलिंद आदि दक्षिणात्य जातियों का उल्लेख है जो मूलत विंध्यपर्वत की उपत्यकाओं मे रहती थी। महाभारत सभा० 31,71 मे आंध्रों का उल्लेख है—पाड्यांश्च द्रविडांश्चैव सहितांश्चोण्ड्रकेरलैः आंध्रस्तालवनांश्चैव कलिंगानुष्ट्रकर्णिकान्'। वन० 51,22 मे आंध्रों का चोलों और द्राविडों के साथ उल्लेख है—'सवंगागान् सपौंड्रोड्रान् सचोलद्राविडांध्रकान'। अशोक के शिला-अभिलेख 13 मे भी आंध्रों को मगध साम्राज्य के अंतर्गत बताया गया है। विष्णुपुराण 4,24,64 मे आंध्र देश का इस प्रकार उल्लेख है—'कोसलांध्रपुंड्रताम्रलिप्त समुद्रतट पुरी च देवरक्षितो रक्षित'। 240 ई० पू० के लगभग आंध्रों ने दक्षिण मे एक स्वतंत्र राज्य स्थापित किया था जो धीरे धीरे भारत प्रायद्वीप भर मे विस्तृत हो गया। इन्होने विजातीय क्षत्रपो को हरा कर गोदावरी, बरार, मालवा, काठियावाड और गुजरात तक आंध्र सत्ता का विकास किया। आंध्र-नरेशो मे गौतमीपुत्र शातकर्णी बहुत प्रसिद्ध हुआ जो 119 ई० के लगभग राज करता था। आंध्र-राज्य की प्रभुसत्ता 225 ई० के लगभग तक रही। इस समय दक्षिण भारत के समुद्रतट पर कई बड़े बंदरगाह थे जिनके द्वारा रोम साम्राज्य

से भारत का व्यापार चलता था। आध्र-देश का आतरिक शासन प्रबध भी बहुत सुव्यवस्थित और लोकतत्रीय सिद्धातो पर आधारित था जिसका प्रमाण इस प्रदेश के अनेक अभिलेखो से मिलता है।

आबिकेय

विष्णुपुराण 2,4,62 के अनुसार शाकद्वीप का एक पवत—'आबिकेयस्त-थारम्य केसरी पवतोत्तम'।

आवला (जिला बरेली, उ० प्र०)

आवला तहसील का मुख्य स्थान। महाभारत के समय तथा अनुवर्ती काल मे आवला का निकटवर्ती प्रदेश उत्तर पाचाल का एक भाग था। महाभारत कालीन राजधानी **अहिच्छत्र** के खण्डहर आवले के निकट रामनगर मे स्थित है। आवले मे स्थित बेगम की मसजिद मुसलमानी शासनकाल का स्मारक है।

आऊवा (जिला जोधपुर, राजस्थान)

यहा उत्तरमध्य काल मे निर्मित काल पत्थर के एक बृहत्फलक पर देवी की विशाल प्रतिमा है। मूर्ति के दस हाथ तथा चौवन मुख प्रदर्शित किए गए है। हाथो मे अनेक प्रकार के आयुध हैं। कहा जाता है देवी की इतनी भव्य मूर्ति अयत्र नही है।

आकरअवति

यह पूव तथा पश्चिम मालवा का सयुक्त नाम है। इसका उल्लेख आध्र-नरेश गौतमीबलश्री के नासिक अभिलेख मे मिलता है जिसमे इस प्रदेश को शातवाहन गौतमी पुत्र (द्वितीय शती ई०) के विशाल राज्य का एक भाग बताया गया है।

आकष

'आकर्षा कुतलाश्चैव मालवाश्चाध्रकास्तथा' महा० 2 32,11। प्रसग से जान पडता है कि आकष महाभारतकाल मे दक्षिणापथ का कोई देश था।

आकाशगगा

'आकाशगगा प्रयता पाडवास्तऽभ्यवादयन्' महा०, वन० 142,11। इस नदी का बदरिकाश्रम के निकट उल्लेख है जिससे यह गगा की अलकनदा नाम की शाखा जान पडती है। पौराणिक किंवदती मे गगा को आकाश माग से जाने वाली नदी माना जाता था (दे० त्रिपथगा)। बदरिकाश्रम के निकट, महाभारत मे, जिस वैहायसह्रद का उल्लेख है वह आकाशगगा या अलकनदा का ही स्रोत जान पडता है—'यत्र साबदरी रम्या ह्रदावैहायसस्तथा' शाति०, 127,:।

आकाशनगर (मद्रास)

कुभकोणम से चार मील दूर विष्णु की उपासना का प्राचीन केंद्र है। इसे तुलसीवन भी कहते हैं।

ऑक्सस दे० वक्षु, वक्षु, चक्षु)

आगर (जिला उज्जैन, म० प्र०)

उज्जैन से कुछ दूर उत्तर की ओर छोटा सा कस्बा है। यहा से ईशानकोण मे महादेव का एक मदिर है जिसे *1883 ई०* मे अग्रेज सैनिक कर्नल मार्टिन ने बनवाया था। मदिर की मूर्ति बहुत पुरानी है। कहा जाता है कि इस स्थान पर पहले एक अतिप्राचीन मदिर स्थित था।

आगरा (उ० प्र०)

मुगलकाल के इस प्रसिद्ध नगर की नीव दिल्ली के सुल्तान सिकदरशाह लोदी ने 1504 ई० मे डाली थी। इसने अपने शासनकाल मे होने वाले विद्रोहो को भली भाति दबाने के लिए वर्तमान आगरे के स्थान पर एक सैनिक छावनी बनाई थी जिसके द्वारा उसे इटावा, बयाना, कोल, ग्वालियर और धौलपुर के विद्रोहियो को दबाने मे सहायता मिली। मखजन ए अफगान के लेखक के अनुसार सुलतान सिकदर ने कुछ चतुर आयुक्तो को दिल्ली, इटावा और चादवर के आस पास के इलाके मे किसी उपयुक्त स्थान पर सैनिक छावनी बनाने का काम सौंपा था और उन्होंने काफी छानबीन के पश्चात इस स्थान (आगरा) को चुना था। अब तक आगरा या अग्रवन केवल एक छोटा सा गाव था जिसे ब्रजमडल के चौरासी वनो मे अग्रणी माना जाता था। शीघ्र ही इसके स्थान पर एक भव्य नगर खडा हो गया। कुछ दिन बाद सिकदर भी यहा आकर रहने लगा। तारीखदाऊदी के लेखक के अनुसार सिकदर प्राय आगरे ही मे रहा करता था।

1505 ई० मे रविवार, जुलाई 7 को आगरे मे एक विकट भूकप आया जिसने एक वर्ष पहले ही बसे हुए नगर के अनेक सुदर भवनो को धराशायी कर दिया। मखजन के लेखक के अनुसार भूकप इतना भयानक था कि उसके धक्के से इमारतो का तो कहना ही क्या, पहाड तक गिर गए थे और प्रलय का सा दृश्य दिखाई देने लगा था। इसके पश्चात आगरे की उन्नति अकबर के समय म प्रारभ हुई। 1565 ई० मे उसने यहा लाल पत्थर का किला बनवाना शुरू किया जो आठ वर्षों मे तैयार हुआ। अब तक इसके स्थान पर इंटो का बना हुआ एक छोटा सा किला था जो खडहर हो चला था। अकबर के किले का बनाने वाला तीनहजारी मनसबदार कासिम खा था और इसके निर्माण का का व्यय 35 लाख रुपया था। किले की नीव भूमिगत पानी तक गहरी है। इसके

पत्थरो को मसाले के साथ साथ लोहे के छल्लो से भी जोड कर सुदृढ बनाया गया है। अकबर ने अपने शासन के प्रारभ मे ही फतहपुर सीकरी को अपनी राजधानी बनाया था किंतु 1586 ई० मे अकबर पुन अपनी राजधानी आगरे ले आया था। जहागीर के राज्यकाल मे और शाहजहा के शासन के प्रारभिक वर्षो मे आगरे मे ही राजधानी रही। इस जमाने मे यहा किले की अदर की सुदर इमारतें—मोती मसजिद और ऐतमाद्दौला का मकबरा (जिसका निर्माण नूरजहा ने करवाया था) बना। शाहजहा ने आगरे को छोडकर दिल्ली म अपनी राजधानी बनाई। इसी समय आगरे मे विश्वविश्रुत ताजमहल का निर्माण हुआ।

आगरे मे मुगल वास्तुकला के पूव और उत्तरकालीन दोनो रूपो के उदाहरण मिलते है। अकबर के समय तक जो इमारते मुगलो ने बनवाईं वे विशाल, भव्य और विस्तीण है, जैसे फतहपुर सीकरी के भवन या दिल्ली मे हुमायू का मकबरा। नूरजहा के बनवाए हुए ऐतमाद्दौला के मकबरे मे पहली बार पत्थर पर बारीक नक्काशी और पच्चीकारी का काम किया गया और उस कला का जन्म हुआ जो विकसित होते हुए ताजमहल के अभूतपूव वास्तुशिल्प मे प्रस्फुटित हुई। ताजमहल मे भव्य तथा सूक्ष्म दोना कलापक्षो का अदभुत मेल है जा उसे ससार की सवश्रेष्ठ इमारता मे प्रमुख स्थान दिलाता है।

शाहजहा के दिल्ली चले जाने के पश्चात् आगरा फिर कभी मुगला की राजधानी न बन सका यद्यपि यह नगर मुगलकाल का एक प्रमुख नगर तो अत तक बना ही रहा।

आग्नेय

वाल्मीकि रामायण, 2,71,3 मे इस ग्राम का उल्लेख है, 'एलधाने नदी तीर्त्वा प्राप्य चापरपवतान, शिलामाकुवन्ती तीर्त्वा आग्नेय शल्यकपणम'—जा सभवत शिलावहा नदी के पूर्वी तट पर रहा होगा।

आग्रेय

यह गणराज्य अलक्षेंद्र के समय मे पजाब मे स्थित था। सभव है यह अग्राहा का ही पाठातर हो।

आजमगढ (उ० प्र०)

1665 ई० मे फुलवारिया नायक प्राचीन ग्राम के स्थान पर आजम खा द्वारा इस नगर की स्थापना की गई थी। यहा गौरीशकर का मदिर 1760 ई० म स्थानीय राजा के पुरोहित ने बनवाया था।

आजमाबाद=तरायन

आजी दे० अजकला

आटविक

वतमान मध्यप्रदेश का पूर्वोत्तर तथा उत्तरप्रदेश का दक्षिण पूर्वी भाग जो

वनों के आधिक्य के कारण अटवी कहलाता था। इसके कोटाटवी तथा बटाटवी नामक भाग थे।

आद्ध्यपुर

प्राचीन कंबोडिया या कंबुज का एक नगर। कंबुज में भारतीय हिंदू औप निवेशकों ने लगभग तेरह सौ वर्ष राज्य किया था।

आत्रेयी

(1) 'करतोया तथात्रेयी लौहित्यश्च महानदी,' महा० 2,9,221। इस उल्लेख के अनुसार आत्रेयी गोदावरी की एक छोटी शाखा का नाम है। यह पंचवटी के निकट गोदावरी में मिलती है। गोदावरी की सात शाखाएं मानी गई हैं। दे० गोदावरी।

(2) जिला राजशाही—बंगाल—की एक नदी जो गंगा में मिलती है।

आदर्शावली

अवली पर्वत श्रेणी का नाम कहा जाता है।

आदित्य

महाभारतकाल में सरस्वती नदी के तट पर स्थित एक तीर्थ, जिसकी यात्रा बलराम जी ने अन्य तीर्थों के साथ की थी—'वनमाली ततो हृष्टः स्तूयमानो महर्षिभिः, तस्मादादित्यतीर्थं च जगाम कमलेक्षण' शल्य० 49,17

आदिबदरी (ज़िला गढवाल, उ० प्र०)

परगना चांदपुर में कर्णप्रयाग से लगभग 11 मील दक्षिण में स्थित है। यहां सोलह प्राचीन मंदिर हैं जिन्हें किंवदंती के अनुसार शंकराचार्य ने बनवाया था किंतु ये वास्तव में चांदपुरी गढी के प्राचीन राजाओं द्वारा निर्मित हैं।

आदिलाबाद (आ० प्र०)

नगर में एक पुराना मंदिर और उत्तर मुसलमान काल की एक मसजिद है। नगर का नाम बीजापुर के बहमनी सुलतान आदिलशाह के नाम पर है। यह आदिलशाह शिवाजी का समकालीन था।

आनंद

विष्णुपुराण 2, 4, 5 के अनुसार प्लक्ष द्वीप का एक भाग जो इस द्वीप के राजा मेधातिथि के पुत्र आनंद के नाम से प्रसिद्ध है।

आनंदपुर (गुजरात)

(1) गुजरनरेश शीलादित्य सप्तम के अलिया ताम्रदानपट्ट (767 ई०) में आनंदपुर का उल्लेख है। इस नगर में राजा का शिविर था जहां से यह शासन प्रचलित किया गया है। किंवदंती के अनुसार आनंदपुर सारस्वत (नागर)

ब्राह्मणों का मूल स्थान है। उनका कहना है कि उन्होंने ही देवनागरी लिपि का आविष्कार किया था। 7वीं शती ई० (630-645 ई०) में जब युवानच्वांग भारत आया था तो आनंदपुर का प्रांत मालवा के उत्तर पश्चिम की ओर साबरमती के पश्चिम में स्थित था। यह मालवा राज्य के ही अधीन था। इसका दूसरा नाम वरनगर भी था। ऋग्वेद प्रातिशाख्य के रचयिता उव्वट ने अपने ग्रन्थ के प्रत्येक अध्याय के अंत में 'इति आनंदपुर वास्तव्य' लिखा है। बहुत संभव है कि वह इसी नगर का निवासी रहा हो। नागर ब्राह्मण वरनगर के निवासी होने से ही नागर कहलाए।

(2) (पंजाब) आनंदपुर की विशेष ख्याति उसके सिख खालसा पंथ का जन्मस्थान होने के नाते है। सिखों के दसवें गुरु गोविंदसिंह ने औरंगजेब की हिंदू विद्वेषी नीति से हिंदुओं की रक्षा करने के लिए ही खालसा पंथ की स्थापना करके सिख संप्रदाय को सुदृढ़ एवं संगठित रूप प्रदान किया था। उन्होंने ही इस ग्राम का नामकरण भी किया था।

आनर्त

उत्तरपश्चिमी गुजरात का प्राचीन नाम। 'आनर्तान् कालकूटांश्च कुलिंदांश्च विजित्य स' महा०, सभा० 26, 4। इस उल्लेख के अनुसार अर्जुन ने पश्चिम दिशा की विजय यात्रा में आनर्तों को जीता था। सभापर्व के एक अन्य वर्णन से ज्ञात होता है कि आनर्त का राजा शाल्व था जिसकी राजधानी सौभनगर में थी। श्रीकृष्ण ने इस देश को शाल्व से जीत लिया था (किंतु दे० शाल्वपुर, मार्तिकावत) विष्णुपुराण में आनर्त की राजधानी कुशस्थली—द्वारका का प्राचीन नाम—बताई गई है—'आनर्तस्यापि रेवतनामा पुत्रो जज्ञे, योऽसावानर्तविषयं बुभुजे पुरीं च कुशस्थलीमध्युवास—' विष्णु० 4, 1, 64। इस उद्धरण से यह भी सूचित होता है कि आनर्त के राजा रेवत के पिता का नाम आनर्त था। इसी के नाम से इस देश का नाम आनर्त हुआ होगा। रेवत बलराम की पत्नी रेवती के पिता थे। महाभारत, उद्योग० 7, 6 से भी विदित होता है कि आनर्त नगरी, द्वारका का नाम था—'तमेव दिवसं चापि कौंतेय पांडुनंदन, आनर्त-नगरीं रम्यां जगामाशु धनंजय'। गिरनार के प्रसिद्ध अभिलेख के अनुसार रुद्रदामन ने 150 ई० के लगभग अपने पह्लव अमात्य सुविशाख को आनर्त और सुराष्ट्र आदि जनपदों का शासक नियुक्त किया था—'कृत्स्नानामानर्त सुराष्ट्राणां पालनार्थं नियुक्तेन पह्लवेन कुलैप पुत्रेणामात्येन सुविशाखेन—'। रुद्रदामन् ने आनर्त को सिंधु सौवीर आदि जनपदों के साथ विजित किया था—'स्ववीर्यार्जितानामनुरक्तसर्वप्रकृतीनांपूर्वापराकरावन्त्यनुपनीवृदानर्त

मुराद्रक्षभ्रमग्राच्छर्सिधुमोवीरकुरुरापरातनिपादादीनाम्—'।

आपगा

(1) पजाब की एक नदी—'शाकल नाम नगरमापगा नाम निम्नगा, जर्तिकानाम वाहीकास्तेषा वृत्त सुनिंदितम' महा० कर्ण० 44, 10 अर्थात वाहीक या आरट्ट देश म शाकल—वतमान स्यालकोट—नाम का नगर और आपगा नाम की नदी है जहा जर्तिक नाम के वाहीक रहते है, उनका चरित्र अत्यत निंदित है। इससे स्पष्ट है कि आपगा स्यालकोट (पाकिस्तान) के पास बहने वाली नदी थी। इसका अभिज्ञान स्यालकोट की 'ऐक' नाम की छोटी सी नदी से किया गया है। यह चिनाब की सहायक नदी है।

(2) वामन पुराण म (39, 6-8) आपगा नदी का उल्लेख है जो कुरक्षेत्र की सात पुण्य नदिया मे से है—'सरस्वती नदी पुण्या तथा वैतरणी नदी, आपगा च महापुण्या गगा मदाकिनी नदी। मधुश्रुवा अम्लुनदी कौशिकी पापनाशिनी दशद्वती महापुण्या तथा हिरण्यवती नदी'। कहा जाता है यह नदी जो अब अधिकाश मे विलुप्त हो गई है कुरक्षेत्र के ब्रह्मसर से एक मील दूर आपगा सरोवर के रूप म आज भी दृश्यमान है।

सभव है, महाभारत और वामनपुराण की नदिया एक ही हो, यदि ऐसा है तो नदी के गुणो मे जो दानो ग्र था मे वैपम्य वर्णित है वह आश्चयजनक है। नदिया भिन्न भी हो सकती है।

आपण

बुद्धचरित्र के अनुसार अग और सुह्म के बीच मे स्थित नगर जहा गौतम-बुद्ध ने केन्य व शेल नामक ब्राह्मणो को दीक्षित किया था।

आप्तनेश्वर दे० इकोना

आबोनेरी (राजस्थान)

आठवी शती ई० मे निर्मित शिवमदिर मध्ययुगीन राजस्थानी वास्तुकला का सुदर उदाहरण है।

आबू दे० अर्बुद (राजस्थान)

जैन वास्तुकला के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण-स्वरूप दो प्रसिद्ध सगमरमर क बने मदिर जो दिल्वाडा या देवलवाडा मदिर कहलाते हैं इस पवतीय नगर के जगत् प्रसिद्ध स्मारक है। विमलसाह के मदिर को एक अभिलेख के अनुसार राजा भीमदेव प्रथम के मत्री विमलसाह ने बनवाया था। इस मदिर पर 18 करोड रुपया व्यय हुआ था। कहा जाता है कि विमलसाह न पहले कुभेरिया मे पाश्वनाथ के 360 मदिर बनवाए थे किंतु उनकी इष्टदेवी अबा जी ने किसी

वान पर रुष्ट होकर पाच मदिरो का छोड अवशिष्ट सारे मदिर नष्ट कर दिए और स्वप्न मे उन्ह दिल्वाडा मे आदिनाथ का मदिर बनाने का आदेश दिया। किंतु आबूपवत के परमार नरेश न विमलसाह को मदिर के लिए भूमि देना तभी स्वीकार किया जब उन्होन सपूण भूमि को रजतखडो से ढक दिया। इस इस प्रकार 56 लाख रुपए मे यह जमीन खरीदी गई थी। इस मदिर म आदिनाथ की मूर्ति की आखे असली हीरक की बनी हुई हैं और उसके गले म बहुमूल्य रत्नो का हार है। इस मन्दिर का प्रवेशद्वार गुबद वाले मडप से होकर है जिसके सामने एक वर्गाकृति भवन है। इसम छ स्तभ और दस हाथियो की प्रतिमाए हैं। इसके पीछे मध्य म मुख्य पूजागृह है जिसमे एक प्रकोष्ठ म ध्यानमुद्रा म अवस्थित जिन की मूर्ति है। इम प्रकोष्ठ की छत शिखर रूप म बनी है यद्यपि वह अधिक ऊची नही है। इसके साथ एक दूसरा प्रकोष्ठ बना है जिसके आगे एक मडप स्थित है। इम मडप के गुबद के आठ स्तभ ह। सपूण मदिर एक प्रागण के अदर घिरा हुआ है जिसकी लबाई 128 फुट और चौडाई 75 फुट है। इसके चतुर्दिक छोटे स्तभो की दुहरी पक्तिया ह जिनसे प्रागण की लगभग 52 कोठरिया के आगे बरामदा सा बन जाता है। बाहर से मदिर नितात सामान्य दिखाई देता है और इससे भीतर के अदभुत कला वैभव का तनिक भी आभास नही होता। किंतु श्वेत सगमरमर के गुबद का भीतरी भाग, दीवारे, छतें तथा स्तभ अपनी महीन नक्काशी और अभूतपूव मूर्तिकारी के लिए ससार प्रसिद्ध ह। इस मूर्तिकारी मे तरह तरह के फूल पत्ते, पशु पक्षी तथा मानवो की आकृतिया इतनी बारीकी से चित्रित ह मानो यहा के शिल्पियो की छेनी के सामने कठोर सगमरमर मोम बन गया हो। पत्थर की शिल्पकला का इतना महान् वैभव भारत मे अन्यत्र नही है। दूसरा मदिर जो तेजपाल का कहलाता है, निकट ही है और पहले की अपेक्षा प्रत्येक बात मे अधिक भव्य और शानदार दिखाई देता है। इसी शैली म बने तीन अन्य जैन-मन्दिर भी यहा आसपास ही हैं। किंवदती है कि वशिष्ठ का आश्रम देवलवाडा के निकट ही स्थित था। अबुदा देवी का मदिर यही पहाड के ऊपर है।

जैन ग्रन्थ विविधतीर्थकल्प के अनुसार आबूपवत की तलहटी मे अर्बुद नामक नाग का निवास था, इसी के कारण यह पहाड आबू कहलाया। इसका पुराना नाम नदिवधन था। पहाड के पास मन्दाकिनी नदी बहती है और श्रीमाता, अचलेश्वर और वशिष्ठाश्रम तीथ हैं। अर्बुद गिरि पर परमार नरेशो न राज्य किया था जिनकी राजधानी चद्रावती म थी। इस जैन ग्रन्थ के अनुसार विमल नामक सेनापति ने ऋषभदेव की पीतल की मूर्ति सहित यहा एक चैत्य

बनवाया था और 1088 वि० सं० में उसने विमल वसति नामक एक मंदिर बनवाया। 1288 वि० सं० में राजा के मुख्य मंत्री ने नेमि का मंदिर—लूणिगवसति बनवाया। 1243 वि० सं० में नरसिंह के पुत्र पीटपद और महनसिंह के पुत्र ल्लल ने तेजपाल द्वारा निर्मित मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया। इसी मूर्ति के लिए चालुक्यवंशी कुमारपाल भूपति ने श्रीवीर का मंदिर बनवाया था। अर्बुद का उल्लेख एक अन्य जैन ग्रंथ तीर्थमालाचैत्यवन्दन में भी मिलता है—'कोटा नारकमथिशाहडपुरश्रीमडप चार्बुद'।

आभीर

गुजरात का दक्षिण पूर्वी भाग। यूनानियों ने इसे अबरिया कहा है। टॉल्मी ने इस देश को सिंध नदी के मुहाने के निकट स्थित बताया है—(दे० मॅक्रिंडल-टॉल्मी, पृ० 140)। ब्रह्माण्डपुराण, 6 में भी इसी तथ्य का उल्लेख है और सिंधु को आभीर देश में बहने वाली नदी कहा गया है। महाभारत, सभा० 31 में आभीरों को सरस्वती-नदी (सोमनाथ के निकट) के तीर तथा समुद्र तट के निवासी बताया गया है।

आमू

दक्षिण पश्चिमी एशिया में अफगानिस्तान तथा दक्षिणी रूस की सीमा पर बहने वाली नदी जिसे प्राचीन भारतीय साहित्य में वक्षु और विष्णुपुराण में चक्षु कहा गया है। ग्रीक लोग इसे ऑक्सस कहते थे।

आमेर (जिला जयपुर, राजस्थान)

जयपुर से छः मील दूर जयपुर राज्य की प्राचीन राजधानी। कहा जाता है कि 1129 ई० के लगभग कछवाहा राजपूतों को ग्वालियर से परिहारों ने निकाल दिया था। कछवाहा राजकुमार तेजकरों अपनी नवोढा पत्नी सुन्दरी मरोनी के प्रेमपाश में बंध कर राजकाज भूल बैठा था जिसके फलस्वरूप उसके भतीजे परिहार ने उसे राज्यच्युत कर दिया। कछवाहों ने निष्कासित होने के पश्चात जंगली मीनाओं की सहायता से ढुंढार की रियासत स्थापित की। आमेर ढुंढार ही की राजधानी थी। जयसिंह द्वितीय के समय तक (1730 ई० के कुछ पूर्व) कछवाहों की राजधानी आमेर नगर में ही रही। जयसिंह द्वितीय ने ही जयपुर बसाया और अपनी राजधानी नए नगर में बनाई। आमेर में अकबर के दरबार के रत्न महाराजा मानसिंह द्वारा निर्मित दुर्ग और प्रासाद पहाड़ी के ऊपर स्थित हैं। इनके भीतर दरबार, दीवाने आम, गणेशपोल, रंगमहल, यशमंदिर, सुहाग-मंदिर इत्यादि उल्लेखनीय हैं। कहते हैं कि आमेर के भवनों की नक्काशी मुगल सम्राटों को इतनी भायी कि उसी का अनुकरण उन्होंने दिल्ली और आगरा के

भवना म लिया। आमेर के दुग का शीशमहल भारत मे प्रसिद्ध है, इसी के लि
जयसिंह प्रथम के राजकवि बिहारीलाल ने लिखा था—'प्रतिबिंबित जयस
दुति दीपत दरपन धाम, सब जग जीतन को किया कामव्यूह मनु काम'। आम
का कालीमदिर बहुत प्राचीन है। सभवत कछवाहा के आमेर मे बसने के पू
काली यहा रहने वाली मीना जाति की इष्टदेवी थी। आमेर नाम की व्युत्पत्ति
भी अबानगर से जान पडती है। श्री न० ला० डे के अनुसार आमेर का अस
नाम अबरीषपुर था और इसे पौराणिक नरेश अबरीष ने बसाया था।

आम्रकूट

'त्वामामारप्रशमितवनोपप्लव साधु मूर्ध्ना, वक्ष्यत्यध्वश्रमपरिगत सानुमान
म्रकूट' मेघ०, पूवमेघ 17। उपयुक्त पद्य मे कालिदास न आम्रकूट नामक पव
का वणन मेघ की रामगिरि से अलका तक की यात्रा के प्रसग मे नमदा
पहले ही अर्थात् उससे पूव की ओर किया है। जान पडता है कि यह वतम
पचमढी अथवा महादेव की पहाडियो (सतपुडा पवत) का कोई भाग है। क
विद्वानो के मत मे रीवा से 86 मील दूर स्थित अमरकूट ही आम्रकूट है। कि
यह स्पष्ट ही है कि इस पहाड का वास्तविक नाम अमरकूट न होकर आम्
ही है क्योकि कालिदास ने अगले (पूवमेघ 18) छद म इस पवत का आम्रवृ
से आच्छादित बताया है—'छन्नोपान्त परिणतफलद्योतिभि काननाम्रै त्व
यारूढे शिखरमचल स्निग्धवेणी सवर्णे, नून यास्यत्यमर मिथुनप्रेक्षणीयामवस्
मध्येश्याम स्तन इव भुवश्शेषविस्तारपाडु'। सभव है नमदा के उद्गम अम
कटक, अमरकूट और आम्रकूट नामो म परस्पर सबध हो और एक ही पवत शिख
के य नाम हो। निश्चय ही चित्रकूट आम्रकूट से भिन्न है क्योकि चित्रकूट
वणन कालिदास ने पूवमेघ, 19 मे पृथक् रूप से किया है।

आम्रद्वीप

लका का एक प्राचीन भारतीय नाम जो इस देश की भौगोलिक आकृ
के अनुरूप है। इस नाम का उल्लेख बोधिगया से प्राप्त किसी महानामन द्वित
के एक अभिलेख मे किया गया है। यह अभिलेख गुप्तसवत 269=584 ई० क
है। यह महाराज महानामन सिहल के पाली इतिहास का रचयिता हो सक
है। सभवत यह अभिलेख इसी ने अपनी इस स्थान की यात्रा के सस्मारक स
मे उत्कीर्ण करवाया था।

आर (प० पाकिस्तान)

इस स्थान से एक अभिलेख प्राप्त हुआ था जिससे सूचित होता है कि श
सवत 41 या 118 ई० मे इस स्थान पर कनिष्क द्वितीय का राज था (

अभिलेख लाहौर संग्रहालय में है)। इस कनिष्क को प्रो० लूडर्स ने कनिष्क प्रथम का पौत्र माना है। अभिलेख में कनिष्क (द्वितीय) की उपाधि कैसरस (कैसर या सीजर) लिखी है।

आरंग (जिला रायपुर, म० प्र०)

आरंग नामक वृक्ष के नाम पर ही इस स्थान का नामकरण हुआ जान पड़ता है क्योंकि इस भूभाग में इस प्रकार के स्थाननाम अनेक हैं। आरंग में एक भव्य जैन मंदिर और महामाया का एक प्राचीन महत्त्वपूर्ण मंदिर स्थित है। इसका सभामण्डप नष्ट हो चुका है। मंदिर की छत सपाट है। जिला रायपुर के आसपास के प्रदेश में 11वीं 12वीं शती में शाक्त और तांत्रिक संप्रदायों का बाहुल्य था। यह मंदिर इसी समय का प्रतीत होता है। इसकी वास्तुकला से भी यही सिद्ध होता है। आरंग के मूर्ति अवशेषों में भी शिव के तांत्रिक रूपों की अनेक कृतियां उपलब्ध हुई हैं। योगमाया के मंदिर के सामने ही सैकड़ों वर्ष प्राचीन एक महान वृक्ष है जिसके बारे में अनेक किंवदंतियां प्रचलित हैं। यहां कई अभिलेख भी प्राप्त हुए हैं जिनमें से एक 601 ई० का है और इसमें राजर्षि तुल्यकुल नामक राजवंश का उल्लेख है (दे० मध्यप्रदेश का इतिहास, पृ० 22)। यदि इस वंश की राजधानी आरंग में ही थी तो इस स्थान का इतिहास उत्तरगुप्तकाल तक जा पहुंचता है।

आरट्ट=आरटठ

'पंचनद्यो वहन्त्येता यत्र पीलुवनाश्रिताः, शतद्रुश्च विपाशा च तृतीयैरावती तथा। चन्द्रभागा वितस्ता च सिंधु षष्ठा बहिर्गिरेः, आरट्टा नाम ते देशा नष्टधर्मा न तान् व्रजेत्' महा० कर्ण०, 44,31–32 33। अर्थात् जहां पांच नदियां शतद्रु, विपाशा, इरावती, चन्द्रभागा और वितस्ता और छठी सिंधु बहती हैं, जहां पीलू वृक्षों के वन हैं, वे हिमालय की सीमा के बाहर के प्रदेश आरट्ट नाम से विख्यात हैं—इन धर्मरहित प्रदेशों में कभी न जाए। इसी के आगे फिर कहा गया है—'पंचनद्यो वहन्त्येता यत्र निःसृत्य पर्वतात् आरट्टा नाम वाहीका न तेष्वार्यो द्व्यहं वसेत्'—कर्ण० 44,40–41 अर्थात् जहां पर्वत से निकल कर पांच नदियां बहती हैं वे आरट्ट नाम से प्रसिद्ध वाहीक प्रदेश हैं—उनमें श्रेष्ठ पुरुष दो दिन भी निवास न करे। महाभारतकाल में आरट्ट, या आरटठ या वाहीक प्रदेश पश्चिमी पंजाब के ही नाम थे। मद्र इसी प्रदेश का एक भाग था। यहां का राजा शल्य था जिसके देशवासियों के दोष कर्ण ने उपर्युक्त उद्धरण में बताए हैं। इस वर्णन के अनुसार यहां के निवासी आर्य-संस्कृति से बहिष्कृत व भ्रष्ट-आचरण वाले थे। आरट्ट गणराज्य लगभग 327 ई० पू० में अलक्षेंद्र के भारत

पर आक्रमण के समय पंजाब मे स्थित था। इसका उल्लेख ग्रीक लेखकों ने किया है। महाकवि माघ ने शिशुपालवध 5,10 मे आरट्ट देश के घोडा का उल्लेख इस प्रकार किया है— तेजोनिरोधसमतावहितेन यन्त्र, सम्यक्कशात्रयविचारवता नियुक्त, आरट्टजश्चटुलनिष्ठुरपातमुच्चैश्चित्रं चकार पदमधपुलायितेन अर्थात वेग को रोकने वाली लगाम को थामने मे सावधान और तीनों प्रकार के चाबुकों का प्रयोग जानने वाले घुडसवारों से भली भांति हांका गया आरट्ट देश मे उत्पन्न घोड़ा अपने विचित्र पादप्रक्षेप द्वारा कभी चचल और कभी कठोर भाव से मडलाकार गति विशेष से चल रहा था।

आरण्यक

महाभारत सभा० 31 मे वर्णित है। देवीपुराण अध्याय 46 मे इसे आरण्य कहा गया है। यह परीप्लेस का एरियका (Arıyaka) है। यह वर्तमान औरंगाबाद (महाराष्ट्र) का परवर्ती प्रदेश था जिसकी राजधानी तगर (दौलताबाद) थी।

आरब=अरब देश

वराहमिहिर की बृहत्संहिता 14,17 मे अरब का आरब नाम से उल्लेख है। बहिस्ता अभिलेख (जर्नल ऑव रॉयल सोसायटी, जिल्द 15) मे अरब के प्राचीन नाम 'अरबय' का उल्लेख है। दे० बनायु।

आराम

(1) 'माद्रारामास्तथाम्बष्ठा पारसीकादयस्तथा' विष्णु०, 2,3 17। इस उद्धरण मे आराम जनपद के निवासियों का उल्लेख मद्रों और अबष्ठों के साथ है जिससे सूचित होता है कि आराम जनपद पंजाब में इन्हीं जनपदों के निकट स्थित होगा।

(2) उडीसा का एक वैभवशाली नगर जिसका तत्स्थानीय अभिलेखों मे उल्लेख है। यह शायद सोनपुर के निकट स्थित था (दे० हिस्टॉरिकल ज्याग्रेफी ऑव एशेंट इंडिया)

आरामनगर

आरा (जिला शाहाबाद, बिहार) का प्राचीन नाम कहा जाता है (दे० न० ला० डे)।

आरासण (मारवाड, राजस्थान)

आबू के निकट दिल्वाडा मंदिरों की भांति ही यहां भी उच्चकोटि की शिल्पकला के उदाहरण रूप कई जैन मंदिर स्थित है। इनकी पत्थर की नक्काशी सराहनीय है। इसका नाम कुंभारिय भी है। इस स्थान का तीर्थमाला चैत्यवदन नामक

जन ग्रंथों में इस प्रकार उल्लेख है—'कुतिपलं विहाग्तारणगड सापारकारासगे'।

आयकुल्या

विष्णुपुराण 2,3,13 में वर्णित एक नदी जो महद्रपर्वत (उड़ीसा) से उद्भूत मानी गई है—'त्रिसामा चार्यकुल्याद्यामहद्रप्रभवा स्मृता'। यह नदी पास ही बहने वाली दूसरी नदी ऋषिकुल्या से भिन्न है क्योंकि ऋषिकुल्या का उल्लेख विष्णु० 2,3,11 में पृथक रूप से है।

आयपुर=एहोड

यहां 7वीं 8वीं शती ई० में चालुक्यों की राजधानी थी। यह स्थान जिला बीजापुर महाराष्ट्र में स्थित है। प्राचीन अभिलेखों में इस अय्यावोल कहा गया है (दे० आर्कियोलोजिकल सर्वे रिपोर्ट 1907 8, पृ० 189)।

आर्यावर्त

प्राचीन संस्कृत साहित्य में आर्यावर्त नाम से उत्तर भारत के उस भाग का अभिहित किया जाता था जो पूर्वसमुद्र से पश्चिम समुद्र तक और हिमालय से विंध्याचल तक विस्तृत है—'आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्राच्च पश्चिमात तयोरेवान्त-रगिर्यो (हिमवतविन्ध्यो) आर्यावर्त विदुर्बुधा'—मनुस्मृति 2,22।

आर्षिक

इस स्थान को महारानी गौतमी बलश्री के नासिक अभिलेख (द्वितीय शती ई०) में उसके पुत्र शातवाहन नरेश गौतमीपुत्र के राज्य में सम्मिलित बताया गया है। अभिलेख में आर्षिक का प्राकृत नाम असिक दिया हुआ है। आर्षिक का पतंजलि के महाभाष्य, 14,22 में भी उल्लेख है। संभवत महाभारत में भी इसी आर्षिक का तीर्थ के रूप में नामोल्लेख है। यह शायद पुष्कर के पार्श्ववर्ती प्रदेश में स्थित था।

आलद (ज़िला गुल्बर्गा, मैसूर)

इस स्थान पर गुल्बर्गा के प्रसिद्ध मुसलिम संत ख्वाजा बंदानवाज के गुरु शेख अलाउद्दीन अंसारी की दरगाह है।

आलंदी (जिला पूना, महाराष्ट्र)

पूना से 13 मील दूर है। यह स्थान महाराष्ट्र के प्रसिद्ध संत ज्ञानेश्वर की समाधि-स्थलि के रूप में प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि ज्ञानेश्वर ने जीवित समाधि ली थी। आलंदी इंद्रायणी के तट पर है।

आलभिका=आलभिया=आलवी=आलवक (दे० आलवक)।

आलमपुर (दे० बाल ब्रह्मेश्वर)।

आलवक

गौतमबुद्ध के समय (पांचवी-छठी शती ई० पू०) पूर्व-पांचाल में स्थित एक राज्य था। यह कान्यकुब्ज से पूर्व की ओर संभवत गाजीपुर के निकटवर्ती प्रदेश का नाम था (दे० वाटर्स—युवानच्वांग, जिल्द० 2,61,340)। चीनी पर्यटक युवानच्वांग ने इसी देश को शायद चचु कहा है। इसकी राजधानी सुत्तनिपात में आल्वी बताई गई है (दे० सुत्तनिपात, दि बुक ऑव दि डिरेड सेइंग्ज पृ० 275) जो उवाम् दसाओ नामक ग्रंथ (भाग 2,पृष्ठ 103) की आऊभिया या आलभिका जान पड़ती है। होर्नले के अनुसार आलवी की गणना अभिधानप्पदीपिका में बीस उत्तर भारतीय नगरों के अंतर्गत की गई है। जैन ग्रंथ कल्पसूत्र में उल्लेख है कि तीर्थंकर महावीर ने आलविका में एक वर्षाकाल व्यतीत किया था। सुत्तनिपात (10,2,45) में आलवक को यक्ष देश माना है और यहां का देवता एक यक्ष को बताया गया है जो आलवक पंचाल खंड नाम से प्रसिद्ध था। यक्ष बड़ा क्रोधी था किंतु तथागत के शांत स्वभाव के सामने उसे पराजित होना पड़ा था। यक्ष उत्तरी भारत की कोई अनार्यजाति थी जिसका उल्लेख महाभारत में अनेक स्थलों पर है। शिखंडी की मनोरंजक कथा (भीष्म-पर्व) में एक यक्ष को पांचाल-देश के अंतर्गत (कांपिल्य के निकट) वन में निवास करते हुए वर्णित किया गया है। चुल्लवग्ग (6,17) में आलवी में अग्गालव नामक बौद्धमंदिर का उल्लेख है। संभव है कि इस देश और इसकी राजधानी का नाम संस्कृत अटवी का प्राकृत रूप हो। जान पड़ता है कि यक्षों का निवास उस काल में पंचाल देश की वनस्थलियों में रहा होगा।

आलविका=**आलवी** (दे० **आलवक**)

आलीपुरा (बुंदेलखंड, म० प्र०)

अंग्रेजी शासनकाल में एक छोटी सी रियासत थी। पन्नानरेश हिंदूपत ने 1757 ई० में अचलसिंह को जो उनके यहां सेवा में था, आलीपुर की जागीर दी थी। अचलसिंह के पितामह महाराज छत्रसाल की सेना में 1608 ई० में भरती हुए थे और उन्होंने महाराज को अपने कार्य से प्रसन्न कर लिया था। अचलसिंह पीछे स्वतंत्र हो गया और इस प्रकार आलीपुर रियासत की नींव पड़ी।

आनापल्ली दे० **असावल**

आशापुर (जिला भोपाल, म० प्र०)

इस स्थान पर प्राचीनकाल की अनेक शिल्पकृतियां खंडहरों के रूप में पड़ी हुई हैं। आसपास घना निर्जन वन है। जान पड़ता है राजा भोज के राज्यकाल (लगभग 1010 ई०) तथा परवर्ती काल के अनेक ध्वंसावशेष यहां बिखरे पड़े हैं।

आश्रमक (म० प्र०)

इस ग्राम का उल्लेख महाराज सर्वनाथ के खोह अभिलेख 512 ई० में है। यह तमसा नदी के तट पर स्थित था (दे० तमसा 2)। इस ग्राम को विष्णु तथा सूर्य के मंदिरों के लिए महाराज सर्वनाथ ने दान में दिया था।

आसंदीवत

पांडवों के वंशज तथा परीक्षित के पुत्र जनमेजय की राजधानी। ऐतरेय ब्राह्मण की एक गाथा 8 21 में इसका उल्लेख इस प्रकार है—'आसंदीवति धान्याद रुक्मिणं हरितस्रजम्। अश्वं बबंध सारंग देवेभ्यो जनमेजय इति'। अर्थात् देवों के लिए यज्ञार्थ जनमेजय ने आसंदीवत में एक स्वर्णालंकृत पीली माला धारण किए हुए श्याम रंग का अश्व बांधा। परीक्षित की राजधानी हस्तिनापुर में थी और इसी से जान पड़ता है कि आसंदीवत हस्तिनापुर ही का दूसरा नाम था। किंतु यह अनिज्ञान पूर्णत निश्चित नहीं कहा जा सकता क्योंकि महाभारत (1 3 5 34) में जनमेजय की राज्यसभा को तक्षशिला में बताया गया है। पाणिनि ने अष्टाध्यायी 4,2,12 और 4,2 86 में इसका नामोल्लेख किया है। काशिका 24,226 के अनुसार (कुरुक्षेत्रे पण्णाहि स्थले) यह कुरुक्षेत्र के परिवर्ती प्रदेश का अभिधान था। इसे अहिस्थल भी कहते थे।

आसाम दे० **असम**

आसिका

पाणिनि की अष्टाध्यायी में इसका उल्लेख है। यह शायद वर्तमान हांसी (हरियाणा) है।

आसिफाबाद (आं० प्र०)

यहां 16वीं शती का शुद्ध भारतीय शैली में बना हुआ एक मंदिर है। उत्खनन द्वारा प्रागैतिहासिक काल के अनेक काष्ठ जीवाश्म (फासिल) भी प्राप्त हुए हैं।

आसी

अलीगढ़ के इलाके का प्राचीन नाम।

आहार (बुंदेलखंड म० प्र०)

मध्ययुगीन बुंदेलखंड की वास्तुकला के भग्नावशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

इंदरगढ़ (राजस्थान)

चौहान राजपूतों के बनवाए हुए दुर्गों के लिए उल्लेखनीय है।

इंदु=हिंदु

चीनी पर्यटक युवानच्वांग ने अपनी भारत यात्रा (630 645 ई०)

के विवरण मे भारत का तत्कालीन प्रचलित नाम यितु लिखा है। यह इंद या हिंदू शब्द का ही चीनी उच्चारण है जिसस सिंधु (सिंधनदी जिसे विदेशियों को भारत मे प्रवेश करत समय पार करना पडता था) शब्द का सीधा सबध हो सकता है। इसस यह जान पडता है कि भारत का नामार्थक सिंधु शब्द (जिसका रूपातर हिंदू, 'स' और 'ह' के उच्चारण का भारत के पश्चिम मे स्थित देशो मे एक-सा होने के कारण वहा प्रचलित था) भारत मे मुसल्मानो के आगमन (8वी शती ई०) से पूर्व का है। यह तथ्य इस विषय की सामान्य धारणा के विपरीत है।

'यितु' शब्द का सस्कृत 'इंदु' या चद्रमा से कुछ सबध है या नही यह बात सदिग्ध है।

इंदूर=इंद्रपुरी=निजामाबाद (आ० प्र०)

किंवदती के अनुसार यह नगर प्राचीन समय मे त्रिकूटकवशीय इंद्रदत्त द्वारा लगभग 388 ई० मे बसाया गया था। इस का राज नर्मदा और ताप्ती के निचले प्रदेशो मे था। यह भी सभव जान पडता है कि नगर का नाम विष्णुकुडिन इंद्रवर्मन प्रथम (500 ई०) के नाम पर हुआ था। 1311 ई० मे इंदूर पर अलाउद्दीन खिलजी ने आक्रमण किया। तत्पश्चात यह नगर क्रमश बहमनी, कुतुबशाही, और मुगल राज्यो मे सम्मिलित रहा। अत मे निजाम हैदराबाद का यहा आधिपत्य हो गया।

इंदूर जिले का नाम 1905 मे निजामाबाद कर दिया गया था। इस जिले के प्राचीन मदिरो की वास्तुकला अतीव सुदर है। नगर मे 12वी शती ई० की जैन मूर्तियो के अवशेष मिले है जिन का कुतुबशाही काल मे बने दुर्ग मे उपयोग किया गया था। कटेश्वर का अपेक्षाकृत नवीन मदिर अत्यत सुदर है। नगर से छ मील पर हनुमानमदिर है जहा जनश्रुति के अनुसार महाराज शिवाजी के गुरु श्री समर्थ रामदास कुछ समय तक रहे थे। इंदूर का प्राचीन नाम इन्द्रपुरी था, इंदूर इसी का अपभ्रश रूप है।

इंदोर (जिला बुलदशहर, उ० प्र०)

अनूपशहर के निकट बहुत पुराना स्थान है। गुप्तनरेश महाराज स्कदगुप्त के समय (फाल्गुन, गुप्तसवत 146 465 ई०) का एक ताम्रपट्टलेख यहा से प्राप्त हुआ था। इस अभिलेख मे उल्लेख है कि देवविष्णु नामक ब्राह्मण ने अतर्वेदिविषय पति सर्वनाग के शासन काल मे इंद्रपुर या इंदोर मे स्थित सूर्य मदिर के लिए दीपदान दिया था। यह दान इंद्रपुर की एक तैलिक श्रेणी (जिसका प्रबधक जीवात नामक व्यक्ति था) के पास सुरक्षित निधि के रूप मे दिया गया था। तैलिक श्रेणी का काम सदा के लिए (जब तक सूर्य चद्र आकाश

इंद्रपुर (मद्रास)

(1) मायावरम् रेलजंक्शन से तीन मील दूर तिरुविंदलूर ही प्राचीन इंद्रपुर है जो प्राचीन काल में दक्षिण भारत में विष्णु की उपासना का प्रख्यात केंद्र था। कावेरी नदी ग्राम के निकट ही बहती है।

(2) (सुमात्रा, इण्डोनेशिया) सुमात्रा द्वीप में प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक नगर जहां हिंदू नरेशों का राज्य मध्यकाल तक रहा।

(3) प्राचीन कंबुज या कंबोडिया का एक नगर जहां 9वीं शती के हिंदू राजा जयवर्मन् द्वितीय की राजधानी कुछ समय तक रही थी। नगर कंबुज के उत्तर पूर्वीय भाग में स्थित था।

इंद्रपुरी (दे० इंदूर)

इंद्रप्रयाग (ज़िला गढ़वाल, उ०प्र०)

ऋषिकेश से देवप्रयाग जाने वाले मार्ग पर नवालिका गंगा संगम पर स्थित प्राचीन तीर्थ। पौराणिक कथाओं में वर्णित है कि जब देवराज इंद्र वृत्रासुर से संग्राम में पराजित होकर भागे तो उन्होंने यहीं आकर शिव की आराधना की थी। शिव से वरदान प्राप्त होने पर ही वे वृत्रासुर को मार सके थे।

इंद्रप्रस्थ

वर्तमान नई दिल्ली के निकट पांडवों की बसाई हुई राजधानी। महाभारत आदि० में वर्णित कथा के अनुसार प्रारंभ में धृतराष्ट्र से आधा राज्य प्राप्त करने के पश्चात् पांडवों ने इंद्रप्रस्थ में अपनी राजधानी बनाई थी। दुर्योधन की राजधानी लगभग 45 मील दूर हस्तिनापुर में ही रही। इंद्रप्रस्थ नगर कौरवों की प्राचीन राजधानी खांडवप्रस्थ के स्थान पर बसाया गया था—'तस्मात्त्वं खांडवप्रस्थं पुरं राष्ट्रं च वर्धय, ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च कृत निश्चयाः। त्वद्भक्त्या जन्तवश्चान्ये भजन्त्वेव पुरं शुभम्' महा० आदि० 206। अर्थात् धृतराष्ट्र ने पांडवों को आधा राज्य देते समय उन्हें कौरवों के प्राचीन नगर व राष्ट्र खांडवप्रस्थ को विवर्धित करके चारों वर्णों के सहयोग से नई राजधानी बनाने का आदेश दिया। तब पांडवों ने श्रीकृष्ण सहित खांडवप्रस्थ पहुंच कर इंद्र की सहायता से इंद्रप्रस्थ नामक नगर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित करवाया—'विश्वकर्मन् महाप्राज्ञ अद्यप्रभृति तत् पुरम्, इन्द्रप्रस्थमिति ख्यातं दिव्यं रम्यं भविष्यति' आदि० 206। इस नगर के चारों ओर समुद्र की भांति जल से पूर्ण खाइयां बनी हुई थीं जो उस नगर की शोभा बढ़ाती थीं। श्वेत बादलों तथा चंद्रमा के समान उज्ज्वल परकोटा नगर के चारों ओर खिंचा हुआ था। इसकी ऊंचाई आकाश को छूती मालूम होती थी—

म स्थित हैं) दो पल तक प्रतिदिन मदिर म दीप के लिए देना था। अन्तर्वेदि गगा यमुना के दोआब का सस्कृत नाम था। स्पष्ट ही है कि इद्रपुर ही वर्तमान इदार है और इस प्रकार ताम्रपट्ट के प्राप्तिस्थान का सबध सतोषजनक रीति से अभिलख म उल्लिखित स्थान के साथ हो जाता है।

इदौर (म० प्र०)

होल्कर-नरेशो की भूतपूर्व रियासत तथा उसकी राजधानी। इस नगर को अहल्याबाई ने 18वी शती म बसाया था। इसका नाम यहाँ स्थित इद्रेश्वर के प्राचीन मदिर के कारण इद्रपुर या इदौर हुआ था। इदौर के होल्कर नरेशो ने विशेषत जसवतराव न अग्रेजो के भारत म अपने साम्राज्य की जडें जमाने के समय उनका काफी विरोध किया था किंतु इन्होने पार्श्ववर्ती राजपूत नरेशो के राज्य म काफी लूटमार मचाई थी जिसके कारण उनकी सहानुभूति इन्हे न मिल सकी। इदौर म होल्कर नरेशो के प्राचीन प्रासाद उल्लेखनीय ह।

इद्रकील

हिमालय के उत्तर म स्थित पर्वत। यहाँ अर्जुन ने उग्र तपस्या की थी जिसके फलस्वरूप उन्हे इद्र का दर्शन हुआ था। 'हिमवन्तमतिक्रम्य गधमादन मेव च, अत्यक्रामत स दुर्गाणि दिवारात्रमतिद्रत। इद्रकील समासाद्य ततोऽतिष्ठद धनजय'। महा०, वन० 37,41 42। इद्रकील के निकट ही किरातवेशधारी शिव और अर्जुन का युद्ध हुआ था (वन० 38)।

इद्रद्युम्न

(1) हिमालय के उत्तर मे स्थित हसकूट के निकट एक सरोवर (दे० हसकूट 2)।

(2) द्वारका के निकट हसकूट पर स्थित एक सरोवर (दे० हसकूट 1)।

इद्रद्वीप

'इन्द्रद्वीप कशेरु च ताम्रद्वीप गभस्तिमत गाधर्व वारण द्वीप सौम्याक्षमिति च प्रभु' महा० सभा०, 38—दक्षिणात्य पाठ। इस द्वीप को जो सभवत सुमात्रा (दे० इद्रपुर) का एक भाग था, सहस्रबाहु ने जीता था।

इद्रपर्वत

'विदेहस्थस्तु कौन्तेय इन्द्रपर्वतमन्तिकात, किरातानामधिपतीनजयत सप्त पाडव' महा० सभा०, 30,15। इद्रपर्वत के समीप सात किरात नरेशो को भीम ने अपनी दिग्विजय यात्रा मे विजित किया था। इद्रपर्वत सभवत नेपाल का वह पहाडी भाग था जो गडकी और कोसी नदियो के बीच म स्थित है। इद्रपर्वत के प्रदेश की विजय भीम ने विदेह (बिहार) म ठहर कर की थी जिससे इन दोनो देशो का प्रातिवेश्य सूचित होता है।

इंद्रपुर (मद्रास)

(1) मायावरम् रेलजंकशन से तीन मील दूर तिरुविंदलूर ही प्राचीन इंद्रपुर है जो प्राचीन काल मे दक्षिण भारत मे विष्णु की उपासना का प्रख्यात केंद्र था। कावेरी नदी ग्राम के निकट ही बहती है।

(2) (सुमात्रा, इण्डोनेशिया) सुमात्रा द्वीप म प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक नगर जहा हिंदू नरेशो का राज्य मध्यकाल तक रहा।

(3) प्राचीन कंबुज या कबोडिया का एक नगर जहा 9वी शती के हिंदू राजा जयवर्मन् द्वितीय की राजधानी कुछ समय तक रही थी। नगर कंबुज के उत्तर पूर्वीय भाग म स्थित था।

इंद्रपुरी (दे० इंदूर)

इंद्रप्रयाग (जिला गढवाल, उ०प्र०)

ऋषिकेश से देवप्रयाग जाने वाले मार्ग पर नवालिका गगा सगम पर स्थित प्राचीन तीर्थ। पौराणिक कथाओ मे वर्णित है कि जब देवराज इंद्र वृत्रासुर से सग्राम मे पराजित होकर भागे तो उन्होने यही आकर शिव की आराधना की थी। शिव से वरदान प्राप्त होने पर ही वे वृत्रासुर को मार सके थ।

इंद्रप्रस्थ

वर्तमान नई दिल्ली के निकट पाडवो की बसाई हुई राजधानी। महाभारत आदि० मे वर्णित कथा के अनुसार प्रारंभ में धृतराष्ट्र से आधा राज्य प्राप्त करने के पश्चात् पाडवो ने इंद्रप्रस्थ मे अपनी राजधानी बनाई थी। दुर्योधन की राजधानी लगभग 45 मील दूर हस्तिनापुर मे ही रही। इंद्रप्रस्थ नगर कौरवो की प्राचीन राजधानी खाडवप्रस्थ के स्थान पर बसाया गया था—'तस्मात्त्वं खाडवप्रस्थं पुरं राष्ट्रं च वर्धय, ब्राह्मणा क्षत्रिया वैश्या शूद्राश्च कृत निश्चया। त्वद्भक्त्या जन्तवश्चान्ये भजन्त्वेव पुरं शुभम्' महा० आदि० 206। अर्थात धृतराष्ट्र ने पाडवो को आधा राज्य देते समय उन्हे कौरवो के प्राचीन नगर व राष्ट्र खाडवप्रस्थ को विवर्धित करके चारो वर्णों के सहयोग से नई राजधानी बनाने का आदेश दिया। तब पाडवो ने श्रीकृष्ण सहित खाडवप्रस्थ पहुच कर इंद्र की सहायता से इंद्रप्रस्थ नामक नगर विश्वकर्मा द्वारा निर्मित करवाया—'विश्वकर्मन् महाप्राज्ञ अद्यप्रभृति तत पुरम्, इन्द्रप्रस्थमिति ख्यातं दिव्यं रम्यं भविष्यति' आदि० 206। इस नगर के चारो ओर समुद्र की भाति जल से पूर्ण खाइया बनी हुई थी जो उस नगर की शोभा बढाती थी। श्वेत बादलो तथा चद्रमा के समान उज्ज्वल परकोटा नगर के चारो ओर खिचा हुआ था। इसकी ऊचाई आकाश को छूती मालूम होती थी—

'सागर प्रतिरूपाभि परिखाभिरलङ्कृताम प्राकारेण च सम्पन्न दिवमावृत्य तिष्ठता, पाडुराभ्र प्रकाशेन हिमरश्मिनिभेन च शुशुभेतत् पुरश्रेष्ठनागैर्भोगवतीयथा' आदि० 206,30-3। इस नगर को सुदर और रमणीक बनाने के साथ ही साथ इसकी सुरक्षा का भी पूरा प्रबध किया गया था—

'तल्पैश्चाभ्यासिकैर्युक्त शुशुभेयोधरक्षितम तीक्ष्णाकुश शतघ्नीभियन्त्रजालैश्च शोभितम,' 'सर्वशिल्पविदस्तत्र वासायाभ्यागमस्तदा, उद्यानानि च रम्याणि नगरस्य सम तत, 'मनोहरैश्चित्र गृहैस्तथा जगतिपर्वतै, वापीभिर्विविधाभिश्च पूर्णाभि परमाम्भसा, रम्याश्च विविधास्तत्र पुष्करिण्या वनावृता' आदि 206, 34 40 46 48। अर्थात जिनमे अस्त्रशस्त्रो का अभ्यास किया जाता था ऐसी अनेक अटारियो से युक्त और योद्धाओ से सुरक्षित वह नगर शोभा से सयुक्त था। तीखे अकुश और शतघ्नियो और अन्य यन्त्रो से वह नगर सुशोभित था। सब प्रकार की शिल्पकलाओ को जानने वाले लोग भी वहा आकर बस गए थे। नगर के चारो ओर रमणीय उद्यान थे। मनोहर चित्रशालाओ तथा कृत्रिम पर्वतो से तथा जल से भरी पूरी नदियो और रमणीय झीलो से वह नगर शोभित था। युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ इन्द्रप्रस्थ मे ही किया था। महाभारत युद्ध के पश्चात इन्द्रप्रस्थ और हस्तिनापुर दोनो ही नगरो पर युधिष्ठिर का शासन स्थापित हो गया। हस्तिनापुर के गगा की बाढ से बह जाने के बाद 900 ई० पू० के लगभग जब पाडवो के वशज कौशाबी चले गए तो इन्द्रप्रस्थ का महत्त्व भी प्राय समाप्त हो गया। विधुर पडित जातक मे इन्द्रप्रस्थ को केवल 7 कोस के अदर घिरा हुआ बताया गया है जबकि बनारस का विस्तार 12 कोस तक था। धूमकारी जातक के अनुसार इन्द्रप्रस्थ या कुरुप्रदेश मे युधिष्ठिर गोत्र के राजाओ का राज्य था। महाभारत, उद्योग मे इन्द्रप्रस्थ को शक्रपुरी भी कहा गया है। विष्णुपुराण मे भी इन्द्रप्रस्थ का उल्लेख है—'इत्र वदयौ जिष्णुरिन्द्रप्रस्थ पुरातमम' 5, 38,34।

आजकल नई दिल्ली मे जहा पाडवो का पुराना किला स्थित है उसी स्थान के परवर्ती प्रदेश मे इन्द्रप्रस्थ नगर की स्थिति मानी जाती है। पुराने किले के भीतर कई स्थानो का सबध पाडवो से बताया जाता है। दिल्ली का सबप्राचीन भाग यही है। दिल्ली के निकट इन्द्रपत नामक ग्राम अभी तक इन्द्रप्रस्थ की स्मृति के अवशेष रूप मे स्थित है।

इन्द्राणी

पूना के निकट बहने वाली महाराष्ट्र की प्रसिद्ध नदी। आलदी आदि कई प्राचीन तीर्थ इस नदी के तट पर बसे है।

इन्द्रशिला गुह

राजगृह के निकट गिरिव्रज की एक पहाडी है ।

इन्द्रावती (जिला बस्तर, म० प्र०)

जगदलपुर के निकट बहन वाली नदी जा उडीसा वे काल्हदी पहाड से निकल कर भूपालपटनम के पास गोदावरी म गिरती है । चित्रकाट नाम का 94 फुट ऊचा जलप्रपात जगदल्पुर के पाम स्थित है । इसे पहले चत्रकूट क्षेत्र कहते थे ।

इकौना (जिला गाडा, उ० प्र०)

महतमहेत (प्राचीन श्रावस्ती के खडहर) से चार मील उत्तर-पश्चिम की ओर एक ग्राम है । चीनी पयटका वे अनुसार यह उसी स्थान के समीप है जहा पाच-सौ ज माव व्यक्तिया ने बुद्ध की आत्मिक शक्ति से नेत्र ज्याति प्राप्त की थी । इन व्यक्तिया की इस स्थान पर गाडी हुई लकडियो से आप्त नेत्रवन नामक एक विशाल वन ही उत्पन्न हो गया था ।

इक्षु

विष्णुपुराण के अनुसार शाकद्वीप की एक नदी—'नद्यश्चात्र महापुण्या सव-पापभयापहा , सुकुमारी कुमारी च नलिनी धेनुका च या । इक्षुश्चवेणुकाचैव गभस्ती सप्तमी तथा अ याश्चशतशस्तत्र क्षुद्रनद्या महामुन विष्णु० 2,4,65 66 श्री नदलाल डे के अनुसार इक्षु वक्षु, या आक्सस नदी है ।

इक्षुमती

(1) वाल्मीकि रामायण मे इस नदी का उल्लेख अयोध्या के दूतो की केकय देश की यात्रा के प्रसग मे हुआ है—'अभिकाल तत प्राप्य तेजोऽभिभवनाच्च्युता , पितृपैतामही पुण्या तेररिक्षुमती नदीम् 2,68,11 । इस नदी को दता न जैसा कि सदभ म सूचित हाता है—सतलज और बियास के बीच के प्रदेश मे पार किया था । इसका ठीक ठीक अभिनान अनिश्चित है । सभव है यह सरस्वती नदी ही हो क्योकि उपर्युक्त उद्धरण म इसे 'पितृ पैतामही पुण्या' कहा है । चक्षुष्मती भी इक्षुमती का ही एक नाम जान पडता है—दे० वराहपुराण 85, मत्स्यपुराण 113।

(2) पाणिनि ने, अष्टाध्यायी 4,2,80 म साकाश्य नगर की स्थिति इस नदी के तट पर बताई है। महाभारत, भीष्म० म इसे इक्षुमालिनी कहा गया है। यह वतमान ईखन है जो सकिसा (जिला फरु खाबाद, उ० प्र०) के निकट बहती है ।

इक्षमालिनी दे० इक्षुमती, 2

इक्षुला

'वेदस्मृता वेदवती त्रिदिवामिक्षुला कृमिम्, करीषिणी चित्रवाहा च चित्रसेना

च निष्क्रान्त महा० भीष्म० 9,17। महाभारत के इस उद्धरण में अन्य नदियों के साथ ही इक्षुला का भी उल्लेख है। यह इक्षु या इक्षुमती हो सकती है।

इक्षुसागर

पौराणिक भूगोल के अनुसार पृथ्वी के सप्त सागरों में से एक जो प्लक्षद्वीप के चतुर्दिक् स्थित है—'एते द्वीपा समुद्रैस्तु सप्तसप्तभिरावृता, लवणेक्षु सुरा सर्पिर्दधि दुग्ध-जल समम्'। विष्णु० 2 2 6।

इच्छावर (जिला बांदा, उ० प्र०)

इस स्थान से प्राप्त बुद्ध की मूर्ति पर एक ब्राह्मी लेख उत्कीर्ण है जिसमें 'गुप्त वंशोदित' श्री हरिदास की रानी महादेवी के दान का उल्लेख है। लिपि से यह अभिलेख ई० सन् के पूर्व का जान पड़ता है। इससे यह भी सूचित होता है कि गुप्तवंशीय छोटे मोटे राजा उस समय भी वर्तमान थे। वैसे प्रसिद्ध गुप्त वंश के शासनकाल का प्रारंभ 320 ई० के लगभग हुआ था।

इटावा (उ० प्र०)

पुराना नाम इष्टिकापुर कहा जाता है। हिंदी के प्रसिद्ध कवि देव इटावा निवासी थे। उन्होंने स्वयं ही लिखा है—'द्यौसरिया कविदेव को नगर इटावो वास'। देव का जन्म 1674 ई० के लगभग हुआ था। इटावा की जामा मसजिद प्राचीन बौद्ध या हिंदू मंदिर के खंडहरों पर [illegible] ात होती है

[illegible] (तहसील [illegible], जिला अलमोड़ा,

आजकल प्रयाग मे नही है ।

इट्टागी (जिला रायचूर, मैसूर)

बेनी कोपपा स्टेशन से चार मील दक्षिण इस ग्राम म एक चालुक्यकालीन सुदर मदिर है जिसे कल्याणीनरेश त्रिभुवनमल विक्रमादित्य षष्ठ के सेनापति महादेव ने 1112 ई० मे बनवाया था । यह सूचना एक क नड लेख से मिलती है जो मदिर के समीप एक प्रकाष्ठ पर उत्कीण है । मदिर का इसके निमाता न देवालय-चक्रवर्ती नाम दिया है । मदिर मे, देवालय तथा पाश्व काष्टक, एक सवृत प्रकोष्ठ जिसके उत्तर और दक्षिण मे मडप है तथा एक स्तभ सहित प्रकोष्ठ सम्मिलित है । मदिर का मुख्यद्वार पूव की ओर है जहा पहले एक विशाल खुला प्रकाष्ठ था जिसमे 68 स्तभ थे । प्रकोष्ठ के मध्यवर्ती भाग की छत क फलको पर बारीक, मनोरम नक्काशी है । नीचे दीवार पर भी इसी प्रकार की नक्काशी मे मालाओ का अलकरण उत्कीण है । वास्तुकला, मूर्तिकारी तथा तक्षण शिल्प की दष्टि से यह मदिर इस प्रदश मे सर्वोत्कृष्ट माना जाता है और इसका देवालय चक्रवर्ती अभिधान साथक ही जान पडता है ।

इडर (गुजरात)

प्राचीन जैन तीथ । तीथमालाचैत्यवदन मे इसका उल्लेख है—'धारापद्रपुरे च वाविहपुरे कासद्रह चेडर' ।

इरावती

(1)पजाब की प्रसिद्ध नदी रावी । 'रावी' इरावती का ही अपभ्र श है। इसका वैदिक नाम परुष्णी था । 'इरा' का अथ मदिरा या स्वादिष्ट पय है । महाभाष्य 2, 1, 2 मे इसका उल्लेख है । महाभारत भीष्म० 9,16 मे इसको वितस्ता और अन्य नदियो के साथ परिगणित किया गया है—'इरावती वितस्ता च पयाष्णी देविकामपि' । सभा० 9,19 मे भी इसी प्रकार उल्लेख है—'इरावती वितस्ता च सिंधुर्देवनदी तथा ।' ग्रीक लेखको न इरावती को हियारावटीज़ (Hyaraotis) लिखा है ।

(2) पूव उत्तर प्रदेश की राप्ती का भी प्राचीन नाम इरावती था । यह नदी कुशीनगर के निकट बहती थी जैसा कि बुद्धचरित 25,53 के उल्लेख से सूचित होता है—'इस तरह कुशीनगर आते समय बुद्ध के साथ तथागत ने इरावती नदी पार की और स्वय उस नगर के एक उपवन मे ठहरे जहा कमला से सुशोभित एक प्रशात सरोवर स्थित था । अचिरावती या अजिरावती इरावती के वैकल्पिक रूप हो सकते है । बुद्धचरित के चीनी अनुवाद मे इस नदी के लिए कुकु शब्द है जो पाली के कुकुत्था का चीनी रूप है । बुद्धचरित

-च निम्नगाम' महा० भीष्म० 9 17। महाभारत के इस उद्धरण म अन्य नदियो के साथ ही इक्षुला का भी उल्लेख है। यह इक्षु या इक्षुमती हो सकती है।

इक्षुसागर

पौराणिक भूगाल क अनुसार पृथ्वी के सप्त सागरा मे से एक जा प्लक्षद्वीप के चतुर्दिक स्थित है—'एते द्वीपा समुद्रस्तु सप्तसप्तभिरावृता, लवणेपु सुरा सर्पिदधि दुग्ध जलै समम्'। विष्णु० 2 2 6।

इच्छावर (जिला बादा, उ० प्र०)

इस स्थान से प्राप्त बुद्ध की मूर्ति पर एक ब्राह्मी लेख उत्कीण है जिसमें 'गप्त वशोदित' श्री हरिदास की रानी महादवी के दान का उल्लेख है। लिपि से यह अभिलख ई० सन के पूव का जान पडता है। इससे यह भा सूचित होता है कि गुप्तवशीय छाट मोट राजा उस समय भी वतमान थे। वैस प्रसिद्ध गुप्त वश के शासनकाल का प्रारभ 320 ई० के लगभग हुआ था।

इटावा (उ० प्र०)

पुराना नाम इष्टिकापुर कहा जाता है। हिंदी के प्रसिद्ध कवि दव इटावा निवासी थे। उन्हाने स्वय ही लिखा है—'द्यौसरिया कविदव को नगर इटावो वास'। *देव का जन्म 1674 ई० मे लगभग हुआ था।* इटावा की जामा मसजिद प्राचीन बौद्ध या हिंदू मदिर के खडहरा पर बनाई गई मालूम होती है।

इदूर (सूरियापट ताल्लुका, जिला नलगोडा, आ० प्र०)

गजुलीबडा के निकट इदूर ग्राम मे एक पचास फुट ऊची विशाल चट्टान पर आध्रकाल के महत्त्वपूण अवशेष स्थित है। मिट्टी के बतनो के खड तथा टूटी फूटी प्राचीन ईंटे इस स्थान से बडी सख्या म मिली हैं। खडहरो मे सीस का आध्रकालीन एक सिक्का भी मिला है। यहा पर एक मृदभाड के टुकडे पर प्रथम या द्वितीय शती ई० की ब्राह्मीलिपि मे तीन अक्षरो का एक लेख है। शातवाहना के कई सिक्के भी मिले ह। चट्टान के दक्षिणी भाग मे एक स्तूप क अवशेष हैं। *इसका आकार अरे तथा नाभि सहित एक विशाल चक्र के समान* है। इसका व्यास 60 फुट के लगभग है। पश्चिमी भाग म एक बौद्ध चैत्यशाला के चिह्न हैं। इसकी लबाई 24 फुट और चौडाई 12 फुट है। उत्तर-पश्चिमी किनार पर एक अन्य स्तूप के अवशेष स्थित हैं। अन्य भवना क भी खडहर हैं किंतु उनका अभिज्ञान अनिश्चित है। अन्य सबधित बौद्ध-स्थानो के समान ही यहा भी बडी बडी ईंटा का प्रयाग किया गया है। कुछ ता 2 फुट 1 इच × 3 फुट के परिमाण की हैं। गजुलीबडा म मिट्टी की मूर्तिया क गिर भी मिले हैं। इनमे से एक का निरावरण अनोखा दिखाइ पडता है क्योकि वह

आजकल प्रयाग मे नही है ।

इट्टागी (जिला रायचूर, मसूर)

बेनी कापपा स्टशन से चार मील दक्षिण इस ग्राम म एक चालुक्यकालीन सुदर मदिर है जिसे कल्याणीनरेश त्रिभुवनमल विक्रमादित्य षष्ठ क सेनापति महादव ने 1112 ई० म बनवाया था । यह सूचना एक क नड लेख स मिलती है जा मदिर के समीप एक प्रकोष्ठ पर उत्कीण है । मदिर का इसके निमाता न देवालय-चक्रवर्ती नाम दिया है । मदिर मे, देवालय तथा पाश्व कोष्टक, एक सवृत प्रकोष्ठ जिमके उत्तर और दक्षिण म मडप ह तथा एक स्तभ सहित प्रकाष्ठ सम्मिलित है । मदिर का मुख्यद्वार पूव की ओर है जहा पहले एक विशाल खुला प्रकोष्ठ था जिसमे 68 स्तभ थ । प्रकोष्ठ के मध्यवर्ती भाग की छत के फलको पर बारीक, मनोरम नक्काशी है । नीचे दीवार पर भी इसी प्रकार की नक्काशी मे मालाओ का अलकरण उत्कीण है । वास्तुकला, मूतिकारी तथा तक्षण शिल्प की दृष्टि से यह मदिर इस प्रदश मे सर्वोत्कृष्ट माना जाता है और इसका देवालय चक्रवर्ती अभिधान साथक ही जान पडता है ।

इडर (गुजरात)

प्राचीन जैन तीथ । तीथमालाचैत्यवदन मे इसका उल्लेख है—'धारापद्र-पुरे च वाविहपुरे कासद्रह चेडरे' ।

इरावती

(1) पजाब की प्रसिद्ध नदी रावी । 'रावी' इरावती का ही अपभ्र श है । इसका वैदिक नाम परुष्णी था । 'इरा' का अथ मदिरा या स्वादिष्ट पय है । महाभाष्य 2, 1, 2 मे इसका उल्लेख है । महाभारत भीष्म० 9,16 मे इसको वितस्ता और अन्य नदियो के साथ परिगणित किया गया है—'इरावती वितस्ता च पयोष्णी देविकामपि' । सभा० 9,19 मे भी इसी प्रकार उल्लेख है—'इरावती वितस्ता च सिंधुर्देवनदी तथा ।' ग्रीक लेखको ने इरावती को हियारावटीज (Hyaraotis) लिखा है ।

(2) पूव उत्तर प्रदेश की राप्ती का भी प्राचीन नाम इरावती था । यह नदी कुशीनगर के निकट बहती थी जैसा कि बुद्धचरित 25,53 के उल्लेख से सूचित होता है—'इस तरह कुशीनगर आते समय चुद के साथ तथागत ने इरावती नदी पार की और स्वय उस नगर के एक उपवन मे ठहरे जहा कमला से सुशोभित एक प्रशान्त सरोवर स्थित था' । अचिरावती या अजिरावती इरावती क वैकल्पिक रूप हो सकते ह । बुद्धचरित के चीनी अनुवाद मे इस नदी के लिए कुकु शब्द है जो पाली के कुकुत्था का चीनी रूप है । बुद्धचरित

25,54 मे वर्णन है कि निर्वाण के पूर्व गौतम बुद्ध ने हिरण्यवती नदी मे स्नान किया था जो कुशीनगर के उपवन के समीप बहती थी। यह इरावती या राप्ती की ही एक शाखा जान पड़ती है। स्मिथ के विचार मे यह गंडक है जो ठीक नही जान पड़ता। बुद्धचरित 27,70 के अनुसार बुद्ध की मृत्यु के पश्चात मल्लो ने उनके शरीर के दाहसंस्कार के लिए हिरण्यवती नदी को पार करके मुकुटचैत्य (दे० मुकुटचैत्यबंधन) के नीचे चिता बनाई थी। संभव है महाभारत सभा० 9,22 का वारवत्या भी राप्ती ही हो।

(3) ब्रह्मदेश की इरावदी। यह नाम प्राचीन भारतीय औपनिवेशिकों का दिया हुआ है।

इरेनियल (केरल)

त्रिवेंद्रम कन्याकुमारी मार्ग पर मूलगुमुद से सात मील दूर है। तिरुवांकुर-नरेशों के पुराने राजप्रासाद के भीतर वसंत मंडपम मे एक पत्थर की शैया दिखाई देती है जहा से किंवदंती के अनुसार प्राचीन केरल का प्रसिद्ध राजा भास्कर वर्मा सदेह स्वर्ग सिधारा था। यह स्थान जिसे रनसिंगनुलूर भी कहते हैं केरल के पेरुमल नरेशों के समय विख्यात था।

इलापुर

इलोरा का प्राचीन नाम। यहा प्राचीन घुश्मेश्वर शिवतीर्थ है जिसका उल्लेख आद्य शंकराचार्य ने इस श्लोक मे किया है—'इलापुरे रम्य विशालकेऽस्मिन समुल्लसंत च जगद्वरेण्यम वन्दे महोदारतरस्वभाव घुश्मेश्वराख्य शरण प्रपद्ये'।

इलावास

इलाहाबाद का एक प्राचीन नाम है (दे० प्रयाग)

इलावृत

पौराणिक भूगोल के अनुसार इलावृत, जंबुद्वीप का एक भाग है। इसकी स्थिति जंबुद्वीप के मध्य मे मानी गई है। इसके नाभिस्थान मे मेरु पर्वत है तथा इसके उपान्त्यदेश शकर हैं—पुनश्च परिवृत्याथ मध्य देशमिलावृतम्' महा० सभा० 28। विष्णुपुराण मे इसका उल्लेख इस प्रकार है—'मेरोश्चचतुर्दिश तत्तु नव साहस्रविस्तृतम, इलावृत महाभाग चत्वारश्चात्र पर्वता' विष्णु० 2 2,15। विष्णु पुराण के अनुसार इलावृत के चार पर्वत है, मंदर, गंधमादन, विमल और सुपार्श्व। इस देश मे संभवत हिमालय के उत्तर मे चीन, मंगोलिया और साइबेरिया के कुछ भाग सम्मिलित रहे होगे। वर्णन कल्पनारंजित होने के कारण ठीक ठीक अभिज्ञान सम्भव नही जान पड़ता। इलावृत के दक्षिण
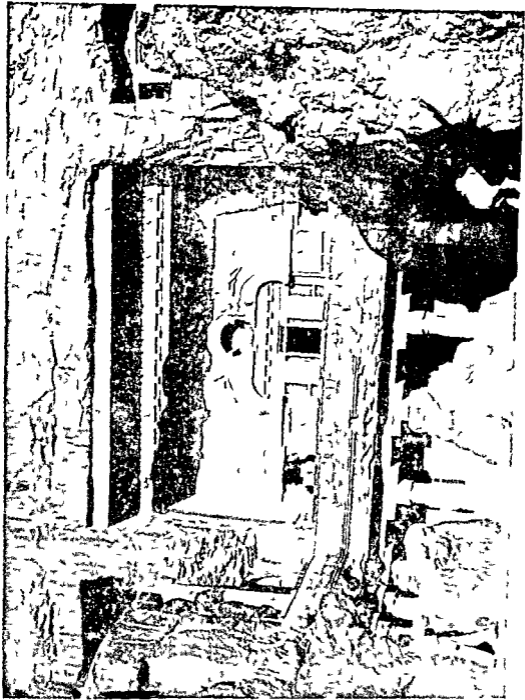
इलौरा गुफा सं० 10
(भारतीय पुरातत्त्व विभाग के सौजन्य से)

मे हरिवप की स्थिति थी।

इलाहाबाद (उ० प्र०) दे० प्रयाग।

एक प्राचीन किंवदंती के अनुसार प्रयाग का एक नाम इलावास भी था जो मनु की पुत्री इला के नाम पर था। प्रयाग के निकट झूसी या प्रतिष्ठानपुर मे चंद्रवंशी राजाओ की राजधानी थी। इसका पहला राजा इला और बुध का पुत्र पुरुरवा एल हुआ। उसी ने अपनी राजधानी को इलावास की सज्ञा दी जिसका रूपातर अकबर के समय मे इलाहाबाद हो गया।

इलौरा (जिला औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

औरंगाबाद से 14 मील दूर शैलकृत्त गुफा-मंदिरो के लिए ससार-प्रसिद्ध स्थान है। विभिन्न कालो में बनी अनेक गुफाए बौद्ध, हिंदू तथा जैन सम्प्रदायो से सम्बंधित हैं। ये गुफाए अजन्ता के समान ही शैलकृत्त हैं और इनकी समग्र रचना तथा मूर्तिकारी पहाडी के भीतरी भाग को काट कर ही निर्मित की गई है। बौद्ध गुफाए सभवत 550 ई० से 750 ई० तक की हैं। इनमे से विश्वकर्मा गुहामंदिर (स० 10) सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। यह विशाल चैत्य के रूप मे बना है। इसके ऊचे स्तम्भो पर तक्षण कला का सुदर काम है। इनमे बौद्धो की अनेक प्रतिमाए हैं जिनके शरीर का ऊपरी भाग बहुत स्थूल है। भिक्षुओ के निवास के लिए बनी हुई गुफाओ मे स० 2,5,8,11 और 12 मुख्य है। स० 12 जिसे तिनथाल कहते हैं लगभग 50 फुट ऊची है। इसके भीतरी भाग म बुद्ध की सुदर मूर्तिया हैं। अजता के विपरीत यहा की बौद्ध-गुफाओ मे चैत्यवातायन नही है। बौद्ध गुफाओ की सख्या 12 है। ये पहाडी के दक्षिणी पार्श्व मे अवस्थित हैं। इनके आगे सत्रह हिंदू गुफा-मंदिर हैं जिनमे से अधिकाश दक्षिण के राष्ट्रकूट नरेशो के समय (7वी 8वी शती ई०) बन थे। इनमे कैलास मदिर, प्राचीन भारतीय वास्तु एव तक्षण-कला का भारत भर मे शायद सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है। यह समूचा मदिर गिरिपार्श्व मे से तराशा गया है। इसके भीमकाय स्तभ, विस्तीर्ण प्रागण, विशाल वीथिया तथा दालान, मूर्तिकारी से भरी छतें, और मानवो और विविध जीवजतुओ की मूर्तिया—सारा वास्तु और तक्षण का स्थूल और सूक्ष्म काम आश्चर्यजनक जान पडता है। यहा के शिल्पियो न विशालकाय पहाडी को और उसके विभिन्न भागो का तराश कर मूर्तियो की आकृतिया, उनके अग प्रत्यगो के सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवरण, यहा तक कि हाथियो की आखो की बारीक पलकें तक इतने अदभुत कौशल से गढी हैं कि दर्शक आत्मविभोर होकर उन महान् कलाकारों के सामने श्रद्धा से नतमस्तक हो जाता है। कैलास मदिर अथवा रग महल के प्रागण की लम्बाई 276 फुट

और चौडाई 154 फुट है। मंदिर के चार खण्ड और कई प्रकोष्ठ हैं और इसका शिखर भी कई तलों से मिल कर बना है। जैसा अभी कहा गया है, सम्पूर्ण मंदिर पहाड़ी के आड में से तराश कर बना है, जिससे शिल्पकला के इस अद्भुत कृत्य की महत्ता सिद्ध होती है। सिर्फ छेनी और हथौड़े की सहायता से यहां के कर्मठ और श्रद्धावान शिल्पियों ने देव, देवी, यक्ष, गंधर्व, स्त्रीपुरुष, पशुपक्षी, पुष्पपत्र आदि की वज्रकठोर पहाड़ी के भीमकाय अंतराल में से काट कर सुकुमारता एवं सौंदर्य की जो अनोखी सृष्टि की है वह शिल्प के इतिहास में अभूतपूर्व है। उदाहरण के लिए, एक लम्बी पंक्ति में अनेक हाथियों की मूर्तियां हैं जो चट्टान में से काटकर बनाई गई हैं। उनकी आंखों की बारीक पलकें तक भी शैल से काट कर बनाई गई हैं। यह सूक्ष्मता और सुकुमारता की दृष्टि से असम्भव-सा जान पड़ता है।

यहां के अन्य हिंदू मंदिरों में रावण की खाई, देवबाड़ा, दशावतार, लम्बेश्वर, रामेश्वर, नीलकंठ, धुमार लेण या सीता चावडी विशेष उल्लेखनीय हैं। आठवीं शती ई० में क्षतिदुर्ग राष्ट्रकूट ने दशावतार मंदिर का निर्माण किया था। इसमें विष्णु के दशावतारों की कथा मूर्तियों के रूप में अंकित है। इनमें गोवर्धनधारी कृष्ण, शेषशायी नारायण, गरुडाधिष्ठित विष्णु, पृथ्वी का धारण करने वाले वराह, बलि से याचना करते हुए वामन और हिरण्यकशिपु का संहार करते हुए नृसिंह कला की दृष्टि से श्रेष्ठ हैं।

9वीं शती में राष्ट्रकूटों की सत्ता के क्षीण होने पर इलोरा पर जैन शासकों का आधिपत्य स्थापित हुआ। यहां के पांच जैन मंदिर इन्हीं के द्वारा बनवाए गए थे। इनमें इंद्रसभा नामक भवन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसे छोटा कैलास मंदिर भी कहा जाता है। इसके प्रांगण, छतों व स्तम्भों की सुंदर कारीगरी और सजीव देवप्रतिमाएं सभी अनुपम हैं। चौबीस तीर्थंकरों की अनेक मूर्तियों से यह मंदिर सुसज्जित है। *समाधिस्थ पार्श्वनाथ की प्रतिमा के ऊपर* शेषनाग के फनों की छाया है और कई दैत्य उनकी तपस्या भंग करने का विफल प्रयास कर रहे हैं। कहा जाता है कि इलोरा को इलिचपुर के राजा यदु ने 8वीं शती में बसाया था। किंतु महाभारत तथा पुराणों की गाथाओं के आधार पर प्राचीन इल्वलपुर को जहां अगस्त्य ऋषि ने इल्वल्दैत्य को मारा था (महा० वन० 99) वर्तमान इलोरा माना जाता है। कुछ बौद्धगुफाएं तो अवश्य 8वीं शती से पहले की हैं। यह जान पड़ता है कि राष्ट्रकूटों का सम्बंध इस स्थान से 8वीं शती में प्रथम बार हुआ होगा।

ऐतिहासिक जनश्रुति में प्रचलित है कि जब अलाउद्दीन खिलजी ने

गुजरात पर 1297 ई० मे आक्रमण किया तो वहाँ के राजा कर्ण की कन्या देवलदेवी ने भाग कर देवगिरि-नरेश रामचन्द्र के यहा शरण ली और तब वह इलौरा की गुफाओ मे जा छिपी थी। किंतु दुर्भाग्यवश अलाउद्दीन के दुष्ट गुलाम सेनापति काफूर ने उसे वहा से पकड़कर दिल्ली भिजवा दिया था।

इलौरा स थोडी दूर पर अहल्याबाई का बनवाया ज्योतिर्लिंग का मन्दिर है। इलौरा के कई प्राचीन नाम मिलते है, जिनमे इल्वलपुर, एलागिरि और एलापुर मुख्य है। इलापुर मे घुश्मेश्वर तीर्थ का उल्लेख आदि शकराचार्य ने किया है—दे० इलापुर। प्राकृत साहित्य म एलउर नाम भी प्राप्त होता ह। धर्मोपदेशमाला नामक जैन ग्रथ (858 ई०) मे उल्लिखित समयज्ञ मुनि की कथा स ज्ञात होता है कि उस समय एलउर काफी प्रसिद्ध नगर था—'तआ नदणाहिहाण साहू कारणातरेण गुरुविओ गुरुणा दक्खिणावहं। एगागी वच्च तो अप जोसे पत्ता एलउर' (पृ० 161)। इलौरा की ख्याति 17वी शती तक भी थी। जैन कवि मेघविजय न मेघदूत की छाया पर जो ग्रथ रचा था उसमे इलौरा के तत्कालीन वैभव का वर्णन है। एक अन्य जैन विद्वान विबुध विमलसूर ने इलौरा की यात्रा की थी। जैन मुनि शीलविजय न 18वी शती मे इलौरा की यात्रा की थी—'इलोरि अति कौतक वस्यू जोता हीयडु अति उल्हस्यू विश्वकरमा कीधु मडाण त्रिभुवन भातवणू सहिनाण' (प्राचीन तीर्थमाला सग्रह पृ० 121) इससे 18वी शती मे भी इलौर की अद्भुत कला को विश्वकर्मा द्वारा निर्मित माना जाता था—यह तथ्य प्रमाणित होता है। अजता के विपरीत इलौरा के गुफा मन्दिर इतिहास के सभी युगो मे विश्रुत तथा विख्यात रह है।

इल्वलपुर दे० इलौरा

इश्तनगर=अष्टनगर (प० पाकिस्तान)

प्राचीन पुष्कलावती के स्थान पर बसा हुआ वर्तमान कस्बा।

इषुकार

जैन उत्तराध्ययन सूत्र (14,1) के अनुसार इषुकार कुरु जनपद म एक नगर था जहा इस नाम के राजा का शासन था। जान पडता है कि यहा कुरु के राजवश की मुख्य शाखा के हस्तिनापुर से कौशाबी चले जाने के पश्चात इसी वश के किसी छोटे मोटे राजा ने राज्य स्थापित कर लिया होगा (दे० पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एशेंट इंडिया, चतुर्थ सस्करण, प० 113)।

इष्टिकापुर दे० इटावा

हिंदी के प्रसिद्ध कवि देव की लिखी शृगार विलासिनी नामक पुस्तक (खड्गविलास प्रेस, बाकीपुर) के अनुसार वे इष्टिकापुर वासी

थे—'देवदत्त कविरिष्टिकापुर वासी सचकार। इष्टकापुर' इटावा का संस्कृत रूपांतर जान पड़ता है। किंवदंती है कि ब्रजभाषा के एक अन्य प्रसिद्ध कवि घनानन्द भी जो दिल्ली के मुगल बादशाह मुहम्मदशाह रंगीले के समकालीन थे—इटावे के ही निवासी थे।

इसलापुर (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

नवपाषाणयुगीन अवशेष, जैसे पत्थर के उपकरण और हथियार आदि यहां से पर्याप्त संख्या में प्राप्त हुए हैं।

इसलामाबाद दे० **अनंतनाग**

इसलिया (जिला चंपारन, बिहार)

वर्तमान केसरिया। प्राचीन बौद्ध स्तूप के खण्डहर आजकल राजा 'बेन का देवरा' नाम से प्रसिद्ध हैं। फाह्यान ने इस स्थान को देखा था। बौद्ध किंवदंती के अनुसार यहां पूर्वजन्म में बुद्ध चक्रवर्ती राजा के रूप में जन्मे थे। इसी स्थान पर बुद्ध ने लिच्छवियों से विदा लेते समय अपना कमण्डल उन्हें दे दिया था। स्तूप इसी घटना का स्मारक था।

इसिगिलि=ऋषिगिरि (राजगृह, बिहार) को पाली साहित्य में इसिगिलि कहा गया है।

इसिला

मौर्य सम्राट अशोक (273-232 ई० पू०) के लघुशिलालेख सं० 1 में इस नगर का उल्लेख है। यह लेख दक्षिणापथ के मुख्य नगर सुवर्णगिरि के शासक आर्यपुत्र और महामात्राओं के नाम प्रेषित किया था। इसमें उन्हें इसिला नगरी के शासक महामात्र के नाम कुछ विशेष आदेश पहुंचाने को कहा गया है। डा० भण्डारकर (दे० अशोक—द्वितीय संस्करण, पृ० 5्) के मत में इसिला का जिला दक्षिणापथ की दक्षिणी सीमा अर्थात् चोल और पाड्यराज्यों की सीमा पर स्थित रहा होगा। इस अभिज्ञान के अनुसार इसिला की स्थिति वर्तमान मैसूर राज्य के दक्षिणी भाग में थी। रायचौधरी (पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एंशेंट इण्डिया, पृ० 257) इसिला को मैसूर में स्थित *वर्तमान सिद्धापुर* मानते हैं।

इसीपतन=ऋषिपतन (दे० सारनाथ)

ईखन (नदी) दे० **इक्षुमती** 2।

ईशानपुर

प्राचीन कम्बोडिया—कम्बुज—का एक नगर जिसे यहां के हिन्दू राजा

ईशानवमन (राज्याभिषेक 616 ई०) ने बसाया था। इसका अभिज्ञान वतमान सम्बोर प्रेयी कूक से किया गया है।

ईशानध्युषित

महाभारत वन० 84,9 मे इस तीथ को सौगंधिक वन कहा गया है और इसे सरस्वती नदी के उद्गम से 6 शम्यानिपात (प्राय आधा मील) पर बताया गया है—'ईशानाध्युषिता नाम तत्र तीथ सुदुलभम पटसुशम्यानिपातेपु वल्मीकादिति निश्चय'। यह तीथ पजाब के उत्तरी पवतो मे स्थित रहा होगा।

ईसापुरी दे० भाजा

ईशापुर (ज़िला मथुरा)

यह ग्राम मथुरा में यमुना के पार और विश्राम-घाट के सामने है। 1910 ई० म यहा से एक ही पत्थर का बना एक सुदर 24 फुट ऊचा यूपस्तभ मिला था। स्तभ के निचले चौकोर भाग पर कुषाण काल (द्वितीय शती ई०) की ब्राह्मी लिपि मे निम्न लेख खुदा है—'सिद्धम महाराजस्य राजातिराजस्य देवेपुत्रस्यपाहुवासिष्कस्य राज्य सवत्सरे (च) तुर्विशे 24 ग्रिष्मा(म) मासे चतुर्थे 4 दिवसे त्रिशे 30 अस्यापुर्व्वाया रुद्रिलपुत्रेण द्रोणल्येन ब्राह्मणेन भारद्वाज सगोत्रेण माणच्छदोगेन इष्टवा सत्रेन द्वादशरात्रेण यूप प्रतिष्ठापित प्रीयतामग्य'। अर्थात 'कल्याण हो, महाराजाधिराज देवपुत्र पाहिवासिष्क के चौबीसवें राज्यवष मे, ग्रीष्म ऋतु के चौथे मास मे, 30वें दिन, रुद्रिल के पुत्र भारद्वाज-गोत्रीय ब्राह्मण द्रोणल ने जो माणछन्द का अनुयायी है, द्वादश रात्रियन को करके इस स्थान पर यह यूप प्रतिष्ठापित किया। अग्नि देवता प्रसन्न हो।

उड दे० मड्ड

उडयल्ली (ज़िला बेजवाडा, आ० प्र०)

उडवल्ली के निकट एक पहाडी म स्थित गुफाए ऐतिहासिक दष्टि से महत्त्वपूण हैं।

उड्ड=उड्ड

उक्ला दे० शूकरक्षेत्र

उकेश=ग्रोसिया

उक्कचेल

पाली साहित्य मे उल्लिखित है। यह वेरजा वाराणसी मार्ग पर स्थित था। इसका अभिज्ञान सोनपुर (बिहार) से किया गया है।

उक्कठ

अबट्ठसुत्त मे उल्लिखित कोसल-जनपद का एक नगर। अभिधानप्पदीपिका

मे इसका उत्तरी भारत के बीस नगरो की सूची मे नाम है। साकेत तथा श्रावस्ती के अतिरिक्त यह नगर भी बौद्धकाल मे कासलदेश का ख्यातिप्राप्त नगर रहा होगा। इसका अभिनान अनिश्चित है।

उक्कल=उत्कल

उखीमठ (जिला गढवाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के निकट समुद्रतल से 4300 फुट ऊचा एक छोटा कस्बा है। स्थानीय किवदती है कि उषा अनिरुद्ध की प्रसिद्ध पौराणिक प्रणयकथा की घटनास्थली यही है। एक विशाल मदिर मे अनिरुद्ध और उषा की प्रतिमाए प्रतिष्ठापित हैं। इनके साथ ही माधाता की भी मूर्ति है। कहा जाता है कि केशव मदिर म जो समुख शिवलिंग है वह कत्यूरी शासन के समय का है। मदिर का वतमान भवन अधिक प्राचीन नही है। कहा जाता है कि स्थान का मूल नाम ऊषा या उषा मठ था जो बिगड कर उखी मठ हो गया। ऊषा बाणासुर की कन्या थी। ऊषा-अनिरुद्ध की सुदर कथा का श्रीमदभागवत 10,62 म सविस्तार वणन है जिसमे बाणासुर की राजधानी शोणितपुर मे कही गई है। शोणितपुर का अभिज्ञान गोहाटी मे किया गया है। उखीमठ से ऊषा की कहानी का सबध तथ्य पर आधारित नही जान पडता। उखीमठ मे पहले लकुलीन शैवो की प्रधानता थी। मदिर की वास्तुकला पर दक्षिणी स्थापत्य का प्रभाव है जो इस ओर शकराचाय तथा उनके अनुवर्ती दक्षिणात्यो के साथ आया था।

उगमहल (सथाल परगना, बिहार)

राजमहल का मध्ययुगीन नाम। अकबर के मुख्य सेनापति राजा मानसिंह ने 1592 ई० मे उगमहल के स्थान पर राजमहल का बसा कर उसे बगाल प्रात की राजधानी बनाया था। इसका प्राचीन नाम कजगल था। उगमहल का नाम अकबर के वित्त मत्री टोडरमल के रिकार्डों मे भी मिलता है। 1639 से 1660 ई० तक राजमहल म बगाल के शासन की राजधानी रही थी। प्राचीन नगर क खडहर चार मील पश्चिम की आर हैं जिनमे कइ मुगलकालीन प्रासाद और मसजिदे हैं।

उग्र केरल (दे० देवीपुराण 93 व हमचन्द्र का अभिधान काश)

उग्रपुर

पाचीन कबोडिया—कबुज का एक नगर जिसे भारत क औपनिवेशिका ने बसाया था। कबुज में हिंदू नरेशा ने लगभग 13 सौ वर्षों तक राज्य किया था।

उच्छकल्प दे० खोह

खोह दानपट्टो के उल्लेख से जान पडता है कि महाराज जयनाथ तथा

सवनाथ की राजधानी उच्छकल्प नामक स्थान पर छठी शती ई० में थी क्योंकि उनके कई दानपट्ट इसी स्थान से निकाले गए थे। उच्छकल्प खाह (भूतपूर्व रियासत नागदा, म० प्र०) का अथवा उसके पास किसी स्थान का नाम रहा होगा। दानपट्ट खोह से प्राप्त हुए थे।

उच्छनगर दे० बरन

उच्छैट (बिहार)

मधुबनी से पद्रह मील दूर एक छोटा सा कस्बा है। स्थानीय लोककथा के अनुसार महाकवि कालिदास को सरस्वती का वरदान इसी स्थान पर प्राप्त हुआ था तथा वे कवि बनने से पूर्व इसी ग्राम के निकट रहते थे। दुर्गा का एक प्राचीन मंदिर जिसे कालिदास की अधिष्ठात्री देवी माना जाता है, यहां आज भी है।

उजालिक नगर=जायस।

उजेन (ज़िला नैनीताल)

काशीपुर के निकट है। कनिंघम ने इसका अभिज्ञान गोविषाण से किया है जिसका उल्लेख युवानच्वांग के यात्रावृत्त में है। उजेन में एक विशाल प्राचीन दुर्ग के ध्वंसावशेष हैं।

उज्जयंत

महाभारत वन पर्व के अंतर्गत सुराष्ट्र के जिन तीर्थों का वर्णन धौम्य मुनि ने किया है उनमें उज्जयंत पर्वत भी है— 'तत्र पिंडारक नाम तापसाचरित शिवम्। उज्जयंतश्च शिखरः क्षिप्रं सिद्धिकरो महान्' वन० 88,21। जान पड़ता है कि उज्जयंत रैवतक पर्वत का ही नाम था। वर्तमान गिरनार (ज़िला जूनागढ़, काठियावाड़) आदि इसी पर्वत पर स्थित हैं। महाभारत के समय द्वारका के निकट होने से इस पर्वत की महत्ता बढ़ गई थी। मंडलीक काव्य में कहा गया है—'शिखरत्रय भेदेन नाम भेदमगादसौ, उज्जयन्तो रैवतकः कुमुदश्चेति भूधरः'। रुद्रदामन् के गिरनार अभिलेख में इसे ऊर्जयत् कहा गया है। दे० गिरनार।

उज्जयिनी दे० अवंती

महाभारत अनुशासन० में विश्वामित्र के एक पुत्र उज्जयन का नाम मिलता है। संभव है उज्जयिनी का नाम इसी के नाम पर हो। भास के नाटक स्वप्न वासवदत्ता में अवंति तथा उज्जयिनी—इन दोनों ही नामों का उल्लेख है—'एष उज्जयिनीयो ब्राह्मण', जिससे नाम की अतिप्राचीनता सिद्ध होती है। ७७७

के कई नाम संस्कृत साहित्य मे मिलते हैं जिनमे मुख्य हैं—अवती, विशाला, भोगवती, हिरण्यवती और पद्मावती ।

उज्जानक

महाभारत वन० के अतगत पाडवो की तीर्थयात्रा के प्रसग मे इस तीर्थ का काश्मीर-मडल मे मानसरोवर के द्वार के पश्चात् वर्णन आता है । इसी के पास कुशवान सरोवर और वितस्ता (झेलम नदी) का उल्लेख है—'एप उज्जानका नाम पावकियत्र शान्तवान्' वन० 130,17 । उज्जानक म एक सरोवर भी था।

उज्जिहाना

वाल्मीकि-रामायण मे वर्णित है कि भरत केकय देश से अयोध्या आते समय गगा को पार करने के पश्चात पर्याप्त दूर चलन पर इस नगरी म पहुचे थे—'तत्र रम्ये वन वास कृत्वासौ प्राड्मुखो ययौ, उद्यानमुज्जिहानाया प्रियका यत्र पादपा , अयोध्या० 71,12 । उज्जिहाना नगरी वतमान रुहेलखड (उ० प्र०) मे कही हो सकती है । यह जिला बदायू की उज्झेनी भी हो सकती है यद्यपि यह अभिज्ञान सवथा अनिश्चित है ।

उज्जेनी (लका)

सिंहल के बौद्ध इतिहास महावश 7,45 के अनुसार इस नगर की स्थापना राजकुमार विजय के एक सामत ने की थी । इसका अभिज्ञान अनिश्चित है ।

उडुपा=उडुपि (मैसूर)

उडुपि (ज़िला मगलूर, मैसूर)

दक्षिण भारत के प्रसिद्ध दार्शनिक और द्वैतमत के प्रतिपादक मनीषी मध्वाचाय की जन्मभूमि है । यह स्थान पला नदी के तट पर अवस्थित है । कहा जाता है कि मध्वाचाय ने अपना प्रसिद्ध गीताभाष्य इसी स्थान पर लिखा था । यह भी किवदती है कि आचाय का जन्म वास्तव म उडुपि से सात मील दक्षिण पूर्व वेल्ले नामक ग्राम (पजक क्षेत्र) मे हुआ था । उडुपि का प्राचीन नाम उडुपा था जिसको प्राचीन काल म रजतपीठपुर, रौप्यपीठपुर एव शिवाली भी कहते थे । उदीपी म मध्वाचाय के समय का एक प्राचीन मदिर भी है। पौराणिक किवदती है कि चद्रमा (=उडुप) ने इस स्थान पर तप किया था ।

उड्डियानपीठ

शाक्तो के अनुसार जगन्नाथपुरी (उडीसा) के क्षेत्र का नाम । इसी को शखक्षेत्र भी कहते थे ।

उड्र

उडीसा का प्राचीन नाम—'पाड्याश्च द्रविडाश्चैव सहिताश्चाड्रकेरलै, आन्ध्रास्तालवनाश्चैव कलिगानुष्ट्रकर्णिकान' महा० सभा० 31, 71। इस उद्धरण मे उड्र का पाठातर उड्र भी है। दे० कलिग, उत्कल। कुछ विद्वानो का मत है कि द्रविड भाषाओ मे उड्डि शब्द का अर्थ किसान है और शायद उड्र देश का नाम इसी शब्द से सम्बधित है।

उत्कल

(1) उत्तरी उडीसा का प्राचीन नाम जिसे उत (उत्तर) कलिग का सक्षिप्त रूप माना जाता है। कुछ विद्वानो के मत मे द्रविड भाषाओ मे 'ओक्कल' किसान का पर्याय है और उत्कल इसी का रूपातर है—(दे० दि हिस्ट्री ऑव उडीसा, ह० कृ० महताब, पृ० 1)। उत्कल का प्रथम उल्लेख सम्भवत सूत्रकाल (पूर्वबुद्धकाल) मे मिलता है। कालिदास ने रघुवश 4, 38 मे उत्कलनिवासियो का उल्लेख रघु की दिग्विजय के प्रसग मे कलिग विजय के पूर्व किया है—'स तीर्त्वा कपिशा सैन्यैर्बद्धद्विरदसेतुभि, उत्कलादर्शितपथ कलिगाभिमुखो ययौ'। इससे स्पष्ट है कि कालिदास के समय मे अथवा स्थूलरूप से, पूर्व गुप्तकाल मे उत्कल उत्तरी उडीसा और कलिग दक्षिणी उडीसा को कहते थे। उड, उडीसा के समग्र देश का सामान्य नाम था जो महाभारत मे सभा० 31, 71 मे उल्लिखित है। मध्यकाल मे भी उत्कल नाम प्रचलित था। दिब्बिड दानपत्र (एपिग्राफिका इडिका—जिल्द 5, 108) से सूचित होता है कि उत्कल नरेश जयतसेन ने मत्स्यवशीय राजा सत्यमातड के साथ अपनी पुत्री प्रभावती का विवाह किया था और उसे ओड्डवाडी का शासक नियुक्त किया था। इसकी 23 पीढियो के पश्चात 1269 ई० मे उत्कल का राजा अर्जुन हुआ था जिसने यह दानपत्र प्रचलित किया था।

(2) ब्रह्मदेश (बर्मा) म रगून से लेकर पीगू तक के औपनिवेशिक प्रदेश को उत्कल कहते थे। यहा भारत के उत्कल देश के निवासियो ने आकर अनेक बस्तिया बसाई थी। कहा जाता है कि तपुस और भल्लूक नामक दो व्यापारी, जिन्होने भारत जाकर गौतम बुद्ध से भेंट की थी तथा जो उनके शिष्य बनकर तथागत के आठ केशो को लेकर ब्रह्मदेश आए थे, इसी प्रदेश के निवासी थे।

उत्तरऋषिक

'लोहान् परमकाम्बोजानृषिकानुत्तरानपि, सहितास्तान महाराज व्यजयत् पाकशासनि' महा० सभा० 27, 25। अर्जुन ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसग मे उत्तर ऋषिको से घोर युद्ध करने के पश्चात् उन पर विजय प्राप्त की थी।

सदभ मे अनुमेय है कि उत्तर ऋषिको का देश वतमान सिक्याग (चीनी तुर्किस्तान) मे रहा होगा। कुछ विद्वान् 'ऋषिक' को 'यूची' का ही सस्कृत रूप समझते हैं। चीनी इतिहास मे ई० सन से पूव दूसरी शती म यूची जाति का अपने स्थान या आदि यूची प्रदेश से दक्षिण पश्चिम की ओर प्रव्रजन करन का उल्लेख मिलता है। कुशान इसी जाति से सम्बद्ध थे। ऋषिका की भाषा को आर्षी कहा जाता था। सम्भव है रूसी और ऋषिक शब्दा मे भी परस्पर सम्बध हो ('ऋ' का वैदिक उच्चारण 'र' था जो मराठी आदि भाषाओ मे आज भी प्रचलित है।)

उत्तरकाशी (गढवाल, उ० प्र०)

धरासू से 18 मील दूर गगात्री के माग पर स्थित प्राचीन तीथ। विश्वनाथ क मदिर के कारण ही इसका नाम उत्तरकाशी हुआ है।

उत्तरकुरु

वाल्मीकि रामायण किष्किधा० 43 मे इस प्रदेश का सुदर वणन है। कुछ विद्वानो के मत म उत्तरी ध्रुव के निकटवर्ती प्रदेश को ही प्राचीन साहित्य मे विशेषत रामायण और महाभारत मे उत्तरकुरु कहा गया है और यही आर्यों की आदि भूमि थी। यह मत लोकमान्य तिलक ने अपन 'ओरियन' नामक अग्रजी ग्रन्थ म प्रतिपादित किया था। वाल्मीकि न जो वणन किष्किधा० मे उत्तरकुरु प्रदेश का किया है उसके अनुसार उत्तरकुरु म शैलोदा नदी बहती थी और वहा मूल्यवान् रत्न और मणि उत्पन्न होत थे—'तमतिक्रम्य शलेन्द्रमुत्तर पयसा निधि, तत्र सोमगिरिनाम मध्य हेममयो महान्। सतुदेशो विसूर्योपि तस्य भासा प्रकाशते, सूयलक्ष्म्याभिविज्ञेयस्तपतव विवस्वता'—किष्किधा० 43 53–54। अर्थात (सुग्रीव वानरो की सेना को उत्तरदिशा मे भेजते हुए कहता है कि) 'वहा से आगे जाने पर उत्तम समुद्र मिलेगा जिसके बीच म सुवणमय सोमगिरि नामक पवत है। वह देश सूयहीन है किंतु सूय के न रहन पर भी उस पवत के प्रकाश से सूय के प्रकाश क समान ही वहा उजाला रहता है।' सोमगिरि की प्रभा से प्रकाशित इस सूयहीन उत्तरदिशा म स्थित प्रदेश के वणन म उत्तरी नार्वे तथा अन्य उत्तरध्रुवीय देशो म दृश्यमान सप्रभा या अरोरा बोरियालिस (Aurora Borealis) नामक अदभुत दृश्य का काव्यमय उल्लेख हो सकता है जो वष म छ मास के लगभग सूय क क्षितिज के नीचे रहन के समय दिखाई देता है। इसी सग के 56वें श्लोक म सुग्रीव न वानरा स यह भी कहा कि उत्तरकुरु के आगे तुम लोग किसी प्रकार नहीं जा सकते और न अन्य प्राणियो की गति है—'न कथचन गतव्य कुरूणामुत्तरेण व, अन्येषामपि भूत

मति वै गति ।' महाभारत सभा० 31 मे भी उत्तरकुरु को अगम्य देश माना है। अर्जुन उत्तरदिशा की विजय यात्रा मे उत्तरकुर पहुँच कर उसे भी जीतने का प्रयास करने लगे—'उत्तरकुरुवर्षं तु स समासाद्य पाडव , इयेष जेनु त देश पाकशासननन्दन ' सभा० 31,7 । इस पर अर्जुन के पास आकर बहुत से विशालकाय द्वारपालो ने कहा कि 'पार्थ, तुम इस स्थान को नही जीत सकते । यहा कोई जीतने योग्य वस्तु दिखाई नही पडती । यह उत्तरकुरु देश है । यहा युद्ध नही होता । कुतीकुमार, इसके भीतर प्रवेश करके भी तुम यहा कुछ नहीं देख सकते क्योकि मानव शरीर से यहा की कोई वस्तु नही देखी जा सकती'—'न चात्र किचिज्जेतव्यमजुनात्र प्रदृश्यते, उत्तरा कुरवो ह्येत नात्र युद्ध प्रवतते । प्रविष्टोपि हि कौतेय नेह द्रक्ष्यसि किंचन, न हि मानुपदेहेन शक्यमत्राभिवीक्षितुम्' सभा० 31,11–12 । यह बात भी उल्लेखनीय है कि ऐतरेय ब्राह्मण मे उत्तरकुरु को हिमालय के पार माना गया है और उसे राज्य हीन देश बताया गया है—'उत्तरकुरव उत्तरमद्राइति वैराज्या यैव ते'—ऐतरेय० 8,14 । हर्षचरित, तृतीय उच्छ्वास, मे बाण ने उत्तरकुरु की कलकलनिनादिनी विशाल नदियों का वणन किया है । रामायण तथा महाभारत आदि ग्रथो के वणन से यह अवश्य ज्ञात होता है कि अतीतकाल मे कुछ लोग अवश्य ही उत्तरकुरु—अर्थात उत्तरध्रुवीय प्रदेश मे पहुचे होगे और इन वणनो मे उन्ही की कही कुछ सत्य और कुछ कल्पनारजित रोचक कथाओ की छाया विद्यमान है । यदि तिलक का प्रतिपादित मत हमे ग्राह्य हो तो यह भी कहा जा सकता है कि इन वणनो मे भारतीय आर्यों की उनके अपने आदि निवासस्थान की सुप्त जातीय स्मृतियां (racial memories) मुखरित हो उठी है । (दे० उत्तरभद्र) ।

उत्तरकुलूत दे० कुलूत

उत्तरकोसल

वतमान अवध (उ० प्र०) का प्राचीन नाम । मूलत कोसल (=कोशल) का विस्तार सरयू नदी से विध्याचल तक रहा होगा किंतु कालातर मे यह उत्तर और दक्षिण कोसल नामक दो भागो मे विभक्त हो गया था । रामायणकाल मे भी ये दो भाग रहे होगे । कौसल्या दक्षिण कोसल की राजकुमारी थी और उत्तरकोसल के राजा दशरथ को ब्याही थी । दक्षिणकोसल विध्याचल के निकट वह भूभाग था जिसमे वतमान मध्यप्रदेश के रायपुर और बिलासपुर जिले तथा उनका परवर्ती प्रदेश सम्मिलित है । उत्तरकोसल स्थूलरूप से गगा और सरयू का मध्यवर्ती प्रदेश था । महाभारत सभा० 30,3 मे उत्तरकोसल पर भीम की विजय का वणन है—'ततो गोपालकक्ष च सोत्तरानपि कोसलान्मल्लानामधिप चैव पार्थिव

चाजयत प्रभु'। कालिदास ने उत्तर कोसल की राजधानी अयोध्या में बताई है—'सामायधानीमिव मानम मे सभावयत्युत्तरकोसलानाम्' रघुवश 13,62। उत्तरकोसल का रघुवश 18,27 में भी उल्लेख है, 'कौसल्यदत्युत्तर कासलाना पत्यु पतगान्वयभूषणस्य, तम्यौरस सोमसुत सुतोऽभूनेत्रोत्सव सोम इव द्वितीय।' दे० कोसल, दक्षिण कोसल।

उत्तरगगा

कश्मीर म, सिंध का एक प्राचीन नाम।

उत्तरगा

रामायण अयो० 71,14 मे उल्लिखित नदी—'वास कृत्वा सवतीर्थे तीर्त्वा चोत्तरगा नदीम, अन्यानदीश्च विविधै पावतीयैस्तुरगमै'। सभवत यह रामगगा (उ० प्र०) है जो कन्नौज के पास गगा मे गिरती है।

उत्तरज्योतिष

'कृत्स्न पचनद चैव तथैवामरपवतम, उत्तरज्योतिष चैव तथा न्दिव्यकट पुरम' महा० सभा० 32,11। नकुल ने अपनी पश्चिम दिशा की दिग्विजययात्रा म इस स्थान को जीता था। प्रसगानुसार इस की स्थिति पजाव और कश्मीर की सीमा के निकट जान पडती है। जिस प्रकार प्राग्ज्योतिष (कामरूप-आसाम की राजधानी) की स्थिति पूव मे थी, इसी प्रकार उत्तरज्योतिष की स्थिति उत्तरपश्चिम मे थी। इसका पाठातर जोतिक भी है जो उत्तर पश्चिम हिमालय मे स्थित जोता नामक स्थान है।

उत्तरपचाल

चेतिय जातक (कॉवेल स० 422) के अनुसार चेदि प्रदेश का एक नगर जिसकी स्थापना चेदिनरेश उपचर के पुत्र ने की थी।

उत्तर मथुरा=उत्तर मधुरा

बौद्धकालीन भारत मे मथुरा या मधुरा नाम की दो नगरिया थी। एक उत्तर की प्रसिद्ध मथुरा, दूसरी वतमान मदुरा (मद्रास) जो पाडय देश की राजधानी थी। हरिषेण ने बृहत्कथा कोश कथानक, 21 मे उत्तर मथुरा का भरत-क्षेत्र या उत्तरी भारत मे माना है। घटजातक (स० 454) मे उत्तर मधुरा के राजा महासागर और उसके पुत्र सागर का उल्लेख है। सागर श्रीकृष्ण का समकालीन था।

उत्तरमद्र

ऐतरेय ब्राह्मण मे उत्तरमद्र के निवासियो का हिमवान् के पार के प्रदेश मे वणन है और उन्हे उत्तर कुरु के पाश्व मे बसा हुआ बताया गया है।

जिमर और मेक्डॉनेल्ड के अनुसार उत्तर मद्र का देश वर्तमान कश्मीर मे सम्मिलित था। दक्षिण मद्र रावी और चिनाब के बीच का प्रदेश था। ऐतरेय ब्राह्मण का उल्लेख इस प्रकार है—'एतस्यामुदीच्यां दिशि य के च परेण हिमवन्त जनपदा उत्तरकुरव उत्तरमद्रा इति वैराज्यायैव तऽभिषिच्यन्ते' ऐतरेय 8,14। इस उद्धरण से यह भी सूचित होता है कि उत्तर मद्र देश मे वैराज्यप्रथा थी जिसका अर्थ बिना राज्य की शासन पद्धति अथवा गणराज्य का कोई प्रकार हो सकता है। (दे० उत्तरकुरु) न० ला० डे के अनुसार फारस का मीडिया प्रान्त ही उत्तर मद्र है।

उत्तराखण्ड

उत्तरपश्चिमी उत्तरप्रदेश का पार्वतीय प्रदेश जिसमे बदरीनाथ और केदारनाथ का क्षेत्र सम्मिलित है। मुख्य रूप से गढवाल का उत्तरी भाग इस प्रदेश के अंतर्गत है।

उत्तरापथ

विंध्याचल के उत्तर मे स्थित प्रदेश का सामान्य नाम। घटजातक मे उत्तरापथ तथा यहा की असिताजना नामक नगरी का उल्लेख है। यह नगरी वर्तमान मथुरा के निकट थी। हर्षचरित मे बाण ने उत्तरापथ को विंध्य के उत्तर म स्थित देश का पर्याय माना है। (दे० दक्षिणापथ)।

उत्पलावन=उत्पलारण्य (ज़िला कानपुर)

बिठूर का प्राचीन नाम—महाभारत वन० 87, 15 म इसका उल्लेख इस प्रकार है—'पचालेषु च कौरव्य कथयन्त्युत्पलावनम विश्वामित्रोऽयजद् यत्र पुत्रेण सह कौशिक'।

उत्पलावती=सुत्पलावती

महाभारत भीष्म० 9, मे इसका उल्लेख है। हरिवंश 168 मे इसको उत्पल भी कहा गया है। इसका नाम वामन पुराण 13 मे भी है। यह कावेरी की सहायक नदी है और मलय पर्वत से निकलती है।

उत्पलेश्वर

मध्यप्रदेश मे महानदी का पेयरी नदी से संगम होने से पूर्व का भाग (न० ला० डे)।

उत्सवसंकेत

वर्तमान हिमाचल प्रदेश और पजाब की पहाडियो मे बसे हुए सप्तगणराज्यो का सामूहिक नाम जिनका उल्लेख महाभारत मे है—इन्हे अर्जुन ने जीता था—'पौरव युधि निर्जित्य दस्यून् पर्वतवासिन, गणानुत्सव संकेतानजयत सप्त

पाडव' सभा० 27, 16। कुछ विद्वानो का मत है कि प्राचीन साहित्य म वर्णित किन्नरदेश शायद इसी प्रदश मे स्थित था। इन गणराज्यो क नामकरण का कारण सभवत यह था कि इनके निवासियो मे सामान्य विवाहोत्सव की रीति प्रचलित नही थी, वरन् भावी वरवधू सकेत या पूव निश्चित एकात स्थान पर मिलकर गधव रीति स विवाह करते थे (आदिवासी गोडा की विशिष्ट प्रथा जिसे घोटुल कहते है इससे मिलती जुलती ह। मत्स्यपुराण 154, 406 म भी इसका निर्देश है)। वतमान जाहर के इलाके मे जो किन्नर देश म शामिल था इस प्रकार के रीतिरिवाज आज भी प्रचलित ह, विशेषत यहा की कनौडी नामक जाति म। कनौडी शायद किन्नर का ही अपभ्रश है। कालिदास ने भी उत्सव सकेतो का वणन रघु की दिग्विजय यात्रा क प्रसग म देश के इसी भाग म किया है और इन्हे किन्नरो से सम्बद्ध बताया है—'शरैरुत्सवसकेतान्स कृत्वा विरतोत्सवान् जयोदाहरण बाहुवोर्गापयामास किन्नरान्'—रघु० 4, 78 अथात् रघु न उत्सवसकेता को बाणा से पराजित करके उनकी सारी प्रसन्नता हर ली और वहा क किन्नरा का अपनी भुजाओ क बल क गीत गान पर विवश कर दिया। रघु० 4, 77 मे कालिदास न उत्सवसकेता को पवतीयगण कहा है—'तत जय रघार्घोर पवतीयगणैरभूत'।

उवुक्काडु (जिला तजार, मद्रास)

तजौर नगर के निकट एक ग्राम जो प्राचीनकाल मे दक्षिण भारत की प्रसिद्ध नृत्यशैली भरत नाट्यम् क लिए प्रसिद्ध था। यह ग्राम इस नृत्य का केन्द्र समझा जाता था। अन्य केन्द्र मेलात्तूर और कूल्मगलम् थ।

उदकमडल दे० ऊटकमड

उदपान

महाभारतकाल म सरस्वती नदी के तट पर बसा एक तीथ। यहा सरस्वती अदृश्य थी किंतु आद्रता तथा वनस्पति क कारण इस नदी का पूवकाल मे वहा होना सूचित होता था, दे० महा० शल्य० 35,90।

उदयगिरि (म० प्र०)

बेसनगर या प्राचीन विदिशा (भूतपूव ग्वालियर रियासत) के निकट उदयगिरि विदिशा नगरी ही का उपनगर था। पहाडिया स अन्दर बीस गुफाए है जो हिंदू और जन मूर्तिकारी क लिए प्रख्यात हैं। मूर्तिया विभिन्न पौराणिक कथाओ स सम्बद्ध हैं और अधिकाश गुप्तकालीन (चौथी पाचवी शती ई०) ह। गुफा स० 4 म शिवलिंग की प्रतिमा है। इसक प्रवेशद्वार पर एक मनुष्य वीणावादन म व्यस्त दिखाया गया है जिसके कारण इस गुफा को वीणा की गुफा

रहा है। गुफा स० 5 म बराहावतार की सुदर पाकी है। इसमे वराह भगवान को नर और वराह के रूप मे अंकित किया गया है। उनका बाया पाव नागराजा के सिर पर दिखलाया गया है जो सभवत गुप्तकाल मे गुप्त सम्राटो द्वारा किए गए नागशक्ति के परिह्रास का प्रतीक है। एक अन्य गुफा म गुप्तसवत 106=425 426 ई० मे उत्कीण कुमारगुप्त प्रथम के शासनकाल का एक अभिलेख है। इसमे शकर नामक किसी व्यक्ति द्वारा गुफा के प्रवश द्वार पर जैन तीथकर पाश्वनाथ की मूर्ति के प्रतिष्ठापित किए जाने का उल्लेख है—यह लेख इस प्रकार है—'नम सिद्धेभ्य श्री सयुताना गुणतोयधीना गुप्तान्वयाना नपसत्तमाना राज्य कुलस्याधिविवधमाने षड्भिय्युत वपशतथ मासे सुकार्तिके बहुल दिनेथ पचमे गुहामुखे स्फटविकतोत्कटामिमा जिताद्विषो जिनवर पाश्व सज्ञिका जिनाकृति शमदमवानचीकरत आचाय भद्रान्वय भूषणस्य शिष्योह्यसावाय कुलोद्गतस्य आचाय गोशम्ममुनस्तुसुनम्तु पद्मावतावदवपतढभटस्य परजयस्य रिपुघ्न मानिनस्य सघिल स्यत्यभि विश्रुताभुवि स्वसज्ञया शकरनाम शब्दिता विधानयुक्त यनिमागमास्थित स उत्तराणा सदशे कुरुणा उदग्दिशादशवरे प्रमूत क्षयाय कर्मारिगणस्य धीमान यदत्र पुण्य तदपाससज्ज'।

(2) (भुवनेश्वर उडीसा)

भुवनश्वर के समीप नीलगिरि, उदयगिरि तथा खडगिरि नामक गुहा समूह मे 66 गुफाए हैं जो पहाडियो पर अवस्थित ह। इनम से अधिकाश का समय तीसरी शती ई० पू० है और उनका सम्बध जैन-सम्प्रदाय स है। इन गुफाओ मे से एक मे कलिगराज खारवेल का प्रसिद्ध अभिलख है जिसका विस्तृत अध्ययन श्री का० प्र० जायसवाल बहुत समय तक करते रहे थ। अभिलेख मे पहाडी को कुमारगिरि कहा गया है। यह स्थान उडीसा की प्राचीन राजधानी शिशुपालगढ से 6 मील दूर है। इसी स्थान के पास अशोक के समय मे तोसलि नाम की नगरी (वतमान धौली) बसी हुई थी। वास्तव मे उडीसा के इसी भाग म इस प्रदेश की मुख्य राजधानिया बसाई गई थी।

(3) विष्णुपुराण के अनुसार उदयगिरि शाकद्वीप के सप्तपवता मे से है— 'पूवस्तत्रोदयगिरिजलधारस्तथापरः, तथा रैवतकश्यामस्तथैवास्त गिरिर्द्विज। आम्बिकेयस्तथारम्य केसरी पवतोत्तम शाक स्तत्र महावृक्ष सिद्धगधवसवित' विष्णु० 2, 4, 62, 63।

(4) राजगृह के सप्तपवतो मे से एक का वतमान नाम।

उदयपुर (म० प्र०)

बीना भीलसा रेलमाग पर बरेठ से चार मील पूव की ओर बसा हुआ

यह छोटा-सा ग्राम मध्ययुग मे काफी महत्वपूर्ण स्थान था। यहा मे उस समय के अनेक अवशेप उत्खनन द्वारा प्रकाश मे आए हैं जिनम मुख्य ये हैं—उदयश्वर का मदिर जा मालव नरेश उदयश्वर के नाम पर है, बीजमडल, बडाखभी पिसनहारी का मदिर, शाही मसजिद और महल तथा शेरखा की मसजिद। शायद मालव नरेश उदयश्वर के नाम पर ही इस नगर का नामकरण हुआ था।

(2) (राजस्थान) मेवाड के सूयवशी नरेश महाराणा उदयसिंह (महाराणा प्रताप के पिता) द्वारा 16वी शती म बसाया गया था। मवाड की प्राचीन राजधानी चित्तौडगढ मे थी। मेवाड के नरेशो ने मुगलो का आधिपत्य कभी स्वीकार न किया था। महाराणा राजसिंह जो औरगजेब से निरतर युद्ध करते रहे थे महाराणा प्रताप के पश्चात मेवाड के राणाओ मे सवप्रमुख माने जाते हैं। उदयपुर के पहले ही चित्तौड का नाम भारतीय शौय के इतिहास मे अमर हो चुका था। उदयपुर मे पिछौला झील मे बने राजप्रासाद तथा सहेलियो का बाग नामक स्थान उल्लेखनीय हैं। दे० चित्तौड।

उदवाडा (महाराष्ट्र)

बम्बई से 111 मील, उदवाडा रेलस्टेशन से चार मील दूर छोटी-सी बस्ती है। कहा जाता है कि अरबा द्वारा ईरान पर आक्रमण के समय (7-8 वी शती ई०) जो अनक पारसी ईरान छोडकर भारत आ गए थे उन्होने सवप्रथम इसी स्थान पर अपनी बस्ती बसाई थी और अपन साथ लाई हुई अग्नि की उन्होंने यही स्थापना की थी। पारसियो का प्राचीन अग्नि मदिर भी यहा है।

उदुबर

मूल सर्वास्तिवादी विनय मे पठानकोट के इलाके का नाम।

उदद्दडपुर दे० ओदतपुरी

उद्भाडपुर

वतमान ओहिद (पाकिस्तान)। यह स्थान सिंध नदी पर स्थित अटक से 16 मील उत्तर की ओर है। अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के समय 327 ई० पू० म तक्षशिला-नरेश अभी ने यवनराज के पास सधिवाता करन के लिए जो दूत भेजा था वह इसी स्थान पर उससे मिला था। इस नगर का जो सिंध नदी के तट पर ही स्थित था, अलक्षद्र के समय के इतिहास लखको न उल्लेख किया है। पाणिनि का जन्मस्थान शलातुर—वतमान लाहुर—यहा से छ सात मील उत्तर-पश्चिम की ओर है। राजतरगिणी 2, पृ० 337 (डा० स्टाइन द्वारा सपादित) मे उल्लिखित उदखड, उद्भाड का ही रूपातरण जान पडता है।

उद्भिद

विष्णुपुराण 2, 4, 46 के अनुसार कुशद्वीप का एक भाग या वर्ष' जो इस द्वीप के राजा ज्योतिष्मान् के पुत्र के नाम पर उद्भिद कहलाता है।

उद्यत पर्वत

महाभारत वन० 84 म उल्लिखित, गया (बिहार) के निकट ब्रह्मयोनिपर्वत (र० ना० द)।

उद्यान

प्राचीन गधार देश का एक भाग जो आजकल स्वात या चित्राल (प० पाकिस्तान के उत्तर-पूर्व में स्थित) के नाम से प्रसिद्ध है। बौद्धकाल में यहाँ अनेक विहार स्थित थे। चीनी पर्यटक सुगयुन (520 ई०) के यात्रा के अनुसार बौद्ध साहित्य तथा कला म प्रसिद्ध वेस्संतर जातक की कथा की घटनास्थली यह नगर था (दे० सुगयुन का यात्रा विवरण, ना० प्र० सभा काशी, उपक्रम पृ० 23)। उद्यान का वर्णन युवानच्वांग ने भी किया है। उद्यान देश म बसने वाले लोगों की अश्वक (ग्रीक अस्सकनोज) कहते थे। मार्कंडेय पुराण तथा बृहत्संहिता में उन्हें उत्तर पश्चिम की ओर स्थित बताया गया है। मंगलपुर म उद्यान की राजधानी थी। कुछ विद्वानों का मत है कि अफगानिस्तान का वह भाग जो आजकल कमन कहलाता है प्राचीन 'उद्यान' है। दोनों नाम समानार्थक हैं। कमन का इलाका सदा से फलों के बागों के लिए प्रसिद्ध रहा है।

उधुवानाला (संथाल परगना, बिहार)

राजमहल से 5 मील दूर इस स्थान पर 1763 ई० म अंग्रेजों और बंगाल के नवाब मीरकासिम की सेनाओं में युद्ध हुआ था। अंग्रेजी फौज का नायक मेजर एडम्स था। मीरकासिम की इस युद्ध म पराजय हुई थी।

उन (जिला इंदौर, म० प्र०)

नीमाड के मैदान म सतपुड़ा की पहाड़ियों के उत्तरी छोर पर बसा हुआ कस्बा है। मालवा के परमार नरेशों के समय के लगभग बारह मंदिरों के खण्डहर यहाँ स्थित हैं। ये मंदिर मध्ययुगीन हिंदू तथा जैन वास्तुकला के अच्छे उदाहरण हैं। इनमें चौबारा डेरा नाम का मंदिर प्रमुख है। ग्राम के उत्तर की ओर वालेश्वर का मंदिर है और ग्राम के भीतर नीलकंठेश्वर शिव का।

उ मागनोल (स्याम या थाइलैंड)

प्राचीन गधार या यूनान के पूर्व और स्याम के पश्चिम मे स्थित भारतीय औपनिवेशिक राज्य। इसके उत्तर मे सुवर्णग्राम की स्थिति थी।

उपकेश=ओसिया।

उपगिरि

प्राचीन साहित्य मे हिमालय पवत श्रेणी के निचले शृगो का सामूहिक नाम। इसमे समुद्रतल से 6 से 8 सहस्र फुट ऊची श्रेणिया सम्मिलित हैं। नैनीताल, शिमला, मसूरी आदि इसी के अतगत हैं। सर्वोच्च शिखरो को अतगिरि का अभिधान दिया गया था। उपगिरि को पाली साहित्य मे चुल्ल (=लघु) हिमवत कहा गया है। इसे अग्रेजी मे लेसर हिमालयाज (Lesser Himalayas) कहते हैं जो चुल्लहिमवत का अनुवाद है। महाभारत म उपगिरि का उल्लेख इस प्रकार है—'अतर्गिरि च कौतेयस्तथैव च बहिर्गिरिम, तथैवोपगिरि चैव विजिग्ये पुरुपषभ' सभा० 27, 3, अर्थात् अजुन न अपनी दिग्विजय-यात्रा म, अतगिरि, बहिर्गिरि और उपगिरि नामक प्रदेशो को विजित किया। बहिर्गिरि तराई प्रदेश की पहाडियो का नाम था।

उपजला

'जलाचोपजला चैव, यमुनामभितो नदीम् उशीनरो वै यत्रेष्ट्वा वासवादत्यरिच्यत' महा० वन० 130, 21 इस उद्धरण मे जला तथा उपजला नदियो को यमुना के दोनो ओर स्थित बताया गया है। इन नदियो के प्रदेश मे राजा उशीनर के राज्य का उल्लेख है। उशीनर कनखल या हरद्वार के परिवर्ती प्रदेश का नाम था। इन नदियो की स्थिति इस प्रकार सहारनपुर या देहरादून जिले मे यमुना के निकट कही रही होगी। (दे० जला)

उपतिष्य (लका)

महावश 7,44 म उल्लिखित इस ग्राम की स्थिति गभीर नदी के तट पर थी। इसे राजकुमार विजय के सामत बौद्ध उपतिष्य ने बसाया था। यह ग्राम शायद अनुराधपुर से सात आठ मील उत्तर की ओर स्थित वतमान योदिएल है।

उपधौली (उ० प्र०)

पूर्वी उत्तर प्रदेश मे कुसुम्ही रेलस्टेशन से ग्यारह मील पर एक ग्राम है जहा बौद्धकालीन खडहर पाए गए हैं। उपधौली तथा इसके निकट राजधानी नामक ग्राम मे फैले हुए ये खडहर शायद उस स्तूप के हैं जिसका निर्माण युवानच्वाग के अनुसार सम्राट् अशोक ने करवाया था। स्तूप मे बुद्ध की शरीर-भस्म सन्निहित थी। ग्राम के निकट 30 फुट ऊचा ईंटो का एक छोटा स्तूप आज भी है।

उपप्लव्य

महाभारत-काल मे मत्स्य देश मे स्थित नगर जो विराट या वैराट (जिला

जयपुर, राजस्थान) के निकट ही था, 'उपप्लव्य स गत्वा तु स्वधावार प्रविश्य च, पाडवानगतान सर्वान शल्यस्तत्रददश ह'। महा० उद्योग० 8,25 तथा 'ततस्त्रयोदशे वर्षे निवृत्ते पचपाडवा , उपप्लव्य विराटस्य समपद्यत सवश ' महा० विराट 72,14 । पाडव इस नगर मे अपने वनवासकाल के बारह वष और अज्ञातवास मे तेरह वर्ष समाप्त होन पर आकर रहने लग थे । यही उन्होने युद्ध की तैयारिया की थी । महाभारत के प्रसिद्ध टीकाकार नील्कठ ने विराट 72,14 की टीका करते हुए उपप्लव्य के लिए लिखा है—'विराटनगरसमीपस्थनगरान्तरम्' अर्थात् यह नगर मत्स्य की राजधानी विराटनगर के पास ही दूसरा नगर था। इसका ठीक ठीक अभिज्ञान अनिश्चित है । किन्तु यह वतमान जयपुर के निकट ही कही होगा । विराटनगर की स्थिति वतमान बैराट के पास थी । पार्जिटर के अनुसार मत्स्य की राजधानी उपप्लव्य मे ही थी ।

उपवग (प० बगाल)

बृहत्सहिता 14, मे उल्लिखित भागीरथी के पूव मे स्थित भूभाग जिसम जैसार सम्मिलित है ।

उपरकोट (ज़िला जूनागढ, काठियावाड, गुजरात)

उपरकोट मे समवत गुप्तकालीन कई गुफाए है जो दोमजिली हैं। गुफाओ के स्तभो पर उभरी हुई धारिया अकित हैं जो गुप्तकालीन गुहास्तभो की विशिष्ट अलकरण शैली थी। गुजरनरश सिद्धराज के शासनकाल मे यहा खगार राजपूतो का एक दुग था और दुग के निकट अडीचडी बाव नाम की एक बावडी थी जो आज भी विद्यमान है । इस बावडी के सबध मे यहाँ एक गुजराती कहावत भी प्रचलित है—'अडीचडी बाव अने नौगुण कुआ जेणो न जोया तो जीवितो मुया', अर्थात् अडीचडी बाव और नौगुण कुआ जिसने नही देखा वह जीवित ही मृत है ।

उमगा (जिला गया, विहार)

ग्राडट्रक रोड के 307 वें मील से एक मील दक्षिण की ओर एक पवत, जहा प्राचीनकाल का कलापूण सूय-मदिर स्थित है । यह साठ फुट ऊचा है । इस मुख्य मदिर के निकट 52 मदिर और हैं जो पहाडियो पर बने हुए हैं ।

उमावन

ब्रह्माडपुराण के अनुसार इस स्थान पर उमा ने शिव को पाने के लिए तपस्या की थी । स्थानीय जनश्रुति मे यह स्थान कुमायू (उ० प्र०) का कोटलगढ है ।

उरजिर—विपाशा नदी ।

उरई (उ० प्र०) आल्हा काव्य के प्रमुख वीर माहिल की नगरी मानी जाती है ।

उरग=उरगपुर

उरगपुर

सुदूर दक्षिण मे स्थित पाड्य देश की प्राचीन राजधानी। कालिदास ने उरग का रघु० 6,59 मे उल्लेख किया है—'*अथोरगाख्यपुरस्य नाथ दौवारिकी* देवसरूपमेत्य, इतश्चकोराक्षि विलोकयेति पूर्वानुशिष्टा निजगाद भोज्याम्'। मल्लिनाथ ने इसकी टीका करते हुए लिखा है, 'उरगाख्यस्य पुरस्यपाड्यदेशे कान्यकुब्जतीरवर्ति नागपुरस्य'। इससे ज्ञात होता है कि यह नगर कान्यकुब्ज नदी के तट पर बसा हुआ था। एपिग्राफिका इडिका 10,103 मे उरगपुर को अशोक-कालीन चोल देश की राजधानी बताया है जिसे उरयियूर भी कहते थे। यह त्रिशिरापल्ली=त्रिचिनापल्ली का ही प्राचीन नाम था। मल्लिनाथ का नागपुर *वर्तमान नेगापटम (जिला राजमहेन्द्री—मद्रास) है।*

उरगम (जिला गढवाल, उ० प्र०)

प्राचीन गढवाली नरशो के बनवाए प्राचीन मदिर ध्वसावशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

उरगा

'*अभिसारी ततो रम्या विजिग्ये कुरुनदन, उरगावासिन चैव रोचमान रणेऽ* जयत्' महा० सभा० 27,19। इस देश की स्थिति जिला हजारा, प० पाकिस्तान मे मानी गई है। इस देश के राजा रोचमान् को अर्जुन ने पराजित किया था। प्रसग से स्पष्ट है कि उरगा, अभिसारी (कश्मीर मे) के निकट था। उरगा का पाठातर उरशा है।

उरयियुर (दे० उरगपुर)

प्राचीन त्रिशिरापल्ली=त्रिचिनापल्ली।

उरशा=उरसा

शायद उरगा का पाठातर है। इस देश का अभिज्ञान जिला हजारा (प० पाकिस्तान) से किया गया है। इस नाम के नगर की स्थिति (उरगा या उरशा का उल्लेख महा० सभा० 27,19 म है—दे० उरगा) पेशावर से लगभग चालीस मील पूव की ओर हागी। यवनराज अलक्षेंद्र ने 327 ई० पू० मे पजाब पर आक्रमण करते समय अभिसार नरेश को अधीन करने के पश्चात् अपना आधिपत्य उरशा पर भी स्थापित कर लिया था। ग्रीक लेखक एरियन ने यहा के राजा का नाम अरसाक्सि लिखा है। भूगोलविद् टॉलमी के अनुसार तक्षशिला इसी देश मे थी। चीनीयात्री युवानच्वाग के अनुसार उसके समय (सातवी शती ई० का मध्यकाल) मे नगर के उत्तर की ओर एक स्तूप बना हुआ था जहा भगवान्

तथागत अपने पूवजन्म मे सुदान (वैश्वन्तर) के रूप मे जन्मे थे। स्तूप के पास एक विहार भी था जहा बौद्ध आचाय ईश्वर ने अपने ग्रन्थो की रचना की थी। नगर के दक्षिणी द्वार पर एक अशोक-स्तभ था जो उस स्थान का परिचायक था जहा वैश्वन्तर के पुत्र और पुत्री को एक निष्ठुर ब्राह्मण ने बचा था (वैस्मन्तर जातक)। वैश्वन्तर ने जिस दतालोक पवत पर अपने बच्चो को दान मे दे दिया था वहा भी अशोक का बनवाया हुआ एक स्तूप था। बौद्ध कथा है कि जिस स्थान पर निष्ठुर ब्राह्मण इन बच्चो को पीटता था वहा की वनस्पति भी रक्तरजित हो गई थी और बहुत दिना तक वैसी ही रही थी। इसी स्थान पर ऋष्यशृग का आश्रम था जिन्हे एक गणिका ने मोह लिया था।

उरी=एरडी नदी।

उरुबिल्व=उरुवेला।

उरुवेल्लकल्प=उरुवेलकल्प।

बुद्धकाल मे मल्लक्षत्रियो का नगर जो पूर्वी उत्तरप्रदेश या पश्चिमी विहार मे स्थित रहा होगा (लॉ—'सम क्षत्रिय ट्राइब्ज', प० 149)।

उरुवेलपतन (लका)

महावश 28,36 अनुराधपुर से चालीस मील कलआय नदी के निकट स्थित है। इसका नाम गया के निकट अवस्थित उरुवेला के नाम पर रखा गया था।

उरुवेला

(1) (बुद्धगया, बिहार) प्राचीन बौद्धग्रन्था मे इस स्थान का उल्लेख बुद्ध की जीवन कथा के सबध मे है। यह वही स्थान है जहा गौतम सबुद्धि प्राप्त करने के पूव ध्यानस्थ होकर बैठे थे। इसी स्थान पर ग्राम वधू सुजाता या अश्वघोष के अनुसार नदबाला (दे० बुद्धचरित 12, 109) से भोजन प्राप्त कर उन्होने अपना कई दिन का उपवास भग किया था और शारीरिक कष्ट द्वारा सिद्धि प्राप्त करने के माग की सारहीनता उनकी समझ मे आई थी। स्थान का उल्लेख महावश मे भी है (1,12, 1, 16, आदि) जिस पीपल के पेड के नीचे गौतम को सबुद्धि प्राप्त हुई थी उसको अग्निपुराण, 115, 37 मे महाबोध वृक्ष कहा गया है। इस ग्राम का शुद्ध नाम शायद उरुबिल्व था। नैरजना नदी उरुवेला के निकट बहती थी (दे० बुद्धचरित 12,108)।

(2) (लका) महावश 7,45 इस नगर की स्थापना राजकुमार विजय के एक सामत ने की थी। सभवत यह नगर मदरगम अरनदी के मुहान के पास स्थित मरिच्चुकट्टि है।

उलूप

'मोदापुर वामदेव सुदामान सुमकुल्म्, उत्तरानुत्तरांश्चैव तांश्च राज्ञः समानयत' महा० सभा० 27, 11। अर्जुन ने दिग्विजययात्रा में उलूप देश पर भी विजय प्राप्त की थी। यह पंचगणराज्यों में से था—'ततस्तु पुर्वपैरव धर्मराजस्य शासनात, किरीटी जितवान राजन् देशान् पंचगणास्तत' सभा० 27,12। ये राज्य पंजाब की पहाड़ियों में बसे हुए थे और वर्तमान कुल्लू के आसपास स्थित थे। संभवतः उलूक कुलूत या कुल्लू का ही पाठांतर है।

उल्लोल

कश्मीर की प्रसिद्ध नील झील का प्राचीन संस्कृत नाम (द० हिस्टारिकल ज्याग्रेफी ऑव ऐंशेंट इंडिया, पृ० 39)।

उशीनर

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार (8, 14) यह जनपद मध्यदेश में स्थित था—'अस्याध्रुवायां मध्यमायां प्रतिष्ठायां दिशि'। यहीं कुरुपांचाल और वश जनपदों की स्थिति बताई गई है। कौषीतकी उपनिषद में भी उशीनर वासियों का नाम मत्स्य, कुरुपांचाल और वशादनीयों के साथ है। कथासरित्सागर (दुर्गाप्रसाद और काशीनाथ पांडुरंग द्वारा संपादित, तृतीय संस्करण=पृ० 5) में उशीनरगिरि का उल्लेख कनखल हरद्वार के प्रदेश के अंतर्गत किया गया है। यह स्थान दिव्यावदान (पृ० 22) में वर्णित उसिरगिरि और विनयपिटक (भाग 2, पृष्ठ 39) का उसिरध्वज जान पड़ता है। पाणिनि ने अष्टाध्यायी 2, 4, 20 और 4, 2, 118 में उशीनर का उल्लेख किया है। कौशीतकी-उपनिषद् से ज्ञात होता है कि पूर्वबुद्धकाल में गार्ग्य बालाकि जो काशी नरेश अजातशत्रु का समकालीन था उशीनर देश में रहता था। महाभारत में उशीनर नरेश की राजधानी भोजनगर में बताई है— गालवो विमृशन्नेव स्वकार्यगतमानसः, जगाम भोजनगरं द्रष्टुमौशीनरं नृपम्'—उद्योग० 118, 2 शांति० 29, 39 में उशीनर के शिवि नामक राजा का उल्लेख है—'शिबिमौशीनरं चैव मृतं सृंजय शुश्रुम'। ऋग्वेद 10, 59, 10 में उशीनराणी नामक रानी का उल्लेख है—'समिन्द्रेरय गामनड्वाहं य आवहदुशीनराण्या अनः, भरतामप यद्रपो द्यौः पृथिवि क्षमा रपो मापुते किंचनाममत्' या जैसा कि उपर्युक्त उद्धरणों से सूचित होता है उशीनरदेश वर्तमान हरद्वार के निकटवर्ती प्रदेश का नाम था। इसमें जिला देहरादून का यमुनातटवर्ती प्रदेश भी सम्मिलित था क्योंकि महाभारत वन 130,21 में यमुना के पार्श्ववर्ती प्रदेश में उशीनर नरेश द्वारा यज्ञ किए जाने का उल्लेख है—'जलां चोपजलां चैव, यमुनामभितो नदीम्,

उशीनरो वै यत्रेष्ट्वा वासवादत्यरिच्यत।'

उशीरगिरि=उसिरगिरि

उशीरध्वज=उसिरध्वज

उशीरबीज

'उशीरबीज मैनाक गिरिश्वेत च भारत, समतीतोऽसि कौन्तेय कालशैल च पार्थिव' महा० वन० 139, 1 पाडवो की तीर्थयात्रा के प्रसग मे उशीरबीज नामक पर्वत का उल्लेख है। वन० 139,2 म('एषा गगा सप्तविधा राजते भारतपभ') गगा का वर्णन है— इससे जान पडता है कि उशीरबीज तथा इसके साथ उल्लिखित अन्य पहाड, गगा के उद्गम से लेकर हरद्वार तक की हिमालय-पर्वत श्रेणियो के नाम है। वाल्मीकि रामायण उत्तर० 18,2 म भी इसका उल्लेख है, 'ततो मरुत्त नृपति यजन्त सहदैवतै उशीरबीजमासाद्य ददर्श स तु रावण'। यहा मरुत्त नामक नरेश के तप का वर्णन है जो उन्होने उशीरबीज मे देवताओ के साथ किया था, दे० **उसिरगिरि, उसिरध्वज।**

उष्कूर=हुष्कपुर

कनिष्क के उत्तराधिकारी हुविष्क का कश्मीरघाटी मे बसाया हुआ नगर —दे० **हुष्कपुर।**

उष्ट्रकर्णिक

'पाड्याश्च द्रविडाश्चैव सहिताश्चोण्ड्रकेरलै, आध्रा स्तालव नाश्चैव कलिंगानुष्ट्रकर्णिकान' महा० सभा० 31,71। सहदेव ने अपनी दिग्विजययात्रा के प्रसग मे इस देश को विजित किया था। सदर्भ से जान पडता है कि यह स्थान कलिंग या दक्षिण उडीसा अथवा आध्र के निकट स्थित होगा।

उष्ण

विष्णुपुराण 2 4, 48 के अनुसार क्रौचद्वीप का एक भाग या वर्ष जो द्वीप के राजा द्युतिमान् के इसी नाम के पुत्र के कारण उष्ण कहलाता है।

उसभ दे० ऋषभ (2)

उसमा

जयनगर (ज़िला तिरहुत, बिहार) के निकट एक प्राचीन ग्राम जहा पचीस गज लम्बा एक धनुष है जिसे स्थानीय दतकथाओ के आधार पर उसी धनुष का प्रतिरूप माना जाता है जिसे सीता स्वयवर मे भगवान राम ने तोडा था।

उसमानाबाद

गुप्तकालीन गुहाओ के लिए उल्लेखनीय है। दे० **धरसेव।**

उसिरगिरि

इस पवत का उल्लेख दिव्यावदान पृ० 22 म है। यह वतमान सिवालिक पवत माला है। उशीनर और उशीरगिरि या उसिरगिरि नामो मे काफी समानता है और इनकी स्थिति मे भी साम्य है। दे० उशीरगिरि।

उसिरध्वज

विनयपिटक भाग 2, पृ० 39 मे इस पवत का उल्लेख है। यह वतमान सिवालिक-पवतमाला का ही नाम जान पडता है। उसिरगिरि और उसिरध्वज (=उशीरध्वज) समानाथक नाम जान पडते है।

उहा=उवा

मिलिदपन्हो (पृ० 70) म उल्लिखित हिमालय की एक नदी।

उहू (अफगानिस्तान)

काबुल या कुभा नदी। प्राचीन काल मे इसके तट के निवासियो को उहुक कहा जाता था (वा० श० अग्रवाल)

ऊचनगर दे० बुलदशहर।

ऊजठ (जिला सीतापुर, उ० प्र०)

9वी शती ई० के एक मदिर के अवशेष यहा से उत्खनन द्वारा प्राप्त हुए हैं। उत्तरप्रदेश शासन न यहा विस्तृत रूप मे खुदाई की थी।

ऊटकमण्ड (मद्रास)

एक रमणीक पवतीय नगर है। इस नगर का प्राचीन रूप उदकमडल कहा जाता है। इसे ऊटी भी कहते है।

ऊनकेश्वर (जिला यवतमाल, महाराष्ट्र)

आदिलाबाद के निकट अतिप्राचीन स्थान है। इसे ओनकदेव भी कहत हैं। जनश्रुति है कि इस स्थान पर रामायण काल मे शरभग ऋषि का आश्रम था। भगवान् राम वनवासकाल मे इस स्थान पर कुछ समय के लिए आए थे। वाल्मीकि रामायण अरण्य० 5, 3 म शरभगाश्रम का यह उल्लेख है—'अभि गच्छामहे शीघ्र शरभग तपोधनम्, आश्रम शरभगस्य राघवोऽभिजगाम ह'। कालिदास ने शरभगाश्रम का सुदर वणन रामसीता की लका से अयोध्या तक की विमान-यात्रा के प्रसग मे इस प्रकार किया है—'अद शरण्य शरभग नाम्नस्तपोवन पावनमाहिताग्ने, चिराय सतर्प्य समिद्भिरग्नि यो मन्त्रपूता तनुमप्यहौपीत' रघु० 13, 45। दे० शरभगाश्रम। ऊनकेश्वर म गरम पानी का एक कुड है जिसे, कहा जाता है कि, श्रीराम ने बाण से पृथ्वी भेद कर शरभग के लिए प्रकट किया था।

ऊजयत दे० उज्जयत

ऊर्णावती

ऋग्वेद 10, 75, 8 मे वर्णित नदी जो या तो सिंधु की सहायक कोई नदी है अथवा सिंधु ही है। सिंधु के प्रदेश मे ऊर्णा या ऊन वाली भेडो की बहुतायत सदा से रही है।

ऋक्ष

विष्णुपुराण 2, 3, के अनुसार सात कुलपर्वतो मे ऋक्ष की भी गणना है—'महेन्द्रो मलय सह्य शुक्तिमानृक्षपर्वत विंध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वता' ऋक्षपर्वत विन्ध्याचल की पूर्वी श्रेणियो का नाम है जिनमे नर्मदा, ताप्ती और शोण आदि के स्रोत स्थित है। अमरकटक इसी का भाग है। 'पुरश्च पश्चाच्च तथा महानदी तमृक्षवन्त गिरिमेत्य नर्मदा', महा०, शाति 52, 32। स्कदपुराण मे भी नर्मदा का उद्भव ऋक्षपर्वत से माना गया है (दे० रेवा-खड)। कालिदास ने ऋक्ष या ऋक्षवान का नर्मदा के प्रसग मे उल्लेख किया है—'नि शेष विक्षालित धातुनापि वप्रक्रिया मृक्षवतस्तटेषु नीलोर्ध्व रेखा शबलेन शसन् दतद्वयेनाश्मविकुठितेन' रघु० 5, 44 विष्णुपुराण 2, 3, 11 मे तापी, पयोष्णी और निर्विध्या को ऋक्ष-पर्वत से निसृत माना है—'तापी पयोष्णी निर्विन्ध्या प्रमुखा ऋक्षसभवा'। श्रीमदभागवत पुराण 5, 19, 16, मे भी ऋक्ष का उल्लेख है—'विन्ध्य शुक्तिमानृक्षगिरि पारियात्रो द्रोणश्चित्रकूटो गोवर्धनो रैवतक'। ऋक्ष का महाभारतकालीन जनश्रुति मे ऋक्षो या रीछो से भी सम्बन्ध जोडा गया था जो यहा के जगलों मे पाए जाने वाले रीछो के कारण ही सभव हुआ होगा—'ऋक्षे सर्वधितो विप्र ऋक्षवत्यथ पर्वत'— महा० ४९, ७६। सभव है श्रीराम का जिन ऋक्षो ने रावण के विरुद्ध युद्ध मे साथ दिया था वे ऋक्ष पर्वत के ही निवासी थे।

ऋक्षवान = ऋक्ष

ऋक्षबिल

'विचिन्वतस्ततस्तत्र ददृशुर्विवृत बिलम, दुर्गमृक्षबिल नाम दानवेनाभिरक्षितम, क्षुत्पिपासापरीतास्तु श्रान्तास्तु सलिलार्थिन' वाल्मीकि० किष्किंधा 50, 6 7 8 सीता वेषण करते समय वानरो ने भूख प्यास से खिन्न होकर एक गुहा या बिल मे से जलपक्षियो का निकलते देखकर वहा पानी का अनुमान किया था। इसी गुहा का वाल्मीकि ने ऋक्षबिल कहकर वर्णन किया है। यही वानरो की स्वयप्रभा नामक तपस्विनी से भेट हुई थी। ऋक्षबिल अथवा स्वयप्रभागुहा का अभिज्ञान दक्षिण रेल के कल्यनल्लूर स्टेशन से आधा मील पर

स्थित पर्वत की 30 फुट गहरी गुफा से किया गया है। तुलसीरामायण मे भी इस गुहा का सुदर वर्णन है—'चढिगिरि शिखर चहूदिशि देखा, भूमिविवर इक कौतुक पेखा। चक्रवाक बक हस उडाही, बहुतक खग प्रविशहिं तेहि माही।' किष्किधाकाड। दे० स्वयप्रभा गुहा।

ऋजुपालिका = ऋजुकूल (बिहार)

इस नदी के तट पर बसे हुए जिम्भिक नामक ग्राम मे वैशाख शुक्ल दशमी के दिन जैन तीर्थंकर महावीर को अतर्ज्ञान अथवा कैवल्य की प्राप्ति हुई थी। दे० जिम्भक।

ऋतुमाला

कूर्मपुराण मे कृतमाला का नाम है। यह कावेरी की सहायक नदी है।

ऋषभ

(1) श्रीमद्भागवत 5, 19, 16 मे उल्लिखित एक पर्वत जिसका नामोल्लेख मैनाक, चित्रकूट और कूटक पर्वतो के साथ है—'मगलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूट ऋषभ कूटक विध्य शुक्तिमानक्षगिरि'। यह विध्याचल का ही किसी पहाड का नाम जान पडता है। ऋक्ष से यह भिन्न है क्योकि उपर्युक्त उद्धरण मे दोनो के नाम अलग अलग हैं। सभव है यह दक्षिण कोसल अथवा पूर्वविध्य की श्रेणिया का कोई पर्वत हो क्योकि ऋषभ नामक तीर्थ सभवत इसी प्रदेश मे था। ऋक्ष और ऋषभ भिन्न होते हुए भी एक ही भूभाग मे स्थित थे—यह भी अनुमानसिद्ध जान पडता है।

(2) दक्षिण कोसल का एक तीर्थ—'ऋषभतीर्थमासाद्य कोसलाया नराधिप' महा० वन 85, 10। इससे पूर्व के श्लोक मे नर्मदा और शोण के उद्भव पर वशगुल्म तीर्थ का उल्लेख है। इससे स्पष्ट है कि ऋषभ महाभारत के अनुसार अमरकटक की पहाडियो मे ही स्थित होगा। यह तथ्य रायगढ (म० प्र०) से तीस मील दूर स्थित उसभ नामक स्थान से प्राप्त एक शिला लेख से भी प्रमाणित होता है जिसमे उसभ का प्राचीन नाम ऋषभ दिया हुआ है। सभव है ऋषभपर्वत उसभ की निकटवर्ती पहाडियो मे ही स्थित होगा।

(3) वाल्मीकि रामायण युद्धकाड 74, 30 मे उल्लिखित कैलास के निकट एक पर्वत—'तत काचनमत्युग्रमृषभ पर्वतोत्तमम'। विष्णु पुराण 2, 2, 29 के अनुसार इसकी स्थिति मेरु के उत्तर की ओर है—'शखकूटोऽथ ऋषभो हसो नागस्तथापर'।

ऋषिक

चीनी तुर्किस्तान—सीक्याग—मे ऋषिको या यूचियो का देश जिस पर

अर्जुन ने अपनी दिग्विजय यात्रा में विजय प्राप्त की थी—'ऋषिकेष्वपि संग्रामो बभूवातिभयंकर' महा० सभा० 27, 26 दे० उत्तर ऋषिक।

ऋषिकुण्ड (बिहार)

भागलपुर से 28 मील पश्चिम की ओर स्थित है। कहा जाता है कि ऋष्यश्रृंग का आश्रम इसी स्थान पर था। यहां प्रति तीसरे वर्ष इनके नाम से मेला लगता है। श्रृंग ऋषि की कथा का उल्लेख, रामायण, महाभारत, पुराणों तथा बौद्ध जातकों में है—दे० श्रृंगऋषि, ऋषितीर्थ, श्रृंगेरी।

ऋषिकुल्या

(1) 'ऋषिकुल्या समासाद्य वासिष्ठं चैव भारत', 'ऋषिकुल्यां समासाद्य नरः स्नात्वा विकल्मषः' महा० वन, 84,48–49। महाभारत के इस प्रसंग में हिमालय के तीर्थों का वर्णन है। ऋषिकुल्या नदी को यहां भृगुतुंग के निकट प्रवाहित होने वाली सरिता बताया गया है (वन० 84,50)। भृगुतुंग केदारनाथ के निकट तुंगनाथ है। अनुमान है कि ऋषिकुल्या गढ़वाल के पहाड़ों में बहने वाली ऋषिगंगा है। भीष्म० 9,36 में भी ऋषिकुल्या का उल्लेख है—'कुमारीमृषिकुल्यां च मारिषां च सरस्वतीम्'।

(2) दक्षिणी उड़ीसा—कलिंग की एक नदी जो विंध्याचल के पूर्वी भाग की पहाड़ियों से निकल कर बंगाल की खाड़ी में गिरती है। श्रीमद्भागवत में इसका उल्लेख है—'महानदी वेदस्मृतिऋषिकुल्या त्रिसामाकौशिकी ' 5,19, 18। विष्णुपुराण 2,3 14 में ऋषिकुल्या को शुक्तिमान् पर्वत से निकलने वाली नदी कहा गया है—'ऋषिकुल्या कुमाराद्या शुक्तिमत्पादसंभवा'।

ऋषिगंगा (गढ़वाल, उ० प्र०)

गढ़वाल की पहाड़ियों में बहने वाली एक नदी जो संभवत महाभारत वन० 84 48–49 में उल्लिखित ऋषिकुल्या है।

ऋषिगिरि

'वैहारो विपुलः शैलो वराहो वृषभस्तथा, तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यकपंचमाः, एते पंच महाश्रृंगा पर्वताः शीतलद्रुमाः, रक्षन्तीवाभिसंहत्य संहतांगा गिरिव्रजम' महा० सभा० 21,2–3। महाभारत के अनुसार ऋषिगिरि गिरिव्रज या राजगृह वर्तमान राजगीर (बिहार) की पांच पहाड़ियों में से एक है (दे० गिरिव्रज)। वाल्मीकि रामायण में भी गिरिव्रज के पंचशैलों का वर्णन है—'एते शैलवराः पंच प्रकाशन्ते समन्ततः' बाल० 32,80। यहां इनके नाम नहीं दिए गए हैं। पालीसाहित्य में ऋषिगिरि को इसगिलि कहा गया है।

ऋषितीर्थ (गुजरात)

महसाणा तालुके में स्थित परसोडा ग्राम का प्राचीन नाम है। यह सुरसरि, झझरी, अमरवेलि और साबरमती नदियों का संगम है। कहते हैं कि विभांड के पुत्र शृगी ऋषि, रोमपाद की पुत्री शाता से विवाह करने के पश्चात यहीं आश्रम बनाकर रहते थे। किंतु शृगी का आश्रम ऋषिकुंड नामक स्थान पर भी माना जाता है जो बिहार में है—दे० शृगऋषि, शृगेरी।

ऋषितोया (काठियावाड, बबई)

पश्चिम रेल्वे के देलवाडा स्टेशन प्राचीन देवलपुर के निकट ऋषितोया नदी बहती है। यह स्थान तीर्थ रूप में ख्यातिप्राप्त है। ऋषितोया का स्थानीय रूप से मच्छुदी भी कहते हैं।

ऋषिपट्टन=इसीपत्तन (दे० सारनाथ)।

ऋषिभम्यगण (लका)

महावश, 20,46 में उल्लिखित अनुराधपुर के पास एक स्थान जहा समाट अशोक के पुत्र महेद्र का दह सस्कार किया गया था। पाली में इसे 'इसि भूमगा' कहा गया है।

ऋष्यमूक

वाल्मीकि-रामायण में वर्णित वानरों की राजधानी किष्किधा के निकट यह पर्वत स्थित था। यहीं सुग्रीव और राम की मैत्री हुई थी। सुग्रीव किष्किधा से निष्कासित होने पर अपने भाई बालि के डर से इसी पर्वत पर छिप कर रहता था। उसने सीता हरण के पश्चात् राम और लक्ष्मण को इसी पर्वत पर पहली बार देखा था—'तावृष्यमूकस्य समीपचारी चरन ददर्शाद्भुत दर्शनीयौ, शाखामगाणमधिपस्तरस्वी वितत्रसे नैव विचेष्टचेष्टाम' किष्किधा०, 1,128। अर्थात् ऋष्यमूकपर्वत के समीप भ्रमण करने वाले अतीव सुन्दर राम लक्ष्मण को वानरराज सुग्रीव ने देखा। वह डर गया और उनके प्रति क्या करना चाहिए, इस बात का निश्चय न कर सका। श्रीमदभागवत 5,19,16 में भी ऋष्यमूक का उल्लेख है—'सह्यादवगिरिऋष्यमूक श्रीशैल्य वकटो महेद्रो वारिधारो विंध्य'। तुलसीरामायण, किष्किधाकाड में ऋष्यमूक पर्वत पर रामलक्ष्मण के पहुचने का इस प्रकार उल्लेख है—'आगे चले बहुरि रघुराया, ऋष्यमूक पर्वत नियराया'। दक्षिण भारत में प्राचीन विजयनगर के खडहरों अथवा हपी में विरूपाक्ष मदिर से कुछ ही दूर पर स्थित एक पर्वत को ऋष्यमूक कहा जाता है। जनश्रुति के अनुसार यही रामायण का ऋष्यमूक है। मदिर को घेरे हुए तुगभद्रा नदी बहती है। ऋष्यमूक तथा तुगभद्रा के घेरे को चक्रतीर्थ

कहा जाता है। चक्रतीर्थ के उत्तर मे ऋष्यमूक और दक्षिण मे श्रीराम का मदिर है। मदिर के निकट सूय, सुग्रीव आदि की मूर्तिया हैं। प्राचीन किष्किधा-नगरी की स्थित यहा से दो मील दूर, तुगभद्रा के वामतट पर, अनागुदी नामक ग्राम मे मानी जाती है।

एकचक्खु

एकचक्खु एक चक्षु या एकचक्रा का तद्भव रूप है। सिंहल के बौद्ध इतिहास ग्रथ (3,14) मे दी हुई वशावली के अनुसार यहा का अतिम राजा पुरिदद था।

एकचक्रा

महाभारत मे एकचक्रा को पचालदेश मे स्थित बताया गया है। द्रौपदी-स्वयवर के लिए जाते समय पाडव एकचक्रा नगरी म पहुचे थे—'एव स तान् समाश्वास्य व्यास सत्यवती सुत, एकचक्रामभिगत कुतीमाश्वासयत् प्रभु' आदि० 155,11। वकासुर का वध भीम ने इसी नगरी मे रहते हुए किया था—दे० आदि० 156। सभव है एकचक्रा, अहिच्छत्र का ही दूसरा नाम हो। परिवक्रा या परिचक्रा जिसे शतपथ ब्राह्मण (13,5,4,7) म पचाल की एक नगरी कहा गया है, एकचक्रा ही जान पडती है—दे० वैदिक इडेक्स 1,494।

एकनाल

राजगह की पहाडिया के दक्षिण मे बसा हुआ ब्राह्मणो का ग्राम (सयुत्त-निकाय, 1, पृ० 172)। यहा बौद्ध विहार बनवाया गया था।

एकपवतक

'गडकी च महाशोण सदानीरा तथैव च, एकपवतके नद्य क्रमेणैत्याव्रज-न्तते' महा० सभा० 20,27। अर्थात् कृष्ण, अर्जुन और भीम इद्रप्रस्थ से गिरिव्रज (मगध, बिहार) जाते समय गडकी, महाशोण, सदानीरा एव एकपवतक की सब नदियो का पार करते हुए आगे बढे। इससे, एकपवतक उस प्रदेश का नाम जान पडता है जिसमे उपयुक्त नदिया बहती थी, अर्थात् बिहार-उत्तरप्रदेश का सीमावर्ती भाग (गडकी=गडक, महाशोण=सोन, सदानीरा=राप्ती)।

एकलिंग (जिला उदयपुर, राजस्थान)

उदयपुर से बारह मील पर स्थित है। मेवाड के राणाओ के आराध्यदेव एकलिंग महादेव का मेवाड के इतिहास मे बहुत महत्व है। मेवाड के सस्थापक बप्पारावल ने एकलिंग की मूर्ति की प्रतिष्ठापना की थी। कहा जाता है कि डूगरपुरराज्य की ओर से मूल बाणलिंग के इद्रसागर मे प्रवाहित किए जाने पर वतमान चतुमुखी लिंग की स्थापना की गई थी। एकलिंग भगवान को

साक्षी मानकर मेवाड के राणाओ ने अनेक बार ऐतिहासिक महत्व के प्रण किए थे । जब विपत्तियो के थपडो से महाराणा प्रताप का धैय टूटने जा रहा था तब उन्होने अकबर के दरबार मे रहकर भी राजपूती गौरव की रक्षा करने वाले बीकानेर के राजा पृथ्वीराज को, उनके उद्बोधन और वीरोचित प्रेरणा स भरे हुए पत्र के उत्तर मे जो शब्द लिखे थे वे आज भी अमर हैं—'तुरक कहासी मुखपतो, इणतण सू इकलिंग, ऊगै जाही ऊगसी प्राची बीच पतग' (प्रताप के शरीर रहते एकलिंग की सौगध है, बादशाह अकबर मेरे मुख से तुक ही कह लाएगा । आप निश्चित रह, सूय पूव मे ही उगेगा') ।

एकशालिगर दे० वारगल

एकशिलानगर का अपभ्रश है । यह वारगल का प्राचीन सस्कृत नाम है जिसका उल्लेख रघुनाथ भाम्कर के कोश म है ।

एकशिला=एकशिला नगर=एकशिलापादन दे० वारगल

वारगल के सस्कृत नाम हैं जिनका उल्लेख रघुनाथ भास्कर के कोश मे है।

एकसाल

वाल्मीकि-रामायण के अनुमार भरत ने केकय देश स अयोध्या आते समय अयोध्या के पश्चिम की ओर इस स्थान पर स्थाणुमती नदी का पार किया था, 'एकसाले स्थाणमतीं विनते गोमती नदी, कलिगनगरं चापि प्राप्य सालवन तदा' —अयोध्या० 71,16 । बौद्धसाहित्य (सयुत्त० 1, पृ० 111) मे इसे कोसल देश का एक ब्राह्मणा का ग्राम बताया गया है, जहा बुद्ध न मार को विजित किया था ।

एकाम्रकानन=भुवनेश्वर

मूलत उत्कल का एक वन था जो प्राचीन काल मे शिव की उपासना का केंद्र था ।

एकोपल=एकोपलपुरम्=एकोपलपुरी दे० वारगल

वारगल के प्राचीन सस्कृत नाम हैं।

एटा (उ० प्र०)

इसे पृथ्वीराज चौहान के सरदार राजा सग्रामसिंह ने बसाया था । इसने एटा मे एक सुदृढ मिटटी का दुग बनवाया था जिसके खडहर आज भी मौजूद हैं ।

एरण्डपल्ली

गुप्तसम्राट् समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे एरडपल्ली के राजा दमन के समुद्रगुप्त द्वारा पराजित होने का उल्लेख है— कौसलक महेन्द्र, महाकान्तार,

व्याघ्रराज, कौसलन मटराज, पैष्ठपुरक महेन्द्र, गिरिकोटट्टूरक स्वामिदत्त, एरड-पल्लक दमन प्रभृति सवदक्षिणपथराजाग्रहणमाक्षानुग्रहजनितप्रतापोन्मिश्र महा-भाग्यस्य '। इस नगर का अभिज्ञान ज़िला विज़िगापट्टम् (आ० प्र०) में स्थित इसी नामके स्थान के साथ किया गया है। पहले कुछ विद्वानो ने पूव खानदेश में स्थित एरडाल का ही एरडपल्ली मान लिया था। यह मत अब ग्राह्य नही है।

एरण्डी

नमदा की सहायक नदी जा बडौदा के क्षेत्र मे बहती है। दे० पदमपुराण, स्वगखण्ड, 9।

एरकिण=एरण।

एरछ (बुदेलखण्ड, म० प्र०)

मुगलकाल म इस स्थान पर एक दुग था यहा वीरछत्रसाल के पिता चपत-राय ने औरगजेब के जमाने मे मुगल सेनाओ से युद्ध करते हुए अपने ठहरने के लिए स्थान बनाया था। (दे० बुदेलखण्ड का सक्षिप्त इतिहास—गोरेलाल पुरोहित—पृ० 160)

एरण (जिला सागर, म० प्र०)

मडी-बामोरा स्टेशन से छ मील दूर है। इसका प्राचीन नाम एरकिण था। मौयकाल के पश्चात् एरकिण मे एक गणराज्य स्थापित हो गया था जैसा कि इस स्थान पर मिले कई सिक्को से प्रमाणित होता है। इन सिक्को पर बोधिवृक्ष व धमचक्र आदि के चिह्न हैं किंतु राजा का नाम अंकित नही है। गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त का एक प्रस्तर लेख (गुप्त सवत् 82=402 ई०) इस स्थान से प्राप्त हुआ है। इसमे इसे एरकिण कहा गया है। इसम समुद्रगुप्त की वीरता, उसकी रानी के पातिव्रत्य, सपत्तिभडार, पुत्र-पौत्रो सहित यात्राओ तथा शत्रुओ पर उसकी वीरोचित धाक का विशद वणन है। यह भी उल्लेख है कि समुद्रगुप्त ने यह लेख अपनी यशोवृद्धि के लिए अकित किया था। इस अभि-लेख के अतिरिक्त गुप्तवशीय महाराजाधिराज बुधगुप्त के शासनकाल का भी एक प्रस्तरलेख (195 गुप्त सवत=485 ई०) एरण से प्राप्त हुआ है। अभिलेख के अनुसार महाराज सुरश्मिचद्र का शासन इस समय कालिंदी और नमदा के मध्यवर्ती प्रदेश मे था। लेख एक स्तभ पर खुदा है जिसे विष्णु का ध्वजास्तभ कहा गया है। इसका निर्माण महाराज मातृविष्णु तथा उसके छोटे भाई धन्य-विष्णु ने करवाया था। एरण से एक और स्तभलेख प्राप्त हुआ है। इसकी तिथि गुप्तसवत् 191=510 ई० है। यह महाराज भानुगुप्त के अमात्य गोप-राज के विषय मे है जो इस स्थान पर भानुगुप्त के साथ किसी शायद किसी युद्ध

म आया था और वीरगति को प्राप्त हुआ था। उसकी पत्नी यही सती हो गई थी। एरण से हूण महाराजाधिराज तोरमाण के समय का एक अन्य अभिलेख भी प्राप्त हुआ है। यह वराह की मूर्ति के ऊपर उत्कीर्ण है। इसमे महाराज मातृविष्णु के छोटे भाई धन्यविष्णु द्वारा वराह भगवान का मदिर बनवाए जाने का उल्लेख है। एरकिण गुप्तकाल मे अवश्य ही महत्वपूर्ण नगर रहा होगा। इसको एक लेख मे स्वभोगनगर भी कहा गया है। यह नाम शायद समुद्रगुप्त ने एरण को दिया था। स्थानीय जनश्रुति के अनुसार इस स्थान पर महाभारत-काल मे विराटनगर की स्थिति थी। आज भी अनेक प्राचीन खडहर यहा बिखरे पडे हैं। पिछले वर्षों मे सागरविश्वविद्यालय ने यहा उत्खनन द्वारा अनेक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यो का उद्घाटन किया है।

एरिम्राके

लेटिन भाषा के भौगोलिक ग्रथ 'पेरिप्लस' मे उल्लिखित स्थान जो कुछ विद्वानो के मत म 'अपरातिक' का लेटिन रूपातर है। रायचौधरी (पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एशेंट इडिया—पृ० 406) के अनुसार यह वराहमिहिर की बृहत्सहिता मे उल्लिखित अयक भी हो सकता है।

एरिकामेड (मद्रास)

पुरातत्वसबधी अनेक प्राचीन अवशेष इस स्थान से उत्खनन द्वारा प्रकाश मे आए हैं। मृत्भाडो के खडो स सूचित होता है कि प्रथम द्वितीय शती ई० मे इस स्थान का रोम से काफी बढाचढा व्यापार था। रोम मे बनी कई वस्तुए यहा के अवशेषो मे मिली हैं।

एलगदाल (जिला करीम नगर, आ० प्र०)

जफरद्दौला ने 1754 ई० मे यहा एक किले का निर्माण किया था। इसके भीतर मसजिद की एक मीनार हिलाने से डोलने सी लगती है।

एलजिपुर दे० एलिचपुर।

जैन ग्रथो मे एलिचपुर को एलजिपुर कहा है—'एलजिपुर कारजा नयर धनवन्त लोक वसति' प्राचीन तीर्थमालासग्रह 1, 114।

एलागिरि

इलौरा का एक सस्कृत नाम।

एलिचपुर (बरार, महाराष्ट्र)

अमरावती के उत्तर मे स्थित मध्यकाल का प्रसिद्ध नगर। दिल्ली के सुलतान अलाउद्दीन खिलजी ने 1294 ई० मे देवगिरि पर आक्रमण करते समय 8000 घुडसवारो के साथ एलिचपुर को घेर लिया था। एलिचपुर उस समय

देवगिरि के राजा रामचंद्र के राज्य मे था और महाराष्ट्र की सीमा पर स्थित था। देवगिरि के विश्वासघातियो की सहायता से जीतने के पश्चात् देवगिरि नरेश से जो अलाउद्दीन ने सधि की उसमे एलचपुर को उसने अपनी वहा रखे जाने वाली सेना के व्यय के लिए माग लिया था। दे० एलजिपुर।

एलिफेंटा (महाराष्ट्र)

ओपालो वदर, ववई से समुद्र मे सात मील उत्तरपूर्व की ओर एक छोटा-सा द्वीप है। इसका व्यास लगभग साढे चार मील है। यहा दो पहाडिया हैं जिनके बीच मे एक सकीण घाटी है। द्वीप का प्राचीन नाम धारापुरी है। एहाड अभिलेख मे पुल्केशिन द्वितीय द्वारा विजित जिस पुरी का उल्लेख है वह हीरानद शास्त्री के मत म यही स्थान है (दे० ए गाइड टु एलिफेंटा—पृ० 8)। पुर्तगाल के यात्री वॉन लिसकोटन के 'डिस्कोस ऑव वायेजेज' नामक ग्रथ से सूचित होता है कि 16वी शती मे (1579 ई० के लगभग) यह द्वीप पोरी अथवा पुरी नाम से प्रसिद्ध था। द्वीप की पहाडिया मे 5वी 6ठी शती ई० म वनी हुई और पहाडियो के पाश्व मे तराशी हुई पाच गुफाएँ हैं। इनमे हिंदू-धम से सबधित अनेक मूर्तिया, विशेषकर, शिव की मूर्तिया गुप्तकालीन कला के अन्यतम उदाहरण हैं। एलिफेंटा म भगवान शकर के कई लीलारूपो की मूर्तिकारी, एलौरा और अजता की मूर्तिकला के समकक्ष ही है। महायोगी, नटश्वर, भैरव, पार्वती-परिणय, अधनारीश्वर, पार्वतीमान, कैलासधारी रावण, महेशमूर्ति शिव तथा त्रिमूर्ति यहा के प्रमुख मूर्तिचित्र हैं। त्रिमूर्ति जिसका चिह्न भारत के डाक टिकट पर है—वास्तव मे शिव के ही तीन विविधरूपो की मूर्ति है न कि त्रिदेवो की। नटराज शिव के मुख पर परिवतनशील ससार की उपस्थिति मे जिस सतुलित, शात तथा सयत भावना की छाप है वह गुप्तकालीन मूर्तिकला की प्रख्यात विशिष्टता है। यहा की मुख्य गुफा तथा पाश्ववर्ती कक्षो मे अजता के अनुरूप भित्ति चित्रकारी भी थी किंतु अब वह नष्ट हो गई है। पुतगालियो ने इसका उल्लेख भी किया है। एलिफेंटा पर 16वी शती मे बबई तट पर बसने वाले पुतगालियो का अधिकार था। इन कलाशून्य व्यापारियो ने इस द्वीप की सुदर गुफाओ का गोशालाओ, चारा रखने के गोदामो, यहा तक कि चादमारी के लिए प्रयोग करके इनका कलावैभव नष्टप्राय कर दिया। 16वी शती ई० तक राजघाट नामक स्थान पर हाथी की एक विशाल मूर्ति अवस्थित थी। इसी कारण पुतगालियो ने द्वीप को एलिफेंटा का नाम दिया था (दे० धाराद्वीप)।

एलौरा दे० इलौरा

एल्लय कुंटा (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

इस स्थान पर श्री रामचद्रजी के कई प्राचीन मदिर हैं जो किंवदंती के अनुसार उनके दडकारण्य के निवासकाल के स्मारक हैं।

एषुकारिभक्त

पाणिनि अष्टाध्यायी 4,2,54। यह शायद वर्तमान हिसार (पजाब) है।

एहोड़ (जिला बीजापुर, मसूर)

बादामी (वातापी) के निकट बहुत प्राचीन स्थान है। 634 ई० के चालुक्य नरेश पुलकेशिन् द्वितीय के समय म अकित एक अभिलेख एहोड स प्राप्त हुआ है। यह प्रशस्ति के रूप म है और सस्कृत-काव्य परपरा म लिखित है। इसका रचयिता रविकीर्ति है। इसमे कवि ने कालिदास और भारवि के नामो का भी उल्लेख किया है—'यनायाजि नवेश्म स्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेश्म स विजयता रविकीर्ति कविताश्रित कालिदासभारवि कीर्ति'। इस अभिलेख म तिथि इस प्रकार दी हुई है—'पचाशत्सुकलौ काले षटसु पचशती सु च, समासु समतीतासु शकानामपि भूभुजाम्',। इससे 556 शकसवत =634 ई० प्राप्त होता है। इस प्रकार महाकवि कालिदास और भारवि का समय, 634 ई० के पूर्व सिद्ध हो जाता है। इस अभिलेख म पुलकेशिन द्वारा अभिभूत लाट, मालव, और गुजर देश के राजाओ का उल्लेख है। एहोड म गुप्तकालीन कई मदिरो के भग्नावशेष हैं। दुर्गा के मदिर मे पाचवी शती ई० की नटराज शिव की मूर्ति है। 450 ई० के चार मदिरो के अवशेष भारत के सर्वप्राचीन मदिरो के अवशेषो मे से है। इनपर शिखर नही है। इनमे से लाडखान नामक मदिर वर्गाकार है। इसकी छत स्तभो पर टिकी हुई है। ये स्तभ तीन वर्गों मे, जो एक दूसरे के भीतर बने है, वि यस्त हैं। केंद्रीय चार स्तभो के ऊपर आधृत सपाट छत अपने चतुर्दिक ढालू छत के ऊपर शिखर की भाति उठी हुई दिखाई देती है और यह निचली छत स्वय एक दूसरी ढालू छत के ऊपर निकली हुई है जो सबसे बाहर के वर्ग पर छायी हुई है। मदिर के एक किनारे पर एक मडप है और इससे दूसरे किनारे पर मूर्ति स्थान है। श्री हनरी कजिन्स आर्कियालॉजिकल रिपोर्ट 1907–8 म लिखते हैं 'यह मदिर अपनी विशालता, रचना की सरलता, नक्शे और वास्तुकला के विवरण, इन सब बातो मे गुफा मदिरो से बहुत मिलता जुलता है'। इस मदिर की दीवारें साधारण दीवारो के समान नही है। वे स्तभो और उनकी योजक जालीदार खिडकियो सहित पतली भित्तियो से बनी हैं। सपाट छत और उस पर उत्सेध (elevation) का अभाव गुफाओ की कला से ही सबधित है। किंतु इससे भी अधिक समानता

तो भारी वर्गाकार स्तभो और उनके शीर्षों के कारण दिखाई देती है। उपर्युक्त दुर्गा के मन्दिर का नक्शा बौद्ध चैत्य मदिरो की ही भाति है, केवल धातुगर्भ के बजाय इसमे मूर्तिस्थान बना हुआ है। बौद्ध चैत्या की भाति ही इसमे भी स्तभो की दो पक्तियाद्वारा मदिर के भीतर का स्थान मध्यवर्ती शाला तथा दा पार्श्ववर्ती वीथियो द्वारा विभक्त किया गया है। मदिर पत्थर का बना हुआ है इस लिए मेहराबो के लिए छतो मे स्थान नही है किंतु शिखर का आभास चैत्य सरचना की भाति ही बीच की छत ऊँची तथा पार्श्व की छतें नीची तथा कुछ ढलवा हान से होता है। स्तभा के ऊपर छत के भराव पर अनेक मूर्तिया तथा पर्णावलि आदि अकित हैं जो गुफा मदिरो के स्तभो के ऊपरी भाग पर की गई रचना से बहुत मिलती जुलती हैं (उदाहरणार्थ अजता गुफा स० 26)।

ऐरावतवर्ष

'उत्तरेण तु शृगस्य समुद्रान्ते जनाधिप, वर्षमैरावत नाम तस्माच्छृगमत परम, न तत्र सूर्यस्तपति न जीर्यन्ते च मानवा' महा० भीष्म 8,10-11, दे० शृगवान।

ऐलधान

वाल्मीकिरामायण मे इस स्थान का उल्लेख भरत की केकय देश से अयोध्या की यात्रा के प्रसग मे है—'एलधाने नदी तीर्त्वा प्राप्य चापरपर्वतान शिलामाकुर्वन्ती तीर्त्वाऽग्नेय शल्यकर्षणम्' अयोध्या०, 71,3। इससे ठीक पूर्व 71,2 मे उल्लिखित शतद्रु या सतलज ही उपर्युक्त उद्धरण मे वर्णित नदी जान पड़ती है। ऐल्धान इसी के तट पर स्थित कोई ग्राम होगा।

ओंकार मांधाता (जिला खडवा, म० प्र०)

खडवा के निकट नर्मदा नदी मे एक पहाडी द्वीप है। यह स्थान प्राचीन काल से ही तीर्थ के रूप मे प्रख्यात है। इसे ओकारेश्वर और मांधाता भी कहते हैं। जनश्रुति है कि राजा मांधाता ने इस द्वीप मे शिव की आराधना की थी। द्वीप नर्मदा और उसकी एक उपधारा—कावेरी—से घिरा है। इसका आकार आकार (प्रणव) के समान है जो सभवत इसके नामकरण का कारण है। इसके आस पास अनेक छोटे मोटे तीर्थस्थल हैं। मांधाता को अमरेश्वर भी कहते हैं। स्कदपुराण रेवाखड 28,133 मे इसका वर्णन है। अमरेश्वर की शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगो मे गणना है। यह स्थान पश्चिम रेल्वे के अजमेर खडवा मार्ग पर ओकारेश्वर स्टेशन से सात मील दूर है।

ओंगोल (जिला गतूर, मद्रास)

इस स्थान के आसपास प्रागैतिहासिक काल के विशेषकर पाषाणयुगीन पत्थर के उपकरण तथा हथियार प्राप्त हुए हैं जिनकी खोज अनेक वर्ष पूर्व ब्रूसफुट नामक विद्वान् ने की थी।

ओघवती

कुरुक्षेत्र की एक नदी जिसका उल्लेख महाभारत में है। दुर्योधन को भीम ने ओघवती के तट पर गदायुद्ध में आहत किया था। पृथूदक इसी नदी के तट पर स्थित था। महाभारत अनुशासन० 2 में वर्णित पौराणिक कथा के अनुसार अग्निपुत्र सुदर्शन की सती पत्नी ही ओघवती के रूप में परिणत हो गई थी—'एषा हि तपसा स्वेन संयुक्ता ब्रह्मवादिनी, पावनार्थं लोकस्य सरिच्छ्रेष्ठा भविष्यति, अर्धेनौघवती नाम त्वामर्धेनानुयास्यति' अनुशासन 2,83-84।

ओजद्वीप

महावंश *15,64,65* । *लंका का प्राचीन पौराणिक नाम।*

ओड्र=उड्र

'चीनान्‍ह्यवास्तथा चौड्रान बर्बरान वनवासिन' महा० सभा० 52,53।

ओडगांव (उडीसा)

खुर्दा रोड स्टेशन से पचास मील पर स्थित है। यहां नयागढ़ नरेश कृष्ण-चंद्र देव ने श्री रघुनाथ जी का भव्य मंदिर बनवाया था। कहा जाता है कि वनवासकाल में राम लक्ष्मण यहां आए थे और एक चंदन के वृक्ष के नीचे उन्होंने रात्रि व्यतीत की थी। यहां शबर लोगों का निवास है।

ओड़छा (बुंदेलखंड, म० प्र०)

किंवदंती के अनुसार मध्यकाल में यहां पड़िहार राजपूतों का राज्य था और उन्होंने अपनी राजधानी यहीं बनाई थी। चंदेलों के परास्त होने पर ओड़छा भी श्रीहीन हो गया किंतु बुंदेलों का प्रभुत्व स्थापित होने पर राजा रुद्रप्रताप ने पुनः एक बार ओड़छा को राजधानी बनाकर उसकी श्रीवृद्धि की। वे ही वर्तमान ओड़छा के बसाने वाले माने जाते हैं। उन्होंने सोमवार 3 अप्रैल 1531 ई० में इस नगर को पुनः बसाया था। यहां के किले को बनने में आठ वर्ष लग गए थे। इनके पुत्र और उत्तराधिकारी भारतीचंद्र के समय ही में ओड़छा के महल बनकर तैयार हुए थे (1539 ई०)। इसी वर्ष राजधानी भी गढ़कुंडार से पूरी तरह से ओड़छा में ले आई गई थी। अकबर के समय यहां के राजा मधुकर शाह थे जिनके साथ मुगल सम्राट ने कई युद्ध किए थे। जहांगीर ने वीरसिंहदेव बुंदेला को जो ओड़छा राज्य की बड़ौनी जागीर के स्वामी थे पूरे ओड़छा राज्य की गद्दी दी थी। वीरसिंहदेव ने ही अकबर के शासनकाल

मे जहागीर के कहने से अकबर के विद्वान दरबारी अबुलफजल की हत्या करवा दी थी। शाहजहा ने बुन्देला से कई असफल लडाइया लडी किंतु अत म जुझारसिंह को ओडछा का राजा स्वीकार कर लिया गया। बुन्देलखण्ड की लोक कथाओ का नायक हरदौल वीरसिंहदेव का छोटा पुत्र एव जुझारसिंह का छोटा भाई था। औरगजेब क राज्यकाल मे छत्रसाल की शक्ति बुन्देलखड मे बढी हुई थी। ओडछा की रियासत वतमानकाल तक बुदेलखड मे अपना विशेष महत्त्व रखती आई है। यहा के राजाओ ने हिंदी के कवियो को सदा प्रश्रय दिया है। महाकवि केशवदास वीरसिंहदेव क राजकवि थे।

ओडछे म जिन पुरानी इमारतो के खडहर हैं, उनम मुख्य हैं—जहागीर-महल जिसे वीरसिंहदेव ने जहागीर के लिए बनवाया था यद्यपि जहागीर इस महल म वीरसिंहदेव के जीवनकाल मे कभी न ठहर सका, केशवदास का भवन, प्रवीण राय का भवन (प्रवीण राय, वीरसिंह देव के दरबार की प्रसिद्ध गायिका थी जिसकी केशवदास ने अपने ग्रथो मे बहुत प्रशसा की है)।

ओतनपुरी = ओदतपुरी

ओदतपुरी (जिला पटना, बिहार)

वतमान बिहार नामक नगर का प्राचीन नाम। इस उद्दडपुर भी कहते थे। इसकी प्रसिद्धि का कारण था यहा का बौद्धविहार और तत्सबद्ध महाविद्यालय। आदतपुरी के विहार और विद्यालय की स्थापना बगाल के प्रथम पाल-नरेश गोपाल (730-740 ई०) ने की थी। अनुवर्ती पालराजाओ ने इस विहार तथा महाविद्यालय को अनेक दान दिए थे। इसके समृद्धिकाल मे यहा एक सहस्र विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। यहा दूर दूर से विद्यार्थीगण शिक्षा पाने के लिए आते थे। यहा का सवप्रमुख विद्यार्थी दीपकर था जो बाद मे विक्रमशिला महाविद्यालय का प्रधान आचाय बना और जिसने तिब्बत जाकर वहा लामा सस्था की स्थापना की। 13वी शती के प्रारभ में मुसलमानो के बिहार पर आक्रमण के समय यहा का विहार और विद्यालय नष्ट हो गए। बिहार बगाल म ओदतपुरी के लगभग समकालीन अन्य महाविद्यालय नालन्दा, विक्रमपुर, विक्रमशिला, जगद्दल और ताम्रलिप्ति मे थे।

ओनकदेव दे० ऊनकेश्वर

ओपानी

209 गुप्तसवत् = 528 ई० के एक अभिलेख म जो खोह (म० प्र०) से प्राप्त हुआ है, इस ग्राम का उल्लेख है (दे० खोह)।

प्रोफीर (केरल)

प्राचीन यहूदी साहित्य म सम्राट सुलेमान (प्राय 1000 ई० पू०) के भज हुए व्यापारिक जल्यानो का दक्षिण भारत के इस बदरगाह मे आने-जाने का वणन मिलता है। इसका अभिज्ञान त्रिवेंद्रम के दक्षिण म स्थित पुवार नामक ग्राम से किया गया है।

पोरारार (जिला गाडा, उ० प्र०)

श्रावस्ती मे गौतमबुद्ध के समय मे एक धनी व्यापारी की स्त्री विशाखा न अपार धनराशि खच करके पूवरमा नामक विहार बनवाया था। जेतवन क खडहर से एक मील दक्षिण की ओर एक ढूह है जिसे आजकल आरारार कहत हैं जो सभवत पूवरमा विहार के ही स्थान पर है।

प्रोपधिप्रस्थ

कुमारसभव म वर्णित हिमालय का नगर जहा पावती के पिता की राजधानी थी। शिव के कहने से सप्तर्षि पावती की मगनी के समय ओपधि प्रस्थ आए थे—'तत्प्रयातौपधिप्रस्थ सिद्धय हिमवत्पुरम्, महाकोशीप्रपातेऽस्मिन सगम पुनरेव न, ते चाकाश मसिश्यामभुत्पत्य परमपय, आसेदुरोपधिप्रस्थमन सामनरहस । अलकामतिवाह्यैव वसति वसुसम्पदाम, स्वर्गाभिष्य दवमन कृत्वे वोपनिवेशितम। गगास्रोत परिक्षिप्त वप्रान्तज्वलितौषधि, बृहन् मणिशिलासाल गुप्तावपिमनोहरम। जितसिंह भयानागा यत्राश्वा बिलयोनय, यक्षा किंपुरपा पौरा योषिता वनदेवता। यत्र स्फटिक हर्म्येषु नक्तमापान भूमिषु, ज्योतिषा प्रतिबिंबानि प्राप्नुव त्युपहारताम्। यत्रौषधि प्रकाशेन नक्त दर्शित सचरा, अनभिज्ञास्तमिस्राणा दुर्दिनेष्वभिसारिका। सतानकतरुच्छाया सुप्तविद्याधराध्व-गम, यस्य चोपवन वाह्य गधवद गधमादनम'—कुमारसभव 6,33 36 37 38-39 42-43 46। कालिदास के वणन से जान पडता है कि यह नगर हिमालय के क्रोड मे स्थित तथा गगा की धारा से परिवेष्टित था तथा गधमादन पवत इस नगर के बाहर उपवन के रूप मे स्थित था। इस नगर मे ओपधियो के प्रकाश से रात मे भी उजाला रहता था। सभव है यह नगर वतमान बदरीनाथ के निकट स्थित हो। कालिदास के वणन मे कविकल्पना का वैचित्र्य होने से नगर का वणन बडा अदभुत जान पडता है। यह नगर अलका स भिन्न था जसा कि ऊपर उद्धृत 6,37 से स्पष्ट है। बदरीनाथ के निकटस्थ पहाडो मे आज भी ओपधिया प्रचुरता से पाई जाती है। गगा की निकटता जिसका उल्लेख कवि न किया है, इस नगर की स्थिति की सूचक है।

ओसयां (जिला उस्मानाबाद, महाराष्ट्र)

एक प्राचीन किला जिसे शायद बीजापुर के सुलतानों ने बनाया था, यहां का उल्लेखनीय स्मारक है। यह वर्गाकार बना हुआ है। इसके चारों ओर दो परकोटे और एक खाई है। किले में एक विशाल तोप रखी है जिस पर निजामशाह का नाम अंकित है। यहां के प्राचीन भवन अधिकांश में खंडहर हो गए हैं। एक अनोखे भूमिगत भवन के विस्तीर्ण खंडहर भी मिले हैं जिसकी लंबाई 76 फुट और चौड़ाई 50 फुट है। इसकी छत एक विशाल हौज की तली है। औरंगजेब की दक्षिण की सूबेदारी के समय बनी हुई एक ममजिद भी यहां है। इस आशय का एक लेख इस पर उत्कीर्ण है। जामामसजिद बीजापुर की वास्तुशैली में निर्मित है।

ओसिया (जिला जोधपुर, राजस्थान)

जोधपुर नगर से 32 मील उत्तर पश्चिम की ओर स्थित है। ओसिया में 9वीं शती से 12वीं शती ई० तक के स्थापत्य की सुंदर कृतियां मिलती हैं। प्राचीन देवालयों में शिव, विष्णु, सूर्य, ब्रह्मा, अर्धनारीश्वर, हरिहर नवग्रह, कृष्ण तथा महिषमर्दिनी देवी आदि के मंदिर उल्लेखनीय हैं। ओसिया की कला पर गुप्तकालीन शिल्प का पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है। ग्राम के अंदर जैन तीर्थंकर महावीर का एक सुन्दर मन्दिर है जिसे वत्सराज (770-800) ने बनवाया था। यह परकोट के भीतर स्थित है। इसके तोरण अतीव भव्य हैं तथा स्तंभों पर तीर्थंकरों की प्रतिमाएं हैं। यहीं एक स्थान पर 'सं० 1075 आषाढ सुदि 10 आदित्यवार स्वातिनक्षत्रे' यह लेख उत्कीर्ण है और सामने विक्रमसंवत 1013 की एक प्रशस्ति भी एक शिला पर खुदी है जिससे ज्ञात होता है कि यह मंदिर प्रतिहार नरेश वत्सराज के समय में बना था तथा 1013 वि० सं०=956 ई० में इसके मंडप का निर्माण हुआ था। निकटवर्ती पहाड़ी पर एक और मंदिर विशाल परकोटे से घिरा हुआ दिखाई पड़ता है। यह सचियादेवी या शिलालेखों की सच्चिकादेवी से संबंधित है जो महिषमर्दिनी देवी का ही एक रूप है। यह भी जैन मंदिर है। मूर्ति पर एक लेख 1234 वि० सं० का भी है जिससे इसका जैन धर्म से संबंध स्पष्ट हो जाता है। इस काल में इस देवी की पूजा राजस्थान के जैन सम्प्रदाय में अन्यत्र भी प्रचलित थी। इस विषय का ओसिया नगर से संबंधित एक वादविवाद, जैन ग्रंथ उपकेश गच्छ पट्टावलि में वर्णित है (उपकेश-ओसिया का संस्कृत रूप है)। इसी मंदिर के निकट कई छोटे बड़े देवालय हैं। इसके दाईं ओर सूर्यमंदिर के बाहर अर्धनारीश्वर शिव की मूर्ति, सभा मंडप की छत में वंशीवादक तथा गोवर्धन कृष्ण

की मूर्तिया उकेरी हुई है। गोवधन लीला की यह मूर्ति राजस्थानी कला की अनुपम कृति मानी जा सकती है। ओसिया से जोधपुर जाने वाली सडक पर दोनो ओर अनक प्राचीन मदिर है। इनमे त्रिविक्रमरूपी विष्णु, नृसिंह तया हरिहर की प्रतिमाए विशेष रूप मे उल्लेखनीय है। कृष्ण लीला स सबधित भी अनेक मूर्तिया हैं। स्थानीय प्राचीन अभिलेखो स सूचित होता है कि ओसिया के कई नाम मध्ययुग तक प्रचलित थे, जो ये ह—उकेश, उपकेश, अकेश आदि। किवदन्ती है कि इसको प्राचीन काल मे मेल्पुरपत्तन तथा नवनेरी भी कहते थे। ओसवाल जैनो का मूल स्थान ओसिया ही है।

ओहिंद दे० उदभाण्डपुरी

औंधा (*जिला परभनी, महाराष्ट्र*)

पूर्ना हिंगोली रेल माग के चोडी स्टेशन से आठ मील पर स्थित है। नागनाथ के मदिर के कारण यह स्थान प्रख्यात है। कहा जाता कि मदिर को किसी पाडवनरेश ने अपार धन लगाकर बनवाया था। मदिर भारत के द्वादश ज्योतिर्लिंगो मे से है। इसका नक्शा चालुक्य मदिरो की भाति ही है अर्थात् आधार तारावृति है और बीच मे एक बडा वर्गाकार मडप है जिसके आगे उत्तर, दक्षिण, और पश्चिम की ओर द्वारमडप बने हुए है। देवगृह या पूजा स्थान पूर्व की ओर है। द्वारमडप की छत के आधार अतीव सुदर नक्काशीदार अष्ट कोण स्तभ हैं। देवगृह के द्वारो पर तथा उनके मडपो पर भी बारीक नक्काशी है। भवन के बाहरी की ओर भी चालुक्यशैली मे अत्य त कलापूण तक्षण शिल्प दिखाई देता है। इसम उत्कीर्ण मूर्तियो की अनुप्रस्थ तथा उदग्रपट्टिया हैं जिनके बीच बीच म सादी नक्काशी रहित पट्टिया हैं। हलेबिड के मदिर की मूर्तिकला से इस मदिर की मूर्तिकारी की समानता स्पष्ट दिखाई देती है।

औमी दे० अनोमा

औरगाबाद (महाराष्ट्र)

इस नगर की स्थापना मलिक अबर ने 1610 ई० मे की थी। नगर के लिए जल की व्यवस्था इसी बुद्धिमान् मत्री न की थी। इसके अवशेष आज भी द्रष्टव्य हैं। तत्कालीन पवनचक्की और सत्रह जलप्रणालियो मे स अभी तक कई काम मे आती है। पास ही औरगजेब के गुरु बाबाशाह मुसाफिर की दरगाह एक मसजिद और सराय स्थित हैं। मलिक अबर के समय का नौखडा महल और काली मसजिद अन्य ऐतिहासिक स्मारक हैं। लालमसजिद जिसका निर्माण उत्तर मुगल काल मे हुआ था, लाल पत्थर की बनी है। औरगजेब की बेगम रबिया दुर्रानी का मकबरा या बीबी का मकबरा ताजमहल की असफल अनुकृति है। यह 1650

और 1657 ई० के बीच बना था। गबद के कुछ भाग शुद्ध श्वेत संगमरमर के बने हैं। बीबी के मकबरे से एक मील उत्तर पश्चिम की ओर द्वितीय शती ई० से सातवीं शती ई० के बीच बनी हुई कई गुफाए हैं। इनका वास्तुशिल्प तथा मूर्तिकला अजता की भाति ही है किंतु चित्रकारी अब नष्ट हो गई है। गुफा स० 3 मे एक नक्काशीदार भित्तिगड पर सुतनाम जातक की कथा मूर्तिकारी के रूप मे अकित है जो अजता की गुफा स० 17 के चित्र से अधिक स्पष्ट है। इसी प्रकार गुफा स० 3 म गौतमबुद्ध के सम्मुख स्थित भक्तो का अकन बहुत ही भावपूर्ण और स्वाभाविक ढग से किया गया है। मूर्तिया मानवाकार हैं और जीवित प्रतीत होती हैं। उनके वस्त्र थोडे है किंतु कलात्मक ढग से पह-नाए गए हैं। स्त्रियो का केशकलाप तथा अग विन्यास मोहक तथा कलात्मक है। इसी प्रकार भिक्षुओं की जटाओ के जूडे भी स्वाभाविक ढग से अकित किए गए हैं। पद्मपाणि की मूर्ति अपने कलापूर्ण सौंदर्य मे अजता या इलोरा या भारत मे अन्यत्र पाई जाने वाली मूर्तियो मे श्रेष्ठ कही जा सकती है। इसी गुफा म नृत्य का वह दृश्य जिसम बीच मे बौद्ध देवी तारा तथा उसके चतुर्दिक तीन अन्य स्त्रिया अकित हैं इलोरा की गुफा स० 16 के नटराज की तुलना मे अधिक फीका नही जान पडता।

कक

विष्णुपुराण के अनुसार शाल्मली द्वीप का एक पर्वत—'कक स्तु पचम षष्ठो महिष सप्तमस्तथा' विष्णु० 2,4,47।

ककावती

काठियावाड (गुजरात) के उत्तर पश्चिमी भाग—हालार मे बहने वाली एक नदी।

ककोट=कनकवती

कचनपल्ली=कचन पारा (जिला नदिया, बगाल)

कल्याणी मे कई मील दूर चैतन्य महाप्रभु के भक्त तथा उनके समकालीन सेन शिवानद (जिन्हें चैतन्य ने कविकणपूर की उपाधि दी थी) का निवास स्थान है। कहते हैं चैतन्य इस स्थान पर शिवानद से मिलने आए थे। शिवानद तीन प्रसिद्ध ग्रथो के लेखक थे—चैतन्यचरितामृतकाव्य, चैतन्य चद्रोदय नाटक और गौरागो-द्देश्य दीपिका। इन्ही के प्रभाव से 15वीं शती मे कचनपल्ली म वैष्णव साहित्य का प्रसिद्ध केंद्र बन गया था। जनश्रुति के अनुसार कचनपल्ली का मूलनाम नरहट्टग्राम था। कचनपल्ली बगाल के ख्यातनामा विद्वान् नीमचद्र शिरोमणि और तुलसी रामायण के बगालीअनुवादक हरिमोहन गुप्त का भी जन्मस्थान है।

कचनपारा=कचनपल्ली ।

कचनपुर

प्राचीन जैनलेखकों ने कलिंग (दक्षिण उडीसा) के कचनपुर नामक नगर का उल्लेख किया है (दे० इडियन एटिक्वेरी 1891, पृ० 375) । जैन सूत्रप्रज्ञापणा में कचनपुर का नाम कई उपनगरों के नाम के साथ दिया गया है (दे० कलिंग) ।

कडनसेरी (जिला त्रिचूर, केरल)

छत्राकार प्रस्तरों (umbrella stones) के प्राचीन अवशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है । इन पाषाणों का अभिज्ञान अभी तक अनिश्चित है ।

कतनगर (जिला दीनाजपुर, बगाल)

नौविमानों वाले एक भव्य मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है । यह मदिर मध्ययुगीन है ।

कदवा (जिला वाराणसी, उ० प्र०)

काशी से लगभग छ मील उत्तर पश्चिम स्थित इस ग्राम में कर्दमेश्वर का मध्यकालीन सुदर मदिर है । इसकी शिल्पकला अत्युत्कृष्ट है । मदिर के बाहरी भाग पर अनेक देव मूर्तियाँ हैं ।

कदहार (जिला नादेड, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर कदहार नरेश सोमदेव का बनाया हुआ अतिप्राचीन दुर्ग है । मालखेड के राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय ने इस दुर्ग का विस्तार करवाया था और कदहारपुर के स्वामी की उपाधि ग्रहण की थी । दुर्ग में मुहम्मद तुगलक, इब्राहीम आदिलशाह और औरगजेब के समय के अभिलेख हैं । इसके भीतर कई तुर्की तोपें भी रखी है जिन पर उनके निर्माताओं के नाम खुदे हैं । जामा मसजिद पर इब्राहीम आदिलशाह और निजामशाह के अभिलेख हैं । कदहार में प्राचीन जन-बौद्ध या जैन मदिर भी हैं ।

कधार (अफगानिस्तान)

कधार प्राचीन सस्कृत गधार का ही रूपातरण है ।

कपिलराष्ट्र=काम्पिल्य राष्ट्र दे० काम्पिल्य

कपिला दे० काम्पिल्य

कपिल्लनगर दे० काम्पिल्य

कबुज (1) दे० कांबोज ।

(2) हिंदचीन का प्राचीन हिंदू उपनिवेश जिसे कबोडिया कहा जाता है । इसकी स्थापना 7वीं शती के पश्चात हुई थी और तत्पश्चात 700 वर्षों तक कबुज के वैभव तथा ऐश्वर्य का युग रहा । कबोडिया की एक प्राचीन लोककथा

में आयदेश या भारत के राजा स्वायंभुव द्वारा कंबुज राज्य की स्थापना का वर्णन है। यहां का सर्वप्रथम ऐतिहासिक राजा श्रुतवर्मन था जिसने इस देश को फूनान के शासन से मुक्त करके एक स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। यहाँ की तत्कालीन राजधानी श्रेष्ठपुर में थी जिसका नामकरण कंबुज के द्वितीय राजा श्रेष्ठवर्मन के नाम पर हुआ था। इसकी स्थिति वर्तमान लाओस में वाटफू पहाड़ी (बसाक के निकट) के परिवर्ती प्रदेश में थी। इस पहाड़ी पर, जिसका प्राचीन नाम लिंगपर्वत था, भद्रेश्वर शिव का मंदिर स्थित था। ये कंबुज नरेशों के इष्टदेव थे।

कंबुपुरी

कंबुज या कंबोडिया (दक्षिण पूर्व एशिया) की एक नगरी जो 889 ई० में अभिषिक्त हिंदू राजा यशोवर्मन की राजधानी थी। यशोवर्मन् ने इस नगरी का नाम बदलकर यशोधरपुर कर दिया था। नगरी के निकट यशोधरगिरि — वर्तमान फनामबाखेन — के शिखर पर राजप्रासाद बनवाया गया था। यह नगरी अंगकोर सभ्यता के पूरे उत्कर्षकाल में कंबुजदेश की राजधानी बनी रही।

कंबोज

प्राचीन संस्कृत साहित्य में कंबोज देश या यहाँ के निवासी कांबोजों के विषय में अनेक उल्लेख हैं जिनसे जान पड़ता है कि कंबोज देश का विस्तार स्थूलरूप से कश्मीर से हिंदूकुश तक था। वंशब्राह्मण में कंबोज औपमन्यव नामक आचार्य का उल्लेख है। वाल्मीकि रामायण बाल० 6,22 में कंबोज, वाह्लीक और वनायु देशों के श्रेष्ठ घोड़ों का अयोध्या में होना वर्णित है—'काम्बोज विषये जातै-र्बाह्लीकैश्च हयोत्तमैः वनायुजैर्नदीजैश्च पूर्णाहरिहयोत्तमैः'। महाभारत सभा० के अनुसार अर्जुन ने अपनी उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में दर्दरों या दर्दिस्तान के निवासियों के साथ ही कांबोजों को भी परास्त किया था—'गृहीत्वा तु बलं सारं फाल्गुनः पांडुनंदनः, दरदान् सह काम्बोजैरजयत् पाकशासनिः' सभा० 27,23। शांति० 207 43, अंगुत्तरनिकाय 1,213, 4,252, 256 261 और अशोक के पांचवें शिलालेख में कंबोज का गंधार के साथ उल्लेख है। महाभारत शांति० 207,43 और राजतरंगिणी 4,163-165 में कंबोज की स्थिति उत्तरापथ में बताई गई है। महाभारत द्रोण० 4 5 में कहा गया है कि कर्ण ने राजपुर पहुंचकर कांबोजों को जीता, जिससे राजपुर कंबोज का एक नगर सिद्ध होता है—'कर्ण राजपुरं गत्वा काम्बोजानिर्जितास्त्वया'। कनिंघम के अनुसार राजपुर कश्मीर में स्थित राजौरी है (एंशेंट ज्याग्रेफी आफ इंडिया, पृ० 148) कालिदास ने रघुवंश में रघु के द्वारा कांबोजों की पराजय का उल्लेख किया है

कचनपारा=कचनपल्ली।

कचनपुर

प्राचीन जैनलेखकों ने कलिंग (दक्षिण उडीसा) के कचनपुर नामक नगर का उल्लेख किया है (दे० इडियन एटिक्वेरी 1891, पृ० 375)। जैन मूलप्रज्ञापणा मे कचनपुर का नाम कई उपनगरो के नाम के साथ दिया गया है (दे० कलिंग)।

कडनसेरी (जिला त्रिचूर, केरल)

छत्राकार प्रस्तरो (umbrella stones) के प्राचीन अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। इन पाषाणो का अभिनान अभी तक अनिश्चित है।

कतनगर (जिला दीनाजपुर, बगाल)

नौविमानो वाले एक भव्य मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। यह मदिर मध्ययुगीन है।

कदवा (जिला वाराणसी, उ० प्र०)

काशी से लगभग छ मील उत्तर पश्चिम स्थित इस ग्राम मे कदमेश्वर का मध्यकालीन सुदर मदिर है। इसकी शिल्पकला अत्युत्कृष्ट है। मदिर के बाहरी भाग पर अनेक देव मूर्तिया हैं।

कदहार (जिला नादड, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर कदहार नरेश सोमदेव का बनाया हुआ अतिप्राचीन दुग है। माल्खेड के राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण तृतीय ने इस दुग का विस्तार करवाया था और कदहारपुर के स्वामी की उपाधि ग्रहण की थी। दुग मे मुहम्मद तुगलक, इब्राहीम आदिलशाह और औरगजेब के समय के अभिलेख हैं। इसके भीतर कई तुर्की तोपें भी रखी है जिन पर उनके निर्माताओ के नाम खुदे हैं। जामा मसजिद पर इब्राहीम आदिलशाह और निजामशाह के अभिलेख हैं। कदहार मे प्राचीन जन-बौद्ध या जैन मदिर भी हैं।

कधार (अफगानिस्तान)

कधार प्राचीन सस्कृत गधार का ही रूपातरण है।

कपिलराष्ट्र=कापिल्य राष्ट्र दे० कापिल्य

कपिला दे० कापिल्य

कपिल्लनगर दे० कापिल्य

कबुज (1) दे० कावोज।

(2) हिंदचीन का प्राचीन हिंदू उपनिवेश जिसे कबोडिया कहा जाता है। इसकी स्थापना 7वीं शती के पश्चात हुई थी और तत्पश्चात 700 वर्षों तक कबुज के वैभव तथा ऐश्वय का युग रहा। कबोडिया की एक प्राचीन लोककथा

मे आयदेश या भारत के राजा स्वायम्भुव द्वारा कबुज राज्य की स्थापना का वणन है। यहा का सवप्रथम ऐतिहासिक राजा श्रुतवमन था जिसने इस देश को फूनान के शासन से मुक्त करके एक स्वतत्र राज्य स्थापित किया। यहाँ की तत्कालीन राजधानी श्रेष्ठपुर मे थी जिसका नामकरण कबुज के द्वितीय राजा श्रेष्ठवमन् के नाम पर हुआ था। इसकी स्थिति वतमान लाओस मे वाटफू पहाडी (वसाक के निकट) के परिवर्ती प्रदेश मे थी। इस पहाडी पर, जिसका प्राचीन नाम लिगपवत था, भद्रेश्वर-शिव का मदिर स्थित था। य कबुज नरेशो क इष्टदेव थे।

कबुपुरी

कबुज या कबोडिया (दक्षिण पूव एशिया) की एक नगरी जो 889 ई० म अभिषिक्त हिन्दू राजा यशोवमन की राजधानी थी। यशोवमन् ने इस नगरी का नाम बदलकर यशोधरपुर कर दिया था। नगरी क निकट यशोधरगिरि—वत मान फनोमबाखेन—के शिखर पर राजप्रासाद बनवाया गया था। यह नगरी अगकोर सम्यता के पूरे उत्कषकाल मे कबुजदेश की राजधानी बनी रही।

कबोज

प्राचीन सस्कृत साहित्य मे कबोज देश या यहाँ के निवासी कबोजो के विषय मे अनेक उल्लेख हैं जिनसे जान पडता है कि कबोज देश का विस्तार स्थूलरूप से कश्मीर से हिंदूकुश तक था। वशब्राह्मण म कबोज औपम यव नामक आचाय का उल्लेख है। वाल्मीकि रामायण बाल० 6,22 मे कबोज, वाल्हीक और वनायु देशो के श्रेष्ठ घोडो का अयोध्या मे होना वर्णित है—'काबोज विषय जातै-र्बाल्हीकैश्च हयोत्तमै वनायुजैर्नदीजैश्च पूर्णाहरिहयोत्तमै'। महाभारत सभा० के अनुसार अजन ने अपनी उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे ददरो या दर्दिस्तान के निवासियो के साथ ही काबोजों को भी परास्त किया था—'गृहीत्वा तु बल सार फाल्गुन पाडुनदन, दरदान् सह काम्बोजैरजयत पाकशासनि सभा० 27,23। शाति० 207 43, अगुत्तरनिकाय 1,213, 4,252, 256 261 और अशोक के पाचवें शिलालेख म कबोज का गधार के साथ उल्लेख है। महाभारत शाति० 207,43 और राजतरगिणी 4,163-165 मे कबोज की स्थिति उत्तरापथ मे बताई गई है। महाभारत द्रोण० 4,5 म कहा गया है कि कण ने राजपुर पहुचकर काबोजो को जीता, जिसस राजपुर कबोज का एक नगर सिद्ध होता है—'कण राजपुर गत्वा काम्बोजानिर्जितास्त्वया'। कनिघम के अनुसार राजपुर कश्मीर मे स्थित राजौरी है (एशेंट ज्योग्रेफी ऑफ इडिया, पृ० 148) कालिदास ने रघुवश मे रघु के द्वारा काबोजो की पराजय का उल्लेख किया है

—'काम्बोजा समरे सोढु तस्य वीयमनीश्वरा, गजालान परिक्लिष्टैरक्षोटै साधमानता' रघु० 4,69। इस उद्धरण मे कालिदास ने कबोजदेश मे अखरोट वृक्षो का जो वणन किया है वह बहुत समीचीन है। इससे भी इस देश की स्थिति कश्मीर मे सिद्ध होती है। युवानच्वाग ने भी राजपुर का उल्लेख किया है (दे० युवानच्वाग, भाग 1, पृ० 284)। वैदिककाल मे कबोज आय सस्कृति का केंद्र था जैसा कि वश ब्राह्मण के उल्लेख से सूचित होता है, किंतु कालातर म जब आयसभ्यता पूव की ओर बढती गई तो कबाज आय सस्कृति स बाहर समभा जाने लगा। यास्क और भूरिदत्तजातक (कॉवेल 6,110) मे कबोजा के प्रति अवमान्यता के विचार प्रकट किए गए हैं। युवानच्वाग न भी काबाजो को असस्कृत तथा हिंसात्मक प्रवृत्तिया वाला बताया है। कबोज के राजपुर, नदिनगर (दे० लूडस, इसक्रिपशस, 176, 472) और राइसडेवीज के अनुसार द्वारका नामक नगरो का उल्लेख साहित्य मे मिलता है। महाभारत मे कबाज के कई राजाओ का वणन है जिनमे सुदशन और चद्रवमन मुख्य है। कौटिल्य अथशास्त्र में कबाज के 'वार्ताशस्त्रोपजीवी' (खेती और शस्त्रो स जीविका चलाने वाले) सघ का उल्लेख है जिससे ज्ञात होता है कि मौयकाल से पूव यहा गणराज्य स्थापित था। मौयकाल में चद्रगुप्त के साम्राज्य में यह गणराज्य विलीन हो गया होगा।

ककुत्स्था दे० इरावती (2)

ककुद्मती=कोयन (महाराष्ट्र)

इस नदी का उदगम महाबलेश्वर की पहाडियो में है। पुराणो के अनुसार ककुदमती ब्रह्मा के अश से सभूत है। ककुद्मती कृष्णा सगम पर करहाड या प्राचीन करहाटक बसा हुआ है।

ककुदमान

विष्णुपुराण के अनुसार शाल्मलद्वीप का एक पवत—'ककस्तु पचम षष्ठो महषि सप्तमस्तथा, ककुद्मानपवतवर सरिन्नामानि मे शृणु' विष्णु० 2,4,27।

ककुभग्राम=कहोम (कहाव) (जिला दवरिया, उ० प्र०)

इस ग्राम मे गुप्तवशीय महाराजाधिराज स्कदगुप्त के समय (गुप्तसवत 141=460 ई०) का एक स्तभ लेख प्राप्त हुआ था। यह जैन अभिलेख है जिसे भद्र नामक व्यक्ति ने जैन तीथकरो की मूर्तियो की प्रतिष्ठापना के लिए ककुभग्राम—वतमान कहोम—मे अकित करवाया था। ये आदिकर्तृ अथवा तीथकरो की प्रतिमाए अभिलेख वाले स्तभ पर उकेरी हुई हैं। स्तभ के निकट एक ताल है जहा सात फुट ऊची बुद्ध की मूर्ति स्थित थी। (टि०—ककुभ का पाठ अभिलेख मे ककुम भी हो सकता है।)

कच्छ

महाभारत में उल्लिखित है। यह कच्छ की खाड़ी का तटवर्ती प्रदेश है जिसका दूसरा नाम अनूप भी था। शिशुपालवध काव्य 3,80 में कच्छ-भूमि का उल्लेख है—'आसेदिर लावणसैन्धवीना चमूचरै कच्छ भुवा प्रदेश'। आगे 3, 81 में यहां श्रीकृष्ण के सैनिकों का लवगपुष्पों की माला से विभूषित होने, नारियल का पानी पीने और कच्ची सुपारियां खाने का ललित वर्णन है—'लवगमालाकलितावतसास्त नारिकेलान्तरप पिबन्त, आस्वादितार्द्रक्रमुका समुद्रादभ्यागतस्य प्रतिपत्तिमीयु'।

कच्छकघाट (लका)

महावश 10, 58। यह वर्तमान महागवाट है।

कच्छेश्वर दे० कोटेश्वर

कछवा (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

यह ग्राम चदेलकालीन वास्तु अवशेषों के लिए उल्लेखनीय है।

कजगल

राजमहल (बगाल) का प्राचीन नाम। युवानच्वाग के यात्रावृत्त के अनुसार हर्षकाल में (६३० ई० के लगभग) यहां एक स्वतत्र राज्य था किंतु यह महाराज हर्ष के प्रभाव के अतगत था क्योंकि चीनी यात्री के वर्णन में इस बात का भी उल्लेख है कि अपनी पूर्वी देशों की विजय के लिए की गई यात्रा में हर्ष ने कजगल में राजसभा की थी। कजगल के कजुगिरि, काकजोल आदि नाम भी उपलब्ध हैं। मध्ययुग में इसे अगमहल भी कहा जाता था।

कजुगिरि दे० कजगल

कटक

उड़ीसा की मध्ययुगीन राजधानी जिसे पद्मावती भी कहते थे। यह नगर महानदी और उसकी शाखा काठजूड़ी के सगम पर बसा हुआ है। इसे 941 ई० में केसरीवशीय नरेश नृपति केशरी ने बसाया था। कालक्रम में मुसलमानों और मराठों के शासन के अतगत रहकर 1803 ई० में कटक अंग्रेजों के अधिकार में आ गया। कटक के पास विरूपा नदी भी है जिस पर प्राचीन बाध निर्मित है। कटक का दुर्ग बहुत पुराना है किंतु अब यह मिट्टी का ढूह मात्र रह गया है। नगर से एक मील पर काठजूड़ी के तट पर अनग भीमदेव के बनाए हुए बारह बाटी नामक दुर्ग के खडहर हैं। यह राजा गगवशीय था। इसने अपने शासनकाल में, 1180 ई० में इस किले को बनवाया था। जगन्नाथपुरी के वर्तमान मदिर का निर्माता भी यही कहा जाता है। १८२५ ई० तक कटक के

आदिमवासियो मे नरबलि की प्रथा प्रचलित थी । 1871 ई० तक जुआगजाति के आदिम निवासी यहा रहते थे ।

कटकबनारस=वाराणसी कटक

कटचपुर (जिला वारगल, आ० प्र०)

कटचपुर भील के दक्षिणी तट पर 13वी शती के दो मदिर है जो ककातीय-नरेशो के शासनकाल मे निर्मित हुए थे । इनका निर्माण कणाश्म या ग्रेनाइट पत्थर से हुआ है । कलाशैली की दृष्टि से ये मदिर घनपुर, हनुमकाडा और रामप्पा के मदिरो के अनुरूप है ।

कटनीनाला=निमल नदी (जिला पीलीभीत, उत्तर प्रदेश) दे० विसालपुर

कटाक्ष=कटास, कटासराज

कटारमल (जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

अल्मोडे से 10 मील दूर है । यहा सूय का प्राचीन मदिर है जो पहाड की चोटी पर है । सूय की मूर्ति पत्थर की है और बारहवी शती ई० की कला कृति मानी जाती है । सूय को कमलासीन अकित किया गया है । उसके सिर पर मुकुट तथा पीछे प्रभामडल है । मदिर के विशालमडप मे अनेक मूर्तिया है । मदिर वास्तुकला की दृष्टि से तो महत्त्वपूण है ही, साथ ही उत्तरभारत का शायद यह अकेला ही सूयमदिर है जहा सूय की पूजा आज भी प्रचलित है ।

कटास, कटासराज (पजाब, पाकिस्तान)

खेवडा से तेरह मील दूर है । किवदती है कि यहा पाडवो ने अपने अज्ञात वास मे कुछ दिन निवास किया था । यहा एक अथाह कुड है जो तीथ रूप म मान्य था । कहा जाता है गुरुगोरखनाथ ने भी कुछ दिन रहकर यहा आराधना की थी । इसका सस्कृत नाम कटाक्ष कहा जाता है । यहा के कुड को पृथ्वी का नेत्र अथवा कटाक्ष माना जाता है ।

कटाह=कडार=केडा (मलाया)

मलयप्रायद्वीप मे स्थित । सुवणद्वीप के शैलेंद्र राजाओ की राजनैतिक शक्ति का केंद्र ग्यारहवी शती ई० मे इसी स्थान पर था । यही स वे श्रीविजय (सुमात्रा) की कई छोटी रियासतो तथा मलयद्वीप पर राज करते थे । 11वी शती के प्रारभिक वर्षो (लगभग 1025 ई०) मे दक्षिण-भारत के प्रतापी राजा राजेंद्रचोल ने शैलेंद्र नरेश पर आक्रमण करके उसके प्राय समस्त राज्य को हस्तगत कर लिया । इस समय कटाह या कडार पर भी चोलो का आधिपत्य हो गया था । राजेंद्र चोल की मृत्यु के पश्चात शैलेंद्र राजाओ ने अपन राज्य को पुन प्राप्त करने के लिए प्रयत्न किया किंतु वीर राजेंद्र चोल (*1063 1070*

ई०) ने दुबारा कडार को जीत लिया किंतु शैलेंद्रराज के आधिपत्य स्वीकार करने पर इस नगर को उसे ही वापस कर दिया। कटाह प्राचीन हिंदू नाम था, कडार और कड्डा इसके विकृत रूप हैं।

कटेहर

रुहेलखंड (उ० प्र०) का मध्ययुगीन नाम जो इस इलाके में 11वीं शती में राज्य करने वाले कटहरिया राजपूतों के कारण पड़ा था।

कठगणराज्य

प्राचीन पंजाब का प्रसिद्ध गणराज्य। कठ लोग वैदिक आर्यों के वंशज थे। कहा जाता है कि कठोपनिषद् के रचयिता तत्वदर्शी विद्वान इसी जाति के रत्न थे। अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के समय (327 ई० पू०) कठगणराज्य रावी और व्यास नदियों के बीच के प्रदेश या माझा में बसा हुआ था। कठ-लोगों के शारीरिक सौंदर्य और अलौकिक शौर्य की ग्रीक इतिहास लेखकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। अलक्षेंद्र के सैनिकों के साथ ये बहुत ही वीरतापूर्वक लड़े थे और सहस्रों शत्रुयोद्धाओं को इन्होंने धराशायी कर दिया था जिसके परिणामस्वरूप ग्रीक सैनिकों ने घबरा कर अलक्षेंद्र के बहुत कहने-सुनने पर भी व्यास नदी के पार पूर्व की ओर बढ़ने से साफ इनकार कर दिया था। ग्रीक लेखकों के अनुसार कठों के यहां यह जातिप्रथा प्रचलित थी कि वे केवल स्वस्थ एवं बलिष्ठ संतान को ही जीवित रहने देते थे। ओने सीक्रीटोस लिखता है कि वे सुंदरतम एवं बलिष्ठतम व्यक्ति को ही अपना शासक चुनते थे। पाणिनि ने भी कठों का कठ या कथ नाम से उल्लेख किया है (2,4, 20) (टि०—कथ शब्द कालांतर में संस्कृत में 'मूर्ख' के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा)। महाभारत में जिस क्राथ नरेश को कौरवों की ओर से युद्ध में लड़ता हुआ बताया गया है वह शायद कठजाति का ही राजा था—'रथीद्विपस्थेन हतोऽपतच्छरैः क्राताधिप पर्वतजेन दुर्जय' (दे० राय चौधरी—'पालिटिकल हिस्ट्री ऑव एंशेंट इंडिया'—पृ० 202)।

कडार=कटाह

वर्तमान केडडा (मलाया) दे० कटाह।

कड़वाहा (ज़िला ग्वालियर, म० प्र०)

प्राचीन नाम कदवगुहा। मध्यकाल (10वीं शती के पश्चात तथा 16वीं से पूर्व) में बने हुए लगभग बारह मंदिरों के लिए यह स्थान प्रसिद्ध है। ये ग्राम के चारों ओर एक मील के घेरे में स्थित हैं। इनमें से एक शिवालय आज भी अच्छी अवस्था में है और मध्ययुगीन कला का श्रेष्ठ उदाहरण है। कड़वाहा

मे एक प्राचीन विहार के खडहर प्राप्त हुए हैं और यहा के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि यह विहार या मठ मत्तमयूर नामक शैव साधुओ के लिए बनवाया गया था। इस सप्रदाय की मध्यकाल मे काफी लोकप्रियता प्राप्त थी जैसा कि मध्यप्रदेश मे प्राप्त इनके बहुसख्यक मठो और अभिलेखो से सूचित होता है।

कडा (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

प्रयाग से चालीस मील पर स्थित है। कहा जाता कि इस स्थान पर जह्नु ऋषि का आश्रम था जैसा कि वहा से आधी मील पर स्थित जाह्नवीकुड से सूचित होता है। मुसल्मानों के शासन काल मे कडा एक सूबे का मुख्य स्थान था। दिल्ली के सुल्तान जलालुद्दीन खिल्जी के समय मे उसका भतीजा एव दामाद अलाउद्दीन कडे का हाकिम था। कडा के ही निकट गगा को नाव से पार करते वक्त बूढे जलालुद्दीन को राज्यलोलुप अलाउद्दीन ने धोखे से मार दिया और उसका सिर वही पास किसी स्थान पर दफना दिया जिससे वह स्थान गुमसिरा कहलाया। दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद तुगलक न कडा के पास एक नया नगर स्वर्गद्वार नामक बसाया था। दोआबे म भयकर अकाल पडने पर वह वहा जाकर रहने लगा। यही वह अनेक भूखे लोगो को बसाने के लिए ले गया और उन्हे अयोध्या से अन्न मगवाकर बाटा। मुगलो के शासनकाल मे भी कडे मे सूबेदार रहता था। सलीम (जहागीर) ने जब अकबर के विरुद्ध बगावत की थी तब वह कडा ही मे रहता था। कडे का प्राचीन किला उल्लेखनीय है। यह स्थान सत मलूकदास की जन्मभूमि के रूप मे भी प्रसिद्ध है। (टि०—'अजगर करै न चाकरी पछी करै न काम, दास मलूका कह गए सबके दाताराम'—यह दोहा इन्ही मलूकदास का है।)

कडिया (जिला दरभगा, बिहार)

मिथिला के 9वी 10वी शती के प्रसिद्ध दार्शनिक उदयनाचार्य का जन्म-स्थान। इन्होने बौद्धदर्शन की आलोचना करके प्राचीन वैदिक शास्त्र के तथ्यो का प्रतिपादन किया था।

कणसव (जिला कोटा, राजस्थान)

इस स्थान से 738 ई० का एक महत्वपूर्ण अभिलेख प्राप्त हुआ था जिसका सबध मौर्यवशीय राजा धवल से है (इडियन एटिक्वेरी, 13,163, बबई गजेटियर, भाग 2, पृ० 284)। डाक्टर दे० रा० भटारकर के मत म यह राजा धवलप्पदेव ही है जिसका उल्लेख दबोक (मेवाड) के अभिलेख (लगभग 725 ई०) मे हुआ है। कणसव अभिलेख स सिद्ध होता है कि मगध के प्रसिद्ध मौर्यवश के

कुछ छोटे मोटे राजा, मौर्यवंश के पतन के पश्चात् भी पश्चिमी भारत में कई स्थानों पर राज्य करते रहे थे।

कण्णनूर (केरल)

इस स्थान का उल्लेखनीय स्मारक सेंट एंजिलो का दुर्ग अंग्रेजी राज्य के प्रारंभिक काल का अवशेष है। यहां उसी समय की बनी बारक तथा बारूद भरने के कोष्ठ अभी तक विद्यमान हैं।

कण्वाश्रम

(1) दे० मंडावर।

(2) महाभारत के अनुसार धर्मारण्य (गुजरात) में स्थित था। दे० धर्मारण्य।

कत्यूर

कुमायूं (उ० प्र०) का एक भाग जिसे कतूरिया भी कहते हैं। इसमें जिला अल्मोड़ा और निकटवर्ती प्रदेश शामिल हैं। कत्यूर मूलतः एक वंश का नाम था जिसका अल्मोड़े के प्रदेश पर बहुत दिनों तक राज्य रहा था (दे० अल्मोड़ा)। कत्यूर संभवतः कर्तृपुर का बिगड़ा हुआ रूप है। पाणिनि ने कत्रि नामक स्थान का अष्टाध्यायी 4,2,95 में उल्लेख किया है जो शायद कत्यूर या कर्तृपुर ही है। दे० कर्तृपुर।

कत्रि दे० कत्यूर

कदंब

महावंश 7,43। यहां लंका की वर्तमान मलवतुओय नामक नदी है। इसी नदी के तट पर भारत से लंका जाने वाले राजकुमार विजय के सामंत अनुराध ने अनुराधपुर नामक प्रसिद्ध नगर बसाया था जिसके खंडहर आज भी लंका के पर्यटकों का मुख्य आकर्षण हैं।

कदंबगुहा दे० कड़वाहा।

कदंबपुर=करमनूर (मद्रास)

त्रिशिरापल्ली या त्रिचनापल्ली से लगभग छः और श्रीरंगम् से तीन मील दूर यह प्राचीन वैष्णव तीर्थ है।

कदीरह (दे० बावनी)।

कनकगिरि (मैसूर)

मास्की के दक्षिण में स्थित है। हुल्ट्ज के मत में यह अशोक के लघु शिला लेख सं० 1 में उल्लिखित सुवर्णगिरि है। मौर्यशासनकाल में दक्षिणी प्रांत का शासन केंद्र सुवर्णगिरि ही में था।

कनकवती (ज़िला इलाहाबाद, उ० प्र०)=ककोट

कोसम-प्राचीन कौशांबी-से सोलह मील पश्चिम मे है। यहा यमुना और पैंसुनी नदी का सगम है।

कनखल (ज़िला सहारनपुर, उ० प्र०)

हरद्वार के निकट अति प्राचीन स्थान है। पुराणो के अनुसार दक्षप्रजापति ने अपनी राजधानी कनखल मे ही वह यज्ञ किया था जिसमे अपने पति शिव का अपमान सहन न करने के कारण, दक्षकन्या सती जल कर भस्म हो गई थी। कनखल मे दक्ष का मदिर तथा यज्ञ स्थान आज भी बने हैं। महाभारत मे कनखल का तीर्थरूप मे वर्णन है—'कुरुक्षेत्रसमागगा यत्र तत्रावगाहिता, विशेषो वैकनखले प्रयागे परम महत' वन० 85,88। 'एते कनखला राजनृषीणादयिता नगा, एषा प्रकाशते गगा युधिष्ठिर महानदी' वन० 135,5। मेघदूत म कालिदास ने कनखल का उल्लेख मेघ की अलका-यात्रा के प्रसग मे किया—'तस्माद् गच्छेरनुकनखल शैलराजावतीर्णा जह्नो कन्या सगरतनयस्वर्गसोपान-पक्तिम' पूर्वमेघ, 52। हरिवशपुराण मे कनखल को पुण्यस्थान माना है, 'गगाद्वार कनखल सोमो वै तत्र सस्थित', तथा 'हरिद्वारे कुशावर्ते नीलके भिल्लपर्वते, स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते'। मोनियर विलियम्स के सस्कृत-अग्रेजी कोश के अनुसार कनखल का अर्थ छोटा खला या गर्त है। कनखल के पहाड़ो के बीच मे एक छोटे-से स्थान मे बसा होने के कारण यह व्युत्पत्ति सार्थक भी मानी जा सकती है। स्कदपुराण मे कनखल शब्द का अर्थ इस प्रकार दर्शाया गया है—'खल को नाम मुक्ति वै भजत तत्र मज्जनात्, अत कनखल तीर्थ नाम्ना चक्रुर्मुनीश्वरा' अर्थात खल या दुष्ट मनुष्य को भी यहा स्नान से मुक्ति हो जाती है इसीलिए इसे कनखल कहते हैं।

कनगोर दे० कान्यकुब्ज।

कनडेलावोलु (आ० प्र०)

कुरनूल का प्राचीन नाम। कनडेलावोल का अर्थ है, गाडी के पहिये मे तेल डालने का स्थान। किंवदती है कि कुरनूल से आठ मील दूर एक विशाल मदिर बनाया जा रहा था, पत्थर ढोने वाली गाडियो के पहिया म तुगभद्रा के इस पार ठहर कर गाडी वाले तेल डालते थे जिससे इस स्थान का नाम कनडेलावोलु पड गया। कालातर म यहा बस्ती बन गई जिसका कनडेलावोलु का अपभ्रश-रूप कुरनूल नाम पड गया।

कनवा=खनवा

भरतपुर (राजस्थान) स 13 मील दक्षिण तथा फतहपुर सीकरी म लगभग

एक मील दूर वह प्रसिद्ध युद्ध-स्थली है जहां 1527 ई० में मेवाड के महाराणा संग्रामसिंह से बाबर का युद्ध हुआ था तथा जिसमें राजपूतों की पराजय हुई थी। राजपूतों की हार का एक कारण पंवार राजपूतों की सेना का ठीक युद्ध के समय महाराणा को छोडकर बाबर से जा मिलना था। इस युद्ध के पश्चात् बाबर के कदम भारत में पूरी तरह से जम गए जिससे भावी महान् मुगल-साम्राज्य की नींव पडी। कनवा के युद्ध के पूर्व बाबर ने अपने घबराए हुए सैनिकों को प्रोत्साहन देने के लिए एक जोशीला भाषण दिया था जो इतिहास में प्रसिद्ध है। कनवा की रणस्थली फतहपुर सीकरी के भवनों से दूर पर दिखाई देती है।

कनार=कर्णावती दे० जगमनपुर।

कनिष्कपुर (कश्मीर)

सम्राट् कनिष्क (120 ई०) का बसाया नगर जो स्टाइन और स्मिथ के अनुसार झेलम और बारामूला से श्रीनगर जाने वाली सडक पर श्रीनगर से दस मील दक्षिण की ओर स्थित कानिसपुर है। कनिंघम के मत में यह नगर श्रीनगर के निकट था। रायचौधरी का कहना है कि यह नगर आरा अभिलेख में उल्लिखित कनिष्क द्वारा बसाया गया था। बौद्ध अनुश्रुति के अनुसार पाटलिपुत्र से आए हुए प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान और कवि अश्वघोष को कनिष्क ने इसी नगर में ठहराया था।

कनैली (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

प्रयाग के दक्षिण में गंगा पार कर एक छोटा सा ग्राम है जहां स्थानीय किंवदंती के अनुसार श्रीरामचन्द्र जी ने अपनी वनवासयात्रा के मार्ग में कुछ समय विश्राम किया था। यह ग्राम सराय-आकिल के निकट है।

कनोगिजा दे० कान्यकुब्ज।

कनौज=कान्यकुब्ज।

कनौजा (जिला रायपुर, म० प्र०)

बिल्हरी के निकट। इस स्थान की गढमडला नरेश संग्रामसिंह (रानी दुर्गावती के श्वसुर, मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढों में गणना थी जिनके कारण यह प्रदेश गढमडला कहलाता था।

कन्नागर दे० कलिंगनगर।

कन्नौज दे० कान्यकुब्ज।

कन्यातीर्थ

(1) कान्यकुब्ज—'कन्यातीर्थेऽश्वतीर्थे च गवातीर्थे च भारत, कालकोट्या

वृषपृस्थे गिरावुष्य च पाडवा' महा० वन० 95, 3 ।

(2) कन्याकुमारी—'ततस्तीर समुद्रस्य कन्यातीर्थमुपस्पृशेत तत्रापस्पृश्य राजेन्द्र सवपापै प्रमुच्यत' महा० वन० 85,23 । कन्यातीर्थ सुदूर दक्षिण मे समुद्र तट पर स्थित कन्याकुमारी का ही नाम है । पद्मपुराण 38,23 मे भी कन्यातीर्थ का उल्लेख है। यहा का प्राचीन कुमारीदेवी का मदिर उल्लेखनीय है। पौराणिक कथा क अनुसार कुमारी दवी ने शिव की आराधना इस स्थान पर की थी। बाणासुर दैत्य को भी कुमारी ने इसी स्थान पर मारा था । कन्याकुमारी दक्षिण भारत के प्रायद्वीप की नोक पर स्थित है, यहा एक ओर से बगाल की खाडी का और दूसरी ओर से अरब सागर का जल हिंद महासागर से मिलता है ।

कन्यापुर=कान्यकुब्ज

कन्याह्रद

महाभारत अनुशासन० के अतगत तीर्थो के प्रसग मे कन्याह्रद का उल्लेख है । यह कन्यातीर्थ (1) का ही नाम है ।

कन्हेरी (उत्तरकोंकण, महाराष्ट्र)

पश्चिमरलवे के बोरीवली स्टेशन से एक मील पर कृष्णगिरि पहाडी म तीन प्राचीन गुहामदिर है जिनका सबध शिवोपासना से जान पडता है । एक गुफा मे अनेक मूर्तिया आज भी दखी जा सकती है । बोरीवली स्टेशन से पाच मील पर कन्हेरी है जो कृष्णगिरि पहाडी का एक भाग है। कन्हेरी शब्द कृष्णगिरि का अपभ्रश है । यहा 9वीं शती ई० की बनी हुई लगभग एक सौ नौ गुफाए ह पर उल्लेखनीय केवल एक ही है जो कार्ली के चत्य के अनुरूप बनाई गई है। इस चैत्यशाला मे बौद्ध महायान सप्रदाय की सुदर मूर्तिकारी है । गुफा की भित्तियों पर अजता के समान ही चित्रकारी भी थी जो अब प्रायः नष्ट हो चुकी है ।

कपित्थ

चीनी यात्री युवानच्वाग ने अपनी भारत यात्रा के वृत्तात म सकिसा या साकाश्य (जिला फरुखाबाद, उ० प्र०) का एक नाम कपित्थ भी बताया है । हर्षकालीन मधुवन ताम्रपट्टलेख मे भी कपित्थिका (=कपित्था, कपित्थ) का उल्लेख है । यह दानपट्ट इसी नगरी से प्रचलित किया गया था। इससे हर्षकालीन (606–636 ई०) शासन व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पडता है।

कपित्था=कपित्थिका=कपित्थ

कपिनी (मैसूर)

कावेरी की सहायक नदी । प्राचीन समय म दक्षिण भारत के पुनाडू राज्य

(5वीं या 6ठी शती ई०) की राजधानी कीर्तिपुर—वर्तमान बिस्तूर—इसी नदी के तट पर स्थित थी।

कपिल

(1) विष्णुपुराण में उल्लिखित एक पर्वत जिसकी स्थिति मेरु के पश्चिम में कही गई है—'शिखिवासा सवैडूर्य कपिलो गंधमादन जारुधि प्रमुखास्त द्वत्पश्चिम केसराचल' विष्णु० 2,2,28।

(2) विष्णुपुराण 2,4,36 के अनुसार कुशद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा ज्योतिष्मान के पुत्र के नाम पर कपिल कहलाता है।

कपिलवस्तु (नेपाल भारत सीमा के निकट)

जिला बस्ती (उ० प्र०) के उत्तरी भाग में पिपरावा नामक स्थान से नौ मील उत्तर-पश्चिम तथा रुमिनीदेई या प्राचीन लुंबिनी से पंद्रह मील पश्चिम की ओर मेमिराकोट के पास प्राचीन कपिलवस्तु की स्थिति बताई जाती है। इसी क्षेत्र में स्थित तिलौरा या तिरोराकोट को भी कुछ लोग कपिलवस्तु मानते हैं किंतु इन स्थानों पर अभी तक उत्खनन न होने के कारण इस विषय में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है। किंतु लुंबिनी का अभिज्ञान जिला बस्ती में नेपाल भारत सीमा पर स्थित ककराहा ग्राम से 13 मील उत्तर में वर्तमान रुमिनीदेई के साथ निश्चित होने के कारण कपिलवस्तु की स्थिति भी इसी के आसपास कुछ मील के भीतर रही होगी यह भी निश्चित समझना चाहिए।

गौतमबुद्ध के पिता शाक्यवंशी शुद्धोदन की राजधानी कपिलवस्तु में थी। सौंदरानंद-काव्य में महाकवि अश्वघोष ने कपिलवस्तु के बसाए जाने का विस्तृत वर्णन किया है जिसके अनुसार यह नगर कपिल मुनि के आश्रम के स्थान पर बसाया गया था। यह आश्रम हिमाचल के अंचल में स्थित था—'तस्य विस्तीर्णतपस पार्श्वे हिमवत शुभे, क्षेत्र चायतन चैव तपसामाश्रमोऽभवत' सौंदरानंद 1,5। तपस्वियों के निवासस्थान और तपस्या के क्षेत्र उस आश्रम में कुछ इक्ष्वाकु राजकुमार बसने की इच्छा से गए। 'तजस्विसदन तप क्षेत्र तमाश्रमम्, केचिदिक्ष्वाकवो जग्मु राजपुत्रा विवत्सव' सौंदरानंद 1,18। उन्होंने जिस स्थान पर निवास किया वह शाक या सागौन वृक्षों से ढका था इसलिए वे इक्ष्वाकु राजकुमार शाक्य कहलाए। एक दिन उनकी समृद्धि करने की इच्छा से जल का घड़ा लेकर मुनि आकाश में उड़ गए और राजपुत्रों से कहा—अक्षय जल के इस कलश से जो जलधारा पृथ्वी पर गिरे उसका अतिक्रमण न करके क्रम से मेरा अनुसरण करो। मुनि कपिल ने उस आश्रम की भूमि के चारों ओर जल की धारा गिराई और चौपड़ की तख्ती की तरह नक्शा बनाया और

उसे सीमाचिह्नों से सुशोभित किया। तब वास्तु-विशारदों ने उस स्थान पर कपिल के आदेशानुसार एक नगर बनाया। उसकी परिखा नदी के समान चौड़ी थी और राजपथ भव्य और सीधा था। प्राचीर पहाड़ों की तरह विशाल थी—जैसे वह दूसरा गिरिव्रज ही हो। श्वेत अट्टालिकाओं से उसका मुख सुंदर लगता था। उसके भीतर बाजार अच्छी तरह से विभाजित थे। वह नगर प्रसाद माला से घिरा हुआ ऐसा जान पड़ता था मानो हिमालय की कुक्षि हो। धनी, शांत, विद्वान् और अनुद्धत लोगों से भरा हुआ वह नगर किन्नरों से मंदराचल की भांति शोभायमान था। वहां पुरवासियों को प्रसन्न करने की इच्छा से राजकुमारों ने प्रसन्नचित्त होकर उद्यान नामक यश के सुंदर स्थान बनवाए। सब दिशाओं में सुंदर झीलें निर्मित कीं जो स्वच्छ जल से पूर्ण थीं। मार्गों और उपवनों में चारों ओर मनोरम, सुंदर, ठहरने के स्थान बनवाए गए जिनके साथ कूप भी थे (दे० सौंदरानंद, 1,24–28–29–32–33–41–42–43–48–49 50–51)। क्योंकि कपिल मुनि के आश्रम के स्थान पर वह नगर बसाया गया था अत: यह कपिलवस्तु कहलाया—'कपिलस्य च तस्यर्षेस्तस्मिन्नाश्रमवास्तुनि, यस्मात्तत्पुरं चक्रुस्तस्मात् कपिलवास्तु तत्' सौंदरानंद 1,57। सिद्धार्थ ने कपिलवस्तु में ही अपना बचपन बिताया था और सच्चे ज्ञान और सुख की प्राप्ति की लालसा से वे अपने परिवार और राजधानी को छोड़ कर चले गये थे। बुद्धत्व को प्राप्त करने पर वे अंतिम बार कपिलवस्तु आए थे और तब उन्होंने अपने पिता शुद्धोदन और पत्नी यशोधरा को अपने धर्म में दीक्षित किया था।

कपिलवस्तु अशोक (मृत्यु 232 ई० पू०) के समय में तीर्थ के समान समझा जाता था। अपने गुरु उपगुप्त के साथ सम्राट ने कपिलवस्तु की यात्रा की और यहां स्तूप आदि स्मारक बनवाए। किंतु शीघ्र ही इस नगर की अवनति का युग प्रारंभ हो गया और इसका प्राचीन गौरव घटता चला गया। इस अवनति का कारण अनिश्चित है। संभवत: कालप्रवाह में नेपाल की तराई के क्षेत्र में होने के कारण कपिलवस्तु के स्थान को घने वनों ने आच्छादित कर लिया था और इस कारण यहां पहुंचना दुष्कर हो गया होगा। चीनी यात्री फाह्यान (405–411 ई०) के समय तक कपिलवस्तु नगरी उजाड़ हो चुकी थी। केवल थोड़े से बौद्ध भिक्षु यहां निवास करते थे जो अपनी जीविका कभी कभी आ जाने वाले यात्रियों के दान में दिए गए धन से चलाते थे। यह भी उल्लेखनीय है कि फाह्यान के समय तक बौद्ध धर्म से घनिष्ठ रूप से संबंधित अन्य प्रमुख स्थान जैसे बोधिगया और कुशीनगर भी उजाड़ हो चले थे। वास्तव में बौद्धधर्म का अवनतिकाल इस समय प्रारंभ हो गया था। हर्ष के शासनकाल में प्रसिद्ध चीनी

पर्यटक युवानच्वांग ने कपिलवस्तु की यात्रा की थी (630 ई० के लगभग)। उसके वर्णन के अनुसार कपिलवस्तु मे पहले एक सहस्र संघाराम थे किंतु अब केवल एक ही बचा था जिसमे तीस भिक्षु रह रहे थे। स्मिथ के अनुसार युवानच्वांग द्वारा उल्लिखित कपिलवस्तु पिपरावा से दस मील उत्तर-पश्चिम की ओर नेपाल की तराई मे स्थित तिलौराकोट नामक स्थान रहा होगा (दे० अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, चतुर्थ संस्करण, पृ० 167)।

कपिला

(1) (काठियावाड़, गुजरात) सौराष्ट्र के पश्चिमी भाग सोरठ की एक नदी जो गिरनार पर्वत श्रेणी से निकल कर, हिरण्या के साथ प्राची-सरस्वती से मिल कर पश्चिम समुद्र मे गिरती है। वह प्रभासपाटन के पूर्व की ओर बहती है।

(2) नर्मदा की प्रारंभिक धारा। यह अमरकटक से निस्सृत होती है।

(3) गोदावरी की सहायक नदी जो पंचवटी (नासिक के निकट) से डेढ़ मील दूर गोदावरी मे मिल जाती है। संगम पर महर्षि गौतम की तप स्थली बताई जाती है। यहीं महर्षि कपिल का आश्रम भी था। किंवदंती है कि शूर्पणखा से राम-लक्ष्मण और सीता की भेंट इसी स्थान पर हुई थी।

(4) (मैसूर) कावेरी की सहायक नदी। कपिलाकावेरी संगम पर तिरुमकुल नरसीपुर नामक तीर्थ है। यहाँ गुंजानसिंह का मंदिर है।

कपिलायतन=कोलायत (जिला बीकानेर, राजस्थान)

रेलस्टेशन कोलायत के निकट कपिल मुनि का मंदिर है। कहा जाता है कि यहां प्राचीनकाल में कपिल का आश्रम था। कपिलायतन का उल्लेख तीर्थ के रूप मे पुराणो म भी है। इस स्थान पर महाराष्ट्र के संत ज्ञानेश्वर और नामदेव भी आए थे।

कपिली (असम)

खसिया पहाड़ियो पर बहने वाली नदी। ए० विल्सन के अनुसार इस नदी के पश्चिम मे स्थित देश को कपिली देश कहते थे जिसका उल्लेख एक चीनी लेखक ने इस देश के राजा द्वारा चीन को भेजे गए दूत के संबंध म किया है (दे० जर्नल ऑव रायल एशियाटिक सोसाइटी, पृ० 540)।

कपिलेश्वर

मधुबनी (बिहार) से पांच मील उत्तर पश्चिम हुसनपुर ग्राम म यह स्थान है जिसे कपिल का आश्रम कहा जाता है। यहां एक प्राचीन शिवमंदिर है जिसे कपिल जी का स्थापित किया हुआ बताया जाता है।

कपिश=कपिशा

काफिरस्तान। यह हिंदूकुश पर्वत से काबुल नदी (अफगानिस्तान) तक के प्रदेश का प्राचीन नाम है। युवानच्वांग के समय में (630-645 ई०) कपिश का विस्तृत राज्य था और इसके अधीन दस से अधिक रियासतें थीं जिनमें गधार भी सम्मिलित था। कपिशा इस प्रदेश की राजधानी थी जहां कनिष्क ग्रीष्मकाल में रहा करता था। कपिशा का अभिज्ञान बेग्राम (अफगानिस्तान) नामक नगर से किया गया है।

कपिशा

(1) कालिदास ने रघुवंश 4,38 में इस नदी का उल्लेख किया है—'स तीर्त्वा कपिशां सैन्यैर्बद्धद्विरदसेतुभिः, उत्कलादर्शितपथः कलिंगाभिमुखोययौ'। यह वर्णन रघु की दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में वंगविजय के ठीक पश्चात और और कलिंग विजय के पूर्व है जिससे जान पड़ता है कि यह नदी वर्तमान कोश्या है जिसके दक्षिण तट पर ताम्रलिप्ति (=तामलुक, जिला मिदनापुर, प० बंगाल) बसा हुआ था। यह भी प्रायः निश्चित जान पड़ता है कि महाभारत विराट० 30,32 में उल्लिखित कौशिकी कोश्या या कालिदास की कपिशा है—'ततः पुंड्राधिपवीरं वासुदेवं महाबलम्। कौशिकीकच्छनिलयं राजानं च महौजसम्'।

(2) दे० कपिश

कपिष्ठल=कपिस्थल

वर्तमान कैथल (जिला करनाल, हरियाणा)। किंवदंती में इस स्थान का संबंध महावीर हनुमान से जोड़ा गया है। पाणिनि 8,2,91 में इसका उल्लेख है। महाभारत में वनपर्व के अंतर्गत उल्लिखित तीर्थों में इसकी गणना की गई है। महाभारत उद्योग० 31,19 के एक पाठ के अनुसार कपिस्थल उन पांचों ग्रामों में था जिन्हें पांडवों ने कौरवों से युद्ध रोकने का प्रस्ताव करते हुए मांगा था—'कपिस्थलं वृकस्थलं माकन्दी वारणावतम्, अवसानं भवत्वत्र किंचिदेकं च पंचमम्'। अन्य पाठ में कपिस्थल के स्थान पर अविस्थल है जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है। अलबेरूनी ने कपिस्थल को कवितल लिखा है (दे० अलबेरूनी 1,206)। एरियन ने इसे कबिस्थलोई कहा है।

कपीवती दे० लौहित्य

कबर (रुहेलखंड, उ० प्र०)

एक ग्राम जो प्राचीन नगर शेरगढ़ का एक भाग है। यह देवरानिया स्टेशन (उत्तरपूर्व रेल्वे) से सात मील है। यहां पहले हिंदुओं का राज्य था। जलालुद्दीन खिल्जी ने 1290 ई० में इसे पहली बार हिंदुओं से छीन लिया था। 1540 ई०

म शेरशाह सूरी ने यहा शेरगढ का किला बनवाया। नगर के दक्षिण मे एक सुदर ताल है जिसे खास ताल कहते हैं। इसे शेरशाह के सेनापति ख्वास खा मसनद अली ने बनवाया था। यहा से उत्तर पश्चिम की ओर रानीताल है जिसे किवदती के अनुसार राजा वेन की रानी केतकी ने बनवाया था। राजा वन या वेणु के विषय मे रुहेलखड म अनेक लोककथाए प्रचलित हैं। दे० शेरगढ (2)।

कवरइया (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

चदेलकालीन अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

कवेरिस दे० काकदी।

कब्बिनी=कपिनी नदी।

कमता (पूर्वबगाल, पाकि०)

वर्तमान कमता कोमिल्ला से बारह मील पर स्थित है। यहा पालवशीय नरेशो के शासन काल(10वी 11वी शती)के अनेक बौद्ध अवशेष—मूर्तिया आदि प्राप्त हुए हैं। उस समय कमता या कम्मत मे समतट प्रदेश की राजधानी थी।

कमतौन

बीदर (मैसूर) से छ मील दक्षिण पश्चिम म स्थित है। यहा 1 मील लबा मिट्टी का बाध है जिससे बनी झील से वारगल के ककातीय राजाओ के समय म सिचाई होती थी। बाध पर एक मराठी लेख खुदा है जिसम इब्राहीम बरीद-शाही द्वारा 1579 ई० मे इस बाध की मरम्मत किए जाने का उल्लेख है। इस लेख मे जनसाधारण को सावधान किया गया है कि वे पानी को बाध के ऊपर न चढने दे।

कमर

लेटिन भाषा के भूगोल ग्रथ पेरिप्लस मे दक्षिण भारत के काकदी नगर को ही सभवत कमर कहा गया है। यह ई० सन् की प्रारभिक शतियो म प्रसिद्ध बदरगाह था। (दे० काकदी।)

कमलनाथ (जिला झालावाड, राजस्थान)

कहा जाता है कि मेवाडपति महाराणा प्रताप ने हल्दीघाटी की लडाई के पश्चात् अपने अरण्यवास का कुछ समय इस स्थान पर व्यतीत किया था। पर्वत पर कमलनाथ महादेव का मदिर है।

कमलमीर=कमलमेर (जिला उदयपुर, राजस्थान)

उदयपुर के निकट 3568 फुट ऊची पहाडी पर बसा हुआ है। यहा मेवाडपति महाराणा प्रताप ने हल्दीघाटी के युद्ध के पश्चात अपनी राजधानी बनाई थी। चित्तौड के विध्वस(1567 ई०)के पश्चात इनके पिता उदयसिह न

उदयपुर को अपनी राजधानी बनाया था किंतु प्रताप ने कमलमेर में रहना ही ठीक समझा क्योंकि यह स्थान पहाड़ों से घिरा होने के कारण अधिक सुरक्षित था। कमलमेर की स्थिति को उन्होंने और भी अधिक सुरक्षित करने के लिए पहाड़ी पर कई दुर्ग बनवाए। अकबर के प्रधान सेनापति आमेर-नरेश मानसिंह और प्रताप की प्रसिद्ध भेंट यहीं हुई थी जिसके बाद मानसिंह रुष्ट होकर चला गया था और मुगल सेना ने मेवाड़ पर चढ़ाई की थी। कमलमेर का प्राचीन नाम कुंभलगढ़ था।

कमलालय (मद्रास)

तिरुवारूर का प्राचीन पौराणिक नाम। यहां दक्षिण भारत के प्रसिद्ध संत एवं संगीताचार्य त्यागराज का मंदिर है जिसका गोपुर दक्षिण भारत में सबसे अधिक चौड़ा माना जाता है। यहीं त्यागराज का जन्म हुआ था। निम्न पौराणिक श्लोक में कमलालय के महत्त्व का वर्णन है—'दर्शनादभ्रसदसि जन्मना कमलालये, काश्यांहि मरणान्मुक्ति स्मरणादरुणाचले'।

कमलाक=कोमला।

कमला

गंगा की सहायक नदी। इसे घुगरी भी कहते हैं। यह नेपाल के महाभारत पहाड़ से निकलकर करगोला (ज़िला पूर्णिया, बिहार) के पास गंगा में मिलती है।

कमीनछपरा (ज़िला मुज़फ्फरपुर, बिहार)

बसाढ़ या प्राचीन वैशाली के निकट एक ग्राम है जहां से शिव की बहुत प्राचीन, संभवतः गुप्तकालीन, चतुर्मुखी मूर्ति प्राप्त हुई है।

कमोधा (हरियाणा)

महाभारत, वनपर्व में वर्णित काम्यकवन की स्थिति इस ग्राम के निकट बताई जाती है। कमोधा, कुरुक्षेत्र के ज्योतिसर से तीन मील दूर पहेवा (=पृथूदक) जाने वाले मार्ग पर स्थित है। वामन पुराण में काम्यक वन को कुरुक्षेत्र के सप्तवनों में माना गया है—'काम्यकं च वनं पुण्यं तथा दितिवनं महत्, व्यासस्य च वनं पुण्यं फलकीवनमेव च' (अध्याय 39)। कमोधा शब्द को काम्यक का ही अपभ्रंश कहा जाता है (दे० काम्यकवन)।

कमोली (ज़िला वाराणसी, उ० प्र०)

इस स्थान से मध्यकालीन गहड़वार शासकों के अनेक ताम्रपत्र प्राप्त हुए हैं जिससे काशी पर उनका उस काल में आधिपत्य सिद्ध होता है।

करंज (ज़िला अमरावती, महाराष्ट्र)

विदर्भ क्षेत्र का प्राचीन नाम। विदर्भ की किंवदंती में करंज ऋषि का तप-

क्षेत्र माना जाता है ।

करमनूर=कदमपुर (मद्रास)

त्रिचिनापल्ली मे प्राय छ मील और श्रीरगम से तीन मील दूर प्राचीन विष्णु तीर्थ है ।

करकल=ककरपुर (दक्षिण कर्नाटक, मैसूर)

गोमतेश्वर तथा अनत पदमनाभ स्वामी के प्राचीन मदिर यहा के प्राचीन स्मारक हैं । चतुर्मुख विष्णु का मदिर भी कला की दृष्टि से सुदर है ।

करकोडा (जिला वारगल, आ० प्र०)

प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय शती के बौद्ध तथा आध्रकालीन अवशेष यहा से प्राप्त हुए हैं । करकाडा की पहाडी म दो धातुगर्भों तथा दो शिलावेश्मो (गुफा मदिरो) के अवशेष हैं । चट्टानें बलुआ पत्थर की हैं । ये अवशेष महायान बौद्ध धर्म से सबधित है । भित्तिया पर भी मूर्तिया उत्कीर्ण हैं ।

करणावती

सभवत वर्तमान अहमदाबाद (दे० एशेंट जैन हिम्स, पृ० 56) । प्राचीन जैन तीर्थ के रूप मे इसका नामोल्लेख तीर्थमाला चैत्यवदन म इस प्रकार है—'वद श्री करणावती शिवपुरे नागद्रहे नाणके' ।

करतारपुर (जिला जालधर, पजाब)

इस कसबे का नाम प्राचीन कर्तृपुर का अपभ्रश जान पडता है ।

करतोया

जिला बागरा, बगाल की एक नदी—वतमान करत्वा जो गगा और ब्रह्मपुत्र की मिली जुली धारा पद्मा मे मिलती है । इसका उल्लेख महाभारत मे है—'करतोया समासाद्य त्रिरात्रोपोषितो नर , अश्वमेधमवाप्नोति प्रजापतिकृताविधि ' वन० 85,3 । करतोया का नाम अमरकोश 1,10,33 म भी है —'करतोया सदानीरा बाहुदा सैतवाहिनी' जिससे सभवत सदानीरा एव करतोया एक ही प्रतीत होती ह । कालातर म करतोया का अपवित्र माना जाने लगा था और इसे कमनाशा के समान ही दूषित समझा जाता था यथा 'कर्मनाशा नदी स्पर्शात करतोया विलधनात, गडकी बाहुतरणादधम स्खलति कीर्तनात' आनदरामायण यात्राकाड 9,3 । जान पडता है कि बिहार और बगाल मे बौद्धमतावलबियो का आधिक्य होने के कारण इन प्रदेशो तथा इनकी नदियो को, पौराणिक काल मे अपवित्र माना जाने लगा था (दे० कुरग) ।

करत्वा=करतोया ।

करनपुर (जिला देहरादून, उ० प्र०)

कलगा शासको के स्मारको के अवशेषो के लिए उल्लेखनीय है।

करनाल (हरियाणा)

किंवदती के अनुसार नगर का नाम महाभारत के प्रसिद्ध योद्धा कर्ण के नाम पर पडा है। कहते है कि इस स्थान पर कर्ण का शिविर था इसलिए इसे कर्णालय का नाम दिया गया था। इस स्थान पर 1739 ई० मे नादिरशाह ने दिल्ली के मुगल बादशाह मुहम्मदशाह रगीले की सेनाओ को हरा कर दिल्ली पर अधिकार कर लिया था। कुरुक्षेत्र तथा पानीपत की इतिहास प्रसिद्ध रण-स्थली करनाल के निकट ही स्थित है।

करमदड (जिला गोडा, उ० प्र०)

इस स्थान से गुप्तसवत 117=437 ई० अर्थात कुमारगुप्त के शासन-काल का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था जो एक सुडौल ठोस पाषाण लिंग प्रतिमा पर उत्कीर्ण है।

करवान (जिला बडौदा, गुजरात)

हाल ही मे इस स्थान से उत्खनन द्वारा पूर्वसोलकीकालीन (10वी शती ई०) मदिर के अवशेष प्रकाश मे लाए गए हैं। इसका श्रेय श्री निर्मलकुमार बोस तथा श्री अमृत पाडया को है।

करवीर

(1) एक वन जो द्वारका के निकट सुकक्ष नामक पर्वत के एक ओर स्थित था 'सुकक्ष परिवार्यैन चित्रपुष्प महावनम, शतपत्रवन चैव करवीर कुसुभि च' महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ।

(2) कोल्हापुर (महाराष्ट्र) का प्राचीन पौराणिक नाम। इसे काराष्ट्र के अतगत माना गया है। करवीर क्षेत्र को पुराणो तथा महाभारत मे पुण्यस्थली कहा है—'क्षेत्र वै करवीराख्य क्षेत्र लक्ष्मीविनिर्मितम्' स्कदपुराण, सह्यादि० उत्तरार्ध 2,25। 'करवीरपुरे स्नात्वा विशालाया कृतोदक देवह्रदमुपस्पृश्य ब्रह्मभूतो विराजते' महा० अनुशासन० 25,44।

करहाटक

बगलौर-पूना रेल मार्ग पर पूना से124 मील दूर करहाड ही प्राचीन करहाटक है। यहा कृष्णा और ककुदमती नदियो का सगम होता है। करहाड से 10 मील पर कोल नृसिंह ग्राम म महर्षि पराशर द्वारा स्थापित नृसिंह मूर्ति है। महाभारत सभा० 31,70 मे करहाटक पर सहदेव की विजय का उल्लेख है —'नगरी सजयती च पाखड करहाटक दूतैरेवशे चक्रे कर चैनानदापयत'।

करहाड=करहाटक ।

कराचल, कराजल

- संभवत कूर्माचल जिस पर मुहम्मद तुगलक ने 1335 ई० के लगभग आक्रमण किया था । यह नाम तत्कालीन मुसलमान इतिहासकारों ने लिखा है ।

कराची (पाकि०)

संभवत प्राचीन क्रोकल जिसका मेगस्थनीज ने सिंध प्रदेश में उल्लेख किया है।

करिंद (लंका)

महावंश 32,15 में उल्लिखित नदी जो वर्तमान किरिंदुआय है ।

करीषिणी

महाभारत भीष्म० 9,17 में उल्लिखित एक नदी जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है—'करीषिणी चित्रवाहा च चित्रसेना च निम्नगाम्' ।

करमत (पूर्व बंगाल, पाकि०)

करमत प्राचीन समतट की राजधानी था । समतट में पूर्वी बंगाल अर्थात् तिपरा, नोआखली, बारिसाल, फरीदपुर और ढाका ज़िले सम्मिलित थे—दे० भट्टसाली—ए फारगाटन किंगडम आव ईस्टर्न बंगाल, पृ० 85-91 । 10वीं शती में इस प्रदेश में अराकान के चंद्रवंशीय नरेशों का राज्य था ।

करूर

(1)=वंजि । केरल की प्राचीनतम राजधानी जो परियार नदी पर स्थित थी । इसका अभिज्ञान वर्तमान तिरूरूर ग्राम से किया गया है जो कोचीन से 28 मील पूर्वोत्तर में है । अमरावती कावेरी संगम यहां से 6 मील है । केरल या चेरवंशीय नरेशों के पश्चात चोलों ने भी यहां राज्य किया । ये अपने को सूर्यवंशीय मानते थे और इसी कारण करूर को भास्करपुरम् या भास्करक्षेत्र भी कहा जाता था । करूर में पशुपतीश्वर शिव का कलापूर्ण मंदिर है ।

(2) (जिला मुलतान, पाकि०) मुलतान और लोनी के बीच में स्थित है । इस स्थान पर भारतीय नरेश विक्रमादित्य ने शकों को हराया था । स्मिथ ने इस राजा को चंद्रगुप्त द्वितीय माना है । अन्य इतिहासज्ञों की राय में यह यशोधर्मन था ।

करूष=कारूष

(1) महाभारत उद्योग० 22, 25 में करूष और चेदि देशों का एकत्र उल्लेख है जिससे इंगित होता है कि ये पार्श्ववर्ती देश रहे होंगे—'उपाश्रितश्चेदि करूपकाश्चे सर्वोद्योगैर्भूमिपाला समेता' । इसके आगे उद्योग० 22 27 में भी चेदिनरेश शिशुपाल और करूषराज का एकसाथ ही नाम आया है—

'यशोमानो वधयन् पाडवानापुरामितच्छिशुपाल समीक्ष्ययस्य सर्वेवधयति स्ममान करूपराज प्रमुखा नरेन्द्रा'। चेदि वतमान जबलपुर (म० प्र०) के परिवर्ती देश का नाम था। करूष इसके दक्षिण मे स्थित रहा होगा। बघेलखड का एक भाग करूष के अतर्गत था। यह तथ्य वायुपुराण के निम्न उद्धरण से भी पुष्ट होता है—कारूषाश्च सहैषीकाटव्या शवरास्तथा, पुलिदाविध्यपुषिका वैंदर्भादडकै सह'—वायु० 45, 126। यहा करूषो का उल्लेख शवरो, पुलिदो वैदर्भी, दडकवनवासियो, आटवियो और विध्यपुषिको के साथ मे किया गया है। ये सब जातिया विध्याचल के अचल मे निवास करती थीं। महाभारत, सभा० 52, 8 मे भी कारूषो का उल्लेख है। विष्णुपुराण मे कारूषो को मालवदेश के आसपास देश मे निवसित माना गया है—'कारूषा मालवाश्चैव पारियात्रनिवासिन, सौवारा सैंधवा हूणा सारवा कोसलवासिन' 2, 3, 17। *पौराणिक उल्लेखो से ज्ञात होता है कि श्रीकृष्ण के समय कारूष का राजा* दतवक्र था। इसने मगधराज्य जरासघ को मथुरानगरी पर चढाई करने मे *सहायता दी थी।*

(2) जिला शाहाबाद (बिहार) का एक भाग, वाल्मीकि रामायण 1, 24, दे० कारूष।

ककखड

'अगान् वगान् कलिगाश्च शुडिकान मिथिलानथ, मागधान कर्कखंडाश्च निवेश्य विषयेऽऽत्मन' महा० वन 254, 8। इस श्लोक मे कर्ण की दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे पूर्व भारत के उन प्रदेशो का वर्णन है जिन्हे कर्ण ने विजित किया था। ककखड, जैसा कि प्रसग से सूचित होता है, बिहार या बगाल के किसी प्रदेश का नाम होगा।

ककरपुर=करकल

प्राचीन जैन तीर्थ। जैनस्तोत्र तीर्थमालाचैत्यवदन मे इसका उल्लेख इस प्रकार है—'मोढेरे दधिपद्रककरपुरे ग्रामादिचैत्यालये'।

कर्कोटक

'कारस्करान माहिषकान कुरडान् केरलास्तथा कर्कोटकान वीरकाश्च दुधर्माश्च विवर्जयेत' महा० कर्ण 44, 43 अर्थात् कारस्कर, माहिषक, कुरड, केरल, कर्कोटक और वीरक दूषितधर्म वाले हैं, इसलिए इनसे दूर रहना चाहिए। *कर्कोटक नामक नागजाति का उल्लेख महाभारत की नलदमयती की* कथा मे है। यह जाति सभवत विध्याचल के घने जगलो मे रहती थी। इन्ही के निवास स्थान के प्रदेश का नाम कर्कोटक माना जा सकता है।

कणगढ़ (जिला भागलपुर, बिहार)

भागलपुर (अग देश की राजधानी, प्राचीन चपा) के निकट एक पहाडी है। इसका नाम महाभारत के कण से सबधित है। कण अगदेश का राजा था। यह स्थान पूव-बौद्धकालीन है। महाभारत मे भीम की पूर्वदिशा की दिग्विजय के प्रसग मे मगध के नगर गिरिव्रज के पश्चात मोदागिरि या मुगेर के पूव जिस स्थान पर भीम और कण के युद्ध का वणन है वह निश्चयपूवक यही जान पडता है—'स कण युधि निर्जित्य वशेकृत्वा च भारत, ततो विजिग्ये बल्वान् राज्ञ पवतवासिन' सभा० 31, 20।

कर्णकुब्ज

स्कदपुराण प्रभासखड में वर्णित तीर्थ जो वर्तमान जूनागढ है।

कर्णगोच्छ

सिहल के प्राचीन इतिहास दीपवश 3, 14 मे दी गई वशावली मे यहा के अतिम राजा नरदेव का उल्लेख है। इस स्थान का अभिज्ञान अनिश्चित है किंतु प्रसग से सूचित होता है कि यह स्थान भारत मे स्थित था न कि लका मे।

कर्णपुर

मुगेर (बिहार) के निकट एक पहाडी जो महाभारत के कण (जो अग का राजा था) के नाम से विख्यात है।

कर्णदा

बृहद्धर्मपुराण म वर्णित कीकट देश (मगध) की एक नदी जिसे पवित्र माना गया है—'तत्र देशे गया नाम पुण्यदशास्ति विश्रुत, नदी च कणदा नाम पितृणा स्वग दायिनी'। जान पडता है यह गया के निकट बहने वाली फल्गु नदी है जहा पितरो का श्राद्ध किया जाता है। नदी का नाम महाभारत के कण से सबधित जान पडता है। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि कीकट देश का प्राचीन पुराणो की परपरा मे अपवित्र देश बताया गया है जिसका कारण इस देश म बौद्ध मत का आधिपत्य रहा होगा, किंतु कालातर म गया म पुन हिंदूधम की मत्ता स्थापित होने पर इसे तथा यहा बहने वाली नदी को पवित्र समझा जाने लगा। द० कीकट।

कणपुर=कणगढ़।

कणप्रयाग (जिला गढवाल, उ० प्र०)

महाभारत मे वर्णित भद्रकर्णेश्वर तीथ (वन 84, 39) शायद यही है।

कणवास (जिला बुलन्दशहर, उ० प्र०)

गंगा तट पर स्थित इस तीर्थ का प्राचीन नाम भृगुक्षेत्र भी है। महाभारत के प्रसिद्ध कर्ण का इस स्थान से संबंध बताया जाता है। कहा जाता है कि कर्णवास के निकट बुधाही नामक स्थान पर बुद्ध ने कुछ दिन तपस्या की थी। एक अन्य किंवदंती के अनुसार कणवास को उज्जयिनी के विक्रमादित्य के समकालीन किसी राजा कर्ण ने बसाया था।

कणवेध दे० **प्रमीन**

कणवेल=कर्णावती (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर के निकट स्थित है। 11वीं शती में कलचुरिवंश के शासकों की यहां राजधानी थी। कर्णावती को मूलतः कल्चुरिनरेश कर्णदेव (1041-1073 ई०) ने अपने पुत्र का राज्याभिषेक करने के पश्चात् स्वयं अपने निवास के लिए बसाया था, बाद में कलचुरियों ने कणवेल में अपनी राजधानी ही बना ली। कलचुरिनरेशों के आराध्य देव शिव थे और इसी कारण इस नगर में उन्होंने शिव के विशाल मंदिर बनवाए थे। आज भी कणवेल के प्राचीन ध्वस्त किले के चिह्न दो वर्गमील के क्षेत्र में दिखाई देते हैं।

कणसुवण (बंगाल)

प्राचीन काल में बंगाल का यह भाग वंग (गंगा की मुख्य धारा पद्मा के दक्षिण का भाग) के पश्चिम में माना जाता था। इसमें वर्तमान बर्दवान, मुर्शिदाबाद और बीरभूम के जिले सम्मिलित थे। चीनी यात्री युवानच्वांग के वर्णन से ज्ञात होता है कि हर्ष के राजत्वकाल में यह प्रदेश पर्याप्त धनी एवं उन्नतिशील था। यहां की तत्कालीन राजधानी का अभिधान ठीक ठीक निश्चित नहीं है। यह लगभग चार मील के घेरे में बसी हुई थी। महाराज हर्षवर्धन के ज्येष्ठभ्राता राज्यवर्धन की हत्या करने वाला नरेश शशांक इसी प्रदेश का राजा था (619-637 ई०)। तत्पश्चात् कामरूपनरेश भास्करवर्मन् का आधिपत्य यहां स्थापित हो गया जैसा कि निधानपुर ताम्रपट्ट लेखों से सूचित होता है। मध्यकाल में सेनवंशीय नरेशों ने कर्णसुवर्ण नगर में ही बंगाल की राजधानी बनाई थी। नगर का तद्भव नाम कानसोना था। आधुनिक मुर्शिदाबाद प्राचीन कर्णसुवर्ण के स्थान पर ही बसा है।

कर्णाट

प्राचीन बुंदेलखंड का एक भाग जहां हैहयवंशीय क्षत्रियों का राज्य था।

कर्णालय दे० **करनाल**

कर्णावती

(1)=कर्णदेव कलचुरिनरेश राजावण देव (1041–1073) ने इस नगरी की नींव डाली थी—'ब्रह्मस्तम्भोयन कर्णवतीति प्रत्यग्ठापिश्मानल्ब्रह्मत्रोय' (एपिग्राफिका इंडिका, जिल्द 2, पृ० 4, श्लोकार्ध 14) यह स्थान अब पूर्णत खडहर हो गया है और घने कटीले जगलो से ढका है। केवल दो एक खंभे प्राचीन मंदिरो की कारीगरी के प्रतीक रूप मे वर्तमान है। वैसे यहा के प्राचीन दुर्ग के खडहर दो मील तक फैले हुए हैं।

(2)=कनार दे० जगमनपुर

(3)=केन नदी।

कर्णिका

बृहत् शिवपुराण मे (1, 75) म उल्लिखित है। संभवत यह उरी और नर्मदा के संगम पर स्थित कर्नाली है (न० ला० डे)।

कर्तृपुर

गुप्तसम्राट् समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे इस स्थान का गुप्त साम्राज्य के (उत्तरपश्चिमी) प्रत्यंत या सीमा प्रदेश के रूप मे उल्लेख है—'समतटडावक-कामरूपनेपालकर्तृपुरादि प्रत्यंतनृपतिभि मालवार्जुनायन यौधेयमद्रक आभीरप्रार्जुनसनकानिककाकखरपरिक ।' कर्तृपुर का अभिज्ञान हिमाचल प्रदेश की कागडा घाटी से किया गया है। कुछ विद्वानो का मत है कि कर्तृपुर म करतारपुर (जिला जालधर, पजाब) तथा उत्तर प्रदेश का गढवाल और कुमायू का इलाका—कत्यूर—भी सम्मिलित रहा होगा। यदि यह अभिज्ञान ठीक है तो करतारपुर और कत्यूर को कर्तृपुर का ही बिगडा हुआ रूप समझना चाहिए।

कर्दमिल-क्षेत्र

महाभारत, वनपर्व के अतगत पाडवो की तीर्थ यात्रा के प्रसग म मधुविला या समगा नदी के तटवर्ती क्षेत्र का नाम 'एषा मधुविला राजन समगा सप्रकाशत, एतत् कर्दमिल नाम भरतस्याभिषेचनम्' वन० 135। इसकी स्थिति हरद्वार से उत्तर म रही होगी। इसके नामकरण का कारण मूलत इस पर्वतीय प्रदेश मे जल और वनस्पति की विपुलता हो सकती है (कर्दम=कीचड)। कर्दमिल कर्दम-ऋषि के नाम पर भी हो सकता है। उपर्युक्त उद्धरण से सूचित होता है कि इस स्थान पर राजा भरत का अभिषेक हुआ था।

कर्दमेश्वर दे० कदवा

कर्णाटक, कर्नाटक (मैसूर)

कर्णाटक मैसूर का कन्नड भाषा भाषी प्रदेश है। इसका प्राचीन नाम कुतल भी था।

कमनाशा

वाराणसी (उ० प्र०) और आरा (बिहार) जिलों की सीमा पर वहन वाली नदी जिसे अपवित्र माना जाता था—'कमनाशा नदी स्पर्शात करतोया विलंधनात्, गडकी बाहुतरणाद् वमस्खलति कीतनात' आनदरामायण यात्राकाड 9,3। इसका कारण यह जान पडता है कि बौद्धधर्म के उत्कर्षकाल म बिहार-बगाल मे विशेष रूप से बौद्धो की सख्या का आधिक्य हो गया था और प्राचीन धर्मावलबियो के लिए य प्रदेश अपूजित माने जाने लगे थे। कमनाशा को पार करने के पश्चात बौद्धो का प्रदेश प्रारभ हो जाता था इसलिए कमनाशा को पार करना या स्पर्श भी करना अपवित्र माना जाने लगा। इसी प्रकार अग, बग, कलिंग और मगध बौद्धो के तथा सौराष्ट्र जैनो के कारण अगम्य समझे जाते थे—'अगवगकलिंगेषुसौराष्ट्रमागधेषु च, तीर्थयात्रा विना गच्छन् पुन सस्कारमहति'—तीर्थप्रकाश।

कमरग

मलयप्रायद्वीप या मलाया का एक प्राचीन हिंदू औपनिवेशिक राज्य। ई० सन् से बहुत पहले ही मलय तथा भारत मे व्यापारिक सबध स्थापित हो चुके थ। कमरग से प्रथम बार भारत मे आने के कारण फलविशेष—कमरख—का कमरग कहा जाता है। कमरग राज्य का दूसरा नाम कामलका भी था।

कर्मांत=बडकत (जिला कोमिल्ला, पूर्व बगाल, पाकि०)

गुप्तकाल मे सभवत समतट प्रदेश की राजधानी कर्मांत (वर्तमान बडकत) नामक नगर मे थी। समतट का उल्लेख समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे है।

करों (जिला झेलम, पजाब, पाकि०)

झेलम से प्राय दस मील उत्तरपूर्व। यह वही रणस्थल है जहा अलक्षेंद्र (सिकदर) और पुरु या पोरस की सेनाओं के बीच 326 ई० पू० मे इतिहास-प्रसिद्ध युद्ध हुआ था। ग्रीक लेखको ने युद्ध को झेलम का युद्ध कहा है और घटना स्थली का नाम निकाइया लिखा है। यह मैदान लगभग पाच मील चौडा था। पुरु के पास तीस सहस्र पैदल सेना के अतिरिक्त दो सौ हाथी भी थे जिनको उसने हरावल मे खडा किया था। सेना के पार्श्वों की रक्षा के लिए तीन सौ रथ थे। प्रत्येक रथ म चार घोडे और छ रथारोही थे। इनके पीछे चार सहस्र अश्वारोही सैनिक थे। पैदल सेना चौडी तलवारो ढालो, भालो और धनुषबाणो से सुसज्जित थी। अलक्षेंद्र न पुरु की सेना के सम्मुखीन भाग को अजेय समझ कर उसके वामपार्श्व पर आक्रमण किया। इसमे उसने अपनी अश्वारोही सेना का प्रयोग किया था। सायकाल तक युद्ध समाप्त हो गया।

अपनी सेना के पैर उखड़ जाने पर भी पुरु अंत तक अविजित तथा अडिग बना रहा और उसके वीरता और दर्पपूर्ण व्यवहार ने कुटिल अलक्षेंद्र का भी मोह लिया और उसने भारतीय वीर को उसका देश लौटा कर अपना मित्र बना लिया।

कवट

समुद्रसेन निर्जित्य चंद्रसेन च पार्थिवम् ताम्रलिप्तिं च राजानं कवटाधिपतिं तथा' महा० सभा० 30,24। भीम ने कवटनरेश को अपनी दिग्विजय यात्रा में पराजित किया था। प्रसंगानुसार कवट की स्थिति दक्षिण बंगाल या ताम्रलिप्ति के निकट जान पड़ती है।

कलंगा (ज़िला देहरादून, उ० प्र०)

प्राचीनकाल में इस स्थान पर एक सुदृढ़ दुर्ग स्थित था। 1814 ई० में जब देहरादून पर गोरखों का राज था उन्होंने अंग्रेजों से युद्ध छिड़ने पर उनका डट कर सामना किया था। अंग्रेजी सेना का नायक जनरल मार्टिन डेल था जिसने जनरल जिलेस्पी के मारे जाने पर फौज की कमान सम्हाली थी। उसने कलंगा के किले को तोपों की मार से भूमिसात कर दिया था। अब इस स्थान पर दुर्ग के खंडहरों के सिवा कुछ नहीं बचा है।

कलकत्ता (प० बंगाल)

अंग्रेजों की हुगली की व्यापारिक कोठी के अध्यक्ष जॉब चारनाक ने अगस्त 1690 ई० में कलकत्ते की नींव एक व्यापारिक स्थान के रूप में डाली थी। इससे पहले इसके स्थान पर कालीघाट नामक एक ग्राम स्थित था जो काली के मंदिर के कारण ही कालीघाट कहलाता था। यह प्राचीन मंदिर आज भी वर्तमान है। कलकत्ता, कालीघाट का ही रूपांतर कहा जाता है। दे० कालीघाट।

कलवप्पू (मैसूर)

चंद्रगिरि पहाड़ी का वर्तमान नाम है। यहां 900 ई० के दो जैन अभिलेख पाए गए हैं (दे० चंद्रगिरि)।

कलबुर्गी

गुल्बर्गा (आ० प्र०) का प्राचीन नाम, दे० गुलबर्गा।

कलशपुर=कलसपुर

कथासरित्सागर में कलशपुर नामक एक राज्य का उल्लेख है जो श्री मजुमदार के अनुसार उत्तर मलय प्रायद्वीप या दक्षिण ब्रह्मदेश में सित्तंग नदी के मुहाने पर तथा प्रोम के दक्षिण पूर्व में स्थित था (दे० हिंदू कालोनीज इन दि फार ईस्ट—पृ० 197)। प्राचीन काल में कलसपुर या कलशपुर भारतीय उपनिवेश था। इसके बसाए जाने का काल अनिश्चित है किंतु मलयप्रायद्वीप

तथा भारत के परस्पर व्यापारिक सबध ई० सन् से कई सौ वर्ष पूर्व ही स्थापित हो गए थे। मलाया भारतीय उपनिवेशों के बसाए जाने का क्रम चौथी, पांचवी शती ई० तक चलता रहा।

कलसीग्राम

मिलिंदपन्हो के अनुसार ग्रीक राजा मिनेंडर (पाली म 'मिलिंद' जो दूसरी शती ई० पू० मे भारत मे आकर बौद्ध हो गया था) का जन्मस्थान (दे० मिलिंदपन्हो, ट्रेंकनर द्वारा सपादित, पृ० 83)। *यह मिस्र के प्रसिद्ध नगर (द्वीप)* अलेग्जेंड्रिया (पाली—'अलसद') मे स्थित बताया गया है, दे० अलसदा।

कलहनगर (लका)

महावश 10,41–43। मि नेरी झील (=मणिहीर) के दक्षिण अबन गगा के वामतट पर स्थित वतमान कलहगल से इस नगर का अभिज्ञान किया गया है। कलहनगर, सिहल राजकुमार पाडुकाभय के द्वारा सुवणपाली नामक कन्या क हरण करन पर उसके पिता और कुमार की सेनाओ मे जिस स्थान पर कलह या युद्ध हुआ था, वहीं बसा था।

कलिंग

(1) स्थूल रूप से दक्षिण उडीसा का नाम था। उत्तरी उडीसा को प्राचीन समय म उत्कल या उत्कलिंग (उत्तर कलिंग) कहते थे। कुछ विद्वानो—सिलवन लेवी, जीन प्रेजीलुस्की आदि के मत मे कलिंग, तोसल, कोसल आदि नाम आस्ट्रिक भाषा के हैं। आस्ट्रिक लोग भारत मे द्रविडो से भी पूर्व बसे हुए थे। महाभारत, वन० 114,4 ('एत कलिंगा कौन्तेय यत्र वैतरणी नदी') से सूचित होता है कि उडीसा की वैतरणी नदी से कलिंग प्रारभ होता था। इसकी दक्षिणी सीमा पर गोदावरी बहती थी जो इसे आध्र देश से अलग करती थी। कलिंग का उल्लेख उत्तराध्ययन सूत्र, महागोविंद सूत्र, पाणिनि 4,1,170 तथा बौधायन 1,1,30–31 म है। महाभारत शाति० 4,2 से सूचित होता है कि महाभारत के समय वहा का राजा चित्रागद था— *कलिंग विषये राजन राजश्चि त्रागदस्य च'*। *जातको मे कलिंग की राजधानी* दतपुर नामक नगर मे बताई गई है किंतु महाभारत मे यह पद राजपुर को प्राप्त है—'श्रीमद्राजपुर नाम नगर तत्र भारत'—शाति० 4 3। महावस्तु (सेनाट—पृ० 432) म कलिंग के एक अन्य नगर सिहल का उल्लेख है। रोम के प्राचीन इतिहास लेखक प्लिनी (प्रथम शती ई०) ने कलिंग की राजधानी परथालिस नामक स्थान को बताया है। जैन लेखको ने कलिंग के कचनपुर नामक एक नगर का उल्लेख किया है (इडिअन एटिक्वरी, 1891, पृ० 375)। कलिंग नगर का उल्लेख

खारवेल के प्रसिद्ध अभिलेख मे है जो प्रथम शती ई० म कलिग का राजा था। इसका अभिज्ञान वशधारा नदी के तट पर बसे हुए मुखलिगम् नामक नगर (शिशुपालगढ के निकट) से किया गया है। विष्णुपुराण मे भी कलिग का कई बार उल्लेख है—'कलिगदेशादम्यत्य प्रीतेन सुमहात्मना 3,7,36, 'कलिग माहिप महेन्द्र भौमान गुहा भोक्ष्यति'—4,24,65 से सूचित होता है कि कलिग मे सभवत गुप्तशासनकाल से पूव गुहा लोगो का राज्य था। कालिदास ने रघुवश 4 38 मे उत्कल के दक्षिण मे कलिग का वणन किया है—'उत्कलादर्शित पथ कलिगाभिमुखोययौ' (दे० उत्कल) रघु की विजय यात्रा मे कलिग के वीरो ने रघु का डट कर सामना किया था। इनके पास विशाल गज सेना थी। कलिग नरेश हेमागद का उल्लेख रघु० 6,53 मे ('अथागदाश्लिष्टभुजभुजिष्या हेमागद नाम कलिगनाथम') तथा उसकी गजसेना का सुदर वणन 6,54 मे है। कौटिल्य-अथशास्त्र मे भी कलिग के हाथियो को श्रेष्ठ माना गया है—'कलिगागगजा श्रेष्ठा प्राच्याश्चेदिकरूषजा, दशार्णाश्चापरान्ताश्च द्विपाना मध्यमामता। सौराष्ट्रिका पाचनदास्तेषा प्रत्यवरा स्मृता सर्वेषा कमणा वीय जवस्जतेश्चवधते'। अशोकमौय ने 261 ई० पू० मे कलिग को जीता था। इस अभियान मे एक लाख मनुष्य मारे गए थे। इस भयानक हत्या काड को देख कर ही अशोक ने बौद्ध धम ग्रहण कर के शेष जीवन धम प्रचार म बिताने का सकल्प किया था।

(2) वाल्मीकि रामायण, अयोध्या० 71,16 मे वर्णित एक नगर—'एकमाले स्थाणुमती विनते गोमतीनदी, कलिग नगरे चापि प्राप्य सात्वन तदा'। इसका उल्लेख भरत के केकयदेश से अयोध्या की यात्रा के प्रसग मे है। इसके पश्चात एक रात बिता कर वे अयोध्या पहुच गये थे। जान पडता है कि कलिग नगर की स्थिति गोमती और सरयू नदी के बीच (पूर्वी उ० प्र०) मे रही होगी। इसके पास शालवनो का उल्लेख है।

(3) ई० सन् की प्रारभिक शतियो मे मध्य जावाद्वीप मे बसाया गया एक हिंदू उपनिवेश जहा भारत के कलिग देश के निवासियो की बस्ती थी। चीनी लोग इसे हालिंग नाम से जानते थे।

कलिगनगर (उडीसा)

प्राचीन कलिग का मुख्य नगर। इसका उल्लेख खारवेल के अभिलेख (प्रथम शती ई०) मे है। इस नगर के प्रवेशद्वारो तथा परकोटे की मरम्मत खारवेल ने अपने शासन काल के प्रथम वष मे करवाई थी। कलिगनगर का अभिज्ञान मुखलिगम से गया किया है जो वशधारा नदी के तट पर बसा है।

भुवनेश्वर के निकट स्थित शिशुपालगढ को भी प्राचीन कलिंगनगर कहा जाता है (दे० कलिंग, शिशुपालगढ)। प्राचीन रोम के भौगोलिक टॉलमी ने शायद कलिंग नगर को ही कनागर लिखा है (दे० हिस्ट्री ऑव उडीसा, महताब, पृ० 24)। कलिंगनगर को चोड गगदेव (1077-1147 ई०) ने अपनी राजधानी बनाया था और यह नगर 1135 ई० तक इसी रूप मे रहा।

कलिंद

यमुना का उद्गम स्थान। यामुन या यमुनोत्री, हिमालय पर्वत श्रेणी म स्थित इसी पर्वत को माना जाता है। महाभारत वन० 84,85 म इसी का यमुना प्रभव कहा है—'यमुना प्रभवगत्वा समुपस्पृश्ययामुनम्'—दे० यामुन।

कलिंदकन्या

यमुनानदी। 'यस्यावरोधस्तनचदनाना प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले, कलिंद-कन्या मथुरा गतापि गगोर्मि ससक्त जलेवभाति' रघु० 6,48, दे० कलिंद।

कलिंजर दे० कालिंजर

कल्पेश्वर (जिला गढवाल, उ० प्र०)

प्राचीन गढवाल नरेशों के बनवाए हुए मदिरो के लिए उल्लेखनीय है।

कल्मापदम्य

बुद्धचरित 21,27 मे उल्लिखित अनभिज्ञात स्थान।

कल्याण (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्रकेसरी शिवाजी के समय इस नाम का सूबा कोकण के उत्तर म स्थित था। पहले यह अहमदनगर के निजामशाही सुल्तानो के अधिकार म था। 1636 ई० म शिवाजी ने इसे बीजापुर के सुलतान अली आदिलशाह से छीन लिया था।

कल्याणपुर (दक्षिण कनारा, मैसूर)

शृगेरी से 40 मील पश्चिम मे स्थित है। कहा जाता है मध्वाचार्य का जन्मस्थान यही है। याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रसिद्ध टीकाकार विज्ञानेश्वर यही के निवासी थे। इनकी टीका मिताक्षरा भारत भर म प्रसिद्ध है (किंतु दे० कल्याणी)।

कल्याणी

(1) (जिला बीदर, मैसूर) चालुक्यो की प्रसिद्ध राजधानी। तुलजापुर से हैदराबाद जाने वाली सडक पर अवस्थित है। प्रारभ म यहा उत्तर चालुक्य काल मे राज्य के पश्चिमी भाग की राजधानी थी। मैसूर राज्य के भारगो नामक स्थान मे प्राप्त पुलकेशिन् चालुक्य के एक अभिलेख मे कल्याणी का उल्लेख है।

पूर्व और उत्तर-चालुक्यकाल के बीच मे राष्ट्रकूट नरेशो ने मलखेड नामक स्थान पर अपने राज्य की राजधानी बनाई थी किंतु चालुक्य राज्य के पुनरुद्धारक तैलप (973 997 ई०) ने कल्याणी को पुन राजधानी बनने का गौरव प्रदान किया। 11वी शती म चालुक्यराज सोमेश्वर प्रथम के राजत्वकाल मे कल्याणी की गणना परम समृद्धिशाली नगरो म की जाती थी। धमशास्त्र के प्रसिद्ध ग्रंथ मिताक्षरा का रचयिता विज्ञानेश्वर कल्याणी नरेश विक्रमादित्य चालुक्य की राजसभा का रत्न था (किंतु दे० कल्याण)। 12वी शती के मध्य म चालुक्यो का राज्य कलचुरीनरेशो द्वारा समाप्त कर दिया गया। इसके बाद से कल्याणी से राजधानी भी हटा ली गई। कल्याणी के किले मे मुहम्मद तुगलक के दो अभिलेख हैं जिनमे कल्याणी को दिल्ली की सल्तनत का अग बताया गया है। तत्पश्चात कल्याणी बहमनीराज्य मे सम्मिलित कर ली गई। बहमनी नरेशो ने कल्याणी के प्राचीन हिंदू दुग का युद्ध मे गोलाबारी से रक्षा की दृष्टि से समुचित रूप म सुधार किया। बहमनी राज्य के विघटन के पश्चात कल्याणी बरीदी सल्तनत के अदर कुछ समय तक रही किंतु थोडे ही समय के उपरात यहा बीजापुर के आदिल शाही सुल्तानो का अधिकार हो गया। औरगजेब का बीजापुर पर कब्जा हान पर कल्याणी को मुगल सैनिको ने खूब लूटा। तत्पश्चात कल्याणी को मुगल साम्राज्य के बीदर नाम के सूबे म शामिल कर लिया गया।

(2) (लका) महावश 1,63, कोलबो के समीप समुद्र म गिरने वाली एक नदी तथा इसका तटवर्ती प्रदश। सिंहाली किवदती के अनुसार गौतम बुद्ध ने इस स्थान पर राजायतनचैत्य स्थापित किया था।

कल्लूर (जिला रायचूर, मैसूर)

13वी शती के कई मदिरो के अवशेष इस ग्राम मे स्थित हैं। ग्राम स पश्चिम की ओर मुकुदेश्वर का मदिर है जो सभवत यहा का प्राचीनतम स्मारक है। इसके स्तभो पर उत्कृष्ट नक्काशी है। इनके आधारो पर पुष्पो तथा पशुओं के मूर्तिचित्र अकित हैं। शैली के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मदिर का ऊपरी भाग शिखर को छोडकर बहमनीकालीन है। मुकुदेश्वर मदिर के पास ही उत्तर की ओर एक छोटा सा मदिर है जिसमे करम्मा या काली की मूर्ति प्रतिष्ठित है। ग्राम के अन्य मदिर हैं—पलोम्मल गुडी और वेंकटम्बर गुडी। ग्राम के बाहर प्राचीन हनुमान मदिर है जिसमे गणेश तथा सप्तमातृकाओ की मूर्तिया भी हैं। कल्लूर से तीन प्राचीन अभिलेख भी प्राप्त हुए हैं—पहला करम्मा मदिर के सामने, दूसरा एक हाथी की प्रतिमा पर और तीसरा एक कुए के पास। इनसे ग्राम के अवशेषो का समय जानने मे सहायता मिलती है।

कवर्धा (छत्तीसगढ, म० प्र०)

कहा जाता है कि कवर्धा शब्द कबीरधाम का रूपातर है। यह स्थान छत्तीसगढ मे कबीर से सबधित अनेक स्थानो मे से है। कबीर पथिया की सख्या यहा पर्याप्त है। कबीर साहब का असगृहीत साहित्य भी यहा से प्राप्त हो सकता है।

कवलेश्वर (जिला कोटा, राजस्थान)

प्राचीन कृतमालेश्वर। इद्रगढ से आठ मील पूर्व म है। यह त्रिवेणी नदी के तट पर स्थित है। बूदी नरेश महाराज अजीतसिंह का बनवाया हुआ शिव-मदिर तथा एक कुड यहा स्थित है।

कशेरु

'इद्रद्वीप कशेरु च ताम्रद्वीप गभस्तिमत, गाधर्ववारुण द्वीप सौम्याक्षमिति च प्रभु' महा० सभा० 38, दक्षिणात्य पाठ। अर्थात शक्तिशाली सहस्रबाहु ने इद्रद्वीप, कशेरु, ताम्रद्वीप, गभस्तिमान, गधर्व वरुण और सौम्याक्षद्वीप को जीत लिया था। प्रसग से यह द्वीप इडोनीसिया का कोई द्वीप जान पडता है क्योकि ताम्रद्वीप=लका, वारुण=बोर्नियो, इद्रद्वीप=सुमात्रा का एक भाग।

कश्मीर=काश्मीर

प्राचीन नाम कश्यपमेरु या कश्यपमीर (कश्यप की झील)। किवदती है कि महर्षि कश्यप श्रीनगर से तीन मील दूर हरि-पर्वत पर रहते थे। जहा आजकल कश्मीर की घाटी है वहा अति प्राचीन प्रागैतिहासिक काल मे एक बहुत बडी झील थी जिसके पानी को निकाल कर महर्षि कश्यप ने इस स्थान को मनुष्यो के बसने योग्य बनाया था। भूविद्या विशारदो के विचारो से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है कि काश्मीर तथा हिमालय मे एक विस्तृत भूभाग मे अब से सहस्रो वर्ष पूर्व समुद्र स्थित था। काश्मीर का इतिहास अतिप्राचीन है। वैदिक काल मे यहा आर्यों की बस्तिया थी। महाभारत वन० 130, 10 मे काश्मीरमडल का उल्लेख है—'काश्मीरमडल चैतत सर्वपुण्यमरिदम, महर्षि भिश्चाध्युषित पश्येद भ्रातृभि सह।' कश्मीर के लिए कश्मीरमडल शब्द के प्रयोग से सूचित होता है कि महाभारत काल मे भी वर्तमान कश्मीर के विशाल समूचे प्रदेश को ही कश्मीर समझा जाता था। उस काल म महर्षियो के रहने के अनेक स्थान थे, यह भी इस उद्धरण से ज्ञात होता है। महाभारत, सभा० 34, 12 ('द्राविडा सिंहलाश्चैव राजा काश्मीरकस्तथा') से सूचित होता है कि कश्मीर का राजा भी युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ मे आया था। उसने भेंट मे अन्य वस्तुओ के अतिरिक्त अगूर के गुच्छे भी युधिष्ठिर को दिए थे,

'काश्मीरराजोमार्द्वीकं शुद्ध च रसवं मधु बलिं च कृत्स्नमादाय पाडवाया भ्युपाहरत'—सभा० 51, दक्षिणात्य पाठ। कल्हण की राजतरंगिणी मे जो कश्मीर का बृहत् इतिहास ह, इस देश के इतिहास को अति प्राचीनकाल मे प्रारभ किया गया है। कश्मीर मे अशोक के समय मे बौद्धधम ने पहली बार प्रवेश किया। श्रीनगर की स्थापना इस मौय सम्राट ने ही की थी। दूसरी शती ई० मे कुशाननरेशो ने कश्मीर को अपने विशाल, मध्य एशिया तक फैले हुए साम्राज्य का अग बनाया। कश्मीर से हाल मे प्राप्त भारत बैक्ट्रिआइ और भारत पार्थिआयी नरेशो के सिक्को से प्रमाणित होता है कि गुप्तकाल के पूव, कश्मीर का सवध उत्तरपश्चिम मे स्थापित ग्रीक राज्यो से था। विष्णु पुराण के एक उल्लेख से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है—'सिंधु तटदाविको-र्वीचन्द्रभागा काश्मीरविषयाश्चव्रात्यम्लेच्छशूद्रादयो भोक्ष्यन्ति' 4, 24, 69। इससे कश्मीर आदि देशो मे सभवत गुप्तपूवकाल मे अनाय जातियो के राज्य का होना सूचित होता है। गुप्तकाल मे ही बौद्ध धर्म की अवनति अन्य प्रदेशो की भाति कश्मीर मे भी प्रारभ हो गई थी और शैवधम का उत्कप धीरे धीरे बढ़ रहा था। शैवमत के तथा पुनरुज्जीवित हिंदूधर्म के प्रचार मे अभिनवगुप्त तथा शकराचाय जैसे दाशनिको का बडा हाथ था। श्रीनगर के पास शकराचाय की पहाडी, दक्षिण के महान आचाय की सुदूर उत्तर के इस देश की दाशनिक दिग्विजय यात्रा का स्मारक है। हिंदूधम के उत्कप के साथ ही साथ कश्मीर की राजनैतिक शक्ति का भी तेजी से विकास हुआ। राजतरंगिणी के अनुसार कश्मीर नरेश मुक्तापीड ललितादित्य न 8वी शती म सपूण उत्तर भारत मे कान्यकुब्ज तथा पार्श्ववर्ती प्रदेश तक, अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। 13वी शती मे कश्मीर मुसल्मानो के प्रभाव मे आया। ईरान के हजरत सैयद अली हमदान नामक सत ने अपने धम का यहा जोरो से प्रचार किया और धीरे-धीरे राज्यसत्ता भी मुसलमानो के हाथ मे पहुच गई। कश्मीर के मुसल्मानो का राज्य 1338 ई० से 1587 ई० तक रहा और जैनुल्अब्दीन के शासनकाल मे कश्मीर भारत ईरानी सस्कृति का प्रख्यात केंद्र बन गया। इस शासक का उसके उदार विचारो और सस्कृति प्रेम के कारण कश्मीर का अकबर कहा जाता है। 1587 से 1739 ई० तक कश्मीर मुगल साम्राज्य का अभिन्न अग बना रहा। जहागीर और शाहजहा के समय के अनेक स्मारक आज भी कश्मीर के सर्वोत्कृष्ट स्मारक माने जाते हैं। इनमे निशात बाग, शालामार उद्यान आदि प्रमुख हैं। 1739 से 1819 ई० तक काबुल के राजाओ ने कश्मीर पर राज्य किया। 1819 ई० मे पजाब केसरी रणजीतसिंह ने कश्मीर को काबुल के अमीर

दोस्त मुहम्मद से छीन लिया किंतु शीघ्र ही पंजाब कश्मीर के सहित अंग्रेजों के हाथ में आ गया। 1846 ई० में ईस्ट इंडिया कंपनी ने कश्मीर को डोगरा सरदार गुलाबसिंह के हाथों बेच दिया। इस वंश का 1947 तक वहां शासन रहा।

कश्यपनगर (जिला अहमदाबाद, गुजरात)

वर्तमान कासद्रा। यह अहमदाबाद से चौदह मील दूर है। कहा जाता है कि प्राचीन काल में यहां साबरमती नदी के तट पर कश्यप ऋषि का आश्रम था। इस स्थान के निकट भद्रेश्वर और कोटेश्वर नामक शिवमंदिर बहुत प्राचीन जान पड़ते हैं। ये दोनों साबरमती के तट पर हैं।

कश्यपमेरु

कश्मीर का प्राचीन नाम अर्थात् कश्यप का पर्वत। कश्मीर शब्द को कश्यपमेरु का ही रूपांतर कहा जाता है। दूसरा मत यह भी है कि कश्मीर, (कश्यप की झील) का अपभ्रंश है (दे० कश्मीर)।

कसरावाड (म० प्र०)

महेश्वर के निकट स्थित है। यहां ई० पू० शतियों के अनेक स्मारकों के भग्नावशेष हैं।

कसिया दे० कुशीनगर

कसिआरी=काशीपुरी (उड़ीसा)

कहाव दे० ककुभग्राम

कहौम दे० ककुभग्राम

काकजोल=कजंगल

कांगड़ा (हि० प्र०)

कांगड़ा घाटी का प्राचीन नाम त्रिगर्त था। गुप्त काल में यह प्रदेश कर्तृपुर में सम्मिलित था। महाभारत के समय में कांगड़ाप्रदेश का राजा सुशर्मचंद्र था। यह कौरवों का मित्र था। कांगड़ा का ज्वालामुखी का मंदिर तीर्थरूप में दूर दूर तक प्रसिद्ध है। कांगड़ा कोट या नगरकोट जहां यह मंदिर है, समुद्रतल से 2500 फुट ऊंचा है। यहां बान गंगा और पातालगंगा का संगम होता है। नगरकोट के दुर्ग के भीतर कई प्राचीन मंदिर है। इनमें लक्ष्मी नारायण, अंबिका और आदिनाथ तीर्थंकर के मंदिर प्रसिद्ध हैं। दुर्ग के भीतर की अपार संपत्ति की खबर सुन कर ही महमूद गजनी ने 1009 ई० में नगरकोट पर आक्रमण किया और नगर को बुरी तरह लूटा। तत्कालीन इतिहास लेखक अल्उतबी ने तारीखे यामिनी में लिखा है कि 'नगरकोट की धन राशि इतनी अधिक थी कि उसको ढोने के लिए अनेक ऊंटों के काफले भी अपर्याप्त थे और न उसे जलयानों से ले

जाता सभव था । लेखक उसका वर्णन करने में असमर्थ थे और गणितज्ञ उसके मूल्य का अनुमान भी न लगा सकते थे ।' 18वीं शती में फीरोज तुगलक ने नगरकोट पर आक्रमण किया तथा यहा के ज्वालामुखी मदिर को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया किंतु लगभग नौ मास तक दुर्ग के घिरे रहने के पश्चात ही वहा के राजा रूपचद्र ने सुलतान से सधि की वार्ता प्रारभ की । 14वीं शती के प्रारभ मे कागडा नरेश हरिश्चद्र गुलेर के जगल में आखेट करता हुआ एक कुए मे गिर गया । उसके राजधानी मे न लौटने पर उसके छोटे भाई को कागडा की गद्दी पर बिठा दिया गया किंतु हरिश्चद्र को पास से गुजरते हुए एक व्यापारी ने कुए से निकाल लिया और वह कागडा लौट आया । हरिश्चद्र का अपने भाई के साथ झगडा स्वाभाविक रूप से हो सकता था किंतु उसने उदारता और बुद्धिमानी से काम लिया और एक नए राज्य की नीव डाली और कागडा पर छोटे भाई का ही राज्य करने दिया । मुगल सम्राट अकबर के समय मे कागडा नरेश ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली । 1619 ई० में जहागीर ने एक वर्ष के घेरे के उपरात दुर्ग को हस्तगत कर लिया । वह नूरजहा के साथ दो वर्ष पश्चात कागडा आया जिसका स्मारक दुर्ग का जहागीर दरवाजा है । इसमे तीन मेहराबो को मिला कर एक मुख्य मेहराब बनाया गया है । कागडा मे काफी समय तक मुगल फौजदार रहते रहे । मुगल-राज्य के अतिम समय मे कागडा नरेश ससार चद्र हुए जिन्होने चित्रकला को बहुत प्रश्रय दिया जिसके कारण कागडा नाम से एक नई चित्रकला शैली का जन्म हुआ । इस शैली मे मुगल तथा कागडा की स्थानीय शैलियो का सगम है । इसी प्रकार मुगल राज्य के सपर्क के फलस्वरूप कागडा के राजकीय रहन सहन पर भी काफी प्रभाव पडा था । नगरकोट के किले मे जहागीर ने एक मसजिद बनवाई थी जिसकी अब केवल दीवारें शेष है । रणजीतसिंह द्वार के निकट ही एक सुदर स्नानगृह (मुगल शैली का हम्माम) है जो शीत या ग्रीष्मकाल दोनो ऋतुओ मे काम आता था ।

काचना (जिला अजमेर, राजस्थान)

पुष्कर के निकट बहने वाली नदी । कहते है कि पुष्कर की मुख्य नदी सरस्वती का ही एक रूप काचना है ।

काची = काचीपुरम = काजीवरम

काची की गणना सप्त मोक्षदायिका पुरियो मे है—दे० सप्तपुरी । यह दक्षिण भारत का सर्वप्रसिद्ध तीर्थ है । यहा एक सहस्र मदिर तथा दस सहस्र शिवलिंग प्रतिमाए स्थित मानी जाती है । काची के विष्णुकाची और शिव काची नामक दो भाग हैं । यहा के मदिर मुख्यत विजयनगर के शासको

तथा पल्लवनरेशो के समय के हैं। 16वी शती मे विजयनगर-नरेशो के बनवाए हुए कई विशाल मदिर यहा की शोभा बढाते हैं। कृष्णदेवराय द्वारा निर्मित एकाम्रेश्वर-शिव के मदिर का गोपुर 184 फुट ऊचा है और इसमे आठ खंडे ह। शिवप्रतिमा मिट्टी की है। पास ही एक विशाल आम्रवृक्ष है जो कहा जाता है कि एक हजार वष पुराना है। कहते हैं इसमे चार प्रकार के फल लगते हैं। इसके नीचे शिव पावती की सुदर मूर्तिया हैं जिन पर दोनो का परस्पर प्रणयभाव अकित है। मदिर के 600 फुट लबे बरामदे मे भित्ति के पास 108 शिवलिंग हैं। सुब्रह्मण्य, गणेश, पार्वती, विष्णु तथा अ य देवो की मूर्तिया के भी अनेक स्थान हैं। एक शिवाल्य मे एक विशाल शिवलिंग है जिसके अदर 1008 लघु लिंगा का अकन किया गया है। यही एक सहस्र खभो वाला ऊची वेदी पर बना एक भव्य मडप है जो अब जीणशीण हो चला है। इस मदिर का अधि काश भाग विजय-नरेशो के समय का है। पौराणिक गाथा है कि महेश्वर शिव जिस समय ससार के सजन, पालन तथा विनाश मे सलग्न थे उस समय पावती ने शृगारिक भावावेश मे उनकी आखे मूद ली जिससे सारी सृष्टि म अधकार छा गया। रुष्ट होकर शिव ने पावती को कैलास से चला जाने को कहा और काची मे इस मदिर के स्थान पर रहने की आज्ञा दी। विष्णुकाची या छाटी काची मे वरदराज स्वामी का विष्णु मदिर है। इसका सौ स्तभो का मडप विशेषरूप से उल्लेखनीय है। इसके स्तभ अश्वारोहियो के रूप मे शिल्पित है और कणाश्म या ग्रेनाइट से निर्मित है। इनमे विष्ण विषयक अनेक पौराणिक कथाओ का निदशन है। इनका सा कल्पनापूण शिल्प सारे भारत मे दुलभ है। मदिर की छत के चारो कोना पर दस फुट लबी उसी पत्थर म से काटी हुई शृखलाए, विजयनगरकालीन शिल्पिया की आश्चयजनक कला की परिचायक है। मदिर म इसके मूल्यवान रत्न सुरक्षित ह जिन्हे लाड क्लाइव तथा प्लेस (Place) और गैरो (Garrow) नामक अग्रेजा ने दान म दिया था। एक ब्राह्मण ने भी इस मदिर के लिए प्रतिदिन दस रुपए के हिसाब स 24 हजार रुपया जमा करने का व्रत लिया था। उसने इस मदिर को रत्ना का विशाल भडार उपहार रूप मे दिया। कामाक्षी का मदिर अपेक्षाकृत छोटा है और गभगह अधेरा है। इनके अतिरिक्त पल्लवकालीन दो मदिर भी यहा स्थित ह। कैलाशनाथ का मदिर लगभग 1200 वष प्राचीन है। यह पल्लव नरेश नदिवमन् द्वितीय द्वारा निर्मित है। यह और वैकुठ पेरुमल का मदिर दोनो काची के अन्य मदिरो से सजावट म भिन्न हैं। इनकी समानता महावली-पुरम् के मदिरा स की जाती है। कैलाशनाथ के मदिर के गभगह म एक

विशाल साक्षेत्रिक (prismatic) लिंग है। मदिर के प्रकोष्ठो मे सुदर भित्ति-चित्र हैं और दीवारो पर शिवसबधी पौराणिक गाथाए मूर्तिकारी के रूप म अंकित हैं। वैकुंठ परुमल मदिर भी इसी नक्शे पर बना है। इसके बरामदा मे पल्लवनरेशो का इतिहास अंकित है। विमान शिखर तीन तला का है और इसकी भित्तियो पर अंकित मूर्तिया का जमघट सा दिखाई देता है। काची मे सात प्रसिद्ध ताल भी है। इस नगरी की सड़कें जि हे प्रारभ मे पल्लवशासका ने बनवाया था, लबी, सीधी और चौडी है और भारत के किसी भी प्राचीन नगर की सडको से श्रेष्ठ है। काची चौदह सौ वर्षो तक अनेक राजाओ की राजधानी रही। गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति मे काची के राजा विष्णुगोप (पल्लव) का उल्लेख है। 7वी शती ई० मे चीनी यात्री युवानच्वाग काची आया था। उस समय नगर की परिधि छ मील थी। 11वी शती म चोलनरेशा का यहा अधिकार था। 1310 ई० मे अलाउद्दीन खिलजी के दक्षिण भारत पर आक्रमण के समय यहा के भी मदिरा का विध्वस किया गया किंतु शीघ्र ही विजयनगर के नरेशा न इसे अपने राज्य मे सम्मिलित कर लिया। विजयनगर के पतन के पश्चात् काची की प्राचीन गरिमा को ग्रहण सा लग गया। 1677 ई० मे मराठो और तत्पश्चात् औरगजेब का यहा कब्जा रहा। 1752 ई० म क्लाइव ने इसे छीन लिया और मद्रास प्रात मे शामिल कर लिया।

काची का सबध कई प्रसिद्ध विद्वानो से बताया जाता है जिनमे सस्कृत के यशस्वी कवि भारवि और दडी मुख्य हैं। तामिल कवि अप्पार और सुदरस्वामी भी काची के निवासी थे। नालदा के कुलपति धमपाल जो अपने समय के प्रसिद्ध दार्शनिक विद्वान् थे काची मे पर्याप्त समय तक रहे थे। मालती माधव नाटक के प्रसिद्ध टीकाकार त्रिपुरारिसूर भी काची निवासी थे। उ होन अपनी टीका म एकाम्रेश्वर की प्रशसा मे लिखा है, 'एकाम्रमूलनिलय करि-भूधरनायकौ, काची पुरीश्वरौव दे कामिताय प्रसिद्धये'। काची 7वी शती ई० म जैनधम का विशाल केंद्र था। चीनी यात्री युवानच्वाग ने लिखा है कि उसने काची मे अनेक दिगबर जैन मदिर देखे थे। काची नरेश महद्रवमन् प्रथम (600–630 ई०) प्रारभ मे जैन ही था यद्यपि बाद मे वह शैव हो गया था।

काचीपुरम्=काची।

काजीवरम्=काची।

काडी (ज़िला मेदक, आ० प्र०)

प्राचीन मदिरा के अवशेषो के लिए उल्लेखनीय है।

कांतनगर (ज़िला दीनाजपुर, बंगाल)

1704–22 ई० में निर्मित कांत का मंदिर उल्लेखनीय है। यह मंदिर गौड़ की मध्ययुगीन (14वीं-15वीं शती) वास्तु शैली में बना हुआ है।

कांतारक

महाभारत, सभा० 31, 13 में सहदेव की दिग्विजययात्रा के प्रसंग में इस प्रदेश का उल्लेख है—'कान्तारकांश्चसमरे तथा प्राक्कोसलान् नृपान् नाटकेयांश्च समरे तथा हैरम्बकान् युधि'। कांतारक अवश्य ही गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति में वर्णित महाकांतार है जहां के अधिपति व्याघ्रराज को समुद्रगुप्त ने परास्त किया था। महाकांतार मध्यप्रदेश के पूर्वोत्तर भाग में स्थित जंगली भूखंड का प्राचीन नाम था (कांतार=घना जंगल)। इसमें भूतपूर्व बस्तर रियासत सम्मिलित थी।

कांतित (ज़िला मिर्जापुर, उ० प्र०)

विंध्याचल स्टेशन से प्राय: डेढ़ मील गंगा के दक्षिण की ओर स्थित है। कई विद्वानों ने पुराणों में वर्णित नागवंशीय राजाओं की राजधानी त्रिपुरी का अभिज्ञान कांतित से किया है जो संदिग्ध जान पड़ता है। कांतित में एक प्राचीन दुर्ग के अवशेष मिले हैं। कांतित के समीप शिवपुर नामक कस्बे से भी प्राचीन मूर्तियां मिली हैं जिससे इस क्षेत्र की प्राचीनता सिद्ध होती है।

कांतिपुर

नेपाल के प्राचीन राजाओं की राजधानी। यहां के राजा जयप्रकाश मल्ल को 1769 ई० में पृथ्वीनारायण शाह गोरखा ने हराकर नेपाल को राजनैतिक एकता के सूत्र में बांधा था। ये ही वर्तमान राजवंश के पूर्वज थे। पृथ्वीनारायण ने ही पहले पहल काठमांडू में नेपाल की राजधानी बनाई थी।

कांतिपुरी (ज़िला ग्वालियर म० प्र०)

वर्तमान कोतवार जो डमोरा स्टेशन से बारह मील दूर है। यह अहसन नदी के तट पर स्थित है और ग्वालियर से बीस मील है। कांतिपुरी जो प्राचीन पद्मावती के निकट ही स्थित थी गुप्तकाल में नागराजाओं के अधिकार में थी। विष्णुपुराण 4,24 64 में पद्मावती में नागराजाओं का उल्लेख है। कांतिपुरी के कुंतिपुरी, कुंतिपद और कुंतलपुरी आदि नाम भी मिलते हैं। पांडवों की माता कुंती संभवत: इसी नगरी के राजा कुंतिभोज की पुत्री थी। दे० कुंतिभोज।

कांपिल्य=कंपिला (ज़िला फरुखाबाद, उ० प्र०)

कांपिल्य की गणना भारत के प्राचीनतम नगरों में है। सर्वप्रथम इसका

नाम यजुर्वेद तैत्तिरीय सहिता 7,4,19,1 म 'काम्पील' रूप मे प्राप्य है। सभव है कि पुराणो मे उल्लिखित पचालनरेश भृम्यश्व क पुत्र कपिल या कापिल्य के नाम पर ही इस नगरी का नामकरण हुआ हो। महाभारतकाल से पहले पचालजनपद गगा के दोनो ओर विस्तृत था। उत्तरपचाल की राजधानी अहिच्छत्र (जिला बरेली, उ० प्र०) और दक्षिण पचाल की कापिल्य थी। दक्षिण पचाल के सवप्रथम राजा अजमीढ का पुराणो मे उल्लेख है। इसी वश मे राजा नीप और ब्रह्मदत्त हुए थे। महाभारत के समय द्रोणाचाय ने पचालनरेश द्रुपद को हराकर उससे उत्तरपचाल का प्रदेश छीन लिया था। इस प्रसग के वणन मे महाभारत आदि० 137,73–74 मे कापिल्य को दक्षिण पचाल की राजधानी बताया गया है—'माकदीमथ गगायास्तीरे जनपदायुताम, सोऽध्यावसद् दीनमना कापिल्य च पुरोत्तमम। दक्षिणाश्चापि पचालान् तावच्चमण्वती नदी, द्रोणेन चैव द्रुपद परिभूयाथ पालित'। इस समय दक्षिण पचाल का विस्तार गगा के दक्षिण तट से चवल तक था। ब्रह्मदत्त जातक मे भी दक्षिण पचाल का नाम *कपिलरट्ठ अर्थात कापिल्यराष्ट्र है। बौद्धसाहित्य मे कापिल्य का वणन* बुद्ध के जीवनचरित्र के सबध मे है। किवदती के अनुसार इसी स्थान पर उन्होने कुछ आश्चयजनक चमत्कार दिखाए थे जैसे स्वग मे जाकर अपनी माता को उपदेश देना। जैनसूत्रप्रज्ञापणा मे कपिला या कापिल्य का उल्लेख अन्य कई नगरो के साथ किया गया है। विविधतीथकल्प (जैनसूत्रग्रथ) के लेखक ने कापिल्य का गगातट पर स्थित बताया है और उसे तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथ के जीवन की पाच घटनाओ से सम्बद्ध माना है। इसी कारण इस नगरी को पचकल्याणक नाम से भी अभिहित किया गया है। कापिल्य को जैन साहित्य मे कौडिन्य और गदवालि के शिष्य आयमित्र से भी सबधित माना गया है।

चीनी यात्री युवानच्वाग ने इस नगरी को अपने पयटन के दौरान देखा था। वतमान कपिला मे एक अतिप्राचीन टीला आज भी द्रुपद का कोट कहलाता है। बूढीगगा के तट पर द्रौपदी कुड है जिससे महाभारत की कथा के अनुसार द्रौपदी और धृष्टद्युम्न का जन्म हुआ था। कुड से बडे परिमाण की, सभवत मौयकालीन, इटें निकली हैं। कपिला के मदिरो से अनेक मूर्तिया प्राप्त हुई हैं। कपिला बौद्धधम के समान ही जैनधम का भी बडा केंद्र था जैसा कि उपयुक्त उद्धरणो से तथा यहा से प्राप्त अवशेषो से प्रमाणित होता है। कापिल्य को कपिल्लनगर और कपिला भी कहा जाता था। साहित्य मे इसका अपभ्रश रूप कापील भी मिलता है। कापिल्यनगरी प्राचीनकाल मे काशी, उज्जयिनी आदि की भाति ही बहुत प्रसिद्ध थी और प्राचीन साहित्य म इस

अनेक कथा कहानियों की घटनास्थली माना गया है, जैसे महाभारत, शांति० 139,5 में राजा ब्रह्मदत्त और पूजनी चिड़िया की कथा का कांपिल्य में ही घटित माना गया है, 'कांपिल्ये ब्रह्मदत्तस्य त्वन्त पुरवासिनी, पूजनी नाम शकुनि दीर्घ काल सहोषिता'। लोकश्रुति के अनुसार ज्योतिषाचार्य वराह मिहिर का जन्म कांपिल्य में ही हुआ था।

कांपिल्यराष्ट्र=दे० कांपिल्य

कांपील=दे० कांपिल्य

कांबोज=दे० कंबोज

कातारी (महाराष्ट्र)

दे० पंचगंगा। पंचगंगा कृष्णा की सहायक नदी है।

काकदी

(1)=पुहार (मद्रास)। भरहुत अभिलेख (सं० 101, इंडियन ऐंटिक्वेरी 21, 235) में उल्लिखित दक्षिण भारत का एक बंदरगाह जो ई० सन् की प्रारंभिक शतियों तक दूर दूर तक प्रसिद्ध था। इस काल में दक्षिण भारत का रोम-साम्राज्य के साथ व्यापार इस बंदरगाह द्वारा होता था। विद्वानों का मत है कि पेरिप्लस, अध्याय 60 में इसी को कमर और टॉलमी के भूगोल (7,1,13) में कबेरिस कहा गया है। काकदी कावेरी की उत्तरी शाखा के मुहाने पर बसा हुआ था। जैन ग्रंथ अंतकृतदशांग में काकदी नगर के धनी गृहस्थ क्षेमक और धृतिहर का उल्लेख है। तमिल अनुश्रुति के अनुसार काकदी का बंदरगाह समुद्र में डूब कर विलुप्त हो गया था (दे० एंशेंट इंडिया, अय्यंगर, पृ० 352)। संभवतः यह घटना तीसरी शती ई० के प्रारंभिक वर्षों से पहले ही हुई होगी। काकदी को पुहार नामक वर्तमान कसबे से अभिज्ञात किया जाता है (दे० कावेरीपत्तन)।

(2) (ज़िला गोरखपुर, उ० प्र०) वर्तमान खुखदो ग्राम। इसका प्राचीन नाम किष्किंधापुर भी है। यह प्राचीन जैन तीर्थ है जिसका संबंध पुष्पदंतस्वामी से बताया जाता है।

काक

गुप्तसम्राट् महाराजाधिराज समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में समुद्रगुप्त के साम्राज्य की पश्चिमी व पश्चिम दक्षिणी सीमा पर स्थित कुछ अधीन प्रजातियों की सूची में 'काक' भी है—'मालवार्जुनायनयौधेय मद्रकाभीरप्रार्जुन सनकानिक काक खरपरिक'। इनका प्रदेश संभवतः काकूपुर (ज़िला कानपुर, उ० प्र०) के निकट रहा होगा। विंसेंट स्मिथ के अनुसार यह काकनाद अथवा साँची का परिवर्ती प्रदेश है। काक का पाठांतर खाक है।

काकनादबोट

साची (म० प्र०) का प्राचीन नाम जो यहा से प्राप्त अभिलेखो से ज्ञात होता है (दे० गुप्त सवत् 93=412-413 ई० का प्रस्तर लेख—फ्लीट गुप्त इसक्रिप्शस)।

काकरवाड

प्राचीन काकुभक्र (आ० प्र०)। यह कृष्णानदी के तट पर स्थित है। यह महाप्रभु वल्लभाचाय के माता पिता का निवासस्थान था। वल्लभाचाय का जन्म चपारन (बिहार) के समीप चतुर्भुजपुर म हुआ था।

काकरौली (जिला उदयपुर, राजस्थान)

उदयपुर से 40 मील उत्तर म स्थित है। यहा का उल्लेखनीय स्थान राजसमद (राजसमुद्र) नामक एक सुदर झील है जिसे मेवाड नरेश राजसिंह ने 1662 ई० मे बनवाया था। इसकी लबाई 4 मील, चौडाई 1¾ मील और गहराई लगभग 55 फुट है। कहा जाता है यह झील जो अकाल पीडितो की सहायता के लिए बनवाई गई थी, 24 वर्षों म बन कर तैयार हुई थी और उसके बनवाने म 10,50,76,09 रुपए व्यय हुए थे। झील पर तीन मील लबा एक बाध है जो राजनगर के सगमरमर का बना है। इस पर तीन बारहदरिया और अनेक चौकिया व तोरण निर्मित है जिनका शिल्प और मूर्तिकारी विशेष रूप से सराहनीय है। तोरणो के बीच पच्चीस काले पत्थर के पट्टो पर 1017 श्लोको का एक सस्कृत महाकाव्य उत्कीर्ण है जो 1675 ई० म अकित किया गया था। यह शिलालेख अपने ढग का अनुपम है। इससे अधिक विस्तृत प्रस्तरलेख भारत मे सभवत अयत्र नही है।

काकुभपुर (आ० प्र०)

वतमान काकरवाड। यह भक्तिकाल के प्रसिद्ध सत महाप्रभुवल्लभाचाय का पैतृक निवास स्थान है जो कृष्णा नदी के तट पर स्थित है। पास ही व्योमस्तभ नामक पवत है। वल्लभाचाय का जन्म चतुर्भुजपुर (चोडनगर, बिहार) मे हुआ था। उस समय इनके माता पिता काशी की तीथयात्रा के दौरान यहा आए हुए थे।

काकूपुर दे० कार

कागपुर (म० प्र०)

पूवमध्यकालीन इमारतो के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

काचरफल्लिक दे० खोह

काजरग्राम (लंका)

दे० महावंश 19,54,61। दक्षिण लंका में मैनक गंगा के तट पर वर्तमान कतरगाम। संघमित्रा द्वारा लंका में बोधिवृक्ष की एक शाखा (महाबोधि) लाई जाने पर इस ग्राम के क्षत्रिय तथा ब्राह्मण अन्य लोगों के साथ उसे देखने के लिए आए थे। बोधिवृक्ष की उस शाखा के एक अंकुर को इस ग्राम में लगाया गया था।

काठमंडू (नेपाल)=काष्ठमंडप

नेपाल की राजधानी। यहां के अधिकांश पुराने मंदिर तथा भवन काष्ठद्वारा निर्मित होने के कारण ही यह नगर काठमंडू कहलाया। इसका प्राचीन नाम मंजुपाटन था। काठमंडू के पशुपतिनाथ के मंदिर की दूर दूर तक ख्याति है। दे० नेपाल।

काडगु दे० कुर्ग

काजीपेट (जिला वारंगल, आ० प्र०)

19वीं शती के पूर्वभाग में एक काजी का बनवाया हुआ एक गुंबददार मकबरा यहां स्थित है। पास ही सुंदर चट्टानें हैं जिनमें से एक पर शृंगाकार पत्थरों के ढांके दिखलाई देते हैं। इन चट्टानों के शिखर पर तीन अतिप्राचीन मंदिर हैं जिन पर प्रारंभिक हिंदू काल की सुंदर नक्काशी के नमूने मिलते हैं। काजीपेट से एक मील दक्षिण मुंडीकोंडा नामक स्थान है जहां एक विशाल चट्टान पर कई प्राचीन मंदिर हैं। द्रविड शैली में बने हुए शिव और विष्णु के मंदिरों में स्तूपाकार शिखर हैं। पास ही ग्राम में भी एक सुंदर शिवमंदिर है।

काठियावाड (गुजरात)

प्राचीन किंवदंती है कि इस प्रदेश का नाम कठजाति के यहां निवास करने के कारण ही काठियावाड हुआ था। यह जाति जिससे अलक्षेंद्र (सिकंदर) की पश्चिमी पंजाब पर आक्रमण के समय (326 ई० पू०) मुठभेड़ हुई थी तथा जिसकी वीरता का गुणगान तत्कालीन ग्रीक लेखकों ने किया था मुक्त पंजाब में रहती थी। अलक्षेंद्र के आक्रमण के पश्चात् ये लोग काठियावाड प्रदेश में आकर बस गए और तत्पश्चात् घूमते फिरते राजपूताना और मालवा तक जा पहुंचे। कठ लोग सूर्य के उपासक थे। प्राचीन साहित्य में काठियावाड के सुराष्ट्र और आनर्त आदि नाम मिलते हैं (कठगणराज्य, सुराष्ट्र, आनर्त)।

कादंबरी

विविध तीर्थ कल्प (जैन ग्रंथ) में चंपा के निकट एक वन का नाम। इसके निकट कुंड नामक एक विशाल सरोवर और काली नाम की एक पहाड़ी

का भी उल्लेख है। इस स्थान पर चार मास तक प्रथम तीथकर पाश्वनाथ भ्रमण करते रहे थे। महीधर नामक एक हाथी ने इस वन मे पाश्वनाथ की कमल पुष्पो से पूजा की थी। इसी स्थान पर महाराज करकडु ने पाश्वनाथ का एक मदिर बनवाया था। इस तीथ को कालिकुड तीथ भी कहते थे।

कानसोना दे० कणसुवण

कानिसपुर दे० कनिष्कपुर

कान्यकुब्ज

(1)=कन्नौज (जिला फरुखाबाद, उ० प्र०)। कान्यकुब्ज की गणना भारत के प्राचीनतम ख्यातिप्राप्त नगरो म की जाती है। वाल्मीकि-रामायण के अनुसार इस नगर का नामकरण कुशनाभ की कुब्जा कन्याओ के नाम पर हुआ था। पुराणो मे कथा है कि पुरुरवा के कनिष्ठ पुत्र अमावसु ने कान्यकुब्ज राज्य की स्थापना की थी। कुशनाभ इन्ही का वशज था। कान्यकुब्ज का पहला नाम महोदय बताया गया है। महोदय का उल्लेख विष्णुधर्मोत्तर पुराण मे भी है, 'पचालाख्योस्ति विषयो मध्यदशेमहोदयपुर तत्र', 1,20,2-3। महाभारत मे कान्यकुब्ज का विश्वामित्र के पिता राजा गाधि की राजधानी के रूप मे उल्लेख है (दे० गाधिपुर)। उस समय कान्यकुब्ज की स्थिति दक्षिण पचाल मे रही होगी किंतु उसका अधिक महत्त्व नही था क्योकि दक्षिण पचाल की राजधानी कापिल्य मे थी। दूसरी शती ई० पू० मे कान्यकुब्ज का उल्लेख पतजलि ने महाभाष्य म किया है। प्राचीन ग्रीक लेखको को भी इस नगर के विषय मे जानकारी थी। चद्रगुप्त और अशोक मौय के शासन काल मे यह नगर मौय साम्राज्य का अग जरूर ही रहा होगा। इसके पश्चात शुग और कुषाण और गुप्त नरेशो का क्रमश कान्यकुब्ज पर अधिकार रहा। 140 ई० के लगभग लिखे हुए टॉलमी के भूगोल मे कन्नौज को कनगौर या कनागिजा लिखा गया है। 405 ई० म चीनी यात्री फाह्यान कन्नौज आया था और उसने यहा केवल दो हीनयान विहार और एक स्तूप देखा था जिससे सूचित होता है कि 5वी शती ई० तक यह नगर अधिक महत्वपूण नही था। कान्यकुब्ज के विशेष ऐश्वय का युग 7वी शती से प्रारभ हुआ जब महाराजा हप न इसे अपनी राजधानी बनाया। इससे पहले यहा मौखरी वश की राजधानी थी। इस समय कान्यकुब्ज को कुशस्थल भी कहते थे। हपचरित के अनुसार हप के भाई राज्यवधन की मृत्यु के पश्चात गुप्त नामक व्यक्ति ने कुशस्थल को छीन लिया था जिसके परिणाम-स्वरूप हप की बहिन राज्यश्री को विध्याचल की ओर चला जाना पडा था। कुशस्थल मे राज्यश्री के पति गहवर्मा मौखरी की राजधानी थी।

चीनी यात्री युवानच्वांग के अनुसार कान्यकुब्ज प्रदेश की परिधि 400 ली या 670 मील थी। वास्तव में हर्षवर्धन (606–647 ई०) के समय में कान्यकुब्ज की अभूतपूर्व उन्नति हुई थी और उस समय शायद यह भारत का सबसे बड़ा एवं समृद्धिशाली नगर था। युवानच्वांग लिखता है कि नगर के पश्चिमोत्तर में अशोक का बनवाया हुआ एक स्तूप था जहां पूर्वकथा के अनुसार गौतम बुद्ध ने सात दिन ठहरकर प्रवचन किया था। इस विशाल स्तूप के पास ही अन्य छोटे स्तूप भी थे और एक विहार में बुद्ध का दांत भी सुरक्षित था जिसके दर्शन को सैंकड़ों यात्री आते थे। युवानच्वांग ने नगर के दक्षिणपूर्व में अशोक द्वारा निर्मित एक अन्य स्तूप का वर्णन भी किया है जो दो सौ फुट ऊंचा था। किंवदंती है कि गौतम बुद्ध इस स्थान पर छः मास तक ठहरे थे। युवानच्वांग ने कान्यकुब्ज के सौ बौद्धविहारों और दो सौ देव मंदिरों का उल्लेख किया है। वह लिखता है कि 'नगर लगभग पांच मील लंबा और डेढ़ मील चौड़ा है और चतुर्दिक् से सुरक्षित है। नगर के सौंदर्य और उसकी संपन्नता का अनुमान उसके विशाल प्रासादों, रमणीय उद्यानों, स्वच्छ जल से पूर्ण तड़ागों और सुंदर देशों से प्राप्त वस्तुओं से सजे हुए संग्रहालयों से किया जा सकता है'। उसके निवासियों की भद्र वेशभूषा, उनके सुंदर रेशमी वस्त्र, उनका विद्या प्रेम तथा शास्त्रानुराग और कुलीन तथा धनवान कुटुंबों की अपार संख्या ये सभी बातें कन्नौज को तत्कालीन नगरों की रानी सिद्ध करने के लिए पर्याप्त थे। युवानच्वांग ने नगर के देवालयों में महेश्वर शिव और सूर्य के मंदिरों का भी जिक्र किया है। ये दोनों कीमती नीले पत्थर के बने थे और उनमें अनेक सुंदर मूर्तियां उत्कीर्ण थीं। युवानच्वांग के अनुसार कन्नौज के देवालय, बौद्धविहारों के समान ही भव्य और विशाल थे। प्रत्येक देवालय में एक सहस्र व्यक्ति पूजा के लिए नियुक्त थे और मंदिर दिन रात नगाड़ों तथा संगीत के नाद से गूंजते रहते थे। युवानच्वांग ने कान्यकुब्ज के भद्रविहार नामक बौद्ध महाविद्यालय का भी उल्लेख किया है, जहां वह 635 ई० में तीन मास तक रहा था। यहीं रहकर उसने आर्य वीरसेन से बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन किया था।

अपने उत्कर्षकाल में कान्यकुब्ज जनपद की सीमाएं कितनी विस्तृत थीं, इसका अनुमान स्कंदपुराण से और प्रबंधचिंतामणि के उस उल्लेख से होता है जिसमें इस प्रदेश के अंतर्गत छत्तीस लाख गांव बताए गए हैं। शायद इसी काल में कान्यकुब्ज के कुलीन ब्राह्मणों की कई जातियां बंगाल में जाकर बसी थीं। आज के कन्नौजिया ब्राह्मण इन्हीं जातियों के वंशज बताए जाते हैं।

हर्ष के पश्चात् कन्नौज का राज्य तत्कालीन अव्यवस्था के कारण छि

भिन्न हो गया। आठवीं शती मे यशोवर्मन् कन्नौज का प्रतापी राजा हुआ। गौडवहो नामक काव्य के अनुसार उसने मगध के गौड राजा को पराजित किया। कल्हण के अनुसार कश्मीर के प्रसिद्ध नरेश ललितादित्य मुक्तापीड ने यशोवर्मन के राज्य का मूलोच्छेद कर दिया ('समूलमुत्पाटयत्') और कान्यकुब्ज को जीतकर उसे ललितपुर (=लाटपौर) के सूर्यमंदिर को अर्पित कर दिया। कल्हण लिखता है कि ललितादित्य का कान्यकुब्ज प्रदेश पर उसी प्रकार अधिकार था जैसे अपने राजप्रासाद के प्रांगण पर। राजतरंगिणी मे, इस समय के कान्यकुब्ज के जनपद का विस्तार यमुनातट से कालिका नदी (=काली नदी) तक कहा गया है। यशोवर्मन् के पश्चात् उसके कई वंशजों के नाम हमे जैन ग्रन्थों तथा अन्य सूत्रों से ज्ञात होते है—इनमे वज्रायुध, इंद्रायुध और चक्रायुध नामक राजाओं ने यहां राज्य किया था। वज्रायुध का नाम केवल राजशेखर की कर्पूरमंजरी मे है। जैन हरिवंश के अनुसार 783–784 ई० मे इंद्रायुध कान्यकुब्ज में राज्य कर रहा था। कल्हण ने कश्मीर नरेश जयापीड विनयादित्य (राज्य-काल, 779–810 ई०) द्वारा कन्नौज पर आक्रमण का उल्लेख किया है। इसके पश्चात् ही राष्ट्रकूटवंशीय ध्रुव ने भी कन्नौज के इस राजा को पराजित किया। इन निरंतर आक्रमणो से कन्नौज का राज्य नष्टभ्रष्ट हो गया। राष्ट्रकूटों की शक्ति क्षीण होने पर राजपूताना मालवा प्रदेश के प्रतिहार शासक नागभट द्वितीय ने चक्रायुध को हराकर कन्नौज पर अधिकार कर लिया। इस वंश मे मिहिर भोज, महेंद्रपाल और महीपाल प्रसिद्ध राजा हुए। इनके समय मे कन्नौज के फिर एक बार दिन फिरे। प्रतिहारकाल मे कन्नौज हिंदूधर्म का प्रमुख केंद्र था। 8वीं शती से 10वीं शती तक हिंदू देवताओं के अनेक कलापूर्ण मंदिर बने जिनके सैकड़ों अवशेष आज भी कन्नौज के आसपास विद्यमान है। इन मंदिरों मे विष्णु, शिव, सूर्य, गणेश, दुर्गा और महिषमर्दिनी की मूर्तियां हैं। कुछ समय पूर्व शिवपार्वती परिणय की एक सुंदर विशाल मूर्ति यहां से प्राप्त हुई थी जो 8वीं शती की है। बौद्ध धर्म का इस समय पूर्णतः ह्रास हो गया था। प्रतिहारवंश की अवनति के साथ ही साथ कन्नौज का गौरव भी लुप्त होने लगा। 10वीं शती के अंत मे राज्यपाल कन्नौज का शासक था। यह भी उस महासंघ का सदस्य था जिसने सम्मिलित रूप से महमूद गजनवी से पेशावर और लमगान के युद्धों मे लोहा लिया था। 1018 ई० मे महमूद ने कन्नौज पर ही हमला कर दिया। मुसलमान नगर का वैभव देख कर चकित रह गए। अलउतबी के अनुसार राज्यपाल को किसी पड़ोसी राज्य से सहायता न प्राप्त हो सकी। उसके पास सेना थोड़ी ही थी और इसी कारण वह नगर

छोड कर गगा पार बारी की ओर चला गया। मुसल्मान सैनिकों ने नगर को लूटा, मदिरों को ध्वस्त किया और अनेक निर्दोष लोगो का सहार किया। अल्बरूनी लिखता है कि इस आक्रमण के पश्चात् यह विशाल नगर बिलकुल उजड गया। 1019 ई० म महमूद ने दुबारा कन्नौज पर आक्रमण किया और त्रिलोचनपाल से लडाई ठानी। त्रिलोचनपाल 1027 ई० तक जीवित था। इस वर्ष का उसका एक दानपत्र प्रयाग के निकट झूसी म पाया गया है। इसके पश्चात् प्रतिहारो का कन्नौज पर शासन समाप्त हो गया। 1085 ई० म फिर एक बार कन्नौज पर चद्रदेव गहडवाल ने सुव्यवस्थित शासन प्रबध स्थापित किया। उसके समय के अभिलेखो मे उसे कुशिक (कन्नौज), काशी उत्तरकोसल और इद्रस्थान या इद्रप्रस्थ का शासक कहा गया है। इस वश का सबसे प्रतापी राजा गोविंद चद्र हुआ। उसने मुसल्माना के आक्रमणो को विफल किया जैसा कि उसके प्रशस्तिकारो ने लिखा है—'हम्मीर (=अमीर) न्यस्तवैर मुहुरसमरणक्रीडया यो विधत्ते'। गोविंदचद्र बडा दानी तथा विद्याप्रेमी था। उसकी रानी कुमारदेवी बौद्ध थी और उसने सारनाथ मे धर्मचक्रजिनविहार बनवाया था। गोविंदचद्र का पुत्र विजयचद्र था। उसने भी मुसलमानो के आक्रमण से मध्यदेश की रक्षा की जैसा कि उसकी प्रशस्ति से सूचित होता है—'भुवनदलनहेलाहर्म्य हम्मीर (=अमीर) नारीनयनजलदधाराधौत भूलोकताप'। विजयचद्र का पुत्र जयचद्र (जयचद) 1170 ई० के लगभग कन्नौज की गद्दी पर बैठा। पृथ्वीराज रासो के अनुसार उसकी पुत्री सयोगिता का पृथ्वीराज ने हरण किया था। जयचद का मुहम्मद गौरी के साथ 1163 ई० मे, इटावा के निकट घोर युद्ध हुआ जिसके पश्चात कन्नौज से गहडवाल सत्ता समाप्त हो गई। जयचद्र ने इस युद्ध के पहले कई बार मुहम्मद गौरी को बुरी तरह से हराया था, जैसा कि पुरुषपरीक्षा के 'वारवार यवनेश्वर पराजयी पलायते' और रभामजरीनाटक के 'निखिल यवन क्षयकर' इत्यादि उल्लेखो से सूचित होता है। यह स्वाभाविक ही है कि मुसलमान इतिहास लेखको ने गौरी की पराजयो का वर्णन नही किया है किंतु उन्होने जयचद्र की उत्तरभारत के तत्कालीन श्रेष्ठ शासको मे गणना की है (दे० कामिलउत्तवारीख)। गहडवालो की अवनति के पश्चात् कन्नौज पर मुसल्मानो का आधिपत्य स्थापित हो गया किंतु इस प्रदेश मे शासको का निरतर विद्रोहो का सामना करना पडा। 1540 ई० मे कन्नौज शेरशाह के हाथ मे आया। उस समय यहा का हाकिम बैरक नियाजी था जिसके कठोर शासन के विषय मे प्रसिद्ध था कि उसने लोगो के पास हल के अतिरिक्त लोहे की कोई दूसरी वस्तु न छोडी थी। अकबर के

समय कन्नौज नगर आगरे के सूबे के अंतर्गत था और इसे एक सरकार बना दिया गया था जिसमें 30 महाल थे। जहांगीर के समय में कन्नौज को रहीम खानखाना को जागीर के रूप में दिया गया था। 18वीं शती में कन्नौज में बंगश नवाबों का अधिकार रहा किंतु अवध के नवाब और रुहेलों से उनकी सदा लड़ाई होती रही जिसके कारण कन्नौज में बराबर अव्यवस्था बनी रही। 1775 ई० में यह प्रदेश ईस्टइंडिया कंपनी के अधिकार में चला गया। 1857 ई० के स्वतंत्रता युद्ध में बंगश-नवाब तफज्जुल हुसैन ने यहां स्वतंत्रता की घोषणा की किंतु शीघ्र ही अंग्रेजों का यहां पुनः अधिकार हो गया। इस समय कन्नौज अपने आंचल में सैकड़ों वर्षों का इतिहास समेटे हुए और कई बार उत्तरी भारत के विशाल राज्यों की राजधानी बनने की गौरवपूर्ण स्मृतियों को अपने अंतस् में सजाए एक छोटा सा कस्बा मात्र है। कन्नौज के निम्न नाम प्राचीन साहित्य में उपलब्ध हैं—कन्यापुर (वराहपुराण), महोदय कुशिक, कोश, गाधिपुर, कुसुमपुर (युवानच्वांग), कण्णकुज्ज (पाली) आदि।

(2) कान्यकुब्ज नदी का उल्लेख मल्लिनाथ ने रघुवंश 6,59 में उल्लिखित 'उरगाख्यपुर' की टीका करते हुए कहा है—'उरगाख्यपुरस्य पाण्ड्य देशे कान्यकुब्जतीरवर्ति नागपुरस्य'। मल्लिनाथ के नागपुर का अभिज्ञान नेगापटम (आ० प्र०) से किया गया है।

कापरडा (मारवाड़, राजस्थान)

17वीं शती के एक सुंदर एवं भव्य जैन मंदिर के लिए उल्लेखनीय है।

काफिरिस्तान=प्राचीन कपिश।

काबुल दे० कुभा।

काम दे० काम्यकवन।

कामकोष्णपुरी

पुराणों में प्रसिद्ध कामकोष्णपुरी वर्तमान कुंभकोणम् (मद्रास) है। यह नगरी कावेरी के तट पर बसी हुई है और कुंभेश्वर, नागेश्वर और रामास्वामी के मंदिर, जिनमें श्रीराम की विविध लीलाएं भित्तिचित्रों में आलेखित हैं, के लिए प्रख्यात है। दे० कुंभकोणम।

कामगिरि

श्रीमद्भागवत 5,19,16 में पर्वतों की सूची में कामगिरि का उल्लेख है—'ककुभो नीलो गोकामुख इंद्रकील कामगिरि' संभवतः कामगिरि, चित्रकूट (जिला बांदा उ० प्र०) में स्थित कामदगिरि (कामता) है।

कामठा (ज़िला भंडारा, म० प्र०)

गोंदिया बालाघाट मार्ग पर स्थित चगरी टीले के निकट है। 300 वर्ष प्राचीन शिवमंदिर जो तांत्रिक शैली से प्रभावित है यहां का उल्लेखनीय स्मारक है। अनेक प्राचीन मूर्तियां भी यहां से प्राप्त हुई हैं।

कामदगिरि

चित्रकूट (जिला बांदा, उ० प्र०) का मुख्य पर्वत।

कामन (जिला भरतपुर, राजस्थान)

इस स्थान से खंडित पाषाण पर उत्कीर्ण, विष्णु के विविध अवतारों की कई गुप्तकालीन मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। यह पाषाण किसी मंदिर का भग्नांग जान पड़ता है। कामन में प्राचीन शिवमूर्तियां भी मिली हैं जिनमें एक चतुर्मुखी लिंगप्रतिमा भी है। इसके चार मुख विष्णु, ब्रह्मा, शिव और सूर्य के परिचायक हैं। एक पाषाण खंड पर शिवपार्वती के परिणय का सुंदर चित्र मूर्तिकारी में अंकित है। ये सब कलावशेष अब अजमेर संग्रहालय में हैं।

कामनूर (ज़िला उदयपुर, राजस्थान)

महाराणा प्रताप तथा अकबर की सेनाओं के बीच हल्दीघाटी की विकराल लड़ाई 1576 ई० में इसी ग्राम के मैदान में हुई थी (दे० हल्दीघाटी)।

कामपुरी

आंध्र का प्राचीन नगर कल्याण जिसकी चालुक्येश कामराज ने संस्थापना की थी।

कामरूप

प्राचीन असम का नाम विष्णु० 2, 3, 15 में कामरूप निवासियों को पूर्वदेशीय बताया है—'पूर्वदेशादिकाश्चैव कामरूप निवासिन'। कालिकापुराण में लौहित्या ब्रह्मपुत्र को कामरूप में प्रवाहित होने वाली नदी बताया गया है—'स कामरूपमखिल पीठमाप्लाव्य वारिणा, गोपयन सर्वतीर्थाणि दक्षिण याति सागरम्'। कालिदास ने रघुवंश 4, 83 84 में रघु द्वारा कामरूपनरेश की पराजय का वर्णन किया है—'तमीशः कामरूपाणामत्याखंडलविक्रमम्, भेजे भिन्न कटैर्नागैरन्यानुपरुरोध यैः। कामरूपेश्वरस्तस्य हेमपीठाधिदेवताम् रत्न पुष्पोपहारेणछायामानर्च पादयोः'।

कामलंका=कमरंग

कामवन (जिला भरतपुर, राजस्थान)

यह स्थान जिसे जनश्रुति में प्राचीन काम्यकवन बताया जाता है, अब एक छोटा सा कस्बा है। यहां से प्राप्त प्राचीन अवशेषों के आधार पर कामवन

अवश्य ही बहुत पुराना स्थान जान पड़ता है। कहा जाता है कि 12वी शती म रचित वराहपुराण मे इस वन का तीर्थरूप मे वणन है—'चतुर्थकाम्यकवन वनाना वनमुत्तमम्, तत्रगत्वा नरोदवि ममलाके महीयत' (मथुराखड, 2)। यहा इस वन की मथुरा के परिवर्ती वना मे गणना की गई है। कामवन को वैष्णव मप्रदाय मे आदि वृदावन भी कहा जाता है। वृदादेवी का मदिर यहा आज भी है। कामवन स छ मील दूर घाटा नामक स्थान से एक शिलालेख प्राप्त हुआ था जिससे सूचित होता है कि 905 ई० मे गुजर-प्रतिहार वश क शासक राजा भोजदेव ने कामेश्वर-महादेव के मदिर के लिए भूमि दान की थी। इससे इस स्थान का नाम कामेश्वर-शिव क नाम पर ही पडा मालूम होता है। चौरासी खभा नामक स्थान से भी, जो कामवन के निकट ही है, 9वी शती ई० का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है जिसम गुजर प्रतिहार वश क राजाओ का उल्लेख है। इस वश की रानी वच्छालिका न यहा विशाल विष्णुमदिर बनवाया था जिसे बाद म आक्रमणकारी मुसलमानो ने मसजिद के रूप मे परिवर्तित कर दिया था। इस मदिर को अब चौरासी खभा कहा जाता है। इसके खभो मे रूपवास और फतहपुर सीकरी का पत्थर लगा हुआ है। प्राचीन समय मे इन स्तभो की सख्या बहुत अधिक थी और इन पर गणेश, काली, विष्णु आदि की मनोहर मूर्तिया अकित थी जिन्ह मुसलमानो ने नष्ट कर दिया। स्थानीय जन श्रुति के अनुसार इस मदिर को जिसमे अनगिनत स्तभ थे, विश्वकर्मा ने एक ही रात मे बनाया था। 1882 ई० मे सर एलेग्जडर नाम के एक पयटक न इस मदिर के 200 स्तभो को देखा था। 13 वी शती म दिल्ली के सुल्तान इल्तुतमिश न इस मदिर पर आक्रमण करके नष्ट कर दिया था जसा कि प्रवेशद्वार पर अकित फारसी अभिलेख से सूचित होता है—'दिमुस्सुल्तान उल आल्म उल आदिल उल आजमुल मुल्क अबुल मुजफ्फर इल्तीतमिश उस्सुल्तान' ने इसके पश्चात 1353 ई० मे धमाध फीरोज तुगलक न कामवन पर आक्रमण किया और नगर के विनाश और कत्लेआम के साथ मदिर का भी विध्वस कर दिया। उसने प्रवेशद्वार के एक स्तभ पर अपना नाम खुदवा कर पश्चिम की ओर विष्णु प्रतिमा के स्थान पर सात फुट ऊचा और चार फुट चौडा एक मेहराबदार दरवाजा बनवा कर उसकी मेहराब पर कुरान की आयतें खुदवाइ। पास ही नमाज का चबूतरा बनवाया जो आज भी है। इस समय चौरासी खभो के बीच के चौक की लबाई 52 फुट 8 इच और चौडाई 49 फुट 9 इच है। मदिर के चारो ओर विस्तीर्ण खडहर पडे हुए है। यहा की कुछ मूर्तिया मथुरा के सग्रहालय म सुरक्षित है।

वन० 10, 11। काम्यकवन से पांडव द्वैतवन गए थे (वन० 28)।

काम्यकसर

महाभारत, सभा० 52, 20 मे उल्लिखित सरोवर जो शायद उडीसा की चिल्का-झील है—'शैलमान नित्य मत्तारचाप्यभित वाम्यक सर'। इसमे इस प्रदेश के हाथियो का वर्णन है।

कायमगज (जिला फर्रुखाबाद, उ० प्र०)

मुगल सम्राट फर्रुखसियर ने कन्नौज का प्रदेश मुहम्मदशाह बगश को जागीर मे दिया था। 1720 ई० मे उसके पुत्र कायमखा को उसका उत्तराधिकार प्राप्त हुआ। उसी ने अपने नाम पर इस नगर को बसाया था।

कायल (जिला तिन्नेवल्ली, केरल)

ताम्रपर्णीनदी के तट पर स्थित है। यह प्राचीन समय मे दक्षिण भारत का प्रसिद्ध बंदरगाह था जिसका यूरोपीय देशो से अच्छा व्यापार था। 13वी शती के अतिम चरण मे मार्कोपोलो (इटली का पर्यटक) यहा आया था और वह इस स्थान के निवासियो की समृद्धि देखकर चकित रह गया था। कालातर मे धीरे धीरे नदी के प्रवाह के साथ आने वाली मिट्टी से यह बदरगाह अट गया और बेकार हो गया अत पुर्तगालियो ने अपनी व्यापारिक कोठिया कायल को छोडकर तूतीकोरन म बनाई। कायल को आजकल पुराना कायल कहते है। यहा अब केवल थोडे-से मछियारो की झोपडिया हैं।

कायु

महाभारत सभा० 2 मे इस देश के निवासियो का कायव्य कहा गया है। इसका अभिज्ञान खबर दर्रे के प्रदेश के साथ किया गया है (द० उपायन पर्व, ए स्टडी, डा० मोतीचद्र)।

कारजा (जिला अकोला, महाराष्ट्र)

श्वेतांबर जैन तीर्थमालाओ म इस नगर का उल्लेख है—'एल्जपुरिकारजा नयरधनवन्त लोक वसितिहो सभरजिनमदिर ज्योति जागता देव दिगम्बर करी राजता'—प्राचीन तीर्थ माला सग्रह, भाग 1, पृ० 114। यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि कारजा, करज का ही रूपातर है।

कारधम

तानि सर्वाणि तीर्थानि तत प्रभृति चैवह, नारी तीर्थानि नाम्नेह ख्याति यास्यन्ति सर्वश' महा० आदि० 216, 11। उपर्युक्त श्लोक म जिन तीर्थों का निर्देश है वे ये हैं—अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारधम और भारद्वाज (महा० आदि० 216, 3 4)। ये पाचो तीर्थ दक्षिण समुद्र के तट पर स्थित थे—'दक्षिणे

कामाक्षा=कामाख्या

गौहाटी (असम) के निकट पर्वत पर कामाक्षा देवी का मंदिर है। मूर्ति अष्टधातु से निर्मित है। यह स्थान सिद्ध पीठों में है। वर्तमान मंदिर कूचबिहार के राजा विश्वसिंह ने बनवाया था। प्राचीन मंदिर 1564 में बंगाल के कुख्यात विध्वंसक कालापहाड़ ने तोड़ डाला था। पहले इस मंदिर का नाम आनंदाख्य था। अब वह यहां से कुछ दूर पर स्थित है।

कामातिपुर

अकबर के दरबार के प्रसिद्ध विद्वान अबुल्फज़ल ने आईने अकबरी में कामातिपुर का तत्कालीन असम के नरेश की राजधानी लिखा है। जान पड़ता है कि कामातिपुर असम के प्राचीन संस्कृत नाम कामरूप का ही अपभ्रंश है।

कामारपुकुर (ज़िला हुगली, बंगाल)

स्वामी रामकृष्ण परमहंस का जन्म स्थान। इसी ग्राम में 18 फरवरी 1836 ई० में गदाधर का जन्म हुआ था जो पीछे रामकृष्ण परमहंस के नाम से विख्यात हुए।

काम्यकवन

महाभारत में वर्णित एक वन जहां पांडवों ने अपने वनवासकाल का कुछ समय बिताया था। यह सरस्वती नदी के तट पर स्थित था— स व्यासवाक्य मुदितो वनाद्द्वैतवनात् ततः ययौसरस्वतीकूले काम्यकनाम काननम्'। काम्यकवन का अभिज्ञान कामवन (ज़िला भरतपुर, राजस्थान) से किया गया है। एक अन्य जनश्रुति के आधार पर काम्यकवन कुरुक्षेत्र के निकट स्थित सप्तवनों में था और इसका अभिज्ञान कुरुक्षेत्र के ज्योतिसर से तीन मील दूर पहेवा के मार्ग पर स्थित कमोधा स्थान से किया गया है। महाभारत वन० 1 के अनुसार द्यूत में पराजित होकर पांडव जिस समय हस्तिनापुर से चले थे तो उनके पीछे नगरनिवासी भी कुछ दूर तक गए थे। उनको लौटा कर पहली रात उन्होंने प्रमाणकोटि नामक स्थान पर व्यतीत की थी। दूसरे दिन वह विप्रों के साथ काम्यकवन की ओर चले गए, 'तत सरस्वतीकूले समेषु मरुधन्वसु काम्यकनाम ददृशुर्वनमुनिजन प्रियम्' वन० 5, 30। यहां इस वन को मरुभूमि के निकट बताया गया है। यह मरुभूमि राजस्थान का मरुस्थल जान पड़ता है जहां पहुंच कर सरस्वती लुप्त हो जाती थी (दे० विनशन)। इसी वन में भीम ने किर्मीर नामक राक्षस का वध किया था (वन 11)। इसी वन में मैत्रेय की पांडवों से भेंट हुई थी जिसका वर्णन उन्होंने धृतराष्ट्र को सुनाया था—'तीर्थयात्रा मनुक्रामन् प्राप्तोस्मि कुरुजांगलान् यदृच्छया धर्मराज दृष्टवान काम्यके वने'—

वन० 10, 11। काम्यकवन से पांडव द्वैतवन गए थे (वन० 28)।

काम्यकसर

महाभारत, सभा० 52, 20 में उल्लिखित सरोवर जो शायद उड़ीसा की चिल्का झील है—'पौल्माम नित्य मत्ताश्चाप्यभित काम्यक सर'। इसमें इस प्रदेश के हाथियों का वर्णन है।

कायमगंज (जिला फर्रुखाबाद, उ० प्र०)

मुगल सम्राट फर्रुखसियर ने कन्नौज का प्रदेश मुहम्मदशाह बंगश को जागीर में दिया था। 1720 ई० में उसके पुत्र कायमखां को उसका उत्तराधिकार प्राप्त हुआ। उसी ने अपने नाम पर इस नगर को बसाया था।

कायल (जिला तिन्नेवली, केरल)

ताम्रपर्णीनदी के तट पर स्थित है। यह प्राचीन समय में दक्षिण भारत का प्रसिद्ध बंदरगाह था जिसका यूरोपीय देशों से अच्छा व्यापार था। 13वीं शती के अंतिम चरण में मार्कोपोलो (इटली का पर्यटक) यहां आया था और वह इस स्थान के निवासियों की समृद्धि देखकर चकित रह गया था। कालांतर में धीरे धीरे नदी के प्रवाह के साथ आने वाली मिट्टी से यह बंदरगाह अट गया और बेकार हो गया अतः पुर्तगालियों ने अपनी व्यापारिक कोठियां कायल को छोड़कर तूतीकोरन में बनाईं। कायल को आजकल पुराना कायल कहते हैं। यहां अब केवल थोड़े-से मछियारों की झोपड़ियां हैं।

कायु

महाभारत सभा० 2 में इस देश के निवासियों को कायव्य कहा गया है। इसका अभिज्ञान खैबर दर्रे के प्रदेश के साथ किया गया है (द० उपायन पर्व, ए स्टडी, डा० मोतीचंद्र)।

कारंजा (जिला अकोला, महाराष्ट्र)

श्वेतांबर जैन तीर्थमालाओं में इस नगर का उल्लेख है—'एलजपुरिकारंजा नयरधनवंत लोक वसितिहो सभरजिनमंदिर ज्योति जागता देव दिगम्बर करी राजता'—प्राचीन तीर्थ माला संग्रह, भाग 1 पृ० 114। यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि कारंजा, करंज का ही रूपांतर है।

कारंधम

'तानि सर्वाणि तीर्थानि तत प्रभृति चैव ह, नारी तीर्थानि नाम्नेह ख्याति यास्यन्ति सर्वश'। महा० आदि० 216, 11। उपर्युक्त श्लोक में जिन तीर्थों का निर्देश है वे ये हैं—अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारंधम और भारद्वाज (महा० आदि० 216, 3 4)। ये पांचों तीर्थ दक्षिण समुद्र के तट पर स्थित थे—'दक्षिणे

सागरानूपे पचतीर्थानि सति वै, पुण्यानि रमणीयानि तानि गच्छत माचिरम' (आदि० 216-17)। अर्जुन ने इन तीर्थों की यात्रा की थी।

कारकल (मैसूर)

मूडबद्री से दस मील दूर यह जैना का तीर्थ है। चौरासी पर्वत पर ऋषभ तथा अन्य तीर्थकरो का मदिर है जिसमे दस हाथ ऊची प्रतिमाए है। दक्षिण की ओर पहाड पर बाहुबली की मूर्ति है जो बयालीस फुट ऊची है। इस मूर्ति का निर्माण 1432 ई० मे कारकल के महाराज वीर पाडय ने करवाया था। यह मूर्ति पहाडी पर कही और से लाकर प्रतिष्ठापित की गई थी। कन्नडकाव्य 'कारकल गोम्मटेश्वर चरित्र' मे वर्णन है कि इस मूर्ति को लाने के लिए 20 पहियो का गाडी बनवाई गई थी और इसे पहाडी पर पहुचाने मे एक मास लगा था। द० कारस्कर।

कारपवन

'सप्राप्य कारपवन प्रवर तीर्थमुत्तमम्, हलायुधस्तत्रचापि दत्त्वा दान महाबल'—महा० शल्य० 54, 12। यह स्थान सरस्वतीनदी के तटवर्ती तीर्थों मे था। इसकी यात्रा बलराम ने सरस्वती के अन्य तीर्थों के साथ की थी। प्रसग से जान पडता है कि यह स्थान कुरुक्षेत्र से उत्तर की ओर प्लक्षप्रस्रवण या सरस्वती के उदगम के निकट पर्वताचल मे रहा होगा।

कारस्कर

कारस्करो का वर्णन महाभारत कर्ण० 44, 43 मे इस प्रकार है—'कारस्करान्माहिष्कान् कुरण्डान् केरलास्तथा, कर्कोटकान् वीरकाश्च दुर्धर्माश्च विवर्जयेत'। यहा कारस्कर निवासियो का नामोल्लेख विंध्य तथा दक्षिणभारत की—महाभारत कालीन कई अनार्य जातियो के साथ किया गया है। श्री न० ला० डे के मत मे दक्षिण कनारा का कारकल ही कारस्कर है (दे० कारकल)। महाभारत के समय कारस्करो को अनार्य आचरण वाली जातियो के अतर्गत गिना जाता रहा होगा। बौधायन स्मृति 1, 1, 2 और मत्स्यपुराण 113 मे भी कारस्करो का उल्लेख है।

काराद्वीप

आर्यशूर की जातकमाला के अगस्त्यजातक मे काराद्वीप का उल्लेख है। इस द्वीप की स्थिति दक्षिण समुद्र मे बताई गई है—'दक्षिणसमुद्रमध्यावगाढमिन्द्र नीलप्रर्कीर्णरनिलबलाकलितैर्र्मिमालाविलासैराच्छुरितपर्यन्तसितसिकतास्तीर्णभूमि भाग पुष्पफलपल्लवालकृत विटपैर्नानातरुभिरुपशोभित विमलसलिलाशय प्रतीर काराद्वीप मध्यासनाश्रम पदश्रियासयाजयामास'। काराद्वीप का अभिज्ञान

संदेहास्पद है। संभव है यह धारापुरी या वर्तमान एलिफेंटा द्वीप हो। धारा-पुरी नाम प्राचीन है और यह अनुमेय है कि कालांतर में मूलशब्द 'कारा' का रूपांतर 'धारा' हो गया हो। पर एलिफेंटा दक्षिण समुद्र में न होकर पश्चिम समुद्र में स्थित है किंतु प्राचीनकाल में उत्तर भारतीयों की दृष्टि में दक्षिण और पश्चिम समुद्र में अधिक भेद संभाव्य नहीं जान पड़ता (दे० एलिफेंटा।)

कारापथ

'अंगदं चंद्रकेतुं च लक्ष्मणोऽप्यात्मसंभवौ, शासनाद्रघुनाथस्य चक्रे कारापथेश्वरौ' रघु० 15,90 अर्थात् रामचंद्र जी के आदेश से लक्ष्मण ने अपने (अंगद और चंद्रकेतु नाम के) पुत्रों को कारापथ का अधीश्वर बना दिया। वाल्मीकि, उत्तर० 102, 5 के अनुसार लक्ष्मण के पुत्र अंगद को श्रीराम ने कारुपथ नामक देश का राजा बनाया था। इस प्रकार कारुपथ और कारापथ एक ही जान पड़ते हैं। वाल्मीकि० उत्तर 102,8 में कारुपथ की राजधानी अंगदीया कही गई है जो पश्चिम की ओर रही होगी क्योंकि अंगद को पश्चिम की ओर भेजा गया था, 'अंगदं पश्चिमां भूमिं चंद्रकेतुमुदङ्मुखम्' उत्तर० 102,11। श्री न० ला० डे के अनुसार सिंधु नदी के पश्चिमी तट पर (जिला बन्नू, पाकि०) स्थित काराबाग ही कारापथ है। मुगलकालीन पर्यटक टेवर्नियर ने इसे कारावत कहा है।

काराबाग दे० कारापथ

कारार्ष्ट्र (महाराष्ट्र)

कोल्हापुर जनपद का प्राचीन पौराणिक नाम। यह सह्याद्रि के अंचल में बसा है 'योजनं दश हे पुत्र काराष्ट्रो देश दुर्गर' स्कंदपुराण, सह्याद्रिखंड 2 24। इसके अंतर्गत करवीर क्षेत्र की स्थिति मानी गई है-'तन्मध्ये पंच क्रोशं काश्याद्यादधिकं भुवि क्षेत्रं वै करवीराख्यं क्षेत्रं लक्ष्मी विनिर्मितम्' (सह्याद्रि०, उत्तरार्ध 2,24-25।) काराष्ट्र का विस्तार दस योजन और करवीर का पांच योजन कहा गया है।

कारीतलाई *(जिला जबलपुर, म० प्र०)*

कटनी के निकटवर्ती इस स्थान से महाराज जयनाथ का एक गुप्तकालीन ताम्रदानपट्ट प्राप्त हुआ था जिसमें उनके द्वारा छदोपल्लिक नामक ग्राम का कुछ ब्राह्मणों को दान में दिए जाने का उल्लेख है। यह दानपट्ट उच्छकल्प से प्रचलित किया गया था। 1879 ई० में जनरल कनिंघम ने इस स्थान के प्राचीन अवशेषों का उल्लेख किया था। उन्होंने यहां श्वेत पत्थर की नृसिंह भगवान् की एक विशालकाय मूर्ति देखी थी जिसका अब पता नहीं है। यहां से प्राप्त मूर्तियों में दशावतार, सूर्य, महावीर, गणेश तथा कुछ जैन संप्रदाय की मूर्ति

हैं जो अधिकांश में कलचुरिकालीन हैं।

कारुद्वीप

दीपवंश (पृ० 16) में वर्णित प्रदेश जो संभवतः उत्तरकुरु का नाम है।

कारुपथ

वाल्मीकि० उत्तर० 102,5 के अनुसार लक्ष्मण के पुत्र अंगद को रामचंद्र जी ने कारुपथ नामक देश का राजा बनाया था 'अयं कारुपथो देशो रमणीयो निरामयः'। इस देश की राजधानी वाल्मीकि० उत्तर० 102,8 में अंगदीया बताई गई है—'अंगदीया पुरी रम्याप्यंगदस्य निवेशिता, रमणीया सुगुप्ता च रामेणाक्लिष्टकर्मणा'। यह देश कोसल के पश्चिम में था क्योंकि रामचंद्र जी ने अंगद को पश्चिम की ओर भेजा था—'अंगदं पश्चिमां भूमिं चन्द्रकेतुमुदङ्मुखम्' उत्तर० 102,11 (दे० अंगदीया)। कालिदास ने कारुपथ को कारापथ लिखा है। आनंदराम बरुआ के मत में अंगदीया वर्तमान शाहाबाद है। श्री न० ला० डे० के अनुसार कारुपथ या कारापथ वर्तमान कालाबाग (जिला बन्नू पाकि०) है। दे० कारापथ।

कारूष

(1)=करूष।

(2) बक्सर (बिहार) का परिवर्ती क्षेत्र—वर्तमान जिला शाहाबाद—जहां विश्वामित्र का सिद्धाश्रम या चरित्रवन स्थित था। 'मलदाश्च करूषाश्च ताटका दुष्टचारिणी, सेयं पथानमावृत्य वसत्यत्ययोजने' वाल्मीकि० बाल० 24, 29। महाभारत के अनुसार कारूष के मिथ्या-वासुदेव पौंड्रक को श्रीकृष्ण ने मारा था। यह कारूष, करूष (1) भी हो सकता है। पौराणिक अनश्रुति के अनुसार करूष वैवस्वत मनु का एक पुत्र था जिसने सर्वप्रथम बिहार के इस क्षेत्र पर राज्य किया था।

कार्पासिक

'शत दासी सहस्राणां कार्पासिक निवासिनाम्' महा० सभा० 51,8। कार्पासिकदेश की दासियाँ जिनकी संख्या एक लाख बताई गई है, युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में सेवा के लिए भेजी गई थीं। इस उल्लेख से ठीक पूर्व दक्षिणात्य पाठ में बर्बर, त्रिगर्त और मालवा आदि पंजाब के जनपदों का उल्लेख है। प्रसंगानुसार कार्पासिक भी संभवतः पंजाब (पहाड़ी प्रदेश) का कोई भूभाग जान पड़ता है। कुछ विद्वानों के अनुसार कार्पासिक मध्य एशिया का कारापथ है किंतु यह अभिज्ञान नितांत संदिग्ध है क्योंकि महाभारत में इस स्थान पर पश्चिमी व उत्तरी भारत के ही तत्कालीन जनपदों का उल्लेख है।

कार्ली (महाराष्ट्र)

पूना के समीप लानवी स्टेशन स छ मील दूर । यहा पहाड मे कटी हुई गुफा के भीतर शती ई० पू० म बनी हुई भारत प्रसिद्ध बौद्ध चैत्यशाला स्थित है जो बौद्ध चैत्यो मे सर्वाधिक विशाल तथा भव्य है । इस शैलकृत्त गुफा के स्तभ धरानल पर पूणरूपण लब है और इस विशेषता मे य अन्य गुफा स्तभा से श्रेष्ठ समझे जात हैं । फग्युसन के मत मे चैत्य निर्माण कला की दृष्टि से कार्ली का चैत्य सभी चैत्यो से अधिक सुदर है । भीतरी शाला की लबाई 124 फुट 3 इच, चौडाई 45 फुट 6 इच और ऊचाई 45 फुट है । लबाई, चौडाई और ऊचाई का यही परिमाण पाच सौ वर्षों क पश्चात बनन वाले इसाई गिरजाघरो मे भी दिखाई पडता है (दे० यायूवहसन— टेम्पलस चर्चेज, एड मॉन्कस, पृ० 48) चैत्यशाला की भीतरी बनावट का वि यास इस प्रकार है— एक मध्यवर्ती शाला जिसके दाना आर पार्श्ववीथिया है, इनके अत मे एक अधगुम्ब सा बनता है जिसके चारो ओर वीथि घूम जाती है । मध्यवर्ती शाला से वीथिया पद्रह स्तभा द्वारा अलग की हुई है । प्रत्यक स्तभ का आधार काफी ऊचा है और स्तभ का दड आटकाना है और शीप मूर्तिकारी से समलकृत है । शीष के पीछे के भाग म दो अवनत हाथी है जिनम से प्रत्येक पर एक पुरुष और स्त्री की मूर्ति है पीछे अश्व आर व्याघ्र की मूर्तिया अकित ह । इनमे म प्रत्येक पर केवल एक ही व्यक्ति आसीन है । अधगुबद के ठीक नीचे स्तूप अथवा धातुगभ स्थित है । यह एक वतुल भेरी क आकार की मरचना के ऊपर बना है जिसम दो तल है । इनक ऊपरी किनारो पर जगल के आकार की आलकारिक रचना अकित है । इस भेरी के ऊपर एक शीप का आच्छादित करता हुआ एक काष्ठ छत्र है । चैत्य के बाहरी भाग म मध्यवर्ती शाला तथा वीथिया के लिए तीन दरवाजे हैं । इन दरवाजो के ऊपर अश्वनालाकार एक विशाल खिडकी है जिससे प्रकाश अदर प्रविष्ट होता है । गुफा के बाहर एक सुदर प्रस्तर स्तभ है । इस गुफा म कई अभिलेख अकिन है जिनसे ज्ञात होता है कि दूसरी शती ई० पू० के लगभग वशवदत्त न इस गुहामदिर को बनवाया था तथा अजामित्र ने गुफा के बाहर के स्तभ की स्थापना की थी । यह गुफा महाराष्ट्र मे आध्र नरेशो के शासन काल मे बनी थी । गुफा पहाड के बीच मे सडक से लगभग दो फलाग ऊचे स्थान पर बनी है । चैत्य के पार्श्व म कई छाट छोटे विहार भी हैं । चैत्य के बाहर उन राजाओ तथा रानियो की मूर्तिया भी निर्मित हैं जिनक समय मे यह बना था । चैत्य की छत मे पहले काठ की एक बडी शहतीर लगी थी जो अब नष्ट हो गई है । कार्ली का एक प्राचीन नाम विहार गाव भी है ।

कालज

विष्णुपुराण 2, 2, 29 के अनुसार भारत के उत्तर मे, स्थित एक पवत है —'कालजाद्यास्चतया उत्तरेकेसराचला ।

कालजर=कालिजर ।

कालकवन

राजमहल (बिहार) की पहाडिया—दे० पातजलमहाभाष्य 2, 4, 10, बोधायन 1, 1, 2 ।

कालकाराम

साकेत म स्थित बौद्धविहार जिसका निर्माण गौतम बुद्ध के समकालीन कालक नामक व्यापारी ने करवाया था ।

कालकूट

'कुरुम्य प्रस्थितास्ते तु मध्येन कुरुजागलम रम्य पद्मसरो गत्वा कालकूट मतीत्य च । गडकी च महाशोणा सदानीरा तथैव च, एकपवतके नद्य क्रमणैत्या व्रजन्त ते ।' महा० सभा० 20, 26–27 । यह उल्लख श्रीकृष्ण, अर्जुन और भीम की इद्रप्रस्थ से (जरासध के वध के प्रयोजन से की गई) मगध तक की यात्रा के प्रसग म है । कालकूट का उल्लेख कुरुप्रदेश क पश्चात और बिहार की गडकी नदी के पूव है जिससे इसकी स्थिति उत्तरप्रदेश के दक्षिण पूर्वी भाग म जान पडती है । शायद यह कालिजर की पहाडी ही का नाम है । वसे अनुशासनपर्व मे भी कालजरगिरि का उल्लेख है । कालकूट का उद्योग० 29, 30 म भी जिक्र है, 'अहिच्छत्र कालकूट गगाकूल च भारत' । इस स्थान पर दुर्योधन की सहायता के लिए आई हुई सेनाओं से परिवृत स्थानो म गणना की गइ है जिस के अनुसार कालकूट की स्थिति कुरुप्रदेश से अधिक दूर न होनी चाहिए । कुछ विद्वानो के मत मे कालकूट वतमान हिमाचल प्रदेश म स्थित था और इसकी गणना पजाव या हिमाचल प्रदेश के पहाडी इलाके के सात गणराज्यो (सप्त द्वीप) या ससप्तकगण मे थी जिन्हे अजुन ने महाभारत के युद्ध म हराया था। किंतु महाभारत के उपयुक्त (सभा० 20, 26 27) उल्लेख से यह अभिज्ञान सदिग्ध जान पडता है । आदिपव 118 48 म कालकूट का चैत्ररथ के निकट और गधमादन के दक्षिण में बताया गया है—'स चैत्ररथमासाद्य कालकूट-मतीत्यच हिमवन्तमतिक्रम्य प्रययौ गधमादनम' । गधमादन, बद्रीनाथ के उत्तर की ओर है । कालकूट का पाठातर तालकूट भी है ।

सभा० 264 मे कालकूटो का आनत और कुलिदो के साथ भी उल्लेख है—'आनर्तानकालकूटास्च कुलिदास्च विजित्य स ' ।

कालकोटि (पाठांतर बालकोटि)

इस तीर्थ का उल्लेख महाभारत वन० 95, 3 मे है—'कन्यातीर्थेऽश्वतीर्थे च गवां तीर्थे च भारत, कालकोट्यां वृषप्रस्थे गिरावुष्य च पाडवा'। यहा कालकोटि का वर्णन कान्यकुब्ज, अश्वतीर्थ तथा गोतीर्थ के निकट किया गया है। अत ऐसा जान पडता है कि सभवत कालजर को ही यहा कालकोटि कहा गया है।

कालकोश

विष्णुपुराण 4, 24, 66 के अनुसार कालकोश जनपद मे सभवत गुप्तकाल के पूर्व मणिधान्यको का राज्य था, 'नैषध नैमिषक कालकोशकान्ज जानपदान मणिधान्यकवशा भोक्ष्यति'। निषध (पूर्व मध्यप्रदेश) तथा निमिषारण्य (मध्य उत्तरप्रदेश) के साथ उल्लेख होने से कालकोश की स्थिति उत्तरप्रदेश के दक्षिणी या मध्यप्रदेश के पूर्वोत्तर भाग मे अनुमेय है।

कालचपा

जातककथाओ मे चपानगरी का नाम कालचपा भी है। दे० चपा।

कालडि (केरल)

दक्षिण के प्रसिद्ध दार्शनिक आदि शकराचार्य की जन्मभूमि। शकर का जन्म आठवी या नवी शती ई० मे हुआ था।

कालपी (जिला जालौन, उ० प्र०)

यमुना तट पर बसी अतिप्राचीन नगरी है। जनश्रुति मे कल्प या काल्प नामक ऋषि के नाम का सबध कालपी से जोडा जाता है। महर्षि व्यास का भी यहा एक आश्रम था, ऐसी भी स्थानीय किंवदती है। इसके प्रमाणस्वरूप नगरी के सन्निकट यमुना के तट पर व्यासटीला या व्यासक्षेत्र नामक स्थान का निर्देश किया जाता है। अकबर का समकालीन इतिहासलेखक फरिश्ता लिखता है कि कालपी का सस्थापक कन्नौजाधिप वासुदेव था किंतु इसका अभिज्ञान अनिश्चित है। कालपी का मुख्य इतिहास चदेलकालीन है। इससे पहले का वृत्तात प्राय अज्ञात ही है। 10वी शती के मध्य म कालपी मे चदेलो ने अपना राज्य स्थापित किया था। उसी समय यहा एक किला बनवाया गया था। चदेलनरेश मदनवर्मा और परर्मादिदेव (परमाल, पृथ्वीराज चौहान का समकालीन) के समय म कालपी बहुत समृद्धिशाली नगरी थी और चदेलो के आठ प्रमुख नगरो मे इसकी गिनती थी। राज्य का एक मुख्य राजपथ कालपी होकर जाता था। उस समय मे मुगलकाल के अत तक कालपी एक व्यस्त व्यापारिक स्थान के रूप मे प्रसिद्ध रही। यहा का व्यापार मुख्यत यमुना द्वारा होता था। कालपी की प्राचीन इमारतो में उपर्युक्त दुर्ग के अतिरिक्त बीरबल

ना रगमहल, प्रभावतीमडी, मुगलो की टकसाल, चौरासी मदिर और गोपाल मदिर हैं। दुग के खडहर यमुनातट पर स्थित हैं। प्रथम स्वतत्रता सग्राम (1857 ई०) के समय के प्रसिद्ध नेता तातिया टोपे व वीरागना लक्ष्मीबाई इस किले मे कुछ समय तक रहे थे, झासी पर अग्रेजो का अधिकार हो जाने के पश्चात रानी लक्ष्मीबाई घोडे पर बिना रुके यात्रा करके यहा पहुची थी।

अकबर के दरबार के रत्न प्रसिद्ध राजा बीरबल जिनका वास्तविक नाम महशदास था काल्पी के ही रहने वाले थे।

कालमत्तिय

घटजातक (स० 454) म वर्णित एक वन। जहा वासुदेव कृष्ण ने कस के कई राक्षसो का वध किया था। यह वन मथुरा के प्रदेश मे स्थित रहा होगा।

कालमही

'महीकालमही चापि शैलकानन सेविताम, ब्रह्ममालाविदेहाश्च मालवा न्काशिकोसलान्'—वाल्मीकि० किष्किधा० 40, 22। सुग्रीव ने वानरो की सेना को सीता की खोज मे पूव दिशा की ओर भेजते हुए वहा के स्थानो के वणन के प्रसग मे मही और कालमही का उल्लेख किया है। मही बिहार की गडक नदी का एक नाम है। कालमही इसी की कोई उपशाखा या निकटवर्ती कोई नदी हो सकती है। इसके साथ विदेह का उल्लेख होने से भी इस अनुमान की पुष्टि होती है।

कालशिला

राजगह मे गृध्रकूट के निकट एक श्याम शिला जहा जैनश्रमणो ने कठोर तपस्या की थी (मज्झिमनिकाय 1, 92)। जैन ग्रथ उवासगदसाओ म इसे गुण सिलचैत्य कहा गया है।

कालशैल

'एतद्रक्ष्यसि देवनामाक्रीड चरणाकितम, अतिक्रातोऽसि कौ तेय कालशैल च पवतम्'—महा० वन० 139, 4। इस पवत का उल्लेख हिमालय पवत श्रेणी तथा गगा के स्रोतो के निकटवर्ती प्रदेश मे है। इसके पास ही *उशीरबीज*, मैनाक और श्वेतपवत का उल्लेख है जो सब हरद्वार के उत्तर मे स्थित हिमालय की श्रेणियो के नाम जान पडते हैं—'उशीरबीज मैनाक गिरिश्वेत च भारत, समतीतोऽसि कौ तेय कालशैल च पार्थिव' वन०, 13, 1।

कालसिग्राम

बौद्ध ग्रथ मिलिदपञ्हो के अनुसार यवनराज मिलिद—यूनानी मिनेंडर—

का जन्मस्थान है (ट्रूकनर—मिलिन्दपन्हो—पृ० 83)। कालसिग्राम अलसदा द्वीप (अलेग्ज़ेंडिया, मिस्र) मे स्थित बताया गया है। मिनेंडर दूसरी शती ई० पू० मे भारत मे आक्रमणकारी के रूप मे आया था किंतु बाद मे बौद्ध हो गया था।

कालसी (तहसील चकरौता, जिला देहरादून, उ० प्र०)

अशोक की चौदह धर्मलिपियां यहां एक चट्टान पर अंकित हैं। यह प्राचीन स्थान यमुना तट पर है और अशोक के समय मे अवश्य ही महत्वपूर्ण रहा होगा। जान पड़ता है कि यह स्थान अशोक के साम्राज्य की उत्तरी सीमा पर था जो उसे हिमालय के पहाड़ी प्रदेश से अलग करती थी। ये चौदह धर्म लिपियां अशोक के सीमाप्रांतो में ही अभिलिखित पाई गई हैं।

कालहस्ती (आ० प्र०)

कालहस्तीश्वर शिव के भव्य मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। मंदिर पत्थर का बना है और इसके चारों द्वारो पर चार विशाल गोपुर हैं। इसके पूर्वोत्तर में पार्वती का मंदिर है। भित्तियो पर तेलुगु भाषा मे कई अभिलेख अंकित हैं। स्थानीय अनुश्रुति है कि आंध्र के संत कणप्पा ने मंदिर के लिए अपने नेत्र दान कर दिए थे। कालहस्ती के निकट सुवर्णमुखी नदी प्रवाहित होती है।

कालाबाग दे० कारापथ।

कालावगुर (जिला मेदक, आ० प्र०)

प्राचीन मंदिरों के अवशेषों के लिए उल्लेखनीय है।

कालिंजर—कालंजर (तहसील नरैनी, जिला बांदा, उ० प्र०)

अतर्रा नामक स्थान से यह ग्राम चौबीस मील दूर है। इसके निकट ही कालिंजर का इतिहासप्रसिद्ध दुर्ग है। पहाड़ी पर बना हुआ यह प्रसिद्ध दुर्ग भारत के प्राचीनतम स्मारकों मे से एक है। महाभारतकाल मे पांडवो ने अपने वनवास का कुछ समय यहां बिताया था। इसके नामकरण के विषय मे शिव पुराण की कथा है कि इसी पर्वत पर काल को जीर्ण किया गया था इसी कारण *यह कालंजर कहलाया। पुराणो के मत मे सतयुग मे इस दुर्ग का नाम कीर्ति,* त्रेता मे महतगिरि और द्वापर मे पिंगलागढ़ था। पर्वत पर कई स्थानो पर श्री राम के वनवासकाल मे यहां ठहरने के कुछ चिह्नों का निर्देश किया जाता है किंतु ये उतने प्राचीन नहीं जान पड़ते। अकबर का समकालीन इतिहास लेखक फरिश्ता लिखता है कि इस किले की बुनियाद केदार ब्रह्म नामक ब्राह्मण ने डाली थी जो हिंद का राजा था और कालिंजर मे रहता था। इसने उन्नीस वर्ष राज्य किया। राजा केदार कुछ समय तक ईरान के शाह कैकाऊस और खुसरो के अधीन रहा। अंत मे उसे कालिंजर का किला राजा शंकर को दे देना

पडा। शक्र अपने पुत्र पुर्त को राज्य सौप कर तूरान चला गया। फरिश्ता के इस वर्णन मे कितनी सचाई है यह कहना कठिन है किंतु इससे दुर्ग की प्राचीनता अवश्य सिद्ध होती है। दूसरी या तीसरी शती ई० पू० मे कालिजर पर मौर्यों का शासन रहा। कालातर मे कनिष्क (दूसरी शती ई०) और तत्पश्चात गुप्त नरेशो और हूण का क्रम से यहा राज्य रहा। हूण के पश्चात मध्ययुग मे राजपूतो की अनेक रियासतो ने अपना आधिपत्य कालिजर पर स्थापित किया। एक किंवदती के अनुसार यहा के दुर्ग का निर्माण चदेलनरेश चद्रवर्मन् ने किया था। राजा कीर्तिवर्मन् के समय मे इस दुर्ग की ख्याति दूर दूर तक पहुच गई थी। महमूद गजनवी ने 1022 ई० मे यहा आक्रमण किया और उसे तत्कालीन नरेश गण्डदेव चदेल से करारी हार खानी पडी। 1203 ई० मे राजा परमाल को कुतुबुद्दीन एबक की सेनाओ के आगे झुकना पडा जिसके फलस्वरूप कालिजर के सब मदिरो को मुसलमानो ने तोड कर वहा की भूमि को सहस्रो हिंदुओ के रक्त से रग दिया। यह वृत्तात तत्कालीन इतिहास ताजुलमासिर के लेखक ने लिखा है। सुल्तान इल्तुतमिश के दिल्ली मे राज्य करने के समय कालिजर पर खगार राजपूतो का अधिकार था। सोहनपाल बुदेला ने 1266 ई० मे खगारो को समाप्त कर उनसे यह किला छीन लिया। शेरशाह सूरी ने 1545 ई० मे कालिजर पर आक्रमण किया तब यह किला बुदेलो के हाथ मे ही था। यहा बारूदखाने मे आग लग जाने से शेरशाह बुरी तरह जल गया और थोडे ही दिन बाद परलोक सिधार गया। कालिजर की पहाडी पर शेरशाह की कब्र बनी है (शेरशाह का मकबरा सहसराम बिहार मे है)। शेरशाह ने दुर्ग को लेने के पश्चात अपने दामाद अलीखा को यहा का सूबेदार बनाया था। 1550 ई० मे रीवा नरेश महाराज रामचद्र ने अलीखा से यह दुर्ग खरीद लिया। तत्पश्चात् अकबर और फिर भटराजपूतो ने यहा राज्य किया। 1666 ई० मे औरगजेब ने भटराजाओ से इसे छीन लिया। उसने दुर्ग के सात दरवाजो मे से एक का नाम आलम दरवाजा रखा। 1673 ई० मे इसका जीर्णोद्धार करवाया गया। इस पर फारसी मे 'साद अजीम' तिथिलेख खुदा है जिससे 1084 हिजरी सन् निकलता है। एक पत्थर पर औरगजेब ने निम्न शेरें भी अकित करवाई थी 'शाह औरगजेब दी परवर शुद मरम्मत चू किला कालिजर, चू मुहम्मद मुराद आज हुक्मश दाश्त दर हाम्रहकर्नो खुशत आज खिरद माल जुस्त मग्मी गुफ्त सद अजीम चू सद असक दर'। 1677 ई० मे बुदेला नरेश छत्रसाल ने औरगजेब के सूबेदार करमइलाही स यह दुर्ग छीन लिया और उसके स्थान मे माधाता चौबे को किलेदार बनाया और पाच सौ सैनिक यहा नियुक्त किए। माधाता

के वशजों का अधिकार यहा 1812 ई० तक रहा। इस वर्ष अगरेजो ने कालिजर को जीत लिया और चौबो को कुछ जागीर देकर सतुष्ट कर दिया। इस लडाई मे अग्रेजो के काफी सैनिक मारे गए थे जिनकी कब्रे दुर्ग के पास मनीपुर मे बनी है। कालिजर मे आलमगीरी दरवाजे के अतिरिक्त छ अन्य प्रवेशद्वार है। गणेशद्वार, जिसे मुसलमान काफिर-घाटी दरवाजा कहते थे क्योकि यहा की चढाई बहुत कठिन है, चडी-द्वार जहा शिवोपासना सबधी 1199 1570,1580 और 1600 ई० के अभिलेख अकित है और समीप ही एक सुदर भवन (राजमहल) है, 1580 विक्रमसवत के अभिलेख वाला द्वार, हनुमान द्वार जो हनुमान कुड के पास है, जहा 1560 और 1580 वि० स० के कई अभिलेख हैं लालद्वार, और अतिम शिवपार्वती की मूर्तियो वाला द्वार जिस के समीप पहाडी म सीताकुड नामक झरना है जहा दिन म भी अधेरा रहता है। पास ही सीता सेज है। इन स्थानो का सबध वनवासकाल मे रामचद्र जी के यहा कुछ समय तक निवास करने से बताया जाता है। हनुमानद्वार और लालद्वार के बीच सिद्धगुफा नामक स्थान है जहा से भैरवकुड को मार्ग जाता है। कालिजर दुर्ग के अन्य उल्लेखनीय स्थल ये हैं—पातालगगा, पाडुकुड, कोटितीर्थ, नीलकठ-मदिर, और भगवान् सेज। पातालगगा के समीप हुमायू के नाम का एक अभिलेख 936 हि०=1558 ई० का है। कोटितीर्थ मे कई प्राचीन भवन तथा तडागादि है। नीलकठ मदिर पवित्र तीर्थ है। यहा 1194,1200,1400,1579 विक्रम सवत के कई लेख और अनेक खडित मूर्तिया विद्यमान ह। भगवान सेज म पत्थर की शैया है। वृद्धक क्षेत्र का सबध चदेल्राजा कीर्तिब्रह्म से बताया जाता है। पाडुकुड पातालगगा के समीप एक झरने से बना हुआ कुड है जिसका सबध पाडवो से बताया जाता है। महाभारत वन० 85,46 53 और पद्मपुराण आदि० 39,52-53 के अनुसार कालजर पर्वत तुगारण्य या तुगकारण्य मे स्थित था। इस पर्वत पर स्थित देवहृदतीर्थ का वर्णन वनपर्व 85,56 57 मे इस प्रकार है—'अत्र कालजरनाम पर्वत लोक विश्रुतम् तत्र देवहृदे स्नात्वा गोसहस्र फल लभेत्, यो स्नात साधयत तत्र गिरौ कालजरे नृप, स्वर्गलोके महीयत नरो नास्त्यत्र सशय'।

कालिदी

(1) यमुना नदी को कलिंद पर्वत से निस्सृत होने के कारण कालिन्दी कहते हैं। कलिंदकन्या या कलिंदनदिनी ('धुनोतु ना मनोमल कलिन्दनदिनी सा'—गीत गोविंद) भी इसी कारण यमुना ही के नाम हैं। 'गगायमुनयो सधिमादाय मनुजर्षभ, कालिंदीमनुगच्छेता नदी पश्चान्मुखाश्रिताम्' वाल्मीकि० 55,4।

(2) *गगा की एक छोटी सहायक नदी—कालीनदी जो गगा मे कान्यकुब्ज* के पास मिलती है। शायद महाभारत मे वर्णित अश्वनदी यही है। इसके तथा गगा के सगम पर अश्वतीर्थ स्थित था। वाल्मीकि रामायण 40,21 म सभवत इसी नदी का उल्लेख है क्योंकि यमुना का अलग से नामोल्लेख भी इसी स्थान पर है—'कालिन्दी यमुना रम्या यामुन च महागिरि, सरस्वती च सिंधु च शोण मणिनिभादकम्'। किंतु कालिन्दी को इस स्थान पर यमुना का पर्याय भी माना जा सकता है।

(3) पूर्वबगाल(पाकि०)तथा पश्चिम बगाल की सीमा पर बहन वाली नदी।

कालिका

महाभारत मे उल्लिखित सभवत पजाब की कोई नदी। इसको कौशिकी *और अरुणा न मिलने वाली नदी बताया गया है—'कालिका सगमे स्नात्वा* कौशिक्यरुणयोगत'—महा० वन० 84,156।

कालीकट (मद्रास)

पूर्वी समुद्रतट पर प्राचीन बदरगाह। 1498 ई० मे पुर्तगालिया के जहाज का कप्तान वास्कोडिगामा पहले पहल इसी नगर मे पहुचा था। किंवदती है कि कालीकट नाम कोल्लीकोडे शब्द का रूपान्तर है, जिसका अर्थ है कुक्कुट दुर्ग। यहा के राजा ने अपने एक सरदार को उतनी दूर तक भूमि जागीर मे दी थी जिसम कुक्कुट का शब्द सुनाई दे सके। इसी भूमि पर जो किला बना उसे कोल्लीकोडे नाम दिया गया।

कालीगगा

जिला गढवाल (उ० प्र०) की एक न ी जिसे मदाकिनी भी कहते हैं। इसका जल श्यामवर्ण होने के कारण ही इसे कालीगगा कहते हैं। यह केदारनाथ के पहाडो से निकल कर रुद्रप्रयाग मे अलकनदा से मिल जाती है। द० मदाकिनी।

कालीघाट (बगाल)

कलकत्ता नाम का आदिरूप कालीघाटा था। यह नाम इस स्थान पर एक प्राचीन काली मदिर के होने के कारण पडा था। जहा कलकत्ते का समुद्रतट आज स्थित है, वहा प्राचीन काल मे ऊचे ऊचे कगार थे जो समुद्र के थपेडो से कटकर नष्ट हो गए और एक दलदल के रूप मे रह गए। इस कारण गगा का प्राचीन मार्ग भी बदल गया और इस स्थान पर एक त्रिकोणद्वीप बन गया। कालातर मे इस द्वीप पर काली का एक मदिर बन गया जो प्रारभ मे आदि वासियो का पूजास्थान था क्योंकि काली उनकी आराध्य देवी थी। इ ही के

द्वारा यह देवी पाशवी देवी के रूप में बहुत दिनों तक सम्मानित रही और बांसों के झुरमुटों से घिरे हुए इस मंदिर में धीवर, मल्लाह और आदिवासी लोग बहुत दिनों तक पूजा करने आते जाते रहे। कहा जाता है कि बंगाल के सेन वंशीय नरेश बल्लालसेन ने कालीक्षेत्र का दान तान्त्रिक ब्राह्मण लक्ष्मीकांत को दिया था। तब से लेकर अब तक लक्ष्मीकांत के परिवार के हलदार ब्राह्मण ही काली मंदिर के पुजारी होते चले आए हैं। काली की मूर्ति इन्हीं की बताई जाती है। देवी के रौद्ररूप काली की पूजा इन्हीं तान्त्रिकों ने पहली बार द्विजों में प्रचलित की, नहीं तो उनकी आराध्या तो उमा, शिवा दुर्गा या धात्री थी। तान्त्रिकों ने स्वयं काली की मूर्ति का भाव आदिवासियों से ग्रहण किया होगा—यह भी उपर्युक्त तथ्यों की पृष्ठभूमि में संभव जान पड़ता है। कहा जाता है कि 1530 ई० तक सरस्वती और यमुना नामक दो नदियां कालीघाट के पास ही समुद्र में गिरती थीं और इस संगम का त्रिवेणी का रूप माना जाता था। कालांतर में ये दोनों नदियां सूख गईं किंतु कालीघाट या कालीबाड़ी का तीर्थरूप में महत्त्व बढ़ता ही गया। 17वीं शती के अंत और 18वीं के प्रारंभकाल में यह मंदिर इतना प्रसिद्ध था कि वार्ड नामक अंग्रेजी लेखक के अनुसार वर्तमान कलकत्ते की नींव डालने वाले जॉबचार्नाक की भारतीय पत्नी के साथ अनेक अंग्रेज महिलाएं भी काली मंदिर में मनौती मनाने जाती थीं। वार्ड के उल्लेखानुसार ईस्ट इंडिया कंपनी के अफसरों ने एक बार पांच सहस्र रुपया इस मंदिर में चढ़ाया था। पौराणिक कथा है कि पूर्वजन्म में शिव की पत्नी दक्षपुत्री सती के मृत शरीर के दक्षिण चरण की अंगुलियां यहां कट कर गिरी थीं और वे ही मूर्ति रूप में यहां प्रतिष्ठित हुईं। कालीमंदिर को इसलिए कालीपीठ भी माना जाता है।

काली नदी

(1) केरल की एक नदी जो संभवतः प्राचीन मुरला है। इसके तट पर सदाशिवगढ़ बसा है।

(2) दे० कालिंदी (2)।

काली सिंध

चंबल की सहायक नदी जो इसकी दूसरी सहायक नदी सिंधु से भिन्न है। दे० सिंधु।

कालेगांव (महाराष्ट्र)

नासिक से बीस मील उत्तर पूर्व की ओर एक गांव है जो गोदावरी के तट पर स्थित है। हाल ही में यादवनरेश महादेव के ताम्रपट्ट यहां से कुछ दूर पर

प्राप्त हुए थे। ये विशेष रूप से तैयार किए गए पत्थर के मंजूष में बंद थे। प्राप्तिस्थान के निकट पत्थर और मिट्टी के बने दो स्तंभ हैं। प्राचीन मूर्तियां भी आसपास बिखरी हुई पाई गई हैं। कालेगांव में एक प्राचीन मंदिर है जो यादवकालीन जान पड़ता है। यहां प्रस्तरयुगीन कुछ उपकरण भी मिले हैं।

कालेश्वर (ज़िला करीमनगर, आ० प्र०)

यहां गोदावरी के तट पर स्थित कालेश्वर शिव का प्राचीन मंदिर है। यह उन शिव मंदिरों में है जो त्रिलिंग या तेलंगाना की उत्तरी सीमा निर्धारित करते थे।

कावेरी

दक्षिण भारत की प्रसिद्ध नदी। इसका उद्गम कुर्ग में तालकावेरी या ब्रह्मगिरि नामक स्थान है। कावेरी का शाब्दिक अर्थ हरिद्रा के रंगवाली नदी है (दे० मोनियर विलियम्स संस्कृत-अंग्रेजी कोश)। रामायण किष्किंधाकांड 41,21,25 में इसका उल्लेख है। महाभारत सभा० 9,20 में कावेरी का इस प्रकार वर्णन है—'गोदावरी कृष्णवेणा कावेरी च सरिद्वरा विपुना च विशल्या च तथा वैतरणी नदी'। भीष्म० 9,20 में नदियों की विशाल सूची में कावेरी का नाम आया है—'शरावती पयोष्णी चवेणा भीमरथीमपि, कावेरी चुलुका चापिवाणी शतबलामपि'। श्रीमद्भागवत 5,19,18 में भी कावेरी का नाम नदियों के प्रसंग में है—'चन्द्रवसा ताम्रपर्णी अवटोदा कृतमाला वैहायसी कावेरी वेणी'। कालिदास ने रघु की दिग्विजय यात्रा में कावेरी का शृंगारिक वर्णन इस प्रकार किया है—'स सैन्य परिभोगेन गजदान सुगंधिना, कावेरी सरितां पत्युः शंकनीयामिवाकरोत्' रघु० 4,45। दक्षिण भारत के इतिहास में कावेरी का पल्लवनरेशों की प्रिय नदी के रूप में उल्लेख है। कावेरी पांडिचेरी के दक्षिण में बंगाल की खाड़ी में गिरती है।

(2) नर्मदा की उपधारा का नाम। मांधाता नामक तीर्थ नर्मदा और कावेरी से घिरे हुए एक द्वीप पर बसा है। कावेरी वास्तव में नर्मदा की एक धारा है जो मांधाता के अंत में पहुंच कर पुनः मुख्य धारा में मिल जाती है।

कावेरीपत्तन (मद्रास)

कावेरी नदी के मुहाने पर बसा हुआ प्राचीन काल का प्रसिद्ध बंदरगाह। कांची के पल्लव नरेशों के शासनकाल में ताम्रलिप्ति के समान ही कावेरीपत्तन भी एक बड़ा व्यापारिक केंद्र था। द्वीपद्वीपान्तरों विशेषतः रोम साम्राज्य से भारत आने वाले पोत इस बंदरगाह पर ठहरते थे। गुप्तकाल में यहां के बौद्ध विहारों में 'महाविहार निकाय' के भिक्षु रहते थे। यह बंदरगाह अब कावेरी के

मुहाने में अट जाने से विलुप्त हो गया है। दे० कावेरी, पुहार।

काशी (=वाराणसी, उ० प्र०)

प्राचीन विश्वास के अनुसार काशी अमर नगरी है। विद्वानों का विचार है कि शिवोपासना का यह नगर प्राचीन पूर्व आर्य सभ्यता के भी पूर्व विद्यमान था क्योंकि शिव (तथा मातृदेवी) की पूजा पूर्ववैदिक काल में भी प्रचलित मानी जाती है किंतु यह प्रश्न पर्याप्त विवादपूर्ण है। पुराणों के अनुसार इस नगरी का नाम मनु वंश के सप्तम नरेश 'काश' के नाम पर ही काशी हुआ था। काशीजानपदीयों का सर्वप्रथम उल्लेख अथर्ववेद की पैप्पलाद संहिता में कोसल तथा विदेह वासियों के साथ मिलता है। वाल्मीकि रामायण, किष्किंधा कांड 40 22 में काशी, कोसल जनपदों का एकत्र उल्लेख—'महीकालमही चापि शैलकाननशोभिताम्, ब्रह्ममालान् विदेहांश्च मालवान् काशिकोसलान्'। इन देशों में सुग्रीव ने वानर सेना को सीता के अन्वेषणार्थ भेजा था। वायुपुराण 2,21, 74 तथा विष्णु 4,8,2–10 ('काश्यस्य काशेय काशिराज', 'काशिराज गोत्रेऽवतीर्य त्वमष्टधा सम्यगायुर्वेदं करिष्यसि' आदि) में काशी नरेशों की तालिका है। ये भरत के पूर्वज राजाओं के नाम हैं। किंतु इनमें केवल दिवोदास और प्रतर्दन के नाम ही वैदिक साहित्य में प्राप्त हैं। पुरुवंशी नरेशों के पश्चात काशी में ब्रह्मदत्तवंशीय राजाओं का राज्य हुआ और बौद्ध साहित्य—विशेषकर जातक कथाओं में इस वंश के सभी राजाओं का सामान्य नाम ब्रह्मदत्त मिलता है। ये शायद मूलरूप में मिथिला या विदेह से संबंधित थे। महाभारत से विदित होता है कि मगधराज जरासंध के समय काशी का राज्य मगध में सम्मिलित था किंतु जरासंध के पश्चात स्वतंत्र हो गया था। भीष्म ने काशिराज की कन्याओं, अंबा और अंबालिका का हरण करके विचित्रवीर्य का उनसे विवाह किया था। अनुशासन पर्व से सूचित होता है कि काशी के राजा दिवोदास ने जो सुदेव का पुत्र था वाराणसी नगरी बसाई थी। इस राज्य का घेरा गंगा के उत्तरी तट से लेकर गोमती के दक्षिण तट तक विस्तृत था। इस वर्णन से ज्ञात पड़ता है कि काशी वाराणसी से प्राचीन थी। विष्णुपुराण 5,34,41 में काशी का श्रीकृष्ण के सुदर्शन चक्र द्वारा भस्म किए जाने का वर्णन है। मिथ्या वासुदेव पौंड्रक को सहायता देने के कारण काशीनरेश से श्रीकृष्ण रुष्ट हो गए थे इसलिए उन्होंने उसे परास्त कर काशी को नष्ट कर देना चाहा था—'शस्त्रास्त्रमोक्षचतुरं दग्ध्वा तद्बलमोजसा कृत्या गर्भविशेषा तदा वाराणसी पुरीम्'। बुद्ध के समय के पूर्व काशी का राज्य भारत भर में प्रसिद्ध था और इसकी गणना अंगुत्तरनिकाय के अनुसार तत्कालीन षोडशमहा

जातकों में दो। अनेक कथाएँ काशीनरेश ब्रह्मदत्त के नाम से भरी पड़ी है। काशी के राजकुमारों का तक्षशिला जाकर विद्या पढने का भी उल्लेख जातकों मे है। इस समय काशी तथा पार्श्ववर्ती विदेह और कोसल जनपदो मे बहुत शत्रुता थी। विदेह की सत्ता को समाप्त करने मे काशी का भी बडा हाथ था। कई जातककथाओं मे काशीनरेशो की महत्वाकांक्षाओं तथा काशीजनपद की महानता का स्पष्ट उल्लेख है। गुहिलजातक मे उल्लेख है कि काशी सारे भारत वर्ष में सर्वप्रमुख नगरी थी। इसका विस्तार बारह कोस था जबकि इन्द्रप्रस्थ तथा मिथिला का घेरा केवल सात कोस ही का था। तंडुलनालिजातक मे उल्लेख है कि नगर की दीवारों का घेरा बारह कोस और मुख्यनगर तथा उपनगरों का घेरा लगभग तीन सौ कोस था। अन्य जातकों मे उल्लेख है कि बनारस के आसपास साठ कोस का जगल था। काशी के कई नरेशों को जातकों मे 'सब्ब राजानम अगराजा' (सर्वराजानाम अग्रराजा) कहा गया है। महावग्ग मे भी उल्लेख है कि प्राचीन काल मे काशी राज्य बहुत समृद्धिशाली था। भोजजानीय जातक मे वर्णन है कि काशी के वैभव के कारण आसपास के सभी राजाओं का दांत काशी पर रहता था और एक बार तो सात पडोसी राजाओं ने काशी को घेर लिया था। बुद्ध के समय, मगध का राजा बिंबिसार बहुत शक्तिशाली हो गया था क्योंकि उसने पडोस के विदेह आदि राज्यों को जीत कर मगध मे मिला लिया था। उसने कोसल देश के राजा प्रसेनजित की कन्या वासवी (वासवदत्ता) से विवाह किया और काशी का राज्य जो इस समय कोसल के अंतर्गत था दहेज के रूप मे ले लिया। कथाओं में कहा गया है कि काशी को वासवदत्ता की शृंगार प्रसाधन की सामग्री के व्यय के लिए दिया गया था। बौद्ध साहित्य मे काशी के, वाराणसी के अतिरिक्त केतुमती, सुरुधन

सुदस्सन (सुदर्शन), ब्रह्मवद्धन (ब्रह्मवर्धन),
(रामानगरी, वर्तमान रामनगर) तथा मौलि
पश्चात काशी और निकटवर्ती सारनाथ का
रहा। मौर्यसम्राट अशोक ने सारनाथ को
जगतप्रसिद्ध सिंहस्तंभ प्र... पित किया (
भारत के इतिहास के ... शो में से
मौखरी, प्रतीहार, चे... ने क्रम
से राज्यकाल के लिखने ... व
है। सातवीं शती मे ह्यू...
सारनाथ की यात्रा की थी

होने के साथ ही साथ काशी के बुरे दिन आ गए। 1033 ई० म नियाल्तगीन नामक मुसलमान सेनाध्यक्ष ने सवप्रथम बनारस पर आक्रमण करके उस लूटा। 1194 ई० मे बनारस को गुलामवश क सुल्ताना ने अपने राज्य म शामिल कर लिया। 1575 ई० मे अकबर के वित्तमत्री टोडरमल ने विश्वनाथ का एक विशाल मदिर प्राचीन विश्वनाथ के देवालय के स्थान पर बनवाया। 1659 ई० मे धर्मांध औरगजेब ने इस मदिर को तुडवाकर इसकी सामग्री से उसी स्थान पर वतमान मसजिद बनवायी। तत्पश्चात् मराठा के उत्कषकाल मे अहल्यावाई होल्कर ने अनेक घाट और मदिर गगा तट पर बनवाए। पजाब-केसरी रणजीतसिंह ने भी विश्वनाथ के दुबारा बने हुए वतमान मदिर पर सोन का पत्र चढवाया। काशी के अनेक घाटो मे दशाश्वमेध, मणिकर्णिका, हरिश्चद्र तथा तुलसी घाट अधिक प्रसिद्ध हैं। इन सब के साथ पौराणिक तथा ऐतिहासिक गाथाए जुडी हुई हैं। अकबर जहागीर के समय महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जिस घाट के निकट रहते थे वह तुलसी घाट के नाम से प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि रामचरितमानस के उत्तराध, किष्किधा काड से उत्तरकाड तक, की रचना तुलसीदास ने इसी पुण्य स्थान पर की थी। काशी का प्रसिद्ध नाम वाराणसी काशी नाम से अपक्षाकृत नवीन है किंतु इसका भी उल्लेख महाभारत मे है—'समेत पार्थिव क्षत्रं वाराणस्या नदीसुत, कन्याथमाह्वयद वीरो रथेनैकेन सयुगे' शांति० 27 9। 'ततो वाराणसी गत्वाचयित्वा वृषध्वजम्, कपिलाह्रदे नर स्नात्वा राजसूयमवाप्नुयात्'—वन० 84,78। पाडवो ने तीथ यात्रा क प्रसग मे काशी की यात्रा नहीं की थी किंतु भीम का अपनी दिग्विजय यात्रा मे काशिराज सुबाहु पर विजय प्राप्त करने का उल्लेख है—'स काशिराज समरे सुबाहुमनिवर्तिन वशे चक्रे महाबाहुर्भीमो भीमपराक्रम" वन० 30,6-7।

काशीपुरी (जिला मयूरभज, उडीसा)

सुवणरखा नदी के तट पर स्थित यह नगरी बगाल के सेन राजाओ क प्रारभिक राजधानी थी (मध्य 11वी शती ई०)। इसका अभिज्ञान मयूरभज जिले मे स्थित कसियारी नामक स्थान से किया गया है (नगेंद्रनाथ वसु—आर्क्यिोलॉजिकल सर्वे रिपोट)। राजधानी का सस्थापक सामतदेव या उसका पुत्र हमतसेन था।

काश्मीर दे० कश्मीर

महाभारत आदि कई प्राचीन सस्कृत ग्रथो मे अधिकतर काश्मीर नाम का प्रयोग है।

जनपदो म थी। जातक कथाए काशीनरेश ब्रह्मदत्त के नाम से भरी पडी हैं। काशी के राजकुमारो का तक्षशिला जाकर विद्या पढने का भी उल्लेख जातको म है। इस समय काशी तथा पार्श्ववर्ती विदेह और कोसल जनपदो म बहुत शत्रुता थी। विदेह की सत्ता को समाप्त करने मे काशी का भी बडा हाथ था। कई जातककथाओ म काशीनरेशो की महत्त्वाकाक्षाओ तथा काशीजनपद की महानता का स्पष्ट उल्लेख है। गुहिल्लजातक मे उल्लेख है कि काशी सारे भारत वर्ष मे सर्वप्रमुख नगरी थी। इसका विस्तार बारह कोस था जबकि इन्द्रप्रस्थ तथा मिथिला का घेरा केवल सात कोस ही का था। तडुलनालिजातक म उल्लेख है कि नगर की दीवारो का घेरा बारह कोस और मुख्यनगर तथा उपनगरो का घेरा लगभग तीन सौ कोस था। अन्य जातको मे उल्लेख है कि बनारस के आसपास साठ कोस का जगल था। काशी के कई नरेशो को जातको मे 'सब्ब राजानम अग्गराजा' (सर्वराजानाम् अग्रराजा) कहा गया है। महाधम्म म भी उल्लेख है कि प्राचीन काल मे काशी राज्य बहुत समृद्धिशाली था। भोजजानीय जातक म वर्णन है कि काशी के वैभव के कारण आसपास के सभी राजाओ का ध्यान काशी पर रहता था और एक बार तो सात पडोसी राजाओ ने काशी को घेर लिया था। बुद्ध के समय, मगध का राजा बिंबिसार बहुत शक्तिशाली हो गया था क्योकि उसने पडोस के विदेह आदि राज्यो को जीत कर मगध मे मिला लिया था। उसने कोसल देश के राजा प्रसेनजित की कन्या वासवी (वासवदत्ता) से विवाह किया और काशी का राज्य जो उस समय कोसल के अतगत था दहेज के रूप मे ले लिया। कथाओ मे कहा गया है कि काशी को वासवदत्ता की श्रृगार प्रसाधन की सामग्री के व्यय के लिए दिया गया था। बौद्ध साहित्य मे काशी के वाराणसी के अतिरिक्त केतुमती, सुरुधन, सुदस्सन (सुदर्शन), ब्रह्मवद्धा (ब्रह्मवर्धन), पुप्फवती (पुष्पवती), रम्मानगरी (रामानगरी, वर्तमान रामनगर) तथा मोलिनी आदि नाम मिलते हैं। बुद्ध के पश्चात् काशी और निकटवर्ती सारनाथ का गौरव काफी दिनो तक बना रहा रहा। मौर्यसम्राट अशोक ने सारनाथ को महत्वपूर्ण समझते हुए यहा अपना जगत्प्रसिद्ध सिंहस्तम्भ प्रतिष्ठापित किया (तीसरी शती ई० पू०)। तत्पश्चात भारत के इतिहास के प्रमुख राजवशो मे से कुषाण, भारशिवनाग, गुप्त, मौखरी, प्रतीहार, चेदि तथा गहडवारो ने क्रम से यहा राज्य किया। इन सभी के राज्यकाल के सिक्के तथा अन्य पुरातत्त्वविषयक अवशेष यहा से प्राप्त हुए हैं। सातवी शती म हर्ष के समय चीनी यात्री युवानच्वाग ने काशी तथा सारनाथ की यात्रा की थी। मुसल्मानो के आधिपत्य का उत्तरभारत म विस्तार

होने के साथ ही साथ काशी के बुरे दिन आ गए। 1033 ई० मे नियाल्तगीन नामक मुसलमान सेनाध्यक्ष ने सवप्रथम बनारस पर आक्रमण करके उसे लूटा। 1194 ई० मे बनारस को गुलामवश के सुल्तानो ने अपने राज्य मे शामिल कर लिया। 1575 ई० मे अकबर के वित्तमत्री टोडरमल ने विश्वनाथ का एक विशाल मदिर प्राचीन विश्वनाथ के देवालय के स्थान पर बनवाया। 1659 ई० मे धर्मांध औरगजेब ने इस मदिर को तुडवाकर इसकी सामग्री से उसी स्थान पर वतमान मसजिद बनवायी। तत्पश्चात् मराठो के उत्कर्षकाल मे अहल्याबाई होल्कर ने अनेक घाट और मदिर गगा तट पर बनवाए। पजाब-केसरी रणजीतसिंह ने भी विश्वनाथ के दुबारा बने हुए वतमान मदिर पर सोने का पत्र चढवाया। काशी के अनेक घाटो मे दशाश्वमेध, मणिकर्णिका, हरिश्चद्र तथा तुल्सी घाट अधिक प्रसिद्ध हैं। इन सब के साथ पौराणिक तथा ऐतिहासिक गाथाए जुडी हुई हैं। अकबर-जहागीर के समय महाकवि गोस्वामी तुल्सीदास जिस घाट के निकट रहते थे वह तुलसी घाट के नाम से प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि रामचरितमानस के उत्तराध, किष्किंधा काड से उत्तरकाड तक, की रचना तुल्सीदास न इसी पुण्य स्थान पर की थी। काशी का प्रसिद्ध नाम वाराणसी काशी नाम से अपेक्षाकृत नवीन है किंतु इसका भी उल्लेख महाभारत मे है—'समेत पार्थिव क्षत्र वाराणस्या नदीसुत , कन्याथमाह्वयद् वीरो रथेनैकेन सयुगे' शाति० 27,9। 'ततो वाराणसी गत्वाचयित्वा वृषध्वजम कपिलाह्रद नर स्नात्वा राजसूयमवाप्नुयात्'—वन० 84,78। पाडवो ने तीथ यात्रा के प्रसग मे काशी की यात्रा नही की थी किंतु भीम का अपनी दिग्विजय यात्रा मे काशिराज सुबाहु पर विजय प्राप्त करने का उल्लेख है—'स काशिराज समरे सुवाहुमनिवर्तिन वशे चक्रे महाबाहुर्भीमो भीमपराक्रम' वन० 30,6 7।

काशीपुरी (जिला मयूरभज, उडीसा)

सुवणरखा नदी के तट पर स्थित यह नगरी बगाल के सेन राजाओ क प्रारभिक राजधानी थी (मध्य 11वी शती ई०)। इसका अभिज्ञान मयूरभज जिले मे स्थित कसियारी नामक स्थान से किया गया है (नगेंद्रनाथ वसु—आर्कियोलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट)। राजधानी का सस्थापक सामतदेव या उसका पुत्र हमतसेन था।

काश्मीर दे० कश्मीर

महाभारत आदि कई प्राचीन सस्कृत ग्रथो मे अधिकतर काश्मीर नाम का प्रयोग है।

काष्ठमडप दे० काठमडू

कासद्रा दे० कश्यपनगर

कासद्रह (राजस्थान)

आबूरोड स्टेशन से आठ मील उत्तर। यह प्राचीन जैनतीर्थ है जिसका उल्लेख तीर्थमाला चैत्यवदन नामक जैन स्तोत्र म है—'थारापद्रपुर च वाग्दिह पुरे कासद्रह चेडरे'।

किपुरुषवर्ष

पौराणिक भूगोल के अनुसार किपुरुष, जबुद्वीप का एक विभाग है—'भारत प्रथम वर्ष तत किपुरुष स्मृतम्' विष्णु० 2, 2, 12। इसका नाम जबुद्वीप के आग्नधि नामक राजा क पुत्र किपुरुष के नाम पर पडा था। 'नाभि किपुरुष दचैव हरिवर्ष इलावृत'। किपुरुष आदि आठ 'वर्षों' के निवासियों को जरा मृत्यु के भय से रहित माना गया है—'विपर्ययो न तेष्वस्तिजरामृत्यु भय न च' विष्णु 2, 1, 25। धर्माधर्म, उत्तम मध्यम, अधम तथा युग व्यवस्था वहाँ नहीं है—'धर्माधर्मो न तेष्वास्ता नोत्तमाधममध्यमा', न तेष्वस्ति युगावस्था क्षेत्रेष्वष्टसु सवदा' विष्णु 2, 1, 26। उपर्युक्त 2, 2, 12 के उल्लेख से यह भी इगित होता है कि किपुरुषदेश भारत के पार्श्व मे ही स्थित माना जाता था। सभवत यह तिब्बत या नेपाल का प्रदेश होगा जहा किपुरुष या किनरा का निवास था। आज भी हिमाचलप्रदेश म स्थित तिब्बत की सीमा के निकट के इलाके मे रहने वाली कुछ जातिया किनर कहलाती हैं। ये अनार्य जातिया आर्यों के रीतिरिवाजो तथा सस्कृति से अनभिज्ञ अवश्य ही रही होगी। महाभारत सभा० 28, 1 म अर्जुन की किपुरुषदेश पर विजय का वणन है—'स श्वेतपर्वत वीर समतिक्रम्य वीर्यवान् देश किं पुरुषावास द्रुमपुत्रेण रक्षितम्'। इसके पश्चात् किपुरुष देश मे स्थित हेमकूट का उल्लेख है—'हेमकूटमथासाद्य न्यविशत फाल्गुनस्तथा'। विष्णु० 2, 1, 19 मे भी हेमकूट का सबध किपुरुषो स बताया गया है—हेमकूट तथा वर्ष ददौ किपुरुषाय स। महाभारत, सभा० 28, 3 किपुरुष के हाटक नामक नगर को गुह्यको या यक्षो द्वारा रक्षित बताया गया है—'त जित्वा हाटके नाम देश गुह्य रक्षितम्'। कालिदास ने भी यक्षो की स्थिति मानसरोवर के निकट अलका मे मानी है जो निश्चय ही तिब्बत की सीमा के अतगत थी।

किएशिफालो दे० कोटीश्वर

कित्तूर (जिला बाराबकी, उ० प्र०)

(1) पूर्वोत्तर रेल के बुढवल स्टेशन से प्राय सात मील पर कित्तूर ग्राम है

जिसका प्राचीन नाम कुंतीनगर बताया जाता है। स्थानीय किंवदंती है कि प्रथम वनवास के समय कुंती के साथ पांडव यहां आकर कुछ दिन रहे थे। यह भी कथा है कि श्रीकृष्ण के परमधाम चले जाने के पश्चात् अर्जुन ने द्वारका से लाकर एक पारिजात वृक्ष यहां लगाया था। पारिजात का एक बड़ा प्राचीन एवं अनोखा वृक्ष यहां अभी तक है।

(2) (मैसूर) प्राचीन पुन्नाड की राजधानी कीर्तिपुर का वर्तमान नाम। यह कपिनी (कावेरी की सहायक नदी) के तट पर मैसूर के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है।

किंत्थीपुर=कीर्तिपुर

किन्नर देश

तिब्बत और हिमालय प्रदेश के पश्चिमी भागों में इस देश की स्थिति रही होगी। आजकल भी हिमाचलप्रदेश के पहाड़ी इलाकों तथा लाहूल प्रदेश में बसी कुछ जातियां कनौडिया या किन्नर कहलाती हैं। दे० किंपुरुषवर्ष, उत्सवसंकेत। कुबेर, जिसकी राजधानी अलका में थी किन्नरों का अधिपति कहलाता था। अमरकोश (1, 69) में कुबेर को 'किन्नरेश' कहा गया है जिससे सूचित होता है कि किन्नरों का निवास कैलाशपर्वत के परवर्ती प्रदेश में था।

किपिन

चीन के प्राचीन इतिहास लेखकों ने भारत के इस प्रदेश का कई बार उल्लेख किया है। चीनी इतिहास सीन हानशू (Thien Han Schu) के अनुसार साइवाग या शक नामक जाति यूचियों (यूची=ऋषीक) द्वारा अपने निवासस्थान से निकाल दिए जाने पर दक्षिण में आकर किपिन देश में राज्य करने लगी (दे० जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी 1903, पृ० 22)। सिल्वनलेवी के मत में किपिन कश्मीर ही का चीनी नाम है किंतु स्टेनकोनो के अनुसार कपिश या पूर्वी गंधार को चीनी लेखकों ने किपिन कहा है (दे० एपिग्राफिका इंडिका 16, पृ० 291)। चीनी यात्री सुंगसुन ने भी किपिन का उल्लेख किया है। किपिन कुभा (=काबुल) का रूपांतर भी हो सकता है।

किरकी (बंबई)

पूना से तीन मील। 1817 ई० में महाराष्ट्र नायक पेशवा को अंग्रेजों ने इस स्थान पर पराजित करके मराठों की राजशक्ति को सदा के लिए समाप्त कर दिया था।

किरतपुर (जिला बिजनौर, उ० प्र०)

यह कस्बा बहलोल लोदी के जमाने (15वी शती का अत) का है। नजीबाबाद के नवाब नजीबखा रूहेले की गढी किरतपुर मे अब भी है।

किराडी (जिला बिलासपुर, म० प्र०)

एक काष्ठ स्तभ पर उत्कीर्ण गुप्तकालीन अभिलेख के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। इस अभिलेख से तत्कालीन शासन प्रणाली के बारे मे अनेक तथ्य ज्ञात होते है, जैसे इसमे 'कुलपुत्रक गृहनिर्माणक' नामक के गृहनिर्माण के अधिकारी का उल्लेख है जिससे मध्य प्रदेश मे गुप्तकालीन शासन व्यवस्था म गृहनिर्माण का एक स्वतत्र विभाग होना प्रमाणित होता है।

किरात देश

'स किरातैश्च चीनैश्च वृत प्राग्ज्योतिषोऽभवत् अन्यैश्च बहुभिर्योधै सागरानूपवासिभि ' महा० सभा० 26 9, 'वग पुड्र किरातेषु राजा बलसमन्वित , पौंड्रको वासुदेवेति योऽसौ लोकेऽभिविश्रुत ' महा० सभा० 14,20, 'पूर्वे किराता यस्या तेपश्चिमे यवना स्थिता' विष्णु० 2,3,8। उपर्युक्त उद्धरणो स किरात देश की स्थिति पूव बगाल या आसाम के जगली और पहाडी भागो मे सिद्ध होती है। सभा० 14,20 मे किरात देश को वासुदेव पौड्रक के अधीन बताया गया है। किरात का सभवत सवप्रथम निर्देश अथववेद मे है जिससे यह सूचना मिलती है कि इस जाति का निवास हिमालय के (पूर्वी क्षेत्र) की उपत्यकाओं मे था।

किष्किधा (होस्पटतालुका, मैसूर)

होसपेट स्टेशन से ढाई मील की दूरी पर और बिल्लारी से 60 मील उत्तर की ओर रामायण म प्रसिद्ध, वानरो की राजधानी, किष्किधा स्थित है। होसपेट स्टेशन से दो मील पर अजनी (हनुमान की माता) के नाम से एक पवत है और इसके कुछ ही दूर पर ऋष्यमूक स्थित है जिसे घेर कर तुगभद्रा बहती है। नदी के दूसरी ओर हपी— 16वी शती ई० के ऐश्वयशाली नगर विजयनगर के विस्तृत खडहर हैं। रामायण के अनुसार किष्किधा मे वाली और तदुपरात सुग्रीव ने राज्य किया था। श्रीरामचद्र जी ने बाली को मारकर सुग्रीव का अभिषेक लक्ष्मण द्वारा इसी नगरी मे करवाया था। तदुपरात माल्यवान तथा प्रस्रवणगिरि पर जो किष्किधा मे विरूपाक्ष के मदिर से चार मील दूर है, उन्होने प्रथम वर्षाऋतु बिताई थी—'तथा स बालिन हत्वा सुग्रीवमभिषिच्य च, वसन माल्यवत पृष्ठे रामो लक्ष्मणमब्रवीत' वाल्मीकि० किष्किधा 27,1 'एतद् गिरेर्माल्यवत पुरस्तादाविर्भवत्यम्बर लेखिशृगम, नव पयो यत्र घनैर्मया

च त्वद्विप्रयोगानु सम विसृष्टम्' रघु० 13,26 माल्यवान पवत के ही एक भाग का नाम प्रस्रपण (या प्रस्रवण) गिरि है। इसी स्थान पर श्रीराम ने वर्षा के चार मास व्यतीत किए थे—'अभिषिक्ते तु सुग्रीवे प्रविष्ट वानरे गुहाम, आजगाम सहभ्राता राम प्रस्रवण गिरिम्' वाल्मीकि० किष्किधा 27,1। पास ही स्फटिक शिला है जहा अनेक मदिर हैं। ऋष्यमूक पवत तथा तुगभद्रा के घेरे को चक्रतीर्थ कहते है। चक्रतीर्थ के उत्तर म ऋष्यमक और दक्षिण मे श्री रामचद्र जी का मदिर है। मदिर के पास ही सूय, सुग्रीव आदि की मूर्तिया हैं। विरूपाक्ष मदिर से प्राय दो मोल पर तुगभद्रा नदी के वामतट पर एक ग्राम अनेगुडो है जिसका अभिज्ञान किष्कियानगरी से किया गया है। इस परम ऐश्वयशालिनी नगरी का वणन वाल्मीकि रामायण मे पर्याप्त विस्तार से है। इसका एक अश इस प्रकार है—'स ता रत्नमयी दिव्या श्रीमान् पुष्पितकानना, रम्या रत्न समाकीर्णा ददश महती गुहाम्। हर्म्यप्रासादसबाधा नानारत्नोपशोभिताम् सवकामफलैवृक्षै पुष्पित स्पशाभिताम। देवगधवपुत्रैश्च वानरै कामरूपिभि, दिव्यमाल्याम्बरधरै शोभिता प्रियदशन। चदनागरपद्माना गधै सुरभिगधिता, मैरयाणा मधूना च सम्मोदितमहापथा। विध्यमेरु गिरि प्रख्यै प्रासादनैकभूमिभि, ददश गिरिनद्यश्च विमलाम्तत्र राघव' किष्किधा० 33,4 8 अर्थात लक्ष्मण ने उस विशाल गुहा को देखा जो रत्नो से भरी थी और अलौकिक दीख पडती थी, और जिसक वनो म खूब फूल खिले हुए थे, हर्म्य प्रासादो से सघन, विविध रत्ना स शोभित और सदावहार वृक्षो से वह नगरी सम्पन्न थी। दिव्यमाला और वस्त्र धारण करने वाले सुदर देवताओ, गधव पुत्रो और इच्छानुसार रूप धारण करने वाले वानरो से वह नगरी बडी भली दीख पडती थी। चदन, अगर और कमल की गध से वह गुहा सुवासित थी। मैरय और मधु से वहा की चौडी सडकें सुगधित थी। इस वणन से यह स्पष्ट है कि किष्किधा पवत की एक विशाल गुहा या दरी के भीतर बसी हुई थी जिससे यह पूणरूपेण सुरक्षित थी। किष्किधा० 14,6 के अनुसार ('प्राप्तास्मध्वजयत्राढ्या किष्किधावालिन पुरीम') इस नगरी मे सुरक्षाथ यत्र आदि भी लगे थे।

किष्किधा से प्राय एक मील पश्चिम मे पपासर नामक ताल है जिसके तट पर राम लक्ष्मण कुछ समय तक ठहरे थे। पास ही स्थित सुरोवन नामक स्थान को शबरी का आश्रम माना जाता है। महाभारत सभा० 31,17 मे भी किष्किधा का उल्लेख है—'त जित्वास महाबाहु प्रययौ दक्षिणापथम्, गुहामासादयामास किष्किधा लोकविश्रुतम्'। यहा भी किष्किधा को पवत गुहा

में स्थित कहा गया है और वहां वानरराज मैंद और द्विविद का निवास बताया गया है। ऋष्यमूक का श्रीमद्भागवत में भी उल्लेख है— 'सह्यो देवगिरि-ऋष्यमूक श्री शैलो वेंकटो महेन्द्रो वारिधारो विन्ध्य' श्रीमद्भागवत 5, 19, 16 (दे० अनेगुंडी, कष्कुनपुर, ऋष्यमूक, मारवशार, पपासर)।

किष्किंधापुर (जिला गोरखपुर, उ० प्र०)

वर्तमान खखूंदो। प्राचीन जैन तीर्थ जिसका संबंध पुष्पदंतस्वामी से बताया जाता है।

किसोरा (जिला मानपुर, म० प्र०)

13वीं शती में, वर्तमान मानपुर के निकट एक छोटा सा हिंदू राज्य था। दिल्ली में सुल्तान कुतुबुद्दीन एबक के समय में यहां के शासक सज्जनसिंह थे। इनकी पुत्री सुंदरी ताजकुंवरि, एबक के सैनिकों से जो उसे पकड़ कर सुल्तान के पास ले जाना चाहते थे, वीरतापूर्वक लड़ती हुई स्वयं अपने हाथों ही मर-कर अमर हो गई। उसकी वीरगाथा के गीत आज तक किसोरा के आसपास गूंजते हैं।

क्विलन (केरल)

प्राचीन नाम कोल्लम। यह प्राचीन नगर और बंदरगाह है। यह पुराने जमाने में दक्षिण भारत के इस क्षेत्र और समुद्रपार के पश्चिमी देशों के बीच होने वाले व्यापार का प्रमुख केंद्र था।

कीकट

गया (बिहार) का परिवर्ती प्रदेश। पुराणों के अनुसार बुद्धावतार कीकट देश में ही हुआ था। कीकट का सर्वप्रथम उल्लेख ऋग्वेद में है—'किं ते कृण्वंति कीकटेपु गावो नाशिरं दुह्रे न तपंति घर्मं आनोभरप्रमगंदस्य वेदो नैचाशाखं मघवन्रन्धयान' 3, 53, 14। इस उद्धरण में कीकट के शासक प्रमगंद का उल्लेख है। यास्क के अनुसार (निरुक्त 6, 32) कीकट अनार्य देश था। पुराण-काल में कीकट मगध ही का एक नाम था तथा इसे सामान्यतः अपवित्र समझा जाता था, केवल गया और राजगृह तीर्थरूप में पूजित थे—'कीकटेपु गया पुण्या पुण्यं राजगृहं वनम्' वायुपुराण 108, 73। बृहद्धर्मपुराण में भी कीकट को अनिष्ट देश माना गया है किंतु कणदा और गया को अपवाद कहा गया है— 'तत्र देशे गया नाम पुण्यदेशोऽस्ति विश्रुतः, नदी च कणदा नाम पितृणां स्वर्गदायिनी' 26, 47। श्रीमद्भागवत में कतिपय अपवित्र अथवा अनार्य लोगों के देशों में कीकट या मगध की गणना की गई है। महाभारतकाल में भी ऐसी ही मान्यता थी। पांडवों की तीर्थ यात्रा के प्रसंग में वर्णन है कि वे जब मगध की

सीमा के अदर प्रवेश करने जा रहे थे तो उनके सहयात्री ब्राह्मण वहा से लौट आए। सभव है कि इस मान्यता का आधार वैदिक सभ्यता का मगध या पूर्वोत्तर-भारत मे देर से पहुचना हो। अथर्ववेद 5, 22, 14 से भी अग और मगध का वैदिक सभ्यता के प्रसार के बाहर होना सिद्ध होता है। पुराणकाल मे शायद बौद्ध धम का केंद्र होने के कारण ही मगध को अपुण्य देश समझा जाता था।

कीटगिरि

विनय 2, 170–175 मे वर्णित स्थान जिसका अभिज्ञान केराकत (जिला जौनपुर, उ० प्र०) से किया गया है।

कीर

वतमान कागडा (पूव पजाब) के आसपास का प्रदेश। कलचुरिनरेश कणदेव (1041–1073 ई०) ने इस देश को जीता था जैसा कि अल्हणदेवी के अभिलेख से ज्ञात होता है—'कीर कीरवदासपजरगृह हूण प्रहर्षं जहौ' (एपिग्राफिका इडिया, जिल्द 2, पृ० 11) अर्थात् कण के प्रताप के सामने कीर, पजरगत शुक के समान हो गए तथा हूणो (या हूण नरेश) का सारा सुख समाप्त हो गया।

कीर्तिनाशा

पद्मा (गगा) का एक नाम। राजनगर जिला फरीदपुर—बगाल मे स्थित राजा राजवल्लभ के प्राचीन भवनो और स्मारको को बहा ले जाने के कारण इसका यह नाम पड गया है।

कीर्तिपुर (मैसूर)

कपिनी के तट पर बसा हुआ नगर (वतमान कितूर) जहा प्राचीन (पाचवी-दसवी शती ई०) पुनाडू देश की राजधानी थी। इसका प्राकृतनाम कित्थीपुर है, दे० पुनाडू।

कुकनपुर

चीनी यात्री युवानच्वाग के यात्रावृत्त मे वर्णित दक्षिण भारत का नगर। चीनी उच्चारण मे इसे 'कोगकीनयापुले' लिखा गया है। कुछ विद्वानो के मत मे कुकुनपुर वतमान अनेगुडी (मैसूर) है जहा रामायण काल मे सुग्रीव की नगरी किष्किधा बसी हुई थी। यदि यह अभिज्ञान ठीक है तो किष्किधापुर का ही रूपातर कुकुनपुर को माना जा सकता है। अनेगुदी के निकट हपी नामक स्थान पर मध्यकाल का प्रसिद्ध शहर विजयनगर बसा हुआ था।

कुग

मद्रास राज्य मे स्थित नीलगिरि के उत्तर का भाग जिसमे आजकल

सालेम और कोयमबट्टूर जिले शामिल हैं। इस राज्य को मध्यप्रदेश के कलचुरि वंश के राजा रणदेव (1041–1073 ई०) ने जीता था—जैसा कि अल्हणदेवी के अभिलेख से सूचित होता है—'पाड्य चडिमता मुमोच मुरलस्तत्याज गवग्रह, कुग सद्गतिमाजगाम चक्पे वग कलिंगै सह'—(एपिग्राफिका इडिया जिल्द 2, पृ० 11)।

कुडधानी

कनौजाधिप महाराज हर्ष (606 647 ई०) के मधुबन अभिलेख से ज्ञात होता है कि उनके शासनकाल मे कुडधानी नामक विषय श्रावस्ती जनपद के अतगत था। इसी विषय मे सोमकुडका ग्राम स्थित था जिसका सबध इस अभिलेख से है।

कुडलपुर (म० प्र०)

(1) दमोह से 22 मील कुडलाकार पवत शिखर पर तथा नीचे 59 जैन मदिर स्थित हैं। पवत के ऊपर एक मदिर मे महावीर की विशाल शैलकृत्त मूर्ति है। कहा जाता है कि इस मदिर का जीर्णोद्धार महाराज छत्रसाल ने 17वी शती मे करवाया था।

(2) दे० कुडिन।

कुडलवन

कनिष्क के समय मे (लगभग 120 ई०) तीसरी धम सगीति (बौद्ध सम्मेलन) इस स्थान पर हुई थी। यह बौद्ध विहार कश्मीर मे सभवत श्रीनगर के निकट ही था। इस सम्मेलन का प्रधान वसुमित्र और उपप्रधान पाटलिपुत्र निवासी 'बुद्ध चरित' का ख्यातनामा लेखक अश्वघोष था। इसके 500 सदस्य थे। इस सम्मेलन के पश्चात् महाविभाषा नामक ग्रथ सगृहीत किया गया था। अब यह ग्रथ केवल चीनी भाषा में ही प्राप्त है। तिब्बती लेखक तारानाथ लिखता है कि कुडलवन की स्थिति कुछ लोग कश्मीर में तथा अन्यलोग जालधर के निकट कुवन मे मानते हैं। वतमान अन्वेषणो के आधार पर प्रथम मत ही ग्राह्य जान पडता है। कुछ विद्वानो के मत मे तृतीय धम सगीति पुरुषपुर या पेशावर म हुई थी।

कुडागल (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

यहा के प्राचीन मदिर मे जो अब प्राय खडहर हो गया है काले पत्थर के एक कलापूर्ण स्तभ पर सुदर मूर्तिकारी अकित है। मदिर मूलरूप म विशालकाय प्रस्तरखडो को जोड कर बनाया गया था।

कुडिन—कुडिनपुर=कौडिन्यपुर (चादूर तालुका, जिला अमरावती,

महाराष्ट्र)

यह उत्तर वैदिक तथा महाभारत के समय का नगर है। बृहदारण्यकोपनिषद् म विदर्भी कौंडिन्य नामक एक ऋषि का उल्लेख है। कौंडिन्य, कुंडिन निवासी के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है। महाभारत म विदभ देश के राजा भीम का उल्लेख है जिसकी राजधानी कुंडिनपुर मे ही थी—'स भीमवचनाद् राजा कुंडिन प्राविशत पुरम्, नादयन् रथघोषेण सर्वा स विदिशोदिश' महा० वन० 73,2 (नलोपाख्यान)। रुक्मिणी विदभराज की कन्या थी और कुंडिनपुर से ही कृष्ण उसे उसकी प्रणययाचना के परिणामस्वरूप अपने साथ द्वारका ले गए थे—आरुह्य स्यन्दन शौरिर्द्विजमारोप्य तूणगै, आनर्तादेक-रात्रेण विदर्भानगमद्धयै' श्रीमद्भागवत् 10,53,6 अर्थात् रथ मे चढ कर श्रीकृष्ण तेज घोडो के द्वारा आनत (द्वारका) से विदभ देश एक ही रात मे जा पहुँचे। 'राजा स कुंडिपति पुत्र-स्नेह वशगत शिशुपालाय स्वा कन्या दास्यन् कर्माण्यकारयत' श्रीमद्भागवत् 10,53 7 अर्थात् कुंडिनपति भीम ने अपने पुत्र रुक्मि के प्रेम के वश मे होने के कारण उसके कहने के अनुसार रुक्मिणी के शिशुपाल के साथ विवाह की तैयारियां कर ली थी। आगे (10,53,21) भी कुंडिन का उल्लेख है। कालिदास ने रघुवश, सग 6 मे इदुमती के स्वयवर का विदभ देश की राजधानी कुंडिन ही म होना बताया है। इदुमती को कालिदास ने विदभराज भोज की बहन और विदभ-राज को कुंडिनेश कहा है—'तिस्त्रस्त्रिलोकप्रथितेन सार्धमजेन मार्गे वसतीरुषित्वा तस्मादपावतत कुंडिनेश पर्वात्यये सोममिवोष्ण रश्मे' रघुवश 7,33 अर्थात कुंडिनेश भोज, इदुमती के विवाह के पश्चात् अपने देश को लौटते हुए त्रिलोक प्रसिद्ध राजकुमार अज के साथ माग मे तीन रात्रि बिता कर अपनी राजधानी—कुंडिनपुर—लौट आए जैसे अमावस्या के पश्चात चद्रमा सूय के पास स लौट आता है। कुंडिनपुर वर्धा नदी के तट पर स्थित है (द० अमरावती का गजेटियर, जिल्द ए०, पृ० ४०६)। इसका वतमान नाम कुंडलपुर है। यह स्थान आर्वी (महाराष्ट्र) से छ मील दूर है। कुंडलपुर के पास ही भगवती अंबिका का प्राचीन मंदिर एक टीले पर अवस्थित है। किंवदती है कि यह मदिर उसी प्राचीन मदिर के स्थान पर है जहा से देवी रुक्मिणी श्रीकृष्ण के साथ छिप कर चली गई थी। इस स्थान को जो वधा—प्राचीन वरदा—के तट पर स्थित है आज भी तीथरूप म मान्यताप्राप्त है। नगर के बाहर प्राचीन दुग के ध्वसावशेष है जिनम अनेक मदिरो के खडहर भी अवस्थित ह। दशावतार की एक प्रतिमा पर विक्रम सवत 1496 (1439 ई०) का एक लेख है जिससे ज्ञात होता है कि इस मूर्ति का निर्माण किसी व्यापारी ने विद्यापुर मे करवाया था। कौंडिन्यपुर म

और भी अनेक मूर्तियां, विशेषकर कृष्णलीला से संबंधित, प्राप्त हुई हैं। इनकी आकृतियां तथा वेशभूषा की शैली अधिकांश में महाराष्ट्रीय हैं। रुक्मिणी के पिता भीष्मक के समय ही म भोजकट नामक एक नया नगर कुंडिनपुर के निकट ही बस गया था। दे० भोजकट।

कुंडीविष

द्रौपदेयाभिमन्युश्च सात्यकिश्च महारथ, पिशाचादारदाश्चैवपुंड्रा कुंडीविषैं सह' महा० भीष्म०, 50,51 कुंडीविष का उल्लेख यहां पुंड्रों तथा कुछ अनार्य जातियों के साथ है जिससे इन लोगों के प्रदेश की स्थिति पूर्वी बंगाल या असम के किसी भूभाग में समझनी चाहिए। कुंडीविष के निवासी पांडवों की ओर से महाभारत के युद्ध में लड़े थे।

कुंडेश्वर (ज़िला टीकमगढ़, म० प्र०)

टीकमगढ़ से चार मील दूर है। यहां जमडार नदी बहती है जिसमें एक अगाध कुंड है। नदी तट पर कुंडेश्वर शिव का प्राचीन मंदिर है। कहा जाता है कि इस स्थान का नामकरण 15वीं शती के भक्तिसंप्रदाय के प्रसिद्ध संत वल्लभाचार्य ने किया था।

कुंत=कुंतल

कनारा या करहाड देश का नाम जिसका प्राचीन साहित्य में पर्याप्त वर्णन मिलता है। 7वीं शती के पूर्वार्ध में हर्ष को पराजित करने वाले चालुक्य नरेश पुलकेशिन के राज्य में कुंत या कुंतलदेश सम्मिलित था। एक परिभाषा के अनुसार कुंतल देश उत्तर में नर्मदा से लेकर दक्षिण में तुंगभद्रा तक विस्तृत था। पश्चिम में इसकी सीमा अरब सागर तक और उत्तर-पूर्व और दक्षिण पूर्व में गोदावरी तक थी। महाभारत में कुंतल का उल्लेख है। 'शृंगार प्रकाशिका' के लेखक भोज के वर्णन के अनुसार विक्रमादित्य ने महाकवि कालिदास को कुंतल-नरेश के यहां दूत बना कर भेजा था। 'औचित्य विचार चर्चा' में क्षेमेंद्र ने भी कालिदास के कुंतेश्वर दौत्य का उल्लेख किया है। कई अभिलेखों से सूचित होता है कि गुप्त-सम्राटों ने कुंतल देश से निकट संबंध स्थापित किया था। तालगुंड अभिलेखों में वैजयंती (कुंतल की राजधानी) के कदंबराज द्वारा अपनी कन्याओं का गुप्त राजाओं तथा अन्य नरेशों के साथ विवाह कराने का उल्लेख है। प्रसिद्ध कवि राजशेखर ने कन्नौजाधिप महीपाल (नवीं शती ई०) द्वारा विजित देशों में कुंतल की गणना की है। विंसेंट स्मिथ (अर्ली हिस्ट्री ऑफ इंडिया, पृ० 156) के अनुसार कुंतल देश वेदवती और भीमा नदियों के बीच में स्थित था।

कुतलपुरी दे० कांतिपुरी

कुतला (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

इस स्थान से नवपाषाणयुगीन पत्थर के हथियार और उपकरण प्राप्त हुए हैं।

कुतिनगर दे० क्तूर

कुंतिपद

(1) 'नरराष्ट्रं च निर्जित्य कुंतिभोजमुपाद्रवत्' महा सभा० 31,6। सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे कुंतिभोज या कुंतिपद नामक जनपद को विजित किया था। इसका अभिज्ञान ग्वालियर (म० प्र०) के निकट कोतवार के प्रदेश मे किया गया है। सभा० 31,7 मे चमण्वती या चंबल का उल्लेख होने से यह अभिज्ञान ठीक जान पडता है। कुंतिपद का रूपातरित नाम कांतिपुरी भी प्रचलित है। पांडवो की माता कुंती इसी प्रदेश के राजा की पुत्री थी। इसका नाम कुंतिभोज था। नवजात शिशु कर्ण को उसकी कुमारी माता कुंती ने अश्व नदी मे बहा दिया था (वन० 308, 25–26, दे० अश्व)। अश्वनदी का चंबल की सहायक नदी के रूप मे वर्णन है और इस प्रकार कुंतिपद की स्थिति ग्वालियर प्रदेश के निकट ही प्रमाणित होती है।

कुंतिभोज (दे० कुंतिपद)

महाभारत सभा० 31,6 मे उल्लिखित कुंतिभोज को कुंतिपद नामक जनपद या इस जनपद के राजा (कुंती के पिता) दोनो ही का नाम माना जा सकता है। कुंतिपद, चंबल या चमण्वती के दक्षिण की ओर बसा था। इसे आजकल कोतवार या कुतवार कहा जाता है।

कुंतीविहार=नासिक

कुंथलगिरि (महाराष्ट्र)

बार्शी से 22 मील दूर प्राचीन जैन-तीर्थ है। जैनग्रंथ निर्वाण-कांड मे निम्न गाथा है—'वसस्थ लवणणियरे पच्छिम भायमि कुथुगिरिसिहरे। कुलदेश भूपण मुणीणिव्वाणगयाणमो तेसिं।' पहाडी पर मूलनायक का विशाल मदिर है जिसमे आदिनाथ की प्राचीन प्रतिमा प्रतिष्ठित है।

कुंदग्राम=कुंडग्राम

जैन तीर्थंकर महावीर का जन्मस्थान। ये गौतम बुद्ध के समकालीन थे। कुंदग्राम वैसाली (=बसाढ़, जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) का एक उपनगर था। महावीर ज्ञात्रिक गोत्र मे उत्पन्न हुए थे। इनकी माता का नाम त्रिशला और पिता का सिद्धार्थ था। महावीर का जन्म 599 ई० पू० मे हुआ था (दे० विशाला,

वशाली)। वैशाली के कई अन्य उपनगरों का नाम पाली साहित्य में मिलता है जैसे कोल्लाग, नादिक, वाणियगाम, हत्थीगाम—आदि।

कुदुज

कुदुज निवासियों को महाभारत, सभा० 52 में कुदमान कहा गया है। यह देश समवत जैसा कि प्रसग से इगित होता है, अफगानिस्तान की उत्तरी सीमा पर रहा होगा (दे० डा० मोतीचद्र उपायन पर्व—ए स्टडी)।

कुभकोणम (मद्रास)

मायावरम् से बीस मील दूर स्थित प्राचीन विष्णु-तीर्थ है। शुद्ध नाम कुभ घोण है जिसके विषय म एक पौराणिक अनुश्रुति है—'कुभस्य घाणता यस्मिन सुधापूर विनिस्मृतम्, तस्मात्तत्तत्प्रद लोके कुभघाण वदति ह'। यह स्थान कावेरी नदी के निकट है और द्रविड शैली मे निर्मित 17वी शती के मदिर के लिए उल्लेखनीय है। यहा का पुण्यस्थल महामाघ्य सरोवर है।

कुभलगढ़ (ज़िला उदयपुर, राजस्थान)

प्राचीन नगर के खडहर कुभलगढ स्टेशन के समीप एक 3568 फुट ऊचा पहाडी पर स्थित हैं। इसे मेवाडपति राणा कुभा (1433–1468 ई०) न बसाया था और उनके नाम से ही यह नगर प्रसिद्ध हुआ। बालक उदयसिंह को जिसके प्राणो की रक्षा पन्ना धाई ने अपने पुत्र का बलिदान देकर की था—चित्तौड से यहा लाया गया था। यही से चडावत सरदारो की सहायता स उदयसिंह ने हत्यारे बनवीर को हराया था और उन्ह चित्तौड की गद्दी पुन प्राप्त हुई थी। जिस समय चित्तौड पर अकबर ने आक्रमण किया (1567 ई०) तो उदयसिंह को भाग कर पुन कुभलमेर मे शरण लेनी पडी। 1571 ई० तक उन्होंने अपनी राजधानी यही रखी (दे० ओझा—राजपूताने का इतिहास, पृ० 733)। हल्दीघाटी के युद्ध के पश्चात राणाप्रताप न भी अपनी राजधानी कुछ समय तक यही रखी थी किंतु राजा मानसिंह के कुभलगढ पर आक्रमण करने के पश्चात् प्रताप को यहा से भी चला जाना पडा था। कुभलगढ को कमलमीर भी कहा जाता है (दे० कमलमीर)।

कुभवती

सरभग जातक मे दडकी या दडकवन की राजधानी कुभवती बताई गई है (दे० दडक)।

कुभा=कुभा (काबुल नदी)

कुभी

पचगगा (महाराष्ट्र) की एक धारा का नाम। दे० पचगगा।

कुकर्रा (ज़िला मडला, म० प्र०)

आठवी या नवी शती ई० मे निर्मित एक जैन मदिर यहा का उल्लेखनीय स्मारक है।

कुकुभ

उडीसा का एक पहाड (देवी भागवत 8,11)

कुकुर=कुक्कुर=कौकुर

प्राचीन साहित्य तथा अभिलेखो मे कुकुर निवासियो और कुकुरदेश का अनेक बार उल्लेख आया है—'शौण्डिका कुकुराश्चैव शकाश्चैव विशाम्पते, अगा वगाश्च पुडाश्च शाणवत्यागयाम्तथा'—महा० सभा० 52,16 तथा 'जठरा कुकुराश्चैव सदशार्णाश्च भारत' महा० भीष्म० 9,42, 'यादवा कुकुरा भोजा सर्वे चाधकवृष्णय ' शान्ति० 81,29। रुद्रदामन् के गिरनार अभिलेख (द्वितीय शती ई०) मे इस प्रदेश की गणना रुद्रदामन् द्वारा जीते गए प्रदेशो म की गई है—'स्ववीर्यार्जितानामनुरक्तप्रकृतीना सुराष्ट्रश्वभ्रभरकच्छ सिंधुसौवीरकुकुरापरात निषादादीनाम् ' इस प्रदेश को गौतमीबलश्री के नासिक अभिलेख (द्वितीय शती ई०) मे उसके पुत्र शातवाहन गौतमीपुत्र के राज्य म सम्मिलित बताया गया है। वाराहमिहिर की बृहत्सहिता 14 4 मे भी कुकरदेश का उल्लेख है। प्राप्तसाक्ष्य के आधार पर कहा जा सकता है कि सभवत कुकुर लोग शको से सबधित थे तथा उनकी गणना अनार्यजातियो मे की जाती थी। (बारहवी शती मे सिंध और पश्चिमी पजाब मे खाकर या खक्कर नामक एक जाति का निवास था। इन्होने मु० गौरी का जब वह भारत से गजनी लौट रहा था, वध कर दिया था। सभव है खाखर और कुकुर एक ही हो।) प्राचीन काल मे कुकर देश की स्थिति पारियात्र या विंध्याचल के पश्चिमी भाग तथा राजस्थान या गुजरात के पूर्वी भाग म रही होगी। रुद्रदामन् के समय कुकुर शायद सिंध और अपरात देश के बीच मे बसे हुए थे।

कुकुस्था

यह महापरिनिब्बान सुत्त मे उल्लिखित ककौथा या ककुट्टा है। पावा स कुशीनगर जाने समय बुद्ध ने इस नदी को पार किया था। कनिंघम के अनुसार कसिया से आठ मील दूर बढी नदी ही कुकुस्था है। यह छोटी गडक म मिलती है।

कुक्कुटपादगिरि दे० गुरुपादगिरि

कुक्कुटाराम

महावश 5,122। पाटलिपुत्र मे स्थित एक विहार जो सभवत वतमान

रानीपुर (पटना) के पूर्व की ओर स्थित टीले के स्थान पर था। बौद्ध साहित्य के अनुसार मौर्य सम्राट अशोक ने इसी विहार में द्वितीय बौद्ध धर्म संगीति का सम्मेलन किया था।

कुटिका

वाल्मीकि रामायण अयोध्या० 71,15 में वर्णित एक नदी जिसे भरत ने केकय देश से अयोध्या आते समय सवतीय के पूर्व की ओर चलकर हाथी पर सवार होकर पार किया था। इससे जान पड़ता है कि नदी काफी गहरी थी—'हस्तिपृष्ठमासाद्य कुटिकामप्यवर्तत, ततार च नरव्याघ्रो लौहित्य च कपीवतीम्'।

कुटिकोष्टिका

वाल्मीकि० अयोध्या 71,10 में उल्लिखित नदी जो गंगा के पूर्व में थी—'स गंगा प्राग्वटे तीर्त्वा समयात्कुटिकोष्टिकाम्'।

कुटिला=कुटिका

कुटी

(1) बुद्ध चरित 22,13 के अनुसार पाटलिपुत्र के पास एक ग्राम जो गंगा के दूसरी ओर था। अंतिम बार पाटलिपुत्र से लौटते समय बुद्ध इस ग्राम में *आए थे और यहां उन्होंने प्रवचन किया था।*

(2) प्राचीन कंबुज देश (कंबोडिया—दक्षिण-पूर्व एशिया) का एक नगर जहां नवीं शती के हिंदू राजा जयवर्मन् द्वितीय की राजधानी कुछ समय तक रही थी। इसकी स्थिति अंगकोरथोम के पूर्व में बाटेकिंडी के निकट थी।

कुडथाल दे० कुशस्थल

कुडली (मैसूर)

बिरूर तालगुप्प रेलमार्ग पर शिमोगा से दस मील ईशानकोण में यह *ग्राम स्थित है। यहां तुंग और भद्रा नदियों का संगम है। नदी की संयुक्त धारा तुंगभद्रा कहलाती है। संगम पर कई प्राचीन मंदिर हैं। यहां शंकराचार्य का स्थान भी है।*

कुडाल (महाराष्ट्र)

सावंतवाडी से 13 मील उत्तर की ओर काली नदी के तट पर स्थित है। इस स्थान पर 1663 ई० में महाराष्ट्र केसरी शिवाजी तथा बीजापुर के सुलतान आदिलशाह की सेना में, जिसका नायक खवासखां था, घोर युद्ध हुआ था। खवासखां हार कर लौट गया। शिवाजी के समकालीन कविवर भूषण ने 'उमडि कुडाल में खवासखान आए भनि भूषण त्यों धाए शिवराज पूरे मन के'

(शिवराज भूषण, छन्द 330)—इस छद मे इस घटना का वणन किया है। इस लडाई के पश्चात् बीजापुर के सहायक तथा कुडाल के जागीरदार लक्ष्मण सावत देसाई को भी शिवाजी ने परास्त कर भगा दिया और कुडाल पर उनका पूण अधिकार हो गया।

कुडुमियामलाई (मद्रास)

यह स्थान अनेक प्राचीन मदिरो के लिए उल्लेखनीय है। कई मदिरो मे सागौन के किवाड है। अम्मन नामक मदिर के जीर्णोद्धार का प्रयत्न 1955-56 मे भारतीय पुरातत्वविभाग द्वारा किया गया था।

कुणाल

जातको (5,419) मे उल्लिखित मध्यप्रदेश मे स्थित एक सरोवर।

कुणिद

'आनर्तान् कालकूटाश्च कुणिन्दाश्च विजित्य स सुमडल च विजित कत वान सह सैनिकम'—महा० सभा० 26,4। कुणिदो के गणराज्य के कुछ सिक्के, देहरादून से जगाधरी तक के क्षेत्र मे यमुना के उत्तर पश्चिम की ओर पाए गए है। सभवत महाभारत मे वर्णित कुणिद जनपद की स्थिति इसी प्रदेश मे थी। कुणिद का पाठातर कुविंद और कुलिंद भी है। दे० **कुलिंद**।

कुताग्र दे० **वैशाली**

कुदवा दे० **अनोमा**

कुनडर कोइल (मद्रास)

प्राचीन शैलकृत शिव मदिर के लिए प्रख्यात है। मूर्ति नटराज के रूप मे शिव की है।

कुनावरम (जिला वारगल, आ० प्र०)

भद्राचलम् के निकट यह स्थान 14वी शती मे बहमनी राज्य के विघटन के पश्चात पूर्वी आध्र राज्य की राजधानी रहा था। 1335–36 ई० के शीघ्र ही पश्चात् प्रोलयनायक ने स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर इस स्थान को अपनी राजधानी बनाया था। यह नगर गोदावरी के तट पर बसा हुआ था। प्रोल्य-नायक की मृत्यु के पश्चात् उसके उत्तराधिकारी के न होने के कारण वारगल-नरेश कपयनायक ने उसकी रियासत को तिलगाना मे मिला लिया।

कुबटूर (मैसूर)

चालुक्य-शैली मे निर्मित चालुक्यकालीन मदिर के कारण यह स्थान उल्लेखनीय है।

कुब्जा (म० प्र०)

नर्मदा की सहायक नदी। इसका संगम नर्मदा के दक्षिण तट पर रामघाट या प्राचीन बिल्वाम्रक नामक स्थान (माठा) के पास है। किंवदंती है कि बिल्वाम्रक में राजा रतिदेव ने एक महायज्ञ किया था।

कुब्जाम्रक

कूर्मपुराण, उपरि० 34, 34 के अनुसार कनखल।

कुभा

अफगानिस्तान का वैदिक नाम—'त्वं सिंधो कुभयागोमती क्रमुं मेहत्या सरथयाभिरीयसे'—ऋग्वेद, 10,75-76 (नदी सूक्त)। कुभा में उत्तर की ओर सुवास्तु (=स्वात) तथा दक्षिण की ओर क्रमु (=कुरम) और गोमती (=गोमल) मिलती है। काबुल नगर काबुल या कुभा के तट पर ही बसा है। काबुल का नाम संभवतः कुभाकूल (यथा गोमल=गोमती कूल) से बिगड़ कर बना है। चीनी यात्री सुंगयुन (520 ई० के लगभग) ने भारत-यात्रा के वृत्तांत में काबुल के देश का नाम किपिन लिखा है। यह नाम संभवतः कुभा का ही रूपांतर है। कुभा का पाठांतर कुभा भी मिलता है। यह नदी काबुल नगर से 37 मील दूर सीरे चश्मा के सोते से निकलती है जो कोहीबाबा पर्वत के नीचे है।

कुभाकूल=काबुल दे० कुभा०

कुमरार

पटना (बिहार) के निकट एक ग्राम जो स्टेशन से आठ मील पश्चिम में है। अब यह पटने का ही एक भाग बन गया है। डा० स्पूनर के मत में चंद्रगुप्त मौर्य (320 ई० पू०) का प्रसिद्ध राजप्रासाद जिसके भव्य सौंदर्य का वर्णन मेगेस्थनीज ने किया है—वर्तमान कुमरार के स्थान पर ही था। इस स्थान से उत्खनन द्वारा इस राजप्रासाद के कुछ अवशेष प्रकाश में लाए गए हैं। दे० पाटलिपुत्र। कुमरार प्राचीन कुसुमपुर का अपभ्रंश जान पड़ता है।

कुमायूं (उ० प्र०)

प्राचीन पौराणिक नाम कूर्माचल। कुमायूं में सातवीं शती में चंद्रवंशीय नरेशों का शासन प्रारंभ हुआ था। इनके समय में कुमायूं ने पर्याप्त उन्नति की थी। तत्पश्चात् कत्यूरी शासकों के समय में अल्मोड़ा, नैनीताल आदि कुमायूं में सम्मिलित थे। हेनरी इलियट ने कत्यूरी शासकों को खसजातीय सिद्ध करने का प्रयत्न किया है पर कत्यूरी लोग स्वयं को अयोध्या के सूर्यवंशी राजाओं का वंशज मानते थे। कहा जाता है कि मुहम्मद तुगलक ने जिस कराचल नामक पहाड़ी राज्य पर विफल आक्रमण किया था वह कूर्माचल ही था। परवर्ती काल

मे उत्तर प्रदेश के रुहेलो ने भी कुमायू पर आक्रमण करके भीमताल, कटारमल, लखनपुर आदि के मदिरो को तोडा फोडा था। 1768 ई० म यहा गोरखो का शासन स्थापित हुआ और नेपाल युद्ध के पश्चात् 1816 ई० मे हिमालय के अय पवतीय प्रदेशो के साथ कुमायू भी अग्रेजी राज्य का अग बन गया।

कुमार

विष्णुपुराण 2, 4, 60 के अनुसार शाकद्वीप का एक भाग या वष जो इस द्वीप के राजा भव्य के पुत्र के नाम पर कुमार कहलाता था।

कुमारग्राम

वैशाली (बिहार) के निकट एक ग्राम जहा जैन तीर्थंकर महावीर न तपस्या की थी। जैन कथाओ के अनुसार महावीर को इस स्थान पर एक कृषक ने धोखे से अपने बैलो का चोर समझ कर पीटा था किंतु वे फिर भी शात तथा अक्षुब्ध रहे और कृषक उनसे प्रभावित होकर उनका अनुयायी बन गया।

कुमारवन दे० **कूर्माचल**

कुमारदेव

जबुद्वीप प्रज्ञप्ति (जैन सूत्र ग्रथ) (4,35) मे वर्णित चुल्लहिमवत पवत का एक शिखर।

कुमारविषय

'तत कुमारविषय श्रेणिमन्तमयाजयत्' महा० सभा० 30, 1। यहा के राजा श्रेणिमान् को भीम ने अपनी दिग्विजययात्रा के प्रसग मे परास्त किया था। कुछ विद्वानो ने इसका अभिज्ञान गाजीपुर से किया है जहा प्राचीन काल मे कार्तिकेय (कुमार) की पूजा प्रचलित थी। यह तथ्य इस क्षेत्र से प्राप्त सिक्को से प्रमाणित होता है जिन पर कार्तिकेय या स्कद की मूर्ति अकित है।

कुमारहट्टा दे० **हलीशहर**

कुमारिका क्षेत्र (राजस्थान)

कोटा से चवालीस मील पर इद्रगढ के निकट एक झील को कुमारिका क्षेत्र नाम से अभिहित किया जाता है।

कुमारी

(1)—कन्याकुमारी

(2) महाभारत भीष्म० 9, 36 म उल्लिखित नदी—'कुमारीमृषिकुल्या च मारिषा च सरस्वतीम्'। निश्चय ही इसी नदी का उल्लेख विष्णु 2, 3, 13 मे है जहा इसे शुक्तिमान् पवत से उद्भूत माना है तथा इसका नाम महाभारत क उल्लेख के समान ही ऋषिकुल्या के साथ है—'ऋषिकुल्या कुमार्याद्या

शुक्तिमत्पादसभवा'। ऋषिकुल्या उडीसा की नदी है जो पूर्व विंध्य की पर्वत श्रेणियों से निकल कर बगाल की खाडी मे गिरती है। कुमारी भी ऋषिकुल्या के निकट बहने वाली कोई नदी जान पडती है। सभव है यह उडीसा के उदयाचल या कुमारीगिरि से निकलने वाली कोई नदी है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह वर्तमान कुमारी है जो जिला मनभूम मे बहती है।

(3) क्वारी नामक नदी जो मालवा के पठार मे चबल के निकट बहती हुई यमुना मे गिरती है। यह विंध्याचल से निकलती है।

(4) विष्णु पुराण के अनुसार शाकद्वीप की एक नदी—'सुकुमारी कुमारी च नलिनी धेनुका च या' विष्णु० 2, 4, 65।

कुमारीगिरि (उडीसा)

उदयगिरि का एक भाग जिसका उल्लेख खारवेल के प्रसिद्ध अभिलेख मे है। खारवेल ने अपने शासन के तेरहवें वर्ष मे इस स्थान पर जो अर्हतो के निवासस्थान के निकट था, कुछ स्तभो का निर्माण करवाया था। कुमारीगिरि भुवनेश्वर से सात मील पश्चिम म है और जैनो का प्राचीन तीर्थ है। कहते हैं कि तीर्थंकर महावीर कुछ दिन यहा रहे थे। इसे कुमारीपर्वत भी कहते हैं। कुमारी नदी सभवत इसी पर्वत से उद्भूत होती है।

कुमुद

विष्णु० 2, २, 26 के अनुसार मेरुपर्वत के पश्चिम मे स्थित एक पर्वत—'शीताभश्च कुमुदश्च कुररी माल्यवास्तथा वैकक्रप्रमुखा मेरा पूर्वत केसरा चला'।

कुमुद

(1) विष्णु० 2, 4, 26 के अनुसार शाल्मलद्वीप के सात पर्वतो मे से एक—'कुमुदश्चोन्नतश्चैव तृतीयश्च बलाहक'।

(2) गिरनार पर्वत माला का एक शृग जिसका उल्लेख मडलीक काव्य (1,2) मे उज्जयत तथा रैवतक के साथ इस प्रकार है—'शिखरत्रयभेदेन नाम भेदमगादसौ, उज्जयन्तो रैवतक कुमुदश्चेति भूधर।

कुमुद्वती

विष्णु० 2, 4, 55 के अनुसार क्रौंच-द्वीप की एक नदी—'गौरी कुमुद्वती चैव सध्या रात्रि मनोजवा।

कुरग

महाभारत, अनुशासन पर्व म कुरग क्षेत्र को करतोया नदी का तटवर्ती प्रदेश बताया गया है। करतोया बगाल के जिला बोगरा म बहने वाली नदी है।

कुरड

'कारस्करा माहिष्कान् कुरडान केरलास्तथा, कर्कोटकान वीरकाश्च दुर्धर्माश्च विवजयत् ।' महा० कर्ण० 44, 33 । प्रसग से जान पडता है कि कुरड-लोगो के देश की स्थिति दक्षिण भारत मे केरल के निकट थी । ये अनार्य-जातीय रहे होगे क्योंकि इन्हे विवजनीय बताया गया है । सभव है कि कुरड और मुरड एक ही हो । मुरड लोग शकजातीय थे और इनका निवास महाराष्ट्र के प्रदेश मे था । समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति म शकमुरडो का उल्लेख है ।

कुरई (ज़िला इलाहाबाद, उ० प्र०)

सिंगरौर के निकट गगातट पर एक ग्राम है । किंवदती है कि शृगवेरपुर मे गगा पार करने के पश्चात् श्रीरामचद्र जी इसी स्थान पर उतरे थे । यहा एक छोटा सा मदिर भी है जा स्थानीय लोकश्रुति के अनुसार उसी स्थान पर है जहा गगा को पार करने के पश्चात राम लक्ष्मण सीता ने कुछ देर विश्राम किया था । यहा से आगे चलकर वे प्रयाग पहुचे थे (दे० शृगवेरपुर) ।

कुरगमा (ज़िला झासी उ० प्र०)

जैनो का प्राचीन अतिशय क्षेत्र माना जाता है ।

कुरनूल (आ० प्र०)

यह नगर 11वी शती मे बसाया गया था । प्राचीन नाम कनडेलावोलू है । सोलहवी शती के पूर्वार्ध मे विजयनगर-राज्य के अतगत रहने के पश्चात उसका पतन होने पर रामराय के प्रपौत्र गोपालराय का यहा कुछ दिन तक अधिकार रहा था । किंतु बीजापुर के सुलतान ने उसे हराने के लिए अब्दल वहाब नामक सेनापति को भेजा जिसने कुरनूल पर अधिकार करके अपनी धार्मिक कट्टरता का परिचय दिया और यहा के अनेक मदिर तुडवा कर मस-जिदें बनवाई । उसकी कबर हृदल के मकबरे मे है जो कुरनूल के पास ही है । बीजापुर के सुलतान के शासनकाल मे शिवाजी ने इस इलाके से चौथ वसूल की । औरगजेब के जमाने मे बीजापुर राज्य की समाप्ति पर कुरनूल पर मुगलो का अधिकार हो गया और मुगलराज्य के शिथिल होने पर जब हैदरा-बाद की नई रियासत दक्षिण मे बनी तो निजाम हैदराबाद ने कुरनूल को अपने राज्य मे सम्मिलत कर लिया (मध्य 18वी शती) । कुरनूल, तुगभद्रा और हाद्री नदिया के तट पर स्थित है । नगर के चारो ओर प्राचीन परकोटा है ।

कुररी

विष्णु पुराण के अनुसार मेरुपर्वत के पश्चिम मे स्थित एक पवत—'शीताम्भश्च कुमुदश्च कुररी माल्यवास्तथा' 2, 2, 26 ।

शुक्तिमत्पादसभवा '। ऋषिकुल्या उडीसा की नदी है जो पूव विंध्य की पवत श्रेणियो से निकल कर बगाल की खाडी मे गिरती है। कुमारी भी ऋषिकुल्या के निकट बहने वाली कोई नदी जान पडती है। सभव है यह उडीसा के उदयाचल या कुमारीगिरि से निकलने वाली कोई नदी है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह वतमान कुमारी है जो जिला मनभूम मे बहती है।

(3) क्वारी नामक नदी जो मालवा के पठार मे चबल के निकट बहती हुई यमुना मे गिरती है। यह विंध्याचल से निकलती है।

(4) विष्णु पुराण के अनुसार शाकद्वीप की एक नदी—'सुकुमारी कुमारी च नलिनी धेनुका च या' विष्णु० 2, 4, 65।

कुमारीगिरि (उडीसा)

उदयगिरि का एक भाग जिसका उल्लेख खारवेल के प्रसिद्ध अभिलेख मे है। खारवेल ने अपने शासन के तेरहवें वष मे इस स्थान पर जो अहता के निवासस्थान के निकट था, कुछ स्तभो का निर्माण करवाया था। कुमारीगिरि भुवनेश्वर से सात मील पश्चिम मे है और जैनो का प्राचीन तीथ है। कहते हैं कि तीर्थंकर महावीर कुछ दिन यहा रहे थे। इसे कुमारीपवत भी कहते हैं। कुमारी नदी सभवत इसी पवत से उद्भूत होती है।

कुमुद

विष्णु० 2, २, 26 के अनुसार मेरुपर्वत के पश्चिम म स्थित एक पवत—'शीताभश्च कुमुदश्च कुररी माल्यवास्तथा वैक्कप्रमुखा मेरो पूवत केसराचला'।

कुमुद

(1) विष्णु० 2, 4, 26 के अनुसार शाल्मलद्वीप के सात पवतों मे से एक—'कुमुदश्चोन्नतश्चैव तृतीयश्च बलाहक'।

(2) गिरनार पवत माला का एक शृग जिसका उल्लेख मडलीक काव्य (1,2) मे उज्जयत तथा रैवतक के साथ इस प्रकार है—'शिखरत्रयभेदेन नाम भेदमगादसौ, उज्जयन्तो रैवतक कुमुदश्चेति भूधर।

कुमुद्वती

विष्णु० 2, 4, 55 के अनुसार क्रौंच द्वीप की एक नदी—'गौरी कुमुद्वती चैव सध्या रात्रि मनोजवा'।

कुरग

महाभारत, अनुशासन पर्व मे कुरग क्षेत्र को करतोया नदी का तटवर्ती प्रदेश बताया गया है। करतोया बगाल के जिला बोगरा म बहने वाली नदी है।

कुरड

'कारस्करा माहिष्कान् कुरडान केरलास्तथा, कर्कोटकान वीरकाश्च दुध-र्माश्च विवजयत ।' महा० कर्ण० 44, 33 । प्रसग से जान पडता है कि कुरड-लोगो के देश की स्थिति दक्षिण भारत मे केरल के निकट थी । ये अनाय-जातीय रहे होगे क्योकि इन्हे विवजनीय बताया गया है । सभव है कि कुरड और मुरड एक ही हो । मुरड लोग शकजातीय थे और इनका निवास महाराष्ट्र के प्रदेश मे था । समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति म शकमुरडो का उल्लेख है ।

कुरई (ज़िला इलाहाबाद, उ० प्र०)

सिंगरौर के निकट गगातट पर एक ग्राम है । किंवदती है कि श्रृगवेरपुर मे गगा पार करने के पश्चात् श्रीरामचद्र जी इसी स्थान पर उतरे थे । यहा एक छोटा सा मदिर भी है जा स्थानीय लोकश्रुति के अनुसार उसी स्थान पर है जहा गगा को पार करने के पश्चात राम लक्ष्मण सीता ने कुछ देर विश्राम किया था । यहा से आगे चलकर वे प्रयाग पहुचे थे (दे० श्रृगवेरपुर) ।

कुरगमा (ज़िला झासी, उ० प्र०)

जैनो का प्राचीन अतिशय क्षेत्र माना जाता है ।

कुरनूल (आ० प्र०)

यह नगर 11वी शती मे बसाया गया था । प्राचीन नाम कनडेलावोलू है । सोलहवी शती के पूर्वाध मे विजयनगर-राज्य के अतगत रहने के पश्चात उसका पतन होने पर रामराय के प्रपौत्र गोपालराय का यहा कुछ दिन तक अधिकार रहा था । किंतु बीजापुर के सुलतान ने उसे हराने के लिए अब्दल वहाब नामक सेनापति को भेजा जिसने कुरनूल पर अधिकार करके अपनी धार्मिक कट्टरता का परिचय दिया और यहा के अनेक मदिर तुडवा कर मस-जिदें बनवाईं । उसकी कबर हृदल के मकबरे मे है जो कुरनूल के पास ही है । बीजापुर के सुलतान के शासनकाल मे शिवाजी ने इस इलाके से चौथ वसूल की । औरगजेब के जमाने मे बीजापुर राज्य की समाप्ति पर कुरनूल पर मुगलो का अधिकार हो गया और मुगलराज्य के शिथिल होने पर जब हैदरा-बाद की नई रियासत दक्षिण मे बनी तो निजाम हैदराबाद ने कुरनूल को अपने राज्य मे सम्मिलत कर लिया (मध्य 18वी शती) । कुरनूल, तुगभद्रा और हाद्री नदियो के तट पर स्थित है । नगर के चारो ओर प्राचीन परकोटा है ।

कुररी

विष्णु पुराण के अनुसार मेरुपवत के पश्चिम मे स्थित एक पवत— 'शीताम्भश्च कुमुदश्च कुररी माल्यवास्तथा' 2, 2, 26 ।

कुरिया (रुहेलखंड, उ० प्र०)

लखनऊ काठगोदाम रेलमार्ग पर इस स्टेशन के दो मील पूर्व माली नामक ग्राम के पास एक प्राचीन बडे नगर के खडहर पाए जाते है। किंवदंती के अनुसार यह राजा वेणु का बसाया हुआ था। यहा के खडहरो मे अतिप्राचीन पूर्वमौर्य या मौर्यकालीन आहत सिक्के, अहिच्छत्र के मित्र राजाओ और कुषाण काल तथा प्रारंभिक मुसलिमकाल के सिक्के मिलते हैं। खडहर 2 मील × 1 मील है। (टि० पाणिनि के सूत्र 'रूपादाहतप्रशंसयोर्यप्' मे आहत शब्द प्राचीन punch marked सिक्को के लिए है।)

कुरियाकुंड (जिला बादा, उ० प्र०)

यह स्थान प्रागैतिहासिक शिलाचित्रकारी के अवशेषो के लिए उल्लेखनीय है।

कुरु

प्राचीन भारत का प्रसिद्ध जनपद जिसकी स्थिति वर्तमान दिल्ली मेरठ प्रदेश मे थी। महाभारत काल मे हस्तिनापुर मे कुरु-जनपद की राजधानी थी। महाभारत से ज्ञात होता है कि कुरु की प्राचीन राजधानी खांडवप्रस्थ थी। कुरु-श्रवण नामक व्यक्ति का नाम ऋग्वेद मे है—'कुरु श्रवणमावृणि राजानं त्रासदस्यवम्। मंहिष्ठंवाघता मृषि'। अथर्ववेद संहिता 20,127,8 म कौरव्य या कुरु देश के राजा का उल्लेख है—'कुलायन कृण्वन कौरव्य पतिरवदति जायया।' महाभारत के अनेक वर्णनो से विदित होता है कि कुरुजांगल, कुरु और कुरुक्षेत्र इस विशाल जनपद के तीन मुख्य भाग थे। कुरुजांगल इस प्रदेश के वन्यभाग का नाम था जिसका विस्तार सरस्वती तट पर स्थित काम्यकवन तक था। खांडववन भी जिसे पांडवो ने जला कर उसके स्थान पर इंद्रप्रस्थ नगर बसाया था इसी जंगली भाग मे सम्मिलित था और यह वर्तमान नई दिल्ली के पुराने किले और कुतुब के आसपास रहा होगा। मुख्य कुरु जनपद हस्तिनापुर (जिला मेरठ, उ० प्र०) के निकट था। कुरुक्षेत्र की सीमा तैत्तरीय आरण्यक मे इस प्रकार है—इसके दक्षिण मे खांडव, उत्तर मे तूघ्न और पश्चिम मे परिणाह स्थित था। संभव है ये सब विभिन्न वनो के नाम थे। कुरु जनपद म वर्तमान थानेसर, दिल्ली और उत्तरी गगा द्वाबा (मेरठ बिजनौर जिलो के भाग) शामिल थे। पपचसूदनी नामक ग्रंथ म वर्णित अनुश्रुति के अनुसार इस वंशीय कौरव, मूल रूप से हिमालय के उत्तर म स्थित प्रदेश (या उत्तरकुरु) के रहने वाले थे। कालांतर मे उनके भारत मे आकर बस जाने के कारण उनका नया निवासस्थान भी कुरु देश ही कहलाने लगा। इसे उनके मूल निवास स

भिन्न नाम न देकर कुरु ही कहा गया। केवल उत्तर और दक्षिण शब्द कुरु के पहले जोड कर उनकी भिन्नता का निर्देश किया गया (दे० लॉ—ऐंशेंट मिड-इडियन क्षत्रिय ट्राइब्स, पृ० 16)। महाभारत मे भारतीय कुरु-जनपदीयो को दक्षिण कुरु कहा गया है और उत्तर-कुरुओ के साथ ही उनका उल्लेख भी है। —'उत्तरै कुरुभि सार्धं दक्षिणा कुरवस्तथा। विस्पधमाना व्यचरस्तथा देवर्षिचारणै' आदि० 108,10। अगुत्तर निकाय मे 'सोलस महाजनपदो' की सूची मे कुरु का भी नाम है जिससे इस जनपद की महत्ता का काल बुद्ध तथा उसके पूववर्ती समय तक प्रमाणित होता है। महासुत-सोम जातक के अनुसार कुरु जनपद का विस्तार तीन सौ कोस था। जातको मे कुरु की राजधानी इद्रप्रस्थ मे बताई गई है। हत्थिनापुर या हस्तिनापुर का उल्लेख भी जातको मे है। ऐसा जान पडता है कि इस काल के पश्चात और मगध क बढती हुई शक्ति के फल्स्वरूप जिसका पूण विकास मौय साम्राज्य की स्थापना के साथ हुआ, कुरु, जिसकी राजधानी हस्तिनापुर राजा निचक्षु के समय मे गगा मे बह गई थी और जिसे छोड कर इस राजा ने वत्स जनपद मे जाकर अपनी राजधानी कौशाबी मे बनाई थी, धीरे धीर विस्मृति के गत मे विलीन हो गया। इस तथ्य का आभास हमे जैन उत्तराध्यायन सूत्र से होता है जिससे बुद्धकाल मे कुरुप्रदेश म कई छोटे-छोटे राज्यो का अस्तित्व ज्ञात होता है।

कुरुक्षेत्र (ज़िला करनाल, पजाब)

महाभारत के युद्ध की प्रसिद्ध रणस्थली। महाभारत मे वर्णित अनेक स्थल यहा आज भी वतमान हैं। यहा का प्राचीनतम स्थान ब्रह्मसर सरोवर है। शतपथ-ब्राह्मण के एक कथानक के अनुसार राजा पुरु को अपनी खोई हुई प्रेयसी अप्सरा उवशी इसी सरोवर के कमलो पर क्रीडा करती हुई मिली थी। वायुपुराण मे वर्णित है कि कुरुक्षेत्र के सरोवर के तट पर सृष्टि के आदि मे ब्रह्मा ने एक यज्ञ किया था जिससे इसका नाम ब्रह्मसर हुआ। इसके बीच मे 'चद्रकूप' नामक कूप स्थित है। ब्रह्मसर मे एक प्राचीन मदिर है जहा पहुचने के लिए अकबर ने एक पुल बनवाया था जो अब जीणशीण हो गया है। ब्रह्मसर के स्नानार्थी यात्रिया पर औरगजेब ने कर लगा दिया था और उसके कमचारी यहा पास ही स्थित गढी मे रहते थे। ब्रह्मसर को द्वैपायनह्रद और रामह्रद भी कहते है। कुरुक्षेत्र का दूसरा प्रसिद्ध सरोवर ज्योतिसर है। कहा जाता है कि यह वही पुण्यस्थान है जहा भगवान कृष्ण न अजुन को गीता सुनाई थी। एक छोटा तडाग सैंयहत या सनिहित कहलाता है। सनिहिती सरोवर का उल्लख महाभारत वन० 83,195 मे है। वह सरोवर भी है जहा

दुर्योधन अंत समय म छिप गया था और भीम ने गदायुद्ध म उसे मारा था। यह तालाब अब मिट्टी और वनस्पतियो से ढक गया है। कुरुक्षेत्र से थोडी दूर पर बाणगगा है जहा भीष्मपितामह के आहत होने पर उनके लिए अर्जुन ने भूमि म बाण द्वारा जलधारा प्रकट की थी। वामनपुराण 39,6–7–8 म कुरुक्षेत्र की सात नदियां बताई गई हैं—'सरस्वती नदी पुण्या तथा वैतरणी नदी, आपगा च महापुण्या गगा मदाकिनी नदी। मधुस्रवा-अम्लुनदी कौशिकी पाप नाशिनी, दृषद्वती महापुण्या तथा हिरण्यवती नदी'।

कुरम (द० गुमु)

सिंध की सहायक नदी जो पश्चिम की ओर से आकर इसम मिलती है।

कुरुवत्ती (जिला बिलारी, मैसूर)

यहा का प्राचीन मदिर चालुक्य वास्तुकला का सुदर उदाहरण है।

कुर्किहार (जिला गया, बिहार)

बोध गया के निकट इस स्थान से कासे की अनेक सुदर बौद्ध और हिंदू मूर्तिया प्राप्त हुई हैं जो पाल और सेन काल की हैं। कुछ पर सवत भी अकित हैं। ये मूर्तिया ताम्र, सीसा, टीन और लोहे की मिश्रित धातु से बनाई गई हैं। इनके निर्माण मे धातुविज्ञान का उच्चकोटि का ज्ञान प्रदर्शित है। इनमे बलराम और लोकनाथ की मूर्तिया विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये मूर्तिया पटना सग्रहालय मे सुरक्षित कर दी गई हैं। कुछ विद्वानो के मत मे कुर्किहार की कास्य मूर्तियो की सहायता से वृहत्तर-भारत मे बौद्ध धर्म के प्रचार का अध्ययन किया जा सकता है।

कुर्ग (केरल)

सुदूर दक्षिण मे पश्चिमी तट पर अवस्थित है। इसका प्राचीन नाम काडगू कहा जाता है, जो कन्नड शब्द कुडू (ढलवा पहाडी) का अपभ्रश है। कोड देश भी कुर्ग का ही एक अन्य प्राचीन नाम है।

कुलपर्वत

विष्णु पुराण 2,3,3 के अनुसार भारत के सात मुख्य पर्वत—'महेन्द्रो, मलय सह्य शुक्तिमानक्षपर्वत, विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वता।' अर्थात महेन्द्र, मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष, विंध्य, पारियात्र ये सात कुलपर्वत हैं। कालिदास ने भी सात कुलभूभृत माने हैं—'भूतानां महतां षष्ठमष्टम कुल भूभृताम्' रघु० 17,78।

कुलपहाड (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

इस नाम की तहसील का मुख्य स्थान है। यहा चदेले नरेशो के समय

की इमारतो के अनेक अवशेष है। यह स्थान बुदेलखड का एक भाग है।

कुलपाक (जिला नलगोडा, आ० प्र०)

भानगिरि से 20 मील दूर मिट्टी पेट सडक पर स्थित है। यहा के प्राचीन मदिर के निकट उत्खनन द्वारा अनेक सुदर मूर्तिया प्राप्त हुई है जिनम नौ तीर्थंकरो की मूर्तिया भी है। सगमरमर की बनी महाविष्णु की मूर्ति, मूर्तिकला का उत्कृष्ट उदाहरण है। कुलपाक जैनो का तीथस्थल है। यहा जैन कलचुरि-नरेश शकरगण ने बारह ग्रामो का दान दिया था। इसका समय सातवी शती ई० मे माना गया है।

कुलिंग

वाल्मीकि रामायण अयोध्या० 68,16 म इस नगरी का उल्लेख अयोध्या के दूतो की केकय यात्रा के प्रसग मे है—'निकूलवृक्षमासाद्य दिव्य सत्योपयाचनम अभिगम्याभिवाद्य त कुलिगा प्राविशपुरीम्'। इस वणन मे कुलिगा का उल्लेख शरदडा नदी के पश्चात है। ऐसा जान पडता है कि सतल्ज तथा बियास नदियो के बीच के प्रदेश मे इस नगरी की स्थिति होगी। अयोध्या 68,19 मे विपाशा या बियास का उल्लेख है। सभव है नगरी का सबध कुलिदा या कुणिदो से रहा हो जिनका उल्लेख महाभारत सभा० 26,4 मे है। रामायण मे वर्णित नदी कुलिगा, कुलिंग प्रदेश की ही कोई नदी जान पडती है।

कुलिगा

'वेगिनी च कुलिगाख्या ह्लादिनी पवतावृताम, यमुना प्राप्य सतीण बलमाश्वासयत्तदा' वाल्मीकि० अयोध्या 71,6। प्रसगानुसार इस नदी की स्थिति यमुना से पश्चिम की ओर जान पडती है। सभवत इसका सबध लगभग उसी प्रदेश मे बसे हुए कुलिंग नामक स्थान से रहा हो।

कुलिंद

महाभारत कण० 85,4 मे कुलिददेशीय योद्धाओ का उल्लेख है। ये पाडवो की ओर से महाभारत के युद्ध मे सम्मिलित हुए थे—'नवजलदसवर्णैहस्तिभिस्तानुदीयुर्गिरिशिखरनिकाशैर्भीमवेगै कुलिन्दा' अर्थात तत्पश्चात् कुलिद के योद्धा नए मेघ के समान काले और गिरिशिखर के समान विशाल और भयकर वेग वाले हाथियो को लेकर (कौरवो पर) चढ आए। इससे आगे के श्लोक मे, 'सुकल्पितहैमवता मदोत्कटा' ये शब्द कुलिन्द दल के हाथियो के लिए प्रयोग मे आए हैं जिससे इगित होता है कि य हाथी हिमालय प्रदश के थे और इस प्रकार कुलिन्द की स्थिति भी हिमालय के सन्निकट प्रमाणित होती है। यह सभव है कि वाल्मीकि रामायण अयोध्या० 68 16 म वर्णित कुलिंग-नगरी का

कुलिंद से मगध हो। कुलिंग की स्थिति शायद बियास और सतलज नदियों के बीच के प्रदेश में थी। कुलिंद की स्थिति भी शायद वर्तमान हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी भागों में रही होगी। महाभारत सभा० 26,4 में भी कुलिंदों या कुणिंदों (दे० कुणिंद) का उल्लेख है। कुणिंदों के सिक्के देहरादून से जगाधरी तक यमुना के उत्तर पश्चिम की ओर पाए गए हैं। कुलिंगा नदी (दे० कुलिंगा) भी शायद इसी प्रदेश में बहती थी।

कुलिय (जिला नदिया, प० बंगाल)

नवद्वीप या नदिया ग्राम का चैतन्य महाप्रभु के समय—15वीं शती—में प्रचलित नाम। दे० नवद्वीप।

कुलियारपत (प० बंगाल)

कल्याणी से चार मील। गौरांग महाप्रभु चैतन्य तथा नित्यानंद के मंदिर यहां अवस्थित हैं। किंवदंती है कि इसी स्थान पर चैतन्य ने पंडित देवानंद का उनके द्वारा वैष्णव संप्रदाय के प्रतिकूल किए गए कार्यों के लिए क्षमा कर दिया था। चैतन्य से संबंध होने के कारण यह स्थान वैष्णवों के तीर्थ के रूप में माना जाता है।

कुलू=कुलूत

कांगड़ा घाटी का पहाड़ी स्थान जिसकी प्रसिद्धि महाभारतकाल से चली आती है (दे० कुलूत)।

कुलूत

'तैरवै सहित सर्वैरनुरज्य च तान नृपान्, कुलूतवासिन राजन् बृहन्तमुपज ग्मिवान्', 'कुलूतानुत्तराश्चैव तांश्च राज्ञ समानयत'— महा० सभा० 27,5, सभा० 27,11। कुलूत को यहां उत्तरकुलूत भी कहा गया है। महाभारत के समय यहां का राजा बृहन्त था जिसे अर्जुन ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसंग में *जीता था। कुलूत वर्तमान कुलू है जो कांगड़ा (पंजाब) घाटी का प्रसिद्ध पहाड़ी* स्थान है। (टि०—महाभारत में उपर्युक्त उद्धरणों में कुलूत का पाठांतर उलूक भी है)। संस्कृत कवि राजशेखर ने कन्नौजाधिप महीपाल (9वीं शती) के विजित प्रदेशों में कुलूत का उल्लेख किया है।

कुल्लूर (मैसूर)

सौपर्णिका नदी के तट पर आद्यशंकराचार्य द्वारा स्थापित सिद्ध पीठ है।

कुवन

तिब्बत के इतिहास लेखक तारानाथ ने कुवन या कुंडल वन की स्थिति जलंधर के पास बताई है। कुंडलवन में कनिष्क के समय में तीसरी (कुछ

विद्वानो के मत मे चौथी) धम-सगीति हुई थी। दे० कुडलवन।

कुर्विद दे० कुणिद

कुशद्वीप

पुराणो की भौगोलिक कल्पना के अनुसार पृथ्वी के सप्तमहाद्वीपो मे से एक (दे० विष्णु० 2,2–5—'कुश क्रौंचस्तथा शाक पुष्करश्चैव सप्तम) यह घृतसागर से परिवृत है। कुशद्वीप का उपास्यदेव अग्नि माना गया है। कुशद्वीप के विद्रुम, हेमशैल, द्युतिमान, पुष्पवान, कुशेशय हरि और मदराचल नामक सात पवत हैं।

कुशपुर दे० कुसूर

कुशप्लव

'कुशप्लव समासाद्यतपस्तेपे सुदारुणम्'—वाल्मीकि रामायण, बाल० 86,8। यह विशाला (=वैशाली) के पास एक तपोवन था।

कुशभवनपुर=सुलतानपुर (उ० प्र०)

रामचन्द्र जी के पुत्र कुश की राजधानी यहा रही थी। युवानच्वाग ने इस स्थान को देखा था। श्री० न० ला० डे के अनुसार वायुपुराण, उत्तर 26 की कुशस्थली यही थी। प्राचीन नगर गोमती के तट पर था। सुल्तान अलाउद्दीन ने भार राजा को हरा कर यहा मसजिद बनवाई और नगर को वतमान नाम दिया।

कुशमाल

शूर्पारकजातक मे वर्णित एक समुद्र जहा भृगुकच्छ के व्यापारी एक बार जा पहुचे थे। इसका वणन इस प्रकार है—'यथा कुसो व सस्सो व समुद्दोपति दिस्सति' अर्थात् यह समुद्र कुश या अनाज के तृणो की भाति हरा दिखाई देता है। इस समुद्र मे नीलमणि उत्पन्न होती थी। (दे० **क्षुरमाली, अग्निमाली, बडवामुख, दधिमाल, नलमाली**)।

कुशल

विष्णु पुराण 2,4,60 के अनुसार शाकद्वीप का एक भाग या वष जो इस द्वीप के राजा भव्य के पुत्र के नाम पर कुशल कहलाता है।

कुशस्थल

(1) कान्यकुब्ज का एक नाम जिसका उल्लेख युवानच्वाग ने मौखरियो की राजधानी के रूप मे किया है। हषचरित, उच्छवास 6 मे, राज्यवधन के गौडाधिप द्वारा वध किए जाने पर गृहवर्मा मौखरी—राज्यश्री के दिवगत पति की राजधानी कुशस्थल (कान्यकुब्ज) को गुप्त नामक राजा द्वारा ले लिए जाने का वणन है—'देव देवभूय गते देवे राज्यवधनेगुप्तनाम्ना च गृहीत कुशस्थले,

देवी राज्यश्री परिभ्रम्य बधनाद्विध्याटवी सपरिवारा प्रविष्टेति '।

(2) (गोआ) प्राचीन ग्राम है जहा शिवोपासना का केंद्र था। पहले यहा मगेश शिव का प्राचीन मदिर था। पुर्तगालियो द्वारा गोआ मे उपद्रव मचाने पर यहा की मूर्ति प्रिमोल ग्राम मे भेज दी गई और वही मदिर बनाया गया।

कुशस्थली

(1) द्वारका का प्राचीन नाम। पौराणिक कथाओ के अनुसार महाराजा रैवतक के समुद्र मे कुश बिछाकर यज्ञ करने के कारण ही इस नगरी का नाम कुशस्थली हुआ था। पीछे त्रिविक्रम भगवान् ने कुशनामक दानव का वध भी यही किया था। त्रिविक्रम का मदिर द्वारका म रणछोडजी के मदिर के निकट है। ऐसा जान पडता है कि महाराज रैवतक (बलराम की पत्नी रेवती के पिता) ने प्रथम बार, समुद्र म से कुछ भूमि बाहर निकल कर यह नगरी बसाई होगी। हरिवश पुराण 1,11,4 के अनुसार कुशस्थली उस प्रदेश का नाम था जहा यादवो ने द्वारका बसाई थी। विष्णुपुराण के अनुसार, 'आनतस्यापि रेवतनामा पुत्राजज्ञे योऽसावानतविषय बुभुजे पुरी च कुशस्थलीमध्युवास' विष्णु० 4,1,64 अर्थात आनत के रेवत नामक पुत्र हुआ जिसने कुशस्थली नामक पुरी मे रह कर आनत विषय पर राज्य किया। विष्णु० 4,1,91 से सूचित होता है कि प्राचीन कुशावती के स्थान पर ही श्रीकृष्ण ने द्वारका बसाई थी—'कुशस्थली या तव भूप रम्या पुरी पुराभूदमरावतीव, सा द्वारका सप्रति तत्र चास्ते स केशवाशो बलदेवनामा'। कुशावती का अन्य नाम कुशावत भी है। एक प्राचीन किंवदती मे द्वारका का सबध 'पुण्यजना' से बताया गया है। य 'पुण्यजन' वैदिक 'पणिक' या 'पणि' हो सकते हैं। अनेक विद्वानो का मत है कि पणिक या पणि प्राचीन ग्रीस के फिनीशियनो का ही भारतीय नाम था। ये लोग अपने को कुश की सतान मानते थे (दे० वेडल—मेकर्स ऑव सिविलीज़ेशन, पृ० 80)। इस प्रकार कुशस्थली या कुशावत नाम बहुत प्राचीन सिद्ध होता है। पुराणा के वशवृत्त मे शार्यातो के मूल पुरुष शर्याति की राजधानी भी कुशस्थली बताई गई है। महाभारत, सभा० 14,50 के अनुसार कुशस्थली रैवतक पवत से घिरी हुई थी—'कुशस्थली पुरी रम्या रैवतेनोपशोभितम्'। जरासध के आक्रमण से बचने के लिए श्रीकृष्ण मथुरा से कुशस्थली आ गए थे और यही उन्होने नई नगरी द्वारका बसाई थी। पुरी की रक्षा के लिए उन्होंने अभेद्य दुर्ग की रचना की थी जहा रह कर स्त्रिया भी युद्ध कर सकती थी—'तथैव दुर्गसस्कार देवैरपि दुरासदम्, स्त्रियोऽपियस्या युध्येयु किमु वृष्णिमहारथा'। महा० सभा० 14,51,

(2) दे० कुशभवनपुर

(3)=कुशावती

कुशाग्रपुर

राजगृह (बिहार) का प्राचीन नाम, जिसका उल्लेख चीनीयात्री युवानच्वाग (7वी शती ई०) ने किया है। उसके लेख के अनुसार मगध की प्राचीन राजधानी कुशाग्रपुर मे ही थी। वहा भारी अग्निकाड हो जाने के कारण मगध नरेश बिंबिसार ने इसी स्थान पर नवीन नगर राजगृह बसाया था (फाह्यान के अनुसार राजगृह का सस्थापक बिंबिसार का पुत्र अजातशत्रु था)। युवानच्वाग यह भी लिखता है कि इस स्थान पर श्रेष्ठ कुश या घास होने के कारण ही इसे कुशाग्रपुर कहते थे। राजगृह के पास आज भी सुगधित उशीर या खस बहुतायत से उत्पन्न होती है। शायद कुश या घास से युवानच्वाग का तात्पर्य खस से ही था।

कुशावती

(1) वाल्मीकि०, उत्तर० 108,4 से विदित होता है कि स्वर्गारोहण के पूर्व रामचद्र जी ने अपने ज्येष्ठ पुत्र कुश को कुशावती नगरी का राजा बनाया था—'कुशस्य नगरी रम्या विंध्यपर्वत रोधसि, कुशावतीति नाम्ना साकृता रामेण धीमता'। उत्तरकाड 107,17 से यह भी सूचित होता है कि, 'कोसलेषु कुश वीरमुत्तरेषु तथा लवम' अर्थात रामचद्र जी ने दक्षिण कोसल मे कुश और उत्तर कोसल मे लव का राज्याभिषेक किया था। कुशावती विंध्यपर्वत के अचल मे बसी हुई थी, और दक्षिण कोसल या वर्तमान रायपुर (बिलासपुर क्षेत्र, म० प्र०)मे स्थित होगी। जैसा कि उपर्युक्त उत्तर० 108, 4 से सूचित होता है स्वय रामचद्र जी ने यह नगरी कुश के लिए बनाई थी। कालिदास ने भी रघु० 15, 97 मे कुश का, कुशावती का राजा बनाए जाने का उल्लेख किया है—'स निवेश कुशावत्या रिपुनागाकुश कुशम'। रघुवश सर्ग १६ से ज्ञात होता है कि कुश ने कुशावती मे कुछ समय पर्यंत राज करने के पश्चात अयोध्या की इष्टदेवी के स्वप्न मे आदेश देने के फलस्वरूप उजाड अयोध्या को पुन बसा कर वहा अपनी राजधानी बनाई थी। कुशावती से ससैन्य अयोध्या आते समय कुश को विंध्याचल पार करना पडा था—'व्यलङ्घयद्विंध्यमुपायनानि पश्यन्पुलिंदैरुपपादितानि' रघु० 16,32 विंध्य के पश्चात कुश की सेना ने गगा को भी हाथियो के सेतु द्वारा पार किया था, 'तीर्थे तदीये गजसेतुबधात्प्रतीपगामुत्तरतोऽस्य गगाम, अयत्नवाल्व्यजनीबभूवुर्हंसानभोलघनलोल्पक्षा ' रघु० 16, 33। अर्थात जिस समय कुश, पश्चिम वाहिनी गगा को गजसेतु द्वारा पार कर रहे थे, आकाश मे उडते हुए चचल पखो वाले हसो की श्रेणिया उन (कुश) के

ऊपर डोलती हुई चवर के समान जान पडती थी । यह स्थान जहा कुश ने गगा को पार किया था चुनार (जिला मिर्जापुर , उ० प्र०) के निकट हो सकता है क्योकि इस स्थान पर वास्तव मे गगा एकाएक उत्तर-पश्चिम की ओर मुड कर बहती है और काशी मे पहुच कर फिर से सीधी बहने लगती है ।

(2) महावश 2,6 मे कुशीनगर (कसिया) का प्राचीन नाम । अनुश्रुति के अनुसार इसे कुश ने बसाया था । कुशावती का उल्लेख कुस-जातक मे भी है।

कुशावर्त

(1)—कुशस्थली

(2) महाभारत मे वर्णित हरद्वार और कनखल के निकट एक तीर्थ—'गगाद्वार कुशावर्ते बिल्वके नीलपवते तथा कनखले स्नात्वा धूतपाप्मा दिवव्रजेत' अनुशासन० 25,13। यह हरद्वार मे गगा का वतमान कुशाघाट हो सकता है।

कुशिक

कान्यकुब्ज का प्राचीन नाम (दे० कान्यकुब्ज) ।

कुशीनगर=कसिया (जिला गोरखपुर, उ० प्र०)

बुद्ध के महापरिनिर्वाण का स्थान है। किवदती के अनुसार यह नगर श्रीरामचन्द्र जी के ज्येष्ठ पुत्र कुश द्वारा बसाया गया था । महावश 2 6 म कुशीनगर का नाम इसी कारण कुशावती भी कहा गया है । बौद्धकाल मे यहा नाम कुशीनगर, या पाली मे, कुसीनारा हो गया । एक अन्य बौद्ध किवदती के अनुसार तक्षशिला के इक्ष्वाकुशी राजा तालेश्वर का पुत्र तक्षशिला से अपनी राजधानी हटाकर कुशीनगर ले आया था। उसकी वश परम्परा मे बारहवे राजा सुदिन के समय तक यहा राजधानी रही । इनके बीच मे कुश और महादशन नामक दो प्रतापी राजा हुए जिनका उल्लेख गौतम बुद्ध ने (महादशन सुत्त के अनुसार) किया था। महादशनसुत्त मे कुसीनारा के वैभव का वणन है—'राजा महासुदशन के समय मे, कुशावती पूव से पश्चिम तक बारह योजन और उत्तर से दक्षिण तक सात योजन थी । कुशावती राजधानी समृद्ध और सब प्रकार से सुख शाति स भरपूर थी । जैसे देवताओ की अलकनदा नामक राजधानी समृद्ध है वैसे ही कुशावती थी । यहा दिन रात हाथी, घोडे, रथ भेरी, मृदग, गीत, वाद्य, ताल, शख, और खाओ पिओ—के दस शब्द गूजते रहते थे । नगरी सात परकोटो से घिरी थी । इनमे चार रगो के बडे-बडे द्वार थे । चारो ओर ताल वृक्षो की सात पक्तिया नगरी को घेरे हुई थी । इस पूव बुद्धकालीन वैभव की झलक हमे कसिया मे खोदे गये कुओ के अदर स प्राय बीस फुट की गहराई पर प्राप्त होने वाली भित्तियो के अवशेषा स मिलती

है। महापरिनिर्वाणसुत्त से ज्ञात होता है कि कुशीनगर मे बहुत समय तक समस्त जबूद्वीप की राजधानी भी रही थी। बुद्ध के समय (छठी शती ई० पू०) मे कुशीनगर मे मल्लजनपद की राजधानी थी। नगर के चतुर्दिक सिंहद्वार थ जिन पर सदा पहरा रहता था। बस्ती के उत्तर की ओर मल्लो का एक उद्यान था जिसे शालवन उद्यान कहते थे। नगर के उत्तरी द्वार से शालवन तक एक राजमार्ग जाता था जिसके दोनो ओर शालवृक्षो की पक्तिया थी। शालवन से नगर मे प्रवेश करने के लिए पूव की ओर जाकर दक्षिण की ओर मुडना पडता था। शालवन से नगर के दक्षिण द्वार तक बिना नगर मे प्रवेश किए ही एक सीधे माग से पहुचा जा सकता था। पूव की ओर हिरण्यवती नदी (=राप्ती) बहती थी जिसके तट पर मल्लो की अभिषेकशाला थी। इसे मुकुटबधनचैत्य कहते थे। *नगर के दक्षिण की ओर भी एक नदी थी* जहा कुशीनगर का श्मशान था। बुद्ध ने कुशीनगर आते समय इरावती (अचिरावती अजिरावती या राप्ती नदी) पार की थी (बुद्धचरित 25,53)। नगर मे अनक सुदर सडके थी। चारा दिशाओ के मुख्य द्वारो से आने वाले राजपथ नगर क मध्य मे मिलते थे। इस चौराहे पर मल्ल गणराज्य का प्रसिद्ध सथागार था जिसकी विशालता इसी से जानी जा सकती है कि इसमे गणराज्य के सभी सदस्य एकसाथ बैठ सक्त थे। सथागार के सभी सदस्य राजा कहलाते थे और बारी बारी से शासन करते थे। शेष, व्यापार आदि कार्यों मे व्यस्त रहते थे। कुशीनगर मे मल्लो की एक सुसज्जित सेना रहती थी। इस सेना पर मल्लो को गव था। इसी के बल पर वे बुद्ध के अस्थि-अवशेषा को लेने के लिए अन्य लागो से लडने के लिए तैयार हो गए थे। भगवान् बुद्ध अपने जीवनकाल मे कई बार कुशीनगर आए थे। वे शालवन विहार मे ही प्राय ठहरते थे। उनके समय मे ही यहा के निवासी बौद्ध हो गए थे। इनमे से अनेक भिक्षु भी बन गए थे। दब्बमल्ल स्थविर, आयुष्मान सिंह, यशदत्त स्थविर, इन मे प्रसिद्ध थे। कासलराज प्रसेनजित का सेनापति बधुलमल्ल, दीघनारायण, राजमल्ल, वज्रपाणिमल्ल और वीरागना मल्लिका यही के निवासी थे। भगवान् बुद्ध की मृत्यु 483 ई० म कुसीनारा मे ही हुई थी—दे० बुद्ध चरित 25,52—'तब शिष्य मडली के साथ चुद के यहा भोजन करने के पश्चात उसे उपदेश देकर वे कुशीनगर आए।' उन्होंने शालवन के उपवन मे युग्मशाल वृक्षो के नीचे चिर समाधि ली थी (बुद्ध चरित 25,55)। निर्माण के पूव कुशीनगर पहुचने पर तथागत कुशीनगर मे कमलो से सुशोभित एक तडाग के पास उपवन मे ठहरे थे—बुद्ध चरित, 25,53। अतिम समय मे बुद्ध ने कुसीनारा को बौद्धो का महातीथ बताया था।

उन्होंने यह भी कहा था कि पिछले जन्मों में छ बार वे चक्रवर्ती राजा होकर कुशीनगर में रहे थे। बुद्ध के शरीर का दाहकर्म मुकुटबंधन चैत्य (वर्तमान रामाधार) में किया गया था और उनकी अस्थियां नगर के संथागार में रखी गई थीं। (मुकुटबंधन चैत्य में मल्लराजाओं का राज्याभिषेक होता था। बुद्ध चरित 27,70 के अनुसार बुद्ध की मृत्यु के पश्चात 'नागद्वार के बाहर आकर मल्लों ने तथागत के शरीर को लिए हुए हिरण्यवती नदी पार की और मुकुट चैत्य के नीचे चिता बनाई')। बाद में उत्तरभारत के आठ राजाओं ने इन अस्थियों को बांट लिया था। मल्लों ने मुकुटबंधनचैत्य के स्थान पर एक महान स्तूप बनवाया था। बुद्ध के पश्चात कुशीनगर को मगधनरेश अजातशत्रु ने जीतकर मगध में सम्मिलित कर लिया और वहां का गणराज्य सदा के लिए समाप्त हो गया। किंतु बहुत दिनों तक यहां अनेक स्तूप और विहार आदि बने रहे और दूर दूर से बौद्ध यात्रियों को आकर्षित करते रहे। बौद्ध अनुश्रुति के अनुसार मौर्यसम्राट अशोक (मृत्यु 232 ई० पू०) ने कुशीनगर की यात्रा की थी और एक लक्ष मुद्रा व्यय करके यहां के चैत्य का पुनर्निर्माण करवाया था। युवानच्वांग के अनुसार अशोक ने यहां तीन स्तूप और दो स्तंभ बनवाए थे। तत्पश्चात कनिष्क (120 ई०) ने कुशीनगर में कई विहारों का निर्माण करवाया। गुप्त काल में यहां अनेक बौद्ध विहारों का निर्माण हुआ तथा पुराने भवनों का जीर्णोद्धार भी किया गया। गुप्त राजाओं की धार्मिक उदारता के कारण बौद्ध संघ का कोई नष्ट न हुआ। कुमारगुप्त (5वीं शती ई० का प्रारंभ काल) के समय में हरिबल नामक एक श्रेष्ठी ने परिनिर्वाण मंदिर में बुद्ध की बीस फुट ऊंची प्रतिमा की प्रतिष्ठापना की। छठी व सातवीं ई० से कुशीनगर उजाड़ होना प्रारंभ हो गया। हर्ष के शासनकाल में (606–647 ई०) कुशीनगर नष्टप्राय हो गया था यद्यपि यहां भिक्षुओं की संख्या पर्याप्त थी। युवानच्वांग के यात्रा वृत्त से सूचित होता है कि कुशीनारा, सारनाथ से उत्तर पूर्व 116 मील दूर था। युवान् के परवर्ती दूसरे चीनी यात्री इत्सिंग के वर्णन से ज्ञात होता है कि उसके समय में कुशीनगर में सर्वास्तिवादी भिक्षुओं का आधिपत्य था। हैहयवंशीय राजाओं के समय उनका स्थान महायान के अनुयायी भिक्षुओं ने ले लिया जो तांत्रिक थे। 16वीं शती में मुसलमानों के आक्रमण के साथ ही कुशीनगर का इतिहास अंधकार के गर्त में लुप्त-सा हो जाता है। संभवत 13वीं शती में मुसलमानों ने यहाँ के सभी विहारों तथा अन्यान्य भवनों को तोड़-फोड़ डाला था। 1876 ई० की खुदाई में यहां प्राचीन काल में होने वाले एक भयानक अग्निकांड के चिह्न मिले हैं जिससे स्पष्ट है

कि मुसलमानो के आक्रमण के समय यहा के सब विहारो आदि को भस्म कर दिया गया था। तिब्बत का इतिहास लेखक तारानाथ लिखता है कि इस आक्रमण के समय मारे जाने से बचे हुए भिक्षु भाग कर नेपाल, तिब्बत तथा अन्य देशो मे चले गए थे। परिवर्ती काल मे कुशीनगर के अस्तित्व तक का पता नही मिलता। 1861 ई० मे जब जनरल कनिंघम ने खोज द्वारा इस नगर का पता लगाया तो यहा जगल ही जगल थे। उस समय इस स्थान का नाम माथा कुवर का कोट था। कनिंघम ने इसी स्थान को परिनिर्वाण-भूमिसिद्ध किया। उन्होंने अनरुधवा ग्राम को प्राचीन कुसीनारा और रामाधार को मुकुट-बधनचैत्य बताया। 1876 ई० मे इस स्थान को स्वच्छ किया गया। पुराने टीलो की खुदाई मे महापरिनिर्वाण स्तूप के अवशेष भी प्राप्त हुए। तत्पश्चात कई गुप्तकालीन विहार तथा मदिर भी प्रकाश मे लाए गए। कलचुरिनरेशो के समय – 12वी शती—का एक विहार भी यहा से प्राप्त हुआ था। कुशीनगर का सबसे अधिक प्रसिद्ध स्मारक बुद्ध की विशाल प्रतिमा है जो शयनावस्था मे प्रदर्शित है। (बुद्ध का निर्वाण दाहनी करवट पर लेट हुए हुआ था)। इसके ऊपर धातु की चादर जडी है। यही बुद्ध की साढे दस फुट ऊची दूसरी मूर्ति है जिसे माथाकुवर कहते हैं। इसकी चौकी पर एक ब्राह्मी लेख अकित है। महा परिनिर्वाण स्तूप मे से एक ताम्रपट्ट निकला था जिस पर ब्राह्मी लेख अकित है—'(परिनि) र्वाण चैत्ये ताम्रपट्ट इति'। इस लेख से तथा हरिबल द्वारा प्रतिष्ठापित मूर्ति पर के अभिलेख ('देयधर्मोय महाविहारे स्वामिनो हरिबलस्य प्रतिमा चेय घटिता दीनेन माथुरेण') से कसिया का कुशीनगर से अभिज्ञान प्रमाणित होता है। पहले विसेंट स्मिथ का मत था कि कुशीनगर नेपाल मे अचिरवती (राप्ती) और हिरण्यवती (गडक ?) के तट पर बसा हुआ था। मजूमदार शास्त्री कसिया को वेठदीप मानते हैं जिसका वर्णन बौद्ध साहित्य मे है (दे० एशेंट ज्याग्रेफी आव इडिया, पृ० 714), किंतु अब कसिया का कुशीनगर से अभिज्ञान पूर्णरूपेण सिद्ध हो चुका है।

कुशेशय

विष्णुपुराण मे उल्लिखित कुशद्वीप का एक पर्वत—'विद्रुमा हेमशैलश्च द्युतिमान पुष्पवास्तथा, कुशेशय हरिश्चैव सप्तमो मन्दराचल' 2-4-41।

कुसीनारा दे० कुशीनगर

कुसीम नगर=कुसीम मडल

दक्षिण ब्रह्मदेश (बर्मा) मे प्राचीन भारतीय बस्ती जो वर्तमान बसीन के स्थान पर थी।

कुसुभि

महाभारत के अनुसार द्वारका के निकट सुकक्ष पर्वत के चतुर्दिक स्थित वनो मे से एक—'सुकक्ष परिवार्यैन चित्रपुष्प महावनम् शतपत्रवन चैव करवीर कुसुभि च'। सभा० 38, दक्षिणात्यपाठ।

कुसमध्वज

गार्गी सहिता के अतगत युगपुराण मे कुसुमध्वज पर यवनो (ग्रीको) के आक्रमण का उल्लेख है—'तत साकेतमाक्राम्य पाचालान मथुरास्तथा, यवना दुष्टविक्रान्ता प्राप्स्यति कुसुमध्वजम। तत पुष्पपुरे प्राप्ते कदमे प्रथिते हिते, आकुला विषया सर्वे भविष्यति न सशय' (दे० कन बृहत्सहिता, पृ० 37)। कुसुमध्वज या पुष्पपुर का अभिज्ञान पाटलिपुत्र से किया गया है। उपयुक्त उद्धरण मे सभवत भारत पर दूसरी शती ई० पू० मे होने वाले मिनेण्डर के आक्रमण का उल्लेख है।

कुसुमपुर

(1)=पुष्पपुर=पाटलिपुत्र (दे० पुष्पपुर, पाटलिपुत्र, कुमरार)।

(2)=कान्यकुब्ज। युवानच्वाग ने कान्यकुब्ज का नाम कुसुमपुर भी लिखा है।

(3) (बर्मा) ब्रह्मदेश का प्राचीन भारतीय नगर जिसका नाम सभवत मगध के प्रसिद्ध नगर कुसुमपुर या पाटलिपुत्र के नाम पर ही रक्खा गया था। ब्रह्मदश मे भारतीयो ने अति प्राचीनकाल ही मे अनेक औपनिवेशिक बस्तिया बसाई थी।

कुसुमोद

विष्णु पुराण 2,4,60 के अनुसार शाकद्वीप का भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा के पुत्र के नाम पर कुसुमोद कहलाता है।

कुसुर (पजाब, प० पाकिस्तान)

लाहौर के निकट एक प्राचीन बस्ती। किवदती है कि श्री रामचद्र जी के कनिष्ठ पुत्र लव ने लवपुर अथवा लाहौर तथा ज्येष्ठ पुत्र कुश ने कुशपुर अथवा कुसूर की सस्थापना की थी। किंतु वाल्मीकि० उत्तर० 108,4 मे वर्णित है कि लव को उत्तरकोसल और कुश को दक्षिणकोसल या कुशावती का राज्य श्रीरामचद्र जी द्वारा दिया गया था।

कुस्थलपुर

गुप्तसम्राट् समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति मे कुस्थलपुर के शासक धनजय के समुद्रगुप्त द्वारा जीते जाने का उल्लेख है—'काचेयक विष्णुगोप, अवमुक्तक

नीलराज, वैंगीयक हस्तिवर्मा, पालकक उग्रसेन, दैवराष्ट्रक कुबेरकौस्थल्पुरक धनजय प्रभृति सव दक्षिणापथ राजा गृहणमोक्षानुग्रहजनित प्रतापोन्मिश्रमहा भाग्यस्य ' इस स्थान का अभिज्ञान निश्चित रूप से नही हो सका है। प्रसग से इसकी स्थिति जिला विजगापटम (आ० प्र०) के अतगत होनी चाहिए।

कुहमीर (जिला भरतपुर, राजस्थान)

डीग और भरतपुर के बीच मे स्थित है। यहा भरतपुर के जाट नरेशो का एक सुदृढ दुग था जिसके द्वारा अपने राज्य की रक्षा करने मे उन्हे बहुत सहायता मिलती थी। 17>4 ई० मे पाच मास तक मराठा की सेनाओ ने कुहमीर का घेरा डाला था। इसके पश्चात 1778 ई० मे मुगल सरदार नजफखा न भी कुहमीर को घेर लिया था। उस समय भरतपुर की गद्दी पर राजा रणजीतसिंह आसीन थे। काफी दिना के घेरे के पश्चात सूरजमल की विधवा रानी किशोरी के चातुय से कुहमीर का किला रानी को रहने के लिए दे दिया गया और भरतपुर का इलाका रणजीतसिंह को वापस दे दिया गया।

कूचतार

पाणिनि 4,3,94 मे उल्लिखित, वतमान कूचा (चीनी तुर्किस्तान या सिक्यांग)।

कूटक

श्रीमदभागवत 5,19,16 मे भारत के पवतो की सूची मे कुटक का ऋषभ और कोल्लक नामक पवतो के साथ उल्लेख है—'भारतेप्यस्मिन् वर्षे सरिच्छैला सन्ति बहवो मलयो मगलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूटऋषभ कूटककोल्लक सह्यो देव गिरिऋष्यमूक श्रीशैला वेंकटा महेन्द्रोवारिधारो विन्ध्य'। सदभ से यह ऋषभ के निकट विंध्य की पूव श्रेणियो म स्थित दक्षिण भारत का कोई पवत जान पडता है।

कूपक दे० सतियपुत्रदेश

कूर्माचल

कुमायू (उ० प्र०) क्षेत्र का प्राचीन पौराणिक नाम (अन्य नाम कुमारवन)। वतमान अल्मोडा तथा नैनीताल के जिले कुमायू मे स्थित हैं। सभवत दिल्ली के सुलतान मु० तुगलक ने 1335 ई० के लगभग कूर्माचल के प्रदेश पर आक्रमण किया था जिससे उसकी सेना का अधिकाश मारा गया था। तारीखे-फिरोज़ शाही के लेखक ज़ियाउद्दीन बर्नी ने इसका नाम 'कराचल' लिखा है और इब्नबतूता ने कराजल पहाड और उसे दिल्ली से दस मजिल दूर बताया है। बर्नी के अनुसार कराचल हिंद और चीन के बीच मे स्थित था। दे० कुमायू।

कृतमाला

'ताम्रपर्णी नदी यत्र कृतमाला पयस्विनी, कावेरी च महापुण्या प्रतीची च महानदी'—श्रीमदभागवत 11,5, 39–40। विष्णु 2,3,12 मे कृतमाला नदी को मलय पवत से उदभूत माना गया है—'कृतमाला ताम्रपर्णी प्रमुखा मल्योद्‌भवा'। कुछ विद्वानो के मत मे कृतमाला वतमान वेगा या वेगवती है जो दक्षिण के प्रसिद्ध नगर मदुरा के निकट बहती है। प्राचीन समय मे कृतमाला और ताम्रपर्णी नदियो से सिंचित प्रदेश का नाम मालकूट था।

कृतमालेश्वर=कवलेश्वर (जिला कोटा, राजस्थान)

इदुगढ रेलस्टेशन से आठ मील पूव मे है। यह स्थान त्रिवेणी नदी के तट पर है। बूदी नरेश महाराज अजीतसिंह के बनवाये शिव मदिर और कुड यहा स्थित हैं।

कृतवती=साबरमती (नदी)

कृमि

'वेदस्मृता वेदवती त्रिदिवामिक्षुला कृमिम्' महा० भीष्म० 9,17। इस स्थल पर उल्लिखित नदियो की सूची मे कृमि का उल्लेख है किंतु इसका अभिज्ञान अनिश्चित जान पडता है। प्रसग से यह इक्षुला के निकट बहने वाली कोई नदी जान पडती है।

कृष्णगडकी

नेपाल की एक नदी। इसका उदभव मुक्तिनाथ पवत (ऊचाई समुद्रतल से 12000 फुट) मे है। यह नदी धवलगिरि और अन्नपूर्णा नामक हिमालय शृगमालाओ के बीच से होकर बहती है और मुक्तिनाथ के निकट चक्रा दविका नदियो में मिल जाती है।

कृष्णपुर दे० कलीसोबोरा

कृष्णगिरि (उत्तरकोकण, महाराष्ट्र)

बोरीवली स्टेशन से एक मील पर कृष्णगिरि पहाडा है। इसम शिवोपासना से सबधित तीन प्राचीन गुहामदिर हैं। कन्हेरी की प्रसिद्ध गुफाए यहा से छ मील दूर हैं। कन्हेरी, कृष्णगिरि का ही अपभ्रश है।

(2) हिंदूकुश से लगा हुआ कारावोरम पहाड। कृष्णगिरि का वायु पुराण 36 मे वणन है।

कृष्णवेणा

महाभारत, सभा० 9,20 मे उल्लिखित कृष्णवेणा ('गोदावरी कृष्णवेणा कावेरी च सरिद्वरा, किंपुना च विशल्या च तथा वैतरणी नदी') दक्षिण भारत

की कृष्णा ही जान पडती है। श्री चि० वि० वैद्य का मत है कि यह नदी कृष्णा से भिन्न है। किंतु इस विशिष्ट स्थल पर इसका गोदावरी और कावेरी के बीच उल्लेख होने के कारण तथा कृष्णा का पृथक नामोल्लेख न होने से पहला मत ही ग्राह्य जान पडता है। (किंतु दे० कृष्णवेणी)।

कृष्णवेणी (जिला गुलबर्गा, आ० प्र०)

यह नदी गुलबर्गा के जिले मे बहती है। इसके तट पर कई प्राचीन पुण्य-क्षेत्र हैं जिनमे छाया भगवती क्षेत्र प्रसिद्ध है। यह नारायणपुर ग्राम के सन्निकट है। महाभारत, सभा० 9,20 मे उल्लिखित कृष्णवेणा, वतमान कृष्णा है। वास्तव मे कृष्णा और वेणा की सयुक्त धारा का ही नाम कृष्णवेणी है।

कृष्णा

महाबलेश्वर (महाराष्ट्र) की पहाडियो से उदभूत दक्षिण भारत की प्रसिद्ध नदी। भीमा और तुगभद्रा इसकी सहायक नदियां हैं। श्रीमद्भागवत 5,19, 18 मे इसका उल्लख है—' कावेरी वेणी पयस्विनी शकरावती तुगभद्रा कृष्णा वेण्या भीमरथी ' कृष्णा बगाल की खाडी म मसुलीपटम के निकट गिरती है। कृष्णा और वेणी के सगम पर माहुली नामक प्राचीन तीथ है। पुराणो मे कृष्णा को विष्णु के अश से सभूत माना गया है। महाभारत, सभा० 9,20 मे कृष्णा को कृष्णवेणा कहा गया है और गोदावरी और कावेरी के बीच मे इसका उल्लेख है जिससे इसकी वास्तविक स्थिति का बोध होता है—'गोदावरी कृष्णवेणा कावेरी च सरिद्वारा'।

कॅदुबिल्व=कॅदुली (प० बगाल)

ओडल-सैंथिया रेलमाग पर सिहुली स्टेशन से 18 मील दूर अजय नदी के उत्तर की ओर केदुली या प्राचीन कॅदुबिल्व ग्राम स्थित है, जिसे परपरा से सस्कृत काव्य गीतगोविंद के रचयिता महाकवि जयदेव का जन्मस्थान माना जाता है।

कॅदुली दे० कॅदुबिल्व।

केकय

रामायण तथा परवर्ती काल मे पजाब का एक जनपद। यह गधार और विपाश या बियास नदी के बीच का प्रदेश था। वाल्मीकि० से विदित होता है कि केकय जनपद की राजधानी राजगह या गिरिव्रज मे थी। राजा दशरथ की रानी कैकेयी, केकयराज की पुत्री थी और राम के राज्याभिषेक के पहले भरत शत्रुघ्न राजगृह या गिरिव्रज मे ही थे—'उभयौभरतशत्रुघ्नौ केकयेषु परतपौ, पुरे राजगृहे रम्येमातामहनिवेशने' अयो० 67,7 तथा 'गिरिव्रजपुरवर

केदारखड

टिहरी गढवाल (उ० प्र०) का प्राचीन पौराणिक नाम। केदारनाथ यही स्थित है।

केदारनाथ (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

उत्तराखड का प्रसिद्ध तीर्थ। शिव का भारत प्रसिद्ध मदिर 11850 फुट की (समुद्र तल से) ऊचाई पर स्थित है। इस घाटी के अन्य मदिरो की भाति केदारनाथ के मदिर पर भी दक्षिण की वास्तुशैली का स्पष्ट प्रभाव है। कुछ लोगो के मत मे मदिर के अग्रभाग के छाजन पर यूनानी कला का प्रभाव दिखाई पडता है किंतु यह मत असगत है क्योकि इस की शैली इस प्रदेश मे प्रचलित, विशेषकर नेपाली वास्तु शैली से ही प्रभावित है। मदिर के दो खड हैं—पहले खड मे, जिसके ऊपर शिखर स्थित है, शिव की मूर्ति है। बाहर सभामडप है जहा कई शिलालेख अकित हैं। मदिर कत्यूरी शासन के समय मे बना जान पडता है जैसा कि शिखर की उपरली काष्ठवेष्टनी से सूचित होता है। कुछ विद्वानो का मत है कि कत्यूरीकाल से पहले यहा कोई मदिर अवश्य था क्योकि कई शिला-लेख और मूर्तिया बहुत प्राचीन हैं। मदिर के चारो कोनो पर चार प्रस्तर स्तभ हैं। भित्तिया बहुत स्थूल हैं। गर्भगृह के द्वार पर चौखट के चारो ओर अनेक मूर्तिया उत्कीर्ण है। सभामडप म भी चार विशाल प्रस्तर-स्तभ हैं। दीवारो के गोखो मे भी मूर्तिया हैं जिन्हे पाडवो की प्रतिमाए कहा जाता है। मदिर के बाहर नदी की विशाल मूर्ति है। केदारनाथ की शिवमूर्ति की गणना शिव के बारह ज्योतिर्लिंगो मे है। मदिर के पास आदि शकराचार्य की समाधि है। कहते हैं कि मदिर का निर्माण उन्होने ही करवाया था और यही उनका शरीरात हुआ था। समाधि के कोने मे उसके निर्माताओ का नाम पटट लगा है।

केन

केन या कियाना यमुना की सहायक नदी है। यह विंध्याचल से निकलती है। इसका प्राचीन नाम कर्णावती, श्येनी और शुक्तिमति है। केन सागर जिले के निकट विंध्याचल से निकलती है और छत्रपुर और पन्ना की सीमा बनाती हुई जिला बाँदा (उ० प्र०) के चीलतारा नामक स्थान पर यमुना मे गिरती हैं। इसकी लवाई 230 मील है।

केरल

मलयपर्वत की आड म बसा हुआ प्रदेश जिसमे भूतपूर्व त्रावणकोर और कोचिन रियासतें सम्मिलित हैं। केरल का उल्लेख महाभारत, सभा० 31,71

शोघ्रमासेदुरजसा' अयो० 68,21। अयोध्या के दूतों की केकयदेश की यात्रा के वर्णन मे उनके द्वारा विपाशा नदी को पार करके पश्चिम की ओर जाने का उल्लेख है—'विष्णो पद प्रेक्षमाणा विपाशा चापि शाल्मलीम ' अयो० 68, 19। कनिंघम ने गिरिव्रज का अभिज्ञान झेलम नदी (पाकि०) के तट पर बसे गिरिजाक नामक स्थान (वर्तमान जलालाबाद, प्राचीन नगरहार) से किया है। अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के समय पुरु या पौरस केकय देश का राजा था। उस समय इसकी पूर्वी सीमा रामायणकाल केकय के जनपद की अपेक्षा सकुचित थी और इसका विस्तार झेलम और गुजरात के जिलो तक ही था। जैन लेखकों के अनुसार केकय देश का आधा भाग आर्य था (इडियन ऐटिक्वेरी 1891, पृ० 375)। परवर्ती काल मे केकय के लोग शायद विहार मे जाकर बसे होगे और वहा के प्रसिद्ध बौद्धकालीन नगर गिरिव्रज या राजगृह का नामकरण उन्होने अपने देश की राजधानी के नाम पर ही किया होगा। केकय-राजवश की एक शाखा मैसूर मे जाकर बस गई थी (एशेंट हिस्ट्री आव दकन, पृ० 88,101)। पुराणो मे केकयो को अनु का वशज बताया है। ऋग्वेद 1,108, 8,7, 18,14, 8,10,5 मे अनु के वश का निवास परुष्णी नदी (रावी) के निकट या मध्य पजाब मे बताया गया है। जैन ग्रथो म केकय के 'सेयविया' नामक नगर का भी उल्लेख है (इडियन ऐंटिक्वेरी 1891, पृ० 375)। रामायण से ज्ञात होता है कि कैकेयी के पिता का नाम अश्वपति और भाई का युधाजित था।

केड्डा=कटाह

केतुमती

काशी का एक नाम जिसका बौद्ध साहित्य मे उल्लेख है।

केतुमाल

पौराणिक भूगोल के अनुसार जबुद्वीप का एक विभाग। विष्णुपुराण 2,2, 37 के अनुसार चक्षु नदी (वक्षु या आक्सस या आमू दरया) केतुमाल मे प्रवाहित है—'चक्षुश्च पश्चिमगिरीनतीत्य सकलास्तत पश्चिम केतुमालाख्य वर्षं गत्वैति सागरम'। आमू या चक्षु नदी रूस के दक्षिणी भाग केस्पियन सागर के पूर्व की ओर के प्रदेश मे बहती है और इस प्रकार केतुमाल की स्थिति केस्पियन और अफगानिस्तान के बीच के भूभाग मे मानी जा सकती है। विष्णु 2,2,35 मे चक्षु को पश्चिम की ओर, और सीता या तरिम नदी को पूर्व की ओर माना है जो भौगोलिक तथ्य है।

केदारखड

टिहरी गढवाल (उ० प्र०) का प्राचीन पौराणिक नाम। केदारनाथ यही स्थित है।

केदारनाथ (ज़िला गढवाल, उ० प्र०)

उत्तराखड का प्रसिद्ध तीथ। शिव का भारत प्रसिद्ध मदिर 11850 फुट की (समुद्र तल से) ऊचाई पर स्थित है। इस घाटी के अय मदिरो की भाति केदारनाथ के मदिर पर भी दक्षिण की वास्तुशैली का स्पष्ट प्रभाव है। कुछ लोगो के मत मे मदिर के अग्रभाग के छाजन पर यूनानी कला का प्रभाव दिखाई पडता है किंतु यह मत असगत है क्योकि इस की शैली इस प्रदेश मे प्रचलित, विशेषकर नेपाली वास्तु शैली से ही प्रभावित है। मदिर के दो खड है—पहले खड मे, जिसके ऊपर शिखर स्थित है, शिव की मूर्ति है। बाहर सभामडप है जहा कई शिलालेख अकित है। मदिर कत्यूरी शासन के समय मे बना जान पडता है जैसा कि शिखर की उपरली काष्ठवेष्टनी से सूचित होता है। कुछ विद्वानो का मत है कि कत्यूरीकाल से पहले यहा कोई मदिर अवश्य था क्योकि कई शिला-लेख और मूर्तिया बहुत प्राचीन हैं। मदिर के चारो कोनो पर चार प्रस्तर स्तभ हैं। भित्तिया बहुत स्थूल है। गभगृह के द्वार पर चौखट के चारो ओर अनेक मूर्तिया उत्कीण है। सभामडप मे भी चार विशाल प्रस्तर स्तभ हैं। दीवारो के गोखो मे भी मूर्तिया है जिह पाडवो की प्रतिमाए कहा जाता है। मदिर के बाहर नदी की विशाल मूर्ति है। केदारनाथ की शिवमूर्ति की गणना शिव के बारह ज्योतिर्लिगो मे है। मदिर के पास आदि शकराचाय की समाधि है। कहते हैं कि मदिर का निर्माण उहोने ही करवाया था और यही उनका शरीरात हुआ था। समाधि के कोने मे उसके निर्माताओ का नाम-पटट लगा है।

केन

केन या कियाना यमुना की सहायक नदी है। यह विध्याचल से निकलती है। इसका प्राचीन नाम कर्णावती, श्येनी और शुक्तिमति है। केन सागर जिले के निकट विध्याचल से निकलती है और छत्रपुर और पना की सोमा बनाती हुई ज़िला बाँदा (उ० प्र०) के चीलतारा नामक स्थान पर यमुना मे गिरती हैं। इसकी लबाई 230 मील है।

केरल

मलयपवत की आड म बसा हुआ प्रदेश जिसमे भूतपूव त्रावणकोर और कोचिन रियासतें सम्मिलित हैं। केरल का उल्लेख महाभारत, सभा० 31,71

मे इस प्रकार है—'पाड्याश्च द्रविडाश्चैव सहिताश्चोड्र केरलै, आध्रास्ताल वनाश्चैव कलिगानुष्ट्रकर्णिकान'। सभा० 51 म केरल और चोल नरेशो द्वारा युधिष्ठिर को दी गई चदन, अगुरु, मोती, वैदूर्य तथा चित्रविचित्र रत्नो की भेंट का उल्लेख है—'चदनागरु चान त मुक्तावैदूर्यचित्रका, चोलश्च केरलश्चोभौ ददतु पाडवाय वै'। केरल तथा दक्षिण के अन्य प्रदेशा को सहदेव ने अपनी दिग्विजययात्रा के दौरान जीता था। रघुवश 4,54 मे कालिदास ने करल का उल्लेख किया है—'भयोत्सृष्टविभूषाणा तेन केरलयोषिताम्, अलकेषु चमूरेणश्चूर्ण-प्रतिनिधी कृत' अर्थात् दिग्विजय के लिए निकली हुई रघु की सेनाओं के केरल पहुँचने पर केरल-युवतिया—जिन्होने भय से सारे विभूषण त्याग दिए थे—की अलको मे सेना की उडाई हुई धूलि ने प्रसाधन के चूर्ण का काम किया। अशोक के शिलालेख 2 मे पाड्य, सातियपुत्र और केरल राज्यो का उल्लेख है। ताम्रपर्णी नदी तक इनका विस्तार माना गया है। परवर्ती काल मे केरल को चेर भी कहा जाता था, जो केरल का रूपातर मात्र है। केरल की मुख्य नदिया मुरला, ताम्रपर्णी, नेत्रवती और सरस्वती आदि हैं। श्री रायचौधरी के अनुसार उडीसा मे महानदी के तट पर स्थित वतमान सोनपुर के पास के प्रदेश को भी केरल कहते थे क्योकि यहा स्थित ययाति नगरी से केरल युवतियो का सबध धोई कवि ने अपने पवनदूत नामक काव्य मे बताया है किंतु यह तथ्य सदेहास्पद है।

केरारकोट (जौनपुर, उ० प्र०)

यह स्थान जौनपुर म है जो बहुत प्राचीन माना जाता है। फिरोजशाह तुगलक का किला केरारकोट के स्थान पर ही बना है। किवदती है कि केरारकोट का प्राचीन दुग केरारवीर नामक राक्षस ने बनाया था। इसे रामचद्र जी ने मारा था। राक्षस का स्मृतिस्थान गामती नदी पर बताया जाता है। केरारकोट के स्थान पर अताला मसजिद इब्राहीमशाह शर्की सुलतान ने 1408 ई० मे बनवाई थी। पहले यहा अतलादवी का मदिर था।

केर्रागुडी (जिला कुरनूल आ० प्र०)

गूटी के निकट एक चटटान पर अशोक की चौदह मुख्य धर्मलिपिया तथा एक लघुधर्मलिपि अकित है।

केलझर (म० प्र०)

प्राचीन नाम चक्रपुर या चक्रनगर है। यहा एक प्राचीन दुग है जो अब खडहर हो गया है। दुर्ग के भीतर नागपुर के भोंसलानरेश के इष्टदेव गणपति का मदिर है। वापिका के निकट कई जैन मूर्तिया भी दिखलाई देती हैं जो कला

की दृष्टि से उत्कृष्ट नही हैं। एक दरवाजे के अवशेष पर भी विभिन्न देवी देवताओ की मूर्तिया अकित हैं। एक स्तभ पर तीर्थंकर महावीर का समवाशरण बहुत ही सुदर ढग से उत्कीर्ण है।

केलस=कैलास (बर्मा)

ब्रह्मदेश मे प्राचीन भारतीय नगर जिसका नाम हिंदू औपनिवेशिको ने प्राचीन भारतीय साहित्य मे प्रसिद्ध कैलास पवत के नाम पर रक्खा था।

केशपुत्र=केसपुत्र

बुद्धकाल मे कालामवशीयो की राजधानी। अराड नामक बुद्ध का समकालीन दार्शनिक इन्ही से सबधित था—दे० बुद्ध चरित—12, 2—'स कालामसगोत्रेणतेनालोक्यैव दूरत, उच्चै स्वागतमित्युक्त समीपमुपजग्मिवान्')। अराड के पास गौतम 'जरामरण रोग' का उपचार जानने के लिए गए थे (बुद्ध चरित 12, 14)। केशपुत्र नगर सभवत बुद्ध चरित 12,1 '(अराडस्याश्रम भेजे वपुषा पूरयन्निव') मे वर्णित आश्रम के निकट ही होगा। सभवत यह स्थान गोमती नदी के तट पर कोसलजनपद (उ० प्र०) मे स्थित था। शतपथ ब्राह्मण (वैदिक इडेक्स 1, पृ० 186) तथा पाणिनि 6, 4, 165 मे उल्लिखित केशीलोग शायद इसी स्थान के निवासी थे। अगुत्तरनिकाय 1, 188 के अनुसार केसपुत्त की स्थिति कोसल जनपद मे थी। वाल्मीकि० उत्तर० 52, 1–2 मे उल्लिखित केशिनी नदी सभवत इसी जनपद की नदी थी।

केशवती

नेपाल की विष्णुमती नदी—स्वयभू पुराण ५ मे उल्लिखित।

केशवप्रयाग (जिला गढवाल, उ० प्र०)

बद्रीनाथ से वसुधारा जाने वाले माग पर सरस्वती तथा अलकनदा के सगम पर प्राचीन पुण्य स्थान है। यहा से तिब्बत भारत सीमा पास ही है।

केशिनी

अयोध्या के निकट एक नदी—'तत्र ता रजनीमुष्यकेशिन्या रघुनदन, प्रभाते पुनरुत्थाय लक्ष्मण प्रययौ तदा। ततोऽर्ध दिवसे प्राप्ते प्रविवेश महारथ, अयोध्या रत्नसपूर्णा हृष्टपुष्टजनावृताम वाल्मीकि० उत्तर० 52, 1–2।

केसपुत्त=केशपुत्र

केसरिया (जिला मोतीहारी, बिहार)

मोतीहारी से 22 मील है। इस ग्राम से 1 मील दक्षिण, 62 फुट ऊचा डूह है, जिस पर ईंटा का 52 फुट ऊचा स्तूप है जिसे ग्रामनिवासी राजा बेन का देवरा कहते हैं। युवानच्वाग के वणन के अनुसार वैशाली (वतमान बसाढ,

जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) मे 200 ली या 30 मील पर एक प्राचीन नगर था जिसके ये ध्वसावशेष जान पडते हैं। यह स्तूप बौद्ध अनुश्रुति के अनुसार उस स्थान पर है जहां बुद्ध ने एक बडे जनसमूह के सम्मुख घोषणा की थी कि पूर्वजन्म में भिक्षुक बनने के लिए ही उन्होंने राज्यत्याग किया था। एक अवसर पर बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य आनन्द से कहा था कि इस स्तूप को लोगो ने चक्रवर्ती राज्य के लिए ऐसे स्थान पर बनाया था जहा चार मुख्य मार्ग मिलते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि केसरिया के स्तूप से चौथाई मील दूर दो मुख्य प्राचीन सडकें मिलती हैं—एक अशोक की राजकीय सडक जो पाटलिपुत्र के दूसरी ओर गगा के उत्तरी तट से नेपाल की घाटी तक और दूसरी छपरा से माती हारी होते हुए नेपाल जाती है—(दे० इसलिया)।

केसरी

विष्णुपुराण के अनुसार शाकद्वीप का एक पर्वत-'आबिकेयस्तथारम्य केसरी पर्वतोत्तम'।

केसलापुर दे० मानिकगढ

कैथल=कपिष्ठल

कैरा (गुजरात)

प्राचीन खेटक आहार जो वलभिनरेशो के समय (छठी-सातवी ई०) म गुजरात का प्रसिद्ध आहार (जिला) था। वलभिराज ध्रुवभट्ट शीलादित्य सप्तम के आलिना ताम्रपट्ट लेख मे खेटक आहार के महिलाभिग्राम के दान म दिए जाने का उल्लेख है।

कैलवाडा (जिला उदयपुर, राजस्थान)

मेवाड का एक प्राचीन स्थान। अकबर के समकालीन मेवाडपति उदयसिंह का सरदार वीर पत्ता कैलवाडा का शासक था। 1567 ई० मे अकबर के चित्तौड पर आक्रमण करने के समय जयमल और पत्ता ने चित्तौड की रक्षा का भार अपने ऊपर लिया था।

कैलास (तिब्बत)

(1) मानसरोवर के निकट, प्राचीन भारतीय साहित्य मे प्रसिद्ध पर्वत जिस पर महादेव शिव और पार्वती का निवास माना जाता है। कैलास पर्वत के विषय में अति प्राचीन काल से ही हमारे साहित्य मे उल्लेख मिलते हैं। वाल्मीकि० किष्किधा० 43 म सुग्रीव ने शतबल वानर की सेना को उत्तरदिशा की ओर भेजते हुए उस दिशा के स्थानों मे कैलास का भी उल्लेख किया है—'तत् शीघ्रमतिक्रम्य कान्तार रोमहर्षणम कैलास पाडुर प्राप्य हृष्टा यूय भविष्यथ'

किष्किधा० 43, 20, अर्थात् उस भयानक वन को पार करने के पश्चात् श्वेत (हिममडित) कैलास पवत को देखकर तुम प्रसन्न हो जाओगे। इससे आगे के श्लोको म कैलास मे कुबेर के स्वण निर्मित घर ('तत्र पाडुर मेघाभ जाबूनद परिष्कृतम कुबेरभवन रम्य निर्मित विश्वकमणा' 43, 21), विशाल झील—मानसरोवर ('विशाला नलिनी यत्र प्रभूतकमलोत्पला हसकारडवाकीर्णाप्सरो गण सेविता 43, 22) तथा यक्षराज वैश्रवण या कुबेर और यक्षो ('तत्र वैश्रवणो राजा सवलोकनमस्कृत, धनदो रम्यते श्रीमान गुह्यकै सह यक्षराट' 43, 23) का वणन है। महाभारत वन० के अतगत कैलास का उल्लेख पाडवो की गधमादन की यात्रा के प्रसग मे है जहा कैलास को लाँघने के पश्चात उसके परवर्ती प्रदेश मे केवल देवर्षियो की गति ही सभव है—'अस्यातिक्रम्य शिखर कैलासस्य युधिष्ठिर, गति परमसिद्धाना देवर्षीणा प्रकाशते'—वन० 159, 24। वन० 139, 11 मे विशाला या बद्रीनाथ को कैलास के निकट बताया गया है—"कैलास पवतो राजन षड्योजनसमुच्छित यत्र देवा समायान्ति विशाला यत्र भारत।" भीष्म० 6, 41 मे कैलास का दूसरा नाम हेमकूट भी कहा गया है तथा वहा गुह्यको (यक्षो) का निवास माना गया है—हेमकूटस्तु सुमहान् कैलासो नाम पवत यत्र वैश्रवणो राजन् गुह्यकै सह मोदते'। मेघदूत (पूर्वाध, 60) मे क्रौच रध्र क आगे कैलास का वणन है—'गत्वा चोद्ध्व दशमुखभुजोच्छ्वासितप्रस्थ सन्धे कैलासस्य त्रिदशवनिता दपणस्यातिथि स्या तुगोच्छ्रायै कुमुदविशदैर्योवितत्य स्थिति ख, राशीभूत प्रतिदिशमिवत्र्यम्बकस्याट्टहास'। यह द्रष्टव्य है कि वाल्मीकि० किष्किधा० 43, 20 और मेघदूत के उपर्युक्त वणन, दोनो ही मे कैलास के धवल हिममडित सौदय को सराहा गया है। आज भी कैलास के यात्री इस पवत की, जिसके शिखर सदा हिम से ढके रहते है—श्वेत आभा को देखकर मुग्ध हो जाते है तथा कालिदास की सुन्दर उपमाओ (देववधुओ के दपण के समान स्वच्छ, कुमुदपुष्पो के समान विशद और शिव के अट्टहास का मानो राशीभूत रूप) की साथकता उनकी समझ मे आती है। मेघदूत की अलकापुरी कैलास पर ही बसी थी। कालिदास ने पूवमघ, 65 मे गगा को कैलास की गोद मे अवस्थित बताया है (दे० अलका)। यहा गगा से अलकनदा का निर्देश समझना चाहिए क्योकि अलकनदा कैलास के निकट बहती हुई बद्रीनाथ आती है और नीचे गगा के गगात्री वाले स्रोत मे मिल जाती है। सभवत यह गगा का मूल स्रोत ही हो। बुद्ध चरित 28, 57 म बौद्ध स्तूपो की भव्यता की तुलना कैलास के हिमाच्छादित शिखरो से की गई है।

(2) इलोरा मे स्थित कैलास मदिर। इस मदिर मे कैलास पवत की

अनुकृति निर्मित की गई है।

(3)=कोलास (जिला नदेड, महाराष्ट्र)

(4)=केल्स (बर्मा)

कैवल्या (मद्रास)

कालहस्ती से प्राय 15 मील दूर वेंकटतीथ के निकट यह नदी प्रवाहित होती है। इसके तट पर प्राचीन शिव मदिर है।

कोंकण (महाराष्ट्र)

प्राचीन साहित्य मे इसे अपरात का उत्तरी भाग माना गया है। महाभारत शान्ति० 49, 66-67 मे अपरान्त भूमि का सागर द्वारा परशुराम के लिए उत्सर्जित किए जाने का उल्लेख है (दे० अपरात)। कोकण का उल्लेख दशकुमारचरित के आठवें उच्छवास मे है।

कोंगु=कुग

इस देश का (वतमान मैसूर का इलाका) प्रथम शती ई० स आग का इतिहास कोगू देश-राजाक्कल नामक तामिल ग्रथ म है। इसका टेलर (Taylor) ने अनुवाद किया है।

कोंगोद

चीनी यात्री युवानच्वाग ने इस देश का उल्लेख महाराजा हप की विजय-यात्राओं के प्रसग मे करते हुए लिखा है कि कोगोद पर आक्रमण क पश्चात् हर्ष बगाल की ओर चला गया। हप का शासनकाल 606-647 ई० है। कोगोद का अभिज्ञान गजम (उडीसा) से किया गया है (दे० डा० रा० कु० मुकर्जी—हप, पृ० 85)। श्री ह० कृ० महताब (हिस्ट्री ऑफ उडीसा, पृ० 29) के अनुसार महानदी से ऋषिकुल्या नदी तक का विस्तृत भूभाग कोंगाद कहलाता था। चौथी शती ई० मे यहा शैलोद्भव-वश के राज्य की स्थापना हुई थी।

कोडाणा

महाराष्ट्र के प्रख्यात दुर्ग सिंहगढ का प्राचीन नाम। दे० सिंहगढ।

कोंडापुर (जिला मदक, आ० प्र०)

हैदराबाद से 43 मील है। यहा कई प्राचीन खडहरो के टील हैं। उत्खनन द्वारा बौद्ध स्तूप, चैत्यशालाए और भूमिगत कोष्ठ तथा भट्टिया प्रकाश मे आई है। ये अवशेष आध्रकालीन हैं। रोम सम्राट् आगस्टस (37 ई० पू०-16 ई०) की एक स्वणमुद्रा, एक दजन के लगभग चादी क, 50 ताब के, 100 टीन के और सैकडो सीसे के सिक्के भी खडहरो से प्राप्त हुए हैं। तरह-

तरह के मिट्टी के बर्तन भी जिन पर सुंदर चित्रकारी की हुई है, खुदाई में मिले है। चित्रों में धर्मचक्र, त्रिरत्न तथा कमल के चिह्न उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त मूल्यवान् पत्थर, सीप, हाथीदांत, शीशे, लोहे, तांबे के आभूषण, माला की गुरियां तथा हथियार आदि भी मिले हैं। कुबेर तथा बोधिसत्व की मिट्टी की सुंदर प्रतिमाएं भी प्राप्त हुई है। पुरातत्त्वविदों का विचार है कि यहां से प्राप्त माला की गुरियां लगभग तीन सहस्र वर्ष प्राचीन हैं। कोंडापुर को उसकी पुरातत्त्व विषयक मूल्यवान तथा प्रचुर सामग्री के कारण दक्षिण की तक्षशिला कहते हैं।

कोंडाविड्ड (जिला गंतूर, आ० प्र०)

1335-36 में बहमनी राज्य के विघटन के पश्चात आंध्रदेश की कई रियासतें स्थापित हो गई थीं। इनमें से एक रेड्डी लोगों ने बसाई थी जिसकी राजधानी पहले अड्डांकी और फिर कोंडाविड्डू में बनाई गई थी। इस रियासत की नींव प्रोल्यवेम रेड्डी ने डाली थी।

कोइलकुंडा (ज़िला महबूबनगर, आ० प्र०)

इस स्थान का प्राचीन क़िला गोलकुंडा के सुल्तान इब्राहीम कुतुबशाह ने बनवाया था। इसके भीतर सुंदर भवन थे जो अब खंडहर बन गए हैं। कोइल-कुंडा शब्द गोलकुंडा का ही रूपांतर है।

कोकनद

'ततस्त्रिगर्तान् कौंतेयदार्वान् कोकनदास्तथा, क्षत्रिया बहवो राजन्नुपावर्तन्त सर्वशः' महा० सभा० 27, 18। अर्जुन ने कोकनद जनपद को त्रिगर्त और दार्वप्रदेशों के साथ ही जीता था। कोकनद की स्थिति इस प्रकार जालंधर द्वाब (पंजाब) के निकट होनी चाहिए।

कोकरा

मुगलकाल में छोटा नागपुर (बिहार) का नाम। इसका नामोल्लेख अबुल-फ़ज़ल तथा तुज़ुके-जहांगीरी में है।

कोकामुख

'कोकामुखमुपस्पृश्य ब्रह्मचारी यतव्रत:, जातिस्मरत्वमाप्नोति दृष्टमेतत् पुरातनैः' महा० वन० 84, 158। अर्थात् संयम संपन्न ब्रह्मचारी कोकामुख तीर्थ में जाने से पूर्वजन्मों का वृत्तांत जान लेता है—यह बात प्राचीन लोगों की अनुभूत है। वनपर्व के अंतर्गत तीर्थों के वर्णन में इसका उल्लेख है। प्रसंग से इसकी स्थिति पंजाब में जान पड़ती है क्योंकि आगे 84, 160 में सरस्वती नदी के तीर्थों का वर्णन है। कोकामुख का उल्लेख उर्वशीतीर्थ और कुंभकर्णाश्रम

(84, 157) के आगे है किंतु इन स्थानो का अभिज्ञान अनिश्चित है। श्री न० ला० डे के अनुसार कोकामुख जिला पूर्णिया मे स्थित वराह क्षेत्र है। श्री वा० श० अग्रवाल के मत मे यह गगा की उत्तरपूर्वी सहायक नदी सुनकोसी और ताम्रारुणा नदियो के सगम पर स्थित था (दे० कादबिनी, सितम्बर 1962)।

कोटपेट्ट (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

चालुक्यकालीन वास्तुकला के उदाहरण के रूप मे एक सदर मदिर के अवशेष यहा स्थित है।

कोटबान=कोटमान (जिला मथुरा, उ० प्र०)

दिल्ली आगरा सडक पर स्थित है। 18वी शती मे जाटो का एक मुख्य दुर्ग यहा था। इस दुर्ग की बाहरी दीवार मिट्टी की थी और मुख्य किला इटो का बना था। अब यह खडहर हो गया है और भीतरी सरचना का केवल एक द्वार ही अवशिष्ट है। भरतपुर के प्रसिद्ध जाट राजा सूरजमल ने कोटमान के एक जाट सरदार सीताराम की पुत्री के साथ अपने पुत्र नवलसिंह का विवाह किया था। सीताराम ने सूरजमल की कई युद्धो मे सहायता की।

कोटलगढ दे० उमावन।

कोटला

दिल्ली के पास फीरोजशाह कोटला—जहा तुगलक सुल्तानो ने 14वी शती मे अपनी नई राजधानी बसाई थी। यहा फीरोजशाह तुगलक का मकबरा व अशोक का स्तभ है। (दे० दिल्ली)।

कोटा (जिला शिवपुरी, म० प्र०)

7वी शती से 9वी शती ई० तक के पुरातत्त्व-सबधी अवशेषो के लिए उल्लेखनीय है।

(राजस्थान) कोटाबूदी की रियासत का जन्म मध्यकाल मे हुआ था। यहा के क्षत्रिय हाडा कहलाते थे। बूदी नरेश छत्रसाल हाडा दारा की ओर से औरगजेब के साथ 1658 ई० के उत्तराधिकार युद्ध मे लडा था। इसी युद्ध मे वह वीरतापूर्वक लडता हुआ मारा गया था।

कोटाटवी

आटविक प्रदेश (म० प्र० का पूर्वोत्तर तथा उ० प्र० का दक्षिण पूर्व भाग जो वनो की प्रचुरता के कारण आटविक या अटवी कहलाता था) का एक भाग जिसका उल्लेख मध्याकरनदिरचित रामचरित (पृ० 36) की टीका मे है।

कोटिकापुर

जन ग्रथ राजवलीकथा के अनुसार कोटिकापुर मे अतिम केवली श्री जबूस्वामी का स्तूप स्थित था (दे० मुनि कातिसागर—खडहरो का वैभव, पृ० 44)। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है।

कोटिगाम=कोटिग्राम

बौद्धग्रथ महापरिनिर्वाण सुत्तात मे वर्णित स्थान, जो सभवत कुदग्राम का पर्याय है। कुदग्राम जैन-तीर्थंकर महावीर का जन्मस्थान था—दे० कुदग्राम।

कोटितीर्थ

कोटितीर्थ नाम से महाभारत तथा पुराणो म अनेक स्थानो का अभिधान किया गया—'स्वर्गद्वारेणयत्तुल्य गगाद्वार न सशय, तत्राभिषेक कुर्व्वीत कोटितीर्थे समाहित' वन० 84, 27। इस स्थल पर गगाद्वार या हरद्वार को ही कोटितीर्थ कहा गया है। इसके अतिरिक्त कालिजर, नर्मदा के उदभव-स्थान अमरकटक और प्रयाग के निकट शिवकोटि आदि स्थानो पर भी कोटि-तीर्थ माने गए है। महाभारत वन० 84, 77 मे ('कोटितीर्थे नर स्नात्वा अर्चयित्वा गुह नृप, गोसहस्रफल विद्यात् तेजस्वी च भवेन्नर) वाराणसी और गोमती के बीच के प्रदेश मे भी एक कोटितीर्थ का वर्णन है जहा गुह या कार्तिकेय (स्कद) की पूजा होती थी। वन० 82, 49 म धर्मारण्य (गुजरात) के निकट भी कोटितीर्थ का उल्लेख है—'कोटितीर्थमुपस्पृश्य हयमेधफललभेत्'। वास्तव मे कोटितीर्थ का अर्थ है करोडो तीर्थ जिस स्थान पर हो और इस प्रकार यह नाम प्राय सामान्य विशेषण के रूप मे प्रयुक्त हुआ है।

कोटिनार=कोडिनार

कोटिपल्ली=कोटिवल्ली

कोटिवर्ष

दामोदरपुर (जिला दीनाजपुर, बगाल) से प्राप्त होने वाले ताम्रपट्ट-लेखो के अनुसार पाचवी छठी शती ई० मे कोटिवर्ष, पुड्रवर्धन नामक भुक्ति का एक विषय या जिला था। कोटिवर्ष से ही ये दानपट्ट प्रचलित किए गए थे— कोटिवर्षअधिष्ठानाधिकरणस्य '। अभिलेखो से सूचित होता है कि कोटिवर्ष विषय की स्थिति आधुनिक राजशाही, दीनाजपुर, माल्दा, और बागरा के जिलो में रही होगी। कोटिवर्ष-विषय का मुख्य स्थान शायद फरीदपुर के पास होगा जहा से एक दानपट्ट प्राप्त हुआ है।

कोटिवल्ली (आ० प्र०)

गोदावरी सागर सगम पर प्राचीन स्थान है जिसका पुराणो मे भी उल्लेख

है। इसका वतमान नाम कोटिपल्ली है।

कोटिशिला

जैन ग्रंथ विविधतीर्थकल्प मे मगध के एक तीर्थ का नाम। इस स्थान का अनेक जैन साधुओ से सबध बताया गया है जिनमे चन्द्रायुद्ध मुख्य हैं।

कोटीश्वर=कोटेश्वर (कच्छ, गुजरात)

समुद्रतट पर छोटा सा बदरगाह है। कच्छ की प्राचीन राजधानी इसी स्थान पर थी। सभव है कि चीनी यात्री युवानच्वाग ने जिस नगर किए-शिफाली का कच्छ की राजधानी के रूप मे अपने यात्रावृत्त मे वणन किया है वह कोटीश्वर ही हो। प्रो० लोशन के मत मे किए-शिफाली का सस्कृत रूप कच्छेश्वर होना चाहिए। कोटेश्वर मे इसी नाम का एक शिवमदिर है। यहा से दो मील पर कच्छ प्रदेश का अतिप्राचीन तीथ नारायणसर है जहा महाप्रभु वल्लभाचाय सोलहवी शती मे आए थे।

कोटटनर

प्राचीन रोम के इतिहासलेखक प्लिनी ने भारत के सुदूर दक्षिण के इस प्रदेश का उल्लेख करते हुए इसे कालीमिच का समुद्रतट कहा है क्योंकि रोमसाम्राज्य से जो व्यापार भारत के साथ ई० सन के प्रारभिक काल मे होता था उसमे कालीमिच प्रमुख पण्यवस्तु थी। यह कोटटार के प्रदेश मे प्रचुरता से उत्पन्न होती थी। विसेंट स्मिथ के मत मे कोटटनर केरल राज्य मे स्थित वतमान कोटटायम और क्विलन का इलाका रहा होगा (अर्ली हिस्ट्री ऑफ इडिया, पृ० 476)।

कोटटूरगिरि (वतमान कोठूर, जिला गजम, उडीसा)

इस स्थान को समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे गिरिकोटटूर कहा गया है (दे० गिरिकोटटूर)।

कोडिनार=कोडिनारक (सौराष्ट्र, बम्बई)

कहा जाता है कि प्राचीन द्वारका वतमान कोडिनार नामक स्थान पर थी। आजकल कोडिनार काठियावाड के समुद्रतट पर स्थित एक छोटा-सा बदरगाह है। इसका जैन ग्रथ विविधतीथकल्प मे उल्लेख है। इस नगर के सोम नामक विद्वान् एव तपस्वी ब्राह्मण की कथा इस प्रसग मे वर्णित है। कोडिनारक या कोडिनार गिरनारपवत के निकट स्थित है (दे० मुनि चरितविजय रचित विहार दशन—पृ० 229)। कोडिनारक का उल्लेख जैनस्तोत्र तीथमाला-चैत्यवदन मे इस प्रकार है—'कोडीनारक मन्त्रिदाहडपुरे श्री मडपचार्बुदे।

कोणार्क (उडीसा)

उडीसा की प्राचीन राजधानी। किंवदंती के अनुसार चक्रक्षेत्र (जगन्नाथपुरी) के उत्तरपूर्वी कोण मे यहा अर्क या सूर्य का मंदिर स्थित होने के कारण इस स्थान का कोणार्क कहा जाता था। पुराणो मे कोणार्क को मैत्रेयवन और पद्मक्षेत्र भी कहा गया है। एक कथा मे वर्णन है कि इस क्षेत्र मे सूर्योपासना के फलस्वरूप श्रीकृष्ण के पुत्र साब का कुष्ठ रोग दूर हो गया था और यही चंद्रभागा मे बहते हुए कमलपत्र पर उसे सूर्य की प्रतिमा मिली थी। आईने अकबरी मे अबुलफजल लिखता है कि यह मदिर अकबर के समय से लगभग सात सौ तीस वर्ष पुराना था किंतु मडलापजी नामक उडीसा के प्राचीन इतिहास ग्रथा के आधार पर यह कहना अधिक समीचीन होगा कि इस मदिर को गगावशीय लागुल नरसिंह देव ने बगाल के नवाब तुगानखा पर अपनी विजय के स्मारक के रूप मे बनवाया था। इसका शासन काल 1238-1264 ई० माना जाता है। एक ऐतिहासिक अनुश्रुति मे मदिर के निर्माण की तिथि शकसवत 1204 (= 1126 ई०) मानी गई है। जान पड़ता है कि मूलरूप मे इससे भी पहले इस स्थान पर प्राचीन सूर्य मदिर था। सातवी शती ई० मे चीनी यात्री युवानच्वाग कोणार्क आया था। उसने इस नगर का नाम चेलिताला लिखते हुए उसका घेरा 20 ली बताया है। उस समय यह नगर एक राजमार्ग पर स्थित था और समुद्रयात्रा पर जाने वाले पथिको या व्यापारियो का विश्राम स्थान भी था। मदिर का शिखर बहुत ऊचा था और उसमे अनेक मूर्तिया प्रतिष्ठित थी। जगन्नाथपुरी के मदिर मे सुरक्षित उडीसा के प्राचीन इतिहास ग्रथा से पता चलता है कि सूर्य और चद्र की मूर्तियो को भयवशीय नरेश नसिंहदेव के समय (1628 1652) मे पुरी ले जाया गया। 1824 ई० मे स्टार्लिंग नामक अंग्रेज ने इस मदिर को देखा था। उस समय यह नष्टप्राय अवस्था मे था। वह लिखता है कि 'मदिर के ध्वस्त होने का कारण स्थानीय लोग यह बताते है कि प्राचीनकाल मे इस मदिर के उच्चशिखर पर एक विशाल चुबक लगा हुआ था जिसके कारण निकटवर्ती समुद्र मे चलने वाले जलयान खिंच कर रेतीले किनारे पर लग जाया करते थे। मुगलकाल मे एक जहाज के मल्लाहो ने इस आपत्ति से बचने के लिए मदिर के शिखर का चुबक उतार दिया और शिखर को भी तोडफोड डाला। मदिर के पुजारियो ने इस घटना को अपशकुन मानते हुए मूर्तियो को भी मदिर से हटा कर पुरी भेज दिया।' स्टार्लिंग ने अपने समय की बचीखुची मूर्तियो की सुदर कला की सराहा है। वह लिखता है कि कोणार्क की मूर्तिकारी की तुलना गॉथिक मूर्तिकला की अलकरण-रचनाओ के सर्वोत्कृष्ट

उदाहरणों से सरलता से की जा सकती है। कोणाक के सूर्यमदिर को कृष्ण-मदिर या ब्लैक पगोडा भी कहते हैं। इसकी आकृति सूर्य के रथ के अनुरूप है। इसके विशाल एव भव्य चक्रो पर जो मनोरम मूर्तिकारी अकित है वह सर्वथा अभूतपूर्व एव अनोखी है। मदिर का शिखर 'आमलक' प्रकार का है जिसके ऊपर अमृतकलश आवृत है। मदिर मे उडीसा की प्राचीन मन्दिर-निर्माण शैली के अनुरूप ही स्तभो का अभाव है। कोणाक का मदिर भारत के सुदरतम प्राचीन स्मारको मे से है। इसका विशेष वर्णन नीचे दिया जाता है।

प्राचीन जनश्रुतियो के अनुसार बारह सौ उडिया कलाकारो ने इस मदिर का निर्माण किया था। उन्होने रातदिन परिश्रम करके इसे बनाया था किंतु इसके निर्माण का कार्य इतना विराट् था कि मदिर फिर भी पूरा न बन सका। मदिर को बनाने के समय चद्रभागा और चित्रोत्पला नदियो का प्रवाह रोकना पडा था। कहा जाता है कि इस मदिर पर कुल बारह सौ करोड रुपया व्यय हुआ था। शायद ससार के इतिहास मे किसी एक भवन के निर्माण म इतना धन व्यय नही हुआ। मदिर की सरचना सूर्यदेव के विराट् रथ या विमान के रूप मे की गई है। बारह राशियो के प्रतीक इस मदिर के आधारभूत बारह महाचक्र हैं और सूर्य (सप्तसप्ति) के सात अश्वो के परिचायक रूप में यहा भी सात विशाल घोडो की मूर्तिया थी। वास्तव मे सूर्य के सात घोडे उसकी किरणों के सात रगो के प्रतीक हैं। एक किंवदती है कि कोणाक का प्राचीन नाम कोन-कोन था। सूर्य (अर्क) के मदिर बन जाने मे यह नाम कोनाक या कोणाक हो गया। सूर्य मदिर के दो भाग हैं—रेखा अथवा शिखर और भद्र अथवा जगमोहन, जिसके ऊपर शिखर निर्मित है। तान्त्रिक मत के अनुसार (तान्त्रिकों का प्रभाव उडीसा मे काफी समय तक रहा है) मदिर के दोनो भाग पुरुष और स्त्रीत्व के वास्तु प्रतीक ह जो अभिन्न रूप मे जुडे हैं। रेखा भाग 180 फुट और भद्र 140 फुट ऊचा है। मदिर के चतुर्दिक परकोटा खिंचा हुआ है और पूर्व, दक्षिण और उत्तर की ओर इसके प्रवेशद्वार हैं। मुख्य द्वार पूर्व की ओर है जहा हाथी की पीठ पर आसीन सिंहो की मूर्तिया निर्मित हैं। दक्षिणी प्रवेशद्वार पर दो अश्वमूर्तिया और उत्तरी द्वार पर मनुष्यों को सूड पर उठाए हुए दो हाथी प्रदर्शित हैं। पहले सभी द्वारो पर मूर्तिया उत्कीर्ण थी किंतु अब केवल पूर्वी द्वार ही की नक्काशी शेष है। द्वार के ऊपर नवग्रहो का अकन था (यह मूर्तिखड कोणाक के सग्रहालय मे है)। इसके ऊपर, सूर्यदेव की पद्मासनस्थ मूर्ति गर्भ मे स्थित थी। मदिर के सामने एक मडप था जिसे 18वी शती मे मराठो ने पुरी भेज दिया था। जगमोहन के आगे एक नाट्य मदिर है जिसकी तक्षणकला

सराहनीय है। मंदिर के आधार के निम्नतम भाग मे वन्य पशुओ तथा हाथियो के आखेट के जीवत मूर्तिचित्र हैं। इसके ऊपर अनेक मूर्तिया विभिन्न प्रणयमुद्राओ मे अकित हैं जिससे मंदिर पर तान्त्रिक प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। मंदिर मध्ययुगीन होते हुए भी गुप्तकालीन वास्तुपरपरा का उत्कृष्ट उदाहरण है। अबुलफजल ने इसके लिए ठीक ही लिखा है कि कला के आलोचक इस मंदिर को देखकर आश्चर्यचकित रह जाते है। वास्तव मे यह अद्भुत कलाकृति अपने महान निर्माता के स्वप्न की साकार अभिव्यक्ति ही जान पडती है।

कोतवार दे० कांतिपुरी तथा कुंतिभोज

कोनकोन दे० कोणार्क

कोपन (मैसूर)

यह प्राचीन पौराणिक तीर्थ राइस के अनुसार वर्तमान कोपल या कोप्पल है जो तुगभद्रा नदी के तट पर स्थित है—(दे० कुर्ग इसक्रिप्शस—1914, पृ० 15)। राइस ने कोप्पम को जिसका एक अभिलेख (फ्लीट—एपिग्राफिका इडिका 12, 299) मे उल्लेख है कोपन तीर्थ ही माना है। विसेंट स्मिथ के अनुसार यह अभिज्ञान ठीक नही है और कोप्पम कोल्हापुर (महाराष्ट्र) से तीस मील पर स्थित वर्तमान खिदरापुर है (दे० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑफ इडिया—पृ० 448)।

कोपबल (मैसूर)

इस स्थान के निकट गावीमठ मे अशोक की एक लघुधर्म लिपि चट्टान पर उत्कीर्ण, कुछ ही वर्ष पूर्व, प्राप्त हुई थी।

कोपरगाव (महाराष्ट्र)

धौंड मनमाड रेलपथ पर, गोदावरी के निकट प्राचीन स्थान है जिसे किवदती मे दैत्य गुरु शुक्राचार्य का आश्रम कहा जाता है। यह भी लोगो का विश्वास है कि कच-देवयानी के प्रसिद्ध पौराणिक उपाख्यान की घटनास्थली यही है। यहा देवयानी का स्थान तथा कचेश्वर शिव मंदिर है। (टि०-देवयानी का पितृगृह अर्थात शुक्राचार्य का आश्रम एक दूसरी जनश्रुति मे देवयानी नामक स्थान (राजस्थान) मे भी माना जाता है।)

कोपल दे० कोपन

कोप्पम दे० कोपन, खिदरापुर

कोप्पल (जिला रायचूर, मैसूर)

दे० कोपन। यहा पहाडी पर स्थित दुर्ग अतिप्राचीन है। इसकी निचली किलाबंदियो की मरम्मत टीपू सुल्तान के फ्रांसीसी इजीनियरो ने की थी।

1857 ई० म भीमराव ने इसी गढ को अपना आश्रय बनाया था। किले के दो भाग हैं, ऊपरी किला 400 फुट ऊची पहाडी के शिखर पर अवस्थित है। सर जॉन मालकम ने लिखा है कि उन्होंने इस दुर्ग से अधिक सुदृढ रचना भारत मे अयत्र नही देखी थी।

कोमबेंग (बोर्नियो द्वीप, इडोनीसिया)

कोमबेंग मे एक प्राचीन गुहा मे अनेक हिंदू तथा बौद्ध मूर्तिया मिली हैं जो शत्रुओं के आक्रमण के समय शायद महाकाम नदी की घाटी मे स्थित किसी मदिर मे से लाकर यहा छिपा दी गई थी। बोर्नियो मे ई० सन की प्रारभिक शतियो मे हिंदू उपनिवेशो तथा सभ्यता का विकास हुआ था।

कोमला

वायुपुराण—2, 37, 369 मे वर्णित नगर—सभवत वतमान कामिल्ला (पू० पाकि०) छठी शती ई० मे यहा टिपारा प्रदेश की राजधानी थी। यह युवानच्वाग का कियामोलोगकिया है। इसका एक अन्य नाम कमलाक भी है।

कोयन

प्राचीन ककुद्मती (नदी)।

कोयल

सोन नदी की एक शाखा। इसमे छोटा नागपुर की पलाशिनी या परोस नदी मिलती है।

कोरकई (जिला तिन्नावेली, केरल)

ताम्रपर्णी नदी के तट पर प्राचीन काल का प्रसिद्ध नगर जो ई० सन के पूव और पश्चात् कुछ शतियो तक बडा समृद्धिशाली बदरगाह था। इसके द्वारा दक्षिण भारत का रोम साम्राज्य से भारी व्यापार होता था। यूनानियो ने भी इस स्थान का उल्लेख कोरकोई (Korkoi) नाम से किया है। पाडय शासनकाल मे मोतियो और शखो के व्यापार का केन्द्र भी इस नगर मे था। इनसे पाड्यनरेशो को विशेष आय होती थी। दक्षिण भारत की अनुश्रुतिया के अनुसार पाडय, चेर और चोल राज्यो के सस्थापक तीन भाई यही के निवासी थे। पाड्यकाल मे राजधानी मदुरा मे थी फिर भी राज्य का उत्तराधिकारी राजकुमार कोरकई मे ही रहता था क्योकि इस नगर का व्यापारिक महत्त्व बहुत था। पाडयनरशो का राज्य चिह्न परशु और हाथी था। आजकल कोरकई ताम्रपर्णी नदी पर एक छोटा-सा ग्राम मात्र है। यह बदरगाह मुहाने के रेत स भर जाने के कारण बेकार हो गया और धीरे धीरे सुदूर दक्षिण का व्यापार नए बदरगाह कायल मे केंद्रित हो गया।

कोरवगला (मैसूर)

चालुक्यकालीन वास्तुशैली मे निर्मित प्राचीन मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

कोरुनकुला (दे० वारगल)

कोर्पारिक

163 गुप्त सवत् = 482 ई० के गुप्तकालीन दानपट्ट-लेख म जो खाह नामक स्थान—नगदा (म० प्र०) से प्राप्त हुआ था, कार्पारिक नामक ग्राम का कुछ ब्राह्मणो को दान मे दिए जाने का उल्लेख है। ग्राम खाह के निकट ही रहा होगा (दे० खोह)।

कोल

वतमान अलीगढ (उ० प्र०) के स्थान पर बसा हुआ प्राचीन नगर। सभवत यहा वराह(कोल) भगवान की उपासना का केन्द्र था जैसा कि यहा के वाराही के प्राचीन मदिर से भी प्रमाणित होता है। यह भी किवदती है कि इस स्थान पर बलराम ने कोल नामक राक्षस को मारा था।

कोलगिरि

'कृत्स्न कोलगिरि चैव सुरभीपत्तन तथा, द्वीप ताम्राह्वय चैव पवत रामक तथा'—महा० सभा० 31, 68। सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा मे इस स्थान पर विजय प्राप्त की थी। श्रीमद्भागवत 5, 19, 16 मे कोल्लक नामक एक पवत का उल्लेख है। कोल्गिरि सभवत भारत के पश्चिम समुद्र-तट के निकट स्थित कोल्लक है। इस नाम का नगर भी शायद यहा स्थित था और कोलाचल और कोलगिरि शायद एक ही स्थान के पर्यायवाची नाम थे।

कोलम

क्विलन (केरल) का प्राचीन नाम। प्राचीन समय मे यह इस प्रदेश का प्रसिद्ध बदरगाह था। दे० क्विलन।

कोलर (मैसूर)

बगलौर से 60 मील। मैसूर के प्रसिद्ध गगवशीय राजाओ की राजधानी लगभग 700 वर्षों तक यहा रही और 1004 ई० म उनका राज्य समाप्त होने पर कोलर से भी राज्यश्री विदा हुई। कोलर अपनी सोने की खानो के लिए प्रसिद्ध है। शायद यही प्रदेश प्राचीनकाल मे सुवणगिरि कहलाता था।

कोलाचल (केरल)

प्रथम द्वितीय शती ई० मे प्रसिद्ध व्यापारिक स्थान तथा पश्चिम समुद्र तट

पर स्थित बदरगाह था। इस स्थान का नाम कोलाचल या कोलगिरि पर्वत के नाम पर हुआ होगा। 18वीं शती मे हालैंड निवासियों ने यहा व्यापारिक कोठियां बनाई थी। 1741 ई० मे उन्हे तिरवाकुर नरेश मार्तंड वर्मा ने पराजित कर निकाल दिया था। इस घटना के सस्मारक के रूप मे एक प्रस्तर-स्तभ यहा अवस्थित है। कालिदास के काव्यों के प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ शायद इसी कोलाचल के निवासी थे। दे० कोलम, क्विलन।

कोलापुर (बरार, महाराष्ट्र)

एलिचपुर से 21 मील दक्षिण मे है। फ्लीट के मत म यह ग्राम प्राचीन कोल्लट्पुरक है जिसका उल्लेख वाकाटकनरेश प्रवरसेन द्वितीय के सिउनी से प्राप्त ताम्र दानपट्ट म है।

कोलाबा

महानगरी बबई का एक भाग। इतिहास मे वर्णित है कि बबई के सात द्वीपों मे 16वीं शती तक आदिम जातियों का निवास था जिनमे कोली नामक लोग भी थे। सभवत कोलाबा का नाम इन्ही कोलियों के नाम पर पडा था।

कोलाहलगिरि

'सापि द्वितीये सप्राप्ते वीक्ष्य दिव्येन चक्षुषा, ज्ञात्वा शृगाल तद्रष्टु ययौ कोलाहल गिरिम्' विष्णु 3, 18, 72। कोलाहलगिरि का उपर्युक्त उल्लेख एक आख्यान के प्रसग मे है। वायुपुराण 1, 45 मे भी इसका उल्लेख है। यह कोलाचल या कोलगिरि का रूपातरित नाम हो सकता है। श्री न० ला० डे के अनुसार इसका अभिज्ञान ब्रह्मयोनि पहाडी, गया (बिहार) से किया गया है।

कोलिय गणराज्य

पूर्वी उत्तरप्रदेश तथा नेपाल की सीमा पर स्थित बुद्धकालीन गणराज्य। *गौतम बुद्ध की माता मायादेवी* इसी राज्य के गणप्रमुख सुप्रबुद्ध की कन्या थी। स्थानीय किंवदती के अनुसार जिला बस्ती (उ० प्र०) मे टिनिच रेलस्टेशन से दो मील पूर्व और कुआनो नदी के दक्षिणी किनारे पर रेल के पुल से आधा मील दूर बडा चत्रा—वराह क्षेत्र—नामक एक ग्राम है जो पुराणो मे वर्णित व्याघ्रपुर के प्राचीन नगर के स्थान पर बसा हुआ है। इसे ही बौद्ध-साहित्य का कोलियनगर कहा जाता है जहा सुप्रबुद्ध की राजधानी थी। बौद्ध साहित्य मे मायादेवी का पितृगृह दवदह नामक स्थान पर बताया गया है। कोल शब्द का अर्थ वराह भी है और इसी कारण से शायद इस स्थान का परपरागत नाम वराहक्षेत्र या अपभ्रश रूप म बडा चत्रा चला आ रहा है। कुछ लोगो का

यह भी मत है कि पूर्वी उत्तर प्रदेश की एक जाति कोली प्राचीन कोलियो से सबद्ध है।

कोलुआ (जिला मुजफ्फरपुर, बिहार)

बसाढ या प्राचीन वैशाली से दो मील उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित एक ग्राम जिसका अभिज्ञान महावश 4, 12 मे उल्लिखित महावन नामक स्थान से किया गया है। यह बौद्धकाल मे वैशाली का एक उपनगर या उद्यान था। यहा अशोक का एक स्तभ अवस्थित है।

कोल्लक

श्रीमद्भागवत 5,19,16 म उल्लिखित एक पवत—'मगलप्रस्थो मैनाक-त्रिकूट ऋषभ कूटक काल्लक सह्या देवगिरि'—कोल्लक सह्याद्रि की ही किसी पवत श्रेणी का नाम जान पडता है। सभवत यह कोल्गिरि का ही *रूपातरित नाम है जिसका उल्लेख महाभारत 2,31,68 मे है (दे० कोलगिरि)।*

कोल्लहपुर=कोलापुर

कोल्लाग

वैशाली का उपनगर, जहा जैन तीर्थंकर महावीर स्वामी के ज्ञातिजनो का निवास स्थान था। उनके पिता सिद्धाथ ज्ञात्रिक गोत्र से सबधित थे तथा उनके आस्थान कुदग्राम तथा काल्लाग मे थे। ये दोना वैशाली के उपनगर थे। कुदग्राम महावीर का जन्मस्थान था। जैन सूत्र ग्रथ कल्पसूत्र (खड 114 116) मे कोल्लाग को महावीर जी का जन्मस्थान बताया गया है। यहा स्थित द्विपलाश नामक चैत्य का भी उल्लेख कल्पसूत्र मे है।

कोल्लूर (मद्रास)

कृष्णा नदी के दक्षिण म स्थित है। इस स्थान पर प्राचीन समय मे हीरे की खानें थी। एक किवदती के अनुसार ससार प्रसिद्ध कोहनूर यही की खान से 1656 57 ई० मे प्राप्त हुआ था और मीरजुमला ने इसे मुगल सम्राट शाहजहा को भेंट मे दिया था। अन्य किवदतिया ऐसी भी हैं जिनके अनुसार कोहनूर का इतिहास कहीं अधिक प्राचीन है। कहा जाता है कि पहली बार इस हीरे ने महाराज युधिष्ठिर के मुकुट की शोभा बढाई थी और कालक्रम से यह रत्न भारत के बडे महाराजाओ तथा सम्राटो के पास रहा। अब यह हीरा, जो प्रारभ मे 787½ कैरेट का था, कट-छट कर बहुत हल्का रह गया है और इग्लैंड की महारानी एलिजाबेथ के ताज म जडा हुआ है। यह भी सभव है कि जो हीरा मीरजुमला ने शाहजहा को भेट किया था वह मुगलेआजम नामक हीरा था यद्यपि कुछ लोग कोहनूर और मुगलेआजम का एक ही मानते हैं। काल्लूर की खान स दूसरा

जगत्प्रसिद्ध हीरा 'हाप' नामक भी प्राप्त हुआ था किंतु कोहनूर के विपरीत इसे बहुत ही भाग्यहीन समझा जाता है। 1642 ई० मे यह हीरा फ्रासीसी यात्री टवर्नियर के हाथ मे पहुँचा। तब इसका भार 67 कैरेट था। टैवर्नियर ने भारत से लौटने पर इसे फ्रास के सम्राट चौदहवे लुई को भेंट म दिया। इसके पश्चात यह फ्रास की रानी मेरी एनतिनोते के पास पहुँचा जिसका फ्रासकी राज्यक्राति (1789 ई०) के काल मे वध कर दिया। इसके पश्चात यह होप परिवार के पास आया। तीन पीढियो के वाद यह अन्य हाथो म जा चुका था। लार्ड फ्रासिस होप जिनके पास यह था अपनी सारी सपत्ति खो बैठे और उनकी पत्नी की भी अचानक मृत्यु हो गई। उन्होने इसे एक तुर्की व्यापारी के हाथ बेच दिया जो वेचारा डूबकर मर गया। उसने पहले ही इसे तुर्की के सुलतान अब्दुल हमीद को बेच दिया था। वे राज्य-च्युत हुए और कारागार मे मरे। तत्पश्चात यह अभागा हीरा एक अमरीकी परिवार मे श्रीमती मेक्लीन के यहा पहुँचा। उनका पुत्र एक मोटर दुघटना मे मारा गया। श्रीमती मेकलीन न इसे फिर भी न छोडा और एक ईसाई पुजारी से इसे अभिमन्त्रित करवाया। किंतु उनके पास भी यह न रह सका और थोडे समय से आजकल एक अन्य अमरीकी परिवार के पास है। इस प्रकार भारत की कोल्लूर खान से उत्पन्न यह नीली काति वाला दीप्तिमान किंतु अभिशप्त रत्न ससार मे दूर दूर जाकर अनेक हाथो मे रहा है किंतु दुर्भाग्यवश जहा भी यह गया वहा दुघटनाएँ इसकी सहेलिया रही है।

कोल्हापुर दे० करवीर

कोशल दे० कोसल

कोसम (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

यमुना तट पर स्थित एक ग्राम जिसका अभिज्ञान बौद्धकाल की प्रसिद्ध नगरी कौशाबी से किया गया है।

दे० कोशाबी।

कोसल

उत्तरी भारत का प्रसिद्ध जनपद जिसकी राजधानी विश्वविश्रुत नगरी अयोध्या थी। यह जनपद सरयू (गगा की सहायक नदी) के तटवर्ती प्रदेश म बसा हुआ था। सरयू के किनारे बसी हुई बस्ती का सवप्रथम उल्लेख ऋग्वेद म है—'उतत्या सद्य आर्या सरयोरिन्द्रपारत अर्णाचित्ररथा वधी'—4,30,18 हो सकता है यही बस्ती आगे चलकर अयोध्या के रूप मे विकसित हो गयी। इस उद्धरण मे चित्ररथ को इस बस्ती का प्रमुख बताया गया है। शायद

इसी व्यक्ति का उल्लेख वाल्मीकि रामायण म भी है (अयो० 32,17)—'मूनश्चित्ररथश्चाय सचिव सुचिरोषित तोषयैन महार्हैश्च रत्नैर्वस्त्रैर्धनैस्तथा'। रामायण काल म कोसल राज्य की दक्षिणी सीमा पर वेदश्रुति नदी बहती थी। श्रीरामचद्रजी न अयोध्या से वन के लिए जाते समय गोमती नदी को पार करने के पहले ही कोसल की सीमा को पार कर लिया था—'एतावाचा मनुष्याणा ग्रामसवासवासिनाम, शृण्वन्नतियथौवीर कोसलान्कोसलेश्वर' अयोध्या० 49 8। वेदश्रुति तथा गोमती पार करन का उल्लेख क्रमश अयोध्या० 49,9 और 49,10 म है और तत्पश्चात् स्यदिका या सई नदी का पार करने के पश्चात—'स महीं मनुना राजा दत्तामिक्ष्वाकवे पुरा, स्फीता राष्ट्रवता रामो वैदेहीमन्वदर्शयत'—अयोध्या० 49,12, अर्थात श्री राम ने पीछे छूटे हुए, अनेक जनपदा वाले तथा मनु द्वारा इक्ष्वाकु को दिए गए समृद्धिशाली (कोसल) राज्य की भूमि सीता को दिखाई। जान पडता है कि रामायणकाल मे ही यह देश उत्तर कोसल और दक्षिण कोसल नामक दो जनपदो म विभक्त था। राजा दशरथ की रानी कौसल्या सभवत दक्षिण कोसल (रायपुर बिलासपुर के जिले, म० प्र०) की राजकन्या थी। कालिदास ने रघुवश 13,62 में अयोध्या को उत्तर कोसल की राजधानी कहा है—'सामान्य धात्रीमिव मानस मे सभावयत्युत्तर-कोसलानाम्'। दे० उत्तरकोसल। रामायणकाल मे अयोध्या बहुत ही समृद्धिशाली नगरी थी। महाभारत सभा० 30,1 मे भीमसेन की दिग्विजय यात्रा म कोसल नरेश बृहद्बल की पराजय का उल्लेख है—'तत कुमारविषये श्रेणिमन्तम-थाजयत कोसलाधिपतिं चैव बृहद्बलमरिंदम'। अगुत्तरनिकाय के अनुसार बुद्धकाल से पहले कोसल की गणना उत्तरभारत के सोलह जनपदो मे थी। इस समय विदेह और कोसल की सीमा पर सदानीरा (=गडकी) नदी बहती थी। बुद्ध के समय कोसल का राजा प्रसेनजित् था जिसने अपनी पुत्री कोसला का विवाह मगधनरेश बिबिसार के साथ किया था। काशी का राज्य जो इस समय कोसल के अतगत था, राजकुमारी को दहेज मे उसकी प्रसाधन सामग्री के व्यय के लिए दिया गया था। इस समय कोसल की राजधानी श्रावस्ती मे थी। अयोध्या का निकटवर्ती उपनगर साकेत बौद्धकाल का प्रसिद्ध नगर था। जातको मे कोसल के एक अ य नगर सेतव्या का भी उल्लेख है। छठी और पाचवी शती ई० पू० म कोसल मगध के समान ही शक्तिशाली राज्य था किंतु धीरे धीरे मगध का महत्त्व बढ़ता गया और मौर्य साम्राज्य की स्थापना के साथ कोसल मगध साम्राज्य ही का एक भाग बन गया। इसके पश्चात इतिहास म कोसल की जनपद के रूप मे अधिक महत्ता नही दिखाई देती यद्यपि इसका नाम

गुप्तकाल तक साहित्य में प्रचलित था। विष्णु पुराण 4,24,64 के—'कोसलाध्र-पुड्ताम्रलिप्तसमुद्रतटपुरी च देवरक्षितो रक्षिता'—इस उद्धरण मे सभवत गुप्तकाल के पूववर्ती काल मे कोसल का *अन्य जनपदो के साथ ही देवरक्षित* नामक राजा द्वारा शासित होन का वणन है। यह दक्षिण कोसल भी हो सकता है। गुप्तसम्राट् समुद्रगुप्त की *प्रयाग प्रशस्ति म 'कोसलक महेंद्र' या कोसल* (दक्षिण कोसल) के महद्र का उल्लेख है जिस पर समुद्रगुप्त ने विजय प्राप्त *की थी। कुछ विदेशी विद्वानो (सिलवेन लेवी, जीन प्रेज़ोलुस्की) के मत मे* कोसल आस्टिक भाषा का शब्द है। आस्ट्रिक लोग भारत मे द्रविडो से भी पूव आकर बसे थे। दे० **अयोध्या, साकेत, श्रावस्ती, सरयू।**

कोसी

कौशिकी (नदी) का अपभ्रंश हो सकता है। इस नाम की भारत में कई नदियां हैं। दे० **कौशिकी**

कोहका (जिला जबलपुर, म० प्र०)

वतमान स्लीमनाबाद, जिसे 1832 म कनल स्लामैन ने बसाया था, प्राचीन कोहका ग्राम के स्थान पर बसा हुआ है। इस ग्राम म प्राचीन शिवमदिर है। यह स्थान जबलपुर कटनी माग पर 39वे मील पर स्थित है।

कोहदामन=बेग्राम (अफगानिस्तान)

यह नगर प्राचीन कपिशा की राजधानी था। श्वेत हूणो के आक्रमण के पूव (दूसरी तीसरी शती ई०) यह नगर बहुत समृद्धिशाली था और बौद्ध धम का यहा काफी प्रचार था किंतु हूणो क आक्रमण के कारण नगर विध्वस्त हो गया। लगभग 520 ई० मे हूणनरेश मिहिरकुल का शासन यहा स्थापित हो गया था।

कोहबर (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

यह स्थान सोन नदी की घाटी के अन्तगत है। *यहा प्रागैतिहासिक* गुहा चित्रकारी के कई उदाहरण मिले हैं जिनमे नत्य करत हुए पुरुष तथा *वन्य पशुओ का आलेखन पाया जाता है।*

कोहाला

खीर (म० प्र०) के निकट इस स्थान से पूवमध्यकालीन इमारतो क अवशेष प्राप्त हुए हैं।

कौंडिन्यपुर दे० **कुंडिन, कुंडिनपुर**

कोकुर=**कुकुर या कुक्कुर**

कौंडियाली

सरयू का एक नाम। यह नदी मानसरोवर से उद्भूत होती है, तिब्बत के पहाडो मे इसे कौंडियाली कहते हैं, मैदान मे पहुच कर इसका नाम

सरयू और अत मे घाघरा हो जाता है।

कौराल

गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे वर्णित एक प्रदेश, 'कौसलक महेंद्र महाकातार व्याघ्रराज, कौराल(ड)क मटराज पैष्ठपुरक महेंद्र गिरि '। रायचौधरी के मत मे इस नाम से केरल (जिसकी राजधानी महानदी पर स्थित ययातिनगर म थी) का बोध होता है। डा० बारनेट के अनुसार यह दक्षिण का कोराड नामक ग्राम है (कलकत्ता रिव्यू, फरवरी 1924) और डा० कीलहान के मत मे कालेयर झील का तटवर्ती क्षेत्र (दे० कीलहान, एपिग्राफिका इडिका, जिल्द 6, पृ० 3)।

कौलायत=कपिलायतन

कौलास (देगदर तालुका, जिला नादेड, महाराष्ट्र)

मध्यकालीन तथा परवर्तीकाल के अनेक प्राचीन स्मारक यहा स्थित हैं जिनमे 13वी या 14वीं शती का शिवमदिर, 16वी या 17वी शती की खूनी मसजिद, 17वी शती का सत बहलाल का मकबरा तथा शाह जियाउलहक की दरगाह उल्लेखनीय है। यहा एक प्राचीन दुग भी है जिसे 1323 ई० म मुसल मानो ने वारगल नरेश स छीन लिया था। इस स्थान का प्राचीन नाम कैलास है। वारगल नरेशो के समय यह स्थान शिवोपासना का केंद्र था।

कौशाबी

(1) बुद्धकाल की परमप्रसिद्ध नगरी जो वत्स देश की राजधानी थी। इसका अभिज्ञान, तहसील मझनपुर जिला इलाहाबाद मे प्रयाग से 24 मील पर स्थित कोसम नाम के ग्राम से किया गया है। यह नगरी यमुना नदी पर बसी हुई थी। पुराणो के अनुसार (दे० विष्णु० 4, 21, 7-8) हस्तिनापुर-नरेश निचक्षु ने, जो परीक्षित का वशज (युधिष्ठिर से सातवी पीढी मे) था, हस्तिनापुर के गगा द्वारा बहा दिए जाने पर अपनी राजधानी वत्स देश की कौशाबी नगरी म बनाई थी—'अधिसीमकृष्णपुत्रो निचक्षुर्भविता नृप या गगयाऽपहृते हस्तिनापुरे कौशाम्ब्या निवत्स्यति'। इसी वश की 26वी पीढी मे बुद्ध के समय मे कौशाबी का राजा उदयन था। इस नगरी का उल्लेख महाभारत मे नही है फिर भी इसका अस्तित्व ईसा से कई शतियो पूव था। गौतम बुद्ध के समय म कौशाबी अपने ऐश्वय के मध्याह्नकाल मे थी। जातक कथाओ तथा बौद्ध साहित्य मे कौशाबी का वणन अनेक बार आया है। कालिदास, भास और क्षेमेंद्र को कौशाबी नरेश उदयन से सबधित अनेक लोककथाओ की पूरी तरह से जानकारी थी।

उदयन के समय मे गौतमबुद्ध कौशाबी मे अक्सर आते-जाते रहते थे। उनके सबध के कारण कौशाबी के अनेक स्थान सैकडो वर्षों तक प्रसिद्ध रहे। बुद्धचरित 21, 33 के अनुसार कौशाबी मे, बुद्ध ने धनवान घोषिल, कुब्जोत्तरा तथा अय महिलाओ तथा पुरुषो को दीक्षित किया था। यहा के विख्यात श्रेष्ठी घोषित (सभवत बुद्धचरित्र का घोषिल) ने घोषितराम नाम का एक सुदर उद्यान बुद्ध के निवास के लिए बनवाया था। घोषित का भवन नगर के दक्षिण पूर्वी कोन मे था। घोषिताराम के निकट ही अशोक का बनवाया हुआ 150 हाथ ऊचा स्तूप था। इसी विहारवन के दक्षिण पूर्व मे एक भवन था जिसके एक भाग मे आचाय वसुबधु रहते थे। इन्होने 'विज्ञप्ति मात्रता सिद्धि' नामक ग्रथ की रचना की थी। इसी वन के पूव मे वह मकान था जहाँ आय असग ने अपने ग्रथ योगाचारभूमि की रचना की थी। कौशाबी से एक कोस उत्तर-पश्चिम मे एक छोटी पहाडी थी जिसकी प्लक्ष नामक गुहा म बुद्ध कई बार आए थे। यहीं श्वभ्र नामक प्राकृतिक कुड था। जन ग्रथो म भी कौशाबी का उल्लेख है। आवश्यक सूत्र की एक कथा मे जैन भिक्षुणी चदना का उल्लेख है जो भिक्षुणी बनने से पूव कौशाबी के एक व्यापारी धनावह के हाथो बेच दी गई थी। इसी सूत्र मे कौशाबी-नरेश शतानीक का भी उल्लेख है। इसकी रानी मृगावती विदेह की राजकुमारी थी। मौयकाल म पाटलिपुत्र का गौरव अधिक बढ़ जाने से कौशाबी समृद्धिहीन हो गई। फिर भी अशोक ने यहा प्रस्तरस्तभ पर अपनी धमलिपिया—स० 1 मे 6 तक उत्कीण करवायी। इसी स्तभ पर एक अय धमलिपि भी अकित है जिसमे बौद्ध सघ के प्रति अनास्था दिखाने वाले भिक्षुओ के लिए दड नियत किया गया है। इसी स्तभ पर अशोक की रानी और तीवर की माता कारवाकी का भी एक लेख है। गुप्तकाल मे अय बौद्ध केंद्रो की भाति ही कौशाबी का महत्व भी बहुत कम हो गया। गुप्तसवत 139=459 ई० का एक लेख प्रस्तर मूर्ति पर अकित है जो स्कदगुप्त के समय का है और महाराज भीमवर्मन् से सबधित है। चीनी यात्री युवानच्वाग की भारत यात्रा के समय (630 645 ई०) कौशाबी खडहरो की नगरी बन चुकी थी। कनौजाधिप हप के प्रसिद्ध नाटक रत्नावली की मुख्य घटनास्थली कौशाबी ही है। जैन ग्रथ विविधतीर्थकल्प मे भी शतानीक के पुत्र उदयन का उल्लेख है और उसे वत्सनरेश कहा गया है। कालिदी के तट पर स्थित कौशाबी के अनेक वनो का भी उल्लेख है। चदनबाला ने महावीर के सम्मान्नार्थ छ मास का उपवास कौशाबी मे किया था। भगवान् पद्मप्रभु ने यहीं जैनधम मे दीक्षा ली थी। नगरी मे अनेक विशाल शीतल छाया वाले कौशब

वृक्ष थे—'यत्र सिनिद्धछाया कोमवतरुश्रोमहापभागा दीसति'। हाल ही मे प्रयाग विश्वविद्यालय की पुरातत्त्व परिषन् ने कोसम की खुदाई द्वारा अनेक प्राचीन स्थलो को प्रकाश मे लाकर उनका अभिज्ञान किया है। इस सबध मे सबसे अधिक महत्वपूण काय घोपिताराम की खोज है। जैसा ऊपर लिखा जा चुका है घोपिताराम, कौशावी मे बुद्ध का सवप्रिय निवासस्थान था। इसका अभिज्ञान कुछ अभिलेखो की सहायता से किया गया है। इन अभिलेखो से कौशाबी का कासम से अभिज्ञान भी, जिसके विपय मे पहले विद्वानो म काफी मतभेद था, निश्चित रूप से प्रमाणित हो गया है। जिला इलाहाबाद के कडा नामक स्थान से एक अभिलेख प्राप्त हुआ था जिसमे इस स्थान को कौशाबी मडल के अतगत बताया गया है।

(2) (बर्मा)

ब्रह्मदेश मे इरावदा और सालवीन नदिया के बीच का प्रदेश। इसका प्राचीन भारतीय नाम कौशाबी यहा के हिंदू औपनिवशिको न रखा था। शायद य लोग कौशावी निवासी थे।

कौशिकी

(1) वगाल की कोश्या, जो मिदनापुर तालुके मे वहती हुई समुद्र मे गिरती है। 'तत पङ्चाविपवीर वासुदेव महाबलम कौशिकीकच्छनिलय राजान च महौजसम्'— महा० विराट० 30, 22। इसी नदी के किनारे ताम्रलिप्ति नगरी बसी हुई थी। कालिदास ने रघुवश 4, 38 मे शायद कौशिकी का ही 'कपिशा' कहा है। इसी कौशिकी का श्रीमदभागवत 5, 19 18 मे भी उल्लेख है—'ऋपिकुल्या त्रिसामा कौशिकी मदाकिनी यमुना '।

(2) कुरुक्षेत्र की एक नदी। वामनपुराण 39, 6–8 के अनुसार कुरुक्षेत्र मे अनक नदिया प्रवाहित होती हैं—सरस्वती नदी पुण्या तथा वतरणी नदी, आपगा च महापुण्या गगा मदाकिनी नदी, मधुस्रवा अम्लु नदी कौशिकी पापनाशिनी दृपद्वती महापुण्या तथा हिरण्यवती नदी'। कौशिकी और दृपद्वती के सगम का महाभारत 83, 95–96 म उल्लेख है—कौशिक्या सगम यस्तु दृपद्वत्याश्च भारत, स्नाति वै नियताहार सवपापै प्रमुच्यत'।

(3) गोदावरी की सात शाखा नदियो मे से एक। ये हैं—गौतमी, वसिष्ठा, कौशिकी आत्रेयी, वृद्धगौतमी, तुल्या और भारद्वाजो। सप्तगोदावरी का महाभारत वन० 85, 43 मे उल्लेख है—'सप्तगोदावरीं स्नात्वा नियतो-नियताशन ।

(4) महाभारत भीष्म० 9, 18 मे उल्लिखित नदी जिसका अभिज्ञान संदिग्ध है—'कौशिकी त्रिदिवा कृत्या निचिता लोहतारिणीम्'।

(5) गगा की सहायक नदी कोसी जो नेपाल के पहाडो से निकल कर नेपाल और विहार म बहती हुई राजमहल (बिहार) के निकट गगा मे मिल जाती है।

(6) रामगगा (उ० प्र०) की सहायक नदी। यह अल्मोडा के उत्तर के पहाडो से निकलती है और रामपुर के पास बहती हुई रामगगा मे मिल जाती है।

कौइया दे० **कौशिकी** (1)

क्रगनौर (केरल)

परियार-नदी के तट पर बसा हुआ प्राचीन वदरगाह जिसे रोम के लेखको ने मुजीरिस कहा है। ई० सन के प्रारभिक काल मे यह समुद्र पत्तन दक्षिण भारत और रोम साम्राज्य के बीच होने वाले व्यापार का केन्द्र था। इसका एक नाम मरिचीपत्तन या मुरचीपत्तन भी था जिसका अर्थ है 'काली मिर्च का वदरगाह'। 'मुजीरिस' शब्द इसी का रोमीय रूपातर जान पडता है। मुरची पत्तन का उल्लेख महाभारत 2, 31, 68 मे है। इस वदरगाह से काली मिर्च का प्रचुर मात्रा मे निर्यात होता था। दे० तिरुवाचीकुलम्।

क्रथकैशिक

प्राचीन विदर्भ (महाराष्ट्र) का एक भाग। महाभारत 2, 14, 21–22 म क्रथकैशिको पर विदर्भराज भीष्मक की विजय का उल्लेख है। सभवत भीष्मक ने पहली बार क्रथकैशिक देश को अपने राज्य मे मिलाया था—'विद्यावलाद् यो व्यजयत् सपाड्यक्रथकैशिकान् स भक्तो मागध राजा भीष्मक परवीरहा'— इस उल्लेख मे भीष्मक को जरासध का मित्र बताया गया है। ये रुक्मिणी के पिता थे। कालिदास ने रघुवश 5, 39 मे इदुमती के विवाह के प्रसग म विदर्भराज भोज को क्रथकैशिक नरेश कहा है—'अथेश्वरेण क्रथकैशिकाना स्वयवरार्थस्वसुरिदुमत्या आप्त कुमारानयनोत्सुकेन भोजेनदूतो रघवेविसृष्ट'।

क्वारी दे० **कुमारी**

क्रुमु—कुरम

यह सिंध की सहायक नदी है। दोनो का सगम जलालाबाद के पास है। इसका उल्लेख ऋग्वेद 10, 75 के प्रसिद्ध नदी सूक्त मे है—'त्व सिंधो कुभया गोमती क्रुमु मेहत्न्वा सरथ याभिरीयसे'। नदी सूत्र मे गधार और पचनद की सभी प्रसिद्ध नदियो तथा गगा और यमुना का भी उल्लेख है।

क्रोकल=कराची

क्रोड देश=कुर्ग

क्रौंच

(1) क्रौंच द्वीप। पौराणिक भूगोल की उपकल्पना के अनुसार पृथ्वी के सप्त महाद्वीपो में से एक। इस द्वीप में क्रौच नामक पर्वत स्थित है। यहा के निवासियो को जलदेवता या वरुण का पूजक बताया गया है। इसके चतुर्दिक क्षीर समुद्र है—'जबूप्लक्षाह्वयौ द्वीपौ शाल्मल श्चापरो द्विज, कुश क्रौच स्तथाशाक पुष्करश्चैव सप्तम' विष्णु० 2,2, 5। क्रौचपर्वत की स्थिति के अनुसार क्रौच द्वीप को तिब्बत का एक भाग समझना चाहिए। देखिए क्रौंच (2)।

(2) विष्णुपुराण 2, 4 50-51 मे उल्लिखित क्रौच द्वीप के सप्तपर्वतो मे से एक—'क्रौचश्चवामनश्चैवतृतीयश्चाधकारक चतुर्थो रत्नशैलश्च स्वाहिनीहयसन्निभ'। यह पर्वत हिमालय का एक भाग है। पौराणिक कथा से ज्ञात होता है कि परशुराम ने धनुर्विद्या समाप्त करने के पश्चात हिमालय मे बाण मारकर आरपार एक मार्ग बना दिया था। इस मार्ग से ही मानसरोवर से दक्षिण की ओर आने वाले हस गुजरते थे। इस मार्ग को क्रौच रध्र कहते थे। वाल्मीकि रामायण, किष्किधा० 43 20 मे सुग्रीव न सीता के अन्वेषणार्थ वानर सेना को उत्तर की ओर भेजते हुए तत्स्थानीय अनेक प्रदेशो का वर्णन करते हुए कैलाश से कुछ दूर उत्तर की ओर स्थित क्रौचगिरि का उल्लेख किया है—'क्रौच तु गिरिमासाद्य बिल तस्य सुदुर्गमम अप्रमत्तै प्रवेष्टव्य दुष्प्रवेश हि तत्स्मृतम' अर्थात क्रौच पर्वत पर जाकर उसके दुर्गम बिल पर पहुच कर उसमे बडी सावधानी से प्रवेश करना, क्योकि यह मार्ग बडा दुस्तर है—'पुन क्रौंचस्य तु गुहाश्चा या सानूनि शिखराणि च, दर्दराश्च नितबाश्च विचेतव्यास्ततस्तत' किष्किधा० 43 27 अर्थात् क्रौच पर्वत की दूसरी गुहाओ का तथा शिखरो और उपत्यकाओ को भी अच्छी तरह खोजना। क्रौचगिरि के आगे मैनाक का उल्लेख है—'क्रौच गिरिमतिक्रम्य मैनाको नाम पर्वत' किष्किधा० 43, 29। मेघदूत (उत्तर मेघ 59) मे भी क्रौच-रध्र का सुदर वर्णन है—'प्रालेयाद्रेरुपतटमतिक्रम्यतास्तान विशेषान् हसद्वार भृगुपति यशोवर्त्म यत्क्रौंचर ध्रम'। अर्थात् हिमालय के तट मे क्रौच रध्र नामक घाटी है जिसमे होकर हस आते-जाते हैं, वही परशुराम के यश का मार्ग है। इसके अगले छन्द 30 मे कैलास का वर्णन है। इस प्रकार वाल्मीकि और कालिदास दोनो ने ही क्रौंचपर्वत तथा क्रौच रध्र का उल्लेख कैलास के निकट किया है। अन्यत्र भी 'कैलासे धनदावासे क्रौच क्रौंचोऽभिधीयते' कहा गया है। कालि-

दास ने क्रौंच रध्र से संबंधित कथा का रघु० 11, 74 में भी निर्देश किया है—'विभ्रतोऽस्त्रमचलेऽप्यकुंठितम्' अर्थात मेरे (परशुराम के) अस्त्र या बाण का पवन (क्रौंच) भी न रोक सका था। वास्तव में क्रौंच रध्र दुस्तर हिमालय पवन के मध्य और मानसरोवर-कैलास के पास कोई गिरिद्वार है जिसका वर्णन हमारे प्राचीन साहित्य में काव्यात्मक ढंग से किया गया है। हंस और क्रौंच या कुंज आदि हिमालय के पक्षी जाडो में हिमालय की निचली घाटियों को पार करके ही आते दक्षिण की ओर आते हैं। श्री वा० श० अग्रवाल के अनुसार यह अल्मोडा के आगे लीपूनेक का दर्रा है (दे० कादम्बिनी, अक्टूबर '62)।

(3) पंचवटी के निकट एक पहाड, 'गुंजत्कुंजकुटीरकौशिकघटाघुत्कारवत् कीचकस्तम्बाडंबरमूकमौकुलिकुल क्रौंचाभिधोऽयं गिरि' उत्तररामचरित 2 19। इसके निकट ही क्रौंचारण्य स्थित था।

क्रौंचरध्र दे० क्रौंच (2)

क्रौंचारण्य

वाल्मीकि रामायण के अनुसार राम लक्ष्मण सीता की खोज में पंचवटी से चलकर यहां पहुंचे थे—'तत पर जनस्थानात्त्रिक्रोशगम्य राघवौ, क्रौंचारण्य विविशतु गहन तौ महौजसौ'—अरण्य० 69, 5। अर्थात उसके बाद जनस्थान से तीन कोस चलकर तेजस्वी राम और लक्ष्मण ने घने क्रौंच वन में प्रवेश किया—'तत पूर्वेण तौ गत्वा त्रिक्रोश भ्रातरौ तदा, क्रौंचारण्यमतिक्रम्य मतंगाश्रममतरे' अरण्य० 69, 8। अर्थात क्रौंचारण्य को पार करके तीन कोस चलने पर वे मतंगाश्रम पहुंचे। इससे सूचित होता है कि क्रौंचारण्य जनस्थान और मतंगाश्रम के बीच में स्थित था। क्रौंचारण्य के निकट क्रौंच नामक पहाडी की स्थिति थी (दे० क्रौंच 3)। वर्तमान बेल्लारी (मैसूर) से छ मील पूर्व की ओर लोहाचल पर्वत को क्रौंच कहा जाता है। संभव है रामायणकाल में इसके निकटवर्ती वन को क्रौंचारण्य नाम से अभिहित किया जाता हो।

क्लीसोबोरा

चंद्रगुप्त मौर्य के समय में भारत में आए हुए यूनानी राजदूत मेगस्थनीज ने अपने इंडिका नामक ग्रंथ में इस स्थान का शूरसेन लोगो के एक बडे नगर के रूप में उल्लेख किया है। एरियन नामक एक अन्य यूनानी लेखक ने मेगस्थनीज के लेख का उद्धरण देते हुए लिखा है कि शौरसेनाई लोग हराक्लीज (=श्रीकृष्ण) को बहुत आदर की दृष्टि से देखते हैं। इनके दो बडे नगर हैं—मेथारा (मथुरा) और क्लीसोबोरा। उनके राज्य में जोबरस या जामनस (यमुना) नदी बहती है जिसमें नावें चलती हैं। प्राचीन रोम के इतिहास लेखक

प्लिनी ने मेगस्थनीज के लेख का निर्देश करते हुए लिखा है कि जोमनस या यमुना, मेथोरा और क्लीसोबोरा के बीच से बहती है। प्लिनी के लेख से इंगित होता है कि यूनानियों ने शायद गोकुल को ही क्लीसोबोरा कहा है क्योंकि यमुना के आमने सामने गोकुल और मथुरा—ये दो महत्वपूर्ण नगर सदा से प्रसिद्ध रहे हैं। किंतु गोकुल का यूनानी उच्चारण क्लीसोबोरा किस प्रकार हुआ, यह तथ्य संदेहास्पद है। मेक्रिंडल (एशेंट इंडिया एज़ डेस्क्राइब्ड बाई मेगस्थनीज, पृ० 140) के अनुसार क्लीसोबोरा का संस्कृत रूपांतर 'कृष्णपुर' होना चाहिए। यह शायद उस समय गोकुल को जनसामान्य का दिया हुआ नाम हो।

क्विलन (केरल)

त्रिवेंद्रम से 44 मील पर स्थित है। बहुत प्राचीन समय में ही इस नगर का व्यापार पश्चिमी देशों के साथ प्रारंभ हो गया था जिनमें फिनीशिया, ईरान, अरब, यूनान, रोम और चीन मुख्य हैं। तांग राज्यकाल में चीनियों ने क्विलन में अनेक व्यापारिक बस्तियां स्थापित की थीं। इसका प्राचीन नाम कोल्लम था। शायद कोल्लम के प्राचीन नाम कोलगिरि, कोलाचल, कोल्लक आदि हैं जिनका उल्लेख महाभारत में है।

क्षत्रिय (=क्षत) गणराज्य

300 ई० पू० के लगभग पंजाब (वाहीक) का एक गणराज्य, जिसका उल्लेख अलक्षेंद्र के इतिहास लेखकों ने किया है। इसका नाम क्षत्रिय नामक जाति के यहां बसने के कारण हुआ था। मेक्रिंडल के अनुसार इस जाति का नाम क्षत्र था। इसे मनुस्मृति में हीन जाति माना गया है (इन्वेजन ऑव अलेग्ज़ेंडर, पृ० 156)। रायचौधरी के मत में इस जाति का मूलस्थान चिनाब रावी के संगम के पास रहा होगा (पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंशेंट इंडिया—पृ० 207)। यूनानी लेखकों ने इस जाति के नाम का उच्चारण जथराई (Xathroi) लिखा है। पाणिनि ने भी क्षत्रिय गणराज्य का उल्लेख किया है। महाभारत भीष्म० 51, 14 और 106, 8 में उल्लिखित वशाति शायद इसी गण से संबद्ध थे।

क्षाति

विष्णुपुराण 2, 4, 55 के अनुसार क्रौंच द्वीप की एक नदी, 'गौरी कुमुद्वती चैव सध्या रात्रिमनोजवा, क्षातिश्च पुंडरीका च सप्तता वर्षनिम्नगा'।

क्षीरगंगा

केदारनाथ (जिला गढ़वाल, उ० प्र०) के निकट बहने वाली एक नदी।

क्षीरपुर=खेड़ (जिला जोधपुर, राजस्थान)

लूनी नदी के तट पर बालोतरा स्टेशन से पांच मील दूर प्राचीन काल का प्रसिद्ध तीर्थ। यहां के विस्तृत खंडहरों तथा अनेक नष्टभ्रष्ट मूर्तियां तथा अन्य अवशेषों से प्रमाणित होता है कि इस स्थान पर पहले एक बड़ा नगर बसा हुआ था। परवर्ती काल के कई मंदिर यहां आज भी हैं।

क्षीरसमुद्र

पुराणों की भौगोलिक कल्पना के अनुसार पृथ्वी के सप्तसागरों में से एक है। यह क्रौंचमहाद्वीप के चतुर्दिक् स्थित है। विष्णु० 2, 2, 6 में इसे दुग्ध-सागर कहा है। क्षीरसागर को पुराणों में भगवान विष्णु का शयनागार कहा गया है।

क्षीरोदा=खिरोई नदी (बिहार)

मिथिला में गौतमाश्रम के समीप बहने वाली नदी जिसका जल दुग्ध की भांति श्वेत और स्वादु कहा जाता है।

क्षुद्रक गणराज्य

अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के समय तथा उससे पूर्व अर्थात 320 ई० पू० के लगभग, क्षुद्रक गणराज्य की स्थिति रावी और बियास नदियों के मध्य-वर्ती प्रदेश में (जिला मांटगोमरी, प० पाकि० के अंतर्गत) थी। यूनानी लेखक एरियन ने क्षुद्रकों (Oxydrakai) की शासन व्यवस्था में उनके नगरमुख्यों तथा प्रांतीय शासकों का उल्लेख किया है। क्षुद्रकगण पंजाब के सभी गणों से अधिक सामर्थ्यवान् था तथा इनके सैनिक वीरता में किसी से कम न थे। पाणिनि ने भी क्षुद्रकों का उल्लेख किया है।

क्षुरमाली

शूर्पारक जातक में इस समुद्र का वर्णन जो अधिकांश में कल्पना रंजित है, इस प्रकार है—'भरुकच्छापयातानं वणिजानंधनेसिनं, नावाय विप्पनट्ठाय खुरमालीति वुच्चतीति' ('भरुकच्छात प्रयातानां वणिजां धनैषिणाम्, नावा विप्रणष्टया क्षुरमालीति उच्यते') अर्थात भरुकच्छ (भड़ौच) से जहाज पर निकले हुए धनार्थी वणिकों को विदित हो कि इस (समुद्र) का नाम क्षुरमाली है। इससे पूर्व इसी संदर्भ में वणिकपोत का भृगुकच्छ से चलकर चार मास तक समुद्र में यात्रा करने के पश्चात क्षुरमाली समुद्र में पहुंचने का वर्णन है। इस संदर्भ में मनुष्य के समान नासिका वाली तथा छुरे के समान नासिका वाली मछलियों का पानी में डूबने उतराने का वर्णन है। इस समुद्र में हीरे की उत्पत्ति भी कही गई है। डॉ० मोतीचंद के मत में फारस की खाड़ी के

समुद्र को पाली जातकों में क्षुरमाल (या क्षुरमाली) कहा गया है। किंतु जातक का यह वर्णन काल्पनिक तथा अतिरंजित जान पड़ता है तथा प्राचीनकाल में देश देशांतर घूमने वाले नाविकों की रोमांचकथाओं पर आधृत प्रतीत होता है। जातक कथाओं के काल में (पांचवीं शती ई०) भृगुकच्छ अथवा भड़ौच के व्यापारीगण प्रायः यवद्वीप—जावा—तथा उसके निकटवर्ती द्वीपों में आते जाते रहते थे। शूर्पारक जातक में इसी मार्ग में पड़ने वाले समुद्रों का काल्पनिक एवं अतिरंजित वर्णन है। क्षुरमाली के अतिरिक्त इस संदर्भ में अग्निमाली, कुशमाल, नलमाल आदि समुद्रों का भी रोमांचकारी वृत्तांत है।

क्षेमक

विष्णुपुराण 2, 4, 5 के अनुसार प्लक्षद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा मेधातिथि के पुत्र के नाम पर क्षेमक कहलाता था।

खंडगिरि (उड़ीसा)

भुवनेश्वर से सात मील तथा शिशुपालगढ़ के खंडहरों से छः मील पश्चिम की ओर उदयगिरि के निकट एक पहाड़ी है जिसकी गुहाओं में प्राचीन अभिलेख हैं। ये जैन संप्रदाय से संबंधित हैं। जैन तीर्थंकर महावीर यहां कुछ काल पर्यंत रहे थे, ऐसी किंवदंती है। यह देश प्राचीनकाल में कलिंग के अंतर्गत था। कलिंगराज खारवेल का प्रसिद्ध अभिलेख हाथीगुफा में है जो यहां से कुछ ही दूर है।

खड़हर

महाराष्ट्र-केसरी शिवाजी के समय में खड़हर चंबल तथा नर्मदा के मध्यवर्ती प्रदेश में सुल्तानपुर के निकट स्थित एक कस्बे का नाम था। हिंदी के प्रसिद्ध कवि भूषण ने इसका उल्लेख किया है—'उत्तरपहार विधनोल खड़हर झारखंडहू प्रचार चारु केली है विरद की'।

खडु

पाणिनि 4, 2, 77। सिल्वेन लेवी के अनुसार यह वर्तमान खुंड (जिला अटक) है।

खंभात=स्तंभतीर्थ (जिला कैरा, गुजरात)

जैन अनुश्रुति के अनुसार, इस स्थान का नामकरण स्तंभन पार्श्वनाथ के नाम पर हुआ है। यहां इनकी रत्न निर्मित मूर्ति भी प्राप्त हुई है। इस स्थान से हाल ही में पूर्व-सोलंकीकालीन (10वीं शती ई०) के मंदिर के अवशेष उत्खनन द्वारा प्रकाश में लाए गए है, जिसका श्रेय कलकत्ता विश्वविद्यालय के श्री निर्मल कुमार बोस तथा वल्लभ विद्यानगर के श्री अमृत पांड्या को है। स्तंभतीर्थ

का महाभारत मे उल्लेख है—दे० रतब (—भ)—तीथ और नबावती।

खखूद (जिला गोरखपुर)

नूनखार स्टेशन से तीन मील पर यह ग्राम जैन तीर्थंकर पुष्पदत का जन्म स्थान माना जाता है।

खजुराहो (जिला छतरपुर, म०प्र०)

प्राचीनकाल मे खजुराहो जुझौति या बुदेलखड का मुख्य नगर था। चदेल राजपूतो ने मध्यकाल म इस नगर को सुन्दर मदिरो से अलकृत किया था। चदेलो के राज्य की नीव आठवी शती ई० मे महोबा के चदेल नरेश चद्रवर्मा न डाली थी। तब से लगभग पाच शतियो तक चदेलो की राज्यसत्ता जुझौति मे स्थापित रही। इनका मुख्य दुग कालिजर तथा मुख्य अधिष्ठान महोबा म था। खजुराहो मे जो मदिर इन्होने बनवाए उनमे से तीस आज भी स्थित हैं। इनमे आठ जन मदिर भी है। जैन मदिरो की वास्तुकला अन्य मदिरो के शिल्प से मिलती जुलती है। सबसे बडा मन्दिर पाश्वनाथ का है जिसका निर्मिति काल 950 1050 ई० है। यह 62 फुट लबा और 31 फुट चौडा है। इसकी बाहरी भित्तियो पर तीन पक्तियो मे जैन मूर्तिया उत्कीण हैं। कनिघम के मत मे गटाई नामक मदिर बौद्धधम से सम्बधित है किंतु यह तथ्य ठीक नहीं जान पडता। अधिकाश मदिरो का निर्माणकाल स्थूल रूप से 10 वी 11वी शती ई० है। खजुराहो के मन्दिरो म सवश्रेष्ठ कडरिया महादेव का मन्दिर है। यह 109 फुट लबा, 60 फुट चौडा और 116 फुट ऊचा है। इसके सभी भाग—अधमण्डप, मण्डप महामण्डप, अतराल तथा गभगृह आदि, वास्तुकला के बजोड नमूने हैं। मदिर के प्रत्यक भाग मे परमोत्कृष्ट मूर्तिकारी अकित है और प्रत्यक स्थान पर मूर्तियो का जमघट सा जान पडता है, यहा तक कि कनिघम की गणना के अनुसार इस मन्दिर म केवल दो और तीन फुट ऊची मूर्तियो की सख्या ही 872 है। छोटी मूर्तिया तो असख्य है। मुख्य मदिर तथा मण्डपो के शिखरो पर आमलक स्थित हैं। ये शिखर उत्तरोत्तर ऊचे होते गए है और इस लिए बडे प्रभावोत्पादक तथा आकषक दिखाई देते हैं। मन्दिरो की मूर्तिकला की सराहना सभी पयवेक्षको ने की है। मन्दिर का 'अपूव सौदय, सुडौल आकार प्रकार, काफी विस्तार और चित्रकार की कूचो को लज्जित करनेवाला बारीक नक्काशी का काम देख कर चकित होना पडता है—(गोरेलाल तिवारी—बुन्देलखण्ड का सक्षिप्त इतिहास, पृ० 67)। खजुराहो के मन्दिर म तीन बडे शिलालेख हैं जो चदेल नरेश गड और यशोवमन् के समय के हैं। 7वी शती मे चीनी यात्री युवानच्वाग ने खजुराहो की यात्रा की थी। उसने इस
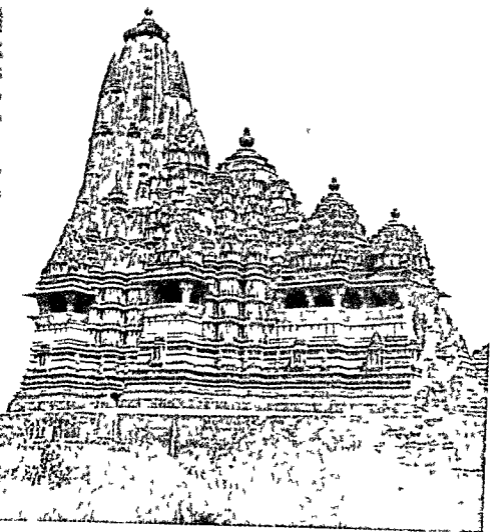
खजुराहो कडरिया महादेव का मदिर
(भारतीय पुरातत्त्व विभाग के सौजन्य से)

समय भी अनेक मन्दिरो को यहा देखा था। चौसठ योगिनियो का मदिर शायद 7वी शती का ही है। पिछली शती तक खजुराहो मे सबसे अधिक सख्या मे मदिर स्थित थे किन्तु इस बीच मे वे नष्ट हो गए हैं। वास्तु और मूर्तिकला की दृष्टि से खजुराहो के मन्दिरो को भारत की सर्वोत्कृष्ट कलाकृतियो मे स्थान दिया जाता है। यहा की शृगारिक मुद्राओ मे अकित मिथुन मूर्तियो की कला पर सभवत तात्रिक प्रभाव है, किंतु कला का जो निरावृत और अछूता सौंदय इनके अकन मे निहित है उसकी उपमा नही मिलती। इन मदिरो के अलकरण और मनोहर आकार-प्रकार की तुलना मे केवल भुवनेश्वर के मदिर की कला टिक सकती है।

खजुवा (जिला फतहपुर, उ०प्र०)

बिदकी के पास एक ग्राम जहा औरगजेब और उसके भाई शाहशुजा म मुगल गद्दी के उत्तराधिकार के लिए युद्ध हुआ था (1658 ई०)। शाहशुजा पराजित होकर बगाल-असम की ओर भाग गया। यहा का 'बाग-बादशाही' उसी काल का स्मारक है। शिवाजी के राजकवि भूषण ने खजुवा के युद्ध का उल्लेख किया है—'दारा की न दौर यह रारि नही खजुवे की, बाधिबो नही है किधौं मीर सहवाल को'—शिवा बावनी 24।

खज्जर (हिमाचल प्रदेश)

यह स्थान समुद्रतल से 6400 फुट ऊचा बसा है और चवा डल्हौजी माग पर, चवा से 9 मील है। यहा देवदार वृक्षों से घिरी हुई एक सुन्दर छोटी सी रमणीय भील है जिसके बीच मे एक द्वीप है। स्थान का नाम अतिप्राचीन खाजी नाग के मदिर के नाम पर पडा है। यहाँ नागपचमी को मेला लगता है। यह स्थान प्राचीन नाग जाति से सम्बन्धित है। कुछ विद्वानो का मत है कि आर्यों के भारत मे आगमन से पूर्व कश्मीर और पजाब के पर्वतीय इलाकों म नागजाति के लोगो का निवास था। खज्जर का प्राकृतिक सौंदय अद्भुत है। लॉर्ड कर्जन ने 1900 ई० मे खज्जर की नैसर्गिक छटा पर मुग्ध होकर इसे भारत का सुन्दरतम स्थान बताया था।

खडडवलि (जिला गोदावरी, आ० प्र०)

इस स्थान का उल्लेख दक्षिण भारत के सातकर्णी सातवाहन नरेशो के अभिलेखो (द्वितीय शती ई०) मे अमात्य के मुख्य स्थान या अधिष्टान के रूप मे है।

खनिवरा

थानेसर (पंजाब) से 3 मील पर स्थित है। किंवदंती है कि अर्जुन और किरात रूपी शिव में इसी स्थान पर युद्ध हुआ था। इस युद्ध का स्मारक बजरंग महादेव का मंदिर बताया जाता है। इस युद्ध का उपाख्यान महाकवि भारवि के किरातार्जुनीयम् नामक महाकाव्य का मुख्य विषय है। (किंतु दे० किरातकूप)

खपरा कोडिया (जूनागढ़, गुजरात)

इस स्थान पर कई प्राचीन गुहा मंदिर हैं जो पूर्वकाल में मठों के रूप में काम में आते थे। इनके भीतर सपाट दालानों का अपना अपूर्व है। उपरकोट नामक स्थान में एक दो खंडी गुहा है जिसके नीचे का द्वार ग्यारह फुट ऊंचा है। ऊपरले खंड में एक तालाब है जिसका चतुर्दिक् का सकीर्ण भाग है। डा० बर्जेस के अनुसार इन गुहा मंदिरों के स्तम्भ बड़ी कलात्मक और अनार्य शैली में निर्मित हैं।

खम्म=खम्ममेट (जिला वारंगल, आ० प्र०)

11वीं शती में हिंदू राजाओं का बनवाया हुआ एक किला यहां का मुख्य आकर्षण है। इसकी कासीमी शिलाशास्त्रियों ने मरम्मत करवाई थी। इसमें कई तोपें भी हैं। इस स्थान के निकट प्रागैतिहासिक अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

खरौद (जिला बिलासपुर, म० प्र०)

बिलासपुर से 42 मील दूर है। किंवदंती में इसे खर दूषण का निवास-स्थान बताया जाता है।

खलतिक पर्वत=बराबरपहाड़ी (जिला गया, बिहार)

खलतिक पर्वत (पाली नाम) का अशोक के बराबर गुहा अभिलेख में उल्लेख है। यहां की गुफाओं को इस मौर्य सम्राट ने अपने शासनकाल के 12वें और 19वें वर्ष में आजीवक सम्प्रदाय के साधुओं के लिए दान में दिया था जिससे उसकी उदार धार्मिक नीति का ज्ञान होता है।

खलारी (छत्तीसगढ़, म० प्र०)

14वीं शती में रतनपुर के कलचुरि नरेशों की एक शाखा खलारी में राज्य करती थी। इसी वंश के नायक सिंहा ने 14वीं शती में अपनी राजधानी रायपुर में बनाई थी। सिंहा के पौत्र ब्रह्मदेव का एक शिलालेख खलारी से प्राप्त हुआ था जिसकी तिथि 1401 ई० है। यह अभिलेख नागपुर के संग्रहालय में है।

खलीलाबाद (जिला बस्ती, उ० प्र०)

खलीलाबाद स्टेशन से 6 मील दूर कुदवा नाला बहता है जिसे गौतम बुद्ध के जीवन चरित से सम्बन्धित अनोमा नदी कहा जाता है। तामेश्वरनाथ का

मंदिर यहा से थोडी दूर पर है। इससे तीन मील पर सम्भवत अशोक के तीन स्तूपो के खडहर स्थित हैं।

खसमडल

कुमायू (उ० प्र०) का एक भाग। खस जाति के लोग मध्यहिमालय प्रदेश के प्राचीन निवासी है। नेपाल मे भी इनकी सख्या काफी है। 10वी शती से 13वी शती ई० तक भारत के कई राजपूत वशो ने इस प्रदेश मे आकर शरण ली थी और छोटी छोटी रियासतें स्थापित कर ली थी। पुराणो मे खसजाति की अनार्य या असस्कृत जातियो मे गणना की गई है। बरनौफ (Burnouf) के अनुसार, दिव्यावदान (पृ० 372) म खसराज्य का उल्लेख है। तिब्बत के इतिहास लेखक तारानाथ ने भी खसप्रदेश का उल्लेख किया है (इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वाटरली, 1930, पृ० 334)।

खाण्डवप्रस्थ

यह हस्तिनापुर के पास एक प्राचीन नगर था जहा महाभारतकाल से पूर्व पुरूरवा, आयु, नहुष तथा ययाति की राजधानी थी। कुरु की यह प्राचीन राजधानी बुधपुत्र के लोभ के कारण मुनियो द्वारा नष्ट कर दी गई। युधिष्ठिर को, जब प्रारम्भ मे, द्यूत क्रीडा से पूर्व, आधा राज्य मिला था तो धृतराष्ट्र ने पाण्डवो से खाडवप्रस्थ म अपनी राजधानी बनाने तथा फिर से उस प्राचीन नगर को बसाने के लिए कहा था—'आयु पुरूरवा राजन नहुषश्च ययातिना, तत्रैव निवसन्ति स्म खाण्डवाह्वे नृपोत्तम। राजधानी तु सर्वेषा पौरवाणा महाभुज, विनाशित मुनिगणैर्लोभाद् बुधसुतस्य च। तस्मात्त्व खाडवप्रस्थ पुर राष्ट्र च वर्धय'—महा० आदि० 206 दक्षिणात्य पाठ। तत्पश्चात् पाण्डवो ने खाडवप्रस्थ पहुच कर उस प्राचीन नगर के स्थान पर एक घोर वन देखा—'प्रतस्थिरे ततो घोर वन तन्मनुजर्षभा अर्धराज्यस्य सप्राप्य खाडवप्रस्थमाविशन्' आदि० 206, 26 27। खाडवप्रस्थ के स्थान पर ही इन्द्रप्रस्थ नामक नया नगर बसाया गया जो भावी दिल्ली का केंद्र बना—'विश्वकर्मन् महाप्राज्ञ अद्यप्रभृतितत्पुरम्, इन्द्रप्रस्थमितिख्यात दिव्य रम्य भविष्यति'। खाडवप्रस्थ के निकट ही खाडववन स्थित था जिसे श्रीकृष्ण और अर्जुन ने अग्निदेव की प्रेरणा से भस्म कर दिया। खाडवप्रस्थ का उल्लेख अन्यत्र भी है। पचविशब्राह्मण 25 3,6 मे राजा अभिप्रतारिन् के पुरोहित दृति द्वारा खाडवप्रस्थ मे किए गए यज्ञ का उल्लेख है। अभिप्रतारिन् जनमेजय का वशज था। जैसा पूर्व उद्धरणो से स्पष्ट है, खाडवप्रस्थ की स्थिति वर्तमान नई दिल्ली के निकट रही होगी। प्राचीन इन्द्रप्रस्थ पाडवो के पुराने किले के निकट

बसा हुआ था। (दे० इन्द्रप्रस्थ, हस्तिनापुर)।

खाडववन दे० खाडवप्रस्थ

खाडवप्रस्थ के स्थान पर पाडवो की इद्रप्रस्थ नामक नई राजधानी बनने के पश्चात अग्नि ने कृष्ण और अर्जुन की सहायता से खाडववन को भस्म कर दिया था। निश्चय ही इस वन मे कुछ अनाय जातियो—जैसे नाग और दानव लोगो का निवास था जो पाडवो की नई राजधानी के लिए भय उपस्थित कर सकते थे। तक्षकनाग इसी वन मे रहता था और यही मयदानव नामक महान यात्रिक का निवास था जो बाद मे पाडवो का मित्र बन गया और जिसने इन्द्रप्रस्थ मे युधिष्ठिर का अदभुत सभाभवन बनाया। खाडववन दाह का प्रसग महाभारत आदि० 221-226 मे सविस्तर वणित है। कहा जाता है कि मयदानव का घर वतमान मेरठ (मयराष्ट्र) के निकट था और खाडववन का विस्तार मेरठ से दिल्ली तक, 45 मील के लगभग था। महाभारत मे जलते हुए खाडववन का बडा ही रोमाचकारी वणन है—'सवत परिवार्याथ सप्तार्चिज्वलनस्तथा ददाह खाडव दाव युगातमिव दर्शयन्, प्रतिगह्य समाविश्य तद्वन भरतपभ मेघस्तनित निर्घोप सवभूता यकम्पयत। दह यतस्तस्य च वभौ रूपदावस्य भारत, मेरोरिव नगेंद्रस्य कीणस्याशुमतोऽशुभि' आदि० 224, 35 36 37। खाडव के जलते समय इद्र ने उसकी रक्षा के लिए घोर वृष्टि की किंतु अजुन और कृष्ण ने अपने शस्त्रास्त्रो की सहायता से उसे विफल कर दिया।

खाक

उत्तर बौद्धकालीन गणतत्र राज्य, जो वतमान ग्वालियर इदौर क्षेत्र म था —दे० काक।

खादातवार

गुप्तसाम्राज्य का एक विषय या प्रदेश जिसका उल्लेख गुप्त अभिलेखो म है (रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंशेंट इडिया, पृ० 472)।

खानदेश

नमदा के दक्षिण मे स्थित मुगलकालीन सूबा। खानदेश प्राचीनकाल म महिष्मडल मे सम्मिलित था।

खारो (हिंगोली तालुक, जिला परभणी, महाराष्ट्र)

पहाडी की चोटी पर रमजानशाह का मदिर है जिसकी यात्रा हिंदू मुसल्मान दोनो ही करत हैं। इसके चारो ओर 30 फुट ऊचा और 1200 फुट लबा पर कोटा है।

खिजराबाद (जिला सहारनपुर)

तोपरा जहा पहले वह अशोक स्तभ था जिसे फिरोजशाह तुगलक दिल्ली ले गया था, इस स्थान के निकट ही है।

खिदरापुर (महाराष्ट्र)

कोल्हापुर से तीस मील पूर्व-दक्षिण की ओर बसाया हुआ एक ग्राम है जो विंसेंट स्मिथ के अनुसार प्राचीन कोप्पम है। यहा कोपेश्वर महादेव का मदिर नदी तट पर अवस्थित है। कोप्पम के निकट 1052 ई० मे चालुक्य नरेश सोमेश्वर प्रथम या आहवमल्ल ने राजाधिराज चोल को युद्ध मे पराजित किया था। राजाधिराज इस लडाई मे मारा गया था।

खिमलासा (जिला सागर, म० प्र०)

गढमडला की रानी दुर्गावती के श्वसुर सग्रामसिंह के 52 गढो मे से एक यहा स्थित था। इन्ही गढो के कारण दुर्गावती का राज्य गढमडला कहलाता था। सग्रामसिंह की मृत्यु 1541 ई० मे हुई थी।

खिरोई—क्षीरोदा

खिलचीपुर (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

यह स्थान गुप्तकालीन मदिरो के अवशेषो के लिए उल्लेखनीय है। एक मदिर के भग्नावशेष से मथुरा की कुषाण कलाशैली मे निर्मित एक स्तभ प्राप्त हुआ था जिस पर मौर्यकालीन विकसित कमल का चिह्न अकित है (आर्कियोलॉजीकल रिपोर्ट, 1925-26)।

खुड दे० खड्ड

खुर्जा (जिला मेरठ, उ० प्र०)

खुर्जा मे मुसलिम सत मखदूम का मकबरा प्राय चार सौ वर्ष प्राचीन है। यह यहा की ऐतिहासिक इमारत है।

खुर्दा (उडीसा)

कटक के 25 मील दूर है। यहा एक प्राचीन दुर्ग के अवशेष है और जगन्नाथपुरी के प्राचीन राजाओ के भवन भी अभी तक स्थित हैं। खुर्दा मे हाटकेश्वर का मदिर है।

खुल्दाबाद (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

दौलताबाद से चार मील पश्चिम मे है। यह नगर अनेक बादशाहो, दरवारियो एव सतो का समाधिस्थल है। यहा की समाधियो म चिरनिद्रा मे सोने वालो मे ये मुख्य हैं मुगल सम्राट औरगजेब, गोल्कुडा का अतिम सुल्तान अबुलहसन तानाशाह, अहमदशाह और बुरहान शाह (निजामशाही सुलतान),

उल्लेखनीय है।

खैबर (प० पाकिस्तान)

भारतीय इतिहास मे अंग्रेजो से पूर्व आने वाले अनेक विजातीयो ने खैबर के प्रसिद्ध दर्रे से होकर ही भारत मे प्रवेश किया था। यह दर्रा पेशावर के उत्तर पश्चिम मे स्थित है और अफगानिस्तान और प० पाकिस्तान के बीच का द्वार है। होल्डिश (दि इंडियन बॉडरलैंड—पृ० 38) के अनुसार मुसलमानो के पहले भारत मे पश्चिमोत्तर से आने वाली सडक खैबर से होकर नही आती थी। अलक्षेन्द्र की सेनाएं भी काबुल नदी की घाटी मे होकर भारत मे प्रविष्ट हुई थी न कि खैबर के मार्ग से। इतिहास से सूचित होता है कि महमूद गजनी ने खैबर दर्रे से होकर केवल एक बार भारत मे प्रवेश किया था। बाबर और हुमायूं कई बार खैबर से होकर आए और गए। 18वी शती मे नादिरशाह, अहमदशाह अब्दाली और उसका पौत्र शाह जमान इसी मार्ग से भारत मे आए थे। (दे० वायु)

खोतन

मध्य एशिया की एक नदी तथा उसका तटवर्ती प्रदेश। खोतन नदी को महाभारत मे शैलोदा कहा गया है। (दे० शैलोदा)। महाभारत सभा० 52,2 तथा सभा० 52,3 मे इस नदी के तट पर स्थित खस, पुलिंद, तगण आदि जातियो का उल्लेख है।

खोतान दे० भद्राश्व

खोर (जिला मंदसौर म० प्र०)

कई मंदिरो के खंडहर इस स्थान से प्राप्त हुए हैं जिनमे सबसे विशाल-मंदिर 11वी शती का है। इसे स्थानीय लोग नौतोरन कहते है। इसके दस तोरण है जो लंबाई मे दो पंक्तियो मे सजे हैं। दोनो पंक्तियां परस्पर व्यत्यस्त है। छः तोरण लंबाई मे उत्तर से दक्षिण और शेष चार चौडाई मे उत्तर से दक्षिण की ओर बने हैं। इनके आधारभूत स्तंभो के शीर्ष मकराकार हैं। तोरणो के सिरे मकरो के खुले हुए मुखो से निकलते हुए जान पडते हैं। मकरो के शिर स्तंभो मे बने हुए सिंहो पर टिके हैं। तोरणो पर दो पत्राकार किनारियां और बीच मे माला-वाहिनियो के अलंकरण सहित पट्टी अंकित है। ये तोरण गिनती मे दस है न कि नौ, यद्यपि जनसाधारण मे मंदिर को नौतोरन कहा जाता है।

खोलदियाद (सौराष्ट्र, गुजरात)

सुरेंद्रनगर से आठ मील पर स्थित है। यहां पर हाल ही मे एक कुएं से

मे ही सबधित हैं । चौथे का विवरण नष्ट हो गया है। पाचवें मे सवनाथ द्वारा मागिक पेठ मे स्थित व्याघ्रपल्लिक तथा काचरपल्लिव नामक ग्रामो का पिष्ठपुरिका दवी के मदिर के लिए दान म दिए जाने का उल्लेख है। इसकी तिथि गु० स 214=533 ई० है। इसमे जिस मानपुर का उल्लेख है वह स्थान फ्लीट के मत म, सोन नदी के पास स्थित ग्राम मानपुर है। खोह के दान पट्टो से गुप्त कालीन शासन व्यवस्था के अतिरिक्त उस समय की धार्मिक पद्धतियो तथा देवी-देवताओ के विषय म भी काफी जानकारी प्राप्त होती है।

गगईकोंडचोलपुरम (उदयारपलयम तालुका, जिला त्रिचिरापल्ली, मद्रास)

चोलवश के प्रतापी राजा राजेंद्रचाल (1101-1144 ई०) की राजधानी। 1955 56 के उत्खनन म पुरातत्वविभाग को इस स्थान पर एक प्राचीन दुग की भित्ति के अवशेष प्राप्त हुए हैं। इसकी लबाई 6000 फुट उत्तर दक्षिण और 4500 फुट पूव पश्चिम की ओर है। दुग के अदर 1700 फुट लबा और 1300 फुट चौडा राजप्रासाद था। दुग के बाहर उत्तरपूव के कोने मे बृहदीश्वर का प्रसिद्ध मदिर था। दुग और मदिर के बीच म कारवट्ट नामक नदी बहती थी। वतमान मदिर का शिखर भूमि से 174 फुट ऊचा है। यह तजार के प्रसिद्ध मदिर की शैली के अनुरूप बना है। मदिर के पास सिहतीथ नामक कूप है जिसे राजेन्द्र चाल ने बनवाया था। यह नगर चाल राजाओ के शासनकाल मे बहुत उन्नत तथा समृद्ध था। नगर का नाम सभवत राजेन्द्र चोल ने गगा के तटवर्ती प्रदेश की विजय के स्मारक के रूप मे गगईकोंडचोलपुरम् रखा था।

गगवती

महाभारत म उल्लिखित (एक पाठ के अनुसार) गाकण तीथ (वन० 88,15) के पास बहने वाली नदी। गगवती और समुद्र के सगम पर यह तीथ स्थित था। अन्य पाठो मे गगवती के स्थान पर ताम्रपर्णी नदी का उल्लेख है।

गगवाडी

मैसूर का प्राचीन नाम। यह नाम गगवशी नरेशो का मैसूर प्रदेश मे राज्य होने के कारण पडा था। मैसूर मे इनका शासनकाल 5वी शती ई० से 10वी शती तक रहा था। गगनरेशो का राज्य उडीसा तक विस्तृत था। इनके समय के अनेक अभिलेख इस क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं।

गगा

उत्तरी भारत की सवप्रसिद्ध नदी जो गगोत्री पहाड से निकल कर उत्तर प्रदेश, बिहार और बगाल मे बहती हुई गगासागर नामक स्थान पर समुद्र मे मिल जाती है। कालिदास ने पूवमघ (मघदूत) 65 मे गगा का कैलासपवत (मान-

सरोवर के पास, तिब्बत) की गोद में अवस्थित बतलाया है जिससे पौराणिक परपरा मे गगा का, भारत की कई अन्य नदियो (सिधु, पजाब की पाचो नदिया, सरयू, तथा ब्रह्मपुत्र आदि) के समान मानसरोवर से उद्भूत होना सूचित होता है। गगा का एक मूल स्रोत वास्तव मे मानसरोवर ही है। कालिदास ने अलका की स्थिति गगा के निकट ही मानी है। तथ्य यह है कि हिमालय मे गगा की कई शाखाए हैं। सीधी धारा तो गगोत्री से देवप्रयाग होती हुई हरद्वार जाती है और अन्य कई धाराए जैसे भागीरथी, अलकनदा, मदाकिनी, नदाकिनी आदि विभिन्न पर्वत शृगो से निकल कर पहाडो मे ही मुख्य धारा से मिल जाती हैं। गगा की जो धारा कैलाश और बदरिकाश्रम मार्ग से बहती आई है उसे अलकनदा कहते हैं। कालिदास की अलका इसी अलकनदा गगा के किनारे स्थित रही होगी जैसा कि नाम साम्य से भी सूचित होता है।

गगा का सर्वप्राचीन साहित्यिक उल्लेख ऋग्वेद के नदी सूक्त 10,75 में है। 'इमे मे गगे यमुने सरस्वती शुतुद्रिस्तोम सचता परुष्णया असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया।' गगा का नाम किसी अन्य वेद मे नहीं मिलता। वैदिक काल में गगा की महिमा इतनी नहीं थी जितनी सरस्वती या पजाब की अन्य नदियो की, क्योकि वैदिक सभ्यता का मुख्य केन्द्र उस समय तक पजाब ही म था।

रामायण के समय गगा का महत्व पूरी तरह से स्थापित हो गया था। वाल्मीकि ने राम के वन जाते समय उनके गगा को पार करने के प्रसग म गगा का सुदर वर्णन किया है जिसका एक अश निम्नलिखित है—

'तत्र त्रिपथगा दिव्या शीततोयामशैवलाम ददर्श राघवो गगा रम्यामृषि निषेविताम। देवदानवगधर्वै किन्नरैरुपशोभिता नागगधर्वपत्नीभि सेविता सतत शिवाम। जलाघाताट्टहासोग्रा फेननिर्मलहासिनी क्वचिद्वेणीकृतजला क्वचिदावर्तशोभिताम्'—अयोध्या 50, 12–14–16। 'शिशुमारैश्चनक्रैश्च भुजगैश्च समन्विता शकरस्य जटाजूटाद्भ्रष्टामागरतेजसा। समुद्रमहिषी गगा सारसक्रौंच नादिताम आससाद महाबाहु शृगवेरपुर प्रति'—अयोध्या० 50, 25–26। इस वर्णन से स्पष्ट है कि गगा को रामायण के समय मे ही शिव के जटाजूट से निस्सृत, देवताओ और ऋषियो से सेवित, तीनो लोको म प्रवाहित होने वाली (त्रिपथगा) पवित्र नदी माना जाने लगा था। अयोध्या० 52, 86–87–88–89–90 मे कुशलपूर्वक वन से लौट आने के लिए सीता ने गगा की जो प्रार्थना की है उससे भी स्पष्ट है कि गगा को उसी काल मे पवित्र तथा फलप्रदायिनी नदी समझा जाने लगा था। उपर्युक्त 52, 80

मे गगा के तट पर तीर्थों का भी उल्लेख है—'यानित्वत्तीरवासीनि दैवतानि च सं ति हि, तानि सर्वाणि वक्ष्यामि तीर्थायतनानि च'। बाल० अध्याय 35 मे गगा की उत्पत्ति की कथा भी वर्णित है। महाभारतकाल म गगा सभी नदियो म प्रमुख समझी जाती थी। भीष्म० 9, 14 तथा अनुवर्ती श्लोको मे भारत की लगभग सभी प्रसिद्ध नदियो की नामावली है—इनमे गगा का नाम सवप्रथम है—'नदी पिबं ति विपुला गगा सिंधु सरम्वतीम्, गोदावरी नमदा च बाहुदा च महानदीम'—'एषा शिवजला पुण्या याति सौम्य महानदी, बदरी-प्रभवाराजन देवर्षिगणसेविता'। महा० वन० 142-4 म गगा को बदरीनाथ के पास से उदभूत माना गया है। पुराणा मे तो गगा की महिमा भरी पड़ी है और असख्य बार इस पवित्र नदी का उल्लेख है—विष्णुपुराण 2, 2, 32 मे गगा का विष्णुपादोद्भवा कहा है—'विष्णु पाद विनिष्क्रा ता प्लावयित्वे दु-मडलम, सम ता‍त् ब्रह्मण पुर्या गगा पतति वै दिव'। श्रीमदभागवत 5, 19, 18 मे गगा को मदाकिनी कहा गया है—'कौशिकी मदाकिनी यमुना सरस्वती दृषद्वती—'। स्कदपुराण का तो एक अग ही गगा तथा उसके तटवर्ती तीर्थो के वणन से भरा हुआ है। बौद्ध तथा जैनग्रथो म भी गगा के अनेक उल्लेख हैं—बुद्ध चरित 10, 1 मे गौतम बुद्ध के गगा को पार करके राजगृह जाने का उल्लेख है—'उत्तीय गगा प्रचलत्तरगा श्रीमदगृह राजगृह जगाम'। जैन ग्रथ जबूद्वीपप्रज्ञप्ति मे गगा को, चुल्लहिमवत के एक विशाल सरोवर के पूव की ओर से और सिंधु को पश्चिम की ओर स निस्सृत माना गया है। यह सरोवर अवश्य ही मानसरोवर है। परवर्तीकाल मे (शाहजहा के समय) पडितराज जगन्नाथ न गगालहरी लिखकर गगा की महिमा गाई है। गगा यमुना के सगम का उल्लेख रामायण अयोध्या० 54, 8 तथा रघुवश 13, 54-55-56-57 मे है—(दे० प्रयाग) गगा के भागीरथी जाह नवी, त्रिपथगा, मदाकिनी, सुरनदी, सुरसरि आदि अनेक नाम साहित्य म आए हैं। वाल्मीकि रामायण तथा परवर्ती काव्यो तथा पुराणा मे चक्षु या वक्षु और सीता (तरिम) का गगा की ही शाखाए माना गया है।

गगाद्वार

गगा के पहाडो से नीचे आकर मैदान मे प्रवाहित होन का स्थान या हरद्वार। इसका उल्लेख महाभारत मे अनेक बार आया है। आदि० 213, 6 म अर्जुन का अपने द्वादशवर्षीय वनवासकाल म यहा कुछ समय तक ठहरने का वणन है—'सगगाद्वारमाश्रित्य निवेशमकरोत प्रभु'। गगाद्वार से ही अर्जुन ने पाताल मे प्रवश कर उस देश की राज्यकन्या उलूपी से विवाह किया था। 'एतस्या

सलिलं मूर्ध्नि वृषांक पर्यधारयत गंगाद्वारे महाभाग येन लोकस्थितिर्भवेत'—महा० वन० 142,9 अर्थात शिव ने गंगाद्वार में इसी नदी का पावन जल लोकरक्षणार्थ अपने सिर पर धारण किया था। महाभारत वन० 97, 11 में गंगाद्वार में अगस्त्य की तपस्या का उल्लेख है—'गंगाद्वारमथागम्य भगवानपि सत्तम, उग्रमातिष्ठत तपः सह पत्न्यानुकूल्या'।

गंगाधर (पश्चिमी मालवा, म० प्र०)

इस स्थान से 480 मालवसंवत 423-24 ई० का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है जिसमें इस प्रदेश के तत्कालीन राजा विश्ववर्मन के मंत्री मयूराक्षक द्वारा एक विष्णुमंदिर, एक मातृका या देवी का मंदिर तथा एक विशाल कूप के बनवाए जाने का उल्लेख है। यहां उल्लिखित नामरहित संवत मालव संवत ही जान पड़ता है क्योंकि विश्ववर्मन् के पुत्र बंधुवर्मन के प्रख्यात मंदसौर अभिलेख में 493 मालव संवत का उल्लेख है। इस अभिलेख से सूचित होता है कि तांत्रिक उपासना भारत के इस भाग में 5वीं शती ई० में ही प्रचलित हो गई थी।

गंगापुर (जिला गुलबर्गा, मैसूर)

दक्षिण में दत्तात्रेय संप्रदाय का मुख्य स्थान है। गुरुचरितनामक ग्रंथ में जो 15वीं या 16वीं शती में लिखा गया था, दत्तात्रेय संप्रदाय के गुरुओं का विवरण है। इस संप्रदाय के दर्शन में हिंदू-मुसलिम संस्कृति का संगम दिखाई देता है। दत्तात्रेय को सूफी संतों के समान ही रहस्यवादी तथा तत्वदर्शी माना जाता था। उनकी मूर्ति के स्थान में पदचिह्नों की पूजा की जाती है। यहां 15वीं शती में बना हुआ एक विष्णुमंदिर भी है।

गंगावली (मैसूर)

कुंदापुर गोकर्ण मार्ग पर गंगाली या गंगावती नामक स्थान है जो पांच नदियों के संगम के पास स्थित है। कहा जाता है कि यह संगम प्राचीन पंचाप्सरस है किंतु अब इसकी तीर्थ रूप में मान्यता है (दे० पंचाप्सरस)।

गंगासागर (प० बंगाल)

गंगा और सागर के संगम पर स्थित प्राचीन तीर्थ। कपिल मुनि का, जिनके शाप से सगर के साठ सहस्र पुत्र भस्म हो गए थे, आश्रम इसी स्थान पर था—'ततः पूर्वोत्तरेदेशे समुद्रस्य महीपते, विदार्य पातालमथ संक्रुद्धा सगरात्मजा, अपश्यंत हयं तत्र विचरंतं महीतले, कपिलं च महात्मानं तेजोराशिमनुत्तमम्' महा० वन० 107, 28-29। इसका पुनः उल्लेख इस प्रकार है—'समासाद्य समुद्रं च गंगया सहितो नृप, प्रययामास वेगेन समुद्रं वरुणालयम्'—वन० 109, 17-18

अर्थात भगीरथ न गगा के साथ समुद्र तक पहुचकर वरुणालय समुद्र को गगा के पानी स भर दिया । इस तरह सगर के पुत्रो के भस्मावशेष गगा के जल से पवित्र हुए ।

गगोत्तरी

बदरीनाथ (जिला गढवाल, उ० प्र०) के उत्तर मे गगा का उदगम स्थान। महाभारत वन० 142, 4 मे गगा को बदरीनाथ स उत्पन्न माना है—'एषा शिवजलापुण्या याति सौम्य महानदी, बदरीप्रभवा राजन देवर्षिगणसेविता'। किंतु कालिदास ने गगा को कैलासपर्वत के क्रोड मे स्थित माना है—पूर्वमेघ मेघदूत—65। दे० गगा, अलका, कैलास।

गगोली

गगावली का रूपातरित नाम।

गगोलीहाट (जिला अल्मोडा)

कत्यूरी शासन काल के कई मदिरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

गगोह (जिला सहारनपुर, उ० प्र०)

यहा 1537 ई० मे हुमायू ने शेख कुद्दूस का मकबरा बनवाया था और 1586 ई० मे अकबर ने जामा मसजिद बनवायी थी।

गजम दे० **कोंगोद**

गडक दे० **गडकी**

गडकी

बिहार की गडक नदी जो दक्षिण तिब्बत के पहाडो से निकलती है और सोनपुर और हाजीपुर के बीच मे गगा म मिलती है। महाभारत सभा० 29, 4 5 म इसे गडक कहा गया है—'तत स गडकाञ्छूरोविदेहान् भरतर्षभ, विजित्याल्पन कालेनदशार्णानजयत प्रभु'। यहा प्रसगानुसार गडक देश को विदेह या वर्तमान मिथिला (तिरहुत) के निकट बताया गया प्रतीत होता है। गगा गडक के सगम के समीप हाजीपुर बसा है। सदानीरा जिसका उल्लेख प्राचीन साहित्य मे अनेक बार आया है सभवत गडकी ही है (वैदिक इडेक्स 2, पृ० 299) किंतु महाभारत सभा० 20, 27 मे सदानीरा और गडकी दोनो का एकत्र नामोल्लेख है जिससे सदानीरा भिन्न नदी होनी चाहिए—'गडकीच महाशोणा सदानीरा तथैव च एकपर्वतके नद्य क्रमेणत्या व्रजत ते'। वन० 84, 113 म गडकी का तीर्थरूप मे वर्णन किया गया है—'गडकी तु समासाद्य सर्वतीर्थ जलोद्भवाम वाजपेयमवाप्नोति सूर्यलोक च गच्छति'। पार्जिटर क अनुसार सदानीरा राप्ती है। सदानीरा कोसल और विदेह की सीमा पर

बहती थी। गडकी का एक नाम मही भी कहा गया है। यूनानी भूगोलवेत्ताओं ने इसे काडोचाटिज (Kondochates) कहा है। विंसेंट स्मिथ ने महापरिनिब्बान सुत्त में उल्लिखित हिरण्यवती का अभिज्ञान गडक से किया है। यह नदी मल्लों की राजधानी (कुशीनगर) के उद्यान शालवन के पास बहती थी। बुद्धचरित 25,54 के अनुसार कुशीनगर में निर्वाण से पूर्व तथागत ने हिरण्यवती नदी में स्नान किया था। इससे पूर्व कुशीनगर आते समय बुद्ध ने इरावती या अचिरवती नदी को पार किया था। इरावती राप्ती का ही नाम है। विंसेंट स्मिथ ने कुशीनगर की स्थिति नेपाल में राप्ती और गडक (हिरण्यवती) के संगम पर मानी थी (अर्ली हिस्ट्री ऑफ इंडिया, पृ० 167) किंतु कुशीनगर का अभिज्ञान अब कसिया से निश्चित हो जाने पर हिरण्यवती को गोरखपुर जिले की राप्ती या उसकी कोई उपशाखा मानना पड़ेगा न कि गडकी। दे० सदानीरा।

गंधमादन

(1) हिमालय की एक पर्वतमाला का नाम - 'गंधमादनमासाद्य ततस्तान् मजयत प्रभु, त गधमादन राजन्नतिक्रम्य ततोऽर्जुन, केतुमाल विवेशाथवर्ष रत्नसमन्वितम्'—महा० 2,28 दक्षिणात्य पाठ। बदरीनाथ के पास हिमालय की एक चोटी अभी तक इस नाम से विख्यात है। इसका उल्लेख महाभारत वन० 134-2 तथा अनुवर्ती श्लोकों में सविस्तर है—'परिगृह्य द्विजश्रेष्ठाज्ज्येष्ठा सर्वधनुष्मताम, पाचाली सहिता राजन प्रययु गधमादनम्' आदि। विष्णुपुराण में गधमादन को सुमेरुपर्वत के दक्षिण में माना है—'पूर्वेण मदरो नाम दक्षिणे गधमादन'—2 2,16। विष्णु 2,2,28 में गधमादन को मेरु के पश्चिम का 'केसराचल' माना है—'जाठधिप्रमुखास्तदवत् पश्चिमे केसराचला' किंतु विष्णुपुराण में बदरीनाथ या बदरिकाश्रम को गधमादन पर स्थित बताया गया है—'अन्वदर्याश्रम पुण्य गधमादनपर्वते।' इससे जान पडता है कि एक गधमादनपर्वत तो हिमालय के उत्तर में था और दूसरा बदरीनाथ (जिला गढवाल, उ० प्र०) के निकट। पहला अवश्य ही हिमालय को पार करने के पश्चात मिलता था जैसा कि निम्नश्लोक से स्पष्ट है जहा दूसरा उल्लेख पाडु के वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करने के पश्चात् उनकी हिमालय तथा परवर्ती प्रदेशों की यात्रा के वर्णन के प्रसग में है—'स चैत्ररथमासाद्य कालकूटमतीत्य च, हिमवन्तमतिक्रम्य प्रययौ गधमादनम्' अर्थात् पाडु चैत्ररथ वन, कालकूट और हिमाचल को पार करने के पश्चात् गधमादन जा पहुचे। विष्णुपुराण 2 में गधमादन को इलावृत का पर्वत माना है। इस पर्वत को गधर्वों और अप्सराओं की प्रिय भूमि, किन्नरों की क्रीडास्थली और ऋषियों तथा सिद्धों का आवासस्थल बताया

गया है—'ऋषिसिद्धामरयुत गधर्वाप्सिरसा प्रियम् विविगुस्ते महात्मान क्निाराचरितगिरिम' वन० 143, 6।

(2) (मद्रास) श्रीरामेश्वरम के सपूण क्षेत्र का नाम गधमादन है। महर्षि अगस्त्य का आश्रम इसी स्थान पर बताया जाता है। विशिष्ट रूप से, गधमादन रामझरोखा नामक स्थान को कहते है। यह रामेश्वर मदिर से डेढ मील दूर है। माग म सुग्रीव, अगद तथा जाम्ववान के नाम से प्रसिद्ध सरोवर मिलते है। कहत है कि गधमादन मे, हनुमान ने लका जाने के लिए समुद्र की दूरी का अनुमान किया था तथा सुग्रीवादि के साथ, लका पहुचने क बारे मे मत्रणा की थी। कहा जाता है कि रामेश्वरम प्राचीन गधमादन पर ही स्थित है।

(3) धौलपुर (राजस्थान) के निकट एक पहाडी है। इस की एक गुहा का सबध पुराणो मे वर्णित राजा मुचुकुद से बताया जाता है। द० धौलपुर।

गधराडी (उडीसा)

इस स्थान पर दो अतिप्राचीन मदिर है जिनके शिखर दवगढ के गुप्तकालीन मदिर के शिखरो की भाति ही नीचे और सत्रमगोलाई युक्त है। शिखर का यह प्रकार शिखर के विकास की प्रारभिक अवस्था का द्योतक है।

गधर्वतीथ

'गधर्वाणा ततस्तीथमागच्छद राहिणी सुत, विश्वावसुमुखास्तत्र गधर्वास्तिपसान्विता' महा० शल्य० 37,10। महाभारतकाल मे गधव तीथ सरस्वती नदी क तट पर स्थित था। इसकी यात्रा बलराम न सरस्वती के अन्य तीर्थो के साथ की थी।

गधवदेश

(1) वाल्मीकि रामायण, उत्तरकाड मे गधवदेश को गाधार-विषय के अतगत बताया और इसे सिधुदेश का पर्याय माना गया है। गधवदेश पर भरत ने अपन मामा केकयराज युधाजित के कहने स चढाई करके गधर्वो को हराया और इसके पूर्वी तथा पश्चिमी भाग म तक्षशिला और पुष्कलावत या पुष्कलावती नामक नगरियो को बसाकर वहा का राजा क्रमश अपने पुत्र तक्ष और पुष्कल को बनाया। 'तक्षतक्षशिलाया तु पुष्कल पुष्कलावते, गधवदेशे रुचिरे गाधारविषय य च स' उत्तर० 101,11। रघुवश 15 87 88 मे भी गधर्वो के दश को सिधुदेश कहा है—'युधाजितश्च सदेशात्सदेश सिधुनामकम, ददौ दत्तप्रभावाय भरताय भृतप्रज। भरतस्तत्र गधर्वान्युधि निर्जित्य केवलम आतोद्य ग्राहयामास समत्याजयदायुधम'। वाल्मीकि रामायण 101,16 मे वर्णित है कि पाच वर्षो तक

वहां ठहरकर भरत ने गधवदेश की इन नगरियो को अच्छी तरह बसाया और फिर वे अयोध्या लौट आए। इन दोनो नगरियो की समृद्धि और शोभा का वणन उत्तर० 101, 12 15 मे किया गया है—'धनरत्नौघ सकीर्णे काननरुपशोभिते, अन्योन्य सघष कृते स्पधया गुणविस्तरैं, उभे सुरुचिरप्रख्ये व्यवहारैरकिल्विषै, उद्यानयान सपूर्णेसुविभक्ता तरापणे उभेपुरवरेरम्ये विस्तरैरपशोभिते, गहमुख्यै सुरुचिरै विमानैबहु शोभिते'। तक्षशिला वतमान तक्सिला (जिला रावलपिडी, प० पाकि०) और पुष्कलावती वतमान चरसडडा (जिला पशावर, प० पाकि०) है। रामायण काल मे गधर्वो के यहा रहने के कारण ही यह गधवदेश कहलाता था। गधर्वो के उत्पात के कारण पडोसी देश केकय के राजा ने श्री रामचद्र जी की सहायता से उनके देश को जीत लिया था। जान पडता है पाकिस्तान के उत्तर पश्चिम म बसे हुए लडाकू कबीले, रामायण के गधर्वो के ही वशज है।

(2) *महाभारत काल मे मानसरोवर या कैलास पवत का प्रदेश (तिब्बत)* भी जिसे हाटक कहा गया है, गधव देश के नाम से प्रसिद्ध था। सभा० 28,5 मे अजुन की दिग्विजय के सबध मे गधर्वो का उनके द्वारा पराजित होना वर्णित है—'सरोमानसमासाद्य हाटकानभित प्रभु, गधवरक्षित देशमजयत पाडवस्तत'। प्राचीन सस्कृत साहित्य मे गधर्वो का विमानो द्वारा यात्रा करत हुए वणन है। गधर्वो की जल क्रीडा के वणन भी अनक स्थलो पर हैं। चित्ररथ गधव का अर्जुन ने हराकर उसके द्वारा कैद किए हुए दुर्योधन को छुडाया था। गधव देश के नीचे, किंपुरुष या किन्नर देश—सभवत वतमान हिमाचल प्रदेश और तिब्बत की सीमा के निकटवर्ती इलाके की स्थिति थी।

गधवद्वीप

महाभारत सभा० अध्याय 38, दक्षिणात्य पाठ के अनुसार एक द्वीप का नाम जिसका अभिधान सदिग्ध है—'इन्द्रद्वीप कशेरु च ताम्रद्वीप गभस्तिमत, गाधव वारुण द्वीप सौम्याक्षमिति च प्रभु'। इन द्वीपो को शक्तिशाली सहस्रबाहु न जीता था। सभव है गधवद्वीप गधव दश (1) या (2) से सबधित हो।

गधव-नगर

गधवनगर का सस्कृत साहित्य म अनक स्थानो पर उल्लेख मिलता है। वाल्मीकि रामायण सुदर० 2, 49 मे लका के सुदर स्वण प्रासादो की तुलना गधव-नगर से की गई है—'प्रासादमालावितता स्तभैःकाचनसनिभ, शातकुभ निभैर्जालैगधवनगरोपमाम'। महाभारत आदि० 126, 25 म शतशृग पवत पर पाडु की मृत्यु के पश्चात कुती तथा पाडवो को हस्तिनापुर तक पहुचाकर एकाएक अतर्धान हो जाने वाले ऋषियो की उपमा गधवनगर से इस प्रकार दी

गई है—'गधवनगराकार तथैवातहितपुन' अर्थात् वे ऋषि फिर गधवनगर के समान वही एकाएक तिरोहित हो गए। इसी महाकाव्य मे वर्णित है कि उत्तरी हिमालय के प्रदेश मे अजुन ने गधवनगर का देखा था जो कभी तो भूमि के नीचे गिरता था, कभी पुन वायु मे स्थित हो जाता था, कभी वक्रगति से चलता हुआ प्रतीत होता था, तो कभी पानी मे डूब सा जाता था—'जनभूमौ निपतति पुनरूर्ध्वं प्रतिष्ठते, पुनस्तियक प्रयात्याशु पुनरप्सु निमज्जति' (वन० 173, 27)। पाणिनि न अपनी अष्टाध्यायी के 4 13 सूत्र मे गधवनगर यथा' यह वाक्याश लिखा ह जिसकी व्याख्या मे महाभाष्यकार पतजलि कहते है—'यथा गधवनगराणि दूरता दृश्य त उपसृत्य च नोपलभ्यन्ते' अर्थात् जिस प्रकार गधवनगर दूर से दिखलाई देते है किंतु पास जाने पर नही मिलत।' इसी प्रकार श्रीमदभागवत मे भी कहा गया है कि ससार की गहन अटवी मे मोक्षमाग से भटके हुए मनुष्य को क्षणिक सुखो के मिलने की भाति इसी प्रकार होती है, जसे गधव नगर को दखकर पथिक समझता है कि वह नगर के पास तक पहुच गया है किंतु तत्काल ही उसका यह भ्रम दूर हा जाता है—'नरलोक गधवनगरमुपपन्नमिति मिथ्यादृष्टिरनुपश्यति'—(श्रीमदभागवत 5, 14 5) वराहमिहिर ने अपने प्रसिद्ध ज्योतिषग्रथ बृहत्सहिता मे ता गधव नगर के दशन के फलादेश पर गधव नगर लक्षणाध्याय नामक (36वा) अध्याय ही लिखा है जिसका कुछ अश इस प्रकार है—आकाश मे उत्तर की ओर दीखने वाला नगर पुरोहित, राजा, सेनापति, युवराज आदि के लिए अशुभ होता है। इसी प्रकार यदि यह दृश्य श्वेत, पीत, या कृष्ण वण का हो तो ब्राह्मणो आदि के लिए अशुभ सूचक होता है। यदि आकाश मे पताका, ध्वजा, तोरण आदि से सयुक्त बहुरगी नगर दिखाई दे तो पृथ्वी भयानक युद्ध मे हाथियो, घोडो और मनुष्यो के रक्त से प्लावित हो जाएगी। 'इसी प्रकार 30वें अध्याय मे भी शकुन विचार के विषयो मे गधवनगर को भी सम्मिलित किया गया है— मृग यथा शकुनिपवन परिवेष परिधि परिघ्राम वृक्षसुरचापैं गधवनगर रविकर दड रज स्नेह वणश्च' (बृहत्सहिता 30, 2)। वास्तव म गधर्व नगर वास्तविक नगर नही है। यह तो एक प्रकार की मरीचिका (mirage) है जो गम या ठडे मरस्थला मे, चौडी झीलो के किनारो पर, बर्फीले मैदानो मे या समुद्र तट पर कभी कभी दिखाई देती है। इसकी विशेषता यह है कि मकान, वृक्ष या कभी कभी सपूण नगर ही, वायु की विभिन्न घनताओ की परिस्थिति उत्पन्न होने पर अपने स्थान से कही दूर हटकर वायु म अधर तैरता हुआ नजर आता है, जितना उसके पास जाए वह

पीछे हटता हुआ कुछ दूर जाकर लुप्त हो जाता है। अंग्रेजी मे इस मरीचिका को Fata Morgana कहते है। यह कितने अचरज की बात है कि यद्यपि भारत मे इस मरीचिका के दर्शन दुर्लभ ही हैं, फिर भी संस्कृत साहित्य में इसका वर्णन अनेक स्थानो पर है। यह तथ्य इस बात का सूचक है कि प्राचीन भारत के पर्यटकों ने इस दृश्य को उत्तरी हिमालय के हिममंडित प्रदेशों में कहीं देखा होगा, नहीं तो हमारे साहित्य मे इसका वर्णन क्योंकर होता।

गंधवती

मेघदूत (पूर्व मेघ 35) के अनुसार यह नदी उज्जयिनी के चंडेश्वर नामक स्थान के निकट बहती थी, 'धूतोद्यानं कुवलयरजो गंधिभि गंधवत्या'। जान पड़ता है कि कालिदास के समय मे प्रसिद्ध नदी शिप्रा की ही एक शाखा का नाम गंधवती था। संभव है शिव की पूजा में अर्पित पुष्पादि सुगंधित द्रव्यों के कारण शिप्रा का पानी सुवासित जान पड़ता हो और इसीलिए इसका नाम गंधवती हुआ हो।

गंधार

(1) सिंधुनदी के पूर्व और उत्तरपश्चिम की ओर स्थित प्रदेश। वर्तमान अफगानिस्तान का पूर्वी भाग भी इसमें सम्मिलित था। ऋग्वेद में गंधार के निवासियों को गंधारी कहा गया है तथा उनकी भेड़ों के ऊन को सराहा गया है और अथर्व वेद मे गंधारियों का मूजवतों के साथ उल्लेख है—'उपोप मे परामृश मा मे दभ्राणि मन्यथा, सर्वाहमस्मि रोमशा गंधारीणामिवाविका' ऋग्वेद 1, 126 18, 'गंधारिभ्यो मूजवद्भयोऽङ्गेभ्यो मगधेभ्य प्रैष्यन जनमिव शेवधिं तक्मानं परिदद्मसि' अथर्ववेद 5, 22, 14। अथर्ववेद में गंधारियों की गणना अवमानित जातियों में की गई है किंतु परवर्ती काल में गंधारवासियों के प्रति मध्यदेशीयों का दृष्टिकोण बदल गया और गंधार में बड़े विद्वान् पंडितों ने अपना निवास स्थान बनाया। तक्षशिला गंधार की लोकविश्रुत राजधानी थी। छांदोग्योपनिषद में उद्दालक आरुणि ने गंधार का, सद्गुरु वाले शिष्य के अपने अंतिम लक्ष्य पर पहुंचने के उदाहरण के रूप में उल्लेख किया है। जान पड़ता है कि छांदोग्य के रचयिता को गंधार से विशेष रूप से परिचय था। शतपथ ब्राह्मण 12, 4, 1 तथा अनुगामी वाक्यों में उद्दालक आरुणि का उदीच्यों या उत्तरी देश (गंधार) के निवासियों के साथ संबंध बताया गया है। पाणिनि ने जो स्वयं गंधार के निवासी थे, तक्षशिला का 4 3, 93 मे उल्लेख किया है। ऐतिहासिक अनुश्रुति में कौटिल्य चाणक्य को तक्षशिला महाविद्यालय का ही रत्न बताया गया है। वाल्मीकि

रामायण उत्तर० 101, 11 मे गधवदेश की स्थिति गाधार विषय के अतगत बताई गई है। केकय देश इस के पूव मे स्थित था। केकय नरश युधाजित व कहन स अयोध्यापति रामचद्र जी के भाई भरत ने गधव देश को जीतकर यहा तक्षशिला और पुष्कलावती नगरिया का बसाया था—(दे० गधवदेश)। महाभारत काल मे गधार देश का मध्यदेश से निकट सबध था। धतराष्ट्र की पत्नी गधारी, गधार ही की राजकया थी। शकुनि इसका भाई था। जातको म कश्मीर और तक्षशिला—दोनो की स्थिति गधार मे मानी गई है। जातको म तक्षशिला का अनक बार उल्लेख है। जातककाल मे यह नगरी महाविद्यालय के रूप मे भारत भर मे प्रसिद्ध थी। पुराणा म (मत्स्य, 48, 6 वायु, 99, 9) गधार नरेशो को द्रुह यु का वशज माना। वायुपुराण म गधार के श्रेष्ठ घोडो का उल्लेख है। अगुत्तर निकाय के अनुसार बुद्ध तथा पूव बुद्धकाल मे गधार उत्तरी भारत के सोलह जनपदो मे परिगणित था। अलक्षेद्र के भारत पर आक्रमण के समय गधार मे कई छोटी-छोटी रियासतें थी, जैसे अभिसार, तक्षशिला आदि। मौयसाम्राज्य म सपूण गधार देश सम्मिलित था। कुशान साम्राज्य का भी वह एक अग था। कुशान काल ही म यहा की नई राजधानी पुरुषपुर या पशावर मे बनाई गई। इस काल मे तक्षशिला का पूव गौरव समाप्त हो गया था। गुप्तकाल मे गधार शायद गुप्ता के साम्राज्य के बाहर था क्योकि उस समय यहा यवन, शक आदि वाह्यदेशीयो का आधिपत्य था। 7वी शती ई० मे गधार के अनेक भागो मे बौद्धधम काफी उनत था। 8वी–9वी शतिया मे मुसलमाना के उत्कष के समय धीरे धीरे यह देश उन्ही के राजनैतिक तथा सास्कृतिक प्रभाव मे आ गया। 870 ई० मे अरब सेनापति याकूब एलेस न अफगानिस्तान को अपने अधिकार मे कर लिया लेकिन इसके बाद काफी समय तक यहा हिंदू तथा बौद्ध अनक क्षेत्रो मे रहते रहे। अलप्तगीन और सुबुक्तगीन के हमला का भी उन्होन सामना किया। 990 ई० मे लमगान (प्राचीन लपाक) का किला उनके हाथो से निकल गया और इसके बाद काफिरिस्तान को छोडकर सारा अफगानिस्तान मुसलमानो के धम म दीक्षित हो गया।

(2) (थाइलड) थाइलैंड या स्याम के उत्तरी भाग मे स्थित युनान का प्राचीन भारतीय नाम। चीनी इतिहास ग्रथो से सूचित होता है कि द्वितीय शती ई० पू० ही मे इस प्रदेश मे भारतीयो ने उपनिवेश बसा लिए थे और ये लोग बगाल असम तथा ब्रह्मदेश के व्यापारिक स्थलमाग से यहा पहुचे थे। 13वी शती तक युनान का भारतीय नाम गधार ही प्रचलित था, जसा कि तत्कालीन

मुसलमान लेखक रशीदुद्दीन के वर्णन से सूचित होता है। इस प्रदेश का चीनी नाम गानचाओ था। 1253 ई० में चीन के सम्राट कुबलाखां ने गंधार को जीतकर यहां के हिंदू राज्य की समाप्ति कर दी।

गंधावल (म० प्र०)

पूर्वमध्यकालीन इमारतों के अवशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

गंभीर

(1)=गंभीरा नदी

(2) (लंका) महावंश 7, 44। उपतिष्य ग्राम इसी नदी के तट पर स्थित था। यह नदी अनुराधपुर से सात आठ मील उत्तर की ओर बहती है।

गंभीरा

चर्मण्वती या चंबल की सहायक नदी, जो अवली पहाड़ के जानपव नामक स्थान से निकलकर राजस्थान और मध्यप्रदेश के ग्वालियर के इलाके में बहती है। चंबल का उद्‌भव भी इसी स्थान पर है। गंभीरा नदी का वर्णन कालिदास ने मेघदूत में मेघ के रामगिरि से अलका जाने के मार्ग में, उज्जयिनी के पश्चात तथा चर्मण्वती के पूर्व किया है—'गंभीरायाः पयसि सरितश्चेतसीव प्रसन्ने छायात्मापि प्रकृतिसुभगो लप्स्यते ते प्रवेशम्' पूर्वमेघ 42। यहां कालिदास ने गंभीरा के जल को प्रसन्न अथवा निर्मल एवं हर्ष प्रदान करने वाला बताया है। अगले छंद 33 में 'हृत्वा नीलं सलिल वसनम्' द्वारा गंभीरा के जल को नीला कहा गया है ('तस्याः किंचित करधृतमिव प्राप्तवानीरशाखं, हृत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधो नितम्बम्')। गंभीरा को आजकल गंभीर भी कहते हैं। चित्तौड़ नगरी इसी के तट पर बसी है। धरमत नामक कस्बा भी इसी नदी के तट पर है। यहां 1658 ई० में दारा की सेना को जिसमें जोधपुर नरेश जसवंत सिंह भी सम्मिलित था औरंगजेब ने बुरी तरह हराकर दिल्ली के राज्य सिंहासन का मार्ग प्रशस्त बना लिया था। गंभीरा का नाम महाभारत भीष्म० 9 की नदियों की सूची में नहीं है।

गजनी (दे० रमठ)

गजपद

प्राचीन जैनतीर्थ जिसका उल्लेख तीर्थमाला चैत्यवंदन में है—'वंदेऽष्टापद गङरेगजपद सम्मेतशैलाभिधे' (दे० एंशेंट जैन हिम्ज़—पृ० 57)।

गजपुर=हस्तिनापुर

गजपुर को जैन सूत्र 'प्रज्ञापणा' ने कुरुक्षेत्र के अंतर्गत माना है।

गजसाह्वय (हस्तिनापुर का पर्याय)। दे० हस्तिनापुर।

गजाग्रपद

गजाग्रपद की गणना जैन साहित्य के अतिप्राचीन आगम ग्रथ एकादश-अगादि म उल्लिखित जैन तीर्थों मे है। इसकी स्थिति दशाण कूट म बताई गई है जो सस्कृत साहित्य मे प्रसिद्ध दशाण देश (बुदेलखड का भाग) हो सकता है। दे० दशाण।

गजाधरपुर

दरभगा (बिहार) से चार मील दक्षिण की ओर स्थित है। यहा मैथिल कोकिल विद्यापति के सरक्षक राजा शिवसिंह की राजधानी थी। इसको शिवसिंहपुर भी कहा जाता है। शिवसिंह मिथिला की गद्दी पर 1402 ई० के लगभग बैठे थे।

गजुली बडा दे० इट्टूर

गडवाल (जिला रायचूर मैसूर)

इस प्राचीन ऐतिहासिक नगर मे हिंदूकालीन (वारगल नरेशो के समय मे बने हुए) दुग, विशाल मदिर और गरुडस्तभ स्थित है। वारगल के ककातीय नरेश प्रतापरुद्र ने गडवाल के शासक बुक्का पोलावी रेडडी को ७ परगनो का सरनागोड या शासक बनाया था। इस स्थान के विषय में यही सवप्राचीन उल्लेख मिलता है।

गढ़कुडार (जिला झासी, उ० प्र०)

गढकुडार मे चदेल, खगार और बुदेला नरशा के समय का दुग तथा नगर क ध्वसावशेष, अनेक प्राचीन ऐतिहासिक कथाओ तथा लोकगाथाओ को अपने अतस् मे छिपाए हुए बीहड पहाडो और वनो के बीच बिखरे पडे है। प्राचीन काल म कुडार के प्रदेश मे गौंडो का राज्य था जिनके मडलेश्वर पाटलिपुत्र के मौयसम्राट थे। कालातर मे मध्ययुग के प्रारभ मे पडिहारो ने इस स्थान पर आधिपत्य स्थापित किया और तत्पश्चात 8वी शती के अत म चदेलो ने। चदेल राजा परमाल (दिल्ली के पृथ्वीराज चौहान का समकालीन) के समय मे यहा के दुग मे शिवा नामक क्षत्रिय किलेदार रहता था जो परमाल के अधीन था। 1182 ई० मे पथ्वीराज चौहान और परमाल के बीच होने वाले युद्ध मे शिवा मारा गया और पथ्वीराज के एक सैनिक खूबसिंह या खेतसिंह खगार का कब्जा कुडार पर हो गया। इसने खगार राज्य की स्थापना की, जो झासी के परिवर्ती इलाके मे पर्याप्त समय तक बना रहा। खगारो से बुदेला वशीय क्षत्रियो को ईर्ष्या थी और वे खगारो को अपने से छोटा समझते थे। दिल्ली के गुलाम वश के प्रसिद्ध सुल्तान बलबन के

राज्यकाल मे बुदेलो ने गढकुडार पर, जहा खगारो की राजधानी थी, अधिकार कर लिया (1257 ई०) और युद्ध मे खगार शक्ति का पूण रूप से विनाश कर दिया। खगार इस समय शक्ति के मद मे चूर रहकर अत्यधिक मदिरा पान करने लगे थे। इस युद्ध मे खगारा के सभी सरदार और सामत मारे गये। बुदेलो का नायक इस समय सोहनपाल था जिसकी सुदरी कन्या रूपकुमारी और खगार-नरेश हुरमत सिंह के कुमार की दु खात प्रणय कथा बुदेलखड के चारणो के गीतो का प्रिय विषय है। बुदेलो की राजधानी कुडार मे 1507 ई० तक रही। इस वर्ष या सभवत 1531 मे बुदेला नरेश रुद्रप्रताप ने ओडछा बसाकर वही नई राजधानी बनाई। खगारो और बुदेला मे जो युद्ध हुआ था उसका घटनास्थल कुडार का दुग ही था। दुग के खडहर झासी नगर से तीस मील दूर हैं।

गढगजना (जिला पीलीभीत, उ० प्र०)

विशालपुर से दस मील उत्तर पूव गढगजना और देवल के प्राचीन खड हर हैं। दे० देवल।

गढपहरा (जिला सागर, म० प्र०)

गढमडले की रानी वीरागना दुर्गावती के श्वसुर सग्रामसिंह के बावन गढा मे इसकी भी गणना थी। सग्रामसिंह की मृत्यु 1541 ई० म हुई थी। औरग जेब के समय मे ओरछानरेश छत्रसाल ने गढपहरा पर अधिकार कर लिया जिसके फलस्वरूप यहा के निवासी सागर म जाकर बस गए। औरगजेब के सेना ध्यक्ष राजा जयसिंह न गढपहरा को बुदेला से छीन लिया किंतु तत्पश्चात पृथ्वीपति को यहा का राजा मान लिया गया।

गढ़मुक्तेश्वर (जिला मेरठ, उ० प्र०)

गगा के तट पर स्थित प्रसिद्ध तीथ जो कार्तिकस्नान के मेले के लिए दूर दूर तक प्रसिद्ध है। स्कदपुराण मे इस तीथ का विस्तृत वणन है। इसका प्राचीन नाम शिववल्लभपुर कहा गया है। पौराणिक कथा है कि इस स्थान पर महादेव के गण दुर्वासा के शाप से मुक्त हुए थे और इसी कारण इसे मुक्ते श्वर कहा जाता है। पुराणो की एक अन्य कथा के अनुसार राजयक्ष्मा से पीडित चद्र ने यही तप करके रोगमुक्ति प्राप्त की थी। यह भी आख्यायिका है कि महाराज नृग गिरगिट की योनि से यहा मुक्त हुए थे जिसका स्मारक नृगकूप या नक्का कुवा आज भी गढमुक्तेश्वर मे है। यह तो निश्चित ही है कि प्राचीन काल से ही गढमुक्तेश्वर मे साधुसतो का निवास रहा है। ऐतिहासिक काल मे भी यह तीथ महत्वपुण रहा है। कहा जाता है कि बबर

शासकों को भारत की सीमा के परे खदेड़ कर सम्राट् विक्रमादित्य (चंद्रगुप्त द्वितीय) ने यहीं गंगा तट पर शांति प्राप्त की थी। महाराज भोज परमार भी गढ़मुक्तेश्वर आए थे। 11वीं शती में महमूद गजनी ने इस तीर्थ पर आक्रमण किया। मुगल साम्राज्य के अंतिम काल में मराठों के उत्कर्ष के समय गढ़मुक्तेश्वर में हिंदूधर्म का पुनरुद्धार हुआ। मराठों (सिंधिया) ने यहां एक दुर्ग का निर्माण भी किया जिसे सिंधिया दुर्ग कहते थे। इसके खंडहर अब भी हैं। संभवत: इसी दुर्ग के कारण इस स्थान को गढ़मुक्तेश्वर कहा जाने लगा। यहां के पंडों की पुरानी बहियों से सूचित होता है कि 17वीं शती में अलवर का नवाब जीवनखां अपने पुत्र सहित यहां आया करता था और गंगा स्नान करके ब्राह्मणों को दान देता था। अब से प्राय: दो सौ वर्ष पूर्व स्थानीय गंगा मंदिर को झज्झर के नवाब के एक हिंदू मंत्री ने बनवाया था। इसका उल्लेख झज्झर के नवाब की वसीयत में किया गया है।

गढ़वा (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

प्राचीन नाम भट्टग्राम। यहां से कई गुप्तकालीन महत्वपूर्ण अभिलेख प्राप्त हुए हैं। पहला अभिलेख चंद्रगुप्त द्वितीय के समय का है। इसका आरंभिक भाग खंडित है और इसलिए राजा का नाम अप्राप्य है किंतु इसके अंतिम भाग में (गुप्त) संवत 88 (=407 ई०) दिया हुआ है। दसवीं पंक्ति में राजा के लिए परम भागवत शब्द प्रयुक्त है और इसके पश्चात ही महाराजाधिराज पद आरंभ होता है। अत: यह अभिलेख गुप्तवंश के महाराजाधिराज चंद्रगुप्त द्वितीय के समय का जान पड़ता है। अभिलेख में एक सत्र की स्थापना के लिए दस स्वर्ण दीनारों के दान का उल्लेख है। 12वीं पंक्ति में, जो खंडित तथा अस्पष्ट है, पाटलिपुत्र का, संभवत: गुप्त नरेशों की राजधानी के रूप में, उल्लेख है। इसी प्रस्तर खंड पर चंद्रगुप्त द्वितीय के पुत्र कुमारगुप्त प्रथम के काल का भी एक अभिलेख अंकित है। इसकी तिथि नष्ट हो गई है। इस में भी सत्र के लिए दिए गए दानों का उल्लेख है। पहला दान दस दीनारों के रूप में वर्णित है, दूसरे की संख्या अस्पष्ट है। गढ़वा से कुमारगुप्त प्रथम के समय (गुप्तसंवत 98=418 ई०) का एक अन्य प्रस्तर अभिलेख प्राप्त हुआ है। इसमें भी सत्र की स्थापना के लिए बारह दीनारों के दान का उल्लेख है। एक अन्य अभिलेख भी, जो स्कंदगुप्त के शासनकाल का जान पड़ता है (गुप्तसंवत 148=468 ई०) गढ़वा से मिला है। इसमें अनंतस्वामी (विष्णु) की एक प्रस्तरमूर्ति की प्रतिष्ठापना तथा माला आदि सुगंधित द्रव्यों के लिए दिए दान का उल्लेख है।

गढवाल (उ० प्र०)

पश्चिमी उत्तरप्रदेश का पहाडी इलाका जिसमे देहरादून, बदरीनाथ, श्रीनगर, पौडी आदि स्थान हैं। इसकी लबाई उत्तर मे नीती दर्रे स दक्षिण मे कोटद्वार तक 170 मील और चौडाई रुद्रप्रयाग से समोया तक 70 मील के लगभग है। क्षेत्रफल प्राय 11900 वग मील है। पुराणो तथा अय प्राचीन साहित्य मे इस प्रदेश का नाम उत्तराखड मिलता है। गढवाल नया नाम है जो परवर्ती काल मे शायद यहा के बावन गढो के कारण हुआ। कहा जाता है कि आय सभ्यता के इस प्रदेश मे प्रसार होने से पूव यहा खस, किरात, तगण, किन्नर आदि जातियो का निवास था। ऊचे पवतो से घिरे रहने के कारण यह प्रदेश सदा सुरक्षित रहा है और प्राचीन काल मे यहा के शात मनोरम वातावरण मे अनेक ऋषियो ने अपने आश्रम बनाए थे। महाभारत से सूचित होता है कि गढवाल पर पाडवो का राज्य था और महाभारत-युद्ध के पश्चात वे अपने अतिम समय म बदरीनाथ के माग से ही हिमालय पर गए थे। यहा के अनेक स्थानो की यात्रा अजुन तथा अय पाडवो ने की थी। बदरीनाथ मे व्यास का आश्रम भी था। पाडवो से सबध के स्मारक के रूप मे आज भी गढवाल के देवताओ मे पाडव नामक नत्य प्रच लित हैं। बौद्ध-धर्म के उत्कषकाल मे गढवाल म अनेक विहार तथा मदिर स्थापित हुए। उत्तरकाशी तथा बाधन के क्षेत्र मे बौद्धधम का सबसे अधिक प्रचार था और कुछ विद्वानो का मत है कि बदरीनाथ का वतमान मदिर पहले बौद्ध मदिर या विहार था जिसे हिंदूधम के पुनरुत्थान के समय आदि शकराचाय ने बदरीनारायण के मदिर के रूप मे परिवर्तित कर दिया। बाधन का वास्तविक नाम बाधायन कहा जाता है। यह ऐतिहासिक तथ्य है कि जगद्गुरु आदि शकर ने बदरीनाथ मे आकर हिंदूधम के पुनर्जागरण का शख नाद किया था। उनके स्मृतिस्थल यहा आज भी हैं। कालातर म गढ़ वाल की राजनैतिक दशा बिगड गई और खसो ने यहा छोटे छोटे रजवाडे कायम कर लिए। ये लोग परस्पर लडते भिडते रहते थे। तिब्बत से भी इनके झगडे चलते रहे। खसो के पश्चात गढ़वाल म नागजाति का प्रभुत्व हुआ। तत्पश्चात् मालवा के पवार राजाओ ने उत्तरी गढवाल मे अपना राज्य स्थापित कर लिया। पँवारो मे सबसे प्रसिद्ध राजा अजयपाल था। इसके राज्य मे हरद्वार और कनखल भी शामिल थे। मुसल्मानो के भारत पर आक्रमण के समय जब देश मे सवत्र अशाति तथा अराजकता छाई हुई थी, राजपूताना, पजाब, गुजरात, महाराष्ट्र तथा अय स्थानो से भागकर बहुत से राजपूत

सरदारों तथा अनेक ब्राह्मण परिवारों ने गढ़वाल में शरण ली। इसी कारण गढ़वाल के जनजीवन पर राजस्थान, गुजरात, पंजाब, महाराष्ट्र तथा अन्य प्रदेशों की विशिष्ट संस्कृतियों का प्रभाव देखने में आता है। 1800 ई० के लगभग गढ़वाल पर नेपाल के गोरखों ने अधिकार कर लिया और बारह वर्ष तक यहां राज्य किया। उनके कठोर तथा अत्याचारपूर्ण शासन की याद में अब तक गढ़वाली लोग उसे गोर्याणी नाम से पुकारते हैं। त्रस्त होकर गढ़वालियों ने अंग्रेजों की सहायता से गोरखों को गढ़वाल से निकाल दिया। नेपाल युद्ध (1814 ई०) के पश्चात् अंग्रेजों ने गढ़वाल के दो टुकड़े कर दिए, टिहरी, जहां गढ़वालियों की रियासत बसाई गई और गढ़वाल, जिसे अंग्रेजों ने ब्रिटिश भारत में मिला लिया।

गढ़ा (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर से चार मील पश्चिम की ओर गौंड राजाओं का बसाया हुआ नगर। गौंड नरेश संग्रामसिंह (१६वीं शती) मदनमहल नामक स्थान पर रहते थे जो गढ़ा से एक मील पर है। इनके सिक्कों से सूचित होता है कि उस काल में यहां टकसाल भी थी। मदनमहल के निकट शारदादेवी का मंदिर है। एक प्राचीन तांत्रिक मंदिर भी है जिसका निर्माण किंवदंती के अनुसार केवल पुष्यनक्षत्र में ही किया जा सकता था। आज भी गढ़ा में तांत्रिक मत का पर्याप्त प्रभाव है।

गढ़ाकोटा (जिला सागर, म० प्र०)

इस स्थान की गणना गढ़मंडला के राजा संग्रामशाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावन गढ़ों में की जाती थी। औरंगजेब के शासन काल में, मुगलों की सेनाओं और ओड़छानरेश छत्रसाल में पहला बड़ा युद्ध गढ़ाकोटा में ही हुआ था। मुगलों का सेनापति रणदूल्ह खां था। युद्ध में मुगलों की भारी हार हुई। रणदूल्ह के दस सरदार और सात सौ सैनिक काम आए। दस तोपें भी छत्रसाल के हाथ लगीं। इस युद्ध का सुंदर वर्णन लाल कवि ने छत्रप्रकाश नामक हिंदी काव्य में किया है।

गणनाथ (जिला अल्मोड़ा, उ० प्र०)

अल्मोड़े से लगभग चौदह मील दूर है। यहां एक प्राचीन शिव मंदिर है जिसकी मूर्ति बहुत सुघड़ तथा दिव्य मानी जाती है।

गणेश गुफा (जिला गढ़वाल उ० प्र०)

यह स्थान बदरीनाथ से वसुधरा जाने वाले मार्ग पर व्यास गुफा के सन्निकट स्थित है। किंवदंती है कि व्यास गुफा में रहते हुए व्यास ने महाभारत तथा पुराणों

की रचना की थी। महाभारत की प्रसिद्ध कथा, जिसके अनुसार इस महाकाव्य को लिखने के लिए व्यास ने गणेश को चुना था, गणेश गुफा से संबंधित है। व्यास का बदरीनाथ से संबंध भी जनश्रुति में प्रसिद्ध है।

(2) (उडीसा) भुवनेश्वर से पाच मील पर स्थित यह जैन गुफा तीसरी शती ई० पू० मे निर्मित की गई थी। जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ के जीवन से संबद्ध कई घटनाएँ गणेश गुफा मे अंकित हैं। गणेश गुफा, हाथी गुफा और रानी गुफा नामक गुहासमूह का ही एक भाग है।

गणेशरा (जिला मथुरा, उ० प्र०)

क्षहरात वंश के क्षत्रप घाटक का एक अभिलेख इस स्थान से वोगल (Vogel) को 1912 ई० मे प्राप्त हुआ था (दे० जर्नल आव रायल एशियाटिक सोसायटी, 1912, पृ०121) जिससे प्रथम शती ई० के लगभग मथुरा तथा निकटवर्ती प्रदेश पर शक (सिथियन) क्षत्रपो का आधिपत्य सूचित होता है।

गदावसान

'दृष्ट्वा पौरैस्तया सम्यग् गदा चैव निवेशिता गदावसान तत्स्थान मथुराया समीपत ' महा० सभा० 19, 25। महाभारत के इस उल्लेख से सूचित होता है कि गदावसान मथुरा के समीप वह स्थान था जहा—किंवदंती के अनुसार—गिरिव्रज (मगध) से जरासंध द्वारा फेंकी हुई गदा 99 योजन दूर आकर गिरी थी। संभव है यह गदा उस समय का कोई दूरगामी अस्त्र रहा हो।

गनौर (भूपाल, म० प्र०)

गढमंडलानरेश संग्रामशाह के बावन गढो म से एक यहा स्थित था। संग्रामशाह इतिहास प्रसिद्ध वीरांगना दुर्गावती के श्वसुर थे। इनकी मृत्यु 1541 ई० म हुई थी।

गबुर (देवदुग तालुका, जिला रायचूर, मैसूर)

प्राचीन काल के कई मंदिर यहा हैं जिनमे मुख्य निम्न है—भगरवामण्णा, विश्वेश्वर, ईश्वर (रानीगुडी मठ), वेंकटेश्वर, चडी हनुमान, और शंकर।

गभस्तिमान द्वीप

महाभारत सभा० 38 दक्षिणात्य पाठ मे वर्णित सप्त महाद्वीपो म से है—इनको सहस्रबाहु ने जीता था—'इन्द्रद्वीपं कशेरुं च ताम्रद्वीपं गभस्तिमन गाधर्ववारुण द्वीप सौम्याक्षमिति च प्रभु '। यह इडोनीसिया का कोई द्वीप जान पडता है।

गभस्ती

विष्णु पुराण 2 4 66 म वर्णित शाकद्वीप की एक नदी— इक्षुश्चैव वेणुका

चैव गभस्ती सप्तमी तथा, अन्याश्च शतशस्तत्र क्षुद्रनद्यो महामुने'।

गयशिर

गया के निकट एक पहाडी—'नगो गयशिरो यत्र पुण्या चैव महानदी, वानीर मालिनी रम्या नदी पुलिनशोभिता'। महा० वन० 95,9। पाडवो ने अपने वनवासकाल मे गया की यात्रा की थी। यह गया की विष्णुपद नामक पहाडी हो सकती है।

गया

यह गौतम बुद्ध के सबोधि-स्थल तथा हिंदुआ के प्राचीन तीथ के रूप मे सदा से प्रसिद्ध रहा है। महाभारत वन० 84 82 मे गया का तीथ रूप मे वणन है—'ततो गया समासाद्य ब्रह्मचारी समाहित, अश्वमेधमवाप्नोति कुल चैव समुद्धरेत'। वन० 95, 9 मे पाडवों की तीथ यात्रा के प्रसग मे भी गया का उल्लेख है—'ततो महीधर जग्मुधमज्ञेनाभिमस्कृतम, राजर्षिणा पुण्यकृता गयेनानुपपद्यते'। इससे यह भी सूचित होता है कि राजर्षि गय के नाम पर ही गया का नामकरण हुआ था। गयशिर की पहाडी का उल्लेख इससे अगले श्लोक मे है जो विष्णुपद पवत है। पुराणो की एक कथा के अनुसार गया, गयासुर नामक राक्षस का निवासस्थान था। विष्णु ने इसे यहा से निकाल दिया था (दे० बिहार थ्रू दि एजेज, पृ० 114)। सभव है इस क्षेत्र म अनाय लोगो का निवास रहा हो (दे० वही पृ० 114)। बुद्ध के समय यह स्थान नगर के रूप मे विख्यात नही था। तब उरुवेला नामक ग्राम यहा स्थित था जिसके निकट बुद्ध ने पीपल वृक्ष के नीचे समाधिस्थ होकर सबुद्धि प्राप्त की थी। उरुवेला मे ही वहा के ग्रामणी की पत्नी सुजाता (या नदबाला) की दी हुई पायस खाकर बुद्ध ने अपना कई दिनो का उपवास भग किया था और वे इस परिणाम पर पहुचे थे कि काया को उपवास आदि से क्लेश देकर मनुष्य सर्वोच्च सिद्धि नही प्राप्त कर सकता। अश्वघोष (प्रथम या द्वितीय शती ई०) ने बुद्ध चरित मे गया का उल्लेख किया है जिससे सूचित होता है कि कवि के समय मे गया को राजर्षि गय की नगरी माना जाता था—'ततो हित्वाश्रम तस्य, श्रेयार्थी कृतनिश्चय भेजे गयस्य राजर्षेनगरीसज्ञमाश्रमम' सग० 12,89। बुद्ध क पश्चात गया का नाम सबोधि भी पड गया था जैसा कि अशोक के एक अभिलेख से सूचित होता है। मौयसम्राट ने इस स्थान की पावन-यात्रा अपने शासनकाल के दसवें वष मे की थी। चीनी यात्री फाह्यान चौथी शती ई० तथा युवानच्वाग सातवी शती ई० म गया आए थे। इन यात्रियो ने इस स्थान पर अशोक के बनवाए हुए विशाल मदिर का उल्लेख किया है। जनरल

कर्निघम तथा परवर्ती पुरातत्त्वविदो ने गया मे विस्तृत उत्खनन किया था। इस खुदाई मे अशोक के मदिर के चिह्न नही मिल सके। कहा जाता है कि यह मदिर सातवी शती तक स्थित था। वतमान मदिर बाद का है यद्यपि उसका आस्थान अवश्य ही प्राचीन है। यह मदिर नौ तलो मे स्तूपाकार बना हुआ है। इसकी ऊचाई 160 फुट और चौडाई 60 फुट है। फर्ग्यूसन का विचार है कि नौतला मदिर बनवाने की प्रथा जो चीन या अन्य बौद्धधम से प्रभावित देशो मे प्रचलित थी वह मूलरूप से इसी मदिर की परपरा की अनुकृति थी (दे० हिस्ट्री ऑव इडियन एड ईस्टन आर्किटेक्चर, जिल्द, 79)। बिहार पर जब मुसल मानो का आक्रमण हुआ तब अवश्य ही गया के मदिर का भी विध्वस किया गया होगा। इससे पूव ही हिंदूधम के पुनरुत्थान के समय बौद्ध मदिर का महत्त्व समाप्तप्राय हो चला था और हिंदू मदिर ने उसका स्थान ले लिया था। महावश मे वर्णित है कि सभवत छठी शती ई० मे सिहलनरेश महानामन ने गया के बुद्धमदिर का जीर्णोद्धार करवाया। विष्णुपुराण मे गया को गुप्त नरेशो के राज्य के अतगत बताया गया है—'अनुगगा प्रयाग गयायाश्च मागधा गुप्ताश्च भोक्ष्यन्ति' 4, 24, 63। कहा जाता है कि मूलबोधिद्रुम अथवा पीपलवृक्ष को गौडनरेश शशाक ने, जो महाराज हर्ष का समकालीन था (7वी शती ई०), अधिकाश मे विनष्ट कर दिया था किंतु यह भी सभव है कि वतमान वृक्ष मूलवृक्ष का ही वशज हो। इसी वृक्ष की एक शाखा अशोक की पुत्री सघमित्रा ने सिहलदेश मे ले जाकर (अनुराधापुर मे) लगाई थी। यह वृक्ष वहा अभी तक स्थित बताया जाता है। इसी सिंहलदेशीय वृक्ष की एक शाखा वतमान सारनाथ के जीर्णोद्धार के समय—कुछ वर्षो पूव वहा विरोपित की गई थी। यह भी मनोरजक तथ्य है कि महाभारत वन० 84, 83 मे गया म अक्षयवट का उल्लेख है और उसे पितरो के लिए किए गए सभी पुण्यकर्मो का अक्षय करने वाला वृक्ष बताया गया है—'तत्राक्षयवटो नाम त्रिपुलोकेषु विश्रुत तत्र दत्त पितृभ्यस्तु भवत्यक्षयमुच्यते' तथा 'महानदी तत्रैव तथा गयाशि रोनृप, यत्रासौ कीत्यते विप्रैरक्षय्यकरणो वट' वन० 87, 11। अवश्य ही यह अक्षय वट (वट=बरगद या पीपल) बौद्धो का सबोधि वृक्ष ही है जिसे हिंदूधम के पुनर्जागरण काल मे हिंदुओ ने अपनाकर अपनी पौराणिक परपरा मे सम्मि लित कर लिया था। गया आजकल भी हिंदुओ का पवित्र स्थल है तथा यहा हुए पिंडदान का महत्व माना जाता है। फल्गु गया की प्रसिद्ध पुण्य नदी है जिसका निर्देश महाभारत वन० 95, 9 मे गयगिरि की पहाडी के निकट बहने वाली 'महानदी' के रूप मे है (दे० गयगिरि)। बौद्धसाहित्य म

फल्गु की सहायक नदी वतमान नीलाजना को नैरजना कहा गया है—'स्नातो नैराजनातीरादुत्ततार शनै कृश '(बुद्धचरित 12, 108) अर्थात् गौतम (बोधिद्रुम के नीचे समाधिस्थ होने के पहले) नैरजना नदी मे स्नान करके धीरे-धीरे तट से चढकर ऊपर आए। यह गया से दक्षिण तीन मील दूर महाना अथवा फल्गु मे मिल्ती है। वतमान महाना अवश्य ही महाभारत की 'महानदी' है जिसका ऊपर उद्धत श्लोक वन० 87, 11 मे उल्लेख है।

गरुग्रासमुद्रम् (जिला निजामाबाद, आ० प्र०)

निजामाबाद नगर से दस मील दक्षिण मे छोटा मा ग्राम है जहा 17वी नती के तीन आर्मीनिया निवासियो के मकबरे स्थित है।

गरुड (जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

कौसानी से नौ मोल। कत्यूरी नरेशा के समय मे बना हुआ प्राय बारह सौ वष प्राचीन मदिर यहा स्थित है जिसकी नक्काशी शिल्प की दृष्टि से प्रशसनीय है।

गगस्रोत

महाभारतकाल मे सरस्वती नदी के तट पर स्थित एक तीथ जा गधवतीथ के उत्तर मे था। इसकी याता बलराम ने की थी—'तस्माद गधवतीर्थाच्च महाबाहुररिदम, गगस्रोतो महातीथमाजगामैकक्‍डली'—शल्य० 37, 13–14। यह स्थान सभवत दक्षिण पजाब मे था।

गजपतिपुर, गजपुर=**गाजीपुर** (उ० प्र०)

गलता (जिला जयपुर, राज०)

जयपुर के निकट, सूरजपोल के बाहर, पहाडी की घाटी मे रमणीक स्थान है जहा किवदती के अनुसार प्राचीन समय मे गालवऋषि का आश्रम था जिनके नाम पर यह स्थान गलता कहलाता ह। पहाडी के ऊपर गालवी गगा का झरना है।

गलतेश्वर (जिला कैरा, गुजरात)

10वी शती ई० क एक मदिर के अवशेष हाल ही म इस स्थान से मिले थे जो पूव मोलकीकालीन हैं। चालुक्यकालीन अय मदिर भी यहा स्थित हैं।

गवालियर, ग्वालियर (म० प्र०)

प्राचीन नाम गापाद्रि या गोपगिरि है। जनश्रुति है कि राजपूत नरेश सूरजसेन ने ग्वालिप नाम के साधु के कहने से यह नगर बसाया था। महाभारत सभा० 30 3 म गोपालकक्ष नामक स्थान पर भीम की विजय का उल्लेख है—सभवत यह गोपाद्रि ही है।

ग्वालियर का दुर्ग बहुत प्राचीन है और इसका प्रारंभिक इतिहास तिमिराच्छन्न है। हूण महाराजाधिराज तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल के शासनकाल के 15वें वर्ष (525 ई०) का एक शिलालेख ग्वालियर दुर्ग से प्राप्त हुआ था जिसमे मातृचेत नामक व्यक्ति द्वारा गोपाद्रि या गोप नाम की पहाडी (जिस पर दुर्ग स्थित है) पर एक सूर्य मंदिर बनवाए जाने का उल्लेख है। इससे स्पष्ट है कि इस पहाडी का प्राचीन नाम गोपाद्रि (रूपांतर गोपाचल, गोपगिरि) है तथा इस पर किसी न किसी प्रकार की बस्ती गुप्तकाल मे भी थी। इतिहास से सूचित होता है कि ग्वालियर मे 875 ई० मे कन्नौज के गुर्जर प्रतिहारो का राज्य था। मुसलमानो के आक्रमण के समय भी यहा कछवाहा, प्रतिहार आदि राजपूत वंश राज्य करते थे। 1232 ई० मे दिल्ली के गुलामवंश के सुलतान इल्तुतमिश ने ग्वालियर के किले को हस्तगत किया और राजपूत रानियो ने जौहर की प्रथा के अनुसार अग्नि मे कूदकर प्राण त्याग दिए। 1399 से 1516 ई० तक यह किला तोमर-नरेशो के अधीन रहा जिनमे प्रमुख मानसिंह था। इसकी रानी गूजरी या मृगनैनी के विषय मे अनेक किंवदंतिया प्रचलित हैं। किले का गूजरी महल मृगनयनी का ही अमिट स्मारक है। 1528 ई० मे बाबर ने यह किला जीता। मुगलो ने इसका उपयोग एक सुदृढ कारागार के रूप मे किया। इसमे राजनैतिक बंदी रखे जाते थे। औरंगजेब ने अपने भाई और गद्दी के हकदार मुराद और तत्पश्चात् दारा के पुत्र सुलेमानशिकोह को बंद करके इसी किले मे बंद रखा। मुगलो के अपकर्ष के समय जब महाराष्ट्र के प्रमुख सरदार सिंधिया का दिल्ली आगरा के पार्श्ववर्ती प्रदेश मे आधिपत्य स्थापित हुआ तो उसी समय ग्वालियर भी उसके हाथ मे आ गया। इस प्रकार वर्तमान काल तक सिंधिया के राज्य की राजधानी ग्वालियर मे रही। दुर्ग के स्मारको मे ग्वालियर का लंबा इतिहास प्रतिबिंबित होता है। यहा का सर्वप्राचीन स्मारक मातृचेत का बनवाया हुआ सूर्य मंदिर ही था जिसका कोई चिह्न अब नही है किंतु जिसकी स्थिति सूरज तालाब के निकट रही होगी। दूसरा स्मारक चतुर्भुज विष्णु का मंदिर है जो पहाडी के पार्श्व मे काटा गया है। इसमे एक चौकोर देवालय के ऊपर एक शिखर है और पूर्व मध्यकालीन शैली मे बना हुआ सभामंडप। इस मंदिर को 875 ई० मे अल्ल नामक व्यक्ति ने गुर्जर प्रतिहार नरेश रामदेव के समय मे बनवाया था। इसके पश्चात् 1093 ई० मे बना हुआ सासबहू (सहस्रबाहु ?) का मंदिर ग्वालियर दुर्ग का एक विशेष ऐतिहासिक स्मारक है। इसे कछवाहा नरेश महीपाल ने निर्मित किया था। यह भी विष्णु का मंदिर है। यहा

जाता है कि पहले इसका शिखर सौ फुट ऊं
शिखर दोनो ही सरचनाए विनष्ट हो गई हैं
मडप की छत की अद्‌भुत नक्काशी और म
पर निर्मित विशद मूर्तिकारी से प्रकट होता
सिरदलो की सूक्ष्म तथा प्रभावोत्पादक मूर्ति
की पत्थर की चौखटो पर गगा-यमुना की म
जो गुप्तकालीन परपरा मे है। सभामडप के
पुष्पालकरणो का अकन बडी विदग्धता औ
सास-बहू मदिर से कुछ दूर पर दुग का सर्वो
है। इसकी ऊचाई सौ फुट से भी अधिक है
द्रविड शैली है। इसका निर्माण काल 8वी शती
जाता है। इस मदिर के ऊपर की नक्काशी स
अपेक्षा सादी किंतु अधिक प्रभावशाली है।
दुग की पहाडी मे चारो ओर उत्कीर्ण जैन
आती हैं जिनमे एक तो ५७ फुट ऊची है।
15वीं शती के तोमर राजाओ के जमाने के
में हैं जिनमें मान-मदिर और गूजरी महल
कारण इसकी शुद्ध भारतीय या हिंदू वास्तु शै
की चोटी पर बना हुआ है। इस विस्तृत भ
हैं। 1528 ई० मे जब बाबर ने ग्वालियर
रियों पर सुनहरी काम था जिससे ये दूर से
इस भवन के पूर्वाभिमुख भाग से बीहड प
मिलती है। इसके अदर मानसिंह का प्रासा
भारतीय है। इस शैली का प्रभाव अकबर के
देखा जा सकता है। गूजरी महल दुमजिला भ
और भव्य है। इस पर गुबद बने हैं और अ
प्रकोष्ठो की पक्ति है। दुग के अन्य भवनो
(तोमरो द्वारा निर्मित) तथा मुगलो के प्रासाद
महल आदि हैं। दुग के बाहर औरगजेब के सम
के गुरु मु० गौस का मकबरा स्थित है। पास
तथा भारत के प्रसिद्ध सगीतज्ञ तानसेन की सम
दूरी पर रानी लक्ष्मीबाई की प्रसिद्ध समाधि

चा था। अब इसका गर्भगृह तथा
किंतु इसकी कला का वैभव, सभा
दिर के बाहरी और भीतरी भागो
है। इसी प्रकार मदिर के द्वारो के
रो भी परम प्रशसनीय है। द्वार
निया और पुष्पालकरण खचित हैं
छत पर भी कीर्तिमुखो के सहित
सुदरता के साथ किया गया है।
व स्मारक 'तेली का मदिर' स्थित
इसके शिखर की विशेषता इसकी
से लेकर 10वी शती ई० तक माना
स बहू के मदिर की नक्काशी की
कालक्रम मे इस मदिर के पश्चात
तीर्थंकरो की विशाल नग्न मूर्तिया
ये सब 15वी शती मे बनी थी।
न्य विख्यात स्मारक भी इस दुग
स्य हैं। मानमदिर की ख्याति का
गी है। यह 300 फुट ऊँची पहाडी
न पर छ वतुल छतरिया बनी
रा किला देखा था तब इन छत
सूय के प्रकाश मे चमकती थी।
हाडी प्रदेश की मनोरम घाटी
है जिसकी वास्तुशैली सवथा
फतहपुर सीकरी के भवनो मे
न है जिसका बाहरी भाग सादा
दर एक प्रागण के चारो ओर
म करन मदिर, विक्रम मदिर
—जहागीरी महल, शाहजहानी-
य की एक मसजिद और अकबर
ही अकबर के नवरत्नो मे से एक
धि है। यहा से एक मील की
जो भारत के प्रथम स्वतत्रता

गिरधरपुर (जिला मथुरा, उ० प्र०)

इस ग्राम से 1929 म एक छोटा प्रस्तर स्तभ प्राप्त हुआ था जिस पर कुशान नरेश महाराज हुविष्क के शासन के 28 वे वप का एक सस्कृत अभिलेख उत्कीण है जो इस प्रकार है —'सिद्ध सवतसर 208 गुप्पिय दिवस अय पुण्यशाला प्राचिनीकनसरुकमान पुत्रेण खरासलेर पतिना वकनपतिना अक्षयनीवि दिनातता वृद्धितोमासानुमास शुद्धस्य चतुर्दिशि पुण्यशालाय ब्राह्मणशत परिविषितव्य दिवसे दिवसे च पुण्यशालाय द्वारमूले धारिय साद्य सक्तुना आढका 3 लवणप्रस्थो 1, शकुप्रस्थो 1, हरित कलापकघटका3, मल्लका 5 एत अनाधान कृतेन दातव्य बुभुक्षितान पिबसितान यनान पुण्य त देवपुत्रस्य पाहिस्य हुविष्कस्य येषा च देवपुत्रो प्रिय तषामपि पुण्य भवतु सर्वापि च पृथिवीये पुण्य भवतु अक्षयनीविदिनाशकश्रेणीये पुराण शत 500,50 समितकरश्रेणी (ये च) पुराणशत 500,50' अर्थात् 'सिद्धि हो । 28वे वप मे पौष मास के प्रथम दिन पूवदिशा की इस पुण्यशाला के लिए कनसरुकमान के पुत्र खरासलेर तथा वकन के अधीश्वर के द्वारा अक्षयनीवि प्रदत्त की गई । इस अक्षयनीवि स प्रतिमास जितना ब्याज प्राप्त होगा उससे प्रत्यक मास की शुक्ल चतुदशी को पुण्यशाला मे सौ ब्राह्मणो को भोजन करवाया जाएगा तथा उसी ब्याज से प्रत्येक दिन पुण्यशाला के द्वार पर 3 आढक सत्तू, 1 प्रस्थ नमक, 1 प्रस्थ शकु, 3 घटक और 5 मल्लक हरी शाकभाजी—ये वस्तुएँ भूखे प्यासे तथा अनाथ लोगो म बाटी जाएगी । इसका जो पुण्य होगा वह देवपुत्र पाहिहुविष्क तथा उसके प्रशसको और सारे ससार के लोगा को होगा । अक्षयनीवि म से 550 पुराण शक श्रेणी मे तथा 550 पुराण आटा पीसने वाला की श्रेणी म जमा किए गए' । इस लेख से कुषाण कालीन उत्तरी भारत की सामाजिक आर्थिक तथा नतिक अवस्था पर अच्छा प्रकाश पडता है । इससे सूचित होता है कि उस समय श्रमिको तथा व्यावसायिका के सघ बको का भी काम करते थे । इस अभिलेख म तत्कालीन लोगो की नैतिक या धार्मिक प्रवृत्ति की भी झलक मिलती है ।

गिरनार (जिला जूनागढ, काठियावाड, गुजरात)

प्राचीन नाम गिरिनगर । महाभारत म उल्लिखित रवतक पवत की क्रोड मे बसा हुआ प्राचीन तीथस्थल । पहाडी की ऊची चोटी पर कई जैन मदिर है । यहा की चढाई बडी कठिन है । गिरिशिखर तक पहुचने के लिए सात हजार सीढिया हैं । इन मदिरा म सव प्राचीन, गुजरात-नरेश कुमारपाल क समय का बना हुआ है । दूसरा वस्तुपाल और तेजपाल नामक भाइया न बनवाया था । इसे तीर्थंकर मल्लिनाथ का मदिर कहते हैं । यह विक्रम सवत 1285=1237

ई० म बना था। तीसरा मदिर नेमिनाथ का है जो 1277 ई० क लगभग तैयार हुआ था। यह मबसे अधिक विशाल और भव्य है। प्राचीन काल मे इन मदिरो की शाभा बहुत अधिक थी क्योकि इनमे सभामडप, स्तभ, शिखर, गर्भगृह आदि स्वच्छ सगमरमर से निर्मित हान के कारण बहुत चमकदार और सुदर दीखत थे। अब अनेको बार मरम्मत होन से इनका स्वाभाविक सौंदय कुछ फीका पड गया है। पवत पर दत्तात्रेय का मदिर और गोमुखी गगा है जो हिंदुआ का तीथ है। जैना का तीथ गजेंद्र पदकुड भी पवत शिखर पर अवस्थित है। गिरनार मे कई इतिहास प्रसिद्ध अभिलेख मिले है। पहाडी की तलहटी म एक वृहत चट्टान पर अशाक की मुख्य धमलिपिया 1-14 उत्कीण है जा ब्राह्मीलिपि और पाली भाषा मे है। इसी चट्टान पर क्षत्रप रुद्रदामन् का, लगभग 120 ई० मे उत्कीण, प्रसिद्ध सस्कृत अभिलख है। इसमे पाटलिपुत्र के चद्रगुप्तमौय तथा परवर्ती राजाआ द्वारा निर्मित तथा जीर्णोद्धारित सुदशन झील और विष्णु मदिर का सुदर वणन है। यह लेख सस्कृत काव्यशैली के विकास के अध्ययन क लिए महत्त्वपूण समझा जाता है। यह अभिलेख इस प्रकार है—'सिद्धम्। इद तडाक सुदशन गिरिनगरादपिदू—मृत्तिकोपलविस्तारायामाच्छ्रयनि सधिबद्धदृढसव पालीकत्वात पर्वतपादप्रतिस्पर्धि सुश्लिष्टवध—मवजातेनाकृत्रिमण सेतुबधनाप पन सुप्रतिविहत प्रणालीपरीवाहमीढविधान च त्रिस्कध नादिभिरनुग्रहै महत्युपचये वतत। तदिद राज्ञो महाक्षत्रपस्य सुगहीतनाम्न स्वामिचष्टनपौत्रस्य रान क्षत्रपस्य जयदाम्न पुत्रस्य राज्ञा महाक्षत्रपस्य गुरुभिरभ्यस्तनाम्ना रुद्रदाम्नो वर्षे द्विसप्ततितम 702 मागशीप बहुल प्रतिपदाया सृष्टवृष्टिना पजन्यनका णवभूतायामिव पृथिव्या कृताया गिरेरूजयत सुवणसिक्तापलाशिनीप्रभृतीना नदीनामतिमात्रादवृत्तैर्वेगै सेतुम यमाणा नुरूप प्रतिकारमपि—गिरिशिखर तरुत टाट्टाल कोपतल्प द्वारशरणोच्छ्रय विध्वसिना युगनिधनसदृशपरमघोरवेगेन वायुना प्रमथित मलिल विक्षिप्त जजरी कृताव क्षिप्ताश्म वृक्षगुल्म लताप्रतान मानदी तलादित्युद्घाटित मासीत्। चत्वारि हस्तशतानि विंशदुत्तराण्यायतनता-वन्त्ये व विस्तीर्णेन पच सप्तहस्तानवगाढन भेदेन नि सृत सव तोय मरुधन्वकल्प मतिभश दुदशन—स्यार्थे मौयस्य राज्ञ चन्द्रगुप्तस्य राष्ट्रियेण वैश्येन पुष्यगुप्तेन कारितमशोकस्य मौयस्य कृत यवनराजेन तुषास्फेनाधिष्ठाय प्रणाली भिरलकृत तत्कारितया च राजानुरूप कृतविधानया तस्मिन् भेदे दृष्टया प्रणाडया विस्तृत सेतुणा गर्भात प्रभृत्यविहित समुदित राजलक्ष्मी धारणागुणत सववर्णैरभिगम्य

स्वयमभिगत जनपद प्रणिपतितायुप शरणदेन दस्युव्याल मृगरागादिभिरनु पसृष्ट पूव नगरनिगम जनपदाना स्ववीर्याजितानामनुरक्त सवप्रकृतीना पूर्वा-पराकरा वन्त्यनूपनी वृदानत सुराष्ट्र श्वभ्रमरकच्छ सिधु सौवीर कुकुरापरा त निपादादीना समग्रणा तत्प्रभावाद्य थ काम विपयाणा विपयाणा पतिना सवक्ष त्राविष्कृतवीर शब्द जातोत्सेक विधेयाना यौधेयाना प्रसह्योत्सादके न दक्षिणापथ-पत सातकर्णे द्विरपि निर्व्याज मवजित्यावजित्य सवधाविदूरतयानुत्सादना त्प्राप्तयशसा माप्त विजयेन भ्रष्ट राजप्रतिष्ठापकेन यथावहस्ताच्छ्रयाजितो-र्जितधर्मानुरागेण शब्दार्थ गाधर्वयायाद्याना विद्याना महतीना पारण धारण विज्ञान प्रयोगावाप्त विपुलकीर्तिना तुरग गज रथ चर्यासि चर्म नियुद्धाद्या परवल लाघवसौष्ठव क्रियेणाहर हर्दानमाना नवमानशीलेन स्थूललक्षेण यथावत् प्राप्तै-वलिशुल्क भागै कनक रजतवज्र वैडूय रत्नोपचय विष्यन्दमान कोशेन स्फुटलघु मधुर चित्रका त शब्द समयोहारालकृत गद्यपद्य—न प्रमाणमाना मान स्वर गतिवण सारस त्वादिभि परमलक्षण व्यजनै रुपेतका तमूर्तिना स्वयमधिगत—महाक्षत्रप नाम्ना नरेन्द्र कन्या स्वयवरानेक माल्यप्राप्त दाम्ना महाक्षत्रपेण रुद्रदाम्ना वप सहस्राय गाब्राह्म—थ धमकीर्ति वृद्धयथ चापीडयित्वा करविष्टि प्रणयक्रियाभि पौरजनपद जन स्वस्मात्कोशा महता धनौघेनानति महता च कालेन *त्रिगुण दृढतर विस्तारायाम सेतु विधाय सव तटे सुदशन वर कारितम ।* अस्मि-न्नर्थे महाक्षत्रपस्य मति सचिवकम सचिवरमात्य गुण समुद्युक्तरप्यति महत्वाद्द भेदस्यानुत्साह विमुख मतिभि प्रत्याख्यातारभ पुन सतुवधनै राश्याद्धाहा भूतासु प्रजास्विहाधिष्ठाने पौरजानपदजनानुग्रहाथ पार्थिवेन कृत्स्नानामानत सुराष्ट्राणा पालनार्थं नियुक्तेन पह्लवेन कुलपपुत्रेणामात्येन सुविशाखेन यथावदथधम व्यवहार दशनैरनुरागम भिवधयता शक्तेन दा तेना चपला विस्मितेनार्येणाहर्येण स्वधितिष्ठता धम कीर्ति यशासि भर्तुरभिवधयतानुष्ठितामिति'। इसी अभि-लेख की चट्टान पर 458 ई० का गुप्तसम्राट् स्कदगुप्त के समय का भी एक अभि-लेख अकित है। इसम स्कदगुप्त द्वारा नियुक्त सुराष्ट्र क तत्कालीन राष्ट्रिक पणदत्त का उल्लेख है। पणदत्त के पुत्र चक्रपालित न जो गिरिनगर का शासक था सुदशन तडाग के सेतु या बाध का जीर्णोद्धार करवाया क्योकि यह स्कदगुप्त के राज्याभिषेक के वप मे जल के वेग से नष्ट हो गया था। इन अभिलेखो से प्रमाणित होता है कि हमारे इतिहास के सुदूर अतीत म भी राज्य द्वारा नदियो पर बाध बनवाकर किसानो के लिए कृषि एव सिचाई के साधन जुटाने की दीघकालीन प्रथा थी। जैनग्रथ विविधतीथकल्प म वर्णित है कि गिरनार सब पवतो मे श्रेष्ठ है क्योकि यह तीर्थंकर नमि से सबधित है।

गिरिकड पर्वत (लका)

महावग 10,27-28। यह पवत अनुराधापुर से 15 मील दक्षिण म कहगल नामक पहाडी के पास स्थित था। कहगल प्राचीन कास पवत है।

गिरिकर्णिका

गुजरात की सावरमती नदी, द० पद्मपुराण—उत्तर० 52। सावरमता का यह नाम सौंदर्य बोध की दृष्टि से बहुत ही सुदर है। पवत की कर्णिका या कान म पहनने की बाली के समान—यह नदी का विशपण हमारे प्राचीन साहित्य कारो एव भौगोलिको की सौदयमयी दृष्टि का अच्छा परिचायक है।

गिरिकोट्टूर=कोटटूरगिरि

गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति के अनुसार गिरिकोट्टूर क राजा स्वामिदत्त को समुद्रगुप्त न अपन दक्षिण भारत के अभियान के प्रसग म परास्त किया था—'कौसलक महेन्द्र गिरिकोट्टूरक स्वामीदत्त—प्रभृति सवदक्षिणा पथ राजा गृहणमाक्षानुग्रहजनित प्रतापोन्मिश्र महाभाग्यस्य—'। इसका अभिज्ञान वर्तमान कोठूर, जिला गजम उडीसा से किया गया है।

गिरिधन (महाराष्ट्र)

बसीन से $4\frac{1}{2}$ मील दूर गिरिधन नामक पहाडी है जो प्राचीन गुहा मदिर के लिए उल्लेखनीय है। यह सोपारा या प्राचीन शूर्पारक के निकट स्थित है।

गिरिनगर (जिला जूनागढ)

वतमान गिरनार का ही प्राचीन नाम है। इसका उल्लेख रुद्रदामन् के प्रसिद्ध अभिलेख मे है—'इद तडाक सुदर्शन गिरिनगरादपि—(द० गिरनार)।

गिरिव्रज

(1) रामायणकाल म कक्य दश की राजधानी (गिरिव्रज का शाब्दिक अर्थ पहाडियो का समूह है)। इसे राजगृह भी कहत थे—'उभयो भरतशत्रुघ्नौ कक्येषु परतपौ, पुर राजगृह रम्य मातामहनिवेशा' वाल्मीकि० अयो० 67,7। 'गिरिव्रज पुरवर शीघ्रमासादुरजसा'—अयो० 68, 22। गिरिव्रज का अभिज्ञान जनरल-कनिघम न झेलम नदी क तट पर बस हुए गिरजाक अथवा जलालपुर कस्बे (प० पाकि०) स किया है। जलालपुर का प्राचीन नाम नगरहार भी था।

(2) मगध की प्राची। राजधानी जिस राजगृह भी कहत थ। कक्य क गिरिव्रज स इस गिरिव्रज का भिन्न करन क लिए इस मगध का गिरिव्रज कहा था (द० गकड बुद्ध और दी इस्ट-13, पृ० 150)। वाल्मीकि बाल० 1 38 37 म गिरिव्रज को पाच पहाडियो का उल्लेख है—वसुधुरवसाया

वसुर्नाम गिरिव्रजम । एषा वसुमती नामवसोस्तस्य महात्मन , एते शैलवरा पच प्रकाशन्ते समन्तत '।—इस उल्लेख के अनुसार इस नगर को वसु नामक राजा ने बसाया था। महाभारत काल मे गिरिव्रज मे मगधनरेश जरासध की राजधानी थी—'तने रुद्धा हि राजान सर्वे जित्वा गिरिव्रजे'—महा० सभा० 14,63 अर्थात् जरासध ने सब राजाओ को जीतकर गिरिव्रज म कैद कर लिया है। 'भ्रामयित्वा शतगुणमेकोन यन भारत, गदाक्षिप्ता बलवता मागधेन गिरिव्रजात्'—महा० सभा० 19,23 अर्थात श्रीकृष्ण के ऊपर आक्रमण करने के लिए बलवान मगधराज जरासध ने अपनी गदा निन्यानवे बार घुमाकर गिरिव्रज से (99 योजन दूर मथुरा की ओर) फकी (दे० गदावसान)। सभवत मगध का गिरिव्रज, केकय के इसी नाम के नगर के निवासियो द्वारा रामायणकाल के पश्चात् बसाया गया होगा। सौंदरनद 1,42 मे कपिलवस्तु की तुलना अश्वघोष ने गिरिव्रज से की है—'सरिदविस्तीर्णपरिख स्पष्टाचितमहापथम् शैलकल्पमहावप्र गिरिव्रजमिवा परम्'। इसके अन्य नाम राजगह, मगधपुर, बाहद्रथपुर, बिंबिसारपुरी, वसुमती आदि प्राचीन साहित्य म प्राप्त है—(दे० राजगह)।

गिरी

यमुना की सहायक नदी जिसका पुराणा म वणन है । यह हिमालय क चूर पवत से निकल कर राजघाट म यमुना म मिलती है (जनल आव एशियाटिक सोसायटी, बगाल, जिल्द 11,1842 पृ० 364)।

गिर्णा

सह्याद्रि से निस्सृत एक नदी जो खानदेश मे चोपडा के पास ताप्ती म मिलती है ।

गिहलौट (उदयपुर, राज०)

मध्यकाल मे, चित्तौड के निकट अवली-पवत की घाटी मे बसा हुआ एक अतिप्राचीन स्थान जो बाद मे उदयपुर कहलाया। मेवाड की प्राचीन जनश्रुतियो के अनुसार मेवाड-नरेशो के पूवज बप्पारावल ने चित्तौड को विजय करने के पूव इसी स्थान के निकट कुछ समय तक अज्ञातवास किया था। गहलौट राजपूतो का आदि निवासस्थान भी यही था। इस स्थान का नामकरण गुहिल जाति के यहा मूलरूप स निवास करने के कारण हुआ था। बप्पा का सबध बचपन मे इन्ही लोगो से रहा था (गुहिल=गुह)। 1567 ई० मे जब अकबर ने चित्तौड पर आक्रमण किया तो महाराणा उदयसिंह राजधानी छोड कर गिहलौट मे जाकर रहे थे। उन्होने प्रारभ मे यहा एक

पहाड़ी पर सुंदर प्रासाद का निर्माण करवाया था। धीरे-धीरे कई और महल भी यहां बनवाए गए और यहां के निवासियों की संख्या धीरे धीरे बढ़ने लगी और इस जंगली ग्राम ने शीघ्र ही एक सुंदर नगर का रूप धारण कर लिया। इसी का नाम कुछ समय के पश्चात् उदयसिंह के नाम पर उदयपुर हुआ और मेवाड़ राज्य की राजधानी चित्तौड़ से हटा कर नए नगर में बनाई गई।

गुंड (गुजरात)

क्षत्रप रुद्रसिंह (क्षत्रप रुद्रदामन का वंशज) के शासनकाल (181 ई०) का एक अभिलेख इस स्थान से प्राप्त हुआ है। इसमें आभीर सेनापति रुद्र भूति द्वारा एक तड़ाग के निर्मित किए जाने का उल्लेख है।

गुंडगिरि

सिंध, (प० पाकि०) में स्थित प्राचीन जैन तीर्थ (दे० एन्शेंट जैन हिम्स, पृ० 56)।

गुजरांवाला (प० पाकि०)

पंजाब केसरी महाराज रणजीतसिंह के जन्मस्थान के रूप में इस नगर की ख्याति है। इनका जन्म 1780 ई० में हुआ था।

गुजर्रा (जिला दतिया, म० प्र०)

1924 में इस स्थान से अशोक का एक शिलाभिलेख प्राप्त हुआ था जो बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। अशोक के तब तक प्राप्त अभिलेखों या धर्मलिपियों में केवल मासकी के अभिलेख में ही अशोक का नाम देवानांप्रिय की उपाधि के साथ मिला था। शेष में सर्वत्र केवल देवानांप्रियदर्शी की उपाधि का ही उल्लेख है, नाम का नहीं। गुजर्रा में प्राप्त नए अभिलेख में, जो बैराट, सहसराम, रूपनाथ, यर्रागुडी, राजुलमंडगिरि और ब्रह्मगिरि तथा मासकी के अभिलेख की ही एक प्रति है, अशोक का नाम उपाधि सहित दिया हुआ है—'देवानां पियसपियदसिनो अशोक राजस'। इस प्रति के प्राप्त होने से इस अभिलेख के कई संशयग्रस्त पाठ स्पष्ट हो गए हैं। इसका मुख्य विषय है—अशोक के 256 दिन की धर्मयात्रा तथा बौद्धधर्म के प्रचार के लिए उसका अनथक प्रयास। जिस चट्टान पर यह लेख अंकित है वह गुजर्रा के निकट एक वन में अवस्थित है।

गुटीव दे० खेम

गुड़गांव (हरियाणा)

कहा जाता है कि कौरव पांडवों के गुरु द्रोणाचार्य के नाम पर यह स्थान गुरग्राम या गुड़गांव कहलाता है। ऐसी जनश्रुति है कि यहां उनका आश्रम था। द्रोणाचार्य का मंदिर भी गुड़गांव में है।

गुड देश

11वीं शती के अरब लेखक अलबरुनी के भारत यात्रा वृत्त में इस देश का उल्लेख है। यह संभवत थानेसर (स्थानेश्वर) का ही एक नाम था।

गुडीहट्नूर (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

यहा 17वी शती का एक मदिर अवस्थित है जो हेमाडपथी शैली म बना हुआ है। एक प्रागैतिहासिक श्मशान के चिन्ह भी यहा मिले है।

गुणमती (बिहार)

जिला गया (बिहार) की जहानाबाद तहसील म स्थित प्राचीन बौद्ध विहार। इसका युवानच्वाग ने उल्लेख किया है। यहा एक मदिर मे अवलोकितेश्वर की मूर्ति स्थित है। इसे अब भैरव का मूर्ति कहा जाता है (ग्रियसननोटस ऑन दि डिस्ट्रिक्ट ऑव गया)।

गुणीर (जिला फतहपुर, उ० प्र०)

गगा के किनारे एक टीले पर बसा हुआ छोटा सा ग्राम है किंतु आसपास के विस्तृत खडहरो से विदित होता है कि यह स्थान प्राचीन काल मे बहुत सप न रहा होगा। हाल ही मे, तुलसीदास के समकालीन सतकवि लक्षदास की पुरानी जीर्ण शीर्ण कुटी का यहा पता लगा है। लोक वार्ता के अनुसार गोस्वामी तुलसीदास लक्षदास से मिलने गुणीर आए थे। लक्षदास कृष्णायन नामक काव्य के रचयिता थे। यह ग्रथ अभी हाल मे प्रकाश म आया है।

गुप्तहाल (लका)

महावश 24, 17। महागाम से 34 मील उत्तर की ओर वर्तमान वुत्तल।

गुरदासपुर (पजाब, उ० प्र०)

यहा के किले म रहते हुए सिखो के वीर नेता बदावैरागी ने मुग़ल-सम्राट फर्रुखसियर की सेनाओ का डटकर सामना किया था। फरुखसियर ने बदा को दबाने के लिए कश्मीर से तूरमानी सूबेदार अब्दुलसमद को भेजा था जिसने गुरदासपुर के किले को नौ मास तक घेर रक्खा था। बदा और उसके वीर साथी किले क भीतर से मुगलो का मुकाबला करते रहे किंतु रसद चुक जाने पर विवश हो गए और अत म उन्हे आत्मसमर्पण करना पडा। बदा को पकड कर दिल्ली ले जाया गया जहा इस वीर का पशाचिक क्रूरता के साथ वध कर दिया गया।

गुरावलो घाट (जिला इलाहाबाद, उ०प्र०)

प्रयाग से दक्षिण की ओर यमुना का एक घाट। स्थानीय लोक श्रुति के अनुसार श्रीरामचन्द्रजी ने वनवास-यात्रा के लिए प्रयाग से चित्रकूट जाते समय

यमुना को इसी स्थान पर पार किया था।

गुरीला गिरि (म० प्र०)

चदेरी से नौ मील पूर्वोत्तर। यहा अनेक प्राचीन जन मदिरा के खडहर विस्तृत क्षेत्र को घेरे हुए है।

गुरुग्राम=गुडगाव

गुरुपादगिरि (जिला गया, बिहार)

बौद्ध गया से 100 मील दूर है। यहा काश्यप बुद्ध महाकाश्यप न निर्वाण प्राप्त किया था। इसे आजकल गुरपा पहाडी कहते है। इसका दूसरा नाम कुक्कुटपादगिरि था।

गुरेज (द० दरद)

गुग (जिला आन्लिावाद, आ० प्र०)

यहा प्रागैतिहासिक काल के श्मशान के चिह्न (पत्थरो के घेर के रूप म) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इसी प्रकार क प्रागैतिहासिक पत्थरा के घेर (Stonehenge) अन्य देशो—ब्रिटन आदि मे भी मिल हैं।

गुर्गी (जिला रीवा, म० प्र०)

रीवा से प्राय बारह मील पूव की आर स्थित है। एक ऊचे टीले पर कलचुरि नरेशो के समय के भग्नावशेष प्राप्त हुए हैं। यहा से प्राप्त एक प्राचीन कलापूर्ण तोरण, रीवा क राजमहल मे ल जाया गया था। इसके स्तभो तथा शीप पापाणा (सिरदला) पर अनेक सुन्दर मूर्तिया खुदी हुई है। इनम से एक पर शिव की वाराल का मनोहर दृश्य मूर्तिकारी के रूप मे अकित है। युवराजदेव प्रथम के काल मे बने हुए एक विशाल मदिर के खडहरो से 12 फुट×5 फुट परिमाप के प्रस्तर खड पर शयनमुद्रा मे अकित शिवपार्वती की एक सुन्दर मूर्ति प्राप्त हुई है।

गुलबर्गा (मैसूर)

प्राचीन नाम कलबुर्गी है। यह नगर दक्षिण के बहमनी नरेशो के समय म प्रसिद्ध हुआ। यहा एक प्राचीन सुदृढ दुग स्थित है जिसके अन्दर एक विशाल मसजिद है जो 1347 ई० मे बनी थी। यह 216 फुट लम्बी और 176 फुट चौडी है। इसके अन्दर कोई आगन नही है वरन पूरी मसजिद एक ही छत क नीचे है। कहा जाता है कि यह भारत की सबस बडी मसजिद है। इसकी बनावट मे स्पेन नगर के कोरडावा की मसजिद की अनुकृति दिखलाई पडती है। अन्दर से यह प्राचीन गिरजाघरो से मिलती-जुलती है। इसका एक सुदीर्घ गुबद है जिसके चारो तरफ छोटे छोटे गुबद हैं। मुसलिम सत ख्वाजा बदा

नवाज की दरगाह (निर्माण 1640 ई०) भी गुलबर्गा का प्रसिद्ध स्मारक है। इसका गुम्बद प्राय अस्सी फुट ऊचा है। दरगाह के अदर नक्कारखाना, सराय, मदरसा और औरंगज़ेब की मसजिद है। बहमनी सुलतानो के मक्बरे भी यहा स्थित है। गुलबगा के ऐतिहासिक मदिरो म वासवेश्वर का मदिर 19वी शती की वास्तुकला का सुदर उदाहरण है। श्री वासवेश्वर (शरन बसप्पा) का जम आज से प्राय सवा सौ वप पूव गुलबर्गा ज़िले मे स्थित अरलगुदागी नामक ग्राम मे हुआ था। यह बचपन ही से सत स्वभाव के व्यक्ति थे। 35 वप की आयु मे इ होने स यास ले लिया कि तु बाद म व गुलबर्गा म रहकर जीवन भर जनता जनादन की सेवा मे लगे रहे और उहोने मानवमात्र की सवा को ही अपने धार्मिक विचारो का केद्र बना लिया। माच माम मे इनक समाधि मदिर पर दूर दूर से लोग आकर श्रद्धाजलि अर्पित करते है। गुलबगा के अन्य ऐतिहासिक स्मारक य ह—हसनगगू का मक्बरा (हसनगगू ने ही बहमनी वश की नीव डाली थी), महमूदशाह का मकबरा, अफजलखा की मसजिद, लगर की मसजिद, चादबीबी का मकबरा, सिद्दी श्रवर का मकबरा, चोर गुबद, कल्दरखा की मसजिद व इ ही का मक्बरा। चादबीबी का मकबरा बीजापुर की शैली म बना हुआ है और स्वय उसी का बनवाया हुआ है किन्तु चादबीबी की कब्र उसम नही है। चार गुबद की भूमि गत भूलभुलया मे पिछले जमान म चार डाकुओ न अड्डा बना लिया था। इसी भवन म कफेशस ऑव ए-ठग का प्रसिद्ध लेखक मीडोज़ टेलर भी ठहरा था। लगर की मसजिद की छत हाथी की पीठ की भाति दिखाई दती है और बौद्ध चैत्यो की अनुकृति जान पडती है।

गुलमग (कश्मीर)

कश्मीर का प्रसिद्ध पवतीय स्थान। रानी का मदिर चीनी बौद्ध शैली म निर्मित है। मदिर अपेक्षाकृत नवीन होते हुए भी कश्मीर की पुरानी वास्तुकला का उदाहरण है। गुलमग मुग़ल बादशाहो, विशेषकर जहागीर का, प्रिय क्रीडा-स्थल था।

गुलशनाबाद

(1) सादापुर वेदक (आध्र प्रदश) का नाम गालकुण्डा क सुलतानो के समय म गुलशनाबाद कर दिया गया था।

(2)=नासिक (महाराष्ट्र)। कहा जाता है कि जब मुसलमाना ने नासिक पर आक्रमण किया तो इस प्राचीन तीथ का नाम बदलकर उहोने गुल्शना-बाद कर दिया किन्तु नया नाम अधिक समय तक नही चला और प्राचीन

नाम नासिक बराबर प्रचलित रहा ।

गुलेर (कागडा, हि० प्र०)

कागडा स्कूल की चित्रकला मे गुलेर का विशेष महत्व है । वास्तव म इस शैली का जन्म 18वी शती म गुलेर तथा निकटवर्ती स्थानो मे हुआ था । बसौली के प्रसिद्ध चित्रकला प्रेमी नरेश कृपालसिंह की मृत्यु के पश्चात उनके दरबार के अनेक कलावत अन्य स्थानो म चले गये थे । गुलेर म कृपालसिंह के समान ही राजा गोवधनसिंह न अनेक चित्रकारो को प्रश्रय तथा प्रोत्साहन दिया । बसौली शैली की परुपता गुलेर म पहुचकर कोमल हो गई और कागडा शली के विशिष्ट गुण—मृदुसौन्दय का धीरे धीरे गुलेर के वातावरण मे विकास होने लगा किन्तु अब भी रगो की चमक दमक पर कलाकार अधिक ध्यान देते थे । किन्तु इस शैली का पूण विकास गुलेर के मुगल चित्रकारो ने किया जो इस नगर म दिल्ली से नादिरशाह के आक्रमण (1739) के पश्चात् आकर बस गए थे । गुलेर की एक राजकुमारी का विवाह गढवाल म होने के कारण कागडा शली की चित्रकला गढवाल भी जा पहुची ।

गुहारण्य (मैसूर)

हरिहर (बगलौर पूना माग पर) ही प्राचीन पौराणिक गुहारण्य है । इसी स्थान पर भगवान् विष्णु ने गुह नामक राक्षस का वध किया था ।

गूजडू गढ (जिला गढवाल, उ० प्र०)

गढवाल की एक प्राचीन गढी जहा पुराने महलो के खडहर आज भी देखे जा सकते है ।

गूजरवाडा

उन्नीसवी शती ई० म उ०प्र० के मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर और बिजनौर जिलो के कुछ भागो को गूजरवाडा कहते थे क्योकि इनमे गूजरो की अनेक बस्तिया थी। ये लोग खेतिहर होते हुए भी लूटमार करते थे ।

गृध्रकूट

राजगृह (बिहार) के निकट एक पवत जिसकी गुफा म गौतमबुद्ध वर्षाकाल व्यतीत किया करते थे । पहाडी पर अनेक रहने के स्थान आज भी बने हैं। गृध्रकूट, राजगृह की पाच पहाडियो मे से है जिनका नामोल्लेख पाली ग्रन्थो म है । इसे पाली मे गिज्झकूट कहा गया है । एक पाली ग्रन्थ मे बुद्ध ने राजगृह के जिन स्थानो को सुन्दर तथा सुखदायक बताया है उनम गृध्रकूट भी है । महाभारत मे राजगृह की जिन पाच पहाडियो के नाम हैं उनम गृध्रकूट का नाम नही है । दे० राजगृह ।

गेटोर (राजस्थान)

प्राचीन राजाओं की समाधि छतरियां यहां के उल्लेखनीय स्मारक है। ये राजस्थान की प्राचीन वास्तुकला के सुंदर उदाहरण है।

गेड्रोशिया

मकरान (प० पाकिस्तान) का यूनानी नाम। राम के इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् लेखक गिब्बन ने भी गेडराजिया का मकरान से अभिज्ञान किया है। संभवत यह नाम मकरान के प्राचीन बंदरगाह ग्वादूर (संस्कृत—बंदर) का रूपांतर है। ग्वादूर अलक्षेंद्र के आक्रमण के समय तथा उसके पूर्व से ही इस प्रदेश का बंदरगाह था। अलक्षेंद्र पंजाब से यूनान वापस जाते समय मकरान के मार्ग से ही गया था। यूनानी लेखकों के वृत्तांत से सूचित होता है कि गेड्रोजिया-निवासी मत्स्यभक्षक (ichthyphaogoi) थे तथा इस समुद्रतट पर ह्वेल मछलियां बहुतायत से मिलती थी। इनकी हड्डियों से यहां के निवासी घर बनाते थे और इसके विशाल खुले जबड़ों से दरवाजों का काम लेते थे।

गोआ

पश्चिमी समुद्र तट पर स्थित भूतपूर्व पुर्तगाली बस्ती जो 1961 से भारत का अभिन्न अंग बन गई है। गोआ अतिप्राचीन नगर है। इसका उल्लेख पुराणों तथा अन्य प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में प्राप्त है जहां इसके कई नाम मिलते हैं—जैसे, गाव, गावापुरी, गोराष्ट्र, गोपकपट्टन और गोमंतक। गोआ के इतिहास से विदित होता है कि यहां दक्षिण के प्रसिद्ध कदंब नामक राजवंश का अधिकार द्वितीय शती ई० से 1312 ई० तक था। तत्पश्चात् उत्तरी भारत से आने वाले मुसलमान आक्रमणकारियों ने इस पर आधिपत्य स्थापित कर लिया। उनका राज्य यहां 1370 ई० तक रहा, जब गोआ विजयनगर साम्राज्य के अंतर्गत कर लिया गया। 1402 ई० में बहमनी राज्य के विघटित हो जाने पर यूसुफ आदिलशाह ने गोआ को बीजापुर रियासत में मिला लिया। इस समय गोआ की गणना पश्चिमी समुद्र तट के प्रसिद्ध व्यापारिक केंद्रों में होती थी। विशेष कर हुरमुज (ईरान) से भारत आने वाले ईरानी घोड़े गोआ के बंदरगाह पर ही उतरते थे। हज यात्रियों के अरब जाने के लिए भी यही बंदरगाह था। इस समय व्यापारिक महत्त्व की दृष्टि से केवल कालीकट का ही गोआ के समकक्ष समझा जाता था। अरब भौगोलिकों ने गोआ को सिंदबूर या सदाबूर नाम से लिखा है। पुर्तगाली इसे गोवा वेल्हा कहते थे। 1498 ई० में पुर्तगाली नाविक वास्कोडीगामा के कालीकट पर उतरने के पश्चात् पुर्तगालियों ने भारत के पश्चिम तटवर्ती अनेक स्थानों पर अधिकार कर लिया। 1510 ई० में पुर्तगाली

गवर्नर अलबुकर्क ने इस नगर पर आक्रमण करके उसे हस्तगत कर लिया। यूसुफ आदिलशाह के बारबार पुर्तगालियों से मोर्चा लेते रहने पर भी अंत में गोआ पुर्तगालियों के कब्जे मे आ गया। इसी काल में इन लोगों का भारत के पश्चिमी तट के अनेक स्थानों पर अधिकार हो गया किंतु उन्हें डच, अंग्रेजों तथा मराठों का सामना करना था। पुर्तगाली बस्तियों पर 1603 ई० में डचों ने हमला किया। 1683 ई० में शिवाजी के पुत्र शंभाजी ने सालसट इत्यादि स्थानों पर आक्रमण करके पुर्तगालियों को बहुत हानि पहुंचाई। 1739 ई० में मराठा सरदार चिमनाजी आपा ने पुर्तगाली राज्य पर जोर का आक्रमण किया और उसका अधिकांश जीत लिया। इसका एक भाग तत्पश्चात अंग्रेजों के हाथ में चला गया। गोआ पुर्तगाल की अवशिष्ट बस्तियों में से था और यह स्थिति 1961 तक रही जब भारत ने अपने इस अभिन्न अंग को साढ़े चार सौ वर्ष के विजातीय शासन के पश्चात पुनः अपना लिया।

गोकर्ण (मैसूर)

गंगवती समुद्र संगम पर, हुबली से सौ मील दूर, उत्तर कनारा क्षेत्र में स्थित एक प्राचीन शैव तीर्थ है। महाभारत आदि० 216,34 35 में इसका उल्लेख अर्जुन की वनवास-यात्रा के प्रसंग में इस प्रकार है—'आद्य पशुपते स्थानं दर्शनादेव मुक्तिदम, यत्र पापोऽपि मनुजः प्राप्नोत्यभयं पदम'। पांडवों की तीर्थयात्रा के प्रसंग में पुनः गोकर्ण का वर्णन वन० 85,24 29 में है—'अथ गोकर्णमासाद्य त्रिषु लोकेषु विश्रुतम्, समुद्र मध्ये राजेंद्र सर्वलोक नमस्कृतम्'—। वन० 88,14 15 में गोकर्ण का पुनः उल्लेख है और इसे ताम्रपर्णी नदी के पास माना है—'ताम्रपर्णा तु कौंतेय कीर्तयिष्यामि तां शृणु यत्र देवैस्तपस्तप्तं महदि च्छद्भिराश्रमे गोकर्ण इति विख्यातस्त्रिषु लोकेषु भारत'। यहां अगस्त्य के शिष्य तृणसोमाग्नि का आश्रम था (वन० 88 17)। कालिदास ने रघुवंश 8,33 में भी गोकर्ण को दक्षिण समुद्र तट पर स्थित लिखा है—'अथरोधसि दक्षिणोदधेः श्रितगोकर्ण निकेतमीश्वरम् उपवीणयितुं ययौ रवेरुदयावृत्तिपथेन नारदः'। इस उल्लेख में गोकर्ण को शिव का निकेत अथवा गृह बताया गया है।

गोकर्णेश्वर (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा से दो मील उत्तर में यमुना किनारे एक प्राचीन स्थान है जहां कुषाणकाल में एक देवकुल था। यहां से कई कुषाण सम्राटों की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं जिनका अभिज्ञान अभी तक संदिग्ध है।

गोकामुख

श्रीमद्भागवत 5 19,16 में पर्वतों की सूची में गोकामुख का भी उल्लेख

है—'रवतक ककुभोनीलोगोकामुख इ द्रकील कामगिरिरिति—'। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है किंतु प्रसगानुसार यह दक्षिण भारत का कोई पवत शिखर जान पटता है।

गोकुल (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा के सामने यमुना के दूसरे तट पर बसा हुआ है। वसुदेव ने कृष्ण का, मथुरा म उनके ज म के तुरत पश्चात, कस से उनकी रक्षा करने के लिए, गोकुल मे नद यशोदा के घर पहुचा दिया था। गोकुल म कृष्ण का प्रारभिक बालपन बीता। तत्पश्चात कस के उत्पातो से बचने के लिए नद उनको लेकर वृ दावन मे जाकर बस गए। गाकुल का प्राचीन सस्कृत साहित्य मे अनेक स्थानो पर वणन है। हरिवशपुराण मे श्रीकृष्ण की कथा म इसका उल्लेख है। श्रीमद्भागवत के दशमस्कध म गाकुल का अनेको बार नद के ग्राम के रूप म उल्लेख है—'करो वैवार्षिको दत्तो राज्ञे दृष्टा वय च व नेह स्थेय बहुतिथ स त्युत्पाताश्च गाकुले। इति नदादयो गोपा प्रोक्तास्ते शौरिणा ययु, अनोभिरनडुद्युक्तैस्तमनुज्ञाप्य गोकुलम' 10,6 31-32। विष्णुपुराण मे भा कृष्ण के बचपन के निवास स्थान के रूप मे गाकुल का वणन है— विवेश गोकुल गोपीनेत्रपानैक भाजनम'— 5,16 28। 'अक्रूरोगोकुल प्राप्त किंचित सूर्ये विराजति' 5 17,18। गोकुल के मथुरा के सनिकट बसा होने के कारण इसका इतिहास बहुत कुछ मथुरा के इतिहास स शृख लाबद्ध रहा है (दे० मथुरा), किंतु फिर भी इतिहास की लबी अवधि मे गाकुल का पृथक् रूप से नामोल्लेख या निर्देश भी कभी कभी मिलता है। कहा जाता है कि क्लीसाबारा नामक जिस स्थान का वणन मेगेस्थनीज ने किया है वह कृष्णपुर या केशवपुर का ही ग्रीक रूपातर है और यह शायद गोकुल का ही अभिधान हो। गुप्तकाल म मथुरा की भाति गोकुल मे भी बौद्धधम का काफी प्रभाव था। चीनी यात्री फाह्यान (लगभग 400 ई०) ने लिखा है कि यूना (—यमुना) नदी क दोनो ओर बीस सघाराम हैं जिनम तीन सौ भिक्षु निवास करते है। युवानच्वाग ने सातवी शती मे मथुरा का वणन किया है और उसन यहा क निवासियो को विद्याप्रेमी और कोमल स्वभाव का बताया है। गोकुल का अलग स उल्लेख उसन नही किया है किंतु उसके मथुरा के वणन से जान पडता है कि गाकुल म भो इस समय बौद्धधम का जोर रहा होगा। फिर भी गुप्तकाल मे हि दूधम का पुनरुत्थान प्रारम्भ हा गया था और धीरे धीरे मथुरा, गाकुल आदि नवीन हि दूधम के प्रभावशाली के द्र बनते जा रहे थे। 1017 ई० मे, जब महमूद गजनवी न मथुरा पर आक्रमण किया, गोकुल भी मथुरा

की ही भांति वैष्णवतीर्थ था किन्तु शायद यहां बड़े विशाल मंदिर न होने के कारण वह आक्रमणकारी की दृष्टि से बाहर रहा और उसके बर्बर कृत्या का शिकार होने से बच गया। सिकंदरलोदी के समय में होने वाले मथुरा के घोर विध्वंस के समय भी गोकुल शायद अपनी अप्रसिद्धि के कारण ही बचा रहा। औरंगजेब के जमाने में भी जब मथुरा के शासक अब्दुन नबी ने यहां के प्रसिद्ध मंदिर को तोड़ा तो गोकुल उसकी वक्र दृष्टि से बचा रहा। 1757 ई० में अहमदशाह अब्दाली ने मथुरा पर आक्रमण किया और महावन में अपना शिविर बनाया। उसका विचार गोकुल को भी विध्वस्त करने का था किन्तु वहां के चार सहस्र नागा, आक्राता अब्दाली की सेना से सामना करने को निकल पड़े। उन्होंने बड़ी वीरता से अब्दाली के दो हजार सैनिकों को यमपुर भेज दिया यद्यपि स्वयं भी उनके अनेक व्यक्ति आहत हुए। उनकी वीरता के कारण ही गोकुल, अब्दाली की भयंकर आग से बच गया यद्यपि इस बर्बर अफगान आक्रांता ने मथुरा और वृन्दावन को लूटकर भस्मसात् कर दिया और हजारों निर्दोष व्यक्तियों को तलवार के घाट उतार दिया। 1786 ई० से 1803 ई० तक गोकुल और मथुरा पर मराठों का अधिकार रहा और तत्पश्चात अंग्रेजों का। यह काल, अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण था और इन स्थानों का प्राचीन गौरव पुनः एक बार भारतीय जनता के हृदयों में जागृत हुआ। वर्तमान गोकुल में यद्यपि अनेक स्थान कृष्ण के बालपन से संबंधित हैं किंतु यहां कोई भव्य या अधिक प्राचीन मंदिर नहीं है। वास्तव में मथुरा और वृन्दावन के मंदिरों के विशाल वैभव और सौंदर्य के सामने आज का गोकुल ग्रामीण और फीका जचता है। शायद यही स्थिति इसकी प्राचीन इतिहास के पूरे दौर में रही है। कृष्ण के समय में भी तो गोकुल छोटी सी ग्रामीण बस्ती ही थी।

गोगदा=गोमुदा (जिला उदयपुर, राज०)

राणाप्रताप तथा अकबर की सेनाओं में हल्दीघाटी की प्रसिद्ध लड़ाई इसी स्थान के निकट हुई थी। यहीं राणाप्रताप के पिता उदयसिंह की मृत्यु हुई थी। यह स्थान चित्तौड के निकट है।

गोगी (जिला गुलबर्गा, मैसूर)

गुलबर्गा के निकट, कई प्राचीन स्मारकों के लिए प्रख्यात है। यहां चार आदिलशाही सुलतानों के मकबरे हैं—यूसुफ, इसमाईल, इब्राहीम और मल्लू। ये मकबरे एक छतदार दालान में हैं। यहीं अलीआदिल की बहिन फातिमा सुल्ताना का मकबरा भी है। ये कब्रें और मकबरे चंदाशाह की दरगाह के

भीतर स्थित हैं। दरगाह के दक्षिण की ओर फातिमा सुलताना की बनवाई हुई काली मसजिद भी है जो काले पत्थर की बनी है। दूसरी दुमंजिली 'अरवा' मसजिद पर मु० तुगलक का फारसी अभिलेख अंकित है।

गोतीर्थ

इस स्थान का उल्लेख महाभारत के वनपर्व के अंतर्गत पांडवों की तीर्थयात्रा के प्रसंग में है — 'कपातीर्थेऽश्वतीर्थे च गवां तीर्थे च भारत कालकोटयां वपप्रस्थे गिरावध्य च पांडवा' वन० 95,3। अश्वतीर्थ (कन्नौज के निकट) के पश्चात् इसका उल्लेख है। अतः यह तीर्थ संभवतः इसी स्थान के निकट होगा।

गोदा=गोदावरी

गोदावरी

दक्षिण भारत की प्रसिद्ध नदी, जो त्र्यंबक पर्वत (पश्चिमीघाट) से निकल कर 900 मील पूर्व दक्षिण की ओर बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है। गोदावरी की सात शाखाएं मानी गई हैं—गौतमी, वसिष्ठा, कौशिकी, आत्रेयी, वृद्धगौतमी तुल्या और भारद्वाजी। महाभारत वन० 85, 43 में सप्तगोदावरी का उल्लेख है—'सप्तगोदावरी स्नात्वा नियतो नियताशन'। ब्रह्मपुराण के 133वें अध्याय में तथा अन्यत्र भी गोदावरी (गौतमी) का उल्लेख है। श्रीमद्भागवत 5, 19, 18 में गोदावरी का अन्य नदियों के साथ उल्लेख है— 'कृष्णवेण्या भीमरथी गोदावरी निर्विन्ध्या'। विष्णुपुराण 2, 3, 12 में गोदावरी को सह्य पर्वत से निस्सृत माना है— गोदावरी भीमरथी कृष्णवेण्यादिकास्तथा। सह्यपादाद्भवा नद्यः स्मृताः पापभयापहा'। महाभारत भीष्म० 9, 14 में गोदावरी का भारत की कई मुख्य नदियों के साथ उल्लेख है—'गोदावरी नर्मदां च बाहुदां च महानदीम्'। गोदावरी नदी को पांडवों ने तीर्थयात्रा के प्रसंग में देखा था – द्विजाति मुख्येषु धनं विसृज्य गोदावरी सागरगामगच्छत्'— महा० वन० 118 3। कालिदास ने रघुवंश 13, 33, 13, 35 में गोदावरी का सुंदर शब्द चित्र खींचा है—'अमूर्विमानान्तरलम्बिनीनां श्रुत्वा स्वनं काञ्चनकिंकिणीनाम्, प्रत्युद्व्रजन्तीव खमुत्पतन्त्यः गोदावरीसारसपङ्क्तयस्त्वाम्', 'अत्रानुगोदं मृगयानिवृत्तस्तरंगवातेन विनीतखेदः रहस्त्वदुत्संगनिषण्णमूर्धा स्मरामि वानीरगृहेषु सुप्तः'। कालिदास ने इस उल्लेख में गोदावरी को गोदा कहा है। 'शब्द भेद प्रकाश' नामक कोश में भी गोदावरी का रूपांतर 'गोदा' दिया हुआ है। भवभूति ने उत्तररामचरित में अनेक बार गोदावरी का उल्लेख किया है—'गोदावर्याः पयसि विततानोकहश्यामलश्री' 2 25। 'एतानि तानि बहुकंदरनिर्झराणि गोदावरीपरिसरस्यगिरेस्तटानि' 3 8।

की ही भांति वैष्णवतीर्थ था किन्तु शायद यहां बड़े विशाल मंदिर न होने के कारण वह आक्रमणकारी की दृष्टि से बाहर रहा और उसके बर्बर कृत्यों का शिकार होने से बच गया। सिकंदर लोदी के समय में होने वाले मथुरा के घोर विध्वंस के समय भी गोकुल शायद अपनी अप्रसिद्धि के कारण ही बचा रहा। औरंगजेब के जमाने में भी जब मथुरा के शासक अब्दुन नबी ने यहां के प्रसिद्ध मंदिर को तोड़ा तो गोकुल उसकी वक्र दृष्टि से बचा रहा। 1757 ई० में अहमदशाह अब्दाली ने मथुरा पर आक्रमण किया और महावन में अपना शिविर बनाया। उसका विचार गोकुल को भी विध्वस्त करने का था किंतु वहां के चार सहस्र नागा, आक्राता अब्दाली की सेना से सामना करने को निकल पड़े। उन्होंने बड़ी वीरता से अब्दाली के दो हजार सैनिकों को यमपुर भेज दिया यद्यपि स्वयं भी उनके अनेक व्यक्ति आहत हुए। उनकी वीरता के कारण ही गोकुल, अब्दाली की भयंकर आग से बच गया यद्यपि इस बर्बर अफगान आक्राता ने मथुरा और वृन्दावन को लूटकर भस्मसात् कर दिया और हजारों निर्दोष व्यक्तियों को तलवार के घाट उतार दिया। 1786 ई० से 1803 ई० तक गोकुल और मथुरा पर मराठों का अधिकार रहा और तत्पश्चात् अंग्रेजों का। यह काल, अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण था और इन स्थानों का प्राचीन गौरव पुनः एक बार भारतीय जनता के हृदयों में जागृत हुआ। वर्तमान गोकुल में यद्यपि अनेक स्थान कृष्ण के बाल्पन से संबंधित हैं किंतु यहां कोई भव्य या अधिक प्राचीन मंदिर नहीं है। वास्तव में मथुरा और वृन्दावन के मंदिरों के विशाल वैभव और सौंदर्य के सामने आज का गोकुल ग्रामीण और फीका जचता है। शायद यही स्थिति इसकी प्राचीन इतिहास के पूरे दौर में रही है। कृष्ण के समय में भी तो गोकुल छोटी सी ग्रामीण बस्ती ही थी।

गोगदा=गोगुदा (जिला उदयपुर, राज०)

राणाप्रताप तथा अकबर की सेनाओं में हल्दीघाटी की प्रसिद्ध लड़ाई इसी स्थान के निकट हुई थी। यहीं राणाप्रताप के पिता उदयसिंह की मृत्यु हुई थी। यह स्थान चित्तौड के निकट है।

गोगी (जिला गुल्बर्गा, मैसूर)

गुल्बर्गा के निकट कई प्राचीन स्मारकों के लिए प्रख्यात है। यहां चार आदिलशाही सुलतानों के मकबरे हैं—यूसुफ, इसमाइल, इब्राहीम और मल्लू। ये मकबरे एक छतदार दालान में हैं। यहीं अलीआदिल की बहिन फातिमा सुल्ताना का मकबरा भी है। ये कब्रें और मकबरे चंदाशाह की दरगाह के

गोपालपुर (जिला जबलपुर, म० प्र०)

(1) त्रिपुरी या वर्तमान तेवर के समीप इस स्थान पर कलचुरिकालीन विस्तृत खडहर हैं। इनम अनेक बौद्ध प्रतिमाए प्राप्त हुई हैं जिनम अवलोकितेश्वर, बोधिसत्त्व और तारा की मूर्तिया उल्लेखनीय हैं। अवलोकितेश्वर की मूर्ति मागध शैली म निर्मित है और इस पर 11वी शती की मागधी लिपि म बौद्धो का मूलमत्र 'य धम हेतु प्रभवा हेतु स्तेषा तथागतो' अकित है। ऐसा जान पडता है कि इस स्थान पर मध्यकाल म वज्रयानी बौद्धा का केन्द्र था।

(2) (जिला गजम, उडीसा) बगाल की खाडी पर एक प्राचीन समुद्रपत्तन है जहा से पूर्व मध्यकाल तक मलय प्रायद्वीप तथा जावा को नियमित रूप से जलयान जाया करत थ।

गोपिका

नागार्जुनी पवत की गुफाओ म सबसे बडी गुफा का नाम है।

गोपेश्वर (जिला गढवाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के निकट एक प्राचीन पुण्यस्थान है। यह बद्रीनाथ से केदारनाथ जाने वाले माग पर चमोली क निकट है। यहा से विष्णु का प्रभाव क्षेत्र समाप्त होकर शिव का क्षेत्र प्रारभ होता है। गोपश्वर का शिव मदिर केदारनाथ के मदिर को छोडकर इस प्रदेश का सवमान्य तथा सब प्राचीन देवालय माना जाता है। इसकी मूर्तिया भी बहुत प्राचीन है। गोपश्वर शिव की मूर्ति कत्यूरीकालीन है। यहा की मूर्तिया मे ऊच जूते पहने हुए सूय की मूर्ति और चतुर्मुखी शिवलिंग भी हैं जो कत्यूरी नरेशो तथा लकुलीश शैवो के स्मारक है। राजा अनगपाल का कीर्ति स्तभ, जो त्रिशूल रूप मे अष्टधातु का बना है मदिर के प्रागण म स्थित है। इस पर 13वी शती क दो अस्पष्ट नेपाली अभिलेख हैं। स्कदपुराण के अनुसार शिव न कामदेव को गोपश्वर के स्थान पर ही भस्म किया था। कुमार सभव 3, 72 म मदन दहन का सुदर वणन है— 'क्रोध प्रभो सहर सहरति यावद्गिर खे मरुताचरन्ति, तावत् स वह्नि भवनेत्रजन्मा भस्मावशेष मदनचकार'।

गोम तक=गोआ

गोमती

(1) ऋग्वेद मे वर्णित नदी—'त्व सिंधो कुभया गोमती क्रुमु मेहत्न्वा सरथ याभिरीयस' 10, 75, 6। इस नदी का अभिज्ञान वतमान गोमल नदी से किया गया है जो सिंधु नदी म पश्चिम की ओर से आकर मिलती है (मेकडानेल्ड—ए हिस्ट्री ऑव सस्कृत लिटरेचर–1929, पृ० 140)। कुभा (काबुल, तथा

गोनद

पाली ग्रथ सुत्तनिपात के अनुसार इस नगर की स्थिति विदिशा तथा उज्जयिनी के मार्ग के बीच मे थी। गोनद को शुगकाल के उदभट विद्वान पतजलि का जन्म स्थान माना जाता है। पतजलि की माता का नाम गोणिका था। ये योगदर्शन तथा पाणिनि के व्याकरण के महाभाष्य के विख्यात रचयिता थे। कई विद्वानो के मत मे चरक सहिता के निर्माता भी पतजलि ही थे। जान पडता है कि गोनद की स्थिति भूपाल के निकट थी।

गोप (सौराष्ट्र, गुजरात)

सोरठ मे बहने वाली नेत्रवती की एक शाखा पर बसा हुआ प्राचीन नगर है जहा गुप्तकालीन सूर्यमदिर के खडहर हैं। कहा जाता है कि इस प्रदेश मे सूर्य की पूजा ईरानी सस्कृति से प्रभावित शकक्षत्रपो के समय (द्वितीय, तृतीय शती ई०) मे प्रचलित थी।

गोपकवन=**गोआ।**

गोपराष्ट्र

महाभारत मे वर्णित एक जनपद जिसकी स्थिति श्री चि० वि० वैद्य के अनुसार महाराष्ट्र मे थी।

गोपाचल (दे० ग्वालियर)

गोपाद्रि या गवालियर दुर्ग की पहाडी का नाम।

गोपाद्रि (दे० गवालियर)

ग्वालियर दुर्ग की पहाडी का प्राचीन नाम है।

गोपामऊ (जिला हरदोई, उ० प्र०)

इसे 10वी शती के अत मे राजा गोप ने बसाया था। गोपीनाथ का वर्तमान मदिर नौनिधराय ने 1699 ई० मे बनवाया था।

गोपालकक्ष

'ततो गोपालकक्ष च सोत्तरानपि कोसलान मल्लानामधिप चैव पार्थिव चाजयत प्रभु' महा० 30, 3। कुछ विद्वानो के मत मे गोपालकक्ष गवालियर का ही नाम है।

गोपाल गज (जिला दीनाजपुर, बगाल)

यहा रासमोहन के मदिर के, जो 1754 ई० मे बना था, खडहर स्थित हैं। यह मदिर गौड की 14वी 15वी शती की वास्तुशैली मे बना है। इसके बारह पार्श्व हैं किंतु अत्यधिक अलकरण के कारण इसका नक्शा कुछ सकुचित सा दिखाई देता है।

गोपालपुर (जिला जबलपुर, म० प्र०)

(1) त्रिपुरी या वर्तमान तेवर के समीप इस स्थान पर कलचुरिकालीन विस्तृत खंडहर है। इनमें अनेक बौद्ध प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं जिनमें अवलोकितेश्वर, बोधिसत्व और तारा की मूर्तियां उल्लेखनीय हैं। अवलोकितेश्वर की मूर्ति मागध शैली में निर्मित है और इस पर 11वीं शती की मागधी लिपि में बौद्धों का मूलमंत्र 'ये धर्म हेतु प्रभवा हेतु स्तेषा तथागतो' अंकित है। ऐसा जान पड़ता है कि इस स्थान पर मध्यकाल में वज्रयानी बौद्धों का केंद्र था।

(2) (जिला गंजम, उड़ीसा) बंगाल की खाड़ी पर एक प्राचीन समुद्रपत्तन है जहां से पूर्व मध्यकाल तक मलय प्रायद्वीप तथा जावा को नियमित रूप से जलयान जाया करते थे।

गोपिका

नागार्जुनी पर्वत की गुफाओं में सबसे बड़ी गुफा का नाम है।

गोपेश्वर (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के निकट एक प्राचीन पुण्यस्थान है। यह बद्रीनाथ से केदारनाथ जाने वाले मार्ग पर चमोली के निकट है। यहां से विष्णु का प्रभाव क्षेत्र समाप्त होकर शिव का क्षेत्र प्रारंभ होता है। गोपेश्वर का शिव मंदिर केदारनाथ के मंदिर को छोड़कर इस प्रदेश का सर्वमान्य तथा सर्व प्राचीन देवालय माना जाता है। इसकी मूर्तियां भी बहुत प्राचीन हैं। गोपेश्वर शिव की मूर्ति कत्यूरीकालीन है। यहां की मूर्तियों में ऊंचे जूते पहने हुए सूर्य की मूर्ति और चतुर्मुखी शिवलिंग भी है जो कत्यूरी नरेशों तथा लकुलीश शैवों के स्मारक हैं। राजा अनंगपाल का कीर्ति स्तंभ, जो त्रिशूल रूप में अष्टधातु का बना है मंदिर के प्रांगण में स्थित है। इस पर 13वीं शती के दो अस्पष्ट नेपाली अभिलेख हैं। स्कंदपुराण के अनुसार शिव ने कामदेव को गोपेश्वर के स्थान पर ही भस्म किया था। कुमार संभव 3, 72 में मदन दहन का सुंदर वर्णन है— 'क्रोध प्रभो संहर संहरेति यावद्गिरः खे मरुतां चरन्ति, तावत् स वह्निर्भवनेत्रजन्मा भस्मावशेषं मदनं चकार'।

गोमंतक=गोआ

गोमती

(1) ऋग्वेद में वर्णित नदी—'त्वं सिंधो कुभया गोमतीं क्रुमुं मेहत्न्वा सरथं याभिरीयसे' 10, 75, 6। इस नदी का अभिज्ञान वर्तमान गोमल नदी से किया गया है जो सिंधु नदी में पश्चिम की ओर से आकर मिलती है (मेकडानेल्ड—ए हिस्ट्री आव संस्कृत लिटरेचर–1929, पृ० 140)। कुभा (काबुल, तथा

कृमु (=कुरम) गोमती के समान ही सिंध की पश्चिमी शाखाएं हैं।

(2) उत्तरप्रदेश की प्रसिद्ध नदी जो बीसलपुर (ज़िला पीलीभीत) की झील से निकल कर पूर्वी उत्तर प्रदेश में गंगा में मिल जाती है। यह अवध की प्रसिद्ध नदी है। रामायणकाल में गोमती कोसलदेश की सीमा के बाहर बहती थी क्योंकि वाल्मीकि अयो० 49, 8 में वर्णित है कि वनवास के लिए जाते समय श्रीराम ने गोमती को पार करने से पहले ही कोसल की सीमा को पार कर लिया था। 'गत्वा तु सुचिरकालं ततः शीतवहां नदीम्, गोमतीं गोयुतानूपामतरत्सागरंगमाम्'—इस वर्णन में गोमती को शीतल जल वाली नदी बताया गया है तथा इसके तट पर गौवों के समूहों का उल्लेख है। वाल्मीकि ने गोमती को सागरगामिनी कहा है क्योंकि गंगा में मिलकर नदी अंततः सागर में ही गिरती है। राम ने वन की यात्रा के समय प्रथम रात्रि तमसा तीर पर बिताकर अगले दिन गोमती और स्यंदिका (=सई) को पार किया था—'गोमतीं चाप्यतिक्रम्य राघवः शीघ्रगैः हयैः, मयूरहंसाभिरुतांततार स्यंदिकां नदीम्' अयो० 49, 11। रामचरितमानस में गो० तुलसीदास ने भी वन जाते समय भरत को गोमती पार करते बताया है—'तमसा प्रथम दिवस करिबासू, दूसर गोमतितीर निवासू'—अयोध्याकांड। महाभारत में भी गोमती का उल्लेख है—'लघंती गोमती चैव संध्या त्रिस्रोतसी तथा, एताश्चान्याश्च राजेंद्र सुतीर्था लोकविश्रुता' सभा० 9, 23। 'ततस्तीर्थेषु पुण्येषु गोमत्याः पांडवानृप, कृताभिषेकाः प्रददुर्गाश्च वित्तं च भारत'—वन 94, 2। इस उल्लेख में नैमिषारण्य (=नीमसार, ज़िला सीतापुर, उ० प्र०) को गोमती नदी के तट पर बताया है, जो वस्तुतः ठीक है। नैमिषारण्य का वन० 94, 1 में उल्लेख है। भीष्म 9 18 में अन्य नदियों में गोमती का उल्लेख है—'गोमतीं धूतपापां च वंदनां च महानदीम्'। श्रीमद्भागवत 5, 19, 18 में गोमती का वर्णन है—'दृषद्वती गोमती सरयू'—। विष्णुपुराण में गोमती तट को पवित्र कहा गया है तथा उसे तप स्थली माना है—'सुरम्ये गोमती तीरे स तपे परमं तपः' 1, 15, 11।

(3) (काठियावाड़, गुजरात) द्वारका के निकट एक नदी। रणछोड़ जी का प्रसिद्ध मंदिर इसी के तट पर है। गोमती समुद्र संगम पर नारायण का मंदिर है जो नदी के दूसरे तट पर स्थित है। कहते हैं कि यह नदी वास्तव में समुद्र के जल के तट के अंदर प्रविष्ट होने से बनी है। यहीं भगवान् कृष्ण की राजधानी द्वारका बसी हुई थी। यह अब गोमती द्वारका कहलाती है। दूसरी द्वारका को, जो द्वीप पर स्थित है, बेट द्वारका कहते हैं।

गोमल

(1) दे० गोमती नदी

(2) गोमल नगर का नाम जो शायद गोमती कूल से विगड कर बना है।

गोमान्

रवतक पवत का एक नाम जिसके क्रोड मे द्वारका बसी हुई थी। मगध-राज जरासध के आक्रमण से बचने के लिए श्रीकृष्ण मथुरा से द्वारका चले आए थे। उन्होंने रैवतक पवत पर अपनी नई नगरी को बसाया था (दे० महा० सभा० 14)। रवतक का ही एक नाम गामान् भी था। 'एव वय जरामधाद-भित कृतकिल्विपा सामथ्यवन्त सबधादगोमत समुपाश्रित'—महा० सभा० 14, 53।

गोमेद

विष्णुपुराण 2, 4, 7 के अनुसार प्लक्षद्वीप के सात मर्यादा पवतो मे से एक है—'गामेदश्चैव चन्द्रश्चनारदो दुदुभिस्तथा, सोमक सुमनाश्चैव वभ्राजश्चैव सप्तम'।

गोरखपुर (उ० प्र०)

मध्ययुगीन सिद्ध सत गोरखनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। यहा स्थित गोरखनाथ की समाधि तथा मदिर उल्लेखनीय है। कुशीनगर (कुसिया), जो बुद्ध का निर्वाणस्थल है, गोरखपुर से 34 मील उत्तरपूव मे है।

गोरथ

'गोरथ गिरिमासाद्य ददृशुर्मागध पुरम'—महा० 20, 30। महाभारत के इस उल्लेख से स्पष्ट है कि गोरथ, मगध की राजधानी गिरिव्रज या राजगह की पहाडी का नाम था। श्रीकृष्ण, अजुन और भीम जरासध के वधाथ गिरिव्रज जाते समय पहले इसी पवत पर पहुचे थे। कलिग नरेश खारवेल के अभिलेख से सूचित होता है कि उसने अपने राज्याभिषेक के आठवे वष म गोरथगिरि पर आक्रमण करके राजगह नरेश को बहुत व्यथित किया था (प्रथम शती ई० पू०)।

गोराष्ट्र=गोग्रा

गोलकुडा (आ० प्र०)

हैदराबाद से सात मील पश्चिम की ओर बहमनीवश के सुल्तानो की राजधानी गोलकुडा के विस्तृत खडहर स्थित है। गोलकुडा का प्राचीन दुग वारगल के हिंदू राजाओ ने बनवाया था। यह दवगिरि के यादव तथा वारगल के ककातीय नरेशो के अधिकार म रहा था। इन राजयवशो के शासन के चिह्न तथा कई खडित अभिलेख दुग की दीवारो तथा द्वारो पर अकित मिलते हैं।

1364 ई० मे वारगल नरेश ने इस किले का वहमनी सुलतान महमूद शाह के हवाले कर दिया था। इतिहासकार फरिश्ता लिखता है कि बहमनी वंश की अवनति के पश्चात 1511 ई० मे गोलकुडे के प्रथम सुलतान ने अपना स्वतत्र राज्य स्थापित कर लिया था किंतु किले के अदर स्थित जामा मसजिद के एक फारसी अभिलेख से ज्ञात होता है कि 1518 ई० मे भी गोलकुडे का सस्थापक सुलतान कुलीकुतुब, महमूद शाह बहमनी का सामन्त, था। गोलकुडे का किला 400 फुट ऊंची कणाश्म (ग्रेनाइट) की पहाडी पर स्थित है। इसके तीन परकोट है और इसका परिमाप सात मील के लगभग है। इस पर 87 बुर्ज बने हैं। दुर्ग के अदर कुतुबशाही बेगमो के भवन उल्लेखनीय है। इनमे तारामती, पमा मती, हयात बख्शी बेगम और भागमती (जो हैदराबाद या भागनगर के सस्थापक कुली कुतुब शाह की प्रेयसी थी) के महलो से अनेक मधुर आख्यायिकाओ का सबध बताया जाता है। किले के अदर नौमहल्ला नामक अन्य इमारतें भी हैं जिन्हे हैदराबाद के निजामो ने बनवाया था। इनकी मनोहारी वाटिकाए तथा सुदर जलाशय इनके सौदर्य को द्विगुणित कर देते हैं। किले से तीन फर्लांग पर इब्राहीम बाग मे सात कुतुबशाही सुलतानो के मकबरे है जिनके नाम ये हैं— कुली कुतुब, सुभान कुतुब, जमशेदकुली, इब्राहीम, मु० कुलीकुतुब, मु० कुतुब और अब्दुल्ला कुतुबशाह। पमावती व हयात बख्शी बेगमो के मकबरे भी इसी उद्यान के अदर है। इन मकबरो के आधार वर्गाकार है तथा इन पर गुबदो की छतें है। चारो ओर वीथीकाए बनी हैं जिनके महराब नुकीले हैं। ये वीथिकाए कई स्थानो पर दुमजिली भी है। मकबरो पर हिंदू वास्तुकला के विशिष्ट चिह्न कमल पुष्प तथा पत्र और कलिया, शृखलाए, प्रक्षिप्त छज्जे, स्वस्तिकाकार स्तभशीर्ष आदि बने हुए है। गोलकुडा दुर्ग के मुख्य प्रवेश द्वार मे यदि जोर से करतल ध्वनि की जाए तो उसकी गूज दुर्ग के सर्वोच्च भवन या सभा कक्ष मे पहुचती है। एक प्रकार मे यह ध्वनि आह्वान घटी के समान थी। दुर्ग से डेढ मील पर तारामती की छतरी है। यह एक पहाडी पर स्थित है। देखने मे यह वर्गाकार है और इसकी दो मजिलें हैं। किंवदती है कि तारामती, जो कुतुबशाही सुल्ताना की प्रेयसी तथा प्रसिद्ध नर्तकी थी, किले तथा छतरी के बीच बधी हुई एक रस्सी पर चादनी मे नृत्य किया करती थी। सडक के दूसरी ओर पमावती की छतरी है। यह भी कुतुबशाही नरेश की प्रेमपात्री थी। हिमायत सागर सरोवर के पास ही प्रथम निजाम के पितामह चिनकिलिचखा का मकबरा है। 28 जनवरी 1687 ई० को औरगजेब ने गोल्कुडे के किले पर आक्रमण किया और तभी मुगल सेना के एक नायक के रूप मे किलिच खा ने भी इस

आक्रमण मे भाग लिया था। युद्ध मे इसका एक हाथ तोप के गोले से उड गया था जो मकबरे से आधा मील दूर किस्मतपुर म गडा हुआ है। इसी घाव से इसका कुछ दिन बाद देहात हो गया। कहा जाता है कि मरते वक्त भी किलिचखा जरा भी विचलित न हुआ था और औरगजेब के प्रधान मत्री जमदातुल मुल्क असद ने, जो उससे मिलन आया था, उसे चुपचाप कॉफी पीते देखा था। शिवाजी ने बीजापुर और गोलकुडा क सुलतानो का बहुत सत्रस्त किया था तथा उनके अनेक किला का जीत लिया था। उनका आतक बीजापुर और गोलकुडा पर बहुत समय पयत छाया रहा जिसका वणन हिंदी के प्रसिद्ध कवि भूषण ने किया है —'बीजापुर गोल्कुडा आगरा दिल्ली के कोट बाजे बाजे रोज दरवाजे उघरत है'। गोलकुडा मे पहले हीरा निकलता था। (दे० हैदराबाद)

गोलमृत्तिका नगर (बर्मा)

यह नगर, जिसका अभिज्ञान थाटन से 20 मील दूर अयत्थेमा नामक स्थान से किया गया है, (1476 ई० के कल्याणी अभिलेख के अनुसार) अशोक के समय म ब्रह्मदेश की राजधानी था। यहा गोल या गौड लागो के अनेक मिट्टी के घर होने के कारण इस नगर का यह विचित्र नाम हुआ था। ये लोग गौड या बगाल के मूल निवासी रहे होंगे।

गोलाकोट (बुदेलखड)

मध्ययुगीन बुदेलखड की वास्तुकला के अनेक भग्नावशेष गोलाकोट म स्थित हैं।

गोलागोकरननाथ (ज़िला सीतापुर, उ० प्र०)

यह स्थान प्राचीन काल मे बौद्ध धम का एक केंद्र था। तत्कालीन खडहर यहा आज भी पडे हुए हैं। अब यहा केवल छाटे छोटे मदिर व मठ हैं।

गोलारायपुर (जिला शाहजहानपुर, उ० प्र०)

यह शायद फाह्यान द्वारा उल्लिखित हारा हा लो है। यहा प्राचीन क़िला है जो मिट्टी का बना है।

गोवधन

(1) ज़िला नासिक (महाराष्ट्र) का प्रदेश। इसका उल्लेख शातवाहन नरेश गौतमीपुत्र शातकर्णी तथा पुलोमयी (प्रथम—द्वितीय शती ई०) के अभिलेखा मे है। इनम 'गोवधन अहार' पर विष्णुपालित, श्यामक तथा शिवस्कद-दत्त का शासन बताया गया है। महावस्तु (सेनार्ट द्वारा सपादित—पृ० 363) मे दडकारण्य की राजधानी गोवधन कही गई है।

(2) मथुरा (उ० प्र०) से 14 मील दक्षिण-पश्चिम की ओर प्रसिद्ध पर्वत है जिसे पौराणिक कथाओ के अनुसार श्रीकृष्ण ने उगली पर उठा कर व्रज को इद्र के कोप से रक्षा की थी। गोवर्धन मे अरावली पहाड की कुछ निचली श्रेणिया फैली हुई है। हरिवश, विष्णुपर्व अध्याय 37 मे उल्लेख है कि इक्ष्वाकुवश के राजा हयश्व ने जिनका राज्य महाभारत काल से भी बहुत पहले मथुरा मे था, अपनी राजधानी के समीप पहाडी पर एक नगर बसाया था जो सभवत गोवधन ही था। श्रीमद्भागवत मे गोवधनलीला दशम स्कध के 25वें अध्याय मे सविस्तार वर्णित है-- ('इत्युक्त्वैकेन हस्तेन कृत्वा गोवधनाचलम् दधार लीलया कृष्ण श्छत्राकमिव बालक' आदि)। श्रीमद्भागवत 5,19,16 म भी गोवधन पवत का उल्लेख है—'द्रोणश्चित्रकूटो गोवधनो रैवतक, ककुभोनीलो गोकामुख इद्रकील'। विष्णु० 5,13,1 तथा 5,10,38 ('तस्माद् गोवधनश्शैलो भवदिर्भवि विधाहर्णै, अच्यता पूज्यता मेध्यान् पशून् हत्वा विधानत') मे कृष्ण की गोवधन पूजा का वर्णन है। महाकवि कालिदास ने गोवर्धन का शूरसेनप्रदेश मे बताया है— 'अध्यास्य चाम्भ पृपतोक्षितानि शैलेयगधीनि—शिलातलानि, कलापिना प्रावृषि पश्य नृत्य कातासु गोवर्धनकदरासु' रघु० 6,51 —'शूरसेन के राजा सुषेण का परिचय इन्दुमती को उसके स्वयवर के समय देती हुई उसकी सखी सुनदा कहती है—'शूरसेननरेश से विवाह करने के पश्चात् तू गोवर्धन पवत की सुदर कदराओ मे शैलेयगध से सुवासित और वर्षा के जल से धुली हुई शिलाओ पर आसीन होकर प्रावृट् काल मे मयूरो का नृत्य देखना'। गोवर्धन को घटजातक मे गावद्धमान कहा गया है। गोवधन मे श्री हरिदेव (कृष्ण) का एक प्राचीन मदिर है जिसे अकबर के मित्र एव सबधी आमेर-नरेश भगवानदास का बनवाया हुआ कहा जाता है। मानसीगगा (पौराणिक किंवदतियो के अनुसार) श्रीकृष्ण के मानस से प्रसूत हुई थी। इसके घाट अर्वाचीन हैं। (टि० ऐसा जान पडता है कि गोवधन की शृखला वास्तव मे पवत नही है वरन् एक लबा चौडा बाध है जिसे सभवत श्रीकृष्ण ने वर्षा की बाढ़ से व्रज की रक्षा करने के लिए बनाया था। यह अधिक ऊचा नही है और इसे पवत किसी प्रकार भी नहीं कहा जा सकता। इसके पत्थरो को देखने से भी यही प्रतीत होता है कि यह कृत्रिम रूप से बनाई गई कोई सरचना है। आज भी गोवधन के पत्थरो को उठाना या हटाना पाप समझा जाता है। इस बात से भी इसका कृत्रिम रूप से जनसाधारण के हिताथ बनाया जाना प्रमाणित होता है। इस विषय मे अनुसधान अपेक्षित है।)

गोवद्धमान

इस नगर का, जो गोवधन का रूपातर जान पडता है, घटजातक (स० 454) मे उल्लेख है। इसे वासुदेव कृष्ण की माता देवगब्भा (=देवकी) तथा उपसागर (=वसुदेव) का निवासस्थान बताया गया है। वासुदेव कृष्ण का जन्म, इस जातक के अनुसार, इसी स्थान पर हुआ था।

गोवास

'गोवास दासमीयाना वसातीना च भारत, प्राच्याना वाटधानाना भाजाना चाभिमानिनाम्'—महा० कर्ण० 73,17। गोवास सभवत शिवि देश का ही दूसरा नाम था। यह देश गोधन के लिए प्रसिद्ध था। इस देश की सेनाए महाभारत के युद्ध मे दुर्योधन की ओर से शामिल हुई थी जैसा कि उपर्युक्त श्लोक के प्रसग मे वर्णित है। सभा० 51,5 मे भी गोवास निवासियो का उल्लेख है—'गोवासना ब्राह्मणाश्च दासमीयाश्च सर्वश'। ये युधिष्ठर के राजसूय यज्ञ म सम्मिलित हुए थे।

गोविषाण

चीनी यात्री युवानच्वाग ने 7वी शती मे इस देश का वणन करते हुए यहा तीस मदिरो की स्थिति बताई है। उसने लिखा है कि यहा की जन-सख्या उत्तरोत्तर बढ रही थी। इस देश का अभिज्ञान रामपुर-पीलीभीत के जिलो (उ० प्र०) से किया गया है—(दे० रा० कु० मुकर्जी—हर्ष पृ० 167) सभवत उर्जैन नाम का वतमान गाव प्राचीन गोविषाण का प्रतिनिधान करता है। इसम एक प्राचीन किले के खडहर आज तक मौजूद हैं।

गोश्रृग

'निषाद भूमि गोश्रृग पवतप्रवर तथा तरसैवाजयद् धीमान्, श्रेणिमन्त च पार्थिवम्' महा० सभा० 31,5। गोश्टग को सहदेव ने दक्षिण दिशा की विजय के प्रसग मे जीता था। गोश्टग पर्वत, प्रसग से, अर्वली पहाड की श्रेणी का कोई भाग जान पडता है। यह निषाद भूमि के निकट था। सभव है यह आबू या अबुद के किसी शिखर का नाम हो।

गोहद (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

ग्वालियर के उत्तर पूर्व की ओर है। 18वी शती में यह जाट रियासत थी। इसके पूव की ओर ग्वालियर रियासत, पश्चिम म काली सिंध, उत्तर म यमुना और दक्षिण मे सिरमूर की पहाडिया हैं। गोहद नरेशो तथा मराठो मे बराबर लडाई झगडा बना रहता था। 1765 ई० म गोहद नरेश छत्रसाल ने होलकर का डट कर सामना किया था। गोहद म उत्तरमध्यकालीन इमारतो

के ध्वसावशेष स्थित हैं।

गोहाटी (असम)

इस नगर का प्राचीन नाम शोणितपुर कहा जाता है। महाभारत के समय यहा प्राग्ज्योतिष की राजधानी थी। इसका अन्य नाम प्रागज्योतिषपुर भी था।

गोहिराटिकिरी (जिला बालासोर, उडीसा)

1567 ई० मे इस स्थान पर उडीसा नरेश मुकुददेव और उसके विश्वासघाती भाई रामचद्रभज मे युद्ध हुआ था जिसके पश्चात उडीसा का स्वतत्र हिंदू राज्य सदा के लिए समाप्त हो गया। 1568 ई० मे उडीसा पर बगाल के अफगानो का राज्य स्थापित हुआ था।

गोहिलवाड

सौराष्ट्र (काठियावाड, महाराष्ट्र) का दक्षिणी पूर्वी भाग गोहिलवाड कहलाता है।

गौड

(1) (बगाल) प्राचीन लक्ष्मणावती या लखनौती का मध्ययुगीन नाम। सेन वश के शासनकाल (13वी शती) मे बगाल की राजधानी क्रमश वासीपुरी, वरेंद्र और लक्ष्मणावती मे रही थी। मुसलमानो का बगाल पर आधिपत्य होने के बाद इस सूबे की राजधानी कभी गौड और कभी पाडुआ मे रही। पाडुआ गौड से 20 मील दूर है। आज इस मध्ययुगीन भव्य नगर के केवल खडहर ही शेष हैं। इनमे अनेक हिंदू मदिरो तथा मूर्तियो के अवशेष हैं जिनका मसजिदो के निर्माण मे प्रयोग किया गया था। 1575 ई० मे अकबर के सूबेदार ने गौड के सौंदर्य से आकृष्ट होकर पाडुआ से हटाकर अपनी राजधानी गौड मे बनाई जिसके फलस्वरूप गौड मे एकबारगी बहुत भीडभाड हो गई। थोडे ही दिनो बाद महामारी का भी प्रकोप हुआ जिससे गौड की जनसख्या को भारी क्षति पहुची। बहुत से निवासी गौड छोडकर भाग गए। पाडुआ में भी महामारी का प्रकोप फैला और बगाल के ये दोनो प्रमुख नगर जहा भव्य इमारतें खडी हुई थी तथा चारो ओर व्यस्त नर-नारियो का कोलाहल रहता था, इस महामारी के पश्चात श्मशानवत् दिखलाई पडने लगे और उनकी सडको पर अब घास उग आई और दिन दहाडे हिंसक पशु घूमने लगे। पाडुआ से गौड जाने वाली सडक पर अब घने जगल बन गए थे। तत्पश्चात् प्राय 300 वर्षों तक बगाल की

शानदार नगरी गौड खडहरो के रूप मे घने जगलो के बीच-छिपी रही। अब कुछ ही वर्ष पहले वहा के प्राचीन वैभव को खुदाई द्वारा प्रकाश मे लाने का प्रयत्न किया गया है। लखनौती मे 9वी-10वी शती ई० मे पाल राजाओ का आधिपत्य था तथा 12वी शती तक सेन नरेशो का। इस काल मे यहा अनेक हिंदू मदिर बने जिन्हे गौड के परवर्ती मुसलमान बादशाहो ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। गौड की मुसलमान कालीन इमारतो के बहुत से अवशेष अब भी यहा है। इनकी मुख्य विशेषता इनकी ठोस बनावट तथा विशालता है। सोना मसजिद प्राचीन मदिरो की सामग्री से बनी है। यह यहा के जीर्ण किले के अदर स्थित है। इसकी निर्माण तिथि 1526 ई० है। इसके अतिरिक्त 1530 ई० मे बनी नुसरतशाह की मसजिद भी कला की दृष्टि से उल्लेखनीय है।

(2) बगाल का एक प्राचीन सामान्य नाम। गौड या गौडपुर का उल्लेख पाणिनि ने 6,2,200 मे किया है। कहा जाता है कि पुड्र या पौंड्र (पौड्र=पौडा या गन्ना) देश से गुड का प्रचुर मात्रा मे निर्यात इस प्रदेश द्वारा होने के कारण ही इसे गौड कहा जाता था। गौडपुर को गौडभृत्यपुर भी कहा गया है। बाण के हर्ष चरित मे गौड (बगाल) के नरेश शशाक का उल्लेख है। सस्कृत काव्य की एक वृत्ति का नाम भी गौडी है जो गौड देश से ही सबधित है। इसके अतिरिक्त कई जातियो को भी गौड नाम से अभिहित किया जाता था (दे० पचगौड)।

गौडपुर=गौडभृत्यपुर (दे० गौड)

गौतमाश्रम (जिला देहरादून)

(1) देहरादून के निकटस्थ बावडी या ढकरानी को स्थानीय जनश्रुति मे न्यायदर्शनकार महर्षि गौतम की तपोभूमि कहा जाता है। यहा स्फटिक श्वेत जल की बावडी है जिसके तट पर इस आश्रम की स्थिति बताई जाती है।

(2) दे० अहल्याश्रम

गौतमी

दक्षिणी भारत की प्रसिद्ध नदी गोदावरी का एक प्राचीन पौराणिक नाम है (दे० शिवपुराण 1,54)। ब्रह्मपुराण के 133वें अध्याय मे तथा अन्यत्र भी इस नदी का उल्लेख है। कहा जाता है कि इस नदी को गौतम ने तप द्वारा पृथ्वी पर अवतरित किया था। पुराणो मे गौतमी को गोदावरी की एक शाखा भी माना गया है (दे० गोदावरी)। अध्यात्मरामायण अरण्य० 48 में पचवटी को गौतमी के तट पर अवस्थित बताया गया है जो वास्तव मे गोदावरी

ही है—'अस्ति पचवटी नाम्ना आश्रमो गौतमीतटे'।

गौर=गहरवारपुरा

गौरझामर (ज़िला सागर, म० प्र०)

गढमडला-नरेश सग्रामसिंह (मृत्यु 1541 ई०) के बावन गढो म से एक। यही प्रसिद्ध वीरागना दुर्गावती के श्वसुर थे।

गौरी

(1) विष्णु पुराण 2,4,55 के अनुसार क्रौंचद्वीप की एक नदी—'गौरी कुमुद्वती चैव सध्या रात्रिमनोजवा, क्षान्तिश्च पुडरीका च स`तैता वष निम्नगा'।

(2) अफगानिस्तान की वतमान पजकौरा नदी। यह (1) भी हो सकती है।

गौरीतीर्थ

मध्य रेलवे के पिपरिया स्टेशन से गौरीतीथ के लिए माग जाता है। इस प्राचीन तीथ की स्थिति अजना और नमदा के सगम पर है।

गौरीशकर (दे० गौरीशिखर)

गौरीशिखर

महाभारत वनपव के अतर्गत तीथयात्रा प्रसग म हिमालय के गौरी नामक शिखर का उल्लेख है—'ततो गच्छेत धमज्ञ तीथसेवनतत्पर शिखर व महा देव्या गौर्या स्त्रैलोक्यविश्रुतम' वन० 84,151। इसका उल्लेख हिमालय पर स्थित 'पितामह सर' (शायद मानसरोवर, यहा से ब्रह्मपुत्र निकलती है। पितामह=ब्रह्मा) के पश्चात् है। गौरीशिखर को इस उल्लेख मे महादेव पार्वती के नाम से प्रसिद्ध बताया गया है। इस शिखर पर (वन० 84,151 मे) स्तनकुड नामक सरोवर का भी उल्लेख है—'समासाद्य नरश्रेष्ठ स्तनकुडेषु सविशेत्'। गौरीशिखर प्रसिद्ध गौरीशकर की चोटी जान पडती है।

ग्यारसपुर (ज़िला भीलसा, म० प्र०)

मध्ययुगीन वास्तु-अवशेषो से यह स्थान भरा पूरा है। ग्राम के चतुर्दिक विस्तृत खडहर फैले पडे है। हिंदू, बौद्ध तथा जैन—तीनो ही सप्रदायो स सबध रखने वाले प्राचीन अवशेष यहा मिलते हैं जिनमे से प्रमुख य हैं—अटखभा मदिर, वज्रमठ, मालदेवी, बौद्धस्तूप आदि। हिंडोला नामक ग्राम के निकट 8वी तथा 10वी शती ई० के मदिरो के चिह्न हैं। मानसरोवर तडाग भी प्राचीनकाल का अवशेष है।

ग्वादूर (मकरान, प० पाकि०)

अरबसागर (फारस की खाडी) के तट पर छोटा सा बदरगाह है जिसका प्राचीन नाम बदर कहा जाता है। इसका उल्लेख टॉलमी, आर्थोगोरस और एरियन (90 ई० 170 ई०) आदि प्राचीन विदेशी लेखको ने किया है। यूनानी लेखको ने ग्वादूर के समीप समुद्र मे अनेक प्रकार की विचित्र मछलियो का वणन किया है। 1581 ई० मे पुर्तगालियो ने इस नगर का जलाकर नप्ट कर दिया था। 17वी शती मे कलात के खान ने इस बदरगाह पर अधिकार कर लिया। उसने इसे ओमान के शासक सैयद सुलतानबिन अहमद को सौप दिया और इस प्रकार 1871 ई० तक इस पर मस्कट के सुलतान का कब्जा रहा। इस वर्ष से ब्रिटेन का एक राजदूत यहा रहने लगा। (दे० मकरान)

ग्वारीघाट (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर के निकटस्थ इस ग्राम के प्राचीन खडहरो मे पुरातत्व की प्रचुर एव महत्वपूण सामग्री बिखरी पडी है जिसको अभी तक प्रकाश मे नही लाया गया है।

ग्वालियर दे० गवालियर

घघाणी (मारवाड, राजस्थान)

बीकानेर जोधपुर रेलमाग पर आसरनाडा स्टेशन के निकट प्राचीन जैन तीर्थ। जैन कवि समयसुदर के अनुसार यहा की प्राचीन मूर्तिया पर मौय-सम्राट अशोक के पौत्र सप्रति (दशरथ के पुत्र) के अभिलेख थे जिनसे ज्ञात होता है कि उसने इस स्थान पर पद्मप्रभु जिनालय नामक विशाल मदिर बनवाया था।

घटसाल (आ० प्र०)

कृष्णानदी के तट पर स्थित है। प्रथम-द्वितीय शती ई० म वना हुआ बौद्धस्तूप यहा का उल्लेखनीय स्मारक है। यह स्तूप आध्रदेश की अमरावती नामक नगरी के प्रख्यात स्तूप का प्राय समकालीन है। कुछ विद्वानो के मत मे जावा के सुप्रसिद्ध बोरोबुदूर मदिर की विशिप्ट कला के अकुर घटसाल के स्तूप मे प्राप्त हाते है।

घटोत्कच (जिला औरगाबाद, महाराप्ट्र)

इस स्थान पर छठी सातवी शती की बौद्ध गुफाए है जो देश की इसी भाग की अजता व इलौरा गुफाआ की भाति ही पहाडी के पाश्व म काटकर बनाई गई हैं।

नदी जिसे अब 'घी' कहा जाता है ।

घृतसागर

पौराणिक भूगोल क अनुसार पृथ्वी के सप्त सागरो म स एक है । इसकी स्थिति कुशद्वीप के चतुर्दिक् मानी गई है । विष्णुपुराण 2, 2, 6 मे सर्पि (घृत) समुद्र का उल्लेख अन्य काल्पनिक समुद्रा के नाम क साथ है—'एते द्वीपा समुद्रैस्तु सप्त सप्तभिरावृता , लवणेक्षु सुरासर्पि दधि दुग्ध जल समम्' ।

घोघा (काठियावाड, गुजरात)

काठियावाड के समुद्रतट पर एक छोटा सा बदरगाह है । घोघा भावनगर के निकट है और प्राचीनकाल मे जना के तीथ रूप म इसकी मान्यता थी । यह नगरी सौराष्ट्र और गुजरात की पुरानी लोक कथाआ म सुदर नारियो के लिए प्रख्यात थी । गुजरात के अनेक युवक घोघा की कुमारियो से विवाह करके अपन को भाग्यशाली समझते थे ।

घोषपारा (प० बगाल)

कल्याणी से छ मील । यह स्थान कर्ताभाज नामक धार्मिक सप्रदाय का केंद्र था । इस सप्रदाय के सस्थापक औलचद थे । उनके अनुयायियो के मतानुसार वे चैतन्य देव के ही अवतार थे । उनके अनुयायी घोषपारा के निकट आज भी पाए जाते हैं ।

घोषिताराम

कौशाबी का विहार, जिसे घोषितराम के एक व्यापारी ने बनवाया था ।

घोसामडल (राजस्थान)

प्राचीन दुर्भेद्य गढ के लिए विख्यात है । इस दुग के निर्माता चौहान नरेश थे ।

घोसुडी (म० प्र०)

इस स्थान से प्राप्त शुगकालीन अभिलेखो से ज्ञात होता है कि द्वितीय शती ई० पू० के लगभग ही देश के इस भाग मे भागवतधम (वासुदेव कृष्ण की पूजा) का प्रचलन प्रारभ हो गया था और बौद्ध धम अवनति के माग पर बढ रहा था । एक अभिलेख म सकर्षण या बलराम की उपासना का भी उल्लेख है ।

चकोगढ़ (बिहार)

नरकटियागज से 2 मील उत्तर पश्चिम मे चदी गाव के निकट एक प्राचीन दुह है । यहा जानकीकोट दुग के खडहर 90 फुट ऊचाई पर अवस्थित है । इस दुग को वृज्जिगोत्रीय वुलियो ने बनवाया था । ये क्षत्रिय बुद्ध के समकालीन

घनपुर (मुलुग तालुक, जिला वारंगल, आ० प्र०)

इस स्थान पर 22 मंदिरों के समूह हैं जो कला और शैली की दृष्टि से पालमपेट के रामप्पा के मंदिर के प्रतिरूप जान पड़ते हैं। ये मंदिर मुख्य देवालय के चतुर्दिक अवस्थित हैं। केंद्रीय मंदिर के पूर्व, उत्तर और दक्षिण की ओर द्वारमंडप बने हुए हैं और पश्चिम की ओर एक छोटा शिवालय है। मंदिर का महामंडप नष्ट हो गया है किंतु मानवों तथा पशुओं की आकृतियों में बने हुए आठ द्वाराधार अभी वर्तमान हैं। ये रामप्पा मंदिर के द्वाराधारों के अनुरूप ही हैं। घनपुर का मंदिर रामप्पा मंदिर का समकालीन है।

घघरा=घाघरा (दे० सरयू)

घारापुरी

एलिफेंटा द्वीप (बंबई के निकट) का प्राचीन नाम (दे० एलिफेंटा तथा काराद्वीप)।

घुंसौर (जिला सिवनी, म० प्र०)

गढमंडला नरेश संग्रामसिंह (मृत्यु 1541 ई०) के बावन दुर्गों में से एक। गढमंडला की रानी वीरांगना दुर्गावती संग्रामसिंह या संग्रामशाह की पुत्रवधू थी।

घुमली (जिला जामनगर, काठियावाड़, गुजरात)

सौराष्ट्र के जाठव राजवंश की राजधानी। इसके खंडहर जामनगर के निकट अवस्थित हैं। किंवदंती है कि जाठव नरेश महाभारत के सिंधुराज जयद्रथ के वंशज थे। 7वीं शती ई० के मध्यकाल में ये लोग सिंध से कच्छ होते हुए आए और सौराष्ट्र में बस गए। शलकुमार नामक राजा ने इस नए राजवंश की नींव डाली थी। घुमली का प्राचीन नाम भूभृतपल्ली या भूताबिलिका था जो कालांतर में बिगड़कर भुमली और फिर घुमली बन गया। घुमली में मध्ययुगीन इमारतों तथा मंदिरों के भग्नावशेष स्थित हैं। इनमें नौलखा मंदिर प्रसिद्ध है। किंवदंती के अनुसार चौदहवीं शती ई० में घुमली का पतन हुआ जिसका कारण सोना नामक लोहकार कन्या का शाप था। इसके पश्चात इस राजवंश की राजधानी पोरबंदर में बनी जहां 1947 तक इस प्राचीन राजकुल का राज्य रहा। यह नगर वेत्रवती नदी (वर्तमान वर्तोई) के तट पर बसा था। इसके प्राचीन नाम का उल्लेख यहां से प्राप्त ताम्रपट्ट लेखों में है।

घृतमती

काठियावाड़ या सौराष्ट्र (गुजरात) के उत्तरपश्चिम भाग की एक छोटी

नदी जिसे अब 'घी' कहा जाता है।

घृतसागर

पौराणिक भूगोल के अनुसार पृथ्वी के सप्त सागरो मे स एक है। इसकी स्थिति कुशद्वीप के चतुर्दिक मानी गई है। विष्णुपुराण 2, 2, 6 मे सर्पि (घृत) समुद्र का उल्लेख अन्य काल्पनिक समुद्रो के नाम के साथ है—'एते द्वीपा समुद्रस्तु सप्त सप्तभिरावृता, लवणेक्षु सुरासर्पि दधि दुग्ध जलै समम्'।

घोघा (काठियावाड, गुजरात)

काठियावाड के समुद्रतट पर एक छोटा सा बदरगाह है। घोघा भावनगर के निकट है और प्राचीनकाल मे जैनो के तीथ रूप म इसकी मान्यता थी। यह नगरी सौराष्ट्र और गुजरात की पुरानी लोक कथाओ मे सुदर नारियो के लिए प्रख्यात थी। गुजरात के अनेक युवक घाघा की कुमारियो से विवाह करके अपने को भाग्यशाली समझते थे।

घोषपारा (प० बगाल)

कल्याणी से छ मील। यह स्थान कर्तभाज नामक धार्मिक सप्रदाय का केद्र था। इस सप्रदाय के सस्थापक औलचद थे। उनके अनुयायियो के मतानुसार वे चतन्य देव के ही अवतार थे। उनके अनुयायी घोषपारा के निकट आज भी पाए जाते हैं।

घोषितारास

कौशाबी का विहार, जिसे घोषितारास के एक व्यापारी ने बनवाया था।

घोसामडल (राजस्थान)

प्राचीन दुर्भेद्य गढ के लिए विख्यात है। इस दुग के निर्माता चौहान नरेश थे।

घोसुडी (म० प्र०)

इस स्थान से प्राप्त शुगकालीन अभिलेखो से ज्ञात हाता है कि द्वितीय शती ई० पू० के लगभग ही देश के इस भाग म भागवतधम (वासुदेव कृष्ण की पूजा) का प्रचलन प्रारभ हो गया था और बौद्ध धम अवनति के मार्ग पर बढ रहा था। एक अभिलेख मे सकर्षण या बलराम की उपासना का भी उल्लेख है।

चकीगढ (विहार)

नरकटियागज से 2 मील उत्तर पश्चिम मे चदी गाव के निकट एक प्राचीन दूह है। यहाँ जानकीकोट दुग के खडहर 90 फुट ऊचाई पर अवस्थित हैं। इस दुर्ग को वृज्जिगगोत्रीय वृलियो ने बनवाया था। य क्षत्रिय बुद्ध के समकालीन

चढाई करने के लिए गौरी को निमत्रण दिया था। चदावर के युद्ध मे जयचद मारा गया था।

(2) (जिला झासी, उ० प्र०) जगलौन स्टेशन से 5 मील पर जैन मुनि शातिनाथ स्वामी का निवासस्थान। इसे चादपुर भी कहते हैं।

चदूर

(1) (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०) यादव नरेशा के समय के मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

(2)=चद्र (1)

चदेरी (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

प्राचीन नाम चद्रगिरि। चदेरी महाभारत काल मे श्रीकृष्ण के प्रतिद्वद्वी शिशुपाल की राजधानी थी। शिशुपाल चेदि देश का राजा था। महाभारत मे चेदि की राजधानी का नाम नही है। चदेरी मे प्राचीनकाल के अनेक ध्वसावशेष बिखरे पडे हैं। यहा से आठ मील उत्तर की ओर बूढीचदेर (या चदरी) नाम का एक उजाड ग्राम है जो 10वी—12वी शती ई० का जान पडता है। चदेरी से प्राप्त 11वी—12वी शती ई० के प्रतिहार राजा कीर्तिपाल के अभिलेख से सूचित होता है कि यहा उसके समय मे कीर्तिदुग नामक किले का निर्माण हुआ था। इस अभिलेख मे चदेरी का नाम चद्रपुर है। 1528 ई० मे चदेरी के राजा मेदिनीराय को हराकर प्रथम मुगल सम्राट् बाबर ने इस नगर पर अधिकार कर लिया। 18वी शती के अतिम चरण मे, मुगल-साम्राज्य की अवनति और मराठा के उत्कप के समय, सिंधिया का ग्वालियर के इलाके मे आधिपत्य स्थापित होने पर चदेरी भी ग्वालियर रियासत म सम्मिलित हो गई। एक जनश्रुति के आधार पर कहा जाता है कि चदेरी की स्थापना सभवत आठवी शती ई० मे चदेल राजपूता ने की थी जो चद्रवशीय क्षत्रिय माने जाते थे। इन्होंने इसका नाम चद्रपुरी रक्खा था। यह भी सभव है कि *महाभारत कालीन चेदि देश की राजधानी होने से इस नगरी का* चेदिपुरी या चेदिगिरि कहा जाता था, जिसका अपभ्रश कालातर म चदेरी हो गया। चदेरी के ऐतिहासिक स्मारको मे यहा का किला, फतेहाबाद का कोशक-महल (15वी शती ई०), पचमनगर और सिंगपुर के महल (18वी शती) उल्लेखनीय हैं।

चदेलगढ़=चुनार

चद्र

(1) वतमान चदूर, राधनपुर (गुजरात) के निकट प्राचीन जैन तीथ।

थे। चकीगढ़ को जानकीगढ भी कहते हैं। इसका सबध चाणक्य से बताया जाता है।

चचु

चीनी यात्री युवानच्वांग ने चचु देश को सारनाथ और वैशाली के बीच मे स्थित बताया है। शायद आलवक, जिसका अभिज्ञान कर्निघम ने गाज़ीपुर के निकटवर्ती क्षेत्र से किया है, यही था।

चडहारो (पजाब)

सिंधुघाटी सभ्यता के अवशेष इस स्थान से भी प्राप्त हुए हैं।

चडीस्थान (दे० मुगेर)

चडेश्वर

मेघदूत के अनुसार उज्जयिनी के अतगत शिव का एक धाम, जहा गधवती नदी बहती थी—'पुण्य यायास्त्रिभुवनगुरोर्धाम चडेश्वरस्य, धूतोद्यानकुवलयरजो गधिभिर्गधवत्या' पूर्वमेघ० 35। यह वही स्थान जान पडता है जहा महाकाल शिव का मदिर था (पूर्वमेघ० 36)। मह मदिर आज भी उज्जैन म है।

चदन (नदी)

अग व मगध की सीमा (जिला सथाल परगना, बिहार) पर बहने वाली नदी। यह गगा की सहायक नदी है। वाल्मीकि० किष्किधा 40, 20 मे इसी का उल्लेख जान पडता है।

चदनग्राम (लका)

महावश 19, 61 के अनुसार इस ग्राम मे अशोक की पुत्री सघमित्रा द्वारा लका म लाए हुए बोधिवृक्ष (पीपल) की एक शाखा का अकुर रोपित किया गया था। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है।

चदना

(1)=साबरमती नदी।

(2)=चदन नदी

चदनावती

बडौदा का प्राचीन नाम।

चदावर (जिला इटावा, उ० प्र०)

(1) यमुना के तट पर मध्ययुगीन कस्बा है। पृथ्वीराज चौहान को हराने के पश्चात् मु० गौरी ने 1194 ई० म भारत पर पुन आक्रमण करके इस बार पृथ्वीराज के प्रतिद्वदी जयचद राठौर को इस स्थान पर पराजित किया था। जयचद कन्नौज का राजा था और कहा जाता है कि इसने पृथ्वीराज के ऊपर

चढाई करने के लिए ग़ौरी को निमत्रण दिया था। चदावर के युद्ध मे जयचद मारा गया था।

(2) (ज़िला झासी, उ० प्र०) जगलौन स्टेशन से 5 मील पर जैन मुनि शातिनाथ स्वामी का निवासस्थान। इसे चादपुर भी कहते हैं।

चद्दूर

(1) (ज़िला आदिलाबाद, आ० प्र०) यादव नरेशो के समय के मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

(2)=चद्र (1)

चदेरी (ज़िला ग्वालियर, म० प्र०)

प्राचीन नाम चद्रगिरि। चदेरी महाभारत काल म श्रीकृष्ण के प्रतिद्वद्वी शिशुपाल की राजधानी थी। शिशुपाल चेदि देश का राजा था। महाभारत मे चेदि की राजधानी का नाम नही है। चदेरी मे प्राचीनकाल के अनेक ध्वसावशेष बिखरे पडे हैं। यहा से आठ मील उत्तर की ओर बूढीचदेर (या चदेरी) नाम का एक उजाड ग्राम है जो 10वी—12वी शती ई० का जान पडता है। चदेरी से प्राप्त 11वी—12वी शती ई० के प्रतिहार राजा कीर्तिपाल के अभिलेख से सूचित होता है कि यहा उसके समय मे कीर्तिदुर्ग नामक किले का निर्माण हुआ था। इस अभिलेख म चदेरी का नाम चद्रपुर है। 1528 ई० मे चदेरी के राजा मेदिनीराय को हराकर प्रथम मुगल सम्राट् बाबर ने इस नगर पर अधिकार कर लिया। 18वी शती के अतिम चरण मे, मुगल-साम्राज्य की अवनति और मराठो के उत्कर्ष के समय, सिंधिया का ग्वालियर के इलाके मे आधिपत्य स्थापित होने पर चदेरी भी ग्वालियर रियासत मे सम्मिलित हो गई। एक जनश्रुति के आधार पर कहा जाता है कि चदेरी की स्थापना सभवत आठवी शती ई० मे चदेल राजपूतो ने की थी जो चद्रवशीय क्षत्रिय माने जाते थे। इन्होने इसका नाम चद्रपुरी रक्खा था। यह भी सभव है कि महाभारत कालीन चेदि देश की राजधानी होने से इस नगरी को चेदिपुरी या चेदिगिरि कहा जाता था, जिसका अपभ्रश कालातर मे चदेरी हो गया। चदेरी के ऐतिहासिक स्मारको मे यहा का किला, फतेहाबाद का कोशक-महल (15वी शती ई०), पचमनगर और सिंगपुर के महल (18वी शती) उल्लेखनीय हैं।

चदेलगढ=चुनार

चद्र

(1) वर्तमान चद्दूर, राधनपुर (गुजरात) के निकट प्राचीन जैन तीर्थ।

इसका उल्लेख तीर्थ-माला-चैत्य-वदन मे इस प्रकार है—'श्री नेजपल्लविहार निवतटके चद्रे च दवर्भावते ।

(2) हर्षचरित के प्रथमोच्छ्वास म महाकवि-बाणभट्ट ने शोण नदी का उदगम चद्र नामक पवत से माना है । भौगोलिक तथ्य यह है कि नर्मदा और शोण (या सोन) दोना ही नदिया विंध्याचल के अमरकटक पवत से निकली हैं । इसी को चद्र या सोमपवत कहते थे क्योकि नमदा का एक नाम सोमोदभवा भी है ।

(3) विष्णुपुराण के अनुसार प्लक्ष द्वीप का एक मर्यादा पवत, 'गोमेदश्चव चद्रश्च नारदा दुदभिस्तथा, सोमक सुमनाश्चैव वैभ्राजश्चेव सप्तम ' 2, 4, 7।

चद्रकान्ता

वाल्मीकि-रामायण उत्तर० 102,9 के अनुसार श्री रामचद्रजी ने लक्ष्मण के पुत्र चद्रकेतु को मल्लदेश म स्थित चद्रकाता नामक नगरी का राज दिया था—'चद्रकेतोश्च मल्लस्य मल्लभूम्या निवेशिता, चद्रकान्तेति विख्याता दिव्या स्वगपुरीयथा' । यहा पहुचने के लिए चद्रकेतु को अयोध्या क उत्तर की ओर जाना पडा था—'अभिषिच्य कुमारौ द्वौ प्रस्थाप्य सुसमाहितौ, अगद पश्चिमां भूमि चद्रक्तमुदङ मुखम' उत्तर० 102,11 । जातक कथाओ तथा बौद्ध साहित्य से ज्ञात हाता है कि वतमान गोरखपुर (उ० प्र०) का परिवर्ती प्रदेश ही प्राचीन समय मे मल्लदश कहलाता था । यदि रामायण मे वर्णित चद्रकाता नगरी इसी मल्लदेश म थी तो इसकी स्थिति गोरखपुर या कुशीनगर (कसिया) के आस पास के क्षेत्र मे होनी सभव है । अयोध्या से उत्तर दिशा मे इस नगरी का होना भी इस अभिज्ञान के प्रतिकूल नही है ।

चद्रकेतुगढ़ (प० बगाल)

कलकत्ता से 24 मील । आशुतोष सग्रहालय, कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा की गई हाल की खुदाई म इस स्थान से मौय-शुगकाल से लेकर उत्तरगुप्तकाल तक की सभ्यताओ के चिन्ह प्राप्त हुए हैं । सबस प्राचीन युगो के कच्चे मकानो के अवशेष सबसे निचले स्तरो म मिले है । ये लकडी बास आदि के बने हुए हैं । इन मकानो का अग्निकाड द्वारा नष्ट हाने का अनुमान किया जाता है । परवर्तीकाल म बने हुए इटो के पक्के मकानो के चिह्न उपरले स्तरो मे मिले हैं । मौयकालीन बस्तियो मे पानी के लिए खपरो की बनी नालियो का प्रबंध था । प्राचीन नगर के चारो ओर कच्ची मिट्टी की मोटी दीवार के अवशेष भी प्रकाश म आए है ।

चद्रगिरि

(1) चदेरी

(2) (मैसूर) कावेरी के उत्तरी तट पर कलबप्पू नामक पहाडी को 900 ई० के दो अभिलेखो मे चद्रगिरि कहा गया है। इनके अनुसार चद्रगुप्त, मुनिपति तथा भद्रबाहु के चरणचिह्न इस पहाडी पर अकित थे। ये अभिलेख जैन धम से सबधित है और यदि इनसे प्राप्त सूचना को सत्य माना जाए तो चद्रगुप्त मौर्य का अतिम दिनो मे दक्षिण भारत म जाना और जैन धम मे दीक्षित होना सिद्ध होता है। स्मिथ ने इस परपरा को सत्य माना है (अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया पृ० 76)। मैसूर मे स्थित श्रवणबेलगोला नामक प्रसिद्ध जैन तीर्थ इसी चद्रगिरि और इद्रगिरि नामक पहाडियो के बीच स्थित है।

(3) (मद्रास) तालीकोट के प्रसिद्ध युद्ध (1564 ई०) के पश्चात् विजयनगर के राज्यवश के लोगो ने चद्रगिरि के किले मे शरण ली थी। किले के परकोटे के अदर अनेक सुदर मदिर हैं।

(4) प्राचीन केरल की उत्तरी सीमा पर बहन वाली नदी। (अर्ली हिस्ट्री ऑव एशेट इडिया, पृ० 466)

चद्रगुप्तपटनम् (जिला महबूबनगर, आ० प्र०)

कृष्णा नदी के वाम तट पर अमराबाद से 32 मील दक्षिण की ओर स्थित है। वारगल नरेश प्रतापरुद्र के शासनकाल मे यह नगर समृद्ध एव सम्पन्न था। प्राचीन मदिरो के अवशेष आज भी यहा देखे जा सकते हैं। सभव है इस नगर का नामकरण सम्राट् चद्रगुप्त मौय के नाम पर हुआ हो। जैन किवदतियो के अनुसार चद्रगुप्त वृद्धावस्था मे जैन धम मे दीक्षित होकर दक्षिण भारत मे जाकर रहने लगे थे। मैसूर की चद्रगिरि पहाडी (श्रवणबलगोला के निकट) चद्रगुप्त के नाम ही से प्रसिद्ध कही जाती है। शायद चद्रगुप्तपटनम् का भी कुछ सबध मौय सम्राट् के दक्षिण भारत मे आवासकाल से हो।

चद्रगुफा (काठियावाड, गुजरात)

इस गुफा से क्षत्रपनरेशो के शासनकाल का एक मूल्यवान् अभिलेख प्राप्त हुआ था, जिससे सूचित होता है कि दिगबर-जैन साहित्य के व्यवस्थापक श्रीधर सेनाचाय इस गुफा मे रहा करते थे। जैन विद्वान पुष्पदत और भूतबलि ने भी यहा रहकर अध्ययन किया था। इस गुफा की आकृति अर्धचद्राकार है।

चद्रनगर

छठी शती ई० म यमुना नदी पर स्थित एक छोटा व्यापारिक नगर था जिसकी स्थिति कौशाबी और कान्यकुब्ज के माग मे थी। यहां का व्यापार

मुख्य रूप से यमुना नदी द्वारा होता था और नगर में धनी श्रेष्ठियों का निवास था।

चद्रपुर

(1) (दे० चदेरी)

(2)=चद्रपुरी

(3) मध्यप्रदेश में स्थित वर्तमान चादा जहाँ कनिंघम के अनुसार सातवीं शती में दक्षिण कोसल की राजधानी थी। (एशेंट ज्याग्रेफ़ी ऑव इडिया पृ० 595)

चद्रपुरी (ज़िला बनारस, उ० प्र०)

(1) सारनाथ से नौ मील पर स्थित जैनों का प्राचीन अतिशयतीर्थ है। इसे जैनाचार्य चद्रप्रभ का जन्मस्थान माना जाता है। ये आठवें तीर्थंकर थे। चद्रपुरी गगातट पर बसी है जहा कई प्राचीन जैन मदिर स्थित हैं। इसे चद्रावती या चद्रवटी भी कहते हैं।

(2)=चदेरी

(3)=श्रावस्ती (जैनसाहित्य)

चद्रभागा

(1) पजाब की प्रसिद्ध नदी चिनाब। इसको वैदिक साहित्य में *असिक्नी* कहा गया है। महाभारतकाल में इसका नाम चद्रभागा भी प्रचलित हो गया था—'शतद्रू चद्रभागा च यमुना च महानदीम्, दृषदवती विपाशा च विपापा स्थूलवालुकाम्'—भीष्म० 9, 15। श्रीमदभागवत 5, 19, 18 में चन्द्रभागा और असिक्नी दोनों का नाम एक ही स्थान में है—'शतद्रूश्चद्रभागा मरुद्वृधा वितस्ता-असिक्नी विश्वेति महानद्य'। यहा चन्द्रभागा के ही दूसरे नाम असिक्नी का उल्लेख है। ग्रीक लेखकों ने इस नदी को अकेसिनिज़ (*Akesines*) लिखा है जो असिक्नी का ही स्पष्ट रूपातर है। चद्रभागा नदी मानसरोवर (तिब्बत) के निकट चद्रभाग नामक पर्वत से निस्सृत होती है और सिधु नदी में गिर जाती है। श्रीमद्‌भागवत में शायद इसी नदी की ऊपरी धारा को चद्रभागा कहकर, पुन शेष नदी का प्राचीन वैदिक नाम असिक्नी कहा गया है। यह भी सभव है कि प्रस्तुत उल्लेख में चद्रभागा से दक्षिण भारत की भीमा का अभिप्राय हो किंतु यहा दिए गए अन्य नामों के कारण यह सभावना कम जान पडती है। विष्णुपुराण 2, 3, 10 में भी चद्रभागा का उल्लेख है—'शतद्रू चद्रभागाद्या हिमवत् पादनिर्गता', यहा इस नदी को हिमालय से उद्‌भूत माना है। विष्णुपुराण 4, 24, 69 ('सिधु दार्विकोर्वी चद्रभागाकाश्मीरविषयादश्चव्रात्यम्लेच्छशूद्रादयो

भोक्ष्यन्ति') से ज्ञात होता है कि चद्रभागा नदी का तटवर्ती प्रदेश पूवगुप्तकाल मे म्लेच्छा तथा यवन शकादि द्वारा शासित था ।

(2)=भीमा । चद्रभागा के तट पर महाराष्ट्र का प्रसिद्ध तीर्थ पढरीपुर बसा है । यह नदी भीमशकर नामक पवत (पश्चिमी घाट मे स्थित) से निकलकर लगभग 200 मील बहने के पश्चात कृष्णा नदी मे (ज़िला रायचूर मे) मिल जाती है । भीमा इसका दूसरा प्रसिद्ध नाम है ।

(3) (उडीसा) कोणाक के समीप बहने वाली एक नदी । कोणाक का पौराणिक नाम पद्मक्षेत्र है । (दे० मैत्रेयवन)

(4) सौराष्ट्र (काठियावाड, गुजरात) के उत्तर-पश्चिमी भाग—हालार—मे बहने वाली नदी ।

(5) चन्द्रभागा नदी (1) का तटवर्ती प्रदेश जिसका उल्लेख विष्णुपुराण 4, 24, 69 मे है ।

चद्रवट (गुजरात)

मनमाड स्टेशन के निकट चादवड प्राचीन तीथ है जिसका सबध परशुराम तथा उनकी माता रेणुका से बताया जाता है । इसका प्राचीन नाम चद्रादित्य-पुरी भी कहा गया है । (दे० चादवड) । रेणुका के नाम पर अन्य प्रसिद्ध तीर्थ रुनकता (ज़िला आगरा, उ० प्र०) है ।

चद्रवटी=चद्रपुरी

चद्रवती -चद्रावती (राजस्थान)

आबू पर्वत के निकट है । यह नगरी प्राचीनकाल मे पवार राजपूतो की राजधानी थी । आबू के उग्रसेन पवार ने पवार राज्य की नीव डाली थी । राजा भोज (1010–1050 ई०) इस वश का प्रसिद्ध राजा था जिसके समय मे पवारो की राजधानी धारानगरी मे थी । 12वी शती मे सोलकिया ने पवार राज्य का अन्त कर दिया था । चद्रवती के खडहर आबू के निकट हैं । चद्रवती को चद्रावती भी कहते हैं ।

(2)=चद्रपुरी (1)

(3) (काठियावाड, गुजरात) सौराष्ट्र का प्राचीन नगर । इस स्थान से प्राप्त पुरातत्व विषयक सामग्री राजकोट के सग्रहालय मे सुरक्षित है ।

चद्रवल्ली (मैसूर)

चीतल्दुग से एक मील पश्चिम । ई० सन् के प्रारभिक काल मे यह स्थान व्यापारिक दृष्टि से काफ़ी महत्त्वपूण रहा होगा क्योकि यहा तत्कालीन रोम-साम्राज्य मे प्रचलित अनेक सिक्के मिले हैं जिनमे ऑगस्टस सीज़र तथा

टाइबेरियस नामक रोम सम्राटो के सिक्के भी हैं।

चद्रवसा

श्री मदभागवत 5,19,18 मे इस नदी का अन्य नदिया के साथ उल्लेख है—'च द्रवसा ताम्रपर्णी अवटोदा कृतमाला वैहायसी कावेरी वेणी'— प्रसग से यह नदी दक्षिण भारत की जान पडती है। सभव है यह चद्रभागा या भीमा हो।

चद्रा

विष्णुपुराण 2, 4, 28 मे उल्लिखित शाल्मलद्वीप की एक नदी—'योनिस्तोयावितृष्णा च चद्रमुक्ताविमोचनी, निवृत्ति सप्तमी तासास्मृतास्ता पापशान्तिदा'।

च द्रादित्यपुरी=चादवड

चद्रावती=च द्रवती

चद्रिकापुरी=श्रावस्ती (जन साहित्य)

चदेही (जिला रीवा, म० प्र०)

प्राचीन शैव विहार या मठ के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। मदिर छोटे वर्गाकार पत्थरो से बनाया गया था। ऊपरी सतह के प्रस्तर-खड कोनो पर स तडक गए हैं क्योकि निर्माताओ ने पत्थरो को जोडते समय चिनाई के स्वाभाविक विस्तरण के लिए कोई स्थान नही छोडा (दे० प्रोग्रेस रिपोर्ट आर्क्योलॉजिकल सर्वे, वेस्टन सर्किल, 31 मार्च 1921, पृ० 83–84–85)।

चपकारण्य=चपारण्य

चपमालिनी=चपा

चपा (जिला भागलपुर, बिहार)

अग देश की राजधानी। विष्णुपुराण 4, 18, 20 से इगित होता है कि पृथुलाक्ष के पुत्र चप ने इस नगरी को बसाया था—'ततश्चपो यश्चम्पा निवेशया मास'। जनरल कनिघम के अनुसार भागलपुर के समीपस्थ ग्राम चपानगर और चपापुर प्राचीन चपा के स्थान पर ही बसे हैं। महाभारत शान्ति० 5, 6-7 के अनुसार जरासध ने कर्ण को चपा या मालिनी का राजा मान लिया था, 'प्रीत्या ददौ स कर्णाय मालिनी नगरमथ, अगेषु नरशार्दल स राजाऽऽसीत् सपत्नजित। पालयामास चपा च कर्ण परबलार्दन'। वायुपुराण 99,105-106, हरिवशपुराण 31,49 और मत्स्यपुराण 48 97 के अनुसार भी चपा का दूसरा नाम मालिनी था। चपा को चपपुरी भी कहा गया है—'चपस्य तु पुरी चपा या मालिन्यभवत पुरा'। इससे यह भी सूचित होता है कि चपा का पहला नाम मालिनी था और चप नामक राजा ने उसे चपा नाम दिया था। दिघनिकाय 1,111, 2,235

के वणन के अनुसार चपा अगदेश मे स्थित थी। महाभारत वन० 308,26 से सूचित होता है कि चपा गगा के तट पर वसी थी—'चमण्वत्याश्च यमुना ततो गगा जगाम ह, गगाया सूत विषय चपामनुययौ पुरीम्'। प्राचीन कथाओ से सूचित होता है कि इस नगरी के चतुर्दिक चपक वृक्षो की मालाकार पक्तिया थी। इस कारण इसे चपमालिनी या चवलमालिनी कहते थे। जातककथाओ म इस नगरी का नाम कालचपा भी मिलता है। महाजनक जातक के अनुसार चपा मिथिला से साठ कोस दूर थी। इस जातक मे चपा के नगर द्वार तथा प्राचीर का वणन है जिसकी जन ग्रथा से भी पुष्टि होती है। औपपातिक सूत्र मे नगर के परकोटे, अनेक द्वारो, उद्यानो, प्रासादो आदि क बार म निश्चित निर्देश मिलत हैं। जातक-कथाआ म चपा की श्री, समृद्धि तथा यहा के सपन्न व्यापारिया का अनेक स्थाना पर उल्लेख है। चपा म कौशेय या रेशम का सुदर कपडा बुना जाता था जिसका दूर दूर तक, भारत से बाहर दक्षिणपूव एशिया क अनेक देशो तक, व्यापार होता था। (रेशमी कपडे की बुनाई की यह परपरा वतमान भागलपुर मे अभी तक चल रही है) चपा के व्यापारिया ने हिंद चीन पहुँच-कर वतमान अनाम के प्रदेश मे चपा नामक भारतीय उपनिवश स्थापित किया था। साहित्य मे चपा का कुणिक अजातशत्रु की राजधानी क रूप म वणन है। औपपातिक सूत्र म इस नगरी का सुदर वणन है और नगरी मे पुण्यभद्र की विश्रामशाला यहा क उद्यान म अशोक वृक्षो की विद्यमानता और कुणिक और उसकी महारानी धारिणी का चपा से सबध आदि बाता का उल्लेख है। इसी ग्रथ म तीथकर महावीर का चपा म समवशरण करन और कुणिक को चपा की यात्रा का भी वणन है। चपा मे कुछ शासनाधिकारियो जैसे गणनायक, दडनायक और ताल्वर के नाम भी इस सूत्र मे दिए गए हैं। जैन उत्तराध्ययन सूत्र मे चपा के धनी व्यापारी पालित की कथा है जा महावीर का शिष्य था। जन ग्रथ विविधतीथकल्प म इस नगरी की जैनतीर्थों म गणना की गई है। इस ग्रथ के अनुसार बारहवें तीथकर वासुपूज्य का जन्म चपा म हुआ था। इस नगरी के शासक करकडु न कुड नामक सरोवर म पाश्वनाथ की मूर्ति की प्रतिष्ठापना की थी। वीरस्वामी न वर्षाकाल म यहा तीन राते बिताई थी। कुणिक (अजातशत्रु) ने अपन पिता बिबसार की मृत्यु के पश्चात राजगृह छोडकर यहा अपनी राजधानी बनाई थी। युवानच्वाग (वाटस 2,181) न चपा का वणन अपन यात्रावृत्त म किया है। दशकुमार चरित्र 2,2 म भी चपा का उल्लेख है जिसस ज्ञात होता है कि यह नगरी 7वी शती ई० या उसक बाद तक भी प्रसिद्ध थी।

चपापुर के पास कर्णगढ की पहाडी (भागलपुर के निकट) है जिससे महाभारत के प्रसिद्ध योद्धा अगराज कर्ण से चपा का सबध प्रकट होता है। यहा का समीपतम रेल स्टेशन नाथनगर, भागलपुर से 2 मील है। चपा इसी नाम की नदी और गगा के सगम पर स्थित थी।

(2)=चपापुर (हिंद चीन)। प्राचीन भारतीय उपनिवेश चपा म वतमान अनाम का अधिकाश भाग सम्मिलित था। अनाम के उत्तरी ज़िले 'थान-ह्वो आ', 'नगे आन' और 'हातिन्ह' केवल इसके बाहर थे। इस प्रकार चपापुरी का विस्तार 14° से 10° उत्तरी देशातर के बीच में था। दूसरी शती ई० म यहा पहली बार भारतीयो ने औपनिवेशिक बस्ती बनाई थी। ये लोग सभवत भारत की चपानगरी के निवासी थे। 15वी शती तक यहा के निवासी पूण रूप से भारतीय सस्कृति एव सभ्यता के प्रभाव मे थे। इस शती मे अनामियो ने चपा को जीतकर वहा अपना राज्य स्थापित कर लिया और भारतीय उपनिवेश की प्राचीन परपरा को समाप्त कर दिया। चपा का सवप्रथम भारतीय राजा श्रीमान् था जिसका चीन के इतिहास में भी उल्लेख मिलता है। चपापुरी के वतमान अवशेषो मे यहा के प्राचीन भारतीय धम तथा सस्कृति की सुदर झलक मिलती है।

(3) चपा (1) के निकट बहने वाली नदी। चपा नगरी इसी नदी और गगा के सगम पर स्थित थी।

चपानगर

(1)=चपापुर=चपा (1)

(2)=चापानेर

चपारण्य

(1) (बिहार) प्राचीन काल मे बडी गडक के तट के समीप चपारण्य या चपकारण्य नामक विस्तीण वन था। महाभारत वनपव म तीथ यात्रानुपव के अतगत कौशिकी नदी (वतमान कोसी, बिहार) के पश्चात चपारण्य का उल्लेख है—'ततो गच्छेत राजेन्द्र चपकारण्यमुत्तमम, तत्रोष्य रजनीमेका गोसहस्रफल लभेत'—वन० 84, 133। चपारण्य के क्षेत्र मे गडकी के तट पर बगहा नगर बसा है—इसे लोग नारायणी तथा शालिग्रामी भी कहते हैं। बगहा से 25 मील पर दरबावारी म गडक, पचनद तथा सोनहा नदिया का सगम है। निकट ही बावनगढी के खडहर हैं जहा पाडवो ने अपने वनवास का कुछ समय व्यतीत किया था। पौराणिक किवदतिया के अनुसार यह वही स्थान है जहां श्रीमद्भागवत म वर्णित गज-ग्राह युद्ध हुआ था किंतु श्रीमद्भागवत के अनुसार

। आख्यायिका की घटनास्थली त्रिकूट पर्वत के निकट थी। दे० त्रिकूट (1)। ाक की घाटी मे गज और ग्राह के पैरो के चिह्न भी, श्रद्धालु लोगों की पना के अनुसार, पाए जाते हैं। सगम के निकट वह स्थान है जहा से सीता राम की सेना तथा लवकुश मे होने वाला युद्ध देखा था। यही सग्रामपुर । ग्राम है जहा वाल्मीकि का आश्रम बताया जाता है। चपारन का जिला चीन चपारण्य के क्षेत्र मे ही बसा हुआ है। (दे० बगहा)

(2) (जिला रायपुर, म० प्र०) 16वी शती के प्रसिद्ध महात्मा तथा क्ति-मार्ग के प्रमुख प्रचारक वल्लभाचार्य का जन्मस्थान। इनके पिता का म लक्ष्मणभट्ट तथा माता का इलम्मा था। ये आध्र के [illegible] के ने वाले तैलग ब्राह्मण थे। कहा जाता है कि लक्ष्मणभट्ट [illegible] की त्रा पर गए हुए थे और मार्ग में ही चपारण्य के स्थान पर वल्लभ का जन्म आ था (1478 ई०)। वल्लभाचार्य की सोलहवीं [illegible] की [illegible] रचना ो जाती है। ये भक्तिवाद के प्रतिपादक थे। महाकवि सूरदास इन्हीं के शिष्य । कुछ लोगो के मत मे वल्लभाचार्य का जन्मस्थान [illegible] (बिहार) के ाकट चतुर्भुजपुर है।

पारन (दे० चपारण्य)

पावती

(1) कुमायू की प्राचीन राजधानी।

(2) बबई से 25 मील दक्षिण में स्थित [illegible] [illegible]। यह परशुराम त्र के अतर्गत है। सभवत स्कदपुराण ([illegible] 82—16) की चपावती ही है।

पावतीनगर

बीड का प्राचीन नाम। कहा जाता है कि [illegible] की रानी चपावती इस स्थान का नाम, [illegible], विक्रमादित्य का अधिकार ो जाने पर बदलकर [illegible] कर दिया था।

दे० बीड)

बल द० चमण्वती

बा (हि० प्र०)

हुआ था। नैनादेवी ने नगरवासियों के लिए जल की पर्याप्त मात्रा प्राप्त करने के लिए अपने प्राण उत्सर्ग कर दिए थे। कहानी यह है कि राजा साहिलवर्मा ने सरोथा नामक सरिता का जल चंबा तक पहुंचाने के लिए एक रजवहा बनवाया था। किसी अज्ञात कारण से नदी का पानी इस नहर में न चढ़ता था। राजा को स्वप्न मे आदेश हुआ कि पानी लाने के लिए उसे अपने ज्येष्ठ पुत्र या रानी का बलिदान करना पड़ेगा। रानी को जब यह ज्ञात हुआ तो वह अपने प्राण देने के लिए तैयार हो गई। कहा जाता है कि जैसे ही नैनादेवी ने जल समाधि ली वैसे ही नहर में पानी फूट पड़ा। इस महान् आत्मा की स्मृति में चैत्र वैसाख में चंबा में एक बड़ा मेला लगता है जिसमें केवल स्त्रियां ही आती हैं। चंबा की मुख्य इमारत अखंड चंडीमहल है जिसके उत्तर-पश्चिम की ओर छः मंदिर स्थित हैं। इनमे तीन शिव और तीन विष्णु के मंदिर हैं। ये मंदिर शिल्प के सुंदर उदाहरण हैं। ये लगभग एक सहस्र वर्ष प्राचीन हैं। चंबा जिले में सर्वप्रसिद्ध मंदिर लक्ष्मीनारायण का है जो साहिल्वर्मा का ही बनवाया हुआ है। कहते हैं कि इस मंदिर को बनवाने के लिए राजा साहिल वर्मा ने अपने नौ राजकुमारों को संगमरमर लाने के लिए विंध्याचल भेजा था। इस काम में अपना ज्येष्ठ पुत्र युगकार वर्मा सबसे अधिक सफल रहा था। चंबा आज भी पुरानी हिंदू संस्कृति का केंद्र है और अपने प्राचीन परंपरागत लोक-संगीत तथा नृत्य के लिए भारत भर में प्रख्यात है। यहां के अनेक प्राचीन अभिलेख स्थानीय संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

चकराल (दे० चक्रवाल)

चक्रकूट

यह प्रदेश प्राचीनकाल मे वर्तमान मध्यप्रदेश के पूर्वी और उड़ीसा के पश्चिमी भाग के अंतर्गत था। गोदावरी इसकी पश्चिमी सीमा पर बहती थी। इंद्रावती नदी इसी प्रदेश की मुख्य नदी है जो वर्तमान जगदलपुर (जिला बस्तर) के पास बहती है। आज भी जगदलपुर के निकट इंद्रावती के प्रपात को चित्रकोट कहते हैं जो चक्रकूट या चक्रकोट का रूपांतर हो सकता है।

चक्रक्षेत्र

जगन्नाथपुरी के क्षेत्र का प्राचीन पौराणिक नाम।

चक्रतीर्थ

(1) नासिक (महाराष्ट्र) के निकट गोदावरी का तीर्थ। गोदावरी के उद्गम ब्रह्मगिरि के पश्चात इस स्थान पर नदी का जल पहली बार प्रकट हुआ है। यह ब्रह्मगिरि से छः मील दूर है।

(2) (ज़िला गढ़वाल उ० प्र०) बदरीनाथ से कुछ दूर उत्तर की ओर स्थित है। इसके विषय मे पौराणिक किंवदंती है कि यहा रहकर अर्जुन ने तप किया था और वरदान स्वरूप दवी अस्त्र प्राप्त करके उन्होंने शत्रुओ पर विजय प्राप्त की थी—'चक्रतीर्थस्य माहात्मादर्जुन परमास्त्रवित भूत्वा स नाशयामास शत्रून दुर्योधनादिकान' स्कदपुराण, केदार खड, 58, 57।

(3) किष्किंधा के निकट ऋष्यमूकपर्वत और तुगभद्रा नदी के घेरे को चक्रतीर्थ कहा जाता है।

चक्रनगर

(1) (म० प्र०) कलञ्जर का प्राचीन नाम। यहा के पुराने दुर्ग के ध्वसावशेषो म एक दरवाज़ा अभी तक दिखाई देता है जिसके पत्थरो पर विभिन्न देवी-देवताओ की सुदर मूर्तिया उत्कीर्ण हैं।

(2) (ज़िला इटावा, उ० प्र०) इस स्थान पर एक प्राचीन दुर्ग के खडहर तथा विस्तृत ढूह स्थित हैं किंतु नियमित रूप से उत्खनन न होने के कारण प्राचीनकाल की मूल्यवान् सामग्री प्रकाश म न आ सकी है। कहा जाता है कि यह वही स्थान है जहा भीम ने पाडवो के बनवास के दिनो मे यहा रहते हुए, एक राक्षस का वध करके एक ब्राह्मण परिवार की, जिसके यहा पाडव अतिथि थ, रक्षा की थी।

चक्रपुर (दे० केलञ्जर)

चक्रनदी

श्रीमदभागवत म (10, 79, 11) वर्णित नदी, जो सभवत गडकी या उसकी सहायक चक्रा है। (दे० चक्रा)

चक्रा

नेपाल की एक नदी जो देविका नदी के साथ ही, गडकी म, मुक्तिनाथ नामक स्थान पर मिलती है। मुक्तिनाथ का त्रिवेणी सगम काठमडू से 140 मील दूर है। सभवत यह श्रीमदभागवत पुराण की चक्र नदी है।

चक्षु

विष्णुपुराण 2, 2, 36 म चक्षु को केतुमाल वर्ष की नदी बताया गया है—'चक्षुश्च पश्चिमगिरीनतीत्य सकलास्तथा पश्चिमकेतुमालाख्य वर्ष गत्वैति सागरम'। कालब्रुक (दे० सिद्धान्त शिरोमणि की टीका) तथा विल्सन (दे० सस्कृतकोश) के अनुसार चक्षु, आक्सस (Oxus) नदी का एक प्राचीन सस्कृत नाम है। किंतु प्रो० पाठक ने यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि चक्षु का शुद्ध रूप वक्षु (या वक्षू) है और वक्षु का चक्षु सस्कृत साहित्य के परवर्ती काल

मे प्रतिलिपिकार की भूल से बन गया है। वक्षु या वक्षु सस्कृत के प्राचीन साहित्य मे सवत्र ऑक्सस नदी के लिए व्यहृत हुआ है (दे० वक्षु)। वाल्मीकि रामायण बाल० 43, 13 मे जिस सुचक्षु नदी का वणन गगा की पश्चिमी धारा के रूप मे है वह यही चक्षु या वक्षु जान पडती है—'सुचक्षुश्चैव सीता च सिंधुश्चैव महानदी, तिस्रश्चैतादिश जग्मु प्रतीची तु दिश शुभा'। सीता तरिम नदी है जो वक्षु मे पश्चिम की ओर से आकर मिलती है। चक्षु को सीता के साथ गगा की एक धारा माना गया है।

चक्षुष्मती=**इक्षुमती**

चजरला (जिला गतूर, आ० प्र०)

चजरला या चेजरला मे प्राचीनकाल मे एक बौद्धचैत्य स्थित था जो दक्षिण भारत मे बौद्धधम की अवनति क पश्चात, पल्लवो के शासनकाल मे, शिवमदिर के रूप मे परिणत हो गया था। इस स्तूप की, जो सरचनात्मक है न कि शैलकृत्त, खोज श्री री ने की थी। जान पडता है इसकी रूपरेखा व आकृति भी, जो पहले बौद्ध चैत्यो की भाति ही थी, बाद म शिव मदिरो के अनुकूल ही बना ली गई।

चटकूट (जिला मेदक, आ० प्र०)

प्राचीन मदिरो के मूल्यवान् अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

चटगाँव=**चाटगाव** (पूव वगाल, पाकि०)

एक स्थानीय किंवदती के अनुसार इस नगर का प्राचीन नाम टिस्टागोंग था जो बिगडकर चिट्टागौंग या चटगाव हो गया। कहा जाता है बर्मा के बौद्ध राजा ने जब इस स्थान को जीता तो उसने टिस्टागोग शब्द कहे थे जिनका अथ है कि लडाई करना बुरा है। चटगाव मे पुराना बदरगाह तो है ही, कई प्राचीन मदिर व मसजिदें भी है।

चणक

जैन ग्रथ आवश्यकसूत्र के अनुसार चन्द्रगुप्त का मत्री चाणक्य, चणक ग्राम का निवासी था। यह ग्राम गोल्ल (?) मे स्थित था।

चतुर्भुजपुर (जिला चपारन, बिहार)

चम्पारन के समीप चाडानगर। इसे किंवदती म महाप्रभु वल्लभाचाय का जमस्थान माना जाता है। इनका जन्म 1478 ई० मे हुआ था [किंतु दे० **चम्पारण्य** (2)]

चमकौर (हि० प्र०)

शिवालिक पहाडियो को तराई म बसा हुआ एक छोटा कस्बा। पुरातत्व

विभाग के अधीक्षक डॉ० वाई० डी० शर्मा के अनुसार उत्खनन से इस स्थान पर अति प्राचीन नगर के अवशेष प्राप्त हुए है। यह नगर आजकल सिक्खो का पवित्र स्थान है जहा गुरु गोविंदसिंह ने मुगलो के विरुद्ध अतिम युद्ध किया था। इसी के फलस्वरूप उनके दो ज्येष्ठ पुत्र मारे गए थे और दो कनिष्ठ पुत्र सरहिंद के सूबेदार की आज्ञा से दीवार म चुनवा दिए गए थे। डॉ० शर्मा के मत मे इस नगर की नीव रामायणकाल मे पडी थी। नगर के आसपास विस्तृत बालू के मैदान हैं जिससे यह जान पडता है कि किसी समय सतलज नदी यहां होकर बहती थी। ई० सन् के दो सहस्र वप पूव के हरप्पा-सभ्यता से प्रभावित अनेक अवशेष यहा मिले हैं। चमकौर की घनी बस्ती के कारण यहा विस्तृत खुदाई सभव न हो सकी है किंतु उत्तर मध्यकालीन अवशेष काफ़ी प्रचुरता से मिले है जिनके उदाहरण चमकीले मृदभाड एव लाल ढक्कन और चपटी तली तथा चौडे मुह और तेज़ धार के किनारे वाले प्याले हैं।

चमत्कारपुर (दे० बडनगर, हाटकेश्वर)

चमन (दे० उद्यान)

चमनाक (पूव बरार, महाराष्ट्र)

इस स्थान से वाकाटक नरेश प्रवरसेन द्वितीय का एक ताम्रदान पट्ट प्राप्त हुआ है जो इसके शासनकाल के 18वें वप म जारी किया गया था। इसम प्रवरसेन द्वारा चर्मांक नामक ग्राम (वतमान चमनाक) का एक सहस्र ब्राह्मणो को दान मे दिए जाने का उल्लेख है। इस अभिलेख म वाकाटक महाराजाओ की निम्न वशावली दी हुई है जिससे इस वश के इतिहास पर प्रकाश पडता है—महाराजा प्रवरसेन, म० गौतमीपुत्र, म० रुद्रसेन (स्वामी महाभैरव का भक्त था और भारशिव महाराज भवनाग का दौहित्र था। भारशिव महाराजाओ ने भागीरथी गगा को अपनी वीरता द्वारा प्राप्त किया था), म० पृथ्वीसेन (महेश्वर का भक्त था), म० रुद्रसेन (चक्रपाणि विष्णु का भक्त था, देवगुप्त की कन्या प्रभावती गुप्त इसकी रानी थी), म० प्रवर सेन (भगवान शभु का भक्त था)। वाकाटक नरेश गुप्त सम्राटो के समकालीन थे।

चमरलेण (ज़िला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

धरसेव या उसमानाबाद के निकट चमरलेण म 500–600 ई० के वैष्णव और जैन गुहा मदिर स्थित हैं। निकट ही डाबरलेण और लचन्दरलेण नामक शैलकृत्त गुफाए हैं जो इसी काल की हैं।

चमरोत्पात

जैन साहित्य के सवप्राचीन आगम ग्रथ एकादश अगादि म उल्लिखित तीर्थ,

जिसका पता अब नही है। अन्य अज्ञात तीर्थ, जिनका उल्लेख इस ग्रंथ में है—गजाग्रपद, रथावत आदि है।

चमसोदभेद

महाभारत वन० 82 112 मे चमसोदभेद का उल्लेख सरस्वती नदी के विनशन तीर्थ के पश्चात् है—'चमसेऽथ शिवोदभेदे नागोद्भेदे च दृश्यते, स्नात्वा तु चमसाद्‌भेदे अग्निष्टोमफल लभेत'। इस प्रसग के वर्णन से सूचित होता है कि सरस्वती नदी विनशन मे नष्ट या लुप्त होने के पश्चात चमसोद्‌भेद मे फिर प्रकट होती थी। यही अगस्त्य और लोपामुद्रा का विवाह हुआ था। शल्य० 35, 87 मे भी चमसोद्‌भेद का सरस्वती के तटवर्ती तीर्थों मे वर्णन है—'ततस्तु चमसोदभेदमच्युतस्त्वगमद बली, चमसोद्‌भेद इत्येव य जना कथयन्त्युत'।

चरखारी (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

अंग्रेजी राज्य के समय मे बुदेलखड की एक रियासत थी। महाराजा छत्रसाल के पुत्र राजा जगतराज ने अपने तीसरे पुत्र कुमार कीरतसिंह को अपनी जैतपुर की रियासत का उत्तराधिकारी बनाया था पर इसकी मृत्यु अपने पिता के जीवनकाल मे ही हो गई। जगतराज के मरने पर 1759 ई० मे कीरतसिंह के पुत्र गुमानसिंह ने गद्दी लेनी चाही किंतु उसके चाचा पहाड़सिंह ने विरोध किया। फलस्वरूप गुमानसिंह और उसका भाई खुमानसिंह भागकर चरखारी पहुचे और वहा के किले मे रहने लगे। इसके पीछे 1764 ई० मे पहाड़सिंह ने खुमानसिंह को चरखारी का प्रदेश दे दिया और इस प्रकार इस रियासत की नीव पडी।

चरणाद्रि (दे० चुनार)

चरना (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

यहा बुदेलखड के चदेल नरेशो के जमाने की इमारतो के अवशेष स्थित है। चदेलो का शासन इस इलाके मे 8वी-9वी शती ई० मे था।

चरित्र (उडीसा)

महानदी के मुहाने पर अवस्थित प्राचीन नगर।

चरित्रवन

चरित्रवन मे महर्षि विश्वामित्र का तपोवन था। इसकी स्थिति बकसर (बिहार) के निकट थी। कहा जाता है कि यह आश्रम कारूष देश मे स्थित था।

चरूप=चारूप

चर्मण्वती=चबल

महाभारत के अनुसार राजा रतिदेव के यज्ञो मे जो आर्द्र चमराशि

इकट्ठी हो गई थी उससे यह नदी उदभूत हुई थी—'महानदी चमराशेरुत्क्लेदात् समृजेयत ततश्चमण्वतीत्येव विख्याता स महानदी' शांति० 29,123। कालिदास ने भी मेघदूत पूर्वमेघ 47 म चमण्वती को रतिदेव की कीर्ति का मूतस्वरूप कहा है—'आराध्यैन शरवनभव देवमुल्लघिताध्वा, सिद्धद्वन्द्वैजलकण-भयाद्वीणिभिदत्त माग व्यालम्बेथास्सुरभितनयालभजा मानयिष्यन, स्रोतो मूर्त्याभुवि परिणता रतिदेवस्य कीर्ति । इन उल्लेखो से यह जान पडता है कि रतिदेव ने चमण्वती के तट पर अनेक यज्ञ किए थे। महाभारत 2, 31,7 म भी चमण्वती का उल्लेख है—'ततश्चमणवती कूले जभकस्यात्मज नप ददश वासुदेवेन शेषित पूर्ववैरिणा'—अर्थात इसके पश्चात सहदेव न (दक्षिण दिशा की विजय यात्रा के प्रसग मे) चमण्वती के तट पर जभक के पुत्र को देखा जिसे उसके पूव शत्रु वासुदेव ने जीवित छोड दिया था। सहदेव इसे युद्ध म हराकर दक्षिण की ओर अग्रसर हुए थे। चमण्वती नदी को वनपव के तीर्थ यात्रा अनुपव म पुण्य नदी माना गया है—'चमण्वती समासाद्य नियतो नियता-शन रतिदेवाभ्यनुज्ञातमग्निष्टोमफल लभत'। श्रीमदभागवत 5,19,18 म चमण्वती का नमदा के साथ उल्लेख है—'सुरसानमदा चमण्वती सिधुरध '—इस नदी का उद्भव जनपद की पहाडियो से हुआ है—यही से गभीरा नदी भी निकलती है। यह यमुना की सहायक नदी है। महाभारत वन० 308,25 26 मे अश्वनदी का चमण्वती मे, चमण्वती का यमुना मे और यमुना का गगा म मिलने का उल्लेख है—'मजूषात्वश्वनद्या सा ययौ चमण्वती नदीम, चमण्व-त्याश्च यमुना ततो गगा जगामह। गगाया सूतविषये चपामनुययौपुरीम्'।

चर्मकि=चमनाक

चादनगांव (जिला हिंडौन राजस्थान)

पश्चिम रेल की मथुरा नागदा शाखा पर चादनगाव या वर्तमान महावीरजी जनो का प्रसिद्ध तीथ है। यह गभीरा नदी के तट पर अवस्थित है। इस तीथ का महत्त्व मुख्य रूप से एक लाल पत्थर की प्रतिमा के कारण है जो 1600 ई० के लगभग एक प्राचीन टीले के अदर से प्राप्त हुई थी। राजस्थान के ख्यातो से ज्ञात होता है कि यह स्थान प्राचीन समय मे चादनगाव कहलाता था। यहा उस समय बडे बडे व्यापारियो की बस्ती थी। एक स्थानीय किवदती के अनुसार यहा के एक बडे व्यापारी के पास घृत का इतना विशाल सग्रह था कि इस स्थान से नाली म डालकर घृत दिल्ली तक पहुचाया जा सकता था। चादनगाव के नीचे की ओर गभीरा पर एक बाध बना हुआ था। इस स्थान का बटवारा तीन भाइयो म हुआ था और नए दो गावो के

जैन गुहा मदिर रहा होगा क्योकि दीवार मे तीन और तीर्थंकरो की मूर्तिया उत्कीर्ण हैं। जैनसाहित्य मे चादवड का प्राचीन नाम चद्रादित्यपुरी मिलता है।

चांपानेर=चपानेर (गुजरात)

बडोदा से 21 मील और गोधरा से 25 मील दूर, गुजरात की मध्ययुगीन राजधानी चापानेर (मूल नाम चपानगर या चपानेर) के स्थान पर वतमान समय म पावागढ नामक नगर बसा हुआ है। यहा से चापानेर रोड स्टेशन 12 मील है। इस नगर को जैन धमग्रथो मे तीथ माना गया है। श्री तीथ माला चैत्य वदन मे चापानेर का नामोल्लेख है—'चपानेरक धमचक्र मथुराऽयोध्या प्रतिष्ठानके—'। प्राचीन चापानेर नगरी 12 वग मील के घेरे मे बसी हुई थी। पावागढ की पहाडी पर उस समय एक दुग था जिसे पवनगढ या पावागढ कहते थे। यह दुग अब नष्टभ्रष्ट हो गया है पर प्राचीन महाकाली का मदिर आज भी विद्यमान है। चापानेर की पहाडी समुद्रतल से 2800 फुट ऊची है। इसका सबध ऋषि विक्रमादित्य से बताया जाता है। चापानेर का सस्थापक, गुजरात-नरेश वनराज का चपा नामक मत्री था। चादबरौत नामक गुजराती लेखक के अनुसार 11वी शती मे गुजरात के शासक भीमदेव के समय मे चापानर का राजा मामगौर तुअर था। 1300 ई० मे चौहानो न चापानेर पर अधिकार कर लिया। 1484 ई० म महमूद बेगडा ने इस नगरी पर आक्रमण किया और वीर राजपूतो न विवश होकर अपने प्राण शत्रु से लडते लडते गवा दिए। रावल पतई जयसिंह और उसका मत्री डूगरसी पकडे गए और इस्लाम स्वीकार न करने पर मुसलमाना ने उनका वध कर दिया (17 नवबर, 1484 ई०)। इस प्रकार चापानेर के 184 वष प्राचीन राजपूत राज्य की समाप्ति हुई। 1535 ई० म हुमायू ने चापानेर दुग पर अधिकार कर लिया पर यह आधिपत्य धीरे धीरे शिथिल होने लगा और 1573 ई० मे अकबर को नगर का घेरा डालना पडा और उसने फिर से इसे हस्तगत कर लिया। इस प्रकार सघपमय अस्तित्व के साथ चापानेर मुगलो के कब्जे मे प्राय 150 वर्षों तक रहा। 1729 ई० म सिंधिया का यहा अधिकार हो गया और 1853 ई० म अग्रेजो ने सिंधिया से इसे लेकर बबई-प्रात मे मिला दिया। वतमान चापानेर मुसलमानो द्वारा बसाई गई बस्ती है। राजपूतो के समय का चापानेर यहा से कुछ दूर है। गुजरात के सुलतानो ने चापानेर मे अनेक सुदर प्रासाद बनवाए थे। ये अब खडहर हो गए ह। हलाल नामक नगर जो बहुत दिनो तक सपन्न और समृद्ध दशा म रहा, चापानेर का ही उपनगर था। इसका महत्त्व गुजरात के सुलतान *बहादुरशाह की मृत्यु के पश्चात (16वी शती) समाप्त हो गया। पहाडी पर*

नाम क्रमश तत्कालीन शासको के नाम पर अकबरपुर और नौरगाबाद हुए। वर्तमान महावीरजी नौरगाबाद का ही परिवर्तित नाम है। मुगलकाल म निकटवर्ती कैमला ग्राम के निवासियो की यहा के निवासियो से शत्रुता होने क कारण यह बस्ती उजड गई। कैमलावासियो ने चादनगाव का बाध तोडकर नगर को नष्ट भ्रष्ट कर दिया था जिसके स्मारक रूप अनेक खडहर आज भी देखे जा सकते हैं। महावीरजी के मदिर की मूर्ति 1500 ई० से पूव की जान पडती है। यह सभव है कि शत्रुओ के आक्रमण के समय किसी ने इस मूर्ति को भूमि म गाड दिया हो और कालातर मे मदिर के बनने के समय यह बाहर निकाली गई हो। यह निश्चित है कि मदिर का निर्माण बसवा (जयपुर) के सेठ अमरचद विलाला ने 1688 ई० के कुछ पूव करवाया था। जयपुर के प्राचीन राजस्व क कागजो मे इस सन् म मदिर के विद्यमान होने का उल्लेख है। जयपुर सरकार की ओर से 1688 ई० मे मदिर मे पूजा के लिए कुछ निश्चित धन दिया गया था। कहा जाता है कि 1830 ई० मे जयपुर के दीवान जोधराज को तत्कालीन महाराजा ने किसी वात से रुष्ट होकर गोली से उडा देने का आदेश दिया था किंतु चादनगाव के महावीर स्वामी की मनौती के कारण वे तीन गोलिया दागी जान के बाद भी बच गए। इसी चमत्कार से प्रभावित होकर महाराजा तथा दीवान दोनो ने ही यहा के मदिर को विस्तृत करवाया था। इस मदिर म मुगल वास्तुकला की पूरी पूरी छाप दिखाई देती है जिसके उदाहरण इसके गुबद, गोलछत्रिया और आले हैं। मदिर के तैयार होने पर सरकार द्वारा एक मला यहा लगवाया गया था जो आज भी प्रतिवष वैसाख मे लगता है।

चादपुर

(1) (जिला झासी, उ० प्र०) मध्ययुगीन बुदेलखड की वास्तुकला की सुदर कृतियो के खडहर यहा के उल्लेखनीय स्मारक हैं। (द० चदावर)

(२) (जिला गढवाल उ० प्र०) गढवाल की अनेक गढियो मे स (जिनके कारण यह प्रदेश गढवाल कहलाता है) सवप्रसिद्ध गढ़ी, जहा पुराने महलो क खडहर देखे जा सकते हैं। कहा जाता है कि चादपुर के राजाओ ने ही आदि बदरी (बदरीनाथ) के मदिर बनवाए थे।

चादवड—चद्रादित्यपुरी (महाराष्ट्र)

अहल्याबाई होलकर का जन्म स्थान। किंवदती है कि चादवड या चद्रवट नगर की नींव यादववशीय राजा दीघ प्रहार ने डाली थी। 801 ई० स 1073 ई० तक यहा यादवो का राज्य रहा। नगर 4000 फुट ऊची पहाडी के नीचे बसा है। पहाडी पर जाने के माग म रेणुका देवी का मदिर है जो सभवत प्राचीनकाल म

जैन गुहा मदिर रहा होगा क्योंकि दीवार मे तीन और तीथकरो की मूर्तिया उत्कीर्ण है। जैनसाहित्य मे चादवड का प्राचीन नाम चद्रादित्यपुरी मिलता है।

चांपानेर=चपानेर (गुजरात)

वडौदा से 21 मील और गोधरा से 25 मील दूर, गुजरात की मध्ययुगीन राजधानी चापानेर (मूल नाम चपानगर या चपानेर) के स्थान पर वतमान समय मे पावागढ नामक नगर बसा हुआ है। यहा से चापानेर रोड स्टेशन 12 मील है। इस नगर को जैन धमग्रथा मे तीथ माना गया है। श्री तीथ माला चैत्य वदन मे चापानेर का नामोल्लेख है—'चपानेरक धमचक्र मथुराप्योध्या प्रतिष्ठानके—'। प्राचीन चापानेर नगरी 12 वग मील के घेरे मे बसी हुई थी। पावागढ की पहाडी पर उस समय एक दुग था जिसे पवनगढ या पावागढ कहत थे। यह दुग अब नष्टभ्रष्ट हो गया है पर प्राचीन महाकाली का मदिर आज भी विद्यमान है। चापानेर की पहाडी समुद्रतल से 2800 फुट ऊची है। इसका सबध ऋषि विक्रमादित्य से बताया जाता है। चापानेर का सस्थापक, गुजरात-नरश वनराज का चपा नामक मत्री था। चादवरौत नामक गुजराती लेखक के अनुसार 11वी शती मे गुजरात के शासक भीमदेव के समय मे चापानेर का राजा मामगोर तुअर था। 1300 ई० मे चौहानो ने चापानेर पर अधिकार कर लिया। 1484 ई० मे महमूद वेगडा ने इस नगरी पर आक्रमण किया और वीर राजपूता न विवश होकर अपने प्राण शत्रु से लडते लडते गवा दिए। रावल पतई जयसिंह और उसका मत्री डूगरसी पकडे गए और इस्लाम स्वीकार न करने पर मुसलमाना ने उनका वध कर दिया (17 नवबर, 1484 ई०)। इस प्रकार चापानेर के 184 वष प्राचीन राजपूत राज्य की समाप्ति हुई। 1535 ई० म हुमायू ने चापानेर दुर्ग पर अधिकार कर लिया पर यह आधिपत्य धीर धीर शिथिल होने लगा और 1573 ई० मे अकबर को नगर का घेरा डालना पडा और उसने फिर से इसे हस्तगत कर लिया। इस प्रकार सघपमय अस्तित्व के साथ चापानेर मुगला के कब्जे मे प्राय 150 वर्षों तक रहा। 1729 ई० मे सिंधिया का यहा अधिकार हो गया और 1853 ई० म अग्रेजो ने सिंधिया से इसे लकर बबई प्रात मे मिला दिया। वतमान चापानेर मुसलमानो द्वारा बसाई गई बस्ती है। राजपूतो के समय का चापानेर यहा से कुछ दूर है। गुजरात के सुलतानो ने चापानेर मे अनेक सुदर प्रासाद बनवाए थे। ये अब खडहर हो गए ह। हलोल नामक नगर जा बहुत दिना तक सपन्न और समृद्ध दशा म रहा, चापानेर का ही उपनगर था। इसका महत्त्व गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह की मृत्यु के पश्चात (16वी शती) समाप्त हो गया। पहाडी पर

जो काली-मदिर है वह बहुत प्राचीन है। कहा जाता है कि विश्वामित्र ने उसकी स्थापना की थी। इन्ही ऋषि के नाम से इस पहाडी से निकलने वाली नदी विश्वामित्री कहलाती है। महादाजी सिंधिया ने पहाडी की चोटी पर पहुचने के लिए शैलकृत्त सीढिया बनवाई थी। चापानेर तक पहुचने के लिए सात दरवाजो मे से होकर जाना पडता है।

चाकन (महाराष्ट्र)

चाकन का दुग, महाराष्ट्र केसरी शिवाजी की पितृपरपरागत जागीर म था। उनके पितामह मालोजी को शिवनेरि तथा चाकन के किले अहमदनगर के सुलतान ने जागीर म प्रदान किए थे।

चाकसू (राजस्थान)

एक मध्ययुगीन जैन मदिर इस स्थान का मुख्य आकपण है। शिल्पसौष्ठव की दृष्टि से यह मदिर राजस्थान की एक सुदर कलाकृति है।

चाटगाव=चटगाव

चाफल

महाराष्ट्र का प्राचीन तीथ। इस स्थान पर छत्रपति शिवाजी ने समथ रामदास से प्रथम भेट की थी और यही वे उनके शिष्य बने थे। चाफल म समथ ने अपना एक मठ भी स्थापित किया था।

चामरलेण (दे० चमरलेण)

चारसद्दा (जिला पेशावर, प० पाकि०)

यह कस्बा प्राचीन पुष्कलावती (पाली पुक्कलाओति) के स्थान पर बसा हुआ है। इसकी स्थिति पेशावर से 17 मील उत्तर पूव मे है। (दे० पुष्कलावती)

चारित्र

चीनी यात्री युवानच्वाग (7वी शती ई०) द्वारा उल्लिखित उडीसा का एक बदरगाह जिसका अभिज्ञान सामा यत पुरी से किया जाता है। (दे० महताब, हिस्ट्री ऑव उडीसा, पृ० 35)

चारी (कच्छ, गुजरात)

इस स्थान पर प्राचीन काल के बदरगाह के चिह्न पाए गए है, जो भारत पर अरबो के आक्रमण के समय (712 ई०) और उससे पूव समृद्ध अवस्था म था। (दे० ट्रैवल्स इटू बुखारा 1835 जिल्द 1, अध्याय 17)

चारूप (गुजरात)

पाटन के निकट प्राचीन जैन तीथ, जिसका उल्लेख जैन स्तोत्र ग्रथ तीथ

माला चैत्यवदन मे है—'हस्ताडी पुरपाडला दशपुर चाम्प पचासर'। इसे अब चरूप कहते है।

चिंगलपट (मद्रास)

समुद्रतट पर स्थित दुर्गनगर है। यहा के किले के एक पार्श्व म दोहरी किलाबदी है और तीन ओर झील तथा दलदलें है। यहा से पाच मील पर पहाडी के ऊपर दक्षिण का प्रसिद्ध पक्षी तीर्थ है। पहाडी पर शिव मदिर है और जटायुकुड है। जटायुकुड का सबध रामायण के गृध्रराज जटायु से बताया जाता है। पहाडी के नीचे शख तीर्थ है।

चिचेलम

मूसी नदी के तट पर छोटा-सा ग्राम है जिसके चारो ओर भागनगर या हैदराबाद का निर्माण हुआ था। मूल रूप म हैदराबाद को बसाने वाले गोल-कुडा नरेश कुतुबशाह की प्रेयसी सुदरी भागवती का यह निवास स्थान था। इसी के नाम पर भागनगर बसाया गया था जो बाद मे हैदराबाद नाम से प्रसिद्ध हुआ। कहा जाता है कि हैदराबाद का केद्रीय स्थान चारमीनार चिचेलम ग्राम मे ही बनाया गया था।

चितवर

राजस्थान का एक अनभिज्ञात नगर। इसका उल्लेख तिब्बत के इतिहास लेखक तारानाथ ने मारवाड के किसी राजा हुप के सबध मे किया है। हुप ने चितवर मे एक बौद्धविहार बनवाया था जिसमे एक सहस्र बौद्ध भिक्षुओं का निवास था। सभवत इडियन एटिक्वेरी 1910 पृ०-187 म उल्लिखित हुपपुर भी इसी हुप के नाम पर बसा हुआ नगर था। इस हुप का समय 7वीं शती ई० माना जाता है।

चिताभूमि=वद्यनाथधाम

यह स्थान सती के बावन पीठो म है। लोक प्रवाद है कि रावण ने यहा शिवोपासना की थी।

चित्तौड (ज़िला उदयपुर, राज०)

मेवाड का प्रसिद्ध नगर जो भारत के इतिहास म सिसौदिया राजपूतो की वीरगाथाओ के लिए अमर है। प्राचीन नगर चित्तौडगढ़ स्टेशन स 2½ मील दूर है। मार्ग म गभीर नदी पडती है। भूमितल स 508 फुट ऊँची पहाडी पर इतिहास-प्रसिद्ध चित्तौडगढ स्थित है। दुर्ग के भीतर ही चित्तौडनगर बसा है जिसकी लम्बाई 3½ मील और चौडाई 1 मील है। परकोट के क़िले की परिधि 12 मील है। कहा जाता है कि चित्तौड स 8 मील उत्तर की ओर नगरी

नामक प्राचीन बस्ती ही महाभारतकालीन माध्यमिका है। चित्तौड का निर्माण इसी के खडहरो से प्राप्त सामग्री से किया गया था। किंवदती है कि प्राचीन गढ को महाभारत के भीम ने बनवाया था। भीम के नाम पर भीमगोडी, भीम सत आदि कई स्थान आज भी किले के भीतर ह। पीछे मौय वश के राजा मानसिंह ने उदयपुर के महाराजाओ के पूवज बधा रावल को जो उनका भानजा था, यह किला सौप दिया। यही वप्पारावल ने मवाड क नरेशो की राजधानी बनाई, जो 16वी शती मे उदयपुर के बसने तक इसी रूप मे रही। 1303 ई० मे सुलतान अलाउद्दीन खिलजी ने चित्तौड पर आक्रमण किया। इस अवसर पर महारानी पद्मिनी तथा अन्य वीरागनाए अपने कुल के सम्मान तथा भारतीय नारीत्व की लाज रखने के लिए अग्नि म कूदकर भस्म हो गईं और राजपूत वीरो ने युद्ध मे प्राण उत्सग कर दिए। जिस स्थान पर पद्मिनी सती हुई थी वह समाधीश्वर नाम से विख्यात है। स्थानीय जनश्रुति के आधार पर कहा जाता है कि अलाउद्दीन ने चित्तौड पर दो आक्रमण किए थे किंतु आधुनिक खोजो से एक ही आक्रमण सिद्ध होता है। पद्मिनी के रानीमहल नामक प्रासाद के खडहर भी किले के अदर अवस्थित हैं। इस भवन को 1535 ई० म गुजरात के सुलतान बहादुरशाह ने नष्ट कर दिया था। चित्तौड का दूसरा 'साका' या जौहर गुजरात के सुलतान बहादुरशाह के मेवाड पर आक्रमण के समय हुआ था। इस अवसर पर महारानी कर्णावती ने हुमायूँ को राखी भेजकर उसे अपना राखीबद भाई बनाया था। तीसरा 'साका' अकबर के समय मे हुआ जिसमे वीर जयमल और पत्ता ने मेवाड की रक्षा के लिए हँसते हसते प्राणदान किया था। अकबर के समय म ही महाराणा उदयसिंह ने उदयपुर नामक नगर को बसाकर मेवाड की नई राजधानी वहा बनाई। चित्तौड के किले के अदर आठ विशाल सरोवर हैं। प्रसिद्ध भक्त कवियित्री मीराबाई (जन्म 1498 ई०) का भी यहा मदिर है जिसे बहादुरशाह ने तोड डाला था। महाराणा कुभा का कीर्तिस्तभ, जो उन्होने गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह को परास्त करने की स्मृति म बनवाया था, चित्तौड का सवप्रसिद्ध स्मारक है। 122 फुट ऊचे इस स्तभ के निर्माण मे 10 लाख रुपया लगा था। यह नौ मजिला है और इसके शिखर तक पहुँचने के लिए 157 सीढिया बनी हैं। 12वीं 13वी शती मे जीजा नामक एक धनाढ्य जन न आदिनाथ की स्मृति मे सात मजिला कीर्तिस्तभ बनवाया था जो 80 फुट ऊँचा है। इसमें 49 सीढ़िया हैं। नीचे से ऊपर तक इस स्तभ म सुदर शिल्पकारी दिखाई देती है। चित्तौड-द्वार के पास राणा सागा (बाबर का समकालीन) का निर्मित करवाया हुआ सूरज

मंदिर स्थित है। यहां के सात दरवाजों के नाम हैं—पद्मपोल, भैरवपोल, हनुमानपोल, गणेशपोल, जोठलापोल, लक्ष्मणपोल और रामपोल। भैरवपोल के पास जयमल और कल्लू राठौर के स्मारक हैं। पत्ता का स्मारक भी पास ही है। रामपोल के ही निकट पत्लालेश्वर है जहां राणा सांगा की कई तोपें रक्खी हैं। निकटस्थ शांतिनाथ के जैन मंदिर को बहादुरशाह ने विध्वंस कर दिया था। वीरांगना पन्ना धायी का महल रानीमहल के निकट ही है। पन्नामहल ही में पन्ना के अपूर्व बलिदान की प्रसिद्ध कथा घटित हुई थी। राणा कुंभा का बनवाया हुआ जटाशंकर नामक मंदिर भी पास ही स्थित है। भैरवपोल, रामपाल और हनुमानपोल द्वारों की रचना महाराणा कुंभा ने ही की थी। चित्तौड के अन्य उल्लेखनीय स्थान हैं–शृंगार चंवरी, कालिका मंदिर, तुलजा भवानी, अन्नपूर्णा, नीलकंठ, शतविंश देवरा, मुकुटेश्वर, सूर्यकुंड, चित्रांगद-तडाग तथा पद्मिनी, जयमल, पत्ता और हिंगलु के महल। प्राचीन संस्कृत साहित्य में चित्तौड का चित्रकोट नाम मिलता है। चित्तौड इसी का अपभ्रंश हो सकता है।

चित्रकूट (जिला बांदा, उ० प्र०)

वाल्मीकि रामायण तथा अन्य रामायणों में वर्णित प्रसिद्ध स्थान जहां श्रीराम, लक्ष्मण और सीता वनवास के समय कुछ दिनों तक रहे थे। अयो० 84 4-6 से प्रतीत होता है कि अनेक रंग की धातुओं से भूषित होने के कारण ही इस पहाड को चित्रकूट कहते थे—'पश्येयमचलं भद्रे नाना द्विजगणायुतम् शिखरैं खमिवोद्विद्धैर्धातुमद्भिर्विभूषितम्। केचिद् रजतसंकाशा केचित क्षतज संनिभा, पीतमांजिष्ठ वर्णाश्च केचिन् मणिवरप्रभा। पुष्पार्क केतकाभाश्च केचिज्ज्योतिरस प्रभा, विराजन्तेऽचलेन्द्रस्य देशा धातुविभूषिता'। निम्न वर्णन से यह स्पष्ट है कि चित्रकूट रामायण काल में प्रयागस्थ भारद्वाजाश्रम से केवल दसकोस पर स्थित था—'दशक्रोशइतस्तात गिरियस्मिन्निवत्स्यसि, महर्षि सेवित पुण्य पर्वत शुभदर्शन' अयो० 54, 28। आजकल प्रयाग से चित्रकूट इससे लगभग चौगुनी दूरी पर स्थित है। इस समस्या का समाधान यह मानने से हो सकता है कि वाल्मीकि के समय का प्रयाग अथवा गंगा यमुना का संगम स्थान आज के संगम से बहुत दक्षिण में था। उस समय प्रयाग में केवल मुनियों के आश्रम थे और इस स्थान ने तब तक जनाकीर्ण नगर का रूप धारण न किया था। चित्रकूट की पहाडी के अतिरिक्त इस क्षेत्र के अंतर्गत कई ग्राम हैं जिनमें सीतापुरी प्रमुख है। पहाडी पर बांके सिद्ध, देवांगना, हनुमानधारा, सीता रसोई और अनसूया आदि पुण्य स्थान हैं। दक्षिण पश्चिम में गुप्त गोदावरी नामक सरिता एक गहरी गुहा से निस्सृत होती है। सीतापुरी पयोष्णी

नदी के तट पर सुंदर स्थान है और वहीं स्थित है जहां श्रीराम सीता की पर्णकुटी थी। इसे पुरी भी कहते हैं। पहले इसका नाम जयसिंहपुर था और यहां कोलों का निवास था। पन्ना के राजा अमानसिंह ने जयसिंहपुर को महंत चरणदास का दान में दिया था। इन्होंने ही इसका सीतापुरी नाम रखा था। राघवप्रयाग, सीतापुरी का बडा तीर्थ है। इसके सामने मंदाकिनी नदी का घाट है। चित्रकूट के पास ही कामदगिरि है। इसकी परिक्रमा 3 मील की है। परिक्रमा पथ को 1725 ई० में छत्रसाल की रानी चादकुंवरि ने पक्का करवाया था। कामता से 6 मील पश्चिमोत्तर में भरत कूप नामक विशाल कूप है। तुलसी रामायण के अनुसार इस कूप में भरत ने सब तीर्थों का वह जल डाल दिया था जो वह श्रीराम के अभिषेक के लिए चित्रकूट लाए थे। महाभारत अनुशासन० 25, 29 में चित्रकूट और मंदाकिनी का तीर्थ रूप में वर्णन किया गया है—'चित्रकूट जनस्थाने तथा मंदाकिनी जले, विगाह्य वै निराहारो राजलक्ष्म्या निषेव्यते'। कालिदास ने रघुवंश 12, 15 और 13, 47 में चित्रकूट का वर्णन किया है—'चित्रकूटवनस्थं च कथित स्वर्गतिर्गुरो लक्ष्म्या निमन्त्रयाचक्रे तमनुच्छिष्टसंपदा'। 'धारास्वनोद्गारिदरी मुखाऽसौ शृंगाग्रलग्नाम्बुदवप्रपंक, बध्नाति मे बंधुरगात्रि चक्षुर्दृप्तः ककुद्मानिव चित्रकूटः'। श्रीमद्भागवत 5, 19, 16 में भी इसका उल्लेख है—'पारियात्रो द्रोणश्चित्रकूटो गोवर्धनो रैवतकः'। अध्यात्मरामायण, अयो० 9, 77 में चित्रकूट में राम के निवास करने का उल्लेख इस प्रकार है—'नागराश्च सदा यान्ति रामदर्शनलालसा, चित्रकूटस्थितं ज्ञात्वा सीतया लक्ष्मणेन च'। महाकवि तुलसीदास ने रामचरितमानस (अयोध्याकांड) में चित्रकूट का बडा मनोहारी वर्णन किया है। तुलसीदास चित्रकूट में बहुत समय तक रहे थे और उन्होंने जिस प्रेम और तादात्म्य की भावना से चित्रकूट के शब्द चित्र खींचे हैं वे रामायण के सुंदरतम स्थलों में हैं— रघुवर कहउ लखन भल घाटू, करहु कतहुँ अब ठाहर ठाटू। लखन दीख पय उतरकरारा, चहुँ दिशि फिरेउ धनुष जिमिनारा। नदीपनच सर सम दम दाना, सकल कलुष कलि साउज नाना। चित्रकूट जिम अचल अहेरी, चुकइ न घात मार मुठभेरी—आदि। जैन साहित्य में भी चित्रकूट का वर्णन है। भगवती टीका (7, 6) में चित्रकूट को चित्रकुड कहा गया है। बौद्धग्रंथ ललितविस्तर (पृ०391) में भी चित्रकूट की पहाडी का उल्लेख है।

2 मेघदूत पूर्वमेघ 19 में वर्णित एक पर्वत— 'त्वामासारप्रशमितवनोपप्लवं साधु मूर्ध्ना' ... 'अध्वक्लान्तं प्रतिमुखगतं सानुमानाश्चित्रकूटस्तुंगेनत्वाजलद शिरसा वक्ष्यति श्लाघमानः'—इस उल्लेख के प्रसंग के अनुसार इस चित्रकूट नामक पर्वत की स्थिति रेवा या नर्मदा के दक्षिण पूर्व

म जान पडती है क्योंकि मेघ के यात्राक्रम म नर्मदा का चित्रकूट के पश्चात् (पद्य 20) उल्लेख है। जान पडता है आम्रकूट की भांति ही यह भी वर्तमान पचमढी या महादेव की पहाडियों का कोई भाग है। मेघदूत का चित्रकूट जिला बादा के चित्रकूट (1) स अवश्य ही भिन्न है। चित्रकूट (1) नर्मदा के बहुत उत्तर म है।

चित्रकोट = चित्तौड

चित्रपुष्प

द्वारका के निकटस्थ सुकक्ष पर्वत के चतुर्दिक वनो मे चित्रपुष्प नामक वन भी था जिसका उल्लेख महाभारत सभा० 38, दाक्षिणात्य पाठ मे है—'सुकक्ष परिवार्यैन चित्रपुष्प महावनम् शतपत्र वन चैव करवीर कुसुम्भिच'।

चित्रसेना

महाभारत भीष्मपर्व 9, 77 म उल्लिखित नदी जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है—'करीषिणी चित्रवाहा च चित्रसेनाच निम्नगाम्'।

चित्रवाहा

महाभारत भीष्म० 9, 17 म उल्लिखित एक नदी—'करीषिणी चित्रवाहा च चित्रसेना च निम्नगाम'। अभिज्ञान अनिश्चित है।

चित्रोत्पला (उडीसा)

कोणाक के निकट बहने वाली महानदी का ही नाम चित्रोत्पला भी है। कहा जाता है कि कोणाक के मदिर के निर्माण के समय चद्रभागा और चित्रोत्पला नदियो का प्रवाह रोकना पडा था। (दे० कोणाक)। चित्रोत्पला का उल्लेख महाभारत भीष्म० 9, 34 मे है—'चित्रोत्पला चित्ररथा मजुला वाहिनी तथा, मदाकिनी वैतरणी कोषा चापि महानदीम्'।

चिदम्बरम् (मद्रास)

दक्षिण का प्रसिद्ध शैवतीर्थ है। नगर के उत्तर मे 11 बीघा भूमि पर नटेश शिव का विशाल मदिर है। बीस फुट ऊँची दो दीवारो के घेरे म मुख्य मदिर के अतिरिक्त पार्वती तथा अन्य देवी देवताओ के देवालय भी हैं। बाहर की दीवार की लम्बाई उत्तर दक्षिण लगभग 1800 फुट और चौडाई पूर्व पश्चिम 1500 फुट है। दीवार म चारो ओर एक एक छोटे गोपुर हैं। दीवार के अदर भीतर की भूमि प्राय 1200 फुट लबी और 725 फुट चौडी है। चारो पार्श्वों पर 110 फुट लबे, 75 फुट चौडे और 122 फुट ऊचे नौ मजिले गोपुर है। चारो गोपुरो पर मूर्तियो तथा अनेक प्रकार की चित्रकारी का अकन है। इनके नीचे 40 फुट ऊचे, 5 फुट मोटे ताँबे की पत्ती से जडे हुए पत्थर के

चौघटे हैं। दीवार के भीतर चारो ओर दो मजिले मकान और दालान हैं और मध्य मे नटेश शिव के मुख्य मदिर का घेरा और अन्य मदिर व सरोवर हैं। मदिर के शिखर के कलश सोने के है। दो स्तभ वृदावन क रगजी क मदिर के स्तभो के समान स्वर्णिम है। ज्योतिलिंग मणिनिर्मित है।

चिनाब=चनाब

पजाब की प्रसिद्ध नदी। [दे० चद्रभागा (1)]

चिन्नक्कुडनूर (मद्रास)

यह स्थान वरदराज स्वामी के मदिर तथा प्राचीन दुग के लिए प्रख्यात है।

चिलका (उडीसा) द० काम्यकसर

चीतग (हरियाणा)

स्थानश्वर (=थानेसर) या कुरुक्षेत्र के दक्षिण-पूव की ओर बहने वाली एक नदी। सभव है यह प्राचीन दृपदवती हो क्योकि कुरुक्षेत्र की सीमा का वणन इस प्रकार है—'सरस्वती दक्षिणेन दृपद्वत्युत्तरेण च, य वसति कुरुक्षेत्रे ते वसति त्रिविष्टपे' अर्थात् सरस्वती के दक्षिण और दपद्वती के उत्तर म जो लाग कुरुक्षेत्र मे रहते हैं, वे स्वग मे ही वसते हैं।

चीतलदुग (मैसूर)

यह नगर छोटी छोटी पहाडियो की तलहटी मे बसा हुआ है। इन पहाडियो पर अनक दुग तथा अन्य प्राचीन इमारतें है जो अधिकाश म हैदर अली और टीपू द्वारा 18वी शती मे बनवाई गई थी।

चीन

चीन तथा भारत के व्यापारिक तथा सास्कृतिक सबध अति प्राचीन हैं। प्राचीनकाल म चीन का रेशमी कपडा भारत मे प्रसिद्ध था। महाभारत सभा० 51,26 मे कीटज तथा पट्टज कपडे का चीन के सबध म उल्लेख है। इस प्रकार का वस्त्र पश्चिमोत्तर प्रदेशो क अनेक निवासी (शक, तुषार, कक, रोमश आदि) युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ म भेंट स्वरूप लाए थ—'प्रमाणरागस्पर्शाढ्य वाल्हीचीनसमुद्भवम और्णं च राकवचैव कीटज पट्टज तथा'। तत्कालीन भारतीयो को इस बात का ज्ञान था कि रेशम कीट स उत्पन्न हाता है। सभा० 51,23 म चीनियो का शको के साथ उल्लेख है। य युधिष्ठिर की राज्यसभा मे भेंट लेकर उपस्थित हुए थे—'चीनाञ्छकास्तथा चौड्रान बर्बरान् वनवासिन, वार्ष्णेयान् हारहूणाश्च कृष्णान हैमवतास्तथा'। भीष्मपव म विजातीयो की नाममूची म चीन के निवासियो का भी उल्लेख है—'उत्तराश्चापरम्लेच्छा क्रूरा

भरतमत्तम यवनश्चीनकाम्बोजा दारुणाम्लेच्छजातय । सकृद्ग्रहा कुलत्थाश्च-हूणा पारसिक सह, तथैव रमणाश्चीनास्तथैवदशमालिका ' भीष्म० 9,65-66 । कौटिल्य अर्थशास्त्र म भी चीन देश का उल्लेख है जिससे मौर्यकालीन भारत और चीन क व्यापारिक सबधो का पता लगता है। कालिदास ने अभिज्ञान शाकुतल 1,32 म चीनाशुक (चीन का रेशमी वस्त्र) का वणन बडे काव्यात्मक प्रसग म किया है—'गच्छति पुर शरीर धावति पश्चादसस्थितश्चेत चीनाशुकमिवकेतो प्रतिवात नीयमानस्य'। हषचरितके प्रथमोच्छवास म बाणभट्ट ने शोण क पवित्र और तरगित बालुकामयतट को चीन के बने रेशमी कपडे क समान कामल बताया है ।

चीन म बौद्धधम का प्रचार चीन के हान वश के सम्राट मिड्ती के समय म (65 ई०) हुआ था । उसन स्वप्न मे सुवण पुरुष बुद्ध को देखा और तदुपरात अपने दूतो को भारत स बौद्ध सूत्रग्रथो और भिक्षुओ को लाने के लिए भेजा । परिणामस्वरूप, भारत स धमरक्ष और काश्यपमातग अनेक धमग्रथो तथा मूर्तियो को साथ लेकर चीन पहुचे और वहा उन्होंने बौद्ध धम की स्थापना की । धमग्रन्थ श्वेत अश्व पर रख कर चीन ले जाए गए थे, इसलिए चीन के प्रथम बौद्धविहार को श्वेताश्वविहार की सज्ञा दी गई। भारत चीन के सास्कृतिक सबधो की जो परपरा इस समय स्थापित की गई उसका पूण विकास आगे चल कर फाह्यान (चौथी शती ई०) और युवानच्वाग (सातवी शती ई०) के समय म हुआ जब चीन के बौद्धो की सबसे बडी आकाक्षा यह रहती थी कि किसी प्रकार भारत जाकर वहा के बौद्ध तीर्थो का दशन करें और भारत के प्राचीन ज्ञान और दशन का अध्ययन कर अपना जीवन समुन्नत बनाए । उस काल म चीन के बौद्ध, भारत को अपनी पुण्यभूमि और ससार का महानतम् सास्कृतिक केंद्र मानत थे ।

चीनभुक्ति

प्रसिद्ध चीनी यात्री युवानच्वाग अपनी भारत यात्रा के समय 633 ई० म इस स्थान पर आया था और यहा चौदह मास के लगभग ठहरा था । यहा से वह जालधर गया था । नगर के नाम से ज्ञात होता है कि यहा चीनी लोगो की कोई बस्ती उस समय रही होगी । एतिहासिक अनुश्रुति से विदित होता है कि कुशान नरेश कनिष्क के समय (द्वितीय शती ई० का प्रारभ) इस स्थान पर कुछ समय के लिए चीन से बधक के रूप मे आए हुए दूत रहे थे और इसी कारण इस स्थान का नाम चीनभुक्ति पड गया था । कहा जाता है कि इन दूतो के साथ पहली बार चीन से नाशपाती और आडू भारत म आए थे ।

चीनभुक्ति की ठीक ठीक स्थिति का पता नही है किंतु प्राप्त साक्ष्य के आधार पर इस स्थान का पश्चिमी पजाब या कश्मीर की पहाडियो म होना सभव प्रतीत होता है। कुछ विद्वानो का मत है कि यह स्थान शायद कुसूर (प० पाकि०) से 27 मील उत्तर मे स्थित 'पत्ती' है। इसे पहले चीनपत्ती (चीनभुक्ति का अपभ्रश?) भी कहते थे।

चुक्ष

तक्षशिला के एक अभिलेख म उल्लिखित स्थान, जिसका अभिज्ञान अटक (प० पाकि०) के उत्तर म स्थित 'चच' से किया गया है।

चुनार (ज़िला मिर्ज़ापुर, उ० प्र०)

बनारस से 39 मील और प्रयाग से 75 मील दूर विध्याचल की पहाडियो मे स्थित है। चुनार का प्राचीन नाम चरणाद्रि है। कहते हैं यह नाम वहा की पहाडी की मानवचरण के समान आकृति होने के कारण ही पडा है (चरण+अद्रि=पहाडी)। सभवत धोनसाख जातक मे वर्णित भग्गो की राजधानी सुसुमारगिरि भी इसी पहाडी पर बसी हुई थी। चुनार गगा के किनारे बसा है। जनश्रुति है कि चुनार मे गगा उल्टी बहती है। यहा गगा म एक घुमाव है, नदी उत्तर पश्चिम की ओर घूमकर और फिर पूव का मुडकर काशी की ओर बहती है। घुमाव का कारण चुनार की पहाडी की स्थिति है। इसी विशेष स्थिति के कारण चुनार को प्राचीनकाल म नदी माग का नाका समझा जाता था। रघुवश 16, 33 क अनुसार कुशावती स अयोध्या लौटते समय कुश की सेना ने जिस स्थान पर गगा को पार किया था वहा गगा प्रतीपगा या पश्चिम-वाहिनी थी—'तीर्थे तदीये गजसेतुबधात्प्रतीपगामुत्तरतोऽस्यगगाम, अयत्नबालव्यजनीबभूवुर्हंसानभोलघनलोल्पक्षा'। सभवत यह स्थान चुनार के निकट ही था। कुशावती से अयोध्या जाने वाले माग मे चुनार का स्थिति स्वाभाविक ही जान पडती है (द० कुशावती)। कालिदास न जो इस विशिष्ट स्थान के वणन मे गगा की प्रतीप गति बताई है, उससे यह सभव दीखता है कि कवि के ध्यान म चुनार की स्थिति ही रही होगी क्योकि किसी अय स्थान पर गगा का उल्टी ओर बहना प्रसिद्ध नही है। सभव है कि हिंदी के मुहावरे—'उलटी गगा बहाना' का सबध भी चुनार मे गगा क उल्टे प्रवाह स हो। चुनार का विख्यात दुग राजा भतृ हरि के समय का कहा जाता है। इनकी मृत्यु 651 ई० मे हुई थी (श्री न० ला० ड के अनुसार पालराजाओ न इस दुग का निर्माण करवाया था)। किवदती है कि स यास लेने के उपरात जब भतृ हरि विक्रमादित्य के मनाने पर भी घर न लौट तो उनकी रक्षाय विक्रमादित्य न

यह किला बनवा दिया था। उस समय यहा घना जगल था। किले का सबध आल्हा ऊदल की कथा से भी बताया जाता है। वह स्थान जहा आल्हा की पत्नी सुनवा का महल था अब सुनवा बुर्ज के नाम से प्रसिद्ध है। इसके पास ही माडा नामक स्थान है जहा आल्हा का विवाह हुआ था। चुनार का दुर्ग प्रयाग के दुर्ग की अपेक्षा अधिक दृढ तथा विशाल है। किले के नीचे सैकडो वर्षों से गगा की तीक्ष्ण धारा बहती रही है किंतु दुर्ग की भित्तियो को कोई हानि नही पहुच सकी है। इसके दो ओर गगा बहती है तथा एक ओर गहरी खाई है। दुर्ग, चुनार के प्रसिद्ध बलुआ पत्थर का बना है और भूमितल से काफी ऊची पहाडी पर स्थित है। मुख्य द्वार लाल पत्थर का है और उस पर सुदर नक्काशी है। क़िले का परकोटा प्राय दो गज चौडा है। उपर्युक्त माडा तथा सुनवा बुर्ज दुर्ग के भीतर अवस्थित हैं। यही राजा भर्तृहरि का मदिर है जहा उन्होने अपना सन्यासकाल बिताया था। किले के निकट ही सवा सौ या डेढ सौ फुट गहरी बावडी है। किले मे कई गहरे तहखाने भी है जिनमे सुरगें बनी है। 1333 ई० के एक सस्कृत अभिलेख से सूचित होता है कि उस समय यह दुर्ग स्वामीराजा चदेल के अधिकार मे था। चदेलो के समय मे चुनार का नाम चदेलगढ भी था। इसके पश्चात् यहा मुसलमानो का आधिपत्य हो गया। चुनारगढ का उल्लेख शेरशाह व हुमायू की लडाइयो के सबध मे भी आता है। इस काल मे चुनार को, बिहार तथा बगाल को जीतने तथा अधिकार मे रखने के लिए, पहला बडा नाका समझा जाता था। शेरशाह ने हुमायू को चुनार के पास हराया था जिससे हुमायू को भारी विपत्ति का सामना करना पडा था। 1575 ई० मे अकबर ने चुनार को जीता और तत्पश्चात मुगल साम्राज्य के अतिम दिनो तक यह मुगलो के अधिकार मे रहा। 18वी शती के द्वितीय चरण मे अवध के नवाबो ने चुनार को अवध राज्य मे सम्मिलित कर लिया किंतु तत्पश्चात 1772 ई० मे ईस्टइडिया कम्पनी का यहा प्रभुत्व स्थापित हुआ। बनारस के राजा चेतसिंह को जब वारेनहेस्टिंग्ज का कोपभाजन बनने के कारण काशी को छोडना पडा तो काशी की प्रजा की क्रोधाग्नि भडक उठी और हेस्टिंग्ज़ को काशी (जहा वह चेतसिंह को गिरफ्तार करने आया था) छोड कर भागना पडा। उसने इस अवसर पर चुनार के किले मे शरण ली थी।

चुनार मे कई प्रसिद्ध प्राचीन स्मारक हैं। कामाक्षा मदिर ऊची पहाडी पर है। मदिर के नीचे दुर्गाकुड और एक अन्य प्राचीन मदिर है। दुर्गाकुड और दुर्गाखोह के आसपास अनेक पुराने मदिरो के भग्नावशेष पडे हुए हैं और गुप्तकाल से लेकर 18वी शती के अनेक अभिलेख प्राप्त हुए हैं। यहा की

प्रसिद्ध मसजिद मुअज्जिन नामक है जिसमें मुगलसम्राट फरुखसियर के समय में मक्का से लाए हुए हसन हुसैन के पहने हुए वस्त्र सुरक्षित हैं।

चुर्लो (ज़िला ग्वालियर, म० प्र०)

सातवीं शती ई० से नवीं शती ई० तक की इमारतों के ध्वंसावशेष, जिनमें से अधिकांश मंदिर या देवालय हैं, इस स्थान पर मिले हैं।

चूर्णी

कौटिल्य अर्थशास्त्र (शामशास्त्री पृ० 75) में उल्लिखित नदी, जिसके तट पर वंजि नामक नगर (कोचीन के सन्निकट) बसा हुआ था। यहां केरल की प्राचीन राजधानी थी। नदी के मुहाने पर ग्रगनूर या रोमन लेखकों का 'मुज़ीरिस' बसा हुआ था जिसका प्राचीन नाम मरिचीपत्तन था। चूर्णी नदी का अभिज्ञान केरल की परियार नदी से किया गया है। (रायचौधरी—पृ० 273)।

चूलनागपर्वत (लंका)

हुवाचकण्णिका में स्थित बौद्धविहार। (दे० महावंश 34, 90)

चेउरला=चउरला

चेट्टीकुलंगराई (केरल)

मावेलिक्कार के निकट एक प्राचीन मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। इस मंदिर और उसके वार्षिक महोत्सव के विधिविधान में चीनी प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है जिसका कारण प्राचीनकाल में इस स्थान का चीन से व्यापारिक संबंध जान पड़ता है।

चेति=चेदि

चेदि को पाली साहित्य में चेति कहा गया है।

चेदि

प्राचीनकाल में बुंदेलखंड तथा पार्श्ववर्ती प्रदेश का नाम। ऋग्वेद में चेदि नरेश कशुचैद्य का उल्लेख है—'ताम अश्विना सनिना विद्यात नवानाम। यथा चिज्जैद्य कशु शतमुष्ट्रानादद्सहस्रा दशगोनाम। यो मे हिरण्य सन्दृशो दशराज्ञो अमंहत। अहस्पदाइच्चैद्यस्य कृष्टयश्चर्ममन्ना अभितो जना। माकिरेना पथागाद्येनमे यन्ति चेदय। अन्योनेत्सूरिरोहित भूरिदावत्तराजन'—ऋग्वेद 8,5, 37 39। रैपसन के अनुसार कशु या कसु महाभारत आदि० 63,2 में वर्णित चेदिराज वसु है—'स चेदिविषयं रम्यं वसुः पौरवनन्दन इन्द्रोपदेशाज्जग्राह रमणीयं महीपतिः'—अर्थात इन्द्र के कहने से उपरिचर राजा वसु ने रमणीय चेदि देश का राज्य स्वीकार किया। महाभारत विराट० 1,12 में चेदि देश का

अन्य कई देशो के साथ, कुरु के परिवर्ती देशो म गणना की गई है—'सन्ति रम्या जनपदा बह्वन्ना परित कुरून, पाचालाश्चेदिमत्स्याश्च शूरसना पटच्चरा'। कणपव 45,14 16 मे चेदिदेश के निवासियो की पशसा की गई है—'कौरवा सहपाचाला शाल्वा मत्स्या सनमिषा चैद्यश्च महाभागा धर्मं जानन्ति-शाश्वतम'। महाभारत के समय (सभा० 29,11 12) कृष्ण का प्रतिद्वद्वी शिशुपाल चेदि का शासक था। इसकी राजधानी शुक्तिमती बताई गई है। चेतिय जातक (कावेल स 422) म चेदि की राजधानी सोत्थीवतीनगर कही गई है जो श्री न० ला० डे के मत म शुक्तिमती ही है (द० ज्याग्रेफिकल डिक्शनरी पृ० 7)। इस जातक म चेदिनरेश उपचर क पाच पुत्रो द्वारा हत्थिपुर, अस्सपुर, सीहपुर, उत्तर पाचाल और दद्दरपुर नामक नगरो क बसाए जाने का उल्लेख है। महाभारत आश्वमेधिक० 83,2 म शुक्तिमती का शुक्तिसाह्वय भी कहा गया है। अगुत्तरनिकाय मे सहजाति नामक नगर की स्थिति चेदि प्रदश म मानी गई है—'आयस्मा महाचुडो चेतिसुविहरति सहजातियम' 3,355। सहजाति इलाहाबाद से दस मील पर स्थित भीटा है। चेतियजातक म चेदि-नरेश की नामावली है जिनम से अतिम उपचर या अपचर, महाभारत आदि० 63 म वर्णित वसु जान पडता है। वेदब्भ जातक (स० 48) म चेति या चेदि से काशी जाने वाली सडक पर दस्युओ का उल्लेख है। विष्णुपुराण 4,14,50 म चेदिराज शिशुपाल का उल्लेख है—'पुनश्चेदिराजस्य दमघोषस्यात्मज-शिशुपालनामाभवत्'। मिलिन्दपन्हो (राइसडेवीज-पृ० 287) म चेति या चेदि का चेतनरेशो से सबध सूचित होता है। शायद कलिंगराज खारवेल इसी वश का राजा था। मध्ययुग म चेदि प्रदेश की दक्षिणी सीमा अधिक विस्तृत होकर मेकलसुता या नमदा तक जा पहुची थी जसा कि कर्पूरमजरी (स्टेनकानो पृ० 182) से सूचित होता है—'नदीना मेकलसुतान्पाणा रणविग्रह, कवीनाच सुरानदश्चेदिमडलमडनम' —अर्थात नदियो म नमदा, राजाओ मे रणविग्रह और कवियो मे सुरानद चेदिमडल के भूषण है।

चेन्नापटम

प्राचीन समय म मद्रास नगर के स्थान पर बसा हुआ ग्राम। 1639 ई० मे अग्रेज व्यापारी फ्रासिस डे ने चेन्नापटम् के हिंदू राजा से इस स्थान का दानपत्र प्राप्त किया और 1640 म फाट सेंट जॉज नामक किले की स्थापना की। यह ईस्ट इडिया कम्पनी का भारत मे पहला किला था। 1653 ई० म फोट सेंट जाज मे एक प्रेसीडेंसी स्थापित की गई। आगामी वर्षों म इसी केद्र के चारो ओर मद्रास नगर का विकास हुआ।

चेर=करल

चेरान (बिहार)

उत्तरपूर्व रेल के गाल्डनगज स्टेशन से प्राय एक मील पर घाघरा-गगा क सगम पर बसा हुआ बौद्धकालीन स्थान है। इसकी नींव चेरस नामक राजा ने डाली थी। युवानच्वाग के अनुसार इस स्थान पर सत्यप्रकृति नामक ब्राह्मण ने एक घड़े पर कुभ स्तूप बनवाया था। इसके स्थान पर एक ऊंचा ढूह आज भी देखा जा सकता है। ढूह के ऊपर हुसैनशाह के नाम से प्रसिद्ध एक मसजिद है। कालिदास न सरयू जाह्नवी (घाघरा गगा) के सगमस्थल का तीर्थ बताया है। यहा दशरथ के पिता अज ने वृद्धावस्था म प्राणत्याग किए थे। (द० सरयू)

चैत्यक

महाभारत के अनुसार एक पहाड़ी, जो गिरिव्रज (=राजगृह, बिहार) क निकट है। जरासध के वध के लिए गिरिव्रज आए हुए श्रीकृष्ण, भीम और अर्जुन ने पहले इसी पर आक्रमण करके इसके शिखर को गिरा दिया था—'वैहारो विपुल शैलो वराहो वृषभस्तथा, तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यक पचमा । भङ्क्त्वा भेरीत्रयतेऽपिचत्य प्राकारमाद्रवन्, द्वारतोभिमुखा सर्वे ययुर्नानाऽऽयुधास्तदा। मागधाना सुरुचिरचैत्यक त समाद्रवन् शिरसीव समा घ्नन्तो जरासध जिघासव स्थिर सुविपुल श्रृग सुमहत तत पुरातनम, अर्चित गधमाल्यैश्च सतत सुप्रतिष्ठितम्, विपुलैर्बाहुभि वीरास्तेऽभिहत्याभ्यपातयन, ततस्ते मागध हृष्टा पुर प्रविविशुस्तदा'—सभा० 21,2 18 19 20 21। सभा० 21 दाक्षिणात्य पाठ म भी इसका उल्लख है (द० राजगृह)। इसका वतमान नाम छत्ता है जो चैत्य का ही अपभ्रष्ट रूप है।

चत्यपवत (लका)

महावश 16,17 म उल्लिखित है। इसका अभिज्ञान मिहि ताल पवत स किया गया है।

चत्ररथवन

(1) वाल्मीकि रामायण अयो० 71,4 म वर्णित एक वन—'सत्यसध शुचिर्भत्वा प्रेक्षमाण शिलावहाम, अभ्यगात् स महाशैलान् वन चैत्ररथ प्रति' अर्थात कैकय से अयोध्या आत समय सत्यसध भरत पवित्र होकर शिलावह नदी को दखते हुए ऊचे पवतो को पार करके चैत्ररथ वन की ओर चल। प्रसग स जान पडता है कि यह वन सरस्वती नदी के पश्चिम मे, सम्भवत पजाब के पहाडी प्रदेश मे स्थित होगा। इसके आगे सरस्वती का वणन है।

(2) द्वारका (काठियावाड) के उत्तर में स्थित वेणुमान् पर्वत के चतुर्दिक् चार महावनों या उद्यानों में से एक—'भाति चैत्ररथं चैव नंदनं च महावनम्, रमणं भावनं चैव वेणुमन्तं समन्ततः'। महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ।

(3) पुराणों के अनुसार धनाधिप कुबेर का उद्यान, जो अलका के निकट मेरुपर्वत के मंदार नामक शिखर पर स्थित था—'अलकाया चैत्ररथादिवनष्व-मल्पद्रुमनद्वेषु—' विष्णु० 4,41। वाल्मीकि रामायण युद्ध० 125,28 में नंदिग्राम के वृक्षों को चैत्ररथ वन के वृक्षों के समान ही कुसुमित बताया गया है—'आमसादद्रुमान् फुल्लान् नंदिग्रामसमीपगान् सुराधिपस्योपवने तथा चैत्ररथे द्रुमान्'। कालिदास ने रघुवंश 5,60 में शाप से विमुक्त हुए राघव का चैत्ररथ के प्रदेश की ओर जाना कहा है—एवं तयोरध्वनि दैवयोगादासेदुषो सख्यमचिन्त्य हेतु एकोययौ चैत्ररथप्रदेशान्सौराज्यरम्यानपरा विदर्भान्'। रघु० 6,50 में इंदुमती स्वयंवर के प्रसंग में शूरसेनाधिप सुषेण के राज्य में स्थित वृंदावन (मथुरा के निकट) को चैत्ररथ के समान बताया गया है—'संभाव्य भर्तारममुं युवानं मृदु-प्रवालोत्तर पुष्पशय्ये वृंदावने चैत्ररथादनूने निर्विश्यतां सुंदरियौवन श्री'। अमर-कोश 1,70 में चैत्ररथ को कुबेर का उद्यान कहा गया है—'अस्योद्यानं चैत्ररथम् पुत्रस्तु नलकूबरः, कैलासः स्थानमलका पूर्विमानंतु पुष्पकम्'।

चोड़ानगर=चतुर्भुजपुर

चोल

(1) सुदूर दक्षिण का प्रदेश—कारोमंडल या चोलमंडल। महा० सभा० 31,71 में चोल या चोड प्रदेश का उल्लेख है। इसे सहदेव ने दक्षिण की दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में जीता था—'पाड्यांश्च द्रविडांश्चैव सहितांश्चोड करलैः'। चोड का पाठांतर चोड्र भी है। वन० 51,22 में चोलों का द्रविणों और आंध्रों के साथ उल्लेख है—'सवंगागान् स पौड्राड्रान् सचोलद्रा विडांध्रकान्'। सभा० 51 में केरल और चोल नरेशों द्वारा युधिष्ठिर को दी गई भेंट का उल्लेख है—'चंदनागरुचानंत मुक्तावैदूर्य चित्रका, चोलश्च केरलश्चोभौ ददतु पांडवायवै'। अशोक के शिलाभिलेख 13 में चोल का प्रत्यंत (पड़ोसी) देश के रूप में वर्णन है। प्राचीन समय में यहां की मुख्य नदी कावेरी थी। चोल प्रदेश की राजधानी उरगपुर या वर्तमान त्रिशिरापल्ली, (त्रिचिना-पल्ली, मद्रास) में थी। इसे उरयियूर भी कहते थे। किंतु कालिदास ने (रघु० 6,59) 'उरगाख्यपुर' को पांड्य देश की राजधानी बताया है। अवश्य ही यह भेद इतिहास के विभिन्न कालों में इन दोनों पड़ोसी देशों की सीमाएं बदलती रहने के कारण हुआ होगा। चोल नरेशों ने प्राचीन काल और मध्यकाल में

शासन की जनसत्तात्मक पद्धति स्थापित की थी जिसमे ग्रामपचायतो और ग्राम-समितियो का बहुत महत्त्व था। यह सूचना हमे चोल नरेशो क अनेक अभिलखो से मिलती है।

(2) वतमान चोलिस्तान, जिसकी स्थिति वक्षु (आक्सस) नदी के दक्षिण और वाल्हीक के पूव मे थी। महाभारत सभा० 27,21 म इस प्रदेश पर अजुन की विजय का उल्लेख ह—'तत सुह्मारच चोलारच किरीटी पाडवषभ-सहित सवमैथेन प्रामथत् कुरुनन्दन'।

चोलवाडी (आ० प्र०)

चाल प्रदेश का एक भाग। प्राचीन समय मे,इस भूभाग के उत्तर म मूसा (हैदराबाद क निकट बहन वाली नदी) और दक्षिण म कृष्णा, इसकी स्वाभाविक सीमाएँ बनाती थी। यह भाग पानगल (वतमान महबूबनगर) और नालगोडा जिलो मे मिलकर बनता था। चोला का उत्कषकाल 480 ई० स आरभ होता है। वारगल राज्य की अवनति होन पर 14वी शती म बहमनी सुलताना का यहा आधिपत्य हुआ। बहमनी राज्य की अवनति के पश्चात् महबूबनगर जिल का एक भाग कुतुबशाही और दूसरा बीजापुर क सुल्तानो ने अपन राज्य म मिला लिया। 1686 ई० के पश्चात यहा औरगजेब का प्रभुत्व स्थापित हुआ और तत्पश्चात् यह प्रदेश 18वी शती मे निजाम हैदराबाद क राज्य म मिला लिया गया।

चोलिस्तान [दे० चोल (२)]

चौंघ (ज़िला बीड, महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र की प्रसिद्ध रानी अहल्याबाई होल्कर का जन्मस्थान। इनक पिता मनकोजी सिंधिया इस ग्राम क पटेल थे।

चौकडी (ज़िला जोधपुर, राजस्थान)

इस स्थान पर 1516 ई० क लगभग प्रसिद्ध भक्त कवियित्री मीराबाई का जन्म हुआ था। इनके पिता मेडता के राजा रतनसिंह थ। मीरा का विवाह उदयपुर क राणासागा के ज्यष्ठ पुत्र कुमार भाजराज क साथ हुआ था।

चौकीगढ (ज़िला भूपाल, म० प्र०)

गढमडलानरेश सग्रामसिह (मृत्यु० 1541 ई०) के 52 गढ़ा म से एक। रानी दुर्गावती इनकी पुत्रवधू थी।

चौपाला

मुरादाबाद (उ० प्र०) का पुराना नाम। पुरानी बस्ती चार भागा म बटी हुई थी जिसक कारण इसे चौपाला कहत थे। मुग़ल सूबेदार रुस्तम खा न

शाहजहां के पुत्र मुरादबख्श के नाम पर चौपाला का नाम बदलकर मुरादाबाद कर दिया था।

चौमुंडी

मैसूर के निकट प्रसिद्ध पहाड़ी, जहां चौमुंडेश्वरी देवी का मंदिर है। कहा जाता है कि देवी ने महिषासुर का वध इसी स्थान पर किया था जिससे इसका नाम महिषासुर हुआ जो बाद में मैसूर बन गया।

चौराई (जिला छिन्दवाड़ा, म० प्र०)

गढमंडला नरेश संग्रामसिंह के बावन गढ़ों में इसकी गणना थी। संग्रामसिंह गढमंडला की वीर रानी दुर्गावती के श्वसुर थे। इनकी मृत्यु 1541 ई० में हुई।

चौरागढ़ (जिला जबलपुर, म० प्र०)

गढमंडले की प्रसिद्ध रानी दुर्गावती के शासनकाल में यह राज्य का प्रधान नगर था। राज्य का कोष यहीं रहता था। चौरागढ़ का किला दुर्गावती के श्वसुर संग्रामसिंह का बनवाया हुआ था। संग्रामपुर की लड़ाई के पश्चात जिसमें दुर्गावती ने वीरगति प्राप्त की, अकबर के सेनापति आसफखां ने चौरागढ़ को घेर लिया। इस युद्ध में दुर्गावती का पुत्र वीरनारायण मारा गया और गढ़ की रानियां सती हो गयीं। आसफखां को चौरागढ़ की लूट में अनंत धनराशि प्राप्त हुई।

चौरासीखंभा (दे० कामवन)

चौसा (बिहार)

बकसर के निकट कर्मनाशा नदी के किनारे छोटा सा कस्बा है। 1538 ई० में इस स्थान पर मुगल सम्राट हुमायूं को शेरशाह सूरी ने बुरी तरह से हराया था और उसे अपनी जान बचाकर पश्चिम की ओर भागना पड़ा था। हुमायूं और शेरशाह के बीच भारत के राज्य के लिए होने वाले संघर्ष में चौसा के युद्ध को बहुत महत्त्व प्राप्त है। किंवदंती है कि चौसा का प्राचीन नाम च्यवनाश्रम था।

च्यवनाश्रम

(1) महाभारत वन० 121 122 में वर्णित च्यवन ऋषि और सुकन्या की कथा में च्यवन के आश्रम की स्थिति नर्मदा नदी पर बताई गई है। इसका उल्लेख वैदूर्यपर्वत (वन० 121,19) के पश्चात है। वैदूर्यपर्वत संभवतः नर्मदा के तटवर्ती संगमर्मर के पहाड़ों को कहा गया है जिनके निकट वर्तमान भेड़ाघाट नामक स्थान (जिला जबलपुर, म० प्र० से 13 मील) है। जनश्रुति के अनुसार

भेडाघाट मे भृगु का स्थान था और यहा इनका मदिर भी है। महाभारत के अनुसार च्यवन भृगु के ही पुत्र थे—'भृगामहर्षे पुत्रोऽभूच्चयवनो नाम भारत, समीप सरसस्तस्य तपस्तेप महाद्युति' वन० 121,1 इस प्रकार महाभारत के इस प्रसग म वर्णित च्यवन के आश्रम की भेडाघाट म स्थिति प्राय निश्चित समझी जा सकती है। च्यवनाश्रम का उल्लेख वन० 89,12 म भी है, 'आश्रम कक्षसेनस्य पुण्यस्तत्र युधिष्ठिर, च्यवनस्याश्रम श्चैव विख्यातस्तत्र पाडव'।

(2) दे० दवकुड

(3) चौसा (बिहार)

छदोपल्लिक

गुप्तकाल म कारीतलाई (जिला जबलपुर, म० प्र०) के निकट एक ग्राम। छठी शती ई० मे महाराज जयनाथ द्वारा उच्छकल्प से जारी किए गए एक ताम्रदानपट्ट मे इस ग्राम को कुछ ब्राह्मणो के लिए दिए जाने का उल्लेख है।

छडगाव (जिला मथुरा, उ० प्र०)

इस स्थान से एक विशाल नाग प्रतिमा प्राप्त हुई थी जो अब मथुरा सग्रालहय मे है। यह लगभग आठ फुट ऊची है। इस पर अकित एक अभिलेख से सूचित होता है कि महाराजाधिराज हुविष्क के समय म कनिष्क सवत के चालीसवे वप (118 ई०) म सेनहस्ती तथा उसके मित्र ने इस मूर्ति की प्रतिष्ठापना की थी। इस मूर्ति म नाग की कुडलिया बडे वास्तविक रूप म प्रदर्शित है। अभिलेख से विदित होता है कि ई० सन् के प्रारभिक काल म नागपूजा देश के इस भाग मे विशेप रूप से प्रचलित थी।

छतरपुर (बुदेलखड, म० प्र०)

बुदेलखड की भूतपूर्व रियासत तथा उसका मुख्य नगर। यह नगर बुदेला नरेश छत्रसाल का बसाया हुआ है। कहा जाता है कि बाबा लालदास नामक एक सत के कहने से छत्रसाल ने यह नगर बसाया था। 18वी शती के अत म कुवर सोनेशाह पवार ने छतरपुर की रियासत स्थापित की थी।

छत्तीसगढ़

रायपुर विलासपुर (म० प्र०) जिला तथा परिवर्ती क्षेत्र म सम्मिलित इलाका। यह प्राचीन दक्षिण कोसल या महाकोसल है। यहाँ की बोली उत्तरप्रदेश की अवधी (प्राचीन उत्तरकोसल के क्षेत्र की भाषा) से मिलती-जुलती है। उत्तर और दक्षिण कोसल म नामो की समानता के अति[illegible] आदान प्रदान भी सदा से रहा है। यह सम्[illegible] उत्तरकोस[illegible] [illegible]चीन और मध्य काल म दक्षिणकोसल [illegible] गए हो [illegible]

छत्रगिरि

राजगृह (बिहार) के सात पर्वतों में से एक, जो संभवत महाभारत में वर्णित चैत्यक है।

छत्रवती=अहिच्छत्र

महाभारत में अहिच्छत्र के विविध नामों में से एक—'पापता द्रुपदोनामच्छत्रवत्या नरेश्वर' महा० आदि० 165 21। (दे० पंचाल, अहिच्छत्र)

छाता (जिला मथुरा)

यहाँ संभवत शेरशाह के समय में बनी एक सराय है जो दुर्ग जैसी मालूम होती है।

छायापुर (राजस्थान)

चौहान राजाओं के बनवाए हुए प्राचीन दुर्ग के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

छिभाल

प्राचीन अभिसारी राज्य का प्रदेश, जिसमें चिनाब नदी के पश्चिम में स्थित पूंछ, राजौरी और भिंभर का क्षेत्र सम्मिलित है।

छोटा नागपुर (बिहार)

इस प्रदेश का नाम, किंवदंती के अनुसार, छोटानाग नामक नागवंशी राजकुमार सेनापति के नाम पर पड़ा है। छोटानाग ने, जो तत्कालीन नागराजा का छोटा भाई था, मुगलों की सेना को हराकर अपने राज्य की रक्षा की थी। 'सरहूल' की लोककथा छोटानाग से ही संबंधित है। इस नाम की आदिवासी लड़की ने अपने प्राण देकर छोटानाग की जान बचाई थी। सरजॉन फाउल्टन का मत है कि छोटा या छुटिया रांची के निकट एक गांव का नाम है जहां आज भी नागवंशी सरदारों के दुर्ग के खंडहर हैं। इनके इलाके का नाम नागपुर था और छुटिया या छोटा इसका मुख्य स्थान था। इसीलिए इस क्षेत्र को छोटा नागपुर कहा जाने लगा। (दे० सरजॉन फाउल्टन—बिहार दि हार्ट ऑव इंडिया पृ० 127) छोटा नागपुर के पठार में हजारीबाग, रांची, पालामऊ, मानभूम और सिंहभूम के जिले सम्मिलित हैं।

छोटी गंडक (दे० हिरण्यवती)

जकम पेट (जिला निज़ामाबाद, आ० प्र०)

प्राचीन कलापूर्ण शैली में निर्मित एक मंदिर यहां का मुख्य स्मारक है। इसमें केन्द्रीय मंडप, अग्रवेश्म, देवालय और स्तंभों सहित एक अन्य मंडप है जिसे धर्मशाला कहते हैं।

जजीरा (महाराष्ट्र)

यह द्वीप काकण के तट पर शिवाजी की राजधानी रायगढ से पश्चिम की ओर बीस मील पर स्थित है। शिवाजी के समय यहा अधिकतर अबी सीनिया के हब्शी लोग रहते थे जिन्हें सीदी कहते थे। जजीरा का सूबेदार फतहखा था जा बीजापुर रियासत की ओर स नियुक्त था। शिवाजी ने इस द्वीप पर 1659 ई० तथा उसके पश्चात कई बार आक्रमण किए थे किंतु विशेष सफलता नही मिली थी। 1670 ई० म उन्होंने इस पर फिर चढाई की। फतहखा ने तग होकर शिवाजी से सधि कर ली। यह देखकर हब्शियो ने उसे मार डाला और मुगलो से शिवाजी के विरुद्ध सहायता मागी। मुगल सेनाआ के आन के कारण शिवाजी उधर से हटकर सूरत की आर चले गए और उन्हाने दुबारा सूरत को लूटा। जजीरा फारसी शब्द जजीरा (द्वीप) का रूपातर है।

जबुला

बुदेलखड की जामनेर नदी। बेतवा और जामनेर के सगम के क्षेत्र का प्राचीन नाम तुगारण्य था।

जबू अरण्य (जिला कोटा, राजस्थान)

चबल नदी के तट पर कोटा स लगभग 5 मील दूर वतमान केशवराय पाटण ही प्राचीन जबू अरण्य है। किवदती है कि अज्ञातवास के समय विराट नगर जाते समय पाडव कुछ दिना तक यहा ठहरे थे। वतमान केशवराय का मदिर कोटा-नरेश शत्रुशल्य ने बनवाया था। यह भी लोकश्रुति है कि आदि मदिर राजा रतिदेव का बनवाया हुआ था। महाभारत तथा विष्णुपुराण म वर्णित जबूमाग (या जबुमाग) यही हो सकता है (दे० जबूमाग)

जबूकोल (लका)

महावश 11,23 मे उल्लिखित है। लकानरेश देवानाप्रिय तिष्य ने भारत के सम्राट अशोक के पास अपने भागिनेय महारिष्ठ, पुरोहित, मत्री और गणक इन चार जनो को दूत बनाकर बहुमूल्य रत्न, तीन जाति की मणिया, आठ जाति क मोती तथा अन्य वस्तुआ के साथ भेजा था। ये लोग जबूकोल स नाव पर चढकर सात दिन मे ताम्रलिप्ति पहुचे और वहा से एक सप्ताह म पाटलिपुत्र। जबूकोल, लका के उत्तरी समुद्रतट पर सबलतुरि नामक बदरगाह है। महावश 19,60 के अनुसार बोधिद्रुम की एक शाखा या अकुर जिसे सघमित्रा लका ले गई थी, जबूकाल म आरोपित किया गया था।

जंबुद्वीप

पौराणिक भूगोल के अनुसार भूलोक के सप्त महाद्वीपों में से एक। यह पृथ्वी के केंद्र में स्थित है। इसके इलावृत, भद्राश्व, किंपुरुष, भारत, हरि, केतुमाल, रम्यक, कुरु और हिरण्यमय—ये नवखंड हैं। इनमें भारतवर्ष ही मृत्युलोक है, शेष देवलोक है। इसके चतुर्दिक लवण सागर है। जंबुद्वीप का नामकरण यहां स्थित जंबू वृक्ष (जामुन) के कारण हुआ है। जंबुद्वीप से क्रमानुसार बड़े द्वीपों के नाम ये हैं—प्लक्ष, शाल्मली, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर। पौराणिक भूगोल के आधार पर यह कहना उपयुक्त होगा कि जंबुद्वीप में वर्तमान एशिया का अधिकांश भाग सम्मिलित था—दे० विष्णुपुराण अंश 2, अध्याय 2 'जंबूद्वीप समस्तानामेतेषां मध्य संस्थित, भारतं प्रथमं वर्षं ततः किंपुरुषं स्मृतम्, हरिवर्षं तथैवान्यन्मेरोर्दक्षिणतो द्विज। रम्यकं चोत्तरं वर्षं तस्यैवानुहिरण्मयम् उत्तराः कुरवश्चैव यथा वै भारतं तथा। नव साहस्त्रमेकैकमेतेषां द्विजसत्तम इलावृत्तं च तन्मध्ये सौवर्णो मेरुरुच्छितः। भद्राश्वं पूर्वतो मेरोः केतुमालं च पश्चिमे। एकादश शतायामाः पादपागिरिकेतवः जंबूद्वीपस्य साजंबूर्नाम हेतुर्महामुने'।

जैन ग्रंथ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति में जंबूद्वीप के सात वर्ष कहे गए हैं। हिमालय को महाहिमवत और चुल्लहिमवत दो भागों में विभाजित माना गया है और भारत वर्ष में चक्रवर्ती सम्राट का राज्य बताया गया है। पुराणों में जंबूद्वीप के छः वर्ष-पर्वत बताए गए हैं—हिमवान, हेमकूट, निषध, नील, श्वेत और शृंगवान।

जंबुप्रस्थ

'तोरणं दक्षिणार्धेन जंबूप्रस्थं समागतम्' वाल्मीकि रामा० अयो० 71,11। इस स्थान को भरत ने केकय से अयोध्या आते समय गंगा के पूर्व की ओर पार किया था। तोरण नामक ग्राम भी इसी के निकट था।

जंबूमार्ग

महाभारत वनपर्व के अंतर्गत पश्चिम दिशा के जिन तीर्थों का वर्णन पांडवों के पुरोहित धौम्य ने किया है उनमें जंबूमार्ग भी है—'जंबूमार्गो महाराज ऋषीणां भावितात्मनाम्। आश्रमः शाम्यतां श्रेष्ठ मृगद्विज निषेवितः'—वन० 89,13-14। श्री वा० श० अग्रवाल के मत में, जंबूमार्ग आबूपर्वत पर स्थित था किंतु इसका जंबूअरण्य से अभिन्नत्व अधिक समीचीन जान पड़ता है। विष्णु० में भी जंबूमार्ग का उल्लेख है—'ततश्च तत्कालकृतां भावनां प्राप्य तादृशीं जंबूमार्गे महारण्ये जातो जातिस्मरो मृगः' अर्थात् राजा भरत, मृत्यु-समय की दृढ़भावना के कारण जंबूमार्ग के घोरवन में अपने पूर्वजन्म की

स्मृति से युक्त एक मृग हुए। यह तथ्य द्रष्टव्य है कि विष्णुपुराण और महा-भारत दोनो मे ही जबूमार्ग म मृगो का निवास बताया गया है। विष्णुपुराण मे जबूमार्ग को स्पष्ट रूप से महारण्य कहा है। इससे भी इस स्थान का जबू अरण्य से अभिज्ञान उपयुक्त जान पडता है।

जगतग्राम (दे० देहरादून)

जगतसुख=मनाली

जगतियाल (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

1747 ई० म जगतियाल के दुर्ग का निर्माण फ्रासीसी शिल्पियो ने जफ रुद्दौला के लिए किया था। इसी समय की एक मसजिद भी यहा है। जग तियाल भूतपूर्व हैदराबाद रियासत मे सम्मिलित था।

जगद्दल (जिला राजशाही पू० पाकि०)

जगद्दल के बौद्ध महाविद्यालय की स्थापना पालवश के बौद्धनरेश रामपाल द्वारा 11वी शती के उत्तराध मे की गई थी। यह विद्यालय तत्रयान का गढ था और तात्रिक बौद्धो का केंद्र। भिक्षु दानशील, विभूतिचद्र, शुभाकर गुप्त आदि यहा के प्रसिद्ध तात्रिक विद्वान थे।

जगन्नाथपुरी (उडीसा)

पूर्वी भारत का प्रसिद्ध तीर्थ। कहा जाता है कि पुरी म पहले एक प्राचीन बौद्ध मदिर था। हिंदूधर्म के पुनरुत्थानकाल म इस मदिर को श्रीकृष्ण के मदिर के रूप म बनाया गया। मदिर की मुख्य मूर्तिया शायद तीसरी शती ई० की हैं। ययातिकेसरी ने 9वी शती ई० मे पुराने मदिर का जीर्णोद्धार करवाया और तत्पश्चात चोड गगदेव ने 12वी शती ई० म इसका पुन नवी-करण किया। इस मदिर का आदि निर्माता कौन था, यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता। 12वी शती म मदिर का अतिम जीर्णोद्धार गगवशीय राजा अनग भीमदेव ने करवाया था। इसी रूप म यह मदिर आज स्थित है। इस मदिर पर मध्यकाल म मुसल्मानो ने कई बार आक्रमण किए थे। काला पहाड नामक मुसल्मान सरदार ने जो पहले हिंदू था—इस मदिर को पुरी तरह नष्टभ्रष्ट किया था। मदिर का पुनर्निर्माण कई बार हुआ जान पडता है। 15वी शती म चैतन्य महाप्रभु ने इस मदिर की यात्रा की थी। तीन सौ वर्ष पूर्व मराठो ने (भोंसला नरेश ने) शाग मदिर का जीर्णोद्धार करवाया था। यह मदिर दाक्षिणात्य शैली म निर्मित है। जान पडता है कि पुरी का महाभारत या पूर्वपौराणिक काल तक तीर्थरूप म मान्यता नहीं थी। चीनी यात्री युवानच्वाग ने सभवत पुरी का ही चारित्रपुर नाम म अभिहित

किया है। शाक्तों के अनुसार जगन्नाथपुरी के क्षेत्र का नाम उड्डियानपीठ है। इसे शखक्षेत्र भी कहा जाता था। दक्षिण के प्रसिद्ध वैष्णव आचार्य रामानुज ने पुरी की यात्रा 1122 ई० और 1137 ई० म की थी। उनकी यात्रा के पश्चात यह मदिर उडीसा मे हिंदूधर्म का प्रबल एव प्रमुख केंद्र बन गया था।

जगमनपुर (बुदेलखड)

सेंगर राजपूतो की राजधानी। इनकी उत्पत्ति दशरथ की कन्या शाता व शृगीऋषि स मानी जाती है। 1134 ई० मे जगमनपुर के राजा वत्सराज सेंगर थे। इसी वर्ष का इनका एक दानपत्र बनारस स प्राप्त हुआ है। इस वश के राजा कर्ण न यमुनातट पर कर्णावती नामक ग्राम बसाया था जो बाद मे कनार कहलाया। पहले इस वश के राजा कनार म ही रहते थे। कनार मे प्राचीन किले के ध्वसावशेष अभी तक ह। इसके दर्शन करने के लिए जगमनपुर के राजा दशहरे के दिन आते थे। (दे० मध्ययुगीन भारत भाग 3, पृ० 443)

जगय्यापेट (आ० प्र०)

इस स्थान से प्रथम तथा द्वितीय शती ई० के पुरातत्त्व सबधी मूल्यवान अवशेष प्राप्त हुए हैं।

जग्गेरी

राजगह (बिहार) के निकट एक नगर, जिसका उल्लेख सभवत इलीसजातक (कॉवेल, स० 78) म है।

जटातीर्थ

रामेश्वरम (मद्रास) के निकट जटातीर्थ नामक कुड है। कहा जाता है कि लका के युद्ध क पश्चात रामचन्द्रजी ने अपने केशो का प्रक्षालन इसी स्थान पर किया था। यहा जटाशकर शिव का भी मदिर है। यहा से 1 मील दक्षिण की ओर जगल म काली का अतिप्राचीन मदिर है।

जटापुर

मुरचीपत्तन (केरल) के निकट स्थित है। इसका उल्लेख वाल्मीकि रामायण किष्किधाकाड 42,13 मे, इस प्रकार है— 'वेलातलनिविष्टेपु पर्वतेपु वनेपु च मुरचीपत्तन चैव रम्य चैव जटापुरम्'। सभव है इसका सबध जटातीर्थ से हो।

जटायु क्षेत्र (जिला नासिक, महाराष्ट्र)

नासिक रोड से 26 मील और घोटी स्टेशन से 10 मील दूर वह स्थान है जहा किवदती के अनुसार श्रीराम ने रावण द्वारा आहत गृध्रराज जटायु

का अंतिम संस्कार किया था। वाल्मीकि रामा० अरण्य० 68,35 के अनुसार यह स्थान गोदावरी नदी के तट पर स्थित था—'ततो गोदावरीं गत्वा नदीं नरवरात्मजौ उदकं चक्रतुस्तस्मै गृध्रराजाय तावुभौ'।

जटिंगा रामेश्वर (जिला चीतलदुग, मैसूर)

अशोक की अप्रमुख्य धर्मलिपि (1) यहां एक चट्टान पर उत्कीर्ण पाई गई है।

जटोदा

ब्रह्मपुत्र की सहायक नदी (कालिकापुराण, 77)

जठर

'मेरोरनन्तरागेषु जठरादिष्ववस्थिता शंखकूटोऽथ ऋषभो हंसो नाग स्तथापर कालंजाद्याश्च तथा उत्तरकेसराचला' विष्णु० 2,2,29—अर्थात् मेरु के अति समीप और जठर आदि देशों में स्थित शंखकूट, ऋषभ, हंस, नाग और कलंज आदि पर्वत उत्तर दिशा के केसराचल हैं। यदि मेरु या सुमेरु को उत्तरी ध्रुव का प्रदेश माना जाए तो जठर को वर्तमान साइबेरिया में स्थित मानना चाहिए। किंतु विष्णुपुराण का यह वर्णन बहुत अंशों में काल्पनिक जान पड़ता है। जठर नामक पर्वत का भी उल्लेख विष्णु० 2,2 40 में है— 'जठरो देवकूटश्च मर्यादा पर्वतावुभौ तौ दक्षिणोत्तरायामावानील निषधायतौ'।

जडचेरला (जिला महबूबनगर, आ० प्र०)

इस तालुके में कई प्रागैतिहासिक स्थल, प्राचीन हिंदू तथा बौद्ध अवशेष और मध्यकाल की एक मीनार स्थित हैं।

जनकपुर=जनकपुरी (नेपाल)

यह जयनगर (बिहार) से 17 मील दूर नेपाल रेलवे का स्टेशन है। यह रामायण के समय की जनकपुरी है जिसे सीता का जन्मस्थान तथा मिथिलाधिप जनक की राजधानी माना जाता है। यहां के प्रसिद्ध स्थान जानकी मंदिर को टीकमगढ़ की महारानी ने बनवाया था। जनक की राजसभा के महापंडित याज्ञवल्क्य का भी इस स्थान से संबंध बताया जाता है। जनकपुर को मिथिला भी कहते थे— 'ततः परमसत्कारं सुमतेः प्राप्य राघवौ उष्य तत्र निशामेकां जग्मतुः मिथिलां ततः दृष्ट्वा मुनयः सर्वे जनकस्य पुरीं शुभाम्, साधु साध्विति शंसन्तो मिथिलां समपूजयन्' वाल्मीकि० बाल० 48,9 10।

(2) =जलना (जिला औरंगाबाद, महाराष्ट्र)। किंवदंती है कि इस स्थान पर वनवासकाल में श्रीरामचंद्रजी कुछ दिन ठहरे थे। यहां नवपाषाण युग की अनेक इमारतों के अवशेष स्थित हैं। अकबर द्वारा शाहजादा दानियाल

को लिखे गए कुछ पत्रो से सूचित होता है कि इस नगर को मुगल सम्राट ने अबुलफज़्ल का जागीर के रूप म दिया था।

जनस्थान

दडकारण्य का एक भाग, जिसका विस्तार नासिक के परिवर्ती प्रदेश म था। पुराणा के अनुसार नासिक का ही एक नाम जनस्थान है—'कृते तु पद्मनगरत्रेतायां तु त्रिकटकम, द्वापरे च जनस्थान कलौ नासिकमुच्यते'। वाल्मीकि रामायण के अनुसार खरदूषणादि राक्षसो का निवास जनस्थान मे था, नानाप्रहरणा क्षिप्रमितोगच्छत सत्वरा, जनस्थान हृतस्थान भूतपूव-खरालयम्। तत्रास्यता जनस्थानेशून्ये निहतराक्षसे, पौरुप वलमाश्रित्य त्रासमुत्सृज्य दूरत'। रामचद्रजी ने, जसा कि इस उद्धरण से सूचित होता है, इस प्रदेश के सभी राक्षसा का अत कर दिया था। कालिदास ने कई स्थला पर जनस्थान का उल्लेख किया है— 'प्राप्य चाशुजनस्थान खरादिभ्यस्तधाविधम्' —रघु० 12,42, 'पुराजनस्थानविमर्दशकी सधाय लकाधिपति प्रतस्थे'—रघु० 6,62 'अमोजनस्थानमपोढविघ्न मत्वा समारब्ध नवोटजानि' रघु० 13,22। अतिम उद्धरण से विदित होता है कि मुनियो ने जनस्थान से राक्षसो का भय दूर होने पर अपने परित्यक्त आश्रमो म पुन नवीन कुटिया बना ली थी। भवभूति ने भी जनस्थान और पचवटी का नासिक के निकट उल्लेख किया है—'पश्चामि च जनस्थान भूतपूवखरालयम प्रत्यक्षानिव वृत्ता ता पूर्वनिनुभ-यामिच उत्तररामचरित 2 17। इस श्लोक मे वाल्मीकि रामायण के उपर्युक्त उद्धरण की भाति जनस्थान म खर राक्षस का घर कहा गया है। यह सभव है कि उपयुक्त उद्धरणो म वर्णित जनस्थान की ठीक ठीक स्थिति गोदावरी के पवत से अवरोहण करने के स्थान (नासिक के निकट) पर पालवेराम के सन्निकट रही होगी (दे० इडियन एटिक्वेरी जिल्द 2, पृ० 283)। किंतु महाभारत अनुशासन० 25,29 मे जनस्थान को चित्रकूट और मदाकिनी के निकट बताया है—'चित्रकूटजनस्थाने तथा मदाकिनी जल, विगाह्य वै निराहारो राजलक्ष्म्या निषेव्यते'।

जबलपुर (म० प्र०)

इस नगर का प्राचीन नाम जाबालिपुर या जाबालिपत्तन कहा जाता है। जाबालि पुराणो मे वर्णित एक ऋषि का नाम है। रानी दुर्गावती के सबध के कारण जबलपुर इतिहास मे प्रसिद्ध है। तत्कालीन बस्ती के खडहर वतमान नगर से पाच मील दूर पुरवा नामक ग्राम के निकट हैं। (दे० पुरवा)

जमली (मालवा, म० प्र०)

यहां पूर्वमध्ययुगीन (परमारकालीन) भव्य मंदिरों के अवशेष स्थित हैं।

जम्मू

महाभारत में वर्णित दार्व को वर्तमान डुग्गर या जम्मू का प्रदेश कहा जाता है—'कैराता दरदादार्वा शूरा यमकास्तथा, औदुम्बरा दुर्विभागा पारदा बाह्लिकैः सह'—सभा० 52,13।

जयंती

पंजाब की भूतपूर्व रियासत जींद का प्राचीन नाम।

जयंती क्षेत्र (महाराष्ट्र)

हुबली से प्राय: 70 मील पर बनोशिला ग्राम को प्राचीन जयन्ती क्षेत्र कहा जाता है। यह वरदा (=वर्धा) नदी के तट पर स्थित है। पौराणिक आख्यान के अनुसार मधुकैटभ दैत्यों ने यहां तप किया था। दानों के नाम से प्रसिद्ध मंदिर भी ग्राम के निकट है। मधुकैटभ को विष्णु ने मारा था।

जयधर (पंजाब)

कुरुक्षेत्र प्रदेश में अमीन (=अभिमन्यु) ग्राम के निकट वह स्थान है जहां किंवदंती के अनुसार अर्जुन ने सिंधुराज जयद्रथ को मारा था। जयधर शब्द जयद्रथ का रूपांतरण है। महाभारत द्रोण० 116,122 में जयद्रथ के वध का उल्लेख इस प्रकार है—'स तु गांडीव निर्मुक्त: शर: श्येन इवाशुग:, छित्वा शिर: सिंधुपते रुत्पपात विहायसम्'।

जयपुर (राजस्थान)

कछवाहा राजा जयसिंह द्वितीय का बसाया हुआ राजस्थान का इतिहास प्रसिद्ध नगर। कछवाहा राजपूत अपने वंश का आदि पुरुष श्रीरामचन्द्रजी के पुत्र कुश को मानते हैं। उनका कहना है कि प्रारंभ में उनके वंश के लोग रोहतासगढ़ (बिहार) में जाकर बसे थे। तीसरी शती ई० में वे लोग ग्वालियर चले आए। एक ऐतिहासिक अनुश्रुति के आधार पर यह भी कहा जाता है कि 1068 ई० के लगभग, अयोध्या-नरेश लक्ष्मण ने ग्वालियर में अपना प्रभुत्व स्थापित किया और तत्पश्चात् इनके वंशज दौसा नामक स्थान पर आए और उन्होंने मीणाओं से आमेर का इलाका छीनकर इस स्थान पर अपनी राजधानी बनाई। ऐतिहासिकों का यह भी मत है कि आमेर का गिरिदुर्ग 967 ई० में ढोलाराज ने बनवाया था और यहीं 1150 ई० के लगभग कछवाहा ने अपनी राजधानी बनाई। 1300 ई० में जब राज्य के प्रसिद्ध दुर्ग रणथंभौर पर अलाउद्दीन खिलजी ने आक्रमण किया तो आमेरनरेश राज्य के भीतरी भाग में

चले गए किंतु शीघ्र ही उन्होंने किले को पुन हस्तगत कर लिया और जला-उद्दीन से संधि कर ली। 1548 74 ई० मे भारमल आमेर का राजा था। उसने हुमायू और फिर अकबर से मैत्री की और अकबर के साथ अपनी पुत्री जोधाबाई का विवाह भी कर दिया। उसके पुत्र भगवानदास ने भी अकबर के पुत्र सलीम के साथ अपनी पुत्री का विवाह करके पुराने मत्री सबध बनाए रखे। *भगवानदास को अकबर ने पजाब का सूबेदार नियुक्त किया था।* उसने 16 वष तक आमर म राज्य किया। उसके पश्चात उसका पुत्र मानसिंह 1590 ई० से 1614 ई० तक आमेर का राजा रहा। मानसिंह अकबर का विश्वस्त सेनापति था। कहते हैं उसी के कहने से अकबर ने चित्तौड नरेश राणा प्रताप पर आक्रमण किया था (1577 ई०) (दे० हल्दीघाटी)। मानसिंह के पश्चात् जयसिंह प्रथम न आमेर की गद्दी सम्हाली। उसने भी शाहजहा और औरगजब से मित्रता की नीति जारी रखी। जयसिंह प्रथम शिवाजी को औरगजेब के दरबार म लाने म समथ हुआ था। कहा जाता है जयसिंह को औरगजेब ने 1667 ई० मे जहर देकर मरवा डाला था। 1699 ई० स 1743 ई० तक आमेर पर जयसिंह द्वितीय का राज्य रहा। इसने 'सवाई' की उपाधि ग्रहण की। यह बडा ज्योतिषविद् और वास्तुकलाविशारद था। इसी न 1728 ई० म वतमान जयपुर नगर बसाया। आमेर का प्राचीन दुग एक पहाडी की चोटी पर स्थित है जो 3)0 फुट ऊँची है। इस कारण इस नगर के विस्तार के लिए पर्याप्त स्थान नही था। सवाई जयसिंह ने नए नगर जयपुर को आमेर से तीन मील की दूरी पर मैदान मे बसाया। इसका क्षेत्रफल तीन वगमील रखा गया। नगर को परकोटे और सात प्रवेश द्वारो स सुरक्षित बनाया गया। चौपड के नक्शे के अनुसार ही सडके बनवायी गइ। पूव से पश्चिम की ओर जाने वाली मुख्य सडक 111 फुट चौडी रखी गई। यह सडक, एक दूसरी उतनी ही चौडी सडक का ईश्वर लाट के निकट समकोण पर काटती थी। अन्य सडके 55 फुट चौडी रखी गईं। *ये मुख्य सडक को कई स्थानो पर समकोणो पर काटती थी।* कई गलिया जो चौडाई मे इनकी आधी या 27 फुट थी, नगर के भीतरी भागो से आकर मुख्य सडक मे मिलती थी। सडको के किनारो के सारे मकान लाल बलुवा पत्थर के बनवाए गए थे जिसस सारा नगर गुलाबी रग का दिखाई देता था। राजमहल नगर के केंद्र मे बनाया गया था। यह सात मजिला है। इसम एक दीवानखास है। इसके समीप ही तत्कालीन सचिवालय—बावन कचहरी— स्थित है। 18वी शती म राजा माधोसिंह का बनवाया हुआ छ मजिला हवामहल भी नगर की मुख्य सडक पर ही दिखाई देता है। राजा जयसिंह द्वितीय न जयपुर, दिल्ली,

मथुरा, बनारस और उज्जैन मे वेधशालाए भी बनाई थी। जयपुर की वेधशाला इन सबसे बडी है। कहा जाता है कि जयसिंह का नगर का नक्शा बनाने म दो बगाली पडितो से विशेष सहायता प्राप्त हुई थी। (दे० आमेर)

जयप्राकार (वियतनाम)

मीकोंग नदी के दक्षिणी तट पर प्राचीन हिंदू-कालीन नगर, जिसकी स्थापना स्थानीय पालीग्रथो के अनुसार, 9वी शती ई० के उत्तराध म स्याम क एक राजकुमार ने की थी। यह नगर चीगराय नामक जिले म स्थित था।

जयवापी (लका)

महावश 10,83। अनुराधपुर के समीप एक तडाग। लका नरेश पाडुकामध के राज्याभिषेक के लिए इस वापी के जल का प्रयोग किया गया था। इसी कारण इसे जयवापी कहते थे।

जयसिंहपुर (जिला बादा, उ० प्र०)

चित्रकूट की मुख्य बस्ती का पुराना नाम है। यह पयोष्णी के तट पर स्थित है। आजकल इसे सीतापुर कहते हैं।

जयस्वामीपुर

कल्हण की राजतरगिणी (स्टाइन का अनुवाद 1,168 71) से ज्ञात होता है कि इस नगर को हुष्क या हुविष्क नामक राजा ने बसाया था। यह कनिष्क का उत्तराधिकारी था। इसने ही हुष्कपुर बसाया था, जो वर्तमान जुक्कूर है। जयस्वामीपुर का, जो कश्मीर मे स्थित था, अभिज्ञान सभव नही है।

जरगेभऊ (जिला कानपुर, उ० प्र०)

इस स्थान से 1956 मे प्राचीन मृद्भाडो के अवशेष प्राप्त हुए थे। स्थान की प्राचीनता सिद्ध हो जाने पर यहा विस्तृत रूप से उत्खनन प्रारभ किया गया था।

जरसोप्पा (मैसूर)

मुडावदरी की भाति ही इस स्थान पर मध्ययुगीन मदिरो के अवशेष पाए गए हैं। ये मदिर पूवगुप्तकालीन मदिरो की भाति वर्गाकार तथा शिखररहित हैं। छतो का पाटने के लिए पत्थरो का ढलाव के साथ रखा गया है, जो इस के इस भाग मे होने वाली वर्षा को देखत हुए आवश्यक जान पडता है। कनारा जिल के मध्ययुगीन अर्थात 16वी शती तक के मदिरा म पटे हुए प्रदक्षिणापथ गुप्त मदिरो के ही अनुरूप ह। गभगृह के सामने एक मडप की उपस्थिति इन मदिरा का सामान्य लक्षण है।

जलधर (पजाब)

पजाब का प्रसिद्ध प्राचीन नगर। कहा जाता है इसका नाम पौराणिक कथाओ—पद्मपुराण आदि मे प्रसिद्ध जलधर नामक दैत्य के नाम पर हुआ था जो इसी प्रदेश का निवासी था और जिसे विष्णु ने मारा था। जलधर का नाम चीनी यात्री युवानच्वाग के यात्रावृत्त म मिलता है। वह 7वी शती ई० के पूर्वार्ध मे इस स्थान पर आया था। इस समय उत्तरी भारत मे महाराज हर्ष का शासन था। जलधर मे युवानच्वाग ने नगरधन नामक एक प्रसिद्ध विहार देखा था। यहा चार मास ठहरकर उसने चद्रवर्मा नामक विद्वान् से बौद्ध ग्रथो का अध्ययन किया था। जलधर-दोआब का प्राचीन नाम त्रिगर्त है। (दे० हेमकोष) इसका योगिनी तत्र (1,11,2,2,2,9) म उल्लेख है।

जलद

विष्णुपुराण 2,4 60 के अनुसार शाक द्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा भव्य के पुत्र जलद के नाम से प्रसिद्ध था।

जलदुर्ग (लिंगसुगुर तालुका, जिला रायचूर, मैसूर)

इस स्थान पर कृष्णा की दो उपनदियो के मध्य मे एक विस्तृत चट्टान पर 9वी शती म बना हुआ दुर्ग है। इसम प्राप्त एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि इस किले को 12वी शती के अत म देवगिरि के किसी यादववशीय नरेश ने बनवाया था।

जलना=जनकपुर (2)

जला

'जला चोपजला चैव यमुनामभितो नदीम्, उशीनरो वै यत्रेष्टवा वासवादत्यरिच्यत' महा० वन० 130,21—अर्थात् यमुना नदी के दानो पार्श्वों मे जला और उपजला नामक नदियो को देखो जहा उशीनर ने यज्ञ करके इद्र से भी बढकर स्थान प्राप्त किया था। इस उद्धरण मे जला और उपजला को यमुना के दोनो ओर स्थित कहा गया है और इस प्रदेश म उशीनर के राज्य का उल्लेख है। उशीनर, कनखल (हरद्वार) के निकटवर्ती प्रदेश का नाम था। इस प्रकार जला और उपजला की स्थिति जिला देहरादून या सहारनपुर म यमुना के निकट रही होगी (दे० उपजला)

जलाधार

विष्णुपुराण के अनुसार शाकद्वीप का एक पर्वत—'पूर्वस्तत्रोदयगिरिर्जला-धारस्तथापर, तथा रैवतक श्यामस्तथैवास्तगिरिर्द्विज'—विष्णु० 2,4,62।

जलालपुर

रामायणकाल मे केकय देश की राजधानी गिरिव्रज मे थी। इसका अभिज्ञान कनिंघम ने गिरजाक अथवा वर्तमान जलालपुर नामक कस्बे (प० पाकि०) से किया है जो झेलम नदी के तट पर बसा हुआ है। (दे० केकय, गिरजाक, गिरिव्रज)। युवानच्वांग द्वारा उल्लिखित नगरहार भी जलालपुर के स्थान पर ही बसा था।

जलालाबाद

(1) (जिला मुजफ्फरनगर, उ० प्र०) नजीबखां रोहेला का बनवाया हुआ गौसगढ इस स्थान के निकट है।

(2) दे० नगर

जलाली (जिला अलीगढ, उ० प्र०)

इस स्थान (प्राचीन नीलौती) पर पठानो के बसाये हुए एक नगर के खडहर हैं।

जलेसर (जिला एटा, उ० प्र०)

मेवाड के राजा कटीर ने 1403 ई० मे यहा किला बनवाया था।

जलोद्भव देश

पूर्वोत्तर उत्तरप्रदेश के तराई क्षेत्र (नेपाल की तराई) का प्राचीन नाम। महाभारत वन० 30, 8 9 के अनुसार इस प्रदेश को भीम ने अपनी दिग्विजययात्रा के प्रसग मे जीता था।

जवारि=जौहर (कोंकण, महाराष्ट्र)

शिवाजी के समय महाराष्ट्र का एक छोटा सा राज्य था। सलहेरि के युद्ध के पश्चात 1672 ई० मे इसे शिवाजी ने जीत लिया। यह विजय उनके सेनापति मोरोपंत पिंगले ने की थी। कविवर भूषण ने इसका वर्णन इस प्रकार किया है—'भूषण भनत रामनगर जवारि तेरे, वैर परवाह बहे रुधिर नदीन के' शिवराज भूषण 173। रामनगर जवारि के पास दूसरा राज्य था।

जसधन (गुजरात)

205 ई० का एक स्तभलेख इस स्थान से प्राप्त हुआ है जो क्षत्रप रुद्रदामन् के वशज रुद्रसेन के शासनकाल में अकित किया गया था।

जसनौल=बाराबंकी (उ० प्र०)

जस नाम के भर राजपूत राजा ने इसे 10वीं शती ई० मे बसाया था।

जसो (बुंदेलखंड, म० प्र०)

कनिंघम ने इस भूभाग का नाम दरेदा लिखा है जो संभवत दुरेहा (जसो

के निकट) का ही रूपांतर है। प्राचीन काल में जसो जैन संस्कृति का महत्व-पूर्ण केंद्र था क्योंकि आज भी सैकड़ों जैनमूर्तियां यहां से प्राप्त होती हैं। इनका समय 12वीं शती से 16वीं शती तक है। जसो की रियासत छत्रसाल के वंशजों ने बनाई थी। महाराज छत्रसाल के पुत्र जगतराज को उत्तराधिकार में जैतपुर का राज्य मिला था। जगतराज के बृहत राज्य का एक भाग खुमानसिंह को मिला—इसमें जसो भी सम्मिलित था। बाद में खुमानसिंह ने जसो की जागीर अपने पुत्र हरिसिंह को दे दी जो कालांतर में एक स्वतंत्र रियासत बन गई। ऐतिहासिक स्थान नचना और खोह, जहां गुप्तकालीन अनेक अवशेष तथा अभिलेख प्राप्त हुए हैं, जसो के निकट ही हैं।

जहांगीरपुर

ओड़छानरेश वीरसिंह देव ने जिनकी मुगल सम्राट जहांगीर से बहुत मैत्री थी, ओड़छा को फिर से बसाकर उसका नाम जहांगीरपुर रखा था, किंतु यह नाम अधिक दिनों तक न चला। इन्होंने एक नए महल का नाम भी जहांगीरमहल रखा था। वीरसिंह देव ने अकबर के शासनकाल में सलीम (बाद में जहांगीर) के कहने से अकबर के प्रिय मंत्री और मित्र अबुलफजल की हत्या करवा दी थी। (दे० ओड़छा)

जहांपनाह

वर्तमान दिल्ली के निकट तुगलककालीन बसाया नगर। मु० तुगलक ने 1350 ई० के लगभग इस शहर की बुनियाद डाली थी। इसे दिल्ली के सात नगरों में से चौथा कहा जाता है। जहांपनाह की सीमा पिथौरागढ़ और सीरी (अलाउद्दीन खिलजी की दिल्ली)—दोनों के परकोटों को मिलाकर बनाई गई थी। इसके अंदर एक सुंदर प्रासाद बनवाया गया था, जिसे बदीए मंजिल (आनंद भवन) कहा जाता था। इसका दूसरा नाम विजय मंडल था। इस नाम से यह आज भी प्रसिद्ध है। इस नगर के परकोटे के भीतर खिड़की, बेगमपुरी मसजिद आदि भवन स्थित थे। नगर के तीन प्रधान द्वार थे।

जहाजपुर (राजस्थान)

यह स्थान उदयपुर से 96 मील उत्तरपूर्व में स्थित है। किंवदंती के अनुसार जहाजपुर के दुर्ग का निर्माण मूलतः मौर्यसम्राट अशोक के पौत्र सम्प्रति ने किया था। यह दुर्ग, बूंदी और मेवाड़ के बीच की पहाड़ियों के एक गिरिद्वार की रक्षा करता था। 15वीं शती में राणा कुंभा ने इसका पुनर्निर्माण करवाया था। सम्प्रति जैन धर्म का अनुयायी था। जहाजपुर में अनेक प्राचीन जैन मंदिरों के खंडहर भी मिले हैं। (दे० राजपूताना गजेटियर 1880, पृ० 52)

जहानाबाद (ज़िला बिजनौर, उ० प्र०)

गंगा तट पर बिजनौर नगर से प्राय आठ मील की दूरी पर स्थित है। यहा शाहजहा के सूबेदार शुजातखा का मकबरा है जो अब उपेक्षित अवस्था म है।

जहाहूति

स्कदपुराण, कुमारखड, 39 मे उल्लिखित देश जो जैजाकभुक्ति या बुदेलखड है।

जांबू

जूबद्वीप मे प्रवाहित होने वाली नदी जो विष्णुपुराण के अनुसार जबूवृक्ष के फलो के रस से बनी है—'रसेन तेषा प्रख्याता तत्र जाबूनदीति व'—विष्णु० 2,2,20। सभवत इस नदी की स्थिति हिमालयोत्तर प्रदेश या मध्य एशिया म थी क्योकि पौराणिक भूगोल म जबू वृक्ष को जूबद्वीप के मध्य म माना है। (दे० जूबद्वीप)

जांब (ज़िला पूना, महाराष्ट्र)

छत्रपति शिवाजी के गुरु तथा महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सत समर्थ रामदास का जन्मस्थान। इनका जन्म चैत्रशुक्ल नवमी शाके 1530 म हुआ था।

जागनेर (ज़िला आगरा उ० प्र०)

यहा जगमल राव द्वारा निर्मित (1571 ई०) किले के खडहर हैं।

जागेश्वर (ज़िला अल्मोडा, उ० प्र०)

अल्मोडा से प्राय 19 मील दूर प्राचीन स्थान है। यहा इस प्रदेश के कई प्राचीन मदिर हैं, जिनमे महामृत्युजय, कलासपति, डिडेश्वर, पुष्टिदेवी, भैरवनाथ आदि शिव के अनेक रूपो तथा विविध भावो की मूर्तिया विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। जागेश्वर तथा दीपश्वर महादेव के मदिर यहा के प्राचीन स्मारक है। कुछ लोगो के मत म नागेश के ज्योतिर्लिंग का स्थान यही है। (दे० नागश)

जाजऊ (उ० प्र)

आगरे के निकट इस स्थान पर औरगजेब के उत्तराधिकारी पुत्रो—मुअज्जम और आजम म 1707 ई० मे घोर युद्ध हुआ था जिसम मुअज्जम विजयी हुआ और बहादुरशाह के नाम से गद्दी पर बैठा। जाजऊ की लडाई मे आजम मारा गया था।

जाजनगर=यज्ञपुर

जाजपुर=यज्ञपुर

जाजमऊ (दे० ययातिपुर)

जादियाल (ज़िला अमृतसर, पजाब)

अमृतसर से पूव की ओर छोटा कस्बा ... सागल

कहलाता था (कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया 1,371)। अल्क्षेंद्र के भारत पर आक्रमण करने के समय (327 ई० पू०) यहा कठ-जाति के वीर क्षत्रियो की राजधानी थी। सागल का अभिज्ञान कुछ विद्वानो ने शाकल या सियालकोट से भी किया है।

जानकीगढ़ (दे० चकीगढ़)

जाफना (लका) ताम्रपर्णी (द्वीप)

जाबरा (जिला बुलदशहर, उ० प्र०)

यह ग्राम खुर्जा से 20 मील दक्षिण की ओर यमुना तट पर स्थित है। कहा जाता है कि यहा जाबित्र ऋषि का आश्रम था जिनका स्मारक मदिर के रूप म ग्राम के भीतर आज भी देखा जा सकता है।

जाबालिपत्तन=जबलपुर

जाबालिपुर=जबलपुर

जाभीकुटा (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

इस स्थान पर वजगूर और मलगूर नामक दो किले हैं जो क्रमश सातसौ और एक हजार वर्ष प्राचीन हैं। यही गुरशल और कटकूर के मदिर है। गुरशल का मदिर 1229 ई० म वारगलनरेश प्रतापरुद्र के शासनकाल म बना था। यह मदिर अब टूटी फूटी अवस्था मे है किंतु इसके पत्थरा पर की गई नक्काशी आज भी अच्छी दशा मे है। मदिर के बाहर एक स्तभ पर उडिया भाषा मे एक अभिलेख अकित है।

जायस (जिला रायबरेली, उ० प्र०)

उत्तर रेल के जायस स्टेशन क पास प्राचीन कस्बा है जो हिंदी के कवि मलिक मुहम्मद जायसी के सबध के कारण प्रसिद्ध है। यहीं इन्होने अपना सुप्रसिद्ध ग्रथ पदमावत लिखा था। जायस म रहने के कारण ही ये जायसी कहलाए। पदमावत के 23वे दोहे की प्रथम चौपाई मे कवि ने स्वय ही कहा है—'जायस नगर धरम असथानू तहा आय कवि कीन्ह बखानू'—जिससे ज्ञात होता है कि जायस उस समय सभवत मुसल्मानो के लिए पवित्र स्थान माना जाता था और जायसी यहा किसी और स्थान से आकर बसे थ तथा पद्मावत की रचना भी उन्होने यही की थी। पद्मावत म उसका रचनाकाल 927 हिजरी अर्थात 1527 ई० दिया हुआ है। उजालिकपुर जायस का दूसरा और सभवत अधिक प्राचीन नाम है। (दे० न० ला० डे)

जारुधि

सभवत सरयूतटवर्ती प्रदेश का नाम। महाभारत सभा 38, दाक्षिणात्य

पाठ में भीष्म ने, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के अवसर पर, विष्णु के अवतारों की कथा के वर्णन के प्रसंग में कहा है कि श्रीरामचंद्रजी ने दस अश्वमेधों का अनुष्ठान करके जारुधि प्रदेश को निर्विघ्न बना दिया था—'दशाश्वमेधानाजह्रे जारुधिस्थान् निरर्गलान्'। रामचंद्रजी के पूर्वज इक्ष्वाकुनरेशों ने अश्वमेध यज्ञ सरयू के तट पर ही किए थे जैसा कि रघु० 13,61 से भी ज्ञात होता है—'जलानि या तीरनिखातयूपा वहत्ययोध्यामनुराजधानीम्, तुरगमेधावभृथावतीर्णै रिक्ष्वाकुभिः पुण्यतरीकृतानि', और रामचंद्र जी ने भी पूर्व परम्परा के अनुरूप अश्वमेध यज्ञ अपनी राजधानी अयोध्या के निकट सरयूतट पर ही संपादित किया था।

(2) विष्णुपुराण के अनुसार मेरु के उत्तर में एक पर्वत, जो पश्चिम की ओर समुद्र तक विस्तीर्ण था—'त्रिशृंगो जारुधिश्चैव उत्तरौवर्षपर्वतौ, पूर्व पश्चायतावेतावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ'—2,2,43। इस वर्णन की वास्तविकता को यदि स्वीकार करें तो यह पर्वत वर्तमान यूराल (रूस) की श्रेणी का कोई भाग हो सकता है जो कश्यप (कैस्पियन) सागर तक फैली हुई है। विष्णु० 2,2,28 में जारुधि को मेरु का पश्चिमी केसराचल भी माना गया है—'शिखि वासाः सवैडूर्यः कपिलो गंधमादनः, जारुधिप्रमुखास्तद्वत्पश्चिमे केसराचलाः'। (दे० त्रिशृंग)

जालौन (उ० प्र०)

यह कस्बा बुंदेलखंड क्षेत्र में स्थित है। यह चंदेलकालीन सरोवरों और मराठों के समय की इमारतों के भग्नावशेषों के लिए उल्लेखनीय है।

जालौर (राजस्थान)

12वीं शती से 14वीं शती ई० तक राजस्थान में जैनधर्म का उत्कर्ष काल रहा है। जालौर के इसी काल में बने हुए दुर्ग में महाराज कुमारपाल द्वारा निर्मित कई जैन मंदिर आज भी देखे जा सकते हैं। यहीं 1303 ई० के थोड़े समय पश्चात ही अलाउद्दीन खिलजी की बनवाई मसजिद राजस्थान की सर्वप्राचीन मसजिद मानी जाती है। इस मसजिद की निर्माणशैली पर भारतीय वास्तुकला का प्रभाव प्रायः नगण्य ही है।

जावर (जिला उदयपुर, राजस्थान)

बहुत प्राचीन काल में जावर मेवाड़ का छोटा सा पर्व क्षेत्र था जहाँ महाराणा लाखा के समय में (14वीं शती ई०) भीलों का आधिपत्य था। महाराणा ने जावरा को भीलों से छीन लिया। इस प्रदेश में [illegible], चांदी, सीसा, तथा अन्य धातुओं की खानें भी जिनसे प्राप्त कर लाखा ने बहुत

लाभ हुआ। मेवाड के व्यापार की इससे बहुत उन्नति हुई और राजकोष भी बहुत धनी हो गया। महाराणा लाखा ने अपनी सपत्ति को मेवाड के प्राचीन स्मारकों और मदिरों आदि का, जिन्हें अलाउद्दीन खिलजी ने 1303 ई० के आक्रमण के समय नष्टभ्रष्ट कर दिया था, जीर्णोद्धार करने मे लगाया तथा अनेक नये भवन तथा दुर्ग बनवाए।

जावली (महाराष्ट्र)

17वी शती मे जावली की एक छोटी सी रियासत थी जो बीजापुर के सुलतान के अधिकार क्षेत्र मे थी। जावली या जावला का प्रांत कोयना नदी की घाटी मे महाबलेश्वर के ठीक नीचे स्थित था। यह तीर्थस्थान भी था। शिवाजी के समय मे यहा का राजा चद्रराव मोरे था। इसने बीजापुर के सुल्तान आदिलशाह के षड्यत्र मे सम्मिलित होकर शिवाजी को पकडना चाहा था किंतु उसके पहले ही महाराष्ट्र केसरी शिवाजी ने, 1656 ई० मे चद्रराव मोरे को मारकर जावली पर अपना अधिकार कर लिया। यहा से शिवाजी को बहुत सा धन मिला जिससे उन्होने प्रतापगढ किले का निर्माण किया। महाकवि भूषण ने शिवाबावनी, 28 मे—'चद्रावल चूर करि जावली जप्त की ही'—लिखकर उपर्युक्त ऐतिहासिक घटना पर प्रकाश डाला है।

जावा=यवद्वीप

जिजला (शिल्लोद तालुका, जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

इस ग्राम मे वैंगगढ नामक एक प्राचीन गढ अवस्थित है जिसकी दुर्ग रचना महत्त्वपूर्ण मानी जाती है।

जिजी (जिला आरकट, मद्रास)

मद्रास धनुष्कोटि रेलमार्ग पर तिडिवनम् स्टेशन से 20 मील पश्चिम मे बसा हुआ यह स्थान एक सुदृढ दुर्ग के कारण उल्लेखनीय है। दुर्ग की तीन पहाडिया है—राजगिरि, श्रीकृष्ण गिरि और चाद्रायण। राजगिरि पर रगनाथ का सुदर मदिर है जिसमे कृष्ण की कलापूर्ण मूर्तिया हैं। वेकटरमण स्वामी के मदिर मे रामायण के सुदर चित्र हैं। जनश्रुति के अनुसार इस दुर्ग तथा मदिरो के निर्माण कर्ता काशिराज सूरशर्मा थे। ये काशी से यहा यात्रार्थ आए थे। दूसरी लोककथा यह भी है कि जिजी नगर की स्थापना तुपक्कल कृष्णाप्पा ने की थी जो काचीपुरी के निवासी थे।

जितूर (जिला परभणी, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर मुसलमान सत शम्सुद्दीन तथा शाह मस्तान की प्राचीन दरगाहे हैं।

जिगनी (बुंदेलखड, म० प्र०)

अंग्रेजी शासनकाल तक यह एक छोटी सी रियासत थी । इसके सस्थापक बुंदेल नरेश महाराज छत्रसाल के पुत्र पदुमसिंह थे। इन्हें अपने पिता की ओर से कोई जागीर न मिली थी किंतु इनके सौभाग्य से इन्हें इनके मामा ने अपने यहा जिगनी की जागीर पर बुला लिया जिसके फलस्वरूप उनकी मृत्यु के पश्चात पदुमसिंह ही इस जागीर के स्वामी बने । 1703 ई० म इन्होंने बदौरा को जीतकर जिगनी में मिला लिया । इसके पश्चात् अनेक राजनैतिक उलट-फेरा के कारण इस रियासत मे काफी काट छाट हुई ।

जिम्भिक (बिहार)

प्राचीन जैन ग्रथो के अनुसार तीर्थंकर वधमान महावीर को अन्तर्ज्ञान अथवा कैवल्य की प्राप्ति इसी स्थान पर हुई थी। आचारागसूत्र के वर्णन के अनुसार 'तेरहवें वष म ग्रीष्मऋतु के दूसरे मास के चौथे पक्ष मे, वैशाख शुक्ल दशमी के दिन जबकि छाया पूव की ओर फिर गई थी और पहला जागरण समाप्त हो गया था अर्थात् सुव्रत के दिन, विजय मुहूत म, ऋजु पालिका नदी के तट पर जिम्भिक ग्राम के बाहर, एक पुरान मदिर के निकट, एक सामान्य गृहस्थ के खेत म शालवृक्ष के नीच, जिस समय चन्द्रमा उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र मे था, दोनो एडियो को मिला कर बैठे हुए, धूप म ढाई दिन तक निजल व्रत करके, गभीर ध्यान मे मग्न रहकर, उसने सर्वोच्च ज्ञान अर्थात कैवल्य को प्राप्त किया, जो अपरिचित, प्रधान, अकुरित, पूरा और सपूर्ण है' । इस प्रकार जिम्भिक की महत्ता जैनो के लिए वही है जो बोधगया की बौद्धो के लिए । यह ग्राम वैशाली (जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) के निकट स्थित था ।

जिननाथपुर

यह स्थान श्रवणबेलगोल (मैसूर) से एक मील उत्तर की ओर स्थित है । तीर्थंकर शातिनाथ की साढे पाच फुट ऊची मूर्ति यहा की सुदर कलाकृति है । यह शातिनाथ नामक वस्ती मे स्थित है ।

जींद (पजाब)

पटियाला के निकट भूतपूव सिख रियासत । कहा जाता है कि इस नगर का प्राचीन नाम जयती था जो जयतीदेवी के मदिर के कारण हुआ था । प्राचीन भूतेश्वर महादेव का मदिर सूयकुड नामक सरोवर के मध्य मे स्थित है और समीप ही जयतीदेवी का मदिर है । भूतेश्वर मदिर का जीर्णोद्धार महाराजा रघुबीरसिंह न करवाया था ।

जीडीकल (जिला नलगोंडा, आ० प्र०)

जनगाव से 18 मील दूर इस ग्राम का मुख्य स्मारक एक विस्तीर्ण चट्टान पर बना हुआ नरसिंह स्वामी का मंदिर है। किंवदंती है कि इसी स्थान पर सीता ने श्रीराम को मायामृग मारीच के पीछे भेजा था। जीडीकल का शुद्धरूप जिंकाकल या मृगशैल हो सकता है और यह किंवदंती भी शायद इसी नाम के आधार पर बनी है क्योंकि जिस स्थान से राम मारीच के पीछे गए थे वह पंचवटी (नासिक, महाराष्ट्र) के निकट होना चाहिए।

जीमूत

विष्णुपुराण 2,4,29 के अनुसार शाल्मलद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा वपुष्मान् के पुत्र जीमूत के नाम से प्रसिद्ध था।

जीरवल=जीरापल्ली

जीरादेई (जिला छपरा, बिहार)

जीरादेई के नाम पर प्रसिद्ध ग्राम। किंवदंती के अनुसार यह ईरान विजेता राजा रतिबलराय की पुत्री थी। इसका विवाह मकरान नरेश राजा सहसराय के पुत्र सुबलराय से हुआ था (हिस्टरी ऑव परशिया – स्मिथ)। सुबलराय के मरने पर जीरादेई सती हो गई। जीरादेई के पास सुबलराय ने सुरबल या सुगौल नामक एक गढ बनवाया था जो अब भी विद्यमान है। सुबलराय आठवीं शती ई० में थे।

जीरापल्ली(गुजरात)

दीस के निकट यह प्राचीन जैनतीर्थ है। इसे अब जीरवल कहते हैं। यहां पार्श्वनाथ का मंदिर है। इस स्थान का नामोल्लेख तीर्थमाला चैत्यवंदन स्तोत्र में इस प्रकार है—'जीरापल्लि फलर्द्धिपारक नग शरीसशखेश्वरे'।

जीर्णनगर (दे० जुनार)

जीर्णवप्र

यह वर्तमान जूनागढ (काठियावाड, गुजरात) है। इस स्थान का जैन तीर्थ के रूप में उल्लेख तीर्थमाला चैत्य वंदन नामक जैन स्तोत्र में इस प्रकार है —'द्वारावत्यपरे गढमढगिरौ श्रीजीर्ण वप्रे तथा'। गिरनार, जो प्रसिद्ध जैनतीर्थ है, जूनागढ के निकट ही स्थित है।

जुकुर=जुष्कपुर

जुझारखंड

बुंदेलखंड का प्राचीन नाम। (दे० गोरेलाल तिवारी—बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास—पृ० 1)

जुझौति

बुदेलखड का प्राचीन नाम जिसका शुद्ध रूप यजुर्होती कहा जाता है। यह नाम 7वी शती मे भी प्रचलित था क्योकि चीनी यात्री युवानच्वाग, जो भारत मे 630 ई० से 645 ई० तक था, उज्जन से महेश्वरपुर जाते हुए जुझौति पहुचा था और उसने इस प्रदेश का इसी नाम से उल्लेख किया है। उसके लेख के अनुसार जुझौति का राजा ब्राह्मण था और वह बौद्धो का आदर करता था। 14वी शती मे बुदेलो का इस प्रदेश मे राज्य स्थापित होने के कारण इसका नाम बुदेलखड हो गया। इससे पूर्व इसे जुझौति ही कहते थे।

जुनार (ज़िला पूना, महाराष्ट्र)

प्राचीन नाम जीर्णनगर। इस स्थान से एक गुफा मे क्षहरात नरेश नहपान के मत्री अयम का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था जिससे नहपान का महाराष्ट्र के इस भाग पर आधिपत्य सिद्ध होता है। अभिलेख मे नहपान को महाक्षत्रप कहा गया है। इसमे सवत 46 का उल्लेख है जो शकसवत ही जान पडता है। इस प्रकार यह लेख 124 ई० का है। जुन्नार के शिवनेर दुर्ग मे महाराष्ट्रकेसरी शिवाजी का जन्म हुआ था।

जुष्कपुर (कश्मीर)

श्रीनगर के उत्तर की ओर जुकुर नामक एक बडा ग्राम है जिसका अभिज्ञान प्राचीन जुष्कपुर से किया गया है। कल्हण की राजतरगिणी के अनुसार (स्टाइन, 1,168,71) जुष्कपुर को कनिष्क के उत्तराधिकारी जुष्क (या हुविष्क) ने बसाया था। जुष्क ने ही जुष्कपुर का विहार भी बनवाया था। कुछ विद्वानो के मत मे कनिष्क का उत्तराधिकारी वशिष्क था जिसका उल्लेख आरा अभिलेख मे 'वाझेष्क' के रूप मे हुआ है। कनिष्क की तिथि 78 ई० (रायचौधरी) या 120 ई० (स्मिथ) है।

जूना (ज़िला जोधपुर, राजस्थान)

इस ग्राम मे सच्चिका देवी का मध्ययुगीन मंदिर है जिसमे 1237 वि० स० (1180 ई०) का एक अभिलेख अकित है। इससे विदित होता है कि मूर्ति की रचना एक गणमुख्य ने करवायी थी तथा श्री कुदसूरि ने उसकी प्रतिष्ठापना की थी। इससे तत्कालीन जनधर्म मे सच्चिकादेवी (महिषमर्दिनी) की उपासना का समावेश होना सिद्ध होता है।

जूनागढ़ (काठियावाड, गुजरात)

जूनागढ का प्राचीन नाम यवननगर कहा जाता है। जूनागढ़ का क़िला अतिप्राचीन और हिंदूकालीन है। इसे उपरकोट का दुर्ग भी कहते हैं। यह

सौराष्ट्र की सर्वोच्च पर्वतश्रेणी की तलहटी में स्थित है। जूनागढ़ (जूना=प्राचीन) का नाम शायद इसी क़िले की प्राचीनता के कारण हुआ है। गिरिनार पहाड़ के नीचे हिंदुओं का प्राचीन मंदिर है और पर्वत की चोटी पर जैनों के कई प्रसिद्ध मंदिर हैं। गिरिनार महाभारत का रैवतक है। जूनागढ़ को जैनस्तोत्र तीर्थमालाचैत्यवंदन में जीर्णवप्र कहा गया है।

जेठियान=यष्टिवन

जेतवन

बुद्धकाल में श्रावस्ती का प्रसिद्ध विहारोद्यान जहां गौतम बुद्धत्व-प्राप्ति के पश्चात् प्राय: ठहरते थे। अश्वघोष ने बुद्धचरित, सर्ग 18, में इस वन के, अनाथपिंडद सुदत्त द्वारा राजकुमार जेत से ख़रीदे जाने की कथा का वर्णन किया है। इस आख्यायिका का पाली बौद्धसाहित्य में भी वर्णन है जिसके अनुसार सुदत्त ने इस मनोरम उद्यान को इसकी पूरी भूमि में स्वर्ण मुद्राएं बिछाकर ख़रीदा था और फिर बुद्ध को संघ के लिए दान में दे दिया था। राजकुमार जेत ने इस धनराशि से सात तलों का एक विशाल प्रासाद बनवाया जो, चीनी यात्री फाह्यान के अनुसार बाद में जलकर भस्म हो गया था। जेतवन के अवशेष, ढूहों के रूप में, वर्तमान सहेत महेत (ज़िला गोंडा, उ० प्र०) के खंडहरों में पड़े हुए हैं। (दे० श्रावस्ती)

जेतुत्तर

बौद्ध ग्रंथ अभिधानप्पदीपिका में दी हुई बीस नगरों की सूची में उल्लिखित एक स्थान जो श्री न० ला० डे के मत में मध्यमिका या चित्तौड़ के निकट रहा होगा। किंतु रायचौधरी ने इसे शिबि राष्ट्र का नगर माना है। इसका उल्लेख वेस्सतरजातक में भी है। दे० शिबि। अलबेरूनी ने इसे जात्तरौर कहा है और मेवाड़ की राजधानी बताया है (अलबेरूनी, पृ० 202)

जनाड़ (ज़िला आदिलाबाद, आं० प्र०)

17वीं शती में बने विष्णुमंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

जैतपुर (बुंदेलखंड, ज़िला हमीरपुर, उ० प्र०)

इस स्थान के निकट, बुंदेलनरेश महाराज छत्रसाल और महाराष्ट्र प्रमुख बाजीराव पेशवा की संयुक्त सेना के साथ इलाहाबाद के सूबेदार मुहम्मद बंगश की विशाल फ़ौज का घोर युद्ध हुआ था जिसमें मुसलमान सेना की भारी हार हुई थी। जैतपुर का किला पहले बंगश ने सर कर लिया। मराठों और बुंदेलों ने किले का घेरा डाल दिया और जब रसद समाप्त हो गई तो बंगश की फ़ौज को आत्मसमर्पण कर देना पड़ा। इस किले को वापस लेने में छत्रसाल

को छ मास लगे थे। इस युद्ध मे बुदेला को मराठो की सहायता से
उत्साह मिला। छत्रसाल के पुत्रा ने भी युद्ध मे बहुत वीरता दिखाई।
जाता है कि जब बगश ने भारी फौज के साथ बुदेलाराज्य पर आक्रमण
की तैयारिया शुरू की तो घबरा कर छत्रसाल ने बाजीराव पेशवा के
निम्न दोहा लिखकर भेजा और सहायता मागी—'जो गति गज की ग्राह
सो गति भई है आज, बाजी जात बुदेल की राखो बाजी लाज'। बाजीर
पेशवा ने, जिसकी शक्ति इस समय बहुत बढी चढी थी तत्काल ही छत्रसाल
सहायता की जिसके कारण छत्रसाल को शत्रु पर भारी विजय प्राप्त हुई
विजय के उपहारस्वरूप छत्रसाल ने भासी का इलाका पेशवा को दे दि
जहा कालान्तर मे मराठा रियासत स्थापित हो गई। भासी का राज्य रा
लक्ष्मी बाई के समय तक (1858) चलता रहा।

जसलमेर (राजस्थान)

राजपूताने की प्राचीन रियासत तथा उसका मुख्य नगर। किंवन्ती
अनुसार जैसलराव ने जैसलमेर की नीव 1155 ई० (1212 वि० स०)
डाली थी। कहा जाता है कि जैसलराव के पूर्व-पुरुषो ने ही गजनी बसाई थ
और उन्होंने ही राजा शालिवाहन के समय मे स्यालकोट बसाया था। किसी
समय जैसलमेर बडा नगर था जो अब इसके अनेक रिक्त भवनो को देखने से
सूचित होता है। प्राचीन काल मे यहा पीला मुलायम सगमरमर तथा अन्य कई
प्रकार के पत्थर तथा मिट्टिया पाई जाती थी जिनका अच्छा व्यापार था।
यह सारा नगर ही पीले सुदर पत्थर का बना हुआ है जो नगर की विशेषता
है। यहा के मदिर व प्राचीन भवन और प्रासाद भी इसी पीले पत्थर के बने हैं
और उन पर जाली का बारीक काम किया हुआ है। जैसलमेर के प्राचीन
ऐतिहासिक स्मारको मे सर्वप्रमुख यहा का किला है। यह 1155 ई० मे
निर्मित हुआ था। यह स्थापत्य का सुदर नमूना है। इसमे बारह सौ घर हैं।
15वी शती मे निर्मित जैन मदिरो के तोरणो, स्तभो, प्रवेशद्वारो आदि पर जो
बारीक नक्काशी व शिल्प प्रदर्शित है उसे देख कर दाता तले उगली दबानी
पडती है। कहा जाता है कि जावा, बाली आदि प्राचीन हिंदू व बौद्ध उप
निवेशो के स्मारको मे जो भारतीय वास्तु व मूर्ति कला प्रदर्शित है उससे
जैसलमेर के जैन मदिरो की कला का अनोखा साम्य है। किले मे लक्ष्मीनाथ जी
का मदिर अपने भव्य सौंदर्य के लिए प्रख्यात है। नगर से चार मील दूर
अमरसागर के मदिर मे मकराना के सगमरमर की बनी हुई मनोहर जालिया
निर्मित हैं। जैसलमेर की पुरानी राजधानी लोद्रवापुर थी। यहा पुराने खडहरो

के बीच केवल एक प्राचीन जैनमदिर ही काल कवलित होने से बचा है। यह प्राय एक सहस्र वर्ष प्राचीन है। जैसलमेर के शासक महारावल कहलाते थे।

जोगनीपुर

दिल्ली का एक मध्ययुगीन नाम (दे० बटियागढ़)।

जोगलथेंबी (जिला नासिक, महाराष्ट्र)

इस स्थान से शकनरेश नहपान तथा शातवाहन राजा गौतमी पुत्र (द्वितीय शती ई०) के सिक्कों की एक महत्त्वपूर्ण राशि प्राप्त हुई थी। गौतमीपुत्र के सिक्के वास्तव में नहपान की ही रजतमुद्राएं हैं जिन पर गौतमीपुत्र ने अपना नाम अंकित करवा दिया था। इससे महाराष्ट्र में शकवंशीय नहपान के पश्चात्, शातवाहन (ब्राह्मण) राजाओं का शासन सिद्ध होता है।

जोगीमारा (म० प्र०)

भूतपूर्व सरगुजा रियासत मे, लक्ष्मणपुर से 12वें मील पर रामगिरि-रामगढ पहाडी मे जोगीमारा नामक शैलकृत्त गुफा है जिसमे लगभग 300 ई० पू० के रंगीन भित्तिचित्र प्राप्त हुए हैं। चित्रों का निर्माणकाल डा० ब्लाख ने यहा से प्राप्त एक अभिलेख के आधार पर निश्चित किया है। जोगीमारा के भित्तिचित्र जो भारत के सर्वप्राचीन भित्तिचित्र हैं, गर्द और कालिख से भरे हुए जान पडते हैं। चित्र धुंधले और भाडे से है किंतु इसका कारण यह है कि किसी ने मूलचित्रों को सुधारने का प्रयत्न करने मे उन्हे बिगाड दिया है जिससे असली चित्रों की स्पष्ट, सुंदर और पुष्ट रेखाएँ ऊपर की भद्दी लकीरों के नीचे दब सी गई हैं। चित्रों में भवनो, पशुओं और मनुष्यों की आकृतियो का आलेखन किया गया है। चित्रों के किनारों पर मकर आदि जलजंतुओं का चित्रण है। जोगीमारा की चित्रणशैली अर्धविकसित अवस्था मे है किंतु उसमे अजंता की भावी उत्कृष्ट कला का क्षीण सा आभास दृष्टिगोचर होता है। जोगीमारा चित्रों मे से कुछ जनधर्म से संबंधित हैं। जोगीमारा गुफा के पार्श्व मे ही सीताबोंगा नामक गुफा है जो प्राचीन काल मे प्रेक्षागार या नाट्यशाला के रूप मे प्रयुक्त होती थी। कुछ विद्वानो का मत है कि जोगीमारा गुफा प्रेक्षागार की नटियों का प्रसाधन कक्ष थी। किंतु यहा के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि यह गुफा वरुण के मंदिर के रूप मे मान्य समझी जाती थी।

जोगेश्वरी (महाराष्ट्र)

गोरेगाव स्टेशन से 21 मील दक्षिण मे अबोली ग्राम के निकट, जोगेश्वरी (=जोगेश्वर या योगेश्वरी) का विशाल गुहामंदिर है जो इलौरा के कैलास-

मंदिर के अतिरिक्त भारत का सबसे विशाल गुहामंदिर माना जाता है। इसका निर्माण काल 7वीं 8वीं शती ई० (उत्तर गुप्तकाल) है। गुफा का अधिकांश भूगर्भ में बना है। इसका पत्थर भुरभुरा है और इसी कारण अनेक मूर्तियां और गुहास्तंभ आदि समय के प्रवाह में नष्ट भ्रष्ट हो गए हैं। गुहा में शिव आदि हिंदू देवों की सुंदर मूर्तियां थीं जो अब जीर्णशीर्ण अवस्था में हैं। इनका कलात्मक संबंध एलिफेंटा की मूर्तियों से स्थापित किया जा सकता है। जोगेश्वरी की गुफा में जलनिर्यात का सुंदर प्रबंध किया गया था।

जोता = जोतिक

जोतिक

महाभारत सभा० 32,11 में नकुल की दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में उत्तर ज्योतिष (या पाठान्तर—ज्योतिक) के नकुल द्वारा जीते जाने का वर्णन है। श्री वा० श० अग्रवाल के मतानुसार यह उत्तरपश्चिम हिमालय में स्थित जोता नामक स्थान हो सकता है—दे० उत्तरज्योतिष।

जोधपुर (राजस्थान)

भूतपूर्व जोधपुर रियासत का मुख्य नगर। रियासत का मारवाड़ भी कहते थे। यहां के राजपूत राजा कन्नौज के राठौड़ नरेश जयचंद के वंशज हैं। मूलतः ये राष्ट्रकूटों की एक शाखा से संबंधित थे जो कन्नौज में, 946 959 ई० के बीच में, जाकर बस गई थी। 1194 ई० में जयचंद के मु० गोरी द्वारा पराजित होने पर उसका एक भतीजा सीहाजी मारवाड़ चला आया और यहां आकर उसने खेड़ में राजधानी बनाई (1212 ई०)। 1381 ई० में राजधानी मंडोर लाई गई और तत्पश्चात् 1459 ई० में जोधपुर। इसका कारण यह था कि मेवाड़ के नाबालिग शासक के अभिभावक चौंडा ने मंडोरनरेश रनमल को युद्ध में हरा दिया जिससे रनमल के पुत्र जोधा को मंडोर छोड़कर भागना पड़ा। यद्यपि उसने मंडोर पर 1459 ई० में पुनः अधिकार कर लिया किंतु सुरक्षा के विचार से एक वर्ष पहले वह जोधपुर के गिरिदुर्ग में जाकर बस गया था और वहीं अगले वर्ष उसने जोधपुर नगर की नींव डाली। इसका शासनकाल 1438 से 1488 ई० तक था। जोधपुर के राठौर राजा मालदेव ने 1543 ई० में शेरशाह सूरी से युद्ध किया और 1562 ई० में अकबर से। इसके पश्चात जोधपुर-नरेश मुगलों के सहायक और मित्र बन गए। औरंगजेब के समय में राजा जसवंतसिंह यहां के राजा थे। वे पहले दारा के साथ रहे और उसकी पराजय के पश्चात औरंगजेब के सहायक बने किंतु मुगल सम्राट का उन पर कभी पूर्ण विश्वास न रहा। उनकी 1671 ई० में पेशावर के निकट जमरूद में,

जहा वे युद्ध पर गए थे देहात हो गया। इसके पश्चात औरगजेब ने जोधपुर पर आक्रमण करके रियासत पर अधिकार कर लिया और जसवतसिंह के अवयस्क पुत्रो को कैद कर लिया। ऐसे आडे समय मे उनकी रानी को राज्य के सरदारो, वीर दुर्गादास और गोपीनाथ से बहुत सहायता मिली। ये, अवयस्क अजितसिंह को बडे कौशल से मुगलो की कैद से छुडाकर मेवाड लाए। यहा से इन्होने 1701 ई० मे मडौर को पुन हस्तगत कर लिया और 1707 ई० तक शेष रियासत को भी य अपने अधिकार म ले आए। अजित सिंह ने अपनी पुत्री इद्रकुमारी का मुगल नरेश फरुखसियर से विवाह किया था। राजस्थान के इतिहास मे इस प्रकार के दूषित विवाह का यह अतिम उदाहरण कहा जाता है।

जाधपुर नगर लगभग छ मील के घेरे म बसा हुआ है। बीच बीच म पहाडिया भी हैं। पश्चिम की ओर एक पहाडी पर जोधाजी का बनवाया हुआ किला है उसी के नीचे से बस्ती आरभ हो जाती है। किले की नीव ज्येष्ठ शुक्ला 11, वि० स० 1516 (1459 ई०) को रखी गई थी। ज़िला 600 फुट ऊची पहाडी पर स्थित है और इसका विस्तार लगभग 500 गज × 250 गज हैं। इसके जयपोल और फतहपाल नामक दो प्रवेशद्वार ह। परकोटे की ऊचाई 20 फुट से 120 फुट तक और मोटाई 12 फुट से 70 फुट तक है। दुग के भीतर सिलहखाना (शस्त्रागार) मोतीमहल और जवाहर खाना आदि भवन अवस्थित है। सिलहखाने मे सैकडो प्रकार के शस्त्रास्त्र हैं। उन पर सोने चादी की अच्छी कारीगरी है। ये इतन भारी हैं कि साधारण मनुष्य इन्हे उठा भी नही सकता। मोतीमहल क प्रकोष्ठो की भित्तियो तथा छतो पर सोने की अनुपम कारीगरी प्रदर्शित है। किल के उत्तर की ओर ऊची पहाडी पर थडा नामक एक भवन है जो सगमरमर का बना है। जोधपुर नरेश जसवतसिंह और अन्य कई राजाओ के समाधिस्थल यही बने है। थडा ऊचे और चौडे चबूतरे पर स्थित है। इसके पाश्र्व मे एक प्राचीन सरोवर भी है। किले के पश्चिमी द्वार पर राठौडो की कुलदेवी चामुडा का मदिर है।

जोलन (ज़िला टाक, राजस्थान)

1953 म इस स्थान पर प्राचीन काल के अनेक भग्नावशेषो की खोज की गई थी। इनका अनुसधान पूर्ण रूप स अभी नही किया गया है। टाक के अन्य स्थान जहा से प्राचीन अवशेष मिल हैं ये हैं—रेढ, नगरी, बगरी, पिराना आदि।

जोशीमठ=ज्योतिमठ (ज़िला गढवाल)

बदरीनाथ के 19 मील नीचे प्राचीन तीर्थ जहा शकराचार्य का मठ है।

इसे ज्योतिर्लिंग का स्थान माना जाता है। जोशीमठ मे मध्यकाल मे गढवाल के कत्यूरी नरेशो की राजधानी थी। कस्बे मे वासुदेव का अति प्राचीन मदिर है जिसकी मूर्ति सुघड और सुदर है। दूसरा मदिर नरसिंह का है। मूर्ति छोटी है किंतु चमत्कारपूर्ण समझी जाती है। पास ही शकराचार्य के निवासस्थान की गुफा है और वह शीमू (शहतूत) वृक्ष भी जहा किंवदती के अनुसार बठकर उन्होने अपने महान ग्रथो की रचना की थी।

जोहिला

शोण (=सोन) की सहायक नदी जो महाभारत वन० 85,8 मे वर्णित ज्योतिरथ्या या सभा० 9,21 मे उल्लिखित ज्यष्ठिला है।

जौगडा (बरहमपुर तालुका, ज़िला गजम, उडीसा)

मौर्यसम्राट् अशोक की 14 मुख्य धर्मलिपियो मे से 1 से 10 तक और दो कलिंगलेख जौगडा की एक चट्टान पर अकित हैं। यह स्थान अशोक के साम्राज्य की पूर्वी सीमा पर रहा होगा क्योकि मुख्य धर्मलिपिया अशोक ने अधिकतर अपने साम्राज्य की सीमा पर स्थित महत्वपूर्ण नगरो या कस्बो म ही अकित करवायी थी। दे० कालसी, गिरनार, धौली, मानसेहरा, शहबाजगढी, सोपारा।

जौनपुर (उ० प्र०)

यह नगर गोमती के किनारे बसा है। प्राचीन किंवदती के अनुसार जमदग्नि ऋषि के नाम पर इस नगर का नामकरण हुआ था। जमदग्नि का एक मदिर यहा आज भी स्थित है। यह भी कहा जाता है कि इस नगर की नीव 14वीं शती मे जूनाखा ने जो बाद मे मु० तुगलक के नाम से दिल्ली का सुलतान हुआ, डाली थी। इसका प्राचीन नाम यवनपुर भी बताया जाता है। 1397 ई० मे जौनपुर के सूबेदार ख्वाजाजहा ने दिल्ली के सुलतान मु० तुगलक की अधीनता को ठुकराकर अपनी स्वाधीनता की घोषणा कर दी और शर्की (= पूर्वी) नामक एक नए राजवश की स्थापना की। इस वश का यहा प्राय 80 वर्षों तक राज्य रहा। इस दौरान मे शर्की सुलतानो ने जौनपुर म कई सुदर भवन, एक किला, मक्बरा तथा मसजिदें बनवाईं। सर्वप्रसिद्ध मसजिद अताला 1408 ई० मे बनी थी। कहा जाता है कि इस मसजिद के स्थान पर पहले अतला (या अताला) देवी का मदिर था जिसकी सामग्री से यह मसजिद बनाई गई। अतला देवी का मदिर प्राचीनकाल म केरारकोट नामक दुर्ग के अदर स्थित था। जामा मसजिद को इब्राहीमशाह ने 1438 ई० मे बनवाना प्रारभ किया था और इसे 1442 ई० म इसकी बेगम राजीबीबी ने पूरा करवाया था।

जामा मसजिद एक ऊचे चबूतरे पर बनी है जिस तक पहुँचने के लिए 27 सीढिया हैं। दक्षिणी फाटक से प्रवेश करने पर 8वी शती का एक सस्कृत लेख दिखलाई पडता है जा उलटा लगा हुआ है। इससे इस स्थान पर प्राचीन हिंदू मदिर का विद्यमान होना सिद्ध होता है। दूसरा लेख तुगरा अक्षरो मे अकित है। मसजिद के पूर्वी फाटक को सिकदर लोदी ने नष्ट कर दिया था। 1417 ई० म प्राचीन विजयचद्रमदिर के स्थान पर खालिस मुख्लीस मसजिद (या चार उगली मसजिद) को सुलतान इब्राहीम के अमीर खालिसखा ने बनवाया था। इसके दरवाजो पर कोई सजावट नही हैं। मुख्य दरवाजे के पीछे एक वर्गाकार स्थान चपटी छत से ढका हुआ है। यह छत 114 खभो पर टिकी हुई है और ये खभे दस पक्तियो मे विन्यस्त हैं। मुख्य द्वार के बाईं ओर एक छोटा काला पत्थर है जो जनश्रुति के अनुसार किसी भी मनुष्य के नापने से सदा चार अगुल ही रहता है। नगर के दक्षिणी पूर्वी कोण पर चचकपुर या झझर मसजिद थी जिसका केवल एक स्तभ ही अवशिष्ट है। नगर के उत्तर पश्चिम की ओर बेगमगज ग्राम मे मुहम्मदशाह की पत्नी राजी बीबी की मसजिद लालदरवाजा नाम से प्रसिद्ध है। इसकी बनावट जौनपुर की अन्य मसजिदो के समान ही है किंतु इसकी भित्तिया अपेक्षाकृत पतली हैं और केन्द्रीय गुबद के दोनो ओर दो तले वाले छोटे कोष्ठ स्त्रियो के लिए बने हुए हैं। (राजी बीबी का देहान्त इटावा म 1477 ई० मे हुआ था) इस मसजिद के पास इ होने एक खानकाह, एक मदरसा और एक महल भी बनवाया था और सब इमारतो को परकोटे से घेर कर लाल रग के पत्थर का फाटक लगवाया था। जौनपुर की सभी मसजिदो का नक्शा प्राय एक सा है। इनके बीच के खुले आगन के चतुर्दिक् जो कोठरिया बनी हैं वे शुद्ध हिंदू शली म निर्मित हैं। यही बात भीतर की वीथिया के लिए भी कही जा सकती है। हिंदू प्रभाव छोटे चौकोर स्तभो और उन पर आधत अनुप्रस्थ सिरदलो और सपाट पत्थरो से पटी छतो म पूण रूप से परिलक्षित होता है, किंतु मसजिदो के मुख्य दरवाजे पूरी तरह से महराबदार हैं, जो विशिष्ट मुसलिम शैली है। ऐसा जान पडता है कि इन मसजिदो को बनाने मे प्राचीन हिंदूमदिरो की सामग्री काम मे लाई गई थी और शिल्पी तथा निर्माता भी मुख्यत हिंदू ही थे। इसीलिए हिंदू तथा मुसलिम शैलियो का मेल पूणरूपेण एकाकार न हो सका है। जौनपुर मे गोमतीनदी के पुल का निर्माण काय मुगल सम्राट अकबर ने 1564 ई० मे प्रारभ करवाया था। यह 1569 ई० मे बनकर तयार हुआ था। यह अकबर के सूबेदार मुनीम खा के निरीक्षण मे बना था। जौनपुर के शर्की सुल्तानो के समय के तथा अन्य स्मारको को लोदी वश के मूख तथा

धर्मांध सुलतान सिकदर ने 1495 ई० मे बहुत हानि पहुँचाई। इन्हे नष्ट भ्रष्ट कर उसने अपने दरबारियो के रहने के लिए निवासस्थान बनवाए थे। जौनपुर से ईश्वरवमन मौखरी (सातवी शती ई०) का एक तिथिहीन अभिलेख प्राप्त हुआ था जो खडित अवस्था मे है। इसम धारानगरी तथा आध्रदेश का उल्लेख (शायद ईश्वरवर्मा की विजयो के सबध मे) है किंतु इसका ठीक-ठीक अर्थ अनिश्चित है। इस अभिलेख से मौखरियो के राज्य का विस्तार जौनपुर क प्रदेश तक सूचित होना है। मौखरी नरेश कन्नौजाधिप महाराज हर्ष के समकालीन थे।

जौहर=जवारि

ज्ञातक गणराज्य

पूर्वबौद्ध-कालीन गणराज्य जिसकी स्थिति वैशाली (जिला मुजफ्फरपुर, विहार) के क्षेत्र मे थी। जैनो के तीर्थंकर महावीर जो गौतम बुद्ध के सम कालीन थे, इसी राज्य के राजकुमार थे।

ज्येष्ठिल

ज्येष्ठिला नदी के तट पर तीर्थस्थान—'अथज्येष्ठिलामासाद्य तीर्थं परम दुलभम्'। इसका चपकारण्य के पश्चात उल्लेख है। दे० ज्येष्ठिला, चपकारण्य।

ज्येष्ठिला

'तृतीया ज्येष्ठिला चैव शोणश्चापि महानद, चर्मण्वती तथा चव पर्णाशा च महानदी'—महा० सभा० 9,21 यहा शोण या सोन के साथ इस नदी का वणन है जिससे वन० 85,8 म उल्लिखित ज्योतिरथ्या, और ज्येष्ठिला एक ही जान पडती हैं। ज्येष्ठिला सोन की सहायक नदी—वतमान जोहिला है जैसा नाम साम्य से भी प्रकट है। वन० 84,134 मे उल्लिखित तीर्थ ज्येष्ठिल इसी नदी के तट पर सम्भवत ज्येष्ठिला-शोण सगम पर अवस्थित रहा होगा।

ज्योतिरथ्या

शोण (=सोन, जो म० प्र० और विहार म बहती है) की एक उपनदी। इन दोनो के सगम पर प्राचीन काल म एक तीर्थ था जिसका निर्देश महाभारत वन० 85,8 म है—'शोणस्यज्योतिरथ्यायाः सगमे नियत शुचि तर्पयित्वापितन देवानग्निष्टोमफललभेत'। बहुत सभव है कि ज्योतिरथ्या सभा० 9,21 म उल्लिखित ज्येष्ठिला है जिसका शोण के साथ ही उल्लेख है। यदि यह अभिज्ञान ठीक है तो ज्योतिरथ्या और ज्येष्ठिला वतमान जोहिला क ही प्राचीन नाम होने चाहिए।

ज्योतिमठ=जोशीमठ

ज्वाला (नदी)

इस नदी का उद्गम अमरकटक से 4 मील उत्तर की ओर है जहा ज्वालेश्वर महादेव का प्राचीन मदिर स्थित है। इस नदी का स्कदपुराण, रेवाखड म उल्लेख है।

झर्वा (म० प्र०)

इस स्थान पर पूवमध्ययुगीन इमारतो के ध्वसावशेष स्थित है।

झांसी (उ० प्र०)

झासी मध्यकालीन नगर है। यहा का दुग ओडछा नरेश वीरसिहदेव बुदेला का बनवाया हुआ है। इसका 1744 ई० मे मराठा सरदार नारूशकर ने परिवर्धित किया था और इसकी प्राचीर शिवराव भाऊ न बनवाई थी (1796-1814 ई०)। ओडछा के राजा छत्रसाल ने जैतपुर के युद्ध के पश्चात्, झासी का इलाका बाजीराव पशवा का दे दिया था। इस प्रकार झासी व परिवर्ती प्रदेश मराठा के हाथ मे आया और झासी की रानी लक्ष्मीबाई के पति गगाधर राव के पूवजो न यहा स्वतत्र रियासत स्थापित की। 1857 ई० स पहले डलहौजी न झासी की रानी के दत्तकपुत्र दामोदर रावको स्वीकृति प्रदान करन स इकार कर दिया जिसके कारण रानी झासी से अग्रेजो का विरोध ठन गया और लक्ष्मीबाई की वीरता एव शौय और स्वतत्रता के लिए बलिदान होने की कहानी भारतीय इतिहास के पन्नो मे अमिट अक्षरो मे लिखी गई। झासी का किला नगर के निकट ही स्थित है। इसमे लक्ष्मीबाई का निवास-स्थान था। इसके भीतर रानी का निजी महादेव मदिर तथा उसका रमणीक उद्यान स्थित है। वह स्थान भी किले के परकोटे पर है जहा से अग्रेजो सेना के किला घेर लेने पर हताश होकर रानी अपने प्रिय घोडे पर सवार होकर नीचे कूद गई थी और फिर बिना रुके राता रात कालपी जा पहुची थी। किले पर जगह जगह वे झरोखे भी दिखाई दते हैं जहा से रानी की सेना ने, जिसमे उसकी स्त्रीसना भी थी, बाहर स्थित अग्रेजी सेनाओ पर गोलाबारी की थी। लक्ष्मीबाई का एक अन्य प्रासाद नगर म था जो अब कोतवाली का भवन कहलाता है। इसमे वह झासी के छोडन के पूव रहती थी। उसके पति गगाधर राव की समाधि नगर म है। इसके अतिरिक्त राजचद्रराव की समाधि, मेहदी बाग, लक्ष्मी मदिर आदि ऐतिहासिक महत्व के स्थल है। लक्ष्मीमदिर के निकट अनेक मध्यकालीन मूर्तिया हैं जिनम विष्णु, इन्द्र और देवी की प्रतिमाए कलापूण हैं।

झारखड

उडीसा का एक भाग जिसका उल्लेख मध्ययुगीन साहित्य मे मिलता है —'मेवार ढुडार मारवाड औ बुदेलखड झारखड बाधौ धनी चाकरी इलाज की,—शिवराजभूषण–111 यह नाम अब भी प्रचलित है। सभवत घने जगलो का इलाका होने से ही यह झारखड (झाड=वृक्ष+खड=प्रदेश) कहलाता है।

झूसो (जिला इलाहाबाद)

प्रयाग मे गगा के दूसरे तट पर अतिप्राचीन स्थान है। इसका पूव नाम प्रतिष्ठान या प्रतिष्ठानपुर था। प्रतिष्ठान का तीथ के रूप मे उल्लेख महाभारत मे है—'एवमेव महाभाग प्रतिष्ठाने प्रतिष्टिता'—वन० 85,114 यहा चद्रवशी राजाओ की राजधानी थी। पौराणिक कथा के अनुसार चद्रवश मे पुरुरवा एल प्रथम राजा हुए जो मनु की पुत्री इला के पुत्र थे। (एक किंवदती है कि इलाहाबाद का प्राचीन नाम इलावास था जिसे अकबर ने इलाहाबाद कर दिया था) इनके वशज ययाति के पाच पुत्रो मे से पुरु ने प्रतिष्ठानपुर और उसके समीपवर्ती प्रदेश पर सवप्रथम अपना शासन स्थापित किया था। झूसी म प्रागैतिहासिक काल की कई गुफाए भी हैं। प्राचीनकाल के खडहर दा ढूहो के रूप मे झूसी रेलवे स्टेशन से एक मील दक्षिण पश्चिम की ओर अवस्थित हैं। एक ढूह के ऊपर समुद्रकूप नामक एक प्रसिद्ध प्राचीन कूप है।

झेलम

पजाब की प्रसिद्ध नदी झेलम का वैदिक नाम वितस्ता था। इस नाम के कालातर मे कई रूपातर हुए जसे पजाबी मे विहत या वीहट, कश्मीरी म व्यथ, ग्रीक भाषा मे हायडेसपीज (Hydaspes) आदि। सभवत, सवप्रथम मुसलमान इतिहास लेखका न इस नदी को झेलम कहा क्योकि यह पश्चिमी पाकिस्तान के प्रसिद्ध नगर झेलम के निकट बहती थी और नगर के पास ही नदी को पार करने के लिए शाही घाट या शाह गुजर बना हुआ था। इस प्रकार इस नगर के नाम पर नदी का वतमान नाम प्रसिद्ध हो गया। झेलम का जो प्रवाह मा प्राचीन काल म था प्राय अब भी वही है केवल चिनाब झेलम सगम का निकटवर्ती भाग काफी बदल गया है (दे० रेवर्टी दि मिहरान ऑव सिंध एड इट्ज ट्रिब्यूट्रीज—पृ० 329-32, जनल एशियाटिक सोसायटी ऑव बगाल, भाग 1, 1892, पृ० 318)

टकारा (मारवी, काठियावाड, गुजरात)

आय समाज के सस्थापक महर्षि दयानद सरस्वती के जन्मस्थान के रूप म

यह छोटा सा ग्राम प्रसिद्ध है। इनका जन्म 1824 ई० म हुआ था। टकारा डेमी नदी के तट पर बसा हुआ है।

टडवा (जिला गोंडा, उ० प्र०)

यह स्थान सहेतमहेत (श्रावस्ती) से 8 मील पश्चिम की ओर स्थित है जहा किंवदंती के अनुसार अंतिम बुद्ध कश्यप ने जन्म लिया था। यहा एक प्राचीन स्तूप के चिह्न भी दिखाई देते हैं। फाह्यान ने इसी स्थान पर एक बडे स्तभ का वर्णन किया है संभवत जिसके खडहर भी यहा मिले है। डूह के उत्तर मे एक मील लबा ताल है जिसे सीता दोहर कहते है। दे० सीतादोहर।

टिकरी (जिला सुलतानपुर, उ० प्र०)

इस स्थान से बौद्धकालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं जिनका अनुसधान पूर्णरूप से अभी नही हुआ है।

टिपारा (बगाल)

प्राचीन नाम त्रिपुरा। प्राचीन काल मे इसकी स्थिति कामरूप में मानी जाती थी—(दे० तारातत्र)

टीप (जिला बिजनौर, उ० प्र०)

यह खेडा मडावर के निकट स्थित है। यहा कुषाणवंशीय शैव नरेश वासुदेव का एक सिक्का मिला था जिससे इस बस्ती की प्राचीनता सिद्ध होती है। मडावर (=मतिपुर) स्वय भी बहुत प्राचीन कस्बा है।

टोटाणा दे० तोपायण

टोडायूर (मद्रास)

एक प्राचीन शिवमदिर यहा का मुख्य स्मारक है। इसमे कणाश्म या ग्रेनाइट का सुदर फर्श है और स्तभ विशेष रूप से कलापूर्ण शैली मे बने हैं। मदिर का जीर्णोद्धार 1955 56 मे पुरातत्व विभाग द्वारा किया गया था।

टोडारामसिंह (राजस्थान)

हाडा रानी का कुड यहा का प्राचीन स्मारक है। यह राजस्थान की मध्य-युगीन शिल्प कला का सुदर उदाहरण है।

टौंस

तमसा नदी अयोध्या (उ०प्र०) से प्राय 12 मील दक्षिण की ओर बहती हुई लगभग 36 मील की यात्रा के पश्चात अकबरपुर के पास बिस्वी नदी म मिल जाती है। इस स्थान के पश्चात् संयुक्त नदी की धारा का नाम टौंस हो जाता है। टौंस तमसा का ही बिगडा हुआ रूप है। तमसा का रामायण म उल्लेख है। दे० तमसा।

ट्रावनकोर=तिरुवांकुर

ठट्टा (सिंध, पाकिस्तान)

यह नगर 1340 ई० मे बसाया गया था। उत्तरमध्यकाल तथा मुगलों के शासनकाल मे ठट्टा, सिंध प्रांत का एक प्रमुख नगर था। मुहम्मद तुगलक की मृत्यु 1351 ई० मे इसी स्थान के निकट हुई थी।

डभाल=डाभाल

जबलपुर (म० प्र०) का परिवर्ती क्षेत्र। पांचवी शती ई० के अंतिम तथा छठी शती ई० के प्रारंभिक वर्षों मे यहां परिव्राजक महाराजाओं का शासन था। इनके अनेक अभिलेख इस प्रदेश से प्राप्त हुए हैं जिनमे डभाल या डाभाल का नामोल्लेख है। परवर्तीकाल मे इसे डाहाल भी कहते थे। त्रिपुरी इसी के अंतगत थी। खोह दानपट्ट से ज्ञात होता है कि परिव्राजक महाराज हस्तिन को डभाल तथा अन्य अट्ठारह राज्य उत्तराधिकार मे प्राप्त हुए थे। राजपूतों के उत्कर्षकाल मे डभाल मे हैहय अथवा त्रिपुरी के कलचुरियों का राज्य था। दे० डाहल

डलमऊ (जिला राय बरेली, उ० प्र०)

रायबरेली से 44 मील दूर यह छोटी सी अतिप्राचीन बस्ती है। कहा जाता है कि यहां प्राचीनकाल मे दालभ्य ऋषि का आश्रम था और इस स्थान का नामकरण इन्हीं के नाम पर हुआ था। यहां एक किले के खंडहर हैं जो वास्तव मे दो बौद्ध स्तूपों के ध्वंसावशेष हैं।

डहल=डाहल

डहलमडल दे० डाहल

डाकोर (जिला खेडा, गुजरात)

यह छोटा सा ग्राम गुजरात का एक प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ है। कहा जाता है कि 1235 ई० मे कृष्णभक्त बुढान नामक ब्राह्मण ने रणछोड जी की मूर्ति को यहां प्रतिष्ठापित किया था।

डाभाल दे० डभाल

डामन=दमन

डावक

गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति मे डावक का उल्लेख साम्राज्य के प्रत्यंत देशों के प्रसंग मे किया गया है—'समतट डावक कामरूप नेपाल कर्तृपुरादि प्रत्यन्त नृपतिभि '—डावक का अभिज्ञान पूर्व बंगाल (पाकि०) के ढाका तथा उत्तरी ब्रह्मदेश के टगाग के निकटस्थ प्रदेश के साथ किया गया है।

डावक, समुद्रगुप्त के साम्राज्य की पूर्वी सीमा पर स्थित था।

डाहल = डाहाल

बुंदेलखंड में जिला जबलपुर का निकटवर्ती भाग, जिसका गुप्तकालीन नाम डभाल या डाभाल था। परवर्ती काल मे जब यहा त्रिपुरी के कलचुरियो का राज्य था, इसे डहल या डाहल कहते थे। मलकापुर अभिलेख के अनुसार गगा और नमदा के बीच का प्रदेश डहलमडल कहलाता था—'भागीरथी नमदयोमध्य डहलमडलम्।'

डिबाई (जिला बुलदशहर, उ० प्र०)

यह नगर 1029 ई० म डुडगढ नामक एक प्राचीन बस्ती के खठहरा पर बसाया गया था। एक किले के अवशेष यहा मिले है जो निश्चितरूप से डुडगढ की पुरानी गढी के परिचायक हैं।

डीग (जिला भरतपुर, राजस्थान)

मथुरा-भरतपुर माग पर, आगरे से 44 मील पश्चिमोत्तर मे, और भरतपुर स 22 मील उत्तर की ओर स्थित है। यह नगर लगभग सौ वर्षों से उपेक्षित अवस्था म है किंतु आज भी यहा भरतपुर के जाट-नरेशो के पुराने महल तथा अन्य भवन अपने भव्य सौदय के लिए विख्यात हैं। नगर के चतुर्दिक् मिट्टी की चहारदिवारी है और उसके चारो ओर गहरी खाई है। मुख्य द्वार शाहबुर्ज कहलाता था। यह स्वय ही एक गढी के रूप मे निर्मित था। इसकी लबाई-चौडाई 50 गज है। प्रारभ मे यहा सनिको के रहने के लिए स्थान था। मुख्य दुग यहा से एक मील है जिसके चारो ओर एक सुदृढ प्राकार है। बाहर किले के चतुर्दिक मार्गो की सुरक्षा के लिए छोटी छोटी गढिया बनाई गई थी जिनम गोपालगढ जो मिट्टी का बना हुआ किला है सबसे अधिक प्रसिद्ध था। शाहबुज से यह कुछ ही दूर पर है। इन किला की मोर्चाबदी के अदर डाग का सुदर सुसज्जित नगर था जो अपने वैभवकाल मे (18वी शती मे) मुगला की तत्कालीन अस्तो मुख राजधानियो दिल्ली तथा आगरे के मुकाबले मे कही अधिक शानदार दिखाई देता था। भरतपुर के राजा बदनसिंह ने दुग के अदर पुराना महल नामक सुदर भवन बनवाया था। बदनसिंह के उत्तराधिकारी राजा सूरजमल के शासन काल म 7 फरवरी 1960 ई० को बबर आक्राता अहमदशाह अब्दाली ने डीग पर आक्रमण किया किंतु सौभाग्य से वह यहा अधिक समय तक न टिक। और मेवात की ओर चला गया। जवाहरसिंह न जब अपने पिता सूरजमल के विरुद्ध विद्रोह किया तो उसने डीग मे ही स्वय को स्वतत्र शासक घोषित किया था। डीग का प्राचीन नाम दीघवती कहा जाता है।

डुग्गर

जम्मू (कश्मीर) का इलाका। संभवतः महाभारत सभा० 52,13 में इस प्रदेश को दार्व नाम से अभिहित किया गया है—'कैराता दरदा दार्वा शूरा वैयमकास्तथा, औदुम्बरा दुर्विभागा पारदा बाह्लिकैः सह'। संभवतः डुग्गर (डोगरा राजपूतों का मूल निवासस्थान) दार्व का ही अपभ्रंश है।

डेगलूर (जिला नांदेड, महाराष्ट्र)

गंडा महाराज के प्राचीन मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

डेमी

(सौराष्ट्र, गुजरात) प्राचीन दधिमती।

डेमेट्रिओपोलिस दे० दत्तामित्री

डोंगरगढ़ (म० प्र०)

यह गोंदिया-कलकत्ता रेलमार्ग पर स्टेशन है। किंवदंती है कि यहां पहाड़ी पर किसी समय एक दुर्ग था जिसमें माधवानल-कामकन्दला नामक प्रसिद्ध उपाख्यान की नायिका कामकंदला का निवासस्थान था। इसी दुर्ग में कामकंदला की भेंट माधवानल से हुई थी। यह प्रेम कहानी छत्तीसगढ़ में सर्वत्र प्रचलित है। डोंगरगढ़ की पहाड़ी पर प्राचीन मूर्तियों के अवशेष मिलते हैं। इसकी मूर्तिकला पर गौड़ संस्कृति का पर्याप्त प्रभाव दिखाई देता है। ये मूर्तियां अधिकांश में 15वीं 16वीं शती ई० में बनी थीं। स्टेशन के समीप की पहाड़ी पर बिमलाईदेवी का सिद्धपीठ है। पहाड़ी के पीछे तपसी काल नामक एक दुर्ग है जिसके अंदर एक विष्णु मंदिर अवस्थित है। कुछ लोगों के मत में बिमलाई देवी मैनाजाति के आदिनिवासियों की कुलदेवी है। धमतरी (जिला रायपुर) में भी इस देवी का थान है। छत्तीसगढ़ में बिमलाई गढ़ नामक एक दुर्ग भी है जो इसी देवी के नाम पर प्रसिद्ध है। वास्तव में, छत्तीसगढ़ के कुछ इलाकों के आदिवासियों की इस देवी का स्थानीय संस्कृति में प्रमुख स्थान है।

डोंगरताल (जिला नागपुर, महाराष्ट्र)

गढ़मंडला के राजा संग्रामसिंह के बावन गढ़ों में डोंगरताल की भी गणना थी। इन्हीं गढ़ों के कारण इनका शासित प्रदेश गढ़मंडला कहलाता था। संग्रामसिंह अकबर की समकालीन वीरांगना दुर्गावती के श्वसुर थे।

डोमिनगढ़ (जिला बस्ती, उ० प्र०)

प्राचीन बौद्ध स्मारकों के अवशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। जिला बस्ती तथा नेपाल की सीमा पर बुद्ध के समय में लुंबिनी तथा कपिल

वस्तु नामक प्रसिद्ध स्थान थे।

डयू

पश्चिमी समुद्रतट पर भूतपूर्व पुतगाली बस्ती। इसका प्राचीन नाम देव या देवबदर था। इसे दीव भी कहते थे। इसका क्षेत्रफल 20 वग मील है। पुतगाल को यह क्षेत्र 16वी शती ई० मे गुजरात के सुलतान से प्राप्त हुआ था। प्रारभ मे पुतगालियो ने अपनी भारतीय बस्तियो की राजधानी यही बनाई थी। उस समय यहा का व्यापार उन्नतिशील था तथा जनसख्या भी पर्याप्त थी। कालानर मे राजधानी गोआ मे बन जाने से डयू उजड गया और यहा का व्यापारिक महत्त्व भी जाता रहा। 1961 मे यह स्थान भारत गणराज्य का अभिन्न अग बन गया और पुतगालियो को अपनी सभी भारतीय बस्तियो से सदा के लिए बिदा लेनी पडी।

ढकगिरि (गुजरात)

शत्रुजयपवत का एक नाम। यह गुजरात के प्रसिद्ध प्राचीन नगर वल्लभीपुर के निकट स्थित है और जनो का पवित्र स्थल है। सातवाहन के गुरु और पादलिप्त सूर के शिष्य सिद्ध नागर्जुन ढकगिरि म रहकर रसविद्या या अल कीमिया की साधना किया करते थे। इस तथ्य का उल्लेख जैन ग्रथ विविध तीथ कल्प (पृ० 104) म है—'ढक पव्वए रायसी हराय उत्तस्स भोपाल नामिय धूअ रूप लावण्ण सप न दठ्ठूण जायाणुरायस्स त सेवमाणस्स वासु गिणोपुत्तोनागाजजुणा नाम जाओ'।

ढकरानी (दे० बावडी)

ढाका (पूव पाकि०)

ढाकेश्वरी दवी के मदिर के कारण इस नगर का नाम ढाका हुआ था—यह किंवदती प्रसिद्ध है। गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे डावक नामक स्थान का उल्लेख है जिसको साम्राज्य का प्रत्यत देश कहा गया है। इसका अभिज्ञान ढाका के परिवर्ती प्रदेश के साथ किया गया है। सभव है ढाका डावाक का ही अपभ्रश हो। ढाका मध्यकाल से उत्तर मुगलकाल तक सूती कपडे (मलमल) तथा चादी और सोन क तार की वस्तुओ के लिए ससार प्रसिद्ध था। मुसलमान बादशाहो के समय मे बगाल की राजधानी भी ढाके मे रही थी। पुतगाली, फ्रासीसी और डच व्यापारियो ने 16वी और 17वी शतियो म अपनी व्यापारिक कोठिया भी यहा बनाई थी।

ढकोला (जिला नैनीताल, उ०प्र०)

प्राचीन इमारतो क विशेष कर कत्यूरीनरेशो के शासनकाल के मदिरो

तथा भवनो के खडहरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। कहा जाता है कि प्राचीन गाविषाण देश की राजधानी यही थी (किंतु दे० गोविषाण)

ढिल्लिका

दिल्ली का पुराना मध्ययुगीन नाम। 1327 ई० के एक अभिलेख मे ढिल्लिका को हरियाना प्रदेश के अतगत बताया गया है—'देशोस्ति हरियाणाख्या पृथिव्या स्वर्गसंनिभ, ढिल्लिकाख्या पुरी यत्र तोमररस्ति निर्मिता' अर्थात पृथिवी पर हरियाणा नामक स्वग के समान देश है, यहा तोमर क्षत्रियो द्वारा निर्मित ढिल्लिका नाम की सुदर नगरी है। (हरियाणा दक्षिणी पजाब, रोहतक, हिसार आदि का इलाका है जो शायद अहीराना का बिगडा रूप है।) बाद म ढिल्लिका नाम का सबध एक कपालकल्पित कथा से जोड दिया गया जिसके अनुसार अनगपाल के शासन काल मे लोहे की लाट (=महरौली की चद्र की लाट) के ढीली रह जाने के कारण ही इस नगरी को ढिल्लिका या दिल्ली कहा गया। वास्तव मे दिल्ली नाम की व्युत्पत्ति सवथा सदेहास्पद है किंतु जसा कि उपयुक्त अभिलेख से प्रमाणित होता है ढिल्लिका (या सभवत ढिल्ली) नाम वास्तव मे प्राचीन, कम से कम मध्ययुगीन तो है ही। दिल्ली के वास्तविक या मौलिक नाम का अनुसधान करने मे यह तथ्य बहुत सहायक सिद्ध होगा।

ढिल्ली दे० ढिल्लिका

ढुढार

आमेर (जयपुर, राजस्थान) की रियासत का मध्ययुगीन तथा परवर्ती नाम जिसका उल्लख तत्कालीन साहित्य तथा लोक कथाओ म है—उदाहरणाथ दे० शिवराज भूषण, छद 111—'मेवार ढुढार मारवाड औ बुदलखड, भारखड बाधौधनी चाकरी इलाज की'। कहा जाता है कि 1129 ई० के लगभग जब ग्वालियर से कछवाहो का परिहारो न निष्कासित कर दिया तो उ होने आमेर के इलाके म मीनाओ की सहायता से ढुढार रियासत की नींव डाली। ढुढार के स्थान पर बाद म आमेर की प्रसिद्ध रियासत बनी। दे० आमेर, जयपुर।

तगण

'मारुना धेनुकाश्चैव तगणा परतगणा बाह्लिकास्तित्तिराश्चव चोला पाड्याश्च भारत' महा० भीष्म 50,51 इस श्लोक मे तगणजाति के उल्लख स ज्ञात होता ह कि तगणदेश भारत की उत्तर-पश्चिम सीमा के परे स्थित होगा। सभा० 52-53 म भी तगण और परतगण लागो का उल्लेख है—'पार दाश्च पुलिंदाश्च तगणा परतगणा'। यहा द हे मेरु और मदिर पवतो के बीच म बहने वाली शैलादा नदी के प्रदश म बताया गया है। शैलादा वतमान खोतन

नदी है। तगणदेश के पाश्व मे परतगण देश की स्थित रही हागी। श्री वा० श० अग्रवाल के मत म कुलु कागडा क पूरब का भोट क्षेत्र ही तगण का इलाका था। (दे० कादबिनी, अक्टूबर 62)

तजपुर=तजौर

तजौर (मद्रास)

पुराणा के अनुसार तजौर का प्राचीन नाम तजपुर है। तज नामक राक्षस को विष्णु ने पेरुमल का रूप धारण करके मारा था। तजपुर से ही तजावर या तजौर नाम बना है। तजौर पाराशर-क्षेत्र के नाम से भी प्रसिद्ध है। प्राचीन परपरा है कि दक्षिण भारत के लोग काशी की यात्रा क पश्चात तजौर अवश्य जाते है। तजौर नगर कावेरी नदी के दक्षिण की ओर बसा है। तजौर म दो दुग है। बडा दुर्ग नगर के उत्तर की ओर और छोटा जिसम यहा का विख्यात मदिर है, पश्चिम म है। पश्चिमोत्तर काण म दोना दुर्गों के सिर मिल गए है। बडे दुग के भीतर नगर का प्रधान भाग और प्राचीन राजमहल है। छोटे किले म बडे मदिर के उत्तर म शिवगगा नामक सरोवर है जिसके पास एक गिरजा बना हुआ है। इसके प्रवेश द्वार पर 1777 ई० अकित है। राजमहल बडे किल म है जिसका पहला भाग लगभग 1540 ई० का है। महल क आग उत्तर की ओर बडा चौगान या प्रागण है जिसके चतुर्दिक मकाना की पक्तिया है। चौगान के पूव और उत्तर म प्रवेश द्वार है। मकाना म अनक काशी के मकाना की शली मे बने हैं। राजप्रासाद से आधा मील दूर छाट किले म, दक्षिण की ओर वृहदश्वर का शिव मदिर है। मदिर के तीन ओर क़िले की दीवार और खाई तथा उत्तर की आर मैदान है। मदिर के बाहर दीवार क भीतर लगभग 13 बीघा भूमि घिरी हुइ है। मुख्य मदिर 1025 ई० म बना था किंतु इसका विशाल गोपुर 16वी० शती का है। स्तूपाकार शिखर म 13 तल है। इसका निचला भाग दोमजिला है और 80 फुट ऊचा है। इसके ऊपर के विशाल शिखर म 11 तल या खन है। इसके सहित मदिर की समस्त ऊचाई 190 फुट हो जाती है। मदिर का सरचना अति विशाल पत्थरा से निर्मित है। शिखर पर स्वण कलश चढा हुआ है। कहा जाता है कि वह भीमकाय पत्थर जिस पर कलश आधत है भार मे 2200 मन है। यह तथ्य भी अनुमेय है कि मदिर के भारी पत्थरो को पर्याप्त दूर स यहा तक लान और उपर चढाने मे कितनी कठिनाई हुई होगी क्योकि मदिर के पास कही कोई प्रस्तर खनि या पहाडी नही है। मदिर का द्वार मडप नाचा ही है और शिखर गोपुरा तथा आस पास के अन्य स्थानो से इतना अधिक ऊचा है कि उसे देखन

वाले के मन म मदिर के प्रति उच्च भावना तथा सम्मान का अनायास ही प्रादुर्भाव होता है। मदिर म एक ही पत्थर से निर्मित नदी की 16 फुट लबी और 7 फुट चौडी विशाल मूर्ति है। बडे मदिर के पार्श्व मे सुब्रह्मण्यम या कार्तिकेय का मदिर है जो 1150 ई० के लगभग बना था। इसके गोपुर की ऊचाई 218 फुट ह। दूसरा मदिर रामनाथस्वामी का है जो जनश्रुति क अनुसार श्री रामचद्र जी द्वारा स्थापित किया गया था। मदिर का विशाल बरामदा 4000 फुट लबा है। तजौर को मदिरो की नगरी समझना चाहिए क्योकि यहा 75 से अधिक छोटे बडे देवालय है। पूर्व मध्यकाल म चोलसाम्राज्य की राजधानी के रूप म यह नगरी बहुत समय तक प्रख्यात रही। चालो के पश्चात् तजोर मे नायक और मराठो न राज्य किया था।

तबपिट्ठ

(लका) महावश 28,16 मे उल्लिखित लका का एक प्राचीन नगर जिसका नाम इस स्थान से उत्पन्न होन वाल ताम्र के कारण ताम्रपीठ पड गया था। तबपिट्ठ, ताम्रपीठ का अपभ्रश है।

तबवती

मध्यमिका (चित्तौड) के स्थान पर बसी हुई प्राचीन नगरी। (दे० मध्यमिका)

तक्ष=तक्षशिला

तक्षशिला (ज़िला रावलपिंडी, प० पाकि०)

गधारदेश की राजधानी। वाल्मीकि रामायण के अनुसार गधर्वदेश (जो गधार विषय के अतर्गत था) पर भरत ने अपने मामा युधाजित् क कहन से चढाई करके गधर्वों को हराया था और इस देश के पूर्वी और पश्चिम भागो म तक्षशिला और पुष्कलावत (पुष्कलावती) नामक नगरो को क्रमश अपने पुत्र तक्ष और पुष्कल क नाम पर बसाया था—'तक्ष तक्षशिलाया तु पुष्कल पुष्कलावते, गधर्व देशे रुचिरे गाधार विषये च स' वाल्मीकि० उत्तर० 101-11। कालिदास ने रघुवश 15,89 म भी इसी तथ्य का उल्लेख किया है —'स तक्षपुष्कलौ पुत्रौ राजधान्यौ तदाख्ययो, अभिषिच्याभिषेकार्हौ रामान्ति कमगात् पुन।' तक्षशिला का वर्णन महाभारत मे, परीक्षित के पुत्र जनमेजय द्वारा विजित नगरी के रूप मे है। यही जनमेजय ने प्रसिद्ध सर्पयज्ञ किया था। छठी शती ई० पू० के पूर्व पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी म भी तक्षशिला का उल्लेख किया है। बौद्धसाहित्य, विशेष कर जातको मे तक्षशिला का अनेक बार उल्लेख है। तेलपत्त और सुसीमजातक म तक्षशिला को काशी से 2000 कोस

दूर बताया गया है। जातको मे (दे० उद्दालक तथा सेतकेतु जातक) तक्षशिला क महाविद्यालय की भी अनेक वार चर्चा हुई है। यहा अध्ययन करने के लिए दूर दूर मे विद्यार्थी आते थे। भारत के ज्ञात इतिहास का यह सवप्राचीन विश्व विद्यालय था। यहा, बुद्धकाल मे कोसल-नरेश प्रसेनजित्, कुशीनगर का बधुलमल्ल, वशाली का महाली, मगधनरश बिंबिसार का प्रसिद्ध राजवैद्य जीवक, एक अन्य चिकित्सक कौमारभृत्य तथा परवर्ती काल मे चाणक्य तथा वसुबधु इसी जगत्-प्रसिद्ध महाविद्यालय के छात्र रहे थे। इस विश्वविद्यालय मे राजा और रक सभी विद्यार्थियो के साथ समान व्यवहार होता था। जातककथाओ स यह भी ज्ञात होता है कि तक्षशिला मे धनुर्वेद तथा वैद्यक तथा अन्य विद्याओ की ऊची शिक्षा दी जाती थी। विद्यार्थी सोलह सत्रह वप की अवस्था म यहा शिक्षा के लिए प्रवश करत थे। एक शिक्षक के नियत्रण मे बीस या पच्चीस विद्यार्थी रहत थे। शिक्षकों का निरीक्षक दिशाप्रमुख आचाय (दिसापामोक्खाचारियो) कहलाता था। काशी के एक राजकुमार का भी तक्षशिला मे जाकर अध्ययन करने का उल्लेख एक जातक कथा म है। कुभकारजातक मे नग्नजित् नामक राजा की राजधानी तक्षशिला म बताई गई है। अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण करने के समय यहा का राजा आभी (Omphis) था जिसने अलक्षेंद्र को पुरु के विरुद्ध सहायता दी थी। महावशटीका मे अथशास्त्र के प्रसिद्ध रचयिता चाणक्य को तक्षशिला का निवासी बताया गया है। चाणक्य ने प्राचीन अथशास्त्रो की परपरा म आभीय के अथशास्त्र की चर्चा की है, टॉमस के अनुसार आभीय का सबध तक्षशिला ही से रहा होगा (दे० टामस—बार्हस्पत्य अथशास्त्र-भूमिका पृ० 15) चाणक्य स्वय भी तक्षशिला विद्यालय मे आचाय रहे थे। उन्होने अपने परिष्कृत एव विकसित मस्तिष्क द्वारा भारत की तत्कालीन राजनैतिक दुरवस्था को पहचाना तथा उसके प्रतीकार के लिए महान् प्रयत्न किया जिसके फलस्वरूप विशाल मौर्य साम्राज्य की स्थापना हुई। बौद्ध साहित्य से ज्ञात होता है कि *तक्षशिला विश्वविद्यालय धनुर्विद्या तथा वैद्यक की शिक्षा के लिए तत्कालीन* सभ्य ससार मे प्रसिद्ध था। जैसा ऊपर कहा गया है, गौतम बुद्ध के समकालीन मगध सम्राट बिबसार का राजवैद्य जीवक इसी महाविद्यालय का रत्न था।

तक्षशिला का प्रदेश अतिप्राचीन काल स ही विदेशियो द्वारा आक्रान्त होता रहा है। ईरान के सम्राट् दारा क 520 ई० पू० के अभिलेख मे पजाब के पश्चिमी भाग पर उसकी विजय का वणन है। यदि यह तथ्य हो तो तक्षशिला भी इस काल म ईरान के अधीन रही होगी। पाणिनि ने 4,3 93 म तक्षशिला का उल्लेख किया है। *अलक्षेंद्र के इतिहासलेखकों के अनुसार 327 ई० पू०*

मे इस देश क निवासी सुखी तथा समृद्ध थे। लगभग 320 ई० पू० म उत्तरी भारत के अन्य सभी क्षुद्र राज्यो के साथ ही तक्षशिला भी चन्द्रगुप्तमौर्य द्वारा स्थापित साम्राज्य म विलीन हो गयी। बौद्ध ग्र थो के अनुसार बिंदुसार क शासनकाल म तक्षशिला के निवासियो न विद्रोह किया किंतु इस प्रदेश क प्रशासक अशोक न उस विद्राह को शातिपूवक दबा दिया। अशोक क राज्य काल म तक्षशिला उत्तरापथ की राजधानी थी। कुणाल की करुणाजनक कहानी की घटनास्थली तक्षशिला ही थी, जिसका स्मारक कुणालस्तूप आज भी यहाँ विद्यमान है। अशोक के पश्चात उत्तर-पश्चिमी भारत मे बहुत समय तक राजनतिक अस्थिरता रही। बैक्ट्रिया या बल्ख के यूनानियो (232–100ई० पू०) तथा शक या सिथियनो (प्रथम शती ई०) तथा तत्पश्चात पार्थियनो और कुषाणो ने तीसरी शती ई० तक तक्षशिला तथा पाश्ववर्ती प्रदेशो पर राज्य किया। चौथी शती ई० म तक्षशिला गुप्तसम्राटो क प्रभावक्षत्र म रही किंतु पाचवी शती ई० मे हून या श्वेत हूणो क आक्रमणो ने तक्षशिला की सारी प्राचीन समृद्धि और सभ्यता का नष्ट कर दिया। सातवी शती ई० क तृतीय दशक मे चीनी यात्री युवानच्वाग ने तक्षशिला को उजाड पाया था। उसके लेख के अनुसार उस समय तक्षशिला कश्मीर का एक करद राज्य था। इसक पश्चात तक्षशिला का अगले 1200 वर्षों का इतिहास विस्मृति क अधकार मे विलीन हो जाता है। 1863 ई० मे जनरल कनिंघम ने तक्षशिला का यहा के खडहरो की जाच करके खोज निकाला। तत्पश्चात् 1912 से 1929 तक, सर जॉन मार्शल ने इस स्थान पर विस्तृत खुदाई की और प्रचुर तथा मूल्यवान सामग्री का उद्घाटन करके इस नगरी के प्राचीन वैभव तथा ऐश्वय को और अलग इतिहासप्रेमियो के समक्ष प्रस्तुत की। उत्खनन स तक्षशिला म तीन प्राचीन नगरो क ध्वसावशेष प्राप्त हुए ह, जिनके वतमान नाम भीर का टीला, सिरकप तथा सिरसुख ह। सबसे पुराना नगर भीर के टील क आस्थान पर था। कहा जाता है कि यह पूव बुद्ध कालीन नगर था जहा तक्षशिला का प्रख्यात विश्वविद्यालय स्थित था। सिरकप के चारो ओर परकोटे की दीवार थी। यहाँ क खडहरो से अनक बहुमूल्य रत्न तथा आभूषण प्राप्त हुए हैं जिनस इन नगरी के इस भाग की जो कुषाण राज्यकाल स पूव का है, समृद्धि का पता चलता ह। सिरसुख जो सभवत कुषाण राजाओ क समय की राजधानी है, एक चोकोर नक्श पर बना हुआ था। इन तीन नगरो क खडहरो क अतिरिक्त, तक्षशिला के भग्नावशेषो म अनेक बौद्धविहारो की नष्ट-भ्रष्ट इमारतें और कई स्तूप हैं जिनम कुणाल, धमराजिक और भल्लार मुख्य हैं। इनसे बौद्धाराम

इस नगरी का बौद्धधर्म का एक महत्वपूर्ण केंद्र होना प्रमाणित होता है। तक्षशिला प्राचीन काल मे जैना की भी तीर्थस्थली थी। पुरातन प्रबधसग्रह नामक ग्रथ म (पृ० 107) तक्षशिला के अतगत 105 जन-तीर्थ बताए गए ह। इसी नगरी को सभवत तीर्थमाला चैत्यवदन मे धर्मचक्र कहा गया है (दे० एशेंट जन हिम्स, पृ० 55)

तगारा (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

यूनानी इतिहासकार एरियन क अनुसार तगारा एरियाका नामक जिल का मुख्य स्थान था और तगारा और प्लिथान (=पैठान) दक्षिण भारत की मुख्य व्यापारिक मडिया थी। दक्षिण के सब भागो का व्यापारिक सामान तगारा म लाया जाता था और फिर वहा से बेरीगाजा (=भृगुकच्छ या भडौच) के बदरगाह को गाडिया द्वारा भेजा जाता था। भौगोलिक टॉलमी ने तगारस और प्लिथान दोनो को गोदावरी के उत्तर म बताया है। प्लिथान तो अवश्य ही पैठान या प्राचीन प्रतिष्ठान है। तगारा का अभिज्ञान ठीक ठीक नही हो सका है। एरियन और टालमी ने यह भी लिखा ह कि तगारा पैठान से 10 दिन की यात्रा के पश्चात पूर्व मे मिलता था और पेरिप्लस क अनुसार तगारा की मडी म अन्य वस्तुओ के अतिरिक्त समुद्रतट स अति सुन्दर तथा बारीक कपडा मलमल आदि भी आता था। इससे यह जान पडता है कि यह स्थान गोदावरी पर स्थित नान्देड के समीप होगा और इसका व्यापारिक सबध कलिंग देश से रहा होगा जहा का बारीक कपडा बौद्ध-काल म प्रसिद्ध था। (दे० तेर)

तत्तदेन

(बर्मा) प्राचीन भारतीय उपनिवेश जिसम अरिमदनपुर या वतमान पागन नगर स्थित था। यह नगर 849 ई० मे स्थापित हुआ था। ताम्रद्वीप या पागन नामक रियासत भी तत्त (तत्त्व?) दश मे सम्मिलित थी।

तपोगिरी

रामटेक (जिला नागपुर, महाराष्ट्र) का प्राचीन नाम है। वनवास काल मे श्रीरामचन्द्र सीता और लक्ष्मण के साथ यहा कुछ दिन ठहरे थे—ऐसी किंवदती प्रचलित है। यहा प्राचीन काल मे अनेक तपस्वियो के आश्रम थ जो इसके नामकरण का कारण है।

तपोदा

राजगृह (=राजगीर, विहार) के निकट बहने वाली नदी जिसे अब सरस्वती कहते है। इस क्षेत्र म गम पानी के सोते हैं जिनके कारण ही इस नदी का नाम

तपोदा पडा है। गौतम बुद्ध के समय तपोदाराम नामक उद्यान इसी नदी के तट पर स्थित था। बौद्ध ग्रंथो के अनुसार मगध सम्राट् बिंबिसार प्राय इस नदी मे स्नान करने के लिए जाया करते थे।

तबरहिंद

भटिंडा (पजाब) को कुछ अरब इतिहास लेखको ने जिनमे अलउतबी भी है—तबर हिंद नाम से उल्लिखित किया है। पहले सुबुक्तगीन और फिर महमूद गजनवी ने भटिंडा पर आक्रमण किया था। उस समय यहा का राजा जयपाल था जिसने उत्तर भारत के कई प्रमुख राज्यो की सहायता से आक्रमणकारियो का डट कर सामना किया था।

तमसा

(1) अयोध्या (उ० प्र०) के निकट बहने वाली छोटी नदी जिसका उल्लेख रामायण मे है। वन को जाते समय श्रीराम, लक्ष्मण और सीता ने प्रथम रात्रि तमसा तीर पर ही बिताई थी—'ततस्तुतमसातीर रम्यमाश्रित्य राघव, सीतामुद्वीक्ष्य सौमित्रिमिदवचनमब्रवीत्। इयमद्य निशापूर्वा सौमित्रे प्रहिता वन वनवासस्य भद्रते न चे त्कठितुमहसि'—वाल्मीकि० अयो० 46,1 2। वाल्मीकि० अयो० 45 32 33, 46 16, 46,28 आदि मे भी तमसा का उल्लेख है। अयोध्या० 46,28 मे वाल्मीकि ने तमसा को '(शीघ्रगामाकुलावर्ता तमसा मतरन्नदीम') शीघ्रप्रवाहिनी तथा भँवरो वाली गहरी नदी कहा है। कालिदास ने रघुवश 9,72 75 मे, तपस्वी श्रवण की मृत्यु तमसा के तट पर वर्णित की है। उन्होने तमसा के तीर पर तपस्वियो के आश्रमो का भी उल्लेख किया है किंतु वाल्मीकि, अयो० 63,36 मे इस दुघटना का सरयू के तट पर उल्लेख किया गया है—'अपश्यनिपुणा तीरे सरय्वास्तापस हतम, अवकीर्णजटाभार प्रविद्धकलशोदकम्'। वास्तव मे सरयू और तमसा दोनो ही नदिया अयोध्या के निकट कुछ दूर तक पास पास ही बहती हैं। रघुवश 14,76 के वर्णन से विदित होता है कि वाल्मीकि का आश्रम, जहा राम द्वारा निर्वासित सीता रही थीं, तमसा के तट पर स्थित था—'अरूयतीरा मुनिसनिवर्शैस्तमापहन्ती तमसा मवगाह्य,तत्सैकतोत्सगबलिक्रियाभि सपत्स्यत ते मनस प्रसाद'। अयोध्या से इस आश्रम को जाते समय लक्ष्मण ने सीतासहित गगा को पार किया था, (रघु० 14,52)। रघु० 9,20 मे तमसा का उल्लेख सरयू के साथ है—'श्रुतुपु तेन विसर्जितमौलिना भुज समाहृत दिग्वसुनाकृता कनकयूपसमुच्छ्रयशोभिना वितमसातमसा सरयूतटा'। रघ० 9,72 मे भी तमसा का अयोध्या के निकट कहा गया है—'तमसा प्राप नदी तुरगमण'। भवभूति ने उत्तररामचरित मे

तमसा का सुदर वणन किया है और वाल्मीकि का आश्रम, कालिदास की भाति ही, तमसा नदी के तट पर बताया है—अथ स ब्रह्मर्षिरेकदा माध्य दिनसवनायनदी तमसामनुप्रपन्न'। इस तथ्य की पुष्टि वाल्मीकि० आदि०, 2,3 4 से भी होती है—'स मुहूतगते तस्मिन देवलोक मुनिस्तदा जगाम तमसा तीर जाह्नव्यास्त्वविदूरत । सतु तीर समासाद्य तमसाया मुनिस्तदा, शिष्यमाह स्थित पार्श्वे दृष्ट्वा तीर्थमकदमम्'। तमसा नदी के तट पर ही वाल्मीकि ने निषाद द्वारा मारे जाते हुए क्रौंच को देखकर करुणार्द्र स्वरो मे अनजाने मे ही सस्कृत लौकिक साहित्य के प्रथम श्लोक की रचना की थी जिससे रामायण की कथा का सूत्रपात हुआ। तुलसीदास ने तमसा का वणन राम की वनयात्रा तथा भरत की चित्रकूट यात्रा के प्रसग मे किया है—'तमसा तीर निवास किय, प्रथम दिवस रघुनाथ' तथा 'तमसा प्रथम दिवस करिवासू, दूसर गोमति तीर निवासू'—। आजकल तमसा नदी अयोध्या (ज़िला फैजाबाद, उ० प्र०) से प्राय बारह मील दक्षिण मे बहती हुई लगभग 36 मील की यात्रा के पश्चात अकबरपुर के पास बिस्वी नदी मे मिल जाती है। इस स्थान के पश्चात सयुक्त नदी का नाम टौंस हो जाता है जो तमसा का ही अपभ्रश है। तमसा नदी पर अयोध्या से कुछ दूर पर वह स्थान बताया जाता है जहा श्रवण की मृत्यु हुई थी। अयोध्या स प्राय 12 मील दूर तरडीह नामक ग्राम है जहा स्थानीय किवदती के अनुसार श्रीराम ने वनवास यात्रा के समय तमसा को पार किया था। वह घाट आज भी रामचौरा नाम से प्रख्यात है। टौंस ज़िला आजमगढ़ म बहती हुई बलिया के पश्चिम मे गगा म मिल जाती है।

2—(म० प्र०) महार के पहाडो से निकल कर बुदेलखड के इलाक़े मे बहने वाली एक नदी जिसका उल्लेख महाराज सक्षनाथ के खोह अभिलेख (512 ई०) मे है। इस नदी के तट पर आश्रमक नामक ग्राम का भी उल्लेख इस अभिलेख मे है।

तमसावन

जलधर (पजाब) से लगभग 24 मील पश्चिम की ओर स्थित था। गुप्त काल म यहा एक बौद्धविहार था जो उस समय काफी प्राचीन हो चुका था। किवदती क अनुसार कात्यायनीपुत्र ने तथागत के निर्माण के पश्चात यहीं अपन शास्त्र की रचना की थी। सर्वास्तिवादी भिक्षुओ का यह विशेष केंद्र था। अशोक का बनवाया हुआ एक स्तूप भी यहा स्थित था। 7वीं शती म युवानच्वांग यहा आया था। उसन यहा के विहार मे 3000 सर्वास्तिवादी भिक्षुओ का निवास बताया है।

तपोदा पड़ा है। गौतम बुद्ध के समय तपोदाराम नामक उद्यान इसी नदी के तट पर स्थित था। बौद्ध ग्रंथों के अनुसार मगध-सम्राट् बिंबिसार प्राय इस नदी मे स्नान करने के लिए जाया करते थे।

तबरहिंद

भटिंडा (पजाब) को कुछ अरब इतिहास लेखको ने जिनमे अलउतबी भी है—तबर हिंद नाम से उल्लिखित किया है। पहले सुबुक्तगीन और फिर महमूद गजनवी ने भटिंडा पर आक्रमण किया था। उस समय यहा का राजा जयपाल था जिसने उत्तर भारत के कई प्रमुख राज्यो की सहायता से आक्रमणकारियो का डट कर सामना किया था।

तमसा

(1) अयोध्या (उ० प्र०) के निकट बहने वाली छोटी नदी जिसका उल्लेख रामायण मे है। वन को जाते समय श्रीराम, लक्ष्मण और सीता ने प्रथम रात्रि तमसा तीर पर ही बिताई थी—'ततस्तुतमसातीर रम्यमाश्रित्य राघव, सीतामुद्वीक्ष्य सौमित्रमिदवचनमब्रवीत। इयमद्य निशापूर्वा सौमित्रे प्रहिता वन वनवासस्य भद्रते न चोत्कठितुमर्हसि'—वाल्मीकि० अयो० 46,1 2। वाल्मीकि० अयो० 45 32 33, 46 16, 46,28 आदि म भी तमसा का उल्लेख है। अयोध्या० 46,28 मे वाल्मीकि न तमसा को '(शीघ्रगामाकुलावर्तां तमसामतरन्नदीम') शीघ्रप्रवाहिनी तथा भँवरो वाली गहरी नदी कहा है। कालिदास ने रघुवश 9,72-75 मे, तपस्वी श्रवण की मृत्यु तमसा के तट पर वर्णित की है। उन्होने तमसा के तीर पर तपस्वियो के आश्रमा का भी उल्लेख किया है किंतु वाल्मीकि, अयो० 63,36 म इस दुघटना का सरयू के तट पर उल्लेख किया गया है—'अपश्यनिपुणा तीरे सरय्वास्तापस हतम, अवकीर्णजटाभार प्रविद्धकलशादकम'। वास्तव मे सरयू और तमसा दोनो ही नदिया अयोध्या क निकट कुछ दूर तक पास पास ही बहती ह। रघुवश 14,76 के वर्णन स विदित होता है कि वाल्मीकि का आश्रम, जहा राम द्वारा निर्वासित सीता रही थी, तमसा के तट पर स्थित था—'अशून्यतीरा मुनिसनिवशस्तमापहन्त्री तमसा मवगाह्य तत्सैकतोत्सगवलिक्रियाभि सपत्स्यते ते मनस प्रसाद'। अयोध्या स इस आश्रम का जाते समय लक्ष्मण ने सीतासहित गगा को पार किया था, (रघु० 14,52)। रघु० 9,20 मे तमसा का उल्लेख सरयू के साथ है—'क्रतुषु तेन विसर्जितमौलिना भुज समाहृत दिग्वसुनाकृता कनकयूपसमुच्छ्रयशोभिना वितमसातमसा सरयूतटा। रघु० 9,72 म भी तमसा का अयोध्या क निकट कहा गया है—'तमसा प्राप नदी तुरगमेण'। भवभूति न उत्तररामचरित मे

तमसा का सुदर वणन किया है और वाल्मीकि का आश्रम, कालिदास की भाति ही, तमसा नदी के तट पर बताया है—'अथ स ब्रह्मर्षिरेकदा माध्य दिनसवनायनदी तमसामनुप्रपन्न'। इस तथ्य की पुष्टि वाल्मीकि० आदि०, 2,3 4 से भी होती है—'स मुहूर्तंगते तस्मिन देवलोक मुनिस्तदा जगाम तमसा तीर जाह्नव्यास्त्वविदूरत । सतु तीर समासाद्य तमसाया मुनिस्तदा, शिष्यमाह स्थित पार्श्वे दृष्ट्वा तीथमकदमम्'। तमसा नदी के तट पर ही वाल्मीकि ने निषाद द्वारा मारे जाते हुए क्रौंच को देखकर करुणार्द्र स्वरो मे अनजाने मे ही सस्कृत लौकिक साहित्य के प्रथम श्लोक की रचना की थी जिससे रामायण की कथा का सूत्रपात हुआ। तुलसीदास ने तमसा का वणन राम की वनयात्रा तथा भरत की चित्रकूट यात्रा के प्रसग मे किया है—'तमसा तीर निवास किय, प्रथम दिवस रघुनाथ' तथा 'तमसा प्रथम दिवस करिबासू, दूसर गोमति तीर निवासू'—। आजकल तमसा नदी अयोध्या (जिला फजाबाद, उ० प्र०) से प्राय बारह मील दक्षिण मे बहती हुई लगभग 36 मील की यात्रा के पश्चात अकबरपुर के पास बिस्वी नदी मे मिल जाती है। इस स्थान के पश्चात सयुक्त नदी का नाम टौस हो जाता है जो तमसा का ही अपभ्रश है। तमसा नदी पर अयोध्या से कुछ दूर पर वह स्थान बताया जाता है जहा श्रवण की मृत्यु हुई थी। अयोध्या से प्राय 12 मील दूर तरडीह नामक ग्राम है जहा स्थानीय किंवदती के अनुसार श्रीराम ने वनवास यात्रा के समय तमसा को पार किया था। वह घाट आज भी रामचौरा नाम से प्रख्यात है। टौस जिला आजमगढ म बहती हुई बलिया के पश्चिम मे गगा मे मिल जाती है।

2—(म० प्र०) मह्यर के पहाडो से निकल कर बुदेलखड के इलाके मे बहने वाली एक नदी जिसका उल्लेख महाराज सवनाथ के खाह अभिलेख (512 ई०) मे है। इस नदी के तट पर आश्रमक नामक ग्राम का भी उल्लेख इस अभिलख मे है।

तमसावन

जलधर (पजाब) से लगभग 24 मील पश्चिम की ओर स्थित था। गुप्त काल मे यहा एक बौद्धविहार था जो उस समय काफी प्राचीन हो चुका था। किंवदती के अनुसार कात्यायनीपुत्र ने तथागत के निर्माण के पश्चात यही अपन शास्त्र की रचना की थी। सर्वास्तिवादी भिक्षुओ का यह विशेष केंद्र था। अशोक का बनवाया हुआ एक स्तूप भी यहा स्थित था। 7वी शती म युवानच्वाग यहा आया था। उसने यहा के विहार म 3000 सर्वास्तिवादी भिक्षुओ का निवास बताया है।

तरग दे० तारणगढ

तरखान

इसका प्राचीन नाम त्र्यक्ष है जिसका वर्णन महा० सभा० 51,17 में है। यह वदरशा (द्वयक्ष) के निकट था।

तरडीह (जिला फैजाबाद, उ० प्र०)

अयोध्या से 12 मील दूर टौंस या प्राचीन तमसा नदी पर यह ग्राम है जहां रामचौरा घाट पर राम लक्ष्मण सीता ने वन जाते समय इस नदी का पार किया था। दे० तमसा।

तरनतारन (पंजाब)

अमृतसर से 12 मील दूर पर स्थित है। इस स्थान पर वियास और सतलज का संगम है। कहा जाता है कि जहांगीर के शासनकाल में सिखों के गुरु अर्जुन ने इस स्थान का तीर्थरूप में प्रतिष्ठापन किया था।

तरायन=तरावडी (जिला करनाल, हरियाणा)

यह स्थान थानेसर से 14 मील दक्षिण में स्थित है। 1009 ई० में कुछ दिनों तक यहां महमूदगजनी का अधिकार रहा। तत्पश्चात यहां मु० गोरी और चौहान नरेश पृथ्वीराज के बीच 1191 ई० में पहला युद्ध हुआ। 1192 ई० में गोरी ने दुबारा भारत पर आक्रमण किया और फिर इसी स्थान पर घोर युद्ध हुआ जिसमें गोरी की कूटनीति और छद्म के कारण पृथ्वीराज मारे गए। इस विजय के पश्चात् मुसलमानों का कदम उत्तरी भारत में जम गया। 1216 ई० (15 फरवरी) को फिर एक बार तरायन के मैदान में इल्तुतमिश तथा उसके प्रतिद्वंदी सरदार इल्दोज़ में एक निर्णायक युद्ध हुआ जिसमें इल्तुतमिश की विजय हुई और उसका दिल्ली की गद्दी पर अधिकार मजबूत हो गया। तरावडी या तरायन को आजमाबाद भी कहते हैं।

तरिम

मध्य एशिया की नदी जिसका प्राचीन संस्कृत नाम सीता कहा जाता है। (दे० सीता)

तलकाड दे० शिरोवन

तलवडी=तलवडी (जिला कुसूर, पंजाब, पाकि०)

यह स्थान सिख धर्म के संस्थापक गुरु नानक के जन्मस्थान के रूप में प्रसिद्ध है। इनका जन्म 1469 में हुआ था।

तलाजा=तालध्वज (सौराष्ट्र, गुजरात)

भावनगर के निकट प्राचीन बौद्ध स्थान है जिसका प्राचीन नाम तालध्वज

है। तालध्वजा या तलाजी नदी पास ही बहती है। वैसे यह स्थान शत्रुंजयी नदी के तट पर स्थित है। यह जैनों का भी तीर्थ था। यहां से प्राप्त अनेक प्राचीन मूर्तियां वाटसन-संग्रहालय राजकोट में संगृहीत हैं। तलाजा में तीस प्राचीन शैलकृत्त गुफाएं हैं जो संभवतः जैन भिक्षुओं के लिए बनाई गई थीं।

तलाजी=तालध्वजा

सौराष्ट्र के गोहिलवाड़ प्रांत की एक छोटी नदी जो शत्रुंजया की सहायक नदी है। नदी के उत्तर की ओर प्राचीन वलभिनगरी के ध्वंसावशेष हैं। इसका प्राचीन नाम तालध्वजा था और इसके तथा शत्रुंजयी के संगम के निकट प्राचीन बौद्ध स्थान तालध्वज या तलाजा बसा हुआ था।

तलावड़ी=तरावड़ी

ताड़पत्री (मद्रास)

द्रविड़ शैली में निर्मित 16वीं शती के एक सुंदर मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

तातार दे० तित्तिरदेश

तापी=ताप्ती (नदी)

विष्णुपुराण 2,3,11 में तापी को ऋक्षपर्वत से उद्भूत माना है—'तापी पयोष्णीनिर्विंध्याप्रमुखा ऋक्षसंभवा' श्रीमद्भागवत में तापी और उसकी शाखा पयोष्णी का एक साथ उल्लेख है—'कृष्णा वेण्या भीमरथी गोदावरी निर्विंध्या पयोष्णी तापी रेवा—'। वास्तव में पयोष्णी ताप्ती में दक्षिण पूर्व से आकर मिलती है। (दे० ऋक्ष)। ताप्ती सूरत के पास खंभात की खाड़ी (अरब सागर) में गिरती है। महाभारत में ताप्ती या तापी का संभवतः पयोष्णी के रूप में उल्लेख है। इस नदी के तापी, ताप्ती और पयोष्णी (गमजल वाली नदी) आदि नाम इसके गर्म जल के पहाड़ी स्रोतों के कारण सार्थक जान पड़ते हैं।

ताप्ती तापी

तामड=ताम्र

तामलित्थिय

ताम्रलिप्ति या ताम्रलिप्तिक का पाली रूपांतर जिसका उल्लेख दीपवंश 3,14 में है।

तामेश्वरनाथ (जिला बस्ती, उ० प्र०)

खलीलाबाद स्टेशन से 6 मील दक्षिण की ओर कुदवा नाला है जो संभवतः बौद्ध साहित्य में प्रसिद्ध अनोमा नदी है। कुदवा से एक मील दक्षिणपूर्व की

और एक मील लबा प्राचीन खडहर है जहा तामेश्वरनाथ का वर्तमान मन्दिर है। कहा जाता है यही वह स्थान है जहा अनोमा को पार करने के पश्चात सिद्धार्थ ने अपने राजसी वस्त्र उतार दिए थ तथा राजसी वेशों को काट कर फेंक दिया था। यहा से उ होने अपने सारथी छदक को विदा कर दिया था— दे० बुद्धचरित 6,57 65 'निष्कास्य त चोत्पलपत्रनील चिच्छेद चित्र मुकुट सकशम्, विकीर्यमाणा गुकमतरीक्षे चिक्षेप चैन सरसीव हसम्, 'छन्द तथा साश्रु मुख विमृज्य' इत्यादि। युवानच्वाग क अनुसार इस स्थान पर इ ही तीनो घटनाओ क स्मारक के रूप म अशोक ने तीन स्तूप बनवाए थे जिनके खडहर तामेश्वरनाथ के मदिर के निकट हैं।

तास्रद्वीप

महाभारत, सभा० 31, 68 के अनुसार इस द्वीप को सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा म विजित किया था—'कृत्स्न कोलगिरि चैव सुरभीपत्तन तथा, द्वीप ताम्राह्वयचैव पर्वत रामक तथा'। सभा० 38 क दाक्षिणात्य पाठ म इसका उल्लेख इस प्रकार है—इन्द्रद्वीप कशेरु च ताम्रद्वीप गभस्तिमत् गाधर्व वारुण द्वीप सौम्याक्षामिति च प्रभु'। ताम्रद्वीप सिहल या लका का प्राचीन नाम जान पडता है। यह भी सभव है कि यहा लका और भारत के बीच क टापुओ म स किसी का निर्देश हो।

2—(बर्मा) प्राचीन पागन राज्य का भारतीय नाम। पागन नामक नगर का प्राचीन नाम अरिमर्दनपुर था जहाँ इस राज्य की राजधानी थी। इस नगर की स्थापना 849 ई० म हुई थी। यह राज्य जिस प्रदेश म था उसका प्राचीन नाम ततदेश था। इस प्रदेश म तांबे की खान स्थित थी।

ताम्रपट्टन

(बर्मा) इस नगर म ब्रह्मदेश के प्रथम हिंदू राज्यवश धर्मराजानुवश, की जिसने इस प्रदेश पर 300 या 400 वर्ष तक राज्य किया था, राजधानी थी। सभव है पूरे अराकान प्रदेश को ही ताम्रपट्टन कहते हो।

ताम्रपर्णी

सिहलद्वीप या लका का प्राचीन नाम जिसकी दूर दूर तक ख्याति थी। 17वी शती मे अग्रेजी भाषा क कवि मिल्टन ने पैरेडाइज लॉस्ट नामक महाकाव्य मे इसे टाप्रोबेन लिखा है—'From India's golden chersonese and utmost Indian isle of Taprobane dusk faces with white silken turbans wreathed—कुछ विद्वानो के मत म लका भारत के बीच क समुद्र मे स्थित जाफना द्वीप ही ताम्रपर्णी है। ताम्रपर्णी के गिरीवत्तु

नामक यक्षनगर का उल्लेख वलाहाश्व जातक म है—'अतीते तबपण्णि द्वीपे सिरीसवत्थु नाम यक्खनगर अहोसि'।

महावंश 6, 47 के अनुसार भारत के लाटदेश का निवासी कुमार विजय जलयान से सिंहलदेश पहुँचकर वहां ताम्रपर्णी नामक स्थान के पास उतरा था। यह वही दिन था जब कुशीनगर मे बुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था। महावंश 7,39 म राजकुमार विजय द्वारा ताम्रपर्णी नगर के बसाए जाने का उल्लेख है। इस के अनुसार जब विजय और उसके साथी नौका से भूमि पर उतरे तो थकावट के कारण भूमि पर हाथ टेक कर बैठ गए। ताम्र वर्ण की मिट्टी के स्पर्श से उनके हाथ तांबे के पत्र से हो गए इसीलिए उस प्रदेश और द्वीप का नाम ताम्रपर्णी (तंब पण्णी) हुआ।

2— दक्षिण भारत की नदी जो केरल राज्य मे बहती है। जातक कथाओ मे इसका उल्लेख है। अशोक के मुख्य शिलालेख 2 और 13 मे तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अध्याय 11 म भी ताम्रपर्णी का नामोल्लेख है। महाभारत वन० 88, 14 15 म ताम्रपर्णी तथा उसके तट पर स्थित गोकर्ण का वर्णन है। 'ताम्रपर्णीं तु कौंतेय कीर्तयिष्यामि तां शृणु यत्र देवैस्तपस्तप्त महदिच्छद्भिराश्रमे गोकर्ण इति विख्यात स्त्रिपुलोकेपु भारत' श्रीमदभागवत 5 19,18 म ताम्रपर्णी नदी का अन्य नदियो के साथ उल्लेख है— चद्रवसा ताम्रपर्णी अवटोदा कृत माला वैहायसी '। विष्णुपुराण 2 3 13 म ताम्रपर्णी को मलयपर्वत से उद्भूत माना है —कृतमाला ताम्रपर्णी प्रमुखा मलयोद्भवा '। एपिग्राफिया इंडिका 11 (1914) पृ० 255 के अनुसार ताम्रपर्णी नदी का स्थानीय नाम पोरुंडम और मुडीगाडशोलाप्पेरार था। अतिप्राचीन काल मे ताम्रपर्णी के तट पर अवस्थित कोरकई और कायल नामक बंदरगाह उस समय के सभ्य ससार म अपने समृद्ध व्यापार के कारण प्रख्यात थे। पाड्य नरेशो के समय मोतियों और शखो के व्यापार के लिए कोरकई प्रसिद्ध था। वर्तमान तिरुनेल्वली या तिन्नेवली और त्रिवेंद्रम से बारह मील पूर्व तिरुवट्टार नामक नगर ताम्रपर्णी के तट पर स्थित है। ताम्रपर्णी वर्तमान पलमकोटा के निकट बहती हुई मन्नार की खाडी म गिरती है। मन्नार की खाडी सदा से मोतियो के लिए प्रसिद्ध रही है और इसीलिए कालिदास ने ताम्रपर्णी के सबध मे मोतियों का भी वर्णन किया है—'ताम्रपर्णीसमेतस्य मुक्तासार महोदधे ते निपत्य ददुस्तस्मै यश स्वमिवसचितम्' रघु० 4,50, अर्थात् पांडयवासियो ने विनयपूर्वक रघु को अपने सचित यश के साथ ही ताम्रपर्णी समुद्र सगम के सुंदर मोती भेंट किए। मल्लिनाथ ने इसकी टीका म यथार्थ ही लिखा है—'ताम्रपर्णीसगमे मौक्तिकोत्पत्तिरिति प्रसिद्धम्'।

और एक मील लंबा प्राचीन खंडहर है जहां तामेश्वरनाथ का वर्तमान मंदिर है। कहा जाता है यही वह स्थान है जहां अनोमा को पार करने के पश्चात् सिद्धार्थ ने अपने राजसी वस्त्र उतार दिए थे तथा राजसी वेशों को काट कर फेंक दिया था। यहां से उन्होंने अपने सारथी छंदक को विदा कर दिया था— दे० बुद्धचरित 6,57 65 'निष्कास्य तं चोत्पलपत्रनील चिच्छेद चित्रं मुकुटं सकेशम्, विकीर्यमाणांशुकमंतरीक्षे चिक्षेप चैनं सरसीव हंसम्, 'छंद तथा साश्रु मुखं विसृज्य' इत्यादि। युवानच्वांग के अनुसार इस स्थान पर इन्हीं तीनों घटनाओं के स्मारक के रूप में अशोक ने तीन स्तूप बनवाए थे जिनके खंडहर तामेश्वरनाथ के मंदिर के निकट हैं।

ताम्रद्वीप

महाभारत, सभा० 31, 68 के अनुसार इस द्वीप को सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा में विजित किया था—'कृत्स्नं कालगिरिं चैव सुरभीपत्तनं तथा, द्वीपं ताम्राह्वयंचैव पर्वतं रामकं तथा'। सभा० 38 के दाक्षिणात्य पाठ में इसका उल्लेख इस प्रकार है—'इंद्रद्वीपं कशेरु च ताम्रद्वीपं गभस्तिमत् गांधर्वं वारुणं द्वीपं सौम्याक्षमिति च प्रभु'। ताम्रद्वीप सिंहल या लंका का प्राचीन नाम जान पड़ता है। यह भी संभव है कि यहां लंका और भारत के बीच के टापुओं में से किसी का निर्देश हो।

2—(बर्मा) प्राचीन पागन राज्य का भारतीय नाम। पागन नामक नगर का प्राचीन नाम अरिमर्दनपुर था जहां इस राज्य की राजधानी थी। इस नगर की स्थापना 849 ई० में हुई थी। यह राज्य जिस प्रदेश में था उसका प्राचीन नाम तत्तदेश था। इस प्रदेश में तांबे की खानें स्थित थीं।

ताम्रपट्टन

(बर्मा) इस नगर में ब्रह्मदेश के प्रथम हिंदू राज्यवंश, धर्मराजानुवंश, की जिसने इस प्रदेश पर 300 या 400 वर्ष तक राज्य किया था, राजधानी थी। संभव है पूरे अराकान प्रदेश को ही ताम्रपट्टन कहते हों।

ताम्रपर्णी

सिंहलद्वीप या लंका का प्राचीन नाम जिसकी दूर दूर तक ख्याति थी। 17वीं शती में अंग्रेजी भाषा के कवि मिल्टन ने पैराडाइज लॉस्ट नामक महाकाव्य में इसे टाप्रोबेन लिखा है—From India's golden chersonese and utmost Indian isle of Taprobane dusk faces with white silken turbans wreathed—कुछ विद्वानों के मत में लंका भारत के बीच के समुद्र में स्थित जाफना द्वीप ही ताम्रपर्णी है। ताम्रपर्णी के गिरीवस्तु

नामक यक्षनगर का उल्लेख वलाहाश्व जातक म है—'अतीत तबपण्णि द्वीपे सिरीसवत्थु नाम यक्खनगर अहोसि'।

महावंश 6, 47 के अनुसार भारत के लाटदेश का निवासी कुमार विजय जलयान से सिंहलदेश पहुँचकर वहा ताम्रपर्णी नामक स्थान के पास उतरा था। यह वही दिन था जब कुशीनगर में बुद्ध ने निर्वाण प्राप्त किया था। महावंश 7,39 मे राजकुमार विजय द्वारा ताम्रपर्णी नगर के बसाए जाने का उल्लेख है। इस के अनुसार जब विजय और उसके साथी नौका से भूमि पर उतरे तो थकावट के कारण भूमि पर हाथ टेक कर बैठ गए। ताम्र वर्ण की मिट्टी के स्पर्श से उनके हाथ ताबे के पत्र से हो गए इसीलिए उस प्रदेश और द्वीप का नाम ताम्रपर्णी (तब पण्णी) हुआ।

2—दक्षिण भारत की नदी जो केरल राज्य मे बहती है। जातक कथाओ म इसका उल्लेख है। अशोक के मुख्य शिलालेख 2 और 13 म तथा कौटिल्य के अर्थशास्त्र क अध्याय 11 मे भी ताम्रपर्णी का नामोल्लेख है। महाभारत वन० 88, 14 15 मे ताम्रपर्णी तथा उसके तट पर स्थित गोकर्ण का वर्णन है। 'ताम्रपर्णीं तु कौंतेय कीर्तयिष्यामि ता श्रृणु यत्र दवैस्तपस्तप्त महदिच्छद्भिराश्रमे गोकर्ण इति विख्यात स्त्रिपुलोकेषु भारत' श्रीमदभागवत 5 19,18 मे ताम्रपर्णी नदी का अन्य नदियो के साथ उल्लेख है—चद्रवसा ताम्रपर्णी अवटोदा कृत माला वहायसी '। विष्णुपुराण 2 3 13 म ताम्रपर्णी को मलयपर्वत से उद्भूत माना है—कृतमाला ताम्रपर्णी प्रमुखा मलयोदभवा '। एपिग्राफिका इंडिका 11 (1914) पृ० 2५5 के अनुसार ताम्रपर्णी नदी का स्थानीय नाम पारुडम और मुडीगोंडशोलाप्पेरारु था। अतिप्राचीन काल मे ताम्रपर्णी के तट पर अवस्थित कोरकई और कायल नामक बदरगाह उस समय क सभ्य ससार म अपने समृद्ध व्यापार के कारण प्रख्यात थे। पाडय नरेशो के समय मोतियो और शखो के व्यापार के लिए कोरकई प्रसिद्ध था। वर्तमान तिरुनेल्वली या तिन्नेवली और त्रिवेंद्रम से बारह मील पूर्व तिरुवट्टार नामक नगर ताम्रपर्णी के तट पर स्थित है। ताम्रपर्णी वर्तमान पलमकाटा के निकट बहती हुई मन्नार की खाडी म गिरती है। मन्नार की खाडी सदा से मोतियो के लिए प्रसिद्ध रही है और इसीलिए कालिदास ने ताम्रपर्णी के सबध म मोतियो का भी वर्णन किया है—'ताम्रपर्णीसमेतस्य मुक्तासार महोदधे ते निपत्य ददुस्तस्मै यश स्वमिवसंचितम्' रघु० 4,50, अर्थात पाण्ड्यवासियो ने विनयपूर्वक रघु को अपने सचित यश के साथ ही ताम्रपर्णी समुद्र सगम के सुदर मोती भेट किए। मल्लिनाथ ने इसकी टीका म यथार्थ ही लिखा है—'ताम्रपर्णीसगमे मौक्तिकोत्पत्तिरिति प्रसिद्धम्'।

संस्कृतके परवर्तीकाल के प्रसिद्ध कवि तथा नाटककार राजशेखर ने भी ताम्रपर्णी नदी का उल्लेख किया है।

ताम्रपीठ दे० तवपिट्ट

ताम्रपुर

प्राचीन कबोडिया या कबुज का एक भारतीय औपनिवेशिक नगर। कबुज मे हिंदू राजाओ का प्राय तेरह सौ वर्ष राज्य रहा था।

ताम्रलि त=ताम्रलिप्तक=ताम्रलिप्ति=दामलिप्त (जिला मदिनीपुर, प० बगाल)

रूपनारायण नदी के पश्चिमी तट पर वतमान तामलुक ही प्राचीन ताम्रलिप्ति है। श्री काशीप्रसाद जायसवाल का मत है कि संस्कृत ताम्रलिप्ति शब्द का मूल रूप 'द्रमीडदत्ति' या 'तिरमदत्ति' था जो द्रविड शब्द का रूपातर है। इसी से कालातर मे, प्राकृत म प्रचलित तामलित्ति बना जिसे संस्कृत म 'ताम्रलिप्ति' कर लिया गया। (दे० इडियन एटिक्वेरी, 1914, पृ० 64) दशकुमारचरित म दामलिप्त अथवा ताम्रलिप्ति को सुह्म देश म स्थित माना है। किंतु महा० सभा० 2,24-25 मे ताम्रलिप्ति व सुह्म का अलग अलग उल्लेख है— 'समुद्रसेन निर्जित्य चद्रसेन च पार्थिवम्, ताम्रलिप्त च राजान क्वदाधिपति तथा। सुह्मानामधिप चैव य च सागरवासिन सर्वान म्लेच्छगणाश्चैव विजिग्ये भरतर्षभ'। पाचवी शती ई० मे फाह्यान ने ताम्रलिप्ति का गुप्त साम्राज्य के एक महत्त्वपूर्ण बदरगाह के रूप में उल्लेख किया है। यहा से जलयान जावा, सिंहलद्वीप इत्यादि देशो का जाते थे। दशकुमारचरित में दडी ने ताम्रलिप्ति के कालीमदिर का वर्णन किया है जो उस समय प्रसिद्ध था। विष्णुपुराण 4,24, 64 ('कोशलाध्रपुड्र ताम्रलिप्त समुद्रतटपुरी च देवरक्षितो रक्षिता') के अनुसार ताम्रलिप्ति पर गुप्तकाल से पूर्व देवरक्षित नामक राजा राज्य करता था। ताम्रलिप्ति में पाचवी शती ई० से पूर्व ही एक प्रसिद्ध महाविद्यालय स्थापित हो चुका था। फाह्यान, युवानच्वाग, इत्सिग आदि चीनी यात्रियो ने यहा ठहर कर भारतीय ज्ञान विज्ञान का अध्ययन किया था। फाह्यान के समय यहा चौबीस विहार थे जिनमें दो सहस्र भिक्षु निवास करते थे। 7वी शती ई० में युवानच्वाग ने यहा केवल दस विहार और एक सहस्र भिक्षुओ का ही उल्लेख किया है। तत्पश्चात् इत्सिग ने अपनी भारतयात्रा में इस महाविद्यालय का सविस्तर वृत्तान्त दिया है। वह नौ वर्ष तक यहा अध्ययन करता रहा था। उसने ताम्रलिप्ति विद्यालय के बौद्ध भिक्षु राहुलमित्र की बडी प्रशसा की है। ताम्रलिप्ति नगरी के समुद्रतट पर एक व्यापारिक बदरगाह होने के कारण

यहा दूर दूर देशा क विद्यार्थी सरलता से आ सकते थे।

ताम्रा=तामड

यह नदी सिक्किम क पश्चिमी पहाडा से निकलती है। इसकी घाटी पहाडो मे गहरी कटी हुई है। इसका महाभारत के भीष्मपव मे उल्लेख है। यह सुनकोसी नदी म मिलती है। इन दोनो के सगमस्थल पर काकामुख तीथ स्थित था।

ताम्रारुण

'ताम्रारुण समासाद्य ब्रह्मचारी समाहित, अश्वमेधमवाप्नाति ब्रह्मलाक च गच्छति' महा० वन० 84,154। प्रसग स यह हिमालय का कोई तीथ जान पडता है।

तारगा (राजस्थान)

तारगा हिलस्टेशन से 4 मील दूर दिगबर जैनो का तीथ जहा 73 प्राचीन मदिर हैं। सभवनाथ के मदिर के निकट श्वेताबरो का मदिर भी है जा बहुत कलापूण है।

तारकक्षेत्र (महाराष्ट्र)

हुबली स 80 मील के लगभग हानगल का कस्बा ही प्राचीन तारकक्षेत्र है। तारक क्षेत्र म धम नदी प्रवाहित होती है।

तारकेश्वर (प० बगाल)

हावडा से 12 मील दूर यह स्थान एक प्राचीन महादेव मदिर के लिए प्रसिद्ध है।

तारणगढ़

महीकठ (गुजरात) म तरग नामक पहाडी का प्राचीन नाम। इसका जैन तीर्थ के रूप मे उल्लेख जन स्तात तीथमाला चैत्यवदन में इस प्रकार है— कुतीपरलविहार तारणगढे सापारकारासणे'।

तारागढ

अजमेर की पहाडी, जहा राजा अज ने गढबिटली नामक किला बनवाया था। कनल टॉड के अनुसार यह किला राजपूताने की कुजी थी। दे० अजमेर

तारापीठ (प० बगाल)

द्वारका नदी के तट पर स्थित प्राचीन सिद्ध पीठ जा तान्त्रिको का केद्र था।

तारूमा

पश्चिम जावा द्वीप का एक नगर जहा प्राय 22 वप तक जावा के हिंदू राजा पूणवमन की राजधानी थी। पूणवमन् के चार सस्कृत अभिलेख जावा मे मिले है जिनका समय 5वी या 6वी शती ई० है।

तालकड (मैसूर)

यह प्राचीन नगर शिवसमुद्रम से 15 मील दूर कावेरी के तट पर बसा हुआ था किंतु अब नदी की लाई हुई बालु में अट गया है। इसके अनेक ध्वसावशेष आज भी बालु के नीचे दबे पडे हैं। 1717 ई० में बने हुए कीर्तिनारायण के मदिर को बालु मे से खोद निकाला गया है।

तालकावेरी (कुर्ग मैसूर)

दक्षिण की प्रसिद्ध नदी कावेरी का उद्गम स्थान। कुर्ग के मुख्य नगर मरकरा से यह स्थान 25 मील है। हरे-भरे जगलो और सुहावनी पहाडियो की गोदी मे बसा हुआ यह रमणीक स्थान दक्षिण भारतीयो का एक प्राचीन तीर्थ भी है।

तालकुड=तालगुड

तालकूट दे० कालकूट

तालगुड (मैसूर)

तालगुड या तालकुड का प्रणवेश्वर शिवमदिर मैसूर राज्य का प्राचीनतम मदिर माना जाता है। इसमे केवल एक गोपुर है। यह हेलबिड के होयसलेश्वर के मदिर की शैली मे बना हुआ है। यहा एक स्तभ पर एक महत्वपूर्ण लेख उत्कीर्ण है जिससे पश्चिम भारत के कदब नामक राजवश के प्रारभिक इतिहास पर प्रकाश पडता है।

तालध्वज=तलाजा

ताल वजा=तलाजी

तालबेहट (जिला झासी, उ० प्र)

मध्ययुगीन दुर्ग के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

तालवडी=तलवडो

तालवन

(1) ब्रज का एक वन जहा श्रीकृष्ण ग्वालो के साथ क्रीडार्थ जाते थे—'भ्रममाणौ वने तस्मिन रम्ये तालवन गतौ' विष्णु० 5, 8, 1

(2) द्वारका के दाक्षिण भाग मे स्थित लतावेष्ट नामक पर्वत के चतुर्दिक बने हुए उद्यानो मे से एक—'लतावेष्ट समतात् तु मेरुप्रभ न महत्, भाति तालवन चैव पुष्पक पुडरीकवत' महा० सभा० 38, दाक्षिणात्य पाठ।

(3) 'पाडयाश्च द्रविडाश्चैव सहिताश्चोण्ड्र केरलै आध्रास्तालवनाश्चैव कलिगानुष्ट्रकर्णिकान् महा० सभा० 31, 71। यहा तालवन निवासियो का उल्लेख आध्र और कलिग वासियो के बीच मे है जिससे जान पडता है कि

यह स्थान पूर्वी समुद्र तट पर स्थित रहा होगा।

तालाकट

'तत स रत्नान्यादाय पुन प्रायाद युधाम्पति तत शूर्पारक चैव तालाकट मथापिच, वशेचक्रे महातेजा दण्डकाश्च महाबल'—महा० सभा० 31, 65 66, सहदेव ने इस स्थान को अपनी दिग्विजय यात्रा म विजित किया था। इसकी स्थिति शूर्पारक या वतमान सोपारा के निकट रही होगी।

तालीकोट (मैसूर)

1556 ई० मे इस स्थान पर दक्षिण भारत की बहमनी रियासतो तथा विजयनगर के हिंदू राज्य मे परस्पर भयानक युद्ध हुआ था जिसके परिणाम-स्वरूप विजयनगर साम्राज्य का अत हो गया। तालीकोट के युद्ध के पश्चात मुसलमानो न तत्कालीन भारत या इतिहास लेखका क अनुसार एशिया के सव श्रेष्ठ नगर विजयनगर मे बबरतापूण लूट मार मचाकर उसे खडहर बना दिया था। सिवेल (Sewell) ने 'ए फारगॉटन एम्पायर' नामक ग्रथ मे इस दुघटना का रोमाचकारी वणन बडे प्रभावोत्पादक शब्दो मे किया है।

तिकवापुर=त्रिविक्रमपुर (जिला कानपुर, उ० प्र०)

हिंदी के प्रसिद्ध कवि भूषण इसी ग्राम के निवासी थे। यह ग्राम यमुनातट पर बसा हुआ था जैसा कि भूषण ने स्वय ही लिखा है—'द्विज कनौज कुल कस्यपी रतनाकर सुतधीर, वसत त्रिविक्रमपुर सदा तरनितनूजा तीर—शिवराजभूषण, 26। भूषण के कथनानुसार 'वीर वीरबर से जहा उपजे कविवर भूप देव बिहारीश्वर जहा विश्वेश्वर तदरूप' अर्थात त्रिविक्रमपुर मे वीरवल क समान महाबली राजा और कवि हुए तथा यहा काशी के विश्वनाथ महादेव के समान बिहारीश्वर महादेव का मदिर था। यह वीरबल अकबर के दरबार के प्रसिद्ध कवि और मत्री बीरबल ही जान पडते है।

तिक्तबिल्व=बिल्वतिक्त (जावा)

मजपहित नामक नगर का प्राचीन भारतीय नाम। 1294 ई० म इस नगर को जावा की राजधानी बनाया गया था और मुसलमाना के जावा पर अधिकार होने तक (15 वी शती ई० का अतिम भाग) यहा हिंदू राजा राज करते रह। तिक्तबिल्व मजपहित का ही सस्कृत अनुवाद है—मज=बिल्व, पहित=तिक्त।

तिगवा (जिला जबलपुर म० प्र०)

जबलपुर से प्राय 40 मील दूर छोटा सा ग्राम है जो गुप्तकाल मे जैन-सम्प्रदाय का केंद्र था। एक अभिलेख स ज्ञात होता है कि कनौज से आए

हुए एक जैन यात्री उभदेव ने पाश्वनाथ का एक मदिर इस स्थान पर बनवाया था, जिसके अवशेष अभी तक यहा विद्यमान हैं। यह मदिर अब हिंदू मन्दिर के समान दिखाई देता है। यहा के खडहरो मे कई जैन मूर्तिया भी प्राप्त हुई हैं। मदिर का वणन करते हुए स्वर्गीय डॉ० हीरालाल न लिखा है कि यह प्राय डेढ हजार वष प्राचीन है। यह चपटी छतवाला पत्थर का मदिर है। इसके गभगह मे नृसिंह की मूर्ति रखी हुई है। दरवाजे की चौखट के ऊपर गगा यमुना की मूर्तिया खुदी हैं। पहले ये ऊपर बनाई जाती थी किन्तु पीछे से देहरी के निकट बनाई जाने लगी। मदिर के मडप की दीवार म दशभुजी चडी की मूर्ति खुदी है। उसके नीचे शेषशायी भगवान विष्णु की प्रतिमा उत्कीर्ण ह जिनकी नाभि से निकले हुए कमल पर ब्रह्मा जी विराजमान हैं। (दे० जबलपुर ज्योति, पृ० 140) श्री राखालदास बनर्जी के अनुसार इस मन्दिर मे एक वर्गाकार केन्द्रीय गभगृह है जिसके सामने एक छोटा सा मडप है। मडप के स्तभो के शीष भारत पर्सिपोलिस शैली म बने है जिससे यह मदिर गुप्त काल मे पूव का जान पडता है—(दे० एज ऑव दि इम्पीरियल गुप्ताज—पृ० 153)।

तिजारा (जिला अलवर, राजस्थान)

यहा सुलतान अलाउद्दीन आलमशाह का मकबरा स्थित है जो सहसराम के शेरशाह सूरी के मकबरे से मिलता जुलता है।

तित्तिरदेश

'भारता धनुका श्चैव तगणा परतगणा, बाह्लीकास्तित्तिराश्चैव चोला पाड्याश्च भारत'—महा० भीष्म० 50, 31। तित्तिर निवासियो का तगण, परतगण व बाह्लीक लोगो के साथ वणन होन से उनका निवासस्थान इनके निकट ही सूचित होता है। महा० सभा० 52, 2 3 मे तगण परतगणों आदि को शैलोदा या खातन नदी के प्रदश म निवसित बताया गया है। इसी प्रान्त को तित्तिरा का इलाका समझना चाहिए। बहुत सभव है कि तित्तिर तातार' का सस्कृत रूपातरण हो। तातरा का दश वतमान दक्षिणी रूस के इलाके म था। तित्तिर लोग महाभारत युद्ध मे पाडवो के साथ थ।

तिब्बत दे० त्रिविष्टप

तिरभो=तिराही (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

यह स्थान कडवाहा से पाच मील उत्तर पूव म है और रानोद म आठ मील दक्षिण-पूव म। रानोद के अभिलेख म तिरभो का उल्लेख है। यहा का सबस अधिक प्रशसनीय स्मारक 11वी शती का मातृजमाता का मदिर है

जिसका तारण आज भी मध्यकालीन मूर्तिकला का सुदर उदाहरण है। इस कला का विशिष्ट गुण इसकी अलकार बहुल शैली है। तिरभी का वर्तमान नाम तिराही है।

तिरहुत=तीरभुक्ति (उत्तर विहार)

तीरभुक्ति या तिरहुत का अनेक गुप्तकालीन अभिलेखो म उल्लेख है। मिथिलानगरी इसी प्रदेश म स्थित थी। तिरहुत, तीरभुक्ति का ही अपभ्रश है।

तिरावडी=तिलावडी (दे० तरायन)

तिराही=तिरभी

तिरुअनतपुर=त्रिवेंद्रम्

तिरुक्कलिकुदरम्=पक्षितीर्थ

मद्रास स 30 मील दूर है। 500 फुट ऊची पहाडी पर बने मदिर म प्राचीन काल से दो पक्षी (क्षेमकरी) नित्य भोजनार्थ निश्चित समय पर आते है। इनके विषय मे अनेक कपोल-कल्पित कथाए प्रचलित है। यह स्थान कम से कम 18वी शती मे भी इसी प्रकार स प्रख्यात था क्योकि तत्कालीन उल्लेखो स यह बात प्रमाणित होती है।

तिरुकुन्नूर (मद्रास)

दक्षिण भारत के प्रसिद्ध दार्शनिक आचार्य रामानुज के जन्मस्थान के रूप म विख्यात है। इन्होने विशिष्टाद्वैत मत का प्रतिपादन तथा प्रचार किया था। 15वी शती के धर्माचार्यो तथा दार्शनिको म रामानुज का स्थान बहुत ऊचा माना जाता है।

तिरुचेनगोड (जिला सेलम, मद्रास)

यहा नागाचल पर्वत पर अर्ध नारीश्वर शिव का प्रसिद्ध मदिर है। इसक मडप पर उच्चकोटि की मूर्तिकारी प्रदर्शित है।

तिरुत्तनी (मद्रास)

मद्रास से 50 मील दूर रेनीगुटा और आरकोनम स्टेशनो क बीच यह छोटी सी बस्ती है। यहा स्कद या सुब्रह्मण्यम् स्वामी का विख्यात प्राचीन मदिर पहाडी की चोटी पर अवस्थित है।

तिरुनेलवेली (मद्रास)

वालीश्वर या कृष्णपुर क मदिर के कारण यह स्थान प्रसिद्ध है। मदिर मे कामदेव की पत्नी रति की मानवाकार मूर्ति के रूप मे शृगारिक भावो का सुकुमार चित्रण है। मदिर के प्रागण की भित्ति के नीचे एक छोटी सरिता बहती है।

तिरुपत्तिकुनरम (मद्रास)

यह स्थान काजीवरम या काची से नौ मील पर स्थित है और कई प्राचीन मदिरो के लिए प्रख्यात है। जैन मदिर की भित्तियो पर सुदर पुष्पालकरणो का अनोखा चित्रण है। महाविष्णु का बैकुठ पेरुमल मदिर और कलासनाथ का शिव मदिर अपने भव्य स्थापत्य के लिए उल्लेखनीय हैं। सहस्र स्तभा या विशाल मडप भी वास्तुकला का अद्वितीय उदाहरण है।

तिरुपदी (मद्रास)

तिरुपला पहाडी के ऊपर तथा उसके पादमूल म तिरुपदी की बस्ती स्थित हैं। ऊपर बालाजी का प्रसिद्ध मदिर है। तिरुपदी के अनेक मदिरो म गोविंदराज का मदिर प्रमुख है। रामानुज सप्रदाय के ग्रथ प्रपन्नामृत के 51वें अध्याय म उल्लेख है कि रामानुजस्वामी ने वेकटाचल के पास गोविंदराज की मूर्ति को स्थापित किया था। तिरुमला पहाड़ी की सातवी चोटी ही वेकटाचल कहलाती है। गोविंदराज शेषशायी विष्णु की मूर्ति का नाम है। इसी मदिर के पास श्री भट्टनाथ दिव्यसूर की कन्या गोदादेवी का मदिर है जिसकी स्थापना भी श्रीरामानुज ने की थी। रामानुज का समय 15वीं शती ई० है। तिरुपदी स्टेशन स एक मील दक्षिण की ओर सुवर्णमुखी नदी बहती है।

तिरुपराकुर (जिला मदुराई, मद्रास)

प्राचीन शैलकृत्त गुहाओ के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। गुहाओं म कई अभिलेख उत्कीर्ण पाए गए हैं।

तिरुमकुडलू (मैसूर)

तालकड से 15 मील दूर कावेरी तट पर स्थित है। यहा शिव का प्राचीन मदिर है जिसकी यात्रा के लिए दूर-दूर स यात्री आते हैं।

तिरुमला (मद्रास)

तिरुपदी क निकट एक पहाडी। इसके एक शिखर का प्राचीन नाम वेकटाचल है जिसका उल्लेख रामानुज सप्रदाय के ग्रथ प्रपन्नामृत, अ० 51 म है। वेकटाचल के निकट रामानुज ने (15वी शती ई०) गोविंदराज (विष्णु) की मूर्ति को स्थापित किया था।

तिरुमलाई (मद्रास)

एक प्राचीन जैन मदिर यहा का उल्लेखनीय स्मारक है। इसका जीर्णोद्धार 1955 56 म पुरातत्व विभाग द्वारा किया गया था।

तिरुवजिक्लम् (केरल)

चेर या केरल की प्राचीन राजधानी जो सबसे पहली राजधानी वजि के पश्चात् बसाई गई थी। यह नगर परियार नदी पर स्थित था (स्मिथ—अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया—पृ० 477)

तिरुवन्नमलई (मद्रास)

समुद्रतल से 2668 फुट ऊंची पहाड़ी पर यहां एक प्राचीन मंदिर है जहां कार्तिक में शिव की पवित्र ज्वाला प्रज्वलित की जाती है।

तिरुवल्लूर (मद्रास)

आरकोनम स्टेशन से 17 मील दूर है। वरदराज का विशाल मंदिर तीन घेरों के अंतर्गत स्थित है। पहले घेरे की लंबाई 180 फुट और चौड़ाई 155 फुट, दूसरे की लंबाई 470 फुट और चौड़ाई 470 फुट, और तीसरे की लंबाई 940 फुट और चौड़ाई 700 फुट है। पहले घेरे के चारों ओर दालान और मध्य में वरदराज की मूर्ति भुजंग पर शयन करती हुई दिखाई देती है। पास ही शिवमंदिर है। यह भी कई ड्योढ़ियों के भीतर है। दोनों मंदिरों के आगे जगमोहन है और घेरे के आगे गोपुर। दूसरे घेरे में जो पीछे बना था बहुत से छोटे स्थान और दालान और पहले गोपुर से अधिक ऊंचे दो गोपुर हैं। तीसरे घेरे के भीतर जो दूसरे के बाद में बना था 668 स्तंभों का एक मंडप और कई मंदिर तथा पांच गोपुर हैं जिनमें प्रथम और अंतिम बहुत विशाल हैं। जनश्रुति के अनुसार अज्ञातवास के समय पांडवों ने यहां शिव की आराधना के फलस्वरूप भयंकर जल त्रास से त्राण पाया था। वडागलाई संप्रदाय का केंद्र यहां के अहोबिलम मठ में है।

तिरुवांकुर (केरल)

ट्रावनकोर का प्राचीन नाम। इसका अर्थ है लक्ष्मी का घर। तिरुवांकुर का प्रदेश प्राचीन काल में केरल में सम्मिलित था। एक पौराणिक कथा के अनुसार महर्षि परशुराम ने इस भूभाग को अपने परशु द्वारा समुद्र से छीन लिया था। उन्होंने अपना फरसा समुद्र में फेंका और जितनी दूर वह जाकर गिरा उतनी दूर तक समुद्र पीछे हट गया। इस समुद्रनिर्गत भूमि पर उन्होंने बाहर से मनुष्यों को लाकर बसाया था। इस कथा में एक भौगोलिक तथ्य निहित है क्योंकि भूगोलविदों का विचार है कि केरल के प्रदेश पर पहले समुद्र लहराता था जिसके अवशेष लेगूनों (lagoons) के रूप में आज भी विद्यमान हैं।

तिरुवारूर=कमलालय
तिरुविदम्=त्रिवेंद्रम
तिरुविवलूर=इंद्रपुर (1)
तिरुवेंकाडु (मद्रास)

यह स्थान चिदवर से 15 मील आगे वैदीश्वरन कोइल स्टेशन के निकट है। इसका प्राचीन नाम श्वेतारण्य है। यहा अघोरमूर्ति शिव का मन्दिर है जिसके तामिल अभिलेख से विदित होता है कि चोलनरेश राजराज ने कुछ मूल्यवान वस्तुए इस मदिर को भेंट की थी जिनमे पदमराज मणि की एक शृखला भी थी।

तिरुवंची (वाची-) कुलम (कोचीन, केरल)

वर्तमान क्रगनोर। कोचीन के निकट प्राचीन केरल की प्रथम ऐतिहासिक राजधानी के रूप में यह अति प्राचीन स्थान उल्लेखनीय है। देवीभगवती का मदिर और एक गिरजा घर (शायद प्रथम शती ई० म निर्मित) अब यहा के अवशिष्ट स्मारक है। तिरुवंचीकुलम मे पेरुमल सम्राटो की राजधानी थी। इन्ही मे से एक, कुलशेखर पेरुमल ने प्रसिद्ध वैष्णव महाकाव्यप्रबन्ध की रचना की थी। ईसापूर्व कई शतियो तक यह स्थान दक्षिण भारत का बडा व्यापारिक केंद्र था। यहा मिस्र, बाबुल, यूनान, रोम और चीन के व्यापारियो तथा यात्रियों के समूह बराबर आते जाते रहते थे। यही 68 या 69 ई० म रोमनो द्वारा निष्कासित यहूदियो ने शरण ली थी। इसी स्थान का शायद रामन लेखको ने मुजिरिस (मुरचीपत्तन या मरिचीपत्तन) लिखा है। यहा से मरिच या काली मिर्च का रोम साम्राज्य के देशो के साथ भारी व्यापार था (दे० क्रगनोर)। मुरचीपत्तन (पाठान्तर सुरभीपत्तन) का उल्लेख महाभारत सभा० 31,68 म है। (दे० सुरभीपत्तन)

तिलपत

दिल्ली के निकट एक ग्राम जो स्थानीय किंवदंती के अनुसार उन पाच ग्रामो मे था जिनकी माग पाडवो ने दुर्योधन से की थी और जिनके न मिलने पर महाभारत का युद्ध प्रारभ हुआ था। इस किंवदंती के अनुसार पाच ग्राम ये हैं बागपत, तिलपत, सोनपत, इंद्रपत और पानीपत। किंतु इस किंवदंती की पुष्टि महाभारत से नही होती (दे० प्रस्थल)।

तिलारनदी=दे० तल
तिलावडी=दे० (तरायन)
तिलिवल्ली (महाराष्ट्र)

चालुक्यवास्तुशैली म बने हुए (चालुक्य कालीन) मदिर के लिए यह स्थान

उल्लेखनीय है ।

तिलोत्तमा (नेपाल)

बुटवल क निकट बहने वाली नदी जिसका सबध पौराणिक अनुश्रुतियो म तिलोत्तमा नामक अप्सरा से बताया जाता है । कहा जाता है कि तिलोत्तमा म सृष्टि की श्रेष्ठ स्त्रियो के सौदय के सभी गुण वतमान थे ।

तिलौराकोट (नेपाल)

इस ग्राम को कुछ लोग प्राचीन काल के प्रसिद्ध नगर कपिलवस्तु क स्थान पर बसा हुआ मानते है (दे० कपिलवस्तु) ।

तिस्ठा=तृष्णा

तीरभुक्ति (बिहार)

उत्तरी बिहार का तिरहुत प्रदेश । प्राचीन काल म यह प्रदेश मिथिला या विदह जनपद म सम्मिलित था । शक्ति सगम तत्र म तीरभुक्ति या विदेह का विस्तार गडक से चपारण्य तक माना गया है । तीरभुक्ति का अनक गुप्तकालीन अभिलखो मे उल्लेख है । बसाढ (प्राचीन वैशाली) से प्राप्त मुद्राओ स सूचित होता है कि चद्रगुप्त द्वितीय क समय तीरभुक्ति का अलग प्रात था, जिसका शासक गाविदगुप्त था । यह चद्रगुप्त द्वितीय तथा महारानी ध्रुवदवी का पुत्र था । इसकी राजधानी वैशाली मे थी । मुद्राओ में तीरभुक्त युपरिकाधिकरण अर्थात तीरभुक्ति के शासक के कार्यालय का भी उल्लेख है । उस समय तीरभुक्ति प्रात म ही वैशाली की स्थिति थी । गुप्तकाल म भुक्ति एक प्रशासनिक एकक का नाम था ।

तीर्थमलय (मद्रास)

यह पवत मद्रास मगलौर रेल माग पर मोरप्पूर स्टेशन से 17 मील पर है । यह स्थान प्राचीन शिव मदिर के लिए उल्लेखनीय है ।

तुगकारण्य=तुगारण्य (बुदेलखड)

वत्रवती (बतवा) और जबुल (जामनर) के सगम का परवर्ती प्रदेश जिसका क्षेत्रफल लगभग 35 वग मील है, प्राचीनकाल का तुगारण्य है । झासी से यह स्थल लगभग दस बारह मील दूर है । महाभारत के अनुसार इस वन का विस्तार शायद कालिजर तक था—'तुगकारण्यमासाद्य ब्रह्मचारी जितेंद्रिय, वेदानध्यापयत् तत्र ऋषि सारस्वत पुरा । तदरण्य प्रविष्टस्य तुगक राजसत्तम पाप प्रणश्यत्यखिल स्त्रियो वा पुरुषस्य वा' वन० 85, 46 53 । इसक पश्चात ही (वन 85,56) कालजर (कालिजर) का उल्लख है । पद्मपुराण आदि० 39, 52 53 म भी कालजर की स्थिति तुगकारण्य म बताई गइ है । हिंदी के

प्रसिद्ध कवि केशवदास ने आडछा तथा बेतवा की स्थिति तुगारण्य म कही है —'नदी बेतवै तीर जह तीरथ तुगारण्य, नगर आडछा बहुबम धरनीतल म धन्य। केशव तुगारन्य म नदी बतव तीर, नगर आडछा बहु बसै पडित मडित भीर'।

तुगनाथ (जिला गढवाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के निकट एक ऊची पहाडी जहा चापती चट्टी के पास 12080 फुट की ऊचाई पर एक शिवमदिर स्थित है। यह भारत का सर्वोच्च मदिर है जिसके कारण तुगनाथ का नाम साथक ही जान पडता है। इसकी गणना पच-केदारो म की जाती है और यहा बाहुरूपी शिव की उपासना की जाती है। तुगनाथ का प्राचीन काल म उत्तराखड का पुण्यस्थल समझा जाता था। महाभारत वनपव के अतगत तीर्थों म उल्लिखित भृगुतुग नामक स्थान सभवत तुगनाथ ही है। इसके पास ऋषिकुल्या नदी बहती हुई बताई गई है—'ऋषि-कुल्या समासाद्य नर स्नात्वा विकल्मष, देवान् पितृ श्चाचयित्वा ऋषिलोक प्रपद्यते। यदि तत्र वसन्मास शाकाहारो नराधिप, भृगुतुग समासाद्य वाजिमध-फल लभेत'—वन० 84, 49 50। 'भृगुयत्र तपस्तेप महर्षिगण सेविते, राजन स आश्रम ख्यातो भृगुतुगो महागिरि' महा० वन० 90,2,3 यहा इस स्थान को भृगु की तपस्थली बताया गया है। ऋषिकुल्या गढवाल की ऋषिगगा नामक नदी है।

तुगभद्र (मैसूर)

तुगभद्रा नदी के तट पर बसा हुआ प्राचीन स्थान है। यहा स नौ मील दूर राघवेद्र स्वामी का मदिर है। जनश्रुति है कि श्री रामचद्र जी वनवासकाल म यहा कुछ समय तक रहे थे।

तुगभद्रा

दक्षिण भारत की प्रसिद्ध नदी। मैसूर राज्य मे स्थित तुग और भद्र नामक दो पवतो स निस्सृत दो श्रोतो से मिलकर तुगभद्रा नदी की धारा बनती है। उद्भव का स्थान गगामूल कहलाता है (इडियन एटिक्वेरी, पृ० 212) तुग और भद्र शृगेरी, शृगगिरि या वराहपवत के अतगत हैं और य ही तुगभद्रा के नाम का कारण हैं। श्रीमदभागवत (5 19,18) मे तुगभद्रा का उल्लेख है '—चद्रवसा ताम्रपर्णी अवटोदा कृतमाला वैहायसी कावरी वेणी पयस्विनी शकरावर्ता तुगभद्रा कृष्णा—' महाभारत मे सभवत इस तुगवेणा कहा है। पद्मपुराण (178,3) म हरिहरपुर को तुगभद्रा के तट पर स्थित बताया गया है।

प्रसिद्ध कवि केशवदास ने ओड़छा तथा बेतवा की स्थिति तुंगारण्य में कही है —'नदी बतवै तीर जहं तीरथ तुंगारन्य, नगर ओड़छा बहुबस धरनीतल में धन्य। केशव तुंगारन्य में नदी बेतव तीर, नगर ओड़छ बहु बस पंडित मंडित भीर'।

तुंगनाथ (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के निकट एक ऊंची पहाड़ी जहां चोपती चट्टी के पास 12080 फुट की ऊंचाई पर एक शिवमंदिर स्थित है। यह भारत का सर्वोच्च मंदिर है जिसके कारण तुंगनाथ का नाम सार्थक ही जान पड़ता है। इसकी गणना पंचकेदारों में की जाती है और यहां बाहुरूपी शिव की उपासना की जाती है। तुंगनाथ को प्राचीन काल में उत्तराखंड का पुण्यस्थल समझा जाता था। महाभारत वनपर्व के अंतर्गत तीर्थों में उल्लिखित भृगुतुंग नामक स्थान संभवतः तुंगनाथ ही है। इसके पास ऋषिकुल्या नदी बहती हुई बताई गई है—'ऋषिकुल्या समासाद्य नरः स्नात्वा विकल्मषः, देवान् पितृंश्चार्चयित्वा ऋषिलोकं प्रपद्यते। यदि तत्र वसेन्मासं शाकाहारो नराधिप, भृगुतुंगं समासाद्य वाजिमेधफलं लभेत्' —वन० 84, 49 50। 'भृगुयत्र तपस्तेपे महर्षिगण सेवितः, राजन् स आश्रमः प्रख्यातो भृगुतुंगो महागिरिः' महा० वन० 90,2,3 यहां इस स्थान को भृगु की तपस्थली बताया गया है। ऋषिकुल्या गढ़वाल की ऋषिगंगा नामक नदी है।

तुंगभद्र (मैसूर)

तुंगभद्रा नदी के तट पर बसा हुआ प्राचीन स्थान है। यहां से नौ मील दूर राघवेंद्र स्वामी का मंदिर है। जनश्रुति है कि श्री रामचंद्र जी वनवासकाल में यहां कुछ समय तक रहे थे।

तुंगभद्रा

दक्षिण भारत की प्रसिद्ध नदी। मैसूर राज्य में स्थित तुंग और भद्र नामक दो पर्वतों से निस्सृत दो श्रोतों से मिलकर तुंगभद्रा नदी की धारा बनती है। उद्भव का स्थान गंगामूल कहलाता है (इंडियन एंटिक्वेरी, पृ० 212) तुंग और भद्र शृंगेरी, शृंगगिरि या वराहपर्वत के अंतर्गत हैं और ये ही तुंगभद्रा के नाम का कारण हैं। श्रीमद्भागवत (5 19,18) में तुंगभद्रा का उल्लेख है '—चंद्रवसा ताम्रपर्णी अवटोदा कृतमाला वैहायसी कावेरी वेणी पयस्विनी शर्करावर्ता तुंगभद्रा कृष्णा—' महाभारत में संभवतः इसे तुंगवेणा कहा है। पद्मपुराण (178,3) में हरिहरपुर को तुंगभद्रा के तट पर स्थित बताया गया है।

क़िला तुग़लकाबाद
(भारतीय पुरातत्त्व विभाग के सौजन्य से)

तुगवेणा=तुंगवेणी

महाभारत भीष्म० 9,27 मे वर्णित एक नदी जो सभवत तुगभद्रा है—'उपेंद्रा वहुला चैव, कुवीरामम्वुवाहिनीम विनदीपिजला वणा तुगवेणा महानदीम'

तुगार (महाराष्ट्र)

वसीन से 3 मील दूर सोपारा नामक ग्राम के निकट एक पहाड है जिसके शिखर पर चार सुदर मदिर है। सोपारा प्राचीन शूर्पारक है।

तुगारण्य=तुगकारण्य

तु बरियगण (लका)

महावश 10,53 मे वर्णित एक सरोवर जा धूमरक्ख पवत पर स्थित है। यह पवत महावल्गिगा के वाम तट पर है। महावश के अनुसार तुबरियगण म निवास करन वाली एक यक्षिणी को लका के राजा पाडुकाभय न अपन वश म किया था।

तु बवन (परगना अशोकनगर, जिला गुना, म० प्र०)

अशाक नगर स्टशन से पाच मील पर स्थित तुमैन गुप्तकाल के अभिलेखो म वर्णित तुबवन है। गुप्तकाल मे यह स्थान एरण प्रदेश म सम्मिलित था। यहा स गुप्त सवत् 116=435 ई० का कुमारगुप्त के काल का, एक अभिलेख प्राप्त हुआ था जिसका सबध गोविंदगुप्त नामक व्यक्ति स है। इसम घटोत्कच गुप्त का भी उल्लेख है। स्थानीय किंवदती के अनुसार यहा राजा मकरध्वज की राजधानी थी। गुप्तकालीन इमारतो क कई अवशेप यहा आज भी स्थित है।

तुखार=तुषार

तुग़लकाबाद

वतमान दिल्ली से लगभग 11 मील दक्षिण म और कुतुबमीनार से प्राय 3 मील दूर, 14वी शती मे वसाई गई तुगल्को की राजधानी क खडहर हैं जिस तुगल्काबाद कहा जाता है। इसकी नीव डाल्न वाला गयासुद्दीन तुगल्क था (1320 ई०)। नगर क चारा ओर ढालू प्राचीर थी और 7 मील की दूरी उक सुदृढ दुग व्यवस्था का विस्तार था। नगर के अदर सैकडा मकान महल, मदिर और मसजिद बनी हुई थी। इस नगर को हजारा शिल्पिया तथा श्रमिका ने दो वप क कडे परिश्रम के पश्चात् बनाया था किंतु मु० तुगल्क के दिल्ली स राजधानी को देवगिरि ले जान और दिल्ली वापस लान के कारण तुगल्काबाद उजाड सा हो गया। फिरोजशाह तुगल्क के समय (1351 1388 ई०) म तुगल्कावाद तथा उसके उपनगर का विस्तार फिराजशाह कोटला तक हो गया

था जो दिल्ली दरवाजे के निकट है कोटला भी खडहर हो गया है किंतु इस स्थान का खूनी दरवाजा आज भी 1857 के स्वतत्रता सग्राम के उस भयानक तथा करुणकाड की याद दिलाता है जिसमे अतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह के तीन राजकुमारो मिर्जा मुगल अबूबकर और खिज्र खा की निमम हत्या अगेजो ने की थी। दे० दिल्ली

तुरतुरिया (जिला रायपुर, म० प्र०)

सिरपुर स 15 मील घोर वनप्रदेश के अतगत स्थित है। यहा अनक बौद्धकालीन खडहर ह जिनका अनुसधान अभी तक नही हुआ है। भगवान बुद्ध की एक प्राचीन भव्य मूर्ति जो यहा स्थित है जनसाधारण द्वारा वाल्मीकि ऋषि के रूप मे पूजित है। पूवकाल म यहा बौद्धभिक्षुणियो का भी निवास था। इस स्थान पर एक झरने का पानी 'तुरतुर' की ध्वनि स बहता है जिसस इस स्थान का नाम ही तुरतुरिया पड गया है। (दे० श्री शाक्ल प्रसाद—रायपुर रश्मि पृ० 67) इस स्थान का प्राचीन नाम अज्ञात है।

तुलजापुर (जिला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

नालदुग से 20 मील उत्तर पश्चिम म बसा हुआ प्राचीन स्थान है। यहा तुळजा भवानी का बहुत पुराना मदिर है। कहा जाता है कि श्रीरामचद्र को स्वप्न मे भवानी ने लका का माग बताया था। दशहरा के बाद की पूर्णमासी को यहा की यात्रा होती है। यह मदिर यमुनाचल नामक पहाडी पर स्थित है। मूलरूप म यह मदिर आठ सौ वर्ष पुराना कहा जाता है। कोल्हापुर और सतारा नरेशो तथा अहिल्याबाई होल्कर ने मदिर क बाहरी भागो को बनवाया था। महाराष्ट्र-वीर शिवाजी का तुल्जापुर की भवानी का इष्ट था। उनके चढाए हुए अनेक आभूषण मदिर मे अभी तक सुरक्षित ह। मदिर के अदर गोमुख से पानी निस्सृत होता हुआ कल्लोल तीथ म जाता है। भवानी मदिर के पीछे भारतीय मठ है जहा किंवदती के अनुसार तुलजा देवी स चौपड खेले जाती थी।

तुलसी (महाराष्ट्र)

पचगगा (कृष्ण की सहायक नदी) की उपनदी। कासारी, कुभी, तुलसी, भोगवती और सरस्वती की सयुक्त धारा का नाम ही पचगगा है। तुलसी पश्चिमी घाट की पवत श्रेणी से निकलने वाली छोटी सरिता है। पचगगा और कृष्णा क सगम पर प्राचीन स्थान अमरपुर बसा हुआ है।

तुलुग=तुलुव

दक्षिण कनारा का प्रदेश जिसका विस्तार गोआ के दक्षिण म पश्चिमोत्तर

के साथ साथ है। यहा की भाषा तुलु है।

तुल्या

गोदावरी की सात शाखानदिया म है जिन्हे महाभारत, वन० 85,43 म सप्तगोदावरी कहा गया है। (दे० गोदावरी)

तुषार

तुखार या चीनी तुर्किस्तान (सिक्याग) का प्राचीन भारतीय नाम। दूसरी शती ई० पू० मे यूचियो या ऋषिका (दे० ऋषिक, उत्तर ऋषिक) न अपन मूल स्थान चीनी तुर्किस्तान स (जहा उनका वणन महाभारत म है) वल्ख या वाह्लीक की ओर प्रव्रजन किया था क्योकि उनको आक्रमणकारी हूणो ने वहा से आगे खदेड दिया था। कालातर म यूचियो की एक शाखा, कुषाणो न भारत म आकर यहा राज्य स्थापित किया। कनिष्क इस शाखा का प्रसिद्ध राजा था। महाभारत, सभा० 27 25 26 27 के अनुसार ऋषिको का अपनी दिग्विजय यात्रा म अर्जुन ने विजित किया था।

तुषारन विहार (जिला प्रतापगढ, उ० प्र०)

गगा की पुरानी धारा के तट पर बसा है। कनिघम ने इसे तुषारारण्य माना है। यहा एक प्राचीन बौद्ध विहार था। शायद युवानच्वाग द्वारा उल्लिखित अयोमुख यही है।

तुषारण्य दे० तुषारनविहार

तुसम (जिला हिसार, पजाब)

चौथी या पाचवी शती ई० का (गुप्तकालीन) एक शिलालेख यहा स प्राप्त हुआ था जिसम आचार्य सोमत्रात द्वारा भागवत (विष्णु) क मदिर क लिए दो तडागो तथा एक भवन के निर्माण किए जान का उल्लेख है। जब प्रथम बार कनिघम न इस अभिलेख का प्रकाशित किया था तो यह समझा जाता था कि इसम प्रथम गुप्त नरेश महाराज घटोत्कचगुप्त का उल्लेख है किंतु गुप्त-अभिलेखो के विशेषज्ञ फ्लीट क मत म यह शब्द दानवागना' है।

तूध्न (दे० कुरु)

तृतीया

महाभारत सभा० 9,21 म उल्लिखित नदी तृतीया ज्यष्ठिलाचैव शोणश्चापि महानद, चमण्वती तथा चव पर्णाशाच महानदी'। तृतीया का, ज्यष्ठिला (शान की सहायक जोहिला) और शोण (सोन) के साथ उल्लेख स, यह बिहार व सोन के निकट बहन वाली कोई नदी जान पडती है। अभिज्ञान अनिश्चित है।

तृष्णा

ब्रह्मपुत्र की सहायक नदी तिष्टा जो उत्तरी बगाल मे बहती है।

तेजपुर (असम)

इस स्थान से गुप्तकालीन मूर्तियो के अनेक अवशेष प्राप्त हुए है। इनमे स्त्री प्रतिमाओ की रचना की विशिष्टता यह है कि इनका वक्षस्थल समकालीन वाराणसी, बेसनगर आदि से प्राप्त प्रतिमाओ के प्रतिकूल अपेक्षाकृत क्षीण प्रदर्शित किया गया है जो पूवबगाल तथा असम की नारियो की स्वाभाविक रूपरेखा का वास्तविक चित्रण जान पडता है—(दे० एज ऑव दि इम्पीरियल गुप्ताज' पृ० 181)।

तेजल्लविहार

गिरनार पवत के नीचे तजपाल द्वारा निर्मित मदिर जिसका जैन तीर्थ के रूप मे उल्लेख तीर्थमाला चैत्यवदन मे है—'श्री तेजल्लविहार निवतटकं चद्र च दक्षावते।'

तेजोभिभवन

वाल्मीकि रामायण मे इस स्थान का उल्लेख अयोध्या के दूतो की केकय देश की यात्रा के प्रसग मे है—'अभिकाल तत प्राप्य तेजोभिभवनाच्च्युता" पितृ पैतामही पुण्या तेरुरिक्षुमती नदीम' अयो० 68,17। जान पडता है कि तेजोभिभवन, पजाब मे विपाशा या विपास नदी के कुछ पूव म स्थित होगा क्योकि यह नदी दूतो को तेजोभिभवन से पश्चिम की ओर जाने पर मिली थी—(अयो० 68,19)।

तेनकाशी (मद्रास)

तेनकाशी का अर्थ दक्षिण की काशी है। विश्वनाथस्वामी का अति प्राचीन मदिर यहा स्थित है। यहा से तीन मील पर एक सुदर झरना है जहा जनश्रुति के अनुसार अगस्त्यमुनि का आश्रम था। पास ही प्राचीन शिवमदिर है जो अगस्त्य के समय का कहा जाता है। किवदती है कि इस मदिर की शिवमूर्ति की स्थापना इन्ही महर्षि ने की थी। अगस्त्य का दक्षिण भारत से सबध प्राचीन साहित्य म प्रसिद्ध है। तमिल सतो ने यहा के अधिष्ठाता शिव की महिमा के गीत रचे है जिन्हे थेवरम् कहा जाता है।

तेर (जिला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

उसमानाबाद से 12 मील उत्तरपूर्व की ओर तथा तेर नामक रेलस्टेशन से प्राय 3 मील दूर एक ग्राम है जहा प्राचीन मदिर के अवशेष मिले है। यह मदिर रूपरेखा मे पश्चिम भारत के शल्यवृत्त बौद्ध चत्यो तथा मम्मलपुर के रथो

के अनुरूप है। मदिर ईंटा का बना है। इसके देवगह के ऊपर नालाकार महराव वाली छतें है। सामने वर्गाकार तथा सपाट छत का मडप है। मदिर की इटें वहुत बडी है और उसकी प्राचीनता की सूचक हैं। कुछ विद्वाना का मत है कि टॉलमी न पैठान क साथ ही दक्षिण भारत के जिस प्रसिद्ध व्यापारिक नगर तगारा का उल्लेख किया है वह इसी स्थान पर बसा होगा। तगारा की मलमल प्रसिद्ध थी। तेर विठोबा भगवान् के भक्त, सत गोरा खभर कुम्हार के सबध के कारण भी प्रसिद्ध है। ये महाराष्ट्र के प्रख्यात सत नामदेव के समकालीन थे। कहा जाता है कि एक बार भक्ति म इतने तल्लीन हो गए कि उन्हे सामन ही अपने शिशु के, बतन बनाने की मिट्टी के गढे मे डूब जान की खबर तक न हुई।

तेरत्नुदुर

दक्षिण रेलव के कुत्तालुम स्टेशन से तीन मील दूर स्थित है। दक्षिण भारत म यह विष्णु उपासना का केंद्र है। तमिल रामायण के प्रसिद्ध रचयिता कविवर कब का यह ज म स्थान भी है। इसे रथपातस्थली भी कहत है।

तेलगाना

शायद त्रिकलिंग का रूपातर है। मैसूर व आध्र के तेलुगूभाषी प्रदेश का तलगाना कहा जाता है। (द० त्रिकलिंग)

तलगिरि [दे० तल (1)]

तेवर (दे० त्रिपुरी)

तल (1)=तलवाह

सरीवनिज जातक म उल्लिखित तैलवाह नदी का अभिज्ञान तैलगिरि नामक नदी स किया गया है—दे० डा० भडारकर इडियन एटिक्वेरी 1918 पृ० 71। इस जातक के अनुसार अधपुर नामक नगर तैलवाह के तट पर बसा था। डा० भडारकर के मत म अधपुर आध्रप्रदेश का मुख्य नगर था। रायचौधरी के मत म तैल्वाह नदी वतमान तुगभद्रा कृष्णा की सयुक्त धारा का प्राचीन नाम है और अधपुर की स्थिति वेजवाडा के स्थान पर रही हागी—द० रायचौधरी हिस्ट्री ऑव एशेंट इडिया, पृ० 78।

2–(बिहार) सानपुर के निकट वहने वाली एक नदा। सुवणमरु शिवमदिर इसी नदी के तट पर अवस्थित है।

3–लुबिनी के निकट एक छोटी नदी जिसका उल्लेख युवानच्वाग ने किया है। यह अब तिलार कहलाती है।

तलवाह्=तल (1)

तोन्नूर (मैसूर)

मोतीतालाब के निकट स्थित छोटा सा ग्राम है जिसका प्राचीन नाम यादव गिरि (=मेलूकोटे) है। देवगिरि के यादव नरेशों के नाम से ही यह स्थान प्रसिद्ध था। यहां प्राचीन समय में सेनाशिविर था। 1099 ई० में दक्षिण के प्रसिद्ध दार्शनिक तथा धर्माचार्य रामानुज, चोलराज कारिकल के अत्याचार से बच कर यादवगिरि के राजा विष्णुवर्धन की शरण में आकर रहे थे।

तोपरा (जिला अंबाला, हरियाणा)

इस ग्राम में प्राचीनकाल में अशोक का एक प्रस्तरस्तंभ स्थित था, जिसे फिरोजशाह तुगलक (1351-1388) दिल्ली ले आया था। यह स्तंभ आज भी वहां फिरोजशाह कोटला में स्थित है। इस स्तंभ पर अशोक की 17 धर्म लिपियां अंकित हैं। इस स्तंभ को दिल्ली तोपरा स्तंभ कहा जाता है।

तोया

विष्णुपुराण 2,4,28 में उल्लिखित शाल्मली द्वीप की एक नदी 'योनिस्तोया वितृष्णा च चंद्रामुक्ता विमाचिनी, निवृत्ति सप्तमी तासां स्मृतास्ताः पापशांतिदाः'।

तोरण

वाल्मीकि रामायण, अयो० 71,11 में वर्णित एक ग्राम जो भरत को, केकय देश से अयोध्या जाते समय गंगा के पूर्व में मिला था—'तोरणं दक्षिणार्धेन जंबूप्रस्थं समागतम्'

2–(महाराष्ट्र) तोरण का प्रसिद्ध दुर्ग महाराष्ट्रकेसरी शिवाजी ने बीजापुर के सुल्तान से छीन लिया था (1646 ई०)। यह उनके पिता शाहजी की जागीर के दक्षिणी सीमांत पर स्थित था। यहां शिवाजी को पूर्व समय का गड़ा हुआ बहुत सा धन प्राप्त हुआ था जिसकी सहायता से उन्होंने अस्त्रशस्त्र तथा गोला बारूद खरीदा और तोरण के किले से छः मील दूर मोरबंद के पर्वत शृंग पर राजगढ़ नामक दुर्ग बनवाया।

तोसल=तोसलि=धौली (उड़ीसा)

भुवनेश्वर के निकट शिशुपालगढ़ के खंडहरों से 3 मील दूर धौली नामक प्राचीन स्थान है जहां अशोक की कलिंगधर्मलिपि चट्टान पर अंकित है। इस अभिलेख में इस स्थान का नाम तोसलि है और इसे नवविजित कलिंग देश की राजधानी बताया गया है। यहां का शासन एक कुमारामात्य के हाथ में था। अशोक ने इस अभिलेख द्वारा तोसलि और समापा के नगर व्यावहारिकों को

कडी चेतावनी दी है क्योंकि उन्होंने इन नगरों के कुछ व्यक्तियों को अकारण ही कारागार में डाल दिया था। सिलवनलेवी के अनुसार गडव्यूह नामक ग्रंथ में 'अमित तोसल' नामक जनपद का उल्लेख है जिसे दक्षिणापथ में स्थित बताया गया है। साथ ही यह भी कहा गया है कि इस जनपद में तोसल नामक एक नगर है। कुछ मध्यकालीन अभिलेखों में दक्षिण तोसल व उत्तर तोसल का उल्लेख है (एपिग्राफिका इंडिया 9,586,15,3)। जिससे जान पडता है कि तोसल एक जनपद का भी नाम था। प्राचीन साहित्य में तोसलिक दक्षिणकोसल के साथ संबध का भी उल्लेख मिलता है। टॉल्मी के भूगोल में भी तोसली (Toslei) का नाम है। कुछ विद्वानों (सिलवनलेवी आदि) के मत में कोसल, तोसल, कलिंग आदि नाम ऑस्ट्रिक भाषा के हैं। आस्टिक लोग भारत में द्रविडों से भी पूर्व आकर बसे थे। धौली या तोसलि दया नदी के तट पर स्थित है।

तौषायण

पाणिनि 4,2,80 में उल्लिखित है। श्री वा० श० अग्रवाल के मत में यह स्थान जिला हिसार का टोटाणा है।

त्रंबावती (काठियावाड गुजरात)

यह प्राचीन नगरी खंभात से चार मील दूर बसी थी। इसे स्तंब या स्तंभ तीर्थ भी कहा जाता था। खभात इसी का विकृत रूप है।

त्रिंगलवाडी (महाराष्ट्र)

इगतपुरी स्टेशन से छः मील दूर यह ग्राम एक पहाडी पर बसा हुआ है। पहाडी के नीचे के भाग में एक शैलकृत्त जैन गुफा है जिसका भीतरी कक्ष 35 फुट चौडा है। द्वार पर तथा अदर कई जिन मूर्तियां हैं। 1208 ई० का एक अभिलेख भी यहां से प्राप्त हुआ है जिससे गुहा मध्यकालीन प्रमाणित होती है।

त्रिऋषि सरोवर

स्कदपुराण में आधुनिक नैनीताल (उ० प्र०) की झील का नाम। इसे अत्रि, पुलह और पुलस्त्य के नाम पर त्रिऋषि सरोवर कहा गया है। पौराणिक किंवदती के अनुसार इन ऋषियों ने इस झील के तट पर प्राचीन काल में तप किया था।

त्रिकटक

पौराणिक अनुश्रुति के अनुसार जनस्थान (नासिक का परवर्ती प्रदेश) का एक नाम—'कृते तु पद्मनगर, त्रेतायां तु त्रिकटकम्, द्वापरे जनस्थानं कलौ नासिकमुच्यते'।

त्रिककुद्

अथर्ववेद में वर्णित हिमालय शृंग जो चिनावनदी की घाटी (पंजाब) का त्रिकूट (यह नाम परवर्ती साहित्य में मिलता है) या वर्तमान त्रिकोट है।

त्रिकलिंग

कलचुरिनरेश कर्णदेव के अभिलेखों में त्रिकलिंग नाम से तेलगाना (आंध्र और मैसूर का तेलुगू प्रदेश) देश का अभिधान किया गया है। कुछ ऐतिहासिकों के अनुसार आंध्र, अमरावती और कलिंग का संयुक्त नाम त्रिकलिंग था। इसे कर्णदेव ने जीत कर अपने राज्य में मिला लिया था। अन्य विद्वानों के अनुसार यह उड़ीसा के उत्कल, कोंगद और कलिंग का संयुक्त नाम था। कुछ लेखकों का मत यह भी है कि त्रिकलिंग उत्तरी कलिंग का नाम था—(दे० महताब हिस्ट्री ऑव उड़ीसा—पृ० 3)

त्रिकूट

(1)=त्रिककुद। त्रिककुद अथर्ववेद में वर्णित है। त्रिकूट नाम परवर्ती साहित्य का है। यह चिनाव नदी की घाटी (पंजाब) का वर्तमान त्रिकोट नामक पर्वत है। विष्णुपुराण 2,2,27 में त्रिकूट को मेरु का केसराचल कहा गया है—'त्रिकूट शिशिरश्चैव पतंगारुचकस्तथा, निषादाद्या दक्षिणतस्तस्य केसरपर्वताः'। अथर्ववेद और विष्णुपुराण के त्रिकूट एक ही हैं या भिन्न, इसके बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

(2) कोंकण (महाराष्ट्र) में स्थित पर्वत तथा परिवर्ती प्रदेश। कालिदास ने रघुवंश 4,59 में रघु की दिग्विजययात्रा के प्रसंग में अपरांत की विजय के पश्चात रघु द्वारा त्रिकूट पर चढ़ाई का वर्णन किया है—'मत्तेभरदनोत्कीर्ण व्यक्त विक्रम लक्षणम्, त्रिकूटमेव तत्रोच्चैर्जयस्तंभं चकार सः'। यहां कालिदास ने त्रिकूट पर्वत को ही रघु का विजय-स्तंभ माना है। त्रिकूट पर्वत का उल्लेख श्रीमद्भागवत 5,19,16 में भी है—'भारतेऽप्यस्मिन् वर्षे सरिच्छैला सन्ति बहवो मलयो मंगलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूटऋषभः कूटक—'। वाकाटक नरेश हरिषेण के अभिलेख में त्रिकूट पर उसकी विजय का उल्लेख है (525 ई०)। यह अभिलेख अजंता की गुफा 13 में उत्कीर्ण है। त्रिकूट का प्रदेश जिसका नाम त्रिकूट पर्वत के कारण ही हुआ होगा स्थूल रूप से जिला थाना (महाराष्ट्र) के अंतर्गत माना जा सकता है।

(3) (बिहार) वैद्यनाथ के निकट एक पर्वत जो प्राचीन तीर्थ समझा जाता है। यहां मयूराक्षी नदी का स्रोत है।

(4) वाल्मीकि रामायण के अनुसार रावण की लंका त्रिकूट पर्वत पर बसी

हुई थी—'त्रिकूटस्य तटे लका स्थित स्वस्थो ददश ह' सुदर० 2,1 तथा, 'कैलास शिखराकारे त्रिकूटशिखरेस्थिता लकामीक्षस्व वैदेहि निर्मिता विश्वकमणा—' युद्ध० 123,3। अध्यात्मरामायण 1,40 म भी लका को त्रिकूट के शिखर पर स्थित कहा है—'नाना पक्षिमृगाकीर्णां नाना पुष्पलतावृताम् ततोददश नगर त्रिकूटाचलमूधनि।' तुलसीदास ने भी इसी पवत का निर्देश करत हुए लिखा है 'सहित सहाय रावणहि मारी, आनौ यहा त्रिकूट उखारी।' किष्किधाकाण्ड।

(5) श्रीमदभागवत 9,2,1 मे उल्लिखित अनभिज्ञात पवत—'आसीद गिरिवरो राजस्त्रिकूट इति विश्रुत, क्षीरोदेनावृत श्रीमान योजनायुतमुच्छित'। इसके अनुवर्ती श्लोको मे इसका विस्तृत वणन है तथा इसे गज ग्राह की प्रसिद्ध आख्यायिका की घटनास्थली माना है। (दे० चपारण्य)। इस पवत के चतुर्दिक समुद्र का वणन हे।

(6) जम्मू (कश्मीर) मे स्थित एक पवत जिस पर पुराण प्रसिद्ध वैष्णवदेवी का मदिर है

त्रिगत

जलधर दोआवे (पजाब) का प्राचीन नाम है। त्रिगत का शाब्दिक अथ है—तीन गह्वरो वाला प्रदेश। यह स्थूल रूप से रावी, बियास और सतलज की उदगम घाटियो म स्थित प्रदश का नाम था। इसम कागडा और कुलु का प्रदश भी सम्मिलित था जिसक कारण भुवनकोष म इस प्रदेश को 'पवताश्रयी' भी कहा गया है। महाभारत तथा रघुवश म उल्लिखित उत्सवसकेत नामक गण-राज्यो की स्थिति इसी प्रदेश म थी। महाभारत, विराट० 30,31,32,33 म मत्स्य देश पर त्रिगतराज सुशर्मा की चढाई का विस्तृत वणन है। इन्होंने मत्स्य-नरेश की गौवो का अपहरण किया था—एव तैस्तविमिन्द्रयात्र मत्स्यराजस्य गोधने, त्रिगर्तै ग ह्यमाणे तु गोपाला प्रत्यषेधयन्'। [illegible] से प्रतीत होता है कि महाभारत काल मे मत्स्य और त्रिगत पडोसी [illegible]। सभव है उस समय त्रिगत का विस्तार उत्तरी राजस्थान (=मत्स्य) तक रहा हो।

त्रिचनापल्ली=त्रिशिरापल्ली

किवदती के अनुसार त्रिशिर नामक राक्षस का स्थान (पल्ली) होन के कारण यह नगरी त्रिशिरापल्ली कहलाई। कहा जाता है कि त्रिशिर का वध शिव ने इसी स्थान पर किया था। यह [illegible] से 250 मील दूर कावेरी [illegible] अवस्थित है। त्रिचनापल्ली का [illegible] है। यह एक [illegible] ½ मील चौडा समकोणाकार बना है और 272 फुट ऊचो पहाडी [illegible] पर जाते समय पल्लवनरेशों के समय म निर्मित [illegible]

गुहामंदिर दिखाई पड़ते हैं। पहले दुर्ग के चारों ओर एक खाई थी और परकोटा खिंचा हुआ था। खाई अब भर दी गई है। भीतर एक विशाल चट्टान पर भूतेश्वर शिव और गणेश के मंदिर स्थित हैं। चट्टान के दक्षिण में नवाब का महल है जिसे 17वीं शती में चोकानायक ने बनवाया था। चट्टान और मुख्य प्रवेशद्वार के बीच में तेप्पकुलम् या नौकासरोवर है। गणपति मंदिर दुर्ग से 2 फर्लांग दूर है। अभिलेखों में त्रिचनापल्ली का एक नाम निचुलपुर भी मिलता है।

त्रिचूर (केरल)

कोचीन का एक बड़ा नगर है। त्रिचूर वदक्कनाथ के प्रसिद्ध प्राचीन शिव-मंदिर के चतुर्दिक बसा हुआ है।

त्रिजुगीनारायण (ज़िला गढ़वाल, उ० प्र०)

उत्तराखंड में केदारनाथ से बदरीनाथ जाने वाले मार्ग पर पुराणप्रसिद्ध तीर्थ है। यह समुद्रतल से $9\frac{1}{2}$ सहस्र फुट की ऊंचाई पर स्थित है। यहां ब्रह्मकुंड, विष्णुकुंड, रुद्रकुंड और सरस्वतीकुंड नामक चार सरोवर हैं। इनके पास ही नारायण का मंदिर है। एक स्थान पर निरंतर अग्नि प्रज्वलित रहती है। किंवदंती है कि यहीं शिव पार्वती का विवाहसंस्कार सम्पन्न हुआ था। कुमार-संभव 7,83 में शिव पार्वती के विवाह में अग्नि को साक्षी रूप में माना है—'वधूं द्विज प्राह तवैष वत्स वह्निर्विवाहं प्रतिकर्मसाक्षी, शिवेन भर्त्रा सह धर्मचर्या कार्या त्वया मुक्तविचारयेति'। संभवतः इसी पुण्य अग्नि के स्मारक के रूप में इस स्थान पर सदा अग्नि प्रज्वलित रखी जाती है।

त्रिदिवा

(1) 'वेदस्मृता वेदवती त्रिदिवामिक्षुलाकृमिम' महा० भीष्म० 9,17। भीष्मपर्व में नदियों की लंबी सूची में त्रिदिवा का भी नामोल्लेख है। यह वेदवती के निकट बहने वाली कोई नदी हो सकती है। वेदवती दक्षिण की नदी है जो भीमा के निकट बहती है।

(2) विष्णुपुराण के अनुसार प्लक्षद्वीप की नदी 'अनुतप्ता शिखीचैव विपाशा त्रिदिवा क्लमा, अमृता सुकृता चैव सप्तैतास्तत्र निम्नगाः'।

त्रिपुरा=टिपारा

त्रिपुरी (ज़िला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर से 7 मील पश्चिम की ओर तेवर नामक एक छोटा सा ग्राम प्राचीन काल की वैभव शालिनी नगरी त्रिपुरी का वर्तमान स्मारक है। त्रिपुरी का इतिहास महाभारत के समय तक जाता है। महाभारत में त्रिपुरी के राजा

अभिनौजस पर सहदेव की विजय का वर्णन है—'माद्रीसुतस्तत प्रायाद विजयी दक्षिणा दिशम् त्रैपुर स वशे कृत्वा राजानममितौजसम्' सभा० 31, 60 पद्म-पुराण और लिंगपुराण (अध्याय 7) म भी त्रिपुरी का उल्लेख है। तीसरी शती ई० की मुद्राओ म त्रिपुरी का नाम मिलता है। परिव्राजकमहाराज सक्षोभ क 518 ई० के ताम्रपट्टलेख म भी त्रिपुरी का नाम है। 9वी शती ई० म मध्यप्रदश के कलचुरिनरेश कोक्कलदेव ने त्रिपुरी म अपनी राजधानी बनाई। कलचुरि-नरेशो के शासन काल म—12वी शती के मध्य तक त्रिपुरी की सर्वांगीण उन्नति हुई। स्थापत्य के अतिरिक्त संस्कृतसाहित्य भी त्रिपुरी क अनुकूल वातावरण म खूब फलाफूला। कर्पूरमजरी के प्रसिद्ध लेखक महाकवि राजशेखर कुछ समय तक त्रिपुरी म रहे थे। कलचुरि नरेश शैव होत हुए भी अन्य सप्रदायो के प्रति पूर्णत सहिष्णु थे और इसलिए इनके राजत्व काल म हिंदू संस्कृति का सुदर विकास हुआ। युवराजदेव द्वितीय (975 1000) के समय म त्रिपुरी अमरावती के समान सुदर थी—'तत्रान्वय नयवता प्रवरो नरेन्द्र पौरदरीमिवपुरीं त्रिपुरी पुनान' (जबलपुर ताम्रलेख)। कलचुरि नरश कर्णदेव (1041-73) ने भी त्रिपुरी के यश को दूर दूर तक फैलाया। त्रिपुरी के खडहरो से अनेक मूर्तियां उपलब्ध हुई हैं। इनम त्रिपुरेश्वर महादेव की प्रतिमा उल्लेखनीय है। कुछ लोगो का मत है कि त्रिपुरेश्वर शिव का मदिर कलचुरिकाल मे त्रिपुरी मे स्थित था किंतु यह आश्चर्य की बात है कि इस मदिर का उल्लेख किसी कलचुरि अभिलेख मे नही है यद्यपि ये नरेश शैव ही थे। बाल्सागर नामक सरोवर के तट पर कई शैव मदिरो के अवशेष आज भी हैं। यही गजलक्ष्मी की मूर्ति भी मिली थी। त्रिपुरी की कलचुरिकालीन मूर्तियो मे आभूषणो का बाहुल्य दिखलाई देता है। त्रिपुरी से प्राप्त बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री भारतीय संग्रहालय कलकत्ता मे सुरक्षित है। इसम प्रवचनमुद्रा म स्थित बुद्ध की मूर्ति विशेष कलापूर्ण है। त्रिपुरी क समीप ही जगलो के भीतर कर्णबेल या कर्णावती नगरी के खडहर है।

त्रिमली (महाराष्ट्र)

कर्णाटक विजय के लिए जाते समय शिवाजी ने शेरखा लोदी को हराया था जो त्रिमली महाल म बीजापुर के सुल्तान की ओर से वहा के शासक क रूप मे नियुक्त था। उसने त्रिमली के निकट शिवाजी की सेना के अग्रभाग पर आक्रमण किया पर वह बुरी तरह से हारा और पकडा गया। इस घटना का उल्लेख कविवर भूषण ने शिवराज भूषण काव्य मे इस प्रकार किया है— दौरि कर्णाटक म तोरि गढ़ कोट ली हू मोदी सो पकरि लादी शेरखा अचानको'।

त्रियामा=यमुना नदी (डाउसन-क्लासिकेल डिक्शनरी)
त्रिवनमल्लाई (मद्रास)

प्राचीन शिवतीर्थ जहा पाचो ज्योतिर्लिंगो का स्थान माना जाता है। कार्तिक तथा चैत मे मदिरो के निकट बडे मेले लगते है।

त्रिवाकुर (दे० तिरुवाकुर)
त्रिविक्रमपुर (दे० तिरुवापुर)
त्रिविष्टप

कुछ विद्वानो के मत मे तिब्बत का प्राचीन भारतीय नाम त्रिविष्टप है और तिब्बत त्रिविष्टप का अपभ्रंश है। पौराणिक साहित्य म त्रिविष्ट नामक एक स्वर्ग का वर्णन है। सभव है इस कल्पना का प्राचीन तिब्बत देश स कुछ सबध हो। तिब्बत प्राचीन काल स ही योगियो और सिद्धो का घर माना जाता रहा है तथा अपने पर्वतीय सौदर्य क लिए भी प्रसिद्ध है। ससार म सबसे अधिक ऊचाई (समुद्रतल स 12 सहस्र फुट स भी अधिक) पर बसा हुआ प्रदेश भी तिब्बत ही है। इस देश की उच्चता, दुरूहता एव उसा शेष ससार स पृथक रहने के कारण तथा सिद्धो की पुण्यभूमि होने क नाते प्राचीन भारतीयो ने उसकी स्वर्ग क रूप म कल्पना कर ली हो तो कोई आश्चर्य नहीं। वैस भी शिव का निवास कैलास पर ही माना जाता था जो तिब्बत म ही स्थित है। कालिदास ने कैलास और मानसरोवर के निकट बसी हुई अलकापुरी का मेघदूत म वर्णन किया है। यह वर्णन भी स्वर्ग या किसी काल्पनिक सौदर्य से मडित देश के वर्णन के समान ही जान पडता है।

त्रिवेंद्रम (केरल)

तिरुवाकुर (=ट्रावनकोर) की भूतपूर्व राजधानी। 18वी शती म राजा मार्तण्ड वर्मा ने केरल देश की सीमाए विस्तृत करने के पश्चात इस नगर म अपनी राजधानी स्थापित की थी। इस नगर के अधिष्ठातृ देव पद्मनाभ को उन्होने अपना राज्य समर्पण कर दिया था तथा स्वय देवता क प्रतिनिधि के रूप मे राज्य करते थ। यहा पद्मनाभ विष्णु का विशाल मदिर स्थित है। उन्हें अनन्तस्वामी भी कहते है। जान पडता है कि तिरुविदम् या त्रिवेंद्रम तिरुअनतपुर नाम का ही रूपातर है।

त्रिवेलूर=त्रिवल्लूर
त्रिशिरापल्ली=त्रिचनापल्ली
त्रिशृग

विष्णुपुराण क अनुसार त्रिशृग मेरु क उत्तर म स्थित एक पर्वत है जो

पूर्व की ओर समुद्र के अदर तक चला गया है—'त्रिश्रृंगोजारुधिश्चैव उत्तरौवर्षपर्वतौ पूर्वपश्चायतावेतावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ—विष्णु० 2,2,43। त्रिश्रृंग सभवत हिमालय की उत्तरी पूर्वी श्रेणियो मे से किसी का नाम हो सकता है। (दे० जारुधि)

त्रिसामा

श्रीमदभागवत 5,19,18 मे उल्लिखित एक नदी—'त्रिसामा कौशिकी मदाकिनी यमुना सरस्वती विश्वेति महानद्य'। यूनानी लेखक स्ट्राबो के उल्लेख के अनुसार, बैक्ट्रिया के यवनराज मिनेडर (मिलिंदपनहो नामक ग्रंथ का मिलिंद जो भारत मे आने के पश्चात् बौद्ध हो गया था) ने भारत पर आक्रमण करते समय झेलम और 'इसामस' नामक नदियो को पार किया था। रायचौधरी ने इसामस के त्रिसामा होने की सभावना मानी है (दे० पोलीटिकल हिस्ट्री आव एशेंट इडिया पृ० 319) किंतु यह अनुमान ठीक नही जान पडता। श्रीमद्भागवत के उल्लेख के अनुसार त्रिसामा कौशिकी के निकट होनी चाहिए। कौशिकी बगाल-उडीसा की सीमा के निकट बहने वाली कोश्या है। विष्णुपुराण 2,3,13 से भी त्रिसामा उडीसा (कलिंग) की कोई नदी जान पडती है ('त्रिसामा चार्यकुल्याद्या महेद्रप्रभवा स्मृता') क्योकि इसका उद्‌गम आर्यकुल्या के साथ ही महेद्रपर्वत मे माना गया है। आर्यकुल्या उडीसा की ऋषिकुल्या जान पडती है।

त्र्यक्ष

'द्वयक्षास्त्र्यक्षाल्ललॅटाक्षान् नानादिग्भ्य समागतान्, औष्णीकानन्तवासाश्च रोमकान् पुरुषादकान्। एकपादाश्चतत्राहमपश्य द्वारिवारितान्–महा० सभा० 51, 17 18। यहा दुर्योधन ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ म विदेशो से उपहार लेकर आने वाले विभिन्न देशवासियो का वर्णन किया है। इनमे द्वयक्ष तथा त्र्यक्ष देशो से आए हुए लोग भी थे। प्रसग से ये भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा के परिवर्ती प्रदेशो के निवासी जान पडते हैं। कुछ विद्वानो के मत मे त्र्यक्ष, तरखान (दक्षिणी रूस मे स्थित) का नाम है और द्वयक्ष बदखशा का। उपर्युक्त उद्धरण मे इन लोगो का औष्णीष या पगडी धारण करने वाला बताया गया है जो इन ठडे देशो के निवासियो के लिए स्वाभाविक बात मानी जा सकती है। (दे० द्वयक्ष, ललाटाक्ष)

त्र्यबक

पश्चिमी घाट की गिरिमाला का एक पर्वत। इसके एक भाग ब्रह्मगिरि

से गोदावरी निकलती है। ब्रह्मगिरि मे एक प्राचीन दुर्ग भी है। त्र्यंबकेश्वर नाम की बस्ती नासिक से 18 मील दूर है।

त्र्यबकेश्वर (जिला नासिक, महाराष्ट्र)

नासिक से 18 मील दूर प्राचीन शिवतीर्थ। यह शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगो म से है और अजनेरी पहाडी पर अवस्थित है। गोदावरी का उद्गम निकट ही है। (दे० त्र्यबक, ब्रह्मगिरि)

थराड (गुजरात)

पालनपुर-कडला रेलमार्ग पर देवराज स्टेशन और राधनपुर के निकट प्राचीन जैन तीर्थ है। यहा प्राचीन काल मे विशाल जिनालय था जो मध्यकाल म मुसलमानो द्वारा नष्ट कर दिया गया। आजकल भी खडहरो स प्राचीन मूर्तिया मिलती है। इस नगर का प्राचीन नाम शायद स्थिरपुर था। जन ग्रंथ तीर्थमालाचैत्यवदन म इसे 'थारापद्रपुर' कहा गया है।

थानेसर दे० स्थानेश्वर

थारापद्रपुर

प्राचीन जैन तीर्थ जो वर्तमान थराड है। इसका तीर्थमाला चैत्यवदन म इस प्रकार उल्लेख है—'थारापद्रपुरे च वाविहपुरे कासद्रह चेडरे'। यह राधनपुर (गुजरात) के पास स्थित है। (दे० थराड)

थूबौन (बुदेलखड, म० प्र०)

बुदेलखड की मध्यकालीन वास्तुकला के अनेक सुदर अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

थ्रिक्कक्कर ई (केरल)

यह कोचीन से 6 मील पर तालवृक्षो से आच्छादित छोटा सा ग्राम है किंतु जनश्रुति के अनुसार एक समय प्राचीन केरल की यहा राजधानी थी। कहा जाता है कि पुराणो मे प्रसिद्ध पाताल देश के राजा महाबली यहीं राज्य करते थे और वामन भगवान ने इनसे तीन पग धरती मागने के बहाने समस्त पृथ्वी का राज्य ले लिया था। त्रिक्कक्करई म वामन का एक अति प्राचीन मन्दिर है। केरल क जातीय त्योहार ओनम के दिन यहा पर वामनदेव की पूजा की जाती है। ग्राम से थोडी दूर पर एक पथरीली गुफा है। लोक कथा के अनुसार यहा महाबली का शस्त्रागार था। यह भी कहा जाता है कि यहीं पाडवो का जलाने के लिए कौरवो ने लाक्षागृह बनवाया था। इस दूसरी अनुश्रुति म कोई तथ्य नही जान पडता क्योकि लाक्षागृह जिस स्थान पर बनवाया गया था उसका नाम महाभारत के अनुसार वारणावत था जो जिला मेरठ (उ० प्र०) म स्थित

वरनावा है। महाभारत से ज्ञात होता है कि वारणावत हस्तिनापुर (जिला मेरठ) से अधिक दूर न था।

दडक=दडकवन=दडकारण्य

रामायण काल म यह वन विध्याचल से कृष्णा नदी के काठे तक विस्तृत था। इसकी पश्चिमी सीमा पर विदभ और पूर्वी सीमा पर कलिंग की स्थिति थी। वाल्मीकि रामायण अरण्य० 1,1 मे श्रीराम का दडकारण्य मे प्रवेश करने का उल्लेख है—'प्रविश्य तु महारण्य दडकारण्यमात्मवान रामो ददश दुधष-म्तापसाश्रममडलम्'। लक्ष्मण और सीता के साथ रामचद्र जी चित्रकूट और अत्रि का आश्रम छोडन के पश्चात यहा पहुचे थे। रामायण म, दडकारण्य म अनेक तपस्विया क आश्रमा का वणन है। महाभारत म सहदेव की दिग्विजययात्रा के प्रसग मे दडक पर उनकी विजय का उल्लेख है—'तत शूर्पारक चैव तालाक-टमथापिच, वशेचक्रे महातेजा दडकाश्च महाबल' महा० सभा० 31,66। सरभग-जातक के अनुसार दडकी या दडक जनपद की राजधानी कुभवती थी। वाल्मीकि रामायण, उत्तर० 92,18 के अनुसार दडक की राजधानी मधुमत म थी। महावस्तु (सनाट का सस्करण पृ० 363) मे यह राजधानी गोवधन या नासिक म बताई है। वाल्मीकि अयो० 9,12 म दडकारण्य के वैजयत नामक नगर का उल्लेख है। पौराणिक कथाओ तथा कौटिल्य के अथशास्त्र मे दडक के राजा दाडक्य की कथा है जिनका एक ब्राह्मण कया पर कुदष्टि डालने से सवनाश हो गया था। अय कथाओ म कहा गया है कि भागव कया दडका के नाम पर ही इस वन का नाम दडक हुआ था। कालिदास ने रघुवश 12,9 म दडकारण्य का उल्लेख किया है—'स सीतालक्ष्मणसख सत्याद्गुरुमलोपयन् विवेश दडका-रण्य प्रत्येक च सतामन'। कालिदास ने इसके आग 12,15 म श्रीराम के दडका रण्य प्रवश के पश्चात उनकी भरत से चित्रकूट पर होने वाली भेट का वर्णन किया है जिससे कालिदास के अनुसार चित्रकूट की स्थिति भी दडकारण्य के ही अतगत माननी होगी। रघुवश 14 25 म वणन है कि अयोध्या निवतन के पश्चात राम और सीता का दडकारण्य के कष्टा की स्मृतिया भी बहुत मधुर जान पडती थी— तयायथाप्रार्थितमिन्द्रियार्थानासेदुपा सदमसु चित्रवत्सु, प्राप्तानि दु खान्यपि दडकेषु सचित्यमानानि सुखान्यभूवन्'। रघुवश 13 म जनस्थान का राक्षसो क मारे जाने पर 'अपास्तविघ्न' कहा गया है। जनस्थान को दडकारण्य का ही एक भाग माना जा सकता है। उत्तररामचरित मे भवभूति न दडकारण्य का सुदर वणन किया है। भवभूति के अनुसार दडकारण्य जनस्थान के पश्चिम मे था (उत्तररामचरित, अक 1)

दडकी

सरभगजातक में दडक या दडकारण्य का नाम है। इसकी राजधानी कुभवती कही गई है।

दडभुक्ति

वधमानभुक्ति (=वर्तमान बदवान, प० बगाल) का एक प्रदश जो उद्यानो के लिए प्रसिद्ध था (दे० एशेट ज्याग्रोफी ऑव इडिया)

दतपुर=दतपुरनगर

दतपुर बगाल की खाडी पर प्राचीन बदरगाह था। मलय प्रायद्वीप के लिगोर नामक प्राचीन भारतीय उपनिवेश को बसान वाले राजकुमार के विषय मे परपरागत कथा है कि वह मौर्यसम्राट् अशोक का वशज था और मगध स भाग कर दतपुर क बदरगाह से एक जलयान द्वारा यात्रा करके मलय देश पहुचा था। श्री न० ला० डे के अनुसार वतमान जगन्नाथपुरी ही प्राचीन दतपुर है।

दतालोक

वेस्सन्तर-जातक की कथा म उल्लिखित एक पवत, जहा वस्सन्तर ने अपन बच्चो को एक निदयी ब्राह्मण को दान मे द दिया था। युवानच्वाग क अनुसार इस कथा की घटनास्थली उरशा (जिला हजारा, प० पाकि०) म थी। दतालोक इस प्रकार पश्चिमी कश्मीर का कोई पवत हो सकता है।

दतेवर (जिला बस्तर, म० प्र०)

दतेश्वरीमाज नामक एक प्राचीन, रहस्यपूण मदिर आदिवासियो क इस सुनसान प्रदेश म स्थित है।

दबल (महाराष्ट्र)

यह स्थान चालुक्यवास्तुशली म निर्मित एक प्राचीन मदिर क लिए उल्लेखनीय है।

दक्षिणकाशी

लोकश्रुति म नासिक का एक नाम है।

दक्षिणकोसल

विध्याचल पवत की उपत्यकाओ का वह भाग जिसम वतमान रायपुर और बिलासपुर (म० प्र०) के जिल तथा उनका परिवर्ती क्षेत्र सम्मिलित है। समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति म कोसलकमहेद्र का उल्लेख है। यह महेद्र दक्षिण कोसल क किसी भाग का शासक था। महाभारत म इस भूभाग को प्राक्कोसल भी कहा गया है। आजकल इस महाकोसल कहते हैं। यह तथ्य है कि दक्षिण कोसल और उत्तर कोसल परस्पर भाषा और सस्कृति की दृष्टि स सबधित रह

है। दक्षिण कोसल की बोली आज भी अवधी (उ० प्र० के अवध क्षेत्र की बोली) से बहुत मिलती जुलती है। सभवत रामचद्र जी के पश्चात अयोध्या के शोभाहीन हो जाने पर जब कुश ने दक्षिण कोसल मे कुशावती नगरी बसाई तब अयोध्या के अनेक निवासी दक्षिण कोसल म जाकर बस गए थे।

दक्षिणगिरि

महावश 13,5 म इस स्थान का उल्लेख इस प्रकार है—'इस बीच मे उपाध्याय और सघ को वदना कर तथा राजा (अशोक) से पूछ, स्थविर महेद्रसेन, चार स्थविरो तथा सघमित्रा के पुत्र महासिद्ध षडभिक्षु सुमन सामणेर को साथ ले, सबधियो से मिलने के लिए दक्षिणगिरि गए' (आनद कौसल्यायन, महावश पृ०68)। इसी के आगे विदिशागिरि का उल्लेख है। दक्षिणगिरि साची या भील्सा (म० प्र०) के परिवर्ती पहाडी प्रदेश की कोई पहाडी हो सकती है। सभवत यह साची ही है। यह भी सभव है कि कालिदास ने जिस पहाडी को मेघदूत म 'नीची' या 'नीच गिरि' कहा है उसी का दूसरा नाम दक्षिणगिरि हो सकता है। 'दक्षिण' और 'नीच' समानार्थक शब्द भी है। (दे० नीचगिरि)

दक्षिणमधुरा

बौद्धकाल म दक्षिण भारत मे स्थित वर्तमान मदुराई या मदुरा (मद्रास) को दक्षिण मधुरा (=मथुरा) कहते थे। यह पाड्यदेश की राजधानी थी। हरिषेण के बृहत्कथाकोश, कथानक 7,1 म इसका उल्लेख इस प्रकार है—'अथ पाडय महादेशे दक्षिणमधुराऽभवत् धनधान्य समाकीर्णा'। उत्तर भारत की प्रसिद्ध नगरी मथुरा को उत्तर मधुरा की सज्ञा दी जाती थी (अटठकथा प० 118)। मदुरा वास्तव म मथुरा या मधुरा का रूपातर है।

दक्षिणमल्ल

महाभारत सभा० म भीम की दिग्विजय यात्रा के प्रसग म विजित राष्ट्रो मे इसका उल्लेख है—'ततो दक्षिणमल्लाश्च भोगवत च पर्वतम। तरसवाजयद् भीमो नातितीव्रेण कर्मणा' सभा० 30,12 इसका उल्लेख वत्सभूमि के पश्चात तथा विदेह के पूर्व हुआ है। बौद्धकाल म मल्लदेश वर्तमान गोरखपुर जिले (उ० प्र०) के परिवर्ती क्षेत्र म बसा हुआ था। जान पडता है कि महाभारत मे, जैसा कि प्रसग से सूचित होता है इसी प्रदेश का दक्षिण मल्ल कहा गया है। भव है उस समय यही प्रदेश उत्तरी और दक्षिणी भागो मे विभाजित रहा हो।

दक्षिण सिंधु

मध्यप्रदेश म बहने वाली नदी सिंधु या सिंध जो यमुना की सहायक नदी है। यह काली सिंध भी हो सकती है जो चंबल की उपनदी है। अवश्य ही पंचनदप्रदेश की प्रसिद्ध नदी सिंधु से पृथक करने के लिए ही मध्यप्रदेश की नदी को साहित्य मे कही कही दक्षिणसिंधु कहा गया है।

दक्षिणापथ

विंध्याचल के दक्षिण मे स्थित भूभाग का प्राचीन नाम। सहदेव की दक्षिण भारत की दिग्विजय के प्रसग म महाभारत सभा० 31,17 म दक्षिणापथ का उल्लेख है—'त जित्वा स महाबाहु प्रययौ दक्षिणापथम गुहामासादयामास किष्किंधा लोकविश्रुताम्'। क्षत्रप रुद्रदामन् के गिरनार-अभिलेख (लगभग 1.0 ई०) म सातकर्णि-नरेश को दक्षिणापथ का पति कहा गया है—'यौधेयाना प्रसह्योत्सादकेन दक्षिणापथपत सातकर्णेर्द्विरपिनिर्व्याजमवजित्यावजित्य—' इत्यादि। (दे० गिरनार) गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति म कोसल स लेकर कुस्थलपुर तक के प्रदेश के विजित नरेशो को 'दक्षिणापथ राजा' कहा गया है—'कोसलक महेद्रकौस्थल पुरकधनजयप्रभृति सवदक्षिणापथराजा ग्रहणमोक्षानुगृहजनितप्रतापोन्मिश्रमहाभाग्यस्य—' विंध्याचल के उत्तर म स्थित प्रदेश का सामान्य नाम उत्तरापथ था।

दतिया (बुदेलखड, म०)

झासी से 16 मील दूर ह। प्राचीन काल मे दतिया दतवक्त्र की राजधानी मानी जाती थी। दतवक्त्र का मदिर दतिया का मुख्य मदिर है। इस लोग मडिया महादेव का मदिर कहते है। यह मदिर एक पहाडी पर है। दतिया का प्राचीन दुर्ग जो एक ऊची पहाडी पर स्थित है ओडछा नरेश वीरसिंह देव बुदेला (17वी शती) का बनवाया हुआ कहा जाता है। किंवदती है कि इस बनवाने मे आठ वर्ष, दस मास और छब्बीस दिन लगे थे और बत्तीस लाख नब्बे हजार नौ सौ अस्सी रुपए व्यय हुए थे। दतिया म बुदेल राजपूतो की एक शाखा का राज्य आधुनिक समय तक रहा है।

ददरपुर

चेतियजातक के अनुसार चेदिनरेश उपचर के एक पुत्र न दद्दरपुर नामक नगर चेदि देश म बसाया था। इसके चार अन्य पुत्रो ने भी चार विभिन्न नगरो की स्थापना की थी। रायचौधरी का मत है कि यह राजा महाभारत आदि० 63,30 33 मे उल्लिखित चेदि नरेश उपरिचर वसु है जिसके पाच पुत्रों

न पाच राज्यवश चलाए थे (पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एशेंट इडिया पृ० 110) (दे० चेदि)

दधिपद्र

तीर्थमाला चैत्यवदन मे उल्लिखित प्राचीन जन तीथ,—'माडेरे दधिपद्र ककरपुरे ग्रामादि चैत्यालय'। यह वतमान दाहोद (गुजरात) है।

दधिमडसागर=दधिसमुद्र

पौराणिक भूगोल की उपकल्पना मे पृथ्वी के सप्त महासागरो म से एक। यह शाकद्वीप के चतुर्दिक स्थित है—'ऐते द्वीपा समुद्रैस्तु सप्तमप्तभिरावृता लवणेक्षुसुरासर्पिदधिदुग्ध जल समम्' विष्णु० 2,2,6

दधिमती

सौराष्ट्र (काठियावाड, गुजरात) के उत्तरपश्चिमी भाग–हालार–मे बहन वाली नदी डेमी का प्राचीन नाम।

दधिमाली

शूर्पारक जातक म वणित एक समुद्र जो भगुकच्छ क वणिका का समुद्र यात्रा म अग्नि माली समुद्र के पश्चात मिला था—'यथा दधि व खीर व समुद्दोपति दिस्सति अर्थात यह समुद्र दधि और दूध के समान दीखता है। इस समुद्र म चादी का उत्पन्न होना कहा गया है, 'तस्मिपन समुद्दे रजत उत्पन्नम'

दनकौर (जिला बुलदशहर, उ० प्र०)

एक प्राचीन मदिर तथा सरोवर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। किंवदती है कि इस द्रोणाचाय ने बसाया था जिनके नाम से यहा एक प्राचीन मदिर भी है।

दभोई (जिला बडौदा, गुजरात)

प्राचीन नाम दर्भावती या दभवती। यह भडौच से 25 मील है। दभोइ पुरानी व्यापारिक मडी है। 10वी शती के एक मदिर के अवशेष यहा न कुछ वप पूव मिले थे। उत्खनन श्री निमलकुमार बोस तथा श्री अमृतपाडया द्वारा किया गया था। दभोई या दर्भावती का जैन तीथ के रूप मे उल्लेख जैन स्तोत्र ग्रथ तीथमाला चैत्यवदन मे है— श्री तेजल्लविहार निवतटके चद्रे च दर्भावते।'

दमन=डामन

पश्चिमी समुद्र तट पर भूतपूव पुर्तगाली बस्ती जो 1961 म भारत म सम्मिलित कर ली गई। यह बबई से सौ मील उत्तर मे है। 1531 ई० मे दमन पर पुतगाली बेडे ने आक्रमण करके नगर को नष्ट कर दिया था। दमन का पुनर्निर्माण होने पर इस पर पुतगाल का अधिकार 1559 ई० म हो गया।

दमन के दो भाग हैं—एक भाग समुद्रतट पर है और दूसरा, नगरहवेली थोड़ी दूर पर जगल मे स्थित है। पहले यह भाग दमन के बदरगाह से भारतीय भूमि द्वारा पृथक् था। दमन का क्षेत्रफल 22 वर्ग मील है।

दया

उड़ीसा की नदी जिसके तट पर धौली (प्राचीन तोसलि) बसी हुई है, (दे० धौली)। इसी नदी के तट पर अशोक मौर्य के समय मे होने वाले प्रसिद्ध कलिंग-युद्ध की स्थली थी। कलिंग युद्ध के पश्चात अशोक के हृदय मे मानव मात्र के प्रति करुणा का सचार हुआ और उसने धर्म के प्रचार के लिए अपना शेष जीवन समर्पित कर दिया।

दरतपुरी दे० दरद

दरद=दर्दिस्तान

महाभारत मे दरदनिवासियो के काबोजो के साथ उल्लेख से ज्ञात होता है कि इनके देश परस्पर सन्निकट होगे—'गृहीत्वा तु बल सार फाल्गुन पाडुनदन दरदान् सह काम्बोजैरजयत पाकशासनि' सभा० 27,23। दरदो पर अर्जुन ने दिग्विजय-यात्रा के प्रसग मे विजय प्राप्त की थी। दरद का उल्लेख विष्णुपुराण मे भी है और टॉलमी तथा स्ट्रेबो ने भी दरदो का वर्णन किया है। दरद का अभिज्ञान दर्दिस्तान के प्रदेश से किया गया है जिसमे गिलगिट और यासीन का इलाका शामिल है। यह प्रदेश उत्तरी कश्मीर और दक्षिणी रूस के सीमात पर स्थित है। विल्सन के अनुसार दरद लोगो का इलाका आज भी वही है जो विष्णुपुराण, स्ट्रेबो तथा टॉल्मी के समय था—अर्थात सिंध नदी द्वारा सचित वह प्रदेश जो हिमालय की उपत्यकाओ मे स्थित है। दरतपुरी दरद की राजधानी थी (मार्कडेय पुराण, 57)। इसका अभिज्ञान डा० स्टाइन ने गुरेज से किया है। सस्कृत साहित्य मे दरद और दरत दोनो ही रूप मिलते है। कुछ विद्वानो का मत है कि सस्कृत का शब्द 'दरिद्र' दरद से ही व्युत्पन्न है और मौलिक रूप मे यह शब्द दरद वासियो की हीनदशा का द्योतक था।

दरेदा (दे० जसो)

दर्दुर

सुदूर दक्षिण की एक पर्वत श्रेणी जो सभवत वर्तमान मसूर राज्य की दक्षिणी पूर्वी सीमा बनाती है। प्राचीन साहित्य मे प्राय मलय और दर्दुर दोनो पर्वतो का एक साथ ही उल्लेख मिलता है—'स निविश्य यथाकाम तटष्वालान चदनौ स्तनाविव दिशस्तस्या शैलौ मलयदर्दुरौ' रघु० 4 51 मार्कडेय पुराण,

57 मे भी मलय और ददुर पवतो का नाम साथ साथ ही है। महाभारत सभा० 51, दाक्षिणात्य पाठ मे ददुर मे उत्पन्न चदन का वणन है—'दादुर चन्दन मुख्य भारान् षण्णवति ध्रुवम्, पाड्वाय ददु पाडय शखास्तावत एव च'। ऐसा ही उल्लेख वाल्मीकि रामा०, अयो० 91,24 म है—'मलय ददुर चैव तत स्वेद-नुदो ऽनिल उपस्पृश्य ववौ युक्त्यासुप्रियात्मा सुख शिव'। मलय पूर्वीघाट की वह श्रेणी है जिसम नीलगिरि की पहाडिया सम्मिलित हैं।

दभवती=दर्भावती

दभोई का प्राचीन नाम। (दे० दभोई)

दभशयनम (मद्रास)

रामनाद अथवा रामनाथपुरम् से 6 मील दूर है। समुद्र यहा से 3 मील है। कहा जाता है कि समुद्र को पार करने के लिए श्री रामचद्र ने समुद्र से 3 दिन तक प्रार्थना की थी और इसी स्थान पर कुशासन पर शयन कर उन्होने व्रत का अनुष्ठान किया था जिसके कारण इस स्थान को दभशयन कहते हैं। वाल्मीकि रामायण मे इस घटना का वणन इस प्रकार है— तत सागरवेलाया दर्भानास्तीयराघव, अजलि प्राङ्मुख कृत्वा प्रतिशिश्ये महोदधे,' युद्ध० 21,1 अर्थात तब समुद्र के तीर पर कुश या दभ बिछाकर रामचद्र पूव की ओर समुद्र को हाथ जोडकर सो गए। 'स त्रिरात्रोषितस्तत्रनयज्ञो धमवत्सल उपासत तदाराम सागर सरितापतिम्, युद्ध० 27,11 अर्थात् नीतिज्ञ, धमपरायण राम ने विधिपूवक तीन रात वहा रहकर सरितापति समुद्र की उपासना की।

दशपुर=मदसोर

गुप्तकालीन भारत का प्रसिद्ध नगर जिसका अभिज्ञान मदसोर (जिला मदसोर, पश्चिमी मालवा, म० प्र०) से किया गया है। लटिन के प्राचीन भ्रमणवृत्त परिप्लस म मदसोर को मिनगल कहा गया है। (दे० स्मिथ—अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया, पृ० 221) कालिदास ने मेघदूत (पूवमेघ 49) मे इसकी स्थिति मेघ के यात्राक्रम म उज्जयिनी के पश्चात और चबल नदी के पार उत्तर म बताई है जो वतमान मदसोर की स्थिति के अनुकूल ही है—'तामुत्तीय व्रज परिचितभ्रूलताविभ्रमाणा, पक्ष्मोत्क्षेपादुपरिविलसत्कृष्णसारप्रभाणा, कुदक्षेपानुगमधुकरश्रीजुषामात्मबिम्ब पात्रीकुवन दशपुरवधूनेत्रकौतूहलानाम'। गुप्त-सम्राट् कुमारगुप्त के शासनकाल (472 ई०) का एक प्रसिद्ध अभिलेख मदसोर से प्राप्त हुआ था जिसम लाट देश के रेशम के व्यापारियो का दशपुर म आकर बस जाने का वणन है। इन्होने दशपुर म एक सूय के मदिर का निर्माण करवाया था। बाद म इसका जीर्णोद्वार हुआ, और यह अभिलेख उसी समय

साहित्यिक संस्कृत भाषा में उत्कीर्ण करवाया गया। तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक तथा सामाजिक अवस्था पर इस अभिलेख से पर्याप्त प्रकाश पडता है। वत्सभट्टि द्वारा प्रणीत इस सुंदर अभिलेख का कुछ भाग इस प्रकार है—'ते देश-पार्थिव गुणापहृता प्रकाशमध्यादिजान्यविरलान्यसुखान्यपास्य जातादरादशपुरं प्रथमं मनोभिरन्वागता ससुतबंधुजना समेत्य', 'मत्तेभगंडतटविच्युतदानबिंदु सिक्तोपलाचलसहस्रविभूषणाया पुष्पावनम्रतरुमंडवतंसकायाभूमे पर तिलक भूतमिदंक्रमेण । तटोत्थवृक्षच्युतनैकपुष्पविचित्रतीरान्तजलानि भांति । प्रफुल्लपद्माभरणानि यत्र सरांसि कारंडवसंकुलानि । विलोलवीची चलितार-विंदपतद्रज पिंजरितैश्च हंसैं, स्वकेसरोदारभरावभुग्नैं क्वचित्सरांस्यम्बुरुहैश्च भांति । स्वपुष्पभारावनतैर्नगैं द्रैमदप्रगल्भालिकुलस्वनैश्च, अजस्रगाभिश्च पुरांगनाभिवनानि यस्मिन् समलंकृतानि ।चलत्पताकान्यबलासनाथान्यत्यर्थ शुक्ला न्यधिकोन्नतानि, तडिल्लता चित्रसिताभ्रकूटतुल्योपमानानि गृहाणि यत्र।' अर्थात् वे रेशम बुनने वाले शिल्पी (फूलों के भार से झुके सुंदर वृक्षों, देवालयों और सभाविहारों के कारण सुंदर और तरुवराच्छादित पर्वतों से छाए हुए लाट देश से आकर) दशपुर में, वहां के राजा के गुणों से आकृष्ट होकर रास्ते के कष्टों की परवाह न करते हुए, बंधुबांधव सहित बस गए। यह नगर (दशपुर) उस भूमि का तिलक है जो मत्तगजों के दान बिंदुओं से सिक्त शिला वाले सहस्रों पहाड़ों से अलंकृत है और फूलों के भार से अवनत वृक्षों से सजी हुई है, जो तट पर के वृक्षों से गिरे हुए अनेक पुष्पों से रंगबिरंगे जलवाले और प्रफुल्ल कमलों से भरे और कारंडव पक्षियों से संकुल सरोवरों से विभूषित है, जो विलोल लहरियों से दोलायमान कमलों से गिरते हुए पराग से पीले रंगे हुए हंसों और अपने केसर के भार से विनम्र पद्मों से सुशोभित है, जहां फूलों के भार से विनत वृक्षों से सघन और मदप्रगल्भ भ्रमरों से गुंजित, और निरंतर गतिशील पौरांगनाओं से समलंकृत उद्यान है और जहां अत्यधिक श्वेत और तुंग भवनों के ऊपर हिलती हुई पताकाएं और भीतर स्त्रियां इस प्रकार शोभायमान हैं मानो श्वेत बादलों के खंडों में तडिल्लता जगमगाती हो, इत्यादि।

दशपुर से, 533 ई० का एक अन्य अभिलेख जिसका संबंध मालवाधिपति यशोवर्मन से है, सौंधी ग्राम के पास एक कूपशिला पर अंकित पाया गया था। यह अभिलेख भी सुंदर काव्यमयी भाषा में रचा गया है। इसमें राज्यमंत्री अभयदत्त की स्मृति में एक कूप बनाए जाने का उल्लेख है। अभयदत्त को पारियात्र और समुद्र से घिरे हुए राज्य का मंत्री बताया गया है। दशपुर में यशोधर्मन् के काल के विजय-स्तंभों के अवशेष भी हैं जो उसने हूणों पर प्राप्त

विजय की स्मृति मे निर्मित करवाए थे। एक स्तभ के अभिलेख मे पराजित हूणराज मिहिरकुल द्वारा की गई यशोधमन की सेवा तथा अचना का वणन है —'चूडापुष्पोपहारमिहिरकुल नृपेणार्चितपादयुग्मम।' इनमे से प्रत्येक स्तभ का व्यास 3 फुट 3 इच, ऊचाई 40 फुट से अधिक और वजन लगभग 5400 मन था। मदसौर के आसपास 100 मील तक वह पत्थर उपलब्ध नही है जिसके ये स्तभ बने है।

मदसौर से गुप्तकाल के अनेक मदिरो के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं जो किले के अदर कचहरी के सामने वाली भूमि मे आज भी सुरक्षित है। कहा जाता है कि 14वी सती के प्रारभ मे अलाउद्दीन खिलजी ने इस महिमामय नगर को लूट कर विध्वस्त कर दिया और यहा एक किला बनवाया जो खडहर के रूप मे आज भी विद्यमान है। दशपुर की गणना प्राचीन जैनतीर्थों मे की गई है। जैन-स्तोत्रगथ तीथमालाचैत्य वदन मे इसका नामोउल्लेख है—'हस्तोडीपुर पाडला-दशपुरे चारूपचासरे'। वाराहमिहिर ने वृहत्सहिता, 14 मे दशपुर का उल्लेख किया है। मदसौर को आसपास के गावो के लोग दसौर कहते हैं जो दशपुर का अपभ्रश है। मदसौर दसौर का ही रूपातरण है।

दशमौलिका=दशौली

दशाण

(1) बुदेलखण्ड (म० प्र०) का धसान नदी से सिचित प्रदेश। यह नदी भूपाल क्षेत्र की पर्वतमाला से निकल कर सागर जिले म बहती हुई झासी के निकट वेतवा मे मिल जाती है। दशाण का अथ दस (या अनक)नदियो वाला क्षेत्र है। धसान, दशाण का ही अपभ्रश है। महाभारत म दशाण का, भीमसेन द्वारा विजित किए जाने का उल्लख है—"तत स गडकाञ्छूरो विदेहान भरतषभ, विजित्याल्पेन कालेन दशार्णानजयत प्रभु। तत्र दशाणको राजा सुधर्मालोमहषणम्, कृतवान् भीमसनेन महद युद्ध निरायुधम्" सभा० 29, 4-5। यहा उस समय सुधर्मा का शासन था। महाभारत म सुधर्मा क पूवगामी दशाण नरेश हिरण्यवर्मा का उल्लेख है। इसकी कन्या का विवाह द्रुपदपुत्र शिखडी के साथ हुआ था। (हिरण्यवर्मेति नृपो-सौ दाशार्णिक स्मृत स च प्रादान्महीपाल कन्या तस्मै शिखडिने—महा०, उद्योग 199,10) महाभारत के पश्चात दशाण का उल्लेख बौद्धजातको तथा कौटिल्य के अथशास्त्र मे मिलता है। उस समय विदिशा यहा की राजधानी थी। कालिदास न मघदूत (पूवमेघ 25) म दशाण का सुदर वणन करते हुए इस देश के बरसात मे फूलन फलने वाले जामुन के कजो तथा इस ऋतु म कुछ दिन यहा ठहर जाने वाले यायावर हसो का वणन

किया है—'त्वय्यासन्ने फलपरिणतिश्यामजम्बूवनान्तास्सपत्स्यन्ते कतिपयदिन स्थायिहंसा दशार्णा ।

2 धसान नदी का प्राचीन नाम ।

दशाश्वमेधिक

महाभारत वन० (तीर्थयात्रा प्रसंग) में गंगा तट पर स्थित दशाश्वमेधिक नामक तीर्थ का उल्लेख है—'दशाश्वमेधिक चैव गंगाया कुरुन दन'—वन० 85,87 । संभवतः यह काशी का प्रसिद्ध दशाश्वमेध है । कुछ इतिहासज्ञों का मत है कि दशाश्वमेध भारशिवनरेशों का स्मृति चिह्न है क्योंकि इन्होंने काशी में दश अश्वमेध यज्ञ किए थे ।

दशौली=दशमौलिका (ज़िला गढ़वाल, उ० प्र०)

उत्तराखंड का प्राचीन शिवतीर्थ । कहा जाता है कि दशानन रावण ने यहां शिवोपासना से दस सिर (मौलि=शिर) वरदान में प्राप्त किए थे ।

दात्तामित्री

पतंजलि के महाभाष्य और नन्दीश्वर के व्याकरण में सुवीर देश में स्थित दात्तामित्री नामक नगर का उल्लेख है जो शायद ग्रीक राजा डेमट्रियस (द्वितीय शती ई० पू०) के नाम पर प्रसिद्ध हुआ था । चारक्स (Charax) के इसीडोर-ग्रंथ में (प्रथम शती ई० के प्रारंभ में निर्मित) डेमट्रिआपालिस नामक नगर की स्थिति अराकोसिया या वर्तमान कंधार (अफगानिस्तान) में बताई गई है । बहुत संभव है कि दात्तामित्री, डेमाट्रिआपोलिस का ही भारतीय रूपांतर हो । यह संभावना महाभारत में दत्तमित्र नामक राजा के नामोल्लेख से और भी पुष्ट हो जाती है । दत्तमित्री बैक्ट्रिया के ग्रीक राजा डेमट्रिअस का ही संस्कृत उच्चारण जान पड़ता है । ग्रीक इतिहास-लेखक स्ट्रैबो के वर्णन के अनुसार अंतिआकस (Antiochus) के जामातृ डेमट्रिअस और मिनेंडर (भारतीय नाम मिलिंद) ने भारत तक यूनानी राज्य का विस्तार किया था । दात्तामित्री नगर का ठीक-ठीक अभिज्ञान अनिश्चित है । यह नगर द्वितीय शती ई० पू० में बसाया गया होगा ।

दामणि

पाणिनि ने अष्टाध्यायी में इस गणराज्य का उल्लेख किया है । इसका अभिज्ञान अनिश्चित है । संभव है यह तामिल प्रदेश का कोई गणराज्य हो । तामिल शब्द का प्राचीन उच्चारण दामिल, द्रामिड या द्राविड है । दामणि द्रामिड का रूपांतर हो सकता है ।

दामलिप्त

ताम्रलिप्त का रूपान्तर।

दामोदर

भागीरथी गगा की सहायक नदी जो हजारीबाग (बिहार) की पहाडियो से निकल कर बिहार बगाल के क्षेत्र मे बहती हुई हुगली मे गिर जाती है। हुगली भागीरथी की एक शाखा है।

दामोदरपुर (बगाल)

कुमारगुप्त प्रथम, बुद्धगुप्त तथा भानुगुप्त नामक गुप्तनरेशो के छ दानपट्ट इस स्थान से प्राप्त हुए थे जिनमे उत्तरकालीन गुप्तनरेशो के इतिहास तथा तत्कालीन शासन व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पडता है।

दारानगर (जिला बिजनौर, उ०प्र०)

बिजनौर नगर से 7 मील दक्षिण की ओर गगातट पर स्थित प्राचीन बस्ती है। प्राचीन अनुश्रुति है कि इस स्थान पर श्रीकृष्ण के स्वर्गारोहण के पश्चात द्वारका से आई हुई यादव स्त्रिया ठहरी थी। एक दूसरी जनश्रुति के अनुसार महाभारत-युद्ध के पश्चात मृत क्षत्रियनरेशो की रानियो का इस स्थान पर विदुर जी ने शरण दी थी इसीलिए इस स्थान का नाम दारानगर (दारा=स्त्री) पड गया। महामना विदुर का निवासस्थान दारानगर के सन्निकट 'विदुरकुटी' नामक स्थान कहा जाता है। प्राचीन हस्तिनापुर के खडहर विदुरकुटी से कुछ दूर गगा के पार जिला मरठ मे स्थित हैं। महाभारत उद्योगपर्व की कथा के अनुसार श्रीकृष्ण ने दुर्योधन द्वारा सधिप्रस्ताव के ठुकराए जाने पर उसका राजसी आतिथ्य अस्वीकार कर विदुर के घर जाकर भोजन किया था। विदुरकुटी मे आज भी बथुवे का साग उगा हुआ है जो किंवदती के अनुसार विदुर के यहा कृष्ण ने खाया था। विदुर जी की पादुकाए अब भी इस स्थान पर सुरक्षित हैं। दुर्योधन का राजसी भोजन छोडकर कृष्ण का विदुर के घर भोजन करने का वर्णन महाभारत म इस प्रकार है—'एवमुक्त्वा महाबाहुर्दुर्योधनममर्षणम निश्चक्राम तत शुभ्राद्धार्तराष्ट्र निवेशनात। निर्याय च महाबाहुर्वासुदेवो महामना, निवेशाय ययोवेश्म विदुरस्य महात्मन, ततोऽनुयायिभि सार्ध मरुद्भिरिव वासव। विदुरान्नानि बुभुजे शुचीन् गुणवन्ति च' महा० उद्योग० 91,33 34-41। महाभारत म कृष्ण का विदुर के घर रूखा सूखा शाक खाने का कोई उल्लेख नही है। यहा विदुर के भोजन को 'शुचि' और 'गुणवान्' बताया गया है।

दारुकवन

द्वारका (गुजरात) के निकट नागेश्वर नामक स्थान का परिवर्ती प्रदेश। यहां द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक का स्थान माना जाता है। (दे० शिवपुराण 1,56)

दार्व

अर्जुन ने इस देश को अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसंग में जीता था—'ततस्त्रिगर्तान् कौंतेय दार्वान् कोकनदास्तथा, क्षत्रिया बहवो राजन्नुपावर्तन्त सर्वशः'—महा० सभा० 27, 18। दार्वनिवासियों ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उन्हें उपहार भेंट किए थे—'कैराता दरदा दार्वाः शूरावैयमका-स्तथा औदुंबरादुर्विभागाः पारदा बाह्लिकैः सह' महा० सभा० 52, 13। दार्व का अभिज्ञान जम्मू (काश्मीर) के डुग्गर के इलाके से किया गया है (दे० डुग्गर) डुग्गर, डोगरा राजपूतों का मूल स्थान है। डुग्गर दार्व का अपभ्रंश हो सकता है।

दार्वाभिसार

झेलम तथा चिनाव नदियों के बीच का पहाड़ी देश (पश्चिमी कश्मीर) जिसमें पूछ और नौशेरा के ज़िले सम्मिलित हैं। ग्रीक लेखकों ने अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के संबंध में इस देश के राजा अभिसार का उल्लेख किया है।

दार्विकोर्वी

'सिंधुतटदार्विकोर्वी चंद्रभागाकाश्मीरविषयांश्च व्रात्यम्लेच्छ शूद्रादयो-भोक्ष्यन्ति' विष्णु० 4,24,69। इस उद्धरण से सूचित होता है कि दार्विकोर्वी नामक प्रदेश में संभवतः गुप्तकाल के कुछ पूर्व शूद्र या म्लेच्छ—विदेशी शकादि—जातियों का राज था। प्रसंगानुसार यह सिंध या पंजाब के अंतर्गत कोई क्षेत्र जान पड़ता है। यह बहुत संभव है कि दार्व का ही इस स्थान पर दार्विकोर्वी नाम से अभिहित किया गया है। दार्व जम्मू का डुग्गर नामक इलाका है। विष्णुपुराण के उपर्युक्त उल्लेख में दार्विकोर्वी का नाम कश्मीर और चिनाव (चंद्रभागा) के साथ होने से भी इस संभावना की पुष्टि होती है।

दाल्भ्य आश्रम दे० डलमऊ

दाशार्हनगरी

महाभारत में द्वारका का एक नाम—'आपृच्छेत्वा गमिष्यामि दाशार्हनगरीं

प्रति' महा० सभा० 2,32। दाशार्ह कृष्ण अथवा यादवों के कुल का अभिधान था जिनकी नगरी के रूप में द्वारका विख्यात थी।

दाशेरक

महाभारत में वर्णित एक जन-पद अथवा गणराज्य जिसके योद्धा महाभारतयुद्ध में पांडवों के साथ थे—'कुंतिभोजश्च चैद्यश्च चक्षुर्म्यां तौ जनश्वरौ, दाशार्णका प्रभद्राश्च दाशेरकगण सह' महा० भीष्म० 50, 47। इस प्रसंग से दाशेरक गणराज्य की स्थिति मध्यप्रदेश में जान पड़ती है। संभवतः दशार्ण (पू० मालवा) के निकट ही यह देश रहा होगा।

दासमीय

'गोवास दासमीयाना वसातीना च भारत, प्राच्याना वाटधानाना भोजाना चाभिमानिनाम्' महा० कर्ण 73,17। इस उद्धरण में दासमीय देशीयों का दुर्योधन की ओर से, महाभारत के युद्ध में, लड़ते हुए बताया गया है। गोवास संभवतः शिवि (जिला झंग, प० पाकि०) और वसाति वर्तमान सोबी (हि० प्र०) है। दासमीय जनपद की स्थिति इन्हीं दोनों स्थानों के बीच कहीं रही होगी।

दाहडपुर (राजस्थान)

आबू के निकट वर्तमान दहिद्रा। तीर्थमाला चैत्यवंदन में इस जैन तीर्थ का नामोल्लेख इस प्रकार है—'कोडीनारवमत्रि दाहडपुरे श्री मंडपेचाबुद'।

दाहपरबतिया (जिला दरंग, असम)

तेजपुर के निकट एक ग्राम। इस ग्राम से एक गुप्तकालीन मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए हैं। यहां के अन्य अवशेषों में गुप्तकालीन शिल्पशैली में निर्मित पत्थर के द्वारपट्टक प्रमुख हैं जिन पर चैत्यवातायन तथा गंगायमुना की प्रतिमाओं का अंकन है जो गुप्तकालीन कला का विशिष्ट अंग है। गंगा यमुना की मूर्तियों का उत्किरण अत्यंत कलात्मक ढंग से किया गया है तथा विशेष रूप से स्वाभाविक है। मंदिर के पार्श्व में खंडितावस्था में मिट्टी के सुंदर पटके भी मिले थे जिन पर मानवाकृतियां बहुत ही आकर्षक और सजीव मुद्रा में अंकित हैं।

दाहोद (दे० दधिपद्र)

डिचपल्ली (जिला निज़ामाबाद, आं० प्र०)

निज़ामाबाद से 10 मील पूर्व यह स्थान विष्णु के प्राचीन मंदिर के लिए उल्लेखनीय है। मंदिर एक सरोवर के तट के निकट एक टीले पर बना हुआ है। इसके चतुर्दिक परकोटा खिंचा है। मंदिर पर सुंदर नक्काशी का काम है। इसके स्तंभ गोल हैं और द्राविड़ वास्तुशैली में निर्मित हैं।

दिल्ली

दिल्ली की ससार के प्राचीनतम नगरो मे गणना की जाती है। महाभारत के अनुसार दिल्ली को पहली बार पाडवा ने, इद्रप्रस्थ नाम स बसाया था (दे० इद्रप्रस्थ), किंतु आधुनिक विद्वानो का मत है कि दिल्ली के आसपास—उदाहरणार्थ रोपड (पजाब) के निकट, सिधुघाटी सभ्यता क चिह्न प्राप्त हुए है और पुराने किले के निम्नतम खडहरो मे आदिम दिल्ली के अवशेष मिलें तो कोई आश्चय नही। वास्तव म, देश म अपनी मध्यवर्ती स्थिति के कारण तथा उत्तरपश्चिम से भारत के चतुर्दिक भागो को जान वाले मार्गों के केंद्र पर बनी होन से दिल्ली भारतीय इतिहास म अनेक साम्राज्यो की राजधानी रही है। महाभारत के युग म कुरुप्रदेश की राजधानी हस्तिनापुर म थी। इसी काल म पाडवो ने अपनी राजधानी इद्रप्रस्थ मे बनाई। जातको के अनुसार इद्रप्रस्थ सात कोस के घेरे म बसा हुआ था। पाडवो के वशजो की राजधानी इद्रप्रस्थ म कब तक रही यह निश्चयपूवक नही कहा जा सकता किंतु पुराणो क साक्ष्य क अनुसार परीक्षित तथा जनमेजय के उत्तराधिकारियो ने हस्तिनापुर म भी बहुत समय तक अपनी राजधानी रखी थी और इन्ही के वशज निचक्षु ने हस्तिनापुर क गगा म बह जाने पर अपनी नई राजधानी प्रयाग के निकट कौशाम्बी म बनाई (दे० पार्जिटर, डायनेस्टीज ऑव दि कलि एज—पृ०5)। मौयकाल म दिल्ली या इद्रप्रस्थ का कोई विशेष महत्त्व न था क्योंकि राजनतिक शक्ति का केंद्र इस समय मगध मे था। बौद्धधम का जन्म तथा विकास भी उत्तरी भारत के इसी भाग तथा पाश्ववर्ती प्रदेश म हुआ और इसी कारण बौद्ध धम की प्रतिष्ठा वढन के साथ ही भारत की राजनीतिक सत्ता भी इसी भाग (पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा बिहार) म केंद्रित रही। फलत मौयकाल क पश्चात लगभग 13 सौ वप तक दिल्ली और उसके आसपास का प्रदेश अपेक्षाकृत महत्त्वहीन बना रहा। हप के साम्राज्य के छिन्न भिन्न होने क पश्चात उत्तरीभारत मे अनेक छोटी मोटी राजपूत रियासतें बन गई और इन्ही मे 12वीं सदी म पृथ्वीराज चौहान की भी एक रियासत थी जिसकी राजधानी दिल्ली बनी। दिल्ली के जिस भाग म कुतुब मीनार है वह अथवा महरौली का निकटवर्ती प्रदेश ही पृथ्वीराज के समय की दिल्ली है। वहां का जोगमाया का मदिर मूल रूप स इन्ही चौहान नरेश का बनवाया हुआ कहा जाता है। एक प्राचीन जनश्रुति के अनुसार चौहानो ने दिल्ली का तामरो से लिया था जैसा कि 1327 ई० के एक अभिलेख म सूचित है—'देशास्ति हरियानाख्य पृथिव्या स्वर्गसन्निभ, ढिल्लिकाख्या पुरी ..

तामरैरस्ति निर्मिता। चाहमाना नृपास्तत्र राज्य निहितकटकम, तोमरातर चकु प्रजापालनतत्परा'। यह भी कहा जाता है कि चौथी शती ई० मे अनगपाल तोमर ने दिल्ली की स्थापना की थी। इन्होने इद्रप्रस्थ के क़िले के खडहरो पर ही अपना किला बनवाया। इसके पश्चात् इसी वश के सूरजपाल न सूरजकुड बनवाया जिसके खडहर तुग़लकाबाद के निकट आज भी वतमान ह। तोमरवशीय अनगपाल द्वितीय ने 12वी शती के प्रारभ म लालकोट का किला कुतुव के पास बनवाया। तत्पश्चात दिल्ली वीसलदेव चौहान तथा उनके वशज पथ्वीराज के हाथो म पहुची। जनश्रुति के अनुसार कुतुबमीनार और कुव्वतुलइसलाम मसजिद पृथ्वीराज के इस स्थान पर बने हुए सत्ताईस मदिरो के मसाला से बनवाई गई थी। कुछ विद्वानो का मत है कि महरौली—जहा कुतुबमीनार स्थित है—पहले एक बृहत वेधशाला के लिए विख्यात थी। सताईस मदिर सत्ताईस नक्षत्रो के प्रतीक थे और कुतुब मीनार चाद-तारो आदि की गति विधि देखने के लिए वेधशाला की मीनार थी। इन सभी इमारतो को कुतुबद्दीन तथा परवर्ती सुल्तानो ने इसलामी इमारतो के रूप मे वदल दिया। पृथ्वीराज के तरायन के युद्ध म (1192 ई०) मारे जाने पर दिल्ली पर मु० गौरी का अधिकार हो गया। इस घटना के पश्चात् लगभग साढे छ सौ वर्षों तक दिल्ली पर मुसलमान बादशाहो का अधिकार रहा और यह नगरी अनेक साम्राज्यो की राजधानी के रूप म वसती और उजडती रही। मु० गौरी के पश्चात 1236 ई० मे गुलाम वश की राजधानी दिल्ली मे वनी। इसी काल म कुतुबमीनार का निर्माण हुआ। गुलामवश के पश्चात अलाउद्दीन न सीरी मे अपनी राजधानी बनाई। तुग़लककालीन दिल्ली वतमान तुगलकाबाद मे थी किंतु फीरोजशाह तुगलक (1351-1388 ई०) के जमान मे इसका विस्तार दिल्ली दरवाजे के बाहर फिरोजशाह कोटला तक हा गया। तुग़लकाबाद म मु० तुगलक का मकबरा है। तुगलको के पश्चात लोदियो का कुछ समय तक दिल्ली पर कब्जा रहा। 1526 ई० मे पानीपत के युद्ध के पश्चात बाबर न दिल्ली पर अधिकार कर लिया। बाबर और हुमायू की राजधानी दिल्ली ही म रही। शेरशाह सूरी ने भी पाच वप दिल्ली म राज्य किया। अकबर तथा जहागीर के समय म दिल्ली का गौरव फतहपुर सीकरी तथा आगरे ने कुछ समय तक के लिए छीन लिया किंतु शाहजहा ने पुन दिल्ली म अपनी राजधानी बनाइ। वही शाहजहाबाद या चहारदिवारी के अदर के शहर का निर्माता था। औरगजेब न भी दिल्ली म ही अपने विशाल साम्राज्य की राजधानी कायम रखी। 1857 ई० तक मुगलो का राज्य किसी न किसी

रूप मे दिल्ली मे चलता रहा। 1857 ई० की राज्य क्रांति के पश्चात अग्रेजो ने दिल्ली से राजधानी उठाकर कलकत्ते का यह गौरव प्रदान किया किंतु 1910 मे पुन एक बार दिल्ली को भारत की राजधानी बनने की प्रतिष्ठा प्रदान की गई। 1947 मे दिल्ली स्वतंत्र भारत की राजधानी के रूप मे अपनी पूर्वप्रतिष्ठा पर आसीन हुई। इस प्रकार आज भी भारत की राजधानी के रूप म दिल्ली की प्राचीन प्रतिष्ठा कायम है। दिल्ली के प्राचीनतम स्मारको म महरौली मे स्थित चद्र नाम के किसी यशस्वी नरेश का विष्णुध्वज लौहस्तभ सबसे अधिक प्रसिद्ध है। इस पर निम्न अभिलेख उत्कीर्ण है—'यस्योद्वतयत प्रतीपमुरसा शत्रून् समेत्यागतान्, वंगेष्वाहववर्तिनो ऽभिलिखिता खड्गेन कीर्तिर्भुजे, तीर्त्वा सप्तमुखानि येन समरे सिंधोर्जितावाह्लिका यस्याद्यप्यधिवास्यते जलनिधिर्वीर्यानिल दक्षिण'। चद्र का अभिज्ञान चद्रगुप्त द्वितीय से किया जाता है किंतु यह तथ्य विवादास्पद है। कहा जाता है कि पृथ्वीराज के नाना अनगपाल ने यह लौह स्तभ मथुरा से लाकर यहा स्थापित किया था। यह स्तभ सकडो वर्षों से खुले हुए स्थान मे बिना जग खाए हुए खडा हुआ है। यह एक ही लोह के खड का बना है। इतना बडा लौह दड ढालने की निर्माणविधि भारत म चौथी शती ई० मे थी यह जान कर प्राचीन भारत के धातु कर्म विशारदो के प्रति हमारा मस्तक आदर स झुक जाता है। कहा जाता है कि इस परिमाण का लौह दड इग्लैंड तक म 19वी शती के प्रारभ से पूर्व नही ढाला जा सकता था। इस लौह स्तभ से प्राय छ सौ वर्ष प्राचीन अशोक के दो प्रस्तर स्तभ भी दिल्ली मे वर्तमान है। एक तो सब्जी मडी के निकट पहाडी पर है तथा दूसरा दिल्ली दरवाजे के बाहर फीरोजशाह कोटला म है। दोनो को फीरोजशाह तुगलक ने दिल्ली की शोभा बढाने के लिए क्रमश मेरठ तथा तोपरा (जिला अबाला) से मगवाकर स्थापित किया था। इस तथ्य का उल्लेख इब्नबतूता ने भी किया है। पहले स्तभ पर अशोक के सात 'स्तभ अभिलेख' उत्कीर्ण थ किंतु 1715 मे इसको काफी क्षति पहुचने के कारण इस पर का लेख मिट सा गया है। दूसरा स्तभ 46 फुट 8 इच ऊचा है। इस पर भी सात स्तभ लेख अंकित है और स्पष्ट रूप से दिखाई देत ह। दिल्ली का पुराना किला पाडवो के समय का बताया जाता है और जनश्रुति के अनुसार प्राचीन इद्रप्रस्थ की स्थिति का परिचायक है। अवश्य ही इसका जीर्णोद्धार तथा सवर्धन परिवर्ती युगो म हुआ होगा। शेरशाह का राजप्रासाद पुराने किले के भीतर था और यही उसकी बनवाई हुई कुहना (=पुरानी) मसजिद है जो निश्चय रूप स किसी प्राचीन इमारत को परिवर्तित करके बनवाइ गई थी। कहा जाता है कि यहा पच पाडवो

के समय का सभा भवन था जैसा कि इस इमारत के दालान में बने हुए पाच कोष्ठका से प्रमाणित होता है। इस प्रकार के पाच काष्ठक किसी और मसजिद म नही देखे जाते। पुराने क़िले में शेरमडल नामक स्थान के अतगत बने हुए पुस्तकालय की सीढ़ियों से गिर कर ही हुमायू की मृत्यु हुई थी (1556 ई०)।

कुतुब मीनार 238 फुट ऊची है और भारत म पत्थर की बनी हुई सब मीनारो में सर्वोच्च है। इसे कुतुबद्दीन एबक ने 1199 ई० म बनवाया था। तत्पश्चात इल्तुतमिश और फीरोजशाह तुगल्क (1370 ई०) ने इसका सवधन तथा जीर्णोद्धार करवाया। इसम पाच मजिलें हैं। प्रत्येक पर बाहर की ओर निकले हुए अलिंद बने हैं। मीनार के ऊपर अरबी मे अभिलेख उत्कीर्ण हैं। मीनार की निचली सतह का व्यास 47 फुट 3 इच और शीप का केवल 9 फुट है। पहली तीन मजिलें लाल पत्थर की और अतिम दो जो शायद फीरोज तुगलक की बनवायी हुई हैं—सगमरमर की हैं। ये पहली मजिलो से अधिक चिकनी व ऊची हैं। मीनार म चोटी तक पहुचने के लिए 379 सीढ़िया हैं। प्राचीन जनश्रुतियो के अनुसार यह मीनार मूल रूप म पृथ्वीराज चौहान द्वारा अपनी प्रिय रानी सयोगिता के लिए बनवाया हुआ दीप स्तभ था जिसे बाद म मुसलमान बादशाहो ने मीनार के रूप मे बदल दिया। कुतुबमीनार के पास ही अलाउद्दीन खिलजी द्वारा प्रारभ की हुई अलाई मीनार की कुर्सी के अवशेष हैं। यह मीनार अलाउद्दीन की मृत्यु के कारण आगे न बन सकी थी।

दिल्ली की वास्तुकला का वास्तविक गौरव मुग़लकालीन है। हुमायू के मक्बरे को 1565 ई० म उसकी बेगम हमीदा बानू ने बनवाया था। इसमे हमीदा की कब्र भी है। इसके अतिरिक्त विभिन्न कालो म बनी दाराशिकोह फरुखसियर तथा आलमगीर द्वितीय आदि की भी कबरे यही स्थित हैं। कहा जाता है कि मुगल परिवार के तथा उससे सबधित 90 से अधिक व्यक्तियो की कब्रे यहा हैं। 1857 की राज्यक्राति म अतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह को मुगलो ने यही कद किया था। यह मकबरा मुगल वास्तुकला का प्रथम प्रारूपिक उदाहरण है।

लालकिला जो फर्ग्युसन के अनुसार शायद ससार का सवश्रेष्ठ राजप्रासाद है, 1639 और 1648 ई० के बीच शाहजहा द्वारा बनवाया गया था। दीवाने खास मे जगप्रसिद्ध मयूर सिंहासन या तख्तेताऊस था जिसे शाहजहा ने, तत्कालीन यूरोपीय लेखको के अनुसार 20 लाख पौड की लागत से बनवाया था। लालकिले के ठीक सामने कुछ दूर पर, चादनी चौक के पास भारत की सबसे बडी मसजिद, जामे मसजिद है। इसे शाहजहा ने 1650 58 मे बनवाया था। इसके

तीन पट्टियोदार कदाकृति गुंबद और दो 130 फुट ऊची व पतली मीनारें हैं। ये विशेषताए मुगलशैली की परिचायक है। बीच म विशाल प्रागण है जिसके तीन ओर खुले हुए प्रकोष्ठ हैं और तीन ओर विशाल दरवाजे जो भूमितल से काफी ऊचाई पर हैं। इन तक पहुचने के लिए सीढ़ियों की पक्तिया बनी हैं।

कहा जाता है कि विभिन्न कालों म यमुना नदी की धारा के साथ ही साथ दिल्ली नगरी की स्थिति भी बदलती रही है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है प्राचीनतम दिल्ली म्हरौली के आसपास तथा पुराने किले के परिवर्ती प्रदेश म थी। गुलामकालीन राजधानी भी लगभग इसी प्रदेश म रही। अलाउद्दीन की दिल्ली वतमान सीरी (तुगलकाबाद और कुतुब के बीच) के पास और तुगलकों की दिल्ली तुगलकाबाद (दिल्ली मथुरा माग के निकट) म थी। शाहजहा ने जो दिल्ली बसाई वही आजकल की पुरानी दिल्ली है जिसके चारों ओर परकोटा खिचा हुआ है। चादनी चौक और इसके बीच बहने वाली नहर शाहजहा न ही बनवाई थी। अग्रेजो ने पुरानी दिल्ली से कुछ दूर हटकर अपनी राजधानी नई दिल्ली बनाई। इसके निर्माता प्रसिद्ध शिल्पी सर एडवर्ड लुटयेंस और सर हर्बर्ट बेकर थे। इस भव्य नगरी का आनुष्ठानिक उद्घाटन 1931 म हुआ था।

दिवावृत

विष्णुपुराण 2,4,51 के अनुसार क्रौच द्वीप का एक पवत 'क्रौचश्चवा मनश्चव तृतीयश्चान्धकारक चतुर्थो रत्नशैलश्च स्वाहिनी हयसन्निभ, दिवावृत्पचमश्चात्र तथान्य पुडरीकवान दुदभिश्च महाशला द्विगुणास्त परस्परम'।

दिव्यकट

महाभारत, सभा० मे नकुल की दिग्विजय यात्रा के प्रसग म इस नगर के नकुल द्वारा जीते जाने का उल्लेख है—'कृत्स्न पचनद चव तथैवामरपवतम उत्तर ज्योतिष चैव तथा दिव्यकट पुरम्' सभा० 32,11। प्रसग से जान पड़ता है कि दिव्यकट की स्थिति कश्मीर या पजाब के पहाड़ी प्रदेश म कहीं रही होगी।

दीदारगज (जिला पटना, बिहार)

1917 म पटना के निकट इस स्थान से एक यक्षिणी की सुदर मूर्ति प्राप्त हुई थी जो पटना सग्रहालय म सुरक्षित है। मूर्ति चमर वाहिनी सविका की जान पडती है। विद्वानो के मत म यह मूर्ति मौय कालीन है। मूर्ति की रचना बहुत ही सुदर तथा इसकी मुद्रा अतीव स्वाभाविक है। शरीर के ऊपरी भाग के भारी होने के कारण भनम्यता का भाव तो बहुत ही लावण्यपूर्ण बन पड़ा है। मूर्ति का एक हाथ खडित है। दूसरे मे यह चमर धारण किए हुए है। शरीर का

उपरला भाग विवस्त्र है। गले मे मुक्तामाल दोलायमान है जो पुष्ट वक्ष के ऊपर लहराती हुई लटक रही है। क्षीण कटि तथा स्थूल नितबो की गुरुता का अकन भी विदग्धता पूर्ण है। मूर्ति, कटि से नीचे साड़ी पहने हुए है जिसके मोड साफ झलकते हैं।

दीनाजपुर (बगाल)

गुप्तकालीन अभिलेखो मे इस स्थान का नाम कोटिवर्ष है।

दीपवती

गोआ के द्वीप के उत्तर मे दीवर नामक द्वीप। स्कदपुराण सह्याद्रिखड मे यहा सप्तऋषियो द्वारा शिवमदिर की स्थापना का उल्लेख है।

दीर्घपुर=डीग

दीव=दव दे० डयू

दुदंभि

(1) विष्णुपुराण मे वर्णित क्रौंच द्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा द्युतिमान् के पुत्र के नाम से प्रसिद्ध है। (दे० विष्णु० 2,4 48)

(2) विष्णुपुराण मे उल्लिखित क्रौंचद्वीप का एक पर्वत, 'दिवावृत पचम श्चान्य तथान्य पुडरीकवान, दुदुभिश्च महाशैला द्विगुणास्ते परस्परम'—विष्णु० 2,4,51

(3) विष्णुपुराण के अनुसार प्लक्षद्वीप के सात मर्यादा पर्वतो मे से एक "गोमेदश्चैव चद्रश्च नारदो दुदुभिस्तथा सोमक सुमनाश्चैव वैभ्राजश्चैव सप्तम' विष्णु० 2 4,7

दुर्गा

साबरमती की सहायक नदी—(पद्मपुराण उत्तर० 60, ब्रह्माडपुराण पृ० 49)

दुर्गावती

किंवदन्ती के अनुसार महाभारत काल मे बीड नगर (जिला बीड, महाराष्ट्र) का नाम। दे० बीड

दुर्जया

'तत स सप्रस्थितो राजा कौतया भूरिदक्षिण अगस्त्याश्रममासाद्य दुर्जयामुवास ह' महा० वन० 96 1 अर्थात गया से चलकर प्रचुर दक्षिणा दान करने वाले युधिष्ठिर ने अगस्त्याश्रम मे पहुच कर दुर्जयापुरी मे निवास किया। जान पड़ता है यह नगरी राजगृह के निकट थी। इसे ही सभवत वन० 96 4 मे मणिमतिनगरी कहा है। यह नगरी नागो की उपासना के लिए प्रसिद्ध थी।

देलवाडा (काठियावाड, गुजरात)

(1) पश्चिम रल का छोटा सा स्टेशन है। कस्व का प्राचीन नाम देवलपुर है। यहा कई प्राचीन मदिर है और ऋपितोया नदी पास ही बहती है। नदी का स्थानीय नाम मच्छुदी है।

(2) आबू की पहाडी पर स्थित प्रसिद्ध मदिर (दे० आबू)

देव

(1)=डयू।

(2) (तहसील औरगाबाद, जिला गया, बिहार) इस स्थान पर एक प्राचीन सूय-मदिर के अवशेष है जिसे किंवदती के अनुसार मूलरूपत राजा पुरुरवा ऐल ने बनवाया था।

मुसलमानो के आक्रमण के समय इस मदिर का विध्वस हुआ था। इसकी मूर्तिया अधिक प्राचीन नही जान पडती।

देवकीपट्टन

यह वतमान प्रभासपट्टन है। इसका जैनतीथ के रूप मे वणन तीथमाला-चत्यवदन नामक स्तोत्र ग्रथ म इस प्रकार है—'वदे स्वणगिरौ तथा सुरगिरौ श्रीदेवकीपट्टने'।

देवकुण्ड (जिला गया, बिहार)

(1) पटना गया रेल माग पर जहानाबाद स्टेशन से 36 मील दूर है। इसे प्राचीन काल मे च्यवनाश्रम कहा जाता था। यहा च्यवन-ऋषि का मदिर भी है। स्थानीय जनश्रुति म राजा शर्याति की पुत्री सुकन्या और च्यवन की मनोरजक पौराणिक आख्यायिका—इसी स्थान से सबधित है। कहा जाता है कि दवकुड सरोवर म स्नान करन के पश्चात वृद्ध च्यवन सुदर युवक बन गय थे। महाभारत मे च्यवनाश्रम का उल्लेख नमदातट पर भी है। (दे० च्यवनाश्रम)

(2) (बुदेलखड, म० प्र०) पूर्व मध्यकाल म देवकुड मे कछवाहा राजपूता की एक शाखा का राज्य था। इनकी बनवायी इमारतो के अवशेष यहा खडहरो के रूप म स्थित है।

देवकूट

विष्णुपुराण क अनुसार यह एक मर्यादा पवत है—'जठरादेवकूटश्च मर्यादा-पर्वतावुभौ तौ दक्षिणोत्तरायामावानीलनिपधायतौ'। विष्णु 2,2,40। यह उत्तर मे निपध तक फैला हुआ था।

दुर्वासा आश्रम

स्थानीय जनश्रुति म, खल्ली पहाड (जिला भागलपुर, विहार) पर स्थित कहा जाता है।

दूधई (जिला झांसी, उ० प्र०)

मध्ययुगीन बुंदेलखड की वास्तुकला की सुदर कृतिया—विशेषकर चदल तथा परिवर्ती राज्यवशो के समय मे बने मदिरा के अनेक अवशेष यहा प्राप्त हुए है।

दूनागिरि (जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

रानीखत के निकट दूनागिरि की पहाडी प्राचीन समय से जडी बूटियो तथा औषधियो के लिए प्रख्यात है। जनश्रुति मे कहा जाता है कि लका म लक्ष्मण जी के शक्ति लगने पर हनुमान जी इसी पहाड (द्रोणगिरि) पर से सजीवनी ले गय थ।

दृषद्वती

(1) उत्तर वैदिककाल की प्रख्यात नदी जो यमुना और सरस्वती क बाच क प्रदेश म बहती थी। इस प्रदेश को ब्रह्मावत कहते थे। इस नदी को अब घग्घर कहत है। दृषद्वती का उल्लेख ऋग्वेद मे केवल एक बार सरस्वती नदा क साथ है। महाभारत भीष्म 9,15 म, नदियो की सूची मे दृषद्वती भी परिगणित है —'शतद्रू चन्द्रभागा च यमुना च महानदीम, दृषद्वतीं विपाशा च विपापा स्थूल वालुकाम्'। वनपव म दृषद्वती का सरस्वती के साथ ही उल्लख है—'सरस्वती नदी सद्भि सतत पाथ पूजिता, बालखिल्यैमहाराज यत्रेष्टमृषिभि पुरा, दृषदवती महापुण्या यत्र ख्याता युधिष्ठिर,' वन 90,10-11। दृषदवती-कौशिकी सगम का वणन वन० 83,95 96 म है। (द० कौशिकी 2)

(2) श्रीमदभागवत् 5,19,18 म भी इसी नदी का उल्लख है—'यमुना सरस्वती दृषद्वती गोमती सरयू '। दृषदवती का शाब्दिक अथ दृषदो या प्रस्तरो से पूण नदी है। उत्तर वैदिक काल मे दृषद्वती और सरस्वती ब्रह्मावर्त को पूर्वी सीमा बनाती थी—(मैक्डॉनेल्ड— ए हिस्ट्री ऑव सस्कृत लिटरेचर, 1929, पृ० 141) वामनपुराण 39, 6 8 म दृषद्वती को कुरुक्षेत्र की एक नदी माना गया है 'दृषदवती महापुण्या तथा हिरण्वती नदी'।

देओरिया (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

5वी शती ई० का एक गुप्तकालीन मूर्ति-अभिलख यहा स प्राप्त हुआ है जो लखनऊ के सग्रहालय म सुरक्षित है। इसम शाक्य भिक्षु बोधिवमन द्वारा एक बौद्ध प्रतिमा की प्रतिष्ठापना का उल्लेख है। लेख मूर्ति के अधस्तल पर अंकित है।

देलवाड़ा (काठियावाड, गुजरात)

(1) पश्चिम रेल का छोटा सा स्टेशन है। कस्बे का प्राचीन नाम देवलपुर है। यहा कई प्राचीन मदिर है और ऋषितोया नदी पास ही बहती है। नदी का स्थानीय नाम मच्छुदी है।

(2) आबू की पहाडी पर स्थित प्रसिद्ध मदिर (दे० आबू)

देव

(1)=डयू।

(2) (तहसील औरगाबाद, जिला गया, बिहार) इस स्थान पर एक प्राचीन सूर्य-मदिर के अवशेष है जिसे किंवदती के अनुसार मूलरूपत राजा पुरुरवा ऐल ने बनवाया था।

मुसलमानो के आक्रमण के समय इस मदिर का विध्वस हुआ था। इसकी मूर्तिया अधिक प्राचीन नही जान पडती।

देवकीपट्टन

यह वर्तमान प्रभासपट्टन है। इसका जैनतीर्थ के रूप मे वर्णन तीर्थमाला-चैत्यवदन नामक स्तोत्र ग्रथ मे इस प्रकार है—'वदे स्वर्णगिरौ तथा सुरगिरौ श्रीदेवकीपट्टने'।

देवकुण्ड (जिला गया, बिहार)

(1) पटना गया रेल मार्ग पर जहानाबाद स्टेशन से 36 मील दूर है। इसे प्राचीन काल मे च्यवनाश्रम कहा जाता था। यहा च्यवन-ऋषि का मदिर भी है। स्थानीय जनश्रुति मे राजा शर्याति की पुत्री सुकन्या और च्यवन की मनोरजक पौराणिक आख्यायिका—इसी स्थान से सबधित है। कहा जाता है कि देवकुड सरोवर मे स्नान करने के पश्चात वृद्ध च्यवन सुदर युवक बन गये थे। महाभारत मे च्यवनाश्रम का उल्लेख नर्मदातट पर भी है। (दे० च्यवनाश्रम)

(2) (बुदेलखड, म० प्र०) पूर्व मध्यकाल मे देवकुड मे कछवाहा राजपूतो की एक शाखा का राज्य था। इनकी बनवायी इमारतो के अवशेष यहा खडहरो के रूप मे स्थित हैं।

देवकूट

विष्णुपुराण के अनुसार यह एक मर्यादा पर्वत है—'जठरादेवकूटश्च मर्यादा-पर्वतावुभौ तौ दक्षिणोत्तरायामावानीलनिषधायतौ'। विष्णु 2,2,40। यह उत्तर मे निषध तक फैला हुआ था।

देवगढ़ (जिला झांसी, उ० प्र०)

(1) ललितपुर से 22 तथा मध्य-रेलवे के जाखलौन स्टेशन से 9 मील दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित है। यहां के प्राचीन स्मारकों में निम्न उल्लेखनीय हैं —

सैंपुरा ग्राम से तीन मील पश्चिम की ओर पहाड़ी पर एक चतुष्कोण कोट, नीचे मैदान में एक भव्य विष्णु मंदिर, यहां से एक फलांग पर वराह मंदिर, पास ही एक विशाल दुर्ग का खंडहर, इसके पश्चात दो और दुर्गों के भग्नावशेष, एक दुर्ग के विशाल घेरे में 31 जैन मंदिर और अनेक भवनों के खंडहर। देवगढ़ में सब मिला कर 300 के लगभग अभिलेख मिले हैं जो 8वीं शती से लेकर 18वीं शती तक के हैं। इनमे ऋषभदेव की पुत्री ब्राह्मी द्वारा अंकित अठारह लिपियों का अभिलेख तो अद्वितीय ही है। चंदेल-नरेशों के अभिलेख भी महत्वपूर्ण हैं। देवगढ़ बेतवा के तट पर है। तट के निकट पहाड़ी पर 24 मंदिरों के अवशेष हैं जो 7वीं शती ई० से 12वीं शती ई० तक बने थे। देवगढ़ का शायद सर्वोत्कृष्ट स्मारक दशावतार का विष्णु मंदिर है जो अपनी रमणीय कला के लिए भारत भर के उच्चकोटि के मंदिरों में गिना जाता है। इसका समय छठी शती ई० माना जाता है जब गुप्त वास्तुकला अपने पूर्ण विकास पर थी। मंदिर इस समय भग्नप्राय अवस्था में है किंतु यह निश्चित है कि प्रारंभ में इसमें अन्य गुप्तकालीन देवालयों की भांति ही गर्भगृह के चतुर्दिक पटा हुआ प्रदक्षिणापथ रहा होगा। इस मंदिर के एक के बजाए चार प्रवेश द्वार थे और उन सबके सामने छोटे-छोटे मंडप तथा सीढ़ियां थीं। चारों कोनों में चार छोटे मंदिर थे। इनके शिखर आमलकों से अलंकृत थे क्योंकि खंडहरों से अनेक आमलक प्राप्त हुए हैं। प्रत्येक सीढ़ियों की पंक्ति के पास एक गोखा था। मुख्य मंदिर के चतुर्दिक कई छोटे मंदिर थे, जिनकी कुर्सियां मुख्य मंदिर की कुर्सी से नीची हैं। ये मुख्य मंदिर के बाद में बने थे। इनमें से एक पर पुष्पावलियों तथा अधोशीर्ष स्तूप का अलंकरण अंकित है। यह अलंकरण देवगढ़ की पहाड़ी की चोटी पर स्थित मध्ययुगीन जैनमंदिरों में भी प्रचुरता से प्रयुक्त है। दशावतार मंदिर में गुप्त वास्तुकला के प्रारूपिक उदाहरण मिलते हैं, जैसे, विशालस्तंभ जिनके दंड पर अर्ध अथवा तीन चौथाई भाग में अलंकृत गोल पट्टक बने हैं और शीर्ष अथवा आधार भाग में पर्णित पूर्ण घटों की रचना की गई है। ऐसे एक स्तंभ पर छठी शती के अंतिम भाग की गुप्तलिपि में एक अभिलेख पाया गया है जिससे उपर्युक्त अलंकरण का गुप्तकालीन होना सिद्ध होता है। इस मंदिर का

वास्तुकला की दूसरी विशेषता चैत्य वातायना के घेरो मे कई प्रकार के उत्कीर्ण चित्र हैं। इन चित्रो म प्रवेशद्वार या मूर्ति रखने के अवकाश भी प्रदर्शित है। इनके अतिरिक्त सारनाथ की मूर्तिकला का विशिष्ट अभिप्राय (Motif) स्वस्तिकाकार शीष सहित स्तभयुग्म भी इस मदिर के चैत्यवातायना के घेरो मे उत्कीण है। दशावतार मदिर का शिखर ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सरचना है। पूव गुप्तकालीन मदिरो मे शिखरो का अभाव है। देवगढ के मदिर का शिखर भी अधिक ऊचा नही है वरन इसम क्रमिक घुमाव बनाए गए है। इस समय शिखर के निचले भाग की गोलाई ही शेष है किंतु इससे पूण शिखर का आभास मिल जाता है। शिखर के आधार के चारो ओर प्रदक्षिणा पथ की सपाट छत थी जिसके किनारे पर बडी व छोटी चैत्य खिडकिया थी जैसा कि महाबलीपुरम के रथो के किनारो पर हैं। द्वार मडप दो विशाल स्तभो पर आधृत था। प्रवेश द्वार पर पत्थर की चौखट है जिस पर अनेक देवताओ तथा गगा यमुना की मूर्तिया उत्कीण ह। मदिर की बहिर्भित्तियो के अनेक शिलापट्टो पर गज द्रमाक्ष, शेषशायी विष्णु आदि के कलात्मक मूर्तिचित्र अंकित ह। मदिर की कुर्सी के चारो ओर भी गुप्तकालीन मूर्तिकारी का वैभव अवलोकनीय है। रामायण और कृष्णलीला से सबधित दृश्यो का चित्रण बहुत ही कलापूण शैली मे प्रदर्शित है। देवगढ के अन्य मदिरो मे गोनटेश्वर, भरत, चक्रेश्वरी, पद्मावती, ज्वालामालिनी, श्री, ह्री, तथा पच परमेष्ठी आदि जैन तथा तान्त्रिक मूर्तिया का सुदर प्रदर्शन है। दूसरे दुग से पहाडी म नदी तक काटकर बनाई हुई सीढियो द्वारा नाहरघाटी व राजघाटी तक पहुचा जा सकता है। माग म पाच पाडवो की मूर्तिया, जिन प्रतिमाए शैलकृत्त सिद्ध गुहा तथा गुप्तकालीन अभिलेख मिलते हैं।

(2) (जिला उदयपुर, राजस्थान) कुभलगढ से चार मील दूर है। यहा चूडावत सरदारो की राजधानी थी। इनके पूवज मेवाड के उत्तराधिकारी कुमार चूडा न अपने पिता के मारवाड की राजकुमारी के साथ विवाह कर लेने पर अपना राज्याधिकार भीष्म के समान ही त्याग दिया था। उसने अपने सौतले भाई मुकुल की उसके मातामह जोधपुर नरेश रनमल के मेवाड पर आक्रमण करने के समय सहायता भी की थी। चूडा ने अपनी प्रथम राजधानी देवगढ म बनाई थी। बाद म उनका अधिकार मडोर पर भी हो गया था।

(3) (जिला छिंदवाडा, म०प्र०) मुगलकाल म यहा राजगोंडा का राज्य था। १६७० ई० में गोंड नरेश कूरमकल्ल काकशाह पर औरंगजेब ने आक्रमण किया। मुगलसेना को छत्रसाल और उनके भाई अगदराय ने सहायता दी

और देवगढ ले लिया गया। इस युद्ध म छत्रसाल ने बडी वीरता दिखाई थी और वे घायल भी हो गए थे। युद्ध के पश्चात् छत्रसाल को मुगल सम्राट औरगजेब से यथोचित सत्कार न मिला और इस घटना से उनके मन की राष्ट्रीय भावनाए जागृत हो गईं और तब से वे औरगजेब के कट्टर शत्रु हो गए।

देवगिरि (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

(1) जैन पडित हेमाद्रि के कथनानुसार देवगिरि की स्थापना यादव नरेश भिलम्मा (प्रथम) ने की थी। यादव नरेश पहले चालुक्य राज्य के अधीन थे। भिलम्मा ने 1187 ई० मे स्वतत्र राज्य स्थापित करके देवगिरि मे अपनी राजधानी बनाई। उसके पौत्र सिंहन ने प्राय सपूर्ण पश्चिमी चालुक्य राज्य अपने अधिकार मे कर लिया। देवगिरि के किले पर अलाउद्दीन खिलजी ने पहली बार 1294 ई० मे चढाई की थी। पहले तो यादवनरेश ने करद होना स्वीकार कर लिया किंतु पीछे से उन्होंने दिल्ली के सुल्तान को खिराज देना बन्द कर दिया जिसके फलस्वरूप 1307, 1310 और 1318 मे मलिक काफूर ने फिर देवगिरि पर आक्रमण किया। यहा का अतिम राजा हरपालसिंह युद्ध मे पराजित हुआ और क्रूर सुल्तान की आज्ञा से उसकी खाल खिचवा ली गई। 1338 ई० मे मु० तुगलक ने देवगिरि को अपनी राजधानी बनाने का निश्चय किया क्योकि मु० तुगलक के विशाल साम्राज्य की देखरेख दिल्ली की अपेक्षा देवगिरि से अधिक अच्छी तरह की जा सकती थी। सुल्तान ने दिल्ली की प्रजा को देवगिरि जाने के लिए बलात् विवश किया। 17 वर्ष पश्चात देवगिरि के लोगो को असीम कष्ट भोगते देखकर इस उतावले सुल्तान ने फिर उन्हे दिल्ली वापस आ जाने का आदेश दिया। सैकडों मील की यात्रा के पश्चात दिल्ली के निवासी किसी प्रकार फिर अपने घर पहुचे। मु० तुगलक ने देवगिरि का नाम दौलताबाद रखा था और वारगल के राजाओ के विरुद्ध युद्ध करने के लिए इस स्थान को अपना आधार बनाया था। किंतु उत्तरी भारत म गडबड प्रारम्भ हो जाने के कारण वह अधिक समय तक राजधानी देवगिरि म न रख सका। मु० तुगलक के राज्य काल म प्रसिद्ध अफ्रीकी यात्री इब्नबतूता दौलताबाद आया था। उसने इस नगर की समृद्धि का वर्णन करते हुए उसे दिल्ली के समकक्ष ही बताया है। राजधानी के दिल्ली वापस आ जाने के कुछ ही समय पश्चात गुल्बर्गा के सूबेदार जफरखा ने दौलताबाद पर अधिकार कर लिया और यह नगर इस प्रकार बहमनी सुलतानो के हाथ म आ गया। यह स्थिति 1526 तक रही जब इस पर निजामशाही सुलतानो का अधिकार हो गया। तत्पश्चात मुगल सम्राट् अकबर का अहमदनगर पर कब्जा हो जाने पर

दौलताबाद भी मुगलसाम्राज्य मे सम्मिलित हो गया। किन्तु पुन इसे शीघ्र ही अहमदनगर के सुलतानो ने वापस ले लिया। 1633 ई० मे शाहजहा के सेनापति ने दौलताबाद पर कब्जा कर लिया और तब से औरगजेब के राज्यकाल के अत तक यह ऐतिहासिक नगर मुगलो के हाथ ही म रहा। औरगजेब की मृत्यु के कुछ समय पश्चात् मुहम्मदशाह के शासनकाल मे हैदराबाद के प्रथम निजाम आसफजाह ने दौलताबाद का अपनी नई रियासत म शामिल कर लिया।

देवगिरि का यादवकालीन दुग एक त्रिकोण पहाडी पर स्थित है। किले की ऊचाई, आधार म 150 फुट है। पहाडी समुद्रतल से 2250 फुट ऊची है। किले की बाहरी दीवार का घेरा 2½ मील है और इस दीवार और किले के आधार के बीच किलाबदिया की तीन पक्तिया है। प्राचीन देवगिरि नगरी इसी परकोटे के भीतर बसी हुई थी। किन्तु उसके स्थान पर अब केवल एक गाव नजर आता है। किले के कुल आठ फाटक हैं। दीवारो पर कही कही आज भी पुरानी तोपो के अवशेष पडे हुए हैं। इस दुर्ग म एक अधेरा भूमिगत माग भी है जिसे अधेरी कहते हैं। इस माग म कही कही गहरे गढडे भी हैं जो शत्रु को धोखे से नीचे गहरी खाई म गिराने के लिए बनाय गये थे। माग के प्रवेश-द्वार पर लोहे की बडी अगीठिया बनी हैं जिनम आक्रमणकारियो को बाहर ही रोकने के लिए आग सुलगा कर धुआ किया जाता था। किले की पहाडी मे कुछ अपूण गुफाए भी है जो एलोरा की गुफाओ की समकालीन हैं। देवगिरि के प्रमुख स्मारक हैं चाद मीनार, चीनीमहल व जामा मसजिद। चाद मीनार 210 फुट ऊची और आधार के पास 70 फुट चौडी है। यह मीनार दक्षिण भारत म मुसलिम वास्तुकला की सुदरतम कृतिओ म से है। इसका अलाउद्दीन बहमनी ने किले की विजय के उपलक्ष्य म बनवाया था। मीनार का आधार 15 फुट ऊचा है जिसमे 24 कोष्ठ है। सपूण मीनार पर पहले सुदर ईरानी पत्थर जडे हुए थे। इसके दक्षिण की ओर एक छोटा मसजिद है जो, जैसा कि एक फारसी अभिलेख स सूचित होता है, 849 हिजरी (=1445 ई०) मे बनी थी। चीनी महल किले के अष्टम फाटक से 40 फुट दाईं ओर है। यह भवन पहले बहुत सुदर था। इसी म औरगजेब ने गोलकुडा के अतिम शासक अबुहसन तानाशाह को क़ैद किया था। यादवकालीन इमारतो के अवशेष अब नही के बराबर हैं। कवल कालिकादेवल जिसके मध्य भाग को मल्कि काफूर न मसजिद म परिवर्तित कर दिया था, मौजूद है। इसके पास ही जामा मसजिद है, जिसमे प्राचीन भारतीयशैली के स्तभ और सपाट दरवाजे हैं। इस 1313 ई०

म मुबारक खिलजी ने बनवाया था। किंवदंती है कि बहमनीवंश के संस्थापक हसन गंगू का राज्याभिषेक इसी मसजिद मे 1347 ई० म हुआ था। अकबर के समकालीन इतिहास लेखक फरिश्ता ने इसका सुदर वणन किया है। देवगिरि के अन्य उल्लेखनीय स्थान है—काआरीटंका, हाथीहौज, जनादन स्वामी की समाधि तथा शाहजहा और निजामशाही सुलतानो के बनवाए कुछ महलों के भग्नावशेष। जैन स्तोत्र तीर्थ माला चैत्यवदन म देवगिरि को सुरगिरि कहा गया है।

(२) (म० प्र०) एक स्थानीय अभिलेख के अनुसार चबलनदी के तट पर बसे हुए अटेर नामक कस्बे के किले की पहाडी का नाम देवगिरि है। यह अभिलेख भदौरिया राजा बदनसिंह का है।

(3) कालिदास के मेघदूत (पूवमेघ 44) म वर्णित एक पहाडी—'नीच वास्यन्युपजिगमिषोर्देवपूर्वगिरि त, शीतोवायु परिणमयिता काननोदुंबराणाम' अर्थात् हे मेघ (गभीरा नदी के आगे जाने के पश्चात) वन गूलरो को पकाने वाली शीतल वायु, देवगिरि नामक पहाडी के निकट जाने के इच्छुक तेरा साथ देगी। मेघ के यात्राक्रम के अनुसार देवगिरि की स्थिति, गभीरा (वतमान गभीर) नदी और चमण्वती (पूवमघ 47 48) के बीच कहीं होनी चाहिए। चमण्वती या चबल को पार करने के पश्चात मेघ दशपुर पहुचता है जो पश्चिमी मालवा का मदसौर है। इस प्रकार देवगिरि की स्थिति, उज्जैन से मदसौर के माग पर और चम्बल के दक्षिणी तट पर होनी चाहिए। इस पहाडी का अभिज्ञान अनिश्चित है। पूवमघ, 45 मे इसी पहाडी पर कालिदास ने स्कद का निवास बताया है—'तत्र स्कद नियतवसितम'। बिहार उडीसा रिसच सोसाइटी जनल के दिसबर 1915 के अक म प्रकाशित (पृ० 203) एक लेख के अनुसार गभीरा के तीर पर अजीर के वृक्षो के वन म होकर एक माग है जो लगभग एक 200 फुट ऊचे पहाड पर जाकर समाप्त होता है। इस पहाड पर स्कद का एक छोटा सा मदिर है। मदिर की देवमूर्ति की खाडेराव (=स्कदराज) के नाम से पूजा होती है। यह आश्चयजनक बात है कि कालिदास ने इस देवमूर्ति का नाम स्कद कहा है। सभव है इसी पहाडी को कालिदास ने देवगिरि नाम से अभिहित किया हो।

(4) श्रीमद्भागवत, 5,19,16 म उल्लिखित एक पवत का नाम—'भारतेऽप्यस्मिन् वर्षे सरिच्छैला सन्ति बहवोमलयोमगलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूट ऋषभ कूटक कोल्लक सह्यो देवगिरिऋष्यमूक श्रीशैलो वकटो महेन्द्रो वारिधारो विंध्य'। सदभ से यह दक्षिण भारत का कोई पवत जान पड़ता

है। संभव है देवगिरि (1) की ही पहाड़ी का इस उद्धरण में उल्लेख हो। यह पहाड़ी समुद्रतल से 2250 फुट ऊंची है। उपयुक्त उद्धरण में जिसम पर्वतों के नाम शायद क्रमानुसार है, देवगिरि ऋष्यमूक पर्वत के साथ उल्लिखित है जिससे इसे दक्षिण भारत का ही पर्वत मानना ठीक होगा।

देवटेक (जिला चांदा, म० प्र०)

इस स्थान से हाल ही में एक अशोककालीन ब्राह्मी अभिलेख प्राप्त हुआ है। अशोक मौर्य का समय 300 232 ई० पू० है।

देवदह

महावंश, 2 9 में उल्लिखित शाक्य राजा देवदह की राजधानी। यह नगर गौतम बुद्ध की माता मायादेवी का पितृस्थान था। यह ज़िला बस्ती (उ०प्र०) के उत्तर में नेपाल की सीमा के अंतर्गत और लुंबिनी या वर्तमान रुम्मिनीदेई के पास ही स्थित होगा। कपिलवस्तु से देवदह जाते समय मार्ग में ही लुंबिनीवन में माया ने पुत्र को जन्म दिया था। माया के पितृकुल के शाक्यों की कुल रीति के अनुसार इनकी कन्याओं के पहले पुत्र का जन्म पितृगृह में ही होता था और इसीलिए मायादेवी बालक के जन्म के पूर्व देवदह जा रही थी। माया के पिता कोलियगणराज्य के मुख्य थे। गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राध्यापक श्री सी० डी० चटर्जी ने देवदह का अभिज्ञान ज़िला गोरखपुर की फरेंदा तहसील के अंतर्गत बनरसकला नामक स्थान से किया है (दे० हिन्दुस्तान टाइम्स, 17 4 64)

देवदुर्ग (ज़िला रायचूर, मैसूर)

यह स्थान बीदर के सरदारों या पोलीगरों का गढ़ था। ये इतने शक्तिशाली थे कि प्रथम निज़ाम आसफजाह ने इनसे संधि करना ठीक समझा था। किले के तीन ओर दीवारें हैं और पश्चिम की ओर पहाड़ियां। किला मध्ययुगीन है।

देवधानी=देवयानी

साँभर या शाकंभर (राजस्थान) का एक प्राचीन नाम। (दे० देवयानी)

देवपर्वत (बुंदेलखंड, म०प्र०)

अजयगढ़ से 4 मील उत्तर की ओर यह पर्वत स्थित है। महाभारत में दैत्यगुरु शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी से इसका संबंध बताया जाता है। देवपर्वत की चोटी पर महाकवि सूरदास के समकालीन भक्तप्रवर वल्लभाचार्य की बैठक स्थित है।

देवपाटन (नेपाल)

इस नगर की स्थापना मौर्यसम्राट अशोक की पुत्री चारुमती ने अपने पिता के साथ नेपाल की यात्रा के अवसर पर (250 ई० पू० के लगभग) की थी। उसने अपने पति देवपाल क्षत्रिय की स्मृति मे ही इस नगर का नाम देवपाटन रखा था। इसे पाटन भी कहा जाता था। (दे० ललितपाटन, मजुपाटन)

देवपुर दे० राजिम

देवप्रयाग (गढवाल, उ० प्र०)

भागीरथी और अलकनदा के सगम पर स्थित तीर्थ जो बदरीनाथ के मार्ग मे है।

देवप्रस्थ

महाभारत के वर्णन के अनुसार अर्जुन ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे देवप्रस्थ को जीता था। यहा सेनाबिंदु की राजधानी थी—'सदेव प्रस्थमासाद्य सेनाबिंदो पुरप्रति, बलेन चतुरगेण निवेशमकरोत् प्रभु' महा० सभा० 27,13। प्रसगानुसार इसकी स्थिति हिमाचल प्रदेश मे कुलू के अतर्गत मानी जा सकती है। सभा० 27,14 मे पौरवनरेश विश्वगश्व पर अर्जुन के आक्रमण का उल्लेख है जो अलक्षेंद्र के समय के पुरु या पोरस का पूर्वज हो सकता है। इसका राज्य पश्चिमी पजाब (पाकि०) मे स्थित था।

देवबद (जिला सहारनपुर, उ०प्र०)

किंवदती के अनुसार यह महाभारतकालीन द्वैतवन है और देवबद द्वैतवन का ही अपभ्रश है। एक अन्य जनश्रुति के आधार पर यह भी कहा जाता है कि देवबद या देवबन मे प्राचीन काल मे देवीवन नामक वन की स्थिति थी। देवीदुर्गा का एक स्थान अभी तक यहा वर्तमान है। वल्लभ सप्रदाय के प्रसिद्ध भक्त हितहरिवश से सबद्ध राधावल्लभ का मदिर भी उल्लेखनीय है। (दे० द्वैतवन)

देवबदर=ड्यू

देवबरनाक (जिला, आरा बिहार)

इस ग्राम से मगध के गुप्तनरेश जीवितगुप्त द्वितीय के समय का एक महत्वपूर्ण अभिलेख प्राप्त हुआ है। यह शासनपत्र गोमतीकोट्टक नामक दुर्ग से प्रचलित किया गया था। यह तिथिहीन है। इसमे वरुणिक ग्राम(देव बरनाक का मूल प्राचीन नाम) का वरुणवासिन् अथवा सूर्य मदिर के लिए दान में दिए जाने का उल्लेख है। अभिलेख मे गुप्तनरेशो की वशावलि दी गई है जिससे कई परवर्ती गुप्त-राजाओ तथा उनसे सबद्ध मौखरीनरेशों के नाम

मिलते हैं जिनमे ये प्रमुख हैं (1) देवगुप्त—जिसके सबध से वाकाटक राजाओ के कालनिर्णय म सरलता होती है, (2) बालादित्य—जिसका वृत्तात हमे युवान च्वाग के यात्रावर्णन से भी ज्ञात होता है और जिसने हूण राज्य मिहिरकुल से युद्ध किया था और (3) मौखरी नरेश सर्ववर्मन तथा (4) अवतिवर्मन। अवतिवर्मन् का उल्लेख बाण के हर्षचरित मे हर्ष की भगिनी राज्यश्री के पति ग्रहवर्मन के पिता के रूप मे है।

देवयानी (ज़िला साभर, राजस्थान)

साभर से 2 मील दूर प्राचीन ग्राम है। स्थानीय जनश्रुति के आधार पर कहा जाता है कि यह ग्राम महाभारत तथा श्रीमदभागवत म वर्णित देवयानी और शर्मिष्ठा के आख्यान की स्थली है। यही दैत्यगुरु शुक्राचार्य का आश्रम था। ग्राम म वह सरोवर भी बताया जाता है जहा शर्मिष्ठा ने स्नान करने के पश्चात् भूल से देवयानी के कपड़े पहन लिए थे। इस उपाख्यान का महाभारत आदि० 75 82 मे वर्णन है। (दे० कोपरगाँव, देवपर्वत)

देवरकोंडा (ज़िला नलगोंडा, आ० प्र०)

यह स्थान बहमनी काल म वेलमा राजा लिंग के अधिकार म था। इसने बहमनी सुलतानो से वीरतापूर्वक लडाइया लडी थी और उनकी अनेक सेनाओ को नष्ट किया था। यहा का किला सात पहाडियो से घिरा हुआ है।

देवराष्ट्र (ज़िला विज़िगापटम्, आ० प्र०)

इस स्थान के राजा कुबेर का समुद्रगुप्त की प्रशस्ति म उल्लेख है—इस गुप्तसम्राट (समुद्रगुप्त) ने पराजित किया था—'पालक्क उग्रसेनदैवराष्ट्रक कुबेर, कौस्थलपुरकधनजयप्रभृतिसर्वदक्षिणापथराजग्रहणमोक्षानुग्रहजनित प्रतापोन्मिश्र महाभाग्यस्य '। पहले विद्वानो का विचार था कि देव राष्ट्र महाराष्ट्र का ही पर्याय है और इस प्रकार समुद्रगुप्त की दिग्विजययात्रा मे दक्षिणी भारत का लगभग पूरा भाग ही सम्मिलित माना गया था किंतु अब फ्रासीसी विद्वान जू वो डुब्रिल के मत के आधार पर यह उपकल्पना ग़लत कही जाती है। इनका मत है कि समुद्रगुप्त वास्तव मे दक्षिण के केवल पूर्वी समुद्र तट तथा मध्य प्रदेश के पूर्वी भाग तक ही पहुचा था और मलाबार तथा कोयम बटूर के जिले तथा खानदेश और महाराष्ट्र के प्रात उसकी दिग्विजय यात्रा के भाग के बाहर थे। इस मत के मानने वाले देवराष्ट्र का अभिज्ञान विजिगापटम जिले (आ० प्र०) के येल्लमचिल्ली तालुके मे स्थित इसी नाम (देवराष्ट्र) के ग्राम से करते हैं।

देवरी (जिला उदयपुर, राजस्थान)

उदयपुर के निकट स्थित है। इस स्थान पर मेवाडपति महाराणा राजसिंह ने मुगल सम्राट औरगजेब की सेना का आक्रमण विफल कर दिया था। मुगल सम्राट् ने महाराणा को मारवाड के राजकुमार अजितसिंह को शरण देने तथा जजिया के विरुद्ध कारवाई करने के लिए दोषी ठहराया था। मारवाड के वीर दुर्गादास की कूटनीति के फलस्वरूप देवरी की घाटी मे मुगल सेना फस गई तथा उसका बडा भाग नष्ट हो गया।

2—(जिला सागर, म० प्र०) देवरी की गढी काफी प्राचीन थी। इसकी गिनती गढमडला की वीरागना रानी दुर्गावती के श्वसुर सग्रामसिंह (मृत्यु 1541 ई०) के 52 गढो मे थी।

देवल (जिला पीलीभीत, उ० प्र०)

बीसलपुर से दस मील पर देवल और गढगजना के खडहर हैं। कहा जाता है कि देवल मे देवल नाम के ऋषि का आश्रम था। देवल ऋषि का उल्लेख श्रीमद्भगवदगीता 10,13 मे है—'आहुस्त्वामृषय सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा असितो देवलो व्यास स्वय चैव ब्रवीषि मे'। पाडवो के पुरोहित धौम्य देवल के भाई थे। यहा के खडहरो मे भगवान् वराह की मूर्ति प्राप्त हुई थी जो देवल के मदिर मे है। जान पडता है कि यह स्थान प्राचीन समय मे वराह पूजा का केंद्र था। देवल-ऋषि के मदिर मे 992 ई० का कुटिला लिपि मे एक अभिलेख है, जिससे सूचित होता है कि एक स्थानीय राजा और उसकी पत्नी लक्ष्मी ने बहुत से कुज, उद्यान और मदिर बनवाए और ब्राह्मणो को कई ग्राम दान मे दिए जो निमल नदी के जल से सिंचित थे। देवल के पास बहने वाला कन्डी नाम का नाला ही इस अभिलेख की निमला नदी जान पडता है।

देवलगढ़ (जिला गढवाल, उ० प्र०)

श्रीनगर से 4 मील दूर यह स्थान गढवाल की प्राचीन राजधानी रह चुका है। यहा राजराजेश्वरी का और नाथ सप्रदाय के कालभैरव का मदिर स्थित है।

देवलनगर (जिला उदयपुर, राजस्थान)

इस छोटी सी रियासत की नीव डालने वाला राजा सूरजमल था जो चित्तौड नरेश राणा रायमल का भाई था। सूरजमल की रायमल के पुत्र—सागा और पृथ्वीराज से अनबन थी और वह चित्तौड का शत्रु हो गया था। इसने पृथ्वीराज से पराजित होकर चित्तौड से दूर देवलनगर राज्य की स्थापना की। किंतु सूरजमल के वशज बाघ जी ने चित्तौड की, गुजरात के सुलतान बहादुरशाह के विरुद्ध अपनी सेना भेजकर, रक्षा की।

देवलपुर= दे० देलवाडा (1)

देवलाक=दवलास (जिला आजमगढ़, उ० प्र०)

देवलास का प्राचीन नाम देवलाक अर्थात् सूर्यमंदिर है। यह कस्बा तमसा (=टौंस) नदी के उत्तरी तट पर मुहम्मदाबाद स्टेशन से 4 मील पर बसा है। यहां के प्राचीन सूर्य मंदिर के अवशेष आज भी है। सूर्य की प्राचीन मूर्ति स्वर्ण की थी किंतु अब संगमरमर की है।

देववन दे० देवबंद

देवसखा

हिमालय में कैलास के निकट स्थित पर्वत जिसका उल्लेख वाल्मीकि रामायण में है। इसे अनेक पक्षियों का घर बताया गया है और इसके आगे एक विशाल मैदान का वर्णन है—'ततो देवसखानाम पर्वत पतगालय, नानापक्षिसमाकीर्ण विविधद्रुमभूषित। तमतिक्रम्य चाकाशं सर्वत शतयोजन, अपर्वतनदीवृक्ष सर्वसत्वविवर्जितम्। तत्तु शीघ्रमतिक्रम्य कांतार रोमहर्षण कैलास पांडुर प्राप्य हृष्टा यूय भविष्यथ'। इस उद्धरण से प्रतीत होता है कि यह पर्वत कैलास के मार्ग में स्थित था। यहां से कैलास तक के रास्ते को बीहड़ एवं पर्वत, नदी, वृक्ष और सब प्राणियों से रहित बताया गया है। इसका ठीक ठीक अभिज्ञान अनिश्चित है।

देवह्रद (दे० सिहावा)

यह महाभारत, अनुशासन० 25,44 में उल्लिखित है—'देहह्रद उपस्पृश्य ब्रह्मभूतो विराजते'।

देविका

(1) (नेपाल) गंडकी की सहायक नदी। देविका, गंडकी और चक्रा नदियों के त्रिवेणी संगम पर नेपाल का प्राचीन तीर्थ मुक्तिनाथ बसा है। यह स्थान काठमंडू से 140 मील दूर है।

(2) स्कंदपुराण के अनुसार(प्रभास खंड 278) यह नदी मूलस्थान (मुल्तान, प० पाकि०) के प्रसिद्ध सूर्य मंदिर के निकट बहती थी (दे० मुलतान)। अग्निपुराण, 200 में इस नदी को सौवीर देश के अंतर्गत बताया गया है—'सौवीरराजस्य पुरा मत्रेयो भूत पुरोहित तेन चायतन विष्णो कारित देविका तटे' अर्थात् सौवीर नरेश के मत्रेयनामक पुरोहित ने देविका तट पर विष्णु का देवालय बनवाया था। महाभारत, वनपर्व के अंतर्गत तीर्थयात्रा प्रसंग में इस नदी का उल्लेख है। भीष्मपर्व 9,16 में इसका अन्य नदियों के साथ उल्लेख है—'नदीं वेत्रवतीं चैव कृष्णवेणा च निम्नगाम्, इरावती वितस्ता च पयोष्णी देवि-

कामपि'। महाभारत, अनुशासन० 25,21 में इस नदी में स्नान करने से मरने के बाद, सुंदर शरीर की प्राप्ति बताई गई है—'देविकायामुपस्पृश्य तथा सुंदरिकाह्रदे अश्विन्यां रूपवर्चस्कं प्रेत्य वै लभते नरः'। पाणिनि ने देविका तट के धान्य का उल्लेख किया है (अष्टाध्यायी 7,3,1)। विष्णु० 2,15,6 में देविका के तट पर वीरनगर नामक स्थान का उल्लेख है। कुछ विद्वानों के मत में देविका पंजाब की वर्तमान देह नदी है जो रावी में मिलती है।

देविकाकुंड

महाभारत, अनुशासन० में वर्णित तीर्थ जो संभवतः देविका नदी के तट पर अवस्थित था। [दे० देविका (2)]

देवी

महानदी की सहायक नदी जो ज़िला पुरी (उड़ीसा) में बहती है।

देवीपत्तन दे० मूलसेतु

देवीपाटन (ज़िला गोंडा, उ० प्र०)

पटेश्वरी देवी के मंदिर के लिए यह स्थान दूर दूर तक प्रसिद्ध है। देवीपाटन तुलसीपुर रेल स्टेशन के निकट है। वर्तमान मंदिर अधिक प्राचीन नहीं है किंतु कहा जाता है कि प्राचीन मंदिर जो आधुनिक मंदिर के स्थान पर ही था विक्रमादित्य के समय में बना था। इसे औरंगजेब ने 17 वीं शती में तुड़वा दिया था। स्थानीय किंवदंती के अनुसार कुंती के ज्येष्ठपुत्र कर्ण ने परशुराम से ब्रह्मास्त्र यहीं प्राप्त किया था। (दे० महा० वन० 34, 157-158 'भार्गवा-दुपददौ दिव्यं धनुर्वेदं महात्मने, कर्णाय पुरुषव्याघ्र सुप्रीत नातरात्मना')

देवीवन दे० देववन

देह=देविका (२)

देहरादून (उ० प्र०)

देहरा शब्द का अर्थ निवास स्थान या डेरा है और दून का अर्थ द्रोण या पर्वत की घाटी। कहते हैं कि सिखों के गुरु रामराय किरतपुर (पंजाब) से आकर यहां बस गए थे। मुगल सम्राट औरंगजेब ने उन्हें कुछ ग्राम टिहरी नरेश से दान में दिलवा दिए थे। यहां उन्होंने मुगल मकबरों से मिलता जुलता मंदिर भी बनवाया (1699 ई०) जो आजतक प्रसिद्ध है। शायद गुरु का डेरा यहां इस घाटी में होने के कारण ही स्थान का नाम देहरादून पड़ गया। इसके अतिरिक्त एक अति प्राचीन किंवदंती के अनुसार देहरादून का नाम पहले द्रोणनगर था और यह कहा जाता है कि पांडव कौरवों के गुरु द्रोणाचार्य ने इस स्थान पर अपनी तपोभूमि बनाई थी और उन्हीं के नाम पर इस नगर का

नामकरण हुआ था। एक अन्य किंवदंती के अनुसार जिस द्रोणपर्वत को औषधियां हनुमान जी लक्ष्मण के शक्ति लगने पर लंका ले गये थे वह यहीं स्थित था। किंतु वाल्मीकि रामायण में इस पर्वत को महोदय कहा गया है। यह भी कहा जाता है कि महाभारत-काल में विराटराज की सेना कालसी में रहा करती थी जो देहरादून के पास ही है और उनकी गायों की रक्षा छद्मवेशधारी अर्जुन ने की थी (इस पिछली किंवदंती में कुछ भी तथ्य नहीं जान पड़ता क्योंकि विराट का राज्य मत्स्य देश में था जो वर्तमान अलवर-जयपुर का इलाका है)। देहरादून का एक अति प्राचीन मुहल्ला खुरबाड़ा है जिसका संबंध लोक कथा में विराट की गौवों के खुरों के गिरने से जोड़ा जाता है किंतु जैसा अभी कहा गया है देहरादून से विराट के संबंध की किंवदंती केवल कपोलकल्पना मात्र है। देहरादून जिले में कालसी के निकट जगतग्राम नामक स्थान पर तृतीय शती ई० के कुछ अवशेष मिले हैं जिनसे ज्ञात होता है कि राजा शीलवर्मन ने इस स्थान पर अश्वमेधयज्ञ किया था। इससे यह महत्वपूर्ण तथ्य सिद्ध होता है कि देश के इस भाग में तृतीय शती ई० में हिंदूधर्म के पुनर्जागरण के लक्षण निश्चित रूप से दिखायी पड़ने लगे थे।

मुगल-साम्राज्य के छिन्नभिन्न हो जाने पर 1772 ई० में देहरादून पर गूजरों ने आक्रमण किया। तत्पश्चात् अफगान सरदार गुलाम कादिर ने गुरु रामराय के मंदिर में अनेक हिंदुओं का वध किया और फिर सहारनपुर के सूबेदार नजीबुद्दौला ने दून घाटी पर हमला करके उस पर अधिकार कर लिया। उसकी मृत्यु के पश्चात गूजर, राजपूत और गोरखे इन सभी ने बारी-बारी से इस प्रदेश में लूटमार मचाई। 1783 ई० में सिख सरदार बघेल सिंह ने सहारनपुर को लूटने के पश्चात् देहरादून को नष्ट भ्रष्ट किया। जिन लोगों ने रामराय के मंदिर में शरण ली, केवल वे ही बच सके अन्य सब को तलवार के घाट उतार दिया गया। आस पास के गांवों में भी बघेलसिंह के सैनिकों ने लूट मार मचाई। 1786 ई० में गुलाम कादिर ने दुबारा देहरादून को लूटा और इस बार उसका सहायक मनियार सिंह भी था। गुलाम कादिर ने रामराय के गुरुद्वारे को लूट कर जला दिया और बिछी हुई गुरु की शय्या पर शयन कर उसने सिखों और हिंदुओं के हृदयों को भारी ठेस पहुंचाई। स्थानीय हिंदुओं का विश्वास था कि इन्हीं अत्याचारों के कारण यह दुष्ट आक्राता पागल होकर मृत्यु को प्राप्त हुआ। 1801 ई० में गोरखों ने दून घाटी को हस्तगत कर लिया। यहां उस समय टिहरी गढ़वाल नरेश प्रद्युम्नशाह का अधिकार था। इस लड़ाई में गोरखा नरेश बहादुरशाह का, वीर सेनानी अमर सिंह ने बड़ी

वीरता से सामना किया। गोरखो का राज्य इस घाटी मे तेरह चौदह वर्ष तक रहा। इस काल म उन्होने बडी नृशसता से शासन किया। उनका अत्याचार यहा तक बढ गया था कि वे लगान वसूल करने के लिय किसानो को प्रतिवर्ष हरद्वार के मेले मे बेच दिया करते थे। कहा जाता है कि इनका मूल्य दस से एक सौ पचास रुपये तक उठता था। अत्याचार ग्रस्त किसान सैकडो की सख्या मे दून-घाटी से भाग कर बाहर चले गय। रामराय गुरुद्वार के महत हरसेवक ने बाद मे इन किसानो को वापस बुला लिया था। 1814 ई० मे गोरखा युद्ध के पश्चात् दूनघाटी तथा उत्तरी भारत के अन्य पहाडी प्रदेश अग्रेजो के हाथ मे आ गये।

देहली = दिल्ली

उर्दू भाषा मे दिल्ली को प्राय देहली लिखा जाता रहा है।

देहू (ज़िला पूना, महाराष्ट्र)

पूना से 15 मील दूर देहूरोड स्टेशन के निकट महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सत तुकाराम का जन्म स्थान है। इनके पिता बोलोजी तथा माता कनकाबाई थी। तुकाराम का जन्म 1608 ई० म हुआ था। कहा जाता है कि उन्होने देहू के निकट भागगिरि पहाडी पर तपस्या करके मोक्ष प्राप्त की थी। तुकाराम द्वारा स्थापित विठोबा का मदिर देहू का प्रसिद्ध स्मारक है।

देहोत्सग दे० प्रभास

दहक (सौराष्ट्र, गुजरात)

10 शती के प्रसिद्ध अरब पर्यटक तथा विद्वान लेखक अलबरूनी के एक उल्लेख के अनुसार रसविद्या के प्रसिद्ध भारतीय आचार्य नागार्जुन, सोमनाथ के निकट देहक नामक स्थान मे रहते थे। अलबेरूनी का नागार्जुन विषयक कथन भ्रामक जान पडता है किंतु देहक से तात्पर्य अवश्य ही देहोत्सग या प्रभासपाटन (कृष्ण के देहोत्सग का स्थान) मे है।

दोहरताल

प्राचीन श्रावस्ती के खडहरा (सहेतमहेत, जिला गोंडा, उ० प्र०) से एक मील दूर टडवा नामक ग्राम मे बौद्धकालीन कश्यप बुद्ध के स्तूप के भग्नावशेष है। इ ही के उत्तर मे दोहरताल या सीतादोहर नामक एक मील लबा ताल है जिसके साथ कई प्राचीन किवदतियो का सबध है।

दौलताबाद दे० देवगिरि

द्युतिपलाश

वैशाली मे स्थित ज्ञाति क्षत्रियो का उद्यान एव चैत्य। यह कोल्लाग

द्युतिमान

विष्णुपुराण 2,441 में उल्लिखित कुशद्वीप का एक पर्वत—'विद्रुमा हेमशैलश्च द्युतिमान पुष्पवास्तथा, कुशेशया हरिश्चैव सप्तमो मदराचल ।'

द्रविड

तामिलप्रदेश (मद्रास) का प्राचीन नाम—'पाडयाश्च द्रविडाश्चैव सहिताश्चोड्र केरलै आध्रास्ताल्वनाश्चव कलिगानुष्ट्रकर्णिकान'—महा० सभा० 31,71 । इस उल्लेख के अनुसार सहदेव ने द्रविड तथा अन्य दाक्षिणात्य राज्यो पर दिग्विजय-यात्रा क प्रसग मे विजय प्राप्त की थी । वन, 51,22 मे द्राविडो का चोलो और आध्रो क साथ उल्लेख है—'सवगागान् सपौंडोड्रान् सचोल द्राविडाध्रकान' । कहा जाता है कि द्रविड और तमिल शब्द मूलत एक ही हैं, केवल उच्चारण के भेद के कारण अलग अलग हो गए है । मनु के अनुसार द्राविड मूलत क्षत्रिय थे ।

द्रागियाना

बिलोचिस्तान (पाकिस्तान) का प्राचीन यूनानी नाम है । इसका उल्लेख अलक्षेद्र के जमाने के यूनानी लेखका न किया है । यह कहना सभव नही है कि द्रागियाना किस भारतीय नाम का यूनानी रूपातर है ।

द्राक्षाराम (जिला गोदावरी, आ० प्र०)

इस स्थान से अनेक प्राचीन ऐतिहासिक अभिलेख प्राप्त हुए हं जिनसे जान पडता है कि यह स्थान प्राचीन समय म महत्त्वपूण रहा होगा । दुगम वन-प्रदेश म स्थित हान के कारण इसका प्राचीन महत्व प्रकाश म नही लाया जा सका है ।

द्रुमकुल्य

भारत लका के बीच के समुद्र के उत्तर की ओर एक देश जहा रामायण-काल मे आभीरो का निवास था । समुद्र की प्रार्थना पर श्रीराम न अपन चढाए हुए बाण का (जिससे वह समुद्र को दडित करना चाहते थे) द्रुमकुल्य की ओर फेंक दिया था । जिस स्थान पर बाण गिरा था वहा समुद्र सूख गया और मरुस्थल बन गया किंतु यह स्थान राम के वरदान स पुन हरा भरा हो गया—'उत्तरेणावकाशोऽस्ति कश्चित पुण्यतरो मम, द्रुमकुल्य इतिख्याता लोक ख्याता यथा भवान । उग्रदर्शनकर्माणा बहवस्तत्र दस्यव, आभीरप्रमुखा पापा पिबन्ति सलिल मम । तैंन तत्स्पर्शन पाप सहय पापकर्मिभि, अमोघ क्रियता राम अय तत्र शरोत्तम । तेन तन्मरुकान्तार पृथिव्या किल विश्रुतम, निपातित शरो यत्र वज्राग्निसमप्रभ । विख्यात त्रिपु लोकेपु मरुकान्तारमयच, शापयित्वातु त कुक्षि रामो दशरथात्मज । वर तस्म

ददौविद्वान् मखेऽमरविक्रम, पशव्यश्चाल्परोगश्च फलमूलरसायुत, बहुलहो बहुक्षीर सुगधिर्विविधौषधि —वाल्मीकि० युद्ध० 22, 29 30 31 33-37 38। अध्यात्म-रामायण युद्ध 3, 81 मे भी द्रुमकुल्य का उल्लेख है—'रामात्तरप्रदेश तु द्रमकुल्य इति श्रुत'

द्रोण=द्रोणगिरि

विष्णुपुराण 2, 4, 26 म उल्लिखित शाल्मल द्वीप का एक पवत, 'कुमुद श्चो नतश्चैव तृतीयश्च बलाहक द्रोणा यत्र महौषध्य स चतुर्थो महीधर'। यहा द्रोण-पवत पर महौषधियो का उल्लेख किया गया है। पौराणिक किवदती म कहा जाता है कि लक्ष्मण के लका के युद्ध म शक्ति लगने पर हनुमान द्रोणाचल पवत से ही औषधियाँ लाए थे। वाल्मीकि०, युद्ध०, 74 म हनुमान को जिस पवत से औषधिया लानी थी जाम्बवान् न उस हिमालय क कलास और ऋषभ पवता के बीच म बताया है—'गत्वापरमध्वानमुपर्युपरिसागरम, हिमवत नगश्रेष्ठ हनुमान गतुमहसि, तत काचनमत्युग्रमृषभ पवतोत्तमम् कैलासशिखर चात्र द्रक्ष्यस्यरिनिषूदन'—युद्ध० 74, 29 30। अध्यात्म रामायण, युद्ध० 5, 72 म इसका नाम द्रोणगिरि है—'तत्र द्रोणगिरिर्नामदिव्यौषधि समुद्भव तमानय द्रुत गत्वा सजीवय महामत', अर्थात रामचन्द्र जी न वानर सेना के मूछित हो जाने पर कहा—हे हनुमान, क्षीरसागर के निकट द्रोणगिरि नामक दिव्यौषधि समूह है तुम वहा शीघ्र जाकर उसे ले आओ और वानर सेना को जीवित करो। इससे पहले श्लोक 71 मे इसे क्षीरसागर के निकट बताया गया है। जनश्रुतिया के आधार पर द्रोणपवत का अभिज्ञान तहसील रानीखेत जिला अलमोडा मे स्थित दूना गिरि से किया जाता है। (देहरादून के पवतो को भी द्रोणाचल कहा जाता है।) दूनागिरि पर आजकल भी अनक औषधिया उत्पन्न होती हैं। किंतु वाल्मीकि रामायण क उद्धरण स ज्ञात होता है कि यह पहाड कैलास और ऋषभ पवतो के बीच म स्थित था। (वाल्मीकि न इस पवत का नाम महोदय बताया है) बदरीनाथ और तुगनाथ स जो द्रोणाचल दिखाई देता है सभवत वाल्मीकि रामायण मे उसी का निर्देश है।

द्रोणगिरि

(1)=द्रोण

(2) (बुदेलखड, म० प्र०) छतरपुर से सागर जाने वाले माग पर सेंधपा ग्राम के निकट एक पवत जिसके शृग पर 24 जैन मदिर हैं। य मध्यकालीन बुदेलखड की वास्तुशैली मे निर्मित हैं। सभवत इसी पवत का उल्लेख श्री मद्भागवत 5,19,16 मे है—'पारियात्रो द्रोणश्चित्रकूटो गोवधनो रवतक'। (यह द्रोण या द्रोणगिरि भी हो सकता है)

द्रोणनगर

देहरादून का एक नाम जो द्रोणाचार्य के नाम पर है। (दे० देहरादून) द्रोणनगर का एक पर्याय द्रोणपुर भी है।

द्रोणपुर=द्रोणनगर

द्रोणस्तूप दे० भगवानगंज

द्रोणाश्रम

स्थानीय किंवदंती के अनुसार, देहरादून में द्रोणाचार्य का आश्रम था और इसी कारण इस नगर का नाम द्रोणनगर हुआ था।

द्वादशग्राम

हिमालय के निकट एक प्रदेश जहां प्राचीन काल में बिसी और महाबिसी नामक चमड़ा बनता था।

द्वारका

1 *(सौराष्ट्र, गुजरात)* पश्चिमी समुद्रतट के निकट द्वीप पर बसी हुई श्रीकृष्ण की प्रसिद्ध राजधानी (दे० कोडिनार)। इस नगरी के स्थान पर श्रीकृष्ण के पूर्व कुशस्थली नामक नगरी थी जहां के राजा रैवतक थे(दे० कुशस्थली)। श्रीकृष्ण ने जरासंध के आक्रमणों से बचने के लिए मथुरा को छोड़कर द्वारका में अपनी सुरक्षित राजधानी बनाई थी। यह नगरी विश्वकर्मा ने निर्मित की थी और इसे सुरक्षा के विचार से समुद्र के बीच में एक द्वीप पर स्थापित किया था। श्रीकृष्ण ने मथुरा से सब यादवों को लाकर द्वारका में बसाया था। महाभारत सभा० 38 में द्वारका का विस्तृत वर्णन है जिसका कुछ अंश इस प्रकार है—द्वारका के मुख्य द्वार का नाम वर्धमान था ('वर्धमानपुरद्वारमाससाद पुरोत्तमम')। नगरी के सब ओर सुन्दर उद्यानों में रमणीय वृक्ष शोभायमान थे, जिनमें नाना प्रकार के फलफूल लगे थे। यहां के विशाल भवन सूर्य और चंद्रमा के समान प्रकाशवान तथा मेरु के समान उच्च थे। नगरी के चतुर्दिक चौड़ी खाइयां थीं जो गंगा और सिंधु के समान जान पड़ती थीं और जिनके जल में कमल के पुष्प खिले थे तथा हंस आदि पक्षी क्रीडा करते थे ('पद्मषंडाकुलाभिश्च हंससेवितवारिभिः, गंगासिंधुप्रकाशाभिः परिखाभिरलंकृता')। सूर्य के समान प्रकाशित होने वाला एक परकोटा नगरी को सुशोभित करता था जिससे वह श्वेत मेघों से घिरे हुए आकाश के समान दिखाई देती थी ('प्राकारेणार्कवर्णेन पांडरेण विराजिता, वियन् मूर्घनिविष्टेन द्यौरिवाभ्रपरिच्छदा')। रमणीय द्वारकापुरी की पूर्वदिशा में महाकाय रैवतक नामक पर्वत (वर्तमान गिरनार) उसके आभूषण के समान अपने शिखरों सहित सुशोभित होता था—('भाति रैवतकः शैलो

रम्यसानुमहाजिर , पूवस्या दिशिरम्याया द्वारकाया विभूषणम्')। नगरी के दक्षिण मे लतावेष्ट, पश्चिम मे सुकक्ष और उत्तर मे वेणुमत पवत स्थित थे और इन पवतो के चतुर्दिक् अनेक उद्यान थे। महानगरी द्वारका के पचास प्रवेश द्वार थे—('महापुरी द्वारवती पचाशद्भिमुख युताम')। शायद इन्हीं बहुसख्यक द्वारा के कारण पुरी का नाम द्वारका या द्वारवती था। पुरी चारो ओर गभीर सागर से घिरी हुई थी। सुन्दर प्रासादो से भरी हुई द्वारका श्वेत अटारियो से सुशोभित थी। तीक्ष्ण यन्त्र, शतघ्नियां, अनेक यन्त्रजाल और लोहचक्र द्वारका की रक्षा करते थे—('तीक्ष्णयन्त्रशतघ्नीभिर्यन्त्रजाल समन्विता आयसैश्च महाचक्रैर्ददश द्वारका पुरीम')। द्वारका की लम्बाई बारह योजन तथा चौडाई आठ योजन थी तथा उसका उपनिवेश (उपनगर) परिमाण मे इसका द्विगुण था ('अष्ट योजन विस्तीर्णामचला द्वादशायताम, द्विगुणोपनिवेशाच ददश द्वारकापुरीम')। द्वारका के आठ राजमाग और सोलह चौराहे थे जिन्हे शुक्राचाय की नीति के अनुसार बनाया गया था ('अष्टमार्गां महाकक्ष्या महाषोडशचत्वराम् एव मागपरिक्षिप्ता साक्षादुशनसाकृताम')। द्वारका के भवन मणि, स्वर्ण, वैडूर्य तथा सगमरमर आदि से निर्मित थे। श्रीकृष्ण का राजप्रासाद चार योजन लम्बा-चौडा था, वह प्रासादो तथा क्रीडापवतो से सपन्न था। उसे साक्षात विश्वकर्मा ने बनाया था ('साक्षाद् भगवतो वेश्म विहित विश्वकमणा, ददृशुर्देवदेवस्य चतुर्योजनमायतम, तावदेव च विस्तीणमप्रमेय महाधनै, प्रासादवर-सपन्न युक्त जगति पर्वतै')। श्रीकृष्ण के स्वर्गारोहण के पश्चात समग्र द्वारका, श्रीकृष्ण का भवन छोडकर समुद्रसात हो गयी थी जसा कि विष्णुपुराण के इस उल्लेख से सिद्ध होता है—'प्लावयामास ता शून्या द्वारका च महोदधि वासुदेवगह त्वेक न प्लावयति सागर,' विष्णु० 5,38,9। कहा जाता है कृष्ण के भवन के स्थान पर ही वज्रनाभ ने रणछोड जी का मूल मदिर बनवाया था। वतमान मदिर अधिक पुराना नही है पर है वज्रनाभ के मूल मदिर के स्थान पर है। यह परकोट के अदर घिरा हुआ है और सात मजिला है। इसके उच्चशिखर पर समवत ससार की सबसे विशाल ध्वजा लहराती है। यह ध्वजा पूरे एक थान कपडे से बनती है। द्वारकापुरी महाभारत के समय तक तीर्थों मे परिगणित नही थी। जैन सूत्र अतकृतदशाग मे द्वारवती के 12 योजन लबे, 9 योजन चौडे विस्तार का उल्लेख है तथा इसे कुबेर द्वारा निर्मित बताया गया है और इसके वैभव और सौंदय के कारण इसकी तुलना अलका से की गई है। रैवतक पवत को नगर के उत्तरपूर्व मे स्थित बताया गया है। पवत के शिखर पर नदन वन का उल्लेख है। श्रीमद्भागवत मे भी द्वारका

का महाभारत से मिलता जुलता वर्णन है। इसमे भी द्वारका को 12 योजन के परिमाण का कहा गया है तथा इसे यत्रो द्वारा सुरक्षित तथा उद्यानों, विस्तीर्ण मार्गों एव ऊची अट्टालिकाओ स विभूषित बताया गया है, 'इति समन्त्र्य भगवान दुर्गं द्वादशयोजनम, अत समुद्रेनगर कृत्स्नादमुतमचीकरत्। दृश्यते यत्र हि त्वाप्ट्र विज्ञान शिल्प नपुणम, रथ्याचत्वरवीथीभियथावास्तु विनिर्मितम। सुरद्रुमलतोद्यानविचित्रोपवनान्वितम, हेमशृगैं दिविस्पृग्भि- स्फाटिकाट्टालगोपुरै' श्रीमदभागवत 10,50, 50 52। माघ के शिशुपाल वध के तृतीय सग मे भी द्वारका का रमणीक वणन है। वतमान बेटद्वारका श्रीकृष्ण की विहार स्थली कही जाती है।

(2) कनोज की एक नगरी का नाम जिसका उल्लख राइस डेवीज के अनुसार प्राचीन साहित्य मे है।

(3) बगाल की नदी जिस के तट पर तारापीठ नामक सिद्ध-पीठ स्थित था।

द्वारपाल

'द्वारपाल च तरसा वशे चक्रे महाद्युति, रामठान हारहूणाश्च प्रतीच्याश्चैव ये नृपा'—महा० सभा० 32,12। नकुल ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग म उत्तर पश्चिम दिशा के अनेक स्थानो को जीतत हुए द्वारपाल पर भी प्रभुत्व स्थापित किया था। प्रसग स द्वारपाल, अफगानिस्तान और भारत के बीच द्वार के रूप मे स्थित खैबर दर्रे का प्राचीन भारतीय नाम जान पडता है। यह वास्तव मे भारत का द्वाररक्षक था। इस उल्लेख से यह बात स्पप्ट है कि प्राचीन काल म भारतीयो को अपनी उत्तर पश्चिम सीमा के इस दर्रे का महत्व पूरी तरह से ज्ञात था। उपयुक्त श्लोक म रमठ और हारहूण अफगानिस्तान के ही प्रदेश हैं जिससे द्वारपाल स खबर दर्रे का अभिज्ञान निश्चित ही जान पडता है। इन सब स्थानो को नकुल ने 'शासन भेजकर ही वश म कर लिया था और वहा सेना भेजने की उन्हे आवश्यकता नही पडती थी— तान् सर्वान स वशे चक्रे शासनादेव पाडव'। महाभारत वन० 83,15 मे भी द्वारपाल का उल्लेख है—'ततो गच्छेत धमज्ञ द्वारपाल तर तुकम्'।

द्वारमण्डल (लका)

महावश 10,1 मे उल्लिखित एक ग्राम जो अनुराधपुर की चैत्यगिरि (मिहिन्ताल) के समीप स्थित था।

द्वारवती

(1) दे० द्वारका। घटजातक (स० 454) म कृष्ण द्वारा द्वारवती की विजय का उल्लेख है।

(2) थाइलैंड या स्याम का एक प्राचीन भारतीय उपनिवेश। यहां के राजा का उल्लेख चीनी यात्री युवानच्वांग (7वीं शती ई०) ने किया है। यह उपनिवेश मिनाम की घाटी में स्थित था। द्वारवती राज्य की राजधानी शायद लवपुरी थी जहां आठवीं शती ई० के कई अभिलेख प्राप्त हुए हैं। स्याम की पाली इतिहास-कथाओं चामदेवीवंश और जिनकाल मालिनी (15वीं 16वीं शती ई०) में भी द्वारवती का उल्लेख है। इस राज्य का समृद्धिकाल ई० सन की प्रारंभिक शतियों से प्रारंभ होकर 10वीं शती तक था।

द्वारसमुद्र

11वीं शती ई० के मध्य में होयसल नामक राजवंश ने शक्ति संपन्न होकर द्वार समुद्र का स्वतंत्र राज्य स्थापित किया था। 1310 ई० में अलाउद्दीन खिलजी के सेनापति मलिक काफ़ूर ने दक्षिण भारत पर आक्रमण किया। उसने द्वारसमुद्र में खूब लूटमार मचाई और वहां के प्राचीन मंदिर को नष्टभ्रष्ट कर दिया। 1327 ई० में मु० तुगलक ने होयसल नरेशों की बची खुची शक्ति को भी समाप्त कर दिया। विजयनगर राज्य के उत्थान के पश्चात्, द्वारसमुद्र इस महान् हिंदू साम्राज्य का अंग बन गया और इसकी स्वतंत्र सत्ता समाप्त हो गई। दे० हालेबिड

द्वारहाट (तहसील रानीखेत, ज़िला अल्मोड़ा, उ० प्र०)

रानीखेत से 13 मील उत्तर की ओर प्राचीन स्थान है। 8वीं से 13वीं शती तक के अनेक मंदिरों के अवशेष यहां मिले हैं। इनमें गूजरदेव का मंदिर कला की दृष्टि से उत्कृष्ट कहा जा सकता है। इसकी चारों ओर की भित्तियों को कलापूर्ण शिलापट्टों से समलंकृत किया गया है। यहां का शीतला मंदिर भी उल्लेखनीय है।

द्वारावती=द्वारवती (द्वारका)

जैन तीर्थमालाचैत्यवंदन में द्वारावती का जैन तीर्थ के रूप में उल्लेख है —'द्वारावत्यं परप गढमढगिरौ श्रीजीणवप्रे तथा'। यह स्थान जिन नेमिनाथ से संबंधित बताया गया है। जैन पौराणिक कथाओं के अनुसार नेमिनाथ श्री कृष्ण के समकालीन और उनके संबंधी भी थे।

द्वैतवन

महाभारत में वर्णित वन जहां पांडवों ने वनवासकाल का एक अंश व्यतीत किया था। यह वन सरस्वती नदी के तट पर स्थित था 'ते यात्वा पांडवास्तत्र ब्राह्मणबहुभिः सह, पुण्यं द्वैतवनं रम्यं विविशुर्भरतर्षभा। तमालतालाम्रमधूक-नीप कदंबसर्जार्जुनकर्णिकारैः, तपात्यये पुष्पधरैरुपेतं महावनं राष्ट्रपतिं ददर्श।

मनोरमा भोगवतीमुपेत्य पूतात्मनाचीरजटाधराणाम्, तस्मिन् वने धर्मभृता निवास ददर्श सिद्धगणाननेकान्' महा० वन० 24,16 17 20। भोगवती नदी सरस्वती ही का एक नाम है। भारवि के किरातार्जुनीयम 1,1 म भी द्वैतवन का उल्लेख है—'स वर्णलिंगी विदित समाययौ युधिष्ठिर द्वतवने वनेचर'—। महाभारत सभा० 24 13 म द्वैतवन नाम के सरोवर का भी वर्णन है—'पुण्य द्वैतवन सर'। कुछ विद्वानो के अनुसार जिला सहारनपुर (उ० प्र०) मे स्थित देवबद ही महाभारतकालीन द्वैवतन है। सभव है प्राचीन काल मे सरस्वती नदी का माग देवबद के पास से ही रहा हो। शतपथ ब्राह्मण 13,5,4,9 म द्वैतवन नामक राजा को मत्स्य नरेश कहा गया है। इस ब्राह्मण-ग्रथ की गाथा के अनुसार इसने 12 अश्वो से अश्वमेध-यज्ञ किया था जिससे द्वैतवन नामक सरोवर का यह नाम हुआ था। इस यज्ञ को सरस्वतीतट पर सपन्न हुआ बताया गया है। इस उल्लख के आधार पर द्वैतवन सरोवर की स्थिति मत्स्य (=अलवर-जयपुर भरतपुर) के क्षेत्र म माननी पडेगी। द्वैतवन नामक वन भी सरोवर के निकट ही स्थित होगा। मीमासा के रचयिता जमिनी का जन्मस्थान द्वैतवन ही बताया जाता है।

द्वपायनहृद्र

कुरुक्षेत्र प्रदेश का एक सरोवर (द० पाराशर हृद्र)

द्वैलव (जिला कानपुर)

बिठूर से 6 मील दूर द्वैलव या वैला रुद्रपुर नामक ग्राम है जहा वाल्मीकि ऋषि का आश्रम माना जाता है। यहा वाल्मीकि कूप भी स्थित है। स्थानीय जनश्रुति मे लवकुश के जन्म और रामायण की रचना का स्थल इसी ग्राम को माना जाता है। ग्राम का नाम लव के नाम पर है।

द्वयक्ष

महाभारत के उपायन अनुपर्व मे युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ म नाना प्रकार के उपहार लाने वाले विदेशियो म द्वयक्ष तथा त्र्यक्ष नाम के लोग भी है—'द्वयक्षास्त्र्यक्षाल्ललाटाक्षान् नानादिग्भ्य समागतान, औष्णीकान तवासाश्च रोमकान पुरुषादकान'। प्रसगानुसार य भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा के परवर्ती प्रदेशो म रहने वाले लोग जान पडते है। कुछ विद्वानो के मत म द्वयक्ष बदख्शा का और त्र्यक्ष तरखान का प्राचीन भारतीय नाम है। ये प्रदेश आज-कल अफगानिस्तान तथा दक्षिणी रूस म है। इन्ह उपर्युक्त उल्लेख म सभवत-

औष्णीष या पगडी धारण करने वाला कहा गया है। ललाटाक्ष संभवत लद्दाख का नाम है। (दे० =ऋषक, ललाटाक्ष)

धनुष्कोटि (मद्रास)

रामेश्वरम् से लगभग 12 मील दक्षिण की ओर स्थित है। यहां भारतीय प्रायद्वीप की नोक समुद्र के अंदर तक चली गई प्रतीत होती है। दोनों ओर से दो समुद्र महोदधि और रत्नाकर यहां मिलते हैं। इस स्थान का संबंध श्रीराम चंद्र जी से बताया जाता है। कथा है कि विभीषण की प्रार्थना पर श्रीराम ने धनुष की नोक या कोटि से अपना बनाया सेतु तुड़वा दिया था (जिससे भारत का कोई आक्रमणकारी लंका न पहुंच सके)। स्कंदसेतु माहात्म्य-33,65 में इस स्थान को पुण्यतीर्थ माना है—'दक्षिणाम्बुनिधौ पुण्ये रामसेतौ विमुक्तिदे, धनुष्कोटिरिति ख्यातं तीर्थमस्ति विमुक्तिदम्'।

धनेर

जैनस्तोत्र तीर्थमाला चैत्यवंदन में उल्लिखित तीर्थ, 'सिंह द्वीप धनेरमंगलपुरे चाउजाहरे श्रीपुरे' इसका अभिज्ञान वर्तमान धानेरा (जिला पालनपुर, राजस्थान) से किया गया है-दे० एशेंट जैन हिम्स सिंधिया ओरियंटल सिरीज पृष्ठ 54।

धान्यवती (बर्मा)

प्राचीन अराकान के एक भारतीय राज्य की राजधानी जिसका अभिज्ञान वर्तमान राखेंगम्यू से किया गया है। इस राज्य की स्थापना ब्रह्मदेव के अन्य भारतीय उपनिवेशों से बहुत पहले ही—ई० सन् से कई सौ वर्ष पूर्व—हुई थी। 146 ई० में धान्यवती के हिंदू राजा चंद्रसूर्य के शासनकाल में बुद्ध की एक प्रसिद्ध मूर्ति महामुनि नामक गढ़ी गई थी जिसे समस्त ऐतिहासिक काल में अराकान का इष्टदेव माना जाता रहा। 789 ई० में महातैनचन्द्र ने धान्यवती को छोड़कर वैसाली में राजधानी बनाई। ऐसा जान पड़ता है कि उसके पिता सूर्यकेतु के राज्यकाल में किसी राजनैतिक क्रांति या युद्ध के कारण धान्यवती की स्थिति बिगड़ गई थी।

धमतरी (ज़िला रायपुर, म० प्र०)

18वीं शती में निर्मित रामचन्द्र जी का मंदिर यहां का सुंदर स्मारक है। इसके स्तंभ विशेष रूप से वास्तुकला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

धमनार (जिला मंदसौर, म० प्र०)

इस ग्राम के निकट 14 शैलकृत्त गुहा मंदिर है। इनमें से दो गुफाएं जिन्हें भीमबाजार और बड़ी कचहरी कहते हैं—मुख्य हैं। निर्माण कला के विचार से

इनका समय 8 वी या 9 वी शती ई० म जान पडता है। भीमबाजार एक विशाल गुफा है और सब गुफाओ म बडी है। इसमे एक आयताकार आगन के बीच म एक चैत्य स्थित है। आगन के तीन ओर छोटे छोटे कोष्ठ हैं। प्रत्येक पक्ति के बीच की कोठरी म भी चैत्य बना हुआ है। पश्चिम की ओर की पक्तियो के बीच की कोठरी मे ध्यानीबुद्ध की दो शैलकृत्त मूर्तिया है। पास ही स्थित छोटा बाजार म भी इसी प्रकार की किंतु इनसे छोटी गुफाए है जिसम बुद्ध की मूर्तिया भी हैं किंतु ये नष्ट भ्रष्ट दशा म हैं। बडी कचहरी वास्तव म एक विशाल वर्गाकार चैत्यशाला है जिसके आगे स्तभो पर आधृत एक बरामदा है जो सामने की ओर एक पत्थर के जगले से घिरा है। धमनार के हिंदू स्मारको म मुख्य धमनाथ का मदिर है जिसके नाम पर ही इस स्थान का नामकरण हुआ है। यह मदिर भी शैलकृत्त है। यह इस प्रदेश के मध्ययुगीन मदिरो की भाति ही बना है अर्थात मुख्य पूजागृह के साथ सस्तभ सभामडप और आगे एक छोटा बरामदा है। धमनाथ-मदिर का शिखर भी उत्तरभारतीय मदिरो की भाति ही हैं। इस बडे मदिर के साथ सात छोटे मदिर भी थे जो पहाडी मे से काटकर बनाए गए थे। मुख्य मदिर के भीतर अथवा बाहरी भाग म तक्षण या नक्काशी नही है और इस विशेषता मे यह अन्य मध्ययुगीन मदिरो से भिन्न है। चतुर्भुज विष्णु की मूर्ति इस मदिर मे प्रतिष्ठापित है किंतु ऐसा जान पडता है कि यहा शिव की पूजा भी होती रही है। धमनाथ वास्तव मे यहा स्थित शिवलिंग का ही नाम है।

धरणीधर=वराहपुरी

धरमत (जिला उज्जैन, म० प्र०)

उज्जैन के निकट, गभीर (प्राचीन गभीरा) नदी के तट पर छोटा सा ग्राम है। 1658 ई० मे औरगजेब ने दारा को उत्तराधिकार के लिए होने वाले युद्धो मे इस स्थान पर हराया था। जोधपुर नरेश जसवन्तसिंह दारा की ओर से युद्ध मे लडे थे।

धरसेव (जिला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

उसमानाबाद नगर के पास इस स्थान पर डावरलेण, चमरलेण, और लचदरलेण नाम की प्राचीन जैन और वैष्णव गुफाएँ स्थित है जिनका समय 500 इ० से 600 ई० तक माना गया है। 14 वी शती की शमसुद्दीन की दरगाह भी यहा है।

धरूर (जिला बीड, महाराष्ट्र)

अहमदनगर के सुलतानो का बनाया हुआ एक किला और हिंदू शैली मे

बनी एक मसजिद यहा की मुख्य इमारतें हैं। मसजिद को मु० तुगलक क सेनापति ने सभवत किसी प्राचीन मदिर की सामग्री से निर्मित करवाया था।

धर्म

(1)—धमद्वीप महावश 1,84 म वर्णित सिहलद्वीप (लका) का एक नाम। सिहल की स्थानीय बौद्ध किंवदती के अनुसार गौतम बुद्ध न तीन बार लका मे जाकर धम-प्रचार किया था और इसी कारण इस देश का बौद्ध धमद्वीप भी कहते थे।

(2) महाराष्ट्र एक नदी जा प्राचीन पौराणिक तारक क्षेत्र मे प्रवाहित होती है। तारकक्षेत्र हुबली से ग्रस्सो मील दूर हानगल का कस्बा है।

धमचक्र

जैन स्तोत्र ग्रथ तीथमालाचैत्यवदन म इसका नामोल्लेख है 'चपानेरक धमचक्रमथुरायोध्याप्रतिष्ठानके'। यह स्थान सभवत तक्षशिला है जिसका प्राचीन जैन ग्रन्था मे तीर्थ के रूप मे उल्लेख किया गया है।

धर्मपुरी

(1) (म० प्र०) इस स्थान से पूव मध्यकालीन इमारतो के अवशेष मिल हैं।

(2) (जिला करीमाबाद, आ० प्र०)गोदावरी के दाहिन तट पर प्राचीन तीथ है जहा वार्षिक यात्रा होती है। मुख्य स्मारक एव प्राचीन काल का मदिर है।

धमवधन

वाल्मीकि रामायण के अनुसार भरत केकय देश से अयोध्या आते समय प्राग वट् के स्थान पर गगा और फिर कुटि कोष्टिका पार करने के पश्चात धमवधन नामक स्थान पर पहुचे थ, स गगा प्राग्वटे तीर्त्वा समयात्कुटिकोष्टिकाम, सबल स्ता स तीर्त्वाथ समगाद्धमवधनम' अयो० 71,10। इस नगर की स्थिति पश्चिमी उ० प्र० म गगा के पूव के इलाके मे कही होगी। अभिज्ञान अनिश्चित है।

धर्मारण्य

(1) महाभारत वन० 82, 46 मे तीथरूप मे उल्लिखित हैं—'धर्मारण्य हि तत पुण्यमाद्य च भरतषभ, यत्र प्रविष्टमात्रा वै सवपापैं प्रमुच्यत'। धर्मारण्य गुजरात के प्राचीन नगर सिद्धपुर के परिवर्ती क्षेत्र (श्रीस्थल) का नाम है। प्राचीन समय म यह प्रदेश सरस्वती नदी द्वारा सिंचित था। महा० वन 82,45 म धर्मारण्य मे कण्वाश्रम की स्थिति बताई गयी है—'कण्वाश्रम ततो गच्छच्छ्रीजुष्ट लोक पूजितम'। इस उल्लेख म धर्मारण्य को श्रीजुष्टम प्रदेश कहा गया है जिससे इसके नाम 'श्री स्थल' की पुष्टि होती है (दे० सिद्धपुर, श्रीस्थल)

(2) बौद्ध गया (बिहार) से 4 मील पर स्थित है। बौद्ध ग्र थो म इस क्षेत्र का, जो गौतम बुद्ध से सबधित था, नाम धर्मारण्य कहा गया है।

धवलगिरि

(1)=धौलागिरि(दे० श्वेतपवत)

(2)—(उडीसा) भुवनेश्वर से दो मील पर धवलगिरि या धवलागिरि (= धौली) नामक पहाडी स्थित है। इसमे अशोक का प्रसिद्ध 'कलिगअभिलेख' उत्कीर्ण है जिसम कलिग-युद्ध तथा तज्जनित अशोक के हृदय परिवतन का मार्मिक वत्तात है। सभवत कलिग युद्ध की स्थली धौली की पहाडी के निकट ही थी। पहाडी को अश्वत्थामा पवत भी कहते हैं।

धवलेश्वर (जिला राजमहेन्द्री, आ० प्र०)

राजमहेन्द्री से चार मील दूर गोदावरी के तट पर स्थित है। कहा जाता है कि वनवास काल म श्री रामचन्द्रजी इस स्थान पर कुछ दिन रहे थे। इसका एक अन्य नाम रामपादुलु भी है।

धावशाडिक (म० प्र०)

खोह नामक स्थान से प्राप्त एक गुप्तकालीन अभिलेख (496 ई०) म महाराज जयनाथ द्वारा भागवत मदिर के प्रयोजनार्थ प्रदत्त इस ग्राम का उल्लेख है। इस विष्णु मदिर की स्थापना कुछ ब्राह्मणो ने इस स्थान पर की थी।

धसान

बुदेलखड की नदी। धसान शब्द दशाण का अपभ्रश है। यह नदी भूपाल की निकटवर्ती पवतमाला से निकल कर सागर जिले मे बहती हुई झिला झासी (उ० प्र०) मे पहुच कर वेतवा म मिल जाती है। (दे० दशाण।)

धाका (जिला शाहजहापुर, उ० प्र०)

इस स्थान से कुछ वष पूव ताम्रयुग के प्रागतिहासिक अवशेष—उप करणादि प्राप्त हुए थे।

धातकी खड

विष्णुपुराण के अनुसार पुष्कर द्वीप का एक भाग—महावीर तथैवान्यद्धातकीखडसनितम्—2,4,74।

धान्यकटक दे० अमरावती

धामौनी

(जिला सागर, म० प्र०)प्राचीन बुदेलखड की एक प्रख्यात गढी। यहा बुदेलो का राज्य काफी समय तक रहा था। धामौनी के सरदार बुदेलखड के महाराजाओ के सामत थे। गढमडला नरेश सग्रामसिंह (मृत्यु 1541) के प्रसिद्ध

52 गढो मे धामौनी की भी गणना थी। सग्रामसिह गोंडवाना की रानी दुर्गावती के श्वसुर थे।

धार=धारा=धारानगरी (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

सस्कृत के मध्ययुगीन साहित्य म प्रसिद्ध नगरी जो राजा भोज परमार के सबध के कारण अमर है। राजा भोज रचित भोजप्रबध म तथा अन्य अनक प्राचीन कथाओ मे धारानगरी का वणन है। 11 वी 12 वी शतियो म परमारो ने मालवा प्रात की राजधानी धारा मे बनाई थी। इस वश के राजा भोज ने उज्जयिनी से राजधानी हटा कर धारा को यह प्रतिष्ठा दी। 1305 ई० म अलाउद्दीन खिलजी के सेनापति ऐनउलमुल्क ने धारा पर अधिकार कर लिया। तत्पश्चात् मालवा के शासक दिलावर खा ने 1401 ई० म दिल्ली की सल्तनत से स्वतत्र होकर धारा को अपनी राजधानी बनाया। 1405 ई० म मालवा का शासक होशगशाह धारा से अपनी राजधानी मडू ले गया और धारा की पूर्व कीर्ति नष्ट हो गई। धारा के प्राचीन स्मारको मे निम्न प्रमुख हैं—

भोजशाला—राजा भोज ने जो विद्वानो का प्रख्यात सरक्षक था, इस नाम की एक विशाल पाठशाला बनवायी थी। इसको तोडकर मुसलमानो न कमाल मौला नामक मसजिद बनवाई। इसके फर्श मे भोज की पाठशाला क अनेक स्लेटी पत्थर जडे हैं जिन पर सस्कृत तथा महाराष्ट्री प्राकृत के अनक अभिलेख अकित थे। पाठशाला के खडहरो के अनक ऐसे पत्थर मिले है, जिन पर पारिजात मजरी और कमस्तोत्र नामक सपूण काव्य उत्कीण थे।

लाट मसजिद—यह मसजिद भी धारा के परमारकालीन मदिरो को तोडकर उनकी सामग्री से बनी थी। इसका निर्माता दिलावर खा (मत्यु 1405 ई०) था।

किला—महमूद तुग़लक ने इस किले को 1344 ई० म बनवाया था। 1731 ई० मे इस पर पवाँर राजपूतो का अधिकार हो गया था।

धारापुरी=धार=धारा

धारासिव (म० प्र०)

प्राचीन शलकृत्त जैन गुहामदिरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

धुवाधार (जिला जबलपुर, म० प्र०)

भेडाघाट (प्राचीन भृगुक्षेत्र) क निकट नमदा का प्रसिद्ध जलप्रपात जिसके निकट प्राचीन काल म भृगु ऋषि का आश्रम था। प्रपात के निकट द्वितीय शती ई० के पुरातत्त्व सबधी अवशेष प्राप्त हुए हैं जिनस इस स्थान की प्राचीनता सूचित होती है। महाभारत वन 99,6 म जिस वैदूय गिरि का

वर्णन है वह धुवाधार के समीप नर्मदा की संगमरमर की पहाड़ियों का सामूहिक नाम हो सकता है —वैदूर्यशिखरो नाम पुण्यो गिरवर शिव' (दे० वदूर्यशिखर)

धुमली (काठियावाड, गुजरात)

भूतपूर्व नवानगर रियासत की प्राचीन राजधानी। नवानगर से दक्षिण की ओर माणवड से 4 मील दूर इस नगर के भग्नावशेष हैं। इसका एक भाग पर्वत शिखर पर बसा हुआ था जहा एक भग्न दुर्ग आज भी दिखाई देता है। खडहरो म नवलखा नामक मंदिर स्थित है। पर्वत शिखर तक जाने वाले मार्ग म भी कई जीर्ण शीर्ण मंदिर दिखाई देते हैं।

धूतपाप (ज़िला सुलतानपुर, उ० प्र०)

वर्तमान धोपाप। यह प्राचीन हिंदूतीर्थ है। यह धूतपापा (गोमती की उपनदी) के तट पर है। यहा कुशभावन या सुलतानपुर के भार-नरेशो का राज्य था। इस स्थान का सबध श्रीरामचद्र के रावण वध का प्रायश्चित करने से जोडा जाता है। यहा का किला शेरगढ नदी के तट पर बना है।

धूतपापा

पुराणो मे वर्णित नदी जो पूर्वी गोमती मे मिलती है। धूतपाप नामक तीर्थ इसी नदी तट पर है। (दे० हिस्टॉरिकल ज्याग्रेफी आव एशेंट इंडिया, पृ० 32)

धूपगढ़ (म० प्र०)

पचमढ़ी की पहाड़ियो म स्थित प्राचीन तीर्थ जहाँ वेत्रवती या बेतवा नदी का उदगम है।

धूपतापा

विष्णुपुराण के अनुसार कुशद्वीप की सात नदियो मे से है—'धूपतापा' शिवा चैव पवित्रा सम्मतिस्तथा, विद्युदभा मही चान्या सर्वपापहरास्त्विमा '— विष्णु० 2,4,43।

धूमरक्ख (लका)

महावश 10,46 म वर्णित एक पर्वत जो महावेलिगगा के वामतट पर स्थित था।

धूमेश्वर (उ० प्र०)

सिवालिक (हरद्वार देहरादून की पर्वत श्रेणी) पर्वतमाला मे स्थित है। इसकी शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगो म गणना है।

घृति

विष्णु पुराण 2,4,36 के अनुसार कुशद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा ज्योतिष्मान् के पुत्र घृति के नाम पर प्रसिद्ध है।

धेनुक

महाभारत में भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा के परवर्ती प्रदेश में रहने वाली विदेशी जातियों के नामों में धेनुकों की भी गणना है—'मारुता धेनुकाश्चैव तगणा परतगणा' महा० भीष्म० 50,51। सभा० 52,3 में तगणों और परतगणों को शैलोदा नदी (वर्तमान खोतन) के तटवर्ती प्रदेश में स्थित माना है। इसी सूत्र के आधार पर धेनुका के देश की स्थिति भी मध्यएशिया की इसी नदी के पार्श्व में माननी चाहिए। धेनुक लोग महाभारत युद्ध में पांडवों की ओर से लड़े थे। धेनुक नामक असुर का उल्लेख श्रीमदभागवत 10,15 में है—'फलानि तत्र भूरीणि पतन्ति पतितानि च, सन्ति किंतवरुद्धानि धेनुकेन दुरात्मना'। इस असुर को श्रीकृष्ण ने बालपन में मारा था। शायद इसका संबंध धेनुक देश से रहा हो। धेनुक नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि यह किसी विजातीय शब्द का संस्कृत रूपांतरण है।

धेनुका

विष्णुपुराण के अनुसार शाकद्वीप की एक नदी—'नद्यश्चात्र महापुण्या सर्वपापभयापहा, सुकुमारी कुमारी च नलिनी धेनुका च या' विष्णु 2,4 65 यह धेनुक देश में बहने वाली कोई नदी हो सकती है।

धोनोर (ज़िला आदिलाबाद, आ० प्र०)

इस स्थान से नवपाषाणयुगीन पत्थर के हथियार और उपकरण प्राप्त हुए हैं।

धोपाप (दे० धूतपाप)

धौम्यगंगा (कांगड़ा, पंजाब)

पांडवों के पुरोहित धौम्य के नाम पर यह नदी प्रसिद्ध है। अनास्त नामक प्राचीन ग्राम जिसे अब जगतसुख कहते हैं इस नदी के तट पर स्थित है।

धौलपुर (राजस्थान)

भूतपूर्व जाट रियासत। धौलपुर से निकट राजा मुचुकुंद के नाम से प्रसिद्ध गुफा है जो गंधमादन पहाड़ी के अंदर बताई जाती है। पौराणिक कथा के अनुसार मथुरा पर कालयवन के आक्रमण के समय श्रीकृष्ण मथुरा से मुचुकुंद की गुहा में चले आए थे। उनका पीछा करते हुए कालयवन भी इसी गुहा में प्रविष्ट हुआ और वहां सोते हुए मुचुकुंद को श्रीकृष्ण ने उत्तरीय ओढ़ा दिया।

यह कथा श्रीमद्भागवत 10,51 में वर्णित है। कथाप्रसंग में मुचुकुंद की गुहा का उल्लेख इस प्रकार है—'एवमुक्तः स वै देवानभिवन्द्य महायशाः, अशयिष्ट गुहाविष्टो निद्रया देवदत्तया'। धौलपुर से 842 ई० का एक अभिलेख मिला है जिसमें चंडस्वामिन् अथवा सूर्य के मंदिर की प्रतिष्ठापना का उल्लेख है। इस अभिलेख की विशेषता इस तथ्य में है कि इसमें हमें सर्वप्रथम विक्रमसंवत की तिथि का उल्लेख मिलता है जो 898 है। धौलपुर में भरतपुर के जाट राजवंश की एक शाखा का राज्य था। भरतपुर के सर्वश्रेष्ठ शासक सूरजमल जाट की मृत्यु के समय (1764 ई०) धौलपुर भरतपुर राज्य ही में सम्मिलित था। पीछे यहां एक अलग रियासत स्थापित हो गई।

धौलागिरि = धवलगिरि (1)

धौली

(1) [दे० धवलगिरि (2)]। पहाड़ी की एक चट्टान पर अशोक की चौदह मुख्य धर्मलिपियों में से 1-10,14 और दो कलिंग-लेख अंकित हैं। कलिंग लेख में कलिंग युद्ध तथा तत्पश्चात् अशोक के हृदयपरिवर्तन का मार्मिक वर्णन है। कलिंग-युद्ध की स्थली धौली की चट्टान के पास ही स्थित रही होगी। अभिलेख में इस स्थान का नाम तोसलि है। यह स्थान भुवनेश्वर के निकट और प्राचीन शिशुपालगढ़ के खंडहरों से दो मील दूर दया नदी के तट पर स्थित है। (दे० तोसल या तोसलि) दया नदी का यह नाम संभवतः अशोक के हृदय में कलिंग युद्ध के पश्चात् दया का संचार होने के कारण ही पड़ा था। धौली की पहाड़ी को अश्वत्थामा-पर्वत भी कहते हैं।

(2) (जिला गढ़वाल, उ० प्र०) गढ़वाल की एक नदी जो नीतिघाटी में बहती हुई विष्णुप्रयाग में आकर अलकनंदा (गंगा) में मिलती है।

ध्यानपुर (तहसील बटाला, जिला गुरदासपुर, पंजाब)

इस छोटे से ग्राम की प्रसिद्धि का कारण यहां स्थित वैरागी संत बाबालालजी की समाधि है। ये मुगल शाहजादा दारा (शाहजहां का ज्येष्ठ पुत्र) के गुरु थे। दारा उदार हृदय था और हिंदू तथा मुसलमानों की धर्म परम्पराओं में समानता स्थापित करने का इच्छुक था। बाबालाल की समाधि के बीच वाले प्रकोष्ठ में बैठकर दारा अपना समय इसी समस्या के चिंतन में व्यतीत करता था। इस प्रकोष्ठ की छतों और दीवारों पर दारा ने सुंदर चित्र बनवाए थे जो अब धुंधले पड़ गए हैं।

ध्रुव

विष्णुपुराण 2,4 5 के अनुसार प्लक्ष द्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस

द्वीप के राजा मेधातिथि के पुत्र ध्रुव के नाम पर प्रसिद्ध है।

ध्रुवपुर (कबोडिया, दक्षिण-पूर्व एशिया)

प्राचीन कबुज-देश का एक नगर। कबुज मे हिंदू राजाओ का प्राय तेरहसौ वर्ष तक राज्य रहा था।

नदगिरि=नदेड

नदगाव (जिला मथुरा, उ० प्र०)

बरसाने से चार मील दूर कृष्ण के पिता नदजी का ग्राम है। बरसाना राधा की जन्मभूमि मानी जाती है। नदगाव बरसाने के निकट ही एक पहाडी पर स्थित है। पहाडी पर नदजी का भव्य मदिर है जो वर्तमान रूप मे बहुत पुराना नही है। श्रीमद्भागवत के अनुसार (10,11) नदजी, गोकुल से कस के अत्याचारो से बचने के लिए वृदावन आ गए थे। कहा जाता है कि प्राचीन वृन्दावन, नदगाव से अधिक दूर नही था।

नदनकानन=नदनवन

(1) प्राचीन संस्कृत साहित्य मे वर्णित सुरेन्द्र(इद्र)का उद्यान। 'नगरोपवने शचीसखो मरता पालयितेव नदने', 'लीलागारेष्वरमत पुनर्नदनाभ्यन्तरेषु'—रघु० 8,32, रघु० 8,95।

(2) महाभारत के अनुसार द्वारका के निकट एक उद्यान, जो वेणुमान् पर्वत के पार्श्व मे स्थित था—'भाति चैत्ररथ चैव नदन च महावनम रमणभावन चैव वेणुमन्त समतत'। महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ।

(3) महावश 15, 178 मे वर्णित अनुराधपुर का एक उद्यान।

नदप्रयाग (जिला गढ़वाल उ० प्र०)

उत्तराखड का प्राचीन तीर्थ। जनश्रुति है कि प्राचीन काल मे कण्व ऋषि का आश्रम तथा शकुतला का जन्म स्थान यही था। (किंतु दे० कण्वाश्रम, मडावर)। यहा अलकनदा और मदाकिनी नदियो का सगम है जिससे इसका नाम नदप्रयाग हुआ है (टि० गढवाल मे सगम स्थानो का नाम प्राय प्रयाग पर है, जैसे देवप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग आदि)

नदसम (राजस्थान)

प्राचीन जैन तीर्थ जिसका उल्लेख तीर्थमाला चैत्यवदन मे इस प्रकार है। 'वदे नदसमे समीधवलके मज्जाद मुडस्थले'। एक अन्य उल्लेख से सूचित होता है कि यह तीर्थ मेवाड मे स्थित था और यहा सगडाल नामक मत्री का बनवाया हुआ जैन देवालय था—'मेवाड देस गामे नदिसमनाम सगडालमतिकारिय जिन भवने'—(दे० ऐशेंट जैन हिम्स, पृ० 60)।

नदा

(1) 'तत प्रयात कौन्तेय क्रमेण भरतर्षभ, नदामपर नदाच नद्यौ पाप भयापहे' महा० वन० 110, 1। यहां पाडवो की तीर्थ-यात्रा के प्रसग मे नदा और अपरनदा नदियो का उल्लेख है जो सदर्भानुसार पूर्वीबिहार की नदियां जान पडती हैं। नदा और अपरनदा की स्थिति कौशकी या कोसी=(कौश्या) नदी के पूर्व म थी।

(2) (ज़िला अजमेर, राजस्थान) पुष्कर के निकट बहने वाली एक नदी। पुष्कर से 12 मील दूर प्राचीन सरस्वती और नदा का सगम है।

(3)=नदाकिनी

(4)=नदादेवी। हिमालय का एक उच्च पर्वतशृग जो बदरीनाथ स पूर्व की ओर स्थित है। नदादेवी से नदाकिनी नदी निकलती है जो नदप्रयाग मे अलकनदा (गगा) म मिल जाती है।

नदाकिनी

यह नदी नदादेवी की पहाडी से निकल कर नदप्रयाग (गढवाल, उ० प्र०) मे आकर अलकनदा से मिलती है। यह नदी मदाकिनी की सहचरी है जो केदारनाथ के पहाडो से मिलकर अलकनदा से रुद्रप्रयाग मे मिल जाती है।

नदिगिरि (मैसूर)

बगलौर से 37 मील दूर है। इसका सम्बन्ध सातवी शती के गगवशीय राजाओ स बताया जाता है। तत्पश्चात एक सहस्र वर्ष तक इस प्रदेश पर अधिकार प्राप्त करने के लिए अनेक युद्ध होते रहे। 18 वी शती मे मराठो और हैदरअली मे कई युद्ध यही हुए। अत म 1791 मे अग्रेजो का नदिगिरि पर अधिकार हो गया। नदिगिरि मे दो शिवमदिर हैं। भोगनदीश्वर का मदिर जो पहाडी के नीचे है, ऊपर के मदिर से वास्तु की दृष्टि से अधिक सुदर है।

नदिग्राम (जिला फैजाबाद, उ० प्र०)

अयोध्या के निकट छोटा सा ग्राम था जहा चित्रकूट से लौटने पर भरत ने अपना तपोवन बनाया था—'रथस्थ तु धर्मात्मा भरतो भ्रातृवत्सल नदिग्राम ययौ तूर्णं शिरस्यादायपादुके' वाल्मीकि० अयो० 115,12। नदिग्राम म रहते हुए भरत श्री राम की पादुकाओ की पूजा करते हुए चौदह वर्ष तक अयोध्या का शासन भार उद्वहन करते रहे। इस अवधि मे वह बनवासी राम की भाति ही वैराग्यरत रहे और कभी अयोध्या नगरी न गए। रघुवश 12, 18 मे कालिदास ने नदिग्राम का इस प्रकार उल्लेख किया

है—'स विसृष्टस्तथेत्युक्त्वा भ्रात्रा नैवाविशत पुरीम्, नदिग्रामगतस्तस्य राज्य न्यासमिवाभुनक्'— अर्थात् श्री राम की आज्ञा को मान कर भरत ने उनसे विदा ली किंतु अयोध्यापुरी मे प्रवेश न करते हुए उन्होने नदिग्राम मे अपना निवास बनाया और वही से राज्य को धरोहर के समान समभते हुए उसका सचालन किया। अध्यात्म रामायण के अनुसार उदारबुद्धि भरत सब पुरवासियो को अयोध्या मे बसा कर स्वय नदिग्राम चले गए ('पौरजानपदान्सर्वानयोध्या मुदारधी स्थापयित्वा यथान्याय नदिग्राम ययौस्वयम'—अयो० 9,70 71) तुलसीदास ने रामचरितमानस, अयोध्याकाड मे नदिग्राम का इस प्रकार उल्लेख किया है—'नदिग्राम करि पर्णकुटीरा कीन्ह निवास धमधुरधीरा'। वनवास काल की समाप्ति पर अयोध्या लौटते समय राम ने हनुमान द्वारा अपने लौटने का सदेश भरत के पास नदिग्राम मे भिजवाया था—'आससाद द्रुमान्फुल्लान नदिग्राम समीपगान्, सुराधिपस्योपवने तथा चैत्ररथे द्रुमान। स्त्रीभि सपुत्र पौत्रश्च रममाणं स्वलकृतं, क्रोशमात्रे त्वयोध्यायाश्चीरकृष्णाजिनाम्बरम', वाल्मीकि० युद्ध० 125,28-29। इससे यह भी ज्ञात होता है कि नदिग्राम अयोध्या से एक कास की दूरी पर स्थित था। इस वर्णन से यह भी सूचित होता है कि भरत के निवास के कारण नदिग्राम की शोभा बहुत बढ गई थी।

नदिनगर

कबोज जनपद का एक नगर जिसका उल्लेख प्राचीन अभिलेखो म मिलता है (लूडस इसक्रिपशस 176 472)। नदिनगर के साथ राजपुर का नामोल्लेख भी मिलता है। राजपुर वर्तमान राजौरी है। नदिनगर सभवत इसी के निकट पश्चिमी कश्मीर म स्थित होगा।

नदिपुर

जैन सूत्र प्रज्ञापणा म उल्लिखित है। इसे शाडिल्य जनपद के अतर्गत बताया गया है। सभवत यही वह स्थान है जहा 5वी शती ई० म वाकाटको की राजधानी थी। यह स्थान रामटेक (महाराष्ट्र) के निकट है।

नदी (जिला मेदक, आ०प्र०)

प्राचीन मदिरो के भग्नावशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

नदीकल

वसीम ताम्रपट्ट अभिलेख म नदेड का प्राचीन नाम।

नदीकुड

साबरमती (=साभ्रमती) नदी का उद्गम (दे० पद्मपुराण उत्तरखड, 52)।

नदीतट

पुराणो मे उल्लिखित वतमान नदेड का नाम।

नदेड=नदगिरि=नदीतट (महाराष्ट्र)

पुराणो मे वर्णित नदीतट या नदेड की गणना पवित्र धार्मिक स्थानो मे की जाती है। मेकएलिफ (दे० 'सिख रिलीजन') के अनुसार इस स्थान का प्राचीन नाम नवनद था क्योंकि इस स्थान पर नौ ऋषियो ने तप किया था। इस नाम का सबध मगध के नवनदो से भी बताया गया है। कुछ विद्वानो का मत है कि 'पेरिप्लस ऑव दि एराईथ्रियन सी' नामक ग्रथ के लेखक ने दक्षिण भारत के जिस व्यापारिक नगर तगारा का वणन किया है वह नदेड के निकट ही स्थित होगा(किंतु दे० तर)। चौथी शती ई० मे नदेड नगर काफी महत्वपूण था और यहां एक छोटे से राज्य की राजधानी भी थी किंतु अब यहा अति प्राचीन भवनो आदि के अवशेष नही मिलते। एक ऐतिहासिक कथा के अनुसार चालुक्य-नरेश राजा आनद ने अपनी राजधानी कल्याणी से नदेड ले आने का विचार किया था और नदेड मे पत्थर के बाध बनवाकर एक तडाग का निर्माण भी करवाया था। उसी न रत्नगिरि पहाडी पर नदगिरि या नदेड नगरी को बसाया था। चौथी शती ई० मे वारगल के चालुक्य नरेशो की एक शाखा नदेड मे राज्य करती थी। वारगल के ककातीय राजवश के इतिहास 'प्रताप रुद्रभूषण' म वणन है कि ककातीय नरेश नद का नदेड पर राज्य था। नदेदव के पौत्र माधव-वमन के शासन काल म शिव तथा नदी की पूजा को बहुत प्रोत्साहन मिला और इस समय क अनेक मदिर नदेड को प्राचीन कला और सस्कृति के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। नरसिंह का मदिर तथा बौद्ध और जैन मदिर हिंदूकाल के सुदर सस्मारक है। मुसलमानो के दक्षिणभारत पर आक्रमण क पश्चात् नदड अलाउद्दीन खिलजी तथा मु० तुगलक के अधिकार म रहा। बहमनीकाल म नदेड एक बडा व्यापारिक स्थान बन गया था क्योंकि गोदावरी नदी के तट पर स्थित होने के कारण यह उत्तरी और दक्षिणी भारत के बीच नदियो द्वारा होने वाले व्यापार क माग पर पडता था। महमूद गवा ने जो बहमनी राज्य का मत्री था, नदेड का महोर के सूब के अतगत शामिल कर लिया। बहमनी-काल म नदेड म कई मुसलिम सतो न अपना आवास बनाया था। मलिक अबर और कुतुब शाही सुल्तानो की बनवाई हुई दो मसजिद भी यहा स्थित हैं। किंतु नदेड की प्रसिद्धि का विशेष कारण सिखो क दसवें गुरु गोविंदसिंह की समाधि है। औरगजेब की मृत्यु के पश्चात गोविंदसिंह बहादुर-शाह प्रथम के साथ दक्षिण भारत आए थ। यहां उन्होंने नदेड क निवासी

माधादास बैरागी (उदा बैरागी) की वीरता से संबंधित यशोगान सुन और उससे मिलने के नदेड आए। यहीं उन्होंने अपना अस्थायी निवास बनाया था। उनके डेरे का स्थान आज भी संगत साहब गुरुद्वारा कहलाता है। गोदावरी के तट पर वह स्थान जहां गुरु की बंदा से भेंट हुई थी बंदाघाट नाम से प्रसिद्ध है। एक शिष्य ने गुरु को एक अमूल्य हीरा भेंट किया था जो उन्होंने गोदावरी के जल में फेंक दिया था। यह स्थान नगीना घाट कहलाता है। 1708 ई० में नदेड में ही गुरुगोविंदसिंह जी एक क्रूर पठान के हाथों घायल होकर कुछ समय पश्चात स्वर्गगामी हुए थे। उनकी चिता की भस्म पर एक समाधि बनवाई गई थी जो अब हुजूर साहब का गुरुद्वारा नाम से सिखों का महत्वपूर्ण तीर्थ है। इस गुरुद्वारे का महाराणा रणजीत सिंह ने 1831 ई० में निर्माण करवाया था। इसके फर्श और स्तंभों पर संगमरमर का सुंदर काम है। गुरुद्वारे के गुंबद, छत और बीच के बरामदे पर सोने के भारी पत्तर लगे हैं। मुख्य गुरुद्वारे के अतिरिक्त नदेड में सात अन्य गुरुद्वारे भी हैं—हीराघाट, शिखरघाट, माता साहिबा, संगत साहब, माल्टेकरी, बंदाघाट और नगीनाघाट। इन सबसे गोविंदसिंह के जीवन से अनमोल कथाएं संबंधित हैं। वासिम से प्राप्त एक ताम्र पट्टलेख में नदेड का प्राचीन नाम नदीकूल दिया हुआ है।

नकुर (जिला सहारनपुर, उ० प्र०)

स्थानीय किंवदंती है कि इस स्थान को महाभारत के नकुल के नाम पर बसाया गया था।

नगई (जिला गुलबर्गा, महाराष्ट्र)

दिगंबर जैनों का प्राचीन तीर्थ। यह इतिहास प्रसिद्ध स्थान मलखेड के निकट बसा हुआ है।

नगनदी

'विश्रांतस्सन् व्रज नगनदीतीरजातानिसिंचनुद्यानानां नवजलकणैर्यूथिकाजालकानि'—मेघदूत, पूर्वमेघ 28। इस श्लोक में 'नगनदी' के उल्लेख से जान पड़ता है कि कालिदास ने नगनदी का किसी विशेष नदी के नाम के रूप में उल्लेख न करके इस शब्द को सामान्य रूप से पहाड़ी नदी (नग=पर्वत) के अर्थ में प्रयुक्त किया है। इस नदी का मेघ की यात्रा के क्रम में विदिशा और नीचगिरि (संभवतः सांची) के ठीक पश्चात् उल्लेख हुआ है और नगनदी के पश्चात् अगले छंदों में मेघ को उज्जयिनी का मार्ग बताया गया है। जान पड़ता है कि यह नदी वर्तमान 'बेस' है जिसके तट पर अति प्राचीन स्थान बेसनगर (जो विदिशा का उपनगर था) बसा हुआ है। बेस नदी बेसनगर के निकट

ही बेतवा मे मिलती है। सभव है कि बेस नदी के छोटी सी सरिता होने के कारण कालिदास ने उसे नगनदी या पहाडी नदी मात्र कहा है। वैसे इस नदी का प्राचीन नाम नगनदी (या इसका कोई पर्याय) भी हो सकता है। दे० बेस, विदिशा (2)

नगर=जलालाबाद (अफगानिस्तान)

(1) चीनी यात्री युवानच्वाग की भारतयात्रा के समय (630 645 ई०) यह स्थान कपिश के अधीन था। इस समय यहा एक स्तूप था जो अशोक ने बनवाया था। इसकी ऊचाई 200 फुट थी। युवानच्वाग लिखता है कि नगर म बौद्ध विद्वान दीपकरके स्मृति-चिह्न, गौतम बुद्ध की प्रकाशमान मूर्ति और उनकी उष्णीश की अस्थि विद्यमान थी। कुछ विद्वानो ने नगर का नगरहार से अभिज्ञान किया है जहा से पुरातत्व विषयक अनेक अवशेष प्राप्त हुए हैं। 5वी शती म भारत आन वाले चीनी यात्री फाह्यान ने नगरहार का एक विस्तृत देश के रूप मे निर्देश किया है जिसमे वतमान अफ़गानिस्तान, तथा पश्चिमी पाकिस्तान का सीमावर्ती प्रदेश सम्मिलित थे।

(2)=मालवनगर (ठिकाना उनियारा जिला जयपुर, राजस्थान)

इस स्थान से अनेक प्राचीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। चतुर्भुजी दुर्गा की अनेक मृण्मूर्तिया इनमे विशेष उल्लेखनीय है। यह कलाकृतिया आमेर (जयपुर के निकट) के सग्रहालय मे सुरक्षित हैं।

(3) (जिला बस्ती, उ० प्र०) बस्ती से 9 मील दक्षिण पश्चिम मे नगर नामक प्राचीन स्थान के बौद्धकालीन अवशेष मिले ह। स्थानीय जनश्रुति म य खडहर प्राचीन कपिलवस्तु के हैं किंतु यह उपकल्पना सदेहास्पद है। (दे० कपिलवस्तु)

नगरकरनूल

महबूबनगर (आ० प्र०) का प्राचीन नाम।

नगरकोट (जिला कागडा, पजाब)

ज्वालामुखी मदिर के लिए प्राचीन काल से हिंदू तीथ के रूप मे विख्यात (—दे० कागडा।)

नगरभुक्ति (बिहार)

गुप्त अभिलेखो म उल्लिखित एक भुक्ति जो दक्षिणी बिहार म स्थित थी।

नगरहार दे० नगर (1)

नगरी (चित्तौड, राजस्थान)

प्राचीन माध्यमिका नगरी का पूरा नाम तबवती नगरी था। नगरी ना

मध्यमिका से अभिज्ञान नगरी मे प्राप्त द्वितीय शती ई० पू० के कुछ सिक्को पर निर्भर है। इन पर 'मझमिकाय शिवजनपदस्य' लेख उत्कीण है। माध्यमिका के शिवि शायद उशीनरदेश से यहा आकर बस गए होगे। नगरी के खडहरो मे एक स्तूप और एक गुप्तकालीन तोरण के अवशेष मिल है। चित्तौड का निर्माण बहुत कुछ नगरी के ध्वसावशेषा की सामग्री से हुआ था। (दे० मध्यमिका)

नगवा (जिला वाराणसी, उ० प्र०)

वाराणसी के निकट इस ग्राम मे 1927 मे एक पत्थर की अश्वमूर्ति मिली थी जिस पर गुप्तकालीन ब्राह्मीलिपि मे 'चद्र गु' अक्षर पढे गए। विद्वानो का मत है कि गुप्तसम्राट् समुद्रगुप्त के पुत्र चद्रगुप्त द्वितीय ने समुद्रगुप्त की भाति ही इस स्थान पर या काशी मे, अश्वमेध-यज्ञ किया होगा जिसका स्मारक यह मूर्ति है—(दे० इडियन हिस्टारिकल क्वाटरली, 1927, पृ० 725)।

नगुला पहाड (जिला नलगोडा, आ० प्र०)

यहा कई प्राचीन मदिर स्थित हैं। एक भूरे सिकताश्म का बना है। इसके प्रवेशद्वार पर सुदर शिल्पकला प्रदर्शित है। मदिर का सामने वाले काले पत्थर के स्तभ पर शक सवत 1225=1303 ई० का प्रतापरुद्र के नाम क सहित एक अभिलेख है। तीन अन्य अभिलेख भी इस मदिर मे उत्कीण हैं जिनम से एक शक सवत 1150 1228 ई० का है। इसम काकतीय-नरेश गणपति का उल्लेख है। नगुला पहाड के अ य ऐतिहासिक स्मारक ये हैं—हाथी दरवाजा, जिसके स्तभो पर सपाट पटान है, नगुलापहाड दरवाजा जहा कई प्रकाष्ठ बने हैं और दक्षिण की ओर कमरे की दीवार पर भवानी की मूर्ति अकित है। यहा कुछ अभिलेख भी उत्कीण हैं। इनके अतिरिक्त चावडी नामक स्तभ दालान, प्राचीन गढ और एक मकबरा भी उल्लेखनीय हैं।

नगेन्द्र दे० नागदा (1)

नग्गर (हिमाचल प्रदेश)

कुलू की प्राचीन राजधानी। यहा के शिवमदिर को काफी प्राचीन कहा जाता है। इस मदिर के लिए यहा की जनता के हृदय म असीम श्रद्धा है। नग्गर के पास एक पहाडी पर एक सुदर एव कलापूण मदिर है जिसे मुरलीधर का मदिर कहते हैं। स्थानीय किवदती मे कहा जाता है कि बारह वष के वनवास काल मे पाडवो न इस मदिर का निमाण किया था। रमणीक पावतीय पृष्ठभूमि मे स्थित इस मदिर की वास्तुकला और शिल्पकारी वास्तव म सराहनीय है।

नचनाकुठारा (म० प्र०)

भूतपूर्व आजमगढ रियासत मे भुमरा से 10 मील दूर स्थित है। जनरल कनिंघम ने यहा के मदिर को पार्वती का मदिर बताया है। यह पूर्व गुप्तकालीन जान पडता है। भुमरा के प्रसिद्ध मदिर से इसका बहुत सादृश्य है। मदिर का गर्भगृह 15½ फुट बाहर और 8 फुट अदर से है। गर्भगृह के चारों ओर पटा हुआ प्रदक्षिणा पथ 33 फुट बाहर और 26 फुट अदर से है। मडप 26 फुट × 12 फुट है। नचनाकुठारा के मदिर की तक्षणकला भुमरा के शिल्प के समान सूक्ष्म और सुकुमार नही है। इसमे गर्भगृह के ऊपर एक कोष्ठ भी है जो भुमरा मे नही है। भुमरा तथा नचनाकुठारा के मदिर पूर्वगुप्तकालीन वास्तुकला के प्रतिनिधि हैं।

नचने की तलाई (बुदेलखड, म० प्र०)

वाकाटकवश के महाराज पृथ्वीसेन के दो अभिलेख इस स्थान पर गुप्त-कालीन ब्राह्मी लिपि मे अकित पाए गए है। पहले मे केवल महाराज पृथ्वीसेन का उल्लेख है और दूसरे म इनके सामत व्याघ्रदेव का भी। अभिलेखो का उद्देश्य व्याघ्रदेव द्वारा किसी मदिर, कूप या तडाग आदि के बनवाए जाने का उल्लेख है जिसमे अभिलेख का पत्थर जडा रहा होगा।

नजीबाबाद (जिला बिजनौर, उ० प्र०)

इस नगर को जो मालन (प्राचीन मालिनी) नदी से कुछ दूर पर गढवाल की तराई मे स्थित है, मुगल सम्राट् अहमदशाह के समकालीन नवाब नजीबुद्दौला ने, 1750 ई० मे बसाया था। नजीबुद्दौला एक सफल कूटनीतिज्ञ था और मुगल साम्राज्य की तत्कालीन राजनीति म इसका काफी दखल था। इसका मकबरा नजीबाबाद मे स्थित है। कहते हैं कि नजीबुद्दौला ने मराठो को नीचा दिखाने के लिए अहमदशाह अब्दाली को भारत पर आक्रमण करने क लिए निमत्रण दिया था। 1857 के विद्रोह म नजीबुद्दौला के उत्तराधिकारी नवाब दुदूखा ने अग्रेजो के विरुद्ध बगावत की थी जिसके कारण उसकी रियासत जब्त कर ली गई और उसका एक भाग रामपुर रियासत को दे दिया गया। रामपुर और नजीबाबाद के नवाबी घरानो म विवाह सबध था।

नट्टमेडू (कुड्डलोर तालुका जिला तजौर)

1955-56 के उत्खनन मे पुरातत्व विभाग को इस स्थान से मिट्टी के बर्तनो के ऐसे अवशेष मिले थे जिससे इसके प्राचीन रोम साम्राज्य से व्यापारिक सबधो पर प्रकाश पडता है। इन मृद भाडो मे चक्राकार आधार सहित दा

हत्थो वाले वतन (amphora) और भीतर की ओर मुडे किनारे वाली रका वियो तथा प्यालियां के टुकडे उल्लेखनीय हैं।

नड्यल

पाणिनि 4,2,88 म उल्लिखित है। श्री वा० स० अग्रवाल क अनुसार यह मारवाड का नाडोल है।

नदिया=नवद्वीप

नन्नूर (जिला वीरभूम, प० वगाल)

15वी शती म वगाल के प्रसिद्ध कवि चडीदास का जन्म इसी स्थान पर हुआ था। चडीदास और रामी की प्रेम कहानी का भारत की प्राचीन प्रम कथाओ म विशेष स्थान है। चडीदास ने अपनी कविता यद्यपि 15वी शती म लिखी थी तो भी वह मानवीय गुणो से सपन्न है और उसका दृष्टिकोण आधु निक सा जान पडता है—'सावार ऊपर मानुष भाई ताहार ऊपर नांइ—सबके ऊपर मानव है और उसके ऊपर कुछ नही—यह चडीदास की ही अमर सूक्ति है।

नयार=नवालिका

गढवाल की पुराण-प्रसिद्ध नदी

नरक

महाभारत के अनुसार यवनाधिप भगदत्त का मुर तथा नरक नाम क दशो पर राज्य था—'मुर च नरक चैव शास्ति यो यवनाधिप, अपय तबलो राजा प्रतीच्या वरुणो यथा, भगदत्तो महाराज वृद्धस्तवपितु सखा'—महा० सभा० 14,14 15। इस उद्धरण से इगित होता है कि इस दश की स्थिति पश्चिम दिशा मे (भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा पर) रही होगी। भगदत्त यवन (शायद ग्रीक) शासक था।

नरमान (जिला हलार, सौराष्ट्र, गुजरात)

इस स्थान स 1954 के उत्खनन म प्रागैतिहासिक अवशेष प्राप्त हुए हैं जिनमे लघुपाषाण तथा पुरापाषाण युगो के उपकरणादि उल्लेखनीय हैं।

नरनारायणस्थान दे० नारायणाश्रम

नरराष्ट्र

'नरराष्ट्र च निर्जित्य कुतिभोजमुपाद्रवत, प्रीतिपूव च तस्यासौ प्रतिजग्राह शासनम,'—महा० सभा०, 31,6 अर्थात सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे नरराष्ट्र को जीतकर कुतिभोज पर चढाई की। इसमे नरराष्ट्र की स्थिति कुतिभोज (=कोतवार, जिला ग्वालियर, म० प्र०) के निकट प्रमाणित होती है। हमारे मत मे ग्वालियर दुग स प्राय 10 मील उत्तर पूव वन प्रात

के अतगत बसे हुए नरेसर नामक स्थान से नरराष्ट्र का अभिज्ञान किया जा सकता है। नरेसर को नलेश्वर का अपभ्रश कहा जाता है किंतु इसका सबध तो नरराष्ट से जान पडता है। नरेसर और नरराष्ट्र नामो मे ध्वनिसाम्य तो है ही, इसके अतिरिक्त नरेसर बहुत प्राचीन स्थान भी है क्योकि यहा से अनेक पूव मध्यकालीन मदिरो तथा मूर्तियो के ध्वसावशेष मिले है। यहा के खडहर विस्तीण भूभाग म फैले हुए हैं और सभव है यहा से उत्खनन मे और अधिक प्राचीन अवशेष प्राप्त हो। नरराष्ट्र, नलराष्ट का भी रूपातरण हो सकता है और उस दशा मे इसका सबध राजा नल से जोडना सभव होगा क्योकि राजा-नल की कथा की घटनास्थली नरवर (प्राचीन नलपुर) निकट ही स्थित है। महाभारत की कई प्रतियो मे नरराष्ट्र को नवराष्ट्र लिखा है जो अशुद्ध जान पडता है।

नरवर

(1) =नलपुर (जिला ग्वालियर म० प्र०) परपरा के अनुसार महाभारत मे वणित नलोपाख्यान (वनपव) के नायक राजानल की राजधानी नलपुर या नरवर म थी। नलपुर नाम का उल्लेख 12 वी शती तक के सस्कृत अभिलेखो मे है। यहा का पहाडी किला सवप्रथम कछवाहा राजपूतो के अधिकार मे था। इसके पश्चात 15वी शती म नरपुर मानसिह तोमर (1486-1516 ई०) के अधिकार म रहा। मानसिह और मृगनयनी की प्रसिद्ध प्रेम-कथा से नरपुर का भी सबध बताया जाता है। कहत हैं कि नरपुर के विषय मे स्थानीय रूप से प्रसिद्ध कहावत 'नरपुर चढ़े न बेडनी बूदी छपे न छीट, गुदनौटा भोजन नही एरछ पके न इट,'—लगभग इसी समय प्रचलित हुई थी। राजस्थान की प्रसिद्ध प्रेम कथा ढोलामारू का नायक ढोला नरवर नरेश का ही राजपुत्र बताया गया है। मारू या मरवण पूगलगढ़ की राजकुमारी थी। नरवर परवर्ती काल मे मालवा के सुलतानो के कब्जे मे रहा और 18वी शती मे मराठो का आधिपत्य यहा स्थापित हुआ। दौलतराव सिंधिया के समय के भी कुछ स्मारक, हवापोर, एकखबाछतरी आदि यहा स्थित हैं।

(2) (जिला अलीगढ, उ० प्र०) गगातट पर स्थित राजघाट से 3 मील दूर है। जनश्रुति है कि महाराज नल की इसी स्थान पर राजधानी थी। इस स्थान के निकटवर्ती प्रदेश को नल क्षेत्र कहते ह। (दे० नरवर 1)

नरसापुर (जिला राजमहेंद्री, आं० प्र०)

गोदावरी की सात धाराओ म से अतिम वशिष्ठ धारा इस स्थान क निकट

बहती हुई मानी जाती है। इसका प्राचीन नाम अतर्वेदी कहा जाता है। (टि० अन्तर्वेदी शब्द दोआबे का पर्याय है)। (दे० गोदावरी)

नरहट्टग्राम=नरहट्टा (दे० कचनपल्ली)

नरेसर (दे० नरराष्ट्र, नलेसर)

नरैना (राजस्थान)

साभर के निकट स्थित है। इस स्थान पर 1603 ई० मे उत्तरीभारत क प्रसिद्ध सत तथा हिंदी के कवि महात्मा दादू का निर्वाण हुआ था। इन्होंने अपने मत का प्रथम बार प्रतिपादन नरैना ही मे किया था। 1833 ई० म बना इनका एक मदिर भी यहा है।

नरौली (ज़िला एटा, उ० प्र०)

नोहखेडा से 3 मील पर इस ग्राम म अनेक प्राचीन हिंदू मदिरो के ध्वसावशेष हैं जो उत्तर गुप्तकालीन तथा मध्ययुगीन जान पडते ह।

नथमलाई (ज़िला पुडुकोट्टाई, मद्रास)

कादबर नामक प्राचीन भव्य मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

नमदा

मध्य भारत की प्रसिद्ध नदी जो विंध्याचल की मकल नाम की पवत श्रेणी (अमरकटक पवत) से निरसृत हाकर भृगुकच्छ या भडौच नामक नगर क पास खभात की खाडी मे गिरती है। वेदो म नमदा का काई उल्लेख नही है। रामायण तथा महाभारत और परवर्ती ग्रथो म इस नदी के विषय म अनेक उल्लेख हैं। पौराणिक अनुश्रुति के अनुसार नमदा की एक नहर किसी सोमवशी राजा न निकाली थी जिससे उसका नाम सोमोदभवा भी पड गया था। गुप्तकालीन अमरकोश मे भी नमदा का सोमाद्भवा कहा है—'रवातुनमदा सोमोदभवा मेकलकयका'। कालिदास ने भी नमदा को सोमप्रभवा कहा है—'तथेत्युपस्पृश्य पय पवित्र सोमोद्भवाया सरितो नसोम' रघु 5,59। रघुवश 5,42 मे नमदा का इस प्रकार उल्लेख है—'स नमदाराधसि सीकराद्रमरुद्भिरानर्तितनक्तमाले, निवेशयामास विलघिताध्वा क्लात रजोधूसरकेतु सन्यम'। मेघदूत म रेवा या नमदा का सुदर वणन है (दे० रेवा)। वाल्मीकि० उत्तर० म भी नमदा का उल्लेख है—'पश्यमानस्ततो विध्य रावणोनमदा ययौ, चलोपलजला पुण्या पश्चिमोदधिगामिनीम' वाल्मीकि० उत्तर, 31,19। इसक पश्चात क श्लोको मे नमदा का एक युवती नारी के रूप म सुदर वणन है—'चक्रवाक सकारण्ड सहसजलकुक्कुटै, सारसैश्च सदामत्तै कूजद्भि सुसमावृताम। फुल्लद्रुमकृतोत्तसा चक्रवाकयुगस्तनीम, विस्तीणपुलिनश्रोणीं हसावलि सुमध-

लाम। पुष्परेणवनुलिप्तागीजलफेनामलाशुकाम् जलावगाहमुस्पर्शां फुल्लोत्पल शुभेक्षणाम पुष्पकादवरुह याशु नमदा सरिता वराम, इष्टामिव वरा नारीमवगाह्य दशानन '–उत्तर० 31,21-22-23 24 । महाभारत म नमदा को ऋक्षपवत से उद्भूत माना गया है —'पुरश्चपश्चाच्च यथा महानदी तमृक्षवत गिरिमेत्य नमदा'–शान्ति० 52,32 । (दे० वन० 82,52) । भीष्म० 9,14 मे नर्मदा का गोदावरी के साथ उल्लेख है—'गोदावरी नमदा च बाहुदा च महानदीम' । श्रीमदभागवत 5,19,18 म रेवा और नमदा दोनो का ही एक स्थान पर उल्लेख है—'तापी रेवा सुरसा नमदा चमण्वती सिधुरध शोणश्च नदौ '। जान पडता है कि कही कही साहित्य मे इस नदी के पूर्वी या पहाडी भाग का रेवा (शाब्दिक अथ—उछलने कूदने वाली) और पश्चिमी या मैदानी भाग को नमदा (शाब्दिक अथ—नम या सुख देनेवाली) कहा गया है। (किंतु महाभारत के उपयुक्त उद्धरण मे उदगम के निकट ही नदी का नमदा नाम से अभिहित किया गया है) । नमदा के तटवर्ती प्रदेश को भी कभी कभी नमदा नाम से ही निर्दिष्ट किया जाता था। विष्णुपुराण 4,24 के अनुसार इस प्रदेश पर शायद गुप्तकाल से पूव आभीर आदि शूद्रजातियो का अधिकार था—'नमदा मरुभू विषयाश्च-आभीर शूद्राद्या भोक्ष्यन्ति । वैसे नमदा का नदी के रूप मे विष्णु 1,2,9,2,3,11 आदि मे उल्लेख है—'तश्चोक्त पुरुकुत्साय भूभुजे नमदा तट सारस्वताय तेनापि मह्य सारस्वतेन च', 'नमदा सुरसाद्याश्च नद्यो विंध्याद्रि-निर्गता '। (दे० रेवा सोमोद्भवा)

नलगोंडा (आ० प्र०)

तेलगू भाषा मे नीलगिरि का पर्याय नल्लगाडा या नलगोडा है। नल्लगोडा नगर म औरगजेब की बनवाई हुई दो मसजिदे है। पास ही पहाडी पर प्राचीन शिवमदिर है जिसका ध्वजस्तभ 44 फुट ऊचा है।

नलपुर = नरवर

नलमाली

शूर्पारकजातक मे वर्णित एक समुद्र—'यथानलो व वेणुव समुद्दोपति दिस्सति' अर्थात जिस प्रकार नल या वेणु दिखाई देता है उसी प्रकार हरितवर्ण का यह समुद्र है। इसमे वैदूर्य उत्पन्न होता था। यह समुद्र भगुकच्छ या भडौंच से जलयान पर देशातरो से व्यापार करने के लिए निकले हुए वणिको को माग म मिला था। अन्य समुद्रा के नाम जो उन्हे मिले थे य हैं —क्षुरमाली, अग्निमाली कुशमाली, दधिमाली वडवामुख।

नलिनी

(1) विष्णुपुराण के अनुसार शाकद्वीप की एक नदी—'नद्यश्चात्र महा पुण्या सवपापभयापहा सुकुमारी कुमारी च नलिनी वेनुका च या'

(2) वाल्मीकि० बाल० 43 म उल्लिखित नदी जो सभवत ब्रह्मपुत्र है (श्री न० ला० डे)

नलेसर=नरेसर (ज़िला ग्वालियर, म० प्र०)

ग्वालियर के दुग से प्राय दस मील उत्तरपूव वनप्रात के अतगत इस नाम के ग्राम के खडहर हैं। 11वी-12वी शतियो के मदिरो तथा मूर्तियो के ध्वसावशेष यहा से प्राप्त हुए हैं जिनमे से अधिकाश शैवमत से सबध रखते हैं। (दे० नरराष्ट्र)

नल्लगोंडा=नलगोडा

नवकोट (ज़िला जोधपुर, राजस्थान)

मारवाड का एक अतिप्राचीन स्थान जिसका उल्लेख मुग़लकालीन साहित्य म है (दे० भूषण-शिवाबावनी, 42—'भूषन भनत गिरि निकट निवासी लोग बावनीववजा नवकोट धुधजोत ह' ।

नवद्वीप (ज़िला नदिया, बगाल)

श्री चैतन्य महाप्रभु का ज म स्थान तथा सस्कृतविद्या और न्यायशास्त्र का प्राचीन केंद्र। पाणिनि, 6,2,89 म शायद नवद्वीप का नवनगर नाम स उल्लेख है। आजकल जो नगर नवद्वीप के नाम से प्रसिद्ध है वह चैतन्य महा प्रभु के समय म कुलिया नामक ग्राम था। प्राचीन नवद्वीप कुलिया के सामने गगा के उस पार पूर्वी तट पर स्थित था। इसे आजकल वामनपुकुर कहा जाता है। कहते हैं प्राचीन काल म नवद्वीप की परिधि 16 कोस की थी और उसम अत द्वीप, सीमलद्वीप, गोद्रुमद्वीप, मध्यद्वीप, कोलद्वीप, ऋतुद्वीप, जह नुद्वीप, मोदद्रुमद्वीप और रुद्रद्वीप य नौ द्वीप सम्मिलित थे। मायापुर नामक नवद्वीप के जिस भाग मे चैतन्य का ज म हुआ था वह मध्यद्वीप के अतगत था। यही चैत य के पिता जगन्नाथ मिश्र का निवास स्थान था। यह स्थान कालातर म गगा के गभ मे विलीन हो गया था। नवद्वीप का अब नदिया कहा जाता है।

नवनद दे० नदेड

नवनगर

(1)(=नवनर) गोदावरी नदी पर स्थित इस ग्राम का अभिज्ञान डा० भडारकर ने प्रतिष्ठानपुर (=पैठान) से किया है। यह प्राचीन व्यापारिक

नगर था तथा शातवाहन नरेशो के समय मे उनके साम्राज्य की राजधानी इसी स्थान पर थी (दे० प्रतिष्ठानपुर)

(2) पाणिनि 6,2,89 म उल्लिखित। यह शायद नवद्वीप है।

नवनगरी=नवनेरी

प्रोसिया का प्राचीन नाम।

नवनर=नवनगर

नवराष्ट्र (दे० नरराष्ट्र)

नवादा (जिला देहरादून, उ० प्र०)

प्राचीन काल म दून घाटी का मुख्य नगर था। 18वी शती के प्रारभ मे, देहरादून के बस जाने के पश्चात् नवादा का महत्व घटता चला गया और कालातर म यह स्थान खडहर बन गया। कोई सौ वष तक नवादा दूनघाटी का प्रमुख नगर था।

नवालिका=नयार (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

ऋषिकेश से देवप्रयाग जाने वाले माग मे यह नदी मिलती है। इसका पुराणो म भी उल्लेख है। यह व्यासघाट नामक स्थान पर गगा से मिल जाती है। सगम पर इद्रप्रयाग बसा है। पुराणो मे कथा है कि वृत्रासुर से परास्त होने पर इद्र ने इसी स्थान पर आकर शिव की आराधना की थी और वरदान प्राप्त करके उन्होने इस दैत्य का सहार किया था।

नव्यावकाशिका (जिला फरीदपुर, पू० बगाल)

फरीदपुर से प्राप्त ताम्रपट्टाभिलेखो मे इस स्थान का उल्लेख है। ये अभिलेख उत्तर-गुप्तकालीन हैं। इनसे तत्कालीन शासन व्यवस्था पर अच्छा प्रकाश पडता है।

नावनेर (जिला होशगाबाद, म० प्र०)

नमदा के उत्तरीतट पर स्थित है। यहा अनेक प्राचीन मदिरो के खडहर है।

नादेड दे० नदेड

नाखोनश्रीधम्मरत (मलाया)

मलयप्राय द्वीप म लिगार नामक स्थान का प्राचीन भारतीय नाम। यहा भारत के बौद्धो ने उपनिवेश बसाया था। स्थान का नाम नाखानधम्मरत नामक स्तूप के कारण पडा था। यह स्तूप पचास मदिरो के बीच म बनाया गया था। यह भारतीय औपनिवेशिको की वास्तु कला का परिचायक है।

नाग

विष्णुपुराण 2,2,29 के अनुसार मेरु के उत्तर की ओर स्थित एक पर्वत —'शखकूटोऽथ ऋषभो हसो नागस्तथापर, कालजाद्याश्च तथा उत्तर केसराचला'।

नागखड (शिकारपुर तालुक, मैसूर)

14वी शती के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि इस प्रदेश की रक्षा सम्राट चद्रगुप्त मौर्य द्वारा की जाती थी जिससे सूचित होता है कि मौर्यसम्राट का राज्य इस स्थान तक विस्तृत था (दे० राइस मसूर एड कुर्ग इसक्रिप्शस पृ० 10) राजावलीकथा (इडियन ऐंटिक्वरी 1892, पृ० 157) मे वर्णित जैन परपरा के आधार पर भी चद्रगुप्त मौर्य के राज्य का विस्तार दक्षिण भारत विशेषत मसूर तक सिद्ध होता है।

नागदा (जिला उदयपुर, राजस्थान)

(1) उदयपुर से 13 मील उत्तर की ओर स्थित है। यह प्राचीन नगर (= नागह्रद या नगेंद्र) अधिकतर खडहरो के रूप मे पडा हुआ है। चारो ओर अब [illegible] पहाड की चोटियाँ दिखाई देती हैं। प्राचीन काल के अनेक मदिर जिनका नष्ट प्राय कलावैभव आज भी दर्शको का मुग्ध कर लेता है, एक झील के किनारे बने हुए है। मेवाड के सस्थापक बप्पारावल ने नागदा ही मे अपनी राजधानी बनाई थी। यहाँ के राजा चद्रसिंह की कन्या कोकिला से उनका विवाह हुआ था। 1210 ई० मे दिल्ली के सुलतान इल्तुतमिश ने नागदा पर आक्रमण करके नगर का नष्टभ्रष्ट कर दिया। इस आक्रमण के पश्चात् नागदा के निवासी नगर को छोडकर अहार अथवा धूलकोट (अब उदयपुर का एक भाग) नामक स्थान पर जाकर बसने लगे। किंतु फिर भी कई सौ वर्षों तक नागदा मे अनेक [illegible] मदिरो का निर्माण होता रहा। नागदा के प्राचीन मदिरों की सख्या 2112 [illegible] जाती है जो आसपास की पहाडियो पर दूर दूर तक दिखाई देते थे। [illegible] मदिरो मे अधिकाश हिंदू शैली मे बने हैं। कुछ जैन मदिर भी हैं। दो [illegible] जैन मदिर खुमाणरावल तथा अद्भुतजी नाम के हैं। यह दूसरा मदिर [illegible] मे आमपाल सारग ने बनवाया था। [illegible] के प्रसिद्ध मदिर [illegible] देवालय थे। ये 10वीं 11वीं शती ई० मे बने थे। [illegible] चबूतरों पर बने हैं जो 140 फुट लबे हैं। [illegible] नाम के मदिर का शिखर टूटा हुआ है और शेष मदिर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] आज भी अक्षत है। शिखर [illegible] अच्छी अवस्था मे है। [illegible]

उत्कीर्ण शिलापट्ट एव मूर्तियाँ सभी शिल्प के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। मन्दिर क बाहरी भाग मे भी सुदर मूर्तिकारी प्रदर्शित है। पूर्वी व दक्षिणी भागो म कई प्रकार की चित्रविचित्र जालिया बनी हैं जिनसे सूय का प्रकाश छन कर अदर पहुँचता है। सभामडप विशाल है और अद्भुत शिल्पकारी से सप न है। इसकी छत मे एक वृहत कमलपुष्प उकेरा हुआ है जिसकी विकसित पखडियो पर चार नतकिया नृत्यमुद्रा मे प्रदर्शित है। नृत्यमुद्रा का अकन अपूव भावगरिमा एव कलालावण्य के साथ किया गया है। स्तभो पर भी अनेक कलामयी मूर्तिया उकेरी हुई है। इनमे से कई पर रास व भजन मडलियो के दृश्यो का अकन है। दूसरा पर नारीसौदय के अप्रतिम मूर्तिचित्र केवल उच्चकला ही के नही वरन् तत्कालीन समाज के भी प्रतिदश हैं। बहू के मदिर की कला भी कम विदग्धता-पूण नही। इसके सभामडप की मूर्तियो मे मुख्यत विष्णु, शिव, गरुड आदि प्रदर्शित हैं। इसकी छत पर भी सुदर तक्षणकला की अभिव्यजना है। मदिर का शिखर अब पूण रूप से टूट चुका है। इन मदिरो की शिल्पकला आबू के दिलवाडा मदिरो की याद दिलाती है। नागदा या नागह्रद का नामोल्लेख जनस्तोत्र तीथ माला चैत्यवदन मे इस प्रकार है—'वदे श्री करणावती शिवपुरे नागद्रहे (नागह्रदे) नाणके।'

(2) (म० प्र०) यह स्थान उज्जन से लगभग 30 मील उत्तरपश्चिम मे, पश्चिम रलवे के बम्बई-दिल्ली माग पर स्थित है। मालवा के परमारनरेशो के अभिलेखो मे नागदा का प्राचीन नाम नागह्रद मिलता है। जूना नागदा नाम के पुराने गाव मे चबल नदी के तट पर प्रागैतिहासिक सस्कृतिया क अवशेष यहा की गई खुदाई म प्राप्त हुए हैं। इन मे लघु पाषाण तथा कई कीमती पत्थरा की गुरियाँ और मिश्रित मृदभाड शामिल हैं। श्री अमृत-पाडया के मत म (जिन्हान यहाँ उतखनन किया था) माहिष्मती सस्कृति, जिसक अवशेष महेश्वर और प्रकाश म मिले है और चबल घाटी की सस्कृति मे काफी समानता है और व समकालीन जान पडती हैं। नागदा से उत्खनित सभ्यता को श्री अमृतपाड्या ने मोहजदारो और हडप्पा की सभ्यता म भी प्राचीन सिद्ध करन का प्रयास किया है।

नागद्वीप

(1) पुराणो म वर्णित एक द्वीप। इसका अभिज्ञान कुछ विद्वाना के मत म बगाल की खाडी मे स्थित निकोबार द्वीपसमूह के साथ किया जा सकता है। श्री वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार इस उपकल्पना की पुष्टि वल्हस्स जातक स भी होती है—(दे० जनल ऑव दि बिहार एड उडीसा रिसच सोसाइटी,

पटना, 23,1)

(2) महावंश 1,47 तथा 20,24 में वर्णित लंका का उत्तरपश्चिमी भाग। पहले उल्लेख के अनुसार गौतम बुद्ध भारत से नागद्वीप आए थे।

नागधन्वा

'धर्मात्मा नागधन्वान तीर्थमागमदच्युत, यत्र पन्नगराजस्य वासुके सन्निवेशनम्'—महा० शल्य० 37,30। इस उद्धरण के प्रसंग के अनुसार नागधन्वा की सरस्वती नदी के तटवर्ती तीर्थों में गणना थी। इसकी यात्रा बलराम ने की थी। यह शंखतीर्थ के उत्तर में स्थित था। उपर्युक्त उल्लेख से ज्ञात होता है कि नागधन्वा के निकट नाग लोगों की बस्ती थी। यह तीर्थ दक्षिणी पंजाब या उत्तरी राजस्थान में था।

नागनूर (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

नागनूर नाम तेलगू नाल-गुनूरेलु (=चार सौ) का अपभ्रंश कहा जाता है। स्थानीय जनश्रुति है कि इस स्थान पर प्राचीन काल में चार सौ मंदिर थे। नागनूर में एक दुर्ग भी है। शिव और विष्णु के मंदिर भी यहां के सुंदर स्मारक हैं। बुधाती नामक तीन स्तूप या स्तंभ भी यहां स्थित हैं जिन्हें किंवदंती के अनुसार अशोक ने बनवाया था। इससे नागनूर की प्राचीनता प्रमाणित होती है।

नागपट्टन=नेगापटम् (जिला राजमहेंद्री, आ० प्र०)

कुछ विद्वानों के मत में पांड्य देश की राजधानी उरगपुर या उरग यही स्थान था। उरगपुर का उल्लेख कालिदास ने रघुवंश 6,59 में किया है जिसकी टीका करते हुए मल्लिनाथ ने इस कान्यकुब्ज नदी के तट पर स्थित नागपुर बताया है (दे० उरगपुर)। चोलराज्यकालीन एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि राजराज चोल के शासनकाल के 21वें वर्ष (1005 ई०) में सुवर्णद्वीप (बर्मा) के शैलेंद्रनरेश चूडावमन ने नागपट्टन में एक बौद्ध विहार बनवाना प्रारंभ किया था। राजराज चोल ने इस विदेशी नरेश को अपने राज्य के अंतर्गत केवल बौद्ध विहार बनवाने की ही आज्ञा न दी थी वरन इस विहार के व्यय के लिए एक ग्राम का दान भी दिया था। चूडावमन् की मृत्यु के पश्चात उसके पुत्र तथा उत्तराधिकारी श्रीमारविजयोत्तुंगवर्मन ने इस विहार को पूरा करवाया था। 15वीं शती तक दो बौद्ध मंदिर नेगापटम में थे। इनमें से एक को 1867 ई० में जेसुइट पादरियों ने नष्टभ्रष्ट कर दिया और उसके स्थान पर गिरजाघर बनवाया था (विंसेंट स्मिथ—अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 486)

नागपुर

(1) (महाराष्ट्र) नागनदी पर अवस्थित है। गोंड राजाओ ने इस नगर की नीव डाली थी। बाद मे 18वी शती मे यहा भौसला मराठा का आधिपत्य स्थापित हुआ। 1777 ई० म मराठो और अग्रेजो का युद्ध नागपुर मे हुआ था। लाड डलहौजी ने नागपुर की रियासत को नागपुर नरेश के उत्तराधिकारी न हाने की दशा मे जवत कर लिया और यहा के राजवश के कीमती रत्नादिको का नीलाम कर दिया था। भौसला वश के शासनकाल का यहा एक दुग तथा अय भवनादि स्थित हैं।

(2) हस्तिनापुर 'त चारणसहस्राणा मुनीनामागमतदा श्रुत्वा नागपुरे नणा विस्मय समपद्यत' महा० आदि 125,11।

(3) मल्लिनाथ ने रघुवश 6,59 म उल्लिखित 'उरगाख्यपुर' की टीका करते हुए इसे नागपुर कहा है—'उरगाख्यस्य पुरस्य पाडय देशे कान्यकुब्ज-तीरवर्ति नागपुरस्य—'। इसका अभिज्ञान नेगापटम से किया गया है। (द० नेगापट्म, उरगपुर)

(4) (जिला गढवाल, उ० प्र०) इस स्थान पर एक पुरानी गढी या दुग क अवशेष है जो गढवाल के प्राचीन नरेशो के समय का है। इस प्रदेश का नाम गढवाल इसी प्रकार के अनेक गढो के कारण हुआ था।

नागमती (सौराष्ट्र, गुजरात)

सौराष्ट्र काठियावाड के उत्तरपश्चिमी भाग अथवा हालार की, रगमती नामक नदी की एक शाखा जिसके तट पर जामनगर बसा हुआ है।

नागमाल (लका)

महावश 15,153 मे वर्णित एक स्थान जो अनुराधपुर से सबधित था। सिंहल नरेश जयत को स्थविर कश्यप बुद्ध ने इसी स्थान क उत्तर मे अशोकमाल पर जाकर धर्मोपदेश दिया था जिससे सिंहल के चार सहस्र लोग बौद्धधम म दीक्षित हुए थ।

नागरा (जिला भडारा म० प्र०)

प्राचीन पुरातत्वविषयक अवशेष इस स्थान स प्राप्त हुए है जो कलचुरि-कालीन जान पडते हैं। इनमे मुख्य, 12वी शती तथा उसके पश्चात बने हुए जैन मदिरो के खडहर हैं। नागदा गोंदिया से चार मील दूर है।

नागसाह्वय

हस्तिनापुर का पर्याय, जिसका प्राचीन साहित्य म अनक स्थानो पर उल्लख है, उदाहरणार्थ—'बलदेवस्ततो गत्वा नगर नागसाह्वयम' विष्णु० 5,35,8,

'विजित्य पुरुषव्याघ्रो नागसाह्वयमागमत' महा० वन० 254,22। दे० हस्तिनापुर, नागपुर (2)

नागह्रद (दे० नागदा)

नागार्जुनीकोंड (ज़िला गुंटूर, आ० प्र०)

हैदराबाद से 100 मील दक्षिणपूर्व की ओर अति प्राचीन स्थान। यह बौद्ध महायान के प्रसिद्ध आचार्य नागार्जुन (दूसरी शती ई०) के नाम पर प्रसिद्ध है। प्रथम शती ई० में तथा उसके पूर्व इसका नाम श्रीपर्वत था जिसका वर्णन महाभारत वनपर्व, तीर्थ यात्रा के प्रसंग में है—'श्रीपर्वतमासाद्य नदीतीरमुपस्पृशत्' वन० 85,11। श्रीमद्भागवत 5,18,16 में भी श्रीशैल या श्रीपर्वत का उल्लेख है—'देवगिरि ऋष्यमूक श्रीशैलो वेंकटो महेन्द्रो वारिधारो विंध्य'। प्रथम शती ई० में यहां शातवाहन नरेशों का राज्य था। हाल नामक शातवाहन राजा ने जो प्राकृत के प्रसिद्ध काव्य गाथासप्तशती के रचयिता कहे जाते हैं, नागार्जुन के लिए श्रीपर्वत के शिखर पर एक विहार बनवा दिया था जहां ये रसविद् आचार्य अपने जीवन के अंतकाल में रहे थे। उनके यहां रहने के कारण यह स्थान महायान बौद्धधर्म का केंद्र बन गया था जिससे भारत तथा बृहत्तर भारत में महायान के प्रचार में योगदान मिला। उस समय यहां एक बौद्ध महाविद्यालय स्थापित हो गया था। नागार्जुन का नाम तिब्बती तथा चीनी बौद्ध साहित्य में भी प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि तीसरी या चौथी शती ई० में एक अन्य तांत्रिक विद्वान नागार्जुन भी यहां रहे थे। शातवाहनों (आंध्रनरेशों) के पश्चात नागार्जुनीकोंड में इक्ष्वाकुनरेशों ने राज्य किया और वे आंध्रप्रदेश की राजधानी अमरावती से यहीं ले आए। उस समय नागार्जुनीकोंड को विजयपुर या विजयपुरी कहते थे। इक्ष्वाकु नरेश हिंदू मतावलंबी होते हुए भी बौद्धधर्म के संरक्षक थे, यहां तक कि कई राजाओं की रानियां बौद्ध थीं और इस मत के प्रचार में क्रियात्मक रूप से भाग लेती थीं। संसार के इतिहास में धार्मिक सहिष्णुता का यह अपूर्व उदाहरण है। नागार्जुनीकोंड (विजयपुर) इक्ष्वाकुओं के शासनकाल में बहुत सुंदर नगर था। कृष्णानदी के तट पर स्थित तथा चतुर्दिक पर्वत मालाओं से परिवृत यह नगर प्राकृतिक सौंदर्य से समन्वित होने के साथ ही दुर्भेद्य दुर्ग की भांति सुरक्षित भी था। विजयपुर के आस्थान से नौ बौद्ध स्तूपों के खंडहर लगभग चालीस वर्ष पूर्व उत्खनित किए गए थे जो इस नगर के प्राचीन गौरव तथा ऐश्वर्य के साक्षी हैं। आठवीं शती में बौद्ध धर्म को, अन्य कारणों के अतिरिक्त महामनीषी शंकराचार्य के प्राचीन हिंदू धर्म के पुनरुज्जीवन के लिए किए

गए भगीरथप्रयत्न के परिणामस्वरूप बडा धक्का लगा और इसकी दक्षिण भारत मे अवनति के साथ ही नागार्जुनीकोड का महत्व भी घटने लगा। नागार्जुनीकोड को शकराचाय ने अपने प्रचार का मुख्य केंद्र बनाया था जिसका परिचायक पुष्पगिरिशकर मठ है। इस स्थान के खडहर नल्लमलाई की पहाडियो के क्रोड म स्थित थे। अब यहा एक विशाल बाध बनने के कारण यह सारा क्षेत्र जलमग्न हो गया है। केवल पुरातत्त्व विषयक सामग्री पहाडी पर बने एक सग्रहालय मे सुरक्षित कर दी गई है। यहा के ध्वसावशेष वनाच्छादित स्थली तथा पहाडियो के बीच पडे हुए थे। उत्खनन द्वारा एक महाचैत्य तथा बारह स्तूपो के अवशेष मिले। इनके अतिरिक्त चार विहार, छ चैत्य और चार मडपो के अवशेष भी उत्खनन द्वारा प्रकाश मे लाए गए। महाचैत्य का उत्खनन लागहर्स्ट ने किया था। इस स्तूप म बुद्ध का एक दात (वाम श्वदत) धातु मजूषा मे सुरक्षित पाया गया था। मजूषा पर अभिलेख था—'सम्यक सबुद्धस धातुवर परिगहित महाचैत्य। आचाय नागाजुन के विहार का पता यहा के खडहरो मे न लग सका है। इसके विषय मे युवानच्वाग ने लिखा है कि इस विहार के बनवाने मे पहाडी के अदर सुरग बनानी पडी थी। लबी वीथियो के बीच मे बने हुए इस भवन पर पाच मजिले बनाई गई थी और प्रत्येक पर चार शिलाएँ तथा विहार थे। प्रत्येक विहार मे बुद्ध की मानवाकार स्वर्णालकृत प्रतिमाएँ स्थापित थी। ये कला की दृष्टि से बेजोड थी। तीसरी शती ई० म इक्ष्वाकुनरेशो की रानियो ने यहा अनेक बौद्धविहारादि बनवाए थे। रानी शातिश्री ने यहा महाविहार तथा महाचैत्य बनवाए थे। दूसरी रानी बोधिश्री ने सिंहल, कश्मीर, नपाल और चीन के भिक्षुओ के लिए चैत्य-गृहो का निर्माण करवाया। (अतिम खुदाई मे एक पहाडी पर सिंहल विहार के खडहर मिले भी थ)। इस समय नागाजुनीकोड वास्तव मे बौद्धधम का अतर्राष्ट्रीय केंद्र बना हुआ था। इस स्थान से इन भवनो के अतिरिक्त छ सौ बडी तथा चारसौ छोटी कलाकृतियो के अवशेष भी प्राप्त हुए थे। नागार्जुनीकोड की वास्तुशली निकटवर्ती अमरावती की कला से बहुत मिलती जुलती है और दोनो को एक हा नाम अर्थात 'कृष्णा घाटी की शैली' से अभिहित किया जा सकता है। यहा का मुख्य स्तूप जो 70 फुट ऊचा और 100 फुट चौडा है, ऊचे चबूतरे पर बना हुआ था जिस पर चढने के लिए सीढ़िया थी। यहा की 'आयक वेदियाँ' तथा उन पर पतले स्तभो की पक्तिया और सादे प्रवेश-द्वार या तोरण जिनकी रक्षा करते हुए सिंहा की मूर्तिया प्रदर्शित हैं—ये यहा के स्तूपो की विशेषताए आध्र मे अन्यत्र अप्राप्य हैं। स्तूपादिक

'विजित्य पुरुषव्याघ्रो नागसाह्वयमागमत' महा० वन० 254,22। दे० हस्तिनापुर, नागपुर (2)

नागह्रद (दे० नागदा)

नागार्जुनीकोंड (जिला गुंतूर, आ० प्र०)

हैदराबाद से 100 मील दक्षिणपूर्व की ओर अति प्राचीन स्थान। यह बौद्ध महायान के प्रसिद्ध आचार्य नागार्जुन (दूसरी शती ई०) के नाम पर प्रसिद्ध है। प्रथम शती ई० में तथा उसके पूर्व इसका नाम श्रीपर्वत था जिसका वर्णन महाभारत वनपर्व, तीर्थ यात्रा के प्रसंग में है—'श्रीपर्वतमासाद्य नदीतीरमुपस्पृशेत' वन० 85,11। श्रीमद्भागवत 5,18,16 में भी श्रीशैल या श्रीपर्वत का उल्लेख है—'देवगिरि ऋष्यमूक श्रीशैलो वेंकटो महेन्द्रो वारिधारो विंध्य'। प्रथम शती ई० में यहां शातवाहन नरेशों का राज्य था। हाल नामक शातवाहन राजा ने जो प्राकृत के प्रसिद्ध काव्य गाथासप्तशती के रचयिता कहे जाते हैं, नागार्जुन के लिए श्रीपर्वत के शिखर पर एक विहार बनवा दिया था जहां ये रससिद्ध आचार्य अपने जीवन के अंतकाल में रहे थे। उनके यहां रहने के कारण यह स्थान महायान बौद्धधर्म का केंद्र बन गया था जिससे भारत तथा बृहत्तर भारत में महायान के प्रचार में योगदान मिला। उस समय यहां एक बौद्ध महाविद्यालय स्थापित हो गया था। नागार्जुन का नाम तिब्बती तथा चीनी बौद्ध साहित्य में भी प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि तीसरी या चौथी शती ई० में एक अन्य तान्त्रिक विद्वान् नागार्जुन भी यहां रहे थे। शातवाहनों (आंध्रनरेशों) के पश्चात नागार्जुनीकोंड में इक्ष्वाकुनरेशों ने राज्य किया और वे आंध्रप्रदेश की राजधानी, अमरावती से यहीं ले आए। उस समय नागार्जुनीकोंड को विजयपुर या विजयपुरी कहते थे। इक्ष्वाकु नरेश हिंदू मतावलंबी होते हुए भी बौद्धधर्म के संरक्षक थे, यहां तक कि कई राजाओं की रानियां बौद्ध थीं और इस मत के प्रचार में क्रियात्मक रूप से भाग लेती थीं। संसार के इतिहास में धार्मिक सहिष्णुता का यह अपूर्व उदाहरण है। नागार्जुनीकोंड (विजयपुर) इक्ष्वाकुओं के शासनकाल में बहुत सुंदर नगर था। कृष्णानदी के तट पर स्थित तथा चतुर्दिक पर्वत मालाओं से परिवृत यह नगर प्राकृतिक सौंदर्य से समन्वित होने के साथ ही दुर्भेद्य दुर्ग की भांति सुरक्षित भी था। विजयपुर के आस्थान से जो बौद्ध स्तूपों के खंडहर लगभग चालीस वर्ष पूर्व उत्खनित किए गए थे जो इस नगर के प्राचीन गौरव तथा ऐश्वर्य के साक्षी हैं। आठवीं शती में बौद्ध-धर्म का, अन्य कारणों के अतिरिक्त महामनीषी शंकराचार्य के प्राचीन हिंदू धर्म के पुनरुज्जीवन के लिए किए

गए भगीरथप्रयत्न के परिणामस्वरूप बडा धक्का लगा और इसकी दक्षिण भारत मे अवनति के साथ ही नागार्जुनीकोड का महत्व भी घटने लगा। नागार्जुनीकोड का शकराचाय ने अपने प्रचार का मुख्य केंद्र बनाया था जिसका परिचायक पुष्पगिरिशकर मठ है। इस स्थान के खडहर नल्लमलाई की पहाडियो के क्रोड मे स्थित थे। अब यहा एक विशाल बाध बनने के कारण यह सारा क्षेत्र जलमग्न हो गया है। केवल पुरातत्त्व-विषयक सामग्री पहाडी पर बने एक सग्रहालय म सुरक्षित कर दी गई है। यहा के ध्वसावशेष वनाच्छादित स्थली तथा पहाडियो के बीच पडे हुए थे। उत्खनन द्वारा एक महाचैत्य तथा बारह स्तूपो के अवशेष मिले। इनके अतिरिक्त चार विहार, छ चैत्य और चार मडपो के अवशेष भी उत्खनन द्वारा प्रकाश मे लाए गए। महाचैत्य का उत्खनन लागहर्स्ट ने किया था। इस स्तूप मे बुद्ध का एक दात (बाम श्वदत) धातु मजूषा मे सुरक्षित पाया गया था। मजूषा पर अभिलेख था— सम्यक सबुद्धस धातुवर परगहित महाचैत्य। आचाय नागार्जुन के विहार का पता यहा क खडहरो मे न लग सका है। इसके विषय म युवानच्वाग ने लिखा है कि इस विहार के बनवाने मे पहाडी के अदर सुरग बनानी पडी थी। लबी वीथियो के बीच म बने हुए इस भवन पर पाच मजिल बनाई गई थी और प्रत्येक पर चार शिलाएँ तथा विहार थे। प्रत्येक विहार मे बुद्ध की मानवाकार स्वर्णालकृत प्रतिमाएँ स्थापित थीं। ये कला की दृष्टि से बेजोड थी। तीसरी शती ई० म इक्ष्वाकुनरेशो की रानियो ने यहा अनेक बौद्धविहारादि बनवाए थे। रानी शातिश्री ने यहा महाविहार तथा महाचैत्य बनवाए थे। दूसरी रानी बोधिश्री ने सिहल, कश्मीर, नेपाल और चीन के भिक्षुओ के लिए चैत्य-गृहो का निर्माण करवाया। (अतिम खुदाई मे एक पहाडी पर सिहल विहार के खडहर मिले भी थे)। इस समय नागार्जुनीकोड वास्तव मे बौद्धधम का अतर्राष्ट्रीय केंद्र बना हुआ था। इस स्थान से इन भवनो के अतिरिक्त छ सौ बडी तथा चारसौ छोटी कलाकृतियो के अवशेष भी प्राप्त हुए थे। नागार्जुनीकोड की वास्तुशैली निकटवर्ती अमरावती की कला से बहुत मिलती जुलती है और दोनो को एक ही नाम अर्थात् 'कृष्णा घाटी की शैली' से अभिहित किया जा सकता है। यहा का मुख्य स्तूप जो 70 फुट ऊचा और 100 फुट चौडा है, ऊचे चबूतरे पर बना हुआ था जिस पर चढन क लिए सीढ़िया थी। यहा की 'आयक वेदियाँ' तथा उन पर पतले स्तभो की पक्तिया और सादे प्रवेश-द्वार या तोरण जिनकी रक्षा करते हुए सिहो की मूर्तिया प्रदर्शित हैं—ये यहा के स्तूपो की विशेषताएं आध्र मे अन्यत्र अप्राप्य हैं। स्तूपादिक

के पत्थरो की तक्षणकला या नक्काशी इस कला का बेजोड उदाहरण है। हल्के हरे रग का पत्थर जिसका अधिकाश मे यहा प्रयोग किया गया है, जीवन के विविध भावदृश्यो के अकन के लिए विशिष्ट रूप से उपयुक्त था। इन पत्थरो पर उकेरे हुए चित्रो के आधार पर तत्कालीन (दूसरी-तीसरी शती० ई०) बौद्धधर्म तथा कला के अध्ययन म बहुत सहायता मिल सकती है। इनम अकित अनेक दृश्य सस्कृत बौद्धसाहित्य की कथाओ तथा घटनाओ स लिए गए है। इनके अतिरिक्त अनुराधापुर (लका) की भाति ही यहा भी अनक बौद्ध मूर्तियो को स्मारको के आधारो के चतुर्दिक प्रतिष्ठापित करने की प्रथा पाई गई है। यहा के शिल्प मे स्तभो की पक्तिया विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं क्योकि यही विशिष्टता आध्रप्रदेश मे परवर्तीकाल मे बनने वाले मदिरो की कला का भी एक भाग है। नागार्जुनीकोंड के अभिलेखो की भाषा अधसाहित्यिक प्राकृत है जो इस प्रात के द्रविड भाषा भाषियो की बोली था। शातवाहनो के समय मे इस भाषा (या महाराष्ट्री प्राकृत) का काफी सम्मान था जैसा कि हाल नरेश द्वारा रचित प्रसिद्ध प्राकृत काव्य ग्रथ गाथा सप्तशती स सूचित होता है। अभिलेखो से तत्कालीन इतिहास तथा सामाजिक अवस्था पर काफी प्रकाश पडता है। 1954 म नागार्जुनीकोंड से दो सगमरमर के मूर्तिपट्ट प्राप्त हुए थे जिन्हे भारत शासन ने सिंगापुर के सग्रहालय म भेजा है। इनमे एक पट्ट के बीच मे बोधिद्रुम अकित है जिस बौद्ध त्रिरत्न के साथ दिखलाया गया है। दूसरे पट्ट पर सभवत मगध के राजा बिंदुसार की बुद्ध स भेंट करने की यात्रा का अकन किया गया है। इसमे राजा को चार घोडो के रथ म आसीन दिखाया गया है। रथ के आगे कुछ पैदल सैनिक चल रहे हैं। ये दृश्य बडे मनोरजक हैं तथा इनका चित्रण बहुत ही स्वाभाविक रीति से किया गया है।

नागार्जुनी गुहा (जिला गया, बिहार)

यह गुफा महायान बौद्ध के प्रसिद्ध आचार्य नागार्जुन के नाम पर प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि वे यहा कुछ समय पर्यन्त रहे थे। इनका समय द्वितीय शती ई० म माना जाता है। इस गुफा म मौखरीवश के नरेश अनतवर्मन् का एक तिथिहीन लेख है जिसका उद्देश्य अनतवर्मन् द्वारा इस गुहामदिर म भूतपति शिव तथा देवी पार्वती की अर्धनारीश्वर-मूर्ति की प्रतिष्ठापना का उल्लेख है। अनतवर्मन ही का एक अन्य अभिलेख भी इस गुहा में है जिसमे उनके द्वारा कात्यायनी देवी की एक प्रतिमा के प्रतिष्ठापन तथा उसके लिए एक ग्राम के दान का उल्लेख है। अभिलेख 7वीं शती ई० के

नागावती

दक्षिणकलिंग की नदी जिसे लागूलीय भी कहते हैं। यह कलिंगपटम् और चिकाकोल के निकट बहती है—(दे० बी० सी० ला—'सम जैन केनानिकल सूत्राज़', पृ० 146)

नागेश=नागेश्वर

नागेश या नागेश्वर द्वारका के निकट दारुकवन में स्थित है। द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक नागेश में माना जाता है। शिवपुराण में इसे पुण्यस्थान माना गया है—'एतद य शृणुयान्नित्य नागेशोद्भवमादरात, सर्वान कामानियादधीमान महापातकनाशनात'। शिवपुराण—30,44। यह स्थान गोपी तालाब से 3 मील है। टि० कुछ लोगों के मत में अल्मोड़ा (म० प्र०) से 17 मील उत्तरपूर्व में स्थित नागेश (=जागेश्वर) ही नागेश ज्योतिर्लिंग है।

नागोवरी (ज़िला जोधपुर, राजस्थान)

जोधपुर रियासत की प्राचीन राजधानी मंडोर के निकट बहने वाली नदी। मंडोर या माडव्याश्रम में प्राप्त एक अभिलेख में शायद इसी नदी का उल्लेख है—'माडवस्याश्रमे पुण्ये नदीनिर्झर शोभिते'।

नागौर (ज़िला जोधपुर, राजस्थान)

इस नगर को, किंवदंती के अनुसार, नागर राजपूतों ने बसाया था। जान पड़ता है कि नागौर का मूल नाम नागपुर रहा होगा। मुगलकाल में नागौर एक प्रसिद्ध नगर था। अकबर के दरबार के रत्न अबुलफजल और फैजी के पिता शेख मुबारक नागौर के ही रहने वाले थे और नागौरी कहलाते थे।

नाज़ोल (राजस्थान)

यह स्थान एक प्राचीन दुर्भेद्य दुर्ग के लिए प्रसिद्ध था। इस दुर्ग का निर्माण चौहान राजपूतों ने मध्यकाल में किया था।

नाडलई (ज़िला जोधपुर, राजस्थान)

एक प्राचीन जैन मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। इस मंदिर पर विक्रम संवत् 1686 (=1629 ई०) का एक अभिलेख अंकित है जिससे ज्ञात होता है कि मंदिर का निर्माण मूलतः मौर्य-सम्राट अशोक के पौत्र संप्रति द्वारा करवाया गया था। संप्रति को जैन परंपरा में जैन अशोक कहा गया है।

नाडोल दे० नड्डल

नाथद्वारा (ज़िला उदयपुर, राजस्थान)

वल्लभ-संप्रदाय के वैष्णवों का प्राचीन मुख्य पीठ है। कहा जाता है कि

नाथद्वारा के मदिर की मूर्ति पहले गोवधन (व्रज) म थी और मुसलमानो क शासन काल म आक्रमणो के डर से इसे नाथद्वारा ले जाया गया था। नाथद्वारा प्राचीन सिहाड ग्राम के स्थान पर बसा है।

नाथनगर (ज़िला भागलपुर, बिहार)

भागलपुर से 3 मील दूर रेल स्टेशन है। बौद्ध तथा पूव बौद्धकालीन नगरी चपा की स्थिति इसी स्थान पर थी। चपा अग जनपद की राजधानी थी। जातक कथाओ म इस नगरी की श्रीसमृद्धि तथा यहा के सम्पन्न व्यापारियों का अनेक स्थानो पर उल्लेख है।

नाणक

प्राचीन जैन तीथ जिसका उल्लेख तीथमालाचैत्यवदन मे है—'वदे श्रीकरणावती शिवपुरे नागद्रहे नाणके'। यह वतमान नाना नामक स्थान है जो ज़िला जोधपुर, राजस्थान मे स्थित है।

नादिक

बौद्धग्रथ महापरिनिब्बान सुत्त, अध्याय, 2 के अनुसार नादिक, वशाली क एक भाग अथवा उपनगर का नाम था जहा वृज्जि वशीय क्षत्रियो का निवास स्थान था। बुद्धचरित, 22, 13 मे उल्लेख है कि अतिम बार पाटलिपुत्र स लौटते समय वैशाली के मार्ग पर जाते हुए बुद्ध इस स्थान पर ठहरे थे। उस समय वहा अनेक लोगो की मृत्यु हुई थी। बुद्ध ने उनके ज म कम के विषय म अनेक बातें अपने शिष्यो को बताई थी।

नाना=नाणक

नानाघाट (ज़िला पूना, महाराष्ट्र)

नानाघाट म स्थित एक गुफा म शातवाहन शातकर्णी नरेश की रानी नयनिका का एक अभिलेख है जिसमे उसने कई यज्ञा के किए जान का उल्लेख किया है। इस अभिलेख मे द्वितीय शती ई० के लगभग, महाराष्ट्र मे, बौद्धमत के उत्कषकाल क पश्चात हिंदू धम के पुनरुज्जीवन की प्रथम झलक मिलती है।

नाभक

शिलाभिलेख 13 म मौय सम्राट् अशाक ने नाभक के नाभपतिसो का उल्लेख किया है। सभवत नाभक, चीनी यात्री फाह्यान द्वारा उल्लिखित ना पई किया नाम का स्थान है जा उसके समय म कपिलवस्तु (नेपाल की तराई) से 10 मील दक्षिण-पश्चिम की ओर स्थित क्रकुच्छद बुद्ध क ज म स्थान के रूप मे प्रख्यात था। (द० कपिलवस्तु)

नाभिकपुर

डा० बुलर के अनुसार ब्रह्मवैवर्त पुराण म नाभिकपुर नामक स्थान उत्तरकुरु म बताया गया है। कुछ विद्वानो के मत मे नाभक और नाभिकपुर एक ही है किंतु यह अभिज्ञान सदिग्ध है।

नारद

विष्णुपुराण 2, 4, 7 के अनुसार प्लक्षद्वीप का एक मर्यादा पवत—'गोमेद श्चैव च द्रश्च नारदो दुदभिस्तथा सोमक सुमनश्चैव वैभ्राजश्चैव सप्तम'।

नारदीगगा

नमदा की सहायक नदी। इसका और नमदा का सगम, नमदा के दक्षिण तट पर स्थित मोतलसिर (म० प्र०) नामक ग्राम के निकट है।

नारायणकोट (जिला गढवाल, उ० प्र०)

गढवाल के प्राचीन राजाओ के बनवाए हुए मदिरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

नारायण तीथ

महाभारत के वनपव म नारायण के 'स्थान' का उल्लेख है जो प्रसग से गडकी नदी (बिहार) के तटवर्ती क्षेत्र मे अवस्थित जान पडता है। यहा शालग्राम विष्णु का तीथ माना गया है। आज भी गडकी मे पाए जाने वाले गोल कृष्णवण क पत्थरो को शालग्राम के रूप म पूजा जाता है। यहा एक पुण्य कूप का भी वणन है—'ततो गच्छेत् राजेंद्र स्थान नारायणस्य च। सदा सनिहितो यत्र विष्णुवसति भारत। यत्र ब्रह्मादयो देवा ऋषयश्च तपोधना, आदित्या वसवो रुद्रा जनादनमुपासते। शालग्राम इति ख्यातो विष्णुरदभुतकमक, अभिगम्य त्रिलोकेश वरद विष्णुमव्ययम। अश्वमेधमवाप्नोति विष्णुलोक च गच्छति। तत्रोदपान धमज्ञ सवपापप्रमोचनम् समुद्रास्तत्र चत्वार कूपे सनिहिता सदा'। महा० वन० 84,122 123-124-125 126।

नारायणपुर (मसूर)

चालुक्य वास्तुशली म निर्मित चालुक्य-नरेशा के समय का एक मदिर यहा का उल्लेखनीय प्राचीन स्मारक है।

नारायणसर (कच्छ, गुजरात)

कोटीश्वर से 2 मील दूर कच्छ का अति प्राचीन तीथ है। यहा 16वी शती मे महाप्रभु वल्लभाचाय आए थे।

नारायणाश्रम

बदरीनाथ के निकट गगातट पर नर-नारायण का आश्रम। इसका उल्लेख

महाभारत म है—'तत्रापश्यत धर्मात्मा देवदेवर्षिपूजितम, नरनारायणस्थान भागीरथ्योपशोभितम्' वन० 145,41। यह आश्रम यद्यपि अलकनंदा के तट पर है तथापि महाभारत म इसे भागीरथी के तट पर बताया है। भागीरथी और अलकनंदा यद्यपि गगा की दो भिन्न शाखाए हैं किंतु यहा भागीरथी का अलकनदा से अभिन्न माना है। वास्तव म ये दोनो देवप्रयाग म मिल कर गगा कहलाती हैं।

नारायणी

गडकी नदी (बिहार) का एक नाम। यह नारायण तीर्थ मे बहती है जिसे महाभारत म नारायण का स्थान माना गया है। नदी के काल गोल पत्थरो का शालग्राम की मूर्ति के रूप म पूजा जाता है। (दे० नारायण तीर्थ)

नारी तीर्थ

तानिसर्वाणि तीर्थानि तत प्रभृति चैव ह। नारी तीर्थानि नाम्नेह ख्याति यास्यन्ति सर्वश ' महा० आदि० 216,11। उपयुक्त श्लोक मे जिन तीर्थों का निर्देश है वे य है—अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारधम और भारद्वाज। इनका उल्लेख आदि० 215,3-4 मे है—'अगस्त्यतीर्थं सौभद्र पौलोम च सुपावन कारधम प्रसन्न च ह यमेधफल च तत। भारद्वाजस्य तीर्थ तु पापप्रशमन महत्, एतानि पचतीर्थानि ददश कुरुसत्तम । ये पाचो नारीतीर्थ दक्षिण समुद्रतट पर स्थित थे—'दक्षिण सागरानूप पचतीर्थानि सति वै पुण्यानि रमणीयानि तानि गच्छत माचिरम' आदि० 216 217। अर्जुन ने इन तीर्थों की यात्रा की थी। वन० 118,4 मे भी द्रविड देश म नारीतीर्थ का उल्लेख है—'ततो विपाप्मा द्रविडेपु राजन् समुद्रमासाद्य च लोक पुण्यम्, अगस्त्यतीर्थं च महापवित्र नारीतीर्थान्यथ वीरो ददश'। आदि० 215 म वर्णित कथा के अनुसार इन तीर्थों का नाम पाच शापग्रस्त अप्सराओ से सबधित था जिन्हे अर्जुन ने शापमुक्त किया था।

नालदग्राम=नालदा

नालदा (बिहार)

बख्तियारपुर राजगीर रेलमार्ग पर नालदा स्टेशन से 1½ मील दूर, प्राचीन भारत के इस प्रसिद्ध विश्वविद्यालय के ध्वसावशेष विस्तीर्ण भूभाग को घेरे हुए हैं। यहा आजकल बडगाव नामक ग्राम स्थित है जो राजगीर (प्राचीन राजगृह) से 7 मील तथा बख्तियारपुर से 25 मील है। चीनी यात्री युवानच्वाग ने, जो नालदा म कई वर्ष रह कर अध्ययन करते रहे थे, नालदा का सविस्तर हाल लिखा है। उससे तथा यहा के खडहरो से प्राप्त अभिलेखो तथा अवशेषो से ज्ञात होता है कि गुप्तवश के राजा कुमारगुप्त प्रथम ने 5वी शती ई० म इस
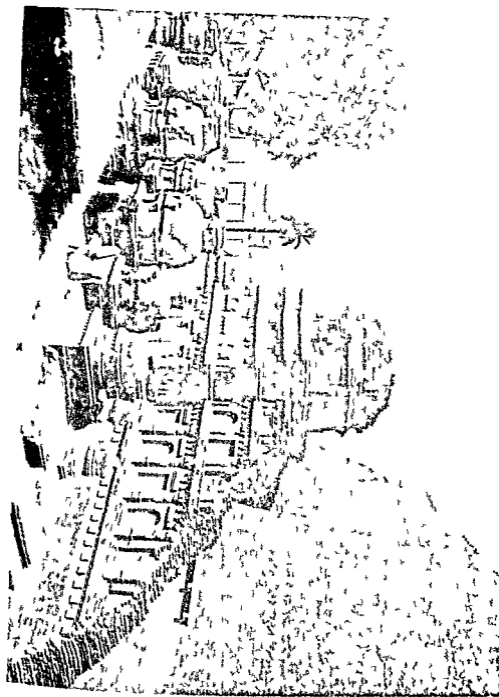
प्राचीन और सभ्य ससार के सर्वश्रेष्ठ तथा जगत्प्रसिद्ध विश्वविद्यालय की स्थापना की थी। पहले यहा केवल एक बौद्धविहार बना था जो धीरे धीरे एक महान् विद्यालय के रूप मे परिवर्तित हो गया। इस विश्वविद्यालय को गुप्त तथा मौखरी नरेशो और कान्यकुब्जाधिप हर्ष से निरतर अर्थसाहाय्य और सरक्षण प्राप्त होता रहा और इन्होंने यहा अनेक भवनो, विहारो तथा मदिरो का निर्माण करवाया। नालदा के सरक्षक नरेशो मे हर्ष के अतिरिक्त नरसिंहगुप्त, कुमारगुप्त द्वितीय, वध्यगुप्त, विष्णुगुप्त, सर्ववर्मन और अवतिवर्मन मौखरी तथा कामरूप-नरेश भास्करवर्मन मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त एक प्रस्तर-लेख म कनौज के यशोवर्मन और ताम्रपट्टलेखो मे धर्मपाल और देवपाल (बगाल के पाल नरेश) नामक राजाओ का भी उल्लेख है। श्रीविजय या जावा सुमात्रा के शैलेंद्र नरेश बलपुत्रदेव का भी नालदा के सरक्षको मे नाम मिलता है। युवानच्वांग नालदा मे प्रथम बार 637 ई० मे पहुँचे थे और उन्होने कई वर्ष यहा अध्ययन किया था। उनकी विद्वत्ता पर मुग्ध होकर नालदा के विद्वानो ने उन्हे मोक्षदेव की उपाधि दी थी। उनके यहा से चले जाने के बाद, नालदा के भिक्षु प्रज्ञादेव ने युवानच्वाग को नालदा के विद्यार्थियो की ओर से भेंट के रूप मे एक जोडी वस्त्र भिजवाए थे। युवानच्वाग के पश्चात भी अगले 30 वर्षों मे नालदा मे प्राय ग्यारह चीनी और कोरियायी यात्री आए थे। चीन से इत्सिंग और हुइली और कोरिया से हाइनीह, यहा आने वाले विदेशी यात्रियो मे मुख्य है। 630 ई० मे जब युवानच्वाग यहा आए थे तब यह विश्वविद्यालय अपने चरमोत्कर्ष पर था। इस समय यहा दस सहस्र विद्यार्थी तथा एक सहस्र आचार्य थे। विद्यार्थियो का प्रवेश नालदा विश्वविद्यालय मे काफी कठिनाई से होता था क्योकि केवल उच्चकोटि के विद्यार्थियो को ही प्रविष्ट किया जाता था। शिक्षा की व्यवस्था महास्थविर के नियत्रण मे थी। शीलभद्र उस समय यहा के प्रधानाचार्य थे। ये प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान् थे। यहा के अन्य ख्यातिप्राप्त आचार्यों मे नागार्जुन, पद्मसभव (जिन्होंने तिब्बत मे बौद्धधर्म का प्रचार किया), शातिरक्षित और दीपकर, ये सभी बौद्धधर्म के इतिहास मे प्रसिद्ध है। नालदा 7वी शती मे तथा उसके पश्चात कई सौ वर्षों तक एशिया का सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालय था। यहा अध्ययन के लिए चीन के अतिरिक्त चपा, कबोज, जावा, सुमात्रा, ब्रह्मदेश, तिब्बत, लका और ईरान आदि देशो के विद्यार्थी आते थे और विद्यालय मे प्रवेश पाकर अपने को धन्य मानते थे। नालदा के विद्यार्थियो के द्वारा ही सारी एशिया मे भारतीय सभ्यता एव सस्कृति का विस्तृत प्रचार व प्रसार हुआ था। वहां के विद्यार्थियो और विद्वानो की माग एशिया के सभी देशो मे थी और उनका सर्वत्र आदर

होता था। तिब्बत के राजा के निमंत्रण पर भदंत शांतिरक्षित और पद्मसंभव तिब्बत गए थे और वहां उन्होंने संस्कृत, बौद्ध साहित्य और भारतीय संस्कृति का प्रचार करने में अप्रतिम योग्यता दिखाई थी। नालंदा में बौद्धधर्म के अतिरिक्त हेतुविद्या, शब्द विद्या, चिकित्सा-शास्त्र, अथर्ववेद तथा सांख्य से संबंधित विषय भी पढ़ाए जाते थे। युवानच्वांग ने लिखा है कि नालंदा के एक सहस्र विद्वान आचार्यों में से सौ ऐसे थे जो सूत्र और शास्त्र जानते थे, पांच सौ, 30 विषयों में पारंगत थे और बीस, 50 विषयों में। केवल शीलभद्र ही ऐसे थे जिनकी सभी विषयों में समान गति थी। नालंदा विश्वविद्यालय के तीन महान पुस्तकालय थे—रत्नोदधि, रत्नसागर और रत्नरंजक। इनके भवनों की ऊंचाई का वर्णन करते हुए युवानच्वांग ने लिखा है कि इनकी सतमंजिली अटारियों के शिखर बादलों से भी अधिक ऊंचे थे और इन पर प्रातःकाल की हिम जम जाया करती थी। इनके झरोखों में से सूर्य का सतरंगा प्रकाश अन्दर आकर वातावरण को सुंदर एवं दिव्य बनाता था। इन पुस्तकालयों में सहस्रों हस्तलिखित ग्रंथ थे। इनमें से अनेकों की प्रतिलिपियां युवानच्वांग ने की थीं। जैन ग्रंथ सूत्रकृतांग में नालंदा के हस्तियाम नामक सुंदर उद्यान का वर्णन है।

1303 ई० में मुसलमानों के बिहार और बंगाल पर आक्रमण के समय, नालंदा को भी उसके प्रताप का शिकार बनना पड़ा। यहां के सभी भिक्षुओं को आक्रांताओं ने मौत के घाट उतार दिया। मुसलमानों ने नालंदा के जगत प्रसिद्ध पुस्तकालय को जला कर भस्मसात् कर दिया और यहां की सतमंजिली, भव्य इमारतों और सुंदर भवनों को नष्ट भ्रष्ट करके खंडहर बना दिया। इस प्रकार भारतीय विद्या, संस्कृति, और सभ्यता के घर नालंदा को जिसकी सुरक्षा के बारे में संसार की कठोर वास्तविकताओं से दूर रहने वाले यहां के भिक्षु विद्वानों ने शायद कभी नहीं सोचा था, एक ही आक्रमण के झटके ने धूल में मिला दिया।

नालंदा के खंडहरों में विहारों, स्तूपों, मंदिरों तथा मूर्तियों के अगणित अवशेष पाए गए हैं जो स्थानीय संग्रहालय में सुरक्षित हैं। अनेकों अभिलेख जिनमें ईंटों पर अंकित निदानसूत्र तथा प्रातित्यसमुत्पदसूत्र जैसे बौद्ध ग्रंथ भी हैं, तथा मिट्टी की मुहरें भी, नालंदा में मिले हैं। यहां के महाविहार तथा भिक्षु संघ की मुद्राएं भी मिली हैं।

नालंदा में मूर्तिकला की एक विशिष्ट शैली प्रचलित थी जिस पर सारनाथ कला का काफी प्रभाव था। बुद्ध की एक सुंदर धातु प्रतिमा जो यहां से प्राप्त हुई है सारनाथ की मूर्तियों से जोड़ी की है, केश विन्यास तथा उष्णीष के अंकन

मे बहुत कुछ मिलती-जुलती है किंतु दोनो मे थोडा भेद भी है। नालदा की मूर्ति म उत्तरीय तथा अधोवस्त्र दोनो विशिष्ट प्रकार से पहने हुए है और उनमे वस्त्रो के मोड दिखाने के लिए रूढिगत धारिया अकित की गई है (दि० हिस्ट्री ऑव फाइन आर्ट इन इडिया एड इडोनीसिया, चित्र 42) नालदा का नालद ग्राम क रूप म उल्लेख परवर्ती गुप्त-नरश आदित्यसेन के शाहपुर अभिलेख मे है।

नालदुग (ज़िला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

नालदुग अपने प्राचीन सुदढ किले के लिए विख्यात है। यह बोरी नदी के एक नाले के निकट मनोहारी प्राकृतिक दृश्यो क बीच स्थित है। मीडोज टेलर नामक एक अग्रेज लेखक ने (19 शती मे) इसका वणन अपनी पुस्तक—'ए स्टोरी ऑव माई लाइफ' म किया है। 14वी शती से पहले यह एक स्थानीय राजा के अधिकार म था जो शायद चालुक्या का सामत था। कालक्रम मे बहमनी और फिर बीजापुर के सुल्तानो का यहा अधिकार हुआ। 1558 ई० मे अली आदिलशाह द्वितीय ने नालदुग को किलाबदियो से सुदृढ करने के अतिरिक्त, यहा स्थित सेना के लिए जल की व्यवस्था करने के लिए बारी नदी पर एक बाध भी बनवाया। बाध तथा पानी महल की रचना एक ईरानी वास्तुविशारद मीर इमादीन ने की थी। इस तथ्य का उल्लख 1613 ई० क एक अभिलेख मे है। तत्पश्चात मुगल सम्राट औरगजेब का दक्षिण भारत की रियासतो पर कब्जा होने पर नालदुग भी मुगल सल्तनत म मिला लिया गया।

नासिक (महाराष्ट्र)

पश्चिम रेलवे के नासिक रोड स्टेशन से 5 मील दूर गोदावरी नदी के तट पर यह प्राचीन नगर बसा है। कहा जाता है कि रामायण मे वर्णित पच-वटी जहा श्री राम, लक्ष्मण और सीता वनवास काल मे बहुत दिनो तक रहे थे, नासिक के निकट ही है। (दे० पचवटी)। किवदती है कि इसी स्थान पर रावण की भगिनी शूपनखा को लक्ष्मण ने नासिका-विहीन किया था जिसके कारण इस स्थान को नासिक कहा जाता है। नासिक के पास सीता गुफा नामक एक नीची गुफा है जिसके अदर दो गुफाए है। पहली म नौ सीढिया के पश्चात राम, लक्ष्मण और सीता की मूर्तिया दिखाई पडती हैं और दूसरी पचरत्नेश्वर महादेव का मदिर है। नासिक से दो मील गोदावरी के तट पर गौतम ऋषि का आश्रम है। गोदावरी का उद्गम त्र्यम्बकेश्वर की पहाडी म है जो नासिक स प्राय बीस मील दूर है। नासिक म 200 ई० पू० से द्वितीय शती ई० तक की पाडुलेण नामक बौद्ध गुफाओ का एक समूह है। इसके अतिरिक्त जनो के आठवें तीथकर चद्र-

प्रभस्वामी और कुतीविहार नामक जैन चत्य के 14वी शती मे यहा होने का उल्लेख जैन लेखक जिनप्रभु सूरि के ग्रथो मे मिलता है। 1680 ई० म लिखित तारीखे-औरगजेब के अनुसार, नासिक के 25 मदिर औरगजब की धर्माधता के शिकार हुए थे। इन विनष्ट मदिरो मे नारायण, उमामहश्वर, राम जी, कपालेश्वर और महालक्ष्मी के मदिर उल्लेखनीय थे। इन मदिरो की सामग्री से यहा की जामा मसजिद की रचना की गई। मसजिद क स्थान पर पहले महालक्ष्मी का मदिर स्थित था। नीलकठेश्वर महादव क उस प्राचीन मदिर की चौखट जो असरा फाटक के पास था, अब भी इसी मसजिद म लगी दिखाई देती है। नासिक के प्राय ,सभी मदिर मुसलिम शासनकाल के अतिम दिनो के बन हुए है और स्वय पेशवाओ तथा उनके सबधियो अथवा राज्याधिकारियो द्वारा वनवाए गए थे। इनमे सबसे अधिक जलवृत और श्री सपन्न मालेगाव का मदिर राजा नारूशकर द्वारा 1747 ई० म, 18 लाख की लागत से बना था। यह मदिर 83 फुट चौडा और 123 फुट लबा है। शिल्प की दृष्टि से नासिक के सभी मदिरो म यह सर्वोत्कृष्ट है। इसका विशाल घटा 1721 ई० मे पुर्तगाल से बनकर आया था। कालाराम नामक दूसरा मदिर 1799 ई० का है जो बारह वर्षों म 22 लाख रुपए की लागत से बना था। यह 285 फुट लबे और 105 फुट चौडे चबूतरे पर अवस्थित है। कहा जाता है यह मदिर उस स्थान पर है जहा श्रीराम ने वनवासकाल म अपनी पर्णकुटी बनाई थी। किंवदती है कि यादव शास्त्री नामक पडित ने इस मदिर का पूर्वी भाग इस प्रकार बनवाया था कि मेष और तुला की सक्राति क दिन, सूर्योदय के समय, सूर्यरश्मिया सीधी भगवान् राम की मूर्ति के मुख पर पडती थी। श्री राम की मूर्ति काले पत्थर की है। सुदर नारायण का मदिर 1756 ई० म और भद्रकाली का मदिर 1790 ई० म बने थे। नासिक म त्र्यबकेश्वर महादेव का ज्योतिर्लिंग भी स्थित है। इसी कारण नासिक का माहात्म्य और भी बढ गया है। पौराणिक किंवदती के अनुसार नासिक का नाम कृतयुग म पद्मनगर, त्रेता मे त्रिकटक, द्वापर मे जनस्थान और कलियुग म नासिक है— 'कृते तु पद्मनगर त्रेतायां तु त्रिकटकम्, द्वापरे च जनस्थान कलौ नासिकमुच्यते'। नासिक को शिवपूजा का केंद्र होने के कारण दक्षिण काशी भी कहा जाता है। यहा आज भी साठ के लगभग मदिर हैं। 'कलौ गोदावरी गगा' के अनुसार कलियुग म गोदावरी गगा क समान ही पवित्र मानी गई है। मराठा साम्राज्य म महत्त्व की दृष्टि स पूना क बाद नासिक का ही स्थान माना जाता था। एक किंवदती क अनुसार नासिक का यह नाम पहाडियो के नवशिखरो या

शिखरो पर इस नगरी की स्थिति होने के कारण हुआ था। ये नौ शिखर हैं— जूनीगढी, नवी गढी, कोकनीटेक, जोगीवाडा टेक, म्हास टेक, महालक्ष्मी टेक, सुनार टेक गणपति टेक और चित्रघट टेक। मराठी की प्रचलित कहावत कि 'नासिक नव टेका वर वमाविले' अर्थात् नासिक नौ टेकरियो पर वसा है नासिक के नाम के बारे म इस किंवदती की पुष्टि करती है।

नासिक के निकट एक गुफा मे क्षहरात नरेश नहपान क जामाता उशवदात का एक महत्वपूण उत्कीणलेख प्राप्त हुआ है जिससे पश्चिमी भारत के द्वितीय शती ई० के इतिहास पर प्रकाश पडता है। यह अभिलेख शक सवत 42 120 ई० का है और इसमे बौद्ध भिक्षु सघ को एक गुहा विहार तथा उससे सवधित नारियल के कुज के दान म दिए जाने का उल्लेख है। नासिक का एक प्राचीन नाम गोवधन है, जिसका उल्लेख महावस्तु (सेनार्ट' पृ० 363) मे है। जन तीर्थों मे भी नासिक की गणना है। जैन स्तोत्र तीथमाला चैत्यवदन मे इस स्थान का कुतीविहार कहा गया है—'कुती पल्लविहार तारणगढे सोपारकारासणे–द० ऐंशेंट जन हिम्स, पृ० 28।

निबग्राम (जिला मथुरा, उ० प्र०)

गोवधन से पश्चिम की ओर $1\frac{1}{2}$ मील पर बरसाने की सडक पर स्थित है। कहा जाता है कि मध्यकालीन वैष्णव सत निबार्काचाय जो आध्रनिवासी थे, इसी ग्राम म रहने के कारण निबार्काचाय कहलाए। यहा के एक प्राचीन मदिर म आचाय की मूर्ति है। (किंतु दे० निंबा, निंबापुर) सभव है कि इस ग्राम का नाम पहले कुछ और रहा हो, आचाय क रहने के कारण ही यह निबाग्राम कहलाया।

निबतटक

जैन ग्रथ तीथमाला चैत्यवदन मे इसका उल्लेख है—'श्री तेजल्ल-विहार निबतटक चद्रे च दर्भावत'

निंबा=निंबापुर (जिला विलारी, मद्रास)

प्रसिद्ध दाक्षिणात्य दाशनिक निंबार्काचार्य का जन्म स्थान। डा० भडारकर के अनुसार निंबा ग्राम ही प्राचीन निंबापुर है। निंबार्काचाय की गणना भक्तिकाल के प्रसिद्ध सतो मे की जाती है। इन के अनुयायी मथुरा के निकट रहते हैं (दे० निबग्राम)

निष्कलक (जिला उज्जैन, म० प्र०)

उज्जन से 10 मील दूर इस ग्राम मे निष्कलक महादव का मदिर है जिसमे शकर की पचमुखी मूर्ति स्थित है।

निकाइया

अल्क्षेन्द्र (सिकदर) के इतिहास लेखको के अनुसार पोरस (पुरु) और यवन सम्राट के बीच होने वाले प्रसिद्ध युद्ध की घटना-स्थली का नाम है। इसकी स्थिति झेलम नदी के किनारे करीं नामक स्थान पर रही होगी (दे० करीं)।

निकूट दे० निष्कुट

निकोबार दे० नागद्वीप (1)

निगलीव (नेपाल)

यह स्थान रुमिनीदेई या प्राचीन लुबिनी से 13 मील उत्तर पश्चिम की ओर जिला बस्ती, उ० प्र० और नेपाल की सीमा के निकट स्थित है। यहा अशोक का एक शिलास्तभ प्राप्त हुआ था जिस पर उसने इस स्थान पर अवस्थित कोनगामन (या कनकमुनि बुद्ध जिसका उल्लेख चीनी यात्री फाह्यान ने किया है) नामक स्तूप का परिवर्धित करने तथा राज्यसवत 20 मे इस स्थान की यात्रा का वणन किया है। लुबिनी ग्राम की यात्रा भी अशोक ने इसी वष म की थी जैसा कि वहा स्थित स्तभ के लेख से प्रकट होता है।

निचुलपुर दे० त्रिचनापल्ली

निजामाबाद दे० इदूर

निधिवन=निधुवन (वृ दावन, जिला मथुरा, उ० प्र०)

वृ दावन का एक प्रसिद्ध स्थान जो श्रीकृष्ण की महारासस्थली माना जाता है। स्वामी हरिदास इसी वन म कुटी बनाकर रहते थे। हरिदास का जन्म 1512 ई० के लगभग हुआ था। इनका समाधि मदिर इसी घने कुज के अ दर बना है। कहा जाता है कि वृ दावन के बिहारी जी के प्रसिद्ध मदिर की मूर्ति हरिदास को निधिवन से ही प्राप्त हुई थी। किंवदती है कि हरिदास तानसेन के सगीत गुरु थे और मुगल सम्राट् अकबर ने तानसेन के साथ छद्मवेश म इस सत के दशन निधिवन मे ही किए थे।

निमाड दे० अनुप

निमुर्वा गढ़ (जिला नरसिंहपुर, म० प्र०)

गढमडल नरेश सग्राम सिह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढ़ो म निमुर्वा गढ़ की भी गणना थी। सग्रामसिंह महारानी दुर्गावती के श्वसुर थ।

निमल

(1) (महाराष्ट्र) वसीन के निकट एक गाव है। 1956 ई० म नव वष के प्रथम दिन इस स्थान पर अशोक के नवें प्रस्तर लेख की एक नकल पाई गई थी।

(2) (जिला आदिलाबाद, आध्र) यह मूलत वेल्मा लोगो के अधिकार मे था। 18वी शती के पश्चाध मे द्वितीय निजाम के सेनापति मिर्जा इब्राहीम बेग जफरुलद्दौला (उपनाम धौंसा) ने इस पर अधिकार कर लिया। यहा का दुग इसी अमीर ने बनवाया था। इसका निर्माता निजाम हैदराबाद की सेवा मे नियुक्त एक फासिसी इजीनियर था। अमीर की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्रा न बगावत कर दी और निजाम ने दुग पर अधिकार करके निमल को हैदराबाद रियासत म मिला लिया। 17वी शती की जामा मसजिद और इब्राहीम बाग यहा के ऐतिहासिक स्थान हैं।

निमला (जिला पीलीभीत, उ० प्र०)

देवल नामक स्थान पर प्राप्त कुटिलाभाषा के एक अभिलेख मे निमला नदी का उल्लेख है। (दे० देवल)। इस नदी का अभिज्ञान देवल के निकट बहने वाले कटनी नाले से किया गया है।

निर्माड (जिला कागडा, उ० प्र०)

इस स्थान स महासामत महाराज समुद्रसेन का ताम्र पट्ट प्राप्त हुआ था जो सभवत हर्ष सवत 6 का है। इसम समुद्रसेन द्वारा निमाड अग्रहार के अथवत्रेदपाठी ब्राह्मणा का सूलिस ग्राम के दिए जान का उल्लेख है।

निर्मोचन

महाभारत म निर्मोचन नामक नगर का कामरूप देश की राजधानी के रूप म वणन है। यहा के राजा भौम नरक को परास्त कर श्रीकृष्ण ने सोलह सहस्र कुमारियो को उसके बदीगृह से छुटकारा दिलवाया था। मुरदत्य का वध भी श्रीकृष्ण ने इसी स्थान पर किया था—'निर्मोचने षट्सहस्राणि हत्वा सच्छिद्य पाशान सहसा क्षुरातान पुरहत्वा विनिहत्यौघरक्षो निर्मोचन चापि जगाम वीर' उद्योग 48,83। निर्मोचन नगर शायद प्राग्ज्योतिष (=गोहाटी, असम) का नाम था क्योकि इसी प्रसग (उद्योग 48,807 मे प्राग्ज्योतिष के दुग का भी वणन है— 'प्राग्ज्योतिष नाम बभूव दुगम'। दे० प्राग्ज्योतिष कामरूप।

निर्विन्ध्या

मेघदूत (पूव मेघ, 30) म वर्णित एक नदी जिसका कालिदास न बहुत सुदर वणन किया है—वीचिक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकाचीगुणाया, ससपन्त्या स्खलितसुभग दर्शितावर्तनाभे निर्विन्ध्याया पथिभवरसाभ्यतर सन्निपत्य स्त्रीणामाद्य प्रणयवचन विभ्रमो हि प्रियपु'। यह नदी मेघ के यात्राक्रम म विदिशा और उज्जयिनी के माग मे वर्णित है तथा इसकी स्थिति कालिदास क अनुसार सिंधु नदी और उज्जयिनी के ठीक पूर्व मे बताई गई है। सभव है कालिदास ने

वर्तमान पावती नदी को ही निर्विन्ध्या कहा हा। पावती उज्जन से पूव, विंध्य श्रेणी से निसृत होकर चबल मे मिलती है। विदिशा और सिंधु (=कालीसिंध) के बीच कोई और उल्लेखनीय नदी नही जान पडती। श्रीमदभागवत 5,19,18 की नदी सूची मे भी निर्विध्या का नामोल्लेख है—'कृष्णावेण्या भीमरथी गोदावरी निर्विध्या पयोष्णी तापी रेवा ' विष्णु पुराण मे निर्विध्या को तापी (=ताप्ती) और पयोष्णी के साथ ही ऋक्ष (अमरकटक) से निगत बताया है—'तापीपयोष्णी निर्विध्या प्रमुखा ऋक्षसभवा ' विष्णु 2 3,31। कुछ विद्वानो ने निर्विन्ध्या का अभिज्ञान चबल की सहायक एक छोटी सी नदी नेवाज से किया है (दे० बी० सी० ला-हिस्टारिकल ज्याग्रेफी ऑव ऐंशेंट इडिया, पृ० 35) वायुपुराण 65,102 मे इस नदी को निर्विन्ध्या कहा गया है।

निवाई (राजस्थान)

प्राचीन राजपूत नरेशो की समाधि छतरिया इस स्थान पर है जो शिल्प के सुदर उदाहरण हैं।

निवृत्ति

(1) विष्णु पुराण 2,4,28 के अनुसार शाल्मलद्वीप की नदी—'योनिस्तोया वितृष्णा च चद्रामुक्ता विमोचनी, निवृत्ति सप्तमी तासा स्मृतास्ता पापशातिदा।

(2) पुड्र का पूर्वी भाग। गौड का भी एक नाम निवृत्ति था। (दे० न० ला० डे)

निश्चीरा

फल्गु (बिहार) की सहायक नदी लीलाजन जो महाना से मिलकर फल्गु की सयुक्त धारा बनाती है। अग्निपुराण 116, माकडेय पुराण 57 म निश्चीरा का उल्लेख है। यह बौद्धसाहित्य की नीराजना है।

निषद

विष्णुपुराण 2,2,27 के अनुसार मेरु के दक्षिण म स्थित एक पवत—'त्रिकूट शिशिरश्चैव पतगो रुचकस्तथा निषदाद्या दक्षिणतस्तस्य केसरपवता ' दे० निषध (2)। जैन ग्रथ जबूद्वीप प्रज्ञप्ति मे निषध (=निषद) की जबूद्वीप के छ वर्ष पवतो मे गणना की गई है।

निषध

(1) महाभारत मे निषध देश का, राजा नल द्वारा प्रशासित प्रदेश के रूप मे वणन है। नल के पिता वीरसेन का भी निषध का राजा बताया गया है—'निषधेषु महीपालो वीरसेन इति श्रुत तस्य पुत्रोऽभव नाम्ना नलो धमार-

कोविद ,'ब्रह्मण्योवेदविच्छूरो निषधेषु महीपति '—वन० 52,55,53 3। ग्वालियर के निकट नलपुर नामक स्थान को परपरा से राजा नल की राजधानी माना जाता है और निषधदेश को ग्वालियर के पार्श्ववर्ती प्रदेश म ही मानना उचित होगा। विष्णुपुराण 4,24,66 मे शायद निषध देश का नैषध कहा गया है—'नैषध नमिषक मणिधान्यकवशा भोक्ष्यन्ति'—इससे सूचित होता है कि सभवत पूव गुप्तकाल म नैषध या निषध पर मणिधान्यको का आधिपत्य था। निषधदेश का निषादो से सबध हो सकता है जो सभवत किसी अनार्यजाति के लोग थे (दे० निषाद)

(2) महाभारत के वणनानुसार हेमकूट पर्वत के उत्तर की ओर सहस्रों योजनो तक निषधपवत की श्रेणी पूव-पश्चिम समुद्र तक फैली हुई है—'हिमवान हेमकूटश्च निषधश्च नगोत्तम ' भीष्म० 6,4। श्री चि० वि० वैद्य का अनुमान है कि यह पवत वर्तमान अलताई पवत-श्रेणी का ही प्राचीन भारतीय नाम है। हेमकूट और निषध पवत के बीच के भाग का नाम हरिवष कहा गया है। महाभारत के वणन मे निषध पर नागजाति का निवास माना गया है—'सर्पा-नागाश्च निषधे गोकण च तपोवनम्' भीष्म० 6,51 विष्णु पुराण 22,10 मे भी शायद इसी पवत का उल्लेख है— हिमवान् हेमकूटश्च निषधश्चास्य दक्षिणे'—इसी को विष्णु 22,27 मे निषद भी कहा गया है।

निषाद दे० निषादभूमि

निषादभूमि=निषाद राष्ट्र

'निषादभूमि गोशृग पवतप्रवर तथा तरसैवाजायद् श्रीमान श्रेणिमत च पार्थिवम्' महा० वन० 31, 5 अर्थात सहदेव ने गोशृग को जीत कर राणा श्रेणिमान को शीघ्र ही हरा दिया। प्रसगानुसार निषादभूमि का मत्स्य देश के पश्चात् उल्लेख हुआ है जिससे निषादभूमि या निषाद प्रदेश उत्तरी राजस्थान के परिवर्ती प्रदेश को माना जा सकता है। निषाद (जो निषाद भूमि का पयाय हो सकता है) का महा० 3,130,4 मे भी उल्लेख है—'द्वार निषाद-राष्ट्रस्य येषा दोषात सरस्वती, प्रविष्टा पृथिवी वीर मा निषादा हि मा विदु ' (यह निषादराष्ट्र का द्वार है। वीर युधिष्ठिर, उन निषादो के ससग दोष से बचने के लिए सरस्वती नदी यहा पृथ्वी के भीतर प्रविष्ट हो गई है जिससे निषाद उसे न देख सकें)। इस उल्लेख से भी निषाद राष्ट्र की स्थिति राजस्थान के उत्तरी भाग मे सिद्ध होती है। यही महाभारत म उल्लिखित विनशन तीथ स्थित था। शक क्षत्रप रुद्रदामन के गिरनार अभिलेख (लगभग 120 ई०) म उसके राज्य-विस्तार के अतगत इस प्रदेश की गणना की गई है—'स्ववीर्या जितानामानुरक्तप्रकृतीना सुराष्ट्र श्वभ्रभरकच्छसिंधु सौवीर कुकुरापरात निषादादीनाम् '। प्रो० बुलर के मत मे निषाद-राष्ट्र की स्थिति दक्षिणी

पजाब के हिसार तथा भटनेर के इलाके मे थी। निषाद नामक विदेशी या अनार्य जाति के यहा बसने के कारण इस भूभाग को निषाद भूमि या निषाद राष्ट्र कहा जाता था।

निष्कुट

महाभारत मे अर्जुन की दिग्विजययात्रा के प्रसग म इस देश के जीते जाने का उल्लेख है—'स विनिर्जित्य सग्राम हिमवत सनिष्कुटम, श्वेतपर्वतमासाद्य न्यविशत पुरुषर्षभ' महा० सभा० 2,27,29। निष्कुट या निकूट हिमालय के उत्तर पश्चिमी भाग की पहाड़ियो का नाम जान पडता है जो धौलागिरि के सन्निकट प्रदेश म स्थित हैं।

नीचगिरि

मेघदूत (पूर्वमेघ 27) म वर्णित एक पहाडी—'नीचैराख्य गिरिमधिवसेस्तत्र विश्रामहेतोस्त्वत सपर्कात पुलकितमिवप्रौढ पुष्पै कदब, य पण्यस्त्री रतिपरिमलोद्गारिभिर्नागराणामुद्दामानि प्रथयति शिलावश्मभिर्यौवनानि' कालिदास ने नीचगिरि का उल्लेख विदिशा (दे० बेसनगर, भीलसा) के पश्चात किया है और सर जॉन मार्शल का अनुमान है कि शायद कालिदास ने वर्तमान साची के स्तूप की पहाडी को ही नीचगिरि माना है (दे० ए गाइड टू साची)। विदिशा के उत्कर्षकाल म साची की पहाडी पर अवश्य ही इस विलासवती नगरी का क्रीडोद्यान रहा होगा। साची विदिशा से चार पाच मील दूर है। महावश (आनद कौसल्यायन की टीका, पृ० 68) मे जिस पहाडी को दक्षिणगिरि कहा है वह नीचगिरि ही जान पडती है। 'नीच' और दक्षिण शब्द समानार्थक भी है। (दे० दक्षिण गिरि)

नीमसार=नमिषारण्य

नीरा (जिला पूना, महाराष्ट्र)

पूना से लगभग 40 मील दूर बहने वाली नदी। भोर नामक स्थान पर जो इसके तट पर है, कई प्राचीन मदिर स्थित है। नीरा, भीमा की सहायक नदी है और यह पद्मपुराण, स्वर्ग, आदि० 3 म उल्लिखित है।

नीलग (महाराष्ट्र)

चालुक्यवशीय नरेशो के समय मे विशिष्ट चालुक्य वास्तुशैली म बने हुए मदिरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

नील

(1) महाभारत के भूगोल के अनुसार (दे० सभा० 28) निषध पर्वत के उत्तर म मेरु पर्वत है। मेरु क उत्तर की ओर तीन श्रेणिया हैं—नील, श्वेत

और शृंगवान् जो पूर्व-पश्चिम समुद्र तक विस्तृत कही गई हैं। नील, श्वेत और शृंगवान् (या शृंगी) पर्वतों के उत्तर की ओर के प्रदेश को क्रमश: नीलवर्ष, श्वेतवर्ष और हैरण्यक या ऐरावत के नाम दिए गए हैं। सभा० 28 में नील को अर्जुन द्वारा विजित बताया गया है—'नील नाम गिरिं गत्वा तत्रस्थानजयत् प्रभु' 'ततो जिष्णुरतिक्रम्य पर्वतं नीलमायतम्'। नीलपर्वत को पार करने के पश्चात् अर्जुन रम्यक, हिरण्यक और उत्तरकुरु पहुंचे थे। जैनग्रंथ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति में नील की जंबूद्वीप के छः वर्षपर्वतों में गणना की गई है। विष्णुपुराण 2 2, 10 में भी नील का उल्लेख है—'नीलः श्वेतश्च शृंगी च उत्तरवर्षपर्वता:।' श्रीमदभागवत की पर्वतों की सूची में भी नील का नाम है—'रैवतक ककुभो नीलो गोकामुख इंद्रकील'।

(2) महाभारत अनुशासन० 25,13 में तीर्थों के प्रसंग में नील की पहाड़ी का तीर्थरूप में वर्णन है। यह हरद्वार के पास एक गिरिशिखर है जो शिव के नील नामक गण का तपस्या स्थल माना जाता है। गंगा की 'नीलधारा' इसी पर्वत के निकट से बहती है—'गंगाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपर्वते तथा कनखले स्नात्वा धूतपाप्मा दिवं व्रजेत्'—महा० अनुशासन० 25,13।

नीलगिरि (उड़ीसा)

(1) जैन संप्रदाय से संबंधित ये गुफाएं भुवनेश्वर से चार पांच मील पर स्थित हैं। इनका निर्माणकाल तीसरी शती ई० पू० माना गया है। गुफाओं के पास घना वन्य प्रदेश है। नीलगिरि, खंडगिरि और उदयगिरि नामक गुहा समूह में 66 गुफाएं हैं जो दो पहाड़ियों पर स्थित हैं।

(2) दे० नलगोंडा

(3) सुदूर दक्षिण की प्रसिद्ध पर्वत श्रेणी। प्राचीन काल में यह श्रेणी मलयपर्वत में सम्मिलित थी। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि महाभारत, वन० 254,15 ('स केरलं रणे चैव नीलं चापि महीपतिम्') में कर्ण की दिग्विजय के प्रसंग में केरल तथा तत्पश्चात् नील नरेश के विजित होने का जो उल्लेख है उससे इस राजा का नील पर्वत के प्रदेश में होना सूचित होता है।

(4) गोहाटी (असम) के निकट कामाख्या देवी के मंदिर की पहाड़ी जिसे नीलगिरि या नीलपर्वत कहते हैं।

(5)=नील (1) तथा (2)

नीलपर्वत

(1)=नील (1) तथा (2)

(2)=नीलगिरि (4)

नीलपल्ली (ज़िला गोदावरी, आ० प्र०)

यनम के निकट समुद्रतट पर स्थित प्राचीन स्थान है (द० गज़टियर आव गोदावरी डिस्ट्रिक्ट, जिल्द 1, पृ० 213)

नीलांजना

यह नदी गया के निकट बहने वाली नदी फल्गु की सहायक है और फल्गु मे, गया स तीन मील दूर मिलती है। नीलाजना बौद्ध साहित्य का प्रसिद्ध नैरजना है। (द० नैरजना)

नीलाचल=नीलगिरि (1) तथा (3)

नोली

प्रसिद्ध चीनी यात्री फाह्यान (चौथी शती ई०) के यात्रावृत्त के अनुसार नोली नामक नगर का निर्माण मौय सम्राट् अशोक ने करवाया था। विसॅट स्मिथ के अनुसार यह नगर वतमान पटना (बिहार) के उपनगर कुम्हरार के निकट ही बसा होगा (दे० अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया, पृ० 128)

नूनखार (उ० प्र०)

उत्तरपूव रेलवे के नूनखार स्टेशन से तीन मील दक्षिण पश्चिम की ओर लगभग तीस ढूह हैं जो हिंदू नरेशो के समय के जान पडते हैं। खडहरो म एक जैन मदिर भी है।

नूपुरगगा (दे० वृषभाद्रि)

नूरपुर (ज़िला कागडा, हि० प्र०)

राजपूतकालीन एक सुदृढ दुर्ग यहा का उल्लेखनीय स्मारक है। चित्रकला की प्रसिद्ध कागडा शैली (जो 18वी शती मे अपने विकास पर थी) का नूरपुर तथा गुलेर म ज म हुआ था। बसौली के राजा कृपालसिंह की मृत्यु के पश्चात उनके दरबार के चित्रकार जम्मू, रामनगर, नूरपुर तथा गुलेर म जाकर बस गए थे। यहा आकर उन्होने बसौली की परपरा को जीवित रखा और उसके ककश स्वरूप का बदल कर उसमे कोमलता की पुट दी जिससे कागडा की शैली का सूत्रपात हुआ।

नेगापटम्=नागपट्टन

नेत्रावती=नेत्रावली

मैसूर और केरल की एक नदी। यह श्रृंगेरी से 9 मील दूर वराह पवत या श्रृगगिरि नामक पहाड से निकलकर मगलोर की ओर बहती हुई पश्चिम समुद्र म गिरती है। दक्षिण का विख्यात तीथ धमस्थल नेत्रावती या नेत्रावली के तट पर, मगलोर से 45 मील दूर है।

नेपाल

महाभारत वन० 254,7 मे नेपाल का उल्लेख कर्ण की दिग्विजय के सबध मे है। 'नेपाल विषये ये च राजानस्तानवाजयत्, अवतीय तथा शैलात् पूर्वां दिशम-भिद्रुत' अर्थात नेपाल देश में जो राजा थे उन्हे जीत कर वह हिमालय पवत से नीचे उतर आया और फिर पूव की ओर अग्रसर हुआ। इसके बाद कण की अग वग आदि पर विजय का वणन है। इससे ज्ञात होता ह कि प्राचीन काल म भौगोलिक एव सास्कृतिक दृष्टियो से नेपाल का भारत का ही एक अग समझा जाता था। नेपाल नाम भा महाभारत के समय मे प्रचलित था। नेपाल मे बहुत समय तक अनाय जातियो का राज्य रहा। मध्ययुग मे राजनैतिक सत्ता मेवाड (राजस्थान) के राज्यवश की एक शाखा के हाथ मे आ गई। राजपूतो की यह शाखा मेवाड से, मुसलमानो के आक्रमणो से बचने के लिए नेपाल म आकर बस गई थी। इसी क्षत्रियवश का राज्य आज तक नेपाल म चला आ रहा है। नेपाल के अनेक स्थान प्राचीन काल से अब तक हिंदू तथा बौद्धो के पुण्यतीथ रहे है। लुबिनी, पशुपतिनाथ आदि स्थान भारतवासियो के लिए भी उतने ही पवित्र हैं जितने नेपालियो के लिए। (दे० कठमडू, ललितपाटन, देवपाटन, लुबिनी, पशुपतिनाथ आदि)

नेमावार (जिला इदौर, म० प्र०)

11वी शती मे अरब पयटक अलबेरूनी ने इस स्थान को भारत के उत्तर-दक्षिण के व्यापार-माग पर स्थित बताया है। इस ग्राम मे सिद्धेश्वर महादेव का प्रसिद्ध मदिर है जा नर्मदा के उत्तरी तट पर रमणीक दृश्यो के बीच स्थित है। मदिर का सुदर शिखर भीलसा जिले मे स्थित उदयपुर के नीलकठेश्वर मदिर की ही भाति है। यह मदिर मध्यकालीन वास्तुकला का श्रेष्ठ उदाहरण है।

नरोना (कच्छ, गुजरात)

भूज से 20 मील उत्तरपश्चिम म स्थित है। प्राचीन काल मे यह नगर एक बदरगाह था जिसके चिह्न अब भी मिलत हैं (द० ट्रेवल्स इन्टू बोखारा 1835, जिल्द 1, अध्याय 17) अरबो के भारत पर आक्रमण के समय तथा उससे पहले यह बदरगाह अच्छी दशा में रहा होगा।

नेवाज द० निर्विध्या (नदी)

नेवास (जिला अहमदनगर, महाराष्ट्र)

प्रवरा नदी के दक्षिणी तट पर स्थित एक छोटा सा क़स्बा है। यह प्राचीन श्रीनिवास क्षेत्र है। नवासा श्रीनिवास का ही अपभ्रश है। 1954-55 में पूना

विश्वविद्यालय की ओर से किए गए उत्खनन म यहा तीन सहस्र वप प्राचीन सभ्यता के अवशेष प्राप्त हुए हैं। रोम और भारत के व्यापारिक सबधा के बारे मे, उत्खनन द्वारा प्राप्त सामग्री से काफी जानकारी हुई है। सत ज्ञानेश्वर ने गीता पर अपनी प्रसिद्ध टीका ज्ञानेश्वरी का श्रीगणेश नेवासा म ही किया था। उन्होने जिन शिलाओ पर ज्ञानेश्वरी को अकित करवाया था वे आज भी वहा हैं।

नकोरा (म० प्र०)

दतिया से 12 मील पश्चिम की ओर महुअर नदी के तट पर यह ग्राम बसा हुआ है। एक ऊचे टीले स एक जलधारा निस्सृत होकर नीचे गिरती है जिसे पवित्र समझा जाता है। स्थानीय किंवदती मे नकोरा को सस्कृत के प्रसिद्ध महाकवि भवभूति का ज म स्थान माना जाता है किंतु जैसा सवविदित है भवभूति पदमपुर के निवासी थ। (दे० पदमपुर)

नैनागिरि (बुदेलखड, म० प्र०)

इस स्थान पर मध्ययुगीन बुदेलखड की सस्कृति के परिचायक तथा तत्कालीन वास्तु तथा शिल्प के स्मारक खडहरो के रूप मे है जिनके उत्खनन से बहुत महत्वपूण पुरातत्व-सबधी सामग्री प्राप्त हो सकती है।

नैनीताल (उ० प्र०)

स्कदपुराण मे नैनीताल का नाम त्रिऋषिसरोवर मिलता है जिसका अत्रि, पुलह और पुलस्त्य ऋषिया से सबध बताया गया है। इस पौराणिक किंवदती के अनुसार इन ऋषिया ने यहा सरोवर के तट पर तप किया था। नैनीताल का नाम इसी सरोवर या नैनी झील के तट पर स्थित नैनादेवी के प्राचीन मदिर के कारण हुआ है। 1841 ई० मे दो अग्रेज शिकारिया ने इस स्थान की खोज की थी। प्रकृति की यह मनोरम स्थली 'गागर' की पहाडियो से घिरी है जो पूव से पश्चिम की ओर फैली हुई है। उत्तर की ओर चीना शिखर (ऊचाई समुद्रतट से 8568 फुट), पूव की ओर आलमा तथा शेर का ददा नामक शिखर, पश्चिम मे एक ढलवा 8000 फुट ऊची पहाडी और दक्षिण म आयारपथ नामक 7800 फुट ऊचा गिरिश्रृग—ये पहाडिया नैनीताल की चतुर्दिक-सीमा की प्रहरी हैं। स्कदपुराण की उपर्युक्त कथा के अनुसार तीनो देवर्षि घूमते हुए यहा पहुचे थे किंतु उन्हे इस स्थान पर बसने म, पानी न होने के कारण कठिनाई जान पडी। अत उन्होने वहा एक बडा सरोवर खुदवाया जो फौरन ही जलपूण हो गया। इस कथा स यह सूचित होता है कि सभवत नैनीताल की झील कृत्रिम रूप से बनाई गई थी। इस कथा के

यह भी ज्ञात होता है कि नैनीताल के स्थान का प्राचीन काल से ही भारतीयों को पता था। सरोवर के किनारे ही नैनादेवी का प्राचीन मंदिर था, जो संभवतः इस क्षेत्र के पहाड़ी जाति के लोगों की अधिष्ठात्री देवी थी। उत्तरी भारत के मूल पर्वतवासियों की तरह नैनीताल के मूलनिवासी भी देवी के पुजारी थे। नैनादेवी कल्याणस्वरूपा देवी मानी जाती है। इसके विपरीत यहां के लोक-विश्वास के अनुसार नैनीताल की दूसरी देवी चंडी अथवा पाषाण देवी का रूप अमांगलिक समझा जाता है। नैनीताल की झील में प्रायः प्रतिवर्ष होने वाली घटनाओं का कारण इसी देवी का प्रकोप माना जाता है।

नमिष=नमिषारण्य

नमिषक=नमिषारण्य

विष्णुपुराण 4,24 66 में वर्णित है—'नैषधनमिषक मणिधान्यकवंशा भोक्ष्यन्ति'। इस उल्लेख से सूचित होता है कि संभवतः गुप्तकाल से पूर्व नैमिषारण्य में मणिधान्यकों का आधिपत्य था। (दे० नैमिषारण्य)

नमिषारण्य (ज़िला सीतापुर, उ० प्र०)=नीमसार

पुराणों तथा महाभारत में वर्णित नैमिषारण्य वह पुण्यस्थान है जहां 88 सहस्र ऋषीश्वरों को वेदव्यास के शिष्य सूत ने महाभारत तथा पुराणों की कथाएं सुनाई थीं—'लोमहर्षणपुत्र उग्रश्रवा सौति पौराणिको नैमिषारण्ये शौनकस्य कुलपतेर्द्वादशवार्षिके सत्रे, सुखासीनानभ्यगच्छद् ब्रह्मर्षीन् संशितव्रतान् विनयावनतो भूत्वा कदाचित् सूतनंदन। तमाश्रममनुप्राप्तं नैमिषारण्यवासिनाम्, चित्राः श्रोतुं कथास्तत्र परिवव्रुस्तपस्विनः' महा० आदि० 1,1-2 3। नमिष नाम की व्युत्पत्ति के विषय में वराहपुराण में यह निर्देश है—'एवंकृत्वा ततो देवो मुनिं गौरमुखं तदा, उवाच निमिषेणेदं निहतं दानवं बलम्। अरण्येऽस्मिंस्ततस्त्वेतन्नैमिषारण्य संज्ञितम्'—अर्थात् ऐसा करके उस समय भगवान् ने गौरमुख मुनि से कहा कि मैंने एक निमिष में ही इस दानवसेना का संहार किया है इसलिए (भविष्य में) इस अरण्य को लोग नैमिषारण्य कहेंगे। वाल्मीकि० उत्तर० 19,15 से ज्ञात होता है कि यह पवित्र स्थली गोमती नदी के तट पर स्थित थी जैसा कि आज भी है—'यज्ञवाटश्च सुमहान्गोमत्यानमिषेवन'। 'ततो भ्यगच्छत काकुत्स्थः सह सैन्येन नैमिषम्' (उत्तर 92,2) में श्रीराम का अश्वमेध-यज्ञ के लिए नमिषारण्य जाने का उल्लेख है। रघुवंश 19,1 में भी नमिष का वर्णन है—'शिश्रिये श्रुतवतामपश्चिमः पश्चिमे वयसि नैमिषं वशी'—जिससे अयोध्या के नरेशों का वृद्धावस्था में नैमिषारण्य जाकर वानप्रस्थाश्रम में प्रविष्ट होने की परंपरा का पता चलता है।

नैरजना (बिहार)

गया के पास बहने वाली फल्गुनदी की सहायक उपनदी जिसे अब नीलाजना कहते हैं। यह गया से दक्षिण म 3 मील पर महाना अथवा फल्गु मे मिलती है। (गया के पूर्व म गगकूट पहाडी है, इस के दक्षिण म जाकर फल्गु का नाम महाना हो जाता है)। नैरजना बौद्ध साहित्य की प्रसिद्ध नदी है। इसी के तट पर भगवान बुद्ध को बुद्धत्व प्राप्ति हुई थी। अश्वघोष-रचित बुद्धचरित्र म नरजना का उल्लेख है—'ततो हिरण्याश्रम तस्य श्रेयोऽर्थी कृतनिश्चय, भेजे गयस्य राजर्षे नगरी सशामाश्रमम्। अथ नरजनातीरे शुचौ शुचिपराक्रम, चकार वासमकात विहाराभिरतिमुनि' बुद्धचरित० 12,89 90 अर्थात तब श्रेय पाने की इच्छा से गौतम ने (उद्रक मुनि का) आश्रम छाडकर राजर्षिगय की नगरी से आश्रम का सेवन किया और पवित्र पराक्रमवान एकातविहार म आनद प्राप्त करने वाले उस मुनि ने, नैरजना नदी के पवित्र तीर पर निवास किया। इस उद्धरण से नैरजना का वर्तमान नैलजना से अभिज्ञान स्पष्ट हो जाता है।

नैषध (द० निषध)

नोहखेडा (जिला एटा, उ० प्र०)

एटा से लगभग 20 मील दक्षिण मे यहा गुप्त एव मध्यकालीन खडहर एक विशाल ढूह के रूप म पडे हुए हैं। इनम एक महत्वपूण नारी मूर्ति मिली है जिसे स्थानीय लोग रुक्मिणी कहते हैं। यह मूर्ति शीषविहीन है। अनुश्रुति के अनुसार इस स्थान के समीप महाभारतकालीन कुडलपुर या कुडिनपुर नामक नगर बसा हुआ था जिसका सबध राजा भीष्मक की कन्या रुक्मिणी की मनोरजक कथा से बताया जाता है। किंतु यह विचार ठीक नहीं जान पडता क्योकि रुक्मिणी के पिता की राजधानी कुडिनपुर (विदभ या बरार) मे थी। नोहखेडे से तीन मील दूर नरौली मे प्राचीन हिंदू मदिरो के अनेक अवशेष मिले हैं।

नौनद देहरा दे० नदेड

नौप्रभ्रशन

हिमालय का एक श्रृग जिसे महाभारत म नौ बधन कहा गया है। यह शत पथ ब्राह्मण म वर्णित मनोरवसपण है जहा मनु ने महाप्रलय के समय अपनी नाव बाध कर शरण पाई थी। महाप्रलय की कथा तथा मानवजाति के आदि पुरुष का उसमे जीवित रह जाना अनेक प्राचीन जातियो की पुरातन ऐतिहासिक परपरा म वर्णित है। बाइबिल मे नोहा या हजरत नूह की कथा मनु की कथा का ही एक दूसरा सस्करण मालूम होता है। भौमिकी विशारदो के मत म

वतमान हिमालय के स्थान पर अति प्राचीन युग मे समुद्र लहराता था। इस तथ्य से भी मनु की कथा की पुष्टि होती है। जान पडता है मानवजाति के इतिहास के उष काल मे सचमुच ही महाप्रलय की घटना घटी होगी और उसी की स्मृति ससार की अनेक प्राचीनतम सभ्य जातियो की पुरातन परपराओ म सुरक्षित चली आ रही है।

नौबधन दे० नौप्रभ्रशन

यकु (सौराष्ट्र गुजरात)

काठियावाड के सोरठ नामक भाग की नदी जो गिरनार पवत—प्राचीन रैवतक से निकल कर पश्चिम समुद्र मे गिरती है।

यग्राधवन

युवानच्वाग द्वारा उल्लिखित स्थान जो सभवत बौद्ध साहित्य का पिप्पलिवाहन है (वाटस, जिल्द 2, पृ० 23 24)। द० पिप्पलिवाहन

न्यासा (प० पाकि०)

अलक्षेंद्र (सिकदर) के भारत पर आक्रमण के समय (327 ई० पू०) वतमान जलालाबाद के निकट यह नगर स्थित था। यहा गणतत्र शासन पद्धति प्रचलित थी।

पगरी (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

इस स्थान से नव पाषाण कालीन पाषाण-उपकरण प्राप्त हुए है।

पगल=पूगलगढ (राजस्थान)

ढोलामारू लोककथा की नायिका मरवण पूगलगढ की राजकुमारी थी। इस नगर को एक प्राचीन राजस्थानी लोक गीत म पगल भी कहा गया है—'पगिपगि पाणी पथ सिर, ऊपरि अबर छाह, पावस प्रकटऊ पधिणि कह उत पगल जाह'।

पचकपट

'तान दशार्णान स जित्वा च प्रतस्थे पाडुनदन, शिवी स्त्रिगर्तानम्बष्ठान् माल्वान् पचकपटान' महा० सभा० 32,7। नकुल न अपनी दिग्विजययात्रा मे पचकपट देश को जीता था जो प्रसगानुसार माल्वा (म० प्र०) के सनिकट स्थित जान पडता है। सभा० 32, 8 म माध्यमिका पर नकुल की विजय का वणन है जो चित्तौड के पास थी। पचकपट की स्थिति इस प्रकार मेवाड और मालवा के बीच के प्रदेश मे जान पडती है। मालवा यहा रावी और चिनाव के सगम पर स्थित प्रदेश भी हो सकता है और इस दशा

मे पचकर्पट को दक्षिणी पजाब मे स्थित मानना पडेगा।

पचगगा

दक्षिण महाराष्ट्र की नदी जो पाच उपनदियो से मिल कर बनी है। यह कृष्णा की सहायक नदी है। पाच उपनदिया य हैं—कामारी, कुभी, तुलसी, भोगवती और सरस्वती। पचगगा और कृष्णा के सगम पर प्राचीन अमरपुर या नृसिंहवाडी (जिला कोल्हापुर) स्थित है।

पचगण

अर्जुन की दिग्विजय यात्रा के सबध मे महाभारत सभा० 27, 12 में इस देश का उल्लेख किया गया है—'तत्रस्थ पुरुषैरेव धमराजस्य शासनात किरीटी जितवान् राजन् देशान् पचगणास्तत'। सदभ से सूचित होता है कि यह देश, जो गणराज्य जान पडता है वतमान हिमाचल प्रदेश मे स्थित होगा क्योकि इसस पहले तथा इसके बाद मे जिन देशो का उल्लेख इसी सदभ मे है उनका अभिज्ञान हिमाचल प्रदेश के स्थानो से किया गया है (दे० मोदापुर, वामदेव, सुदामा, देवप्रस्थ)। सभव है किन्ही पाच गणराज्यो का सामूहिक नाम ही पचगण हो।

पचगौड

बगाल की मध्ययुगीन परपरा मे (12वी शती ई० तथा तत्पश्चात्) उत्तरी भारत या आर्यावर्त के पाच मुख्य प्रदेशो को पचगौड या पचभारत नाम से अभिहित किया जाता था। ये प्रदेश थे—सारस्वत या पजाब (सरस्वती नदी का तटवर्ती प्रदेश), पचाल या कान्यकुब्ज (कन्नौज), गौड या बगाल, मिथिला या दरभगा (बिहार) और उत्कल या उडीसा। इन पाचो प्रदेशो की सस्कृति मे बहुत कुछ समानता बताई जाती थी। इनमे परस्पर विचारो के आदान प्रदान के फलस्वरूप ही बगाल के प्राचीन काव्य को सामूहिक रूप स पाचाली (अर्थात् कान्यकुब्ज देश से सबधित) कहा जाता था और पजाब के शाकसवत का प्रचार बगाल मे हुआ। यह भी पुरानी अनुश्रुति है कि कान्यकुब्ज (पचाल) से बुलाए हुए विद्वान् ब्राह्मण और कायस्थ गौड गए थे जहा जाकर उन्होने बगाल की सस्कृति को आयदेश की सस्कृति से अनुप्राणित किया और वतमान बगाल के कुलीन ब्राह्मण तथा कायस्थ इन्ही कान्यकुब्ज ब्राह्मणो की सतान माने जाते हैं (दे० दिनेश चद्र सेन हिस्ट्री ऑव बगाली लिटरेचर)। इसी प्रकार मिथिला के न्यायदशन का पठन-पाठन नवद्वीप या नदिया (बगाल) म पहुच कर फूला-फला और उडीसा से तो बगाल का सदा स अभिन्न सबध रहा ही है।

पचद्रविड

द्रविड, कर्नाटक, गुजरात, महाराष्ट्र एव तेलगाना या आध्र का सामूहिक नाम।

पचनगरी (बगाल)

उत्तरी बगाल मे स्थित इस विषय का नाम गुप्त अभिलेखा म हैं। एपिग्राफिका इडिका 21,81 मे पचनगरी के विषयपति का नाम कुलवृद्धि कहा गया है।

पचनद

पजाब का प्राचीन नाम जो यहा की झेलम, चिनाब, रावी, सतलज और बियास नदियो के कारण हुआ था। महाभारत म पचनद का नामोल्लेख है—'कृत्स्न पचनद चैव तथैवामरपवतम, उत्तरज्योतिष चव तथा दिव्यकट पुरम्,' सभा० 32,11। इसे नकुल ने अपनी दिग्विजय यात्रा मे जीता था— तत पचनद गत्वा नियता नियताशन'। महा० वन० 83,16 से पचनद की तीथ रूप म भी मान्यता सिद्ध होती है। पचनद अग्निपुराण, 109 मे भी उल्लिखित है। विष्णुपुराण 38,12 मे श्रीकृष्ण के स्वर्गारोहण के पश्चात और द्वारका के समुद्र म बह जाने पर अर्जुन द्वारा द्वारकावासियो को पचनद प्रदेश म बसाए जाने का उल्लेख है—'पार्थ पचनदे दशे बहुधान्यधनान्वित, चक्रारवास सवस्य जनस्य मुनिसत्तम'। यहा पजाब को धनधान्य समन्वित देश बताया गया है जो इस प्रदेश की आज भी विशेषता है।

पचपुर (दे० पिंजार)

पचप्रयाग

गढवाल के पाच प्रयाग या नदियो के सगम स्थल— दवप्रयाग, रुद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग, नदप्रयाग और विष्णुप्रयाग। गढवाल मे नदियो के सगम पर बसे स्थानो को गगा यमुना के सगम पर बसे प्रसिद्ध प्रयाग की अनुकृति पर प्रयाग कहा जाता है।

पचभारत=पचगौड

पचमढ़ी (म० प्र०)

सतपुडा पवतमाला म समुद्रतट से 3500 फुट से लेकर 4000 फुट तक की ऊचाई पर बसा पहाडी स्थान। इसका नाम पाच मढ़ियों या प्राचीन गुफाओ के कारण है जो किवदती के अनुसार महाभारतकालीन हैं। कहा जाता है कि अपने एक वष के अज्ञातवास के समय पाडव इन गुफाओ म रहे थ। कुछ विद्वानो का मत है कि य गुफाए वास्तव मे बौद्धभिक्षुओ के रहने के लिए बनवाई गइ थी। आधुनिक काल मे पचमढी की खोज 1862 ई० म कप्तन फारसाइथ ने की थी। इन्होने 'हाइलैंडस ऑव सेंट्रल इडिया' नामक ग्रथ भी लिखा था। इन्ह मध्यप्रात के चीफ कमिश्नर सर रिचड टम्पल न सतपुडा की पहाडियो के

इस भाग म अन्वेषण के लिए विशेष रूप से भेजा था। पचमढी म लगभग सौ वष पहले गोंड और कोरकू नामक आदिवासियो का निवास यहा की अनेक चट्टाना पर आदिम निवासिया के लेख पाए गए हैं। उनके भी शिलाओ पर उत्कीण हैं जिनके विषय मुख्यत य हैं—गाय, बल हाथी, माला, रथ रणभूमि के दृश्य तथा शिकार। गोंडो के इतिहास के ज्ञा का कथन है कि गोंडो मे प्रचलित किवदती म उनके जिस मूलस्थान क कोपालोहागढ का उल्लेख है वह पचमढी का बडा महादव और चौराग है। चौरागढ आज भी गोडो का प्रसिद्ध देवस्थान है। यहा के दवाल शिव की मूर्ति है जिस पर भक्त लाग त्रिशूल चढाते हैं। बेतवा (वेत्रवती) का उदगम पचमढी क निकट स्थित धूपगढ शिखर स हुआ है, जिसकी उ समुद्रतट म 4454 फुट है।

पचमी

अफगानिस्तान की पजशीरा नदी। इसका उल्लेख महाभारत भीष्मप है।

पचवटी (जिला नासिक, महाराष्ट्र)

नासिक क निकट प्रसिद्ध स्थान है। यहा श्रीरामचद्र जी, लक्ष्मण सीता सहित अपने वनवास काल मे काफी दिन तक रहे थे तथा यहा राव सीता का हरण किया था। मारीच का वध इसी स्थान क निकट (दे० मृग- वश्वर) हुआ था। गध्रराज जटायु से श्रीराम की मत्री यही हुई थी। पच के नामकरण का कारण पचवटो की उपस्थिति कही जाती है,—'पचाना वट समाहार इति पचवटी'। पचवट ये है —अश्वत्थ, आमलक, वट, बिल्व अशोक। वाल्मीकि रामायण अरण्य० 15 मे पचवटी का मनोहर वणन जिसका एक अश इस प्रकार है—'अय पचवटीदेश सौम्य पुष्पितकानन ख्यातमगस्त्येन मुनिना भावितात्मना। इय गोदावरी रम्या पुष्पितस्तरुभिवृ हसकारडवाकीर्णा चक्रवाकोपशोभिता। नाति दूरे न चासन्ने मृग यूथ निपीडित मयूरनादित रम्या प्राशवो बहुकदरा, दृश्यते गिरय सौम्या पुल्लस्त भिरावृता। सौवर्णे राजतैस्ताम्रैर्देशेदेशे तथा शुभै गवाक्षिता इव भा गजा परमभक्तिभि' अरण्य० 15,2 12 13-14 15। उपयुक्त उद्धरणो स न होता है कि पचवटी गोदावरी के तट पर स्थित थी। कालिदास ने रघुवश कई स्थाना पर पचवटी का वणन किया है— आन दयत्यु मुखकृष्णसारा दृष्ट चिरात पचवटी मनो मे —13,34। 'पचवटया ततोराम शासनात कुभजम अनगोदास्थितिस्तस्थौ विध्यादिप्रकृताविव —12,31 (इस श्लोक म वाल्मीकि

अरण्य० 15,12 के समान ही, अगस्त्य ऋषि की आज्ञानुसार श्रीराम का पचवटी मे जाकर रहना कहा गया है) । रघुवश 13,35 मे पचवटी को गोदावरी के तट पर बताया गया है—'अत्रानुगाद मृगया निवृत्तस्तरगवातेन विनीतखेद रहस्त्व-दुत्सग निषण्णमूर्धा स्मरामि वानीरगहेषु सुप्त '। भवभूति ने उत्तररामचरित, द्वितीय अक मे पचवटी का, श्रीराम द्वारा, उनकी पूर्वस्मति-जनित उद्वेग के कारण करुणाजनक वणन करवाया है—'अत्रैव सा पचवटी यत्र चिरनिवासन विविधविस्रम्भातिप्रसगसाक्षिण प्रदेशा प्रियाया प्रियसखी च वासती नाम वन देवता, 'यस्या ते दिवसास्तया सह मयानीता यथा स्वेगृह, यत्सबध कथा-भिरेव सतत दीर्घाभिरास्थीयत । एक सप्रतिनाशित प्रियतमस्तामेव राम कथ, पाप पचवटी विलोकयतु वा गच्छत्व सभाव्य वा' 2,28 । अध्यातम रामायण अरण्य० 3 48 मे पचवटी को गौतमी (=गोदावरी) के तट पर स्थित बताया है—'अस्ति पचवटी नाम्ना आश्रमो गौतमीतटे' । यह स्थान अगस्त्य के आश्रम से दो योजन पर बताया गया है—'इतो योजनयुग्मे तु पुण्यकाननमडित '। वाल्मीकि और कालीदास के समान ही अध्यात्मरामायण मे भी पचवटी को अगस्त्य ने श्रीराम के रहन के लिए उपयुक्त बताया था (अरण्य० 3,48) । तुलसीदास न रामचरितमानस के अरण्यकाड मे अगस्त्य द्वारा ही श्रीराम को पचवटी भिजवाया है—'है प्रभु परम मनोहर ठाऊ, पावन पचवटी तेहि नाऊ । दडक वन पुनीत प्रभु करहू, उग्रशाप मुनिवर के हरहू । चले राम मुनि आयुस पाई, तुरतहि पचवटी नियराई । गृध्रराज सो भेट भई बहुविधि प्रीति दृढाय, गोदावरी समीप प्रभु रह पणगृह छाय' । पचवटी जनस्थान या दडक वन मे स्थित थी । पचवटी या नासिक से गोदावरी का उद्गम स्थान त्र्यबकेश्वर लगभग बीस मील दूर है ।

पचशैलपुर

प्राचीन जन साहित्य मे राजगृह (बिहार) का एक नाम । नामकरण का कारण राजगृह के चतुर्दिक पाच पहाडियो की उपस्थिति है जिन्हें आज भी पचपहाडी कहा जाता है।

पचसर (जिला महसाना, गुजरात)

कच्छ की रन के निकट प्राचीन नगर । 10वी शती मे चावडावश के नरेश जयकृष्ण की राजधानी यहा थी । इसके पुत्र वनराज ने पचसर को छोडकर पाटन मे अपनी राजधानी बनाई थी । हाल ही म पूर्वसोलकीकालीन एक मदिर के अवशेष यहा से उत्खनन द्वारा प्रकाश म लाए गए हैं । यह दसवी शती मे बना था । (दे० अ हलवाडा) ।

पचानन

राजगृह (बिहार) के निकट प्रवाहित होने वाली नदी।

पचाप्सरस्

पचाप्सरस् का उल्लेख मड (या मद) कर्णि मुनि के आश्रम के रूप में वाल्मीकि ने किया है—'तत कर्तुंतपोविघ्न सर्वदेवनियोजिता प्रधानाप्सरस पचविद्युच्चलितवर्चस , इद पचाप्सरो नाम तडाग सार्वकालिक निर्मितत्तस्या तेन मुनिना मदिकर्णिना' । कालिदास ने रघुवंश, 13,38 मे पचाप्सरस सरोवर के पास शातकर्णि मुनि का आश्रम माना है—'एतन मुने मानिनिशातकर्ण पचाप्सरो नाम विहारिवारि, आभाति पयतवन विदूरामेघातरालक्ष्य मिवेंदु बिंबम्' । स्थानीय किंवदंती मे मैसूर राज्य मे स्थित गगावती या गगाली का अभिज्ञान पचाप्सरस् से किया जाता है । यहा पाच नदियो का सगम है।

पचाल=पाचाल

उत्तरप्रदेश के बरेली, बदायू और फर्रुखाबाद जिलो से परिवृत प्रदेश का प्राचीन नाम । कनिघम के अनुसार वतमान रुहेलखड उत्तरपचाल और दोआबा दक्षिण पचाल था । सहितापनिषद ब्राह्मण म पचाल के प्राच्य पचाल भाग (पूर्वी भाग) का भी उल्लेख है । शतपथ ब्राह्मण 13,5 4,7 मे पचाल की परिवक्रा या परिचक्रा नामक नगरी का उल्लेख है जो वेबर के अनुसार महाभारत की एकचक्रा है । श्री रायचौधरी का मत है कि पचाल पाच प्राचीन कुलो का सामूहिक नाम था । वे ये थे—'क्रिवि, केशी, सृजय, तुवसस और सामक । ब्रह्मपुराण 13,94 तथा मत्स्यपुराण 50,3 मे इन्हे मुद्गल सृजय, बृहदिषु यवीनर और कृमीलाश्व कहा गया है। पचालो और कुरुजनपदो म परस्पर लडाई झगडे चलते रहते थे । महाभारत के आदिपर्व से ज्ञात होता है कि पाडवो के गुरु द्रोणाचार्य ने अर्जुन की सहायता से पचालराज द्रुपद को हराकर उसके पास केवल दक्षिण पचाल (जिसकी राजधानी काम्पिल्य थी) रहने दिया और उत्तर पचाल को हस्तगत कर लिया था—'अत प्रयतित राज्य यज्ञसेन त्वया सह, राजासि दक्षिण कूले भागीरथ्याहमुत्तरे'— आदि० 165, 24 अर्थात द्रोणाचार्य ने पराजित होने पर कैद मे डाले हुए पचालराज द्रुपद से कहा— मैने राज्य प्राप्ति के लिए तुम्हारे साथ युद्ध किया है । अब गगा के उत्तरतट के प्रदेश का मैं, और दक्षिण तट के तुम राजा होगे' । इस प्रकार महाभारत-काल मे पचाल, गगा के उत्तरी और दक्षिणी दोनो तटो पर बसा हुआ था । द्रुपद पहले अहिच्छत्र या छत्रवती नगरी म रहते थे—'पापतो द्रुपदो नाम... वत्या नरेश्वर '—आदि० 165, 21 । इन्हें जीतने के लिए द्रोण ने कौरवो और

पाडवो को पचाल भेजा था—'धातराष्ट्रैश्च सहिता पचालान पाडवा ययु'। द्रौपदी पचाल राज द्रुपद की कन्या होने के कारण ही पाचाली कहलाती थी। महाभारत आदिपव मे वर्णित द्रौपदी का स्वयवर कापिल्य म हुआ था। दक्षिण पचाल की सीमा गगा के दक्षिणी तट से लेकर चबल या चमणवती तक थी—'सोऽध्यवसद दीनमना कापिल्य च पुरोत्तमम दक्षिणाश्चापि पचालान यावच्चमण्वता नदी,' आदि० 137,76। विष्णुपुराण 2,3,15 मे कुरु पाचालो को मध्यदेशीय कहा गया है—'तास्विमे कुरुपाचाला मध्यदेशादयोजना'। पचाल-निवासियो को भीमसेन ने अपनी पूव देश की दिग्विजय-यात्रा मे अनेक प्रकार से समया बुझा कर वश मे कर लिया था—'सगत्वा नरशादूल पचालाना पुर महत् पचालान् विविधोपाय सात्वयामास पाडव' सभा० 29,3 4।

पचासर (गुजरात)

वाधरा के निकट जैनतीथ पचसर। इसका नामोल्लेख जैनस्तोत्र तीथमाला चैत्यवदन मे इस प्रकार है—'हस्तोडीपुर पाडला दशपुरे चारूप पचासर'।

[पजकौरा दे० गौरी (2)]

पजली (लका)

महावश 32,15 मे वर्णित एक पवत जो करिंद या वतमान किरिंदुओए नदी के निकट स्थित था।

पजशीर=पचमो (नदी)

पडुलेण (ज़िला पूना, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर क्षहरात-नरेश नहपान का एक गुफालेख प्राप्त हुआ था जिससे उसका महाराष्ट्र के इस भूभाग पर आधिपत्य प्रमाणित होता है। नहपान के अन्य अभिलेख नासिक, जुन्नार और कार्ली से प्राप्त हुए हैं।

पडौल (बिहार)

उत्तरपूर्व रलवे की दरभगा—जयनगर शाखा पर स्थित। एक प्राचीन क़िले के ध्वसावशेष यहा स्थित है। इसे जनश्रुति मे पाडवो के समय का बताया जाता है जसा कि स्थान के नाम से भी सूचित होता है।

पढरपानि (महाराष्ट्र)

कोकण की पहाडियो का एक गिरिमाग (दर्रा)। 17वी शती के मध्य म शिवाजी की बढती हुई शक्ति को देखकर बीजापुर के सुलतान आदिलशाह ने हब्शी सरदार सीदी जोहर को उनका पीछा करने के लिए भजा। उसन जाते ही पन्हाला दुर्ग को घेर लिया। कई मास के घेरे के पश्चात जब दुग टूटने को हुआ तो शिवाजी चुपचाप वहा से निकलकर रगत होत हुए प्रतापगढ जा पहुचे।

सीदी की सेना ने उनका पीछा किया पर पढरपानि के गिरिमाग म बाजी प्रभुदेशपाडे ने दीवार की तरह खडे होकर उसे आगे बढने से रोक दिया। जब शिवाजी ने विशालगढ के किले मे सकुशल पहुचकर तोप दागी तो उस आहत वीर सरदार ने सुख से अपने प्राण त्यागे। देशपाडे का नाम महाराष्ट्र क इतिहास मे अमर है।

पढरपुर (महाराष्ट्र)

शोलापुर से 38 मील पश्चिम की ओर चद्रभागा अथवा भीमा क तट पर महाराष्ट्र का शायद यह सबस बडा तीथ है। 11वी शती म इस तीथ की स्थापना हुई थी। 1159 शकाब्द=1081 ई० के एक शिलालेख म जो यहां स प्राप्त हुआ था—'पडरिगे' क्षेत्र के ग्राम निवासियो द्वारा बपादान दिए जान का उल्लेख है। 1195 शकाब्द=1117 ई० के दूसरे शिलालेख म पढरपुर के मदिर के लिए दिए गए गद्यानो (सुवण मुद्राओ) का वणन है। इन दानियों म कर्नाटक, तेलगाना, पैठण, विदर्भ आदि के निवासियो के नाम हैं। वास्तव मे पौराणिक कथाओ के अनुसार भक्तराज पुडलीक क स्मारक क रूप म यह मदिर बना हुआ है। इसके अधिष्ठाता विठोबा क रूप म श्रीकृष्ण हैं जिहोने भक्त पुडलीक की पितृभक्ति से प्रस न होकर उसके द्वारा फेंके हुए एक पत्थर (विठ या ईंट) को ही सहर्ष अपना आसन बना लिया था। कहा जाता है कि विजयनगर-नरेश कृष्णदेव विठोबा की मूर्ति को अपन राज्य म ल गया था किंतु फिर वह एक महाराष्ट्रीय भक्त द्वारा पढरपुर वापस ल आई गई। 1117 ई० के एक अभिलेख से यह भी सिद्ध होता है कि भागवत सप्रदाय क अतर्गत वारकरी पथ के भक्तो ने विट्ठलदेव के पूजनाथ पर्याप्त धनराशि एकत्र की थी। इस मडल के अध्यक्ष थे रामदेव राय जाधव। (दे० मराठी वाड्मया च्या इतिहास प्रथम खड, पृ० 334-351)। पढरपुर की यात्रा आजकल आषाढ मे तथा कातिक शुक्ल एकादशी को होती है।

पपा

(1) (मद्रास) वाल्टेयर मद्रास रेलमाग पर अनावरम स्टेशन स 2 मील पर यह छोटी नदी बहती है। नदी को प्राचीनकाल से तीथ माना जाता है। नदी के निकट एक ऊची पहाडी पर सत्यनारायण का पुराना मदिर है।

(2) तुगभद्रा की सहायक नदी, जिसक निकट पपासर अवस्थित है।

(3)=पपासर

पपापुर (जिला मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश)

विध्याचल के निकट आदिवासी भार लोगो स सबधित एक ...

नगर के खंडहर हैं। इसका भविष्य पुराण मे उल्लेख है।

पपासर=पपासरोवर (हास्पट तालुका, मैसूर)

हपी के निकट बसे हुए ग्राम अनगुदी को रामायण कालीन किष्किधा माना जाता है। तुगभद्रा पार करने पर अनगुदी जाते समय मुख्य माग से कुछ हटकर बायी ओर पश्चिम दिशा मे, पपासरोवर स्थित है। पवत के नीचे ही इस नाम से कहा जाने वाला यह एक छोटा सा सरोवर है। इसके पास ही एक दूसरा सरोवर, मानसरोवर कहलाता है। पपासर के निकट पश्चिम मे पवत के ऊपर कई जीणशीण मदिर दिखाई पडते हैं। पवत मे एक गुफा है जिसे शबरी गुफा कहते हैं। कुछ लोगो का विचार है कि वास्तव मे रामायण मे वर्णित विशाल पपासरोवर इसी स्थान पर रहा होगा जहा आजकल हास्पट का कस्बा है। वाल्मीकि० अरण्य० 74,4 ('तौ पुष्करिण्या पपायास्तीरमासाद्य पश्चिमम् अपश्यता ततस्तत्रशवर्यां रम्यमाश्रमम) से सूचित होता है कि पपासर के तट पर ही शबरी का आश्रम था। किष्किधा के निकट सुरोवनम् नामक स्थान पर शबरी का आश्रम बताया जाता है। इसी के निकट शबरी के गुरु मतग ऋषि के नाम पर प्रसिद्ध मतगवन था—'शबरी दशयामास तावुभौतद्वन्-महत् पश्य, मघघनप्रख्य मृगपक्षिसमाकुलम, मतगवनमित्येव विश्रुत रघुनदन, इह ते भवितात्मानो गुरवो मे महाद्युते अरण्य० 4,20 21। पपा के निकट ही मतगसर नामक झील थी जो मतग ऋषि के नाम पर ही प्रसिद्ध थी। हपी मे ऋष्यमूक के राम मदिर के पास स्थित पहाडी आज भी मतगपवत के नाम से जानी जाती है। कालीदास ने पपासर का सुदर वणन किया है—'उपातवानीर वनोपगूढान्यालक्षपारिप्लवसारसानि, दूरावतीर्णा पिबतीव खेदादमूनि पपासलिलानि दृष्टि । अध्यात्म० किष्किधा 1,1 2 3 मे पपा के मनोहारी वणन मे इसे एक कोस विस्तारवाला अगाध सरोवर बताया गया है—'तत सलक्ष्मणो राम शनै पपासरस्तटम, आगत्य सरसा श्रेष्ठ दृष्ट्वाविस्मयमाययौ। क्रोश मात्र सुविस्तीर्णमगाधामलशबरम, उत्फुल्लाबुज कह लार कुमुदोत्पलमडितम्। हसकारडवकीणचक्रवाकादिशोभितम जलकुक्कुटकोयष्टिक्रौंचनादोपनादितम'। (दे० किष्किधा)

पक्षीतीथ

चिंगलपट से नौ मील पर पहाडी के ऊपर स्थित यह दक्षिण भारत का प्रसिद्ध तीथ है। मध्याह्न के समय प्रतिदिन, दो क्षेमकरिया आकर पुजारी के हाथ से भोजन करती हैं। इनके बारे मे तरह तरह की किंवदतिया प्रसिद्ध हैं। (दे० चिंगलपट, वेदगिरि)

पचराई (बुंदेलखड)

मध्यकालीन बुंदेलखड की वास्तुकला के भग्नावशेष इस स्थान के उल्लेखनीय ऐतिहासिक स्मारक हैं।

पचहरन (जिला गोडा, उ० प्र०)

यहा के पुराने टीले से पृथ्वीनाथ का ताम्रपट्ट प्राप्त हुआ था। खडहर पूर्वमध्ययुगीन जान पडते हैं।

पचेलगढ़ (जिला जबलपुर, म० प्र०)

इतिहास प्रसिद्ध गढमडला की रानी दुर्गावती के श्वसुर सग्रामशाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढो मे से एक यहा स्थित था।

पटच्चर

'सुकमार वश चक्रे सुमित्र च नराधिपम, तथैवापरमत्स्याश्च व्यजयत स पटच्चरान्' महा० सभा० 31,4 पटच्चरो को सहदेव ने अपनी दिगविजय-यात्रा के प्रसग मे जीता था। सदर्भानुसार, पटच्चरजनपद की स्थिति अपरमत्स्य देश के आसपास जान पडती है। श्री न० ला० ड के अनुसार यह इलाहाबाद—बादा जिलो का प्रदेश है किंतु यह अभिज्ञान सदिग्ध है। अपरमत्स्य देश जयपुर अलवर (मत्स्य) का पाश्ववर्ती प्रदेश था। इसके पश्चात ही अनार्य जातीय निषादो के देश निषाद भूमि का उल्लेख है। इसस जान पडता है कि पटच्चर देश दक्षिणी पजाब और उत्तरी राजस्थान के बीच का इलाका रहा होगा। सस्कृत मे पटच्चर शब्द चोर के अर्थ मे प्रयुक्त है जिससे शायद पटच्चरो की तत्कालीन जातिगत विशेषता का पता चलता है। जान पडता है कि निषादो के समान पटच्चर भी किसी अधसभ्य विदेशी जाति के लोग थे जो इस इलाके म भारत के बाहर से आकर बस गए थे। सभव है यह नाम (पटच्चर) कालातर मे दरिद्र शब्द की भाति ही ('दरद' देश के लोगो के नाम से बना विशेषण—दे० दरद) जातिगत विशेषता के कारण सस्कृत मे सामान्य विशषण की भाति प्रयुक्त होने लगा।

पटना (दे० पाटलिपुत्र)

पटल

अलक्षेद्र (सिकदर) के भारत-आक्रमण के समय (327 ई० पू०) मे सिंध मे इस नाम का नगर बसा हुआ था जिसका उल्लेख अलक्षेंद्र के अभियान का इतिहास लिखने वाले यूनानी लेखको ने किया है। विद्वानो का मत है कि यह नगर सिंध नदी के मुहाने पर बहमनाबाद के पास रहा होगा। अलक्षेंद्र ने इसी स्थान से अपनी सेना के एक भाग का समुद्र द्वारा अपने देश वापस भेजने का प्रबन्ध

बनाया था। बहमनाबाद से, जो बहुत प्राचीन स्थान है, प्रागतिहासिक अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

पटिया

कटक (उडीसा) के निकट सारग-केसरी नामक केशरीवशीय नरेश द्वारा बसाया गया नगर जहा का दुर्ग सारगगढ़ कहलाता था। यहा सारग नाम की झील भी है।

पटियाला (पजाब)

किंवदती मे पटियाला के नामकरण का कारण यहा रेशम की प्रचुरता का होना कहा जाता है। (पाट=रेशम, आलय=घर) आजकल भी पटियाला रेशम के कुटीर उद्योग का केन्द्र है। किंतु ऐतिहासिको के मत मे पटियाला नाम, इसके आलासिंह नाम के सरदार की पट्टी (जागीर) म स्थित होने के कारण हुआ था। पटियाला, जीद और नाभा – ये तीन स्थान फूलसिंह नामक एक डाकू को अंग्रेजो की सहायता करने के बदले मे दिए गए थे। आलासिंह इसी फूलसिंह का पुत्र था। फूलसिंह ने मृत्यु से पहले पटियाला का आलासिंह की जागीर म नियत कर दिया था। आला की पट्टी या पट्टी आला स बिगडकर ही पटियाला नाम बन गया। यहा के पुराने स्मारको मे गुलाबी बाग प्रसिद्ध है। पहले पटियाला-नरेश यही रहते थे। उनकी 360 रानियो के महल भी इसी बाग के अदर बने थे। यहा एक चिडियाघर भी बनाया गया था जिसके जानवरो के शोरगुल से तग होकर रानियो ने मोतीबाग मे एक नया महल बनवाया। मोतीमहल के राजप्रासाद की इमारत बडी भव्य तथा सुसज्जित है। पटियाला सिखधर्म का एक केंद्र माना जाता है। गुरुगोविंदसिंह की एक कृपाण, जो उन्होने सूरत के एक मुसलमान को दी थी, यहा के सग्रहालय म सुरक्षित है। हिंदुओ का काली मन्दिर भी पटियाला का प्रसिद्ध स्थान है। इस मदिर की विशालता और साजसज्जा की दृष्टि से इसे कलकत्ते के काली मन्दिर के समकक्ष ही समझा जाता है।

पटियाली (जिला बुलदशहर, उ०प्र०)

(1) हिंदी और फारसी के प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो का जन्मस्थान है। ये अलाउद्दीन खिलजी (1298 1316) के समकालीन थे।

(2) (जिला फरुखाबाद, उ० प्र०) इस स्थान पर मुहम्मद गौरी के बनवाए हुए एक दुर्ग के ध्वसावशेष हैं।

पचराई (बुदेलखड)

मध्यकालीन बुदेलखड की वास्तुकला के भग्नावशेष इस स्थान के उल्लेखनीय ऐतिहासिक स्मारक हैं।

पचहरन (जिला गोंडा, उ० प्र०)

यहा के पुराने टीले से पृथ्वीनाथ का ताम्रपट्ट प्राप्त हुआ था। खडहर पूर्वमध्ययुगीन जान पडते हैं।

पचेलगढ़ (जिला जबलपुर, म० प्र०)

इतिहास-प्रसिद्ध गढमडला की रानी दुर्गावती के श्वसुर सग्रामशाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढो मे से एक यहा स्थित था।

पटच्चर

'सुकमार वश चक्रे सुमित्र च नराधिपम, तथैवापरमत्स्याश्च व्यजयत् स पटच्चरान' महा० सभा० 31,4 पटच्चरो को सहदेव ने अपनी दिगविजय-यात्रा के प्रसग मे जीता था। सदर्भानुसार, पटच्चरजनपद की स्थिति अपरमत्स्य देश के आसपास जान पडती है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह इलाहाबाद—बादा जिलो का प्रदेश है किंतु यह अभिज्ञान सदिग्ध है। अपरमत्स्य देश जयपुर अलवर (मत्स्य) का पारववर्ती प्रदेश था। इसके पश्चात ही अनार्य जातीय निषादो के देश निषाद-भूमि का उल्लेख है। इससे जान पडता है कि पटच्चर देश दक्षिणी पजाब और उत्तरी राजस्थान के बीच का इलाका रहा होगा। सस्कृत मे पटच्चर शब्द चोर के अर्थ मे प्रयुक्त है जिससे शायद पटच्चरों की तत्कालीन जातिगत विशेषता का पता चलता है। जान पडता है कि निषादों के समान पटच्चर भी किसी अर्धसभ्य विदेशी जाति के लोग थे जो इस इलाके मे भारत के बाहर से आकर बस गए थे। सभव है यह नाम (पटच्चर) कालातर मे दरिद्र शब्द की भाति ही ('दरद' देश के लोगो के नाम से बना विशेषण—दे० दरद) जातिगत विशेषता के कारण सस्कृत मे सामान्य विशेषण की भाति प्रयुक्त होने लगा।

पटना (दे० पाटलिपुत्र)

पटल

अलक्षेंद्र (सिकदर) के भारत-आक्रमण के समय (327 ई० पू०) में सिंध में इस नाम का नगर बसा हुआ था जिसका उल्लेख अलक्षेंद्र के अभियान का इतिहास लिखने वाले यूनानी लेखको ने किया है। विद्वानों का मत है कि यह नगर सिंध नदी के मुहाने पर बहमनाबाद के पास रहा होगा। अलक्षेंद्र ने इसी स्थान से अपनी सेना के एक भाग को समुद्र द्वारा अपने देश वापस भेजा था जो कारवर

बनाया था। वह्मनाबाद से, जो वहुत प्राचीन स्थान है, प्रागैतिहासिक अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

पटिया

कटक (उडीसा) के निकट सारग-केसरी नामक केशरीवशीय नरेश द्वारा वसाया गया नगर जहा का दुग सारगगढ कहलाता था। यहा सारग नाम की झील भी है।

पटियाला (पजाब)

किवदती मे पटियाला के नामकरण का कारण यहा रेशम की प्रचुरता का होना कहा जाता है। (पाट=रेशम, आलय=घर) आजकल भी पटियाला रेशम के कुटीर उद्योग का केन्द्र है। किंतु ऐतिहासिको के मत म पटियाला नाम, इसके आलासिह नाम के सरदार की पटटी (जागीर) म स्थित होने के कारण हुआ था। पटियाला, जीद और नाभा – ये तीन स्थान फूलसिह नामक एक डाकू को अग्रेजा की सहायता करने क वदले म दिए गए थे। आलासिह इसी फूलसिह का पुत्र था। फूलसिह ने मृत्यु से पहले पटियाला का आलासिह की जागीर मे नियत कर दिया था। आला की पटटी या पटटी आला से विगडकर ही पटियाला नाम वन गया। यहा के पुराने स्मारको मे गुलावी वाग प्रसिद्ध है। पहले पटियाला नरेश यही रहते थे। उनकी 360 रानियो के महल भी इसी वाग के अदर बने थे। यहा एक चिडियाघर भी वनाया गया था जिसके जानवरो के शोरगुल से तग होकर रानियो ने मोतीवाग मे एक नया महल वनवाया। मोतीमहल के राजप्रासाद की इमारत वडी भव्य तथा सुसज्जित है। पटियाला सिखधम का एक केंद्र माना जाता है। गुरुगोविंदसिह की एक कृपाण, जो उन्होने सूरत के एक मुसलमान को दी थी, यहा के सग्रहालय म सुरक्षित है। हिंदुओ का काली मदिर भी पटियाला का प्रसिद्ध स्थान है। इस मदिर की विशालता और साजसज्जा की दृष्टि से इसे कलकत्ते के काली मदिर के समकक्ष ही समझा जाता है।

पटियाली (जिला बुलदशहर, उ०प्र०)

(1) हिंदी और फारसी के प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो का जन्मस्थान है। ये जलाउद्दीन खिलजी (298 1316) के समकालीन थे।

(2) (जिला फरुखावाद, उ० प्र०) इस स्थान पर मुहम्मद गोरी के वनवाए हुए एक दुग के ध्वसावशेष है।

पचराई (बुंदेलखंड)

मध्यकालीन बुंदेलखंड की वास्तुकला के भग्नावशेष इस स्थान के उल्लेखनीय ऐतिहासिक स्मारक हैं।

पचहरन (जिला गोंडा, उ० प्र०)

यहां के पुराने टीले से पृथ्वीनाथ का ताम्रपट्ट प्राप्त हुआ था। खंडहर पूर्वमध्ययुगीन जान पड़ते हैं।

पचेलगढ़ (जिला जबलपुर, म० प्र०)

इतिहास-प्रसिद्ध गढ़मंडला की रानी दुर्गावती के श्वसुर संग्रामशाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढ़ों में से एक यहां स्थित था।

पटच्चर

'सुकुमारं वशे चक्रे सुमित्रं च नराधिपम्, तथैवापरमत्स्यांश्च व्यजयत् स पटच्चरान्' महा० सभा० 31,4 पटच्चरों को सहदेव ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसंग में जीता था। संदर्भानुसार, पटच्चरजनपद की स्थिति अपरमत्स्य देश के आसपास जान पड़ती है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह इलाहाबाद—बांदा जिलों का प्रदेश है किंतु यह अभिज्ञान संदिग्ध है। अपरमत्स्य देश जयपुर-अलवर (मत्स्य) का पार्श्ववर्ती प्रदेश था। इसके पश्चात् ही अनार्य जातीय निषादों के देश निषाद-भूमि का उल्लेख है। इससे जान पड़ता है कि पटच्चर देश दक्षिणी पंजाब और उत्तरी राजस्थान के बीच का इलाका रहा होगा। संस्कृत में पटच्चर शब्द चोर के अर्थ में प्रयुक्त है जिससे शायद पटच्चरों की तत्कालीन जातिगत विशेषता का पता चलता है। जान पड़ता है कि निषादों के समान पटच्चर भी किसी अर्धसभ्य विदेशी जाति के लोग थे जो इस इलाके में भारत के बाहर से आकर बस गए थे। संभव है यह नाम (पटच्चर) कालांतर में दरिद्र शब्द की भांति ही ('दरद' देश के लोगों के नाम से बना विशेषण—दे० दरद) जातिगत विशेषता के कारण संस्कृत में सामान्य विशेषण की भांति प्रयुक्त होने लगा।

पटना (दे० पाटलिपुत्र)

पटल

अलक्षेंद्र (सिकंदर) के भारत आक्रमण के समय (327 ई० पू०) में सिंध में इस नाम का नगर बसा हुआ था जिसका उल्लेख अलक्षेंद्र के अभियान का इतिहास लिखने वाले यूनानी लेखकों ने किया है। विद्वानों का मत है कि यह नगर सिंध नदी के मुहाने पर बहमनाबाद के पास रहा होगा। अलक्षेंद्र ने इसी स्थान से अपनी सेना के एक भाग को समुद्र द्वारा अपने देश वापस भेजने का कार्यक्रम

बनाया था। बहमनाबाद से, जो बहुत प्राचीन स्थान है, प्रागैतिहासिक अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

पटिया

कटक (उडीसा) के निकट सारग-केसरी नामक केशरीवशीय नरेश द्वारा बसाया गया नगर जहा का दुग सारगगढ कहलाता था। यहा सारग नाम की झील भी है।

पटियाला (पजाब)

किवदनी मे पटियाला के नामकरण का कारण यहा रेशम की प्रचुरता का होना कहा जाता है। (पाट=रेशम, आलय=घर) आजकल भी पटियाला रेशम के कुटीर उद्योग का केन्द्र है। किंतु ऐतिहासिको के मत मे पटियाला नाम, इसके आलासिह नाम क सरदार की पटटी (जागीर) म स्थित होन के कारण हुआ था। पटियाला, जीद और नाभा – ये तीन स्थान फूलसिह नामक एक डाकू को अग्रेजो की सहायता करने क बदले मे दिए गए थे। आलासिह इसी फूलसिह का पुत्र था। फूलसिह ने मृत्यु से पहले पटियाला को आलासिह की जागीर मे नियत कर दिया था। आला की पटटी या पट्टी आला स बिगडकर ही पटियाला नाम बन गया। यहा के पुराने स्मारको म गुलाबी बाग प्रसिद्ध है। पहले पटियाला नरेश यही रहते थे। उनकी 360 रानियो के महल भी इसी बाग के अदर बने थे। यहा एक चिडियाघर भी बनाया गया था जिसके जानवरो के शोरगुल से तग होकर रानियो ने मोतीबाग मे एक नया महल बनवाया। मोतीमहल के राजप्रासाद की इमारत बडी भव्य तथा सुसज्जित है। पटियाला सिखधम का एक केंद्र माना जाता है। गुरुगोविंदसिह की एक कृपाण, जो उन्होंने सूरत के एक मुसलमान को दी थी, यहा के सग्रहालय म सुरक्षित है। हिंदुओ का काली मदिर भी पटियाला का प्रसिद्ध स्थान है। इस मदिर की विशालता और साजसज्जा की दृष्टि से इसे कलकत्ते के काली मदिर के समकक्ष ही समझा जाता है।

पटियाली (जिला बुलदशहर, उ०प्र०)

(1) हिंदी और फारसी के प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो का जन्मस्थान है। ये जलाउद्दीन खिलजी (298 1316) के समकालीन थे।

(2) (जिला फरुखाबाद, उ० प्र०) इस स्थान पर मुहम्मद गौरी के बनवाए हुए एक दुग के ध्वसावशेष हैं।

पचराई (बुदेलखड)

मध्यकालीन बुदेलखड की वास्तुकला के भग्नावशेष इस स्थान के उल्लेखनीय ऐतिहासिक स्मारक हैं।

पचहरन (ज़िला गोंडा, उ० प्र०)

यहा के पुराने टीले से पृथ्वीनाथ का ताम्रपट्ट प्राप्त हुआ था। खडहर पूर्वमध्ययुगीन जान पडते हैं।

पचेलगढ (ज़िला जबलपुर, म० प्र०)

इतिहास-प्रसिद्ध गढमडला की रानी दुर्गावती के श्वसुर सग्रामशाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढो मे से एक यहा स्थित था।

पटच्चर

'सुकमार वश चक्रे सुमित्र च नराधिपम, तथैवापरमत्स्याश्च व्यजयत स पटच्चरान' महा० सभा० 31,4 पटच्चरो को सहदेव ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसग मे जीता था। सदर्भानुसार, पटच्चरजनपद की स्थिति अपरमत्स्य देश के आसपास जान पडती है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह इलाहाबाद—बादा जिलो का प्रदेश है किंतु यह अभिज्ञान सदिग्ध है। अपरमत्स्य देश जयपुर अलवर (मत्स्य) का पार्श्ववर्ती प्रदेश था। इसके पश्चात ही अनार्य जातीय निषादो के देश निषाद-भूमि का उल्लेख है। इससे जान पडता है कि पटच्चर देश दक्षिणी पजाब और उत्तरी राजस्थान के बीच का इलाका रहा होगा। सस्कृत म पटच्चर शब्द चोर के अर्थ मे प्रयुक्त है जिससे शायद पटच्चर की तत्कालीन जातिगत विशेषता का पता चलता है। जान पडता है कि निषा के समान पटच्चर भी किसी अर्धसभ्य विदेशी जाति के लोग थे जो इस दे म भारत के बाहर से आकर बस गए थे। सभव है यह नाम (पटच कालातर म दरिद्र शब्द की भाति ही ('दरद' देश के लोगो के नाम से विशेषण—दे० दरद) जातिगत विशेषता के कारण सस्कृत मे सामान्य वि की भाति प्रयुक्त होने लगा।

पटना (दे० पाटलिपुत्र)

पटल

अलक्षेंद्र (सिकदर) के भारत-आक्रमण के समय (327 ई० पू सिंध म इस नाम का नगर बसा हुआ था जिसका उल्लेख अलक्षेंद्र के अ का इतिहास लिखने वाले यूनानी लेखको ने किया है। विद्वानों का मत है नगर सिंध नदी के मुहाने पर बहमनाबाद के पास रहा होगा। अल क्षेंद्र ने यहा से अपनी सेना के एक भाग को समुद्र द्वारा अपने देश वापस भेजने का

बनाया था। बहमनाबाद से, जो बहुत प्राचीन स्थान है, प्रागैतिहासिक अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

पटिया

कटक (उडीसा) के निकट सारग-केसरी नामक केशरीवशीय नरेश द्वारा बसाया गया नगर जहा का दुग सारगगढ कहलाता था। यहा सारग नाम की झील भी है।

पटियाला (पजाब)

किवदनी मे पटियाला के नामकरण का कारण यहा रेशम की प्रचुरता का होना कहा जाता है। (पाट=रेशम, आलय=घर) आजकल भी पटियाला रेशम के कुटीर उद्योग का केन्द्र है। किंतु ऐतिहासिको के मत मे पटियाला नाम, इसके आलासिह नाम के सरदार की पटटी (जागीर) म स्थित होने के कारण हुआ था। पटियाला, जीद और नाभा – ये तीन स्थान फूलसिह नामक एक डाकू को अग्रेजो की सहायता करने के बदले मे दिए गए थे। आलासिह इसी फूलसिह का पुत्र था। फूलसिह ने मृत्यु से पहले पटियाला को आलासिह की जागीर मे नियत कर दिया था। आला की पट्टी या पट्टी आला स बिगडकर ही पटियाला नाम बन गया। यहा के पुराने स्मारको मे गुलाबी बाग प्रसिद्ध है। पहले पटियाला-नरेश यही रहते थे। उनकी 360 रानियो के महल भी इसी बाग के अदर बने थे। यहा एक चिडियाघर भी बनाया गया था जिसके जानवरो के शोरगुल से तग होकर रानियो ने मोतीबाग मे एक नया महल बनवाया। मोतीमहल के राजप्रासाद की इमारत बडी भव्य तथा सुसज्जित है। पटियाला सिखधम का एक केंद्र माना जाता है। गुरुगोविंदसिह की एक कृपाण, जो उन्होंने सूरत के एक मुसलमान को दी थी, यहा के सग्रहालय मे सुरक्षित है। हिंदुओ का काली मदिर भी पटियाला का प्रसिद्ध स्थान है। इस मदिर की विशालता और साजसज्जा की दृष्टि से इसे कलकत्ते के काली मदिर के समकक्ष ही समझा जाता है।

पटियाली (जिला बुलदशहर, उ०प्र०)

(1) हिंदी और फारसी के प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो का जन्मस्थान है। ये अलाउद्दीन खिलजी (298 1316) के समकालीन थे।

(2) (जिला फरुखाबाद, उ० प्र०) इस स्थान पर मुहम्मद गौरी के बनवाए हुए एक दुग के ध्वसावशेष है।

पचराई (बुंदेलखंड)

मध्यकालीन बुंदेलखंड की वास्तुकला के भग्नावशेष इस स्थान के उल्लेखनीय ऐतिहासिक स्मारक हैं।

पचहरन (ज़िला गोंडा, उ० प्र०)

यहा के पुराने टीले से पृथ्वीनाथ का ताम्रपट्ट प्राप्त हुआ था। खडहर पूर्वमध्ययुगीन जान पडते हैं।

पचेलगढ़ (ज़िला जबलपुर, म० प्र०)

इतिहास-प्रसिद्ध गढमडला की रानी दुर्गावती के श्वसुर सग्रामशाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढ़ो मे से एक यहा स्थित था।

पटच्चर

'सुकुमार वश चक्रे सुमित्र च नराधिपम, तथैवापरमत्स्याश्च व्यजयत् स पटच्चरान' महा० सभा० 31,4 पटच्चरो को सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे जीता था। सदर्भानुसार, पटच्चरजनपद की स्थिति अपरमत्स्य देश के आसपास जान पडती है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह इलाहाबाद—बादा जिलो का प्रदश है किंतु यह अभिज्ञान सदिग्ध है। अपरमत्स्य देश जयपुर अलवर (मत्स्य) का पाश्ववर्ती प्रदेश था। इसके पश्चात् ही अनार्य-जातीय निषादो के देश निषाद-भूमि का उल्लेख है। इससे जान पडता है कि पटच्चर दश दक्षिणी पजाब और उत्तरी राजस्थान के बीच का इलाका रहा होगा। सस्कृत म पटच्चर शब्द चोर के अथ मे प्रयुक्त है जिससे शायद पटच्चरो की तत्कालीन जातिगत विशेपता का पता चलता है। जान पडता है कि निषादो के समान पटच्चर भी किसी अधसभ्य विदेशी जाति के लोग थे जो इस इलाके म भारत के वाहर से आकर बस गए थ। सभव है यह नाम (पटच्चर) कालातर मे दरिद्र शब्द की भाति ही ('दरद' देश के लोगो के नाम से बना विशेषण—दे० दरद) जातिगत विशेपता के कारण सस्कृत मे सामान्य विशेषण की भाति प्रयुक्त होने लगा।

पटना (दे० पाटलिपुत्र)

पटल

अलक्षेंद्र (सिकदर) के भारत आक्रमण के समय (327 ई० पू०) मे सिंध म इस नाम का नगर बसा हुआ था जिसका उल्लख अलक्षेंद्र क अभियान का इतिहास लिखने वाले यूनानी लेखको ने किया है। विद्वानो का मत है कि यह नगर सिंध नदी के मुहाने पर बहमनाबाद के पास रहा होगा। अलक्षेंद्र ने इसी स्थान से अपनी सना के एक भाग का समुद्र द्वारा अपने देश वापस भेजन का कार्यक्रम

ा था। बहमनाबाद से, जो बहुत प्राचीन स्थान है, प्रागैतिहासिक अवशेष ाप्त हुए हैं।

।

कटक (उडीसा) के निकट सारग-केसरी नामक केशरीवशीय नरेश द्वारा ा गया नगर जहा का दुर्ग सारगगढ कहलाता था। यहा सारग नाम की भी है।

ाला (पजाव)

किंवदती मे पटियाला के नामकरण का कारण यहा रेशम की प्रचुरता का कहा जाता है। (पाट=रेशम, आलय=घर) आजकल भी पटियाला रेशम टीर उद्योग का केन्द्र है। किंतु ऐतिहासिकों के मत मे पटियाला नाम, इसके सिंह नाम के सरदार की पट्टी (जागीर) मे स्थित होने के कारण हुआ पटियाला, जींद ओर नाभा – ये तीन स्थान फूलसिंह नामक एक डाकू को ा की सहायता करने के बदले मे दिए गए थे। आलासिंह इसी फूलसिंह ुत्र था। फूलसिंह ने मृत्यु से पहले पटियाला को आलासिंह की जागीर मे ा कर दिया था। आला की पट्टी या पट्टी आला से बिगडकर ही ाला नाम बन गया। यहा के पुराने स्मारको मे गुलाबी बाग प्रसिद्ध है। पटियाला नरेश यही रहते थे। उनकी 360 रानियो के महल भी इसी के अदर बने थे। यहा एक चिडियाघर भी बनाया गया था जिसके वरो के शोरगुल से तग होकर रानियो ने मोतीबाग मे एक नया महल ाया। मोतीमहल के राजप्रासाद की इमारत बडी भव्य तथा सुसज्जित पटियाला सिखधर्म का एक केंद्र माना जाता है। गुरुगोविंदसिंह की एक ण, जो उन्होने सूरत के एक मुसलमान को दी थी, यहा के सग्रहालय मे क्षित है। हिंदुओ का काली मदिर भी पटियाला का प्रसिद्ध स्थान है। मदिर की विशालता और साजसज्जा की दृष्टि से इसे कलकत्ते के काली दर के समकक्ष ही समझा जाता है।

पाली (जिला बुलदशहर, उ०प्र०)

(1) हिंदी और फारसी के प्रसिद्ध कवि अमीर खुसरो का जन्मस्थान है। लाउद्दीन खिलजी (1298 1316) के समकालीन थे।

(2) (जिला फर्रुखाबाद, उ० प्र०) इस स्थान पर मुहम्मद गौरी के बन-

पट्टदकल (जिला बीजापुर, महाराष्ट्र)

मालप्रभानदी के तट पर बादामी से 12 मील दूर स्थित है। 7वीं शती के अंतिम चरण से मध्यकाल तक निर्मित मंदिरों के लिए यह स्थान प्रख्यात है। पट्टदकल को चालुक्य वास्तुकला का सर्वश्रेष्ठ केंद्र माना जाता है। 992 ई० के एक अभिलेख में इस नगर को चालुक्यवंशी नरेशों की राजधानी तथा उनके राज्याभिषेक का स्थान कहा गया है। उस समय यह प्रसिद्ध तीर्थ तो था ही, साथ ही यहां अनेक मूर्तिकार, वास्तुविशारद तथा नृत्य-कलाविद भी निवास करते थे। चालुक्य नरेश वैष्णव थे किंतु उनके मन्दिरों में शिव की प्रतिमाएं भी प्रतिष्ठापित थीं। पट्टदकल की मूर्तिकला धार्मिक तथा लौकिक दोनों प्रकार की है। प्रथम में देवी देवताओं तथा रामायण महाभारत की अनेक धार्मिक कथाओं का चित्रण है तथा द्वितीय में सामाजिक और घरेलू जीवन, पशुपक्षी, वाद्ययंत्रों तथा पंचतंत्र की कथाओं का अंकन मिलता है। वर्तमान पट्टदकल में सबसे सुंदर मंदिर विरूपाक्ष का है जिसे विक्रमादित्य द्वितीय चालुक्य की महारानी लोक महादेवी ने 740 ई० में बनवाया था। यह द्रविड शैली में बना है। द्वारमंडपों पर द्वारपालों की प्रतिमाएं हैं। एक द्वारपाल की गदा पर एक सर्प लिपटा हुआ प्रदर्शित है जिसके कारण उसके मुख पर विस्मय तथा घबराहट के भावों की अभिव्यंजना बड़े कौशल के साथ अंकित की गई है। एक स्तंभ के बाहरी भाग पर गजेंद्र मोक्ष की कथा का सुन्दर चित्रण है। मुख्य मंडप में भारी स्तंभों की छः पंक्तियां हैं जिनमें से प्रत्येक में पांच स्तंभ हैं। इनमें से कुछ स्तंभों पर शृंगारिक दृश्यों का प्रदर्शन किया गया है। अन्य पर महाकाव्यों के चित्र उत्कीर्ण हैं जिनमें हनुमान् का रावण की सभा में आगमन, खरदूषण युद्ध तथा सीताहरण के दृश्य सराहनीय हैं। पंचतंत्र की आख्यायिकाओं में कील-उत्पाटी वानर की कथा का मनोरंजन और यथार्थ अंकन दिखलाई पड़ता है। यहां का दूसरा मंदिर पापनाथ का है। यह अपने शैली वैचित्र्य के लिए उल्लेखनीय है। मंदिर का मुख्य भाग 8वीं शती की द्रविड शैली में बना हुआ है। किंतु शिखर (तत्कालीन) गुप्तकालीन उत्तर भारतीय शैली का अच्छा उदाहरण है। विरूपाक्ष मंदिर के निकट भी एक अन्य मंदिर है जो उडीसा के प्राचीन मंदिरों के अनुरूप है। यहां के मंदिरों के शिखर स्तूपाकार हैं और कई तलों में विभक्त हैं। प्रत्येक तल में वर्गाकार और दीर्घायताकार मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। मंदिर सामान्यतः पत्थरों के बड़े बड़े पट्टों को चूने का प्रयोग किए बिना, निर्मित हैं। गर्भगृह के सामने पटा हुआ प्रदक्षिणा-पथ है। पट्टदकल के मंदिरों और उत्तरी व दक्षिणी कनारा जिला

(मद्रास) के मुडाबिदरी, जरसोपा और भटकल के मंदिरों में काफी समानता है। इनके शिखर उत्तरी भारत के गुप्तकालीन मंदिरों के शिखरों के समरूप हैं जिससे पट्टदकल की वास्तुकला को उत्तर व दक्षिण की शैलियों के बीच की कड़ी समझा जा सकता है। आश्चर्य है कि उत्तर भारत की पूर्व गुप्तकालीन वास्तुकला, गुप्तकाल के समाप्त होने के बहुत समय पश्चात भी दक्षिण भारत के इस भाग में जीवित रहकर फूलती फलती रही। इस तथ्य से उत्तर और दक्षिण भारत की सामान्य सांस्कृतिक परंपरा का बोध होता है। (दे० कजेंस—चालुक्यन आर्कीटेक्चर ऑव कनारीज डिस्ट्रिक्टस चित्र 15, 45)।

पठानकोट (दे० उदुंबर)

पढ़ावली (ज़िला ग्वालियर, म० प्र०)

प्राचीन ऐतिहासिक अनुश्रुति के अनुसार मध्यभारत के नागाओं की राजधानी कांतिपुरी और पढावली—दोनों नगरियां—तीसरी चौथी शती ई० में साथ ही साथ संपन्न तथा समृद्ध दशा में थीं। किंतु ऐतिहासिक महत्व की वस्तुएं यहां 900 ई० से 1000 ई० तक की ही पाई गई हैं। पढावली के मुख्य स्थान हैं—गढी का प्राचीन मंदिर, जैन तथा वैष्णव मंदिर तथा एक प्रसिद्ध प्राचीन कुंवा।

पण (लंका)

महावंश 10,27-28 में उल्लिखित एक स्थान जो कासपर्वत या वर्तमान कहगल के निकट बताया गया है।

पतंग

विष्णुपुराण 2,2,27 के अनुसार मेरु के दक्षिण में स्थित एक पर्वत—'त्रिकूट शिशिरश्चैव पतंगोरुचकास्तथा। निषादाद्यादक्षिणतस्तस्यकेसर पर्वता'।

पथारी (ज़िला परभणी, महाराष्ट्र)

(1) प्राचीन दुर्ग के अवशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

(2) (ज़िला भीलसा, म० प्र०) बेसनगर के निकट और बडोह से 2 मील दूर प्राचीन स्थान है। यहां से निम्न पूर्वमध्ययुगीन अवशेष प्राप्त हुए है—सप्त मातृकाओं की मूर्तियां, प्रस्तर स्तंभ, राष्ट्रकूट नरेश परावल के एक मंत्री द्वारा 460 ई० में बनवाई हुई वराह-मूर्ति और बालकृष्ण की एक अति सुंदर मूर्ति जो यहां के मंदिर में प्रतिष्ठापित है। अंतिम कलाकृति में नवजात कृष्ण देवकी के पास लेटे है और पांच सेवक निकट ही खडे हैं। मूर्ति बहुत भारी तथा विशाल हैं और बेगलर के मत में भारत की सभी प्राचीन मूर्तियों से अधिक सुंदर हैं।

पदमपवाया=पदमावती

पदरौना दे० (पावापुरी)

पदमक्षेत्र

(1) कोणाक (उडीसा) के क्षेत्र का प्राचीन नाम। पौराणिक कथा के अनुसार श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब को इस स्थान के निकट चद्रभागा नदी म बहते हुए कमलपत्र पर सूय की प्रतिमा मिली थी जो बाद म कोणाक मदिर की अधिष्ठात्री मूर्ति के रूप म मान्य हुई। इस कमलपत्र के कारण ही इस तीथ को पद्मक्षेत्र कहा गया। इसका दूसरा नाम मैत्रेयवन भी है। (दे० कोणाक)

(2) राजिम (म० प्र०) का प्राचीन नाम। राजिम राजीव या कमल का रूपातर है। राजिम म 8वी या 9वीं शती का राजीवलोचन विष्णु का मदिर है। (दे० राजिम)

पद्मतीथ

वासिम (महाराष्ट्र) के परिवर्ती क्षेत्र का प्राचीन नाम पद्मतीथ कहा गया है। किंवदती है कि वासिम मे वत्स ऋषि का आश्रम था।

पदमनगर

नासिक का एक पौराणिक नाम —'कृते तु पद्मनगर, त्रेताया तु त्रिकटकम, द्वापरे च जनस्थान कलौ नासिकमुच्यते'।

पद्मपुर (ज़िला भडारा, म० प्र०)

आमगाव से एक मील पर एक प्राचीन ग्राम है। प्रो० मिराशी तथा अन्य कई विद्वानो का मत है कि सस्कृत के प्रसिद्ध नाटककार महाकवि भवभूति इसी पद्मपुर के निवासी थे। भवभूति ने महावीरचरित्र नाटक मे पद्मपुर का उल्लेख किया है तथा मालतीमाधव नाटक के प्रथम अक मे अपनी जन्मभूमि पद्मपुर नगर मे बताते हुए इसकी स्थिति दक्षिणापथ मे कही है—'अस्ति दक्षिणापथे पद्मपुर नाम नगरम तदामुष्यायणस्य तत्रभवतो भट्टगोपालस्य पौत्र पवित्रकीर्तें नीलकठस्य पुत्र श्रीकठपदलाछन पदवाक्यप्रमाणज्ञो भवभूतिर्नाम कवि निसर्ग सौहृदेन भरतेषु वर्तमान स्वकृतिमेवगुणभूयसीमस्माक हस्ते समर्पितवान्'।

ग्राम के निकट एक पहाडी है जिसे आज भी लोग भवभूति की टोरिया कहते है और महाकवि की स्मृति मे कुछ अवशेषो की पूजा भी होती है। मालती-माधव मे उन्होने जिस भ्रष्ट बौद्ध तात्रिक समाज का वणन किया है उसका अस्तित्व आठवी शती ई० मे देश के इस भाग मे वास्तविक रूप मे ही था—इस दृष्टि से भी भवभूति के निवासस्थान का अभिज्ञान इसी पद्मपुर से करना समीचीन ही जान पडता है। पद्मपुर का उल्लेख दुग (म० प्र०) से प्राप्त एक

वाकाटक अभिलेख मे है-दे० इडियन हिस्टारिकल क्वाटरली, 1935, पृ० 299, एपिग्राफिका इडिका—22,207। प्राचीन समय मे यहा जैन मदिर भी अनेक होग क्योकि निकटस्थ खेतो से जैन तीथकरो की खडित मूर्तिया प्राप्त हुई हैं। कलचुरिकालीन अवशेष भी यहा मिले हैं।

पद्मषडवन

बुद्धचरित (3,63,64) म वर्णित विहारोद्यान जहा सिद्धाथ को उसका सारथी राजकुमार के मनोविनोदाथ ले गया था—'विशेष युक्ततु नरेंद्र-ग्रासनात् सपद्मषड वनमेवनिययौ। तत 'शिव कुसमितबालपादप, परिभ्रमत् प्रमुदितमत्तकोकिलम, विमानवत्सकमलचारु दीर्घिक ददश तद्वनमिव नदनवनम'। इस उद्यान म कुसुमित बालपादप, प्रमुदित कोकिलाए तथा कमलो से भरी पूरी झील शोभायमान थी। यह उद्यान कपिलवस्तु के निकट ही स्थित था।

पद्मसर

'रम्य पद्मसर गत्वा कालकूटमतीत्य च'—महा० सभा०, 20,26। इस उल्लेख से सूचित होता है कि यह सरोवर कालकूट क निकट ही स्थित होगा। कालकूट सभवत पश्चिमी उ० प्र० का कोई स्थान था।

पद्मा (पूव बगाल, पाकि०)

गगा ब्रह्मपुत्र की सयुक्तधारा का नाम।

पद्मालय=प्रवाल

पद्मावती

(1)=उज्जयिनी

(2) (जिला ग्वालियर, म० प्र०) सिंध तथा पावती (पारा)-नदियो के सगम पर स्थित, ग्वालियर से प्राय 40 मील दूर तीसरी चौथी शती ई० म नाग नरशो की प्राचीन राजधानी। भवभूति ने मालतीमाधव म इस नगरी के सौंदय तथा वैभवविलास का वणन किया है। पद्मावती का अभिज्ञान वतमान पदमपवाया नामक ग्राम स किया गया है जो नरवर से 25 मील उत्तरपूव म है। (दे० पद्मपुर)। गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे राजा गणपति नाग का उल्लख है जिसे समुद्रगुप्त न हराकर अपन अधीन कर लिया था। विद्वानो के मत मे यह पद्मावती ही का राजा था। नाग-राजाओ के अनेक सिक्के यहा से प्राप्त हुए हैं तथा प्रथम शती ई० से 8वी शती ई० तक क अनेक ऐतिहासिक अवशेष भी मिले है। इनमे प्रमुख हैं इटो के बन एक विशाल भवन के खडहर। यह भवन कई खनो का था। भारत मे इस स्थान के अतिरिक्त केवल अहिच्छत्र ही मे इस प्रकार के विशालकाय भवनो के अवशेष मिले हैं। जान पडता है कि य भवन नागवास्तुकला के उदाहरण हैं क्योकि दोनो ही स्थानो पर

नागनरेशा का आधिपत्य था। विष्णुपुराण 4 24,63 मे पद्मावती के नागराजाओ का उल्लेख है—'उत्साद्याखिलक्षत्रजाति नवनागा पद्मावत्या नाम पुर्यामनुगगा-प्रयाग गयायाश्च मागधा गुप्ताश्च भोक्ष्यन्ति'।

(3) कटक (उडीसा) का एक नाम जो पर्याप्त काल तक प्रसिद्ध रहा।

(4) पश्चिम रेलवे के उनाई बासदा स्टेशन से 2 मील दूर पद्मावती नामक एक प्राचीन नगरी के खडहर प्राप्त हुए हैं। कहते हैं कि उनाई के पास ही शरभग ऋषि का आश्रम था। (दे० ऊनवेदर)। कुछ लोगो के मत मे यह नगरी पुराण-प्रसिद्ध पद्मावती है किंतु यह अभिधान सदिग्ध जान पडता है। [दे० पद्मावती (1)]

(5) (दे० पन्ना)

पणियभूमि

जनग्रथ कल्पसूत्र के अनुसार इस स्थान पर तीर्थकर महावीर ने अपने जीवन के छ वर्ष विताए थे। यह स्थान वैशाली के निकट था।

पनागर (ज़िला जबल्पुर, म० प्र०)

इस प्राचीन ग्राम मे कलचुरिकाल की शिल्प तथा मूर्तिकला के अत्यत सुदर उदाहरण प्राप्त हुए हैं। यहा जैन सप्रदाय का एक मदिर है तथा खैरमाई नाम से प्रसिद्ध जैन देवी अबिका की एक फुट से अधिक ऊची प्रतिमा उसमे स्थित है। देवी के मस्तक पर तत्कालीन जन परपरा के अनुसार नेमिनाथ की पद्मासनावस्था मूर्ति आसीन है। पृष्ठ भाग मे विशाल आम्रवृक्ष की आकृति अंकित है।

पन्ना (म० प्र०)

बुदेलखड की भूतपूर्व रियासत जहा बुदेलानरेश छत्रसाल ने औरगजेब की मृत्यु (1707 ई०) के पश्चात अपने राज्य की राजधानी बनाई थी। मुग़ल सम्राट् बहादुरशाह ने 1708 ई० मे छत्रसाल की सत्ता को मान लिया। कहा जाता है कि इस नगरी का प्राचीन नाम पद्मावती या पद्मावती-पुरी था जो पद्मावती देवी के नाम पर पडा था। देवी का मदिर बस्ती के दूसरी ओर उत्तरपश्चिम म, एक नाले के पार आज भी स्थित है। वर्षाऋतु म यह नाला मदिर के पास एक झरने का रूप धारण कर लेता है। झरने के ऊपर मदिर से प्राय एक फर्लांग की दूरी पर हनुमान जी का मदिर है। स्थानीय जनश्रुति म पुराने जमाने मे पन्ना की बस्ती नाले के उस पार थी जहा राज गोड और कोल लोगा का राज्य था। 2 मील उत्तर की ओर महाराज छत्रसाल का पुराना महल आज भी खडहर के रूप म वर्तमान है। पन्ना को 18वी-19वी शतियो म पर्णा कहते थे। यह नाम तत्कालीन राज्यपत्रो म उल्लिखित

है। ऐचिसन के प्रसिद्ध सधिपत्रो मे तथा राजकीय चिट्ठियो मे (1787,1822, 1831,1840,1863 ई०) इस नाम का ही उल्लेख है। निस्सदेह पन्ना पर्णा का ही अपभ्रश है। पाडव नामक एक अति प्राचीन स्थल पन्ना छतरपुर मार्ग मे स्थित है। कहा जाता है कि पाडवो ने अपने वनवास काल का कुछ समय यहा व्यतीत किया था। यहा एक 30 फुट लबी गुफा के अदर, जो अति प्राचीन जान पडती है, कुछ अर्वाचीन मर्तिया तथा शिव प्रतिमाए अवस्थित हैं। गुफा की प्रस्तरभित्ति मे प्रकोष्ठ के समान एक सरचना दिखाई पडती है। आसपास के जगल मे अनेक वन्य पशु-पक्षियो का बसेरा है। कुछ अन्य टूटी फूटी सरचनाए भी पास ही स्थित है जो पाडवो के रहने के स्थान बताए जाते हैं। पास ही तालाब है जिसके एक किनारे पर एक सुदृढ इमारत है जिसमे दो कमरे हैं जिनकी दीवारें प्राय चार फुट मोटी हैं। सामने का चबूतरा हाल ही मे बना है। दूसरी ओर एक ऊचे स्थल से गिरता हुआ झरना दिखलाई देता है जो प्रस्तरखडो मे से बहता हुआ नीचे गिरता है और एक कूप मे जाकर समाप्त हो जाता है।

पन्हाला=परनाला (महाराष्ट्र)

परनाले के दुर्ग के पास 1659 ई० मे महाराष्ट्र केसरी शिवाजी तथा बीजापुर के सेनापति रनदौला (या रणदूल्ह) रुस्तमे जमान मे एक मुठभेड हुई थी। रुस्तमे जमान बीजापुर की रियासत के दक्षिण पश्चिमी भाग का सूबेदार था। अफजलखा की मृत्यु के पश्चात् बीजापुर की ओर से अफजलखा के पुत्र फजलखा को साथ लेकर इसने शिवाजी पर चढाई की। परनाले की लडाई म रुस्तमे जमान बुरी तरह से हारकर कृष्णा नदी की ओर भाग गया। कविवर भूषण ने इस घटना का वर्णन यो किया है—'अफजलखा रुस्तमे जमान फत्तेखान कूटे लूटे जूटे ए वजीर बिजपुर के' शिवराजभूषण, 241, 'भेजना है भेजो सो रिसालैं शिवराज जू की बाजी करनालै परनाल पर आय के'— शिवाबावनी 28। मई 1660 ई० मे बीजापुर की ओर से सिद्दी जौहर ने पन्हाला के किले को घेर लिया किंतु शिवाजी वहा से पहले ही निकल चुके थे।

पपनापेट (जिला मदक, आध्र)

ग्राम के चतुर्दिक एक प्राचीन सुदृढ दुर्ग स्थित है जो आज भी अच्छी दशा म है।

पपौत्त (बुदेलखड, म० प्र०)

मध्ययुगीन बुदेलखड की वास्तुकला के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

पोरा (जिला टीकमगढ, म० प्र०)

प्राय 75 प्राचीन जैन मदिर इस रमणीक पहाडी स्थान मे वन हुए हैं। इनमे प्राचीनतम अब से प्राय आठ सौ वप पुराना है।

पभोसा, पभोसी (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

भरवारी स्टेशन के निकट है। यहा प्रभास क्षेत्र नामक एक पहाडी पर एक प्राचीन जैन मदिर है जिसका सबध जन तीथकर पद्मप्रभु स बताते हैं। यह नगर शुगकाल मे प्रभास कहलाता था। यहा स प्राप्त एक अभिलेख मे शुगवशी नरेश बृहस्पति मित्र (दूसरी शती ई० पू०) का उल्लेख है। इसके सिक्के कौशाबी तथा अहिच्छत्र म भी मिले हैं। सभवत मोरा ग्राम (जिला मथुरा) से प्राप्त अभिलेख म भी इसी राजा का उल्लेख है। इसकी पुत्री यशामती मथुरा के किसी राजा का ब्याही थी। (दे० मथुरा-सग्रहाल्य परिचय पृ० 8)। पभोसा कौशाबी से अधिक दूर नही है।

पयस्विनी

(1) श्रीमदभागवत 11,5,39 40 मे दक्षिण भारत की नदियो मे पयस्विनी का नामोल्लेख है—'ताम्रपर्णी नदी यत्र कृतमाला पयस्विनी, कावेरी च महापुण्या प्रतीची च महानदी।' पयस्विनी नदी सभवत दक्षिण भारत की पालार है। श्रीमदभागवत, 5,19,18 म भी इसका उल्लख है—'कावरी वेणी पयस्विनी शकरावर्ता तु गभद्रा कृष्णा—'।

(2) चित्रकूट (जिला बादा, उ० प्र०) के निकट बहने वाली नदी वतमान पिसुनी। चित्रकूट के निकट ही पयस्विनी और मदाकिनी का सगम राघव-प्रयाग है। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस अयोध्याकाड चित्रकूट के वणन मे लिखा है—'लपण दीख पय उतर करारा, चहु दिशि फिरयो धनुप जिमि नारा'। इसकी टीका मे 'पय' का अथ करत हुए कुछ टीकाकारो न पयस्विनी नदी का निर्देश किया है। वाल्मीकि ने चित्रकूट के वणन म मुख्य नदी मदाकिनी का ही वणन किया है। वास्तव म पयस्विनी इसी की उपशाखा है। (दे० चित्रकूट, मदाकिनी)।

पयोष्णी

(1) तापी या ताप्ती की उपनदी जा विंध्याचल की दक्षिण-पूर्वी पहाडिया से निकलकर ताप्ती मे मिल जाती है। महाभारत वन० 87,4-5 6 7 म इस नदी का राजा नृग से सबध बताया गया है, (जसा चमण्वती या चबल का राजा रतिदव से है) जिन्होने इस नदी क तट पर स्थित वाराह तीथ म अनेक यज्ञ किए थे—'राजर्षेस्तस्य च सरि नगस्य भरतषभ, रम्यतीर्था बहुजला

पयोष्णी द्विजसेविता। अपिचात्र महायोगो मार्कंडेयो महायशा, अनुवंश्या जगौगाथा नृगस्य धरणीपते, नृगस्य यजमानस्य प्रत्यक्षमिति न श्रुतम, अमाद्यदिंद्र सोमेन दक्षिणाभिर्द्विजातय । पयोष्ण्या यजमानस्य वाराहे तीर्थ उत्तमे, उद्भूत भूतलस्थं वा वायुना समुदीरितम् । पयोष्ण्या हरते तोय पापमामरणान्तिकम्' । महाभारत भीष्म० 9,20 मे भी पयोष्णी का उल्लेख है--'शरावती पयोष्णी च वेणा भीमरथीमपि' । श्रीमदभागवत 5,19,18 मे पयोष्णी का नामोल्लेख इस प्रकार है--'कृष्णा, वेण्या, भीमरथी गोदावरी निर्विध्या पयोष्णी तापी रेवा--' कुछ लोगो के मत मे तापी और पयोष्णी एक ही हैं जैसा कि उनके नामार्थ से भी सूचित होता है किंतु श्रीमद्भागवत के उल्लेख मे दोनो नदियो का अलग-अलग नाम दिया हुआ है। इनकी भिन्नता विष्णु० 2,3,11 के उल्लेख से भी सूचित होती है--'तापी पयोष्णी निर्विध्या प्रमुखा ऋक्ष सभवा' --इसमे तापी और पयोष्णी दोनो का ऋक्ष पर्वत से उद्भूत माना है। जैसा ऊपर कहा गया है वास्तव मे ये दो नदिया हैं जो निकलती तो एक ही पर्वत से हैं किंतु काफी दूर तक अलग अलग मार्ग से बहती हुई आगे जाकर मिल जाती हैं।

(2)=परुष्णी

(3)=पयस्विनी (2)

परकर

गुप्तकालीन गणतंत्रराज्य जिसकी स्थिति संभवत वर्तमान मध्यप्रदेश के उत्तरी और मध्य भाग मे रही होगी। इस भाग के अन्य राज्य थे, खाक (=काक), सनकानिक आदि। इसका उल्लेख समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे है।

परकोटा (जिला सागर, म० प्र०)

इस ग्राम को उदानशाह राजपूत ने 1650 ई० के लगभग बसाया था (दे० सागर)।

परखम (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा से 14 मील दूर आगरा दिल्ली मार्ग पर स्थित ग्राम, जहा से एक यक्ष की विशालकाय मूर्ति प्राप्त हुई थी जो अब मथुरा सग्रहालय मे है। मूर्ति मे यक्ष का 'सुंदर ढग से धोती, दुपट्टा तथा कुछ सादे गहने, जैसे कर्णफूल, गुलूबद, प्रवेयक आदि पहनाए गए हैं। मूर्ति की चरण चौकी पर मौर्यकालीन ब्राह्मी लिपि मे तीन पंक्तियों का एक लेख खुदा है जिससे ज्ञात होता है कि कुणिक के शिष्य गोमित्र ने इस मूर्ति को बनाया

था (दे० पुरातत्व संग्रहालय, मथुरा, परिचय पृ० 3)। परखम से प्राप्त यह मूर्ति मथुरा की प्राचीनतम मूर्ति है। यह मौर्यकालीन है किंतु फिर भी इस पर प्रमाजन नहीं है जो तत्कालीन स्थापत्य की विशेषता थी (जैसे अशोक प्रस्तर स्तंभों का चमकीला प्रमाजन)। इस मूर्ति के आधार पर मथुरा मूर्ति कला की परंपरा में शुंगकाल में यक्षों की तथा कुषाणकाल में बोधिसत्वों की मूर्तियों का निर्माण हुआ था।

परतगण

'मारुता धेनुकाश्चैव तगणा परतगणा, वाल्हिकास्तित्तराश्चैवचोला-पाड्याश्च भारत'—महा० भीष्म० 50,51, पारदाश्च पुलिंदाश्च-तगणा परतगणा' सभा० 52 3 इन उल्लेखों से तगणों और परतगणों के जनपदों की स्थिति वर्तमान दक्षिणी-पश्चिमी एशिया के भूभाग में सूचित होती है। दूसरे उल्लेख के प्रसंग में इन दोनों जनपदों को शैलोदा (=वर्तमान खोतान नदी) के तटवर्ती प्रदेश में स्थित कहा गया है। यहाँ के योद्धा पांडवों की ओर से महाभारत युद्ध में लड़े थे। (दे० तगण, मरत धेनुक)। श्री वा० श० अग्रवाल के अनुसार परतगण जनपद कुलू कांगड़ा के पूरब में स्थित भोट के इलाके का एक भाग है (दे० कादंबिनी—अक्टूबर 62)।

परतियाल (मैसूर)

कृष्णा नदी की घाटी में स्थित इस स्थान से प्राचीन समय में हीरे निकाले जाते थे। 1701 ई० में पिट या रीजेंट नामक हीरा यहाँ की खानों से निकाला गया था। इसका नाम इंगलैंड के तत्कालीन मंत्री पिट के नाम पर प्रसिद्ध हुआ था। इस हीरे का भार मूलतः 410 करेट था जो अब कटते छटते केवल 137 करेट रह गया है। आजकल यह हीरा फ्रांस में लूवर की अपोलो वीथिका में प्रदर्शित है। इसका मूल्य अड़तालीस सहस्र पाउंड कूता गया है।

परथालिस

प्राचीन रोम के इतिहास लेखक प्लिनी (प्रथम शती ई०) के अनुसार परथालिस नामक नगर कलिंग (उड़ीसा) की राजधानी था। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है। (दे० कलिंग)

परनाला=पन्हाला

परभणी (महाराष्ट्र)

इस जिले से पाषाणयुगीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। गोदावरी तथा उसकी सहायक नदियों की घाटियों में कंकड़ तथा चिकनी मिट्टी की स्तरों में परिमृत जीवों की हड्डियाँ मिली हैं। यह भूभाग अशोक के समय उसके राज्य के

दक्षिणी भाग को जाने वाले मार्ग पर स्थित था। परभणी एक समय देवगिरि के यादव नरेशों के अधिकार में था। नगर में स्थित किला इसी काल का बना हुआ है। यादव नरेशों के समय में भगवान शिव की पूजा बहुत प्रचलित थी। परभणी जिले में वे घटनास्थलियां हैं जहाँ बहमनी रियासतों में से अहमदनगर तथा बरार में परस्पर लड़ाइयाँ हुई थी।

परमकाबोज

'लोहान् परम काबोजानृषिकानुत्तरानपि, सहितास्तान महाराज व्यजयत पाकशासनि' महा० सभा० 27,25। अर्जुन ने अपनी उत्तर की दिग्विजय में परमकाबोजदेश पर विजय प्राप्त की थी। प्रसगानुसार इसकी स्थिति वर्तमान सिक्यांग या चीनी तुर्किस्तान में जान पड़ती है। कबोज कश्मीर के उत्तर पश्चिमी इलाके में था। परम कबोज नाम अवश्य ही कबोज के परे, उत्तर पश्चिम में स्थित देश को ही कहा गया होगा (दे० उत्तरऋषिक, कबोज)।

परमरासस्थली (दे० पारासोली)

परली (दे० सज्जनगढ)

परशुराम कुंड (दे० रामह्रद)

महाभारत अनुशासन० में वर्णित एक तीर्थ जो विपाशा या बियास के तट पर स्थित रहा होगा क्योंकि इसका उल्लेख पंजाब की इसी नदी के प्रसंग में है।

परशुरामक्षेत्र (दे० शूर्पारक)

शूर्पारक देश जो अपरांत भूमि में स्थित था, परशुराम के लिए सागर द्वारा उत्सृष्ट किया गया था—महा० शांति० 49,66 67।

परशुरामपुरी (राजस्थान)

पुष्कर और साभर के बीच में सरस्वती नदी के तट पर स्थित है। कहा जाता है कि 15वीं शती के मध्य में आचार्य परशुराम देव ने इस स्थान से होकर आने जाने वाले यात्रियों को मुसलमान शासकों के उत्पीडन से मुक्त किया था और इसी कारण यह स्थान इन्ही के नाम पर प्रसिद्ध हुआ। शेरशाह सूरी ने जो स्वयं इस स्थान पर आया था, परशुरामपुरी का नाम अपने पुत्र सलेमशाह के नाम पर सलेमाबाद कर दिया था।

परांत

अपरांत का संक्षिप्त रूप है। श्री चि० वि० वैद्य के अनुसार वर्तमान सूरत जिले का परिवर्ती प्रदेश महाभारत काल में परांत कहलाता था। (दे० अपरांत)

परा (पारा)=पार्वती नदी

परास=पलाशिनी (2)

परिचक्रा

शतपथ ब्राह्मण 13,5,4,7 में पंचाल देश की इस नगरी का नामोल्लेख है। वेबर ने इसका अभिज्ञान महाभारत की एकचक्रा (=अहिच्छत्र) से किया है—(दे० वैदिक इंडेक्स 1,494)। परिचक्रा नाम से शायद यह व्यंजित होता है कि इस नगरी का आकार चक्र के समान वर्तुल रहा होगा या संभव है अहिच्छत्र की 'छत्र' से संबद्ध परम्परा से इसका नामकरण (चक्र—छत्र के समान गोल आकृति) हुआ हो—(दे० एकचक्रा, अहिच्छत्र)। परिचक्रा का रूपांतर परिवक्रा भी मिलता है।

परिणाह (दे० कुरु)

परिमुद

बंबई के निकट सालसेट द्वीप, यूनानी लेखकों का पेरीमूला (Perimula)।

परियर (जिला उन्नाव, उ० प्र०)

प्राचीन किंवदंती के अनुसार गंगातट पर स्थित इस ग्राम में वाल्मीकि ऋषि का आश्रम था। यहां से ताम्रयुगीन अवशेष भी प्राप्त हुए हैं (दे० वाल्मीकि आश्रम)।

परियार

केरल की नदी जो प्राचीन साहित्य की प्रतीची है। (दे० प्रतीची, चूर्णी)।

परिवक्रा (दे० परिचक्रा) (=अहिच्छत्र)

परीक्षितगढ़ (जिला मेरठ, उ० प्र०)

हस्तिनापुर से प्रायः 10 मील दूर स्थित है। कहा जाता है कि महाभारत के युद्ध के पश्चात कुरुदेश की राजधानी हस्तिनापुर गंगा की बाढ़ में बह गई थी, इसलिए पांडवों के पौत्र और अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित ने हस्तिनापुर के निकट परीक्षितगढ़ नामक नया नगर बसाया था। परीक्षितगढ़ नाम का कस्बा अभी तक विद्यमान है।

परुष्णी

पंजाब की प्रसिद्ध नदी रावी या इरावती का वैदिक नाम। इसका ऋग्वेद, मंडल 10, सूक्त 75 (नदी सूक्त) में उल्लेख है—'इमं मे गंगेयमुने सरस्वति शुतुद्रिस्तोमं सचता परुष्ण्या असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया'। जान पड़ता है कि परुष्णी नाम वैदिक काल में ही प्रचलित था क्योंकि परवर्ती साहित्य में इस नदी का नाम इरावती मिलता है।

अलक्षेंद्र के समय के इतिहास-लेखकों ने भी इस नदी को ह्यारोटीज (Hyarotis) लिखा है जो इरावती का ग्रीक उच्चारण है। रावी इरावती का ही अपभ्रंश है। ऋग्वेद के अनुसार परुष्णी नदी के तट पर ही तृत्स गण के राजा सुदास ने दस राजाओं की सम्मिलित सेना को हराया था। सुदास ने, जिसका राज्य परुष्णी के पूर्वी तट पर था, पश्चिम से आक्रमण करने वाले नरेश संघ की सेना को नदी पार करने से पहले ही परास्त कर पीछे ढकेल दिया था। ऋग्वेद 8,74 ('सत्यमित्था महेनदि-परुष्ण्यवदेदिशम्' आदि) में परुष्णी के निकट अनु के वंशजों का निवास बताया गया है। अनु ययाति का पुत्र था। वैदिक काल के पश्चात् इसी प्रदेश में मद्रक तथा केकय बस गए थे। [दे० इरावती (1)]

परेंदा (जिला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

बहमनी राज्य के प्रसिद्ध बुद्धिमान मंत्री महमूद गवां का बनवाया हुआ किला इस स्थान का मुख्य ऐतिहासिक स्मारक है। इसमें कई बड़ी बड़ी तोपें रखी हुई हैं। 1605 ई० में मुगलों का अहमदनगर पर अधिकार होने के पश्चात निजामशाही सुलतानों ने अपनी राजधानी यहां बनाई। तत्पश्चात् बीजापुर के सुलतान आदिलशाह ने इस पर अधिकार कर लिया। 1630 ई० में शाहजहां ने परेंदा का घेरा डाला और फिर औरंगजेब ने अपनी दक्षिण की सूबेदारी के समय इस पर पूर्ण रूप से अधिकार कर लिया। परेंदा का किला तो अच्छी दशा में है किंतु पुराना नगर अब खंडहर हो गया है। खंडहरों का विस्तार देखते हुए जान पड़ता है कि प्राचीन समय में यह नगर काफी लम्बा-चौड़ा रहा होगा। संभवतः परेंदा का ही उल्लेख शिवाजी के राजकवि भूषण ने शिवराजभूषण 214 में परेंडा के रूप में किया है—'बेदर कल्यान दे परेंडा आदि कोट साहि एदिल गवाए है नवाए निज सीस का'। यह किला बीजापुर के सुलतान आदिलशाह से शिवाजी ने छीन लिया था। इसी तथ्य का वर्णन भूषण ने किया है (एदिल=आदिलशाह)।

परेंडा (दे० परेंदा)

परेश्वर (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

इस स्थान से नवपाषाणयुगीन अवशेष, पत्थर के उपकरणादि—प्राप्त हुए हैं जिससे इस स्थान की प्रागैतिहासिकता सिद्ध होती है।

परौली (जिला कानपुर, उ० प्र०)

भीतरगांव से दो मील उत्तर की ओर स्थित है। यहां भीतरगांव की भांति ही एक गुप्तकालीन शिखरसहित मंदिर के अवशेष हैं। यह सोलह

भुजाओं वाले आयताकार स्थान को घेरे हुए हैं। इसका मध्यवर्ती गर्भगृह वर्तुल है न कि भीतरगाव के मंदिर की भांति वर्गाकार।

पर्णखंड (ज़िला गढ़वाल, उ० प्र०)

बदरीनाथ के नीचे का पहाड़ी प्रांतर। कहा जाता है कि पार्वती ने शिव को प्राप्त करने के लिए घोर तपस्या करते हुए धीरे धीरे सब प्रकार के भोजन छोड़ दिए, यहां तक कि वृक्षों के पत्ते भी खाना त्याग दिया। इसी कारण वे अपर्णा कहलाईं। लोकश्रुति है कि यह भूमि पार्वती की तपःस्थली है और उनकी तपस्या का पत्तों या पर्णों से संबंध होने के कारण ही पर्णखंड कहलाती है। (पार्वती की इस घोर तपस्या का वर्णन कुमारसंभव 5,28 में इस प्रकार है—'स्वयं विशीर्णद्रुमपर्णवृत्तिता परा हि काष्ठा तपसस्तया पुनः, तदप्यपाकीर्ण-मतः प्रियंवदा, वदन्त्यपर्णेति च तां पुराविदः'।) तुलसीदास ने भी रामचरित-मानस बाल० में अपर्णा का निर्देश इसी प्रकार किया है—'पुनि परिहरउ सुखानउ परना, उमा नाम तब भयउ अपरना'।

पर्णशाला

यामुन पर्वत की तलहटी में स्थित विद्वान ब्राह्मणों का एक ग्राम, जिसका उल्लेख महा० अनुशासन० 68, 3 4 में है—'मध्यदेशे महान् ग्रामो ब्राह्मणानां बभूव ह। गंगायमुनयोर्मध्ये यामुनस्य गिरेरधः। पर्णशालेति विख्यातो रमणीयो नराधिप, विद्वांसस्तत्र भूयिष्ठा ब्राह्मणाश्चावसंस्तथा।'

पर्णा=पर्ना

पर्णाशा

'चर्मण्वती तथा चैव पर्णाशा च महानदी'—महा० सभा० 9 20। पर्णाशा राजस्थान की बनास नदी है।

पर्णोत्स

चीनी यात्री युवानच्वांग के यात्रा वृत्त में इस राज्य को कश्मीर के अधीन कहा गया है। पर्णोत्स का अभिज्ञान पूंछ (काश्मीर) से किया गया है। संभवतः पूंछ पर्णोत्स का ही अपभ्रंश है। (दे० स्मिथ—अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया—पृ० 368)

पर्शुस्थान

पर्शु नामक एक युयुत्सु जाति का पाणिनि ने उल्लेख किया है (अष्टाध्यायी 5,3,117) जो भारत के उत्तर पश्चिम के प्रदेश में, संभवतः काबुल के निकटवर्ती भूभाग में निवास करती थी। पर्शुस्थान इन्हीं के देश का नाम था। यहीं मलसदा की स्थिति थी। पर्शु या पार्शव का संबंध पारस

या ईरान देश से भी हो सकता है। (दे० अलसदा)

पलाशपुर

जैन सूत्र अतकृत दशाग मे उल्लिखित एक नगर जहा के राजकुमार अतिमुक्त की कहानी इस सूत्र मे वर्णित है। अभिज्ञान सदिग्ध है।

पलाशिनी

(1) (सौराष्ट्र, गुजरात) जूनागढ के निकट बहने वाली नदी जिसे अब पलाशियो कहते हैं। इसके नाम का कारण नदी तट पर पलाश (=ढाक) के जगलो का होना है। पलाशियो के आसपास आज भी पलाश के विस्तृत जगल पाए जाते हैं। गिरनार की चट्टान पर उत्कीर्ण रुद्रदामन तथा सम्राट् स्कदगुप्त के अभिलेखो से ज्ञात होता है कि पूर्वकाल मे सुवर्णसिकता (=वर्तमान सोनरेख) और पलाशिनी नदियो का पानी रोककर सिंचाई के लिए सुदर्शन नाम की एक झील बनवाई गई थी जिसका बाध घोर वर्षा के कारण टूट गया था। 453 ई० म सौराष्ट्र के शासक चक्रपालित ने जो स्कदगुप्त द्वारा नियुक्त था इस बाध का जीर्णोद्धार करवाया था—'सुवर्णसिकता पलाशिनी प्रभृतीना नदीनामतिमात्रोद्वृत्तवेगै सेतुमयमाणानुरूप प्रतिकारमपि। (दे० गिरनार)।

(2) छोटा नागपुर की नदी। यह कोयल की सहायक नदी है। इसे अब परास कहते हैं।

पलासी (पश्चिमी बगाल)

पलासी का प्रसिद्ध युद्ध 1757 ई० मे बगाल के नवाब सिराजुद्दौला तथा ईस्ट इडिया कपनी की सेनाओ के बीच हुआ था जिसमे क्लाइव की कूटनीति के कारण अगरेजो की विजय हुई। पलासी के युद्ध के परिणामस्वरूप अगरेजो का प्रभुत्व बगाल मे स्थापित हो गया। इस युद्ध से अगरेजो को भारतीय राज्यो के दुर्बल सैनिक सघटन का पता चल गया। कहा जाता है कि पलाश अथवा ढाक के वृक्षो की बहुतायत होने से ही इस ग्राम को पलासी कहा जाता था। यह भागीरथी (गगा) के वाम तट पर बसा है।

पलुर (ज़िला गजम, उडीसा)

गोपालपुर के निकट यह अति प्राचीन बन्दरगाह था जहाँ से भारत के व्यापारी मलय प्रायद्वीप तथा जावा द्वीप की यात्रा के लिए जलयानो मे सवार होते थे। निकटवर्ती ताम्रलिप्त (तामुलक) का बन्दरगाह भी पलुर का समकालीन था। इसका समृद्धिकाल ई० सन् के प्रारम्भ से उत्तरगुप्तकाल तक समझना चाहिए। प्राचीन रोम के भौगोलिक टॉलमी ने इसका उल्लेख किया है।

पल्लविहार

पालनपुर (गुजरात) का प्राचीन नाम। इसका उल्लेख जैन ग्रंथ तीर्थमालाचैत्य वंदन में इस प्रकार है—'कुंतीपल्लविहार तारणगढे सापारकारासणे'।

पल्लावरम् (मद्रास)

मद्रास के निकट इस स्थान पर प्रागैतिहासिक युग के (नवपाषाणकालीन) अनेक समाधिस्थल पाए गए थे जिनमें अनेक शवों के अवशेष विद्यमान थे।

पवनगढ़ (महाराष्ट्र)

(1) पवनगढ के दुर्ग पर 17वी शती के मध्य में अफ्जलखां को मारने के पश्चात महाराष्ट्रकेसरी शिवाजी ने अपना अधिकार कर लिया था। पहले यह दुर्ग बीजापुर के सुलतान के अधीन था।

(2)=पावागढ (दे० चांपानेर)

पवाया=पदमपवाया (दे० पद्मावती)

पविता

विष्णुपुराण 2,4,43 में उल्लिखित कुशद्वीप की एक नदी—'धूतपापा शिवा चैव पवित्रा सम्मतिस्तथा, विद्युदम्भामही चान्या सर्वपापहरास्त्विमा'।

पवैया (प० पाकि०)

छठी शती ई० में हूण नरेश तोरमाण तथा उसके पुत्र मिहिरकुल के राज्य का एक नगर जो चिनाव नदी के तट पर बसा था और हूणों की शक्ति का शाकल या स्यालकोट के साथ ही, प्रसिद्ध केंद्र था। (दे० जर्नल आव बंगाल एण्ड उडीसा रिसर्च सोसाइटी मार्च 1928, पृ० 33)

पशुपतिनाथ (नेपाल)

कठमंडू से २ मील उत्तर में बसे हुए इस स्थान पर विष्णुमती नदी के तट पर प्रसिद्ध शिवमंदिर स्थित है। पशुपतिनाथ का मंदिर बहुत प्राचीन है और शायद महाभारत में इसी को पशुभूमि नाम से अभिहित किया गया है। शिवरात्रि के दिन यहां भारत और नेपाल भर के यात्री पहुंचते हैं। (दे० पशुभूमि)।

पशुभूमि

महाभारत सभा० 30,9 में भीम की दिग्विजययात्रा के प्रसंग में इस स्थान पर उनकी विजय का वर्णन है—'अनघानभयाश्चैव पशुभूमिं च सर्वश, निवृत्य च महाबाहुर्मदधार महीधरम्'। कई विद्वानों के मत में पशुभूमि पशुपतिनाथ (नेपाल) का पर्याय है किंतु श्री वा० श० अग्रवाल का मत है कि यह स्थान गिरिव्रज (मगध) के आसपास की चरागाहभूमि का नाम था।

जैन आगमो के अनुसार दस सहस्र गौओ की चारण-भूमि को व्रज कहते थे और गिरिव्रज का नाम यहा विस्तृत चरागाहो की स्थिति के कारण ही हुआ था।

पहाड़पुर (जिला राजशाही, बगाल)

श्री का० ना० दीक्षित ने पुरातत्व विभाग की ओर से किए गए उत्खनन मे इस स्थान से एक गुप्तकालीन मदिर के ध्वसावशेषो का प्राप्त किया था। खडहरो से गुप्तसवत 159=478 479 ई० का एक दानपट्ट भी मिला था। इसम किसी ब्राह्मणदम्पति द्वारा एक जैन (निर्ग्रन्थ) विहार के लिए भूमिदान का उल्लेख है। पहाड़पुर मे राधा और कृष्ण की मूर्तिया भी मिली है। गुप्तकाल की ऐसी मूर्तिया कही और प्राप्त नही हुई है।

पहूज

यमुना की सहायक नदी जो बुदेलखड के क्षेत्र मे बहती है। यह भीष्मपव महा० मे उल्लिखित पुष्पवती हो सकती है।

पांचजन्य

महाभारत के अनुसार द्वारका के पूव की ओर स्थित रैवतक नामक पवत के निकट पाचजन्य नामक वन सुशोभित था। इसी के पास सवतु क वन भी था। इन दोना वनो को चित्रित वस्त्र की भाति रग विरगा कहा गया है—'चित्रकबल वणाभपाचज यवन तथा सवतुक वनचैव भाति रैवतक प्रति' सभा० 38 (दाक्षिणात्य पाठ)।

पाचाल (दे० पचाल)

पांडर=पाडव (२)

पाडरेथान (कश्मीर)

श्रीनगर से तीन मील उत्तर मे है। कहा जाता है कि अशोक का बसाया हुआ श्रीनगर इसी स्थान पर था। यहा स्थित प्राचीन मदिर वास्तुशैली की दृष्टि से अनतनाग के प्रसिद्ध मार्तंड मदिर की परम्परा मे है। (दे० श्रीनगर।)

पाडव

(1) दे० प ना

(2) (बिहार) राजगृह की पाच पहाडियो मे से एक का नाम। महाभारत सभा० 21 मे इसे पाडर कहा है जा पाडव का रूपातरण या पाठातर हो सकता है। इसके नाम से, इसका सबध पाडवो से सूचित होता है। महा० सभा० 21 दाक्षिणात्य पाठ मे पाडर का उल्लेख इस प्रकार है—'पाडर विपुले चैव तथा वाराहकेऽपिच, चैत्यके च गिरिश्रेष्ठे मातगे च शिलोच्चये'।

पालीग्रंथो मे पाडर का पाडव लिखा गया है (दे० ए गाइड टु राजगीर पृ० 1)

पाडवगुफा (जिला नासिक, महाराष्ट्र)

नासिक से 5 मील दूर ववई के माग पर 24 प्राचीन गुफाए हैं जिनम अनेक वौद्ध मूर्तिया अवस्थित हैं। स्थानीय जनश्रुति म ये गुफाए मूल्त पाडवो से सबधित हैं।

पाडुआ (वगाल)

गौड स 20 मील दूर वगाल की प्राचीन राजधानी। 1575 ई० म अकवर के द्वारा नियुक्त वगाल के सूवदार न गौडनगरी के सौंदय से आकृष्ट होकर अपनी राजधानी पाडुआ से हटा कर गौड मे बनाई थी (दे० गौड)

पाडुकेश्वर (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

जोशीमठ से बदरीनाथ के माग मे 9 मील दूर प्राचीन स्थान है। स्थानीय किंवदती म इमका सवध महाभारत के महाराजा पाडु से वताया जाता है। कहत हैं कि यहाँ योगबदरी के मदिर की मूर्ति की स्थापना महाराज पाडु ने की थी तथा यही उनका ज म स्थान भी है।

पाडुखोली (तहसील रानीखेत, जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

दूनागिरि पहाड से चार मील उत्तर पूव पाडुखोली नामक पवत है जहा किवदती के अनुसार पाडवो ने अपने अज्ञातवास का कुछ समय व्यतीत किया था।

पाडुरग (अनाम, कबोडिया)

प्राचीन भारतीय उपनिवेश चपा का दक्षिणी भाग। पाचवी शती ई० के प्रारभ मे वहा चपा के राजा धममहाराज श्रीभद्रवमन का आधिपत्य था। वीरपुर या राजपुर मे यहा की राजधानी थी।

पाडुराष्ट्र

श्री चि० वि० वैद्य के अनुसार यह महाभारत काल म वतमान महाराष्ट्र का एक भाग था।

पाडुल (लका)

महावश 10,20 मे उल्लिखित है। इसकी स्थिति उपतिष्य नामक ग्राम के दक्षिण मे वताई गई है।

पांडुलेण (जिला नासिक, महाराष्ट्र)

प्रथम शती ई० पू० से द्वितीय शती ई० तक बनी हुई चैत्यविहार गुफाए नासिक से 5 मील दूर स्थित हैं। ये त्रिरश्मि नामक पवत म बनी हैं। इनम

से कुछ तो चैत्य हैं तथा अन्य विहार के रूप मे निर्मित हैं। यहा के अभिलेखो से ज्ञात होता है कि ये गुफाए आध्रकालीन राजाओ के समय मे बनी थी। इन गुफाओ की मूर्तिकारी से आध्रकालीन सस्कृति पर काफी प्रकाश पडता है। अभिलेखो से आध्रराजा शातकर्णी तथा पुलोमी की धार्मिक श्रद्धा तथा उनके राज्यविस्तार का हाल मिलता है। ये गुफाए बौद्धधम के हीनयान सप्रदाय के भिक्षुओ के लिए बनी थी।, इनकी मूर्तिकला मे साची की कला की भाति ही बुद्ध की मूर्तिया नही बनाई गई हैं। उनकी उपस्थिति का ज्ञान उनके उष्णीष तथा अन्य प्रतीको द्वारा कराया गया है।

पाडुवाला (जिला सहारनपुर, उ० प्र०)

हरद्वार से प्राय 10 मील पूव और मुढाल से छ मील पर यहा एक प्राचीन नगर के खडहर है। कनिघम ने पुरातत्त्व विभाग की ओर से 1891 ई० की रिपोट मे इस स्थान को ब्रह्मपुर राज्य की राजधानी माना है जहा चीनी यात्री युवानच्वाग, 630 ई० के लगभग आया था।

पांड्य

1) सुदूर दक्षिण का प्राचीन राज्य। कृतमाला और ताम्रपर्णी पाडय देश की मुख्य नदिया थीं। महाभारत सभा० 31,16 मे पाडय देश के राजा का सहदेव द्वारा परास्त होने का वणन है 'पुलिदाश्च रेणे जित्वा ययौ दक्षिणत पुर, युयुधे पाडय-राजेन दिवस नकुलानुज'। टॉलमी (लगभग 150 ई०) ने पाडुदश को पाडुओयी लिखा है और इसको पजाव से सबद्ध वताया है। सभव है सुदूर दक्षिण के पाड्य देश और उत्तर के पाडुदेश मे कुछ सबध रहा हो। प्राचीन साहित्य से ज्ञात होता है कि शूरसेन या मथुरा, जो पाडवो के प्रिय सखा श्रीकृष्ण की जन्म भूमि होने के नाते टॉलमी द्वारा उल्लिखित पाडुदेश हो सकता है, से दक्षिण भारत का कुछ सबध अवश्य था जैसा कि मेगस्थनीज़ के वृत्तात से भी सूचित होता है। जिस प्रकार शूरसेन देश की राजधानी मथुरा थी उसी प्रकार पाड्य देश की राजधानी भी मथुरा या वतमान मदुरा (मदुरै) थी। सभवत उत्तर के पाडुलोग ही कालातर म दक्षिण भारत मे जा कर बस गए होंगे। कात्यायन ने पाड्य शब्द की उत्पत्ति पाडु से ही बताई है। अशोक के 13 शिलाभिलेखो मे पाड्य को चोल और सतियापुत्त के साथ मौय साम्राज्य के प्रत्यत दशो मे माना गया है। कालिदास ने रघुवश 6,60 61-62 63-64 65 म इदुमती-स्वयवर के प्रसग म पाड्यराज तथा उसके देश का मनोहारी वणन किया है जिसका एक अश यह है 'पाड्योऽ यमसार्पितलबहार क्लृप्तागरागोहरिचदनेन, आभाति बालातपरक्तसानु सनिर्झरोद्गार इवाद्रिराज। ताबूलवल्ली परिण-

द्पूगास्वेलालतालिंगितचदनासु, तमालपत्रास्तरणासुरतु प्रसीद शश्वन् मलय-स्थलीपु'। इन पद्यो मे पाड्य देश के चदन, ताबूल, एला (इलायची) तथा तमाल वृक्षो तथा लताओ का वर्णन है और मलय पर्वत की स्थिति इस देश मे बताई गई है। रघु० 6,65 मे पाड्यराज को 'इदीवर श्यामतनु' कहा है जो सुदूर दक्षिण के भारतीयो का स्वाभाविक शरीर-रग है। श्री रायचौधरी के अनुसार प्राचीन पाडय देश मे वर्तमान मदुरा, रामनाद और तिन्नेवली के जिले और केरल का दक्षिणी भाग सम्मिलित था तथा इसकी राजधानी कोरकई और मदुरा (दक्षिण मथुरा) मे थी। (पोलिटिकल हिस्ट्री आव एशेंट इडिया, पृ० 270)। (दे० कोरकई, मदुरा)

पावता साहब (जिला देहरादून, उ० प्र०)

देहरादून से 30 मील पश्चिम की ओर है। इस गुरुद्वारे की स्थापना 1684 ई० मे गुरु गोविद सिंह ने की थी। यह स्थान अपनी प्राकृतिक शोभा के लिए प्रख्यात है।

पाशुराष्ट्र

महाभारत सभा० 52,27 मे इस देश का उल्लेख है—'पाशुराष्ट्राद्वसुदानो *राजा षड्विंशति गजान्, अश्वानां च सहस्रे द्वे राजन काचन मालिनाम'*—अर्थात् युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ मे उपायन या भेंट के लिए राजा वसुदान ने पाशुदेश से छब्बीस हाथी और दो सहस्र सुवर्णमालाविभूषित घोडे (भेजे)। श्रीमोतीचद के अनुसार पाशुराष्ट्र उडीसा मे स्थित था। (दे० मोतीचद, उपायन पर्व, ए स्टडी)

पाखल (पाखल तालुका, जिला वारगल, आ० प्र०)

वारगल से लगभग 32 मील पूर्व मे स्थित यह झील 700 वर्ष प्राचीन कही जाती है। पाखल नदी के आरपार 2000 गज का बाध बनाकर इस कृत्रिम झील का निर्माण किया गया था। बाध दो नीची पहाडियो के बीच मे है। कहा जाता है कि जब ककातीय नरेश प्रतापरुद्र ने दिल्लीसम्राट (मु० तुगलक) को कर देना बद कर दिया तो सम्राट के सेनापति शिताब खा ने इस झील का बाध तोड दिया और झील के किनारे छिपे हुए खजाने को उठा कर ले गया। ककातीय नरेश गणपति का एक अभिलेख झील के बाध पर उत्कीर्ण है जिसमे उसे कलिंग, शक, मालव, कोरल, हूण, कौर, अरिमद, मगध, नेपाल आदि देशो के नरेशो का अधिपति बताया गया है।

पागन [दे० ताम्रद्वीप (2)]

पाटण=पाटन (दे० अन्हलवाडा)

पाटन (1)=अन्हलवाडा

(2)=सोमनाथ

(3)=पाटल

(4)=देवपाटन

पाटनगढ़ (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर के पश्चिम मे स्थित पाटनगढ के दुर्ग की गणना गढ़मडला की वीरागना रानी दुर्गावती के श्वसुर सग्राम सिंह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढो मे की जाती थी।

पाटनगर

कनिंघम ने पाटनगर का भद्रावती (जिला चादा, म० प्र०) से अभिज्ञान किया है। (दे० भद्रावती)

पाटनचेर (जिला मदेक, आ० प्र०)

वारगल नरेशो के समय मे यह समृद्धिशाली नगर था। यहा 12वी शती से 15वी शती तक के हिंदू मदिरो के अवशेष है। 13वी शती मे निर्मित जैन मदिर तथा काले पत्थर की बनी तीर्थंकरो की विशाल प्रतिमाए भी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। एक स्तभ पर उत्कीर्ण कमलपुष्प के चतुर्दिक राशिमडल के चित्र अकित हैं। कुछ अन्य प्राचीन भूमिगत मदिरो के अवशेष भी यहा से प्राप्त हुए हैं।

पाटल (सिंध, पाकि०)

यह स्थान वर्तमान ब्राह्मनाबाद के निकट था। इसका उल्लेख अलक्षेद्र (सिकदर) के भारत पर आक्रमण (327 ई० पू०) का वृत्तात लिखने वाले यूनानी इतिहासकारो ने किया है। उस समय यहा एक शक्तिशाली राजा राज्य करता था। डायोडोरस लिखता है कि पाटल का शासन-प्रबध ग्रीक राज्य स्पार्टा के समान ही होता था।

पाटलावती

चबल की सहायक नदी जिसका उल्लेख मालतीमाधव अक 9 मे है।

पाटलि=पाटलिपुत्र

पाटलिग्राम

महावग्ग म उल्लिखित पाटलिपुत्र का नाम।

पाटलिपुत्र=पटना (बिहार)।

गौतम बुद्ध के जीवनकाल म, बिहार म, गगा के उत्तर की ओर लिच्छवियो का वृज्जिगणराज्य तथा दक्षिण की ओर मगध का राज्य था। बुद्ध जब अतिम

बार मगध गए थे तो गंगा और शोण नदियों के संगम के पास पाटलि नामक ग्राम बसा हुआ था जो पाटल या ढाक के वृक्षों से आच्छादित था। मगधराज अजातशत्रु ने लिच्छवीगणराज्य का अंत करने के पश्चात्, एक मिट्टी का दुर्ग पाटलिग्राम के पास बनवाया जिससे मगध की लिच्छवियों के आक्रमणों से रक्षा हो सके। बुद्धचरित 22 3 से सूचित होता है कि यह किला मगधराज के मंत्री वर्षकार ने बनवाया था। अजातशत्रु के पुत्र उदायिन या उदायिभद्र ने इसी स्थान पर पाटलिपुत्र नगर की नींव डाली। पाली ग्रंथों के अनुसार भी नगर का निर्माण सुनिधि और वस्सकार (=वर्षकार) नामक मंत्रियों ने करवाया था। पाली अनुश्रुति के अनुसार गौतम बुद्ध ने पाटलि के पास कई बार राजगृह और वैशाली के बीच आते जाते गंगा को पार किया था और इस ग्राम को बढ़ती हुई सीमाओं को देखकर भविष्यवाणी की थी कि यह भविष्य में एक महान नगर बन जाएगा। अजातशत्रु तथा उसके वंशजों के लिए पाटलिपुत्र की स्थिति महत्त्वपूर्ण थी। अब तक मगध की राजधानी राजगृह में थी किंतु अजातशत्रु द्वारा वैशाली (उत्तर बिहार) तथा काशी की विजय के पश्चात् मगध के राज्य का विस्तार भी काफी बढ़ गया था और इसी कारण अब राजगृह से अधिक केंद्रीय स्थान पर राजधानी बनाना आवश्यक हो गया था। जैनग्रंथ विविध तीर्थकल्प में पाटलिपुत्र के नामकरण के संबंध में एक मनोरंजक कथा का उल्लेख है। इसके अनुसार कुणिक अजातशत्रु की मृत्यु के पश्चात उसके पुत्र उदयी ने अपने पिता की मृत्यु के शोक के कारण अपनी राजधानी को चंपा से अन्यत्र ले जाने का विचार किया और शकुन बताने वालों को नई राजधानी बनाने के लिए उपयुक्त स्थान की खोज में भेजा। ये लोग खोजते-खोजते गंगातट पर एक स्थान पर पहुंचे। वहां उन्होंने पुष्पों से लदा हुआ एक पाटल वृक्ष (ढाक या किंशुक) देखा जिस पर एक नीलकंठ बैठा हुआ कीड़े खा रहा था। इस दृश्य को उन्होंने शुभ शकुन माना और यहां पर मगध की नई राजधानी बनाने के लिए राजा को मंत्रणा दी। फलस्वरूप जो नया नगर उदयी ने बसाया उसका नाम पाटलिपुत्र या कुसुमपुर रक्खा गया। उदयी ने यहां श्री नेमिका चैत्य बनाया और स्वयं जैन धर्म में दीक्षित हो गया। विविधतीर्थ कल्प में चंद्रगुप्त मौर्य, बिंदुसार, अशोक और कुणाल को क्रमशः पाटलिपुत्र में राज करते बताया गया है। जैन साधु स्थूलभद्र ने पाटलिपुत्र में ही तपस्या की थी। इस ग्रंथ में नवनंद और उनके वंश को नष्ट करने वाले चाणक्य का भी उल्लेख है। इनके अतिरिक्त सर्वकलाविद् मूलदेव और अचल सार्थवाह श्रेष्ठी का नाम

भी पाटलिपुत्र-के सबध मे आया है। वायुपुराण के अनुसार-कुसुमपुर या पाटलिपुत्र को उदयी ने अपने राज्याभिषेक के चतुर्थ वर्ष मे बसाया था। यह तथ्य गार्गी संहिता की साक्षी से भी पुष्ट होता है। परिशिष्टपर्वन् (जैकोबी द्वारा संपादित, पृ० 42) के अनुसार भी इस नगर की नींव उदायी (=उदयी) ने डाली थी। पाटलिपुत्र का महत्त्व शोण गगा के सगम के कोण मे बसा होने के कारण, सुरक्षा और व्यापार—दोनो ही दृष्टियो से, शीघ्रता से बढ़ता गया और नगर का क्षेत्रफल भी लगभग 20 वर्ग मील तक विस्तृत हो गया। श्री चिं०वि० वैद्य के अनुसार महाभारत के परवर्ती संस्करण के समय से पूर्व ही पाटलिपुत्र की स्थापना हो गई थी, किंतु इस नगर का नामोल्लेख इस महाकाव्य मे नही है जब कि निकटवर्ती राजगृह या गिरिव्रज और गया आदि का वर्णन कई स्थानो पर है। पाटलिपुत्र की विशेष ख्याति भारत के ऐतिहासिक काल के विशालतम साम्राज्य—मौर्य साम्राज्य की राजधानी के रूप मे हुई। चंद्रगुप्त मौर्य के समय के पाटलिपुत्र की समृद्धि तथा शासन सुव्यवस्था का वर्णन यूनानी राजदूत मेगेस्थनीज ने भलीभांति किया है जिसमे पाटलिपुत्र के स्थानीय शासन के लिए बनी एक समिति की भी चर्चा की गई है। उस समय यह नगर 9 मील लबा तथा 1½ मील चौडा एव चतुर्भुजाकार था। चद्रगुप्त के भव्य राजप्रासाद का उल्लेख भी मेगेस्थनीज ने किया है जिसकी स्थिति डा० स्पूनर के अनुसार वर्तमान कुम्हरार के निकट रही होगी। यह चौरासी स्तभो पर आधृत था। इस समय नगर के चतुर्दिक् लकडी का परकोटा तथा जल से भरी हुई गहरी खाई भी थी। अशोक ने पाटलिपुत्र मे बौद्धधर्म की शिक्षाओ का प्रचार करने के लिए दो प्रस्तर स्तभ प्रस्थापित किए थे। इनमे से एक स्तभ उत्खनन मे मिला भी है। अशोक के शासनकाल के 18वें वर्ष मे कुक्कुटाराम नामक उद्यान मे मोगलीपुत्र तिस्सा (तिष्य) के सभापतित्व मे द्वितीय बौद्ध धर्म संगीति (महासम्मेलन) हुई थी। जैन अनुश्रुति मे भी कहा गया है कि पाटलिपुत्र मे ही जैन धर्म की प्रथम परिषद का सत्र सपन्न हुआ था। इसमे जैन धर्म के आगमो को सगृहीत करने का कार्य किया गया था। इस परिषद् के सभापति स्थूलभद्र थे। इनका समय चौथी शती ई० पू० मे माना जाता है। मौर्यकाल मे पाटलिपुत्र से ही सपूर्ण भारत (गधारदेश सहित) का शासन सचालित होता था। इसका प्रमाण अशोक के भारत भर मे पाए जाने वाले शिलालेख हैं। गिरनार के रुद्रदामन अभिलेख से भी ज्ञात होता है कि मौर्यकाल मे मगध से सैकडो मील दूर सौराष्ट्र प्रदेश मे भी पाटलिपुत्र का शासन चलता था। मौर्यों के पश्चात् शुगो की राजधानी भी पाटलिपुत्र मे ही रही। इस समय

यूनानी मेनेंडर ने साकेत और पाटलिपुत्र तक पहुंचकर देश को आक्रांत कर डाला किंतु शीघ्र ही पुष्यमित्र शुंग ने इसे परास्त करके इन दोनों नगरों में भली प्रकार शासन स्थापित किया। गुप्तकाल के प्रथम चरण में भी गुप्त साम्राज्य की राजधानी पाटलिपुत्र में ही स्थित थी। कई अभिलेखों से यह भी जान पड़ता है कि चंद्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य ने, जो भागवत धर्म का महान् पोषक था अपने साम्राज्य की राजधानी अयोध्या में बनाई थी। चीनी यात्री फाह्यान ने जो इस समय पाटलिपुत्र आया था, इस नगर के ऐश्वर्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि यहां के भवन तथा राजप्रासाद इतने भव्य एवं विशाल थे कि शिल्प की दृष्टि से उन्हें अतिमानवीय हाथों का बनाया हुआ समझा जाता था। इस समय के (गुप्तकालीन) पाटलिपुत्र की शोभा का वर्णन संस्कृत कवि वररुचि ने इस प्रकार किया है—'सर्ववीतभयं प्रहृष्टवदननित्योत्सवव्यापृतं, श्रीमद्रत्नविभूषणागरचनं स्रग्गन्धवस्त्रोज्ज्वलं, क्रीडामौख्यपरायणविरचित-प्रख्यातनामा गुणभूमि पाटलिपुत्रचारुतिलका स्वर्गायते साम्प्रतम्'। पश्चगुप्त-काल में पाटलिपुत्र का महत्व गुप्त साम्राज्य की अवनति के साथ साथ कम हो चला। तत्कालीन मुद्राओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि गुप्त साम्राज्य के ताम्र-सिक्कों की टकसाल समुद्रगुप्त और चंद्रगुप्त द्वितीय के समय में ही अयोध्या में स्थापित हो गई थी। छठी शती ई० में हूणों के आक्रमण के कारण पाटलिपुत्र की समृद्धि को बहुत धक्का पहुंचा और उसका रहा सहा गौरव भी जाता रहा। 630-645 ई० में भारत की यात्रा करने वाले चीनी पर्यटक युवान-च्वांग ने 638 ई० में पाटलिपुत्र में सैंकड़ों खंडहर देखे थे और गंगा के पास दीवार से घिरे हुए इस नगर में उसने केवल एक सहस्र मनुष्यों की आबादी ही पाई। युवानच्वांग ने लिखा है कि पुरानी बस्ती को छोड़कर एक नई बस्ती बसाई गई थी। महाराज हर्ष ने पाटलिपुत्र में अपनी राजधानी न बना-कर कान्यकुब्ज को यह गौरव प्रदान किया। 811 ई० के लगभग बंगाल के पाल नरेश धर्मपाल द्वितीय ने कुछ समय के लिए पाटलिपुत्र में अपनी राजधानी बनाई। इसके पश्चात् सैंकड़ों वर्ष तक यह प्राचीन प्रसिद्ध नगर विस्मृति के गर्त में पड़ा रहा। 1541 ई० में शेरशाह ने पाटलिपुत्र को पुनः एक बार बसाया क्योंकि बिहार का निवासी होने के कारण वह इस नगर की स्थिति के महत्व को भलीभांति समझता था। अब यह नगर पटना कहलाने लगा और धीरे-धीरे बिहार का सबसे बड़ा नगर बन गया। शेरशाह से पहले बिहार प्रांत की राजधानी बिहार नामक स्थान में थी जो पाल नरेशों के समय में उद्दंडपुर नाम से प्रसिद्ध था। शेरशाह के पश्चात मुगल काल में पटना ही में बिहार

प्रात की राजधानी स्थायी रूप से रही। ब्रिटिश काल म 1892 मे पटना का बिहार-उडीसा के सयुक्त सूबे की राजधानी बनाया गया।

पटने मे बाकीपुर तथा कुम्हरार के स्थान पर उत्खनन द्वारा अनेक प्राचीन अवशेष प्रकाश मे लाए गए है। चद्रगुप्त मौय के समय के राजप्रासाद तथा नगर के काष्ठनिर्मित परकोटे के चिह्न भी डा० स्पूनर को 1912 म मिले थे। इनम से कई सरचनाए काष्ठ के स्तभो पर आवृत मालूम होती थी। वास्तव म मौयकालीन नगर कुम्हरार के स्थान पर ही बसा था। अशोककालीन स्तभ क खडित अवशेष भी खुदाई मे प्राप्त हुए थे। बौद्ध ग्रथो मे वर्णित कुक्कुटाराम (जहा अशोक के समय प्रथम बौद्ध सगीति हुई थी) क अतिरिक्त यहा कई अय बौद्धकालीन स्थान भी उत्खनन के परिणामस्वरूप प्रकाश मे आए हैं। ऊगमसर क निकट पचपहाडी पर कुछ प्राचीन खडहर हैं जिनम अशोक के पुत्र महेद्र के निवास-स्थान का सूचक एक टीला बताया जाता है जिसे बौद्ध आज भी पवित्र मानते हैं। यहा प्राचीन सप्त सरोवरो मे से रामसर (रामकटारा) और श्यामसर (सेवे) और मगलसर आज भी स्थित है। गौतम गोत्रीय जैनाचाय स्थूलभद्र (कुछ विद्वानो के मत मे ये बौद्ध थे) के स्तूप के अवशेष गुलजारबाग स्टेशन के निकट बताए जाते ह। स्तूप के पास की भूमि कुछ उभरी हुई है जिसे स्थानीय लोग कमलदह कहते हैं। जनश्रुति है कि मैथिलकोकिल विद्यापति को इस तडाग के कमल बहुत प्रिय थे। श्री का० प्र० जायसवाल सस्था द्वारा 1953 की खुदाई मे मौय प्रासाद क दक्षिण की ओर आरोग्यविहार मिला है, जिसका नाम यहा से प्राप्त मुद्राओ पर है। इन पर धन्वतरि शब्द भी अकित है। ज्ञात पडता है कि यहा रोगियो की परिचर्या होती थी। कुम्हरार के हाल के उत्खनन से ज्ञात होता है कि प्राचीन पाटलिपुत्र दो बार नष्ट हुआ था। परिनिब्बान सुत्त मे उल्लेख है कि बुद्ध की भविष्यवाणी के अनुसार यह नगर केवल बाढ, अग्नि या पारस्परिक फूट से ही नष्ट हो सकता था। 1953 की खुदाई से यह प्रमाणित होता है कि मौय सम्राटो का प्रासाद अग्निकाड से नष्ट हुआ था। शेरशाह के शासनकाल की बनी हुई शहरपनाह के ध्वस पटना के पास प्राप्त हुए हैं। चौक थाना के पास मदरसा मसजिद है जो शायद 1626 ई० म बनी थी। इसी के निकट चहल सतून नामक भवन था जिसमे चालीस स्तभ थे। इसी भवन मे फरुखसियर और शाहआलम का अस्तो मुख मुग़ल-साम्राज्य की गद्दी पर बिठाया गया था। बगाल क नवाब सिराजुद्दौला के पिता हयातजग की समाधि बेगमपुर म है। प्राचीन मसजिदो मे शेरशाह की मसजिद और अबर मसजिद है। सिखो क दसवे गुरु गोविद सिंह का जन्म पटना मे हुआ

था। उनकी स्मृति मे एक गुरुद्वारा बना हुआ है।

वायुपुराण म पाटलिपुत्र को कुसुमपुर कहा गया है। कुसुम पाटल या ढाक का ही पर्याय है। कालिदास ने इस नगरी का पुष्पपुर लिखा है (दे० पुष्पपुर)

पाटलिपुर=पाटलिपुत्र (दे० पुष्पपुर)

पाटशिला

चीनी यात्री युवानच्वाग न, जिसन भारत का भ्रमण 630 645 ई० म किया था, सिंध (पाकि०) के इस नाम के नगर का उल्लेख किया है। वह इस स्थान से होकर गुजरा था। वाटस तथा कनिंघम के अनुसार पाटशिला नगरी वतमान *हैदराबाद (सिंध) के स्थान पर बसी हागी। शायद इसी नगर का यूनानी* लेखका ने पाटल कहा है। पाटशिला का रूपातर पाटशील है।

पाटशील=पाटशिला

पाडम (ज़िला मनपुरी, उ० प्र०)

स्थानीय जनश्रुति के अनुसार परीक्षित के पुत्र जनमजय न प्रसिद्ध सपसत्र इसी स्थान पर किया था। स्थान प्राचीन जान पडता है क्योंकि यहा क खडहरो म कनिष्क, हुविष्क आदि के सिक्के तथा अतिप्राचीन आहत मुद्राए मिली हैं।

पाणिप्रस्थ *(दे० पानीपत)*

पाताल

पुराणो मे वर्णित पाताल का कुछ विद्वान मध्य अमरिका या मेक्सिको स करते है। (दे० श्री मानकद, पूना ओरिएटलिस्ट 2,2)।।

पानगल (ज़िला नालगाडा, आ० प्र०)।

(1) नालगोडा नगर क समीप स्थित इस स्थान पर ककातीयनरेश उदयादित्य के बनवाए तीन प्रसिद्ध ऐतिहासिक मदिर हैं जिनके नाम य हैं—पचलसोमेश्वर या पचेश्वर, छायल सामश्वर या सीतारामेश्वर और वेंकटेश्वर। पचेश्वर मदिर वास्तु की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है। इसम 66 स्तभ हैं जिन पर रामायण और महाभारत की कथाए उत्कीण हैं। छायल सोमेश्वर के मदिर के शिवलिंग की छाया, लिंग के ठीक पीछे दिखलाई पडती है और इसी कारण इसे छायल मदिर कहत हैं।

(2)=महबूब नगर

पानीगिरि (ज़िला नाल्गोडा, आ० प्र०)

जनगाव स्टशन से 30 मील दूर। यहा 350 फुट ऊची पहाडी पर प्राय 2000 वप प्राचीन सातवाहन कालीन बौद्ध उपनिवेश क भग्नावशेष स्थित है जिनम स्तूप, चैत्य, विहारादि सम्मिलित हैं। इनकी दीवारें लगभग तीन फुट

मोटी है और बडी ईंटा की बनी है और दीवारो के बाहरी भाग को सुदृढ करने क लिए पृष्ठाधार बने हैं। कई सुन्दर मूर्तिया भी यहा के खडहरो से मिली हैं जो अपने स्वाभाविक रचनाकौशल के कारण बहुत सुन्दर दिखाई देती हैं। मूर्तिया की मुख मुद्रा पर विशिष्ट भावो का मनोहर अकन है। एक मूर्ति के कानो मे भारी आभूषण हैं जिनके भार से कानो के निचले भाग फैलकर नीचे लटक गए हैं। इसके मस्तक पर जयपत्रो (laurels) का चित्रण है जिसक कारण कुछ विद्वानो के मत मे वह मूर्ति यूनानी शैली से प्रभावित जान पडती है। एक अन्य महत्वपूर्ण कलावशेष पत्थर का खडित जगला है। इस पर तीन ओर मनोरजक विषयो का अकन है। सामने की ओर सुविकसित कमलपुष्प है जिसकी पखडिया आकर्षक ढग से अकित की गई हैं (वृषभ की समानता मोहनजदारो की मुद्रा पर अकित वृषभ से की जा सकती है) यह वृषभ भय क कारण भागता हुआ दिखलाया गया है। भय का चित्रण उसकी डरी हुई आखो और उठी हुई पूछ से बहुत ही वास्तविक जान पडता है। भारी भरकम हाथी अपने लबे लबे दाँतो को आगे बढाकर वृषभ का पीछा कर रहा है। बीच मे खडा पुरुष हाथी को आगे बढने से बहुत ही आत्मविश्वास के साथ रोक रहा है। जगले के बाईं ओर कमलपुष्प का एक भाग अकित है और इसके नीचे भावमयी मानवाकृति है। दाहिनी ओर भी यही दृश्य उकेरा गया है किंतु इसमे मनुष्य के स्थान मे सिंह दिखलाया गया है। दूसरे शिलापट्ट पर सभवत कुबेर की मूर्ति है जो किसी धनी का आधुनिक व्यग चित्र सा लगता है। कुबेर को स्थूलोदर और स्वर्णाभूषणो से अलकृत प्रदर्शित किया गया है। चेहरे मोहरे से यह मूर्ति किसी दक्षिण भारतीय की आकृति के अनुरूप गढ़ी हुई प्रतीत होती है। एक अन्य पट्ट पर जो शायद किसी स्तूप या विहार के जगले का खड है, तैरने की मुद्रा म एक पुरुष, एक मेप और झपटते हुए दो सिंह प्रदर्शित हैं। एक दूसरे प्रस्तर खड पर मद मद टहलता हुआ एक सिंह का अकन उत्कृष्ट शिल्पकला का द्योतक है। पानीगिरि की खोज 1939 40 म हुई थी। यहाँ की उत्कृष्ट कला दक्षिण भारत मे, अमरावती की मूर्तिशिल्प की परम्परा मे है। दक्षिण के शातवाहन-कालीन सास्कृतिक इतिहास पर पानीगिरि की खोज से नया प्रकाश पडा है।

पानीपत (जिला करनाल, हरयाणा)

यह प्राचीन नगर महाभारतकालीन कुरुक्षेत्र क प्रदेश म स्थित है। इसका शुद्ध नाम शायद पाणिप्रस्थ है। यह भारत क राजनतिक भाग्य का निपटारा

करने वाले तीन प्रसिद्ध युद्धो की स्थली है । स्थानीय किंवदंती म पानीपत को पाडवो द्वारा कौरवा से मागे गए पाच ग्रामो म सम्मिलित माना गया है किंतु इस तथ्य का उल्लेख महाभारत म नही है । (पाच ग्रामो के लिए दे० अविस्थल) । पानीपत की प्रथम लडाई 1526 ई० मे बाबर और दिल्ली के सुलतान इब्राहीम लोदी मे हुई थी जिसमे बाबर की विजय हुई और फलस्वरूप भारत मे मुगल साम्राज्य स्थापित हुआ । इस युद्ध मे बाबर की विजय का कारण उसका तोपखाना था । भारत मे बारूद का प्रयोग पहली बार इसी युद्ध म बाबर न किया था । पानीपत की दूसरी लडाई अकबर और अफगानो मे 1556 ई० मे हुई थी । अकबर का सेनापति बैरामखा और अफगानो का हेमू (हिंदू वैश्य) था । अफगानो की बुरी तरह हार हुई और हेमू का बैरामखा ने वध कर दिया । इस युद्ध से अकबर के राज्य की नीव सुदृढ हो गई और उसे मुगलसाम्राज्य को सुदृढ रूप से स्थापित करके उसका विस्तार करन का अवसर मिला । परिणामस्वरूप भारत मे एक नए युग का प्रारम्भ हुआ । पानीपत का तीसरा युद्ध अफगानिस्तान के बादशाह अहमदशाह अब्दाली की और सदाशिवराव भाऊ की अध्यक्षता म मराठो की सेनाओ के बीच 1761 ई० म हुआ था जिसमे मराठा की भयकर हार होने के कारण उनकी बढती हुई शक्ति को भारी धक्का पहुचा । मराठो की शक्ति कम होने से अगरजो को भारत के दक्षिणी और पूर्वी भाग मे अपने पाव जमाने का अच्छा मौका मिल गया । इस लडाई के पश्चात् मुगल साम्राज्य की पहले ही से घटी हुई शक्ति और भी क्षीण हो गई । इस प्रकार पानीपत के तीना युद्धा का भारत के इतिहास मे महत्त्वपूण स्थान है । राजनैतिक शक्ति का केन्द्र दिल्ली मे होने के कारण उस पर अधिकार करने के लिए ही ये लडाइया लडी गई थी क्योकि पानीपत को दिल्ली का प्रवेशद्वार ही समझना चाहिए । वास्तविकता तो यह है कि महाभारत के युद्ध की स्थली कुरुक्षेत्र भी पानीपत के पाश्व देश मे ही थी । नादिरशाह और मुगल सम्राट मुहम्मदशाह की सेनाओ म जो युद्ध हुआ था (1739 ई०) वह भी पानीपत से कुछ ही दूर पर करनाल के निकट हुआ था । महाराज हष के समय का प्रसिद्ध नगर स्थानेश्वर या थानसर पानीपत के निकट ही स्थित है ।

पापापुर

बुद्धचरित 25,50 क अनुसार कुशीनगर मे मृत्यु होन के पूव तथागत बुद्ध पापापुर आए थे जहा उ होने अपन भक्त चुड के यहा सूकरमाद्दव भोजन स्वीकार किया था । पापापुर पावापुरी का सस्कृत रूपातर है । इस जन साहित्य

मे अपापा भी कहा गया है।

पावना

प्राचीन पुंड्र। यह बगाल म गगा की मुख्य धारा पद्मा के उत्तर की ओर का प्रदेश था। नदी के दक्षिण का भाग वग कहलाता था।

पार

(1)=बार

(2) [दे० पारदा]

पारकनग

प्राचीन जैन तीथ जिसका नामोल्लेख जैनस्तोत्र तीथ माला चैत्य वदन म इस प्रकार है—'जीरापल्लि फर्लाद्धि पारकनगे शैरीसशखेश्वरे'। यह जिला थारपारकर (सिंध, पाकि०) का कोई नगर है। (दे० ऐशेंट जैन हिम्स–पृ० 54)।

पारद

पारद नामक जाति का निवास स्थान (दे० वायु पुराण, 88, हरिवश 1,14)। यह पारदा नदी (वतमान पार या परदी), जो जिला सूरत, गुजरात मे बहती है, के तट के निकटवर्ती प्रदेश का नाम था। किंतु श्री न० ला० डे के अनुसार यह पार्थिया या प्राचीन परशिया या ईरान का नाम है। सभव है पारद नाम के ये दो विभिन्न प्रदेश हो।

पारदा

नासिक से प्राप्त एक अभिलेख मे पारदा नदी का उल्लेख है (दे० पारद)। वायुपुराण 44 तथा हरिवशपुराण 1,14 मे जिस पारदजाति का उल्लेख है वह शायद इसी नदी के तटवर्ती प्रदेश की निवासी थी।

पारदूर (जिला महबूबनगर, आ० प्र०)

इस स्थान पर हिंदूकालीन एक मदिर है जो दक्षिण भारत की वास्तु शैली मे निर्मित है। पारदूर की स्थिति वतमान गढवाल या प्राचीन समस्थान के अतगत है।

पारयात्र

चीनी यात्री युवानच्वाग ने इस नगर का वणन करते हुए इसके राजा को वैश्य-जातीय बताया है। पारयात्र का अभिज्ञान वतमान बराट (जिला जयपुर) से किया गया है जिसे महाभारतकालीन विराट (मत्स्य देश की राजधानी) माना जाता है। यह नगर अवश्य ही पारियात्र पवत की श्रेणियो के सन्निकट बसा होने से ही पारियात्र या पारयात्र कहलाता था।

पारस

ईरान या फारस का प्राचीन भारतीय नाम। पारस निवासियो को सस्कृत

साहित्य म पारसीक कहा गया ह। रघुवश 4,60 और अनुवर्ती श्लोका म कालिदास न पारसीको और रघु के युद्ध और रघु की उन पर विजय का चित्रात्मक वणन किया है, 'भल्लापवर्जितैस्तेषा शिरोभि श्मश्रुलैर्महीम्, तस्तार सरघाव्याप्तै सक्षौद्रपटलैरिव आदि। इसम पारसीको के श्मश्रुल शिरा का वणन है जिस पर टीका लिखते हुए चरित्रवधन ने कहा है—'पाश्चात्या श्मश्रूणि स्थापयित्वा केशा वपन्तीति तद्देशाचारोक्ति' अर्थात य पाश्चात्य लोग शिर के बालो का मुडन करके दाडीमूछ रखते हैं। यह प्राचीन ईरानिया का रिवाज था जिसे हूणो न भी अपना लिया था। कालिदास को भारत से पारस देश को जाने के लिए स्थल माग तथा जलमार्ग दाना का ही पता था—'पारसीकास्ततो जतु प्रतस्थे स्थलवर्त्मना, इंद्रियाख्यानिवरिपू तत्वज्ञानेन सयमी'—रघु० 4,60। पारसीक स्त्रियो को कालिदास ने यवनी कहा है—'यवनी मुखपद्माना सेहे मधुमद न स रघु० 4,61। यवन शब्द प्राचीन भारत म सभी पाश्चात्य विदेशियो के लिए प्रयुक्त होता था यद्यपि आयत यह आयोनिया के (Ionian) ग्रीका की ही सज्ञा थी। कालिदास न 'सग्रामास्तुमुलस्तस्य पाश्चात्यैरश्वसाधनै' (रघु० 4,62) मे पारसीको को पाश्चात्य भी कहा है। इस पद्य की टीका करते हुए टीकाकार, सुमतिविजय ने पारसीको को 'सिंधुतट वासिनो म्लेच्छराजान' कहा है जो ठीक नही जान पडता क्योकि रघु० 4 60 म (दे० ऊपर) रघु का, पारसीयो की विजय क लिए स्थलवत्म स जाना लिखा है जिसस निश्चित है कि इनके देश म जान क लिए समुद्रमाग भी था। पारसीका को कालिदास ने 4 62 (दे० ऊपर) मे अश्वसाधन अथवा अश्वसेना स सपन्न बताया है। मुद्राराक्षस 1,20 म मधाक्ष पचमोऽस्मिन पृथुतुरगबलपारसीकाधिराज' लिखकर, विशाखदत्त ने पारसियो क सुदृढ अश्वबल की ओर सकेत किया है। कालिदास न प्राचीन ईरान क प्रसिद्ध अगूरा के उद्यानो का भी उल्लख किया है—'विनय त स्म तदयाधा मधुभिर्विजयश्रमम, आस्तीर्णाजिनरत्नासु द्राक्षावलयभूमिषु' रघु० 4,65। विष्णुपुराण 2,3,17 म पारसीका का उल्लेख इस प्रकार है—'मद्रारामास्तथाम्बष्ठा, पारसीकादयस्तथा'। ईरान और भारत क सबध अति प्राचीन हैं। ईरान क सम्राट् दारा न छठी शती ई० पू० म पश्चिमी पजाब पर आक्रमण करक कुछ समय के लिए वहा स कर वसूल किया था। उसक नक्शे रुस्तम तथा बहिस्ता से प्राप्त अभिलेखो म पजाब का दारा के साम्राज्य का सबस धनी प्रदेश बताया गया है। सभव है गुप्तकाल के राष्ट्रीय कवि कालिदास न इसी प्राचीन कटु ऐतिहासिक स्मृति क निराकरण क लिए रघु की पारसीका पर

विजय का वणन किया है। वैसे भी यह ऐतिहासिक तथ्य है कि गुप्तसम्राट महाराज समुद्रगुप्त को पारस तथा भारत के पश्चिमोत्तर अन्य प्रदेशों से सबद्ध कई राजा और सामत कर देते थे तथा उन्होंने समुद्रगुप्त से वैवाहिक सबध भी स्थापित किए थे। 8वीं शती ई० के प्राकृत ग्रथ गौडवहो (गौडवध) नामक काव्य म कान्यकुब्ज-नरेश यशोवमन की पारसीको पर विजय का उल्लेख है।

पारसनाथ (जिला परभणी, महाराष्ट्र)

(1) जितूर के पास इस स्थान पर एक अनोखा प्राचीन जन मदिर है जो एक विशाल शलपुज मे से तराश कर निर्मित किया गया है। मदिर तक पहुचने के लिए एक सकीण, अधेरा माग है। मदिर शिखर सहित है। मूर्तिया भी शैलकृत हैं। बीच की मूर्ति हर पत्थर की है और बारह फुट ऊची है।

(2) (जिला हजारीबाग, बिहार) मधुबन स $5\frac{1}{3}$ मील दूर पारसनाथ के पवतशिखर पर 4479 फुट की ऊचाई पर चौबीस जन मदिर है जो चौबीस तीर्थंकरो के स्मारक माने जाते हैं। जैन साहित्य म इस पवत को सम्मेतशिखर कहा गया है। यह भी जैन अनुश्रुति है कि इसी शिखर पर 23वें तीथकर पाश्वनाथ ने निर्वाण प्राप्त किया था जिससे इस पहाड़ी का नाम पाश्वनाथ या पारसनाथ हुआ। यह पहाडी जिसकी सर्वोच्च चोटी प्राय 5000 फुट ऊची है, हिमालय के दक्षिण मे सबसे ऊचे शिखर के रूप मे प्रख्यात है। पहाडी के शिखर पर दिगबरो और नीचे तलहटी म श्वेताबरो के मदिर स्थित है।

(3) (जिला बिजनौर, उ० प्र०) नगीने से लगभग बारह मील उत्तर पूर्व की ओर पारसनाथ के खडहर है। कई वष पहले यहा उत्खनन किया गया था। उसमे कुछ ऐसे अवशेष मिले जिनसे ज्ञात होता है कि यह स्थान मध्यकाल मे जैनधम का एक केंद्र था। जान पडता है कि बिहार के प्रसिद्ध तीथ पारसनाथ के समान ही यहा भी जैनो ने प्रत्येक तीथकर के लिए एक मदिर का निर्माण किया था। इन मदिरो के खडहर विस्तृत क्षेत्र मे आज भी दिखाई देते हैं। तीथकरो की अनेक मूर्तिया, मदिरो के टूटे फूटे सिरदल तथा सुदर स्तभ पर्याप्त सख्या म मिले हैं। यहा से 1067 वि० स०=1010 ई० की एक अभिलिखित प्रतिमा भी प्राप्त हुई है जो किसी तीर्थंकर की मूर्ति जान पडती है।

पारसमुद्र

लका का एक प्राचीन नाम। कौटिल्य अथशास्त्र (अध्याय 11) मे पारसमुद्र को लका का नाम कहा गया है। वाल्मीकि रामायण 6,3,21 मे, 'पारेसमुद्रस्य'

कहकर लका की स्थिति का जो वणन है वह भी इस नाम से सबधित हो सकता है। पेरिप्लस मे इसे पालैसिमदु (Palaesimundu) कहा गया है।

पारा

(1)=पावती। म० प्र० की नदी जो सिंधु (काली सिंध) मे मिलती है। पारा सिंधु सगम पर प्राचीन काल की प्रसिद्ध नगरी पद्मावती बसी हुए थी। महाभारत वनपव के अतगत पश्चिम दिशा के तीर्थों के वणन मे इस नदी का नमदा के साथ ही उल्लेख है।

पाराशरहृद (ज़िला करनाल, हरयाणा)

कुरुक्षेत्र के अतगत बहलालपुर ग्राम के समीप करनाल-कैथल माग से 6 मील उत्तर मे स्थित है। किंवदती है कि महाभारतकार व्यास के पिता पराशर ऋषि का आश्रम इसी स्थान पर था। महाभारत के युद्ध मे पराजित होकर अतिम समय दुर्योधन इसी झील मे जाकर छिप गया था जिसे द्वैपायनहृद भी कहते थे।

पारासौली (ज़िला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा के निकट महाकवि सूरदास का निवासस्थान। इनका जन्म रुनकता ग्राम म हुआ था किंतु कहा जाता है कि ये प्राय पारासौली ही म रहते थे और यहीं इन्होने अपनी अधिकाश अमृतमयी रचनाए की थी। श्री वल्लभाचाय क मत मे पारासौली ही मूलवृन्दावन है। कहा जाता है कि पारासौली शब्द परमरासस्थली से बिगडकर बना है।

पारिपात्र (दे० पारियात्र)

पारियात्र

(1) पश्चिमोत्तरी विंध्य शलमालाओ का एक नाम जिनमे सभवत अवली की श्रेणिया भी सम्मिलित थी (दे० पार्जिटर-जनल आव दि रायल एशियाटिक सोसायटी 1994, पृ० 258)। रघुवश 18,16 क अनुसार कुश क वशज राजा अहीनगु के पुत्र पारियात्र ने पारियात्र पवत का जीता था। पवत का नाम सभवत इसी प्रतापी नरेश के नाम पर हुआ था, 'तस्मिन प्रयाते परलाकयात्रा जेतर्यरीणा तनय तदीयम, उच्चै शिरस्त्वाज्जित पारियात्र लक्ष्मी सिषेवे किल पारियात्रम' अर्थात अहीनगु के परलाक सिधारन पर शत्रुजेता पारियात्र ने उच्च शिखर वाले पारियात्र का जीतकर राज्यश्री को प्राप्त किया। महाभारत शांति 129,4 म पारियात्र का उल्लख है—'पारियात्र गिरि प्राप्य गौतमस्याश्रमा महान'। यहा इस पवत पर गौतम ऋषि के आश्रम की स्थिति बताई गई है। विष्णुपुराण 2,3 3 म पारियात्र की गणना भारत के कुलपवता म की गई है—

'महेंद्रो मलय सह्य शुक्तिमानृक्षपवत, विंध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपवता'। श्रीमद्भागवत 5,19,16 मे पारियात्र का उल्लेख ऋक्षगिरि के पश्चात है—'विंध्य शुक्तिमानक्षगिरि पारियात्रा द्रोणश्चित्रकूटो गोवर्धनो रैवतक ' दशपुर या मदसौर से प्राप्त 532 553 ई० के कूपशिलाभिलेख मे राज्य मत्री अभयदत्त को पारियात्र और (पश्चिम) समुद्र के बीच के प्रदेश के राज्य का मत्री बताया गया है। इस समय मदसौर मे यशोवमन का राज्य था। श्री चिं० वि० वैद्य ने पारियात्र का अभिज्ञान वतमान सुलेमान पवत से किया है क्योकि उनके मत मे रामायण मे पारियात्र को सिंधु के पार बताया गया है। सभवत पारियात्र सुलेमान और विंध्य की पश्चिमोत्तरश्रेणी दोना ही पवतमालाओ का नाम था। नदियो, पवतो तथा नगरादि के द्विनाम भारतीय साहित्य मे अनेक हैं। (दे० विंध्य)

(2) पारियात्र पर्वत का प्रदेश (हषचरित, उच्छवास 6)। युवानच्वाग ने यहा वैश्य राजा का शासन बताया है।

पावती

मध्यप्रदेश की एक नदी जिसे परा भी कहते हैं। यह विंध्याचल की पश्चिमी श्रेणियो से निकल कर ग्वालियर प्रदेश मे बहती हुए सिंध (या काली सिंध) मे मिल जाती है। पावती सिंधु सगम पर प्राचीन काल की प्रसिद्ध नगरी पद्मावती बसी थी। पावती मेघदूत की निर्विध्या हो सकती है। पार्वती का महाभारत भीष्मपव मे उल्लेख है। कुछ लोगो के मत मे निर्विध्या वतमान नेवाज नदी है।

पाश्वनाथ तीर्थ

जैन ग्रथ विविध तीथ कल्प मे सम्मेतशिखर का नाम है।

पालक

गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे इस स्थान के शासक उग्रसेन का समुद्रगप्त द्वारा हराए जाने का उल्लेख है—'काचेयकविष्णुगोपअवमुक्तकनीलराजवैगीयकहस्तिवर्मा पालक्क उग्रसेन दैवराष्ट्रक कुबेर ' विंसेंट स्मिथ ने इस स्थान को जिला नैलार (मद्रास) के अतगत बताया है। पहले कुछ विद्वाना का मत था कि यह स्थान पालघाट का प्राचीन नाम है।

पालनपुर (दे० पल्लविहार)

पालना (जिला बिलासपुर, म० प्र०)

रतनपुर से 15 मील दूर इस स्थान पर भगवान शकर का प्राचीन दवालय है जिसे छत्तीसगढ प्रदेश का सर्वोत्कृष्ट मदिर कहा जाता है।

पालमपेट (मुलुग तालुका, जिला वारंगल, आ० प्र०)

वारंगल से 40 मील दूर यह स्थान रामप्पा झील के किनारे बने हुए मध्ययुगीन मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। मुख्य मंदिर एक प्राचीन भित्ति से घिरा है जो बड़े बड़े शिला-खंडों से निर्मित है। इसके उत्तरी और दक्षिणी कोनों पर भी मंदिर हैं। मंदिर का शिखर बड़ी किंतु हलकी ईंटों का बना है। ये ईंटें इतनी हलकी हैं कि पानी पर तैर सकती हैं। शैली की दृष्टि से यह मंदिर वारंगल के सहस्रस्तंभों वाले मंदिर से मिलता-जुलता है किंतु यह उसकी अपेक्षा अधिक अलंकृत है। इसके स्तंभों तथा छतों पर रामायण तथा महाभारत के अनेक आख्यान उत्कीर्ण हैं। देवी देवों, सैनिकों, नटों, गायकों और नर्तकियों की विभिन्न मुद्राओं के मनोरम चित्र इस मंदिर की मूर्तिकारी के विशेष अंग हैं। प्रवेशद्वारों के आधारों पर काले पत्थर की बनी यक्षिणियों की मूर्तियाँ निर्मित हैं। इनकी शरीर रचना का सौष्ठव वर्णनातीत है। ये मंदिर के द्वारों पर रक्षिकाओं के रूप में स्थित की गई थीं। एक कन्नड़-तेलगू अभिलेख के अनुसार जो मंदिर के परकोटे की दीवार पर अंकित है, यह मंदिर 1204 ई० में बना था। रामप्पा झील काकतीय राजाओं के समय की है। पालमपेट से प्राप्त एक अभिलेख से यह सूचित होता है कि यह 1213 ई० के लगभग काकतीय नरेश गणपति के शासनकाल में बनी थी। यह सिंचाई के लिए बनवायी गई थी। इसका जलसंग्रह क्षेत्र लगभग 82 वर्गमील है और इसमें से चार नहरें काटी गई थीं। इसके साथ की दूसरी झील लकनावरम् है जो मुलुग से 13 मील दूर है।

पालामऊ (बिहार)

छोटा नागपुर के क्षेत्र में स्थित है। यहाँ चेरो नामक आदिवासियों का मुख्य गढ़ था जहाँ उनका दुर्ग रांची डाल्टन गंज सड़क पर आज भी स्थित है। शाइस्ताखाँ ने 1641 ई० में पालामऊ पर आक्रमण किया किंतु चेरों ने उसे खदेड़ दिया। 1660 ई० में दाऊद खाँ ने इस पर कब्जा कर लिया। 1771 ई० में चेरों और अंग्रेजों में संघर्ष हुआ और कैप्टन कामक (Camac) ने इस पर अधिकार कर लिया।

पालार (दे० पयस्विनी)

पाली

(1) तहसील रानीखेत, ज़िला अल्मोड़ा उ० प्र०) इस स्थान पर एक पुराने किले के खंडहर हैं तथा इस पर्वत प्रदेश की पूजनीया देवी नैथान का एक प्राचीन मंदिर भी है।

(2) (ज़िला विलासपुर, म० प्र०) रतनपुर के निकट एक ग्राम जहा मध्य प्रदेश का एक अतिप्राचीन शिवमदिर स्थित है। इसका निर्माण बाणवशीय राजा विक्रमादित्य ने 870 895 ई० म करवाया था। कलचुरि नरेश जाजल्लदेव (1095-1120) ने इस मदिर का जीर्णोद्धार करवाया था। इस तथ्य का 'जाजल्लदेवस्यकीर्तिरियम' वाक्य द्वारा किया गया है। मदिर की शिल्पकारी सूक्ष्म तथा सुदर है और आबू के जैन मदिरो की कला की याद दिलाती है।

पालीताना (राजस्थान)

पालीताना के निकटस्थ शत्रुजय नामक पहाडी के शिखर पर अनेक मध्यकालीन जैन मदिर स्थित हैं जो अपने रचना-सौदय के लिए आबू के दिल्वाडा मदिरो की भाति ही भारत भर म विख्यात है। (दे० शत्रुजय)

पावनी

कुरुक्षेत्र की नदी (वतमान घग्घर) जो वाल्मीकि रामायण बाल० 43 12 मे उल्लिखित है—'ह्लादिनी पावनी चैव नलिनी च तथैव च, तिस्र प्राची दिश जग्मुगगा शिवाजला शुभा'। यहा इसे गगा की तीन पूवगामी धाराओ म परिगणित किया है।

पावा=पावापुरी

पावागढ़ (दे० चापानेर)

पावापुरी=पावा=अपापा=पापापुर

जैन-परपरा के अनुसार अतिम तीर्थंकर महावीर का निर्वाण स्थान। 13वी शती ई० म जिनप्रभसूरि ने अपने ग्रथ विविध तीथ कल्प म इसका प्राचीन नाम अपापा बताया है। पावापुरी का अभिज्ञान बिहार शरीफ रेलस्टेशन (बिहार) से 9 मील पर स्थित पावा नामक स्थान से किया गया है। यह स्थान राजगृह से दस मील पर है। महावीर के निर्वाण का सूचक एक स्तूप अभी तक यहा खडहर के रूप मे स्थित है। स्तूप से प्राप्त ईंटें राजगह के खडहरो की इटो से मिलती जुलती हैं जिसस दोनो स्थानो की समकालीनता सिद्ध होती है। महावीर की मृत्यु 72 वष की आयु मे अपापा के राजा हस्तिपाल के लेखको के कार्यालय म हुई थी। उस दिन कार्तिक की अमावस्या थी। पालीग्रथ सगीतिसुत्तत म पावा के मल्लो के उब्भटक नामक सभागृह का उल्लेख है। स्मिथ के अनुसार पावापुरी जिला पटना (बिहार) म स्थित थी। कनिघम (ऐंशेट ज्याग्रेफी ऑव इडिया पृ० 49) के मत म (जिसका आधार शायद बुद्धचरित 25,52 म कुशीनगर के ठीक पूव की ओर पावापुरी की स्थिति का उल्लेख है) कसिया (प्राचीन कुशीनगर) से 12 मील दूर पदरौना नामक स्थान

हो पावा है जहा गौतम बुद्ध के समय मल्ल क्षत्रियों की राजधानी थी। जीवन के अंतिम समय मे तथागत ने पावापुरी मे ठहरकर चुड का सूकर माद्दव नाम का भोजन स्वीकार किया था जिसके कारण अतिसार हो जाने से उनकी मृत्यु कुशीनगर पहुचने पर हो गई थी (दे० बुद्ध चरित 25,50)। कार्लाइल ने पावा का अभिज्ञान कसिया के दक्षिण पूर्व मे 10 मील पर स्थित फाजिलपुर नामक ग्राम से किया है। (ऐंशेंट ज्याग्रेफी ऑव इंडिया—पृ० 714)। जैन ग्रंथ कल्पसूत्र के अनुसार महावीर ने पावा मे एक वर्षाकाल बिताया था। यही उन्होने अपना प्रथम धर्म प्रवचन किया था, इसी कारण इस नगरी को जैन संप्रदाय का सारनाथ माना जाता है।

पाषंड

'नगरीं संजयन्ती च पाषंड करहाटकम्, दूतैरेव वशेचक्रे कर चैनान-दापयत्'—महा० सभा० 31,70। पाषंड देश को सहदेव ने अपनी दक्षिणदिशा की दिग्विजय म जीता था। यह स्थान, जैसा कि उपर्युक्त उल्लेख से सूचित होता है, करहाटक या वर्तमान करहाड (पूना से 124 मील दूर) के निकट था।

पिंगल

(1) पुराणो के अनुसार संभल (जिला मुरादाबाद, उ० प्र०) का एक नाम जहा विष्णु का आगामी कल्कि अवतार होगा।

(2) (राजस्थान) ढोलामारु की कथा मे वर्णित पूगलगढ़ या पगल जहा की राजकुमारी मरवणी थी। (दे० पिंगला)

पिंगला

मेवाड मे बहने वाली नदी। पिंगला, चमलावती और रमलेनी नदियों के संगम पर प्राचीन तीर्थ पिंडकेश्वर बसा हुआ है जो चित्तौड से 96 मील दूर है। शायद ढोलामारु की कथा मे वर्णित पूगलगढ या पगल(=पिंगल) इसी नदी का तटवर्ती प्रदेश था।

पिंजोर=पंचपुर (पंजाब)

पिंजोर का प्राचीन नाम पंचपुर है जो महाभारत के समय म पंचपांडवो क यहा निवास करने के कारण हुआ था। यहा एक पुराना उद्यान है जिसकी बाहरी रूपरेखा का निर्माण मुगल बादशाहो ने करवाया था।

पिंडकेश्वर (दे० पिंगला)

पिंडारक (काठियावाड, गुजरात)

द्वारका स 20 मील दूर प्राचीन तीर्थ है। कहा जाता है कि यहा दुर्वासा ऋषि का आश्रम था। महाभारत वनपर्व मे इसका उल्लेख प्रभास क साथ

है 'प्रभास चौदधो तीर्थ त्रिदशाना युधिष्ठिर, तत्र पिंडारक नाम तापसाचरित शिवम्, उज्जयतश्च शिखरा च्छिप्र सिद्धिकरो महान्'—वन 88, 20, 21। किंवदंती है कि पांडव महाभारत युद्ध के पश्चात् इस स्थान पर अपने मृत संबंधियों का श्राद्ध करने के लिए आए थे। विष्णुपुराण के अनुसार इसी स्थान पर यादवों को मुनिजनों ने उनकी धृष्टता पर क्रुद्ध होकर शाप दिया था जिसके फलस्वरूप वे समूल नष्ट हो गए थे—'विश्वामित्रस्तथा कण्वो नारदश्च महामुनि, पिंडारके महातीर्थे दृष्टा यदुकुमारकैः' विष्णु० 5, 31, 6।

पिंडौली (जिला उदयपुर, राजस्थान)

चित्तौड़ के निकट एक छोटा सा ग्राम है। इस स्थान पर 1567 ई० में अकबर और मेवाड़ की सेनाओं में भयानक युद्ध हुआ था। अकबर के पास बंदूकें थीं और राजपूत तब तक केवल धनुष-बाण तथा तलवार का प्रयोग ही जानते थे और इस कारण उनकी भारी क्षति हुई। युद्ध में बिदनोर के सरदार जयमल और कैलवाड़ा के सामंत पत्ता (प्रताप) ने बहुत वीरता दिखाई। पत्ता की आयु केवल सत्तरह वर्ष की थी। एक अन्य सरदार सतीदास भी बहुत बहादुरी से लड़ा। जयमल को अकबर ने रात के समय, जब वह मशाल की रोशनी में चित्तौड़ के क़िले की एक सेंध भरवा रहा था, अपनी बंदूक का निशाना बना दिया। वीर पत्ता भी युद्ध में वीरता के साथ लड़ता हुआ मारा गया। मुगलों के तोपखाने ने राजपूत-सेना का भयंकर संहार किया और लगभग तीस सहस्र राजपूत युद्ध में काम आए। पुरुषों के मारे जाने पर राजपूत स्त्रियों ने किले के भीतर अग्नि चिता में जलकर अपने प्राणों का बलिदान कर दिया। इस समय चित्तौड़ में उदयसिंह का राज था किंतु पिंडौली के युद्ध के पूर्व ही वह जयमल को चित्तौड़ की रक्षा का भार सौंप कर राजधानी से बाहर चला गया था।

पिट्ठपुरम्=पिष्ठपुरम् (ज़िला गोदावरी, आ० प्र०)

गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में इस स्थान का राजा महेंद्र कहा गया है जिस पर समुद्रगुप्त ने विजय प्राप्त की थी—'कौसलक महेंद्र महाकांतार व्याघ्रराज कौशलक मंटराज पिष्ठपुरक महेंद्र' स्मिथ तथा फ्लीट के मतानुसार पिष्ठपुरम्, वर्तमान पिटठपुरम् या पीठपुरम है। यह कलिंग की प्राचीन राजधानी थी।

पितुंद्र (दे० पियुड)

पिताशिला

सिंध (पाकि०) के निकट एक जनपद जिसका उल्लेख चीनी यात्री युवान-

वर्णन किया है। उसने इस स्थान पर तीन सहस्र बौद्ध भिक्षुओं का निवास-स्थान बताया है।

पितुव

संभवतः राजस्थान का कोई अनभिज्ञात नगर जिसका उल्लेख तिब्बत के इतिहासकार तारानाथ ने मारु या मारवाड़ के किसी राजा हुन (छठी शती ई०) के संबंध में किया है। इसने पितुव तथा अन्य कई स्थानों (दे० चित्तवर) पर बौद्धविहार बनवाए थे जिनमें से प्रत्येक में एक सहस्र से अधिक भिक्षु निवास करते थे। पितुव संभवतः मारवाड़ में स्थित था।

पिथलखोरा (जिला औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

शैलकृत गुफामंदिरों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। यह कन्नड़-तालुका में कन्नड़ आउटरमघाट मार्ग से कटने वाली 7 मील लंबी सड़क के छोर पर स्थित है। गुफाओं तक पहुंचने के लिए 300 गज का घुमावदार मार्ग है। गुफाएं पूर्व बौद्धकालीन हैं। यह तथ्य इनकी वास्तुकला, शिल्पकारी, भित्तिचित्रकारी तथा यहां उत्कीर्ण अभिलेखों से सिद्ध होता है। यहां अंकित पशुओं की आकृतियां तथा कई रूपचित्र सांची में अंकित इसी प्रकार के मूर्तिचित्रों के सदृश हैं।

पिथुड

कलिंगनरेश खारवेल के अभिलेख के अनुसार खारवेल ने उत्तर भारत की विजय के पश्चात् दक्षिण के देशों पर आक्रमण किया था। पिथुड नामक नगर में उसने गधों के हल चलवाए थे। सिलवन लेवी के मतानुसार पिथुड पिहुंड का रूपांतर है। पिहुंड पांड्य देश का एक मुख्य व्यापारिक नगर था। टालमी ने इसी को पितुंद्र लिखा है। उत्तराध्ययन नामक जैन सूत्रग्रंथ (खंड 21) में भी पिहुंड का उल्लेख है। इस प्रसंग में पालित नाम के एक धनी व्यापारी के चंपा से पिहुंड जाने का वर्णन है। तीर्थंकर महावीर के समय में (पांचवीं शती ई० पू०) व्यापारी लोग चंपा से पिहुंड तक जलयान द्वारा जाते थे। (इंडियन एंटिक्वेरी 1926, पृ० 145)। पिहुंड मछलीपटम (मद्रास) के समीप है।

पिनाकिनी

स्कंदपुराण में वर्णित नदी जिसका अभिज्ञान मद्रास राज्य की पेनार नदी से किया गया है।

पिपरा (बिहार)

समस्तीपुर-मुजफ्फरपुर रेल मार्ग के पिपरा नामक स्टेशन के निकट एक प्राचीन किले के खंडहर हैं जिसके भीतर सीताकुंड नामक एक तालाब है तथा

रामायण के पात्रों से संबंधित कई मंदिर हैं। पिपरा से 4 मील पर सागर नामक ग्राम के पास एक ह्रद है जिसे सागरगढ़ कहते हैं। यहीं एक सुंदर ताल है जिसे बुद्ध पोखर कहते हैं। इसका संबंध किसी बौद्ध कथा से है।

पिपरावा (जिला बस्ती, उ० प्र०)

पिपरावा या पिपरिया नौगढ़ रेल-स्टेशन से 13 मील उत्तर में नेपाल की सीमा के निकट बौद्धकालीन स्थान है। यहां बडपुर रियासत के जमींदार पीपी साहब को 1898 ई० में एक स्तूप के भीतर से बुद्ध की अस्थि-भस्म का एक प्रस्तर-कलश प्राप्त हुआ था जिस पर पांचवी शती ई० पू० की ब्राह्मीलिपि में एक सुंदर अभिलेख अंकित है जो इस प्रकार है—'इय सलिलनिधने बुधस भगवते सकियन सुकितिभतिन सभगिणिकन सपुत दलनम्' अर्थात् भगवान बुद्ध के भस्मावशेष पर यह स्मारक शाक्यवंशीय सुकिर्ति भाइयों बहनों, बालकों और स्त्रियों ने स्थापित किया। जिस स्तूप में यह सन्निहित था उसका व्यास 116 फुट और ऊंचाई 21 फुट थी। इसकी ईंटों का परिमाण 16 इंच × 10 इंच है। यह परिमाण मौर्यकालीन ईंटों का है। बौद्ध किंवदंती है कि इस स्तूप का निर्माण शाक्यों द्वारा किया गया था। उन्होंने बुद्ध का शरीरांत होने पर भस्म का आठवां भाग प्राप्त कर उसे एक प्रस्तर-भांड में रख कर एक स्तूप के अंदर सुरक्षित कर दिया था। कुछ विद्वानों के विचार में ये अवशेष बुद्ध के निर्वाण के प्रायः सौ वर्ष पश्चात् स्तूप में निहित किए गए थे। यह संभव जान पड़ता है कि गौतम बुद्ध के पिता शुद्धोदन की राजधानी कपिलवस्तु पिपरावा के समीप ही स्थित थी। कई विद्वानों का मत है कि बुद्ध के समकालीन मोरियवंशीय क्षत्रियों की राजधानी पिप्पलिवाहन, पिपरावा के स्थान पर बसी हुई थी और पिपरावा पिप्पलि का ही रूपांतर है। स्तूप के कुछ अवशेष तथा भस्मकलश लखनऊ के संग्रहालय में सुरक्षित है।

पिपरिया = पिपरावा

पिप्पलगुहा (बिहार)

राजगीर (राजगृह) के निकट वभार पहाड़ी के पूर्वी ढाल पर स्थित है। इसे जरासंध की गुहा भी कहते है। कुछ विद्वानों के मत में यह भारत का प्राचीनतम इमारत है। कहा जाता है कि महाभारत काल में इसी स्थान पर मगध-राज जरासंध का प्रासाद था। कुछ पाली ग्रंथों के अनुसार प्रथम धर्म संगीति का सभापति महाकश्यप पिप्पलगुहा में ही रहा करता था। बुद्ध एक बार महाकश्यप से मिलने स्वयं इस स्थान पर आए थे। युवानच्वांग ने भी इस गुहा का उल्लेख किया है तथा इसे असुरों का निवास स्थान माना है। महा-

भारत म मयदानव की कथा से सूचित होता है कि असुरो या दानवो की कोई जाति प्राचीन काल म विशाल वास्तु रचनाए निर्माण करन म परम कुशल थी। सभवत पिप्पलिगुहा की निर्मिति भी इन्ही शिल्पियो ने की होगी। जरासध की बैठक की दीवार असाधारण रूप से स्थूल समझी जाती है। इस इमारत के पीछे एक लबी गुफा 1895 ई० तक वतमान थी। (दे० लिस्ट आव ऐंशेंट मान्यूमट्स इन बगाल—1895, पृ० 262-263)।

पिप्पलिवन=पिप्पलिवाहन

पिप्पलिवाहन

बुद्ध के समकालीन मोरिय वशीय क्षत्रियो की राजधानी। सभवत युवानच्वाग द्वारा उल्लिखित 'यग्रोधवन यही है (द० वाटस 2, पृ० 23-24)। फाह्यान न यहा के स्तूप की स्थिति कुशीनगर से 12 योजन पश्चिम की ओर बताई है। कुछ विद्वानो का मत है कि जिला बस्ती (उ० प्र०) मे स्थित पिपरिया या पिपरावा नामक स्थान ही पिप्पलिवाहन है। यही के प्राचीन दूह म से एक मृद्भाड प्राप्त हुआ था जिसके ब्राह्मी अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसम बुद्ध क भस्मावशेष निहित थे (दे० पिपरावा)। बौद्ध साहित्य की कथाओ से सूचित होता है कि बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात् उनकी अस्थि भस्म को आठ भागो मे बाट दिया गया था। प्रत्येक भाग को लेकर उसका एक महास्तूप म सुरक्षित किया गया था। इस प्रकार के आठ स्तूप बनवाए गए थ। इनम से अगार स्तूप पिप्पलिवन मे था। पिप्पलिवन का पिप्पलिवाहन भी कहते थे।

पिराना (जिला टोक, राजस्थान)

भूतपूव टोक रियासत मे स्थित एक प्राचीन स्थान जहा से पुरातत्व विषयक अनक अवशेष प्राप्त हुए है। यहा की सामग्री का उचित अनुसधान अभी नही हो सका है।

पिल्लालमर्री (सुरियापेट तालुका, जिला नालगोडा, आ० प्र०)

वारगल की राजसभा के प्रसिद्ध राजकवि पिल्लालमर्री पीना वीरभद्रकवि का जन्म स्थान। यहा के प्राचीन मदिर पुरातत्व विभाग के सरक्षण मे है। य ककातीय नरेशो के समय के है। इनके स्तभो पर सुदर नक्काशी है और दीवारो पर मनोरम चित्रकारी। यहा से कई अभिलेख भी प्राप्त हुए हैं जिनम गणपति नामक राजा का कन्नड तेलगू अभिलेख (1130 शकसवत्=1203 ई०) और राजा रुद्रदेव का अभिलेख (1117 शकसवत=1203 ई०) उल्लेखनीय है इस स्थान से ककातीय नरेशो के अनेक सिक्के भी मिले हैं।

पिशाच

'द्रौपदेयाभिमन्युश्च सात्यकिश्च महारथ , पिशाचादारदाश्चैव पुड्रा कुडी-विषै सह'—महा० भीष्म० 50,50। दरद देश के निवासियो तथा पिशाचा का उपयुक्त श्लोक म, जिसमे भारत के पश्चिमोत्तर सीमात पर रहने वाली जातियो का उल्लेख है, साथ साथ नामोल्लेख होने से यह अनुमेय है कि पिशाचदेश दरद-देश (वतमान दर्दिस्तान) के निकट होगा। वास्तव म इस देश की अनाय तथा असभ्य जातिया के लिए ही महाभारत के समय मे पिशाच शब्द व्यवहृत था। पिशाच देश के योद्धा महाभारत के युद्ध मे पाडवा की ओर से लडे थे। इस देश के निवासियो की भाषा पैशाची नाम से प्रसिद्ध है जिसमे प्रतिष्ठान (महाराष्ट्र) निवासी गुणाढ्य की वृहतकथा लिखी गई थी। पैशाची को भूत-भाषा भी कहा गया है। इस भाषा का क्षेत्र भारत का पश्चिमोत्तर प्रदेश और पश्चिमी कश्मीर था जिसकी पुष्टि महाभारत के उपयुक्त उल्लेख से भी होती है। कहा जाता है कि गुणाढय पिशाच देश (पश्चिमी कश्मीर) मे प्रतिष्टान से जाकर बसे थे। कुछ लोगो का यह भी कहना है कि आर्यों से पूव, कश्मीर देश म नाग जाति का निवास था और पैशाची इन्ही लोगो की जातीय भाषा थी। सभव है पिशाच नामक लाग इसी जाति से सबधित हो और उनके बजर आचार-व्यवहार के कारण पिशाच शब्द सस्कृत मे (दरिद्र की भाति) एक विशेष अथ का द्योतक बन गया हो। (दे० दरद)

पिशुनी=पयस्विनी

पिष्ठपुर

गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति म विजित राजाओ की सूची मे पिष्ठपुर के राजा महद्र का भी नाम है। उल्लेख इस प्रकार है—कौसलक महद्र महाकातार व्याघ्रराज कौसलक मटराज पष्ठपुरक महेद्र'। विसेंट स्मिथ के अनुसार (फ्लीट का मत भी यही है) पिष्ठपुरम, जिला गोदावरी (आ० प्र०) का पिटठपुर या पीठपुर नामक स्थान है। यहा कलिग की प्राचीन राजधानी थी। पिटठपुर नाम के सबध म यह तथ्य अवलोकनीय है कि खोह (नगदा, म० प्र०) स प्राप्त होने वाले कुछ गुप्तकालीन अभिलेखा मे पिष्ठपुरी नामक देवी के मदिर को दिए गए दान का उल्लेख है। यह सभव है कि पिष्ठपुर नामक कोई स्थान इस इलाके मे भी स्थित रहा हा जिसके नाम पर पिष्ठपुरी नामक स्थानीय देवी का नाम पडा होगा।

पिहुड (दे० पियुड)

पिहोवा (दे० पृथूदक)

पीरपहाड (जिला मुगेर, बिहार)

मुगेर से तीन मील पूव की ओर एक पहाडी । इस पर एक प्राचीन भवन स्थित है जिसका निर्माण बगाल के नवाब मीर कासिम के सेनापति गुरगीन ने 18वीं शती म करवाया था । गुरगीन आर्मीनिया का निवासी था ।

पीलीभीत (उ० प्र०)

रुहलाकाल (18वीं शती) की कुछ इमारतें यहा हैं जिनमे रुहेला सरदार हाफिज मुहम्मद खा की बनवाई एक मसजिद उल्लेखनीय है ।

पीवर

विष्णुपुराण 2,4,48 के अनुसार क्रौंच द्वीप का एक भाग या वष जो इस द्वीप के राजा द्युतिमान के पुत्र पीवर के नाम स प्रसिद्ध है ।

पुडरीक

कृतशौच समासाद्य तीथ सेवी नराधिप, पुडरीकमवाप्नोति कृतशौचो भवच्च स ' महा० वन० 83,21 । पुडरीक का, जिसकी मा यता महाभारत काल मे तीथ रूप मे थी, वतमान पुडरी (पजाब) से अभिज्ञान किया गया है । कुछ टीकाकारो ने इस श्लोक मे पुडरीक को तीथ का नाम न मानकर पुडरीक यज्ञ माना है ।

पुडरीकवान

विष्णुपुराण 2,4,51 के अनुसार क्रौच द्वीप का एक पवत— क्रौंचश्चवामनश्चव तृतीयश्चाधकारक चतुर्थोरत्नशैलश्च स्वाहिनी हयसन्निभ,, दिवावृत्पचमश्चात्र तथाय पुडरीकवान्, दुदुभिश्च महाशैलो द्विगुणस्ते परस्परम्' ।

पुडरीका

विष्णुपुराण 2,4,55 के अनुसार क्रौचद्वीप की एक नदी 'गौरी कुमुद्वती चैव मध्या रात्रिमनोजवा, क्षातिश्च पुडरीका च सप्तैता वषनिम्नगा ' ।

पुडरीकिणी

पूवविदेह की नगरी जिसका उल्लख पाली साहित्य म है ।

पुड्र=पौंड्र

बगाल म गगा की मुख्य धारा पद्मा के उत्तर म स्थित प्रदेश को प्राचीन काल म पुड्र देश कहते थे (इपीरियल गजेटियर ऑव इडिया, पृ० 316) । नदी से दक्षिण का भूभाग वग कहलाता था । कुछ विद्वानो का मत है कि वतमान पवना ही प्राचीन पुड्र है । यह नाम वास्तव म इस प्रदेश म प्राचीन काल म बसने

वाली वन्यजाति का अभिधान था। इन्ही लोगो का मूलस्थान होने से यह प्रदेश पुड्र कहलाया। महाभारत म पौड्र वासुदेव के आख्यान मे कृष्ण के इस प्रतिद्वद्वी को पड्रदेश का ही निवासी बताया गया है। बिहार के पूर्णिया नामक नगर को भी पुड्रदेश मे स्थित कहा गया है और ऐसा विचार है कि इस नगर का नाम पुड्र का ही अपभ्रश है। विष्णुपुराण मे पुड्र प्रदेश पर—सभवत पूर्व गुप्तकाल म—देवरक्षित राजा का शासन बताया गया है—'काशलाध्रपुड्रताम्रलिप्तसमुद्रतटपुरी च देवरक्षितो रक्षिता'—विष्णु 4,24,64। पुड्र प्रदेश से सबधित पुड्रनगर का उल्लेख महास्थानगढ (जिला बोगरा, बगाल) से प्राप्त मौर्यकालीन अभिलेख म है जिसम इस नगर का पुड्नगल कहा गया है। इसका अभिज्ञान महास्थानगढ से ही किया गया है। महास्थान (गढ) का उल्लेख शायद पाणिनि 6,2 89 मे महानगर के नाम से है। गुप्तकाल मे पुड्र, पुड्रवधनभुक्ति नाम से दामोदरपुर पट्टलेखा मे वर्णित है। इस भुक्ति मे अनेक विषय सम्मिलित थे (दे० पुड्रवधन)। प्राचीन समय म यह देश ऊनी कपडो और पौडे या गन्ने के लिए प्रसिद्ध था। (सभव है 'पौडा' नाम इसी देश के नाम पर हुआ हो और अतत यह पुड्र जाति से सबधित हो। यह भी द्रष्टव्य है कि 'गुड' का सबध भी गौड देश से इसी प्रकार जोडा जाता है)। महाभारत वन० 51,22 मे वग, अग और उड्र के साथ ही पौड्र देश का उल्लेख है—'यत्र सर्वान् महीपालाञ्छत्रतेजोभयार्दितान, सवगागान सपौंडोड्रान् सचोलद्राविडाध्रकान्'।

पुड्रनगर (दे० पुड्र)

पुड्रवधन (बगाल)

गुप्तकालीन अभिलेखा से सूचित होता है (दे० दामोदरपुर ताम्रपट्टलेख) कि गुप्तसाम्राज्य मे पुड्रवधन नाम की एक भुक्ति थी जो पुड्र देश के अतगत थी। इसमे कोटिवष आदि अनेक वष सम्मिलित थे। इन ताम्रपट्टलेखो से सूचित होता है कि लगभग समग्र उत्तरी बगाल या पुड्र देश, पुड्रवधन भुक्ति मे सम्मिलित था और यह 443 ई० से 543 ई० तक गुप्तसाम्राज्य का अविच्छिन्न अग था। यहा के शासक उपरिक महाराज की उपाधि धारण करते थे और इन्हे गुप्त नरेश नियुक्त करते थे। कुमारगुप्त प्रथम के समय मे उपरिक चिरातदत्त को पुड्रवधन का शासक नियुक्त किया गया था और बुधगुप्त के समय (163 गुप्त सवत् या 483-484 ई०) मे यहा का शासक ब्रह्मदत्त था। इस भुक्ति का प्रधान नगर वतमान रगपुर के निकट रहा होगा।

पुण्यपत्तन=पूना

पुण्यस्तभ=पुनताबा (महाराष्ट्र)

मध्यरेलवे के धौड मनमाड मार्ग पर स्थित है। यह प्राचीन नगर गोदावरी के तट पर बसा है। सत ज्ञानेश्वर के शिष्य महायोगी चागदेव की समाधि गोदावरी के किनारे बनी हुई है।

पुक्कलाप्रोति

पुष्कलावती या पुष्करावती का प्राकृत रूप।

पुटभेदन

मिलिदप्रश्न (मिलिंदपन्हो) मे साकल या स्यालकोट का एक नाम। बौद्धकाल मे यह बडा व्यापारिक नगर था जहा थोक माल की गठरियो (=पुट) की मुहर तोडी जाती थी।

पुनताबा=पुण्यस्तभ

पुनाट=पुनाड़

पुनाड़ (मैसूर)

5वी 6ठी शती के एक अभिलेख मे इस प्राचीन राज्य का उल्लेख है। 931 ई० मे हरिषेण द्वारा रचित बृहत्कथाकोश मे भी इसका नामोल्लेख है। पुनाड़ या पुनाट की राजधानी कीर्तिपुर या कित्थीपुर म थी। यह नगरी कावेरी की सहायक नदी कपिनी या कब्बिनी के तट पर स्थित थी। कीर्तिपुर का अभिज्ञान मसूर के निकट स्थित कित्तूर से किया गया है।

पुप्फपुर

पुष्पपुर (पाटलिपुत्र) का पाली या प्राकृत रूप (दे० महावश 18,8)।

पुब्बतापरत

पालीसाहित्य म पूव पश्चिम क महाजनपथ का नाम।

पुरदरगढ (जिला पूना, महाराष्ट्र)

पूना स सात मील दूर सासवड रोड स्टेशन से सासवड नामक ग्राम 11 मील है। यहा से 3 मील दूर शिवाजी के समय का प्रसिद्ध क़िला पुरदरगढ स्थित है। यह दुग पहाडी के शिखर पर बना हुआ है। पहाडी की तलहटी म पूर नामक ग्राम बसा है जहा नारायणेश्वर शिव का अति प्राचीन देवालय स्थित है।

पुरली (जिला बीड, महाराष्ट्र)

पुरली से प्रागैतिहासिक काल के कुछ अवशेष प्राप्त हुए हैं। शिव के द्वादश स्वयभू ज्योतिर्लिंगो म स एक यहा स्थित है। मुख्य मदिर दवी अहल्या-

चाई ने 18वी शती म बनवाया था जैसा कि चादी के किवाड पर उत्कीर्ण एक लख से सूचित होता है। पुरली प्राचीन समय म विद्या का केंद्र था।

पुरवा (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर से पाच मील दूर इस कस्बे मे, भूमि से तीन सौ फुट ऊची पहाडी पर कई प्राचीन भवनो के खडहर अवस्थित है। इनम पिसनहारी की मढिया अति प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि इस मदिर को गोडवाना की महारानी दुर्गावती की समकालीन किसी चक्की पीसन वाली अज्ञातनामा स्त्री ने बनवाया था। यह स्थान महाकोशल के दिगबर जनो द्वारा पवित्र माना जाता है और यहा प्रतिवर्ष मेला भी लगता है। मदिर तक जाने के लिए एक घुमावदार रास्ता है और पहाडी पर चढने के लिए दो सौ आठ सीढिया बनी है। पिसनहारी की मढिया के पार्श्व मे केवल दो शैलखडो पर खडा हुआ मदन महल मुगल-सम्राट अकबर से लोहा लेने वाली वीरागना दुर्गावती का अमर स्मारक है। पास ही सग्रामसागर नामक विशाल भील है जो दुर्गावती के सचिव सरदार सग्रामसिंह की स्मृति सजोए हुए है। यही आमवास नामक स्थान है जिसके बारे म किवदती है कि किसी समय यहा आम के एक लाख वृक्ष थे। पास ही गोंड नरेशो के समय के खडहर दूर तक फैले हुए है। इन्ही म महारानी दुर्गावती का हाथीखाना भी है।

पुरिका दे० प्रवरपुर

पुरिमताल

जन साहित्य मे उल्लिखित प्रयाग का एक नाम। जैन ग्रथो से विदित होता है कि 14वी शती तक जैन परपरा मे यह नाम प्रचलित था। कहा जाता है कि ऋषभदेव को कैवल्य ज्ञान यही प्राप्त हुआ था। कल्पसूत्र मे पुरिमताल का उल्लेख इस प्रकार है 'जैसे हेमताण चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे फग्गुण बहुले तस्सण फग्गुण बहुलस्स इक्कारसी पक्खेण पुव्वण्हकाल समयसि पुरिमताल्स्स नयरस्स वहिया सगडमुहसि उज्जाणसि नग्गोहवर पायवस्स अहे'। 11वी शती म रचित श्री जिनेश्वर सूरि के कथा कोश मे भी इसी प्रकार का उल्लेख है —अण्णया पुरिमताले सपत्तस्स अह नग्गोहपाययस्सझाण तरियाए वट्टमाणस्स भगवओ समुप्पण केवल नाण'—कथा कोश प्रकरण पृ० 52। विविधतीर्थकल्प मे 'पुरिम ताले आदिनाथ' वाक्य है। धर्मोपदेशमाला मे (पृ० 124) भी पुरिमताल का उल्लख है।

पुरी

(1) दे० एलिफटा

(2) दे० जगन्नाथपुरी

पुरु

'सनत्कुमार कौरव्य पुण्यकनखल तथा, पर्वतश्च पुरुर्नाम यत्र यात पुरुरवा '—महा० वन० 90,22 । यहाँ पुरु नामक पर्वत का कनखल (हरद्वार) के निकट उल्लेख है।

पुरुषपुर

वर्तमान पेशावर (प० पाकि०)। ऐतिहासिक परंपरा के अनुसार सम्राट् कनिष्क ने पुरुषपुर को (द्वितीय शती ई० में) बसाया था और सर्वप्रथम कनिष्क के बृहत साम्राज्य की राजधानी बनने का सौभाग्य भी इसी नगर को प्राप्त हुआ था। कनिष्क ने बौद्धधर्म की दीक्षा लेने के पश्चात पुरुषपुर में एक महान स्तूप का निर्माण करवाया था जिसमें लकड़ी का प्रचुरता से प्रयोग किया गया था। स्तूप के ऊपर जाने के लिए सीढ़ियां बनी थी और ऊपर एक सुंदर काष्ठमंडप था। इसमें तेरह मंजिलें थी और पूरी ऊंचाई लगभग 500 हाथ थी। कहा जाता है कि यह स्तूप कनिष्क के पश्चात् कई बार जला और बना था। इस महास्तूप के पश्चिम की ओर कनिष्क ने एक सुंदर एवं विशाल विहार भी बनवाया था जिसकी तीसरी मंजिल पर कनिष्क के गुरु भदंत पार्श्व रहते थे। तृतीय बौद्ध संगीति कनिष्क के शासन काल में पुरुषपुर में ही हुई थी (कुछ विद्वानों के मत में यह सम्मेलन कुंडलवन कश्मीर में हुआ था)। इसके सभापति आचार्य अश्वघोष थे जिन्हें कनिष्क पाटलिपुत्र की विजय के पश्चात् अपने साथ पुरुषपुर ले आए थे। बौद्धधर्म के उद्भट विद्वान और बुद्धचरित और सौंदरानंद नामक महाकाव्यों के विख्यात रचयिता अश्वघोष पुरुषपुर में ही रहते थे। पुरुषपुर में बौद्ध महासभा के पश्चात बौद्धधर्म के दो विभाग हो गए थे—प्राचीन हीनयान और नवीन महायान। अश्वघोष के अतिरिक्त जिन अन्य बौद्ध विद्वानों का संसर्ग पुरुषपुर से रहा था वे थे वसुबंधु तथा उनके सहोदर भ्राता असंग और विरंचि। वसुबंधु, चंद्रगुप्त विक्रमादित्य (चतुर्थ शती ई०) की राजसभा में भी सम्मानित हुए थे। दिङ्नाग इनके शिष्य थे। उनका रचित अभिधर्म कोश बौद्धसाहित्य का प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसकी रचना पुरुषपुर में ही हुई थी। वसुबंधु के गुरु आचार्य मनोरथ भी पुरुषपुर ही के रहने वाले थे। चंद्रगुप्त विक्रमादित्य इनका भी बहुत आदर करता था।

पुरुषपुर प्राचीन काल में गांधार-मूर्तिकला का प्रसिद्ध केंद्र था। यह कला भारतीय तथा यूनानी शैली के सम्मिश्रण से उत्पन्न हुई थी। हवेल के अनुसार

गाधार कला सर्वोच्च कोटि की कला नही थी और न इसमे भारतीय परपरा तथा आदर्शवाद के तत्व ही निहित थे। वे इसे यान्त्रिक तथा आत्मा से रहित कला मानते हैं। इस कला का मुख्य सौंदय शारीरिक रूपरेखा का कुशल अकन माना जाता है। गाधार कला मे प्रथमबार बुद्ध की मूर्ति का निर्माण हुआ था। 100 ई० पू० से पहले बुद्ध की मूर्तिया नही बनाई जाती थी और उपयुक्त प्रतीको द्वारा ही तथागत का अकन किया जाता था। गाधारकला मे प्राय काली मिट्टी जो स्वात के प्रदश म मिलती थी, मूर्ति निर्माण के लिए प्रयोग म लाई जाती थी। इन मूर्तियो की शरीर रचना तथा गठन सौंदयपूण और यथाथ है। वस्त्रो, विशेषकर उत्तरीय का अकन उभरी हुई धारियो से किया गया है। परवर्ती काल मे पुरुषपुर या पेशावर भारत पर उत्तर पश्चिम से आक्रमण करने वाले आक्राताओ के कारण इतिहास प्रसिद्ध रहा। 1001 ई० मे महमूद गजनवी और भारतीय नरेश जयपाल मे पशावर के मैदान मे घोर युद्ध हुआ जिसम जयपाल को भारी क्षति उठानी पडी। जयपाल, इस युद्ध म पराजय-जनित अपमान तथा अनुताप को न सहते हुए जीवित ही अग्नि म कूदकर स्वग सिधार गया। मुगलो के समय म पेशावर म मुगलो का सेनापति रहता था और तत्कालीन अफगानी तथा सीमात स्थित फिरको (यूसुफजाई वगैरह) से भारतीय साम्राज्य की रक्षा करता था।

पुरुषोत्तम क्षेत्र

पुराणो के अनुसार इस तीथ क क्षेत्र का विस्तार, उडीसा म दक्षिणकटक पुरी तथा वेकटाचल तक है। (द० इडियन हिस्टॉरिकल क्वाटरली 7, पृ० 245 253)।

पुरुषोत्तमपुरी दे० जगन्नाथपुरी

पुलिद

महाभारत वन० के अतगत पुलिदो के देश का वणन पाडवो की गधमादन पवत की यात्रा के प्रसग मे है। जान पडता है कि यह देश कैलाश पवत या तिब्बत के ऊचे पहाडो की उपत्यकाओ म बसा था। इस प्रसग म तगणो और किरातो का भी उल्लेख है। पुलिद देश के बर्फीले पहाडो का वणन भी इस प्रसग म है। अशोक के शिलालख 13 मे पारिदो का उल्लेख है जो कुछ विद्वानो के मत म पुलिदो का ही नाम है। किंतु भडारकर के मत म पारिद वरेंद्र (बगाल) के निवासी थ। पुराणो मे पुलिदो का विध्याचल म निवास करने वाली अन्य जातियो के साथ वणन है—'पुलिदा विध्यपुषिका वदर्भा दडकै सह' मत्स्य० 114, 48। 'पुलिन्दा विध्यमूलीका वदर्भा दडक सह'-

वायु० 55,126। महाराज हस्तिन के नवग्राम से प्राप्त 517 ई० के दानपत्र अभिलेख म पुलिंद-राष्ट्र का उल्लेख है जिसकी स्थिति डभाल (म० प्र० का उत्तरी भाग) मे बताई गई है। अशोक के समय म पुलिंद नगर जो पुलिंद देश की राजधानी थी, रूपनाथ के निकट स्थित होगा जहा अशोक का एक लघु-अभिलेख प्राप्त हुआ है (दे० राय चौधरी—पालिटिकल हिस्ट्री ऑव इंडिया-पृ० 258)। उपयुक्त विवेचन से जान पडता है कि पुलिंद नामक जाति मूलत उत्तर तिब्बत की रहने वाली थी और कालातर मे भारत म आकर विंध्य की घाटियो मे बस गई थी। यह भी सभव है कि प्राचीन काल म भारतीयो न दो भिन्न जातियो को उनके सामान्य गुणो के कारण पुलिंद नाम से अभिहित किया हो। (दे० पुलिंदनगर)

पुलिंदनगर

'ततो दक्षिणमागम्य पुलिंदनगर महत, सुकुमार वशे चक्रे सुमित्र च नराधिपम', महा० सभा० 29,10। भीमसेन ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसग मे पुलिंदनगर पर अधिकार किया था। प्रसग से इस महान नगर की स्थिति विंध्यप्रदेश की उपत्यकाओ म जान पडती है। रायचौधरी के अनुसार यह प्रदेश रूपनाथ के निकट स्थित होगा जहा अशोक का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है। (दे० पुलिंद)

पुवार (केरल)

त्रिवेंद्रम के दक्षिण मे स्थित एक ग्राम जो विद्वानो क मत म प्राचीन यहूदी साहित्य का ओफीर नामक प्रसिद्ध व्यापारिक स्थान है। इस साहित्य मे सम्राट सुलेमान (प्राय 1000 ई० पू०) क भेजे हुए व्यापारिक जलयानो का भारत के इस बदरगाह मे आन जान का वणन मिलता है। अति प्राचीन काल म पुवार के बडे बदरगाह हाने के निश्चित चिह्न प्राप्त हुए हैं।

पुष्कर (जिला अजमेर, राजस्थान)

(1) अजमेर स सात मील दूर यह प्राचीन तीथ स्थित है। वाल्मीकि रामायण बाल० म पुष्कर मे विश्वामित्र के तप करने का उल्लख है—'पश्चिमाया विशालाया पुष्करपु महात्मन सुख तपश्चरिष्याम सुख तद्धि तपोवनम, एवमुक्त्वा महातजा पुष्करपु महामुनि, तप उग्र दुराधष तप मूलफलाशन'—बाल० 61,3 4। उत्तरकाड 53,8 म राजा नृग क पुष्कर म दिए गए दान का उल्लेख है—'नृदवो भूमिदेवेभ्य पुष्करेषु ददौ नृप'। महाभारत मे पुष्कर को महान् तीथ माना है—'पितामहसर पुण्य पुष्कर नाम नामत, वखानसानामिद्धाना मृपीणामाश्रम प्रिय। अप्यत्र सश्रयार्थाय प्रजापतिरथा जगौ, पुष्करपु कुरुश्रेष्ठ

गाथासुकृतिनावर। मनसाप्यभिकामस्य पुष्कराणि मनस्विन विप्रणश्यं त पापानि नाकपृष्ठे च मोदते'—वन० 89 16 17-18। वन० 12,12 मे पुष्कर को तपस्थली बताया गया है—'दशवर्षसहस्राणि दशवपशतानि च, पुष्करेष्ववस कृष्ण त्वमपो भक्षयन् पुरा'। उत्सवमकेत गण का निवास पुष्कर के निकट ही था—दे० सभा० 27,32। विष्णुपुराण 1,22 89 म भी पुष्कर का उल्लेख है—'कार्तिक पुष्करस्नाने द्वादशाब्देन यत फलम' जिससे पुष्कर का तीर्थ रूप म जो वतमान महत्त्व माना जाता है उसका पूर्वाभास मिलता है तथा पुष्कर के द्वादश-वर्षीय कुभ का जो आज भी प्रचलित है, प्रारभ भी अति प्राचीन काल (सभवत गुप्तकाल) म सिद्ध होता है। विष्णु० 6,8,29 मे पुष्कर को प्रयाग और कुरुक्षेत्र के समान माना है—'प्रयागे पुष्करे चैव कुरुक्षेत्रे तथाणवे, कृतोपवास प्राप्नोति तदस्य श्रवणान्नर'। जनश्रुति मे कहा जाता है कि पाडवो ने पुष्कर के चतुर्दिक स्थित पहाडियो मे अपने वनवास काल का कुछ समय व्यतीत किया था। इनमे से नागपहाड पर प्राचीन ऋषियो की तपोभूमि मानी जाती है। अगस्त्य और भर्तृहरि की गुफाए भी इन्ही पहाडियो मे आज भी स्थित है। चतुथ शती ई० पू० की आहत (Punch marked) मुद्राए तथा बैक्ट्रियन और ग्रीक नरेशो के सिक्के जो प्रथम शती ई० पू० से लेकर ई० सन् की पहली दो शतियो तक के हैं, यहा से प्राप्त हुए हैं। पौराणिक कथाओ के अनुसार प्रजापति ब्रह्मा ने सृष्टि-रचना के समय इस स्थान पर यज्ञ किया था इसलिए इस स्थान को ब्रह्म पुष्कर भी कहते हैं। (दे० ऊपर उद्धृत महा० वन० 89,16-17)। सभवत भारत भर मे केवल इसी स्थान पर ब्रह्मा का मदिर है। वतमान मदिर जो झील के तट पर है अधिक प्राचीन नही जान पडता किंतु इस स्थान पर प्राचीन काल मे भी ब्रह्मा का मदिर रहा होगा। ब्रह्मा की पत्नी सावित्री का मदिर निकटवर्ती पहाडी पर है। ब्रह्मा के मदिर के द्वार पर उनके वाहन हस की मूर्ति उत्कीण है। वाराणसी, गया तथा मथुरा की भाति ही पुष्कर भी कुछ समय तक बौद्ध धम का केन्द्र रहा किंतु इस धम की अवनति के साथ कालातर मे हिदू धम की यहा पुन स्थापना हुई। जनश्रुति है कि 9वी शती ई० मे एक बार राजा नरहरिराव यहा शिकार खेलता हुआ पहुचा। उसने प्यास बुझाने के लिए सरोवर का पानी पिया तो उसका श्वेत कुष्ठ दूर हो गया। उसने झील के जल के चमत्कारी प्रभाव को देखकर यहा पक्के घाट बनवा दिए। पुष्कर मे 925 ई० का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है जो यहा से प्राप्त अभिलेखो म प्राचीनतम है। मुगल सम्राट जहागीर की बनवाई दो छतरिया झील के घाटो पर स्थित हैं। पुष्करताल पर लगभग चालीस पक्के घाट हैं जिनम से

कुछ के ये नाम हैं—गोघाट, वराहघाट, ब्रह्मघाट, ग्वालियर घाट, चद्रघाट, इद्रघाट, जोधपुर घाट और छोटा घाट आदि। एक प्राचीन दतकथा के अनुसार जिस समय ब्रह्मा ने यज्ञ प्रारम्भ करना चाहा तो अपनी पत्नी सावित्री की अनुपस्थिति में वे ऐसा न कर सके। तब उन्होंने सावित्री पर रुष्ट होकर गायत्री नामक अन्य स्त्री से विवाह करके यज्ञ सपन्न किया। सावित्री जब लौटकर आई तो वह गायत्री को अपने स्थान पर देख कर बहुत क्रुद्ध हुई और ब्रह्मा का छोडकर पास की पहाडियो मे चली गई जहा उसके नाम का एक मदिर आज भी है। स्थानीय किवदती में यह भी प्रचलित है कि कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तल की नायिका शकुतला के पिता कण्व का आश्रम पुष्कर के पास स्थित एक पहाडी पर था किंतु इस किवदती में कुछ भी तथ्य नहीं जान पडता। (कण्व के आश्रम के लिए दे० मडावर)। पौराणिक किवदती में पुष्कर को सरस्वती नदी का तीर्थ माना गया है। कहते हैं कि अति प्राचीन काल में सरस्वती नदी इसी स्थान के निकट बहती थी और पुष्कर पर्वतोपत्यका में उसका छोडा हुआ सरोवर है। यह नदी अब भी कई स्थानो पर बहती हुई दिखलाई पडती है और अततः कच्छ की खाडी में गिर जाती है। कई स्थानो पर राजस्थान की भूमि मे यह विलुप्त भी हो जाती है। सभवतः यही वैदिककालीन सरस्वती थी जो पहले शायद सतलज में गिरती थी और कालातर में मुडकर राजस्थान की ओर बहने लगी। सरस्वती को ब्रह्मा की पत्नी माना गया है और इसी कारण पुष्कर का ब्रह्मा से सबध परपरागत चला आ रहा है। सरस्वती की एक धारा सुप्रभा' आज भी पुष्कर के निकट बहती है। महाभारत में विनशन नामक स्थान पर सरस्वती का विलुप्त होते हुए बताया गया है।

(2) (वर्मा) ब्रह्मदेश का एक प्राचीन भारतीय नगर (सभवतः रगून) जिसका नाम भारत के प्रसिद्ध तीर्थ पुष्कर के नाम पर रखा गया प्रतीत होता है। ब्रह्मदेश में अति प्राचीन काल से मध्ययुग तक भारतीय औपनिवेशिको ने अनेक नगरो को बसाया था तथा इस देश के अधिकाश भाग मे उनके राजवशों का राज्य रहा था।

पुष्करण

(1) जिला बाकुडा, बगाल में सुसुनिया नामक स्थान से प्राप्त एक अभिलेख मे पुष्करण के किसी राजा चद्रवर्मन् का उल्लेख है। इस पुष्करण का अभिज्ञान रायचौधरी तथा अन्य विद्वानो ने जिला बाकुडा में दामोदर नदी पर स्थित पोखरन नामक स्थान से किया है। सुसुनिया बाकुडा से उत्तरपूर्व की ओर 25 मील दूर एक पहाडी है। गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे जिस

चद्रवमन् का उल्लेख है वह पुष्करण का राजा हो सकता है ('रुद्रदेव मतिल नागदत्तचद्रवर्मागणपतिनागनागसेन—') ।

(2) =पुष्करारण्य । मारवाड का प्रसिद्ध प्राचीन स्थान है । श्रीहरप्रसाद शास्त्री के अनुसार महरौली (दिल्ली) के प्रसिद्ध लौह स्तभ पर जिस चद्र नामक राजा की विजयो का उल्लेख है वह पुष्करण का चद्रवमन् है । यह चद्रवमन् 404 405 ई० के मदसौर अभिलेख मे उल्लिखित है । श्री शास्त्री के अनुसार समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति का चद्रवमन् भी यही है । यह नरवमन का भाई था और ये दोनो मिलकर मालवा तथा परिवर्ती प्रदेश पर राज्य करते थे । पुष्करण या पोखरन कनल टाड के समय (19वी शती का प्रथम भाग) तक मारवाड की एक शक्तिशाली रियासत थी । (दे० एनेल्स ऑव राजस्थान, पृ० 605) । पाखरन का प्राचीन नाम पुष्करण या पुष्करारण्य था और इसका उल्लेख महाभारत मे है—'पुनश्च परिवृत्याथ पुष्करारण्य-वासिन , गणानुत्सवसकेतान् व्यजयत् पुरुषपभ' सभा० 32, 8 9 । इस स्थान पर पुष्करारण्य का उल्लेख माध्यमिका या चित्तौड के पश्चात होने से इसकी स्थिति मारवाड मे सिद्ध हो जाती है । यहा के उत्सवसकेत गणो का नकुल ने दिग्विजययात्रा के प्रसग मे हराया था ।

पुष्करद्वीप

पौराणिक भूगोल की कल्पना मे यह पृथ्वी के सप्त महाद्वीपों मे से एक है—'जबू प्लक्षाह्वयौ द्वीपौ शाल्मलश्चापरो द्विज, कुश क्रौंचस्तथा शाक पुष्करश्चैव सप्तम '–विष्णु० 2,2,5 । इसके चतुर्दिक शुद्धोदक सागर की स्थिति बताई गई है ।

पुष्करवती=पुष्कर (2)

रगून (बर्मा) का प्राचीन भारतीय नाम ।

पुष्करवन=पुष्करारण्य

पुष्करारण्य दे० पुष्करण (2)

पुष्करावती=

(1) पुष्कलावती

(2) (बर्मा) ब्रह्मदेश का एक प्राचीन नगर, वतमान रगून=पुष्कर (2) या पुष्करवती ।

पुष्कल=पुष्कलावती

पुष्कलावत=पुष्कलावती

पुष्कलावती

भारत के सीमांत प्रदेश पर स्थित अति प्राचीन नगरी जिसका अभिज्ञान जिला पशावर (प० पाकिस्तान) के चारसड्डा नामक स्थान (पशावर से 17 मील उत्तर पूर्व) से किया गया है। कुमारस्वामी के अनुसार यह नगरी स्वात (प्राचीन सुवास्तु) और काबुल (प्राचीन कुभा) नदियों के सगम पर बसी हुई थी जहा वर्तमान मीर जियारत या बालाहिसार है (इडियन एड इडोनीसियन आर्ट—पृ० 55) वाल्मीकि रामायण म पुष्कलावत या पुष्कलावती का भरत के पुत्र पुष्कल के नाम पर बसाया जाना उल्लिखित है—'तक्ष तक्षशिलाया तु पुष्कल पुष्कलावते गधवदेशे रुचिरे गाधार विषय ये च स' वाल्मीकि० उत्तर 101,11। रामायणकाल म गधार विषय के पश्चिमी भाग की राजधानी पुष्कलावती म थी। सिंधु नदी के पश्चिम म पुष्कलावती और पूर्व म तक्षशिला भरत ने अपने पुत्र पुष्कल और तक्ष के नाम पर बसाई थी। इस काल मे यहा गधर्वों का राज्य था जिनके आक्रमणो से तग आकर भरत के मामा केकय नरेश युधाजित् ने उनके विरुद्ध श्रीरामचद्रजी मे सहायता मागी थी। इसी प्रार्थना के फलस्वरूप उन्होने भरत को युधाजित की ओर से गधर्वों स लडने के लिए भेजा था। गधर्वों को हटाकर भरत ने पुष्कलावती और तक्षशिला—ये दो नगर इस प्रदेश मे बसाए थे। कालिदास ने रघुवश मे भी पुष्कल के नाम पर ही पुष्कलावती के बसाए जाने का उल्लेख किया है—'स तक्षपुष्कलौ पुत्रौ राजधान्यो तदाख्ययो अभिषिच्याभिषेकार्हौ रामान्तिकमगात् पुन' रघु० 15,89। प्राकृत या पाली बौद्ध ग्रथो मे पुष्पकलावती को पुक्खलाओति कहा गया है—ग्रीक लेखक एरियन ने इसे प्युकेलाटोइस (Peucelatois) लिखा है। बौद्धकाल म गधार मूर्तिकला की अनेक सुदर कृतिया पुष्कलावती म बनी थी और यह स्थान ग्रीक भारतीय सास्कृतिक आदान प्रदान का केंद्र था। गुप्तकाल म इसी स्थान पर रहते हुए वसुमित्र न 'अभिधम प्रकरण' रचा था। नगर के पूर्व की ओर अशोक का बनवाया हुआ धमराजिक स्तूप था। पास ही इन्ही का निर्मित पत्थर और लकडी का बना साठ हाथ ऊचा दूसरा स्तूप था। बौद्ध किंवदती के अनुसार यहा से 6 कोस पर वह स्तूप था जहा भगवान् तथागत ने यक्षिणी हारीति का दमन किया था। पश्चिमी नगर द्वार के बाहर महेश्वर शिव (पशुपति) का एक विशाल मदिर था। प्रसिद्ध चीनी यात्री युवानच्वांग न पुष्कलावती के बौद्धकालीन गौरव का वर्णन किया है जिसकी पुष्टि यहा के

या पुष्पवती गगा के तट पर स्थित थी । सभव है कि वाचक कुशललाभ रचित प्राकृत ग्रथ माधवानल कथा (1620 ई०) मे वर्णित पुहुपावती यही पुष्पावती है । कवि ने इसे गगा के तट पर बताया है—'देश पूरब देश पूरब गगनई कठि तिहा नगरी पुहुपावती राजकरइ हरिवस मडण तसु घरि प्रोहित तासु सुत माधवानल नाम बभण' । वर्तमान पूठ गढमुक्तेश्वर (जिला मेरठ) से आठ मील दक्षिण मे गगा के दक्षिण तट पर है ।

पुष्पवती

(1)=पुष्पवटी=पुष्पावती

(2)=काशी

(3)=मध्यभारत (बुदेल खड) की पहुज नदी ।

पुष्पवान्

विष्णुपुराण 2,4,41 मे उल्लिखित कुशद्वीप का एक पर्वत—'विद्रुमो हेमशैलश्च द्युतिमान पुष्पवास्तथा, कुशेशयो हरिश्चैव सप्तमो मदराचल' ।

पुष्पावती

(1)=काशी

(2)=पुष्पवटी

(3) (म० प्र०) किंवदती म बिलहरी (कटनी से नौ मील) का प्राचीन नाम ।

(4)=पुष्पजा नदी

पुहुपावती दे० पुष्पवटी

पहार दे० काकदी

पूगलगढ़

राजस्थान की प्रसिद्ध लोक कथा, ढोलामारू की नायिका मारू या मरवण पूगलगढ की राजकुमारी थी । यह नगर राजस्थान म स्थित था । कथा मे इसे पगल भी कहा गया है ।

पूडरी=पुडरीक

पूछ दे० पर्णोत्स

पूठ दे० पुष्पवटी

पूना (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र का सास्कृतिक केंद्र तथा पेशवाओ की प्रसिद्ध राजधानी । यह नगरी मुला तथा मुठा नदियो क बीच मे स्थित है । पूना का सर्वप्रथम ऐतिहासिक उल्लेख 1599 ई० का मिलता है । 1750 ई० म पेशवा ने पहले-पहल

यहा अपनी राजधानी स्थापित की थी। इससे पहले शिवाजी तथा उनके वशजो की राजधानी सतारा मे थी। 1817 ई० मे परावा की खिडकी नामक स्थान मे हार हो जाने के पश्चात पूना पर अग्रेजो का अधिकार हो गया। पूना मे पार्वती देवी का एक अति प्राचीन मदिर है जो खडगवासला के मार्ग मे स्थित है। शिवाजी का प्रसिद्ध दुर्ग सिंहगढ पूना से 15 मील दूर है। शिवाजी से सबधित दूसरा प्रसिद्ध किला पुरदर यहा से 24 मील है। पूना का प्राचीन नाम पुण्यपत्तन था। मराठी मे पूना को पुणे कहते हैं।

पूर्णत्रयी (केरल)

त्रिपुणित्तुर्रै का प्राचीन सस्कृत नाम। इस स्थान पर शेषारूढ़ (विष्णु) तथा किरातरूप शिव का प्राचीन देवालय है। इस नगर म प्राचीन कोचीन नरेशो के राजभवन स्थित हैं। इनकी राजधानी यहा से 6 मील अर्नाकुलम् मे थी।

पूर्णा

महाराष्ट्र की एक छोटी नदी। पूर्णा तथा सरस्वती नदियो के सगम पर प्राचीन तीर्थ वामनी है जहा एक सादा किंतु सुदर प्राचीन मदिर है। पूर्णा नदी सतपुडा से निकलकर बुरहानपुर के नीचे ताप्ती मे मिल जाती है। इसका उल्लेख पद्मपुराण 61 मे है।

पूर्णिया (बिहार)

यह जिला महानद और कोसी नदियो से सिंचित है। पूर्व बौद्धकाल मे पूर्णिया का पश्चिमी भाग अग जनपद मे सम्मिलित था और तत्पश्चात् मगध मे। हर्ष के समय मे गौडाधिप शशाक का राज्य यहाँ तक विस्तृत था किंतु 620 ई० के लगभग हर्ष ने शशाक को पराजित किया और यह प्रदेश भी कान्यकुब्ज के शासन के अतर्गत आ गया। मध्ययुग मे यहा बिहार के अन्य प्रदेशो की भाति ही पाल और सेन नरेशो का राज्य था। मुगलो के जमाने मे पूर्णिया, साम्राज्य के सीमावर्ती इलाके म सम्मिलित था और यहा सैनिक शासन था। पूर्णिया नाम कुछ विद्वानो के मत मे पुड्र का अपभ्र श है। (दे० पुड्र)। स्थानीय जनश्रुति मे पूर्णिया 'पुरइन' (कमल) का शुद्ध रूप माना जाता है जो यहा पहले समय मे कमल सरोवरो की स्थिति का सूचक है। कुछ लोगो का यह भी कहना है कि प्राचीन समय मे घने जगल या पूर्ण अरण्य होने के कारण ही इसे पूर्णिया कहा जाता था। (दे० सर जान फाउल्ट–बिहार दि हार्ट ऑव इडिया, पृ० 121)

पूर्वदेश

वगाल आसाम प्रदेश का सयुक्त नाम—'पूर्व–देशादिकाश्चैव कामरूप निवासिन'—विष्णु० 2,3,15

पूर्वराष्ट्र

गुप्तकालीन एक अभिलेख में मध्यप्रदेश के पूर्वी भाग का नाम है जिसमें वर्तमान रायपुर तथा परिवर्ती प्रदेश सम्मिलित है। यह अभिलेख अरग नामक स्थान से प्राप्त हुआ था।

पूर्वसागर

प्राचीन भारतीय साहित्य में पूर्व सागर या तो बंगाल की खाडी का नाम है या वर्तमान प्रशांत सागर (पैसिफिक ओशन) का। बंगाल की खाडी का समुद्र तीन ओर से भूमि द्वारा परिवृत होने के कारण सामान्यतः (मानसून के समय को छोडकर) शांत और अक्षुब्ध रहता है और प्रशांत सागर को तो प्रशांत कहते ही हैं। यह तथ्य बडा मनोरंजक है कि महाभारत के एक उल्लेख में पूर्वसागर को शांति और अक्षोभ का उपमान माना गया है—'नाभ्यगच्छत प्रहर्ष ता स पश्यन् सुमहातपा, इंद्रियाणि वशेकृत्वा पूर्वसागरसंनिभ'—उद्योग 9,16,17 अर्थात् वे तपस्वी उन अप्सराओं को देखकर भी विकारवान् न हुए वरन् इंद्रियों को वश में करके पूर्वसागर के समान (अविचलित) रहे। कालिदास ने पूर्वसागर का रघु की दिग्विजय के प्रसंग में वर्णन किया है—'स सेनां महतीं कर्षन् पूर्वसागरगामिनीम्, बभौ हरजटाभ्रष्टां गंगामिव भगीरथ'—रघु० 4,32। इस उद्धरण में पूर्वसागर निश्चय रूप से बंगाल की खाडी का नाम है क्योंकि गंगा को इसी समुद्र की ओर जाती हुई कहा गया है।

पूर्वाराम

बौद्ध साहित्य में वर्णित श्रावस्ती (=सहेत महेत, ज़िला गोंडा, उ० प्र०) का एक विहार जिसका निर्माण इस महानगरी के एक धनी सेठ की स्त्री विशाखा ने करवाया था। इसमें अपार धनराशि व्यय हुई थी। इस विहार के खंडहर सहेत महेत में जेतवन के अवशेषों से एक मील दक्षिण की ओर एक ढूह के रूप में पडे हुए हैं। (दे० श्रावस्ती)

पृथूदक

महाभारत में वर्णित तथा सरस्वती नदी के तट पर अवस्थित प्राचीन तीर्थ जिसका अभिज्ञान पहवा या पिहोवा (ज़िला अंबाला, हरयाणा) से किया गया है—'पृथूदकमिति ख्यातं कार्तिकेयस्य वै नृप तत्राभिषेकं कुर्वीत पितृदेवार्चने रत', 'पुण्यमाहु कुरुक्षेत्रं कुरुक्षेत्रात् सरस्वती, सरस्वत्याश्च तीर्थानि तीर्थेभ्यश्च पृथूदकम्', 'पृथूदकात् तीर्थतमं नान्यत् तीर्थं कुरूद्वह, 'तत्र स्नात्वा दिवं यान्ति यद्यपि पापकृतो नरा पृथूदके नरश्रेष्ठ एवमाहुर्मनीषिण —महा० वन० 83, 142 145-148 149। शल्यपर्व में भी सरस्वती के तीर्थों के प्रसंग में पृथूदक

का उल्लेख है—'ररागुरब्रवीत् तत्र नयध्व मा पृथूदकम्, विशायातीतवयम् रुगत तरोधना, त च तीथमुपानियु सरस्वत्यास्तपोधनम' शल्य० 39,29-30। पृथूदक का सबध महाराज पृथु स बताया जाता है। यहा आज भी अनेक प्राचीन मदिरो के अवशेष हैं तथा पुरातत्व-विषयक सामग्री भी मिली है। महमूद गजनवी और मुहम्मद गोरी ने थानेसर को लूटने के समय पहवा को भी ध्वस्त कर दिया था। महाराणा रणजीतसिंह ने यहा के प्राचीन मदिरो का जीर्णोद्धार करवाया था।

पेक्कीगुड्ड (आ० प्र०)

कोपवल के निकट स्थित है। कुछ वष हुए यहा एक चट्टान पर उत्कीण अशाक का अभिलेख स० (1) प्राप्त हुआ था।

पेगू (वर्मा)

इस स्थान का प्राचीन भारतीय साहित्य मे सुवर्णभूमि कहा गया है। अशोक के शासन काल म मोग्गलिपुत्र ने सोण और उत्तर नामक दो स्थविर इस दश म बौद्धधम के प्रचाराथ भेजे थे।

पेनुकोंडा (मैसूर)

यहा विजयनगर नरेशो (15वी 16वी शती) की ग्रीष्मकालीन राजधानी थी। लोगो का परपरागत विश्वास है कि यहा श्रीरामचद्र ने अपने वनवास-काल का कुछ समय बिताया था जिसके स्मारक कई प्राचीन मदिर हैं। एक शिव मदिर भी है।

पेन गगा

दक्षिण भारत की एक नदी जो सभवत प्राचीन साहित्य की वेणा या प्रवेणी है।

पेरूर (मद्रास)

यह स्थान एक मध्यकालीन सुदर मदिर के लिए उल्लेखनीय है। इस मदिर के प्रवेश द्वारा और छाजनों की शोभा अनोखी जान पडती है।

पेशावर दे० पुरुषपुर

पेहेवा=पृथूदक

पठण=पठान=प्रतिष्ठान (जिला औरगाबाद,महाराष्ट्र)

गोदावरी तट पर स्थित अति प्राचीन व्यापारिक तथा धार्मिक स्थान है। पठण महाराष्ट्र के वारकरी सप्रदाय का तीथ स्थल और प्रसिद्ध सत एकनाथ की जन्मभूमि है। पैठान को पोतन भी कहते थे। यहा अश्मक जनपद की राजधानी थी। (दे० प्रतिष्ठान)।

पठान=पैठण

पठामभुक्ति (जिला रायपुर, म० प्र०)

उत्तर गुप्तकालीन (7वीं 8वीं शती ई०) एक अभिलेख से जो राजिम में प्राप्त हुआ था पैठामभुक्ति नामक स्थान का नाम सूचित होता है। यहां के पिपरिपद्रक ग्राम के निवासी किसी ब्राह्मण को कोसल नरेश तीवरदेव ने एक ग्राम का दान दिया था।

पशुनी

चित्रकूट (जिला बांदा, उ० प्र०) के निकट बहने वाली मंदाकिनी या पयस्विनी का एक नाम। संभवतः यह नाम पयस्विनी का ही अपभ्रंश रूप है।

पैंसर (जिला बिलासपुर, म० प्र०)

महानदी के तट पर अवस्थित छोटा सा ग्राम है। प्राचीन किंवदंती है कि दंडकारण्य जाते समय श्रीरामचंद्र ने सीता और लक्ष्मण के साथ महानदी को इसी स्थान पर पार किया था। पैंसर का अर्थ 'नदी को पैदल पार करना' है।

पोखरन=पुष्करण=पुष्करारण्य

पोतन दे० पठण

अश्मक जनपद की राजधानी। सुत्तनिपात (977) में पोतन या पैठण में बताई गई है (दे० अस्मक)। महागोविंद सुत्त के अनुसार यहां का राजा ब्रह्मदत्त था किंतु अस्सक जातक में पोतन को काशी जनपद में बताया गया है। महाभारत में शायद इसी नगर को पौदन्य (दे० रायचौधरी—पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंशेंट इंडिया, पृ० 121) और चुल्ल-कलिंग जातक में पोतलि कहा गया है।

पोतलि दे० पोतन

पोदनपुर

मैसूर राज्य में प्राप्त एक शिलालेख के अनुसार गोमटेश्वर, जैनों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के पुत्र थे। इनको बाहुबली या भुजबली भी कहते थे। इनमें और इनके ज्येष्ठ भ्राता भरत में ऋषभदेव के विरक्त होने पर राज्य के लिए युद्ध हुआ। बाहुबली ने विजयी होने पर भी राज्य भरत को सौंप दिया और आप तपस्या करने वन में चले गए। भरत ने पोदनपुर में, जहां बाहुबली ने राज्य किया था, उनकी पावन-स्मृति में उनकी शरीराकृति के अनुरूप ही 525 धनुषों के प्रमाण की एक प्रस्तर प्रतिमा स्थापित करवाई। कालांतर में मूर्ति के आसपास का प्रदेश वन-कुक्कुटों तथा सर्पों से व्याप्त हो गया जिससे लोग मूर्ति को ही कुक्कुटेश्वर कहने लगे। धीरे धीरे यह मूर्ति लुप्त हो गई और

उसके दर्शन अलभ्य हो गए। गंगवंशीय रायमल्ल के मंत्री चामुंडराय ने इस मूर्ति का वृत्तांत सुनकर इसके दर्शन करने चाहे, किंतु पोदनपुर की यात्रा कठिन समझकर श्रमणबेलगोल में उन्होंने पोदनपुर की मूर्ति के अनुरूप ही गोमटेश्वर की मूर्ति का निर्माण करवाया। यह मूर्ति संसार की विशालतम मूर्तियों में है। (दे० श्रवणबेलगोल)

पोनारी (आ० प्र०)

अनारी नदी के तट पर बसा हुआ, यह शिव तथा विष्णु दोनों देवों का सम्मिलित तीर्थ है।

पोरबंदर (काठियावाड, महाराष्ट्र)

प्राचीन सुदामापुरी। यहां की भूतपूर्व रियासत 14वीं शती में स्थापित हुई थी। इससे पहले सुराष्ट्र के इस प्रदेश की राजधानी घुमली में थी।

पोरशा (जिला दीनाजपुर, बंगाल)

इस स्थान में नवदुर्गा की एक प्रस्तर मूर्ति प्राप्त हुई थी। एक विशाल फलक पर देवी की नव मूर्तियां निर्मित हैं। मध्यवर्ती मूर्ति के अठारह हाथ और शेष आठ में से प्रत्येक के सोलह हाथ हैं। यह विलक्षण मूर्ति राजशाही के संग्रहालय में सुरक्षित है।

पोलाड्डोंगर (म० प्र०)

यहां 7वीं से 9वीं शती ई० की इमारतों के अनेक अवशेष मिले हैं जिससे इस स्थान की प्राचीनता सिद्ध होती है।

पोलिवापिक (लंका)

महावंश 28, 39में उल्लिखित। यह अनुराधपुर से पचास मील दूर वर्तमान ववुनिककुलम है।

पौंडी (म० प्र०)

मैहर से कटनी जाने वाले मार्ग पर छोटा सा ग्राम है। यहां से प्राचीनकाल की अनेक मूर्तियां मिली हैं। एक मूर्ति पर 1157 ई० का एक अभिलेख अंकित है। यह स्थान मध्ययुगीन जान पड़ता है।

पौंड्र=पुंड्र

महाभारत आदि० 174 37 में पौंड्र देश निवासियों की अनार्य जातियों में गणना की गई है 'पौंड्रान किरातान् यवनान् सिंहलान् बर्बरान खसान।

पौदन्य दे० पोतन

पौनार (महाराष्ट्र)

कुछ विद्वानों के मत में वर्तमान पौनार, प्राचीन प्रवरपुर है जहां वाकाटक-

नरेशो की गुप्तकाल म राजधानी थी।

पौलोम

नारीतीर्थो मे परिगणित तीर्थ—'अगस्त्य तीर्थ सौभद्र पौलोम च सुपावनम, कारधम प्रसन्न च हयमेधफल च तत'—महा० आदि० 215,4। यह दक्षिण समुद्र-तट पर स्थित था। (दे० नारीतीर्थ)

प्रकाश (पश्चिम खानदेश, महाराष्ट्र)

ताप्ती घाटी मे अवस्थित इस स्थान के निकट लगभग एक तीन सहस्र वर्ष प्राचीन नगर के अवशेष उत्खनन द्वारा प्रकाश मे लाए गए हैं। इसकी खोज 1954 मे वल्लभ विद्यानगर की पुरातत्व सस्था द्वारा की गई थी। ये खडहर ताप्ती के उत्तरी तट पर भूमि से काफी ऊचाई पर अवस्थित हैं। खुदाई की प्रक्रिया म सवप्रथम ई० सन की प्रारम्भिक शतियो म व्यवहृत लाल मृदभाड प्राप्त हुए। तत्पश्चात् निचले तलो मे मौर्य पूव मद्भाडो तथा प्रस्तरोपकरणो के अवशेष मिले। प्रकाश म प्राप्त चित्रित मद्भाड नगदा तथा महेश्वर से मिलनेवाले मृदभाडो (माहिष्मती मृदभाडो) के समान ही हैं। उपयुक्त सस्था के सचालक श्री पड्या के मत मे ये मृद्भाड, हरप्पा-पूर्व सस्कृति (अर्थात् सिंध-बिलोचिस्तान की अमरी-नाब नामक सस्कृति) से सबधित हैं। अमरी जोव सभ्यता के लोगो को, मोहजदारो तथा हरप्पा निवासियो के भारत म आगमन के कारण, सिध बिलोचिस्तान से पूर्व की ओर अग्रसर होना पडा था।

प्रज्ञापुर-(गुजरात)

अहमदाबाद से प्राय बीस मील दूर जनो का प्राचीन तीर्थ है जिसे अब शेरीसाजी कहते हैं।

प्रणहिता

गोदावरी की सहायक नदी। यह वेनगगा, वरदा और पेनगगा की सयुक्त धारा से मिलकर बनी है।

प्रणति भूमि

जैनग्रथ कल्पसूत्र के अनुसार तीर्थकर महावीरजी ने एक वर्षाकाल इस स्थान पर बिताया था। अभिज्ञान सदिग्ध है।

प्रणिता=प्रणहिता

प्रतापगढ़ (महाराष्ट्र)

महाबलेश्वर से बारह मील पश्चिम की ओर शिवाजी के दुर्गों म

सर्वाधिक पहाडी स्थान है। उन्होंने बीजापुर रियासत के भेजे हुए सरदार अफजलखा का इसी स्थान पर बघनख द्वारा वध किया था। यहा का दुर्ग समुद्रतल से 3543 फुट ऊची पहाडी पर बना है। इसका निर्माण शिवाजी ने 1656 ई० म करवाया था। शिवाजी की अधिष्ठात्री देवी भवानी का मदिर यहा का प्रसिद्ध स्मारक है। अफजलखा का मकबरा यही स्थित है जिसम उसका कटा हुआ सिर दफनाया गया था।

प्रतापगिरि (महादेवपुर तालुका, जिला करीमनगर, आ०प्र०)

वारगल नरेश राजा प्रतापरुद्र के बनवाये हुए किले के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

प्रतिविध्य

'स तन सहितोराजन सव्यसाची परतप, विजिग्ये शाकल द्वीप प्रतिविंध्य च पार्थिवम्' महा० आदि० 26,5। प्रतिविध्य के राजा को अर्जुन ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसग मे हराया था। यह स्थान सभवत शाकल (स्यालकोट, प० पाकिस्तान) के निकट कोई पहाडी स्थान था। (यह शाकल नरेश का नाम भी हो सकता है)।

प्रतिष्ठान=**पैठाण** (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

औरगाबाद से 35 मील दक्षिण मे, दक्षिण भारत का प्रसिद्ध प्राचीन नगर। यह गोदावरी के उत्तरी तट पर स्थित है और प्राचीन काल ही स तीर्थ के रूप मे मान्यताप्राप्त स्थान है। पुराणो के अनुसार प्रतिष्ठान की स्थापना ब्रह्मा ने की थी और गोदावरी-तट पर इस सुन्दर नगर को उन्होने अपना स्थान बनाया था। प्रतिष्ठान-माहात्म्य म कथा है कि ब्रह्मा न इस नगर का नाम पाटन या पट्टन रखा और फिर अन्य नगरो से इसका महत्व ऊपर रखने के लिए इसका नाम बदल कर प्रतिष्ठान कर दिया। महाभारत मे प्रतिष्ठान म सब तीर्थों क पुण्य को प्रतिष्ठित बताया गया है—'एवमेषा महाभाग प्रतिष्ठाने प्रतिष्ठता, तीर्थयात्रा महापुण्या सर्वपापप्रमोचनी' वन० 85, 114। (यह उल्लेख प्रतिष्ठानपुर या झूसी क लिए भी हो सकता है)। प्राचीन बौद्ध (पाली) साहित्य मे पतिट्ठान या प्रतिष्ठान को उत्तर और दक्षिण भारत के बीच जाने वाले व्यापारिक मार्ग के दक्षिणी छोर पर अवस्थित नगर के रूप मे वर्णन है। इसे गोदावरी तट पर स्थित तथा दक्षिण पथ का मुख्य व्यापारिक केन्द्र माना गया है। ग्रीक लेखक एरियन न इसे 'प्लोथान' कहा है तथा मिश्र के रामन भूगोल-विद टॉलमी न जिसन भारत की द्वितीय शती ई० मे यात्रा की थी इसका नाम बैथन (Baithon) लिखा है और इसे सिरोपोलोमेयोस (सातवाहन नरेश श्री पुलोमयी द्वितीय 138 170 ई०) की राजधानी बताया है। परिप्लस आव

दि एराइथ्रियन सी के अनातनाम लेखकने इस नगरका नाम पीथान (Poethan) लिखा है। प्रथम शती ई० के रोमन इतिहास लेखक प्लिनी ने प्रतिष्ठान को आंध्रदेश के वैभवशाली नगर के रूप म सराहा है। पितलखोरा गुफा के एक अभिलेख तथा प्रतिष्ठान माहात्म्य मे नगर का शुद्ध नाम प्रतिष्ठान सुरक्षित है। अशोक ने अपने शिला अभिलेख 13 म जिन भोज, राष्ट्रिक व पतनिक लोगो का उल्लेख किया है सभव है वे प्रतिष्ठान-निवासी हो। किंतु बुह लर ने इस मत को नही माना है और न ही डा० भडारकर ने। (दे० अशोक पृ० 34)। प्रतिष्ठान का उल्लेख जिनप्रभासूरि के विविध तीर्थकल्प और आवश्यक सूत्र म भी है। विविध तीर्थ-कल्पसूत्र के अनुसार महाराष्ट्र के इस नगर म शालवाहन नरेश का राज्य था। इसने उज्जयिनी के विक्रमादित्य को हराया था। शातवाहन एक ब्राह्मणी विधवा का पुत्र था और उसके पिता नागराज का गोदावरी के निकट निवास स्थान था। शातवाहन ने दक्षिण देश म ताप्ती का निकटवर्ती प्रदेश जीत लिया था। इस ग्रथ के अनुसार शातवाहन जैन था और उसने अनेक चैत्य बनवाए और गोदावरी के तट पर महालक्ष्मी की मूर्ति की स्थापना की। गुजरात के कायस्थ कवि साडल्ल (या सोडठल) की सुप्रसिद्ध रचना चपूकाव्य उदयसुदरी का नायक मलयवाहन प्रतिष्ठान का राजा था। उसका विवाह नागराज शिखराज तिलक की कन्या उदयसुदरी के साथ हुआ था। शातवाहन नरेशो की राजधानी के रूप म प्रतिष्ठान इतिहास में प्रसिद्ध रहा है। जान पडता है कि मलयवाहन इसी वश का राजा था। प्राचीनकाल म आध्र साम्राज्य की राजधानी कृष्णा के मुहाने पर स्थित धयकटक या अमरावती मे थी किंतु प्रथम शती ई० के अतिम वर्षों म आध्रो ने उत्तर पश्चिम म एक दूसरी राजधानी बनाने का विचार किया क्योंकि उनके राज्य क इस भाग पर शक, पह्लव और यवनो के आक्रमणों का डर लगा हुआ था। इस प्रकार आंध्र-साम्राज्य की पश्चिमी राजधानी प्रतिष्ठान या पैठान मे बनाई गई और पूर्वी भाग की राजधानी धयकटक में ही रही। प्रतिष्ठान म स्थापित होनेवाली आध्र शाखा क नरेशो न अपन नाम क आगे आध्रभृत्य विशेषण जोडा जो उनकी मुख्य आंध्र शासको की अधीनता का सूचक था किंतु कालातर म व स्वतत्र हो गए और शातवाहन कहलाए। पुरातत्वसबधी खुदाई म पैठाण या पैठन स आंध्र नरेशो क सिक्के मिल हैं जिन पर स्वस्तिक, बोधिद्रुम तथा अन्य चिह्न अकित हैं। अन्य अवशेष भी प्राप्त हुए हैं जिनम मिट्टी की मूर्तियां, मालो की गुरियां, हाथीदात और शख की बनी वस्तुए तथा मकानो क खडहर उल्लेखनीय हैं। पैठाण की प्राय सभी इमारतें खडहर क रूप म हैं किंतु नगर म अपेक्षा-

कृत नवीन मंदिर भी हैं जिनमें लकड़ी का अच्छा काम है। 1734 ई० में गोदावरी पर स्थित नागाघाट निर्मित हुआ था। इसके पास ही दो मंदिर हैं जिनमें से एक गणपति का है। नगर की मसजिद में एक कूप है जिसके विषय में यह प्रसिद्ध है कि यह वही कुआं है जिसमें नागराज शेष का ब्राह्मणपुत्र शालिवाहन अपनी बनाई हुई मिट्टी की मूर्तियां डालता रहा था और इन सैनिकों तथा हाथी घोड़ों की प्रतिमाओं ने बाद में जीवित रूप धारण करके शालिवाहन की, आक्रमणकारी उज्जयिनी नरेश विक्रमादित्य से रक्षा की थी। विक्रमादित्य को ज्योतिषियों ने बताया था कि शालिवाहन उसका शत्रु होगा। शालिवाहन ने विक्रमादित्य को हराकर पूरे दक्षिणापथ पर अधिकार कर लिया और कहते हैं कि 78 ई० में प्रवर्तित शक शालिवाहन नामक प्रसिद्ध संवत् उसी ने चलाया था। पैशाची प्राकृत के प्रसिद्ध आचार्य गुणाढ्य प्रतिष्ठान-निवासी थे। पीछे वह पिशाच देश में जा बसे थे। इनका प्रख्यात ग्रंथ बृहत्कथा अब अप्राप्य है किंतु 12वीं शती तक यह उपलब्ध था। गुणाढ्य प्रतिष्ठान के राजा शालिवाहन (78 ई०) की राजसभा के रत्न थे। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध विद्वान् हेमाद्रि का भी प्रतिष्ठान से निकट संबंध था। ये शुक्ल यजुर्वेदी ब्राह्मण थे और देवगिरि के यादव नरेश महादेव तथा तत्पश्चात् रामचंद्र सेन के प्रधान मंत्री थे। इनके लिखे हुए कई प्रसिद्ध ग्रंथ हैं जिनमें चतुर्वर्ग चिंतामणि तथा आयुर्वेद-रसायन मुख्य हैं। हेमाद्रि को मराठी की मोडी लिपि का आविष्कारक कहा जाता है। 14वीं शती में महाराष्ट्र के महानुभाव संत संप्रदाय का जन्म प्रतिष्ठान में हुआ था। डा० भंडारकर ने प्रतिष्ठान का अभिज्ञान नवनर या नवनगर नामक स्थान से किया है जो संदेहास्पद है।

(2) प्रतिष्ठानपुर (=झूसी, प्रयाग)

प्रतिष्ठानपुर

प्रयाग के निकट गंगा के दूसरे तट पर स्थित झूसी ही प्राचीन प्रतिष्ठानपुर है। महाभारत में सब तीर्थों की यात्रा को प्रतिष्ठान (प्रतिष्ठानपुर) में प्रतिष्ठित माना गया है—'एवमेषा महाभाग प्रतिष्ठाने प्रतिष्ठिता, तीर्थ यात्रा महापुण्या सर्वपापप्रमोचनी' वन० 85,114। (टि० यह निर्देश प्रतिष्ठान या पैठाण के लिए भी हो सकता है)। वन० 85,76 में प्रयाग के साथ ही प्रतिष्ठान का उल्लेख है—'प्रयाग सप्रतिष्ठान कंबलाश्वतरौ तथा', (दे० झूसी)।

प्रतीची

'ताम्रपर्णी नदी यत्र कृतमाला पयस्विनी कावेरी च महापुण्या प्रतीची च महानदी'—श्रीमद्भागवत 11,5,39 40। कुछ विद्वानों का मत है कि प्रतीची केरल

की प्रसिद्ध परियार नदी है (दे० परियार)।
प्रद्युम्ननगर=पाडुआ (जिला हुगली प० बंगाल) (दे० मारपुर)

प्रभाकर

विष्णुपुराण 2,4,36 के अनुसार कुशद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा ज्योतिष्मान् के पुत्र के नाम पर प्रसिद्ध है।

प्रभास

(1)=प्रभासपाटन, प्रभासपट्टन

सरस्वती-समुद्र संगम पर स्थित प्रसिद्ध तीर्थ—'समुद्रं पश्चिमं गत्वा सरस्वत्यब्धि संगमम्' महा० 35,77। यह तीर्थ काठियावाड़ के समुद्रतट पर स्थित वीरावल बंदरगाह की वर्तमान बस्ती का प्राचीन नाम है। किंवदंती के अनुसार जरा नामक व्याध का बाण लगने से श्रीकृष्ण इसी स्थान पर परमधाम सिधारे थे। यह विशिष्ट स्थल या देहोत्सर्ग-तीर्थ नगर के पूर्व में हिरण्या, सरस्वती तथा कपिला के संगम पर बताया जाता है। इसे प्राची त्रिवेणी भी कहते हैं। युधिष्ठिर तथा अन्य पांडवों ने अपने वनवास काल में अन्य तीर्थों के साथ प्रभास की भी यात्रा की थी—'द्विजैः पृथिव्यां प्रथितं महद्भिस्तीर्थं प्रभासं समुपजगाम' महा० वन० 118,15। इस तीर्थ को महोदधि (समुद्र) का तीर्थ कहा गया है—'प्रभासतीर्थं संप्राप्य पुण्यं तीर्थं महोदधेः'—वन० 1 9,3। विष्णु पुराण के अनुसार प्रभास में ही यादव लोग परस्पर लड़भिड़ कर नष्ट हो गए थे—'ततस्ते यादवास्सर्वे रथानारुह्य शीघ्रगान्, प्रभासं प्रययुस्साधं कृष्ण रामादिभिर्द्विज'। प्रभासं समनुप्राप्ता कुकुराधक वृष्णयः चक्रुस्तत्र महापानं वासुदेवेन नोदिता, पिबतां तत्र चैतेषां संघर्षेण परस्परम्, अतिवादेन्धनोजने कलहाग्नि क्षयावहः' विष्णु 5,37-38 39 40। देहोत्सर्ग के आगे यादव-स्थली है जहां यादव लोग परस्पर लड़भिड़ कर नष्ट हो गए थे। प्रभास पाटन का जैन साहित्य में देवकीपाटन नाम भी मिलता है। दे० तीर्थमाला चैत्यवंदन—'वंदे स्वर्णगिरौ तथा सुरगिरौ श्री देवकीपत्तने'।

(2)=पभोसा (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

शुंग काल (द्वितीय शती) के अनेक उत्कीर्ण लेख इस स्थान से प्राप्त हुए हैं। यह प्राचीन नगर कौशांबी के निकट स्थित था—(दे० पभोसा)।

प्रमाणकोटि

महाभारत में उल्लिखित, गंगातटवर्ती एक स्थान—'उदकक्रीडनं नाम कारयामास भारत, प्रमाणकोट्यां तं देशं स्थलं किंचिदुपेत्य ह'—आदि० 127,33। यहीं बचपन में पांडव और कौरव जल विहार के लिए गए थे और कौरवों ने भीमसेन को गंगा में डुबा दिया था जिसके फलस्वरूप वे नाग लोक जा पहुंचे थे। प्रमाण-

कोटि का नाम संभवत 'प्रमाण' नामक महावट के कारण हुआ था—'निवृत्तेषु तु पौरेषु रथानास्थाय पांडवा आजग्मुर्जाह्नवीतीरे प्रमाणाख्य महावटम्' वन० 1,41। जान पडता है कि प्रमाणकोटि हस्तिनापुर के निकट ही गंगा-तट पर कोई स्थान था जहां हस्तिनापुर के निवासी सुविधापूर्वक जल विहार के लिए जा सकते थे।

प्रयाग (उ० प्र०)

गंगा-यमुना के संगम पर बसा हुआ प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ। प्राचीन साहित्य मे केवल गंगा-यमुना, इन्ही दो नदियो का संगम प्रयाग म माना गया है। त्रिवेणी या गंगा यमुना सरस्वती, इन तीन नदियो के संगम की कल्पना मध्ययुगीन है। [दे० सरस्वती (2)]। वाल्मीकि रामायण, महाभारत, प्राचीन पुराणो तथा कालिदास के ग्रंथो मे सर्वत्र प्रयाग मे गंगा-यमुना ही के संगम का वर्णन है। वाल्मीकि-रामायण म प्रयाग का उल्लेख भारद्वाज के आश्रम के संबंध मे है और इस स्थान पर घोर वन की स्थिति बताई गई है—'यत्र भागीरथी गंगा यमुना-भिप्रवतत जग्मुस्त देशमुद्दिश्य विगाह्य समुहद्वनम्। प्रयागमभित पश्च सौमित्रे धूममुत्तमम्, अग्नेर्भगवत केतु मन्ये संनिहितो मुनि। धर्मज्ञो तो सुख गत्वा लवमाने दिवाकरे, गंगायमुनयो संधौ प्रापतुर्निलय मुने। अवकाशो विविक्तो य महानद्यो, समागमे, पुण्यश्चरमणीयश्च वसत्विह भवान् सुखम'—वाल्मीकि० अयो० 54,2-5 8-22। इस वर्णन से सूचित होता है कि प्रयाग म रामायण की कथा के समय घोर जंगल तथा मुनियो के आश्रम थे, कोई जनसंकुल बस्ती नही थी। महाभारत मे गंगा-यमुना के संगम का उल्लेख तीर्थ रूप मे अवश्य है किंतु उस समय भी यहा किसी नगर की स्थिति का आभास नही मिलता—'पवित्रमृपिभिर्जुष्ट पुण्य पावनमुत्तमम्, गंगायमुनयोर्वीर संगम लोक विश्रुतम्' वन० 87,18। 'गंगा यमुनयोर्मध्ये स्नाति य संगमेनर, दशाश्वमेधा-नाप्नोति कुल चैव सामुद्धरेत' वन० 84,35। 'प्रयागे देवयजन देवाना पृथिवीपत, ऊपुराप्लुत्य गात्राणि तपश्चातस्थुरुत्तमम्, गंगायमुनयो चैव संगमे सत्यसंगरा' वन० 95,4-5। बौद्ध साहित्य मे भी प्रयाग का किसी बडे नगर के रूप म वर्णन नही मिलता, वरन् बौद्धकाल मे वत्सदेश की राजधानी के रूप मे कौशांबी अधिक प्रसिद्ध थी। अशोक ने अपना प्रसिद्ध प्रयाग स्तंभ कौशांबी मे ही स्थापित किया था यद्यपि बाद मे शायद अकबर के समय मे वह प्रयाग ले आया गया था। इसी स्तंभ पर समुद्रगुप्त की प्रसिद्ध प्रयाग प्रशस्ति अंकित है। कालिदास ने रघुवंश के 13वें सर्ग मे गंगा यमुना के संगम का मनोहारी वर्णन किया है (श्लोक 54 से 57 तक) तथा गंगा यमुना के संगम के स्नान को मुक्तिदायक

ा है—'समुद्र-पत्न्योजलसन्निपाते पूतात्मनामत्र किलाभिषेकात्, तत्त्वावबोधेन नापि भूय तनुस्त्यजा नास्ति शरीरवध ' रघु० 13,58। विष्णुपुराण मे, प्रयाग गुप्तनरेशो का शासन बतलाया गया है—'उत्साद्याखिलक्षत्रजाति नवनागा ग्रावत्या नाम पुर्यामनुगगाप्रयाग गयायाश्च मागधा गुप्ताश्च भोक्ष्यन्ति'। विष्णु० –6,8,29 से सूचित होता है कि इस पुराण के रचनाकाल (स्थूल रूप से गुप्त ाल) मे प्रयाग की तीर्थ रूप म बहुत मा यता थी—'प्रयागे पुष्करे चव कुरु त्रे तथाणवे कृतोपवास प्राप्नाति तदस्य श्रवणा नर '। युवानच्वाग ने कनौजा- धिप महाराज हर्ष का प्रति पाचवें वर्ष प्रयाग के मेले मे जाकर सर्वस्व दान कर देने का अपूर्व वर्णन किया है। उत्तरकालीन पुराणों मे प्रयाग के जिस अक्षयवट का उल्लेख है उसे बहुत समय तक सगम के निकट अकबर के किले के अदर स्थित बताया जाता था। यह बात अब गलत सिद्ध हो चुकी है और असली वट वृक्ष किले से कुछ दूर पर स्थित बताया जाता है। महाभारत म अक्षयवट का गया मे होना वर्णित है–(वन० 84,83)। सभव है गौतम बुद्ध के गया स्थित सबाधिवृक्ष के समान ही पौराणिक काल मे अक्षय वट की कल्पना की गई होगी। कहा जाता है कि अकबर के समय मे प्रयाग का नाम इलाहाबाद कर दिया गया था किंतु जान पडता है कि प्रयाग को अकबर के पूर्व भी इलाबास कहा जाता था। एक पौराणिक कथा के अनुसार प्रतिष्ठानपुर अथवा झूसी (जा प्रयाग क निकट गगा के उस पार है) म चद्रवशी राजा पुरु की राजधानी थी। इनके पूर्वज पुरुरवा थे जो मनु की पुत्री इला और बुध क पुत्र थे (दे० वाल्मीकि० उत्तर 89)। इला के नाम पर ही प्रयाग को इलाबास कहा जाता था। वास्तव म अकबर ने इसी नाम को थोडा बदलकर इलाहाबाद कर दिया था। वत्स या कौशाबी का राजा उदयन जो प्राचीन साहित्य म प्रसिद्ध है, चद्रवश से ही सबधित था —इससे भी प्रयाग म चद्रवश के राज्य करने की पौराणिक कथा की पुष्टि होती है और इस तथ्य का भी प्रमाण मिल जाता है कि वास्तव मे प्रयाग का एक प्राचीन नाम इलावास भी था जिसे अकबर न कुछ बदल दिया था, और उसका उद्देश्य प्रयाग नाम को हटाकर अल्लाहाबाद या इलाहाबाद नाम प्रचलित करना नही था। अकबर न सगम पर स्थित किसी पूर्वयुगीन किले का जीर्णोद्धार करक उसका विस्तार करवाया और उसे वर्तमान सुदृढ किले का रूप दिया। इस तथ्य की पुष्टि तुलसीदास के इस वर्णन से भी होती है जिसम प्रयाग मे एक सुदृढ गढ का वर्णन है—क्षेत्र अगम गढ गाढ सुहावा, सपनहु नहिं प्रतिपच्छिन्ह पावा' (रामचरितमानस, अयोध्या काड)। अकबर के समकालीन इतिहासलेखक बदायूनी के वृत्तात से सूचित होता है इस मुगल सम्राट् ने प्रयाग म एक बडे

राजप्रासाद की भी नींव रखी और नगर का नाम इलाहाबाद कर दिया (दे० ऊपर)। अकबर ने प्रयाग की स्थिति की महत्ता को समझते हुए उसे अपने साम्राज्य के 12 सूबों में से एक का मुख्य स्थान भी बनाया। इसमे कडा और जौनपुर के प्रदेश भी सम्मिलित कर दिए गए थे। कहा जाता है कि अशोक का कौशांबी स्तंभ इसी समय प्रयाग लाया गया था। अशोक और समुद्रगुप्त के प्रसिद्ध अभिलेखों के अतिरिक्त इस पर जहांगीर और बीरबल के लेख भी अंकित है। बीरबल का लेख उनकी प्रयाग यात्रा का स्मारक है—'संवत् 1632 शाके 1493 मार्गवदी 5 सोमवार गंगादाससुत महाराज बीरबल श्री तीरथ राज प्रयाग की यात्रा सुफल लिखितम्'। खुसरो बाग जहांगीर के समय मे बना था। यह बाग चौकोर है और इसका क्षेत्रफल 64 एकड है। इसमे अनेक मकबरे है। पूर्व की ओर गुंबद वाला मकबरा जहांगीर के विद्रोही पुत्र खुसरो का है। इसे 1662 ई० मे जहांगीर ने बगावत करने के फलस्वरूप मृत्यु की सजा दी थी। इलाहाबाद के चौक मे अभी कुछ समय तक वे नीम के पेड खडे थे जिन पर अंग्रेजो ने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम मे लडने वाले भारतीय वीरों को फांसी दी थी।

प्रलंब

वाल्मीकि रामायण मे इस स्थान का वर्णन अयोध्या के दूतों की केकय देश की यात्रा के प्रसंग मे है—'यन्तेनापरतालस्य प्रलंबस्योत्तरं प्रति, निषेवमाणा जग्मुनदी मध्येनमालिनीम्' अयो० 68,12। प्रलंब के संबंध मे मालिनी (गंगा की सहायक नदी वर्तमान मालन) का उल्लेख होने से इस देश की स्थिति वर्तमान बिजनौर और गढवाल जिला (उ० प्र०) के अंतर्गत माननी होगी। इसके आगे अयो० 68,13 में दूतों द्वारा हस्तिनापुर (जिला मेरठ) मे गंगा को पार करने का उल्लेख है जिससे उपर्युक्त अभिज्ञान की पुष्टि होती है।

प्रवरपुर (महाराष्ट्र)

वाकाटक नरेशो (5वी शती ई०) की राजधानी। इसे प्रवरसेन ने बसाया था। इसका दूसरा नाम पुरिका भी था। संभवत वर्तमान पौनार ही प्राचीन प्रवरपुर है।

प्रवरा (गुजरात)

इस नदी के तट पर अनेक प्राचीन स्थान हैं जिनमे श्रीनिवास क्षेत्र या वर्तमान नवासा प्रमुख है। अन्य स्थान वलापुर, श्रीवन, तथा उवकल ग्राम हैं जहां के प्राचीन मंदिर उल्लेखनीय हैं। इस नदी का नाम महाभारत भीष्मपर्व की नदी सूची में है—'करीषिणीमसिक्नी च कुशचीरा महानदीम् मकरी प्रवरा मेना हेमा घृतवती तथा' भीष्म० 9,23।

प्रवषणगिरि (होस्पटतालुका, मैसूर)

इसी को प्रस्रवण गिरि भी कहते थ । प्राचीन किष्किधा के निकट माल्य वान पवत स्थित है जिसके एक भाग का नाम प्रवपणगिरि है । यह किष्किधा के विरूपाक्ष मदिर से 4 मील दूर है । वाल्मीकि रामायण के अनुसार यही एक गुहा म श्रीराम ने वनवास काल मे सीताहरण क पश्चात और सुग्रीव का राज्याभिषेक करने पर प्रथम वर्षा ऋतु व्यतीत की थी । 'अभिषिक्ते तु सुग्रीवे प्रविष्टे वानरे गुहाम्, आजगाम सह भ्राना राम, प्रस्रवण गिरिम'—किष्किधा० 27,1 । इस पवत का वणन करते हुए वाल्मीकि लिखते हैं—'शादूल मृगसघुष्ट सिहैर्भीमरवर्वृतम्, नानागुल्मलतागूढ बहुपादपसकुलम । ऋक्षवानरगोपुच्छैर्मार्जारैश्च निषेवितम्, मेघराशिनिभ शैल नित्य शुचिकर शिवम् । तस्य शलस्य शिखर महतीमायता गुहाम्, प्रत्यगृह्णात वासाथ राम सौमित्रिणा सह' किष्किधा० 27 2 3 4 । श्रीराम, लक्ष्मण से इस पवत का वर्णन करते हुए कहते हैं—'इय गिरिगुहा रम्या विशाला युक्तमारुता, श्वेताभि, कृष्णताम्राभि शिलाभिरुपशोभितम् । नानाधातुसमाकीर्णं नदीदर्दुरसयुतम । विविधैर्वृक्षखडैश्च चारुचित्रलतायुतम् । नानाविहग सघुष्ट मयूरवरनादितम् । मालतीकुद गुल्मैश्च सिदुवारै शिरीषकै, कदवार्जुन सर्जैश्च पुष्पितैरुपशोभिताम, इय च नलिनी रम्या फुल्लपकजमडिता, नातिदूरे गुहायानो भविष्यति नृपात्मज' किष्किधा० 27,6 8 9 10 11 । किष्किधा 47,10 मे भी प्रस्रवणगिरि पर राम को निवास करते हुए कहा गया है—'त प्रस्रवणपृष्ठस्थ समासाद्याभिवाद्य च आसीन सहरामण सुग्रीवमिदमब्रुवन्' । अध्यात्मरामायण मे प्रवपण गिरि पर राम क निवास करन का वणन सुदर भाषा मे है— ततो रामो जगामाशु लक्ष्मणेन समन्वित, प्रवपणगिरेरुध्व शिखर भूरिविस्तरम ।- तत्रैक गह्वर दृष्ट्वा स्फाटिक दीप्तिमच्छुभम, वषवाताआतपसह् फलमूलसमीपगम्, वासाय रोचयामास तत्र राम स लक्ष्मण । दिव्यमूलफलपुष्पसयुत मौक्तिकोपमजलौघ पल्वले, चित्रवणमृगपक्षिशोभित पवते रघुकुलोत्तमोऽवसत् —किष्किधा० 4,53 54 55 । वाल्मीकि० किष्किधा 27 मे प्रवपणगिरि की गुहा के निकट किसी पहाडी नदी का भी वणन है । पहाडी क नाम प्रवपण या प्रस्रवणगिरि स सूचित होता है कि यहां वर्षाकाल म घनघोर वर्षा होती थी । (टि० वाल्मीकि रामायण म इस पहाडी का प्रस्रवण गिरि कहा गया है और उत्तररामचरित म भवभूति न भी इस इसी नाम स अभिहित किया है—'अयमविरलानोकहनिवहनिरतरस्निग्धनीलपरिसराण्यपरिणद्धगोदावरीमुखकदर सततमभिष्यदमानमघदुरित नीलिमा जनस्थान मध्यगागिरि प्रस्रवणानाम मघमानव यदचायमारादिव विभाव्यत, गिरि- प्रस्रवण

सोऽयं यत्र गोदावरी नदी,' उत्तर राम चरित 2,24। तुलसीदास ने इसे प्रवषण गिरि कहा है—'तब सुग्रीव भवन फिर आए, राम प्रवषण गिरि पर छाए' राम चरित मानस, किष्किंधाकांड।

प्रवाल

बंबई भुसावल रेल मार्ग पर पाचोरा जंकशन से 26 मील दूर महसावद स्टेशन है। यहां से प्रायः 5 मील दूर पद्मालय तीर्थ है जिसे प्राचीन काल में प्रवालक्षेत्र कहा जाता था।

प्रवेणी

'प्रवेण्युत्तरमार्गे तु पुण्ये कण्वाश्रमे तथा तापसानामरण्यानि कीर्तितानि यथाश्रुति'—महा० वन० 88,11। इस उल्लेख में प्रवेणी नदी के निकट कण्वाश्रम की स्थिति बताई गई है तथा संभवतः इसी नदी के तट के समीप माठर वन ('माठरस्यवन पुण्यं बहुमूल फलं शिवम्'—वन० 88,10) को स्थित बताया है। श्री वा० श० अग्रवाल के मत में प्रवेणी दक्षिण की वेनगंगा है। (दे० वेणी)

प्रशस्ता

'समुद्रगा पुण्यतमा प्रशस्ता जगाम पारिक्षितपांडुपुत्र' महा० वन० 118,2। यह नदी गोदावरी के उत्तर की ओर बहती थी।

प्रस्थल

'प्रस्थला मद्रगांधारा आरट्टनामतः खशा, वसातिसिंधुसौवीरा इति प्रायोऽति कुत्सिताः'—महा० कर्ण० 44,47। इस उद्धरण में परिगणित सभी देश, वर्तमान पंजाब (भारत तथा प० पाकि०) तथा सीमांत प्रदेश (प० पाकि०) तथा अफगानिस्तान के अंतर्गत हैं। इन्हें महाभारत काल में अनादर की दृष्टि से देखा जाता था जैसा कि कर्ण-पर्व के कर्ण-शल्य संवाद से स्पष्ट है। प्रस्थल की स्थिति मद्रदेश के पश्चिम में रही होगी।

प्रस्रवणगिरि=प्रवषणगिरि

प्रह्लादपुर (जिला गाजीपुर, उ० प्र०)

इस स्थान से एक गुप्तकालीन प्रस्तर-स्तंभ प्राप्त हुआ था जो 1853 ई० में बनारस भेज दिया गया और बाद में संस्कृत-कालेज के मैदान में स्थापित कर दिया गया। इस पर उत्कीर्ण अभिलेख का संबंध किसी राजा से है जिसका नाम लेख के अंत में खंडित हो गया है। फ्लीट के मतानुसार यह संभवतः शिशुपाल है जिसका नाम श्लोक के तीसरे चरण में भी आया है। राजा को 'पार्थिवानीकपाल' कहा गया है। संभव है 'पार्थिव' से तात्पर्य पल्लव या पह्लव से है जैसा कि फ्लीट तथा ओल्डफाउसन का मत है। लिपि के आधार

पर लेख गुप्तकाल के प्रथम चरण का जान पडता है।

प्राक्कोसल

महाभारत म महदेव की दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे प्राक्कोसल पर उनकी विजय का उल्लेख है 'कातारकाश्च समरे तथा प्राक्कोसलान नपान नाटकेयाश्च समर तथा हरवकान युधि' सभा० 31,13। प्राक्कोसल या पूव कोसल का अधिक प्रचलित नाम दक्षिण कोसल (वतमान महाकासल) है। इसम मध्य प्रदश क रायपुर और विलासपुर जिले तथा परिवर्ती प्रदश सम्मिलित थ। कातारक था विध्य का व यप्रदेश इसके पडोस मे स्थित था।

प्राग्ज्योतिषपुर (असम)

गोहाटी के निकट बसा हुआ प्राचीन नगर जहा असम या कामरूप की राजधानी थी। इसे किरात देश के अतगत ममझा जाता था। कालिकापुराण के अनुसार ब्रह्मा ने प्राचीन काल मे यहा स्थित होकर नक्षत्रो की सृष्टि की थी इसलिए इद्रपुरी के समान यह नगरी प्राग (=पूव या प्राचीन)=ज्योतिष (=नक्षत्र) कहलाई—'अत्रैव हि स्थितो ब्रह्मा प्राड नक्षत्र ससज ह, तत प्रागज्योतिषाख्यय पुरी शत्रपुरी समा'। महाभारत सभा० 38 मे यहा के राजा नरकासुर तथा उसके श्रीकृष्ण द्वारा वध किए जाने का प्रसग है। इस असुर ने सोलह सहस्र कुमारियो का अपहरण करके उनके रहने के लिए मणिपवत पर अत पुर का निर्माण किया था। श्रीकृष्ण ने नरकासुर के वध के उपरात इन स्त्रियो को मुक्त कर दिया और मणिपवत को उठाकर वे द्वारका ले गए—'प्राग्ज्योतिष नाम बभूव दुर्ग पुर घोरमसुराणामसह्यम् महाबलो नरकस्तत्र भौमो जहारादित्यामणिकुडले शुभे' उद्योग० 48,80। प्राग्ज्योतिषपुर के निकट ही निर्मोचन नामक नगर था जहा नरकासुर ने छ सहस्र लोहमय तीक्ष्ण पाश नगर की रक्षा के लिए लगा रखे थे—'निर्मोचने पटसहस्राणि हत्वा सच्छिद्य पाशान् सहसा क्षुरातान्'—उद्योग० 48,83। कामरूप नरेश भगदत्त ने महाभारत के युद्ध म कौरवो की ओर से भाग लिया था। महाभारत मे भगदत्त को प्राग्ज्योतिष-नरश भी कहा गया है—'तत प्राग्ज्योतिष क्रुद्धस्तोमरान् वै चतुदश, प्राहिणोत्तस्य नागस्य प्रमुखे नृपसत्तम—भीष्म० 95,46। प्राग्ज्योतिषपुर के राजा नरकासुर और श्रीकृष्ण के युद्ध का वर्णन विष्णुपुराण 5,29 मे भी है और महाभारत के वणन के अनुसार ही इसमे नरकासुर द्वारा नगर की रक्षार्थ तीक्ष्ण धारवाले पाशो के आयोजन का उल्लेख है—'प्राग्ज्योतिषपुरस्यापि समन्तात्छतयोजन, आचिता मेरवै पाशैं क्षुरान्तैभूद्विजोत्तम्—विष्णु० 5,29,16। कालिदास ने रघुवश 4,8 मे प्राग्ज्योतिष के नरेश की रघुद्वारा पराजय का वणन इस प्रकार किया

है—'चकंपेतीणलौहित्य तस्मिन प्राग्ज्योतिषेश्वर तदगजालानता प्राप्तै सह कालागरुद्रुमै', अर्थात दिग्विजय यात्रा के लिए निकले हुए रघु के लौहित्य या ब्रह्मपुत्र का पार करने पर प्राग्ज्योतिषपुर नरेश उसी प्रकार भयभीत होकर कापने लगा जैसे उस देश के कालागरु के वृक्ष जिनसे रघु के हाथियो की शृखलाए बधी हुई थी। इस श्लोक मे कालिदास ने प्राग्ज्योतिष या असम के वनो मे पाए जाने वाले कालागरु के वृक्षा, वहा के हाथियो तथा असम की मुख्य नदी लौहित्य का एकत्र वणन करके इस प्रात की स्थानीय विशेषताओ का सुदर चित्रण किया है। कालिदास के अनुसार प्राग्ज्योतिषपुर लौहित्य के पार पूर्वी तट पर बसा हुआ था। वी०वी० आठवले के मत मे प्राग्ज्योतिषपुर आनर्त या काठियावाड मे स्थित था। (दे० भारतीय विद्या, बबई स० 11) किंतु यह सभव है कि प्राग्ज्योतिषपुर नाम के दो नगर या जनपद रहे हो।

प्राग्वट

वाल्मीकि रामायण के वणन के अनुसार भरत न केकय देश से अयोध्या आते समय इस स्थान के पास गगा को पार किया था—'स गगा प्राग्वटेतीर्त्वा समयात कुटिकोष्टिकाम्'—यह स्थान पश्चिमी उत्तरप्रदेश म गगा के पश्चिमी तट पर, सभवत वतमान बालावाली (जिला बिजनौर) के सामने गगा के पार रहा होगा। इमी के पास कुटिकाष्टिका नदी थी। (दे० अशुधान)

प्राची दे० प्राच्य

प्राची सरस्वती (राजस्थान)

पुष्कर के निकट बहने वाली नदी। पुष्कर से बारह मील दूर प्राचीन सरस्वती और नदा का सगम है। (दे० पुष्कर)

प्राच्य

, पूर्वी भारत का प्राचीन नाम— गोवास दासमीयाना वसातीना च भारत, प्राच्याना वाटधानाना भोजाना चाभिमानिनाम्'—महा० कण० 73,17। इस उल्लेख का प्राच्य, सभवत मगध या वग देश का कोई भाग हो सकता है। यहा की सेनाए महाभारत युद्ध म कौरवो की ओर थी। प्राच्य या प्राचीन का प्रासी (Prasii) के रूप मे उल्लेख चद्रगुप्तमौय की राजसभा मे स्थित यूनानी राजदूत मेगस्थनीज ने भी किया है। उसके वणन से स्पष्ट है कि प्राची या प्राच्य देश मगध का ही नाम था क्योकि प्राची की राजधानी मेगस्थनीज न पाटलिपुत्र मे बताई है। जान पडता है भारत के पश्चिमी भागो के निवासी मगध या उसके परिवर्ती प्रदेश को पूर्वी देश या प्राची कहत थे।

प्रीतिकूट

कादंबरी और हर्ष चरित के प्रख्यात लेखक महाकवि बाण का जन्मस्थान तथा पैतृक निवास प्रीतिकूट नामक स्थान पर था। हर्षचरित के प्रथमोच्छ्वास में इस स्थान को गंगा और शोण के संगम से दक्षिण की ओर बताया गया है। इस प्रकार प्रीतिकूट को वर्तमान पटना या शाहाबाद जिले में स्थित मानना उपयुक्त होगा।

प्रोवेरा (ज़िला आदिलाबाद, आं० प्र०)

इस वन्य स्थान के पास एक जलप्रपात है जहां नवपाषाणयुग के अनेक पत्थर के उपकरण प्राप्त हुए हैं जिससे इस स्थान की प्रागैतिहासिकता सिद्ध होती है।

प्लक्षद्वीप

पौराणिक भूगोल की कल्पना के अनुसार पृथ्वी के सप्त महाद्वीपों में प्लक्ष-द्वीप की भी गणना की गई है—'जंबू प्लक्षाह्वयौ द्वीपौ शाल्मलश्चापरो द्विज, कुश क्रौंचस्तथा शाक पुष्करश्चैव सप्तम ' विष्णु० 2,2,5। विष्णुपुराण 2,4 में प्लक्षद्वीप का सविस्तर वर्णन है जिससे सूचित होता है कि विशाल प्लक्ष या पाकड़ के वृक्ष की यहां स्थिति होने से यह द्वीप प्लक्ष कहलाता था। इसका विस्तार दो लक्ष योजन था। इसके सात मर्यादा पर्वत थे—गोमेद, चंद्र, नारद दुंदुभि-सोमक, सुमना और वैभ्राज। यहां की सात मुख्य नदियों के नाम हैं—अनुतप्ता, शिखी, विपाशा, त्रिदिवा, अक्लमा, अमृता और सुकृता। यह द्वीप लवण या क्षार सागर से घिरा हुआ था। इस द्वीप के निवासी सदा नीरोग रहते थे और पांच सहस्र वर्ष की आयु वाले थे। यहां की जो आर्यक, कुरर, विदिश्य और भावी नामक जातियां थीं वे ही क्रम से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र थीं। प्लक्ष में आर्यकादि वर्णों द्वारा जगत्स्रष्टा हरि का पूजन सोमरूप में किया जाता था। इस द्वीप के सप्त पर्वतों में देवता और गंधर्वों के सहित सदा निष्पाप प्रजा निवास करती थी। (उपर्युक्त उद्धरण विष्णुपुराण के वर्णन का एक अंश है)

प्लक्षप्रस्रवण

'पुण्य तीर्थवरं दृष्ट्वा विस्मयं परमं गत, प्रभावं च सरस्वत्या प्लक्षप्रस्रवणं बल '—महा० शल्य० 54,11। महाभारत काल में प्लक्षप्रस्रवण सरस्वती नदी के उद्भव स्थान का नाम था। यह पर्वतशृंग हिमालय की श्रेणी का एक भाग है। बलराम ने सरस्वती तटवर्ती तीर्थों की यात्रा में प्रभास (सरस्वती समुद्र संगम) से लेकर सरस्वती के उद्भव प्लक्षप्रस्रवण तक के सभी पुण्य स्थलों को देखा था जिनका विस्तृत वर्णन शल्यपर्व में है। (दे० प्लक्षावतरण)।

प्लक्षावतरण

'सरस्वती महापुण्या ह्लादिनी तीर्थम लिनी, समद्रगा महावेगा यमुना यत्र पाडव। यत्र पुण्यतर तीर्थ प्लक्षावतरण शुभम्, यत्र सारस्वतैरिष्टवा गच्छन्त्य-वभथैर्द्विजा ' महा० वन० 90,3,4। एतत प्लक्षावतरण यमुनातीर्थमुत्तमम एतद वै नाकपृष्ठस्य द्वारमाहुमनीषिण '—महा० वन० 129,13। इन उल्लेखों से यह सरस्वती नदी के निकट और यमुना पर स्थित कोई तीर्थ जान पडता है जो कुरुक्षेत्र के पास था। कुरुक्षेत्र का वन० 129 11 म उल्लेख है। महाभारत के इस प्रसग म प्लक्षावतरण मे महर्षियो द्वारा किए गए सारस्वत यज्ञा का उल्लेख है। राजा भरत ने धमपूवक वसुधा का राज्य पाकर यहा बहुत से यज्ञ किए थे और अश्वमेधयज्ञ के उद्देश्य से इस स्थान पर कृष्णमृग के समान श्यामकण अश्व को पृथ्वी पर भ्रमण करने के लिए छोडा था। इसी तीर्थ मे महर्षि सवत से अभिपालित महाराज मरुत्त ने उत्तम सत्र का अनुष्ठान किया था—'अत्र वै भरतो राजा राजन् क्रतुभिरिष्टवान्, ह्यमेधन यत्रेन मध्यमश्व-मवासृजत्। असकृत कृष्ण सारग धर्मेणाप्य च मदिनीम, अत्रैव पुरुषव्याघ्र मरत्त सत्रमुत्तमम्, प्राप चैवर्षिमुख्यन सर्वेतनाभिपालित ' वन० 129,15-16-17

फतहपुर

(1) (जिला देहरादून, उ० प्र०) 11 वी-12 वी शतियो मे व्यापारिक काफ्लो के ठहरने का स्थान था। गढवाल के राजा यहा के बनजारों से कर वसूल करते थे किंतु अपने मुखिया के मरने पर य लोग इस स्थान को छोडकर शिमला की पहाडिया मे जाकर बस गए थे।

(2) (जिला होशगाबाद, म० प्र०) गढमडला नरेश सग्रामसिंह (मृत्यु 1541 ई०) के बावन गढो म फतहपुर के गढ की गिनती थी। सग्रामसिंह राजा दलपतशाह के पिता और महारानी दुर्गावती के श्वसुर थे।

(3) (जिला कागडा, पजाब) कागडा की पहाडियो के अतगत प्राचीन स्थान है। यहा स गुप्तकालीन एव पीतल की मूर्ति प्राप्त हुई थी जिस पर चादी और ताम्र का काम है। यह मूर्ति गुप्तकाल की धातुप्रतिमाओ म महत्व-पूर्ण है (दे० एज आव दि इम्पीरियल गुप्ताज, पृ० 181)

(4) (उ० प्र०) इस जिले म देंडसाही नामक स्थान (तहसील खगरम्) स प्राप्त एक अभिलेख म फतहपुर नगर का संस्थापक फतहमदखाँ बताया गया है। यह अभिलख 917 हिजरी=1519 ई० का है)

फतहपुर सीकरी (जिला आगरा उ० प्र०)

आगरे से 22 मील दक्षिण, मुगलसम्राट अकबर के बसाए हुए भव्य नगर के खडहर आज भी अपने प्राचीन वैभव की झाकी प्रस्तुत करते हैं। अकबर से पूर्व यहां फतहपुर और सीकरी नाम के दो गाव बसे हुए थे जो अब भी हैं। इन्हे अग्रेजी शासक ओल्ड विलेजेस के नाम से पुकारते थे। सन् 1527 ई० मे चित्तौड नरेश राणा सग्रामसिंह और बाबर मे यहा से लगभग दस मील दूर कनवाहा नामक स्थान पर भारी युद्ध हुआ था जिसकी स्मृति मे बाबर ने इस गाव का नाम फतहपुर कर दिया था। तभी से यह स्थान फतहपुर सीकरी कहलाता है। कहा जाता है कि इस ग्राम के निवासी शेख सलीम चिश्ती के आशीर्वाद से अकबर के घर सलीम (जहांगीर) का जन्म हुआ था। जहांगीर की माता जोधाबाई (आमेरनरेश बिहारीमल की पुत्री) और अकबर, शेख सलीम के कहने से यहा 6 मास तक ठहरे थे जिसके प्रसादस्वरूप उन्हे पुत्र का मुख देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यह भी किवदती है कि शेख सलीम चिश्ती के फतहपुर आने से पहले यहा घना वन था जिसमे जगली जानवरो का बसेरा था किंतु इस सत के प्रभाव से वन्यपशु उनके वशवर्ती हो गए थे। शेख सलीम के सम्मानार्थ ही अकबर ने यह नया नगर बसाया था जो 11 वर्ष मे बनकर तैयार हुआ था। 1587 ई० तक अकबर यहा रहा और इस काल मे फतहपुर सीकरी को मुगल-साम्राज्य की राजधानी बने रहने का गौरव प्राप्त हुआ किंतु तत्पश्चात अकबर ने इस नगर को छोडकर अपनी राजधानी आगरे मे बनाई। राजधानी बदलने का मुख्य कारण सभवत यहा जल की कमी थी। दूसरे, शेख सलीम के मरने के बाद अकबर की तबीयत इस स्थान पर न लगी। यह भी कहा जाता है कि शेख ने अकबर को फतहपुर मे किला बनाने की आज्ञा न दी थी किंतु नगर के तीन ओर एक ध्वस्त परकोटे के चिह्न आज भी दिखाई देते हैं। फतहपुर सीकरी मे अकबर के समय के अनेक भवनो, प्रासादो तथा राजसभा के भव्य अवशेष आज भी वर्तमान हैं। यहा की सर्वोच्च इमारत बुलद दरवाजा है जिसकी ऊचाई भूमि से 280 फुट है। 52 सीढ़ियो के पश्चात दर्शक दरवाजे के अदर पहुचता है। दरवाजे में पुराने जमाने के विशाल किवाड ज्यो के त्यो लगे हुए हैं। शेख सलीम की मानता के लिए अनेक यात्रियो द्वारा किवाडो पर लगवाई हुई घोडे की नालें दिखाई देती हैं। बुलद दरवाजे को, 1602 ई० मे अकबर ने अपनी गुजरात-विजय के स्मारक के रूप मे बनवाया था। इसी दरवाजे से होकर शेख की दरगाह मे प्रवेश करना होता है। बाइं ओर जामा मसजिद है और सामने शेख का मजार। मजार या समाधि के सन्निकट उनके सबधियो
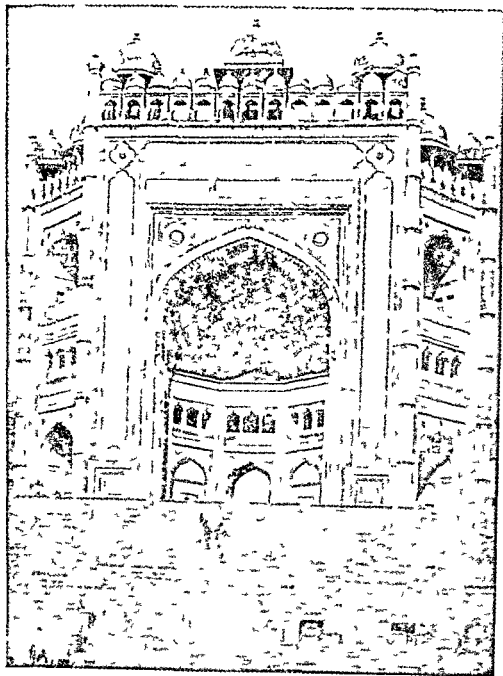
बुलंद दरवाजा, फतहपुर सीकरी
(भारतीय पुरातत्त्व विभाग के सौजन्य से)

इस मसजिद और मजार के समीप एक घने वृक्ष की छाया मे एक सगमर्मर का सरोवर है। मसजिद मे एक स्थान पर एक विचित्र प्रकार का पत्थर लगा है जिसको थपथपाने से नगाडे की ध्वनि सी होती है। मसजिद पर सुदर नक्काशी है। शेख सलीम की समाधि सगममर की बनी है। इसके चतुर्दिक् पत्थर के बहुत बारीक काम की सुदर जाली लगी है जिसके अनेक आकारप्रकार बडे मनमोहक दिखाई पडते है। यह जाली कुछ दूर से देखने पर जालीदार श्वेत रेशमी वस्त्र की भाति दिखाई देती है। समाधि के ऊपर मूल्यवान् सीप, सीग तथा चदन का अद्भुत शिल्प है जो 400 वर्ष प्राचीन होते हुए भी सर्वथा नया सा जान पडता है। श्वेत पत्थरो मे खुदी विविध रगोवाली फूलपत्तिया नक्काशी की कला के सर्वोत्कृष्ट उदाहरणो मे से हैं। समाधि मे एक चदन का और एक सीप का कटहरा है। इन्हे ढाका के सूबदार और शेख सलीम के पौत्र नवाब इसलाम खा ने बनवाया था। जहागीर ने समाधि की शोभा बढाने के लिए उसे श्वेत सगममर का बनवा दिया था यद्यपि अकबर के समय मे यह लाल पत्थर की थी। जहागीर ने समाधि की दीवार पर चित्रकारी भी करवाई। समाधि के कटहर का लगभग $1\frac{1}{2}$ गज लबा विकृत हो जाने पर 1905 मे लार्ड कर्जन ने 12 सहस्र रुपए की लागत से इसे पुन बनवा दिया। समाधि के किवाड आबनूस के बने हैं।

अकबर के राजप्रासाद समाधि के पीछे की ओर ऊचे लबे चौडे चबूतरो पर बने हैं। इन मे चार-चमन और ख्वाबगाह अकबर के मुख्य राजमहल थे। यहीं उसका शयनकक्ष और विश्राम-गृह थे। चार-चमन के सामने आगन मे अनूपताल है जहा तानसेन दीपक राग गाया करता था। ताल के पूर्व मे अकबर की तुर्की बेगम रुकैया का महल है। यह इस्तबूल की रहने वाली थी। कुछ लोगो के मत मे इस महल मे सलीमा बेगम रहती थी। यह बाबर की पोती और बैराम खा की विधवा थी। इस महल की सजावट तुर्की के दो शिल्पियो ने की थी। समुद्र की लहरें नामक कलाकृति बहुत ही सुदर एव वास्तविक जान पडती है। भित्तियो पर पशुपक्षियो के अतिसुदर तथा कलात्मक चित्र है जिन्हे पीछे औरगजेब ने नष्टभ्रष्ट कर दिया था। भवन के जडे हुए कीमती पत्थर भी निकाल लिए गए हैं जिसके लिए अग्रेज पर्यटक जिम्मेदार कहे जाते हैं। रुकैया बेगम के महल के दाहिनी ओर अकबर का दीवाने खास है जहा दो बेगमो के साथ अकबर न्यायासन ग्रहण करता था। बादशाह के नवरत्न-मत्री थोडा हट कर नीचे बैठते थे। यहा सामान्य जनता तथा दर्शको के लिए चतुर्दिक बरामदे बने हैं। बीच के बडे मैदान मे हिरन नामक खूनी हाथी

के बाधने का एक मोटा पत्थर गडा है। यह हाथी मृत्युदडप्राप्त अपरा
रौंदने के काम म लाया जाता था। कहते है कि यह हाथी जिस तीन
पादाहत करने से छोड देता था उसे मुक्त कर दिया जाता था। दीवानेखास
की यह विशेषता है कि वह एक पद्माकार प्रस्तर स्तभ के ऊपर टिका हुआ है।
इसी पर आसीन होकर अकबर अपने मन्त्रियो के साथ गुप्त मत्रणा करता था।
दीवानेखास के निकट ही आखमिचौनी नामक भवन है जो अकबर का निजी
मामलो का दफ्तर था। पाच मजिला पचमहल या हवामहल जोधाबाई के सूय
को अर्घ्य देने के लिए बनवाया गया था। यही से अकबर की मुसलमान बगम
ईद का चाद देखती थी। समीप ही मुगल राजकुमारियो का मदरसा है।
जोधाबाई का महल प्राचीन घरो के ढग का बनवाया गया था। इसके बनवाने
तथा सजाने मे अकबर ने अपनी रानी की हिंदू भावनाओ का विशेष ध्यान रखा
था। भवन के अदर आगन मे तुलसी के बिरवे का थावला है और सामन दालान
मे एक मदिर के चिह्न हैं। दीवारो म मूर्तियो क लिए आले बने हैं। कही
कही दीवारो पर कृष्णलीला के चित्र हैं जो अब मद्धिम पड गए हैं। मदिर
के घटो के चिह्न पत्थरो पर अकित हैं। इस तीन मजिले घर के ऊपर के कमरो
को ग्रीष्मकालीन और शीतकालीन महल कहा जाता था। ग्रीष्मकालीन
महल मे पत्थर की बारीक जालियो म से ठडी हवा छन छन कर आती थी।
इस भवन के निकट ही बीरबल का महल है जो 1582 ई० म बना था। इसक
पीछे अकबर का निजी अस्तबल था जिसमे 150 घोडे तथा अनेक ऊटो क बाधन
के लिए छेददार पत्थर लग है। अस्तबल के समीप ही अबुलफजल और फैजी
के निवासगृह अब नष्टभ्रष्ट दशा मे हैं। यहा स पश्चिम की ओर प्रसिद्ध हिरन-
मीनार है। किंवदती है कि इस मीनार के अदर खूनी हाथी हिरन की समाधि
है। मीनार मे ऊपर स नीचे तक आगे निकले हुए हिरन क सीगो की तरह
पत्थर जडे हैं। मीनार के पास मैदान म अकबर शिकार खलता था और बगमे
मीनार पर चढ कर तमाशा देखती थी। जोधाबाई क महल स यहा तक बेगमो
क आने के लिए अकबर ने एक आवरण-मार्ग बनवाया था। फतहपुर सीकरी
स प्राय 1 मील दूर अकबर के प्रसिद्ध मत्री टोडरमल का निवासस्थान था जो
अब भग्न दशा म है। प्राचीन समय म नगर की सीमा पर मोती झील नामक
एक विस्तीर्ण तडाग था जिसके चिह्न अब नही मिलते। फतहपुरी क
भवनो की कला उनकी विशालता म है, लबे चौडे सरल स्थाकार स्तभो
पर बने भवन, विस्तीर्ण प्रागण तथा ऊची छतें, पुल मिल कर दर्शक के मन म
विशालता तथा विस्तीर्णता का गहरा प्रभाव डालत हैं। वास्तव म अकबर की

इस स्थापत्य कलाकृति म उसकी अपनी विशालहृदयता तथा उदारता के दशन होते है।

फनेहाबाद (उ० प्र०)

यह नगर फिरोजशाह तुगलक (1351–1388) का बसाया हुआ माना जाता है।

फरीदपुर (बगाल)

गुप्तकाल म इस नगर के परिवर्ती क्षेत्र का नाम वारक मडल था। फरीदपुर से गुप्तकालीन नरेश धर्मादित्य तथा गोपचद्र के तीन दानपट्ट-अभिलेख प्राप्त हुए है जिनसे तत्कालीन भूमि हस्तातरण तथा सामान्य शासन व्यवस्था के बारे मे सूचना मिलती है।

फरुखाबाद (उ० प्र०)

इस नगर का नवाब मुहम्मदशाह बगश ने मुगल सम्राट फरुखसियर (1712 1719) के नाम पर बसाया था। इस इलाके (जो प्राचीन काल म दक्षिण पचाल कहलाता था) की राजधानी पहले कनौज थी। इस नगर के बस जाने पर राजधानी यही बनाई गई और कालपी के बगश शासको ने अपने प्रात का मुख्य स्थान इसी नगर को बनाया।

फलकपुर

पाणिनि 4,2,101 मे उल्लिखित है। यह स्थान शायद वतमान फिल्लौर (पजाब) है।

फलकीवन

कुरुक्षेत्र म ओघवती नदी के तट पर शुक्रतीथ के निकट एक प्राचीन वन। इसका महाभारत वन० 83,86 मे उल्लेख है—'ततो गच्छेत राजन्द्र फलकीवन मुत्तमम, तत्र देवा सदा राजन् फलकीवनमाश्रिता'।

फलन

वणुया बन्नू को युवानच्वाग ने फलन नाम से अभिहित किया है।

फलद्धि=फलौदी

फलौदी मडता रोड स्टेशन (मारवाड, राजस्थान) के पास ही है। यहा 12वी शती से पूव का जैन तीथकर पाश्वनाथ का प्राचीन मदिर है। इस स्थान का प्राचीन नाम फलद्धि है। इसका नामोल्लेख जन स्तात्र तीथमाला चत्यवदन मे इस प्रकार है 'जीरापल्लि फलद्धि पारक नगे शंरीसशखेश्वरे'।

फल्गु (बिहार)

गया के निकट बहने वाली नदी जो पुराणा मे प्रसिद्ध है। महाभारत मे

गया के वर्णन के प्रसंग में शायद इसी नदी का निर्देश निम्न रूप में है—'नगोगय-शिरोयत्र पुण्या चैव महानदी, वानीरमालिनी रम्या नदी पुलिनशोभिता'—वन० 95 9-10, 'महानदी च तत्रैव तथागयशिरा नद'—वन० 88,11। यह संभव है कि यहां 'महानदी' शब्द फल्गु के एक पर्याय या नाम के रूप में ही प्रयुक्त हुआ है न कि विशेषण के रूप में। यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि फल्गु का एक स्थानीय नाम आज भी महाना है जो अवश्य ही 'महानदी' का अपभ्रंश है। गया से 3 मील दूर महाना अथवा फल्गु में नीलाजना नाम की छोटी सी नदी मिलती है जो बौद्धसाहित्य की नैरंजना है।

फाजिलपुर (जिला गोरखपुर)

कसिया से 10 मील दक्षिण-पूर्व में स्थित है। कार्लाइल के अनुसार यही प्राचीन पावापुरी है। (दे० पावा)

फ़िरोजाबाद (जिला आगरा, उ० प्र०)

(1) फीरोजशाह तुगलक का बसाया हुआ नगर। इस तुगलक सुलतान ने जिसका शासनकाल 1351 1388 ई० है, कई नगर बसाए थे—(दे० फतेहाबाद, हिसार)

(2) (जिला गुलबर्गा, मैसूर) इस नगर को फिरोजशाह बहमनी (1397—1422 ई०) ने बसाया था तथा उसी ने यहां के दुर्ग का निर्माण करवाया था। कहा जाता है कि फिरोजशाह ने संत वंदानवाज के कहने पर गुलबर्गा को छोड़कर यहीं राजधानी बसाई थी। यह नगर भीमानदी के तट पर बसाया गया था और इसमें और अकबर के फतहपुर सीकरी में अनेक समानताएं दिखलाई पड़ती हैं। किले की प्राचीर के भीतर विशाल महल, जामामसजिद, तुर्की हम्माम तथा अन्य प्रकार के भवनों के अवशेष हैं। इन्हीं महलों में फिरोजशाह के हरम की विभिन्न देशों से आई हुई, आठ सौ बेगम रहती थीं।

फिल्लौर दे० फलकपुर

फूनान (कंबोडिया)

कंबोडिया में स्थापित सर्वप्रथम हिंदू उपनिवेश। फूनान चीनी नाम है। इसमें वर्तमान कंबोडिया तथा कोचीन-चीन सम्मिलित थे। चीनी कथाओं के अनुसार यहां के आदिम निवासी जंगली और असभ्य थे। वे नग्न रहते थे और गोदना से शरीर अंकित करते थे। सबसे पहले ह्वोनतीन या कौंडिन्य नामक हिंदू नरेश ने इस देश में राज्य स्थापित किया तथा यहां के निवासियों को सभ्य बनाकर उन्हें कपड़े पहनना सिखाया। इस राजा का समय पहली शती ई० माना जाता है। फूनान का अस्तित्व सातवीं शती ई० के पश्चात् कंबोडिया (=कंबुज) राज्य के उत्कर्ष के साथ ही समाप्त हो गया।

फेनगिरि

सिंध नदी के मुहाने के निकट स्थित है—बृहत संहिता 14,5,18 मे इसका उल्लेख है।

फ़ैजाबाद (उ० प्र०)

लखनऊ को राजधानी बनाने से पूर्व, अवध के नवाबो ने फ़ैजाबाद मे ही अपने रहने के लिए महल बनवाए थे। नवाब शुजाउद्दौला और परवर्ती नवाबो के समय मे यहां अनेक सुदर प्रासाद, मकबरे और उद्यान बने जिनमे से खुर्द महल, बहूबेगम का मकबरा, गुलाबबाडी तथा दिलकुशा आज भी वर्तमान है। कहा जाता है कि अयोध्या के अनेक प्राचीन भवनो तथा मंदिरो के मसाले से ही फ़ैजाबाद की बहुत सी इमारतें बनी थी।

फोर्ट सेंट जार्ज (मद्रास)

मद्रास की पुरानी बस्ती का नाम चेन्नापटम् था। इसी ग्राम मे 1640 ई० मे अंग्रेज़ी व्यापारी फ्रांसिस डे ने फ़ोर्ट सेंट जार्ज की स्थापना की थी। इसी किले के चतुर्दिक् भावी महानगरी मद्रास का कालांतर मे विकास हुआ। (दे० चेन्नापटम्)

फ्रेंचरॉक्स (मसूर)

मैसूर से मलुकोट जाने वाली सड़क पर यह स्थान है जहां हैदरअली और टीपू के सहायक फ़्रांसीसी लोगो ने अपनी सेना का मुख्य शिविर बनाया था। पास ही नीले जल से भरी हुई मोती तालाब नामक मनोरम झील है जिसका बांध नौ सौ वर्ष प्राचीन है।

बंग=वंग

बंगलौर (मैसूर)

किंवदंती के अनुसार इस नगर की स्थापना तथा इसके नामकरण (शब्दार्थ उबली सेमो का नगर) मे यहां के एक प्राचीन राजा से संबंधित एक कथा जुड़ी है किंतु ऐतिहासिक तथ्य यह है कि 1537 ई० मे शूरवीर सरदार केंपेगोंडा ने इस स्थान पर एक मिट्टी का दुर्ग बनवाया था और नगर के चारो कोनो पर चार मीनारें। इस प्राचीन दुर्ग के अवशेष अभी तक स्थित हैं। हैदरअली ने इस मिट्टी के दुर्ग को पत्थर से पुनर्निर्मित करवाया (1761 ई०) और टीपू ने कई महत्वपूर्ण परिवर्तन किए। यह किला आज मैसूर राज्य मे मुसलमानी शासन काल का अच्छा उदाहरण है। किले से 7 मील दूर हैदरअली का लालबाग स्थित है। बंगलौर से 37 मील दूर नंदिगिरि नामक ऐतिहासिक स्थान है।

बंगाल

किंवदंती मे इस देश के नामकरण का आधार इस प्रकार बताया जाता है कि

प्राचीन काल में पद्मा नदी के दक्षिण में स्थित और हुगली, और गंगा की दूसरी शाखा मधुमती के बीच के भाग को वंग या वंगा कहते थे क्योंकि यह भूभाग राजा बलि के पुत्र वंग के अधिकार में था। हुगली के ठीक पश्चिम के प्रदेश को लाढ़ा कहा जाता था। कुछ काल पश्चात् इन्हीं दोनों भागों—वंगा और लाढ़ा का नाम बंगाल हो गया (दे० वंग)

बंदरपूंछ दे० यामुनपर्वत

बंबई (महाराष्ट्र)

16वीं शती तक बंबई महानगरी छोटे-छोटे सात द्वीपों का समूह मात्र थी। प्राचीन ग्रीक भौगोलिकों ने इसी कारण इस स्थान को हेप्टानीसिया (Hepta nesia) या सप्तद्वीप नाम दिया था। दक्षिण भारतीय नरेश भीमदेव ने 15वीं शती में महीकावती (वर्तमान महीम) में अपनी राजसभा की थी। 1534 ई० में पुर्तगालियों ने गुजरात के सुलतान से बंबई को छीन लिया। इससे पहले बहादुरशाह ने इस स्थान को राजा भीमदेव के उत्तराधिकारी नागरदेव से प्राप्त किया था। बंबई में उस समय ढेर, भंडारी तथा आदि निवासियों (कोली आदि जिनके नाम पर वर्तमान कोलाबा प्रसिद्ध है) की विरल बस्तियां थीं। पुर्तगालियों ने बंबई की स्थिति के महत्व को पहचान रखा था और उनके यहां आने पर इसकी व्यापारिक उन्नति प्रारंभ हुई। पुर्तगाल के जेसुइट पादरियों ने पहले-पहल इस स्थान पर गिर्जाघर बनवाए और इसी देश के व्यापारियों ने बंबई के समुद्री व्यापार का सूत्रपात किया। इतिहास से विदित होता है कि बंबई के द्वीप को पुर्तगाल सरकार ने कुछ समय के लिए मास्टर डीगो नामक व्यक्ति को ठेके पर दे दिया था और फिर स्थायी रूप में डाक्टर गार्सिया दा हार्ता (Garcia da Harta) को। इस व्यक्ति ने भारतीय पेड़ पौधों के विषय में काफी खोज बीन की थी। 1665 ई० में सूरत से अंग्रेजों ने बंबई पर आक्रमण किया। इसमें उन्हें हालैंड निवासियों ने भी सहायता दी। बंबई का पुर्तगाली किला अंग्रेजों के हाथ में आ गया। उन्होंने नगर में काफी लूटमार मचाई और अनेक लोगों को बंदी बना लिया किंतु बेसीन से कुमक आ जाने पर पुर्तगालियों ने बंबई को फिर से जीतकर उस पर पूर्ववत् अधिकार कर लिया। किंतु कुछ ही समय पश्चात् 1616 ई० में पुर्तगाल के राजा डॉन अलफांसो (Don Alfanso) षष्ठम ने अपनी बहन कैथरीन ब्रेगेंजा के इंग्लैंड के राजा चार्ल्स द्वितीय के साथ विवाह होने के उपलक्ष में, बंबई को दहेज में दे दिया मानो वह उसकी वैयक्तिक संपत्ति रही हो। और फिर चार्ल्स द्वितीय ने इस दस पाउंड वार्षिक किराए पर ईस्ट इंडिया कंपनी के नाम उठा दिया। कंपनी का बंबई पर अधिकार होने पर बंबई

के पुर्तगालियों ने जिनकी इस अजीब सौदे के बारे में राय न ली गई थी, अंग्रेजों का सशस्त्र विरोध किया किंतु 1665 ई० तक अंग्रेजों ने बंबई पर अपना पूर्ण आधिपत्य स्थापित कर लिया। बंबई के नामकरण के विषय में कई मत हैं। किंवदंती है कि यहां प्राचीन काल में मुंबादेवी का मंदिर था जिसके कारण इस स्थान को मुंबई कहते थे। बंबई, मुंबई का ही पुर्तगाली उच्चारण है। कुछ लोगों का मत है कि बंबई का नाम पुर्तगालियों का ही गढ़ा हुआ है और बॉन (Bon) तथा बइया (Baia) शब्दों से मिलकर बना है जिसका अर्थ है अच्छी खाड़ी।

बकुलारण्य

यह मदुरांतकम (जिला चेंगलपट्टू, मद्रास) के क्षेत्र का पौराणिक नाम कहा जाता है। यहां कोदंडराम के प्राचीन मंदिर के प्रांगण में आज भी एक बकुल का वृक्ष वर्तमान है।

बक्सर (बिहार)

किंवदंती है कि रामायण में वर्णित विश्वामित्र का आश्रम जहां यज्ञ के रक्षार्थ वे राम और लक्ष्मण को दशरथ से मांग कर ले गए थे, यहीं स्थित था। जनकपुर जाते समय राम और लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ यहीं होते हुए गए थे। मौर्यकाल की अनेक सुंदर लघु मूर्तियां यहां उत्खनन में प्राप्त हुई थीं जो अब पटना संग्रहालय में सुरक्षित हैं (बिहार, दि हार्ट ऑव इंडिया–पृ० 57) (दे० विश्वामित्र-आश्रम)

बखरा (बिहार)

बसाढ़ (प्राचीन वैशाली) के निकट एक ग्राम जिसके पास अशोक का सिंह जटित स्तंभ स्थित है। (दे० वैशाली)

बगरी (जिला टोंक, राजस्थान)

बगरी प्राचीन स्थान है जैसा कि यहां के ध्वंसावशेषों से ज्ञात होता है। इनका अनुसंधान अभी भलीभांति नहीं हुआ है।

बगहा (बिहार)

बड़ी गंडक पर स्थित है। इसका प्राचीन नाम चंपकारण्य कहा जाता है।

बघेलखंड

मध्यप्रदेश में स्थित भूतपूर्व रीवा रियासत तथा परिवर्ती क्षेत्र का मध्ययुगीन नाम। 12वीं शती के अंतिम भाग में बाघेल या बघेला राजपूतों ने जो गुजरात के सोलंकी राजपूतों की एक शाखा थे, पंवार राज्य के पूर्व में राज्य स्थापित करके रीवा में अपनी राजधानी बनाई थी। बघेला का पुरखा बघु (व्याघ्रदेव)

गुजरात से आकर इस प्रदेश मे बसा था। रीवा म बघेलो का ही राज्य था। बघेलखड प्राचीन करुष का एक भाग है।

बछोई (तहसील करवी, जिला बादा, उ० प्र०)

यह ग्राम चित्रकूट के निकट कामतानाथ से 15 16 मील दूर लालपुर पहाडी पर स्थित है। किंवदती है कि रामायण काल मे आदिकवि वाल्मीकि का आश्रम इसी स्थान पर था। सभवत गो० तुलसीदास ने रामचरितमानस, अयोध्याकाड म जिस वाल्मीकि के आश्रम का वणन किया है वह इसी स्थान के निकट रहा होगा क्योंकि वह चित्रकूट के समीप ही था।

बटियागढ़ (जिला दमोह, म० प्र०)

इस स्थान पर विक्रमसवत 1385=1328 ई० का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था (एपिग्राफिका इडिया-12 42) जिसके बारे म विशेष बात यह है कि इसम मुसल्मानो को शक कहा गया है। (इस प्रकार के कई अय उदाहरण भी हैं)। इसमे मुहम्मद तुगलक का उल्लेख है। इसके समय म सुल्तान की आर से जुल्चीखा नामक सूबेदार चदरी म नियुक्त था और सूबेदार का नायक बटिया गढ मे रहता था। उस समय इस नगर को बटिहाडिम या बडिहारिन कहत थ। इसमे दिल्ली का एक नाम जागिनीपुर भी दिया हुआ है। दूसरा शिलालेख विक्रम सवत 1381=1324 ई० का यहा के प्राचीन महल के खडहरा से मिला है जिसम गियासुद्दीन तुगल्क का उल्लेख है जिसके सूबदार न इस महल को बनवाया था।

बटिहाडिम=बटियागढ

बटेश्वर

(1) भूतश्वर

(2) वटश्वर

बडली (जिला अजमेर, राजस्थान)

इस स्थान से 1912 ई० म स्वर्गीय डा० गौ० श० हीराचद्र ओझा को 443 ई० पू० का एक खडित अभिलेख किसी स्तभ के टुकडे पर अकित प्राप्त हुआ था जो पिपरावा के अभिलेख (487 ई० पू०) के साथ ही भारत के अभिलेखा मे प्राचीनतम समझा जाता है।[1] अभिलेख ब्राह्मी लिपि म है। यह अजमेर के सग्रहालय म सुरक्षित है।

बडवामुख

सुप्पारकजातक मे वर्णित एक समुद्र— तस्य उदक कडिढत्वा कडिढत्वा सब्बतो भागेन उग्गच्छति। तस्मि सब्बतो भागेन उग्गतादक सब्बतो भागेन

छिन्नतट महा सोऽभोविय पचायति, ऊमिया उग्गताय एकतो पपात सदिस होति भय-जनना सद्दो उपजति सोतानि भिन्दन्तो विय हृदय फालेन्तो विय'—अर्थात वहा जल निकल कर सब ओर से ऊपर आ रहा था। सब ओर से जल ऊपर उठने के कारण किनारे की ओर बडा गर्त सा दिखाई देता था। लहरें उठ कर एक प्रपात की तरह जान पडती थी। बडा भय उत्पन्न करने वाला शब्द वहा हो रहा था जो हृदय को वेध सा रहा था। यह समुद्र भरुकच्छ से जहाज पर व्यापार के लिए निकले हुए धनार्थी वणिको को अपनी लबी यात्रा के दौरान मे मिला था। (दे० नलमाली, अग्निमाली, दधिमाल, क्षुरमाली) शूर्पारक जातक मे वर्णित समुद्रो का वृत्तात अधिकाश म प्राचीन काल के देश-विदेश मे घूमनेवाले नाविको की कल्पनारजित कथाओ पर आधारित है। डा० मोतीचद के मत म यह समुद्र भूमध्यसागर का कोई भाग हो सकता है (दे० सार्थवाह, पृ० 59)

बडकत दे० कर्मांत

बडगाव

(1) (जिला परभणी, महाराष्ट्र) एक प्राचीन दुर्ग के ध्वसावशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

(2) दे० नालदा

बडनगर (जिला महसाना, गुजरात)[1]

प्राचीन हाटकेश्वर। पुरातत्व विभाग द्वारा किए गए उत्खनन म इस स्थान से 5वी शती ई० तथा अनुवर्ती काल के अनेक अवशेष प्राप्त हुए है जिनसे गुजरात के प्राचीन इतिहास म इस नगर के महत्व की सूचना मिलती है। बडनगर, हाटकेश्वर नाम से तीर्थ रूप मे भी प्रसिद्ध था।

बडवा (जिला कोटा, राजस्थान)

1935-1936 मे इस स्थान से 295 कृत या विक्रम सवत्=238 ई० के तीन यूप लेख प्राप्त हुए थे। इनमे मौखरीवशीय महासेनापति बल के तीन पुत्र बलवर्धन, सोमदेव और बलसिंह का एक यज्ञ के सपादन के सबध म उल्लेख है। सभवत इन अभिलेखो मे मौखरीवश का सर्वप्रथम उल्लेख मिलता है। इनसे बुद्ध धर्म की अवनति तथा हिंदू धर्म के पुनरुज्जीवन के सधिकाल म यज्ञादिको के पुनरारभ की सूचना भी मिलती है।

बडा (पजाब)

रोपड के निकट स्थित है। यहा 1954-55 मे, पुरातत्व विभाग द्वारा सपादित उत्खनन मे उत्तरकालीन हरप्पा सस्कृति के चिह्न मिले हैं।

बडाचत्रा दे० वराहक्षेत्र, कोलियगणराज्य

बडिहारिन द० बटियागढ

बडोदा (गुजरात)

जनश्रुति है कि प्राचीन काल मे इस स्थान के निकट अनेक वटवृक्ष थे जिन के कारण नगर को वटादर (वट वृक्षो के भीतर स्थित) कहा जाता था। बडोदा या गुजराती नाम वडोद्रा, वटादर शब्द का अपभ्रश हो सकता है। बडोदा रियासत की नीव मराठा सरदार दामाजी गायकवाड ने 18वी शती म डाली थी। चदनावती वडौदा का एक प्राचीन नाम है—(दे० बालफूर-साइक्लोपीडिया ऑव इडिया)

बडोह (जिला भीलसा, म० प्र०)

बबई-दिल्ली रेलपथ पर कुल्हड स्टेशन से 12 मील पूव की ओर स्थित है। यहा के विस्तीण खडहरो स सूचित होता है कि यह स्थान मध्यकाल म समृद्धिशाली नगर रहा होगा। स्थानीय किवदती के अनुसार इसका प्राचीन नाम बड या वटनगर था। यहा के मुरय अवशेष हैं—गाडरमल का मदिर, 9वी शती ई०, सोलह खभो, 8वी शती ई०, दशावतार मदिर, सतमढी मदिर जिसके साथ छ अ य मदिरो के अवशेष हैं और जैन मदिर जिससे छोटे छोटे 25 मदिर सबधित है।

बढाकोटरा (तहसील मऊ, जिला बादा, उ० प्र०)

मध्यकालीन हिंदू मदिर और मूर्तियो के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। मदिर कर्कोटनाग शिव का है।

बदख्शा

बदख्शा अफगानिस्तान मे हिंदूकुश पवत का निकटवर्ती प्रदेश है। (दे० द्वयक्ष)

बदनावर (म० प्र०)

मालवा भूभाग म स्थित है। परमारकालीन (10वी-13वी शती) मदिरो क अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

बदनौर (जिला उदयपुर, राजस्थान)

इस नगर का महाराणा लाखा न बसाया था। उनके समय मे मेरवाडा के पहाडी लुटेरो ने इस प्रदेश म बडा उधम मचाया था। इनका मुख्य स्थान वैराटगढ था। महाराणा ने वराटगढ को ध्वस्त करके उसीक निकट बदनौर नामक नया नगर बसाया। दिल्ली के सुलतान मुहम्मदशाह लोदी न कुछ समय पश्चात् बदनौर का घेर लिया किंतु महाराणा लाखा की सेना ने वीरतापूवक लडकर लोदी की सेना को पीछे खदेड दिया।

बदर दे० ग्वादूर

बदरपाचन

'ततस्तीथवर रामो ययौ बदरपाचनम, तपस्विसिद्धचरित यत्र कन्या धृत-वृता'—महा० शल्य० 48,1 । महाभारत काल म बदरपाचन तीथ सरस्वती नदी के तटवर्ती तीर्थों मे से था । इसकी यात्रा बलराम ने की थी । प्रसग के क्रम से जान पडता है कि यह स्थान हरयाणा म रहा होगा । शल्य० 48 मे इस तीथ का सबध भारद्वाज ऋषि की कन्या श्रुतवती से बताया गया है ।

बदरिकाश्रम=बदरीनाथ

बदरी=बदरी आश्रम=बदरीनाथ (उ० प्र०)

महाभारत काल मे बदरीनाथ की तीथ रूप मे मा यता प्रतिष्ठित हो गई थी । पाडवो ने भारत के अन्य तीर्थों की भाति बदरीनाथ की भी यात्रा की थी 'एव सुरमणीयानि वनान्युपवनानिव, आलाकयतस्ते जग्मुर्विशाला बदरी प्रति'—वन० 145,11 । इस उल्लेख मे बदरीनाथ को विशाला नाम स अभिहित किया गया है जो आज भी पूववत प्रचलित है (बद्री विशाल') इस यात्रा मे पाडवो ने अनेक प्रकार के पशुपक्षियो तथा अनेक नदिया को देखा था—'मयूरैश्चमरैश्च वानरैरुरुभिस्तथा, वराहैगवयैश्चैव महिषैश्च समावृतान्, नदीजालसमाकीर्णान् नानापक्षियुतान बहून, नानाविधमृगैर्जुष्टान वानरैश्चोपशोभितान्' वन० 145,15-16। बदरीनाथ मे गगा की उपस्थिति भी महाभारत म वर्णित है— एषा शिवजला-पुण्या याति सौम्य महानदी, बदरीप्रभवा राजन देवर्षिगणसेविता' वन० 142,4 । यहा गगा को बदरीनाथ से उद्भूत माना है क्योकि गगोत्री बदरीनाथ से कुछ ही दूर है । वन० 139,11 मे विशाला को कैलास के निकट माना है—'कैलास पवतो राजन षडयोजन समुच्छ्रित यत्र देवा समायान्ति विशाला यत्र भारत' । बदरीनाथ मे नरनारायण के स्थान (जा आज भी है) और भागीरथी का वणन भी महाभारत मे है—'तत्रापश्यत् धर्मात्मा देवदेवर्षि पूजितम, नरनारायणस्थान भागीरथ्यापशोभितम'—वन० 145,41 । शाति० 127 3 मे बदरीनाथ के निकट वैहायसकुड का उल्लेख है जा सभवत वैहायसी या आकाश माग से जाने वाली गगा का ही कुड है—'यत्र सा बदरी रम्या ह्रदा-वैहायसस्तथा । बदरीनाथ के प्रसग मे गगा को आकाशगगा कहा भी गया है—'आकाशगगा प्रयता पाडवास्तऽभ्यवादयन्' वन० 142,11। बदरीनाथ म महा-भारत क आदिकर्ता महर्षि व्यास का मुख्य आश्रम था इसीलिए उन्ह बादरायण कहा जाता है। बदरीनाथ मे व्यासगुफा नामक स्थान को ही व्यास का निवास स्थान माना जाता है और यह भी किवदती है कि महाभारत की रचना उन्होने

यही की थी। परवर्तीकाल मे शकराचाय वदरिकाश्रम मे कुछ समय तक ठहरे थे। बौद्ध जनश्रुति के अनुसार शकराचाय से पहले बदरीनाथ म बौद्धो का मदिर था और इसमे बुद्ध की मूर्ति स्थापित थी।

वदायू (उ० प्र०)

वदायू मध्यकालीन नगर है। 11वी शती के एक अभिलेख मे जो वदायू से प्राप्त हुआ है इस नगर का तत्कालीन नाम वोदामयूता कहा गया है। इस लेख स ज्ञात होता है कि उस समय बदायू म पचालदेश की राजधानी थी। यह जान पडता है कि अहिच्छत्रा नगरी जो अति प्राचीनकाल से उत्तरपचाल की राजधानी चली आई थी, इस समय तक अपना पूव गौरव गँवा बैठी थी। एक किंवदती मे यह भी कहा जाता है कि इस नगर का अहीर सरदार राजा वुद्ध ने 10वी शती मे वसाया था। कुछ लोगा का यह मत है कि बदायू की नीव अजयपाल ने 1175 ई० मे डाली थी। राजा लखनपाल को भी नगर के बसान का श्रेय दिया जाता है। नीलकठ महादेव का प्रसिद्ध मदिर जिसे इल्तुतमिश ने तुडवा दिया था शायद लखनपाल ही का बनवाया हुआ था। ताजुलमासिर के लेखक ने बदायू पर कुतुबुद्दीन एबक क आक्रमण का वणन करते हुए इस नगर को हिंद के प्रमुख नगरो म माना है। बदायू के स्मारको मे जामामसजिद भारत की मध्ययुगीन इमारतो मे शायद सवसे विशाल है। यह नीलकठ मदिर के मसाले से बनवाई गई थी और इसका निर्माता इल्तुतमिश था जिसने इसे, गद्दी पर बैठन के वारह वर्ष पश्चात अर्थात् 1222 ई० मे बनवाया था। (टि० महमूद गजनवी के समान ही इल्तुतमिश भी कुख्यात मूर्तिभजक था। इसने अपने समय के प्रसिद्ध देवालयो जिनम उज्जन का महाकाल का मदिर भी था तुडवाकर तत्कालीन भारतीय कला, सस्कृति तथा धम को भारी क्षति पहुचाई थी) जामा मसजिद प्राय समातर चतुभुज के आकार की है किंतु पूव को ओर अधिक चौडी है। भीतरी प्रागण के पूर्वी कोण पर मुख्य मसजिद है जो तीन भागो मे विभाजित है। बीच के प्रकोष्ठ पर गुबद है। बाहर स देखने पर यह मसजिद साधारण सी दीखती है किंतु इसके चारो कोनो की बुर्जियो पर सुदर नक्काशी और शिल्प प्रदर्शित है। वदायू म सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के परिवार के वनवाए हुए कई मकवरे हैं। अलाउद्दीन ने अपने जीवन के अतिम वष वदायूं मे ही विताए थे। अकवर के दरवार का इतिहास लेखक अब्दुलकादिर वदायूनी यहा अनक वर्षों तक रहा था और इसीलिए वदायूंनी कहलाता था। 1571 ई० मे वदायू म भीषण अग्निकाड हुआ था जिसका बदायूनी ने अपनी आखो से देखा था। वदायूनी का मकवरा वदायू का प्रसिद्ध स्मारक है। इसके अतिरिक्त

इमादुलमुल्क की दरगाह (पिसनहारी का गुंबद) भी यहां की प्राचीन इमारतों में उल्लेखनीय है।

बद्रीनाथ दे० बदरीनाथ

बधन=बाधन

गढ़वाल (उ० प्र०) का एक भाग जिसका शुद्ध नाम बोधायन कहा जाता है। यहां बौद्धकाल में बौद्ध धर्म का प्रसार था।

बनछटी दे० बुलंदशहर

बनजारावाला (जिला देहरादून, उ० प्र०)

11 वीं०–12 वीं शती ई० में व्यापारिक काफलों के ठहरने का स्थान था। गढ़वाल के राजा यहां के निवासी बनजारों से कर वसूल करते थे किंतु अपने मुखिया के मरने के पश्चात् बनजारे इस स्थान को छोड़कर शिमला की पहाड़ियों में चले गए थे।

बनारस=वाराणसी

महा० अनुशासन० के अनुसार काशी के राजा दिवोदास ने वाराणसी नगरी को बसाया था। जान पड़ता है यह नगरी, काशी की प्राचीन नगरी के स्थान पर या उसके सन्निकट ही बसाई गई होगी। (दिल्ली की विभिन्न बस्तियों के समान)। इससे यह भी सूचित होता है कि काशी का वाराणसी नाम जो इसके वरुणा और असी नदियों के बीच में होने के कारण पड़ा था, बाद का है। (दे० वाराणसी, काशी)

बनास

राजस्थान की एक नदी जिसका प्राचीन नाम पर्णाश या पर्णाशा है— 'चर्मण्वती तथा चैव पर्णाशा च महानदी' महा०, सभा० 9,20। श्री न० ला० डे ने बनास का प्राचीन नाम विनाशिनी बताया है।

बन्नू (प० पाकि०)

प्राचीन नाम वर्णु या वाणव। युवानच्वांग ने इसे फलन कहा है। उसके समय में इस क्षेत्र में बौद्ध धर्म का काफी प्रसार था।

बयाना (जिला भरतपुर, राजस्थान)

इस स्थान का प्राचीन नाम बाणपुर कहा जाता है। इसके अतिरिक्त वाराणसी, श्रीप्रस्थ या श्रीपुर नाम भी उपलब्ध हैं। किंवदंती में वाणपुर का संबंध वाणासुर तथा उसकी कन्या ऊषा से बताया जाता है। ऊखा मंदिर ऊषा का ही स्मारक कहा जाता है। 956 ई० के एक अभिलेख में जो ऊखा मंदिर से प्राप्त हुआ था यहां के राजा लक्ष्मणसेन का उल्लेख है। एक अन्य अभिलेख बाबर के समय का (934 हिजरी या 1527 ई०) है जिससे इस वर्ष में बाबर

का बयाना पर अधिकार सूचित होता है । अवश्य ही बाबर के हाथ म यह प्रदेश राणा सग्रामसिंह के कनवाहा के युद्ध (1527 ई०) मे पराजित होने पर आया होगा । बाबर के सेनापति महमूद अली का महल भीतरवाडी म अब भग्नावस्था म है । महमूद अली के प्रधान मत्री अजब सिंह भावरा थे जो जाति के ब्राह्मण बताए जाते हैं । इनके नाम से बयाना मे भावरा गली प्रसिद्ध है । इस गली मे अजब सिंह के बनवाए हुए चौका महल, गिदोरिया कूप तथा अनासागर बावडी आज भी वतमान है। बयाना बहुत समय तक जाट रियासत भरतपुर की निजामत (ज़िला) था । हाल ही मे 1194 वि० स०=1137 ई० का एक अभिलेख पाल नरेशो के समय का मागरौल नामक ग्राम से प्राप्त हुआ है जो इस प्रकार है—'सवत 1194 अगहन स्वस्ति श्री ठाकुर साहू राम कील माहड ग्राम भागसरू-वास हडखे श्री दवहज थी पाल लिखी मिति 3'। यहा के पाल नरेशो मे विजय पाल प्रसिद्ध हैं । इन्ही के नाम स स्थापित विजय मदिर गढ आज भी भग्नावस्था मे यहा स्थित है । विजयपाल के पुत्र तिहिनपाल थे जिनके तीन पुत्र पाल भाई नाम से प्रसिद्ध हुए । 1243 वि० स०=1186 ई० का एक अन्य हिंदी अभिलेख भी यहा मिला है।

बरकाला (म० प्र०)

पूव मध्यकालीन इमारतो के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है ।

बरगी (ज़िला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर के दक्षिण म स्थित है । यहा की गढो की गणना गढमडला की रानी वीरागना दुर्गावती के श्वसुर सग्राम सिंह (या सग्राम शाह) के बावन गढो मे की जाती थी ।

बरन

बुलदशहर (उ० प्र०) का प्राचीन नाम । लगभग 800 ई० मे मेवाड से भाग कर आने वाले दोर राजपूतो की एक शाखा ने बरन पर अधिकार कर लिया था। उन्होने 1018 ई० म आक्रमणकारी महमूद गजनवी का डटकर सामना किया । अपने पडोसी तोमर राजाओ से भी वे मोर्चा लेत रह किंतु बडगूजरो से जो तोमरो के मित्र थे, उन्हे दबना पडा । 1193 ई० मे कुतुबुद्दीन एबक ने उनकी शक्ति को पूरी तरह से कुचल दिया । फतूहात फीरोजशाही का प्रख्यात लेखक बरनी बरन का ही रहने वाला था जैसा कि उसके उपनाम से सूचित होता है । मुसल्मानो के शासन काल म बरन उत्तर भारत का महत्त्वपूर्ण नगर था । (टि० वरण नामक एक नगर का बुद्धचरित 21 25 म उल्लेख है । सम्भवत यह बरन का ही सस्कृत रूप है)। लोक प्रवाद है कि इस नगर की

स्थापना जनमेजय ने की थी (दे० ग्राउज़, 'बुलदशहर —कलकत्ता रिव्यू–1883) जैन अभिलेख मे इसे उच्छ नगर कहा गया है (एपिग्राफिका इडिका—जिल्द, पृ० 375)। (दे० बुलदशहर)

बरना=वरुणा

बरनावा (जिला मेरठ, उ० प्र०)

हिंडोन और कृष्णी नदी के सगम पर—सरधना तहसील मे, मेरठ से लगभग 15 मील (जनश्रुति के अनुसार) यह वही ग्राम है जहा पाडवो को भस्म कर देने के लिए दुर्योधन ने लाक्षागृह तयार करवाया था। यह प्राचीन ग्राम वारणावत या वारणाबत है जो उन पाच ग्रामो मे था जिनकी माग पाडवो ने दुर्योधन से महाभारत युद्ध के पूव की थी। (दे० वारणावत)

बरवानी (म० प्र०)

पूवमध्यकालीन ऐतिहासिक अवशेषो के लिए यह उल्लेखनीय है।

बरवाप्यारा (ज़िला जूनागढ, सौराष्ट्र, गुजरात)

जूनागढ के निकट ही इस नाम की कई शैलकृत्त गुफाए हैं जा जन भिक्षुआ के निवास तथा पूजा आदि के लिए बनाई गई थी। इन गुफाओ के अदर स्वस्तिक कलश, नदिपद, मद्रासन, मीनयुगल आदि जैनो के धार्मिक चिह्न अकित हैं।

बरवासागर (ज़िला झासी, उ० प्र०)

झासी से 12 मील दक्षिण पूव की ओर झासी-मानिकपुर रलपथ पर स्थित है। यहा एक प्राचीन सरावर के तट पर तथा उसके आसपास चदेल राजाओ के समय की अनेक सुन्दर इमारते है। ओडछा के राजा उदित सिंह का बनवाया एक दुर्ग भी सरावर के निकट है। चदेलनरेशो द्वारा निर्मित एक बहुत ही कलापूण मदिर या जरायका मठ भी यहा का सुदर स्मारक है। मदिर की बाह्य भित्तियो पर अनेक प्रकार की मूर्तिकारी तथा अलकरण प्रदर्शित हैं। वास्तव म चदेल राजपूतो के काल का यह मदिर वास्तुकला की दृष्टि स बहुत ही उच्चकोटि का है। मदिर के अतिरिक्त घुघुजा मठ तथा कई मदिरो क अवशेष भी चदेलकालीन वास्तुकला के परिचायक हैं।

बरसाना (जिला मथुरा, उ० प्र०)

कृष्ण की प्रेयसी राधा की जन्मस्थली के रूप म प्रसिद्ध है। इस स्थान का जो एक वृहत पहाडी की तलहटी म बसा है, प्राचीन समय म वृहत्मानु कहा जाता था (वृहत+सानु=पवत शिखर) इसके अन्य नाम ब्रह्मसानु या वृषभानुपुर (वृषभानु, राधा के पिता का नाम है) भी कहे जाते हैं। बरसाना

प्राचीन समय म बहुत समृद्ध नगर था। राधा का प्राचीन मदिर मध्यकालीन है जो लाल पत्थर का बना है। यह अब परित्यक्तावस्था म है। इसकी मूर्ति अब पास ही स्थित विशाल एव परमभव्य सगमरमर के बने मदिर मे प्रतिष्ठापित की हुई है। य दानो मदिर ऊची पहाडी के शिखर पर हैं। थोडा आगे चल कर जयपुर नरेश का बनवाया हुआ दूसरा विशाल मदिर पहाड़ी के दूसरे शिखर पर बना है। कहा जाता है कि औरगजेब जिसने मथुरा व निकटवर्ती स्थाना के मदिरो का क्रूरतापूवक नष्ट कर दिया था, बरसाने तक न पहुच सका था। बरसाने की पुण्यस्थली बडी हरी भरी तथा रमणीक है। इसकी पहाडियो के पत्थर श्याम तथा गौरवण के हैं जिन्हें यहा के निवासी कृष्ण तथा राधा के अमर प्रेम का प्रतीक मानते हैं। बरसाने से 4 मील पर नदगाव है जहा श्रीकृष्ण के पिता नद जी का घर था। बरसाना नदगाव माग पर सकेत नामक स्थान है जहा किवदती के अनुसार कृष्ण और राधा का प्रथम मिलन हुआ था। (सकेत का शब्दाथ है पूवनिर्दिष्ट मिलने का स्थान)।

बरहना=भराना (जिला साभर, राजस्थान)

साभर के निकट यह ग्राम दादू पथ के प्रवतक प्रसिद्ध सत दादू के मृत्यु-स्थान के रूप म प्रसिद्ध है। यहा दादू की समाधि तथा मदिर स्थित है। इन्होने 1 03 ई० मे शरीर त्याग किया था।

बराबर (जिला गया, बिहार)

प्राचीन नाम खलतिक पवत है। गया से पटना जाने वाले रेल पथपर बेला स्टेशन से आठ मील पूव यह पहाडी स्थित है। इस पहाडी मे लगभग सात प्राचीन गुफाए विस्तीण प्रकाष्ठा के रूप मे निर्मित है। कही तो एक गुफा मे दो कोष्ठ हैं और कही एक ही दीघ प्रकोष्ठ। इन गुफाओ म अशोककालीन वज्रलेप की प्रमार्जा (पालिश) दिखाई पडती है। इन गुफाओ के वतमान नाम सुदामा, लोमश ऋषि, रामाश्रम, विश्वझोपडी, गोपी, वेदाथिक आदि हैं। गुफाओ की सख्या सात होने से पहाडी को सतघरवा भी कहते हैं। इनमे से तीन म अशोक के अभिलेख अकित हैं। इनसे विदित होता है कि मूलत इनका निमाण अशोक के समय म आजीवक (जैन) सप्रदाय के भिक्षुओ के निवास के लिए करवाया गया था। यह सप्रदाय बुद्ध के समकालीन आचाय मक्खली गोसाल ने चलाया था। अशोक के अभिलेखो से जो उसक शासनकाल क 12वे 21वे वष क हैं उसकी सब धार्मिक सप्रदायो के साथ निष्पक्ष नीति का प्रमाण मिलता है। अशोक के अतिरिक्त उसके पौत्र दशरथ (जो जैन था) के अभिलेख भी इन गुफाओ म अकित हैं। इन गुफाओ को नागार्जुनी गुफाए

भी कहा जाता है। इनमे परवर्तीकाल के कई अन्य अभिलेख भी हैं जिनमे मौखरीवंशीय नरेश अनतवमन् का एक तिथिहीन अभिलेख उल्लेखनीय है। इसमे अनतवमन के पिता शार्दूलवमन का भी नामोल्लेख है। इसका विषय अनतवमन द्वारा गुहा-मदिर मे कृष्ण की एक मूर्ति की प्रतिष्ठा करवाना है।

बरार दे० विदभ

बरेली (उ० प्र०)

पुरानी जनश्रुति के अनुसार बरेली को बरेल राजपूतो ने बसाया था। प्राचीन काल म बरेलो का क्षेत्र पचाल जनपद का एक भाग था। महाभारतकाल म पचाल की राजधानी अहिच्छत्र थी जो जिला बरेली की तहसील आवला के निकट स्थित थी। बरेली तथा वर्तमान रुहलखड का अधिकाश प्रदेश 18वी शती म रुहेलो के अधीन था। 1772 ई० मे रुहेलो तथा अवध क नवाब के बीच जो युद्ध हुआ उसमे रुहेलो की पराजय हुई और उनकी सत्ता भी नष्ट हो गई। इस युद्ध से पहले रुहेलो का शासक हाफिज रहमत खा था जो बडा न्यायप्रिय और दयालु था। रहमत खा का मकबरा बरेली मे आज भी रुहेलो के अतीत गौरव का स्मारक है। बरेली को बासबरेली भी कहते हैं क्योंकि पहाडो की तराई के निकटवर्ती प्रदेश म इसकी स्थिति होने के कारण यहा लकडी, बास आदि का कारोबार काफी पुराना है। 'उल्टे बास बरेली' की कहावत भी, इस स्थान म, बासो का प्रचुर व्यापार होने के कारण बनी है। (दे० बासबरेली)

बद्वान=वधमान

बबर

(1) 'वारुणी दिशमागम्य यवनान् बबरास्तथा, नृपान् पश्चिमभूमिस्थान दापयामास वै करान्'—महा० वन० 254, 18 अर्थात कण ने तब पश्चिम दिशा म जाकर यवन तथा बर्बर राजाओ को जो पश्चिम देश के निवासी थे, परास्त करके उनसे कर ग्रहण किया। प्राचीन काल म अफ्रीका क बाबरी (Barbary) प्रदेश के रहने वाले 'बारबेरियन' कहलाते थे तथा इनकी आदिम रहन-सहन की अवस्था के कारण इन्हे यूरोपीय (ग्रीक) असभ्य समझते थे जिससे बार्बेरियन शब्द ही 'असभ्य' का पर्याय हो गया। महाभारत के उपर्युक्त उद्धरण मे बाबरी या वहा के निवासियो का निर्देश है अथवा भारत के पश्चिमोत्तर भूभाग या वहा बसे हुए सिथियन अथवा अनाय जातीय लोगो का। महाभारत-युद्ध की कथा मे जिस धनुर्विद् बर्बरीक का वृत्तात है वह सभवत बबरदेशीय था।

(2) काठियावाड या सौराष्ट्र (गुजरात) म सोरठ और गुहिलवाड के मध्य मे स्थित प्रदेश जिसे अब बाबरियावाड कहते हैं। सभवत विदेशी अनार्य जातीय

बबरो के इस प्रदेश म बस जाने से ही इसे बबर कहा जाने लगा था। इसी इलाके मे बबर शेर या केसरी सिंह पाया जाता है।

बबरीक

कराची (पाकिस्तान) के निकट प्राचीन बदरगाह। यहा गुप्त तथा गुप्तपूव काल म पश्चिम के देशो के साथ सक्रिय व्यापार होता था। स्थान के नाम का सभवत बबर लोग स संबध है।

बर्हिणद्वीप

पुराणो मे वर्णित एक द्वीप जिसका अभिज्ञान श्री आ० सी० गागुली न विशाल द्वीप बोर्नियो के साथ किया है (दे० जनल ऑव दि गुजरात रिसच सोसाइटी, बबई 3,1)

बलईखेडा (उ० प्र०)

लखनऊ–काठगोदाम रेलपथ पर शाही स्टेशन से तीन मील उत्तर-पूव और जहानाबाद से एक मील पश्चिम की ओर इस नाम का डूह है जो किसी प्राचीन स्थान का खडहर जान पडता है। इसका उत्खनन और अनुसधान अपेक्षित है।

बलगामी (मैसूर)

चालुक्य शैली म निर्मित केदारेश्वर का मदिर इस स्थान का प्राचीन स्मारक है। यह चालुक्य वास्तुकला के प्राचीनतम मदिरो मे से है।

बलनी दे० वीड

वलभी=वल्लभीपुर

बलाहक

विष्णुपुराण 2,4,26 म उल्लिखित शाल्मल द्वीप का एक पवत—'कुमुदश्चोन्नतश्चव तृतीयश्चवलाहक, द्रोणो यत्र महौषध्य स चतुर्थो महीधर'।

बलिया (उ० प्र०)

एक स्थानीय किवदती के अनुसार यह स्थान वाल्मीकि ऋषि के नाम पर बलिया कहलाता है। इनकी स्मृति मे एक मदिर यहा था जो अब विद्यमान नही है। नगर के उत्तर मे धर्मारण्य नामक एक ताल है जिसके निकट अति प्राचीन काल मे बौद्धो का एक सघाराम स्थित था। इसका वणन फाह्यान ने विशालशाति नाम से किया है। युवानच्वाग ने भी इस सघाराम का वणन करते हुए यहा अविद्धकण साधुओ का निवास बताया है। धर्मारण्य पोखरे के निकट भृगु का आश्रम बताया जाता है। इसकी स्थापना बौद्धधर्म की अवनति के पश्चात प्राचीन सघाराम के स्थान पर की गई होगी।

बलिहारी

विलारी (मद्रास) का प्राचीन नाम कहा जाता है।

बल्ख

बल्ख नामक नगर अफगानिस्तान मे स्थित है। यहा तोपे रुस्तम नामक खडहरो से इस स्थान पर एक अति प्राचीन और विशाल नगर के अस्तित्व का आभास मिलता है। अवशेषो से विदित होता है कि यह नगर विभिन्न देवो के उपासको तथा अग्निपूजको द्वारा बसाया गया होगा। यहा ऐतिहासिक गुफाए तथा उनमे के भीतर अकित भितिचित्रो से भी बल्ख की प्राचीन सभ्यता का दिग्दर्शन होता है। वास्तव मे मुसलमानो के पूव बल्ख मे हिंदू बौद्धसभ्यता का पूरा-पूरा प्रभाव था। (दे० वाह्लिक)

बल्लभगढ (ज़िला गुडगाव, हरयाणा)

दिल्ली मथुरा रेलपथ पर स्थित है। 18वी शती मे यह स्थान जाटो की राजनतिक शक्ति का केद्र था। कहा जाता है कि 1705 ई० के लगभग गोपालसिंह जाट ने वल्लभगढ के निकट सीही ग्राम मे बस कर अपनी शक्ति का सचय किया था। उसके प्रभाव के कारण ही फरीदाबाद के मुगल अधिकारी मुर्तजा खा ने उसे फरीदाबाद परगना का चौधरी नियुक्त किया था। बल्लभगढ का नामकरण उसके पौत्र बलराम के नाम पर हुआ था। वल्लभगढ म जाटो ने एक दुग का निर्माण किया था। भरतपुर नरेश सूरजमल ने बल्लमगढ के जाटो की मुगल सेनाओ के विरुद्ध सहायता की थी। 1757 ई० मे अहमदशाह अब्दाली ने वल्लभगढ का घेरा डालकर भरतपुर-नरेश जवाहरसिह को गढ छोड कर भाग जाने पर विवश कर दिया। बल्लभगढ से एक मील दूर सीही ग्राम है जिसे महाकवि सूरदास का जन्म स्थान माना जाता है।

बल्लमगढ=बल्लभगढ

बल्लालपुरी

वगाल के वल्लालसेन और आदिसूर की राजधानी। यह वर्तमान रामपाल या बल्लाल बाडी (ज़िला ढाका, पाकि०) है। कनिघम के अनुमार गौड पर मुसलमानो का कब्जा हो जाने पर सेन नरेश बल्लालपुरी मे आकर रहन लगे थे। (आर्कियालाजिकल सर्वे रिपोट—जिल्द 3, पृ० 163) बल्लालसेन के क़िले के अवशेष यहा अभी मौजूद हैं।

बसाढ़ दे० वैशाली

बसोली (हिमाचल प्रदेश)

बसोली भारतीय चित्रकला की एक विशेष शैली के लिए प्रसिद्ध है। बसोली-नरेश राजा कृपाल (1678 1693 ई०) ने चित्रकला के एक नए 'स्कूल' को जन्म दिया था। इसकी विशेपता है अभिव्यक्ति की ककशता तथा कठोरता।

विलियम आचर (भारतीय विभाग, विक्टोरिया-एलबर्ट संग्रहालय, लंदन) के अनुसार बसौली की चित्रकला के मानवचित्रों में नेत्रों का अभिव्यंजन गहरी रेखाओं और प्रकृति का चित्रण आयताकार अथवा वर्तुल रेखाओं द्वारा किया गया है। इस शैली में प्रेम के विषयों का आलेखन काव्यमय न होकर कर्कशता-पूर्ण है। (दे० गुलेर)

बहमनाबाद (सिंध, पाकि०)

सिंध नदी के मुहाने के निकट यह अति प्राचीन नगर है। विंसेंट स्मिथ के अनुसार इस नगर का नाम ईरान के शाह बहमन अथवा अहसुर (465-425 ई० पू०) के नाम पर हुआ था। यह गुश्तासिब का पौत्र था (दे० अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 107)। किंतु यह स्थान इससे कहीं अधिक प्राचीन जान पड़ता है क्योंकि यहां प्रागैतिहासिक अवशेष भी मिले हैं। संभवतः महाभारत सभा० 51,5 ('गोवासना ब्राह्मणाश्च दासनीयाश्च सर्वश, प्रीत्यर्थं ते महाराज धर्मराज्ञो महात्मन') में ब्राह्मण नाम के जिन लोगों का उल्लेख युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में दक्षिणा लेकर आनेवाले जानपदिकों के साथ वर्णन है वे इसी स्थान या ब्राह्मण जनपद से संबंधित होंगे। अलक्षेंद्र (सिकंदर) के आक्रमण के वृत्तांत में ग्रीक लेखकों ने जिस पटल नामक नगर का उल्लेख किया है वह भी बहमनाबाद के निकट ही स्थित होगा। एरियन ने इसे ब्रेह्मनोई (Brachmanoi) लिखा है और प्लूटार्क ने भी इसका उल्लेख किया है। पाणिनि ने ब्राह्मण जनपद का 5,2,71 में निर्देश किया है और राजशेखर ने काव्य मीमांसा में इसे ब्राह्मणावह लिखा है। अलक्षेंद्र के इतिहास-लेखकों के अनुसार इसी स्थान से यवन आक्रांता ने अपनी सेना के एक भाग को समुद्र द्वारा अपने देश को वापस भेजना निश्चित किया था। 1957 में पाकिस्तान शासन की ओर से इस स्थान पर खुदाई करवाई गई थी जिससे बहमनाबाद की अति प्राचीन बस्ती के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

बहराइच (उ० प्र०)

स्थानीय जनश्रुति में बहराइच शब्द को ब्रह्मराइच का अपभ्रंश माना जाता है। ऐतिहासिक परंपरा के अनुसार इस स्थान पर जहां आजकल सईद सालार मसूद की दरगाह है, प्राचीन काल में सूर्य मंदिर था। कहा जाता है कि इस मंदिर को रुदौली की अंधी कुमारी जौहरा बीबी ने बनवाया था। दरगाह के अहाते को बनवाने वाला दिल्ली का तुगलक सुल्तान फीरोजशाह बताया जाता है।

बहादुरगढ़ (महाराष्ट्र)

1) भीमा नदी के तट पर बसे हुए बहादुरगढ़ का निर्माण बहादुर खां ने

करवाया था जो औरंगजेब का सेनापति था। सलहेरी के युद्ध के पश्चात जिसमे मुगल सेनाओ को शिवाजी ने बुरी तरह हराया था, औरंगजेब ने शाहजादा मुअज्जम और महावतखा के स्थान मे बहादुर खा को शिवाजी के विरुद्ध भेजा। बहादुर खा को मराठो से लडने का साहस ही न होता था अत उसने भीमा के तट पर मेड गाव मे अपनी छावनी बनाकर बहादुरगढ के किले का निर्माण करवाया था।

बहादुरनगर (जिला रायबरेली, उ० प्र०)

यह स्थान एक मध्यकालीन मदिर के लिए विख्यात है जो उस जमाने की छोटी इटो का बना है।

बहादुराबाद (जिला सहारनपुर, उ० प्र०)

हरद्वार से 8 मील पश्चिम मे स्थित है। यहा 1953 मे उत्खनन द्वारा हरप्पा-सभ्यता के अवशेष प्रकाश मे लाए गए हैं। उत्खनन भारतीय पुरातत्व विभाग द्वारा सचालित किया गया था। इन अवशेषो से इस महत्वपूर्ण सभ्यता के विस्तार का बोध होता है। इस सभ्यता के अवशेष अब तक श्योराजपुर (जिला कानपुर) तक मिल चुके हैं।

बहिर्गिरि

महाभारत, सभा० 27,3 के अनुसार दिग्विजय-यात्रा के प्रसग मे अर्जुन ने अतर्गिरि, बहिर्गिरि और उपगिरि नामक हिमालय के पार्वतीय प्रदेशो को विजित किया था—'अतर्गिरि च कौतेयस्तथैव च बहिर्गिरिम् तथैवोपगिरि चैव विजिग्ये पुरुषर्षभ'—बहिर्गिरि हिमालय का बाहरी भाग (Outer Himalayas) अथवा निचला तराई क्षेत्र है। (दे० उपगिरि, अतर्गिरि)

बहुधान्यक

महाभारत, सभा० 32,4 मे वर्णित स्थान जिसका उल्लेख रोहीतक (वर्तमान रोहतक, पजाब) के साथ है। श्री वा० श० अग्रवाल के अनुसार प्राचीन काल मे बहुधान्यक पर यौधेयगण का राज्य था। इनके सिक्के रोहतक के निकट खोकराकोट नामक स्थान पर मिले हैं। कुछ विद्वानो के मत मे यह वर्तमान लुधियाना है। सभव है लुधियाना बहुधान्यक का अपभ्रंश हो।

बहुरीबद (म० प्र०)

जबलपुर से 42 मील उत्तर मे एक ग्राम है जिसे कनिंघम ने टाल्मी द्वारा उल्लिखित 'थोलावन' माना है। यहा जैन तीर्थंकर शातिनाथ की 13 फुट ऊची, श्यामपाषाण की मूर्ति अवस्थित है जिसे स्थानीय लोग खनुवादेव नाम से जानते हैं। मूर्ति के निम्न भाग मे एक अभिलेख उत्कीर्ण है जिससे सूचित होता है कि

यह मूर्ति महासामताधिपति गाल्हणदव राठौड के समय म बनी थी और यह शासक कलचुरिराज राय कणदेव का सामत था। लिपि से मूर्ति का समय 12वी शती जान पडता है।

बागरमऊ (उ० प्र०)

कानपुर-बालामऊ रलपथ पर स्थित है। यहा प्राचीन काल का एक अदभुत तात्रिक मदिर है जो कुडलिनी योग के आधार पर बना हुआ है।

बादा

प्राचीन नाम भुरेंदी कहा जाता है। भूरागढ का किला राजा गुमान सिह न 1746 ई० मे बनवाया था। यहा का प्राचीनतम मदिर भूमीश्वरी देवी का है। बादा म अनेक हिंदू और जैन मदिर है।

बाधवगढ़

रीवा (म० प्र०) रियासत का पुराना नाम है। वास्तव म बाधवगढ रीवा मे दक्षिण की ओर कुछ दूर पर स्थित है। यह स्थान अतिप्राचीन है जसा कि दूसरी-तीसरी शती ई० के 23 अभिलेखो से ज्ञात होता है जो पुरातत्व विभाग को 1938 म यहा प्राप्त हुए थे। इनकी भाषा प्राकृत और सस्कृत का मिश्रण है। लिपि ब्राह्मी है। अभिलेखा म महाराज वैशिष्ठीपुत्त भीमसेन तथा उनके पुत्र और पौत्र का उल्लेख है। इनका विषय मथुरा तथा कौशाबी के वणिक्-गणा द्वारा दिए गए दान का वृत्तात है। एक अभिलेख म व्यायामशाला बनवाए जाने का भी उल्लेख है जिससे सूचित होता है कि इतने प्राचीन काल मे भी जनता के स्वास्थ्य की ओर सघटित रूप से पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। बाधवगढ़ रीवा की प्राचीन राजधानी होने के कारण काफी प्रख्यात नगर था और रीवा नरेश अपनी राजसी उपाधियो मे अपने को बाधवेश कहलाना उचित समझते थे।

बासखेडा (बिहार)

महाराज हर्षवधन (606-647 ई०) का एक ताम्र दानपट्ट लख इस स्थान से प्राप्त हुआ था। इसका समय 628 629 ई० है। इसम महाराजाधिराज हर्ष की वशावली दी हुई है। बासखेडा अभिलेख की मुख्य विशेषता यह है कि इसम स्वय हर्ष के हस्ताक्षर हैं। यह हस्ताक्षर सभवत मूल हस्ताक्षर की अनुलिपि है जिसे ताम्रपट्ट पर उतार लिया गया है। अभिलेख के अत म यह हस्तलख सुदर अक्षरो मे इस प्रकार है—'स्वहस्तो मम महाराजाधिराज श्री हर्षस्य' (दे० एपिग्राफिका इडिका, 4, पृ० 208) यह अभिलेख वधमानकोटि नामक स्थान से प्रचलित किया गया था।

बास बरेली

बरेली (उ० प्र०) का एक विशेषार्थक नाम जो यहा के तराई के जगलो मे बास वृक्षो के बहुतायत से होने के कारण हुआ है। यह सभव है कि इस नगर को उ० प्र० के एक अन्य नगर राय बरेली (सक्षिप्त रूप बरेली) से भिन्न करने के लिए ही बास बरेली कहा जाता है (दे० बरेली)।

बागपत (जिला मेरठ, उ० प्र०)

इस नगर का प्राचीन नाम व्याघ्रप्रस्थ या वृपप्रस्थ कहा जाता है। स्थानीय जनश्रुति म यह ग्राम उन पाच ग्रामो मे से था जिनकी माग, महाभारत युद्ध से पहले समझौता करने के लिए, पाडवो ने दुर्योधन से की थी। अन्य चार ग्राम सोनपत, तिलपत, इद्रपत और पानीपत कहे जाते हैं। किंतु महाभारत मे ये पाच ग्राम दूसरे ही हैं—य है—अविस्थल, वकस्थल, माकदी, वारणावत, और पाचवा नाम रहित कोई भी अन्य ग्राम (दे० अविस्थल)। सभव है वृकस्थल बागपत का महाभारत कालीन नाम हो। वैसे वृकस्थल (वृक—भेडिया या बाघ) बागपत या व्याघ्रप्रस्थ का पर्याय हो सकता है।

बागवढी (जिला करीम गज, असम)

करीमगज से 10 मील पर स्थित है। एक सहस्र वर्ष पुराना शिव मदिर यहा के जगलो म पाया गया है। इसकी खोज 1954 म वनो को साफ करने वाले ग्रामीणो ने की। मदिर के अदर कुछ मूर्तिया भी मिली है। इसकी दीवारो पर जो नक्काशी का काम है उससे सूचित होता है कि यह शिवमदिर त्रिपुरा-नरेश द्वारा बनवाया गया था। कुछ वर्षों पूर्व इसी स्थान के निकट अलाउद्दीन खिलजी के समय (14वी शती का प्रारभ) की एक मसजिद भी मिली थी जिससे ज्ञात होता है कि मध्यकाल मे यह स्थान इस प्रदेश मे काफी महत्वपूण था।

बागमती

नेपाल तथा उत्तरी विहार मे प्रवाहित होने वाली नदी। स्वयभू पुराण (अध्याय 5) और वाराहपुराण (अध्याय 215) मे बागमती या बाहुमती के सात नदियो के साथ सगम को वडा तीर्थ माना गया है। नेपाल के प्रधान सरक्षक सिद्धसत मछीद्रनाथ का मदिर बागमती के तट पर है। मिथिला मे इस नदी के तट पर बिसपी नामक ग्राम बसा है जो मथिल कोकिल विद्यापति का जन्म-स्थान माना जाता है।

बागरा

मध्यकाल मे, विशेषत सेन नरेशो के समय मे बगाल का एक प्रात।

का अधिकाश भाग कालप्रवाह मे नष्ट हो चुका है और दीवारो पर केवल कुछ रगीन धब्बो के रूप मे ही विद्यमान है। फिर भी बचे खुचे चित्रो से, खडित रूप मे ही सही, हमे प्राचीन चित्रकारी के भव्य सौदय का आभास तो मिल ही जाता है। ये चित्र मूलत गुफाओ की भित्तियो, छतो और स्तभो पर अकित थे। स० 4 की गुफा, रगमहल का भीतरी भाग धुवे से काला हो गया है। कहा जाता है यहा ठहरने वाले मूर्ख साधुओ ने इस गुफा का रसोई के रूप मे प्रयोग किया था जिससे इसके सुदर चित्र धुवा लगने से काले पड गए हैं। फिर भी बरामदे की चित्रकारी अपक्षाकृत अच्छी दशा मे है। यहा लगभग 45 फुट लबे और 6 फुट ऊचे स्थान पर प्राचीन भारतीय जन-जीवन की झाकिया अतीव सुदर रगीन चित्रो द्वारा प्रस्तुत की गई हैं। पहला चित्र एक महिला का है जो शोकनिमग्ना जान पडती है। इसके पास ही सगीत और नृत्य तथा साथ ही धार्मिक प्रवचन के दृश्य है। तीसरे चित्र मे छ पुरुष जो शायद बौद्ध अहत हैं, बादलो पर तैरते हुए दिखाए गए हैं। उनके नीचे भूमि पर कुछ स्त्रिया सगीत मे तल्लीन चित्रित हैं जिनमे से एक वासुरी बजा रही है। ये अहत शायद ससार के प्रपच से ऊपर उठकर और आनदावस्था को प्राप्त कर सासारिक जीवा के रागरगमय और विलासपूण जीवन का करुणापूण दृष्टि से देखने के भाव मे अकित किए गए हैं। चौथा दृश्य भी सगीत मे व्यस्त स्त्री-पुरुषो का है जिसमे अनियत्रित आमाद प्रमाद तथा सयत आनद का विभेद स्पष्ट किया गया है। अतिम दो दृश्यो मे जिनमे लगभग बीस फुट स्थान घिरा हुआ है, दा शोभा-यात्राओ का अकन किया गया है। इनम घाडो के अभिजात स्वभाव का चित्रण आश्चयजनक रीति से वास्तविक तथा कलापूण है और भारतीय चित्रकारी मे अपूव जान पडता है। इन सब कलामय दृश्यो म परस्पर कथात्मक तारतम्य है या नही यह कहना सभव नही जान पडता।

वाघोरा

यह छोटी सी नदी अजता की हरी भरी पहाडियो की उपत्यका म बहती है। अजता के भव्य गुहामदिरो के उच्चपवत का पाद प्रक्षालन करती हुई और मनोरम कलकलध्वनि से बहने वाली यह सरिता अजता क एकात प्राकृतिक [illegible] कर दती है।

[illegible] (जबलपुर, म० प्र०)

[illegible] दूर सग्रामसागर झील के किनारे स्थित भैरव मदिर को है। इसका निर्माण गोंड नरेश सग्राम सिंह ने करवाया बाजनामठ मे स्थित भैरव का मदिर गोंड वास्तुकला

वागापथरी (ज़िला मिर्जापुर, उ० प्र०)

मिर्जापुर से रीवा जाने वाली सड़क पर मिर्जापुर से 45 मील दूर एक पहाड़ी है जिसमे प्रागैतिहासिक गुफाएं स्थित हैं (दे० लहारियादह)।

बागेश्वर (जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

गोमती-सरयू सगम पर समुद्रतल स 3000 फुट की ऊचाई पर स्थित मध्यकालीन स्थान है। वागनाथ महादव का मदिर यहा का मुख्य स्मारक है जिसम शिव पार्वती की मध्यकालीन कलापूर्ण मूर्तिया है। मकर-सक्रांति को यहा मला लगता है। सरयू क उस पार वेणीमाधव तथा हिरण्येश्वर के प्राचीन मदिर हैं। इस स्थान का नाम वागीश्वर या व्याघ्रेश्वर मदिर के कारण है। बागेश्वर के कस्बे को अल्मोडे के राजा लक्ष्मीचद्र ने 1450 ई० म बसाया था।

बाघ (म० प्र०)

इदौर से लगभग 100 मील दक्षिण पश्चिम की ओर, नर्मदा की घाटी मे, घोर जगलो के बीच, पहाडी म काटकर बनाई हुई बाघ नामक नौ गुफाए हैं जो अपनी भित्ति-चित्रकारी के लिए अजता के समान ही विख्यात हैं। गुफाओ के सामने बागनी नामक बरसाती नदी बहती है। बाघ का कस्बा यहा से 5 मील दूर है। ससार की हलचल से दूर ये गुफाए बौद्ध श्रमणो द्वारा विहारो तथा चैत्यो के रूप म—अजता की भाति—बनाई गई थी। इनकी भित्तियो पर बौद्ध कलाकारो ने स्वात सुखाय, बुद्ध तथा बोधिसत्वो की जीवनियो स सबधित अनक उदात्त कथाओ का मनोरम चित्रण किया है। यह चित्रकारी अधिकाश म गुप्तकालीन है। इस प्रदेश स बौद्धधर्म क 10वीं शती मे नष्ट हो जाने पर इन गुफाओ का महत्व भी विस्मृत हो गया और कालातर म स्थानीय लोगो ने इनका सबध पच पाडवो से जोड दिया। इन नौ गुफाओ मे से जो कला की दृष्टि से गुप्तकालीन प्रमाणित होती हैं केवल स० 2 से 5 तक की गुफाएँ ही खोदकर निकाली जा सकी है। शेष अभी तक मिट्टी मे दबे हुए खडहरो का ढेर मात्र जान पडती है। स० 2 की गुफा म एक मध्यवर्ती मडप है जिसके तीन ओर बीस कोष्ठ हैं जो भिक्षुओ के रहन के लिए बने थे। मडप के आगे स्तभो पर टिका हुआ बरामदा है। पीछे की ओर बीच मे एक बडा प्रकोष्ठ है जिसम एक छोटा स्तूप या चैत्य है। कोष्ठ काफी अधेरे हैं और निवास के लिए अधिक सुखकर नही जान पडते किंतु ये बौद्ध साधुओ के जीवन के प्रति दृष्टिकोण के अनुरूप ही बने है। अ य गुफाओ की रचना भी प्राय इसी प्रकार की है। बाघ की गुफाओ म मूर्तिकारी क अधिक सुदर उदाहरण नही हैं किंतु य अजता की भाति ही अपनी भित्ति चित्रकारी के लिए विख्यात हैं किंतु इस चित्रकारी

का अधिकाश भाग कालप्रवाह म नष्ट हो चुका है और दीवारो पर केवल कुछ रगीन धब्बो के रूप मे ही विद्यमान है। फिर भी बचे खुचे चित्रो से, खडित रूप मे ही सही, हमे प्राचीन चित्रकारी के भव्य सौदय का आभास तो मिल ही जाता है। ये चित्र मूलत गुफाओ की भित्तियो, छतो और स्तभो पर अकित थे। स० 4 की गुफा, रगमहल का भीतरी भाग धुवे से काला हो गया है। कहा जाता है यहा ठहरने वाले मूर्ख साधुओ ने इस गुफा का रसोई के रूप मे प्रयोग किया था जिससे इसके सुदर चित्र धुवा लगने से काले पड गए हैं। फिर भी बरामदे की चित्रकारी अपेक्षाकृत अच्छी दशा मे है। यहा लगभग 45 फुट लबे और 6 फुट ऊचे स्थान पर प्राचीन भारतीय जन-जीवन की भाकिया अतीव सुदर रगीन चित्रो द्वारा प्रस्तुत की गई हैं। पहला चित्र एक महिला का है जो शोकनिमग्ना जान पडती है। इसके पास ही सगीत और नृत्य तथा साथ ही धार्मिक प्रवचन के दृश्य हैं। तीसरे चित्र मे छ पुरुष जो शायद बौद्ध अर्हत है, बादलो पर तैरते हुए दिखाए गए हैं। उनके नीचे भूमि पर कुछ स्त्रिया सगीत मे तल्लीन चित्रित हैं जिनमे से एक बासुरी बजा रही है। ये अर्हत शायद ससार के प्रपच से ऊपर उठकर और आनदावस्था को प्राप्त कर सासारिक जीवो के रागरगमय और विलासपूर्ण जीवन का करुणापूर्ण दृष्टि से देखने के भाव मे अकित किए गए हैं। चौथा दृश्य भी सगीत म व्यस्त स्त्री-पुरुषो का है जिसमे अनियत्रित आमोद प्रमोद तथा सयत आनद का विभेद स्पष्ट किया गया है। अतिम दो दृश्यो मे जिनम लगभग बीस फुट स्थान घिरा हुआ है, दो शोभा-यात्राओ का अकन किया गया है। इनम घोडो के अभिजात स्वभाव का चित्रण आश्चर्यजनक रीति मे वास्तविक तथा कलापूर्ण है और भारतीय चित्रकारी मे अपूर्व जान पडता है। इन सब कलामय दृश्यो म परस्पर कथात्मक तारतम्य है या नही यह कहना सभव नही जान पडता।

बाघोरा

यह छोटी सी नदी अजता की हरी भरी पहाडियो की उपत्यका मे बहती है। अजता के भव्य गुहामदिरो के उच्चपवत का पाद-प्रक्षालन करती हुई और मनोरम कलकलध्वनि स बहने वाली यह सरिता अजता के एकात प्राकृतिक सौंदय को द्विगुणित कर देती है।

बाजनामठ (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर स 6 मील दूर सग्रामसागर झील के किनारे स्थित भैरव मदिर को बाजनामठ भी कहा जाता है। इसका निर्माण गोंड नरेश सग्राम सिंह ने करवाया था। ये भैरव के उपासक थे। बाजनामठ म स्थित भैरव का मदिर गोंड वास्तुकला

का अधिकाश भाग कालप्रवाह मे नष्ट हो चुका है और दीवारो पर केवल कुछ रगीन धब्बो के रूप मे ही विद्यमान है। फिर भी बचे खुचे चित्रो से, खडित रूप मे ही सही, हमे प्राचीन चित्रकारी के भव्य सौंदय का आभास तो मिल ही जाता है। ये चित्र मूलत गुफाओ की भित्तियो, छतो और स्तभो पर अकित थे। स० 4 की गुफा, रगमहल का भीतरी भाग धुवे से काला हो गया है। कहा जाता है यहा ठहरने वाले मूख साधुओ ने इस गुफा का रसोई के रूप मे प्रयाग किया था जिसस इसके सुदर चित्र धुवा लगने से काले पड गए हैं। फिर भी बरामदे की चित्रकारी अपेक्षाकृत अच्छी दशा मे है। यहा लगभग 45 फुट लबे और 6 फुट ऊचे स्थान पर प्राचीन भारतीय जन-जीवन की झाकिया अतीव सुदर रगीन चित्रो द्वारा प्रस्तुत की गई है। पहला चित्र एक महिला का है जा शोकनिमग्ना जान पडती है। इसके पास ही सगीत और नृत्य तथा साथ ही धार्मिक प्रवचन के दृश्य है। तीसरे चित्र मे छ पुरुष जो शायद बौद्ध अहत है, बादलो पर तैरते हुए दिखाए गए है। उनके नीचे भूमि पर कुछ स्त्रिया सगीत मे तल्लीन चित्रित हैं जिनमे से एक बासुरी बजा रही है। ये अहत शायद ससार के प्रपच से ऊपर उठकर और आनदावस्था को प्राप्त कर सासारिक जीवो के रागरगमय और विलासपूण जीवन का करुणापूण दृष्टि से देखने के भाव मे अकित किए गए हैं। चौथा दृश्य भी सगीत म व्यस्त स्त्री पुरुषो का है जिसमे अनियत्रित आमोद प्रमोद तथा सयत आनद का विभेद स्पष्ट किया गया है। अतिम दो दृश्यो मे जिनमे लगभग बीस फुट स्थान घिरा हुआ है, दो शोभा यात्राओ का अकन किया गया है। इनम घोडो के अभिजात स्वभाव का चित्रण आश्चयजनक रीति मे वास्तविक तथा कलापूण है और भारतीय चित्रकारी मे अपूव जान पडता है। इन सब कलामय दृश्यो म परस्पर कथात्मक तारतम्य है या नही यह कहना सभव नही जान पडता।

बाघोरा

यह छोटी सी नदी अजता की हरी भरी पहाडियो की उपत्यका म बहती है। अजता के भव्य गुहामदिरो के उच्चपवत का पाद-प्रक्षालन करती हुई और मनोरम कलकलध्वनि से बहने वाली यह सरिता अजता के एकात प्राकृतिक सौंदय को द्विगुणित कर देती है।

बाजनामठ (ज़िला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर से 6 मील दूर संग्रामसागर झील के किनार स्थित भैरव मदिर को बाजनामठ भी कहा जाता है। इसका निर्माण गोंड नरेश सग्राम सिह ने करवाया था। ये भैरव के उपासक थे। बाजनामठ मे स्थित भरव का मदिर गोंड वास्तुकला

का प्रारंभिक उदाहरण है। इसका गोलगुंबद भी विशिष्ट गौंडशैली में बना है। नवरात्र के अवसर पर यहा दूर दूर के तांत्रिक लोग इकटठे होते हैं। संग्राम सागर के बीच में आमखास नामक महल एक द्वीप पर बना है। स्थानीय लोगो का विश्वास है कि यह महल तालाब के अंदर तीन तलो तक गया हुआ है।

बाजितपुर (बिहार)

बेगूसराय के निकट छोटा सा ग्राम है। कहा जाता है कि मैथिल कोकिल विद्यापति की मृत्यु इसी स्थान पर हुई थी। इनका जन्म स्थान बिसपी है।

बाजोलिया (मेवाड, राजस्थान)

प्राचीन जैन मंदिर के लिए उल्लेखनीय है। इस मंदिर के निकट एक चट्टान पर 1216 वि० स०=1170 ई० में श्रेष्ठी लोलाक ने उन्नतशिखर पुराण नामक दिगंबर जैन ग्रंथ उत्कीर्ण करवाया था। एक दूसरी चट्टान पर उपर्युक्त जैन मंदिर के विषय में एक विशाल एवं विस्तृत लेख भी अंकित है जिसमें साभर (शाकंभर) और अजमेर के चौहानो की पूरी वंशावली दी हुई है।

बाडी (जिला भूपाल, म० प्र०)

गढमडला के नरेश संग्रामसिंह के प्रसिद्ध बावनगढ़ो में से एक। संग्रामसिंह वीरांगना महारानी दुर्गावती के श्वसुर थे। इनकी मृत्यु 1541 ई० में हुई थी।

बाडोली (राजस्थान)

मध्यकालीन हिंदू मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। इस मंदिर का शिल्प सौंदर्य उच्च कोटि का माना जाता है।

बाणपुर

(1) दे० बयाना

(2) दे० महाबलीपुरम्

बाणावर (मैसूर)

बंगलौर-पूना रेलमार्ग पर स्थित है। या ... ।।ा होय

मंदिर स्थापत्य की दृष्टि से हालेबिड शैली ... ४

बादामी दे० वातापि

बाधन=बधन

बांधवी (काठियावाड, गुज

गुजरात का प्राचीन न

वाडा स जूनागढ़ जाने वाल

विद्या का केंद्र था। यहां

क रचयिता मरुतुग आचार्य

ई० है। इसम गुजरात के ...

प्रो० सी० एच० टॉनी ने किया है। वधमानपुर का नाम तीर्थंकर वर्धमान महावीर के नाम पर प्रसिद्ध हुआ था।

बानकोट (महाराष्ट्र)

पश्चिमी समुद्रतट पर, बबई के निकट स्थित है। इसी स्थान को ईस्ट इडिया कपनी ने फोट विक्टोरिया का नाम दिया था क्योकि कपनी ने अपनी व्यापारिक कोठियो की रक्षा के लिए यहा इस नाम का किला बनवाया था। प्रथम पेशवा से सधि करने के पश्चात अग्रेजो को भारत के पश्चिमी तट पर सबसे पहले यही स्थान प्राप्त हुआ था।

बानपुर

(1) (ज़िला टीकमगढ, म० प्र०) टीकमगढ से 4 मील पर स्थित है। यहा जमडार और जामनेर नदियो का सगम स्थल है। कहा जाता है कि पुराणो मे प्रसिद्ध बाणासुर की राजधानी इसी स्थान पर थी। मध्यकालीन बुदेलखड की वास्तुकला के उदाहरण कई सुदर मदिरा के अवशेषो के रूप मे यहा है। बाणासुर की कन्या ऊषा का विवाह कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध से हुआ था जिसकी कथा श्रीमदभागवत 10 62 मे है।

(2) महाबली पुरम्

बाबाप्यारा (ज़िला जूनागढ, सौराष्ट्र)

गिरनार पवत पर पहुचने के लिए जो माग बागेश्वरी द्वार से जाता है उस पर इस द्वार के पास ही बावाप्यारा नाम की अशोककालीन गुफाए स्थित हैं। रुद्रदामन् तथा अशोक के प्रसिद्ध अभिलेखो वाली चट्टान पास ही स्थित है।

बामनी (ज़िला परभणी, महाराष्ट्र)

यहा सरस्वती तथा पूर्णा नदी के सगम पर बसे हुए स्थान पर एक सादा किंतु सुदर प्राचीन मदिर है।

बामियान (अफगानिस्तान)

यह स्थान काबुल के निकट है। यहा के उल्लेखनीय स्मारक बौद्धकालीन अवशेष हैं। इनमे गधार शैली म निर्मित बुद्ध की विशालकाय मूर्तिया प्रख्यात हैं। यह स्थान मध्ययुग से पूव बौद्ध विद्वानो तथा मदिरो के लिए प्रसिद्ध था। पाणिनि की अष्टाध्यायी मे इस स्थान का नाम वर्मती है। युवानच्वाग ने भी बामियान के विहारो आदि का वणन किया है।

बार—पार (महाराष्ट्र)

जावली के निकट एक ग्राम। इस स्थान पर बीजापुर के सरदार अफजल खा ने जो शिवाजी के विरुद्ध अभियान पर आया था, अपना पडाव डाला था।

कविवर भूषण ने जो शिवाजी के समकालीन थे, इस स्थान का उल्लेख इस प्रकार किया है—'जावलि बार सिंगारपुरी औ जवारि को राम के नरि का गाजी' शिवराज भूषण, पृ० 207।

बारा

पेशावर जिले की नदी जो महाभारत भीष्म० की वरा हो सकती है।

बाराणसी

(1)=वाराणसी

(2) दे० बयाना

बाराबंकी (उ० प्र०)

सिद्धौर तथा कुनेश्वर के प्राचीन मंदिरों के लिए बाराबंकी (जिला) उल्लेखनीय है। इस स्थान का प्राचीन नाम जसनोल कहा जाता है। इसे 10वीं शती में जस नामक भर राजपूत सरदार ने बसाया था।

बारामूला (कश्मीर)

प्राचीन नाम बाराह (या वराह) मूल है। जान पड़ता है कि यहां प्राचीन काल में वराहोपासना का केंद्र था।

बारीसाल (बंगाल)

इस स्थान का प्राचीन नाम वारिषेण बताया जाता है। (दे० वारिषेण)

बार्हद्रथपुर

महाभारतकाल में गिरिव्रज (=राजगृह, बिहार) का एक नाम था—'विवेश राजा द्युतिमान् बार्हद्रथपुरं नृप, अभिषिक्तो महाबाहुर्जारासंधिमहात्मभि' सभा 24, 44। जरासंध की राजधानी होने के कारण गिरिव्रज को बार्हद्रथपुर अर्थात् बृहद्रथ के पुत्र—जरासंध का नगर कहा जाता था। [दे० गिरिव्रज (2), राजगृह]

बालकाटि दे० काल्काटि

बालखिल्य (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के मार्ग में तुंगनाथ पर्वत के नीचे बालखिल्य नाम की छोटी सी नदी बहती है। इसकी पहाड़ी की ऊंचाई समुद्रतल से 4000 फुट है। मंडल चट्टी नदी की तलहटी में बसी है। यहां से 2½ मील दूर अत्रि मुनि की पत्नी सती अनुसूया का मंदिर है। यहां से चमोली 8½ मील है। इस नदी से पुराणों में प्रख्यात बालखिल्य ऋषियों का सम्बन्ध बताया जाता है।

बालपुर (म० प्र०)

1954 में इस स्थान से जो रायगढ़ के निकट है, एक बौद्धकालीन प्रस्तर स्तंभ

के अवशेष मिले हैं जिस पर एक पाली अभिलेख उत्कीर्ण है।

बालब्रह्मेश्वर (ज़िला रायचूर, मैसूर)

यह तुगभद्रा नदी के तट पर स्थित प्राचीन तीर्थ है। इसे दक्षिण काशी भी कहते हैं क्योंकि यहा नदी के तट पर अनेक प्राचीन मन्दिर है जो प्राचीन काल से पवित्र माने जाते हैं। यहा शातवाहन, चालुक्य, राष्ट्रकूट, कलचुरि, ककातीय और विजयनगर के नरेशो ने क्रमश राज्य किया, तत्पश्चात बहमनी-सुलतानो और मुगल बादशाहो का आधिपत्य रहा। इन सबो के समय के अनक अवशेप तथा स्मारक इस स्थान पर मिले हैं। ब्रह्मेश्वर के दुग की भित्तियो पर चालुक्यो के समय का एक अभिलेख अकित है जिसमे उनके वैभव और पराक्रम का वणन है। इतिहास प्रसिद्ध चालुक्य नरेश पुलकेशिन्द्वितीय के प्रपौत्र न मई 714 ई० मे ब्रह्मेश्वर के मुख्य मदिर को तुगभद्रा के जलप्रवाह से बचाने के लिए यहा एक प्राकारबध निर्मित करवाया था। इसका निर्माता ईशानाचाय स्वामीभट्टपद था। प्राचीन काल मे ब्रह्मेश्वर म एक महाविद्यालय भी था जिसके आचाय त्रिलोचन मुनिनाथ और एकातदाशकाडीपडित ने राजसभाओ मे सम्मान प्राप्त किया था। इन्हे वीरबलजय समय नामक व्यापारिक सस्थाओ द्वारा भी आदर मिला था। ब्रह्मेश्वर के मन्दिरो के निर्माण म अजता तथा एलौरा के गुहा मदिरो की झलक भी मिलती है। अधिकाश मदिर चालुक्यकालीन है। इस समय के बारह से अधिक अभिलेख यहा मिले हैं। पश्चवर्ती शासको के समय ब्रह्मेश्वर की ख्याति पूववत ही रही यद्यपि इस काल मे अधिक मदिर न बन सके। यहा के कुछ उल्लेखनीय मदिर य है—ब्रह्मेश्वर, जोगूलबा, दतीगणेश और काल भैरव। ये मदिर वाराणसी के विश्वश्वर, विशालाक्षी, दती गणेश और कालभैरव के मदिरो क प्रतिरूप माने जाते हैं। काशी के गगातट के चौसठ घाटो की तरह ही यहा तुगभद्रा पर चौंसठ घाट बने हुए थे। यहा से आधा मील के लगभग पापनाश नामक मदिर समूह स्थित है। ब्रह्मेश्वर समूह के मदिर दुग के भीतर हैं। इनम बाल-ब्रह्मेश्वर का मदिर प्रमुख है। इनकी सरचना उत्तरभारतीय मदिरो की बनावट से भिन्न है और अजता एलौरा के शैलकृत्त मदिरा की सरचना से मिलती जुलती है। उदाहरणाथ, इन मदिरो के द्वारमडप अजता की गुफा स० (19) के मडप ही के अनुरूप हैं। मन्दिरा के गभगृह वर्गाकार और प्रदक्षिणापथ से परिवृत है। गुहामन्दिरो की भाति ही इनकी भित्तियो म प्रकाश के लिए वातायनो मे पत्थर की कटी जाली लगी है। स्तभा तथा प्रवेशद्वारो पर सुदर तक्षण दिखाई पडता है। मन्दिरो के शिखर भी असाधारण जान

पडते हैं। इनकी आकृति कुछ इस प्रकार की है कि ये छिन्नशीर्ष स्तूप के ऊपर आवृत गुंबद जैसे जान पडते हैं। बालब्रह्मेश्वर के अन्य उल्लेखनीय स्मारकों मे विजयनगर के नरेशों का बनवाया दुर्ग है जिसके प्रवेशद्वार विशाल एवं भव्य है। इसकी तीन खाइयां तथा तीस बुर्ज हैं। बाल-ब्रह्मेश्वर का नाम मुसलमानों के शासनकाल मे आलमपुर कर दिया गया था जो आज भी प्रचलित है।

बालापुर

(1) दे० सेतव्या।

(2) (जिला अकोला, महाराष्ट्र) अकोला से 14 मील दूर यह स्थान मन और म्हैस नदियों के संगम पर स्थित है। 17 वीं शती के जैन साहित्य मे इस स्थान का उल्लेख है। नदी तट पर जयपुर-नरेश सवाई जयसिंह की छत्री बनी है। इनका देहांत बुरहानपुर मे हुआ था। मुगलों के शासनकाल मे बालापुर मे कागज बनाने का कारखाना था।

बालासोर (उडीसा)

1633 ई० मे राल्फ कार्टराइट (Ralph Cart Wright) ने इस बंदरगाह तथा हरिहरपुर मे प्रथम बार अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कम्पनी की व्यापारिक कोठियां स्थापित की थी। 1658 ई० मे यह कोठी मद्रास के अधीन कर दी गई थी। बालासोर का प्राचीन नाम बालेश्वर था। फारसी मे बालासोर का अर्थ समुद्रपर स्थित नगर है।

बाली

इंडोनेशिया का, जावा के सन्निकट स्थित द्वीप जहां वर्तमान काल मे भी प्राचीन हिंदू धर्म और संस्कृति जीवित अवस्था मे है। सम्भवतः गुप्तकाल —चौथी पांचवीं शती ई० मे इस द्वीप मे हिंदू उपनिवेश एवं राज्य स्थापित हुआ था। चीन के लियांगवंश (502 556 ई०) के इतिहास मे इस द्वीप का सर्वप्रथम ऐतिहासिक उल्लेख मिलता है जहां इसे पोली कहा गया है। इस उल्लेख से विदित होता है कि बाली मे इस काल मे एक समृद्धिशाली तथा उन्नत हिंदू राज्य स्थापित था। यहां के राजा बौद्धधर्म मे भी श्रद्धा रखते थे। इस राज्य की ओर से 518 ई० मे चीन को एक राजदूत भेजा गया था। चीनी यात्री इत्सिंग लिखता है कि बाली दक्षिण समुद्र के उन द्वीपों मे है जहां मूल सर्वास्तिवाद निकाय का सर्वत्र प्रचार है। मध्य युग मे जावा व अन्य द्वीपों मे अरबों के आक्रमण हुए और प्राचीन हिंदू राज्यों की सत्ता समाप्त हो गई किंतु बाली तक अरब न पहुंच सके। फलस्वरूप यहां की प्राचीन हिंदू सभ्यता और संस्कृति व धार्मिक परंपरा वर्तमान काल तक प्रायः अक्षुण्ण बनी रही

है। 18वीं शती मे बाली पर डचो का राजनैतिक अधिकार हो गया किंतु उनका प्रभाव यहा के केवल राजनैतिक जीवन पर ही पडा और बाली निवासियो की सामाजिक और धार्मिक परपरा मे बहुत कम परिवर्तन हुआ। कहा जाता कि इस द्वीप का नाम पुराणो मे प्रसिद्ध, पातालदेश के राजा बलि के नाम पर है। बाली देश की प्राचीन भाषा को 'कवि' कहते है जो सस्कृत से बहुत अधिक प्रभावित हैं। बाली मे सस्कृत मे भी अनेक ग्रथ लिखे गए। रामायण और महाभारत का बाली के दैनिक जीवन मे आज भी अमिट प्रभाव है।

बालुकाराम

महावश 4, 150, 4, 63 के अनुसार यह विहारवन वैशाली के समीप स्थित था।

बालुकेश्वर (महाराष्ट्र)

महाबलेश्वर की पहाडी। इसका उल्लेख स्कद० सह्याद्रिखड 2, 1 मे है।

बालुगत

मझगावम (नागौद, म० प्र०) से प्राप्त 191 गुप्तसवत्=510 ई० के, परिव्राजक महाराज हस्तिन के अभिलेख (ताम्रपट्टलेख) मे बालुगत नामक ग्राम को कुछ ब्राह्मणो के लिए दान म दिए जाने का उल्लेख है। यह ग्राम मझगावम के निकट ही रहा होगा।

बालोक्ष

अवदान-कल्पतरु, 57 मे उल्लिखित है। श्री न० ला० डे के मत मे यह बिलोचिस्तान का सस्कृत नाम है।

बालोद (जिला द्रुग, म० प्र०)

कहा जाता है कि महाकोसल का प्राचीनतम सतीस्मारक इस स्थान पर है। इस पर अकित अभिलेख प्रिसेप साहब ने पहली बार पढा था। इसका समय उन्होंने दूसरी शती ई० निश्चित किया था। दूसरा लेख 1005 वि० स०=948 ई० का है जिसको सर्वप्रथम डा० हीरालाल ने पढा था।

बावडी (जिला देहरादून, उ० प्र०)

देहरादून के निकट यह रमणीक प्राचीन स्थान है जिसे न्यायदर्शनकार महर्षि गौतम की तपोभूमि माना जाता है। यहा स्फटिक श्वेत जल की बावडी होने के कारण ही इस स्थान को बावडी कहा जाता है। इसे ढकरानी भी कहते हैं।

बावनी (बुदेलखड, म० प्र०)

यह अग्रेजी शासनकाल म रियासत थी। इसका सस्थापक नवाब गाजीउद्दीन

थी। यह हैदराबाद के निजाम और दिल्ली के मुगल बादशाह का मत्री था।

था। यह हैदराबाद के निजाम और दिल्ली के मुगल बादशाह का मत्री था।
कहा जाता है जब गाजीउद्दीन अपने पिता से रुष्ट होकर दक्षिण की ओर जा
रहा था उस समय पेशवा ने उसे यह जागीर दी थी। किंतु ऐतिहासिक तथ्य
यह जान पडता है कि जब गाजीउद्दीन ने 1874 ई० मे पेशवा से सधि की तो
उसने कालपी के पास गाजीउद्दीन को बावन गावो की जागीर दी थी। इसी
जागीर ने कालातर म बावनी रियासत का रूप धारण कर लिया।

बावेरु

वेबीलोनिया का प्राचीन भारतीय नाम।

वासमत (जिला परभणी, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर खाने आलम नामक मुसलमान सत की दरगाह है।

वासर (मधोल तालुका, जिला नदेड, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर प्राचीन हिंदू काल के कई स्मारक हैं जिनमे प्रमुख सरस्वती
देवी का मदिर है।

बाह (जिला आगरा, उ० प्र०)

इसे भदावर नरेश कल्याणसिंह ने 17वी शती के अत म बसाया था।

बाहडपुर (काठियावाड, गुजरात)

शत्रुजय के निकट प्राचीन जैन तीर्थ स्थल इसका उल्लेख जैन स्त्रोत तीर्थ
माला चैत्यवदन म इस प्रकार है—'वदे सत्यपुरे च बाहडपुरे राडद्रहे वायडे'
इसकी स्थापना गुजरात नरेश कुमारपाल के मत्री वाग्भट्ट ने की थी। (दे०
मुनि ज्ञानविजय रचित गुजराती ग्रथ—जैन तीर्थानो इतिहास)

बाहुदा

महाभारत मे उल्लिखित नदी। 'ततश्च बाहुदा गच्छेद् ब्रह्मचारी समाहित
तत्रोष्य रजनीमेका स्वर्गलोके महीयते—वन० 84,67। 'बाहुदाया महीपाल चक्रु
सर्वेभिषेचनम्, प्रयागे देवयजने देवाना पृथिवीपते,' वन० 85,4। महा० शाति०
22 के अनुसार लिखित ऋषि का कटा बाहु इस नदी मे स्नान करने से ठीक
हो गया था जिससे इसका नाम बाहुदा हुआ। 'स गत्वा द्विजशार्दूल हिमवन्त
महागिरिम्, अभ्यगच्छ नदी पुण्या बाहुदा धर्मशालिनीम्'। अनुशासन० 19,28
से ज्ञात होता है कि यह नदी हिमालय से निकलती थी। यह शायद उत्तर भारत
की रामगगा है। अमरकोश मे बाहुदा को सैतवाहिनी भी कहा गया है।

बाहुमती दे० बागमती

बाह्लिक=बाह्लीक

'केराता दरदा दार्वा शूरा वै यमकास्तथा, औदुबरा दुर्विभागा पारदा

वाह्लिकै सह' महा० सभा० 52,13। वाह्लिक या वाह्लिक, वल्ख (=ग्रीक, वक्ट्रिया) का प्राचीन सस्कृत नाम है। यहा के निवासी युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ मे भेंट लेकर आए थे। महरौली लौहस्तभ के अभिलेख मे चद्र द्वारा सिंधु नदी के सप्तमुखो के पार वाह्लिको के जीते जाने का उल्लेख है—'तीर्त्वा सप्त मुखानि येन समरे सिंधोर्जिता वाह्लिका' जिससे गुप्तकाल मे वाह्लिको की स्थिति सिंध नदी के मुहाने के पश्चिम म सिद्ध होती है। जान पडता है कि इस काल मे वल्ख के निवासियो ने अपनी वस्तिया इस इलाके मे बना ली थी। महाभारत कणपव मे सभवत वाहीक नाम से वाह्लिक निवासियो का उल्लेख है—दे० वाहीक, वाह्लिक वाह्लीक, वाह्ली।

वाह्ली=वाह्लीक=वाह्लीक (वल्ख)

वाल्मीकि रामा० उत्तर० 83,3 मे प्रजापति कदम के पुत्र को वाह्ली का राजा कहा है—'श्रूयते ही पुरा सौम्य कदमस्य प्रजापते, पुत्रो वाह्लीश्वर श्रीमानिलोनाम सुधार्मिक'। महाभारत 51,26 म वाह्ली का चीन के साथ उल्लेख है—'प्रमाणरागस्पर्शाढय वाह्लीचीन समुद्भवान'—

बिंदुसर

(1) महाभारत सभा० 3 मे मैनाक पवत (कैलास के उत्तर मे स्थित) के निकट बिंदुसर सरोवर का उल्लेख है। यही असुरराज वृषपर्वा ने एक महायज्ञ किया था। इस प्रसग के अनुसार बिंदुसर के समीप मयदानव ने एक विचित्र मणिमय भाड तैयार करके रखा था। यही वरुण की एक गदा भी थी। इन दानो वस्तुआ को मयदानव युधिष्ठिर की राजसभा का निर्माण करने के पूर्व बिंदुसर से ल आया था, 'चित्र मणिमय भाड रम्य बिंदुसर प्रति, सभाया सत्यसधस्य यदासीद् वृषपवण। मन प्रह्लादिनी चित्रा सर्वरत्नविभूषिताम्, अस्ति बिंदुसरस्युग्रागदा च कुरुनदन'—सभा० 3,3 5। इसी वणन मे मयदानव के बिंदुसर तथा मैनाकपर्वत जाते समय कहा गया है कि वह इद्रप्रस्थ से पूर्वोत्तर दिशा मे और कैलास के उत्तर की ओर गया था—'इत्युक्त्वा सोऽसुर पार्थं प्रागुदीची दिश गत, अथोत्तरेण कैलासान मैनाकपवत प्रति' सभा० 3,9। इस निर्देश से यह स्पष्ट है कि बिंदुसर तथा मैनाक कलास के उत्तर मे और इद्रप्रस्थ की पूर्वोत्तर दिशा मे स्थित थे। सभवत बिंदुसर मानसरोवर या उसके निकट वर्ती किसी अन्य सरोवर का नाम होगा। वाल्मीकि रामा० बाल० 43,11 मे गगा का शिव द्वारा बिंदुसर की ओर छाडे जाने का उल्लेख है—'विससंज ततो गगा हरो बिंदुसरप्रति'। इससे भी उपयुक्त विवेचन की पुष्टि होती है।

(2) दे० सिद्धपुर

बिंबिका

भारहुत (बघेलखड, म० प्र०) से प्राप्त कुछ अभिलेखो मे उल्लिखित नदी। यह बुदेलखड की कोई नदी जान पडती है। कालिदास रचित मालविकाग्निमित्र नाटक मे 'दाक्षिण्य नाम बिंबोष्ठिवबिकाना कुलव्रतम्' (अक 4,14)—इस वाक्य म विदिशा का शासक और पुष्यमित्र शुग का पुत्र अग्निमित्र स्वय को वैबकवशीय बताता है। सभव है इसके पूवजो का बिंबिकानदी के तटवर्ती प्रदेश से सबध रहा हो। (दे० रायचौधरी—पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंशेंट इडिया—पृ० 307)

बिंबिसारपुरी

राजगृह का, मगध नरेश बिंबिसार के नाम पर प्रसिद्ध अभिधान (दे० लॉ बुद्धघोष, पृ० 87)

बिचकुद=मुचकुद (जिला नदेड, महाराष्ट्र)

किंवदती के अनुसार यह मुचकुद ऋषियो का पुण्य स्थान है। प्राचीन हिंदू नरेशो के समय के कई मदिर यहा के मुख्य स्मारक हैं।

बिजावर (बुदेलखड, म० प्र०)

किंवदती है कि बिजावर ग्राम को विजय सिंह नाम के एक गोंड सामत ने बसाया था। यह गढमडला नरेश की सेवा म था। पीछे यह स्थान महाराज छत्रसाल क अधिकार मे आ गया और तत्पश्चात् उनके उत्तराधिकारी जगतसिंह को उनके अश के रूप मे मिला। बिजावर, 1947 तक बुदेलखड की प्रख्यात रियासत थी।

बिजनौर (उ० प्र०)

गगा के वामतट पर लीलावाली घाट से तीन मील दूर छोटा सा कस्बा है। कहा जाता है कि इसे विजयसिंह ने बसाया था। दारानगर यहा से 7 मील दूर है और इतनी ही दूर विदुरकुटी। ये दोनो स्थान महाभारतकालीन बताए जाते हैं। स्थानीय जन श्रुति मे बिजनौर के निकट गगातटीय वन मे महाभारत-काल मे मयदानव का निवास स्थान था। भीम की पत्नी हिडबा मयदानव की पुत्री थी और भीम ने उससे इसी वन म विवाह किया था। यही घटोत्कच का जन्म हुआ था। नगर के पश्चिमात मे एक स्थान है जिसे हिडबा और उसके पिता मयदानव के इष्टदेव शिव का प्राचीन देवालय कहा जाता है। मेरठ या मयराष्ट्र बिजनौर के निकट गगा के उस पार है। बिजनौर के इलाके को वाल्मीकि रामायण मे प्रलब नाम से अभिहित किया गया है। नगर से आठ मील दूर मडावर है जहा मालिनी नदी के तट पर कालिदास के

अभिज्ञान शाकुंतल नाटक मे वर्णित कण्वाश्रम की स्थिति परपरा से मानी जाती है। (दे० मडावर, दारानगर) (टि० कुछ लोगो का कहना है बिजनौर की स्थापना राजा वेन ने की थी जो पखे या बीजन बेच कर अपना निजी खर्च चलाता था और बीजन से ही बिजनौर का नामकरण हुआ)।

बिजिखो (तालुका व जिला करीम नगर, आध्र)

इस स्थान पर हिंदू नरेशो के समय का प्राचीन मदिर है जिसके सभामडप के चार केंद्रीय स्तभो पर तक्षणशिल्प का सुदर काम प्रदर्शित है।

बिठूर (जिला कानपुर, उ० प्र०)

कानपुर से 12 मील उत्तर की ओर बहुत प्राचीन स्थान है जिसका मूलनाम ब्रह्मावर्त कहा जाता है। पौराणिक किंवदती है कि यहा ब्रह्मा ने सृष्टि रचने के हेतु अश्वमेधयज्ञ किया था। बिठूर को बालक ध्रुव के पिता उत्तानपाद की राजधानी भी माना जाता है। ध्रुव के नाम से एक टीला भी यहा विख्यात है। कहा जाता है कि वाल्मीकि का आश्रम जहा सीता निर्वासन काल मे रही थी, यही था। अतिम पेशवा बाजीराव जिन्हे अंग्रेजो ने मराठो की अतिम लडाई के बाद महाराष्ट्र से निर्वासित कर दिया था, बिठूर आकर रहे थे। इनके दत्तकपुत्र नानासाहब ने 1857 के स्वतत्रतायुद्ध मे प्रमुख भाग लिया। पेशवाओ ने कई सुदर इमारतें यहा बनवाई थी किंतु अंग्रेजो ने इन्हे 1857 के पश्चात अपनी विजय के मद मे नष्ट कर दिया। बिठूर मे प्रागैतिहासिक काल के ताम्रउपकरण तथा बाणफलक मिले हैं जिससे इस स्थान की प्राचीनता सिद्ध होती है।

बिदनूर (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र-केसरी शिवाजी के समय मे बिदनूर तुगभद्रा नदी के उद्गम स्थान के पास पश्चिमी घाट पर एक पहाडी राज्य था। शिवाप्पा यहा का राजा था। बीजापुर के सुलतान अलिआदिलशाह ने इस राज्य को विजय कर शिवाप्पा को अपने अधीन कर लिया किंतु एक ही वर्ष पश्चात् शिवाप्पा की मृत्यु होने पर उसका पुत्र गद्दी पर बैठा और 1676 ई० मे शिवा जी ने उसे अपना करद बना लिया। शिवाजी के समकालीन कविवर भूषण ने बिदनूर को बिधनोल लिखा है—'उत्तर पहार बिधनोल खडहर झारखडहू प्रचार चारु केली है बिरद की' शिवराज भूषण-159।

बिधनोल दे० बिदनूर

बिनसर (जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

(1) अल्मोडा से प्राय 14 मील पर प्राचीन स्थान है जहा बिनसर महादेव

बिंबिका

भारहुत (बघेलखड, म० प्र०) से प्राप्त कुछ अभिलेखो मे उल्लिखित नदी। यह बदेलखड की कोई नदी जान पडती है। कालिदास रचित मालविकाग्निमित्र नाटक मे 'दाक्षिण्य नाम बिंबोष्ठिनविकाना कुलव्रतम्' (अक 4,14)—इस वाक्य मे विदिशा का शासक और पुष्यमित्र शुग का पुत्र अग्निमित्र स्वय को बैबकवशीय बताता है। सभव है इसके पूर्वजो का बिंबिकानदी के तटवर्ती प्रदेश से सबध रहा हो। (दे० रायचौधरी—पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंशेंट इडिया—पृ० 307)

बिंबिसारपुरी

राजगृह का, मगध नरेश बिंबिसार के नाम पर प्रसिद्ध अभिधान (दे० लॉ बुद्धघोष, पृ० 87)

बिचकुद=मुचकुद (जिला नदड, महाराष्ट्र)

किंवदती के अनुसार यह मुचकुद ऋषियो का पुण्य स्थान है। प्राचीन हिंदू नरेशो के समय के कई मदिर यहा के मुख्य स्मारक हैं।

बिजावर (बुदेलखड, म० प्र०)

किंवदती है कि बिजावर ग्राम को विजय सिंह नाम के एक गोंड सामत ने बसाया था। यह गढमडला नरेश की सेवा म था। पीछे यह स्थान महाराज छत्रसाल के अधिकार म आ गया और तत्पश्चात् उनके उत्तराधिकारी जगतसिंह को उनके अश के रूप मे मिला। बिजावर, 1947 तक बुदेलखड की प्रख्यात रियासत थी।

बिजनौर (उ० प्र०)

गगा के वामतट पर लीलावाली घाट स तीन मील दूर छोटा सा कस्बा है। कहा जाता है कि इसे विजयसिंह ने बसाया था। दारानगर यहा से 7 मील दूर है और इतनी ही दूर विदुरकुटी। ये दोनो स्थान महाभारतकालीन बताए जाते हैं। स्थानीय जनश्रुति मे बिजनौर के निकट गगातटीय वन म महाभारतकाल मे मयदानव का निवास स्थान था। भीम की पत्नी हिडबा मयदानव की पुत्री थी और भीम ने उससे इसी वन म विवाह किया था। यही घटोत्कच का जन्म हुआ था। नगर के पश्चिमात म एक स्थान है जिसे हिडबा और उसके पिता मयदानव के इष्टदेव शिव का प्राचीन देवालय कहा जाता है। मेरठ या मयराष्ट्र बिजनौर के निकट गगा के उस पार है। बिजनौर के इलाके को वाल्मीकि रामायण मे प्रलब नाम से अभिहित किया गया है। नगर से आठ मील दूर मडावर है जहा मालिनी नदी के तट पर कालिदास के

अभिज्ञान शाकुंतल नाटक में वर्णित कण्वाश्रम की स्थिति परंपरा से मानी जाती है। (दे० मंडावर, दारानगर) (टि० कुछ लोगों का कहना है बिजनौर की स्थापना राजा वेन ने की थी जो पत्ते या बीजन बेच कर अपना निजी खर्च चलाता था और बीजन से ही बिजनौर का नामकरण हुआ)।

बिजिली (तालुका व जिला करीम नगर, आंध्र)

इस स्थान पर हिंदू नरेशों के समय का प्राचीन मंदिर है जिसके सभामंडप के चार केंद्रीय स्तंभों पर तक्षणशिल्प का सुंदर काम प्रदर्शित है।

बिठूर (जिला कानपुर, उ० प्र०)

कानपुर से 12 मील उत्तर की ओर बहुत प्राचीन स्थान है जिसका मूलनाम ब्रह्मावर्त कहा जाता है। पौराणिक किंवदंती है कि यहां ब्रह्मा ने सृष्टि रचने के हेतु अश्वमेधयज्ञ किया था। बिठूर को बालक ध्रुव के पिता उत्तानपाद की राजधानी भी माना जाता है। ध्रुव के नाम से एक टीला भी यहां विख्यात है। कहा जाता है कि वाल्मीकि का आश्रम जहां सीता निर्वासन-काल में रही थी, यहीं था। अंतिम पेशवा बाजीराव जिन्हें अंग्रेजों ने मराठों की अंतिम लड़ाई के बाद महाराष्ट्र से निर्वासित कर दिया था, बिठूर आकर रहे थे। इनके दत्तकपुत्र नानासाहब ने 1857 के स्वतंत्रतायुद्ध में प्रमुख भाग लिया। पेशवाओं ने कई सुंदर इमारतें यहां बनवाई थीं किंतु अंग्रेजों ने इन्हें 1857 के पश्चात् अपनी विजय के मद में नष्ट कर दिया। बिठूर में प्रागैतिहासिक काल के ताम्रउपकरण तथा बाणफलक मिले हैं जिससे इस स्थान की प्राचीनता सिद्ध होती है।

बिदनूर (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र-केसरी शिवाजी के समय में बिदनूर तुंगभद्रा नदी के उद्गम स्थान के पास पश्चिमी घाट पर एक पहाड़ी राज्य था। शिवाप्पा यहां का राजा था। बीजापुर के सुलतान अलिआदिलशाह ने इस राज्य को विजय कर शिवाप्पा को अपने अधीन कर लिया किंतु एक ही वर्ष पश्चात् शिवाप्पा की मृत्यु होने पर उसका पुत्र गद्दी पर बैठा और 1676 ई० में शिवा जी ने उसे अपना करद बना लिया। शिवाजी के समकालीन कविवर भूषण ने बिदनूर को बिधनोल लिखा है—'उत्तर पहार बिधनोल खडहर झारखंडहू प्रचार चारु केली है बिरद की' शिवराज भूषण-159।

बिधनोल दे० बिदनूर

बिनसर (जिला अल्मोड़ा, उ० प्र०)

(1) अल्मोड़ा से प्राय 14 मील पर प्राचीन स्थान है जहां बिनसर महादेव

का पुराना मंदिर स्थित है।

(2) (जिला गढवाल, उ० प्र०) पौडी से 42 मील पूर्व स्थित है। प्राचीन नाम विश्वेश्वर कहा जाता है। 7वीं से 12वीं शती तक यहा बहुत सुदर मूर्तिया बनती थी जिनकी कला का मुख्य तत्व सजीवता तथा भाव प्रवणता है। अलकरण तथा बाहरी सजावट को यहा की कला मे अधिक महत्व नहीं दिया जाता था।

बिमाकाली (जिला रामपुर, हिमाचल प्रदेश)

प्राचीन भारत भोट शैली म निर्मित लकडी के बने हुए सुदर मदिर के लिए यह स्थान ख्याति प्राप्त है।

बियास=विपाशा

बिलग्राम (जिला हरदोई, उ० प्र०)

यह कस्बा प्राचीन श्रीनगर या भिल्लग्राम नाम के नगर के खडहरो पर बसा है। इल्तुतमिश के जमाने मे इस पर मुसलमानो का कब्जा हो गया। बिलग्राम मे विद्वान मुसलमानो की परपरा रही है। इनमे स कई न हिंदी कविता भी लिखी है। पश्चमध्ययुगीन काल म ऐसे ही कवि मीर जलील हुए हैं जिन्होंने एक बरवैछद मे अपना परिचय लिखत हुए कहा है बिलग्राम को बासी मीर जलील, तुम्हरि सरन गहि गाहै ह निधिशील'।

बिलपक (म० प्र०)

भूतपूर्व रियासत रतलाम के अतगत है। यहा पूव मध्यकालीन इमारतो के अवशेष हैं।

बिलसड (जिला एटा, उ० प्र०)

इस स्थान पर गुप्त सम्राट कुमारगुप्त के शासन काल 96 गुप्तसवत= 415 ई० का एक स्तभ लेख प्राप्त हुआ है। इसमे ध्रुवशमन द्वारा, स्वामी महासेन (कार्तिकेय) के मदिर के विषय मे किए गए कुछ पुण्य कार्यों का विवरण है—सीढियो सहित प्रतोली या प्रवेशद्वार का निर्माण, सत्र या दान शाला की स्थापना और अभिलेख वाले स्तभ का निर्माण। सभवत चीनी-यात्री युवानच्वाग ने इस स्थान का पिलोशना या बिलासना नाम से उल्लेख किया है। वह यहा 642 643 ई० म आया था।

बिलहरी (म० प्र०)

कटनी से 9 मील दूर है। किंवदती म बिलहरी का प्राचीन पुष्पावती बताया जाता है और इसका सबध माधवानल और कामकदला की प्रेम गाथा स जोडा गया है। यह कथा पश्चिम भारत म 17वीं शती तक काफी प्रख्यात थी किंतु, इस कथा की पुष्पावती नगानट पर बताई गई है जो बिल्हरी स अवश्य

ही भिन्न थी। हमारे अभिमान के अनुसार वाचक कुशललाभ रचित माधवानल कथा मे वर्णित पुष्पावती जिला बुलदशहर (उ० प्र०) मे गगातट पर बसी हुई प्राचीन नगरी 'पूठ' है। किंतु बिलहरी का भी नाम पुष्पावती हो सकता है क्योंकि तरणतारण स्वामी के अनुयायी भी बिलहरी का अपने गुरु का जन्मस्थान पुष्पावती मानते हैं। बिलहरी मे प्रवेश करते ही एक विशाल जलाशय तथा एक पुरानी गढी दिखाई पडती है। यह जलाशय—लक्ष्मणसागर—नोहलादेवी के पुत्र लक्ष्मणराज ने बनवाया था जैसा कि नागपुर-सग्रहालय म सग्रहीत एक अभिलेख से सूचित होता है। गढी सुदृढ बनी है और लोकोक्ति के अनुसार चदेल नरेशो के समय की है। बिलहरी तथा निकटवर्ती प्रदेश पर, कलचुरियो की शक्ति क्षीण होने पर चदलो का राज्य स्थापित हुआ। 1857 के स्वतत्रता युद्ध म इस गढ़ी पर सैकडा गोले पडने पर भी इसका बाल बाका न हुआ। लक्ष्मणराज का बनवाया हुआ एक मठ भी यहा का उल्लेखनीय स्मारक है किंतु कुछ विद्वानो के मत म यह मुगलकालीन है। बिलहरी म कलचुरिकालीन सकडो सुन्दर मूर्तिया प्राप्त हुई हैं। ये हिंदूधम के सभी सप्रदायो से सबधित हैं। एक विशिष्ट अवशेष बिलहरी से प्राप्त हुआ है, वह है मधुच्छत्र जो एक लबे वग पट्ट के रूप में है। यह परिमाण मे 94"×94" है। इसके बीच म कमल की सुदर आकृति है जिसके चार विस्तृत भाग हैं। इस पर सूक्ष्म तक्षण किया हुआ है। विचार किया जाता है कि यह छत्र शायद पहले किसी मदिर की छत मे आधार रूप से लगा होगा। इसे महाकोसल की महान प्राचीन शिल्पकृति माना जाता है।

बिलाडा (जिला जोधपुर, राजस्थान)

जोधपुर के निकट अति प्राचीन स्थान है जो नवदुर्गावतार भगवती आई माता के मदिर के लिए प्रसिद्ध है। जिस प्रकार उदयपुर या मेवाड के महाराणा अपने आराध्य देव एकलिंग भगवान के दीवान कहे जाते थे उसी प्रकार मारवाड की सीखी जाति के नेता आई माता अथवा आई जी के दीवान कहलाते थे। इस दीवान वश के कई वीर और सत्यव्रती पुरुष मारवाड के इतिहास मे प्रसिद्ध हैं।

बिलारी (मद्रास)

प्राचीन नाम बल्लारी या बलिहारी कहा जाता है। एक प्राचीन दुग यहा स्थित है।

बिलासपुर दे० बिलासपुर (1), (2)

बिलुनीतीर्थ

रामेश्वरम् (मद्रास) के निकट, उत्तर समुद्र के तट पर स्थित है। यहा

सीताकुड नामक एक कूप है जिसके विषय मे लोकोक्ति है कि भगवान् राम ने सीता को प्यास लगने पर धनुष की नोक से भूमि को दबाकर यहा जल का स्रोत प्रकट कर दिया था।

बिल्लोली (मधाल तालुका, जिला नदेड, महाराष्ट)

शाहजहा के शासनकाल म (1645 ई०) बनी हुई सरफराज खा के नाम पर प्रसिद्ध मसजिद के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

बिल्वक

महाभारत अनुशासन० 25,13 मे तीर्थों के वणन मे इस तीथ को हरद्वार तथा कनखल के निकट माना है—'गगाद्वारे कुशावर्ते बिल्वके नीलपवते, तथा कनखले स्नात्वा धूतपाप्मा दिव व्रजेत्'। यह स्थान निश्चय ही वतमान बिल्वकेश्वर महादेव है जो हरद्वार म, स्टेशन की सडक पर ललतारो के पुल से दो फर्लांग दूर है। यहा पहाड मे प्राचीन गुफाए हैं। बिल्ववृक्ष के कारण इस स्थान को बिल्वक कहते थे।

बिल्वकेश्वर दे० बिल्वक

बिल्वाम्रक (म० प्र०)

नमदा और कुब्जा नदियो के सगम पर स्थित प्राचीन तीथ। इसे अब रामघाट कहते है। किवदती है कि राजा रतिदेव ने इस स्थान पर महायज्ञ किया था।

बिल्वेश्वर (काठियावाड, गुजरात)

इस स्थान पर पहुचने के लिए पोरबदर से 17 मील दूर साखूपुर से माग जाता है। यह तीथ महाभारतकालीन बताया जाता है तथा किवदती के अनुसार श्रीकृष्ण न यहा शिव की आराधना की थी।

बिसपी (जिला दरभगा, बिहार)

बागमती नदी के तट पर बसा हुआ प्राचीन ग्राम जो मैथिल कोकिल विद्यापति का जन्म स्थान है। इनका जन्म 14वी शती के मध्य म हुआ था।

बिसरण (जिला मेरठ, उ० प्र०)

गाजियाबाद से 8 मील पर स्थित है। लोकश्रुति म इसे रावण के पिता विश्रवा ऋषि का आश्रम माना जाता है। विश्रवा के आराध्य देव शिव का एक मदिर भी यहा है जिसे शिवाजी द्वारा बनवाया हुआ कहा जाता है। कहते हैं कि दक्षिण से आगरा जाते समय शिवाजी इस स्थान पर भी आए थे।

बिसौली (जिला बदायू उ० प्र०)

इस स्थान से ताम्रयुग के महत्वपूण प्रागैतिहासिक अवशेष प्राप्त हुए हैं।

बिस्वा (जिला सीतापुर, उ० प्र०)

कहा जाता है कि 1350 ई० मे विश्वनाथ नाम के सत ने इस नगर को बसाया था और उसी के नाम पर यह प्रसिद्ध भी है। महमूद गजनी के भतीजे सालार मसूद के अनुयायियो के कई मकबरे यहा हैं जिनमे हकरतिया का रौज़ा प्रसिद्ध है। जलालपुर के तालुकेदार मुमताज हुसैन न शाहजहा के शासनकाल मे यहा एक मसजिद बनवाई थी जो अब भी विद्यमान है। यह ककर के विशालखडो से निर्मित की गई थी। मसजिद की मीनारो मे हिंदू कला की छाप स्पष्ट दिखाई देती है।

बिहार

(1) (बिहार) इस नगर का प्राचीन नाम उद्दडपुर या ओदतपुरी है। बगाल के प्रथम पाल नरेश गोपाल ने यहा एक महाविद्यालय स्थापित किया था जिसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक थी। तत्पश्चात् मुसलमानो के शासनकाल मे यह नगर बिहार के सूबे का मुख्य नगर बन गया। पाटलिपुत्र का गौरव हूणो के आक्रमण के समय, छठी शती ई० मे, नष्ट हो चुका था इसलिए बिहार नगर को ही मुसलमानो ने सूबे के शासन का मुख्य केंद्र बनाया। 1541 ई० मे पाटलिपुत्र या पटने की अपेक्षाकृत सुरक्षित स्थिति की महत्ता समझते हुए शेरशाह ने प्रात की राजधानी पुन पटने मे बनाई। बिहार मे गुप्तसम्राट् स्कदगुप्त के समय का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था। इसमे वट नामक ग्राम म स्कदगुप्त के किसी मत्री (जिसकी बहिन का विवाह कुमारगुप्त से हुआ था) द्वारा एक यूप की स्थापना का उल्लेख है

(2) बिहार के प्रात का नाम। स्थूल रूप से यह प्राचीन मगध है। बौद्ध बिहारो की यहा बहुतायत होने के कारण ही इस प्रदेश का नाम बिहार हो गया था। यह नाम मध्यकालीन है।

(3) (म० प्र०) पूव मध्यकालीन इमारतो के लिए यह कस्बा उल्लेखनीय है।

बिहारोइल (जिला राजशाही, बगाल)

इस स्थान से बुद्ध की एक मूर्ति प्राप्त हुई थी जिसका निर्माण मूर्तिकला की बनारस शैली के अनुसार हुआ है। श्री दयाराम साहनी का विचार था कि यह मूर्ति वास्तव मे बनारस मे ही बनी थी और वहा से किसी प्रकार बगाल पहुची होगी। किंतु श्री राखाल दास बनर्जी का कथन है कि मूर्ति का पत्थर चुनार का बलुआ पत्थर नहीं है जिससे बनारस की मूर्तिया बनती थी (एज ऑव दि इम्पीरियल गुप्ताज़, पृ० 170) किंतु यह तो स्पष्ट ही है कि मूर्ति का निर्माण

वनारस शैली मे ही हुआ है। इस तथ्य से वनारस की मूर्तिकला के विस्तृत प्रसार क वारे मे जानकारी मिलती है। गुप्तशासनकाल म वनी हुई अधिकाश वुद्ध की मूर्तिया वनारस शैली के अतगत मानी जाती है।

बीका पहाडी (राजस्थान)

चित्तौड के दुग के वाहर एक पहाडी, जहा 1533 ई० म गुजरात के सुलतान वहादुरशाह तथा चित्तौड नरेश विक्रमाजीत की सेनाओ मे मुठभेड हुई थी। वहादुरशाह के तोपची लावरीखा ने पहाडी के नीचे सुरग खादकर उसम वारूद भरकर पचास हाथ लवी जमीन उडा दी जिससे वहा स्थित राजपूत मोर्चे के सैनिका का पूण सहार हो गया। इसी युद्ध म वीरागना जवाहरबाई वहादुरी से लडती हुई मारी गई थी। चित्तौड के प्रसिद्ध साको मे यह युद्ध द्वितीय साका माना जाता है जिसम तेरह हजार राजपूत रमणिया ने अपने सतीत्व की रक्षाथ चिता म जलकर अपने प्राणा को होम दिया था।

बीकानेर

इस नगर को जोधपुर राज्यवश के एक उत्तराधिकारी राव बीका न वसाया था।

बीजबहेरा (कश्मीर)

श्रीनगर से 28 मील पर स्थित है। इस स्थान पर एक अति प्राचीन चिनार वृक्ष है। कहते है कि यही वृक्ष पहले पहल ईरान से कश्मीर लाया गया था। चिनार कश्मीर का प्रसिद्ध सुदर वक्ष है। वीज वहरा का चिनार कश्मीर के चिनारो का आदिजनक माना जाता है। इस वृक्ष का तना भूमितल पर 54 फुट है किंतु अव यह वृक्ष अदर से खाखला हो गया है। इस एतिहासिक वृक्ष स भारत-ईरान के प्राचीन सवधा के वारे म सूचना मिलती है।

बीजवाड (म० प्र०)

पूव मध्यकालीन इमारता के खडहरा के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

बीजागढ (म०प्र०)

पूव मध्यकालान इमारतो के अवशेषा क लिए यह स्थान ख्याति प्राप्त है।

बीजापुर (मैसूर)

शोलापुर हुबली रेलपथ पर शोलापुर से 68 मील दूर स्थित है। नगर का प्राचीन नाम विजयपुर कहा जाता है। 11वी शती के बौद्ध अवशेप हाल ही को खोज म यहा प्राप्त हुए हैं जिससे इस स्थान का इतिहास पूव मध्यकाल तक जा पहुचता है। किंतु बीजापुर का जो अव तक ज्ञात इतिहास है वह प्राय 1489 ई०

से 1686 तक के काल के अदर ही सीमित है। इन दो सौ वर्षों म बीजापुर म आदिलशाही वश के सुलतानो का आधिपत्य था। इस वश का प्रथम सुलतान युसुफ था जो अलतूनिया का निवासी था। इसने बहमनी राज्य के नष्टभ्रष्ट होने पर यहा स्वाधीन रियासत स्थापित की। बीजापुर का निर्माण तालीकोट के युद्ध (1556 ई०) के पश्चात् विजयनगर के ध्वसावशेषो की सामग्री से किया गया था। आदिलशाही सुलतान शिया थे और ईरान की सस्कृति के प्रेमी थे। इसीलिए उनकी इमारतो मे विशालता और उदारता की छाप दिखाई पडती है। मराठो और शिवाजी की ऐतिहासिक गाथाओ के सबध मे बीजापुर का नाम बराबर सुनाई देता है। बीजापुर के सुलतान की सेनाओ को कई बार शिवाजी ने परास्त करके अपने छिने हुए किले वापस ले लिए थे। बीजापुर के सरदार अफजलखा को प्रतापगढ के किले के पास शिवाजी ने बडे कौशल से मारकर मराठा इतिहास मे अभूतपूर्व ख्याति प्राप्त की थी। 1686 ई० मे मुगल सम्राट औरगजेब ने बीजापुर की स्वतत्र राज्यसत्ता का अत कर दिया और तत्पश्चात बीजापुर मुगलसाम्राज्य का एक अग बन गया। बीजापुर मे आदिलशाही शासन के समय की अनेक उल्लेखनीय इमारते है जो उसकी तत्कालीन समृद्धि की परिचायक है। यहा की सभी इमारते प्राचीन किले या पुराने नगर के अदर स्थित हैं। गोलगुबज मुहम्मद आदिलशाह (1627-1657) का मकबरा है। इसके फर्श का क्षेत्रफल 18337 वर्गफुट है जो रोम के पेंथियन के क्षेत्रफल से भी बडा है। गुबद का भीतरी व्यास 125 फुट है। यह रोम के सेंट पीटर गिर्जे के गुबद से कुछ ही छोटा है। इसकी ऊचाई फर्श से 175 फुट है और इसकी छत म लगभग 130 फुट वर्ग स्थान घिरा हुआ है। इस गुबद का चाप आश्चर्यजनक रीति से विशाल है। दीवारो पर इसके धक्के की शक्ति को कम करने के लिए गुबद म भारी निलबित सरचनाए बनी हैं जिसस गुबद का भार भीतर की ओर रह। यह गुबद शायद ससार की सबसे बडी उपजाप वीथि (Whispering gallery) है जिसम सूक्ष्म शब्द भी एक सिरे से दूसरे तक आसानी से सुना जा सकता है। इब्राहीम द्वितीय (1580 1627) का रौजा मलिक सदल नामक ईरानी वास्तु विशारद का बनाया हुआ है। गोलगुबज के विपरीत इसकी विशेषता विशालता अथवा भव्यता म नही वरन पत्थर की सूक्ष्म कारीगरी तथा तक्षणशिल्प म है। इसम खिडकियो की जालिया अरबी अक्षरो के रूप म काटी गई है और गुबद की छत ऐसी बनाई गई है जिसस ऐसा प्रतीत होता है कि इसमे जो पत्थर लगे है वे बिना किसी आधार के टिके हैं। कुछ वास्तुविदो का कहना है कि भवन का निर्माणशिल्प सर्वोत्कृष्ट कोटि का है।

जामा मसजिद 1576 ई० म बननी शुरू हुई थी। 1686 ई० मे औरगजेब ने इसमे अभिवृद्धि की किंतु यह अपूर्ण ही रह गई है। इसके फर्श मे 2250 आयत बने हैं। इसकी लबाई 240 फुट और चौडाई 130 फुट है। इसमे लबे बल मे पाच और चौडे बल मे 9 दालान हैं। मध्य का स्थान विशाल गुबद से ढका है जिसकी भीतरी चौडाई 96 फुट है। प्रागण पूर्व पश्चिम 187 फुट है। इसमें उत्तरदक्षिण की ओर एक बरामदा है। पूर्व के कोने म दो मीनारें बनाइ जाने वाली थी किंतु केवल उत्तरी मीनार ही प्रारभ हा सकी। गगन महल (1561 ई०) का केंद्रीय चाप भी 61 फुट चौडा है किंतु यह इमारत अब खडहर हो गई है। इसकी लकडी की छत को मराठो ने निकाल लिया था। असर मुबारक महल भी मुख्यत काष्ठनिर्मित है। सम्मुखीन भाग खुला हुआ है। छत दो काष्ठ-स्तभो पर आधारित है। इसके भीतर भी लकडी का अलकरण है और चित्रकारी की हुई है। मिहतर महल म जा एक मसजिद का प्रवेश द्वार है, पत्थर की नक्काशी का सुदर काम प्रदर्शित है। खिडकियो के पत्थरो पर अनोखे बेल बूटे और कगनियो क आधार पाषाणो पर मनोहर नक्काशी, इस भवन की अन्य विशेषताए हैं। बीजापुर की अन्य इमारतो म बुखारा मसजिद अदालत महल, याकूत दबाली की मसजिद, खवास खा की दरगाह और मसजिद, छोटा चीनी महल और अश महल उल्लेखनीय हैं। बीजापुर की वास्तुकला आगरा और दिल्ली की मुगलशैली से भिन्न है किंतु मौलिकता और निर्माण-कौशल मे उससे किसी अश मे न्यून नही। यहा की इमारतो मे हिंदू प्रभाव लगभग नही के बराबर है किंतु इरानी निर्माण शिल्प की छाप इनकी विशाल तथा विस्तीर्ण सरचनाओ म स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

बीड दे० भीड

बीदर

भूतपूर्व हैदराबाद रियासत का प्रसिद्ध नगर जिसका नाम विदभ का अपभ्रश है। महाभारत तथा प्राचीन सस्कृत साहित्य के अन्य ग्रथो मे विदभ का अनेक बार वणन आया है। विदभ म आधुनिक बरार तथा खानदेश (महाराष्ट्र) सम्मिलित थे किंतु विदभ का नाम अब बीदर नामक नगर के नाम मे ही अवशिष्ट रह गया है (दे० विदभ)। दक्षिण के उत्तरकालीन चालुक्यो (शासन काल 974-1190 ई०) की राजधानी जिला बीदर मे स्थित कल्याणी नाम की नगरी थी। विक्रमादित्य चालुक्य के राजकवि बिल्हण ने अपने विक्रमाक देवचरित मे कल्याण की प्रशसा के गीत गाए हैं और उसे ससार की सवश्रेष्ठ नगरी बताया है। 12वी शती मे चालुक्य राज्य छिन्न भिन्न हो गया और

उसके पश्चात बीदर के इलाके मे यादवो तथा ककातीय राजाओ का शासन स्थापित हो गया। इस शती के अतिम भाग म बिज्जल ने जो कलचुरिवश का एक सैनिक था, अपनी शक्ति वढाकर चालुक्यो की राजधानी कल्याणी म स्वतत्र राज्य स्थापित किया। 1322 ई० म मुहम्मद तुगलक ने जो अभी तक जूना के नाम से प्रसिद्ध था बीदर पर आक्रमण करके उसे अपने अधिकार म कर लिया। 1387 ई० मे मुहम्मद तुगलक का दक्षिण का राज्य छिन्न भिन्न हो जाने पर हसन गगू नामक सरदार ने दौलताबाद और बीदर पर अधिकार करके बहमनी राजवश की नीव डाली। 1423 ई० मे बहमनी राज्य की राजधानी बीदर मे बनाई गई जिसका कारण इस की सुरक्षित स्थिति तथा स्वास्थ्यकारी जलवायु थी। बीदर नगर दक्षिण भारत के तीन मुख्य भागो—अर्थात कर्नाटक, महाराष्ट्र और तेलगाना से समानरूप से निकट था तथा इसकी स्थिति 200 फुट ऊचे पठार पर होने से प्रतिरक्षा का प्रबध भी सरलतापूवक हो सकता था। इसके अतिरिक्त नगर मे स्वच्छ पानी के सोते थे तथा फलो के उद्यान भी। 1492 ई० मे बहमनी राज्य के विघटन के पश्चात् बीदर मे बरीदशाही वश के कासिम बरीद ने स्वतत्र सत्ता स्थापित कर ली। यहा का पहला शाह अली बरीद हुआ (1549 ई०)। 1619 ई० मे इब्राहीम आदिलशाह ने बीदर को बीजापुर मे मिला लिया किंतु 1656 ई० मे औरगजेब ने आदिलशाही सुलतान का हो अत कर दिया और बीदर को 27 दिन के घेरे के पश्चात सर कर लिया। बीदर पर मुगलो का आधिपत्य 18वी शती के मध्य तक रहा जब इसका विलयन निजाम की नई रियासत हैदराबाद मे हो गया।

बरीदशाही वश का सस्थापक क़ासिम बरीद जार्जिया का तुर्क था। यह सुदर हस्तलेख लिखता था तथा कुशल सगीतज्ञ था। अली बरीद जो बीदर का तीसरा शासक था अपने चातुय के कारण रूब ए दकन (दक्षिण की लोमडी) कहलाता था। बीदर के इतिहास मे अनेक किंवदतिया तथा पीर, जिनो तथा परियो की कहानियो का मिश्रण है। यहा सुलतानो के मकबरो के अतिरिक्त मुसलमान सतो की अनेक समाधिया भी हैं। बीदर नगर मजीरा नदी के तट पर स्थित है। यहा के ऐतिहासिक स्मारको मे सबसे अधिक सुदर अहमदशाह वली का मकबरा है। इसमे दीवारो और छतो पर सुदर फारसी शैली की नक्काशी की हुई है तथा नीली और सिंदूरी रग की पार्श्वभूमि पर सूफी दशन के अनेक लेख अकित हैं। इन लेखो पर तत्कालीन हिंदू भक्ति तथा वेदात की भी छाप है। इसी मकबरे के दक्षिण की ओर की भित्ति पर 'मुहम्मद' और 'अहमद' ये दो नाम हिंदू स्वस्तिक चिन्ह के रूप मे लिखे हुए हैं। बीदर के दो

पुराने मकबरे जो अत्याचारी शासक हुमायू और मुहम्मद शाह तृतीय के स्मारक थे, बिजली गिरने से भूमिसात् हो गए थे। बीदर के क़िले का निर्माण अहमद शाह वली ने 1429 1432 ई० मे करवाया था। पहले इसके स्थान पर हिंदू कालीन दुग था। मालवा के सुलतान महमूद खिलजी के आक्रमण के पश्चात् इस किले का जीर्णोद्धार निज़ाम शाह बहमनी ने करवाया था (1461-1463)। किले के दक्षिण म तीन, उत्तर पश्चिम म दो और शेष दिशाओ मे केवल एक खाई है। दीवारो म सात फाटक हैं। किले के अदर कई भवन हैं, (1) रंगीन महल—इसमे ईंट, पत्थर और लकडी का सुदर काम दिखाई देता है। गढे हुए चिकने पत्थरो मे सीपियां जडी हुई हैं। वास्तुक्रम बहमनी और बरीदी काल का है। (2) तुर्कीशमहल—किसी बहमनी सुलतान की बेगम के लिए बनवाया गया था। इसमे भी बरीदकला की छाप है, (3) गगन महल, इसे बहमनी सुलतानो ने बनवाया और बरीदी शासको ने विस्तृत करवाया था, (4) जाली-महल, यह सभागृह था। इसम पत्थर की सुदर जाली है, (5) तख्त महल, इसका निर्माता अहमदशाहवली था। यह महल अपने भव्य सौंदय के लिए प्रसिद्ध था, (6) हजार कोठरी, यह तहखानो के रूप मे बनी हैं, (7) सोलहखभा मसजिद, यह सोलह खभो पर टिकी है। 1656 ई० म दक्षिण के सूबेदार शाहज़ादा औरंगजेब ने इसी मसजिद म शाहजहा के नाम से खुतबा पढा था। यह भारत की विशाल मसजिदो मे है। एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि इसे कुबली सुलतानी ने सुल्तान मुहम्मद बहमनी के शासन काल म बनवाया था, (8) वीर सगैया का प्राचीन शिवमदिर, यह किले के अदर हिंदूकालीन स्मारक है। किंवदती के अनुसार विजयनगर की लूट मे लाई हुई अपार धन राशि इस किले मे कहीं छिपा दी गई थी किंतु इसका रहस्य अभी तक प्रकट न हो सका है। बीदर के अन्य स्मारक ये हैं—चौबारा, यह किसी प्राचीन मदिर का दीपस्तभ है किंतु इसकी कला मुसलिम-कालीन जान पडती है। महमूद गवा का मदरसा, यह बहमनी काल की सबसे अधिक प्रभावशाली इमारत है। और वास्तव म स्थापत्य तथा नक्शे की सुदरता की दृष्टि से भारत की ऐतिहासिक इमारतो म अद्वितीय है। इस मदरसे का बनाने वाला स्वय महमूद गवा था जो बहमनी राज्य का परम बुद्धिमान् मत्री था। यह विद्यानुरागी तथा कलाप्रेमी था। यह मदरसा तत्कालीन समरकद के उलुग बेग के मदरसे की अनुकृति मे बनवाया गया था। इस भवन की मीनारें गोल तथा बहुत भव्य जान पडती हैं। प्रवेशद्वार भी बहुत विशाल तथा शानदार थे किंतु अब नष्ट हो गए हैं। महमूद गवा का मकबरा, यह बीदर से 2½ मील दूर नीम के पेडो की छाया म स्थित है। प्रतिकूल परिस्थितियो के कारण यह

मकबरा महमूद गवा के प्रभावशाली व्यक्तित्व के अनुरूप न बन सका था पर मध्य युग के इस महापुरुष की स्मृति को सुरक्षित रखने के लिए काफी है। गवा के मदरसे से कुछ दूर एक प्रवेशद्वार है जिसके अदर एक भवन दिखाई देता है। इसको तख्त ए किरमानी कहा जाता है क्योकि इसका सबध सत खलीलुल्लाह से बताया जाता है। इसके स्तभ हिंदू मदिरो के स्तभो की शैली म बने हैं। बीदर से प्राय 2 मील दूर अष्टूर नामक स्थान के निकट बहमनीकालीन आठ मकबरे हैं। इनम अलाउद्दीनशाह (मृत्यु 1436 ई०) का मकबरा असली हालत म बहुत शानदार रहा होगा। बीदर के बरीदी सुलतानो के मकबरे बीदर से दस फर्लांग की दूरी पर है। इनम अली बरीद (1542-1580) का स्मारक अपने समानुपाती सौंदर्य और सम्मिति के लिए बेजोड कहा जाता है। कुछ विद्वानो का विचार है कि बहमनी काल के मकबरो की भारी भरकम शैली इस मकबरे की कला म परिवर्तित रूप मे आई है किंतु अ य लोगो का मत है कि इस स्मारक का भारी गुबद और सकीण आधार दोषरहित नही है। मकबरे की दीवारो पर फारसी कवि अतर के शेर खुदे ह। 1604 ई० में औरगजेब के शासनकाल मे अब्दुलरहमान रहीम की बनाई हुई काली मसजिद काले पत्थर की बनी शानदार इमारत है। फखरुल मुल्क जिलानी का मकबरा एक विशाल, ऊचे चबूतरे पर बना है। नाई का मकबरा दिल्ली के सुल्तानो के मकबरो की शैली पर बना है। उदगीर मार्ग पर स्थित कुत्ते का मकबरा उसी कुत्ते से सबधित है जिसका उल्लेख इतिहासलेखक फरिश्ता न अहमदशाहवली के साथ किया है। उदगीर जाने वाली प्राचीन सडक पर चार स्तभ है जिन्ह रनखभ कहा जाता है। दो खभे एक स्थान पर और दो 591 गज की दूरी पर स्थित हैं। कहा जाता है कि ये स्तभ बरीदी सुलताना के मकबरो की पूर्वी ओर पश्चिमी सीमाए निर्धारित करते थे।

बीना

मध्यप्रदेश की एक नदी जिसके तट पर एरण या प्राचीन एरकिण बसा हुआ है। बीना नामक क़स्बा भी इसी नदी के तट पर स्थित है।

बीनाजी (बुदेलखड, म० प्र०)

मध्यकालीन बुदलखड की वास्तुकला के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

बीसलपुर दे० देवल

बीहट (बुदेलखड)

यमुना नदी के पश्चिम मे साठ मील दूर इस स्थान पर यौधेय गणराज्य के

सिक्के मिले हैं जो इस स्थान की प्राचीनता के सूचक हैं।

बुंदेलखंड

उत्तर प्रदेश के दक्षिण और मध्यप्रदेश के पूर्वोत्तर का पहाडी इलाका जिसमे पूर्व स्वातंत्र्य युग मे अनेक छोटी बडी रियासतें थी। बुदेलखड बुदेल राजपूतो के नाम पर प्रसिद्ध है जिनके राज्य की स्थापना 14वी शती मे हुई थी। बुंदेलो का पूर्वज पचम बुदेला था। बुदेलखड का प्राचीनतम नाम जुझोति या यजुर्होती था। श्री गोरेलाल तिवारी का मत है कि बुदेलखड नाम विध्येलखड का अपभ्रश है। (दे० बुदेलखड का सक्षिप्त इतिहास)

बुकेफेला

इस नाम का नगर यवनराज अलक्षेंद्र (सिकन्दर) ने 326 ई० मे झेलम नदी के किनारे बसाया था। बुकेफेला अलक्षेंद्र के प्रिय घोडे का नाम था और भारतीय वीर पुरु या पोरस क साथ युद्ध के पश्चात् इस घोडे की मृत्यु इसी स्थान पर हुई थी। घाडे की स्मृति मे ही इस नगर का नाम बुकेफेला रखा गया था। विंसेंट स्मिथ के अनुसार यह वतमान झेलम नाम के नगर (पा० पाकि०) के स्थान पर बसा हुआ था और इसके चि ह नगर के पश्चिम की ओर एक विस्तृत टीले के रूप म आज भी देखे जा सकते है (दे० अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया, पृ० 75)

बुद्धगया=बोधिगया

बुरहानपुर (महाराष्ट्र)

ताप्ती नदी के तट पर खानदेश का प्रख्यात नगर है। जो 14वी शती मे खानदेश के एक सुलतान शेख बुरहानुद्दीन वली के नाम पर बसाया गया था। शाहजहा की प्रिय बेगम मुमताज की मृत्यु इसी स्थान पर हुई थी और उसका शव यहा से आगरे ले जाया गया था। शाहजहा तथा औरगजेब के समय मे बुरहानपुर दकन के सूबे का मुख्य स्थान था। मराठो ने बुरहानपुर को अनेक बार लूटा था और बाद मे इस प्रात से चौथ वसूल करने का हक भी मुगल सम्राट् से प्राप्त कर लिया था।

बुर्रिदबुनेर दे० वृदारक

बुलदशहर (उ० प्र०)

कालिंदी नदी के दक्षिणी तट पर है। अहार के तोमर सरदार परमाल न इसे बसाया था। पहले यह स्थान बनछटी कहलाता था। कालातर म नागो के राज्यकाल म इसका नाम अहिवरण भी रहा। पीछे इस नगर को ऊचनगर कहा जाने लगा क्योकि यह एक ऊचे टीले पर बसा हुआ था। मुसलमानो के

शासनकाल मे इसी का पर्याय बुलदशहर नाम प्रचलित कर दिया गया। यहा अलक्षेद्र के सिक्के मिले थे। 400 से 800 ई० तक बुलदशहर के क्षेत्र मे कई बौद्ध बस्तिया थी। 1018 ई० म महमूद गजनवी ने यहा आक्रमण किया था। उस समय यहा का राजा हरदत्त था।

बुलिय, बुल्लिय

बौद्धकालीन गणराज्य जिसकी स्थिति पूर्वी उत्तरप्रदेश या बिहार म थी। यहा के क्षत्रियो का वणन पाली साहित्य म अनेक स्थानो पर है। धम्मपद टीका (हार्वर्ड ओरियटल सिरीज, 28, पृ० 247) मे अल्लकप्प को ही बुलियो की राजधानी कहा गया है। अल्लकप्प वेठद्वीप या वेतिया (जिला चपारन) के निकट था। किंतु यह अभिज्ञान निश्चित रूप से ठीक नही कहा जा सकता।

बूदी (राजस्थान)

हाडा क्षत्रियो की राजधानी जिसका नाम कोटा के साथ सबद्ध है। यहा चौहानो का बनवाया हुआ तारागढ नामक एक प्राचीन दुग स्थित है। चौरासी खभो की छतरी शिल्प की दृष्टि से उल्लेखनीय है। यह राव राजा अनिरुद्धसिह की धाई के पुत्र की स्मृति मे बनी थी। शाहजहा के समय म बूदी के राजा छत्रसाल हाडा थे जो दारा की ओर से औरगजेब के विरुद्ध धरमत की लडाई मे वीरतापूवक लडते-लडते मारे गए थे। बूदी पर मूलत मीणा लोगो का आधिपत्य था। इसको बसाने वाला बूदा मीणा कहा जाता है जिसके नाम पर ही इस नगरी का नामकरण हुआ था।

बृहत्सानु दे० बरसाना

बृहत्स्थल

इद्रप्रस्थ का एक नाम (महाभारत)

बृहदभट्ट (जिला सहारनपुर, उ० प्र०)

मौय काल मे सुह्म जनपद का एक ख्यातिप्राप्त नगर था जिसका वतमान नाम बहट है।

बेंगिनाड (आ० प्र०)

सस्कृत के महाकवि पडित राज जगन्नाथ का जन्म स्थान। ये तलग ब्राह्मण थे और मुगल शाहजहा के विशेष कृपापात्र थे। गगालहरी इनकी प्रसिद्ध रचना है।

बेक्ट्रिया दे० वल्ख, वाह्लिक, वाह्ली

बेगूसराय (बिहार)

यह कस्बा गगातट पर स्थित है। इसी पुनीत घाट पर मथिल कोकिल

विद्यापति मृत्यु के पहले पहुचना चाहते थे पर माग मे ही बाजितपुर नामक स्थान मे उनका देहात हो गया। विद्यापति का नाथमठ नामक मदिर यहा स्थित है।

वेग्राम

प्राचीन कपिशा (अफगानिस्तान) की राजधानी। श्वेत हूणो के आक्रमण के पूव दूसरी तीसरी शती ई० मे यह नगर बडा समृद्धिशाली था और बौद्ध धम का भी यहा काफी प्रचार प्रसार था किंतु हूणा ने इस नगर को विध्वस्त कर डाला और मिहिरकुल का यहा आधिपत्य हो गया। वेग्राम का अभिज्ञान वतमान कोहदामन से किया गया है। कपिशा के इसी नगर मे कनिष्क की ग्रीष्मकालीन राजधानी थी।

बेजवाडा, दे० विजयवाडा

बेटद्वारका (काठियावाड, गुजरात)

गोमती द्वारका अथवा मूल द्वारका स बीस मील दूर यह स्थान समुद्र के भीतर एक बेट या द्वीप पर स्थित है। बेट द्वारका को भगवान श्रीकृष्ण की विहारस्थली माना जाता है। यहा अनेक मदिर हैं जो वतमान रूप मे अधिक प्राचीन नही है। यह टापू दक्षिण पश्चिम से पूर्वोत्तर तक लगभग सात मील लबा है किंतु सीधी रेखा म पाच मील से अधिक नही। पूर्वोत्तर की नोक को हनुमान् अतरीप कहा जाता है, क्योकि इस अतरीप के पास हनुमान् जी का मदिर है। गोपी तालाब जिसकी मिट्टी गोपीचदन कहलाती है, बेट द्वारका के निकट प्राचीन तीथ है।

बेडी (बुदेलखड)

भूतपूव रियासत। इसके सस्थापक अछरजू या अचलजू पँवार थे। य 18 वी शती के अत मे सडी (जिला जालौन, उ० प्र०) म आकर रहने लग थे। इनका विवाह महाराज छत्रसाल के पुत्र राजा जगतराज की कन्या के साथ हुआ था और दहेज मे इन्हे बारह लाख की जागीर मिली थी जो बाद मे बेडी की रियासत बनी।

बेणूर (मसूर)

हालेबिड स लगभग साठ मील पर यह एक जैन तीर्थ है। यहा 1604 ई० मे चामुडराय के वशज तिम्मराज न भगवान् बाहुबली की 37 फुट ऊची प्रतिमा स्थापित करवाई थी। बेणूर म और भी कई जिनालय हैं। इनम से एक म एक सहस्र से अधिक मूर्तिया प्रतिष्ठापित हैं।

वेतवा = वेत्रवती

वेता

अवध की नदी जो संभवत वाल्मीकि रामायण अयो० 49,8 9 की वेद-श्रति है।

वेतिया दे० वेठद्वीप

वेनाकटक

गौतमीपुत्र (शातवाहन नरेश, द्वितीय शती ई०) के एक नासिक अभिलेख मे इस स्थान का गोवर्धन (नासिक) मे स्थित बतलाया गया है।

वेनीसागर (जिला सिंहभूम, बिहार)

9वी व 10वी शतियो के प्राचीन हिंदू मदिरो के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। उत्तर-गुप्तकालीन मूर्तिया भी यहा प्राप्त हुई हैं जो पटना के सग्रहालय मे सगृहीत हैं। ये मूर्तिया भारी भरकम सी हैं और कला की दृष्टि से नालंदा की कलाकृतियो से हीनतर हैं।

वेरीगाजा दे० भृगुकच्छ

बेलखारा (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

अहरौरा के निकट इस स्थान पर एक प्राचीन अभिलिखित स्तभ स्थित है।

बेलगाम (महाराष्ट्र)

प्राचीन नाम वेणुग्राम है।

बेलूर (मसूर)

वेलूर श्रवणवेलगोला स 22 मील दूर है। मध्यकाल म यहा होयसल राज्य की राजधानी थी। होयसल वशीय नरेश विष्णुवर्धन का 1117 ई० मे बनवाया हुआ चेन्नाकेशव का प्रसिद्ध मदिर वेलूर की ख्याति का कारण है। इस मदिर को, जो स्थापत्य एव मूर्तिकला की दृष्टि से भारत के सर्वोत्तम मदिरो मे है, मुसलमानो ने कई बार लूटा किंतु हिंदू नरेशो ने बार बार इसका जीर्णोद्धार करवाया। मदिर 178 फुट लबा और 156 फुट चौडा है। परकोटे म तीन प्रवेशद्वार हैं जिनमे सुदर मूर्तिकारी है। इसमे अनेक प्रकार की मूर्तिया जस हाथी, पौराणिक जीवजतु, मालाए, स्त्रिया आदि उत्कीर्ण हैं। मदिर का पूर्वी प्रवेशद्वार सवश्रेष्ठ है। यहा रामायण तथा महाभारत के अनेक दृश्य अकित हैं। मदिर म चालीस वातायान हैं जिनमे से कुछ के पर्दे जालीदार हैं और कुछ मे रेखागणित की आकृतिया बनी हैं। अनेक खिडकियो म पुराणो तथा विष्णुवधन की राजसभा के दृश्य हैं। मदिर की सरचना दक्षिण भारत के अनेक मदिरो की भांति ताराकार है। इसके स्तभो के शीर्षाधार नारी-मूर्तियो के रूप

में निर्मित हैं और अपनी सुंदर रचना, सूक्ष्म तक्षण और अलंकरण में भारत भर में बेजोड़ कहे जाते हैं। ये नारीमूर्तियां मदनकई (=मदनिका) नाम से प्रसिद्ध हैं। गिनती में ये 38 हैं, 34 बाहर और शेष अंदर। ये लगभग 2 फुट ऊंची हैं और इन पर उत्कृष्ट प्रकार की श्वेत पॉलिश है जिसके कारण ये मोम की बनी हुई जान पड़ती हैं। मूर्तियां परिधान रहित हैं, केवल उनका सूक्ष्म अलंकरण ही उनका आच्छादन है। यह विन्यास रचना सौष्ठव तथा नारी के भौतिक तथा आंतरिक सौंदर्य की अभिव्यक्ति के लिए किया गया है। मूर्तियों की भिन्न भिन्न भावभंगिमाओं के अंकन के लिए उन्हें कई प्रकार की क्रियाओं में संलग्न दिखाया गया है। एक स्त्री अपनी हथेली पर अवस्थित शुक को बोलना सिखा रही है। दूसरी धनुष संधान करती हुई प्रदर्शित है। तीसरी बांसुरी बजा रही है, चौथी केश प्रसाधन में व्यस्त है, पांचवीं सद्य स्नाता नायिका अपने बालों को सुखा रही है, छठी अपने पति को तांबूल प्रदान कर रही है और सातवीं नृत्य की विशिष्ट मुद्रा में खड़ी है। इन कृतियों के अतिरिक्त वानर से अपने वस्त्रों को बचाती हुई युवती, वाद्ययंत्र बजाती हुई मदविह्वला नवयौवना तथा पट्टी पर प्रणय संदेश लिखती हुई विरहिणी, ये सभी मूर्तिचित्र बहुत ही स्वाभाविक तथा भावपूर्ण हैं। एक अन्य मनोरंजक दृश्य एक सुंदरी बाला का है जो अपने परिधान में छिपे हुए बिच्छू को हटाने के लिए बड़े संभ्रम में अपने कपड़े झटक रही है। उसकी भयभीत मुद्रा का अंकन मूर्तिकार ने बड़े ही कौशल में किया है। उसकी दाहिनी भौंह बड़े बांके रूप में ऊपर की ओर उठ गई है, और डर से उसके समस्त शरीर में तनाव का बोध होता है। तीव्र श्वास के कारण उदर में बल पड़ गए हैं जिसके परिणामस्वरूप कटि और नितंबों की विषम रेखाएं अधिक प्रवृद्ध रूप में प्रदर्शित की गई हैं। मंदिर के भीतर की शीर्षाधार मूर्तियों में देवी सरस्वती का उत्कृष्ट मूर्ति चित्र देखते ही बनता है। देवी नृत्यमुद्रा में है जो विद्या की अधिष्ठात्री के लिए सर्वथा नई बात है। इस मूर्ति की विशिष्ट कला की अभिव्यंजना इसकी गुरुत्वाकर्षण रेखा की अनोखी रचना में है। यदि मूर्ति के सिर पर पानी डाला जाए तो वह नासिका से नीचे होकर वाम पार्श्व से होता हुआ खुली वाम हथेली में आकर गिरता है और वहां से दाहिने पांव के नृत्य मुद्रा में स्थित तलवे (जो गुरुत्वाकर्षण रेखा का आधार है) में होता हुआ बाएं पांव पर गिर जाता है। वास्तव में होयसल वास्तु विशारदों ने इन कलाकृतियों के निर्माण में मूर्तिकारों की कला को चरमावस्था पर पहुंचा कर उन्हें संसार की सर्वश्रेष्ठ शिल्पकृतियों में उच्चस्थान का अधिकारी बना दिया है। 1433 ई० में ईरान के यात्री अब्दुल रज़ाक ने इस मंदिर के
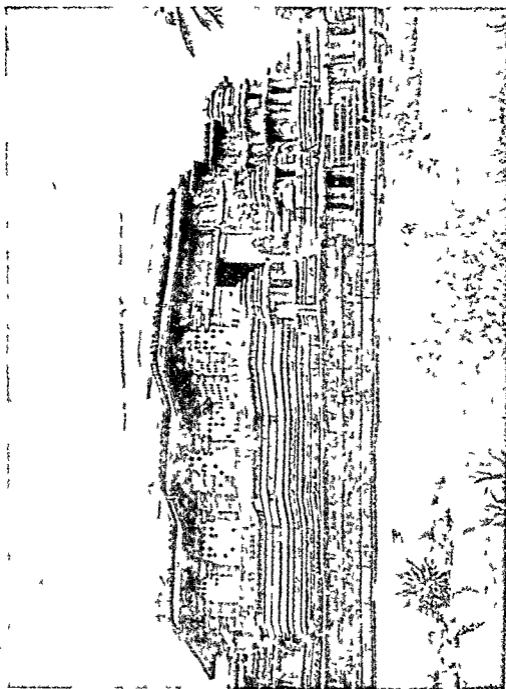
मे लिखा था कि यह इसके शिल्प का वणन करते हुए डरता था कि कही
 प्रशसात्मक कथन को लोग अतिशयोक्ति न समझ लें।

ग्वालियर तथा भूपाल रियासतो म बहने वाली नदी। बेसनगर कस्बा इसी
के नाम पर प्रसिद्ध है। बेस और बेतवा के सगम पर प्राचीन काल की
द्ध नगरी विदिशा बसी हुई थी। शायद बेस नदी का महाभारत सभा०
3 म विदिशा कहा गया है।—'कालिंदी विदिशा वणा नमदा वेगवाहिनी'।
कालिदास के मेघदूत, पूवमेघ 28 की नगनदी भी हो सकती है।
गर (जिला भीलसा, म० प्र०)
यह प्राचीन विदिशा और पाली ग्रथो का वेस्सनगर है। यह कस्बा भीलसा
 मील पश्चिम की ओर प्राचीन विदिशा के स्थान पर बसा हुआ है। यहा
डहरो मे से अनेक प्राचीन महत्वपूण अवशेष प्राप्त हुए हैं। इनम हिलियो-
 का स्तभ जिसे स्थानीय लोग खभबाबा कहते है, मुख्य है। इस पर
त अभिलेख (लगभग 130 ई० पू०) से सूचित होता है कि इसे हिलियो-
 नामक ग्रीक ने भगवान् वासुदेव (कृष्ण) के स्मारक के रूप मे बनवाया
 यह यवन, तक्षशिला के भागवत (हिंदू) यवनराज अतियालसिडस
ialcides) का राजदूत था जिसे विदिशा के महाराज भागभद्र की राजसभा
ना गया था। इस स्तभ लेख से बौद्धधर्म की अवनति के साथ साथ हिंदू
ागवत धम की बढती हुई शक्ति का जिसने स्वसभ्यताभिमानी ग्रीको को
पने प्रभाव मे आबद्ध कर लिया था, सुदर परिचय मिलता है।
 (महाराष्ट्र)
बबई से 40 मील दूर है। एक कन्हेरी के गुहा अभिलेख म इस स्तान का
 नाम से अभिहित किया गया है। बेसीन को गुजरात के सुलतान बहादुर-
ने 1534 ई० मे पुतगालियो के हाथ बेच दिया था। इसके पश्चात दो
 तक बेसीन पुतगालियो के पास रहा। इस काल मे बेसीन को पुतगालियो
-समृद्धि मे सपन्न करने मे कोई कसर न छोडी, यहा तक कि अपन
 और ऐश्वय के कारण यह स्थान कोट आव दि नाथ (Court of the
h) कहलाने लगा। बेसीन मे पुतगालियो ने एक सुदृढ दुग का भी निर्माण
या। किंतु कालातर मे बेसीन के पुतगालियो ने परिवर्ती प्रदेश म लूटमार
 शुरू कर दी और उनके अत्याचार से तग आकर 16 मई 1739 ई० को
 ने बसीन को उनसे छीन लिया। इस युद्ध म चिमनाजी अप्पा ने बहुत
 दिखाई। अप्पा जी ने भी अपना एक दुग बनवाया जिसके अदर

वज्रेश्वरी देवी का मदिर भी स्थित था। 1802 म बेसीन की सधि के फल-स्वरूप, जो बाजीराव पेशवा ने अग्रेजो के साथ की थी मराठा सरदारो मे विरोध का तूफान उठ खडा हुआ और मराठो ने अग्रेजो के साथ युद्ध करने का निश्चय कर लिया। बेसीन का किला समुद्रतट के निकट है और कई छोटे-छोटे बदरगाह किले के निकट स्थित हैं। इसम से माडवी बदर से समुद्र का दृश्य बहुत भव्य दिखाई दता है। पुतगालियो की बनवाई हुई अनेक इमारते, विशेषत गिरजाघर, यहा आज भी विद्यमान हैं। बेसीन पुतगालियो के विरुद्ध भारतीयो के स्वतत्रता-सग्राम का प्रथम स्मारक है।

बेहट

(1) (जिला ग्वालियर, म० प्र०) ग्वालियर स 35 मील दूर इस ग्राम को अकबर की राजसभा के प्रसिद्ध सगीतज्ञ तानसेन (1532 1599 ई०) का ज मस्थान माना जाता है। यहा एक प्राचीन शिवमदिर है जिसके विषय मे किवदती है कि यह तानसेन के गायन के प्रभाव से टेढा हो गया था। यह आज भी वैसा ही है। आईने अकबरी मे अकबरी दरबार के 36 गायको की जो सूची दी गई है उसम 15 ग्वालियर के निवासी थे। इन्ही मे तानसेन भी थे। यह सभव है कि तानसेन मूलत बेहट के ही रहनेवाले रहे हो और पीछे ग्वालियर मे जाकर बस गए हो। उनकी समाधि ग्वालियर म अपने सगीत-गुरु सूफीसत मुहम्मद गौस के मकबरे के पास है।

(2)=बृहदभट्ट

बजनाथ (जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

यह स्थान गोमती नदी के तट पर है। यहा नदा देवी का मदिर और रणचूला के किले मे कालो का मदिर स्थित हैं।

बजवाडा दे० विजयवाडा

बतालवारो (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर कई प्राचीन क़िलाबदिया और दुग आदि हैं जिन पर मध्य-कालीन अभिलेख अकित पाए गए हैं।

बभार दे० वभार

बैराट

(1) (जिला जयपुर, राजस्थान) कहा जाता है कि महाभारतकाल म मत्स्य जनपद की राजधानी विराट-नगर या विराटपुर, इसी स्थान के निकट बसी हुई थी। यहा एक चट्टान पर अशोक का शिलालेख स० 1, उत्कीर्ण है। अशोक का एक दूसरा अभिलेख एक पाषाण-पट्ट पर अकित है जो अब कलकत्ते के रायल एशियाटिक सोसाइटी के सग्रहालय में सुरक्षित है।

बैराट या विराट जयपुर से 41 मील उत्तर की ओर स्थित है। यह मत्स्य देश के (महाभारत के समय के) राजा विराट के नाम पर प्रसिद्ध है। विराट की कन्या उत्तरा का विवाह अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु से हुआ था। अपने अज्ञातवास का एक वर्ष पांडवों ने यहीं बिताया था और भीम ने विराटराज के सेनापति कीचक का वध इसी स्थान पर किया था। महाभारत से ज्ञात होता है कि मत्स्यदेश की राजधानी वास्तव में उपप्लव्य थी किंतु विराट के नाम पर सामान्यत इसे विराट या विराटनगर कहते होंगे। यह भी संभव है कि उपप्लव्य विराटनगर से भिन्न हो, क्योंकि महाभारत के टीकाकार नीलकंठ ने विराट 72,14 की टीका में उपप्लव्य का 'विराटनगरसमीपस्थनगरान्तरम्' लिखा है (दे० उपप्लव्य)। बैराट में आज भी एक गुफा में भीम के रहने का स्थान बताया जाता है (अन्य पांडवों के नाम की गुफाए भी हैं)। बैराट को सिद्ध पीठ भी माना जाता है। बैराट में अकबर के समय से कुछ पूर्व बना एक सुंदर जैन मंदिर भी है जिसका शुद्धीकरण जैन मुनि हरिविजय सूरी द्वारा किया गया था। यह तथ्य मंदिर में उत्कीर्ण एक अभिलेख में अंकित है। मुनि हरिविजय, अकबर के समकालीन थे और इनके उपदेशों से प्रभावित होकर मुगल सम्राट् ने वर्ष में 160 दिन के लिए पशुवध पर रोक लगा दी थी।

कुछ विद्वानों के मत में युवानच्वांग ने (सातवीं शती के आरम्भ में) जिस पारयात्र नामक नगर का उल्लेख अपने यात्रावृत्त में किया है वह बैराट ही था। यहां का तत्कालीन राजा वैश्यजाति का था।

(2) (तहसील रानीखेत, ज़िला अल्मोड़ा) इस स्थान को स्थानीय लोकश्रुति में महाभारत के राजा विराट की राजधानी विराटनगर बताया जाता है। एक पत्थर पर भीमसेन द्वारा अंकित चिह्न भी दिखाए जाते हैं। अधिकांश विद्वानों के मत में महाभारतकालीन मत्स्य देश की राजधानी ज़िला जयपुर में स्थित बैराट नामक नगर था [दे० बैराट (1)] और मत्स्य जनपद में वर्तमान अलवर-जयपुर का परिवर्ती प्रदेश शामिल था। महाभारत में मत्स्य को शूरसेन (मथुरा) के पड़ोस में बताया गया है जिससे इस अभिमान की पुष्टि होती है। ज़िला अल्मोड़ा के बैराट के विषय में किंवदंती का आधार केवल नाम साम्य ही जान पड़ता है।

बोधगया=बोधिगया

बोधान (ज़िला निज़ामाबाद, आ० प्र०)

इस स्थान पर प्राचीन काल में एक सुंदर मंदिर था जिसे मुहम्मद तुग़लक

के समय मे मसजिद के रूप म परिवर्तित कर दिया गया था जैसा कि यहा अकित दो फारसी अभिलेखा से ज्ञात होता है। इसे अब भी देवल मसजिद कहते हैं। बोधान के राष्ट्रकूट नरेशो के शासनकाल के कन्नड-तेलुगु के कई अभिलेख प्राप्त हुए हैं। इस स्थान का प्राचीन नाम शायद बोधायन था।

बोधायन

(1) दे० बोधान

(2) दे० बाधन

बोधिगया (बिहार)

गौतम बुद्ध ने इसी स्थान पर 'सबोधि' प्राप्त की थी (दे० गया)। इस स्थान से कई महत्वपूण अभिलेख मिले हैं जिनसे यह अभिज्ञान प्रमाणित होता है। 269 गुप्तसवत्=588 589 ई० के एक अभिलेख मे सभवत सिंहलदेश के बौद्धनरेश महानामन (जो पाली महावश का कर्ता था) द्वारा बोधिमड (बोधिद्रुम के नीचे बुद्धासन या किसी बिहार का नाम) के निकट एक बुद्ध-गृह के निर्माण किए जाने का उल्लेख है। महावश के सपादक टर्नर का मत है कि अभिलेख का महानामन्, सिंहलनरेश नही हो सकता क्योकि राजा महानामन् ने 459 477 ई० के लगभग (अपने भगिनीसुत धातुसेन के शासन काल मे) महावश का सकलन किया था और यह तिथि गया के उपयुक्त अभिलेख से मेल नही खाती। इसी स्थविर महानामन् का एक दूसरा मूर्तिलेख भी बोधिगया से ही प्राप्त हुआ है। इसम इस मूर्ति के दान मे दिए जाने का उल्लेख है। बौद्ध सघ के नियमो के अनुसार कोई व्यक्ति 30 वय की आयु से पूव स्थविर नही बन सकता था।

बोधिमड

महावश 29,41 मे वर्णित बोधिगया के निकट एक विहार। यहा से तीस सहस्र भिक्षुओ को साथ लेकर स्थविर चित्रगुप्त सिंहल देश गए थे। बोधिमड का उल्लेख महानामन स्थविर के बोधिगया अभिलेख म भी है। (दे० बोधिगया)

बोरपल्ली (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

13वी–14वी शती मे बना एक मदिर यहा का ऐतिहासिक स्मारक है। मदिर मे नदी की एक प्रस्तर मूर्ति है तथा कन्नड भाषा के अभिलेख उत्कीर्ण हैं।

बोरविली (महाराष्ट्र)

बबई से 22 मील। रेलस्टेशन के निकट ही कृष्णगिरि उपवन है जहा 101 बौद्ध गुहामदिर स्थित हैं जिनका निर्माण काल प्रथम शती ई० पू० स 5वीं शती

ई० तक माना गया है। भारत मे, सख्या की दृष्टि से, इनसे अधिक गुहामदिर एक ही स्थान पर कही और नही हैं।

बोर्नियो द्वीप (इडोनीसिया)

सभवत इस विशाल द्वीप का प्राचीन नाम बर्हिण द्वीप है।

बोध (उडीसा)

तान्त्रिक बौद्धधम के अवशेष यहा के खडहरो से प्राप्त हुए हैं (दे० महताब—ए हिस्ट्री ऑव उडीसा, पृ० 155)। इसके अतिरिक्त शिव एव विष्णु के मदिरो के साथ साथ एक ही स्थान पर होने से मध्यकालीन सस्कृति मे इन दोनो सप्रदायो की एकता प्रकट होती है।

ब्रज=व्रज

ब्रह्मकुड

(1) (मद्रास) रामेश्वरम की 5 मील की परिक्रमा मे यह प्राचीन पुण्य-स्थल है। यहा महिषमर्दिनी का मदिर भी है।

(२)=ब्रह्मसर=मानसरोवर। कालिकापुराण मे ब्रह्मपुत्र या लौहित्य का उदभव ब्रह्मकुड से माना गया है—'ब्रह्मकुडात सुत सोऽथ कासारे लोहिताह्वये, कैलासोपत्यकायातुयपत् ब्रह्मण सुत' (दे० लौहित्य)। कालिदास ने सरयू का उदगम ब्रह्मसर (=मानसरोवर) से माना है जो कालिकापुराण का ब्रह्मकुड ही है। सरयू तथा लौहित्य (ब्रह्मपुत्र) दोनो ही मानसरोवर से निकलती हैं। (दे० सरयू)

ब्रह्मगिरि

(1)=वेदगिरि

(2) (महाराष्ट्र) पश्चिमी घाट की गिरिमाला मे स्थित त्र्यबक पवत का एक भाग ब्रह्मगिरि कहलाता है। गोदावरी नदी यही से उदभूत होती है। स्रोत के निकट पहुचने के लिए 750 सीढिया है। गोदावरी का जल पहले कुशावत कुड मे गिरकर पृथ्वी के भीतर बहता हुआ 6 मील दूर चक्रतीथ मे प्रकट होता है। ब्रह्मगिरि म एक प्राचीन दुग अवस्थित है।

(3) (ज़िला चीतलदुग, मसूर) अशोक का लघु शिलालेख स० 1 इस स्थान पर एक चट्टान पर उत्कीण है। यह स्थान मासकी के साथ ही अशोक के साम्राज्य की दक्षिणी सीमारेखा पर स्थित था।

(4) कुर्ग के दक्षिण मे स्थित पवतमाला।

(5) (ज़िला पुरी, उडीसा) चोड गगदेव (12वी शती ई०) के बनवाए आलारनाथ के मदिर के लिए प्रसिद्ध है। यह विष्णु, लक्ष्मी, रुक्मिणी और

के समय मे मसजिद के रूप म परिवर्तित कर दिया गया था जैसा कि यहा अंकित दो फारसी अभिलेखा से ज्ञात होता है। इसे अब भी देवल मसजिद कहते हैं। बोधान के राष्ट्रकूट नरेशो के शासनकाल के कन्नड-तेलुगु के कई अभिलेख प्राप्त हुए हैं। इस स्थान का प्राचीन नाम शायद बोधायन था।

बोधायन

(1) दे० बोधान

(2) दे० बाधन

बोधिगया (बिहार)

गौतम बुद्ध ने इसी स्थान पर 'सबोधि' प्राप्त की थी (दे० गया)। इस स्थान से कई महत्वपूर्ण अभिलेख मिले हैं जिनस यह अभिमान प्रमाणित होता है। 269 गुप्तसवत=588-589 ई० के एक अभिलेख मे सभवत सिहलदेश के बौद्धनरश महानामन (जा पाली महावश का कर्ता था) द्वारा बाधिमड (बाधिद्रुम के नीचे बुद्धासन या किसी बिहार का नाम) के निकट एक बुद्ध-गृह के निर्माण किए जाने का उल्लेख है। महावश के सपादक टनर का मत है कि अभिलेख का महानामन्, सिहलनरेश नही हो सकता क्योकि राजा महानामन् ने 459-477 ई० के लगभग (अपने भगिनीसुत धातुसेन के शासन काल म) महावश का सकलन किया था और यह तिथि गया के उपयुक्त अभिलेख से मेल नही खाती। इसी स्थविर महानामन का एक दूसरा मूर्तिलेख भी बोधिगया से ही प्राप्त हुआ है। इसम इस मूर्ति के दान म दिए जाने का उल्लेख है। बौद्ध सघ के नियमो के अनुसार कोई व्यक्ति 30 वष की आयु से पूव स्थविर नही बन सकता था।

बोधिमड

महावश 29,41 मे वर्णित बाधिगया के निकट एक विहार। यहा से तीस सहस्र भिक्षुओ को साथ लेकर स्थविर चित्रगुप्त सिहल देश गए थे। बोधिमड का उल्लेख महानामन् स्थविर क बोधिगया अभिलेख मे भी है। (दे० बोधिगया)

बोरपल्ली (ज़िला करीमनगर, आ० प्र०)

13वी–14वी शती मे बना एक मदिर यहा का ऐतिहासिक स्मारक है। मदिर मे नदी की एक प्रस्तर मूर्ति है तथा कन्नड भाषा मे अभिलेख उत्कीण हैं।

बोरविली (महाराष्ट्र)

बबई से 22 मील। रेलस्टेशन क निकट ही कृष्णगिरि उपवन है जहा 101 बौद्ध गुहामदिर स्थित हैं जिनका निर्माण काल प्रथम शती ई० पू० से 5वी शती

ई० तक माना गया है। भारत मे, सख्या की दृष्टि से, इनसे अधिक गुहामदिर एक ही स्थान पर कही और नही हैं।

बोर्नियो द्वीप (इडोनीसिया)

सभवत इस विशाल द्वीप का प्राचीन नाम बर्हिण द्वीप है।

बौध (उडीसा)

तान्त्रिक बौद्धधर्म के अवशेष यहा के खडहरो से प्राप्त हुए हैं (दे० महताब—ए हिस्ट्री ऑव उडीसा, पृ० 155)। इसके अतिरिक्त शिव एव विष्णु के मदिरो के साथ साथ एक ही स्थान पर होने से मध्यकालीन सस्कृति मे इन दोनो सप्रदायो की एकता प्रकट होती है।

ब्रज=व्रज

ब्रह्मकुड

(1) (मद्रास) रामेश्वरम की 5 मील की परिक्रमा मे यह प्राचीन पुण्य-स्थल है। यहा महिषमर्दिनी का मदिर भी है।

(२)=ब्रह्मसर=मानसरोवर। कालिकापुराण मे ब्रह्मपुत्र या लौहित्य का उदभव ब्रह्मकुड से माना गया है—'ब्रह्मकुडात सुत सोऽय कासारे लोहिताह्वये, कैलासोपत्यकायातुन्यपत ब्रह्मण सुत' (दे० लौहित्य)। कालिदास ने सरयू का उदगम ब्रह्मसर (=मानसरोवर) से माना है जो कालिकापुराण का ब्रह्मकुड ही है। सरयू तथा लौहित्य (ब्रह्मपुत्र) दोनो ही मानसरोवर से निकलती हैं। (दे० सरयू)

ब्रह्मगिरि

(1)=वेदगिरि

(2) (महाराष्ट्र) पश्चिमी घाट की गिरिमाला म स्थित त्र्यबक पवत का एक भाग ब्रह्मगिरि कहलाता है। गोदावरी नदी यही से उदभूत होती है। स्रोत के निकट पहुचने के लिए 750 सीढिया है। गोदावरी का जल पहले कुशावत कुड मे गिरकर पृथ्वी के भीतर बहता हुआ 6 मील दूर चक्रतीथ मे प्रकट होता है। ब्रह्मगिरि मे एक प्राचीन दुग अवस्थित है।

(3) (जिला चीतलदुग, मैसूर) अशोक का अमुख्य शिलालेख स० 1 इस स्थान पर एक चट्टान पर उत्कीर्ण है। यह स्थान मासकी के साथ ही अशोक के साम्राज्य की दक्षिणी सीमारखा पर स्थित था।

(4) कुर्ग के दक्षिण मे स्थित पवतमाला।

(5) (जिला पुरी, उडीसा) चाड गगदेव (12वीं शती ई०) के बनवाए आलारनाथ के मदिर के लिए प्रसिद्ध है। यह विष्णु, ल मी, रुक्मिणी और

सरस्वती का मंदिर है।

ब्रह्मदेश

वर्तमान बर्मा (विशेषत दक्षिणी बर्मा) का प्राचीन भारतीय नाम। बौद्ध साहित्य म इसे सुवर्णभूमि भी कहा गया है। विद्वानो का मत है कि भारतीय सभ्यता ब्रह्मदेश म ईसवी सन् के प्रारभ होने से बहुत पूर्व ही पहुच गई थी।

ब्रह्मपुत्र

मानसरोवर से यह नदी सापो नाम धारण करके निकलती है और ग्वालदो घाट (बगाल) के निकट गगा मे मिल जाती है। (दे० लौहित्य)

ब्रह्मपुर दे० मुढाल

ब्रह्ममाला

वाल्मीकि रामायण किष्किधा० 40,22 मे सुग्रीव द्वारा पूर्व दिशा म वानर सेना के भेजे जाने के प्रसग मे इस देश का उल्लेख है—'मही कालमही चापि शैलकाननशोभिता ब्रह्ममालाविदेहाश्च मालवान्काशिकोसलान्'। प्रसगानुसार यह जनपद विदेह तथा मालव देश के निकट जान पडता है। सभव है कि यह ब्रह्मावर्त या बिठूर (उ० प्र०) का ही नाम हो किंतु यह अभिज्ञान अनिश्चित है।

ब्रह्मराइच दे० बहराइच

ब्रह्मराष्ट्र

चीनी यात्री इत्सिग (672 ई०) ने भारत का तत्कालीन नाम ब्रह्मराष्ट्र बताया है। इससे उस समय पुनरुज्जीवित हिंदू धर्म की बढती हुई महत्ता का प्रमाण मिलता है। बौद्धधर्म सातवी शती म अस्तोन्मुख हो चला था।

ब्रह्मर्षि देश

मनुस्मृति 2,19 के अनुसार कुरु, पचाल, शूरसेन तथा मत्स्य देशो का सम्मिलित नाम—'कुरुक्षेत्र च मत्स्याश्च पचाला शूरसेनका, एष ब्रह्मर्षि देशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तर'।

ब्रह्मवर्धन

पाली साहित्य मे काशी का एक नाम। जातको म प्राय काशी के राजाओ को ब्रह्मदत्त नाम से अभिहित किया गया है।

ब्रह्मसर

(1) मानसरोवर (तिब्बत) को प्राचीन सस्कृत साहित्य म ब्रह्मसर भी कहा गया है। कालिदास ने रघुवश 13,60 म सरयू नदी की उत्पत्ति ब्रह्मसर से बताई है—'ब्राह्मसर कारणमाप्तवाचो बुद्धेरिवाव्यक्तमुदाहरन्ति'। मल्लिनाथ

ने अपनी टीका मे 'ब्राह्मसरः मानसाख्यं यस्याः सरय्वा'—आदि लिखा है जिससे स्पष्ट है कि सरयू का उदगम मानसरोवर या ब्रह्मसर है। कवि की विचित्र उपमा से यह भी ज्ञात होता है कि कालिदास के समय मे ब्रह्मसर तक पहुचना यद्यपि अधिकाश लोगो के लिए असभव ही था फिर भी सब लोगो का परपरागत विश्वास यही था कि सरयू मानसरोवर से उदभूत होती है। किंतु साथ यह भी दृष्टव्य है कि इस विशिष्ट भौगोलिक तथ्य की खोज, जो उस प्राचीन समय मे बहुत ही कठिन रही होगी कालिदास के समय के बहुत पूर्व ही हो चुकी थी। कालिकापुराण मे ब्रह्मपुत्र या लौहित्य का उदभव भी ब्रह्मकुड या ब्रह्मसर से ही माना गया है। यह भी भौगोलिक तथ्य है। (दे० सरयू, लौहित्य)

(2) महाभारत अनुशासन० मे पुष्कर (जिला अजमेर, राजस्थान) के प्रसिद्ध सरोवर का एक नाम। यह ब्रह्मा के तीर्थ के रूप मे प्राचीन काल से ही प्रख्यात है।

(3) कुरुक्षेत्र मे स्थित सरोवर। शतपथ ब्राह्मण के कथानक के अनुसार राजा पुरु को खोई हुई अप्सरा उर्वशी इसी स्थान पर कमलो पर क्रीडा करती हुई मिली थी।

ब्रह्मसानु दे० बरसाना।

ब्रह्मस्थल

जैनग्रथ वसुदेव हिंडि (7वी–8वी शती ई०) मे हस्तिनापुर (जिला मेरठ, उ० प्र०) का एक नाम। इस ग्रथ मे महाभारत की कथा का जैन रूपातर किया गया है।

ब्रह्मह्रद (राजस्थान)

लुहारू या प्राचीन लोहागल पर्वत की तलहटी मे यह पुराण प्रसिद्ध तीर्थ स्थित है। कहा जाता है कि महाभारत युद्ध के पश्चात पाडवो ने यहा की यात्रा की थी।

ब्रह्मा

मध्य रेलवे के पुरली-वैजनाथ-विकाराबाद मार्ग पर स्थित जहीराबाद से 8 मील केतकी सगम नामक क्षेत्र के निकट प्रवाहित होने वाली नदी।

ब्रह्मावर्त

(1) वैदिक तथा परवर्ती काल मे ब्रह्मावर्त पजाब का वह भाग था जो सरस्वती और दृषद्वती नदियो के मध्य मे स्थित था। (दे० मनुस्मृति 2,17—'सरस्वती दृषद्वत्योर्देव, नद्योर्यदन्तरम् त देवनिर्मित देश ब्रह्मावर्त प्रचक्षते'

मेकडानेल्ड के अनुसार दृषद्वती वतमान घग्घर या घोगरा है। प्राचीन काल मे यह यमुना और सरस्वती नदियो के बीच मे बहती थी। कालिदास ने मेघदूत मे महाभारत की युद्धस्थली—कुरुक्षेत्र को ब्रह्मावत मे माना है—'ब्रह्मावर्तं जनपदमथश्छाययागाहमान, क्षेत्रक्षत्र प्रधनपिशुन कौरव तद्भजेथा' पूवमेघ, 50। अगले पद्य 51 मे कालिदास ने ब्रह्मावत म सरस्वती नदी का वणन किया है। यह ब्रह्मावत की पश्चिमी सीमा पर बहती थी। किंतु अब यह प्राय लुप्त हो गई है।

(2) बिठूर (ज़िला कानपुर, उ० प्र०) महाभारत मे इस स्थान को पुण्य-तीर्थों की श्रेणी मे माना गया है—'ब्रह्मावर्तं ततो गच्छेद् ब्रह्मचारी समाहित, अश्वमेधमवाप्नोति सोमलोक च गच्छति'।

ब्रह्मोद (म० प्र०)

पुराणो मे उल्लिखित ब्रह्मोद तीर्थ नमदा के तट पर स्थित वतमान गोरा-घाट नामक स्थान है।

ब्राह्मण जनपद दे० बहमनाबाद

ब्राहमणावह

राजेशखर ने काव्यमीमासा मे ब्राह्मणजनपद का ब्राह्मणावह नाम से उल्लेख किया है।

ब्राह्मणी

उडीसा की एक पवित्र मानी जाने वाली नदी जो जिला बालासोर म बहती है। इसका महाभारत भीष्म० 9,33 मे उल्लेख है—'ब्राह्मणी च महागौरीं दुर्गामपि च भारत'।

भगोल (सौराष्ट्र, गुजरात)

इस स्थान से 1954 ई० म किए जाने वाले उत्खनन से प्रागतिहासिक काल के अनेक अवशेष प्रकाश मे आए है। यह स्थान हलार क्षेत्र के अतगत है।

भडग्राम

बौद्धकाल का एक व्यापारिक नगर जिसकी स्थिति श्रावस्ती से राजगृह जाने वाले वणिक्पथ पर थी (द० युग-युगा म उत्तर प्रदेश, पृ० 6)

भवरगढ़ (ज़िला नरसिंहपुर, म० प्र०)

गढमडला नरेश सग्रामशाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावन गढ़ो म स एक की स्थिति भवरगढ म थी। सग्रामशाह वीरागना महारानी दुर्गावती के श्वसुर और दलपतशाह के पिता थे।

भक्खर (सिंध, पाकि०)

यह छोटा सा प्राचीन कस्बा है जो मुसलमानों के शासनकाल में प्रसिद्ध था—शिवाजी के राजकवि भूषण ने इसका उल्लेख किया है—'सक्खरलौ भक्खर लौ मक्खर लौं चले जाते टक्कर लिवैया कोई आर है न पार है'—भूषण ग्रंथावलि० फुटकर 37,, 'भक्खर प्रबल दल भक्खर लौ दौरिकर आय साहिजू को नद बाधी लेत बाकरी'—भूषण ग्रंथावलि, पृ० 101 श्री वा० श० अग्रवाल के मत मे पाणिनि ने अष्टाध्यायी 4,3,32 मे भक्खर का 'अपकर' नाम से उल्लेख किया है।

भक्तपुर (नेपाल) दे० भटगाव

भगवानगज (बगाल)

दीनाजपुर तहसील के दक्षिण की ओर स्थित है। युवानच्वाग ने जिस द्रोणस्तूप का उल्लेख किया है वह सभवत इसी स्थान पर था। स्तूप के खडहर अब भी पुनपुन नदी के निकट हैं।

भग्ग

बौद्धकालीन गणराज्य। महाभारत मे इसे भग कहा गया है और इसका उल्लेख वत्सजनपद के साथ है। इसे भीमसेन ने अपनी दिग्विजय यात्रा मे जीता था—'वत्सभूमि च कौतेयो विजिग्ये बलवान् बलात् भर्गाणाधिप चैव निषादाधिपति तथा' सभा० 30,10 11 धोनसारव जातक (स० 353) मे भग्ग की सुसुमारगिरि नामक राजधानी का वत्स और भग का साथ साथ उल्लेख है—'प्रतदनस्य पुत्रौ द्वौ वत्सभर्गौ बभूवतु' और प्रतदन के पुत्र का नाम भग बताया गया है जिसके नाम पर यह जनपद प्रसिद्ध हुआ होगा। भगक्षत्रिया का उल्लेख ऐतरेय ब्राह्मण 3,84,31 तथा अष्टाध्यायी 4,1,111-177 मे भी है। उपर्युक्त उल्लेख से भग्ग गणराज्य की स्थिति वत्स (कौशाबी प्रयाग) के पार्श्ववर्ती क्षेत्र मे सिद्ध होती है। सुसुमारगिरि का अभिज्ञान चुनार (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०) की पहाडी से किया गया है।

भटगाव (नेपाल)

कटमडू से 8 मील दूर है। यहा नेपाल के प्राचीन नेवार राजवश की राजधानी थी। भटगाव के कई मदिर उल्लेखनीय है। भवानी का मदिर पाच मजिला है और पाच उभरी सरचनाओ के ऊपर अवस्थित है। निकटवर्ती महादेव का मदिर दुमजिला है। पास ही उत्तर की ओर कृष्ण-मदिर है जिसकी आकृति खजुराहो के मदिरो के विमाना के अनुरूप है। सिद्धपोखरा मदिर

1640 1650 मे बना था। इसके अतिरिक्त विनायक गणेश का मदिर भ प्रसिद्ध है। इसका प्राचीन नाम भक्तपुर था।

भटिडा (पजाब)

यह मध्यकालीन नगर है जिसे कुछ तत्कालीन मुसलमान इतिहासकारा न तबरहिंद कहा है। प्राय एक सहस्र वप प्राचीन एक दुग यहा का मुख्य ऐतिहासिक स्मारक है। इसकी ऊचाई 125 फुट है और इस पर 36 बुज बने हैं। प्राचीन काल मे सतलज नदी इसी दुर्ग के नीचे बहती थी। दुग के निमाता भट्टी राजपूत थे जिनके नाम पर यह नगर प्रसिद्ध है। गुलाम वश की रजिया बेगम (1236 1240 ई०) इस किले मे कुछ समय तक कद रही थी और कहत हैं यही उसकी मृत्यु भी हुई थी। किले का एक बुज 14-10 56 को टूटकर गिर पडा था।

भट्टग्राम =गढवा (ज़िला इलाहाबाद, उ० प्र०)

प्रयाग से लगभग 25 मील दक्षिण-पश्चिम की ओर और प्रयाग जबलपुर रेलपथ पर शकरगढ स्टेशन से 6 मील उत्तर पश्चिम मे बसा हुआ छोटा सा ग्राम है। गुप्तकाल मे यह स्थान काफी महत्वपूण और समृद्ध था जैसा कि यहा से प्राप्त शिलालेखो तया मूर्तिया के अवशेपो से सूचित होता है। इसका वतमान नाम भटगढ या बरगढ है और सामान्यत इसे गढवा भी कहते है। यहा के प्राचीन गढ के ध्वसावशेप अब भी विद्यमान हैं। (दे० गढवा)

भट्टीप्रोलू (ज़िला कृष्णा, आ० प्र०)

एक बौद्धकालीन स्तूप के खडहरो तथा अन्य अवशेपो के लिए यह स्थान विख्यात है। ई० सन् के पूर्व के कई अभिलेख भी यहा से प्राप्त हुए हैं जो मामकी के अशोक के शिलालेख के अतिरिक्त, दक्षिण के प्राचीनतम अभिलेख माने जाते हैं। एक अभिलेख म 'कुबिरक' नामक आध्र नरेश का उल्लेख है। इसकी तिथि 200 ई० पू० के लगभग मानी गई है। शायद इसी आध्र नरेश का सव प्रथम ऐतिहासिक आध्र शासक समझना चाहिए। विद्वानो का विचार है कि भट्टीप्रोलू का बौद्ध स्तूप आध्र म अमरावती तथा अन्यत्र प्राप्त स्तूपो क अनुरूप ही रहा होगा।

भड़ौंच दे० भृगुकच्छ

भतकल (उत्तरी कनारा, मैसूर)

एक मध्यकालीन वर्गाकार और शिखररहित जैन मदिर के लिए यह

स्थान उल्लेखनीय है। मंदिर का प्रदक्षिणापथ पटा हुआ है और शिखरविहीन छतों पर ढालू पत्थर लगे हैं। आश्चर्य है कि गुप्तकालीन मंदिरों की परंपरा, ग्यारह सौ वर्षों के पश्चात् भी सुदूर दक्षिण में इस मंदिर के रूप में जीवित पाई जाती है। मंदिर के गर्भगृह के सामने एक मंडप की विद्यमानता भी भतकल के मंदिर की विशेषता है। यह जैन मंदिर अपने बहिरलंकरण के लिए अधिक दर्शनीय नहीं है किंतु इसके भीतरी भाग में सुंदर अलंकरण प्रचुरता से अंकित है। मंदिर पाषाणचितियों पर बना है जिससे इसके फर्श के नीचे स्थान स्थान पर अवकाश है। मंदिर के निकट एक ही पत्थर का बना दीपस्तंभ है जिस पर पाषाणनिर्मित दीपक आरूढ है। गर्भगृह की छत सबसे ऊँची है और तत्पश्चात् प्रथम और द्वितीय प्रदक्षिणा पथों की छतें हैं जो क्रम से नीची होती चली गई हैं।

भदरवार

जिला ग्वालियर (म० प्र०) में अटेर और भिंड के परिवर्ती क्षेत्र का मध्यकालीन नाम। यहां राजपूतों की भदौरिया नामक शाखा का राज्य था।

भद्दवटिका=भद्दवतिका

सुरापानजातक में उल्लिखित एक व्यापारिक नगर जिसकी स्थिति कौशांबी (जिला इलाहाबाद, उ०प्र०) के पूर्व में थी। इस नगरी का प्राचीन नाम भद्रावती जान पड़ता है।

भद्दिय

प्राचीन अंग की महत्त्वपूर्ण नगरी जिसका बौद्धजातक कथाओं में उल्लेख है। *मिगारमाता विशाखा, जिसकी कथाएं पाली साहित्य में विख्यात हैं* का जन्म भद्दिय में ही हुआ था। इसी नगरी को संभवतः भद्दवति या भद्रिका नाम से भी अभिहित किया गया है। कुछ विद्वानों का मत है कि यह वर्तमान मुंगेर ही का प्राचीन नाम है।

भद्दिलपुर

अंतकृतदशांग सूत्र नामक जैन ग्रंथ में इस नगर को जितशत्रु नामक राजा की राजधानी बताया गया है। यहां स्थित श्रीवन नामक उद्यान का भी उल्लेख है। यह शायद भद्दिय ही है।

भद्रकर

प्रो० प्रिज़लुस्की के अनुसार मूल सर्वास्तिवादी विनय में साकल या सियालकोट (पंजाब, पाकि०) का एक नाम है।

भद्र दे० भद्रा

भद्रकर्णेश्वर

महाभारत में इस तीर्थ का वनपर्व के अंतर्गत तीर्थ प्रसंग में उल्लेख है, 'भद्रकर्णेश्वरं गत्वा देवमभ्यर्च्य यथाविधि, न दुर्गतिमवाप्नोति नाकपृष्ठे च पूज्यते' वन० 84,39। भद्रकर्णेश्वर का अभिज्ञान जिला गढ़वाल (उ०प्र०) में स्थित कर्णप्रयाग से किया गया है जो प्रसंग से ठीक ही जान पड़ता है क्योंकि वन० 84,37 में रुद्रावर्त (रुद्रप्रयाग) का वर्णन है।

भद्रवती दे० भदिदय, भद्दवतिका

भद्रवाह

हिमाचलप्रदेश और जम्मू कश्मीर की सीमा पर स्थित सुंदर पर्वतीय तीर्थ। भद्रवाह वासुक्यकुंड के कारण प्राचीन काल से तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध है। वासुकिनाग की झील 2½ मील के घेरे में तीन ऊंचे हिमपर्वतों से घिरी, समुद्रतल से पंद्रह सहस्र फुट की ऊंचाई पर है। यह भद्रवाह से पंद्रह मील दूर है। पहले भद्रवाह में नागों के पचास मंदिर थे जिनमें से केवल दो शेष हैं। इनमें से एक तो भद्रवाह नगर में है और दूसरा तीन मील दूर गाठा नामक ग्राम में। पौराणिक गाथा के अनुसार विद्याधरवंश के नागनरेश जीमूतवाहन ने एक अन्य नाग राजा की कन्या से वासुकि झील के स्थान पर ही विवाह किया था। जीमूतवाहन को उसके पिता जीमूतकेतु ने अपने तप के लिए उपयुक्त स्थान की खोज में भेजा था और उसने इसी स्थान को चुना था जो कपिलाश पर्वत (?) पर स्थित था।

भद्रविहार

कान्यकुब्ज (कन्नौज, उ० प्र०) में स्थित एक बौद्धविहार जहां प्रसिद्ध चीनी यात्री युवानच्वांग 635 ई० के लगभग पहुंचा था। उन्होंने यहां तीन मास तक ठहर कर आचार्य वीरसेन से बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन किया था। यहां उस समय एक महाविद्यालय था।

भद्रशिला

इस देश का वर्णन चंद्रप्रभजातक में है जिसमें इसे हिमाचल के निकट उत्तरदिशा में स्थित बताया गया है। दिव्यावदान में इसे परम ऐश्वर्यशाली नगरी बताया गया है। बोधिसत्वावदान-कल्पलता में इस नगरी को हिमालय के उत्तर में माना है। भद्रशिला का अभिज्ञान तक्षशिला से किया गया है।

भद्रा

(1) विष्णु पुराण 2,2,37 के अनुसार उत्तरकुरु की एक नदी जो उत्तर

के पर्वतों को पारकर उत्तरी समुद्र में गिरती है—'भद्रा तथोत्तरगिरीनुत्तराश्च तथाकुरून् अतीत्योत्तरमम्भोधि समभ्येति महामुने'। इसी प्रसग (2,2,33) म सीता (=तरिम), चक्षु (=आमू या आक्सस) अलकनदा और भद्रा, गगा की ये चार शाखाए कही गई हैं जो चारो दिशाओ म प्रवाहित होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि विष्णुपुराण के रचयिता के मत मे ये चारा नदिया एक ही स्थान (मानसरोवर) से उद्भूत होकर क्रमश पूव, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर की ओर बहती थी। यह भौगोलिक उपकल्पना अन्वेषणीय अवश्य है और इसमे तथ्य का अश जान पडता है। भद्रा इस प्रसग के अनुसार साइबेरिया म बहनेवाली कोई नदी हो सकती है। श्री न० ला० डे के अनुसार वह यारकद नामक नदी है।

(2) तुगभद्रा नामक नदी तुगा तथा भद्रा, इन दो नदिया की सयुक्त धारा है। भद्रा भद्रपवत से उदभूत होती है।

भद्राचलम् (जिला वारगल, आ० प्र०)

गोदावरी नदी के उत्तरी तट पर प्राचीन स्थान है। कहा जाता है कि इस स्थान पर भद्र नामक ऋषि ने श्रीरामचद्र जी से वनवासकाल मे भेट की थी। किंवदती मे यह भी प्रसिद्ध है कि श्रीराम और लक्ष्मण इस स्थान के निकट अचलगिरि पर सीताहरण के पश्चात् कुछ दिन कुटी बनाकर रहे थे और फिर दक्षिण की ओर जाते समय उन्होने यही गोदावरी नदी को पार किया था। अचलगिरि पर श्रीराम का एक मदिर है जिसे रामदास अथवा गोपन्ना ने बनवाया था। यह गोलकुडा के अतिम सुलतान अबुलहसन तानाशाह (1654-1687) के प्रधान मत्री अकन्ना का भ्रातृज था। कहा जाता है कि गोपन्ना ने सरकारी मालगुजारी मे से 6 लाख रुपया निकाल कर इस मदिर का निर्माण करवाया था जिसके कारण उसे गोलकुडा के सुलतान ने कारागृह मे डाल दिया (इस स्थान को आज भी रामदास का कारागार कहते हैं)। किंतु कथा के अनुसार भगवान् राम ने अपने भक्त पर जरा भी आच न आने दी और सारा रुपया रहस्यमय रीति से सरकारी खजाने म जमा किया हुआ पाया गया। गोपन्ना को तानाशाह ने स्वय जाकर कारागार से मुक्ति दिलवाई और राम का भक्त उस दिन से रामदास कहलाने लगा। रामनवमी को भद्राचल मे आज भी भारी मेला लगता है और राम सीता का विवाह अथवा कल्याणम धूमधाम से मनाया जाता है। यह मदिर दक्षिण भारत का सबसे अधिक धनी मदिर कहा जाता है।

भद्रावती

(1) दे० भद्दवतिका, भद्दिय

(2) दे० भद्रेश्वर

(3) (ज़िला चादा, म० प्र०) वर्धा-काजीपेट रेल पथ पर भादक या भाडक नामक स्थान का प्राचीन नाम। कनिंघम के अनुसार चौथी पाचवी शती मे, वाकाटकनरेशो की राजधानी इसी स्थान पर थी। (टि० विंसेंट स्मिथ के अनुसार वाकाटको की राजधानी वाकाटकपुर मे थी जो जिला रीवा (म० प्र०) के निकट स्थित है)। चीनी यात्री युवानच्वाग 639 ई० मे भद्रावती पहुचे थे। उस समय यहा सौ सघाराम थे जिनम चौदह सौ भिक्षु निवास करते थे। उस समय भद्रावती का राजा सोमवशीय था तथा बौद्धधम मे श्रद्धा रखता था। युवानच्वाग ने भद्रावती का कोसल की राजधानी बताया है और इसको सात मील के घेरे के अदर स्थित कहा है। भाडक से 1 मील पर बीजासन नामक तीन गुफाए हैं जो शायद वही गुफाए है जिनका उल्लेख युवानच्वाग ने भी किया है। ये शलकृत्त है और उनके गभगृह म बुद्ध की विशाल मूर्तिया उकेरी हुई हैं। इनमे भिक्षुओ के निवास के लिए भी प्रकोष्ठ बने हुए हैं। एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि इन गुफाओ का निर्माण बौद्ध राजा सूयघोष ने करवाया था। इसका पुत्र प्रासाद पर से गिर कर मर गया था। उसी की स्मृति म सूयघोष ने इस गुहामदिर का बनवाया था। तत्पश्चात उदयन और भवदेव ने सुगत के इस गुहा मदिर का जीर्णोद्धार करवाया (दे० डा० हीरालाल—मध्य प्रदेश का इतिहास, पृ० 13)। यहा आज भी प्रचुर बौद्ध अवशेष विस्तृत खडहरो के रूप मे है। भाडक मे पार्श्वनाथ का जैन मदिर भी है जिसके निकट एक सरोवर से अनेक प्राचीन मूर्तिया प्राप्त हुई थी। बौद्ध तथा जैनधम से सबधित अवशेषो के अतिरिक्त, भाडक मे हिंदू मदिरादि के भी अवशेष प्रचुरता से मिलते हैं। भद्रावतीनगरी को जमिनी के महाभारत मे युवानाश्व की राजधानी बताया गया है। भद्रनाग का मदिर जिसके अधिष्ठातृ-देव नाग है, प्राचीन वास्तु का श्रेष्ठ उदाहरण है। नाग की प्रतिमा अनेक फनो स युक्त है। मदिर की दीवारो के बाहरी भाग पर शिल्प का सुदर एव सूक्ष्म काम प्रदर्शित है। इसी के साथ शेषशायी विष्णु की मूर्ति भी कला का अदभुत उदाहरण है। विष्णु के निकट लक्ष्मी उनके चरणो के पास स्थित है। विष्णु की नाभि मे से सनाल कमल पुष्प तथा उस पर आसीन ब्रह्मा का अकन बडे कौशल से किया गया है। दशावतार का प्रदशन करने वाले पाषाण पट्ट भी मदिर की शोभा बढ़ाते हैं। बाहर के बरामदे म वराह भगवान् की मूर्ति अवस्थित है। मदिर के निकट एक गुहा

है जिसका पता हाल ही मे लगा है। इसम भी प्राचीन अवशेष मिले हैं। जैन मदिर के पास चडिका का नष्ट-भ्रष्ट मदिर है। यहा से आधा मील दूर डोलारा जलाशय के निकट एक टीले पर प्राचीन खडहर बिखरे पडे है। जलाशय के तट पर भी शिव, पार्वती, कार्तिकेय, सूय, कृष्ण, सरस्वती आदि की प्राचीन मूर्तिया मिली हैं। भद्रावती के खडहरो मे उत्खनन का काय अभी तक नही के बराबर हुआ है। व्यवस्थित रूप स खुदाई होने पर यहा से अवश्य ही अनेक महत्त्वपूण ऐतिहासिक तथ्यो को प्रकाश मे लाया जा सकेगा।

(4) (सौराष्ट्र, गुजरात) सोरठ मे बहने वाली एक नदी जो प्राचीन वेत्रवती (वतमान बर्तोई नदी) के दक्षिण म है। भद्रावती का उद्गम गिरनार पवत म है। जूनागढ इसी नदी के काठे मे बसा है।

भद्राश्व

पौराणिक भूगोल के अनुसार भद्राश्व जबूद्वीप का एक भाग है। इसके उपास्य देव हयग्रीव हैं। विष्णुपुराण म भद्राश्व को मेरु के पूव मे माना है—'भद्राश्व पूवतो मेरो केतुमाल च पश्चिमे' विष्णु० 2,2,23। विष्णु० 2,2,34 म सीता या तरिम नदी को भद्राश्व की नदी कहा गया है—'पूर्वेण शलात्सीता तु शैल यात्यतरिक्षगा, ततश्च पूववर्पेण भद्राश्वेनैति साणवम्'—इस वणन से भद्राश्व, सिंक्यिाग (चीन) का प्राचीन पौराणिक नाम जान पडता है। महाभारत सभा० म अर्जुन की उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा मे उनका भद्राश्व पहुचना भी वर्णित है—'त माल्यवत शैलेंद्र समतिक्रम्य पाडव, भद्राश्व प्रति वेशाय वप स्वर्गोपम शुभम्'—सभा० 28 दाक्षिणात्य पाठ। (दे० सीता)

भद्रिका=भद्दिय

जन कल्पसूत्र म वर्णित है कि तीर्थंकर महावीर ने इस स्थान पर दो वर्षा काल बिताए थे। (दे० भद्दिय)

भद्रेश्वर (कच्छ, गुजरात)

इस नगर का प्राचीन नाम भद्रावती भी था। यहा जैन तीर्थंकर महावीर का अति प्राचीन मदिर समुद्रतट पर अवस्थित है।

भनकोली (जिला देहरादून, उ० प्र०)

लाखामडल से आगे इस स्थान पर महासू या महाशिव का तिब्बत शैली मे निर्मित सुदर प्राचीन मदिर है।

भनयूर (कश्मीर)

मातड मदिर की शैली मे बना एक मदिर यहा का उल्लेखनीय स्मारक है।

भगुआ (जिला शाहाबाद, बिहार)

इस स्थान पर 7वीं शती ई० के पूर्वार्ध म बना हुआ, मुडेश्वरी देवी का मदिर उत्तरी भारत के प्राचीनतम मदिरो मे स है। इस मदिर क प्रवेशद्वार की पत्थर की चौखट क पट्टो पर देवताओ विशेषकर गगा-यमुना की मूर्तिया अकित हैं जो गुप्त मदिरो के वास्तु का प्रिय विषय था। इस मदिर की खोज 1905 6 मे डा० ब्लाक ने की थी। एक दानलेख म जो यहा मिला है, महासामत उदयसेन के शासनकाल म भागुदलन नामक व्यक्ति क कुछ दानो का वर्णन है। इसमे विनीतेश्वर के मदिर के निकट एक मठ के बनवाए जाने तथा मडलेश्वरी (=मुडेश्वरी) विष्णु के मदिर के लिए दिए हुए दान का विवरण है। पाल-नरेशो के शासन काल (800 1200 ई०) मे इस मदिर म कई परिवर्तन किए गए थे। मुडकेश्वरी का मदिर पटकोण आधार पर बना है। ऐसा नक्शा भारत म अन्य प्राचीन मदिरो मे अयत्र नही दिखाई देता। मुमरा क मदिर की भाति ही इसकी कुर्सी के आधार पर गोल चौडी उभरी हुई पट्टियाँ बनी हैं और कीर्तिमुख सिंहो के मुखो मे माला धारण किए हुए मूर्तियाँ निर्मित हैं। प्रवेशद्वार की चौखट पर सूक्ष्म तक्षण क साथ मानव मूर्तियो का भी अकन है। गुप्त-कालीन मदिरो की कला परपरा के अनुकूल ही इस मदिर म भी सुघड चैत्य-वातायनो को धारण करने वाले स्तभ हैं जिन पर अकित मूर्तिकारी बडी मनोरम जान पडती है।

भरतपुर (राजस्थान)

प्रसिद्ध भूतपूर्व जाट रियासत का मुख्य नगर जिसकी स्थापना चूणामणि जाट ने 1700 ई० के लगभग की थी। इमादउस-सयादत के लेखक के अनुसार चूरामन (=चूडामणि) ने जो अपने प्रारंभिक जीवन मे लूटमार किया करता था भरतपुर की नीव एक सुदृढ गढी के रूप म डाली थी। यह स्थान आगरे से 48 कोस पर स्थित था। गढी के चारो ओर एक गहरी परिखा थी। धीरे-धीरे चूरामन ने इसको एक मोटी व मजबूत मिट्टी की दीवार से घेर लिया। गढी के अदर ही वह अपना लूट का माल लाकर जमा कर देता था। आसपास के कुछ गावो से उसने कुछ चमकारो को यहा लाकर बसाया और गढी की रक्षा का भार उन्हे सौप दिया। जब उसके सैनिको की सख्या लगभग चौदह हजार हो गई तो चूरामन एक विश्वस्त सरदार को गढी का अधिकार देकर लूटमार करने के लिए कोटा बूदी की ओर चला गया। भरतपुर की शोभा बढाने तथा राजधानी को सुदर तथा शानदार महलो से अलकृत करने का काय राजा सूरजमल जाट ने किया जो भरतपुर का सवश्रेष्ठ शासक था। 1803 ई० मे

लाड लेक ने भरतपुर के किले का घेरा डाला। इस समय भरतपुर तथा परिवर्ती प्रदेश मे आगरे तक राजा जवाहरसिंह का राज्य था। किले की स्थूल मिट्टी की दीवारो को तोप के गोलो से टूटता न देख कर लेक ने इन की नीव मे बारूद भरकर इन्हे उडा दिया। इस युद्ध के पश्चात् भरतपुर की रियासत अग्रेजो के अधिकार क्षेत्र के अतगत आ गई।

भरुकच्छ

भरुकच्छ भृगुकच्छ (=भडौच) का रूपातरण है। महाभारत, सभा० 51,10 मे भरुकच्छ निवासियो का युधिष्ठिर की राजसभा मे गाधार देश के बहुत से घोडो को भेंट मे लेकर आने का वणन है—'बलि च कृत्स्नमादाय भरुकच्छनिवासिन, उपनिन्युमहाराज हयान्गाधारदेशजात्'—इसके आगे (सभा० 51,10) समुद्रनिष्कुटप्रदेश के निवासियो का उल्लेख है। समुद्रनिष्कुट कच्छ का प्राचीन अभिधान था। इस से भरुकच्छ का भडौच से अभिज्ञान पुष्ट हो जाता है। शूर्पारक जातक मे भरुकच्छ को भरुराष्ट्र का मुख्य स्थान माना गया है। इस जातक मे भरुकच्छ के समुद्र-व्यापारियो की साहसिक यात्राओ का विशद वणन है। भरुकच्छ का उल्लेख (एक पाठ के अनुसार) रुद्रदामन् के गिरनार अभिलेख म है—'श्वभ्रभरुकच्छ सिंधु ' आदि।

भरुराष्ट्र

भृगुकच्छ या भडौच जनपद का नाम। शूर्पारकजातक मे भरुरट्ठ (=भरुराष्ट्र) का नामोल्लेख इस प्रकार है—'अतीते भरुरटठे भरुराजा नाम रज्ज कारेसि, भरुकच्छ नाम पट्टनगामो अहोसि'—अर्थात भरुराष्ट्र म भरु राजा राज करता था जिसकी राजधानी भरुकच्छ मे थी। इस प्रदेश के समुद्रवणिको की साहस-यात्राओ का रोमाचकारी वृत्तात शूर्पारक जातक मे वर्णित है। (द० भृगुकच्छ।)

भर दे० भग

भभक

'रामकान् भभकाश्चैव व्यजयत् सात्वपूवकम्, वैदहक च राजान जनक जगतीपतिम्' महा० सभा० 30,13। रामक-भभक निवासियो को भीम ने अपनी पूर्वदिशा की दिग्विजय यात्रा मे हराया था। सदभ से इनकी स्थिति विदह या मिथिला (बिहार) तथा गोरखपुर (उ० प्र०) क बीच के प्रदश म जान पडती है। श्री वा० श० अग्रवाल के मतानुसार रामक-भभक लिच्छवियो की उपजातिया थी। यदि यह तथ्य हो तो इन स्थाना का सबध वैशाली स होना चाहिए। भभक का पाठातर महाभारत के नीलकठी सस्करण म वमक है।

भलदरिया (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

वन्य प्रदेश मे बहने वाली इस नदी के काठे मे कई प्रागैतिहासिक गुफाए अवस्थित हैं जिनमे आदियुगीन चित्रकारी का अकन है। एक चित्र मे एक जगली सुअर के शिकार का सजीव आलेखन है। सुअर के शरीर मे तेज तीर जैसे अस्त्र घुसे हुए हैं और उससे रक्त बह रहा है। सुअर की मुद्रा से उसके शरीर की पीडा झलक रही है।

भल्लाट

'एव बहुविधान् दिशान् विजिग्ये भरतर्षभ भल्लाटमभितो जिग्ये शुक्तिमत च पवतम्'—महा० सभा०, 30,5। भीमसेन ने पूव दिशा की दिग्विजय यात्रा मे इस देश को विजित किया था। इसका नाम शुक्तिमान पवत के साथ तथा काशी (सभा० 30,6) से पहले होने से ऐसा जान पडता है कि यह काशी और विंध्याचल की उत्तरी शैलमाला के बीच का भाग रहा होगा। सभव है यह जिला मिर्जापुर (उ० प्र०) के निकटवर्ती भूभाग का नाम हो। कल्किपुराण मे भी इसका उल्लेख है।

भवपुर (कबोडिया)

प्राचीन भारतीय उपनिवेश कबुज का एक नगर। कबुज मे हिंदू नरेशो का राज प्राय तेरह सौ वर्ष तक रहा था।

भवरोगहर

वह वद्यनाथ धाम है। 'वैद्याम्या पूजित सत्य लिंगमेतत पुरा मम। वैद्यनाथमिति ख्यात सव कामप्रदायकम्' शिवपुराण।

भांखरी (जिला अलीगढ, उ० प्र०)

इस ग्राम से विष्णु की एक सुदर गुप्तकालीन मूर्ति प्राप्त हुई थी जो मथुरा-मूर्तिकला की परपरा म निर्मित होने के कारण वहीं के सग्रहालय मे रखी गई है। इसमे विष्णु के साधारण मुख के अतिरिक्त नसिंह और वराह की मुखाकृतिया भी प्रदर्शित हैं। गुप्तकाल मे इस प्रकार की मूर्तियो का प्रचलन था। मूर्ति के पीछे एक प्रभामडल था जो अब टूटी हुई दशा म है। इस पर अग्नि, नवग्रह, अश्विनीकुमार तथा सनक, सनातन तथा सनत्कुमार की प्रतिमाए अकित है। विद्वानो का विचार है कि विष्णु के नसिंह और वराह रूपो का अकन, चद्रगुप्त विक्रमादित्य की शकविजय तथा दु खमग्ना पृथ्वी के उद्धार का प्रतीक है।

भांडक=भांदक दे० भद्रावती (3)

भाडारेज (राजस्थान)

इस स्थान पर एक बावडी है जो राजस्थान की प्राचीन शिल्पकला का

सुदर उदाहरण है। इसके विषय मे स्थानीय कपोलकल्पना है कि इसे प्रेतात्माओ ने अध रात्रि के समय बनवाया था।

भाडासर (ज़िला बीकानेर, राजस्थान)

इस स्थान पर राणकपुर के त्रैलोक्यदीपक नामक ऋषभदेव के प्रसिद्ध मदिर के अनुकरण पर बना हुआ जैन मदिर है किंतु इसमे राणकपुर के मदिर की भव्यता तथा कला सौदय के दशन नही होते।

भागनगर, भागनगरी=भागनेर

हैदराबाद का प्राचीन नाम। शिवाजी के राजकवि भूषण ने भागनगर का नामोल्लेख कई स्थानो पर किया है—'भूषन भनत भागनगरी कुतुबसाही दैकरि गवायो रामगिरि से गिरीस को'—शिवराज भूषण, 241। 'गढनेर, गढचादा, भागनेर, बीजापुर नृपन की बारी रोप हायनि मलत है' शिवराजभूषण, *116* भूषण के अनुसार भागनगर को कुतुबशाह (सुलतान गोलकुडा) ने शिवाजी को दे दिया था और शिवाजी ने सधि हाने पर मुगलो का। भागनगर को गोलकुडा के सुलतान मुहम्मद कुली कुतुबशाह ने 1591 ई० मे अपनी प्रेयसी भागमती के नाम पर बसाया था। (दे० हैदराबाद)

भागलपुर

(1) दे० चपा

(2) (उ० प्र०) भटनी इलाहाबाद रल शाखा पर तुर्तीपार स्टेशन के निकट है। यहा एक खडित स्तभ है जिस पर 10वी शती की कुटिलालिपि मे एक अभिलेख अकित है। इस के ऊपर उस समय के प्रसिद्ध तीथ यात्री नगरध्वज-जोगी का नाम उत्कीण है। नाम के आगे 900 का अक है जिसका सबध हपसवत से जान पडता है। स्थानीय लोकश्रुति से विदित होता है कि मझौली परिवार के पूवज राजा भिमल ने इस स्तभ को बनवाया था।

भागीरथी

गगा का एक नाम जिसका सवध महाराज भगीरथ से है। भगीरथ की तपस्या के फलस्वरूप गगा के अवतरण की कथा वाल्मीकि वाल० 38 स 44 अध्याय तक है। कथा के अत मे गगा के भागीरथी नाम का उल्लेख है— गगा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च त्री रथो भावयन्तीति तस्मान् त्रिपथगा स्मता'—*वाल० 44,6*। महाभारत मे भी भागीरथी गगा का वणन पाडवो की तीथयात्रा के प्रसग मे है—'तत्रापश्यत धर्मात्मा दव दर्वापिपूजितम, नरनारायण-स्थान भागीरथ्योपशोभितम्। यह बदरीनाथ का वणन ह। भागीरथी गगा की उस शाखा का कहते हैं जो गढवाल (उ० प्र०) मे गगोत्री से निकल कर देव-

प्रयाग तक आती है और वहा गगा की मूलधारा अलकनदा मे मिल जाती है।

भाजा (महाराष्ट्र)

ववई-पूना रेलपथ पर मलवणी स्टेशन के निकट यह स्थान वौद्धकालीन गुहामदिरो के लिए प्रसिद्ध है। ये सख्या मे 18 हैं। इनके बीच मे 17 फुट लवी चौडी चैत्यशाला है जो बहुत प्राचीन है। इसके सामने बरामदा और आठ प्रकोष्ठ हैं जो भिक्षुओ के रहने के काम मे आते थे। गुहाओ म मूर्तिकला के उदाहरण बहुत थोडे हैं। इसकी भित्तियो पर पाच मानवाकृतिया उत्कीर्ण हैं जिनके नीचे दानवो की प्रतिमाए बनी हैं। दूसरी मूर्ति सभवत गजारूढ देवेंद्र की है। यह गुहाविहार सूप के उपासको द्वारा निर्मित जान पडता है। इसका निर्माण-काल 200-300 ई० पू० है। भाजा का पहाडी पर लोहगढ तथा ईशापुरी के प्राचीन दुर्ग हैं।

भाभेर (जिला खानदेश, महाराष्ट्र)

धूलिया से 30 मील दूर यहा एक प्राचीन जैन गुहा मदिर है जो अब नष्ट हो गया है। यह एक छोटी पहाडी मे से काट कर बनाया गया है। इसमे तीर्थ-करो की कई मूर्तिया उत्कीर्ण हैं।

भारत=भारतवर्ष

पौराणिक भूगोल के अनुसार भारतवर्ष जवूद्वीप का एक वर्ष या भाग है। इसका नाम दुष्यत शकुतला के पुत्र भरत के नाम पर प्रसिद्ध हुआ है। किंतु विष्णुपुराण के अनुसार भरत को ऋषभदेव का पुत्र बताया गया है जिसे ऋषभ देव ने वन जाते समय अपना राजपाट सौप दिया था—'ततश्च भारतवर्षमेतल लोकेषु गीयते, भरताय यत पित्रा दत्त प्रातिष्ठता वनम्'—विष्णु 2,1,32। विष्णुपुराण 2,3 1 मे भारतवर्ष की निम्न परिभाषा है—'उत्तर यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिण वर्षं त भारत नाम भारती यत्र स तति'। अगले श्लोको म इस देश का विस्तार नौ सहस्र योजन कहा गया है और इसमे सात कुलपर्वतो की स्थिति बताई गई है। भारतवर्ष के निम्न नौ खड या भाग हैं—इद्रद्वीप, कसेरु, ताम्रपर्ण, गभस्तिमान्, नागद्वीप, सौम्य, गधर्व, वारुण और भारत (विष्णु० 2,3 6 7) विष्णुपुराण के रचयिता ने देश प्रेम की भावना से ओत-प्रोत होकर कितने सुदर शब्दो म भारत की गौरव गाथा लिखी है।—'अत्र जन्म सहस्राणा सहस्रैरपि सत्तम कदाचिल्लभते जतुर्मानुष्य पुण्यसचयात', 'गायति देवा किल गीतकानि धन्यास्तुते भारतभूमिभागे, स्वर्गापवर्गास्पदमार्ग भूते भवति भूय पुरुषा सुरत्वात्' विष्णु० 2,3,23 24। अर्थात् हे महापुरुष, सहस्रो

जन्मो के पुण्य सचित होने पर ही जीवो का, सयोग से, इस महान देश मे जन्म होता है। देवगण भी निरतर यही गान करते हैं कि स्वर्गापवर्ग के मार्गस्वरूप इस भारत मे जन्म लेकर मनुष्य देवताओ से भी अधिक गौरवशाली और धन्य हो जाते हैं। वास्तव मे बौद्धधर्म के अपकर्ष के पश्चात् और प्राचीन हिंदू धर्म के पुनरुज्जीवन काल (गुप्तकाल) मे, भारत के भौगोलिक स्वरूप मे दृढ आस्था तथा इसके पर्वतो, नदियो, नगरो वरन् देश के प्रत्येक भूमि-भाग के प्रति प्रगाढ प्रेम एव उनकी तीर्थरूप मे मान्यता—ये पुनीत भावनाए प्रत्येक भारत वासी के हृदय मे प्रतिष्ठित हो गई थी। इन्ही भावनाओ ने गुप्तकाल मे, जो कालिदास, विष्णुपुराण और महाभारत (नवीन सस्करण) का युग था, एक नई चेतना एव राष्ट्रीय सस्कृति को जन्म दिया जिनका मुख्य आधार राष्ट्र की भौतिक तथा भौगोलिक एकता के प्रति अगाध और अटूट प्रेम था। बौद्ध धर्म की अतर्राष्ट्रीयता ने राष्ट्रीय एकता के सूत्र विच्छिन्न कर दिए थे। उन्हे इस काल मे देश के मनीषियो ने, जिनमे पुराणो तथा धर्मशास्त्रो के रचयिता प्रमुख थे, बडे परिश्रम से फिर से सजोया और इनके सुदृढ बधन मे पूरे भारत की समाज तथा सस्कृति को बाधकर एक महान राष्ट्र की स्थापना की जिससे सैकडो वर्षों तक शत्रुओ से देश की रक्षा होती रही।

[1] जैन ग्रथ जबूद्वीप प्रज्ञप्ति मे भारतवर्ष को जबूद्वीप के अतर्गत चक्रवर्ती सम्राट् का राज्य बताया गया है और विंध्याचल (वैताढय) पर्वत द्वारा इसका आर्यावर्त और दाक्षिणात्य दो विभागो मे विभक्त माना गया है।

भारद्वाज दे० नारीतीर्थ

भारद्वाज आश्रम

यह रामायण काल मे प्रयाग के अतर्गत था। आज भी प्रयाग रेल स्टेशन के निकट इसकी स्थिति बताई जाती है। वन जाते समय श्रीरामचद्र, लक्ष्मण और सीता तथा उनसे मिलने के लिए चित्रकूट आते हुए भरत और पुरवासी-गण, भारद्वाज के आश्रम मे ठहरे थे। वह गगा यमुना के सगम के पास स्थित था। चित्रकूट भी यहा से पास ही था। (दे० चित्रकूट)

भारद्वाजी

गोदावरी नदी की सप्त शाखाओ मे से एक है।

भारमौर (हिमाचल प्रदेश)

इस स्थान पर प्राय 1200 वर्ष प्राचीन कई मदिर हैं। ये शिखर सहित हैं तथा प्राचीन वास्तु के अच्छे उदाहरण हैं।

भारहुत (म० प्र०)

भूतपूर्व नागोद रियासत मे स्थित है। यह स्थान प्रथम-द्वितीय शती ई० पू० मे निर्मित बौद्धस्तूप तथा इसके तोरणो पर अकित मूर्तिकारी के लिए साची के समान ही प्रसिद्ध है। स्तूप के पूर्व मे स्थित तोरण के स्तभ पर उत्कीर्ण लेख से ज्ञात होता है कि इसका निमाण 'वाछीपुत धनभूति' ने करवाया था जो गोतीपुत अगरजु का पुत्र और राजा गागीपुत विसदेव का प्रपौत्र था। इस अभिलेख की लिपि से यह विदित होता है कि यह तोरण शुग काल—(प्रथम द्वितीय शती ई० पू०) मे बना था। भारहुत और साची के तोरणो की मूर्तिकारी तथा कला मे बहुत साम्य है क्योकि ये दोनो लगभग एक काल के हैं और इनका विषय भी प्राय एक ही है। इनमे से अधिकाश मे, बौद्ध जातक कथाओ का सरल, सुदर और कलात्मक अकन है। भारहुत का स्तूप पूर्णरूपेण नष्ट हो चुका है। इसके तोरणो के केवल कुछ ही कलापट्ट कलकत्ता के सग्रहालय मे सुरक्षित हैं किंतु ये भारहुत की कला के सरल सौंदय के परिचय के लिए पर्याप्त है।

भारुड

वाल्मीकि रामायण मे भारुड वन का उल्लेख भरत की केकय देश से अयोध्या तक की यात्रा के प्रसग म है, 'सरस्वती च गगा च युग्मेन प्रतिपद्य च, उत्तरा वीरमत्स्याना भारु ड प्राविशदवनम' अयो० 71,5। सरस्वती और गगा के बीच मे इस वन की स्थिति थी।

भार्गवी

कावेरी नदी के शिवसमुद्रम् नामक द्वीप से प्राय तीन मील दूर भार्गवी नदी है जिसका नाम भृगुवशीय परशुराम के नाम पर प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि भार्गवी नदी के तट पर परशुराम की तप स्थली थी।

भालक=भालकेश्वर=भालेश्वर (काठियावाड, गुजरात)

प्रभासपाटन के निकट ही यह वह स्थान है जहा पीपल वृक्ष के नीचे बठे हुए भगवान् कृष्ण के चरण म जरा नामक व्याध ने धोखे से बाण मारा था जिसके परिणामस्वरूप वे शरीर त्याग कर परमधाम सिधारे थे। आज भी यहा उसी पीपल का वशज, मोक्षपीपल नामक वृक्ष स्थित है।

भावन

द्वारका के उत्तर की ओर वेणुमान् पवत का एक वन— भाति चत्ररथ चैत्र नदन च महावनम, रमण भावन चैव वेणुमन्त समतत '—महा० सभा०, 38 दाक्षिणात्य पाठ।

भावापार (जिला बस्ती, उ० प्र०)

प्राचीन बौद्ध स्मारको के खडहरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। बस्ती के जिले मे या उसके सीमावर्ती नेपाल के सलग्न भूभाग मे, बुद्ध की जीवनी से सबधित अनेक महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्ही मे इसकी भी गणना है।

भास्कर क्षेत्र=भास्करपुरम् (दे० करूर)

भिसरोर (जिला उदयपुर, राजस्थान)

इस स्थान पर प्राचीन समय मे मेवाड राज्य का एक प्राचीन दुर्ग था। हल्दीघाटी के युद्ध के पश्चात जब राणाप्रताप और उनके भाई शक्तसिंह मे पुन मेल हो गया तो राणा ने शक्तसिंह के अपराध क्षमा करके उसे भिसरोर का दुर्ग जीतने को कहा। यह दुर्ग मुगलो के अधिकार मे था। शक्तसिंह ने बडी वीरता से युद्ध करके इस को विजित कर लिया। प्रतापसिंह ने दुर्ग को शक्तसिंह को सौंप कर उसे ही यहा का अधिकारी बना दिया। शक्तसिंह के वशजो—शक्तावत राजपूतो का यहा बहुत समय तक अधिकार रहा।

भिकियासैण (तहसील रानीखेत, जिला अल्मोडा, उ० प्र०)

रामगगा और गगास नदियो के सगम पर बसा हुआ तीर्थ। यहा का प्राचीन शिवमदिर उल्लेखनीय है।

भिन्नमाल=भिलमाल=श्रीमाल (जिला जोधपुर, राजस्थान)

आबू पहाड से 50 मील उत्तर-पश्चिम मे स्थित है। चीनी यात्री युवानच्वाग ने भिन्नमाल को सभवत पिलोमोलो नाम से अभिहित किया है और इस नगर को गुर्जरदेश की राजधानी बताया है। भिन्नमाल का एक अन्य नाम श्रीमाल भी प्रचलित है। 12वी-13वी शती मे रचित प्रभावकचरित नामक ग्रथ मे प्रभाचद्र ने श्रीमाल को गुर्जर देश का प्रमुख नगर कहा है—'अस्ति-गुर्जरदेशोऽन्यसज्जराजन्यदुर्जर तत्र श्रीमालमित्यस्ति पुर मुखमिव क्षिते'। इस ग्रथ मे यहा के तत्कालीन राजा श्रीवमल का उल्लेख है। सातवीं शती ई० मे गुर्जर-प्रतिहार राजपूतो की शक्ति का विकास दक्षिणी मारवाड मे प्रारभ हुआ था। इन्होने अपनी राजधानी भिन्नमाल मे बनाई। ये राजपूत स्वय को विशुद्ध क्षत्रिय और श्रीराम के प्रतिहार लक्ष्मण का वशज मानते थे। भिन्नमाल और कन्नौज के गुर्जर-प्रतिहार राजा बहुत प्रतापी और यशस्वी हुए। भिन्नमाल के राजाओ मे वत्सराज (775 800 ई०) पहला प्रतापी राजा था। इसने बगाल तक अपनी विजय-पताका फहराई और वहा के पालवशीय राजा धर्मपाल को युद्ध मे पराजित किया। मालवा पर भी इसका शासन स्थापित हो गया था। वत्सराज को राष्ट्रकूट नरेश राजध्रुव से पराजित होना पडा अत उसका

महाराष्ट्र-विजय का स्वप्न साकार न हो सका। वत्सराज के पुत्र नागभट्ट द्वितीय ने धर्मपाल को मुंगेर की लडाई म हराया और उसके द्वारा नियुक्त कन्नौज के शासक चक्रायुध से कन्नौज को छीन लिया। उसके प्रभुत्व का विस्तार काठियावाड से बगाल तक और कन्नौज से आंध्रप्रदेश तक स्थापित था। उसने सिंध के अरबो को भी पश्चिमी भारत म अग्रसर होने से रोका। किंतु अपने पिता की भाति नागभट्ट को भी राष्ट्रकूट नरेश से हार माननी पडी। इस समय राष्ट्रकूट का शासक गोविंद तृतीय था। नागभट्ट के पौत्र मिहिर भोज (836 890 ई०) ने उत्तरभारत म गुजर प्रतिहारो के समाप्त होते हुए प्रभुत्व का सँभाला। इसने अपने विस्तृत राज्य का भली भाति शासन प्रबध करने के लिए, अपनी राजधानी भिन्नमाल से हटाकर कन्नौज मे स्थापित की। इस प्रकार भिन्नमाल को लगभग 100 वर्षों तक प्रतापी गुजर प्रतिहारो की राजधानी बन रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। भिन्नमाल मे इनके शासनकाल के अनेक ऐतिहासिक अवशेप स्थित हैं। अनुमान है कि इनका समय 7वी शती का उत्तराध और 8वी शती का पूर्वाध था। शिशुपालवध की कई प्राचीन हस्तलिपियो म महाकवि माघ का भि नमालव या भिन्नमाल से सबध इस प्रकार बताया गया है—'इति श्री भिन्नमालववास्तव्यदत्तकसूनोमहावैयाकरणस्य माघस्य कृतौ शिशुपालवध महाकाव्ये'—माघ के पितामह सुप्रभदेव श्रीमालनरेश वमलात या वमल के महामात्य थे। ऐतिहासिक किंवदतियो से भी यही सूचित होता है कि सस्कृत के महाकवि माघ भि नमाल के ही निवासी थे। भि नमाल का रूपातर भिलमाल भी प्रचलित है।

भिलायो

सूरत के निकट एक नगर जिसका उल्लेख छत्रपति शिवाजी के राजकवि भूषण ने किया है—'सहर भिलायो मारि गरद मिलाओ गढ अजहूँ न जागे पाछे भूप किन नाकरी' (भूषण ग्रथावलि, फुटकर छद 30)। जान पडता है कि शिवाजी न सूरत पर आक्रमण के समय भिलायो को भी विध्वस किया था। भूषण ने यहा के गढ के शिवाजी द्वारा धूल मे मिलाए जाने का उल्लेख किया है।

भिल्लग्राम=दे० विलग्राम

भीटा (जिला इलाहाबाद, उ०प्र०)

प्रयाग से लगभग बारह मील दक्षिण पश्चिम की ओर यमुना तट पर कई विस्तृत खडहर हैं जो एक प्राचीन समृद्धिशाली नगर के अवशेष हैं। इन खडहरो से प्राप्त अभिलेखो मे इस स्थान का प्राचीन नाम सहजाति है। 1909 1910 म भीटा मे भारतीय पुरातत्व विभाग की ओर से मार्शल ने

उत्खनन किया था। विभाग के प्रतिवेदन में कहा गया है कि खुदाई में एक सुंदर, मिट्टी का बना हुआ वर्तुल पट्ट प्राप्त हुआ था जिस पर संभवतः शकुन्तला-दुष्यन्त की आख्यायिका का एक दृश्य अंकित है। इसमें दुष्यन्त और उनका सारथी कण्व के आश्रम में प्रवेश करते हुए दर्शाए गए हैं और एक आश्रमवासी उनसे आश्रम के हरिण को न मारने के लिए प्रार्थना कर रहा है। पास ही एक कुटी भी है जिसके सामने एक कन्या आश्रम के वृक्षों को सींच रही है। यह मृत्खंड शुंगकालीन है (117-72 ई० पू०) और इस पर अंकित चित्र यदि वास्तव में दुष्यन्त-शकुन्तला की कथा (जिस प्रकार वह कालिदास के नाटक में वर्णित है) से संबंधित है, तो महाकवि कालिदास का समय इस तथ्य के आधार पर, गुप्तकाल (5वीं शती ई०) के बजाए पहली या दूसरी शती ई० पू० भी काफी पूर्व मानना होगा। किंतु पुरातत्त्व विभाग के प्रतिवेदन में इस दृश्य की समानता कालिदास द्वारा वर्णित दृश्य से आवश्यक नहीं मानी गई है। भीटा से, खुदाई में, मौर्यकालीन विशाल ईंटें, पराकोटा, मूर्तियाँ, मिट्टी की मुद्राएँ तथा अनेक अभिलेख प्राप्त हुए हैं जिनसे सिद्ध होता है कि मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल तक यह नगर काफी समृद्धिशाली था। यहाँ से प्राप्त सामग्री लखनऊ के संग्रहालय में है। भीटा के समीप ही मानकुंवर ग्राम में एक सुंदर बुद्ध-प्रतिमा मिली थी जिस पर महाराजाधिराज कुमारगुप्त के समय का एक अभिलेख उत्कीर्ण है (129 गुप्त संवत्=449)। सहजाति या भीटा, गुप्त और शुंग-काल के पूर्व एक व्यस्त व्यापारिक नगर के रूप में भी प्रख्यात था क्योंकि एक मिट्टी की मुद्रा पर 'सहजातिये निगमस' यह पाली शब्द तीसरी शती ई० पू० की ब्राह्मीलिपि में अंकित पाये गए हैं। इससे प्रमाणित होता है कि इतने प्राचीनकाल में भी यह स्थान व्यापारियों के निगम या व्यापारिक संगठन का केंद्र था। वास्तव में यह नगर मौर्यकाल में भी काफी समुन्नत रहा होगा जैसा कि उस समय के अवशेषों से सूचित होता है।

भीड (बीड़) (महाराष्ट्र)

जनश्रुति के अनुसार महाभारतकाल में इस नगर का नाम दुर्गावती था। कुछ समय पश्चात् यह नाम बलनी हो गया। तत्पश्चात् विक्रमादित्य की बहिन चंपावती ने यहाँ विक्रमादित्य का अधिकार हो जाने पर इसका नाम चंपावती रख दिया। बीड का संभवतः सर्वप्रथम उल्लेख विज्जलवीड नाम से गणितज्ञ भास्कराचार्य के ग्रंथों में मिलता है। इनका जन्म विज्जलवीड में हुआ था जो सह्याद्रि में स्थित था। भीड़ या बीड़ विज्जलवीड का ही संक्षिप्त अपभ्रंश

जान पडता है। भास्कराचार्य 12वी शती के प्रारभ मे हुए थे। इनके ग्रथो— लीलावती तथा सिद्धातशिरोमणि की तिथि 1120 ई० के आसपास मानी जाती है। बीड का प्राचीन इतिहास अधकार मे है किंतु यह निश्चत है कि यहा कालक्रमानुसार आध्र, चालुक्य, राष्ट्रकूट, यादव और फिर देहली के सुलतानो का आधिपत्य रहा। अकबर के समकालीन इतिहास लेखक फरिश्ता ने लिखा है कि 1326 ई० मे मुहम्मद तुगलक बीड होकर गुजरा था। तुगलको के पश्चात् बीड पर वहमनी वश के निजामशाही और फिर आदिलशाही सुलतानो का कब्जा हुआ और 1635 ई० मे मुगलो का। मुगलो के पश्चात् यह स्थान मराठो और इसके बाद निजाम के राज्य मे सम्मिलित हो गया। भूतपूर्व हैदराबाद रियासत के भारत म विलयन तक यह नगर इसी रियासत मे था।

बीड का जिला मराठी कवि मुकुदराम की जन्मभूमि है। इनका जन्म अवाजोगई नामक स्थान पर हुआ था। महानुभाव-साहित्य की खोज होने से पूर्व ये मराठी के प्राचीनतम कवि माने जाते थे। इनके ग्रथ विवेकसिधु, परमामृत आदि है। अवाजोगई मे ही दासोपत (1550 1615 ई०) का निवास स्थान था। इन्होने श्रीमद्भगवद्गीता पर वृहत टीका लिखी है। कागज के अभाव मे इन्होने अपने ग्रथ खद्दर के कपडे पर लिखे थे। इनका एक ग्रथ परिमाण मे 24 हाथ लबा और 2½ हाथ चौडा है। बीड मे खडेश्वरी देवी के दो मदिर हैं। मदिर के एक ओर की दीवार गढे हुए सुडौल पत्थरो की बनी है। दूसरा मदिर नगर से कुछ दूर है। इसम मूल मूर्ति के अभाव मे खाडोबा की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। इस मदिर मे 45 फुट ऊचे दो दीपस्तभ हैं जो वर्गाकार आधार पर स्थित हैं। 1600 ई० म बनी जामा मसजिद भी यहा का ऐतिहासिक स्मारक है।

भीतरगाव (जिला कानपुर, उ० प्र०)

कानपुर से लगभग 20 मील दूर इस स्थान पर इटो के बने हुए एक गुप्तकालीन मदिर के अवशेष हैं। यह मदिर कनिघम के अनुसार (आर्कियोलाजिकल सर्वे रिपोर्ट जिल्द 11, पृ० 40 46) सातवी-आठवी शती ई० का है किंतु वोगल (Vogel) ने प्रमाणित किया है कि यह इससे कम से कम तीन सौ वर्ष अधिक प्राचीन है (आर्कियोलोजिकल सर्वे रिपोर्ट 1908 1909, पृ० 9)। सभवत यह भारत का प्राचीनतम मदिर है। यह पक्की इटो का बना है। इसका विवरण इस प्रकार है—एक वर्गाकार स्थान पर यह मदिर बना है। इसके कोने, एक छोडकर एक, इस प्रकार से बने हैं और मध्य म 15 वर्ग फुट वर्ग का एक गर्भगृह तथा उसके साथ एक 7 फुट वर्ग का मडप है। दोनो

के बीच एक माग है। गभगृह के ऊपर एक वेश्म है जिसका क्षेत्र नीचे के कक्ष से लगभग आधा है। 1850 ई० मे ऊपरी भाग की छत बिजली गिरने से नष्ट हो गई थी। स्थूल दीवारो के बाह्य भाग पर आयताकार घेरो मे सुदर मूर्तिकारी का अकन है। ये मूर्तिया पकी हुई मिट्टी की बनी हैं। मदिर म अनेक सुदर अलकरणो का प्रदशन किया गया है। भित्तियो के ऊपरी भागो पर एकातरित घेरे तथा अलकरण स्तभ बने हैं। कसिया के निर्वाण मदिर की कुर्सी के पूर्वी भाग पर भी इसी प्रकार का अलकरण है जिससे इन दोनो सरचनाओ की समकालीनता सूचित होती है। श्री राखालदास बनर्जी के मत मे इस मदिर के शिखर मे महराबो की पक्तिया बनी हैं जो चैत्यवातायनो से भिन्न हैं। मदिर की कुर्सी के ऊपर उभरी हुई पट्टिया नही है जिससे नचना-कुठारा तथा भुमरा के मदिरो की वास्तुकला से भीतरगाव की कला भिन्न जान पडती है। मदिर का शिखर वास्तविक शिखर है तथा 40 फुट के करीब ऊचा है। भीतरगाव का मदिर, गुप्त वास्तुकला का अनुपम उदाहरण माना जाता है।

भीतरी (जिला गाजीपुर, उ०प्र०)

सदपुर भीतरी नाम के रेलस्टेशन से पाच मील उत्तर पूव मे एक बडा ग्राम है जिसमे कई गुप्तकालीन खडहर है। इनमे सबसे अधिक महत्त्वपूण स्कदगुप्त के समय का प्रसिद्ध स्तभ है जिस पर अकित अभिलेख म गुप्त-सम्राट स्कदगुप्त के राज्यकाल के प्रारभिक वर्षो के सघषमय जीवन का वणन सुदर सस्कृत काव्य शैली म प्रणीत है। स्कदगुप्त ने अपने भुजबल से हूणा तथा पुष्यमित्रो के आक्रमणो से गुप्त-साम्राज्य की रक्षा किस प्रकार की इसका वणन कवि ने इस प्रकार किया है—'पितरि दिविमुपेते विप्लुता वशलक्ष्मी, भुजबलविजितार्या य प्रतिस्थाप्य भूय, जितमितिपरितोपान मातरम सानेस्त्रा हृतरिपुरिव कृष्णो देवकीमभ्युपेत'। इस उद्धरण से स्कदगुप्त की माता का नाम दवकी जान पडता है। स्कदगुप्त को पुष्यमित्रा से युद्ध करते समय भूमि पर शयन कर तीन रातें बितानी पडी थी—'विचलित कुललक्ष्मीस्तभनेयोद्यतेन भितितलशयनीये येन नीता त्रियामा, समुदितबलकोशान पुष्यमित्रान् च जित्वा क्षितिपचरण पीठे स्थापितो वामपाद'। यह स्तभ बालु-प्रस्तर का बना है। विष्णु की एक मूर्ति पहले इस स्तभके शीष पर स्थापित थी। यह अब नही है। अभिलेख जो तिथिरहित है, सभवत 455 ई० के लगभग उत्कीण किया गया था।

भीमकुल्या

नमदा की सहायक नदी जो पिपरिया से एक मील दूर नमदा मे मिलती

जान पडता है। भास्कराचाय 12वी शती के प्रारभ मे हुए थे। इनके ग्रथो—लीलावती तथा सिद्धातशिरोमणि की तिथि 1120 ई० के आसपास मानी जाती है। बीड का प्राचीन इतिहास अधकार मे है किंतु यह निश्चित है कि यहा कालक्रमानुसार आध्र, चालुक्य, राष्ट्रकूट, यादव और फिर देहली के सुलताना का आधिपत्य रहा। अकबर के समकालीन इतिहास लेखक फरिश्ता ने लिखा है कि 1326 ई० मे मुहम्मद तुगलक बीड होकर गुजरा था। तुगलको क पश्चात् बीड पर बहमनी वश के निजामशाही और फिर आदिलशाही सुलताना का कब्जा हुआ और 1635 ई० मे मुगलो का। मुगलो के पश्चात यह स्थान मराठो और इसके बाद निजाम के राज्य मे सम्मिलित हो गया। भूतपूव हैदराबाद रियासत के भारत म विलयन तक यह नगर इसी रियासत म था।

बीड का जिला मराठी कवि मुकुदराम की जन्मभूमि है। इनका जन्म अबाजोगई नामक स्थान पर हुआ था। महानुभाव साहित्य की खोज होने स पूव ये मराठी के प्राचीनतम कवि माने जाते थे। इनके ग्रथ विवेकसिंधु, परमामृत आदि है। अबाजोगई म ही दासोपत (1550 1615 ई०) का निवास स्थान था। इन्होने श्रीमदभगवदगीता पर वृहत टीका लिखी है। कागज के अभाव मे इन्होने अपने ग्रथ खद्दर के कपडे पर लिखे थे। इनका एक ग्रथ परिमाण मे 24 हाथ लबा और 2½ हाथ चौडा है। बीड मे खडेश्वरी देवी के दो मदिर हैं। मदिर के एक ओर की दीवार गढ़े हुए सुडौल पत्थरो की बनी है। दूसरा मदिर नगर से कुछ दूर है। इसमे मूल मूर्ति के अभाव मे खाडोबा की प्रतिमा प्रतिष्ठापित है। इस मदिर म 45 फुट ऊचे दो दीपस्तभ हैं जो वर्गाकार आधार पर स्थित हैं। 1600 ई० मे बनी जामा मसजिद भी यहा का ऐतिहासिक स्मारक है।

भीतरगाव (जिला कानपुर, उ० प्र०)

कानपुर से लगभग 20 मील दूर इस स्थान पर इटो के बने हुए एक गुप्तकालीन मदिर के अवशेष हैं। यह मदिर कनिंघम के अनुसार (आर्कियोलोजिकल सर्वे रिपोट जिल्द 11, पृ० 40 46) सातवी-आठवी शती ई० का है किंतु वोगल (Vogel) ने प्रमाणित किया है कि यह इससे कम से कम तीन सौ वप अधिक प्राचीन है (आर्कियोलोजिकल सर्वे रिपोट 1908-1909, पृ० 9)। सभवत यह भारत का प्राचीनतम मदिर है। यह पक्की इटो का बना है। इसका विवरण इस प्रकार है—एक वर्गाकार स्थान पर यह मदिर बना है। वग के कोने, एक छोडकर एक, इस प्रकार स बने हैं और मध्य म 15 वग फुट वग का एक गभगह तथा उसके साथ एक 7 फुट वग का मडप है। दोनो

के बीच एक मार्ग है। गर्भगृह के ऊपर एक वेश्म है जिसका क्षेत्र नीचे के कक्ष से लगभग आधा है। 1850 ई० मे ऊपरी भाग की छत बिजली गिरने से नष्ट हो गई थी। स्थूल दीवारो के बाह्य भाग पर आयताकार घेरो मे सुदर मूर्तिकारी का अकन है। ये मूर्तिया पकी हुई मिट्टी की बनी हैं। मदिर मे अनेक सुदर अलकरणो का प्रदर्शन किया गया है। भित्तियो के ऊपरी भागो पर एकांतरित घेरे तथा अलकरण स्तभ बने हैं। कसिया के निर्वाण मदिर की कुर्सी के पूर्वी भाग पर भी इसी प्रकार का अलकरण है जिससे इन दोनो सरचनाओं की समकालीनता सूचित होती है। श्री राखालदास बनर्जी के मत मे इस मदिर के शिखर मे महरावो की पक्तिया बनी हैं जो चैत्यवातायनो से भिन्न हैं। मदिर की कुर्सी के ऊपर उभरी हुई पट्टिया नही हैं जिससे नचना-कुठारा तथा भुमरा के मदिरो की वास्तुकला से भीतरगाव की कला भिन्न जान पडती है। मदिर का शिखर वास्तविक शिखर है तथा 40 फुट के करीब ऊचा है। भीतरगाव का मदिर, गुप्त वास्तुकला का अनुपम उदाहरण माना जाता है।

भीतरी (ज़िला गाजीपुर, उ०प्र०)

सैदपुर भीतरी नाम के रेलस्टेशन से पाच मील उत्तर पूर्व म एक बडा ग्राम है जिसमे कई गुप्तकालीन खडहर हैं। इनमे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण स्कदगुप्त के समय का प्रसिद्ध स्तभ है जिस पर अकित अभिलेख म गुप्त-सम्राट् स्कदगुप्त के राज्यकाल के प्रारभिक वर्षों के सघर्षमय जीवन का वर्णन सुदर सस्कृत काव्य शैली म प्रणीत है। स्कदगुप्त ने अपने भुजबल से हूणो तथा पुष्यमित्रो के आक्रमणो से गुप्त-साम्राज्य की रक्षा किस प्रकार की इसका वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है—'पितरि दिविमुपेते विप्लुता वशलक्ष्मी, भुजबलविजितार्या य प्रतिस्थाप्य भूय, जितमितिपरितोपान् मातरम् सानस्रा हृतरिपुरिव कृष्णो देवकीमभ्युपेत'। इस उद्धरण से स्कदगुप्त की माता का नाम देवकी जान पडता है। स्कदगुप्त को पुष्यमित्रो से युद्ध करते समय भूमि पर शयन कर तीन रातें बितानी पडी थी—'विचलित कुललक्ष्मीस्तभनयोद्यतेन क्षितितलशयनीये येन नीता त्रियामा, समुदितबलकोशान् पुष्यमित्रान् च जित्वा क्षितिपचरण पीठे स्थापितो वामपाद'। यह स्तभ बालु प्रस्तर का बना है। विष्णु की एक मूर्ति पहले इस स्तभ के शीर्ष पर स्थापित थी। यह अब नही है। अभिलेख जो तिथिरहित है, सभवत 455 ई० के लगभग उत्कीर्ण किया गया था।

भीमकुल्या

नर्मदा की सहायक नदी जो पिपरिया स एक मील दूर नर्मदा मे मिलती

है। किंवदंती है कि इस स्थान पर मार्कंडेय ऋषि का आश्रम था।

भीमरथी

'वेणा भीमरथी चैव नद्यौ पापभयापहे, मृगद्विजसमाकीर्णे तापसालय-भूषिते'—महा० वन० 88,3 अर्थात वेणा और भीमरथी नदियां समस्त पापभय का नाश करने वाली हैं। इनके तट पर मृगों और द्विजो का निवास है तथा तपस्वियों के आश्रम हैं। भीमरथी, कृष्णा की सहायक नदी भीमा है। उपर्युक्त उद्धरण में पांडवों के पुरोहित धौम्य ने दक्षिण दिशा के तीर्थों के संबंध में इस नदी का उल्लेख किया है। भीष्म० 9,20 में भी भीमरथी का उल्लेख है—'शरावती पयोष्णी च वेणा भीमरथीमपि'। विष्णुपुराण 2 3,12 में भीमरथी को सह्याद्रि से उद्भूत कहा गया है—'गोदावरीभीमरथी कृष्णवेण्यादिकास्तथा सह्यपादोद्भूता नद्यः स्मृता पापभयापहा'। सह्याद्रि पश्चिमी घाट की पर्वत श्रेणी का नाम है। श्रीमद्भागवत 5,19,18 में भीमरथी का वेण्या और गोदावरी के साथ उल्लेख है—'तुंगभद्रा कृष्णा वेण्या भीमरथी गोदावरी।

भीमशंकर (महाराष्ट्र)

बंबई से पूर्व की ओर 70 मील और पूना से उत्तर की ओर 43 मील पर भीमशंकर का मंदिर स्थित है जिसकी गणना द्वादश ज्योतिर्लिंगों में की जाती है। यह भीमा नदी के तट पर और सह्याद्रि पर्वत पर स्थित है। पुराणों में इस मंदिर की स्थिति डाकिनी ग्राम में मानी है ('डाकिन्यां भीमशंकरम्')। भीमनदी भीमशंकर पर्वत से ही निकलती है। भीमशंकर पर्वत सह्याद्रि का एक शिखर है।

भीमा

(1)=भीमरथी

(2) महाराष्ट्र की चंद्रभागा नदी जिसके तट पर प्रसिद्ध तीर्थ पंढरपुर स्थित है। यह सह्याद्रि से निकल कर कृष्णा नदी में मिल जाती है। संभवत महाभारत भीष्म० 9,22 में इसी का उल्लेख है—'पूर्वाभिरामा वीरां च भीमामोघवतीं तथा, पाशाशिनीं पापहरां महेन्द्रां पाटलावतीम्'। भीमरथी का उल्लेख इसी संदर्भ में, 9,20 में है जिससे इन दोनों की भिन्नता सूचित होती है।

भीमा ी (गुजरात)

यह नदी देवब्रह्मा के निकट हिरण्याक्षी और कालाबी नदियों के संगम पर इनसे मिलती है। संगम पर भृगु का आश्रम बताया जाता है।

भीमावत (जिला गोरखपुर, उ० प्र०)

कसिया के मायाकुवर कोट के उत्तर और दक्षिण की ओर विस्तृत मैदान हैं जहा तृणाच्छादित अनेक प्राचीन ढूह हैं। 1904 1905 की खुदाई मे पुरातत्त्व विभाग को यहा के खडहरो से कुछ मुहरें प्राप्त हुई थी जिसमें मल्लो के उस स्थान का वर्णन है जहा भगवान् बुद्ध की अतिम क्रिया के लिए चिता तैयार की गई थी।

भीलसा (म० प्र०)

भीलसा का नाम सभवत भैल्लस्वामिन के सूर्य-मदिर के नाम के साथ सबधित है। 11वीं शती मे अलबेरुनी ने इस स्थान को महाबलिस्तान लिखा था। यह स्थान प्राचीन नगरी विदिशा के निकट था। (दे० विदिशा, बेसनगर)

भुमरा (म० प्र०)

जबलपुर-इटारसी रेल-शाखा पर उचेरा स्टेशन से छ मील है। 1920 ई० मे यहा स्थित एक गुप्तकालीन मदिर का पता लगा था जिसकी खोज का श्रेय श्री राखालदास बनर्जी को है। मदिर 35 फुट लबा और इतना ही चौडा है। इसमे शिखर का अभाव है और छत सपाट है। मदिर के सामने 13 फुट चौडी कुर्सी दिखाई पडती है जिस पर प्राचीनकाल में मदिर का सभामडप स्थित रहा होगा। इसमे आगे सीढिया हैं और दोनों ओर दो अन्य छोटे मदिरो की कुर्सियां। मदिर का गर्भगृह 15 फुट लबा और इतना ही चौडा है। यह कैमूर मे प्राप्त होने वाले लाल बलुआ पत्थर का बना है जिसमे चूने का प्रयोग नही है। छत लबे सपाट पत्थरो से ढकी है। मदिर की भित्तिया तथा छत के पत्थरो पर भी सूक्ष्म नक्काशी का काम है। भुमरा से एक महत्त्वपूर्ण स्तभ-अभिलेख भी प्राप्त हुआ था। इसका सबध परिव्राजक महाराज हस्तिन् तथा उच्छकल्प के महाराज सवनाथ से है। फ्लीट के मत मे यह तिथि-हीन अभिलेख सभवत 508-509 ई० का है। इस लेख का प्रयोजन अबलोद नामक ग्राम मे इन दोनो महाराजाओ के राज्यो की सीमा पर स्तभ बनवाने का उल्लेख है। यह स्तभ ग्रामिक वासु के पुत्र शिवदास द्वारा स्थापित किया गया था। अबलोद भुमरा का ही तत्कालीन नाम जान पडता है।

भुरेंबो=दे० बादा।

भुवनगिरि=भोनगिरि (जिला नलगोडा, आ० प्र०)

इस स्थान पर भयानक चट्टान पर बना हुआ प्राचीन काल का एक दुर्भेद्य दुर्ग स्थित है। यादगिरि पहाडी पर नरसिंह स्वामी का प्राचीन मदिर है और पास ही सत जमाल बहर का मकबरा।

भुवनेश्वर (उडीसा)

उडीसा की प्राचीन राजधानी। इसको पहले एकाम्रकानन भी कहते थे। भुवनेश्वर को बहुत प्राचीन काल से ही उत्कल की राजधानी बने रहने का सौभाग्य मिला है। केसरीवंशीय राजाओं ने चौथी शती ई० के उत्तरार्ध से 11वीं शती ई० के पूर्वार्ध तक, प्राय 670 वर्ष या चवालीस पीढियो तक उडीसा पर शासन किया और इस लबी अवधि म उनकी राजधानी अधिकतर भुवनेश्वर म ही रही। एक अनुश्रुति के अनुसार राजा ययातिकेसरी ने 474 ई० म भुवनेश्वर मे पहली बार अपनी राजधानी बनाई थी। कहा जाता है कि केसरीनरेशो ने भुवनेश्वर को लगभग सात सहस्र सुन्दर मदिरो से अलकृत किया था। अब कुल केवल पाच सौ मदिरो के ही अवशेष विद्यमान हैं। इनका निर्माण काल 500 ई० से 1100 ई० तक है। मुख्य मदिर लिंगराज का है जिसे ललाटेदुकेशरी (617 657ई०) ने बनवाया था। यह जगत्प्रसिद्ध मदिर उत्तरी भारत के मदिरो मे रचना सौंदर्य तथा शोभा और अलकरण की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इस मदिर का शिखर भारतीय मदिरो के शिखरा के विकास क्रम मे प्रारभिक अवस्था का शिखर माना जाता है। यह नीचे तो प्राय सीधा तथा समकोण ह किंतु ऊपर पहुच कर धीरे धीरे वक्र होता चला गया है और शीर्ष पर प्राय वर्तुल दिखाई देता है। इसका शीर्ष चालुक्य मदिरो के शिखरो पर बने छोटे गुबदो की भाति नही है। मदिर की पार्श्व-भित्तिया पर अत्यधिक सुदर नक्काशी की हुई है यहां तक कि मदिर के प्रत्येक पाषाण पर कोई न कोई अलकरण उत्कीर्ण है। जगह-जगह मानवाकृतिया तथा पशु-पक्षिया से सबद्ध सुन्दर मूर्तिकारी भी प्रदर्शित है। सर्वांग रूप से देखने पर मदिर चारो ओर से, स्थूल व लबी पुष्पमालाए या फूलो क मोटे गजरे पहने हुए जान पडता है। मदिर के शिखर की ऊचाई 180 फुट है। गणेश, कार्तिकेय तथा गौरी के तीन छोटे मदिर भी मुख्य मदिर के विमान से सलग्न हैं। गौरीमदिर म पार्वती की काले पत्थर की बनी प्रतिमा है। मदिर के चतुर्दिक गज सिंहो की उकेरी हुई मूर्तिया दिखाई पडती हैं। वर्तमानकाल मे भुवनेश्वर को फिर स उडीसा की राजधानी बनाया गया है।

भृगुभैरव (जिला गढवाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के निकट एक बर्फानी झील है जिस मदाकिनी गगा का उद्गम होने के कारण प्राचीन समय स ही पुण्यस्थान माना जाता है।

भूतपुरी (मद्रास)

मद्रास से 37 मील और बैंगलूर से 12 मील दक्षिण की ओर स्थित है।

भूतपुरी दक्षिण भारत के प्रसिद्ध दार्शनिक रामानुजाचार्य (15 वी शती) का जन्मस्थान है। अनत सरोवर के निकट आचार्य के नाम पर एक प्रसिद्ध प्राचीन मदिर है। यह मदिर बहुत विशाल और भव्य है। यही केशव भगवान् का मदिर और विशाल स्तभो वाले कई सभामडप स्थित हैं। भूतपुरी का स्थानीय नाम श्रीपेरम्बुदूर है।

भूतलय

महाभारत मे वर्णित एक अपवित्र स्थान—'युगधरे दधिप्राश्य उषित्वा चाच्युतस्थले, तद्वद्भूतलये स्नात्वा सपुत्रा वस्तुमर्हसि' वन० 129,9। धर्मशास्त्र के अनुसार इस दूषित ग्राम मे रहने मात्र से प्राजापत्य व्रत करने की आवश्यकता थी—'प्रोष्य भूतलये विप्र प्राजापत्य व्रत चरेत्'। श्री चि० वि० वैद्य के मत मे यह स्थान यमुनानदी के तट पर था क्योकि वन० 129,13 मे इसी प्रसग के अन्तर्गत प्लक्षावतरण का वर्णन है जिसे 'यमुनातीर्थमुत्तमम' कहा गया है।

भूताबिलिका

घुमली (सौराष्ट्र, गुजरात) का प्राचीन नाम। इसे भूभृतपल्ली भी कहते थे। (दे० घुमली)

भूतेश्वर (म० प्र०)

भूतपूर्व ग्वालियर रियासत में पढावली नामक स्थान के निकट एक पहाडी क्षेत्र या घाटी जिसमें प्राचीन समय के अगणित छोटे छोटे शिव या विष्णुमदिर हैं। इनमे से वर्तमान समय मे केवल भूतेश्वर शिव के मदिर की ही मान्यता शेष है।

भूपाल (म० प्र०)

कहते हैं कि परमारवशीय नरेशो मे प्रसिद्ध राजाभोज ने 1010 के लगभग इस नगर को बसाया था। भोजपाल इसका प्राचीन नाम था। अब तक भूपाल का एक भाग भोजपुरा के नाम से प्रसिद्ध है जहा का प्राचीन कलापूर्ण शिवालय इस स्थान का सुदर स्मारक है। भूपाल के निकट ही प्राचीनकाल म एक बडी झील राजा भोज ने सिंचाई के लिए बनवाई थी। इसके बाध को गुजरात के सुलतान होशगशाह ने कटवा दिया था। कहा जाता है कि तीन साल तक इस झील का पानी निरतर बहता रहा और तीन साल मे यह स्थान बसने योग्य हुआ था। आजकल भी भूपाल के पास का क्षेत्र बहुत उपजाऊ है। वर्तमान ताल इसी प्राचीन झील का अवशिष्ट अश हो सकता है। किंवदती के अनुसार वास्तव मे यह झील बहुत पुरानी है और कई लोग इसे रामायण मे वर्णित पपासर भी मानते हैं किंतु यह अभिज्ञान ठीक नही जान पडता क्योकि पपासरोवर

किष्किधा के निकट स्थित था (दे० पपा, किष्किधा)। भूपाल के ताल के तट पर प्राचीन गोंड शासिका कमलापति का दो मजिला भवन है। कहा जाता है यह प्रासाद पहले सात मजिला था और इसकी कई मजिलें तालाब के अदर हैं। यह जन प्रवाद यहा प्रचलित है कि कमलापति ने अपने पति की मृत्यु का सकेत पाकर अट्टालिका से नीचे ताल म कूदकर आत्म हत्या कर ली थी। भूपाल मे, भूतपूर्व मुसलमानी राजवश का राज्य 18वी शती के उत्तराध म स्थापित हुआ था। इस राजवश के शासनकाल के अनेक राजमहल तथा सुदर भवन यहा के भव्य स्मारक हैं। इनम सात मजिला ताजमहल जो शाहजहा बेगम का निवास गह था, अब भी भूपाल के गतवैभव का साक्षी है। सचिवालय से प्राय दो फर्लांग की दूरी पर भूपाल के भूतपूव नवाब हमीदुल्ला खा का महल है जिसे अहमदाबाद कहा जाता है।

भूभृतपल्ली

घुमली (सौराष्ट्र, गुजरात) का प्राचीन नाम। इसे भूताबिलिका भी कहत थे।

भूरिसर (हरयाणा)

कुरुक्षेत्र मे स्थित ज्योतिसर से 5 मील दूर पश्चिम मे पेहेवा (प्राचीन पृथूदक) जान वाले माग पर स्थित है। कहा जाता है कि कौरवो के वीर सेनानी भूरिश्रवा की मृत्यु इसी स्थान पर हुई थी। महाभारत द्रोण० 143,54 मे सात्यकि द्वारा भूरिश्रवा का खड्ग से शिर काट लिए जाने का वणन है—'प्रायोपविष्टाय रणे पार्थेन छिन्नबाहवे, सात्यकि कौरवेयाय खड्गेनापहरच्छिर'।

भगुकच्छ=भडौंच (गुजरात)

खभात की खाडी के निकट, और नमदा के दाहिने तट पर नदी के मुहाने से लगभग 30 मील दूर बसा है। किवदती के अनुसार इस स्थान को जिसे शूर्पारकक्षेत्र भी कहा जाता था भगुऋषि ने बसाया था। सन् 60 से 210 ई० तक रोमन इतिहास लेखको—प्लिनी आदि ने इस व्यापारिक नगर को बेरीगाजा नाम से अभिहित किया है जो भृगुकच्छ का ही लटिन रूपातर है। पौराणिक कथा मे यह वर्णित है कि भगुवशी परशुराम ने अपने परशु द्वारा इस स्थान से समुद्र को पीछे हटाकर इसे मनुष्यो के बसने योग्य बनाया था। नमदा के तट पर भृगु का मदिर है और नदी-तट पर लगभग 100 फुट से अधिक ऊची पहाडी पर प्राचीन दुग अवस्थित है। भृगुकच्छ को शूर्पारक जातक म भरुकच्छ कहा गया है और इसकी स्थिति भृगुराष्ट्र म बताई गई है तथा महाभारत म भी इसका भरुकच्छ नाम से उल्लेख है (दे० भरुराष्ट्र, भरुकच्छ)। शूर्पारक जातक म भरुकच्छ के वणिको की अनजाने समुद्रो म साहस-यात्राओ का अनोखा

और रोमाचकारी वणन है जिसमे 'भरुकच्छा पयातान वणिजान धनेसिन, नावाय विप्पनठठाय खुरमालीति वुच्चतीति' (अर्थात् भरुकच्छ से जहाज पर निकले हुए धनार्थी वणिको को यह विदित हो कि इस समुद्र का नाम क्षुरमाली है)। इस वणन के प्रसग म भृगुकच्छ के पोतवणिको या समुद्रव्यापारियो का बारबार उल्लेख है। इससे 5वी–6वीं शती ई० पू० मे भृगुकच्छ के बदरगाह की एक व्यापारिक नगर के रूप मे ख्याति प्रमाणित होती है। उस समय यह नगर समुद्रतट पर ही स्थित था। कालातर म इसका बदरगाह नमदा की लाई हुई मिट्टी से अँटकर बेकार हो गया।

भृगुक्षेत्र (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर से 13 मील दूर स्थित भेडाघाट का प्राचीन पौराणिक नाम। यहा नमदा का प्रवाह ऊची-ऊची पहाडियो से घिर कर झील के रूप मे परिणत हो गया है। चारो ओर रगीन और श्वेत चमकदार सगमम्रर की पहाडियो का दृश्य बहुत ही अदभुत और मनोमुग्धकारी है। भेडाघाट मे भृगुऋषि की तपस्थली मानी जाती है। यहा कई पुराने मदिर पहाडी के ऊपर स्थित हैं। यह स्थान अवश्य ही बहुत प्राचीन है। महाभारत मे सभवत यहा की सगमभर की पहाडियो का वैदूर्य-शिखर या वैदूय पवत के नाम से वणन किया गया है। 'वैदूय शिखरो नाम पुण्या गिरिवर शिव'—महा० वन० 89,6, 'स पयोष्णया नरश्रेष्ठ स्नात्वा वै भ्रातृभि सह, वैदूयपवतचैव नमदा च महानदीम्, देवाना मेति कौतेय तथा राज्ञा सलोकताम, वैदूयपवत दृष्ट्वा नमदामवतीय च' वन० 121,16—19। धुवाधार नामक नमदा नदी के झरने के निकट द्वितीय शती ई० की एक मूर्ति प्राप्त हुई थी जो अब चौसठ जोगिनिया के मदिर मे है। कई अन्य गुप्तकालीन मूर्तिया भी यहा से प्राप्त हुई थी जो इस प्रदेश के तत्कालीन शासक परिव्राजक महाराजाओ तथा उच्छकल्प के नरेशो के समय मे निर्मित हुई थी। चौसठ जोगनियो के मदिर मे त्रिपुरी के हैहयवशी राजाओ के समय की भी कई मूर्तिया लक्ष्मणराज की रानी नोहाला द्वारा प्रतिष्ठापित हुई थी। चौसठ जोगनियो के मदिर का निर्माण कलचुरि सवत् 907=1155–1156 ई० मे अल्हणदेवी ने करवाया था। इस मदिर को गोलाकृति होने के कारण गोलकीमठ भी कहते हैं।

भृगुतुग

(1)=तुगनाथ

(2) वितस्ता या झेलम के निकट सभवत पश्चिमी कश्मीर मे स्थित हिमालय की श्रेणी का एक भाग। इसका वणन एक तीथ के रूप म महाभारत वन०

130,19 में है—'समाधीना समासस्तु पाडवेय श्रुतस्त्वया। त द्रक्ष्यसि महाराज भृगुतुग महागिरिम'—इससे अगले श्लोक म वितस्ता का उल्लेख है—'वितस्ता पश्य राजेंद्र सवपापप्रमोचनीम्'। यह पवत भृगुतुग (1) से अवश्य ही भिन्न है।

(3) वाल्मीकि रामायण बाल० 61,11 म उल्लिखित एक पवत—'सपुत्र-सहित तात सभार्यं रघुनदन भृगुतुगे समासीनमृचीक सददश ह।' यह उपयुक्त (1) या (2) मे से कोई हो सकता है। यहाँ ऋचीक ऋषि का निवास स्थान बताया गया है।

भृगुपत्तन=भृगुकच्छ (भडौंच)

जैन तीथ माला चैत्यवदन मे उल्लिखित है 'श्री शत्रुजय रैवताद्रिशिखर-द्वीपे भृगा पत्तने'।

भृगुराष्ट्र दे० मरुराष्ट्र

भेड़ाघाट दे० भृगुक्षेत्र

भैरोंगढ़ (जिला उज्जैन, म० प्र०)

उज्जन से एक मील उत्तर की ओर स्थित है। यहा पर द्वितीय तृतीय शती ई० पू० की उज्जयिनी के खडहर पाए गए है। वेश्याटेकरी और कुम्हार-टेकरी नाम के टीलो को खोदने से तत्कालीन उज्जयिनी के अनेक अवशेष मिले है। इन टीलो से कई प्राचीन किवदतियो का सबध बताया जाता है।

भसा (मघोल तालुका, जिला नदेड, महाराष्ट्र)

11वी से 13वी शती के बीच के काल मे बने हुए एक मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। यह हेमाडपथी शैली म निर्मित है। मदिर के अतिरिक्त तीन दरगाहे और एक तडाग यहा के प्राचीन स्मारक हैं।

भोकरदन (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर भूगभ मे बनी गुफाओ मे कई वैष्णव मदिर अवस्थित हैं जिनका निर्माणकाल 8वी या 9वी शती ई० है, जैसा कि बरामदे मे अकित अभिलेख की लिपि से सूचित होता है। गुफाए केलना नदी के तट पर हैं। भोकरदन मे नवपाषाण युग के उपकरणादि भी प्राप्त हुए हैं।

भोगनगर

हानले (Hoernle) के अनुसार भोगनगर मे भोजक्षत्रियो की राजधानी थी और यह वैशाली और पावा के निकट स्थित था। यह बौद्धकालीन नगर था। बौद्ध-साहित्य मे इसे मल्लराष्ट्र का एक नगर बताया गया है (दे० बुद्ध-चरित 25, 36— तब वैशाली से चलकर धीरे-धीरे तथागत भोगनगर की ओर बढे और वहा रुककर सबने अपने साथियो से कहा—'

भोगवती

(1)=उज्जयिनी (दे० अवंती)

(2) दे० पचगगा

(3) =सरस्वती नदी—'मनोरमा भोगवतीमुपेत्य, पूतात्मना चीरजटाधराणाम तस्मिन वन धमभृतां निवासे ददश सिद्धर्षिगणाननेकान्—महा० वन० 24, 20। भोगवती नदी का इस स्थान पर द्वैतवन के सबध मे उल्लेख होने से यह सरस्वती नदी ही जान पडती है।

(4) पाताल की एक नगरी—'सतु भोगवतीं गत्वा पुरी वासुकिपालिताम्, कृत्वा नागा वशे हृष्टो ययौ मणिमयी पुरीम्।—वाल्मीकि० उत्तर, 23,5 यह नगरी वासुकि नामक नाग नरेश—द्वारा पालित थी। इसकी स्थित मणिपुर के पास जान पडती है।

भोगवधन

पुराणो म वर्णित और गोदावरी तट पर स्थित प्रदेश। इसका ठीक-ठीक अभिज्ञान अनिश्चित है। माकण्डेय पुराण, 57, 48 49 म इसका उल्लेख है।

भोगवान्

।ततोदक्षिणमल्लाश्च भोगवत च पवतम्, तरसैवाजयद भीमो नाति तीव्रेण कमणा'—30,12। दक्षिण मल्लदेश के निकट स्थित इस पवत को भीम ने अपनी दिग्विजय यात्रा मे विजित किया था। इसकी स्थिति दक्षिण पूर्वी उत्तर प्रदेश के पहाडी इलाके म जान पडती है।

भोज

श्रीभोज या श्रीविजय (सुमात्रा) की राजधानी जिसका उल्लेख चीनी यात्री इत्सिंग (671 ई०) ने किया है।

भोजकट

महाभारत मे भाजकट को विदभ देश के राजा भीष्मक की राजधानी बताया गया है। इसे तथा इसके पुत्र रुक्मी को सहदेव ने दक्षिण दिशा को दिग्विजय-यात्रा मे दूत भेजकर मित्र बना लिया था—'सुराष्ट्रविषयस्थश्च प्रेषयामास रुक्मिणे राज्ञे भाजकटस्थाय महामात्राय धीमते, भीष्मकाय स धर्मात्मा साक्षादिद्रसखाय वै, स चास्य प्रतिजग्राह ससुत शासन तदा'—सभा० 31, 62 63 64। इससे पहले (सभा० 31, 11) सहदेव द्वारा भोजकट की विजय का वर्णन है—'ततो रत्नमादाय पुर भोजकट ययौ तत्र युद्धमभूद् राजन् दिवसद्वयमच्युत'। श्रीकृष्ण की महारानी रुक्मिणी इन्ही राजा भीष्मक की पुत्री तथा रुक्मी की बहिन थी। उद्योग 158, 14–16 मे वर्णित है कि भोजकट

(भोजराज के कटक का स्थान) उसी जगह बसाया गया था जहां विदर्भ की राजकुमारी रुक्मिणी का हरन के पश्चात् श्रीकृष्ण ने उसके भाई की सेनाओं को हराया था—'यत्रैव कृष्णेन् रणे निर्जित परवीरहा, तत्र भोजकट नाम कृत नगरमुत्तमम्, स येन् महता तेन प्रभूत गजवाजिना पुरतद् भुविविख्यात नाम्ना भोजकट नृप'। विदर्भ की प्राचीन राजधानी कुंडिनपुर मे थी। हरिवंशपुराण (विष्णुपर्व 60, 32) के अनुसार भी भोजकट की स्थिति विदर्भ देश मे थी। यह नगर वाकाटक नरेशो का मूल निवासस्थान भी था। वाकाटक-नरेश प्रवरसेन द्वितीय के चम्मक दान-पट्टलेख से स्पष्ट है कि भोजकट प्रदेश मे विदर्भ का इलिचपुर जिला सम्मिलित था (दे० जर्नल ऑव दि रायल एसियाटिक सोसाइटी, 1914, पृ० 329)। विंसेंट स्मिथ के अनुसार भोजकट का अर्थ भोज का किला है (इंडियन ऐण्टिक्वेरी, 1923, पृ० 262-263)। भोजकट का अभिज्ञान कुछ लोगो ने धार (म०प्र०) से 24 मील दूर स्थित भोपावर नामक कस्बे से किया है। विदर्भ क शासको का सामान्य नाम भोज था जैसा कि कालिदास के रघुवंश के सातवें सर्ग के अंतर्गत इंदुमती के स्वयंवर के प्रसंग से भी स्पष्ट है—'इति स्वसुर्भोजकुलप्रदीप सपाद्यपाणिग्रहण स राजा' रघु० 7,29। अशोक के शिलालेख स० 13 मे भी दक्षिण के भोजनरेशो का उल्लेख है। (दे० कुंडिनपुर, भोपावर)

भोजनगर

महाभारत मे इस नगर को राजा उशीनर की राजधानी बताया गया है—'गालवो विमृशन्नेव स्वकाय गतमानस जगाम भोजनगर द्रष्टुमौशीनर नृपम्' उद्योग० 118,2। प्रसंग से जान पडता है कि भोजनगर मे राजा शिवि की भी राजधानी थी। इस प्रकार इस नगर की स्थिति उशीनर प्रदेश (जिला सहारनपुर या हरद्वार का परिवर्ती प्रदेश) मे सिद्ध होती है। (दे० उशीनर)

भोजपाल=भूपाल

भोजपुर (जिला सिहोर, म० प्र०)

(1) भूपाल से 15 मील दक्षिण की ओर इस मध्यकालीन नगर के खंडहर हैं। अब यह छोटा सा ग्राम मात्र है। नगर वेत्रवती या वेतवा के तट पर स्थित था। जान पडता है कि इस नगर का नाम मालवा के प्रसिद्ध राजा भोज के नाम पर पडा होगा। भोजपुर का क्षेत्र पठार है और यह निर्जन और शुष्क दिखाई देता है। भोजपुर का मुख्य ऐतिहासिक स्मारक यहां का भव्य शिव मंदिर है जिसका ऊपरी भाग दूर-दूर तक दिखाई देता है। इसका निर्माण राजा भोज के ही समय मे हुआ था और इस प्रकार यह आज से प्राय एक सहस्र वर्ष प्राचीन है। मंदिर अपनी मूलावस्था मे बहुत भव्य तथा विशाल रहा

होगा—यह अनुमान उसकी वर्तमान दशा से भली-भांति किया जा सकता है। इसकी वर्तमान ऊंचाई 50 फुट है किंतु ऊंचाई के अनुपात से उसकी चौडाई अधिक है जिससे जान पडता है कि प्राचीन समय मे इसकी ऊंचाई अब से बहुत अधिक होगी। मंदिर की रचना विशाल प्रस्तरखंडो से की गई जिसमे से कई आज भी मंदिर के आस-पास पडे हैं। ये पत्थर मसाले से जुडे थे जो अब पत्थरो के बीच बीच मे से निकल गया है। मंदिर का प्रवेशद्वार भूमि से प्राय 7 फुट ऊंचा है। सीढ़िया पत्थर की बनी हैं। द्वार के दोनो ओर देवी देवताओ की मूर्तिया हैं जो संभवत उत्तर-गुप्तकालीन हैं। एक छोटा मंदिर सीढियों से ऊपर है जो मुख्य मंदिर की दीवार ही मे काटा हुआ है। इसमे एक विष्णुमूर्ति प्रतिष्ठापित है। यह विष्णु मंदिर दो स्तंभो पर आधारित है। स्तंभो की वास्तुकला उच्चकोटि की हैं। विष्णु की प्रतिमा के भिन्न अंगो का अनुपात, भावभंगिमा, और खडे होने की मुद्रा—ये सभी शिल्पशास्त्र की दृष्टि से सुदर एव सुतथ्य हैं। मूर्ति पर जिन आभूषणो का अंकन है वे सभी गुप्तकाल मे प्रचलित थे। प्रवेशद्वार से नीचे उतरने के लिए अनेक सीढिया है जो भूमितल तक बनी हैं। मंदिर अंदर से चतुष्कोण है यद्यपि बाहर से ऐसा नही जान पडता। इसका फर्श पत्थर का बना है। इसके केंद्रस्थान मे उस आधार स्तंभ की रचना की गई है जिस पर शिवलिंग स्थापित है। इस आधार स्तंभ में तीन चक्र पहनाए गए हैं। नीचे से तीसरे के बीच मे शिवलिंग स्थापित है। यह आधार स्तंभ भूमि से लगभग दस फुट ऊंचा है। काले पत्थर के बने हुए शिवलिंग की ऊंचाई आठ फुट है और परिधि भी काफी चौडी है। कहा जाता है इतना विशाल शिवलिंग भारत मे अन्यत्र नही है। शिवलिंग और उसकी आधार शिलाए इस प्रकार जुडी हैं कि वे एक ही पत्थर मे से कटी प्रतीत होती हैं। मंदिर के बाह्य भाग का शिल्प भी सराहनीय है। इसकी चौकोर छत पर जो अब नष्ट हो गई है अद्भुत कारीगरी है। कुछ विद्वानो का विचार है कि देवगढ के गुप्तकालीन मंदिर की तुलना मे भोजपुर का मंदिर श्रेष्ठ जान पडता है यद्यपि इसकी ख्याति देवगढ के मंदिर की भांति न हो सकी। छत की नक्काशी के लिए भोजपुर के शिल्पियो ने उसे कई वृत्तो मे विभाजित किया है और इनमे से प्रत्येक के अंदर कलात्मक अलंकरणो के जाल पिरोए हुए हैं। यह छत चार विशाल प्रस्तर स्तंभो पर टिकी है जिनकी मोटाई और ऊंचाई पर्याप्त अधिक है। इनकी तुलना सांची तथा तिगाव के स्तंभो से की जा सकती है। इनका निम्न भाग अपेक्षाकृत साधारण है किंतु जैसे जैसे दृष्टि ऊपर जाती है इनकी कला का सौंदय बढ़ता जाता है और सर्वोच्च भाग

पर पहुचते-पहुचते कला की पराकाष्ठा दिखाई पडती है। मदिर की बाह्य-भित्तिया सादी हैं। इसम प्रदक्षिणा पथ भी नहीं है। इस शिवमदिर से थोडी ही दूर पर एक छोटा सा जैन मदिर है जो प्राचीन होते हुए भी ऐसा नही दीखता क्योकि परवर्ती काल मे इसका कई बार पुननिर्माण हुआ था। यह मदिर चौकोर है और इसकी छत भी गुप्तकालीन मदिरो की छतो की भाति सपाट है। मदिर किसी जैन तीर्थंकर का है। इसकी मूर्ति विवस्त्र है और प्राय बीस फुट ऊची है। मूर्ति के दोनो ओर यक्ष-यक्षिणियो की प्रतिमाए हैं।

(2) (बिहार) एक ग्राम है जहा अंग्रेजी शासनकाल के प्रारभिक काल म फौजी भर्ती होती थी। भोजपुरी बोली का नाम इसी ग्राम के नाम पर प्रसिद्ध है।

भोजगिरि=भुवन गिरि

भोनरासा (म० प्र०)

पूर्वमध्यकालीन इमारतो के खडहरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

भोपावर (म० प्र०)

धार से 24 मील दूर है। स्थानीय जनश्रुति के अनुसार महाभारतकालीन भोजकट नगर इसी स्थान पर था (दे० भोजकट) किंतु इस किवदती म सार नही जान पडता क्योकि इस नगर के विषय म जो उल्लेख महाभारत मे है उससे भोजकट बरार या विदर्भ म और कुडिनपुर के निकट होना चाहिए।

भौतरी (जिला बादा, उ० प्र०)

चित्रकूट स 10 मील उत्तर मे है। स्थानीय किवदती है कि श्रीरामचद्र जी अपनी वनयात्रा के समय चित्रकूट जाते समय इस स्थान पर ठहरे थे और यही वाल्मीकि का आश्रम था। यहा से लगभग 5 मील दक्षिण चल कर उन्होने वर्तमान हनुमान धारा नामक स्थान पर विश्राम किया था। यहीं सीता रसोई स्थित है। अगले दिन व मदाकिनी के तट पर पहुच गए थे। वाल्मीकि रामायण के वर्णन के अनुसार वाल्मीकि ने ही रामचद्र जी को चित्रकूट म रहने का सुझाव दिया था।

भौम

विष्णु० 4,24,65 म उल्लिखित देश—'कलिगमाहिषमहेन्द्रभौमान् गुहा भोक्ष्यति'। प्रसगानुसार इसकी स्थिति उडीसा मे जान पडती है। विष्णुपुराण न इस प्रदेश मे गुप्त या पूर्वगुप्त काल मे जो विष्णुपुराण का निर्माणकाल है, अनाय गुहों का शासन बतलाया है।

मगरोल=मगलपुर (1)

मगलगिरि (जिला गतूर, मद्रास)

यह प्राचीन तीथ है। यहा एक ऊची पहाडी पर कई सौ वर्ष पुराना विष्णु-मदिर स्थित है। शिखर तक पहुचने के लिए पहाडी मे छ सौ सीढिया बनी है।

मगलपुर (सौराष्ट्र, गुजरात)

(1) वतमान मगरोल। यहा के खडहरो से अनक मूर्तिया प्राप्त हुई थी जो अब राजकोट के सग्रहालय म सुरक्षित है। इस नगर का जनतीथ के रूप मे उल्लेख 'तीथमाला चैत्यवदन' मे इस प्रकार है—'सिहद्वीप धनेर मगलपुरे चाज्जाहरे श्रीपुरे'।

(2) (मैसूर) वर्तमान मगलोर। यह प्राचीन तीथ है। नगर के पूव मे मगलादेवी का प्राचीन मदिर है।

(3) स्वात नदी (अफगानिस्तान) के तट पर स्थित मगलौरा जहा उद्यान देश की राजधानी थी। (दे० उद्यान)

मगलप्रस्थ

'भारतेऽप्यस्मिन् वर्षे सरिच्छैला स ति बहवोमलया मगलप्रस्थो मैनाव स्त्रिकूटऋषभकूटक—' श्रीमद्भागवत पुराण 5,19,16। सदर्भ से, और जिस क्रम से पवतो के नाम इस उद्धरण मे परिगणित हैं उससे, सूचित होता है कि मगलप्रस्थ सभवत मगलगिरि (जिला गतूर, मद्रास) है। इस पहाडी पर जो विष्णुमदिर है वह बहुत प्राचीन है।

मगलातीथ (मद्रास)

रामेश्वरम् के निकट पाम्बन की सडक पर यह प्राचीन पौराणिक तीथ अवस्थित है। यहा मगलातीथ नामक एक सरोवर है जहा पुराणो की कथा के अनुसार गौतम के शाप से छुटकारा पाने के लिए इद्र ने तप किया था। निकट ही राममदिर है जहा इद्र ने भगवान राम की उपासना की थी।

मगलोर=मगलपुर (2)

मजीरा

गोदावरी की सहायक नदी का नाम। यह प्राचीन अश्मक जनपद में प्रवाहित होती थी। इस जनपद की स्थिति विदभ के पाश्व मे थी। वतमान नगर बीदर इसी नदी के तट पर बसा है। यह बालाघाट के पहाडो से निकलती है और गोदावरी मे मिलती है। इसमे पाच उपनदिया दाहिनी ओर से और तीन बाईं ओर से आकर मिलती हैं। इसका नाम वायुपुराण (45,104) मे वजुला है।

मजुपाटन (नेपाल)

मौर्य सम्राट अशोक की नेपाल यात्रा (लगभग 250 ई० पू०) से पूर्व वर्तमान कठमडू के निकट बसा हुआ एक नगर जहा नेपाल की तत्कालीन राजधानी थी। अशोक ने इस नगर के स्थान पर देवपाटन या ललितपाटन नामक एक नगर वसाया था। यह कठमडू से 2½ मील दक्षिण की ओर है (दे० ललितपाटन, देवपाटन)

मडकणि आश्रम दे० पचाप्सरस्

मडद्वीप

महावश 15,127-132 मे वर्णित लका का प्राचीन नाम है।

मडपदुग=मडपपुर=मडू

मडपेश्वर (महाराष्ट्र)

माउट पोयसर रेल स्टेशन के निकट अति प्राचीन गुहामदिर। गुफाए 8वीं शती ई० की जान पडती हैं। इनकी मूर्तिकारी का सबध हिंदू देवी देवताओं से है। पुर्तगाली कैथलिको ने 16वी शती मे यहा गिरजाघर बनवाया था। यहा उस समय पचास योगी रहते थे।

मडलेश्वर

प्राचीन माहिष्मती (=महेश्वर, म० प्र०) के निकट एक कस्बा है जो किवदती मे मडन मिश्र का निवास-स्थान माना जाता है। मडन मिश्र और उनकी पत्नी भारती ने जगद्गुरु शकराचार्य से शास्त्रार्थ किया था। शकर-दिग्विजय मे उन्हे माहिष्मती का निवासी कहा गया है। (दे० माहिष्मती)

मडावर (जिला बिजनौर, उ० प्र०)

कालिदास के अभिज्ञान शाकुतल मे वर्णित मालिनी (=मालन) नदी के तट पर बसा हुआ प्राचीन स्थान है। स्थानीय किवदती मे इस कस्बे को बडे प्राचीन काल से ही कण्व ऋषि का आश्रम माना गया है जो यहा की स्थिति को देखते हुए ठीक जान पडता है। पाणिनि ने शायद इसी स्थान को अष्टाध्यायी 4,2,10 मे मार्देयपुर कहा है। मडावर के उत्तर की ओर कुछ दूर पर गगा है जिसके दूसरे तट पर वर्तमान शुक्करताल (जिला मुजफ्फर नगर, उ० प्र०) या अभिज्ञान शाकुतल का शक्रावतार है। हस्तिनापुर जाते समय शकुतला की उगली से दुष्यत की अगूठी इसी स्थान पर गगा के स्रोत मे गिर गई थी। हस्तिनापुर का मार्ग मडावर से गगा पार शुक्करताल हो कर ही जाता है। मडावर के उत्तर पश्चिम मे नजीबाबाद के ऊपर कजलीवन स्थित है जहा कालिदास के वर्णन के अनुसार दुष्यत आखेट के

लिए आया था (इस विषय मे दे० लेखक का माडन रिव्यू नवबर 1951 म 'टॉपोग्राफी ऑव अभिज्ञान शाकुतल नामक लेख)। मडावर का प्राचीन नाम कनिंघम के अनुसार मतिपुर है जहा 634 ई० के लगभग चीनी यात्री युवानच्वाग आया था। यहाँ उस समय बौद्धविहार था जहा गुणप्रभ का शिष्य मित्रसेन रहता था। इसकी आयु 90 वर्ष की थी। गुणप्रभ ने सैकडो ग्र थो की रचना की थी। युवानच्वाग के अनुसार मतिपुर जिस देश की राजधानी था उसका क्षेत्रफल 6000 ली या 1000 मील था। यहा उस समय 20 बौद्ध सघाराम और 50 देवमदिर स्थित थे। युवानच्वाग ने इस नगर को, जिसका राजा उस समय शूद्र जाति का था बहुत समृद्ध दशा मे पाया था। उसने इसे माटीपोलो नाम से अभिहित किया है। चीनी यात्री ने जिन स्तूपो का वणन किया है उनका अभिज्ञान करने का प्रयास भी कनिघम ने किया है। यहा से उत्खनन मे कुपाण तथा गुप्त-नरेशो के सिक्के, मध्यकालीन मूर्तिया तथा अ य अवशेष मिले हैं। किंवदती ही है कि यहा का पीरवाली ताल, बौद्ध सत विमल मित्र के मरने पर जो भूचाल आया था उसके कारण बना है। यह घटना प्राय 700 वर्ष पुरानी कही जाती है। मडावर बिजनौर से प्राय 10 मील उत्तर-पूव की ओर है। उत्तर-रेल का चदक स्टेशन (मुरादाबाद सहारनपुर लाइन) मडावर से प्राय चार मील है।

मडी (हिमाचल प्रदेश)

किंवदती के अनुसार माडव्य ऋषि के नाम पर प्रसिद्ध है। मडी मे भूतनाथ महादेव का मदिर है। इनकी पूजा नगर के अधिष्ठातृ देव के रूप मे होती है। कहा जाता है कि मडी की नगरी को बसाने वाले राजा अजबरसेन ने इस मदिर मे प्रतिष्ठापित मूर्ति को प्राप्त किया था। 1520 ई० मे बना त्रिलोकनाथ का मदिर कला की दृष्टि से उत्कृष्ट स्मारक है। इसके स्तभो पर पुष्पो तथा पशु-पक्षियो का मूर्तिमय अकन बडे कौशल से किया गया है। मडी से 2 मील पूव रवालसर नामक सरोवर है जिसे हिंदू, बौद्ध तथा सिख पवित्र मानते हैं। कहा जाता है कि गुरु नानकदेव इस स्थान पर एक बार आए थे।

मडु

पाणिनि, 4,2 77 मे उल्लिखित है। यह शायद अटक (पश्चिम पाकि०) के निकट स्थित उड है (सिल्वनलेवी)

मडू (जिला इदौर, म० प्र०)

मडू का प्राचीन नाम मडप दुग या माडवगढ़ कहा जाता है। मडप नाम

से इस नगर का उल्लेख जैन ग्रंथ तीर्थमाला चैत्यवदन मे किया गया है—'कोडीनारक मत्रि दाहड पुरे श्री मडपे पार्श्वदे'। जनश्रुति है कि यह स्थान रामायण तथा महाभारत के समय का है किंतु इस नगर का नियमित इतिहास मध्यकालीन ही है। कन्नौज के प्रतिहार नरेशो के समय मे परमारवशीय श्रीसरमन मालवा को राज्यपाल नियुक्त किया गया था। उस समय भी माडवगढ काफी शोभा-सपन्न नगर था। प्रतिहारो के पतन के पश्चात परमार स्वतत्र हो गए और उनकी वश परपरा मे मज, भोज आदि प्रसिद्ध नरेश हुए। 12वी, 13वी शतियो मे शासन की डोर जैन मत्रियो के हाथ मे थी और माडवगढ ऐश्वर्य की चरम सीमा तक पहुचा हुआ था। कहा जाता है कि उस समय यहा की जनसख्या सात लाख थी और हिंदू मदिरो के अतिरिक्त 300 जैन मदिर भी यहा की शोभा बढाते थे। अलाउद्दीन खिलजी के मडू पर आक्रमण के पश्चात यहा से हिंदू राज्य सत्ता ने विदा ली। यह आक्रमण अलाउद्दीन के सेनापति आईन उल्मुल्क ने किया था। इसने यहा कत्लेआम भी करवाया था। 1401 ई० मे मडू दिल्ली के तुगलको के आधिपत्य से स्वतत्र हो गया और मालवा के शासक दिलावर खा गोरी ने मडू के पठान शासको की वश परपरा प्रारभ की। इन सुलतानों ने मडू मे जो सुदर भवन तथा प्रासाद बनवाए थे उनके अवशेष मडू को आज भी आकर्षण का केंद्र बनाए हुए हैं। दिलावरखा का पुत्र होशगशाह 1405 ई० मे अपनी राजधानी धार से उठाकर मडू मे ले आया। मडू के किले का निर्माता यही था। इस राज्य वश के वैभवविलास की चरम सीमा 15वी शती के अत मे गयासुद्दीन के शासन काल मे दिखाई पडी। गयासुद्दीन ने विलासिता का वह दौर शुरू किया जिसकी चर्चा तत्कालीन भारत मे सर्वत्र थी। कहा जाता है उसके हरम मे 15 सहस्र सुदरियां थी। 1531 ई० मे गुजरात के सुलतान बहादुरशाह ने मडू पर हमला किया और 1534 ई० मे हुमायू ने यहा अपना आधिपत्य स्थापित किया। 1554 ई० मे मडू बाजबहादुर के शासनाधीन हुआ। किंतु 1570 ई० मे अकबर के सेनापति आदमखा और आसफखा ने बाजबहादुर को परास्त कर मडू पर अधिकार कर लिया। कहा जाता है कि बाजबहादुर के इस युद्ध मे मारे जाने पर उसकी प्रेयसी रूपमती ने विषपान करके अपने जीवन का अत कर दिया। मडू की लूट मे आसफखा ने बहुत सी धनराशि अपने अधिकार मे करली जिससे क्रुद्ध होकर अकबर ने आदमखा को आगरे के किले की दीवार से नीचे फिकवा कर मरवा दिया। यह अकबर का कोका भाई (धात्री पुत्र) था। बाजबहादुर और रूपमती की प्रेमकथाए आज भी मालवा के लोकगीतों में गूजती हैं। बाजबहादुर

संगीत-प्रेमी भी था। कुछ लोगो का मत है कि जहाजमहल और हिंडोला महल उसने ही बनवाए थे। मडू के सौंदर्य ने अकबर तथा जहागीर दोनो ही को आकृष्ट किया था। यहा के एक शिलालेख से सूचित होता है कि अकबर एक बार मडू आकर नीलकठ नामक भवन मे ठहरा था। जहागीर की आत्मकथा तुज़के जहागीरी मे वणन है कि जहागीर को मडू के प्राकृतिक दृश्यो से बडा प्रेम था और वह यहा प्राय महीनो शिविर डाल कर ठहरा करता था। मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात पेशवाओ का यहा कुछ दिन अधिकार रहा और तत्पश्चात् यह स्थान इदौर की मराठा रियासत मे शामिल हो गया। मडू के स्मारक, जहाज महल के अतिरिक्त, ये हैं—दिलावर खा की मसजिद, नाहर झरोखा, हाथी-पोल दरवाजा (मुगल कालीन), होशगशाह तथा महमूद खिलजी के मकबरे। रेवाकुड बाजबहादुर और रूपमती के महलो के पास स्थित है। यहा से रेवा या नमदा दिखलाई पडती है। कहा जाता है रूपमती प्रतिदिन अपने महल से नर्मदा का पवित्र दर्शन किया करती थी। शिवाजी के राजकवि भूषण ने पौरचवशीयनरेश अमरसिंह के पुत्र अनिरुद्धसिंह की प्रशसा मे कहे गए एक छद मे (भूषण ग्रथावली फुटकर 45) मडू को इनकी राजधानी बताया है—'सरद के घन की घटान सी घमडती हैं मडू तें उमडती हैं मडती महीतले'—किसी-किसी प्रति मे इस स्थान पर मडू के बजाए मेडू भी पाठ है। मेडू को कुछ लोग उत्तरप्रदेश मे स्थित मानते हैं क्योकि पौरच राजपूत अलीगढ के परिवर्ती प्रदेश से सबद्ध थे।

मडोवर=मडोर

मडोर (ज़िला जोधपुर, राजस्थान)

मारवाड की जोधपुर से पहले की राजधानी। मडोर नामक वर्तमान ग्राम का प्राचीन नाम मडोदर या माडव्यपुर है। कहा जाता है कि यहा माडव्यऋषि का आश्रम था। स्थानीय रूप से यह जनश्रुति है कि नगर का नाम रावण की रानी मदोदरी के नाम पर प्रसिद्ध हुआ था और वह स्थान जहा लकापति के साथ मदोदरी का विवाह हुआ था आज भी मडोर मे स्थित बताया जाता है। 7वी शती ई० के उपरात गुजर नरेशो ने मडोर म अपनी राजधानी बनाई थी। माडव्यऋषि के आश्रम के समीप स्थित माडव्यदुग की गणना राजस्थान के महत्वशाली दुर्गों मे की जाती है। मडोर मे प्राप्त एक शिलालेख म इस स्थान को माडव्याश्रम कहा गया है और इसके निकट एक पुण्यशालिनी नदी का उल्लेख है जो सभवत नागोदरी है, 'माडवत्र्स्याश्रमे पुण्ये नदीनिर्झर शोभते'। दुग के अदर विष्णु तथा जैन मदिरो के खडहर हैं। 12वी 13वी शतियो की व-

मूर्तियां यहां से प्राप्त हुई हैं। मंदिर यद्यपि खंडहर की अवस्था में है किंतु उसकी दीवारों पर बेल-बूटे, पशुपक्षी, कीर्तिमुख आदि का तक्षण बड़ी सुंदर रीति से किया गया है। आधुनिक मंडोर ग्राम तथा दुर्ग के मध्यवर्ती भाग में खुदाई में मिट्टी के कुंभ मिले हैं जिनमें से एक पर गुप्तलिपि में विखम (=विषय) शब्द खुदा है। दुर्ग के नीचे पंचकुंडा की ओर नरेशों की छतरियां, चूंडा जी का देवल तथा पंचकुंडा दर्शनीय है।

मंत्रोट दे० महातीर्थ

मंत्रालय (मद्रास)

इस नाम के रेल स्टेशन से 9 मील पर यह सुंदर तीर्थस्थान बसा है। तुंगभद्रा नदी पास ही बहती है। यहां श्री राघवेंद्र स्वामी का प्रख्यात मंदिर है जहां दूर-दूर से यात्री आते हैं। मंदिर के प्रांगण में कई प्राचीन संतों की समाधियां हैं। राघवेंद्र स्वामी के मंदिर का वृंदावन विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मंदग

विष्णुपुराण 2,4,48 के अनुसार क्रौंच द्वीप का एक भाग या वर्ष जो द्वीप के राजा द्युतिमान् के पुत्र के नाम पर प्रसिद्ध है।

मंदर

(1) (पर्वत) वाल्मीकि रामायण किष्किंधा 40,25 में सुग्रीव ने सीता के अन्वेषणार्थ पूर्व दिशा में वानर सेना को भेजते हुए और वहां के स्थानों का वर्णन करते हुए मंदर नामक पर्वत का उल्लेख इस प्रकार किया है 'समुद्रमवगाढाश्च पर्वतान्पत्तनानिच, मंदरस्य च ये कोटिं संश्रिता केचिदालया' *अर्थात् जो पर्वत या बंदरगाह समुद्रतट पर स्थित हों अथवा जो स्थान मंदर के शिखर पर हों (वहां भी सीता को ढूंढना)*। इसी श्लोक के तत्काल पश्चात् द्वीप निवासी किरातों संभवतः अंडमान निवासियों का विचित्र वर्णन है। इस स्थिति में *मंदर ब्रह्मदेश या बर्मा के पश्चिमी तट की पर्वत श्रेणी के किसी भाग का नाम* हो सकता है।

(2)=मंदराचल। 'श्वेत गिरिं प्रवेक्ष्यामो मंदरं चैव पर्वतं, यत्र मणिवरो यक्षः कुबेरश्चैव यक्षराट्'—महा० 139,5। इस उद्धरण में मंदराचल का पांडवों की उत्तराखंड की यात्रा के संबंध में उल्लेख है जिससे यह पर्वत हिमालय में बदरीनाथ या कैलास के निकट कोई गिरि-शृंग जान पड़ता है। विष्णुपुराण 2 2,16 के अनुसार मंदरपर्वत इलावृत के पूर्व में है—'पूर्वेण मंदरोनाम दक्षिणे गंधमादन'। मंदराचल का पुराणों में क्षीरसागर मंथन की कथा में भी वर्णन

है। इस आख्यायिका के अनुसार सागर मथन के समय देवताओं और दानवों ने मदराचल को मथानी बनाया था।

मदसौर दे० दशपुर

मदाकिनी

(1) चित्रकूट (जिला बादा, उ० प्र०) के निकट बहने वाली नदी। इसे आज भी मदाकिनी कहते हैं। वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाड मे इसका कई स्थानो पर उल्लेख है—'अय गिरिश्चित्रकूटस्तथा मदाकिनी नदी, एतत प्रकाशत दूरान्नीलमेघनिभवनम', 'अथ शैलाद्विनिष्क्रम्य मैथिली कोशलेश्वर, अदर्शयच्छुभजला रम्या मदाकिनी नदीम्। विचित्र पुलिना रम्या हससारससेविताम कुसुमैरुपसपन्ना पश्य मदाकिनी नदीम्। नानाविधैस्तीररहैर्वृता पुष्पफलद्रुमै राजन्ती राजराजस्य नलिनीमिव सवत। क्वचिन् मणिनिकाशोदा क्वचित पुलिनशालिनीम, क्वचित्सिद्धजनाकीर्णं पश्य मदाकिनी नदीम। दशन चित्रकूटस्य मदाकियाश्च शोभने अधिक पुरवासाच्च मन्ये तव च दशनात। सखीवच्च विगाहस्व सीते मदाकिनीनदीम्, कमलायवमज्जती पुष्कराणि च भामिनि' अयो० 93,8,95,1 3 4 9 12-14। श्रीमदभागवत 5,19,18 मे मदाकिनी का नामोल्लेख इस प्रकार है—'कौशिकी मदाकिनी यमुना '। कालिदास ने रघुवश 13,48 मे मदाकिनी का विमानारूढ राम से (चित्रकूट के निकट) कितना हृदयग्राही वणन करवाया है—'एपा प्रसन्नस्तिमितप्रवाहा सरिद् विदूरातरभावतन्वी, मदाकिनी भाति नगोपकठे मुक्तावली कठगतेव भूमे'। अध्यात्मरामायण अयो० 63 मे मदाकिनी को गगा कहा गया है—'ऊचुरग्रे गिरे पश्चाद गगाया उत्तरतटे विविक्त रामसदन रम्य काननमडितम'। तुलसीदासजी ने (रामचरितमानस, अयोध्या काड) मे मदाकिनी को सुरसरि की धारा कहा है—'सुरसरि धार नाम मदाकिनी जो सब पातक पोतक डाकिनि'। उन्होने मदाकिनी के सबध मे प्रसिद्ध पौराणिक कथा का भी निर्देश किया है जिसमे इस नदी को अत्रिऋषि की पत्नी अनसूया द्वारा चित्रकूट मे लाए जाने का वणन है—'नदी पुनीत पुरान बखानी, अत्रिप्रिया निज तपबल आनी'। मदाकिनी और पयास्विनी नदियो के सगम पर राघवप्रयाग नामक स्थान है। (मदाकिनी शब्द का अथ 'मद मद बहने वाली' है। इसके इस विशिष्ट गुण का वणन कालिदास ने उपर्युक्त श्लोक मे 'स्तिमित प्रवाहा' कह कर किया है।

(2) ताप्ती से पाच मील दक्षिण मे बहने वाली छोटी नदी। कालिदास के मालविकाग्निमित्र नाटक की कई प्राचीन हस्तलिखित प्रतियो के पाठ मे मदाकिनी नामक एक नदी का इस प्रकार उल्लेख है—'म भर्ता मदाकिनी तीरेऽन्त-

पालदुर्ग स्थापित'। रायचौधरी के अनुसार यह मदाकिनी ताप्ती की सहायक नदी है (पोलीटिकल हिस्ट्री आव ऐंशेंट इंडिया, पृ० 309। अन्य प्रतियो मे पाठ 'नमदा' है जो अधिक समीचीन जान पडता है।

(3) यह नदी गढवाल (उ० प्र०) मे केदार नाथ के पर्वत-शृंग से निकल कर कालीमठ, चद्रापुरी, अगस्त्यमुनि आदि स्थानो से होती हुई रुद्रप्रयाग मे आकर गगा की मुख्य धारा अलकनदा मे मिल जाती है। इसका जल श्याम होने स इसे काली गगा भी कहते हैं।

मदारगिरि (जिला भागलपुर, बिहार)

इस स्थान से गुप्तनरेश आदित्यसेन के दो शिलालेख प्राप्त हुए हैं। ये दानो एक ही लेख की दो प्रतिलिपिया हैं। इसमे आदित्यसेन के नाम के पहले, परमभट्टारक तथा महाराजाधिराज की उपाधिया जोडी गई हैं जिससे सूचित होता है कि यह अपसढ अभिलेख के बाद लिखा गया है क्योंकि उसमे आदित्यसेन की ये उपाधिया उल्लिखित नही हैं। इस अभिलेख से जान पडता है कि हर्ष की मृत्यु के पश्चात् राजनतिक उथल पुथल मे, मगध मे स्थित गुप्त राजाओ के वशज शक्तिशाली हो गए और आदित्यसेन स्वतत्र राजा के रूप म राज करने लगा। इस अभिलेख मे आदित्यसेन की रानी कोणदेवी द्वारा एक तडाग बनवाए जाने का उल्लेख है।

मदोवर दे० मडौर

मऊरानीपुरा (बुदेलखड, उ० प्र०)

झासी मानिकपुर रेल मार्ग पर स्टेशन है। 17वी शती के अत म बुदेला-नरेश सुजान सिंह की माता ने इस ग्राम को बसाया था।

मकरान (सिंध, पाकि०)

अरब सागर के तटवर्ती प्रदेश का एक भाग। बृहत्सहिता म इस प्रदेश के निवासियो को 'मकर' कहा गया है। कल्डन ने इस नाम को मूलरूप मे तामिल भाषा का शब्द माना है। फारसी के प्राचीन महाकाव्य शाहनामा मे उल्लेख है कि इस प्रदेश पर ईरान के सम्राट् कैखुसरो ने कब्जा किया था जिसके नाम से खुसरैर नामक स्थान आज भी मकरान मे है। 7वीं शती ई० म सिंध-नरेश रायचच का मकरान पर अधिकार था जैसा कि चचनामा नामक ग्रथ स सूचित होता है। 712 ई० मे यहा अरबो का अधिकार हुआ और तत्पश्चात् इतिहास म सिंध प्रात के साथ ही मकरान के भाग्य का निपटारा होता रहा। ग्रीक लेखको ने मकरान को गदरोजिया लिखा है जो ग्यादूर का अपभ्रंश जान पडता है। यह स्थान मकरान का प्राचीन बदरगाह था।

कुल (’वत)

बौद्ध गया से 26 मील दक्षिण कलुहा पहाड। बुद्ध ने छठा वर्षाकाल यहा ताया था।

गडोवा (जिला फरीदपुर, बगाल)

इस ग्राम मे चैतन्य महाप्रभु (15वी शती) की माता शचीदेवी का पितृगह ा। उनके पिता प० नीलावर चक्रवर्ती विद्याध्ययन के लिए मगडोवा से नव-ोप मे आकर बस गए थे।

गद्वीप

भविष्यपुराण 39 मे वर्णित जनपद जहा के निवासी मगो के सोलह रिवारो को कृष्ण के पुत्र साब ने स्वनिर्मित सूर्य मंदिर मे उपासना के लिए ाकस्थान से लाकर बसाया था। साब ने दुर्वासा के शाप के फलस्वरूप कुष्ठ ेग से पीडित होकर सूर्य की उपासना की थी। मग निवासियो का वर्णन मणित करता है कि ये लोग ईरान देश से आए थे। ये लोग पारसियो की भाति कटि मेखला पहनते, मृत शरीर को छूना पाप समझते, खाते समय मौन रहते और प्रार्थना के समय मुख को कपडे से ढका रखते थे। वास्तव मे प्राचीन ईरानी साम्राज्य के मीडिया नामक नगर की एक जाति को मग या मागी कहते थे (इसी से अंग्रेजी शब्द Magician बना है)। मगों का सबध शाकलद्वीप या सियालकोट से भी जान पडता है जहा ये भारत मे आने पर बस गए थे। वाराहमिहिर की वृहत्सहिता 58 मे वर्णित सूर्य-प्रतिमाओ के वेश तथा आकृति से विशेषत कटि मेखला तथा आजानु जूतो से यह तथ्य पुष्ट होता है कि भारत मे सूर्योपासना के केंद्रो मे ईरानी लोगो का काफी प्रभाव था। कालातर मे मगो को हिंदू समाज मे ब्राह्मणो के रूप मे सम्मिलित कर लिया गया। इन्हे आज भी मग, शाकल या शाकल द्वीपी ब्राह्मण कहा जाता है।

मगध

बौद्धकाल तथा परवर्तीकाल मे उत्तरी भारत का सबसे अधिक शक्तिशाली जनपद। इसकी स्थिति स्थूल रूप से दक्षिण विहार के प्रदेश मे थी। मगध का सर्वप्रथम उल्लेख अथर्ववेद (5,22,14) मे है—'गधारिभ्यो मूजवद्भ्योऽगे-भ्योमगधेभ्य प्रैष्यन् जनमिव शेवधि तक्मान परिदद्मसि'। इससे सूचित होता है कि प्राय उत्तर वैदिक काल तक मगध, आर्य सभ्यता के प्रभाव क्षेत्र के बाहर था। विष्णुपुराण (4,24,61) से सूचित होता है कि विश्वस्फटिक नामक राजा ने मगध मे प्रथम बार वर्णों की परपरा प्रचलित करके आर्य सभ्यता का प्रचार किया था। *'मगधाया तु विश्वस्फटिकसज्ञोऽन्यान्वर्णान् करिष्यति'*। वाजसनेयि

संहिता (30,5) में मागधों या मगध के चारणों का उल्लेख है। वाल्मीकि रामायण (बाल० 32,8-9) में मगध के गिरिव्रज का नाम वसुमती कहा गया है और सुमागधी नदी को इस नगर के निकट बहती हुई बताया गया है—'एषा वसुमती नाम वसोस्तस्य महात्मन, एते शैलवरा पंच प्रकाशन्ते समतत, सुमागधीनदी रम्या मागधान्विश्रुताऽऽययौ, पंचाना शैलमुख्याना मध्ये मालेव शोभते'। महाभारत के समय में मगध में जरासंध का राज्य था जिसकी राजधानी गिरिव्रज में थी। जरासंध के वध के लिए श्रीकृष्ण अर्जुन और भीम के साथ मगध देश में स्थित इसी नगर में आए थे—'गोरथ गिरिमासाद्य ददृशुर्मागध पुरम्'—महा० सभा० 20,30। जरासंध के वध के पश्चात भीम ने जब पूर्व दिशा की दिग्विजय की तो उन्होंने जरासंध के पुत्र सहदेव को, अपने संरक्षण में ले लिया और उससे कर ग्रहण किया 'तत सुह्मान् प्रसुह्माश्च सपक्षानतिवीर्यवान्विजित्य युधिकौंतेयो मागधानभ्यधाद्बली'। 'जारासंधि सान्त्वयित्वा करे च विनिवेश्य ह' सभा० .0,16-17। गौतम बुद्ध के समय में मगध में बिंबिसार और तत्पश्चात उसके पुत्र अजातशत्रु का राज था। इस समय मगध की कोसल जनपद से बड़ी अनबन थी यद्यपि कोसल-नरेश प्रसेनजित की कन्या का विवाह बिंबिसार से हुआ था। इस विवाह के फलस्वरूप काशी का जनपद मगधराज को दहेज के रूप में मिला था। यह मगध के उत्कर्ष का समय था और परवर्ती शतियों में इस जनपद की शक्ति बराबर बढ़ती रही। चौथी शती ई० पू० में मगध के शासक नंद थे। इनके बाद चंद्रगुप्त मौर्य तथा अशोक के राज्यकाल में मगध के प्रभावशाली राज्य की शक्ति अपने उच्चतम गौरव के शिखर पर पहुंची हुई थी और मगध की राजधानी पाटलिपुत्र भारत भर की राजनैतिक सत्ता का केंद्र बिंदु थी। मगध का महत्व इसके पश्चात भी कई शतियों तक बना रहा और गुप्तकाल के प्रारंभ में काफी समय तक गुप्त साम्राज्य की राजधानी पाटलिपुत्र ही में रही। जान पड़ता है कि कालिदास के समय (संभवत 5वीं शती ई०) में भी मगध की प्रतिष्ठा पूर्ववत् थी क्योंकि रघुवंश 6,21 में इंदुमती के स्वयंवर के प्रसंग में मगधनरेश परंतप का भारत के सब राजाओं में सर्वप्रथम उल्लेख किया गया है। इसी प्रसंग में मगध-नरेश की राजधानी को कालिदास ने पुष्पपुर में बताया है—'प्रासादवातायन संश्रितानां नेत्रोत्सवं पुष्पपुरांगनानाम्' 6,24। गुप्त साम्राज्य की अवनति के साथ साथ ही मगध की प्रतिष्ठा भी कम हो चली और छठी सातवीं शतियों के पश्चात मगध भारत का एक छोटा सा प्रांत मात्र रह गया। मध्यकाल में यह बिहार नामक प्रांत में विलीन हो गया और मगध का पूर्व गौरव इतिहास

का विषय बन गया। जैन साहित्य में अनेक स्थलों पर मगध तथा उसकी राजधानी राजगृह (प्राकृत रायगिह) का उल्लेख है। (दे० प्रज्ञापण सूत्र)

मगधपुर

गिरिव्रज को महा० सभा० 20,30 में मगधपुर कहा गया है जहाँ जरासंध की राजधानी थी—'गोरथं गिरिमासाद्य ददृशुर्मागधं पुरम्'। (दे० मगध, गिरिव्रज (2))

मगधभुक्ति

गुप्त अभिलेखों में पटना गया जिलों के परिवर्ती प्रदेश का नाम। इसे पाल नरेशों के राज्य काल में श्रृंगारभुक्ति कहा जाता था। (दे० बिहार थ्रू दि एजज, पृ० 53,54)

मगल (जिला बिलारी, मद्रास)

चालुक्य वास्तु शैली में निर्मित मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

मगह=मगध

मगध का प्राकृत नाम—'मगह गयादिक तीरथ जैसे—तुलसीदास।

मगहर (जिला बस्ती, उ० प्र०)

उत्तर भारत के प्रसिद्ध संत कबीर का मृत्यु स्थान। इनकी मृत्यु 1500 ई० के लगभग हुई थी। तत्कालीन लोक विश्वास के अनुसार मगहर में मृत्यु अशुभ समझी जाती थी। इस विश्वास को झुठलाने के लिए ही ये महात्मा मृत्यु से पहले मगहर चले गए थे। उनका कहना था कि जो 'कबिरा काशी मरे तो रामहिं कौन निहोरा'। कहा जाता है कि मगहर में मरने के उपरांत उनकी चादर के नीचे केवल फूल मिले थे जिन्हें हिंदू-मुसलमानों ने आधा आधा बाँट कर अपने अपने धर्म की रीति के अनुसार कबीर की समाधि बनवाई। आमी नदी के दाहिने तट पर दोनों समाधियाँ आज भी विद्यमान हैं।

मछेरी दे० अलवर

मझगावम (बघेलखंड, म० प्र०)

भूतपूर्व नागोद रियासत में स्थित है। इस स्थान से परिव्राजक महाराज हस्तिन् का 191 गुप्त संवत् (=510 ई०) का एक ताम्रपट्ट अभिलेख प्राप्त हुआ था जिसमें महादेवी देव नामक व्यक्ति की प्रार्थना पर महाराज हस्तिन् द्वारा वालुगत नाम के ग्राम का कुछ ब्राह्मणों के लिए दान में दिए जाने का उल्लेख है।

मझौली (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर से 34 मील दूर यह स्थान वराह भगवान् के अति प्राचीन मंदिर

के लिए विख्यात है। वराह की प्रतिमा लगभग 9 फुट ऊंची है। मयोली से12 मील पर रूपनाथ नामक ग्राम है जहा अशोक का एक शिलालेख स्थित है।

मणियावो (जिला दमोह, म० प्र०)

गढ़मडला नरेश सग्रामसिंह (मृत्यु 1540 ई०) के 52 गढ़ो मे से एक। सग्रामसिंह प्रसिद्ध वीरागना रानी दुर्गावती के श्वसुर थे और इन्होंने गढ़-मडला राज्य की सस्थापना की थी जिसका अत मुगल सम्राट अकबर के समय में हो गया।

मढ़ा

(1) (जिला झासी, उ० प्र०) बुदेलखड वास्तु शैली म निर्मित कई मदिरा के अवशेष यहा स्थित हैं।

(2) (जिला देहरादून, उ० प्र०) कालसी से 25 मील दूर गगा-तट पर स्थित है। 600 ई० का लाखा मदिर यहा का प्राचीन स्मारक है।

मणिकियाला (जिला रावलपिंडी, पाकि०)

यह स्थान कनिष्ककालीन है। यहाँ के बौद्धस्तूप के भग्नावशेषो मे एक चादी के वर्तुल पट्टकपर कुशान सम्राट कनिष्क के शासनकाल (लगभग 120 ई०) का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है जिससे इस प्रदेश मे उसकी प्रभुता का विस्तार प्रमाणित होता है। यहा के स्तूप की खोज 1830 ई० मे जनरल वेंटुरा और कोट ने की थी। इसमे से कनिष्क क सिक्के भी प्राप्त हुए थे। बरजस का मत है कि मौलिक स्तूप (जो कनिष्क कालीन है) पर 25 फुट मोटा वाह्यावरण है जो शायद 8वी शती म बना था।

मणितार

हर्षचरित के लेखक महाकवि बाणभट्ट के अनुसार यह स्थान अजिरावती नदी के तट पर स्थित था। महाराजाधिराज हर्ष (606 647 ई०) ने अपना राज-शिविर इस स्थान पर कुछ दिनो के लिए स्थापित किया था और यहा अनेक करद नरेश और सामत राज भक्ति प्रदर्शित करने के लिए एकत्र हुए थे। इसी स्थान पर बाण की महाराज हर्ष से सर्वप्रथम भेट हुई थी। डा० रा० कु० मुकर्जी के मत मे यह स्थान अवध, उत्तर प्रदेश मे था (दे० अजिरावती)। अजिरावती या अचिरावती का छोटी राप्ती से अभिज्ञान किया गया है। श्रावस्ती इसी नदी के तट पर स्थित थी।

मणिनाग

राजगृह (=राजगीर, बिहार) के खडहरो मे स्थित अति प्राचीन स्थान है इसे अब मणियार मठ कहते हैं। महाभारत मे मणिनाग का तीर्थरूप मे

उल्लेख है—'मणिनाग ततोगत्वा गोसहस्रफललभेत्' वन० 84,106। 'तैर्थिक भुजते यस्तु मणिनागस्य भारत, दष्टस्याशीविषेणापि न तस्य क्रमते विषम' —वन० 84,107। निश्चय ही यह स्थान महाभारत-काल मे नागो का तीर्थ था। मणियार मठ से, उत्खनन द्वारा गुप्तकालीन कई नागमूर्तियाँ मिली हैं और एक नागमूर्ति पर तो मणिनाग शब्द भी उत्कीण है। यह प्राय निश्चित है कि महाभारत मे जिस मणिनाग का उल्लेख है वह वतमान मणियार मठ ही था क्योकि महाभारत के वन पव के अ तगत तीथयात्रा के प्रसग का अधिकाश, मूल महाभारत के समय के बाद का है और बौद्धकालीन जान पडता है जैसा कि मणिनाग के प्रसग मे राजगह के नामोल्लेख से सूचित होता है—'ततो राजगृह गच्छेत तीथसवी नराधिप' वन० 84,104। राजगृह नाम बुद्ध के समकालीन मगधराज बिबसार का रखा हुआ था। (दे० राजगृह)

मणिपवत

प्रागज्योतिषपुर (गोहाटी, असम) मे स्थित एक पवत जहा महाभारतकाल मे नरकासुर ने सोलह सहस्र कुमारियो का अपहरण करके उनके रहने के लिए अ त पुर बनवाया था। श्रीकृष्ण ने नरकासुर के वध के पश्चात् मणिपर्वत पर पहुच कर इन कन्याओ को कारागार से छुटकारा दिला दिया था—'एतत तु गरुडे सर्वं क्षिप्रामारोप्य वासव दाशाहपतिना साधमुपाया मणिपवतम' सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ। इस प्रसग मे यह वणन भी है कि कृष्ण मणिपवत को उखाड कर प्रागज्योतिषपुर से द्वारका ले गए थे और उ होंने उसे वही स्थापित कर दिया था—'त महेद्रानुज शौरिश्चकार गरुडोपरि पश्यता सवभूतानामुत्पाट्य मणिपवतम्', 'तत शौरि सुपर्णेन एव निवेशनमभ्ययात् चकाराथ यथोद्देशमीश्वरो मणिपवतम्' सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ।

मणिपुर (असम)

भारत की पूर्वी सीमा पर स्थित अति प्राचीन स्थान। वाल्मीकि० उत्तर० 23,5 मे शायद इसी को मणिमयीपुरी कहा गया है। यहां नागो की स्थिति बताई गई है—'सतु भोगवती गत्वा पुरी वासुकिपालिता कृत्वा नागा वशे हृष्टो ययो मणिमयी पुरीम्'। मणिपुर का राज्य महाभारत के समय मे भी था। वहा सभवत इस स्थान को ही मणिमान् कहा गया है। नागक या उलूपी जिससे अजुन का विवाह हुआ था और उनका पुत्र बभ्रुवाहन नागदेश मे रहते थे। किंवदती मे इसे मणिपुर का प्रदेश माना जाता है। आज भी मणिपुर के आदिनिवासी नागा लोग ही हैं। 1714 ई० से मणिपुर का ज्ञात

इतिहास प्रारंभ होता है। इससे पूर्व यह प्रदेश छोटे छोटे कबीलों में बटा हुआ था जिन पर नागा सरदारों का प्रभुत्व था। इस वर्ष पामबीह नामक नागा ने हिंदू धर्म स्वीकार कर लिया और पूरे प्रदेश पर अपना अधिकार स्थापित किया। इसने अपना नाम गरीबनिवाज रखा था। यही वर्तमान मणिपुर का सर्व प्रथम राजा माना जाता है। इसने ब्रह्मदेश के कुछ क्षेत्र जीत कर मणिपुर में मिला लिए। इसके पश्चात् यहां के राजा जयसिंह हुए। इनके समय में मणिपुर पर ब्रह्मदेश का असफल आक्रमण हुआ। 1824 ई० में मणिपुर पर फिर एक बार ब्रह्मदेश के राजा ने आक्रमण किया किंतु अंग्रेजी सेना की सहायता से उसे विफल बना दिया गया। इस समय मणिपुर में गंभीरसिंह का राज्य था। इनकी मृत्यु 1834 ई० में हो गई और नरसिंहदेव गद्दी पर बैठे। इन्होंने अंग्रेजों के आदेश से ब्रह्मदेश से संधि करली और कूबो की घाटी लौटा दी। 1851 ई० में चंद्रकीर्तिसिंह को अंग्रेजों ने मणिपुर का राजा बनाया। इसने 1879 ई० में अंग्रेजों की नागाओं के विरुद्ध युद्ध में सहायता की। लार्ड लैंसडाउन के समय में अंग्रेजों और मणिपुर के शासक टिकेंद्रजीतसिंह में शत्रुता के कारण युद्ध हुआ जिसमें मणिपुर की पराजय हुई और तत्पश्चात यहां पूरी तरह से अंग्रेजी सत्ता स्थापित हो गई जो 1947 ई० तक रही। मणिपुर का क्षेत्रफल 8 सहस्र वर्ग मील है। इस रियासत में छोटी छोटी एक हजार बस्तियां हैं। उत्तरी भाग में नरभक्षी नागा और दक्षिण में कुकी लोग रहते हैं। मणिपुर प्राचीनकाल से अपने विशिष्ट लोक-नृत्यों के लिए प्रसिद्ध रहा है।

मणिमती

'इल्वलो नाम दैतेय आसीत् कौरवनंदन, मणिमत्यां पुरि पुरा वातापिस्तस्य चानुज' महा० वन० 96,4। इस नगरी को गया (बिहार) के निकट बताया गया है तथा यहां अगस्त्याश्रम की स्थिति मानी गई है। उपर्युक्त प्रसंग में इल्वल दैत्य के वध की कथा यहीं घटित हुई कही गई है। संभव है मणिनाग और मणिमती एक ही हों। ऐसी दशा में मणिमती को राजगृह (राजगीर, बिहार) के संनिकट माना जा सकता है। (दे० मणिनाग)

मणिमुक्ता (मद्रास)

कुंभकोणम् से दक्षिण-पूर्व 6 मील पर स्थित तिरुनारैयूर या सुगंधगिरि नामक प्राचीन स्थान के निकट बहने वाली नदी। यह स्थान विष्णु की उपासना का केंद्र है।

मणियार मठ दे० मणिनाग

मण्यखेट दे० मलखेड

मतगवन दे० पपासर

मतगसर

वाल्मीकि रामायण के अनुसार यह सरोवर किष्किधा के प्रसिद्ध पपासर के निकट स्थित था —'सतामासाद्य वै रामो दूरात्पानीयवाहिनीम्, मतगसरस नाम ह्लद समवगाहत'—अरण्य० 75, 14 अर्थात दूर से आनेवालो के लिए पीने के योग्य जलवाले पपासर के पास पहुच कर रामचद्र मतगसर नामक झील मे नहाए।

मनिपुर दे० मडावर

मत्स्य

(1) महाभारत-काल का एक प्रसिद्ध जनपद जिसकी स्थिति अलवर-जयपुर के परिवर्ती प्रदेश म मानी गई है। इस देश म विराट का राज्य था तथा वहा की राजधानी उपप्लव नामक नगर म थी। विराटनगर मत्स्य देश का दूसरा प्रमुख नगर था। सहदव ने अपनी दिग्विजय-यात्रा में मत्स्य देश पर विजय प्राप्त की थी— मत्स्यराज च कौरव्यो वशे चक्रे बलाद्बली—महा० सभा० 31,2। भीम ने भी मत्स्यों को विजित किया था—'ततो मत्स्यान् महातेजा मलदाश्च महाबलान्'—सभा० 30,9। अलवर के एक भाग म शाल्व-देश था जो मत्स्य का पार्श्ववर्ती जनपद था। पाडवों ने मत्स्यदेश में विराट के यहा रह कर अपने अज्ञातवास का एक वर्ष बिताया था (दे० बैराठ)। मत्स्य निवासियो का सर्वप्रथम उल्लेख ऋग्वेद में है—पुरोळा इत्तुर्वशो यक्षुरासीद्राये मत्स्यासोनिशिता अपीव, श्रुष्टिं चक्रुर्भृगवो द्रुह्यवश्च सखा सखायमतरद्विषूचोः ऋग्० 7,18,6। इस उद्धरण में मत्स्यों का वैदिक काल के प्रसिद्ध राजा सुदास के शत्रुओं के साथ उल्लेख है। शतपथ ब्राह्मण 13,5,4,9 म मत्स्य-नरेश ध्वसन् द्वैतवन का उल्लेख है, जिसने सरस्वती के तट पर अश्वमेध किया था। इस उल्लेख से मत्स्य देश में सरस्वती तथा द्वैतवन सरोवर की स्थिति सूचित होती है। गोपथ ब्राह्मण (1-2-9) में मत्स्यों को शाल्वों और कौषीतकि उपनिषद् (14, 1) म कुरुपचालों से संबद्ध बताया गया है। महाभारत मे इनका त्रिगर्तों और चेदियों के साथ भी उल्लेख है—सहदेवेन [illegible] प्रवीरगणा वपत्रन' महा० उद्योग० 74-16। मनुसंहिता में मत्स्यों [illegible] पाचाल और शूरसेन [illegible] कुरुक्षेत्र च मत्स्याश्च [illegible]

के वधोपरात शत्रुघ्न ने इस नगरी को पुन बसाया था। उन्होंने मधुवन को कटवा कर उसके स्थान पर नई नगरी बसाई थी (दे० महोली) । महाभारत के समय मे मथुरा शूरसेन देश की प्रख्यात नगरी थी। यही कृष्ण का जन्म यहा के अधिपति कस के कारागार मे हुआ तथा उन्होंने बचपन ही म अत्याचारी कस का वध करके देश को उसके अभिशाप से छुटकारा दिलवाया। कस की मृत्यु के बाद श्रीकृष्ण मथुरा ही मे बस गए किंतु जरासध के आक्रमणो से बचने के लिए उन्होंने मथुरा छोड कर द्वारकापुरी बसाई ('वय चैव महाराज, जरासधभयात् तदा, मथुरा सपरित्यज्य गता द्वारावती पुरीम्' महा० सभा० 14,67 । श्रीमद्भागवत 10,41,20-21-22-23 मे कस के समय की मथुरा का सुदर वर्णन है। दशम सग, 58 मे मथुरा पर कालयवन के आक्रमण का वृत्तात है। इसने तीन करोड मलेच्छो को लेकर मथुरा को घेर लिया था। ('रुरोध मथुरामेत्य तिसृभिर्म्लेच्छकोटिभि)। हरिवश पुराण 1,54 म भी मथुरा के विलास वैभव का मनोहर चित्र है, 'सा पुरी परमोदारा साट्टप्राकारतोरणा स्फीता राष्ट्रसमाकीर्णा समृद्धबलवाहना । उद्यानवन सपन्ना सुसीमासुप्रतिष्ठिता, प्राशुप्राकारवसना परिखाकुल मेखला' । विष्णुपुराण मे भी मथुरा का उल्लेख है, 'सप्राप्तश्चापि सायाह्ने सोऽक्रूरो मथुरापुरीम्' 5,19,9 । विष्णुपुराण 4,5,101 मे शत्रुघ्न द्वारा पुरानी मथुरा के स्थान पर ही नई नगरी के बसाए जाने का उल्लेख है—'शत्रुघ्नेनाप्यमितबलपराक्रमो मधुपुत्रो लवणो नाम राक्षसोऽभिहतो मथुरा च निवेशिता')। इस समय तक मधुरा नाम का रूपातर मथुरा प्रचलित हो गया था। कालिदास ने रघुवश 6,48 मे इदुमती के स्वयवर के प्रसग मे शूरसेनाधिप सुषेण की राजधानी मथुरा मे वर्णित की है—'यस्यावरोधस्तनचदनाना प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले, कलिदकन्या मथुरा गतापि गगोर्मिससक्तजलेव भाति'। इसके साथ ही गोवधन का भी उल्लेख है। मल्लिनाथ ने 'मथुरा' की टीका करते हुए लिखा है'—'कालिन्दीतीरे मथुरा लवणासुरवधकाले शत्रुघ्नेन निर्मास्यतेति वक्ष्यति'। बौद्धसाहित्य मे मथुरा के विषय म अनेक उल्लेख हैं। 600 ई० पू० मे यहा अवतिपुत्र (अवतिपुत्तो) नामक राजा का राज्य था जिसके समय मे बौद्ध अनुश्रुति (अगुत्तरनिकाय) के अनुसार गौतम बुद्ध स्वय मथुरा आए थे। उस समय यह नगरी बुद्ध के लिए अधिक आकषक सिद्ध न हुई क्योकि सभवत उस समय यहा प्राचीन वैदिक मत सुदृढ रूप से स्थापित था (दे० श्री कृ० द० वाजपेयी—मथुरा परिचय, पृ० 46)। चद्रगुप्त मौय के समय मे मथुरा मौय साम्राज्य के अतगत थी। ग्रीक राजदूत मेगेस्थनीज ने सूरसेनाई तथा उनके मथोरा और क्लीसोबोरा नामक नगरो का

मनु० 2,19। उडीसा की भूतपूर्व मयूरभज रियासत मे प्रचलित जनश्रुति के अनुसार मत्स्यदेश सतियापारा (जिला मयूरभज) का प्राचीन नाम था। उपयुक्त विवेचन से मत्स्य की स्थिति पूर्वोत्तर राजस्थान मे सिद्ध होती है किंतु इस किंवदती का आधार शायद यह तथ्य है कि मत्स्यो की एक शाखा मध्यकाल के पूर्व विजिगापटम (आ० प्र०) के निकट जा कर बस गई थी (दे० दिब्बिड ताम्रपत्र, एपिग्राफिका इडिया, 5,108)। उडीसा के राजा जयत्सेन ने अपनी कन्या प्रभावती का विवाह मत्स्यवशीय सत्यमार्तड से किया था जिसका वशज 1269 इ० मे अर्जुन नामक व्यक्ति था। सभव है प्राचीन मत्स्य देश की पाडवों से सबधित किंवदतिया उडीसा म मत्स्यो की इसी शाखा द्वारा पहुची हो। (दे० अपरमत्स्य)

(2) मल्लराष्ट्र का एक नाम—'ततो मत्स्यान् महातेजा मलदाश्च महाबलान, अनघानभयाश्चैव पशुभूमिं च सवश' महा० 2,30,8। प्रसग की दृष्टि से यह जनपद उत्तरी बिहार या नेपाल के निकट जान पडता है और मल्लराष्ट्र से इसका अभिज्ञान ठीक जान पडता है।

मथुरा (उ० प्र०)

भगवान् कृष्ण की ज मस्थली और भारत की परम प्राचीन तथा जगदविख्यात नगरी। शूरसेन देश की यहा राजधानी थी। मथुरा का उल्लेख वदिक साहित्य म नही है। वाल्मीकि रामायण मे मथुरा को मधुपुर या मधुदानव का नगर कहा गया है तथा यहा लवणासुर की राजधानी बताई गई है—'एव भवतु काकुत्स्य क्रियता मम शासनम्, राज्य त्वामभिषेक्ष्यामि मधोस्तु नगरे शुभे। नगर यमुनाजुष्ट तथा जनपदाञ्शुभान् यो हि वश समुत्पाद्य पार्थिवस्य निवेशने' उत्तर० 62,16-18। इस नगरी को इस प्रसग मे मधुदैत्य द्वारा बसाई बताया गया है। लवणासुर जिसको शत्रुघ्न ने युद्ध म हराकर मारा था इसी मधुदानव का पुत्र था, 'त पुत्र दुर्विनीत तु दृष्ट्वा क्रोधसमन्वित, मधु स शोकमापद न चैन किंचिदब्रवीत'—उत्तर० 61,18। इससे मधुपुरी या मथुरा का रामायणकाल मे बसाया जाना सूचित होता है। रामायण म इस नगरी की समृद्धि का वर्णन इस प्रकार है—'अघ चद्रप्रतीकाशा यमुनातीरशोभिता, शोभिता गहमुख्यैश्च चत्वरापणवीथिक, चातुर्वण्य समायुक्ता नानावाणिज्यशोभिता' उत्तर० 70, 11। इस नगरी को लवणासुर ने भी सजाया सवारा था—'यच्चतनपरा शुभ्र त्वयैन कृत महत, तच्छोभयति शत्रुघ्नो नानावर्णोपशोभिताम। आरामैश्च विहारैश्च शोभमान समन्तत शोभिता शोभनीयश्च तथान्यैर्दैवमानुषै' उत्तर० 70 12-13। उत्तर० 70,5 (इय मधुपुरी रम्या मधुरा देवनिर्मिता') मे इस नगरी को मधुरा नाम से अभिहित किया गया है। लवणासुर

के वधोपरांत शत्रुघ्न ने इस नगरी को पुन बसाया था। उन्होंने मधुवन को कटवा कर उसके स्थान पर नई नगरी बसाई थी (दे० महोली)। महाभारत के समय मे मथुरा शूरसेन देश की प्रख्यात नगरी थी। यही कृष्ण का जन्म यहा के अधिपति कस के कारागार मे हुआ तथा उन्होने बचपन ही मे अत्याचारी कस का वध करके देश को उसके अभिशाप से छुटकारा दिलवाया। कस की मृत्यु के बाद श्रीकृष्ण मथुरा ही मे बस गए किंतु जरासध के आक्रमणो से बचने के लिए उन्होने मथुरा छोड कर द्वारकापुरी बसाई ('वय चैव महाराज जरासधभयात् तदा, मथुरा सपरित्यज्य मता द्वारावती पुरीम' महा० सभा० 14,67। श्रीमद्भागवत 10,41,20 21-22-23 मे कस के समय की मथुरा का सुदर वर्णन है। दशम सग, 58 मे मथुरा पर कालयवन के आक्रमण का वृत्तात है। इसने तीन करोड मलेच्छो को लेकर मथुरा को घेर लिया था। ('रुरोध मथुरामेत्य तिसृभिम्लेंच्छकोटिभि)। हरिवश पुराण 1,54 म भी मथुरा के विलास वैभव का मनोहर चित्र है, 'सा पुरी परमोदारा साट्टप्राकारतोरणा स्फीता राष्ट्रसमाकीर्णा समृद्धबलवाहना। उद्यानवन सपन्ना सुसीमासुप्रतिष्ठिता, प्राशुप्राकारवसना परिखाकुल मेखला'। विष्णुपुराण मे भी मथुरा का उल्लेख है, 'सप्राप्तश्चापि सायाह्ने सोऽक्रूरो मथुरापुरीम' 5,19,9। विष्णुपुराण 4,5,101 म शत्रुघ्न द्वारा पुरानी मथुरा के स्थान पर ही नई नगरी के बसाए जाने का उल्लेख है—'शत्रुघ्नेनाप्यमितबलपराक्रमो मधुपुत्रो लवणो नाम राक्षसोऽभिहतो मथुरा च निवेशिता')। इस समय तक मधुरा नाम का रूपातर मथुरा प्रचलित हो गया था। कालिदास ने रघुवश 6,48 मे इदुमती के स्वयवर के प्रसग मे शूरसेनाधिप सुषेण की राजधानी मथुरा मे वर्णित की है—'यस्यावरोधस्तनचदनाना प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले, कलिदकन्या मथुरा गतापि गगोर्मिससक्तजलेव भाति'। इसके साथ ही गोवधन का भी उल्लेख है। मल्लिनाथ ने 'मथुरा' की टीका करते हुए लिखा है'—'कालिन्दीतीरे मथुरा लवणासुरवधकाले शत्रुघ्नेन निर्मास्यतेति वक्ष्यति'। बौद्धसाहित्य मे मथुरा के विषय म अनेक उल्लेख हैं। 600 ई० पू० मे यहा अवतिपुत्र (अवतिपुत्तो) नामक राजा का राज्य था जिसके समय मे बौद्ध अनुश्रुति (अगुत्तरनिकाय) के अनुसार गौतम बुद्ध स्वय मथुरा आए थे। उस समय यह नगरी बुद्ध के लिए अधिक आकर्षक सिद्ध न हुई क्योकि सभवत उस समय यहा प्राचीन वैदिक मत सुदृढ़ रूप से स्थापित था (दे० श्री कृ० द० वाजपेयी—मथुरा परिचय, पृ० 46)। चद्रगुप्त मौर्य के समय मे मथुरा मौर्य-साम्राज्य के अतगत थी। ग्रीक राजदूत मेगेस्थनीज ने सूरसेनाई तथा उनके मथोरा और क्लीसोबोरा नामक नगरो का

उल्लेख किया है तथा इन्हें कृष्णोपासना का केंद्र बताया है। अशोक के समय मे मथुरा म बौद्धधर्म का काफी प्रचार हुआ। बौद्ध साहित्य तथा युवानच्वाग के यात्रावृत्त मे अशोक के गुरु उपगुप्त का उल्लेख है जो मथुरा का निवासी था। जैन अनुश्रुति म कहा गया है कि जैन सघ की दूसरी परिषद मथुरा मे स्कदिलाचार्य की अध्यक्षता म हुई थी जिसमे 'माथुर वाचना' नाम से जैन आगमो को सहितावद्ध किया गया था। 5वी शती ई० के अत म अकाल पडने के कारण यह 'वाचना' विलुप्त हो गई थी। आगमो का पुनरुद्धार तीसरी परिषद मे किया गया था जो वल्लभिपुर म हुई। विविधतीर्थकल्प मे मथुरा को दो जैन साधुओ—धमरुचि और धमघोष का निवास स्थान बताया गया है। जैन साहित्य म मथुरा की श्रीसपन्नता का भी वणन है—मथुरा बारह योजन लबी और नौ योजन चौडी थी। नगरी के चारो ओर परकोटा खिचा हुआ था और वह हर मदिरा, जिनशालाओ, सरोवरो आदि से सपन्न थी। जन साधु वृक्षो से भरे हुए भूधरमणि उद्यान मे निवास करते थ। इस उद्यान के स्वामी कुवेर ने यहा एक जैन स्तूप बनवाया था जिसमे सुपार्श्व की मूर्ति प्रतिष्ठित थी। विविधतीर्थकल्प मे मथुरा म भडीर यक्ष के मदिर का उल्लेख है। मथुरा म ताल, भडीर कोल, बहुल, बिल्व और लोहजघ नाम के उद्यान थे। इस ग्रथ म अर्कस्थल, वीरस्थल, पद्मस्थल, कुशस्थल और महास्थल नामक पाच पवित्र जैनस्थलो का भी उल्लेख है। निम्न 12 वनो के नाम भी इस ग्रथ मे मिलते हैं—लोहजघवन, मधुवन, बिल्ववन, तालवन, कुमुदवन, वृदावन, भाडीरवन, खदिरवन, कामिकवन, कोलवन, बहुलावन और महावन। पाच प्रसिद्ध मदिरा म विश्रातिक तीर्थ (विश्राम घाट) असिकुडा तीर्थ (असकुडा घाट) वैकुठ तीर्थ, कालिजर तीर्थ और चक्रतीर्थ की गणना की गई है। इस ग्रथ म निम्न जैन साधुओ का मथुरा से सबधित बतलाया गया है—कालवैशिक, सोम देव, कबल और सबल। एक बार घोर अकाल पडने पर मथुरा के एक जैन नागरिक खडी न अनिवार्य रूप से जैन आगमा के पाठन की प्रथा चलाई थी।

शुगकाल के प्रारभ से ही मथुरा का महत्त्व बहुत अधिक बढ गया था। इस समय शुग साम्राज्य के पश्चिमी प्रदेश की राजधानी मथुरा ही म थी। गार्गी सहिता के एक निर्देश से जान पडता है कि १५० ई० पू० के लगभग यवनराज दिमित्रियस (Demetrius) ने कुछ काल के लिए मथुरा पर अधिकार किया था किंतु शीघ्र ही शुगो ने अपना आधिपत्य यहा स्थापित कर लिया। १०० ई० पू० के आसपास शुगो की शक्ति क्षीण होने पर इस

नगरी पर पश्चिमोत्तर प्रदेश के शकक्षत्रपों ने अपना अधिकार जमा लिया और वे प्रायः ७५ वर्षों तक राज्य करते रहे। क्षत्रपवंश के महाक्षत्रप राजुल तथा उसका पुत्र शोडास प्रतापी राजा थे। मथुरा से प्राप्त अभिलेखों से ज्ञात होता है कि इन्होंने यहां यमुना-तट पर एक विशाल सिंह स्तंभ बनवाया था जिसका शीर्ष लंदन के संग्रहालय में है। शोडास के अभिलेख से जो खंडितावस्था में है, मथुरा का, उस काल में भगवान् वासुदेव कृष्ण की उपासना का केन्द्र होना सिद्ध होता है—'वसुना भगवतो वासुदेवस्य महास्थान चतुःशालं तोरणं वेदिका प्रतिष्ठापितो प्रीतोभवतु वासुदेव स्वामिस्य महाक्षत्रपस्य शोडासस्य संवर्तयाताम्'। मथुरा के इतिहास में ई० सन के प्रारंभ से ३०० ई० तक का समय कुषाणों के राज्यकाल का है। इस काल में इस नगरी की सर्वांगीण उन्नति हुई। इस स्वर्णयुग के उन्नत कला वैभव की छाप तत्कालीन मूर्तियों में अमिट रूप से अंकित है। इस काल में बुद्ध की मानवमूर्तियां बनने लगी थीं। कुषाणवंशीय विमकैदफिसस और कनिष्क की कायपरिमाण मूर्तियां यहां के खंडहरों से प्राप्त हुई थीं। कुषाणों के पश्चात् मथुरा में गुप्तों का शासन स्थापित हुआ। इनके समय में मथुरा की मूर्तिकला जो शुंगकाल में भी काफी उन्नत थी, सौंदर्य की पराकाष्ठा को पहुंच गई और यहां की बनी मूर्तियां देश के कोने-कोने में मूर्तिकला के नमूनों के रूप में भेजी जाने लगीं। मथुरा के अधिकांश विहार, देवकुल, मंदिर आदि जिनका वर्णन फाह्यान (३२० ई०) ने किया है (इसके समय में मथुरा के बीस विहारों में तीन सहस्र भिक्षु निवास करते थे) गुप्त शासन के दुर्बल हो जाने पर हूणों के विध्वंसकारी आक्रमणों के शिकार हो गए। ७वीं शती ई० में चीनी यात्री युवानच्वांग ने अपने यात्रावृत्त में बौद्धधर्म की अवनति के स्पष्ट चिह्नों का उल्लेख किया है। उसने भिक्षु उपगुप्त के विहार को देखा था जो शायद वर्तमान कंकाली टीले पर स्थित था। इस समय तक यहां के प्राचीन बौद्ध भवन, विहार आदि नष्ट हो चुके थे, जो बचे वे ११वीं शती में महमूद गजनी के आक्रमण ने समाप्त कर दिए। महमूद गजनी ने मथुरा में भगवान् कृष्ण का विशाल मंदिर विध्वस्त कर दिया। मुसलमानों के शासनकाल में मथुरा नगरी कई शतियों तक उपेक्षित अवस्था में पड़ी रही। अकबर और जहांगीर के शासनकाल में अवश्य कुछ भव्य मंदिर यहां बने किंतु औरंगजेब की कट्टर धर्मनीति ने मथुरा का सर्वनाश ही कर दिया। उसने यहां के प्रसिद्ध जन्मस्थान के मंदिर को तुड़वा कर वर्तमान मसजिद बनवाई और मथुरा का नाम बदल

कर इसलामाबाद कर दिया। किंतु यह नाम अधिक दिनों तक न चल सका। अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण के समय (1761 ई०) में फिर एक बार मथुरा को दुर्दिन देखने पड़े। इस बर्बर आक्रांता ने सात दिना तक मथुरा निवासियों के खून की होली खेली और इतना रक्तपात किया कि यमुना का पानी एक सप्ताह के लिए लाल रंग का हो गया। मुगल-साम्राज्य की अवनति के पश्चात् मथुरा पर मराठों का प्रभुत्व स्थापित हुआ और इस नगरी ने शतियों के पश्चात् चैन की सांस ली। 1803 ई० में लार्ड लेक ने सिंधिया को हराकर मथुरा-आगरा प्रदेश को अपने अधिकार में कर लिया।

मथुरा में श्रीकृष्ण के जन्मस्थान (कटरा केशवदेव) का भी एक अलग ही और अद्भुत इतिहास है। प्राचीन अनुश्रुति के अनुसार भगवान् का जन्म इसी स्थान पर कंस के कारागार में हुआ था। यह स्थान यमुनातट पर था और सामने ही नदी के दूसरे तट पर गोकुल बसा हुआ था जहां श्रीकृष्ण का बचपन ग्वाल-बालों के बीच बीता। इस स्थान से जो प्राचीनतम अभिलेख मिला है वह शोडास के शासनकाल (80—57 ई० पू०) का है। इसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। इससे सूचित होता है कि संभवतः शोडास के शासनकाल में ही मथुरा का सर्वप्रथम ऐतिहासिक कृष्णमंदिर भगवान के जन्मस्थान पर बना था। इसके पश्चात् दूसरा बड़ा मंदिर 400 ई० के लगभग बना जिसका निर्माता शायद चंद्रगुप्त विक्रमादित्य था। इस विशाल मंदिर को धर्मांध महमूद गजनी ने 1017 ई० में गिरवा दिया। इसका वर्णन महमूद के मीर मुंशी अलउतबी ने इस प्रकार किया है—महमूद ने एक निहायत उम्दा इमारत देखी जिसे लोग इंसान के बजाए देवों द्वारा निर्मित मानते थे। नगर के बीचोंबीच एक बहुत बड़ा मंदिर था जो सबसे अधिक सुंदर और भव्य था। इसका वर्णन शब्दों अथवा चित्रों से नहीं किया जा सकता। महमूद ने इस मंदिर के बारे में खुद कहा था कि 'यदि कोई मनुष्य इस तरह का भवन बनवाए तो उसे 10 करोड़ दीनार खर्च करने पड़ेंगे और इस काम में 200 वर्षों से कम समय नहीं लगना चाहे कितने ही अनुभवी कारीगर काम पर क्यों न लगा दिए जाएं'। कटरा केशवदेव से प्राप्त एक संस्कृत शिलालेख से पता लगता है कि 1207 वि० सं० = 1150 ई० में, जब महाराज विजयपाल देव मथुरा पर शासन करते थे, जज्ज नामक एक व्यक्ति ने श्रीकृष्ण के जन्म स्थान पर एक नया मंदिर बनवाया। श्री चैतन्य महाप्रभु ने शायद इसी मंदिर को देखा था—'मथुरा आशिया करिला विश्रामतीर्थे स्नान, जन्म स्थान केशव देखि करिला प्रणाम, प्रेमावेश नाचे गाए सघन हुंकार, प्रभु प्रेमावेश देखि लोके चमत्कार' (चैतन्य

चरितावली)। (कहा जाता है कि चैतन्य ने कृष्णलीला से सबद्ध अनेक स्थानो तथा यमुना के प्राचीन घाटो की पहचान की थी)। यह मदिर भी सिकदर लोदी के शासनकाल (16वी शती के प्रारभ) मे नष्ट कर किया गया। इसके पश्चात् मुगल-सम्राट् जहागीर के समय मे ओडछा नरेश वीरसिह देव बुदेला ने इसी स्थान पर एक अन्य विशाल मदिर बनवाया। फ्रासीसी यात्री टैवर्नियर ने जो 1650 ई० के लगभग यहा आया था, इस अद्भुत मदिर का वणन इस प्रकार लिखा है—'यह मदिर समस्त भारत के अपूव भवनो मे से है। यह इतना विशाल है कि यद्यपि यह नीची जगह पर बना है तथापि पाच छ कोस की दूरी से दिखाई पडता है। मदिर बहुत ही ऊचा और भव्य है'। इटली के पयटक मनूची के वणन से ज्ञात होता है कि इस मदिर का शिखर इतना ऊचा था कि 36 मील दूर आगरे से दिखाई पडता था। जन्माष्टमी के दिन जब इस पर दीपक जलाए जाते थे तो उनका प्रकाश आगरे से भली-भाति देखा जा सकता था और बादशाह भी उसे देखा करते थे। मनूची ने स्वय केशवदेव के मदिर को कई बार देखा था। श्रीकृष्ण के जन्म स्थान के इस अतिम भव्य और ऐतिहासिक स्मारक को 1668 ई० म सकीण हृदय औरगजेब ने तुडवा दिया और मदिर की लबी चौडी कुर्सी के मुख्य भाग पर ईदगाह बनवाई जो आज भी विद्यमान है। उसकी धर्माध नीति को काय रूप म परिणत करने वाला सूबेदार अब्दुल-नबी था जिसको हिंदू मदिरो के तुडवाने का काय विशेष रूप मे सौंपा गया था। इस अभागे की मृत्यु मथुरा मे ही विद्रोहियो के हाथो हुई। 1815 ई० मे ईस्ट इडिया कपनी ने कटरा केशवदेव को बनारस के राजा पट्टनीमल के हाथ बेच दिया। इन्होंने मथुरा मे अनेक इमारतो का निर्माण करवाया जिनमे शिवताल भी है। अब केशवदेव मे पुन कृष्ण-मदिर बनाने की व्यवस्था की गई है और इस प्रकार इस मदिर की सैकडो वर्षों की परपरा को पुनरुज्जीवित किया जा रहा है (दे० मधुवन, मधुपघ्न)

मदखेरा (म० प्र०)

टीकमगढ के निकट इस स्थान पर एक मध्यकालीन मदिर स्थित है जो वास्तुकला की दृष्टि से सराहनीय है।

मदधार

'निवृत्य च महाबाहुमदधार महीधरम्, सोमधेयाश्च निर्जित्य प्रययावुत्तरा-मुख '—महा० सभा० 30,9-10। इस पवत पर भीमसेन ने अपनी पूव दिशा की दिग्विजय यात्रा म अधिकार किया था। प्रसग से यह वत्स (प्रयाग कौशावी

का क्षेत्र) के दक्षिण पूर्व म विध्याचल पर्वत-श्रेणी का कोई भाग जान पडता है। सभवत इसकी स्थिति चुनार के निकट थी।

मदनपुर

(1) (जिला सागर, म० प्र०) बुदेलखड के चदल राजा मदनवमा न 12वी शती मे इस नगर को बसाया था। यहा से बुदेल नरेशो के कई अभिलेख प्राप्त हुए हैं। 1238 वि० स० = 1181 ई० के अभिलेख से ज्ञात होता है कि पृथ्वीराज चौहान चदल-नरेश परमाल के साथ युद्ध करने के लिए जाते समय इस स्थान पर आये थे। यहा स्थित जैन मदिर के एक स्तभ पर परमाल पर पृथ्वीराज की विजय का वृत्तात उत्कीर्ण है।

(2) (जिला ललितपुर, उ० प्र०) ललितपुर से 38 मील दूर है। 12वीं शती मे बने एक जैन मदिर पर खुदे अभिलेख (1149 ई०) म इस स्थान को मदनपुर कहा गया है।

मदना

उडीसा का प्राचीन अनभिज्ञात बदरगाह् जिसका उल्लेख रोम के भौगोलिक टॉलमी ने किया है (महताब, हिस्ट्री ऑव उडीसा, पृ० 24)

मदुरातक (जिला चेंगलपुर, मद्रास)

इस नगर का प्राचीन नाम मधुरातक और क्षेत्र का नाम बकुलारण्य है। कोदडराम के अति प्राचीन मदिर म एक बकुल—मौलसिरी—का पेड है। इसी के नीचे दक्षिण के प्रसिद्ध दार्शनिक सत रामानुजाचाय ने महापूर्णस्वामी से दीक्षा ली थी। इसी मदिर के साथ जानकी सीता का मदिर है जो यहा क एक तामिल-तेलगू शिलालेख के अनुसार एक अग्रेज सज्जन लायनस प्लेस द्वारा 1778 ई० मे बनवाया गया था। लेख म कहा गया है कि यहा के बडे जलाशय का बाध 1775 ई० से बनवाया जा रहा था किंतु प्रत्येक वष वर्षाकाल म टूट जाता था। एक वैष्णव की प्रेरणा से प्लेस ने जानकी मदिर बनवाने की मनौती के साथ बाध को पुन बनवाया और उस बार की घोर वर्षा मे भी वह स्थिर रहा। तभी स्वय प्लेस ने जानकी मदिर की स्थापना की थी।

मदुरा=मदुर (मद्रास)

प्राचीन सस्कृत ग्रथो म इस स्थान को दक्षिण मधुरा (उत्तर मधुर=मथुरा) कहा गया है। जैन ग्रथो मे मदुरा को पाड्यदेश की राजधानी बताया गया है। (दे० बी० सा० लॉ—सम जैन कनॉनिकल सूत्राज, पृ० 52)। प्राचीन पाडय देश की राजधानी होने क कारण ही शायद इस नगरी को दक्षिण मधुरा कहते थे क्योकि पाड्य नरेशो का सबध पाडवो की किसी शाखा स बताया जाता है

और पाडवो का, अपने प्रिय मित्र कृष्ण की नगरी मथुरा (=मदुरा) से सबध सुविदित ही है। यह नगर वैगा नदी के दक्षिणी तट पर बसा है। वैसे तो मदुरा नगरी बहुत प्राचीन है किंतु यहा का प्रसिद्ध मीनाक्षी मदिर तथा अन्य स्मारक 16वी-17वी शतियो म ही बने थे। इ हे मदुरा नरेश तिरुमलाई नायक तथा उसके वशजो ने बनवाया था। मीनाक्षी का मदिर 845 फुट लबा और 725 फुट चौडा है। इसका बाह्य परकोटा लगभग 21 फुट ऊचा है। इसके चारो कोनो पर ग्यारह मजिल और ग्यारह कलस वाले भव्य गोपुर हैं। इनम से एक 152 फुट ऊचा और 105 फुट चौडा है। इन विशाल गोपुरो के अतिरिक्त स्थान स्थान पर पाच छोटे गोपुर भी हैं। मदिर के दो भाग हैं। दक्षिणी भाग म मीनाक्षी का मदिर पत्थर का बना है। इसम भव्य स्थापत्य और सूक्ष्मशिल्प के एकत्र ही दशन होते है। मदुरा सती के बावन पीठो मे से है और सती की आख का प्रतीक माना जाता है। मीनाक्षी नाम का आधार भी सभवत यही तथ्य है।

(2) जावा के उत्तर म छोटा सा द्वीप है जो जावा स प्राय सलग्न है। यहा ई० सन् की प्रारभिक शतियो म हिंदू उपनिवेश बसाए गए थे। जान पडता है कि इसको बसाने वाले दक्षिण भारत की मदुरा नगरी स सबधित रहे होग।

मद्र

प्राचीन काल म इस देश के दो भाग थे—उत्तर मद्र जो एतरय ब्राह्मण के अनुसार हिमवान पवत के उस पार उत्तर कुरु देश के समीप था (जिमर और मक्डानल्ड के मत मे यह कश्मीर मे स्थित था) और दक्षिण मद्र जो पजाब के मध्यवर्ती प्रदेश म था। इसका मुख्य नगर साकल, साभल नगर या वतमान सियालकोट (पाकि०) था। वाल्मीकि रामायण किष्किधा 43,11 म मद्र देश का उल्लख है—'तत्र म्लेच्छान्पुलिंदाश्चशूरसेनां स्तथैव च। प्रस्थला भरताश्चैव कुरुश्च सहमद्रकै'। मद्र का पाणिनि ने (4,1 176,4 2,131) मे उल्लेख किया है। पतजलि के महाभाष्य 1,1,8,1,3,2 म भी मद्र का नामोल्लेख है। महाभारत कण० मे इस देश के निवासियो के अनार्य रीति रिवाजो का, अच्छा वणन है—'दुरात्मा मद्रको नित्य नित्यमानृतिकोऽनृजु, यावद त्य हि दौरात्म्य मद्रकष्विति म श्रुतम्', 'नापि वर न सौहाद्र मद्रकेण समाचरेत् मद्रके सगत नास्तिमद्रकाहि सदामल'—महा० कण० 40, 24 29 30। किंतु पूव महाभारत काल म मद्रनिवासियो के शील की ख्याति थी। परमसती साविनी मद्र देश के राजा अश्वपति की पुत्री थी—'आसीन मद्रेषु धर्मात्मा राजा परमधार्मिक, ब्रह्मण्यश्च महात्मा च सत्यसधा जितेंद्रिय'—

महा, वन० 293 5। मद्र के शाकल या सागल नगर का उल्लेख कालिंगबोधि और कुसजातक में भी है। स्यालकोट के आस पास का प्रदेश गुरुगोविंदसिंह के समय (17वीं शती) तक मद्र देश कहलाता था। (दे० शाकल)

मद्रास

सन 1639 ई० में ईस्ट इंडिया कंपनी के कर्मचारी फ्रांसिस डे ने विजय नगर के राजा से कुछ भूमि लेकर इस नगरी की स्थापना की थी। उस समय का बना हुआ किला अभी तक विद्यमान है। मद्रास के उपनगर मयलापुर में कपालीश्वर शिव का प्रसिद्ध प्राचीन मंदिर है। मायलापुर का शाब्दिक अर्थ मयूरनगर है। पौराणिक जनश्रुति के अनुसार पार्वती ने मयूर का रूप धारण करके शिवजी की इस स्थान पर पूजा की थी। इसी कथा का अंकन इस मंदिर की मूर्तिकारी में है। मंदिर के पीछे एक पवित्र ताल है। ट्रिप्लीकेन में पार्थसारथी का मंदिर भी उल्लेखनीय है। मद्रास के स्थान पर प्राचीन समय में चैन्नापटम नामक ग्राम बसा हुआ था।

मदापुर (बंगाल)

पाडुआ से 20 मील। यहां मध्यकालीन इमारतों के भग्नावशेष हैं। देश के इस भाग में वर्षा अधिक होने के कारण यहां तथा निकटवर्ती ऐतिहासिक स्थानों की प्राचीन इमारतें नष्ट भ्रष्ट हो गई हैं।

मधुगंगा

केदारनाथ (गढ़वाल, उ० प्र०) के निकट बहने वाली एक नदी। इस क्षेत्र की प्रायः सभी नदियां गंगा कहलाती हैं क्योंकि अंततः वे सभी गंगा की मूलधारा में मिल जाती हैं।

मधुपुरी

वाल्मीकि रामायण में मथुरा का प्राचीन नाम मधुरा या मधुपुरी है। इसके निकट स्थित वन मधुवन कहलाता था। नगर को मधुनामक दैत्य ने बसाया था। उत्तर 62,17 तथा 68 3 से यह सूचित होता है कि मधुपुरी यमुना के पश्चिमी तट पर बसी थी। जब रामचंद्रजी के अनुज शत्रुघ्न, लवणासुर (मधु का पुत्र) को जीतने के लिए अयोध्या से मधुपुरी गए तो उन्हें गंगा और यमुना दोनों नदियों को पार करना पड़ा था। इससे भी मधुपुरी का मथुरा से अभिज्ञान प्रमाणित हो जाता है। वस्तुतः मथुरा से 3½ मील दूर महोली नामक ग्राम प्राचीन मधुपुरी के स्थान पर बसा हुआ है।

मधुमंत

वाल्मीकि रामायण (उत्तर० 92,18) के अनुसार दंडक प्रदेश को

राजधानी । महावस्तु (पृ० 263) में दंडक की राजधानी गोवर्धन (=नासिक) में कही गई है। (दे० रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंशेंट इंडिया, पृ० 78)

मधुमत (म०प्र)

भूतपूर्व ग्वालियर रियासत में बहने वाली नदी महुवार का प्राचीन नाम ।

मधुमती (गुजरात)

(1) नर्मदा की सहायक नदी। मधुमती नर्मदा संगम पर माटासाजा नामक प्राचीन तीर्थ है जहां संगमेश्वर का मंदिर है।

(2) बंगाल की एक नदी जो गंगा ही की एक सहायक शाखा है। हुगली और मधुमती नदियों के बीच के प्रदेश को प्राचीन काल में वंग या वंगा कहते थे। वर्तमान बंगाल, वंग का ही रूपांतर है।

मधुरांतक=मदुरांतक

मधुरा

(1)=मथुरा

(2)=मदुरा

मधुवती (सौराष्ट्र, गुजरात)

सोरठ प्रांत में बहने वाली एक नदी। जूनागढ़ मधुवती और भद्रावती नदियों से सिंचित क्षेत्र में बसा हुआ है। मधुवती गिरनार (प्राचीन रैवतक) पर्वत से निकल कर पश्चिम समुद्र (अरब सागर) में गिरती है।

मधुवन

(1) वाल्मीकि रामायण, सुंदर 62, 31 के अनुसार वानरराज सुग्रीव का प्रिय वन—'इष्टं मधुवनं ह्येतत् सुग्रीवस्य महात्मनः, पितृ पैतामहं दिव्यं देवरपि दुरासदम्'। हनुमान तथा उनके साथियों ने सीता का पता लगने की खुशी में इस वन के वृक्षों पर खूब उछल कूद मचा कर उन्हें नष्ट भ्रष्ट कर दिया था। इस बात से सुग्रीव को सूचना मिल गई कि सीता का पता लग गया है। एक किंवदंती के अनुसार मैसूर राज्य में स्थित रामगिरि सुग्रीव का मधुवन है। यह स्थान बंगलौर मैसूर रेलपथ के मद्दूर स्टेशन से 12 मील दूर है।

(2) मधुपुरी या मथुरा के पास एक वन जिसका स्वामी मधुदैत्य था। मधु के पुत्र लवणासुर का शत्रुघ्न ने विजित किया था। इस वन का उल्लेख वाल्मीकि रामायण उत्तर० 67,13 में इस प्रकार है—'तमुवाच सहस्राक्षो लवणो नाम राक्षसः मधुपुत्रो मधुवनं न तत्राज्ञां कुरुतेऽनघ'। विष्णुपुराण 1,12,2-3 में भी यमुना तटवर्ती इस वन का वर्णन है—'मधुसंज्ञं महापुण्यं जगाम यमुनातटम्,

पुनश्च मधुमज्ञेन दैत्यानाधिष्ठित यत, तता मधुवन नाम्ना ख्यातमत्र महीतल'। विष्णु० 1,12,4 से सूचित होता है कि शत्रुघ्न ने मधुवन क स्थान पर नई नगरी बसाई थी—'हत्वा च लवण रक्षो मधुपुत्र महाबलम्, शत्रुघ्नो मधुरा नाम पुरीयत्र चकार वै'। हरिवंश० पुराण 1,54 55 क अनुसार इस वन का शत्रुघ्न न कटवा दिया था—'छित्वा वन तत् सौमित्रि '। पौराणिक कथा के अनुसार ध्रुव ने इसी वन म तपस्या की थी। प्राचीन सस्कृत साहित्य म मधुवन को श्रीकृष्ण की अनक चचल बाल लीलाओं की क्रीडास्थली बताया गया है। यह गोकुल या वृदावन क निकट कोई वन था। आजकल मथुरा स 3½ मील दूर महोलीमधुवन नामक एक ग्राम है। पारपरिक अनुश्रुति मे मधुदैत्य की मथुरा और उसका मधुवन इसी स्थान पर थ। यहा लवणासुर की गुफा नामक एक स्थान है जिसे मधु क पुत्र लवणासुर का निवासस्थान माना जाता है। (द० मथुरा)

मधुविला=समगा

'एषा मधुविला राजन समगा सप्रकाशत एतत कर्दमिल नाम भरतस्याभिषवनम्। अलक्ष्म्या किल सयुक्तो वत्र हत्वा शचीपति, आप्लुत सव पापम्य समगाया व्यमुच्यत' महा०, वन० 135,1 2। तीर्थयात्रा के इस प्रसग म इस नदी का विवरण के निकट तथा कनखल (हरद्वार) क उत्तर की ओर बताया गया है (वन० 135 3,135 5)। इसे इस वणन म समगा नाम से भी अभिहित किया गया है। यह गगा की कोई सहायक या शाखानदी जान पडती है। मधुविला के सिंचित प्रदेश का उपयुक्त उद्धरण म कर्दमिल नाम कहा गया है।

मधुश्रवा

(1) वामन पुराण 39,6 8 के अनुसार मधुश्रवा कुरुक्षेत्र की सात नदियो मे स है—'मधुस्रवाऽम्लुनदी कौशिकी पापनाशिनी'। [द० आपगा (2)]

(2) (बिहार) गया के निकट बहनेवाली फल्गु की सहायक नदी।

मधूपघ्न=मधूपघ्ना

रामायणकाल म लवणासुर की राजधानी मधुरा या उसक सन्निकट स्थित उपनगर। इसका नाम लवणासुर क पिता मधुदैत्य के नाम पर प्रसिद्ध था। मधुरा मधुपुरी या मधुवन भी मधु के ही नाम पर प्रसिद्ध थ। कालिदास न रघुवश 15,15 म मधूपघ्न का उल्लेख इस प्रकार किया है—'स च प्राप मधूपघ्न कुम्भीनस्याश्च कुक्षिज वनात्करमिवादाय सत्वराशिमुपस्थित अर्थात मधूपघ्न म जस ही शत्रुघ्न पहुचे, कुम्भीनसी का पुत्र (लवणासुर) वन स, जीवो की राशि के साथ मानों कर दने क लिए वहा आया। मल्लिनाथ न इस नगर को अपनी

टीका म 'लवणपुर' लिखा है। रघुवंश 15,28 से विदित होता है कि लवणासुर का वध करने के उपरांत, शत्रुघ्न ने शूरसेन प्रदेश की पुरानी राजधानी मधुरा के स्थान म नई नगरी बसाई जो यमुना के तट पर थी—'उपकूलं च कालिंद्या पुरीं पौरुषभूषण, निममेनिर्ममोऽर्थेषु मथुरां मधुराकृति' (दे० विष्णु पुराण-4,5,107— 'नत्वैनामथ्यमिनलवणासुरमा मधुपुत्रो लवणोनाम राक्षसोऽभिहतो मथुरा निवेशिता)। मधुघ्न या लवणपुर, तत्कालीन मधुरा या मथुरा से शायद भिन्न था फिर भी इसकी स्थिति मथुरा के सन्निकट ही थी क्योंकि शत्रुघ्न ने पुरानी नगरी मथुरा के स्थान पर ही नई नगरी बसाई थी। जैन विद्वान हेमचंद्राचार्य के अभिधान चिंतामणि नामक ग्रंथ (पृ० 390) में भी मथुरा को मधूघ्ना कहा गया है। (दे० मथुरा, मधुवन)

मध्यदेश

विष्णुपुराण 2, 3, 15 के अनुसार कुरुपांचाल का प्रदेश मध्यदेश नाम से अभिहित किया जाता था—'तास्विमे कुरुपांचाला मध्यदेशादयोजना, पूर्व देशादिकाश्चैव कामरूपनिवासिन'—स्थूल रूप से इसमें उत्तरप्रदेश का अधिकांश भाग, पूर्वी पंजाब तथा दिल्ली का परिवर्ती क्षेत्र सम्मिलित था।

मध्यमिका

चित्तौड़ (राजस्थान) से 8 मील उत्तर की ओर स्थित नगरी नामक प्राचीन बस्ती को प्राचीन साहित्य की मध्यमिका माना जाता है। महाभारत, सभा० 32 8 म इस नगरी, जिसम वाटधान द्विजो का निवास था, के नकुल द्वारा विजित किए जाने का उल्लेख है—'तथा माध्यमिकांश्चैव वाटधानान् द्विजानथ पुनश्च परिवर्त्याथ पुष्करारण्यवासिन'। पतंजलि के महाभाष्य 'अरुणद्यवनः साकेतम्, अरुणद्यवनः मध्यमिकाम्' से सूचित होता है कि पतंजलि के समय म किसी यवन या ग्रीक आक्रमणकारी ने साकेत (अयोध्या का उपनगर) और मध्यमिका का घेरा डाला था। श्री डी० आर० भंडारकर के मत म पतंजलि पुष्यमित्र शुंग के काल मे हुए थ (दूसरी शती ई०पू०)। इस यवन आक्राता को कुछ विद्वानो ने मीनेंडर या बौद्ध साहित्य का मिलिंद (मिलिंदपण्हो ग्रंथ मे उल्लिखित) माना है। गार्गी संहिता म भी संभवत इस आक्रमण का उल्लेख है। नगरी का माध्यमिका से अभिज्ञान इस प्राचीन स्थान से मिले हुए द्वितीय शती ई० पू० के कुछ सिक्कों के साक्ष्य पर निर्भर है। इन पर 'मझमिकाय शिबिजनपदस' लेख उत्कीर्ण है। मध्यमिका के शिवि शायद उशीनर (जिला सहारनपुर, उ०प्र०) के प्राचीन शिविवंश की शाखा माने जा सकते है जो अपने मूल स्थान से आकर राजस्थान म बस गई

होगी। नगरी के खंडहरों में एक प्राचीन स्तूप और गुप्तकालीन तोरण के चिह्न मिले हैं। चित्तौड़ का निर्माण बहुत कुछ नगरी के खंडहरों से प्राप्त सामग्री द्वारा किया गया था। (दे० नगरी, चित्तौड़)

मनथानी (जिला करीमनगर, आं० प्र०)=महादेवपुर

किंवदंती के अनुसार यह गौतम ऋषि की तपोभूमि थी। यहां के प्राचीन मंदिरों में गिलवरगुडी का मंदिर उल्लेखनीय है। इसका शिखर दक्षिण भारतीय मंदिरों के शिखर के अनुरूप है। यहां से प्राप्त एक शिलालेख में जो प्राचीन नागरी लिपि में है वारंगल-नरेश गणपति का उल्लेख है।

मनहाली (प० बंगाल)

बंगाल के पाल वंश के नरेश मदनपाल का एक ताम्रदानपट्ट इस स्थान से प्राप्त हुआ है।

मनाली (हिमाचलप्रदेश)

स्थानीय किंवदंती में इस स्थान का नाम मनु से संबंधित कहा जाता है। मनुरिखी या मनुऋषि का प्राचीन मंदिर गांव के बीच में है। यह काष्ठ-निर्मित है। महाभारत में वर्णित हिडंबा दानवी का स्थान भी मनाली में माना जाता है। इसके नाम से प्रसिद्ध मंदिर मनाली से कुछ दूर एक विजनवन में बना हुआ है। यह मंदिर भी लकड़ी का बना है और सात मंजिला है। (हिडंबा से संबद्ध अन्य किंवदंती के लिए दे० बिजनौर)

मनिकरण (हिमाचल प्रदेश)

कुल्लू के पास प्राचीन तीर्थ है। यहां मंडी कुल्लू मार्ग से होकर पहुंचा जा सकता है।

मनिकियाला (दे० मणिकियाला)

मनियर (ज़िला बलिया उ०प्र०)

यह स्थान सरयूतट पर है। कहा जाता है कि मधस ऋषि जिनका उल्लेख दुर्गासप्तशती में है, का आश्रम मनियर में स्थित था। यहां का चतुर्मुखी देवी दुर्गा का मंदिर शायद इन से संबंधित कथा का स्मारक है।

मनियागढ़ (म०प्र०)

यह दुर्ग भूतपूर्व छतरपुर रियासत में खजुराहो से बारह मील दूर एक पहाड़ी पर स्थित है। इसकी प्राचीर प्रायः सात मील लंबी है। आल्हा काव्य में इस दुर्ग का अनेक बार उल्लेख है। यह चंदेलों के आठ प्रसिद्ध किलों में से था।

मनोखलपण दे० नौप्रभान

मनोजवा

विष्णुपुराण 2,4,55 के अनुसार क्रौंच द्वीप की एक नदी— 'गौरी कुमुद्वती चैव सन्ध्या रात्रिर्मनोजवा, क्षातिश्च पुण्डरीका च सप्तैता वर्षनिम्नगा'

मन्नानूर (ज़िला महबूबनगर, आ० प्र०)

इस स्थान से प्राचीन मन्दिरों के अवशेष प्राप्त हुए हैं जो संभवतः वारंगल-नरेशों के समय के हैं।

मन्ननपुरम दे० महाबलीपुरम

मयराष्ट्र दे० मेरठ

मयूर

इस नगर का वर्णन चीनी यात्री युवानच्वांग के यात्रावृत्त में है। इसका अभिज्ञान वाटर्स (पृ० 328) ने हरद्वार से किया है। संभव है हरद्वार के प्राचीन नाम मायापुर का ही चीनी यात्री ने मयूर रूप में उल्लेख किया है। युवानच्वांग के वर्णन के अनुसार इस स्थान की जनसंख्या बड़ी विशाल थी और यहां के पवित्र जल में स्नान करने के लिए दूर दूर से यात्री आते थे। अनेक पुण्यशालाएं जहां निधनों को दान दिया जाता था, यहां स्थित थीं। इन्हें धर्मप्राण नरेशों ने स्थापित किया था। गरीबों को निःशुल्क स्वादु भोजन तथा रोगियों को निःशुल्क औषधि भी यहां मिलती थी।

मयूरभंज (ज़िला सिंहभूमि, बिहार)

इस स्थान से 12वीं शती ई० के ताम्रपट्टलेख मिले हैं जिनसे यहां तत्कालीन राजवंशों के इतिहास पर प्रकाश पड़ता है।

मयूरध्वजपुरी दे० मोरवी

मयूराक्षी

वैद्यनाथ (बिहार) से छः मील दूर त्रिकूट पर्वत से निकलने वाली नदी।

मयूरी

यह मलाबार तट पर स्थित नदी है।

मरकरा

भूतपूर्व कुर्ग की राजधानी। यहां के दुर्ग का निर्माण कुर्ग के प्राचीन राजाओं ने किया था। दुर्ग के भीतर राजप्रासाद आदि भी स्थित हैं। इसके सन्निकट ओंकारेश्वर का विशाल मंदिर है। इसकी वास्तुकला में हिंदू तथा स्थानीय मुसलिम कला के तत्वों का अपूर्व संगम दिखाई देता है। मरकरा का प्राचीन नाम मुडीकेडी (स्वच्छ ग्राम) है।

मरकुला (जिला पंगी, हिमाचल प्रदेश)

भारत भोट वास्तुशैली मे निर्मित प्राचीन मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। मंदिर काष्ठ निर्मित है।

मरफा (जिला बांदा, उ० प्र०)

चंदेल शासनकाल में बने हुए दुर्ग के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

मरिचपत्तन दे० मुचिपत्तन

मरिचवट्टी (लंका)

महावंश 26,8 में उल्लिखित है। यह अनुराधपुर के दक्षिण पश्चिम में स्थित वर्तमान मिरिसवट्टी है। यहां स्थित विहार को सिंहल नरेश ग्रामणी ने बौद्धसंघ को दान में दे दिया था। विहार का नामकरण इस राजा के, संघ को बिना भोजन दिए मिर्चे खा लेने पर हुआ था (दे० महावंश, 26,16)

मरिचीपत्तन=मुचिपत्तन

मरीचक

विष्णुपुराण 2,4,60 के अनुसार शाकद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा भव्य के पुत्र के नाम पर है।

मरीची

ऋग्वेद में वर्णित पर्वत जो श्री हरिराम धस्माना के मत में गढ़वाल में स्थित है। (दे० ऋग्वेदिक भूगोल)

मरु

मारवाड़ (राजस्थान) का प्राचीन नाम जिसका अर्थ मरुस्थल या रेगिस्तान है। मरु का उल्लेख रुद्रदामन के जूनागढ़ अभिलेख में है— 'श्वभ्र मरुकच्छ सिंधु सौवीर'—(दे० गिरनार)

मरुत

'मारुता धनुकाश्चैव तगणा परतगणा वाह्लिकारित्तराश्चैव चोला पांड्यास्च भारत'—महा० भीष्म० 50,51। इस उद्धरण में भारत के सीमान्त पर बसने वाली जातियों के नाम उल्लिखित हैं। प्रसंग से जान पड़ता है कि मरुत् जनपद जहां के निवासियों को यहां मारुता कहा गया है, भारत की उत्तर-पश्चिमी सीमा के परे बसने वाली किसी जाति का निवास स्थान होगा। तगण और परतगण मरुत् के पार्श्ववर्ती प्रदेश जान पड़ते है। सभा० 52 3 के उल्लेख में तगण परतगण प्रदेश को शलोदा नदी (=खोतन) की उपत्यका में स्थित बताया गया है।

मरुदवृधा

पंजाब की एक नदी जिसका नामोल्लेख ऋग्वेद 10,75,5 6 (नदीसूक्त) में है—'इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया'। श्रीमद्भागवत 5,19 18 में भी मरुदवृधा का वितस्ता (झेलम) तथा, असिक्नी (चिनाब) के साथ उल्लेख है—'चंद्रभागा मरुदवृधा वितस्ता असिक्नी'। रथाजिन (वैदिक इंडिया, पृ० 451) इसे झेलम चिनाब की संयुक्त धारा का नाम मानते हैं।

मरुभू=मरुभूमि

राजस्थान का मरुस्थल या मारवाड। महाभारत सभा० 32,5 में मरुभूमि के नकुल द्वारा जीते जाने का वर्णन है—'ततः युद्धं महच्चासीच्छूरैर्मत्तमयूरकैः मरुभूमिं च कार्त्स्न्येन तथैव बहुधान्यकम्'। विष्णुपुराण, 4,24,68 से सूचित होता है कि गुप्तकाल से कुछ पूर्व मरुभू (=मरुभूमि) पर आभीर आदि जातियों का प्रभुत्व था—'नर्मदा मरुभूमिविषयाश्च आभीरशूद्राद्या भोक्ष्यन्ति'।

मरोल (महाराष्ट्र)

जोगेश्वरी गुफा के निकट मरोल नाम की 20 गुफाएं हैं जो बौद्धकालीन जान पड़ती हैं। अधिकांश गुहामंदिर नष्ट हो गए हैं। इनकी वास्तु एवं मूर्ति कला जोगेश्वरी गुफा मंदिर की कला के समान ही उच्चकोटि की थी। गुफाएं भूमितल तथा पर्वत शिखर के मध्य में स्थित हैं। पहाड़ी के इस स्थान का पत्थर भुरभुरा तथा क्षीण होने के कारण ये गुफाएं काल के प्रवाह में नष्ट भ्रष्ट हो गई हैं।

मर्कटह्रद दे० वैशाली

मर्जाद (गुजरात)

पाटन के निकट वर्तमान मजादर। इस प्राचीन जैन तीर्थ का उल्लेख तीर्थ-माला चैत्यवंदन में इस प्रकार है—'वंदे नंदनमंगलावटपुरे मर्जादिमुद्रापले'।

मद्रकुक्षि (बिहार)

पाली ग्रंथों के अनुसार राजगृह (वर्तमान राजगीर) के पास मद्रकुक्षि वह स्थान था जहां मगधराज बिंबिसार की महारानी कोशला ने यहां जाकर कि उसके गर्भ में पितृघातक पुत्र (अजातशत्रु) है उसे गिरा देने के लिए अपने उदर (कुक्षि) का मर्दन किया था। इस स्थान के उल्लेख से सूचित होता है कि यह (मद्रकुक्षि) गृध्रकूट पर्वत की तलहटी में स्थित थी। [illegible] में यह कथा भी वर्णित है कि देवदत्त द्वारा एक पत्थर [illegible] को पहले मद्रकुक्षि में लाया गया था और फिर [illegible]

उपचारार्थ ले जाए गए थे। यह विहार गृध्रकूट पर्वत के निकट ही था।

मलयूर (जिला करीमनगर, आं० प्र०)

मलयूर की पहाड़ी पर एक दुर्ग है जिस पर सहस्र वर्ष प्राचीन कहा जाता है। दुर्ग के सन्निकट संभवतः जैनों की प्राचीन समाधियां बनी हैं।

मलखड़ (जिला गुलबर्गा, मैसूर)

भीमा नदी की सहायक कगना के दक्षिण तट पर छोटा सा ग्राम है जो किसी समय दक्षिण भारत के प्रसिद्ध राष्ट्रकूट राजवंश की समृद्धिशाली राजधानी मान्यखेट के रूप में प्रख्यात था। राष्ट्रकूटों का राज्य यहां 8वीं शती से 10वीं शती ई० तक रहा था। ग्राम के आसपास दुर्ग तथा भवनों के अतिरिक्त मंदिरों तथा मूर्तियों के भी विस्तृत अवशेष मिले हैं जिससे ज्ञात होता है कि राष्ट्रकूट-काल में इस नगर का कितना विस्तार था। 962 ई० में परमार नरेश सियक ने नगर को लूटा और नष्ट भ्रष्ट कर दिया। तत्पश्चात 14वीं शती तक मलखेड़ अंधकार-युग में पड़ा रहा। इस शती में यह नगर बहमनी राज्य का एक अंग बन गया। बहमनीकाल के प्रसिद्ध हिंदू दार्शनिक जयतीर्थ की समाधि मलखेड़ में आज भी विद्यमान है। जयतीर्थ द्वैतवादी माध्वसंप्रदाय के अनुयायी थे। उनके लिखे हुए ग्रंथ 'न्याय' और 'सुधा' हैं। 17वीं शती के अंत में औरंगजेब ने इस स्थान को मुगल साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। प्रसिद्ध राष्ट्रकूट नरेश अमोघवर्ष के शासनकाल में मलखेड़ जैन धर्म, साहित्य तथा संस्कृति का महत्वपूर्ण केंद्र था। अमोघवर्ष का गुरु और आदि पुराण तथा पार्श्वाभ्युदय काव्य इत्यादि का रचयिता जिनसेन यहीं का निवासी था। इनके अतिरिक्त जैन गणितज्ञ महेंद्र, गुणभद्र, पुष्पदंत, और कन्नड लेखक पोन्ना भी यहीं के निवासी थे। अमोघवर्ष स्वयं भी वृद्धावस्था में राजपाट त्याग कर जैन श्रवण बन गया था। इंद्रराज चतुर्थ ने भी जैनधर्म के अनुसार संन्यास की दीक्षा ले ली थी। मलखेड़ में, इस काल में, संस्कृत और कन्नड भाषाओं की बहुत उन्नति हुई। जिनसेन के ग्रंथों के अतिरिक्त, राष्ट्रकूट नरेशों के समय में उनके द्वारा या उनके प्रोत्साहन से अमोघवृत्ति (संस्कृत व्याकरण टीका) गणितसार (महावीर द्वारा रचित) कविराज-मार्ग (कन्नड काव्यशास्त्र पर अमोघवर्ष की रचना) और रत्नमालिका (अमोघवर्ष की कृति) आदि ग्रंथों की रचना भी की गई। गुणभद्र ने आदिपुराण का उत्तरभाग उत्तरपुराण राष्ट्रकूट नरेश कृष्ण द्वितीय के शासनकाल में लिखा। इसी समय का सबसे प्रसिद्ध लेखक पुष्पदंत था जिसके लिखे हुए महापुराण, नयकुमारचरिउ (अपभ्रंश ग्रंथ) आज भी विद्यमान हैं। कृष्ण द्वितीय के शासनकाल में (939 ई०) इंद्रनंदी ने ज्वालमालिनी कल्प

और सोमदेव ने 959 ई० मे यशस्तिलक चपूकाव्य लिखे। उपर्युक्त सभी कृतियो का सबध मण्यखेट से था जिसके कारण इस नगर को मध्यकाल म दक्षिण भारत के सभी विद्या केंद्रो से अधिक ख्याति थी। राष्ट्रकूट काल मे मल्खेड अपने भव्य प्रासादो, विस्तृत बाजारो, प्रमोदवनो और उद्याना के लिए प्रसिद्ध था। वतमान समय मे मलखेड, सिराम और नगई नामक ग्राम प्राचीन मण्यखेट के स्थान पर बसे हुए है। दिगबर जैन नगई को अब भी तीथ मानते ह। यहा 16 नक्काशीदार स्तभो का एक भव्य मडप है जो किसी प्राचीन मदिर का प्रवश द्वार था। इस मदिर का आधार ताराकार ह जा चालुक्य वास्तु कला का लक्षण माना जाता है। इसमे काले पत्थर के दो अभिलिखित पट्ट जडे हैं। पास ही हनुमान मदिर है जिसका सुदर दीपस्तभ गजराकार बना है। सिराम म पचलिंग मदिर है जिसका दीपदानस्तभ एक ही पत्थर मे से तराशा हुआ है। यह 11वी 12 वी शती की रचना है। इसके अतिरिक्त 11वी से 13वी शती के कुछ जन मदिर तथा मूतिया भी यहा हैं।

मलद

(1)=मलय

(2) वाल्मीकि० रामायण, बाल० 24,32 म उल्लिखित देश—'मलदाश्च करूपाश्च ताटका दुष्टचारिणी, सेय पथानमावत्य वसत्यत्यधयाजन। यह जिला शाहाबाद (बिहार) मे स्थित बक्सर का प्रदेश है।

मलपर्वा (महाराष्ट्र)

यह नदी जिला बीजापुर म बादामी या प्राचीन वातापि से प्राय 5 मील दूर बहती है। यहा इसके तट पर अनेक पुराने मदिर बन हैं।

मलप्रभा

महाराष्ट्र को छोटी सी नदी है जो प्राचीन तीथ रेणुकाद्रि से चार मील दूर बहती है। यह स्थान सौंदत्ती कहलाता है और पूना बगलौर रेलपथ पर धारवाड से 25 मील दूर है।

मलय

(1) सप्त कुलपवतो म स एक है। इसका अभिज्ञान पूर्वी घाट के दक्षिणी भाग की श्रणियो स किया गया है। यह पूर्वी और पश्चिमी घाट की पवत-मालाओ क बीच की शृखला क रूप म स्थित है। नीलगिरि भी पहाडिया इसी पवत का अग है। सस्कृत साहित्य मे मलयपवत पर चदन वृक्षो की प्रचुरता मानी गई है तथा मलयानिल या मलयपवत की वायु का चदन स सुगधित माना गया है। मलय का दर्दुर के साथ उल्लख वाल्मीकि रामायण अयो० 91,24 म

है 'मलय दर्दुर चैव तत स्वेदनुदानिल, उपस्पृश्य ववौ युक्त्वा सुप्रियात्मा सुखशिव'। कालिदास ने रघु की दिग्विजय यात्रा के प्रसग में मलयाद्रि की उपत्यकाओं मे मारीच या कालीमिर्च के वनों और यहां विहार करने वाले हारीत या हरितशुकों का मनोहर उल्लेख किया है—'बलरध्युषितास्तस्य विजिगीषोगताध्वन, मारीचोद्भ्रांतहारीता मलयाद्रेरुपत्यका' रघु० 4,46। भवभूति ने उत्तर रामचरित मे मलयपर्वत को कावेरी नदी से परिवृत बताया है। वाल्मीकि रामायण 3,31 में मलय पर्वत को एला और चदन के वनों से ढका हुआ कहा है (चदन का पर्याय ही मलय हो गया है)। हर्ष के नागानद और रत्नावली नाटकों में भी मलय पर्वत का उल्लेख है। मलय को कालिदास ने दक्षिण समुद्र (रत्नाकर) तक विस्तृत माना है—'वैदेहि पश्यामलयाद्विभक्त मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम' रघु० 13,2। श्रीमद्भागवत 5,19,16 में पर्वतों की सूची में मलय को पहला स्थान दिया गया है—'मलयो मगलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूटऋषभ '। हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी मलयगिरि तथा मलयानिल का वर्णन अनेक स्थानों पर है—दे० 'सरस बसत समय भल पाइल दछिन (मलय) पवन बहुधीरे'— विद्यापति, 'मलयागिरि की भीलनी चदन देत जराय' वृद। मलय के मलयागिरि, मलयाचल, मलयाद्रि इत्यादि पर्याय प्रसिद्ध है।

(2) बिहार में स्थित मलद नामक जनपद जो मत्स्य (2) या मल्ल देश के निकट था। मलय मलद का ही पाठातर है—'ततो मत्स्यान महातेजा मल्दाश्च महाबलान, अनघानभयाश्चैव पशुभूमि च सर्वश ' महा० 2,30,8

(3) महावंश 7,68 में उल्लिखित लंका का मध्यवर्ती पर्वतीय प्रदेश।

मलयस्थली

मलयपर्वत का प्रदेश जो प्राचीनकाल में पाड्यदेश के अंतर्गत था— 'तमालपत्रास्तरणासुरतु प्रसीद शश्व मलयस्थलीपु'—रघुवंश 6,64। (दे० पाड्य)। इसकी स्थिति वर्तमान मैसूर तथा केरल के पहाडी भागों में समझनी चाहिए।

मलयाचल दे० मलय (1)

मलयाद्रि दे० मलय (1)

मलयु

सुमात्रा (इंडोनीसिया) में स्थित एक प्राचीन हिंदू राज्य जो संभवत ईस्वी सन की प्रारंभिक शतियों में स्थापित हुआ था। इसका आधुनिक नाम जबी है। 7वीं शती ई० में यह छोटी सी रियासत जावा के श्रीविजय नामक साम्राज्य में सम्मिलित हो गई थी। चीनी यात्री इत्सिग मलयु होकर ही भारत पहुंचा

था। उसने मलयु को श्रीभोज का एक भाग बताया है। इत्सिंग भारत में 672 ई० में आया था।

मलवई (म० प्र०)

राजपुर के निकट इस स्थान पर पूर्व मध्यकालीन मंदिरों के अवशेष पाए गए हैं।

मलिया (ज़िला जूनागढ़, गुजरात)

इस स्थान से वलभिनरेश महाराज धरसेन द्वितीय का एक ताम्रदानपट्ट प्राप्त हुआ है जिसकी तिथि 252 गुप्त संवत्—571-572 ई० है। इसमें उल्लेख है कि धरसेन द्वारा जतरता, डोभिग्राम और वज्रग्राम का कुछ भाग ब्राह्मणों को पंचयज्ञ संपन्न करने के लिए दिया गया था। इस अभिलेख में कई तत्कालीन अधिकारियों के पदों के नाम हैं—आयुक्तक, विनियुक्तक, द्रंगिक, महत्तर, ध्रुवाधिकरण, दंडपाशिक, राजस्थानीय, कुमारामात्य आदि।

मलिहाबाद (ज़िला रायचूर, मैसूर)

इस स्थान पर एक हिंदूकालीन दुर्ग अवस्थित है। अब यह खंडहर हो गया है। दुर्ग के अंदर एक द्वार के सामने लाल पत्थर में तराशे हुए दो हाथियों की मूर्तियां रखी हैं। किले में काकतीय राजाओं का एक अभिलेख कन्नड़-तेलगू मिश्र-भाषा में उत्कीर्ण है।

मल्ल

(1)—मल्लराष्ट्र। मल्लदेश का सर्वप्रथम निश्चित उल्लेख शायद वाल्मीकि रामायण उत्तर० 102 में इस प्रकार है 'चंद्रकेतोश्च मल्लस्य मल्लभूम्यां निवेशिता, चंद्रकान्तेति विख्याता दिव्या स्वर्गपुरी यथा'। अर्थात रामचंद्रजी ने लक्ष्मण पुत्र चंद्रकेतु के लिए मल्लदेश की भूमि में चंद्रकांता नामक पुरी बसाई जो स्वर्ग के समान दिव्य थी। महाभारत में मल्ल देश के विषय में कई उल्लेख हैं—'मल्ला सुदेष्णा प्रह्लादा माहिका शशिकास्तथा' भीष्म० 9,46, "अधिराज्यकुशाद्याश्च मल्लराष्ट्रं च केवलम्'—भीष्म० 9,44, 'ततो गोपालकच्छं च सोत्तरानपि कोसलान मल्लानामधिपं चैव पार्थिवं चाजयत प्रभुः' सभा० 30,3। बौद्ध ग्रंथ अंगुत्तरनिकाय में मल्लजनपद का उत्तरी भारत के सोलह जनपदों में उल्लेख है। बौद्ध साहित्य में मल्लदेश की दो राजधानियों का वर्णन है—कुशावती (कुशीनगर) और पावा (दे० कुसजातक, महापरिनिब्बान सुत्त)। महापरिनिब्बानसुत्त के वर्णन के अनुसार गौतम बुद्ध के समय में कुशीनारा या कुशीनगर के निकट मल्लों का शालवन हिरण्यवती (गंडक) नदी के तट पर स्थित था। मनुस्मृति में मल्लों को व्रात्यक्षत्रियों में परिगणित किया गया है

क्योंकि ये बौद्ध धर्म के दृढ़ अनुयायी थे। कुसजातक में ओक्काक (=इक्ष्वाकु) नामक मल्लनरेश का उल्लेख है। इक्ष्वाकुवंशीय नरेशों का परंपरागत राज्य अयोध्या या कोसलप्रदेश में था। रायचौधरी का मत है (दे० पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एंशेंट इंडिया, पृ० 107 108) कि मल्लराष्ट्र में बिंबिसार के पूर्व गणराज्य स्थापित हो गया था। इससे पहले यहां के अनेक राजाओं के नाम मिलते हैं। बौद्ध साहित्य में मल्लजनपद के भोगनगर, अनुप्रिय तथा उरुवेलकप्प नामक नगरों के नाम मिलते हैं। बौद्ध तथा जैन साहित्य में मल्लों और लिच्छवियों की प्रतिद्वंद्विता के अनेक उल्लेख हैं—(दे० बुद्धमाल जातक, कल्पसूत्र आदि)। बुद्ध के कुशीनगर में निर्वाण प्राप्त करने के उपरांत, उनके अस्थि अवशेषों का एक भाग मल्लों को मिला था जिसके संस्मरणार्थ उन्होंने कुशीनगर में एक स्तूप या चैत्य का निर्माण किया था। इसके खंडहर कसिया में मिले हैं। इस स्थान से प्राप्त एक ताम्रपट्टलेख से यह तथ्य प्रमाणित भी होता है—'(परिनि) र्वाण च (त्य) ताम्रपट्ट इति'। मगध के राजनैतिक उत्कर्ष के समय मल्ल जनपद इसी साम्राज्य की विस्तरणशील सत्ता के सामने न टिक सका और चौथी शती ई० पू० में चंद्रगुप्त मौर्य के महान साम्राज्य में विलीन हो गया। जैनग्रंथ भगवती सूत्र में मोलि या मालि नाम से मल्ल जनपद का उल्लेख है। बौद्ध काल में मल्लराष्ट्र की स्थिति उत्तरप्रदेश के पूर्वी और बिहार के पश्चिमी भाग के अंतर्गत समझनी चाहिए।

(2) दे० मत्स्य (2)

(3) मल्लराष्ट्र की स्थिति श्री चि० वि० वैद्य ने महाराष्ट्र में मानी है। यह मालवा का रूपांतर हो सकता है।

मल्लक

(1)=मालव। यह कौटिल्य के अर्थशास्त्र में उल्लिखित है।

(2)=मल्ल (1)

मल्लिकार्जुन (जिला कृष्णा, आ० प्र०)

इस स्थान (=श्रीशैल) पर शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक स्थित है। पौराणिक किंवदंती में इस स्थान को दक्षिण में काशी के समान ही पवित्र माना जाता है 'श्री शैल दृष्ट्वा पुनर्ज म न विद्यते'। (दे० श्रीशैल)

मवाना (जिला मेरठ, उ० प्र०)

कहा जाता है कि इस स्थान का प्राचीन नाम मुहाना (मुख्य द्वार) था क्योंकि महाभारत में कौरवों की महानगरी हस्तिनापुर, जो यहां से प्रायः सात मील दूर है—का मुख्य द्वार इसी स्थान पर था।

मवाली (जिला उदयपुर, राजस्थान)

1537 ई० म इस स्थान पर मेवाड-नरेश उदयसिंह ने बनवीर का वध किया था। बनवीर ने मेवाड की गद्दी पर अवैध अधिकार कर लिया था।

मसागा (पश्चिमी पाकि०)

सिंध और पजोरा नदियो के बीच के प्रदेश म बसा हुआ एक सुरक्षित नगर जिसे विजित करने म यवन आक्राता अलक्षेंद्र (सिकन्दर) का अत्यधिक परिश्रम करना पडा था (327 ई० पू०)। यहा उस समय अस्सक (अश्वक) गणराज्य की राजधानी थी। अश्वको न यवन राज का सामना करन क लिए बीस सहस्र अश्वारोही सना (जिसके कारण व अश्वक कहलात थे, दे० कैम्ब्रिज हिस्ट्री आव इडिया, जिल्द 1) तीस सहस्र पैदल सिपाही और तीस हाथी मार्च पर खडे किए। नगर चारो ओर स पवत, नदी तथा कृत्रिम खाइया और परकोट स घिरा होन क कारण पूणरूप से सुरक्षित था। अलक्षेद्र, नगर की किलाबदी का निरीक्षण करते समय अश्वको के तीर स घायल हो गया। इसन घबरा कर उसन नगर क अदर के सात सहस्र सैनिको का सुरक्षा का वचन दकर उन पर धावा स आक्रमण कर दिया और इस प्रकार नगर पर अधिकार कर लिया। फिर भी यह अधिकार कुछ ही समय तक रहा और अलक्षेद्र क भारत से विदा होत ही अन्य प्रदशो की भाति मसागा भी स्वतत्र हो गया। मसागा की स्थिति का ठीक ठीक अभिज्ञान नही हो सका है किंतु यह निश्चित है कि यह नगर बजौर की घाटी मे कहीं था।

महती=मही (2)

महत्नु

ऋग्वेद 10,75 मे उल्लिखित नदी जिसका अभिज्ञान अफगानिस्तान की अर्गेसन नदी से किया गया है। यह गोमती या गोमल नदी म मिलती है।

महदगिरि

पुराणो म सभवत वतमान सभल (जिला मुरादाबाद, उ० प्र०) का नाम। कहा जाता है कि भविष्य का कल्कि अवतार सभल म ही होगा।

महबूबनगर (आ० प्र०)

प्राचीन पानगल। यह नगर चोलवाडी के अतगत है। यहा का प्राचीन किला एतिहासिक दृष्टि स महत्वपूण समझा जाता है। इसी किल क बाहर 147 ई० मे फिरोजशाह बहमनी को वारगल तथा विजयनगर के राजाओ की सयुक्त सेनाओ न हराया था। 1513 ई० म सुलतान कुली कुतुबशाह ने विजयनगर नरश को यहीं पराम्त किया। यह किला $1\frac{1}{2}$ मील लबा और एक

मील चौड़ा है। इसकी सात दीवारें हैं। बीच में एक दुर्ग है और सात ही मीनारें हैं। एक तेलगु अभिलेख से सूचित होता है कि 1604 ई० में किले का रक्षपाल खैरात खां था और बादशाह की माता इसी दुर्ग में रहती थी। द्वितीय निजाम, 1786 से 1789 तक इस किले के अंदर एक भवन में रहा था।

महरिया (ज़िला मिर्ज़ापुर, उ० प्र०)

यहां सोन नदी की घाटी में स्थित कई गुफाओं में प्रागैतिहासिक चित्रकारी के नमूने प्राप्त हुए हैं। एक चित्र में नृत्य करते हुए पुरुषों और वन्यमृगों को अंकित किया गया है। यह आखेट का चित्र जान पड़ता है।

महरौली

दिल्ली से 13 मील दूर छोटा सा कस्बा है। पृथ्वीराज चौहान (12वीं शती का अंत) के समय की दिल्ली इसी स्थान के निकट थी। पृथ्वीराज की अधिष्ठात्री देवी जोगमाया का मंदिर भी यहां है। इसी मंदिर के कारण दिल्ली का एक मध्यकालीन नाम जोगिनीपुर भी प्रसिद्ध था। गुलाम वंश के सुल्तानों की दिल्ली भी महरौली के आस पास बसी हुई थी। कुतुबमीनार के निकट प्रसिद्ध लौहस्तंभ है जिसका गुप्तकालीन अभिलेख महरौली स्तंभ अभिलेख कहलाता है। इसमें चंद्र (शायद चंद्रगुप्त द्वितीय) नामक राजा की विजय यात्राओं तथा मरणोत्तर कीर्ति का यशोगान है (दे० दिल्ली)। कुछ विद्वानों का कहना है कि महरौली में प्राचीन काल में वेधशाला थी और इसी कारण महरौली या मिहिरपुरी मिहिर या सूर्य के नाम पर प्रसिद्ध थी।

महाकंदर

महावंश, 8,12 के अनुसार कुमारविजय की मृत्यु के पश्चात सिंहपुर का राजकुमार पांडुवासुदेव भारत से लंका आकर बत्तीस अमात्य पुत्रों के साथ महाकंदर नदी के मुहाने पर उतरा था। यही बाद में लंका का राजा बना। महाकंदर नदी शायद वर्तमान मालुरु है।

महाकांतार

प्रयाग स्तंभ पर उत्कीर्ण समुद्रगुप्त की प्रख्यात प्रशस्ति में इस वन्य प्रदेश का राजा व्याघ्रराज बताया गया है ('महाकांतारक व्याघ्रराज')। स्मिथ के मतानुसार महाकांतार (अर्थात घोरवन) मध्य प्रदेश तथा उड़ीसा के जंगली इलाके का नाम था जहां आज भी घन वन पाए जाते हैं। रायचौधरी के अनुसार मध्यप्रदेश की भूतपूर्व जसो रियासत इस वन्य प्रदेश में सम्मिलित थी। शायद महाकांतार के शासक इसी व्याघ्रराज का नाम, पृथ्वीसेन के नचने की तलाई तथा गंज से प्राप्त गुप्तकालीन अभिलेखों में है।

महाकाम

बोर्नियो (इंडोनेसिया) की एक नदी जिसके तटवर्ती प्रदेश में ई० सन् की प्रारंभिक शतियों में भारतीय सभ्यता का विकास हुआ था।

महाकाल

उज्जयिनी में स्थित भगवान शिव का अति प्राचीन मंदिर। इसका वर्णन कालिदास ने मेघदूत (पूर्वमेघ, 36 तथा अनुवर्ती छंद में किया है— 'अप्यन्यस्मिन जलधर महाकालमासाद्य काले, स्थातव्यं ते नयनविषयंयावदभ्येति भानु, कुर्वन्न सन्ध्याबलिपटहतां शूलिनः श्लाघनीयाम्, मन्द्राणां फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्'—आदि। रघुवंश 6,34 में इंदुमती स्वयंवर के प्रसंग में अवंतिनरेश के परिचय के संबंध में भी महाकाल का वर्णन है—'असौमहाकाल निकेतनस्य वसन्नदूरे किल चंद्रमौले तमिस्रपक्षेऽपि सह प्रियाभिर्ज्योत्स्नावतो निर्विशति प्रदोषान्'। उज्जयिनी को प्राचीनकाल में ज्योतिष विद्या का घर माना जाता था। इस नगरी में प्राचीन काल में भारतीय कालक्रम की गणना का केंद्र होने के कारण भी महाकाल मंदिर का नाम सार्थक जान पड़ता है (प्राचीन भारत में ज्योतिष विद्या विशारदों ने कालक्रम मापने के लिए उज्जयिनी में शून्य अक्षांश की स्थिति मानी थी जैसा कि वर्तमान काल में ग्रीनिच में है)। जयपुर नरेश जयसिंह द्वितीय ने एक प्रसिद्ध वेधशाला भी यहां बनवाई थी। महाकाल का मंदिर उज्जैन में आज भी है किंतु यह कालिदास द्वारा वर्णित प्राचीन मंदिर से अवश्य भिन्न है। प्राचीन मंदिर को गुलाम वंश के सुल्तान इल्तुतमिश ने 13वीं शती में नष्ट कर दिया था। नवीन मंदिर प्राचीन देवालय के स्थान पर ही बनाया गया जान पड़ता है। यह मंदिर भूमि के नीचे गहरे स्थान में बना हुआ है। पास ही शिप्रा नदी बहती है जिसका वर्णन कालिदास ने महाकाल मंदिर के प्रसंग में किया है।

महाकूट (जिला बीजापुर, मैसूर)

यह स्थान चालुक्यकालीन है (6ठी–7वीं शती ई०)। यहां इस काल में निर्मित दो मंदिर उल्लेखनीय हैं जो मुख्य रूप से उत्तरी भारत के पूर्वगुप्तकालीन मंदिरों के अनुरूप हैं। इनके मध्य में गर्भगृह और उसके चतुर्दिक् पटा हुआ प्रदक्षिणापथ है। ये मंदिर बीजापुर जिले के अन्य मंदिरों के समान गुप्तकालीन मंदिरों की परंपरा में हैं जो गुप्तकाल की समाप्ति के 11 शतियों के बाद भी दक्षिण भारत में जीवित रही। सुदूर दक्षिण में कनारा प्रदेश (मैसूर) के मंदिर भी (दे० भटकल, मुडाबिदरी, जरसाप्पा) इसी परंपरा के अंतर्गत हैं।

महाकूट म 602 ई० का एक स्तभलेख मिला है जिसम चालुक्य या चालुक्य वशीय कीर्तिवमन् प्रथम की वग, अग, मगधादि देशो पर विजय का वणन है। कीर्तिवमन के पिता द्वारा किए गए अश्वमधयन का वणन भी इस अभिलख म है। अभिलेख से चालुक्यनरेश मगलश क विषय म सूचना मिलती है।

महाकोशी

कुमारसभव 6,33 म उल्लिखित कलाश क निकट बहने वाली कोई नदी। शिव ने सप्तर्षियो को पावती की मगनी के लिए ओषधिप्रस्थ भजत हुए उनस लौट कर महाकोशी के प्रपात के निकट मिलन क लिए कहा था—'तत्प्रयातौषधिप्रस्थ सिद्धय हिमवत्पुर महाकोशीप्रपातेऽस्मिन सगम पुनरेव न'

महाकोसल द० दक्षिणकोसल

महाकुपापार

गुप्त अभिलेखो म उल्लिखित स्थान जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है (द० रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एशेंट इडिया, पृ० 472)।

महागगा = महावेलिगगा (लका)

लका के प्राचीन बौद्ध इतिहास ग्रथ महावश (10,57) मे उल्लिखित नदी।

महातीथ (लका)

महावश 7,58 के अनुसार राजकुमार विजय क निमत्रण पर भारत के पाड्य देश से आने वाले लोग लका पहुच कर जलयान से इसी स्थान पर उतरे थे। यह मनार द्वीप के सामने वतमान मतोट है।

महादेव

विध्य के दक्षिण तथा सतपुडा क निकट स्थित पवत श्रेणी जो सभवत प्राचीन शुक्तिमान पवतमाला के अतगत थी।

महादेवपुर = मनथानी

महाद्रुम

विष्णुपुराण 2,4,60 के अनुसार शाकद्वीप का एक भाग या वष जो इस द्वीप के राजा भव्य के पुत्र महाद्रुम के नाम से प्रसिद्ध है।

महानद

जिला पूर्णिया (बिहार) की एक नदी। सभव है इसका नाम मगध के राजा महानद के नाम पर प्रसिद्ध हुआ हो।

महानदी (मसूर)

नव्याल के निकट यह स्थान प्राचीन शिव मदिर के लिए प्रसिद्ध है।

महानगर

पाणिनि 6,2,89 में उल्लिखित है। यह महास्थान, जिला बोगरा, बंगाल का प्राचीन नाम है।

महानदी

(1) महेन्द्रपर्वत के निकट से होकर बहने वाली नदी जो उड़ीसा को सिंचित करती हुई कटक के पास बंगाल की खाड़ी में गिरती है। श्रीमद्भागवत 5,19, 18 में शायद इसीका उल्लेख है—'महानदी वेदस्मृतिऋषिकुल्या'। महाभारत भीष्म० 9,14 में भी महानदी का नामोल्लेख है—'नदी पिबन्ति विपुला गंगा सिंधु सरस्वतीम, गोदावरी नर्मदा च बाहुदा च महानदीम्'

(2) गया (बिहार) के निकट बहने वाली फल्गु का ही महाभारत वन० 95,9 में, 'महानदी' नाम से अभिहित किया गया है—'नगो गयशिरो यत्र पुण्या चैव महानदी'। फल्गु को स्थानीय रूप से आज भी 'महाना' कहा जाता है जो अवश्य ही महानदी का अपभ्रंश है। उपर्युक्त उल्लेख में महानदी शब्द व्यक्ति वाचक संज्ञा है।

महाना दे० फल्गु, महानदी (2)

महापद्मसर

वुलर झील (कश्मीर) का प्राचीन संस्कृत नाम।

महाबलिस्तान

11वीं शती के प्रसिद्ध अरब विद्वान् और पर्यटक अलबरूनी ने भीलसा या विदिशा का प्राचीन नाम महाबलिस्तान लिखा है।

महाबलीपुरम (मद्रास)

मद्रास से लगभग 40 मील दूर समुद्र तट पर स्थित वर्तमान मम्मल्पुर। इसका एक अन्य प्राचीन नाम बाणपुर भी है। यह पल्लवनरेशों के समय (7वीं शती ई०) में बने सप्तरथ नामक विशाल मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। ये मंदिर भारत के प्राचीन वास्तुशिल्प के गौरवमय उदाहरण माने जाते हैं। पल्लवों के समय में दक्षिणभारत की संस्कृति उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर पहुंची हुई थी। इस काल में बृहत्तर भारत, विशेष कर स्याम, कंबोडिया, मलाया और इंडोनेसिया में दक्षिण भारत से बहुसंख्यक लोग जाकर बसे थे और वहां पहुंच कर उन्होंने नए नए भारतीय उपनिवेशों की स्थापना की थी। महाबलीपुर के निकट एक पहाड़ी पर स्थित दीपस्तंभ समुद्र यात्राओं की सुरक्षा के लिए बनवाया गया था। इसके निकट ही सप्तरथों के परम विशाल मंदिर विदेश-यात्राओं पर जाने वाले यात्रियों को मातृभूमि का अंतिम संदेश देते रहे होंगे।

दीपस्तंभ के शिखर से शिल्पकृतियों के चार समूह दृष्टिगोचर होते हैं। प्रथम समूह एक ही पत्थर में से काटे हुए पांच मंदिरों का है जिन्हें रथ कहते हैं। ये कणाश्म या ग्रेनाइट पत्थर के बने हैं। इनमें से विशालतम धर्मरथ है जो पांच तलों से युक्त है। इसकी दीवारों पर सघन मूर्तिकारी दिखाई पड़ती है। भूमितल की भित्ति पर आठ चित्रफलक प्रदर्शित हैं जिनमें अर्धनारीश्वर की कलापूर्ण मूर्ति का निर्माण बड़ी कुशलता से किया गया है। दूसरे तल पर शिव, विष्णु और कृष्ण की मूर्तियों का चित्रण है। फूलों की डलियां लिए हुए एक सुंदरी का मूर्तिचित्र अत्यंत मनोरम है। दूसरा रथ भीमरथ नामक है जिसकी छत गाड़ी के टप के सदृश जान पड़ती है। तीसरा मंदिर धर्मरथ के समान है। इसमें वामनों और हंसों का सुंदर अंकन है। चौथे में महिषासुरमर्दिनी दुर्गा की मूर्ति है। पांचवां एक ही पत्थर में से कटा हुआ है और हाथी की आकृति के समान जान पड़ता है।

दूसरा समूह दीपस्तंभ की पहाड़ी में स्थित कई गुफाओं के रूप में दिखाई पड़ता है। वराह गुफा में वराह अवतार की कथा का और महिषासुर गुफा में महिषासुर तथा अनंतशायी विष्णु की मूर्तियों का अंकन है। वराहगुफा में जो अब नितांत अंधेरी है बहुत सुंदर मूर्तिकारी प्रदर्शित है। इसी में हाथियों द्वारा स्नापित गजलक्ष्मी का भी अंकन है। साथ ही सस्त्रीक पल्लवनरेशों की उभरी हुई प्रतिमाएं हैं जो वास्तविकता तथा कलापूर्ण भावचित्रण में बेजोड़ कही जाती हैं।

तीसरा समूह सुदीर्घ शिलाओं के मुखपृष्ठ पर उकेरे हुए कृष्णलीला तथा महाभारत के दृश्यों के विविध मूर्तिचित्रों का है जिनमें गोवर्धन धारण, अर्जुन की तपस्या आदि के दृश्य अतीव सुंदर हैं। इनसे पता चलता है कि स्वदेश से दक्षिणपूर्वएशिया के देशों में जाकर बस जाने वाले भारतीयों में महाभारत तथा पुराणों आदि की कथाओं के प्रति कितनी गहरी आस्था थी। इन लोगों ने नए उपनिवेशों में जाकर भी अपनी सांस्कृतिक परंपरा को बनाए रखा था। जैसा ऊपर कहा गया है महाबलीपुर समुद्रपार जाने वाले यात्रियों के लिए मुख्य बंदरगाह था और मातृभूमि छोड़ते समय ये मूर्ति चित्र इन्हें अपने देश की पुरानी संस्कृति की याद दिलाते थे।

चौथा समूह समुद्रतट पर तथा सन्निकट समुद्र के अंदर स्थित सप्तरथों का है जिनमें से छः तो समुद्र में समा गए हैं और एक समुद्र तट पर विशाल मंदिर के रूप में विद्यमान है। ये छः भी पत्थरों के ढेरों के रूप में समुद्र के अंदर दिखाई पड़ते हैं।

महाबलीपुर के रथ जो शलकृत हैं अजंता या इलोरा के गुहा मंदिरों की भांति पहाड़ी चट्टानों को काट कर तो अवश्य बनाए गए हैं किंतु उनके विपरीत ये रथ, पहाड़ी के भीतर बने हुए वेश्म नहीं हैं अर्थात् ये शलकृत होते हुए भी संरचनात्मक हैं। इनको बनाते समय शिल्पियों ने चट्टान को भीतर और बाहर से काट कर पहाड़ से अलग कर दिया है जिससे ये पहाड़ी के पार्श्व में स्थित नहीं जान पड़ते वरन् उससे अलग खड़े हुए दिखाई पड़ते हैं। महाबलीपुर दो वर्ग मील के घेरे में फैला हुआ है। वास्तव में यह स्थान पल्लवनरेशों की शिल्प साधना का अमर स्मारक है। महाबलीपुर के नाम के विषय में किंवदंती है कि वामन् भगवान् ने (जिनके नाम से एक गुहामंदिर प्रसिद्ध है) दैत्यराज बलि को पृथ्वी का दान इसी स्थान पर दिया था।

महाबलेश्वर (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र का रमणीक गिरिनगर। इसकी ऊंचाई समुद्रतल से 4500 फुट है। इसकी खोज 1824 ई० में जनरल पी० लॉडविक (P Lodwick) ने की थी। 1828 ई० में बंबई के गवर्नर सर मालकम ने सतारा के राजा से इसे लेकर बदले में उसे दूसरा स्थान दे दिया। महाबलेश्वर के समीप एक पहाड़ी से दक्षिणभारत की प्रसिद्ध नदी कृष्णा निकली है। महाबलेश्वर ग्राम में महाबलेश्वर शिव का प्राचीन मंदिर है।

महामृत्युंजय (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

यह पुराण प्रसिद्ध पवत कर्णप्रयाग से 18 मील पूर्व की ओर स्थित है।

महामेघवनाराम (लंका)

महावंश 1, 80,15 24 25 में उल्लिखित यह स्थान जो एक उद्यान के रूप में प्रसिद्ध था, लंका की प्राचीन राजधानी अनुराधपुर के पूर्वी द्वार के निकट था। इसे देवानांप्रिय तिष्य (सिंहलनरेश) ने बौद्धसंघ को समर्पित कर दिया था। यह 'नगर से न बहुत दूर और न बहुत समीप था और रमणीय छाया और सुंदर जल से युक्त था'। यहीं अशोक के पुत्र स्थविर महेंद्र को सिंहलनरेश तिष्य ने ठहराया था।

महावन

(1) (जिला मथुरा, उ० प्र०) मथुरा के समीप यमुना के दूसरे तट पर स्थित अति प्राचीन स्थान है जिसे बालकृष्ण की क्रीडास्थली माना जाता है। यहां अनेक छोटे छोटे मंदिर हैं जो अधिक पुराने नहीं हैं। व्रज के चौरासी वनों में महावन मुख्य था। महावन को औरंगजेब के समय में उसकी धर्मांधनीति का शिकार बनना पड़ा था। इसके बाद, 1757 ई० में अफगान आक्रमणकारि

अब्दाली ने जब मथुरा पर आक्रमण किया तो उसने महावन में सेना का शिविर बनाया। वह यहां ठहर कर गोकुल को नष्ट करना चाहता था किंतु महावन के चारहजार नागा में यासियों ने उसकी सेना के 2000 सिपाहियों को मार डाला और स्वयं भी वीरगति को प्राप्त हुए। गोकुल पर होने वाले आक्रमण का इस प्रकार निराकरण हुआ और अब्दाली ने अपनी फौज वापस बुला ली। इसके पश्चात महावन के शिविर में विसूचिका के प्रकोप से अब्दाली के अनेक सिपाही मर गए। अतः वह शीघ्र दिल्ली लौट गया किंतु जाते-जाते भी इस बर्बर आक्रांता ने मथुरा, वृंदावन आदि स्थानों पर जो लूट मचाई और लोमहर्षक विध्वंस और रक्तपात किया वह इसके पूर्व कृत्यों के अनुकूल ही था।

(2) महावंश 4,12 में वर्णित एक स्थान जो संभवतः वैशाली के प्रमोदवन का नाम था। इसका अभिज्ञान बसाढ़ (जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) से 2 मील उत्तरपश्चिम की ओर स्थित वर्तमान कोलुआ से किया गया है जहां अशोक का एक स्तंभ भी विद्यमान है। बसाढ़ ग्राम प्राचीन वैशाली नगरी के स्थान पर बसा हुआ है।

महावीरजी दे० चांदनगांव

महावीरवर्ष

विष्णुपुराण 2 4,74 में वर्णित पुष्कर द्वीप का एक नाम—'महावीर तथैवान्यद्धातकीखंडसंज्ञितम्'।

महावलिंगगा दे० महागंगा

महाशोण = महाशोणा = शोण

'गंडकीञ्च महाशोणां सदानीरां तथैव च एकपर्वतके नद्यः क्रमेणैत्या-व्रजन्त ते' महा० सभा० 20,27। (दे० शोण)

महासागर

महावंश 15,152 में उल्लिखित महामेघवनाराम का ही एक नाम है। इस उद्यान को लंका के राजा जयंत ने कश्यप बुद्ध को समर्पित किया था। यहीं बोधिवृक्ष की एक शाखा भी जयंत ने लगाई थी।

महास्थानगढ़ दे० पुंड्र पुंड्रनगर

महाहिमवद्‌धिष्ठातृ

जैन सूत्र ग्रंथ जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति में उल्लिखित महाहिमवत का एक शिखर।

महाहिमवत = प्रतगिरि

महिष

विष्णुपुराण 2 4 26 27 में उल्लिखित शाल्मल द्वीप का एक पर्वत कुमुद-

श्चोन्नतश्चैव तृतीयश्च बलाहक , द्रोणो यत्र महौषध्य स चतुर्थो महीधर । ककस्तु पचम पष्ठो महिष सप्तमस्तथा, ककुद्मान् पर्वतवर सरिन्नामानि मे शृणु' ।

महिषासुर दे० मैसूर

महिष्मडल

नमदा के दक्षिणतट पर स्थित प्रदेश (खानदेश इसमे सम्मिलित था) । इसका नाम माहिष्मती नगरी के सबध से महिष्मडल हुआ था। लका के प्राचीन बौद्ध इतिहास महावश 12,3 म इसका उल्लेख है । अशोक के समय मे होने वाली प्रथम धमसगीति के पश्चात् मोग्गलिपुत्र ने कई स्थविरो को पडोसी देशो मे बौद्ध धम के प्रचार के लिए भेजा था। उनमे से स्थविर महादव को महिष्मडल भेजा गया था।

महिष्मती=माहिष्मती

मही

(1) वाल्मीकि रामायण किष्किधा 40,22 म मही और कालमही का उल्लेख है । सुग्रीव ने सीता के अन्वेषणाथ वानरो को पूव दिशा की ओर भेजते हुए इन स्थानो का वणन किया था—'मही कालमही चापि शल्काननशोभिता, ब्रह्ममालान्विदेहाश्च मालवान काशिकोसलान्'। मही सभवत गडकी नदी (बिहार) है । इसे माही भी कहते थे ।

(2)=माही । यह नदी मालवा क पहाडो (पारियात्र शैलमाला) स निकल कर खभात की खाडी, मे प्राचीन स्तभतीथ के निकट गिरती है । यह स्थान स्कदपुराण, कुमारिका खड म पवित्र तीथ बताया गया है । इसे वायुपुराण 65, 97 म महती और वराहपुराण, 65 मे रोहि कहा गया है ।

(3) विष्णु पुराण 2,4,43 म उल्लिखित कुशद्वीप की एक नदी—'विद्युदभा मही चा या सवपापहराम्त्विमा' ।

महीकवती

बवई के उपनगर माहीम का प्राचीन नाम । गुजर नरेश भीमदेव ने 15वीं शती म इस स्थान पर अपनी राजसभा की थी ।

महीधर

मैहर (भूतपूर्व मैहर रियासत, म० प्र०) का प्राचीन नाम है । 'ततो महीधर जग्मु धमज्ञेनाभिसत्कृतम् राजर्षिणा पुण्यकृता गयनानुपमद्युत' महा० वन० 85 8 9 । यहाँ इसकी स्थिति प्रसगानुसार प्रयाग क दक्षिण म है जो वतमान मैहर की स्थिति क अनुरूप ही है ।

महीवती

'तब तथागत ने तपस्वी कपिल को महीवती मे विनीत बनाया जहा ॽ ॽ ॽ मुनि के चरण अंकित थे'—बुद्धचरित 21,24। इस नगरी का अभिज्ञान अनिश्चित है। सभवत यह मही नदी या माही के तट पर स्थित प्राचीन स्तभतीर्थ (=खभात) है। बुद्धचरित 21,22 म शूर्पारक का उल्लेख है जो प्रसग से महीवती क निकट ही होना चाहिए। अत यह अभिज्ञान ठीक जान पडता है।

महीशूर दे० मैसूर

महुग्रा

भूतपूर्व रियासत ग्वालियर (म० प्र०) म निराही स एक मील दक्षिण की ओर स्थित है। यहा तीन प्राचीन शिवमदिरो के खडहर हैं। एक मदिर पर सभवत 7वी शती ई० का अभिलेख उत्कीर्ण है।

महुडी

भूतपूर्व रियासत बडौदा (गुजरात) मे विजापुर के निकट महुडी ग्राम म कोटरक के मदिर की खुदाई करने से चार धातु प्रतिमाए प्राप्त हुई थी। इनका वर्णन रिपोर्ट आव दि आर्क्योलोजिकल सर्वे, बडौदा स्टेट, 1937 म प्रकाशित हुआ था। मूर्तिया गुप्तकालीन जान पडती है। इनम से एक म उष्णीष और ऊर्णा का अलकरण विद्यमान है। मूर्ति पर यह लेख है—नम सिद्ध (नम) वरिगणस उप (रि) का आयसघश्रावक'। मूर्ति जैन धर्म से सबधित है।

महुवार दे० मधुमत

महेत्थ=महोत्थ

महेंद्र

(1) भारत क प्राचीन कुलपर्वतो म इसकी भी गणना है। इसका अभिज्ञान सामान्य रूप से पूर्वी घाट की पर्वतमाला के उत्तरी भाग से किया गया है। महानदी इसी पहाड से निकलती है। इस पर्वत का अभिज्ञान विशेष रूप मे मद्रास कलकत्ता रेलपथ पर ब्रह्मपुर रोड स्टेशन से 20 मील पश्चिमोत्तर मे स्थित महेंद्रगिरि से किया जाता है। यह पर्वत समुद्रतल से 5000 फुट ऊचा है। यहा पाडवो और कुती के नाम से प्रसिद्ध एक मदिर स्थित है। रघुवश 4 39 मे कालिदास ने रघु की दिग्विजय यात्रा के प्रसग म भी इसका उल्लेख किया है—'स प्रताप महेंद्रस्य मूर्ध्नि तीक्ष्ण न्यवेशयत, अकुश द्विरदस्येव यता गभीरवेदिन'। रघुवश 6 54 म भी कलिंग नरेश के सबध म इसका वर्णन है—'असौ महेंद्राद्रिसमानसार पतिर्महेंद्रस्य महोदधेश्च यस्य क्षरत्सैन्यगजच्छलेन यात्रासु यातीव

पुरो महेंद्र'। इन दोनों ही उल्लेखों में इस पर्वत के संबंध में हाथियों का वर्णन है। कलिंग के हाथी प्राचीन काल में प्रसिद्ध थे। श्रीमद्भागवत 5,19,16 में भी इस पर्वत का नामोल्लेख है—'श्रीशैलोवेंकटो महेंद्रो वारिधारो विंध्य'। *विष्णुपुराण 4,24,65 में इसका उल्लेख कलिंगादि देशों के साथ है—'कलिंग माहिष महेंद्र भौमान् गुहा भोक्ष्यन्ति'*

(2) वाल्मीकि रामायण किष्किंधा 67,39 में वर्णित एक पर्वत जिस पर हनुमान लंका के लिए प्रस्थान करते समय आरूढ़ हुए थे—'आरुरोह नगश्रेष्ठं महेंद्रमरिमर्दन'। इसको वाल्मीकि ने महागिरि (किष्किंधा० 67,46) कहा है—"शैलश्रृंगशिलोत्पातस्तदाभूत स महागिरि'। यह महेंद्र पर्वत केरल में समुद्रतट तक फैले हुए प्राचीन मलय पर्वत की शृंखला का ही कोई शिखर जान पड़ता है। अध्यात्मरामायण, किष्किंधा 9 28 में भी इसी प्रसंग में महेंद्र का उल्लेख है—'महेंद्राद्रिगिरोगत्वा बभूवाद्भुतदर्शन'

(3) प्राचीन कंबुज (कंबोडिया,) का बड़ा पहाड़ी नगर जहाँ 9वीं शती में हिंदू राजा जयवर्मन् द्वितीय की राजधानी कुछ समय पर्यंत रही थी। इसका अभिज्ञान अंगकोरथाम के उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित फ्नाम कुलेन नामक स्थान से किया गया है।

महेंद्रवाड़ी (मद्रास)

आरकट और अरकोनम के बीच इस पल्लवकालीन नगर के खंडहर स्थित है। महेन्द्रवर्मन प्रथम (600 625 ई०) ने जो पल्लव वंश का प्रतिभाशाली शासक था संभवतः इस नगर की संस्थापना की थी। नगर के निकट महेंद्रताल नामक एक झील के चिह्न हैं जिसका निर्माण महेंद्रवर्मन् ने ही करवाया था।

महेवा

भूतपूर्व छतरपुर रियासत (म० प्र०) में स्थित। बुंदेला नरेश छत्रसाल के पिता चंपतराय (17 वीं शती का उत्तरार्ध) को यहाँ की जागीर बंटवारे में अपने पूर्वजों से मिली थी। यह छोटी सी जागीर बुंदेला राजा उदयजीत के पुत्र और पौत्रों में बंटती चली आई थी। जो हिस्सा चंपतराय को मिला उसकी आय केवल 350 रु० वार्षिक थी। कविवर भूषण ने 'छत्रसाल दशक' में छत्रसाल को महेवा महिपाल कहा है— जगजीत लेवा तऊ ह्वै के दामदेवाभूप, सेवा लागे करन महेवा महिपाल की'। महेवा की जागीर ही बढ़कर छत्रसाल की भावी रियासत के रूप में परिणत हो गई।

महेश्वर दे० माहिष्मती

महोत्थ

रूपांतर महेत्थ। 'शैरीषक महोत्थं च वशेचक्रे महाद्युतिः, आक्रोश चव राजर्षि तेन युद्धमभू महत्' महा० 32 6। नकुल ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग म शैरीषक (=सिरसा, हरयाणा) और महोत्थ पर अधिकार कर लिया था। महोत्थ के राजा का नाम आक्रोश बताया गया है। इस प्रदेश को 32,5 म बहुधा यक कहा गया है। दक्षिणीपजाब का यह क्षेत्र जिसम रोहतक, सिरसा आदि स्थित हैं, आज तक भारत के उपजाऊ क्षेत्रो मे गिना जाता है। महोत्थ सिरसा के निकट ही स्थित होगा।

महोत्सव नगर=महोबा

महोदय

(1) =कान्यकुब्ज। 'पचालाख्योऽस्ति विषया मध्यदशे महोदयपुर तत्र' विष्णुधर्मोत्तर पुराण 1,20,2 3। (दे० कान्यकुब्ज)

(2) वाल्मीकि रामायण, युद्ध० 101,29 30 मे उल्लिखित पवत जहा से लका के रणक्षेत्र मे घायल हुए लक्ष्मण के उपचार के लिए हनुमान् औषधि लाए थे—'सौम्य शीघ्रमितो गत्वा पवत हि महोदयम, पूव तु कथिता योऽसौ वीरजाम्बवता तव, दक्षिणे शिखरे जाता महौषधिमिहानय।'

महोबा (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

831 ई० के लगभग चदेल राजपूतो ने महोबा पर अधिकार करके अपने इतिहास प्रसिद्ध राजवश की नीव डाली थी। जनश्रुति है कि चदेलो क आदि पुरुष चद्रवर्मा ने यहा महोत्सव किया था जिससे इस स्थान का नाम महोत्सवपुर या उससे बिगड कर महोबा हुआ। 12वी शती के अत म महोबा म राजा परमाल का राज्य था। पृथ्वीराज चौहान ने 1182 ई० के प्रसिद्ध युद्ध म जिसम चदेलो की ओर स आल्हा ऊदल लडे थे महोबा परमाल से छीन लिया था किंतु कुछ समय पश्चात् चदेलो का पुन इस पर अधिकार हो गया। 1196 ई० के लगभग कुतुबुद्दीनऐबक न महोबा और कालपी दोनो पर अधिकार कर लिया और अपना सूबेदार यहा नियुक्त कर दिया। तैमूर क आक्रमण के समय कालपी और महोबा के सूबेदार स्वतत्र हो गए। 1434 ई० मे जौनपुर के सूबेदार इब्राहीमशाह न महोबा और कालपी पर अधिकार कर लिया किंतु अगले वष माल्वा के सुल्तान होशगशाह न इसे छीन लिया किंतु पुन यह नगर जौनपुर के सुल्तान के कब्जे म आ गया। 16वी शती मे मुगलो का साम्राज्य दिल्ली म स्थापित हुआ और साथ ही महोबा भी मुगल साम्राज्य का एक अग न गया। औरगजेब के समय मे बुदेलखड क प्रतापी राजा छत्रसाल का महोबा

पर अधिकार हो गया और यह नगर शीघ्र ही उनके राज्य का एक बड़ा नगर बन गया। किंतु अंग्रेजो राज्य स्थापित होने के पश्चात महोबा एक छोटा महत्वहीन कस्बा बन गया और उसी रूप में आज भी है। चंदेलों के समय के कुछ अवशेष महोबा में मिले हैं तथा आल्हा-ऊदल की दंत कथाओं से संबंधित ताल आदि भी यहां बताए जाते हैं। चंदेलनरेश वास्तुकला के प्रेमी थे। इन्हीं के जमाने में जगत् प्रसिद्ध खजुराहो के मंदिरों का निर्माण हुआ था। किंतु जान पड़ता है कि युद्धों की अग्नि में महोबा के प्राय सभी महत्वपूर्ण अवशेष नष्ट हो गए। फिर भी राजपूतों के समय के अवशेषों में यहां से प्राप्त हिंदू तथा जैन धर्म से संबंधित कुछ मूर्तियां अवश्य उल्लेखनीय हैं। सिंहनाद अवलोकितेश्वर की एक अभिलिखित मूर्ति भी महोबा से प्राप्त हुई थी जो अब लखनऊ के संग्रहालय में है। यह मध्यकालीन बुंदेलखंड की मूर्तिकला का सुंदर उदाहरण है।

महोली (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा से लगभग साढ़े तीन मील दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित यह ग्राम वाल्मीकि रामायण में वर्णित मधुपुरी के स्थान पर बसा हुआ है। मधुपुरी को मधुनामक दैत्य ने बसाया था। उसके पुत्र लवणासुर को शत्रुघ्न ने युद्ध में पराजित कर उसका वध कर दिया था और मधुपुरी के स्थान पर उन्होंने नई मथुरा या मथुरा नगरी बसाई थी। महोली ग्राम को आजकल मधुवन महोली कहते हैं। महोली मधुपुरी का अपभ्रंश है। लगभग 100 वर्ष पूर्व इस ग्राम से गौतम बुद्ध की एक मूर्ति मिली थी। इस कलाकृति में भगवान को परमकृशावस्था में प्रदर्शित किया गया है। यह उनकी उस समय की अवस्था का अंकन है जब बोधिगया में 6 वर्षों तक कठोर तपस्या करने के उपरांत उनके शरीर का केवल अस्थिपंजर मात्र ही अवशिष्ट रह गया था।

महोदधि

भारत के दक्षिण में स्थित समुद्र जिसे इंडियन ओशन कहा जाता है—'सेतुर्येन महोदधौ विरचित क्वासौदशस्यातक' से स्पष्ट है कि राम ने इसी समुद्र पर पुल बांध कर लंका पर चढ़ाई की थी।

महोनी (बुंदेलखंड)

वीरभद्र अथवा वीर बुंदेला ने जो 1071 ई० में बुंदेलों का राजा हुआ था, बुंदेलखंड का विस्तृत भाग अपने अधिकार में करके महोनी में अपनी राजधानी बनाई थी। वहां बुंदेलों की राजधानी काफी समय तक रही।

मागधी=सोन नदी

माझा (पजाब)

रावी और ब्यास नदियो के बीच (माया=मध्य) का प्रदेश। अलक्षेंद्र के

आक्रमण के समय (327 ई० पू०) इस दाआवे म कठजाति का गणराज्य स्थापित

था।

माडवगढ़=मड

माडवी

गोआ क निकट बहन वाली नदी जो सह्याद्रि से निस्मृत होकर अरब सागर

मे गिरती है।

माडव्यपुर द० मडोर

माडव्याश्रम दे० मडोर

माधाता (जिला इदोर, म० प्र०)

ओकारेश्वर से प्राय 7 मील और इदोर से 54 मील दूर नमदा के बीच

मे छोटा सा द्वीप है। किवदती म कहा जाता है कि इस स्थान पर राजा माधाता

ने शिव की आराधना की थी। यह द्वीप नमदा और उसकी उपधारा कावेरी

से घिरा हुआ है। माधाता द्वीप का आकार ओकार या प्रणव के प्रतीक से मिल्ता

जुल्ता है। समवत इसीलिए इसे ओकारेश्वर भी कहा जाता है। इसके आस

पास अनेक प्राचीन तीर्थस्थल हैं। माधाता को अमरेश्वर भी कहते हैं। स्कद

पुराण, रेवाखड 28,133 मे इसका वणन है।

माकदी

महाभारत, आदि० 137,73 मे इसका इस प्रकार उल्लेख है—'माकदामथ

गगायास्तीरे जनपदायुताम्, सोऽध्यावसद् दीनमना काम्पिल्य च पुरोत्तमम' अर्थात

तदनतर राजा द्रुपद द्रोणाचाय द्वारा आधा राज्य छीन लिए जाने पर, दीनता

पूण हृदय से गगातटवर्ती अनेक जनपदो से युक्त माकदी म तथा नगरो म श्रेष्ठ

कापिल्य मे निवास करने लगे। इस उल्लेख से ज्ञात होता है कि माकदी पचाल

राज्य का एक छोटा भाग रहा होगा। इस उल्लेख मे वर्णित माकदी, नगर

विशेष का नाम नही जान पडता। यह सभवत किसी बडे जनपद का नाम था

क्योकि इसे जनपदो से युक्त बताया गया है। यह सभव है कि कापिल्य (जिला

फरुखाबाद, उ० प्र०) इसी प्रदेश मे स्थित था। किंतु महाभारत, उद्योग 31,19

मे माकदी नामक ग्राम का भी उल्लेख है जिसे पाडवो ने चार अन्य स्थानो के

साथ कौरवो मे मागा था—'अविस्थल वृकस्थल माकदी वारणवतम्, अवमान

भवेत्वत्र किंचिदेक च पचमम्'। सभवत माकदी ग्राम या नगर के नाम पर

ही माकदी जनपद भी प्रसिद्ध था। इस नगर की स्थिति पचालदश म ही समझनी चाहिए।

माट (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा से आठ मील दूर है। इस ग्राम से कुषाणकाल के अनेक महत्वपूर्ण अवशेष प्राप्त हुए हैं। सस्कृत म एक शिलालेख स जो यहा स प्राप्त हुआ था विदित हाता है कि महाराजधिराज दवपुत्र हुविष्क के पितामह ने जो सत्य और धम म सदैव स्थिर थे एक देवकुल बनवाया था जो कालातर म नष्ट भ्रष्ट हो गया था। अत किसी महादडनायक के पुत्र न जो राजकमचारी था इस दवकुल का जीर्णोद्धार करवाया और ब्राह्मणो तथा अतिथियो के लिए प्रतिदिन सदाव्रत का प्रबध किया। माट से कुशान सम्राट् कनिष्क (120 ई०) और विम केडफिसस की कायपरिमाण मूर्तिया प्राप्त हुई थी जो मथुरा सग्रहालय मे सुरक्षित हैं। कनिष्क की मूर्ति लाल पत्थर की है और वतमान दशा मे शिरविहीन है। इस मूर्ति स कनिष्क की वेषभूषा का अच्छा ज्ञान हाता है। इसम इसे लबा चोगा और घुटना तक ऊचे जूत पहने दिखाया गया है। यह वेशभूषा कुषाणो के आद्यस्थान पश्चिमी चीन या तुर्किस्तान मे आज तक प्रचलित है।

माड्ड (जिला मेरठ, उ० प्र०)

पूठ स 8 मील दूर इस ग्राम मे, स्थानीय किंवदती के अनुसार, प्राचीन काल में माडव्य ऋषि का आश्रम था।

माणिकपुर=मनिकियाला

मातग

(1) राजगह क निकट एक पहाडी (दे० राजगृह)

(2) कामरूप के दक्षिण पूव में स्थित देश जो हीर की खाना के लिए प्रसिद्ध था (युक्तिकल्पतरु)।

माती दे० कुरिया

माधवपुर (काठियावाड, गुजरात)

पोरबदर से 40 मील दूर छाटा सा बदरगाह है। इस स्थान पर मलुमती नदी सागर म गिरती है। स्थानीय किंवदती के अनुसार यहा रुक्मिणी के पिता राजा भीष्मक की राजधानी थी। माधवपुर म श्रीकृष्ण और रुक्मिणी के मदिर भी ह। किंतु जसा कि महाभारत से स्पष्ट है भीष्मक विदभ देश का राजा था और उनकी राजधानी कुडिनपुर में थी।

मानकुवर (तहसील करछना, जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

इस स्थान से गुप्त सम्राट् कुमार गुप्त के शासनकाल की एक अभिलिखित

बुद्ध मूर्ति प्राप्त हुई है। इसकी तिथि 129 गु० स०=449 ई० है। अभिलेख में भिक्षु बुद्धमित्र द्वारा इस प्रतिमा की प्रतिष्ठापना का उल्लेख है। इस अभिलेख की विशेष बात यह है कि इसमे गुप्तकाल के अ य अभिलेखा की भाति कुमार-गुप्त को महाराजाधिराज न कह कर केवल महाराज कहा गया है जो सामाय सामतो की उपाधि थी। फ्लीट का मत है कि कुमारगुप्त के शासनकाल के अतिम वर्षों में पुष्यमित्रो तथा हूणो के आक्रमण क कारण गुप्त साम्राज्य की प्रतिष्ठा कम हो चली थी और इस तथ्य की झलक हमें इस अभिलेख में प्रयुक्त महाराज शब्द से मिलती है। यह बुद्ध की मूर्ति मथुरा शैली में निर्मित है। इसका शिर मुडित है और यह अभय मुद्रा में स्थित है। मूर्ति की वठक पर सिंह और धमचक्रअकित हैं। शरीर के अगा के अनुपात और मुखमुद्रा के आधार पर मूर्ति कुषाणकाल की मूर्तिया से मिलती जुलती कही जा सकतीहै किंतु उष्णीय की उपास्यति अवश्य ही इसे गुप्तकालीन प्रमाणित करती है।

मानकेसर (ज़िला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

13वी–14वी शती के, चालुक्य शैली मे बने शिव मदिरो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। ये कणाश्म (ग्रेनाइट) के बने हैं और इनमे सदर मूर्तिकारी प्रदर्शित है।

मानपुर (महाराष्ट्र)

मानपुर म दक्षिणभारत के प्रसिद्ध राष्ट्रकूट वश की सवप्रथम राजधानी थी। कई विद्वानो का मत है कि यह राजधानी लट्टूर म थी

मानवा (ज़िला रायचूर, मैसूर)

यहा रामसिंह, वेंकटेश्वर तथा मारुति के मदिर स्थित है। एक प्राचीन किले के खडहर भी दिखलाई पडते हैं। मारुति मदिर तथा किले के भीतर क नड-अभिलेख पत्थरो पर उत्कीण है।

मानस

(1) विष्णुपुराण 2 4,29 के अनुसार शाल्मल द्वीप का एक भाग या वप जो इस द्वीप क राजा वपुष्मान् के पुत्र मानस के नाम पर प्रसिद्ध है।

(2)=मानसरोवर

(3) वाल्मीकि० 43,28 मे उल्लिखित एक पवत— अवक्ष कामशैल च मानम विहगालयम न गतिस्तत्र भूताना देवाना न च रक्षसाम्'। इसकी स्थिति हिमालय मे कैलाश के उत्तर मे, क्रौंचगिरि के निकट कही गई है। इसकी ऊचाई बहुत अधिक रही होगी क्योकि पवत को 'अवृक्ष' कहा गया है।

मानसरोवर

इसका प्राचीन नाम ब्रह्मसर भी है। मानसरोवर भारत के उत्तर म हिमालय पवतश्रेणियो मे कलास पवत के निकट (तिब्बत म) स्थित विस्तीण भील है। इस झील से भारत की तथा मध्यएशिया की कई नदिया निकली है। गगा का मूल स्रोत भी इसी झील से निस्तृत है। कई भौगोलिको के मतानुसार ये नदिया वास्तव म मानसरोवर से नही वरन् उसक आसपास की कई झीलो से निकलती है जसे रावणह्रद नामक झील से सतलज निकलती है (दे० डाउसन, क्लासिकेल डिक्शनरी— मानसरोवर')। किंतु यह निश्चित है कि सिंध तथा पजाब की कई नदिया, झेलम आदि मूलरूप मे इसी झील से उदभूत है। सरयू और ब्रह्मपुत्र का उदगम भी मान सरोवर ही है। वाल्मीकि० किष्किधा० 43,20-21-22 मे कलास, कुबेरभवन तथा उसके निकट विशाल 'नलिनी' या सरोवर का उल्लेख है जो अवश्य ही मानसरोवर है—'तत्तु शीघ्रमतिक्रम्य कातार रोमहषणम् कैलास पाडुर प्राप्य हृष्टा यूय भविष्यथ। तत्र पाडुरमघाभ जाबूनदपरिष्कृतम, कुबेरभवन रम्य निर्मित विश्वकमणा। विशाला नलिनी यत्र प्रभूतकमलोत्पला, हसकारड-वाकीर्णा अप्सरोगणसेविता'। वाल्मीकि० बाल० 24,8 9-10 म मानसरोवर की उत्पत्ति तथा सरयू का इससे निस्सृत होने का वणन है—'कलासपवते राम मनसानिर्मित परम्, ब्रह्मणा नरशार्दूल तेनद मानस सर, तस्मात् सुस्राव सरस सायाध्यामुपगूहते सर प्रवृत्ता सरयू पुण्या ब्रह्मसरश्च्युता'। महाभारत वनपव मे पाडवो की उत्तरदिशा के तीर्थों की यात्रा के प्रसग म मानस का उल्लेख है—'एतद द्वार महाराज मानसस्य प्रकाशते, वपमस्य गिरेमध्य रामण श्रीमता कृतम्'। मेघदूत मे कालिदास ने मानस को सुवणकमल वाला सरोवर बताया है तथा इसका अलका और कैलास के निकट वणन किया है—'हेमाम्भोजप्रसवि सलिल मानसस्याददान, कुर्वन काम क्षणमुखपटप्रीतिमैरावतस्य धुन्वन वातैस्सजल पृषत कल्पवृक्षाशुकानिच्छायाभिन्नस्फटिक विशद निर्विशेस्त नगेन्द्रम'— पूवमघ 64। इसका तिब्बती नाम चोमापन है।

मानसेहरा (जिला हजारा, प० पाकि०)

मौय सम्राट् अशोक के चौदह मुख्य शिलालेख इस स्थान पर (खरोष्ट्रीलिपि म) एक चट्टान क ऊपर अकित हैं।

मानिकगढ़ (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

1700 फुट ऊची एक पहाडी पर यह सुदृढ दुर्ग अवस्थित है। यह चादा (म० प्र०) के गोड राजाओ के अधिकार म बहुत समय तक रहा। किंवदती है कि गोडो ने 9वी शती म अपने राज्य की स्थापना की थी। 16वी शती तक

ये स्वतन्त्र रूप से राज करते रहे। इस काल में इन्होंने मुगलों की सत्ता नाममात्र को स्वीकार कर ली थी। 1751 ई० में मराठों के उत्कर्ष के साथ चांदा का गोंड-राज्य समाप्त हो गया। मानिकगढ़ के आसपास गोंड लोग अब भी सहस्रों की संख्या में हैं। वेसलापुर नामक ग्राम में इनका भारी वार्षिक मेला लगता है।

मानिकपुर (ज़िला बांदा, उ० प्र०)

इस स्थान के निकट शिलाओं पर प्रागैतिहासिक काल की चित्रकारी के अवशेष मिले हैं।

माव (ज़िला गढ़वाल, उ० प्र०)

गढ़वाल के मध्यकालीन राजपूत नरेशों के समय की एक गढ़ी यहां स्थित है। गढ़वाल ऐसी ही अनेक गढ़ियों के कारण गढ़वाल नाम से प्रसिद्ध हुआ था।

मामाल = मावल

माया

पुराणों की सप्तपुरियों में से एक—'काशी कांची च मायाख्या त्वयोध्या द्वारवत्यपि, मथुरावन्तिका चैता सप्तपुर्योऽत्र मोक्षदा'। इसका अभिज्ञान वर्तमान हरद्वार (उ० प्र०) के क्षेत्र से किया गया है। युवानच्वांग ने संभवतः मायापुरी का ही मयूर नाम से वर्णन किया है। मायापुरी, कनखल, ज्वालापुर और भीमगोडा नामक पंचपुरियां से मिलकर हरद्वार बना है। हरद्वार में मायादेवी का प्राचीन मंदिर विष्णुघाट से दक्षिण की ओर स्थित है।

मायापुर

(1) = माया

(2) = नदिया। यह श्री चैतन्यदेव की जन्मभूमि है। इसका वास्तविक नाम नवद्वीप था।

मायावरम (मद्रास)

मद्रास धनुष्कोटि मार्ग में स्थित है। इस स्थान का प्राचीन संस्कृत नाम मायूरम् है। इस नाम का संबंध एक पौराणिक कथा से बताया जाता है जिसके अनुसार पार्वती ने मयूरी रूप में जन्म धारण कर शिव की आराधना की थी।

मायूरम = मायावरम्

मारकंड

समरकंद का संस्कृत नाम (नं० ला० डे)

मारपुर

ज़िला हुगली (बंगाल) में स्थित प्रद्युम्ननगर या वर्तमान पाडुआ।

मारवाड

राजस्थान म भूतपूव जोधपुर रियासत का परिवर्ती भाग। इसका प्राचीन नाम मरु था जिसका अथ मरुस्थल है। (दे० मरु)

मारुध

'मारुध च विनिर्जित्य रम्यग्राममथोबलात, नाचीनानर्बुकाश्चैव राजश्चैव महाबल' महा० सभा० 31,14। इस देश को सहदेव ने दक्षिण दिशा की दिग्विजययात्रा के समय जीता था। इस प्रदेश की स्थिति प्रसगानुसार विदर्भ-देश के दक्षिण मे जान पडती है।

मारुगढ (जिला मडला, म० प्र०)

मडला के निकट है। यहा गढमडला नरेश सग्रामसिंह (मृत्यु 1540 ई०) का एक दुग था जो उनके समय के 52 गढो म परिगणित किया जाता था। सग्रामसिंह के पुत्र दलपतशाह वीरागना दुर्गावती के पति थे।

माकडेय

'मार्कंडेयस्य राजेंद्र तीर्थमासाद्य दुलभम्। गोमतीगगयाश्चैव सगमे लोक-विश्रुते'—महा० वन० 84,80 81। यह प्राचीन तीथ गोमती और गगा के सगम पर स्थित था। इस प्रकार यह स्थल वाराणसी से पूव दक्षिण की ओर, उत्तरप्रदेश और बिहार की सीमा के निकट रहा होगा।

मार्कंडेयाश्रम दे० बिलासपुर

मार्तिकावतक

द्वारका पर आक्रमण करने वाले राजा शाल्व के देश का नाम—'तमश्रौषमहं गत्वा यथावत्त स दुमति, मयि कौरव्य दुष्टात्मा मार्तिकावतको नृप'। कहा जाता है कि शाल्वपुर वतमान अलवर है। इस प्रकार मार्तिकावतक की स्थिति अलवर के समीपवर्ती प्रदेश मे मानी जा सकती है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह वतमान मेडता है।

मार्देयपुर

पाणिनि 4,2,101 मे उल्लिखित स्थान जो शायद वतमान मडावर है।

माल

'त्वय्यायत्तकृषिफलमिति भ्रूविकारानभिज्ञै प्रीतिस्निग्धै जनपदवधूलोचनै पीयमान, सद्यस्सीरोत्कषणसुरभिक्षेत्रमारुह्य माल किंचित पश्चाद व्रज लघुगति किंचिदेवोत्तरेण'—पूव मेघदूत 16। कालिदास के अनुसार मालदेश रामगिरि अथवा वतमान रामटेक (जिला नागपुर, महाराष्ट्र) से उत्तर पश्चिम की ओर आम्रकूट (पूवमेघ 17 18) और नमदा (पूवमेघ, 20 21) से पहले

ही कहीं मार्ग में स्थित था। नमदा के पूर्व में स्थित आम्रकूट वतमान पचमढ़ी या महादेव की पहाड़ियो का कोई शृंग जान पड़ता है। अत मालदेश पचमढ़ी और नागपुर के बीच के प्रदेश का कोई भाग हो सकता है। यह भी सभव है कि कालिदास के समय मालवा या मालदेश, वतमान मालवा के पूव मे रहा हो क्योंकि वतमान मालवा (ग्वालियर, इदौर, उज्जैन, भूपाल का इलाका) को कालिदास ने दशाण कहा है। (दे० पूवमेघ 25)

मालकूट

सुदूर दक्षिण का प्रदेश जिसमे ताम्रपर्णी और कृतमाला नदिया प्रवाहित होती है। चीनी यात्री युवानच्वाग ने इस देश का अपने यात्रावृत्त मे वणन किया है। 640 ई० मे दक्षिण भारत की यात्रा के समय वह काची आया था और यही मालकूट के विषय मे उसने सूचना प्राप्त की थी। वह यहा स्वय न जा सका था। ऐसा जान पडता है कि मालकूट मे उस समय पाडयो का राज था जो काची के शक्तिशाली पल्लवो के अधीन रहे होगे। मदुरा यहा की राजधानी थी यद्यपि युवानच्वाग ने उसका उल्लेख नही किया है। उसके लेख के अनुसार मालकूट मे बौद्धधम प्राय लुप्त हो गया था। यहा उस समय हिंदू देवाल्य और दिगवर जैन मदिर सहस्रो की सख्या मे थे। यहा के व्यापारी दूर दूर देशो स व्यापार करा म व्यस्त रहते थे।

मालकतु

महाभारत तथा पद्मपुराण मे उल्लिखित एक पवत जो अवली पहाड (राजस्थान) का ही कोई भाग जान पडता है।

मालखेड दे० मलखेड

मालथोन (बुदेलखड)

मुगल सम्राट् अकबर के सरदार मुहम्मद खा ने इस स्थान को बसाया था। कुछ दिनो मे यहा गौडो का अधिकार हो गया। तदुपरात ओडछा के दीवान अचलसिह ने यहा कब्जा कर लिया और 1748 ई० मे गढाकोला के जागीरदार पृथ्वीसिह ने इसे अपनी रियासत मे मिला लिया। इसके बाद उसके उत्तराधिकारी अजु नसिह ने इसे सिधिया को दे दिया और सिंधिया ने 1820 मे अग्रेजो को।

मालदा (बगाल)

पाडुआ से 5 मील दक्षिण मे स्थित है। इस स्थान पर पाडुआ की भाति ही 'पूर्वी' शासको के बनवाए हुए कई मकबरे, मसजिदें तथा तोरण हैं।

मालव=मालवा

भारत का प्राचीन गणराज्य मल्लोई जिसकी स्थिति अलक्षेंद्र के आक्रमण

के समय (327 ई० पू०) पंजाब (रावी-चिनाब के संगम के निकट) में थी। इन्होंने यवनराज की सेनाओं का बड़ी वीरता से सामना किया था। मालवों का पाणिनि ने भी उल्लेख किया है। कालांतर में मालवनिवासी पंजाब से भारत के अन्य भागों में जाकर फैल गए। इनकी मुख्यशाखा वर्तमान मालवा (म० प्र०) में जाकर बस गई जो इन्हीं के नाम पर मालव या मालवा कहलाया। इसका प्राचीन नाम दशार्ण था। पंजाब के मालव जनपद का उल्लेख महाभारत सभा० 32,7 में अन्य पार्श्ववर्ती जनपदों के साथ है—'शिबीस्त्रिगर्तानम्बष्ठान् मालवान् पंचकर्पटान्'। विष्णुपुराण 2,3,17 में मध्यप्रदेश के मालव का उल्लेख इस प्रकार है—'कारूपा मालवाश्चैव पारियात्रनिवासिन'। कालिदास के मालविकाग्निमित्र नाटक की नायिका मालविका इसी मालव देश की निवासिनी थी। कुछ विद्वानों के मत में विक्रम संवत (प्रारंभ 57 ई० पू०) पहले मालव-संवत के नाम से प्रसिद्ध था। चंद्रगुप्त विक्रमादित्य ने अपनी मालव विजय के पश्चात् इसका नाम विक्रम संवत् कर दिया। उत्तरगुप्तकाल में सप्त मालव-जनपदों का उल्लेख मिलता है। एपिग्राफिका इंडिका जिल्द 5, पृ० 229 के अभिलेख में विक्रमादित्य (?) के सामंत दंडनायक अनंतपाल की सप्तमालवों पर विजय का वर्णन है। श्री रायचौधरी के अनुसार ये जनपद इस प्रकार थे—(1) पश्चिमी घाट पर स्थित कनारा प्रदेश जहां के निवासी शिवाजी के समय में मावली कहलाते थे (2) मालवक-आहार जिसका उल्लेख वलभि दानपट्टों में है तथा जिसे युवानच्वांग ने मोलापो कहा है। यहां उसके समय में मैत्रेयकों का राज्य था (3) अवंतिका, यहां छठी शती ई० में कलचुरियों का राज्य था (4) पूर्वमालव या भीलसा का परिवर्ती क्षेत्र (5) प्रयाग, कौशांबी तथा फतहपुर (उ० प्र०) का प्रदेश। तारानाथ (अनुवाद, शीफनर पृ० 251) ने इस मालव का उल्लेख किया है। हर्षचरित में राज्यश्री के पति की हत्या करने वाले व्यक्ति को मालवनरेश कहा गया है। शायद यह प्रयाग के समीपस्थ देश का ही नाम था (दे० स्मिथ० पृ० 350)। (6) पूर्वराजस्थान का एक भाग और (7) सतलज के पूर्व में स्थित प्रदेश जो हिमालय तक विस्तृत था। श्रीमद्भागवत में मालवों का संबंध आबू पहाड़ से बतलाया गया है और अवंति को उससे भिन्न कहा गया है—'सौराष्ट्राव त्याभीराश्च शूरा अर्बुद मालवा, व्रात्या द्विजा भविष्यंति शूद्रप्रायाजनाधिपा'। राजशेखर कृत विद्धभंजिकाशालभंजिका (अंक 4) में भी मालव और अवंतिनरेशों का अलग-अलग उल्लेख है।

मालवनगर दे० नगर (2)

माला

जिला छपरा (बिहार) का परिवर्ती प्रदेश (महा० सभा० 29)

मालिनी

(1) अभिज्ञानशाकुंतल में वर्णित नदी जिसके तट पर शकुंतला के पिता कण्व का आश्रम स्थित था—'कार्या सैकतलीनहंसमिथुना स्रोतोवहा मालिनी, पादास्तामभितो निषण्णहरिणा गौरीगुरोः पावनाः, शाखालम्बितवल्कलस्य च तरोर्निर्मातुमिच्छाम्यध, शृंगे कृष्णमृगस्य वामनयनं कंडूयमानां मृगीम्' (अंक 5)। महाभारत, आदि० 72,10 में शकुंतला का मेनका द्वारा मालिनी नदी के तट पर उत्सर्जित किए जाने का उल्लेख है—'प्रस्थ हिमवतो रम्ये मालिनीमभितोनदीम, जातमुत्सृज्य तं गर्भं मेनका मालिनीमनु' महा०, आदि० 72,10। महाभारत और अभिज्ञानशाकुंतल दोनों ही की कथा में मालिनी को हिमालय के समीप बताया गया है। मालिनी का अभिज्ञान गढ़वाल और बिजनौर के जिला में प्रवाहित होने वाली वर्तमान मालन नदी से किया गया है (दे० ग्रंथकार का लेख—माडर्न रिव्यू, अक्तूबर 1949)। यह नदी गढ़वाल के पहाड़ों से निकल कर बिजनौर से 6 मील उत्तर की ओर गंगा में रावलीघाट नामक स्थान पर मिलती है। कण्वाश्रम की स्थिति जिला बिजनौर में स्थित मंडावर नामक स्थान पर मानी गई है जो मालन के निकट बसा है। (दे० मंडावर, शक्रावतार, रावली घाट)

(2)=चंपा (1)

मालेगांव (कंदहार तालुका, जिला नंदेड़, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर एक अतिप्राचीन वार्षिक मेला लगता है जिसकी परंपरा ककातीय नरेश माधववर्मन् द्वारा प्रारंभ की गई थी। माधववर्मन् का पशुओं विशेषकर अश्वों की विविध जातियों का अच्छा ज्ञान था और उनकी नस्लें सुधारने का भी शौक था। इस मेले में दूर दूर से घोड़े आदि आते थे।

माल्यवती

वाल्मीकि रामायण 2,56,3। के निम्न वर्णन के अनुसार यह नदी चित्रकूट के निकट बहने वाली मंदाकिनी जान पड़ती है—'सुरम्यमासाद्य तु चित्रकूटं नदीं च तां माल्यवतीं सुतीर्थाम्, ननंद हृष्टो मृगपक्षिजुष्टां जहौ च दुःखं पुरविप्रवासात्'। कालिदास ने चित्रकूट के निकट बहने वाली मंदाकिनी को भूमि के गले में पड़ी हुई मौक्तिक माला के समान बताया है। (दे० मंदाकिनी)

माल्यवान

(1) किष्किंधा के निकट एक पर्वत जहां श्रीराम और लक्ष्मण ने सीता हरण के पश्चात वर्षाकाल व्यतीत किया था—'तथा स बालिन हत्वा सुग्रीवमभिषिच्य च, वसन माल्यवत पृष्ठे रामोलक्ष्मणमब्रवीत' वाल्मीकि० किष्किंधा, 27 1 । रघुवंश 13-26 में इस पर्वत पर श्रीराम के प्रथम वर्षा प्रवास का सुंदर वर्णन किया गया है—'एतद गिरेर्माल्यवत पुरस्तादाविर्भवत्यम्बरलेखि शृंगम, नव पयो यत्र घनैर्मया च त्वद्विप्रयोगाश्रुसम विसृष्टम'। यह पर्वत किष्किंधा (हंपी, मैसूर) में विरूपाक्ष मंदिर से 4 मील दूर है। इसके निकट ही प्रस्रवणगिरि है। (दे० किष्किंधा, ऋष्यमूक)

(2) हिमालय पर्वत-श्रेणी के उत्तरी भाग में स्थित एक पर्वत। महाभारत, सभा० 28 दाक्षिणात्य पाठ में इसका इस प्रकार उल्लेख है—'त माल्यवत शैलेंद्र समतिक्रम्य पांडव भद्राश्व प्रविवेशाथ वर्षं स्वर्गोपम शुभम'। इस पर्वत का वर्णन शैलोदा नदी के पश्चात है जिसका अभिज्ञान खोतन नदी से किया गया है। अत माल्यवान् इस नदी के उत्तर में स्थित शैल श्रेणी का नाम जान पड़ता है।

मावल=मामाल (जिला पूना, महाराष्ट्र)

कार्ली का परिवर्ती प्रदेश। कार्ली अभिलेख में शातवाहन नरेश गौतमीपुत्र (द्वितीय शती ई०) के किसी अमात्य का शासन यहां बताया गया है। शिवाजी के समय में उनके वीर मावली सैनिक इसी स्थान से संबंधित थे। इन्हीं में तानाजी मालसुरे भी थे। मावल का वास्तविक नाम मालव था। (दे० मालव)

माशल्ली (जिला कोलर, मैसूर)

इस स्थान से नवपाषाणयुगीन प्रस्तर-उपकरण प्राप्त हुए थे जो मृद्भांडों के खंडों के साथ मिले थे। ये बर्तन कुंभकार के चाक से बने हुए हैं जिनके कारण विद्वानों ने इन्हें नवपाषाणयुगीन माना है।

मासगी=मासकी

मासकी (मैसूर)

अशोक के लघु शिलालेख के यहां मिलने के कारण यह स्थान प्रसिद्ध है। अशोक के समय यह स्थान दक्षिणापथ के अंतर्गत तथा अशोक के साम्राज्य की दक्षिणी सीमा पर था। मासकी के अभिलेख की विशेष बात यह है कि उसमें अशोक के अन्य अभिलेखों के विपरीत मौर्यसम्राट् का नाम देवानप्रिय (=देवानांप्रिय) के अतिरिक्त अशोक भी दिया हुआ है जिससे देवानांप्रिय उपाधि वाले

(तथा अशोक नाम से रहित) भारत के अन्य सभी अभिलेख सम्राट अशोक के सिद्ध हो जाते हैं। मासकी के अतिरिक्त हाल ही में गुजर्रा नामक स्थान पर मिले अभिलेख में भी अशोक का नाम दिया हुआ है। अशोक के शिलालेख के अतिरिक्त, मासकी से 200-300 ई० की, स्फटिक निर्मित बुद्ध के शिर की प्रतिमा भी उल्लेखनीय है। अंतिम शातवाहन नरेश सम्राट् गौतमीपुत्र स्वामी श्रीयज्ञ शातकर्णी (लगभग 186 ई०) के समय के, सिक्के भी यहां से प्राप्त हुए हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि मौर्यकाल में दक्षिणापथ की राजधानी सुवर्णगिरि जिसका उल्लेख बौद्ध साहित्य में है, मासकी के पास ही थी।

मासी (तहसील रानीखेत, जिला अल्मोड़ा, उ० प्र०)

बैराट से 4 मील दूर है। यहां नाथेश्वर, रामपादुका तथा इंद्रेश्वर के प्राचीन मंदिर स्थित हैं। यह स्थान रामगंगा के निकट है। यहां सोमनाथ का प्रसिद्ध मेला लगता है।

माहिष=माहिषक

मैसूर का प्राचीन नाम 'कारस्कारन् माहिष्कान कुरंडान् केरलास्तथा, कर्कोटकान् वीरकांश्च दुर्धर्माश्च विवर्जयेत' महा० कर्ण० 44,43। माहिषक देश को महाभारत काल में विवर्जनीय समझा जाता था। विष्णुपुराण 4,24,65 में माहिष देश का उल्लेख है—'*कलिंगमाहिषमहेंद्रभौमान गुहा भोक्ष्यन्ति*'। यह देश माहिष्मती भी हो सकता है। (दे० मैसूर)

माहिष्मती

चेदि जनपद की राजधानी (पाली माहिस्सती) जो नर्मदा के तट पर स्थित थी। इसका अभिज्ञान जिला इंदौर (म० प्र०) में स्थित महेश्वर नामक स्थान से किया गया है जो पश्चिम रेलवे के अजमेर-खंडवा मार्ग पर बडवाहा स्टेशन से 35 मील दूर है। महाभारत के समय यहां राजा नील का राज्य था जिसे सहदेव ने युद्ध में परास्त किया था—'*ततो रत्नान्युपादाय पुरीं माहिष्मतीं ययौ। तत्र नीलेन राज्ञा स चक्रे युद्धं नरर्षभ*'—महा० सभा० 32,21। राजा नील महाभारत के युद्ध में कौरवों की ओर से लड़ता हुआ मारा गया था। बौद्ध साहित्य में माहिष्मती को दक्षिण अवंतिजनपद का मुख्य नगर बताया गया है। बुद्धकाल में यह नगरी समृद्धिशाली थी तथा व्यापारिक केंद्र के रूप में विख्यात थी। तत्पश्चात उज्जयिनी की प्रतिष्ठा बढ़ने के साथ साथ इस नगरी का गौरव कम होता गया। फिर भी गुप्तकाल में 5वीं शती तक माहिष्मती का बराबर उल्लेख मिलता है। कालिदास ने रघुवंश 6,43 में इंदुमती के स्वयंवर के प्रसंग में नर्मदा-तट पर स्थिति माहिष्मती का वर्णन किया है और यहां के राजा का नाम प्रतीप

बताया है—'अस्याकलक्ष्मीभवदोघबाहो माहिष्मतीवप्रनितबकाचीम प्रासाद-*जालैर्जलवेणि रम्या रेवां यदि प्रेक्षितुमस्तिकाम*'। इस उल्लेख मे माहिष्मती नगरी के परकोटे के नीचे काची या मेखला की भाति सुशोभित नमदा का सुदर वणन है। माहिष्मती नरेश को कालिदास ने अनूपराज भी कहा है (रघु० 6,37) जिससे ज्ञात होता है कि कालिदास के समय मे माहिष्मती का प्रदेश नमदा के तट के निकट होने के कारण अनूप (जल के निकट स्थित) कहलाता था। पौराणिक कथाओ मे माहिष्मती को हैहयवशीय कातवीयअजुन अथवा सहस्रबाहु की राजधानी बताया गया है। किंवदती है कि इसने अपनी सहस्र भुजाओ से नमदा का प्रवाह रोक दिया था। चीनी यात्री युवानच्वाग, 640 ई० के लगभग इस स्थान पर आया था। उसके लेख के अनुसार उस समय माहिष्मती मे एक *ब्राह्मण राजा राज्य करता था।* अनुश्रुति है कि शकराचाय से शास्त्राथ करने वाले मडन मिश्र तथा उनकी पत्नी भारती माहिष्मती के ही निवासी थे। कहा जाता है कि महेश्वर के निकट मडलेश्वर नामक बस्ती मडन मिश्र के नाम पर ही विख्यात है। माहिष्मती मे मडन मिश्र के समय सस्कृत विद्या का अभूतपूव केंद्र था। महेश्वर मे इदौर की महारानी अहिल्याबाई ने नमदा क उत्तरी तट पर अनेक घाट बनवाए थे जो आज भी वतमान ह। यह धमप्राण रानी 1767 के पश्चात इदौर छोडकर प्राय इसी पवित्र स्थल पर रहने लगी थी। नमदा के तट पर अहिल्याबाई तथा होलकर नरेशो की कई छतरिया बनी हैं। ये वास्तुकला की दृष्टि से प्राचीन हिंदू मदिरो के स्थापत्य की अनुकृति हैं। भूतपूव इदौर *रियासत की आद्य राजधानी यही थी।* एक पौराणिक अनुश्रुति मे कहा गया है कि माहिष्मती का बसाने वाला महिष्मान् नामक चद्रवशी नरेश था। सहस्रबाहु इन्ही के वश म हुआ था। महेश्वरी नामक नदी जो माहिष्मती अथवा महिष्मान् के नाम पर प्रसिद्ध है, महेश्वर से कुछ ही दूर पर नमदा मे मिलती है। हरिवश-पुराण 7,19 की टीका मे नीलकठ ने माहिष्मती की स्थिति विंध्य और ऋक्ष-पवतो के बीच म विंध्य के उत्तर मे और ऋक्ष के दक्षिण म बताई है।

माहिस्सती दे० माहिष्मती

माही=मही

माहुर (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

यह यवतमाल के निकट प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान है। दक्षिण के प्राचीनतम मदिरो मे एक, रेणुकादेवी का मदिर यहा स्थित है। रेणुका परशुराम की माता और जमदग्नि की पत्नी थी। जमदग्नि की समाधि माहुर मे स्थित है। माहुर मे दत्तात्रेय सप्रदाय का केंद्र भी है। इसे मध्यकालीन

मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ सप्रदाय के नागपथी गोसाइयो और गुरुचरित्र ग्रथ के लेखक ने काफी प्रोत्साहन दिया था। कहा जाता है कि दत्तात्रेय भगवान का निवास स्थान यही है। महाराष्ट्र के महानुभाव सप्रदाय का भी जिसका 13वी शती मे काफी प्रचार हो चुका था, माहुर मे केंद्र माना जाता है। देवगिरि के यादव नरेशो के शासनकाल म तथा उसके पश्चात् महानुभाव सप्रदाय के महाराष्ट्र मतो तथा कवियो से सवध होने के कारण माहुर ने प्रसिद्धि प्राप्त की थी। आज भी महानुभाव सप्रदाय का मठ यहा स्थित है। यह 184 फुट लबा चौडा तथा 54 फुट ऊचा है। 14वी शती मे उत्तर भारत के गोसाइयो ने यहा पदार्पण किया और गोस्वामी सिद्धनाथ ने यहा पहला गोसाइ मठ स्थापित किया। माहुर मे शिखर नामक दत्तात्रेय (जमदग्नि के गुरु) का विशाल मदिर है जिसका प्रबध गोसाइ जागीरदारो क हाथ मे ह। 1696 ई० के, औरगजेब द्वारा प्रदत्त कुछ पट्टे गोसाइयो के पास आज भी सुरक्षित है। माहुर मे उपर्युक्त मदिरो के अतिरिक्त एक प्राचीन दुर्ग भी है। इस सभवत यादव-नरेशो न बनवाया था किंतु 1420 ई० में यह बहमनी सुलतानो के हाथ में पड गया। बरार की इमादशाही सल्तनत के स्थापित होने पर माहुर इसका मुख्य सैनिक केंद्र बन गया। 1592 ई० मे बरार प्रात के साथ ही माहुर मुगलराज्य में विलीन हो गया। स्थानीय किंवदती के अनुसार माहुर में उस महल के खडहर आज भी हैं जहा शाहजादा खुरम जहागीर की सेना से बचने के लिए छिप गया था।

माहुली (महाराष्ट्र)

– इस स्थान पर शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास पर्याप्त समय तक रहे थे। यही दास पचायतन के सदस्यो (जयराम, रगनाथ, आनद, केशव तथा समर्थ) का मुख्य केंद्र था। इन्ही लोगो क प्रयत्न से महाराष्ट्र मे 17वी शती म राष्ट्रीय जागृति की लहर आयी थी जिसके कारण शिवाजी को महाराष्ट्र मे स्वतत्र राज्य स्थापित करने मे सफलता मिली थी।

मिगदाय=मृगदाव (दे० सारनाथ)

मितावली (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

पढ़ावली से 2 कील पूर्व मे है। यहा भी पढावली की भांति ही अनेक मदिर हैं जो मध्ययुगीन हैं। इनमे एकोत्तरसो नामक महादेव का मदिर प्रसिद्ध है।

मित्रवन

(1)=मुलतान

(2)=कोणार्क

मिथिला (बिहार)

बिहार नेपाल सीमा पर विदेह (तिरहुत) का प्रदेश जो कोसी और गंडकी नदियों के बीच में स्थित है। इस प्रदेश की प्राचीन राजधानी जनकपुर में थी। रामायण काल में यह जनपद बहुत प्रसिद्ध था तथा सीता के पिता जनक का राज्य इसी प्रदेश में था। मिथिला जनकपुर को भी कहते थे—(दे० वाल्मीकि रामायण, बाल० 48 49—'ततः परमसत्कारं सुमतेः प्राप्य राघवौ, उष्यतत्र निशामेकां जग्मतुः मिथिलां ततः। तां दृष्ट्वा मुनयः सर्वे जनकस्य पुरीं शुभाम साधुसाध्विति शंसन्तो मिथिलां समपूजयन्। मिथिलोपवने तत्र आश्रमं दृश्य राघव, पुराणं निर्जनं रम्यं प्रपच्छ मुनिपुंगवम्'। अहल्याश्रम मिथिला के संनिकट स्थित था। वाल्मीकि रामायण, 1,71,3 के अनुसार मिथिला के राजवंश का संस्थापक निमि था। मिथि इसके पुत्र थे और मिथि के पुत्र जनक। इन्हीं के नामराशि वंशज सीता के पिता जनक थे। वायुपुराण (88, 7 8) और विष्णु पुराण (4, 5, 1) में निमि को विदेह का राजा कहा है तथा उसे इक्ष्वाकुवंशी माना है (दे० विदेह)। मिथिला राजा मिथि के नाम पर प्रसिद्ध हुई। *विष्णुपुराण 4, 13, 93* में मिथिलावन का उल्लेख है—'सा च वडवाशतयोजन प्रमाणमागमतीता पुनरपि वाह्यमाना मिथिलावनोद्देशे प्राणानुत्ससर्ज'। विष्णुपुराण 4, 13, 107 में मिथिला को विदेहनगरी कहा गया है। मज्झिमनिकाय 2, 74, 83 और निमिजातक में मिथिला का सर्वप्रथम राजा मखादेव बताया गया है। जातक सं० 539 में मिथिला के महाजनक नामक राजा का उल्लेख है। महाभारत, शांति० 219 दाक्षिणात्य पाठ में मिथिला के जनक की निम्न दार्शनिक उक्तियों का उल्लेख है— मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे दह्यति किंचन'। वास्तव में जनक नाम के राजाओं का वंश मिथिला का सर्वप्रसिद्ध राजवंश था। महाभारत, सभा० 30, 13 में भीमसेन द्वारा विदेहराज जनक की पराजय का वर्णन है। शांति 218, 1 में मिथिलाधिप जनक का उल्लेख है— केनवृत्तेन वृत्तज्ञ जनको मिथिलाधिप'। जैन ग्रंथ विविधकल्प सूत्र में इस नगरी का जैन तीर्थ के रूप में वर्णन है। इस ग्रंथ से निम्न सूचना मिलती है इसका एक अन्य नाम जगती भी था। इसके निकट ही कनकपुर नामक नगर स्थित था। मल्लिनाथ और नमिनाथ दोनों ही तीर्थंकरों ने जैन धर्म में यहीं दीक्षा ली थी और यहीं उन्हें कैवल्य ज्ञान की

प्राप्ति हुई थी। यहीं अकपित का जन्म हुआ था। मिथिला मे गगा और गडकी का सगम है। महावीर ने यहा निवास किया था तथा अपने परिभ्रमण में यहा आत-जात थे। जिस स्थान पर राम और सीता का विवाह हुआ था वह शाकल्य कुड कहलाता था। जैन सूत्र प्रज्ञापणा म मिथिला को मिलिलवी कहा है।

(2) (बर्मा) ब्रह्मदेश का प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक नगर जिसका नाम प्राचीन विहार की प्रसिद्ध नगरी तथा जनपद मिथिला के नाम पर था। सभवत इसको बसाने वाले भारतीयो का सबध मूल मिथिला से था या उन्होंने अपने मातृदेश भारत के प्रमुख जनपदो के नाम पर विदेशी उपनवेशो के नाम रखने की प्रचलित प्रथा के अनुसार ही इस स्थान का नामकरण किया होगा।

मिनगर=मिन्नगल

लेटिन के पेरिप्लस नामक यात्रावृत (प्रथम शती ई०) मे इस भारतीय नगर का नामोल्लेख है। इस मेम्बारस (Membarus) नामक राजा की राजधानी बताया गया है। कुछ विद्वानो के मत म यह नगर मदसौर या दशपुर (म० प्र०) है और मेम्बारस, क्षहरात नरेश नहपान। फ्लीट ने मिन्नगर का अभिज्ञान दोहद से किया है (जनल ऑव दि ऐशियाटिक सोसाइटी, 1912 पृ० 708)। किंतु पेरिप्लस मे इस नगर की स्थिति का जो विवरण है (बेरीगाजा या भृगुकच्छ से 2 पूव और 2 उत्तर) उससे पूर्वोक्त अभिज्ञान ही ठीक जान पडता है।

मियानी (सिंध, प० पाकि०)

हैदराबाद से 6 मील उत्तर की ओर इस स्थान पर 1845 ई० मे कुटिलनीतिज्ञ जनरल नपियर ने सिंध के अमीरो पर अकारण ही आक्रमण कर उन्हें परास्त किया और सिंध को अंग्रेजी राज्य मे मिला लिया। मियानी के युद्ध के पश्चात् नपियर ने गवनर जनरल को अपनी जीत की सूचना इन इतिहासप्रसिद्ध शब्दो मे भेजी थी=Peccavi I have Sinned (Sind)

मिलिनवी=जैन सूत्र प्रज्ञापणा म उल्लिखित मिथिला का प्राकृत रूपातर।

मिश्रक=मिसरिख

मिश्रक पवत (लका)

महावश 13, 18 20। वतमान मिहिंतले की पहाडी से इसका अभिज्ञान किया गया है।

मिश्ररिख (जिला सीतापुर, उ० प्र०)

वर्तमान नीमसार से 6 मील दूर प्राचीन तीर्थ नेमिषारण्य है जिसे पौराणिक किंवदंती में महर्षि दधीचि की बलिदान-स्थली माना जाता है। महाभारत वन 83, 91 में इसका उल्लेख है—'ततो गच्छेत राजेंद्र मिश्रक तीर्थमुत्तमम्, तत्र तीर्थानि राजेंद्रमिश्रितानि महात्मना'। इसके नामकरण का कारण (इस श्लोक के अनुसार) यहां सभी तीर्थों का एकत्र सम्मिश्रण है। मिसरिख वास्तव में नैमिषारण्य क्षेत्र ही का एक भाग है जहां सूतजी ने शौनकादि ऋषीश्वरों को महाभारत तथा पुराणों की कथा सुनाई थी।

मिहरपुरी दे० महरौली

मीरठ (जिला मेरठ, उ० प्र०)

मेरठ के निकट एक ग्राम जहां पूर्वकाल में अशोक का एक प्रस्तर-स्तंभ स्थित था। इस स्तंभ को दिल्ली का सुलतान फीरोज तुगलक (1351-1837) दिल्ली ले आया था जहां पहाड़ी (Ridge) पर आज वह भी स्थित है। इस स्तंभ पर अशोक के 1-6 स्तंभ अभिलेख उत्कीर्ण हैं।

मीरनपुर कटरा (रुहेलखंड, उ० प्र०)

इस स्थान पर, जो शाहजहांपुर—बरेली रेलपथ पर स्थित है रुहेलों और अवध के नवाब में घोर युद्ध हुआ था (1773 ई०)। वारेन हेस्टिंग्ज़ ने अवध की सहायता की जिसके फलस्वरूप रुहेलों की भारी पराजय हुई। इस युद्ध में भाग लेने के कारण वारेन हेस्टिंग्ज़ की, जो ईस्ट इंडिया कंपनी की ओर से बंगाल में गवर्नर-जनरल नियुक्त था, इंगलैंड में बड़ी निंदा हुई थी। लड़ाई का मैदान मीरनपुर कटरा स्टेशन के निकट ही स्थित है।

मुंगेर (बिहार)

महाभारत में इसे मोदागिरि कहा गया है—'अथ मोदागिरौ चैव राजानं बलवत्तरम् पांडवो बाहुवीर्येण निजधान महामृधे' वन० 30, 21 अर्थात् पूर्व दिशा की दिग्विजय यात्रा में मगध पहुंचने के उपरांत मोदागिरि के अत्यंत बलवान नरेश को भुजाबल से युद्ध में मार गिराया। इसका वर्णन गिरिव्रज (=राजगीर) के पश्चात् है तथा इसके उल्लेख के पहले भीम की कर्ण पर विजय का वर्णन है। किंवदंती के अनुसार मुंगेर की नींव डालनेवाला चंद्र नामक राजा था। मुंगेर कई पहाड़ियों से घिरा हुआ नगर है। कर्णचूर की पहाड़ी महाभारत के कर्ण से संबंधित बताई जाती है। महाभारत के उपर्युक्त प्रसंग में भी कर्ण और भीम का युद्ध मुंगेर के उल्लेख से ठीक पूर्व वर्णित है (दे० कर्णगढ़)। नगर के निकट सीता-कुंड नामक स्थान है जहां कहा जाता है कि

सीता अपने दूसरे वनवासकाल में अग्नि-प्रवेश के लिए उतरी थी। चडी स्थान भी प्राचीन स्थल है। एक किंवदंती म मुगेर का वास्तविक नाम मुनिगृह भी बताया जाता है। कहते हैं यही पहाडा पर मुदगल मुनि का निवास स्थान होने से ही यह स्थान मुद्गलनगरी कहलाता था। किंतु इसका सबध महाभारत के मोदागिरि से जोडना अधिक समीचीन है। कनिंघम क मत मे 7 वी शती मे युवानच्वाग न इस स्थान कोलोहुशनिनीलो (लावणनील) कहा है। 10 वी शतीम पालवशी देवपाल का यहा राज था जैसा कि उसके ताम्रपट्ट लेख म वर्णित है। मुगेर मे मुसलमान बादशाहो ने भी काफी समय तक अपना मुख्य प्रशासन केंद्र बनाया था जिसक फलस्वरूप यहा उस समय के कई अवशेष हैं। मुगलो के समय का एक किला भी उल्लेखनीय है। यह गगा के तट पर बना है। इसके उत्तर पश्चिम के कोने मे कष्टतारिणी नामक गगा का घाट है जहा 10 वी शता का एक अभिलेख है। किले से आधा मील पर 'मान पत्थर' है जो गगा के अदर एक चट्टान है। कहा जाता है कि इस पर श्रीकृष्ण के पदचिह्न बने हैं। किले क पश्चिम की ओर मुल्ला सईद का मकबरा है। ये अशरफ नाम से फारसी मे कविता लिखते थे और औरगजेब की पुत्री जेबुन्निसा के काव्य गुरु भी थे। इनका मूल निवास स्थान केस्पियन सागर के पास मजनदारन नामक स्थान था। अकबर के समय म टोडरमल ने बगाल के विद्रोहियो को दबाने के लिए अभियान का मुख्य केंद्र मुगेर म ही बनाया था। शाहजहा के पुत्र शाहशुजा ने उत्तराधिकार युद्ध के समय इस स्थान मे दो बार शरण ली थी। कुछ विद्वानो का मत है कि मुगेर का एक नाम हिरण्यपर्वत भी है जो सातवी शती या उसके निकटवर्ती काल म प्रचलित था। (द० बिहार दि हार्ट आफ इडिया पृ० 59)

मुजग्राम द० रम्य ग्राम

मुजपृष्ठ

'मुजपृष्ठ जगामाथ पितृदेवर्षिपूजितम् तत्र शृग हिमवतो मेरो कनकपर्वते। यत्र मुजावटे रामा जटाहरणमादिशत। तदा प्रभृति राजेंद्र ऋषिभि सशितव्रत, मुजपृष्ठ इति प्रोक्त स देशो रुद्रसेवित' महा० शांति 122,2-3-4 अर्थात् व अगदेश के राजा वसुहोम मुजपृष्ठ नामक तीर्थ म आए। वह स्थान स्वर्णमय पर्वत सुमेरु के समीप हिमालय क शिखर पर है, जहा मुजावट मे परशुराम न अपनी जटाए बाधने का आदेश दिया था। तभी से कठोर व्रती ऋषियो न उस रुद्रसेवित प्रदेश को मुजपृष्ठ नाम दे दिया। मुजावट या मुजपृष्ठ वैदिक मूजवत् का रूपातरण प्रतीत होता है।

मडस्थल (राजस्थान)

आबू पवत के नीचे स्थित प्राचीन जन तीथ। तीथमाला चैत्यवदन म इस तीर्थ का उल्लेख इस प्रकार है—'वदनदसमे समीधवलके मर्जाद मुडस्थले'।

मुढाल (ज़िला सहारनपुर, उ० प्र०)

हरद्वार से 6 मील पूर्व। इसका वर्णन जनरल कनिघम ने 1866 ई० म किया था। उस समय यहा एक देवालय था जो बीस फुट चौडे चबूतरे पर अवस्थित था। इसके चतुर्दिक एक परिखा थी। चारो कोनो पर परिखा की समाप्ति शीर्षों के रूप म होती थी। दक्षिण मे कलशवाहिनी की मूर्ति थी। पश्चिम म सिंह और उत्तर मे मेष की मूर्तिया थी। पूव का कोना खडितावस्था म था। देवालय के पास जगल मे अनेक शिलाए बिखरी हुई थी जो कभी स्तभो के खड सिरदल आदि रही होगी। अब इस देवालय के स्थान पर वनविभाग का विश्रामगह है जो उसी के पत्थरो से निर्मित है। इसम मदिर की कई मूर्तियाँ रखी हैं। इस स्थान से चार मील पूव की ओर एक प्राचीन नगर के अवशेष हैं जिसका वतमान नाम पाडुवाला है। कनिघम ने इस स्थान को ब्रह्मपुर राज्य की राजधानी माना है जहां चीनी यात्री युवानच्वाग आया था। (दे० पुरातत्त्व विभाग की रिपोर्ट 1891)

मुकुटवधन चत्य दे० कुशीनगर

मुक्तवेणी

यह हुगली (प० वगाल) के उत्तर की ओर स्थित है जहा तीन नदिया एक साथ मिलती हैं और फिर अलग हो जाती है। सप्तर्षि का मदिर त्रिवेणी के निकट है।

मुक्ता

विष्णुपुराण 2, 4, 28 मे उल्लिखित शाल्मल द्वीप की एक नदी-'योनिस्तोया वितृष्णा च चद्रा मुक्ता विमोचनी, निवृत्ति सप्तमी तासा स्मृतास्ता पापशातिदा'।

मुक्तागिरि (गिरार, महाराष्ट्र)

एलिचपुर से 12 मील दूर जगल के बीच इस पहाडी मे अनेक गुफा मदिर हैं जिनमे प्राचीन जैन मूर्तिया अवस्थित हैं। गुफाओ के निकट 52 जैन मदिर बने हैं। जैन इस स्थान को पवित्र मानते हैं।

मुक्तिनाथ (नेपाल)

समुद्रतट से 12000 फुट की ऊचाई पर स्थित प्राचीन हिंदू तीर्थ है जिसका महत्त्व पशुपतिनाथ के समान ही समझा जाता है। तिब्बत के बौद्ध भी इस

स्थान को पवित्र मानते हैं और इसे छूमिकग्यासा कहते हैं। कृष्ण-गडकी नदी मुक्तिनाथ की हिमाच्छादित पर्वतमाला से निकलती है और मुक्तिनाथ के पास देविका तथा चक्रा नामक नदियों से मिल जाती हैं। मुक्तिनाथ कठमडू से प्राय 140 मील दूर है। भारत से यहाँ पहुँचने के लिए नौतनवा या बुटवल होकर मार्ग जाता है।

मुखलिंगम् (जिला गजम, उडीसा)

प्राचीन कलिंगनगर। यहाँ उडीसा की प्राचीनतम राजधानी थी। 10 वी-11 वी शती ई० मे भी गगवशीय नरेशो मे अनतवमन चोडगग (1076-1147 ई०) सबसे अधिक प्रसिद्ध था। इसी ने पुरी का प्रसिद्ध जगन्नाथ मदिर बनवाया था। मुखलिंगम् वशधारा नदी के तट पर स्थित है। (दे० कलिंगनगर)

मुचकुद=बिचकुद (जिला नदेड, महाराष्ट्र)

मुचकुद ऋषियो का पुण्यस्थान।

मुजरिस दे० क्रगनोर

मुट्टिमडल (बर्मा)

दक्षिण ब्रह्मा मे स्थित एक प्राचीन भारतीय उपनिवेश जो वतमान मतबान के निकट था।

मुडवदरी (जिला कनारा, मैसूर)

इस स्थान पर 15 वी-16वी शती का शिखर सहित वर्गाकार सुदर मदिर है जो पूवगुप्तकालीन मदिरो की परपरा मे है। छत सपाट पत्थरो से पटी है किंतु पत्थरो को ढलवा रखा गया है जो इस प्रदेश मे होने वाली अधिक वर्षा की दृष्टि से आवश्यक था। मुडवदरी तथा कनारा जिले के अन्य प्राचीन मदिरो मे गुप्तकालीन मदिरो की भाँति ही पटे हुए प्रदक्षिणापथ तथा गर्भगृह के सम्मुख सभामडप स्थित हैं। यह मदिर इस बात का प्रमाण है कि गुप्त-कालीन मदिरो की परपरा उत्तरी भारत मे तो विदेशी प्रभावो के कारण शीघ्र ही नष्ट हो गई किंतु दक्षिण मे, 15 वी-16 वी शती तक प्रचलित रही। यह स्थान प्राचीन काल मे जैन विद्यार्थियो का केंद्र था। आज भी प्राचीन जैन ग्रथो की (जैसे धवलादिसिद्धान्त ग्रथ) यहा प्राचीनतम प्रतिया सुरक्षित हैं। यहाँ 22 जैन मदिर हैं जिनमे चद्रप्रभु का मदिर विशाल एव प्राचीन है। चद्रप्रभु की मूर्ति पचधातु की बनी है और अति भव्य है। इस मदिर का निर्माण 1429 ई० मे 10 करोड रुपये की लागत से हुआ था।

इसी मंदिर के सहस्रकूट जिनालय में धातु की 1008 प्रतिमाएं हैं। मुडबदरी वेणूर से 12 मील दूर है।

मुडीकेडी

कुर्ग की राजधानी मरकरा का प्राचीन नाम अर्थ है स्वच्छग्राम।

मुढेरा (गुजरात)

प्राचीन सूर्य मंदिर के विशाल खंडहर यहां स्थित हैं जिनसे इस मंदिर की उत्कृष्ट कला का कुछ आभास मिलता है। इस प्राचीन मंदिर को मध्यकाल में मुसलमान आक्रमणकारियों ने ध्वस्त कर दिया था।

मुद्गल (जिला रायचूर, मैसूर)

1250 ई० में देवगिरि के प्रसिद्ध यादव नरेशों का मुख्य नगर। कालक्रम में वारंगल, बहमनीराज्य और बीजापुर रियासत के मुगल साम्राज्य में मिलाए जाने पर मुद्गल भी इसी साम्राज्य में विलीन हो गया। रोमन केथलिकों का एक उपनिवेश मुद्गल में स्थित है जो गोआ से सेंटजेवियर के भेजे हुए प्रचारक द्वारा ईसाई बना लिए गए थे। यहां का गिर्जा काफी प्राचीन है और उसमें मेडोना का एक प्राचीन चित्र है। दक्षिण भारत की एक प्रख्यात प्रेमगाथा की नायिका पारथल की जन्मभूमि मुद्गल ही कही जाती है। सुंदरी पारथल मुदगल के एक स्वर्णकार की पुत्री थी।

मुनि

विष्णुपुराण 2,4,48 के अनुसार क्रौंचद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा द्युतिमान् के पुत्र मुनि के नाम पर प्रसिद्ध है।

मुरंड दे० कुरंड

मुर

'मुरं च नरकं चैव शास्ति यो यवनाधिपः, अपर्यन्तबलो राजा प्रतीच्यां वरुणो यथा। भगदत्तो महाराज वृद्धस्तवपितु सखा'—महा० सभा० 14,14 15 महाभारतकाल में यवनाधिप भगदत्त का मुर तथा नरक प्रदेश पर राज्य था। नरक शायद नरकासुर के नाम से प्रसिद्ध था और इसकी स्थिति कामरूप (असम) में माननी चाहिए। मुरदेश को इसके पार्श्व में स्थित समझना चाहिए। भगदत्त को उपर्युक्त प्रसंग में जरासंध के अधीन कहा गया है। जरासंध मगध का राजा था और उसका प्रभाव अवश्य ही असम के इन देशों तक विस्तृत रहा होगा।

मुरचीपत्तन

'कृत्स्नं कोलगिरिं चैव मुरचीपत्तनं तथा द्वीपं ताम्राह्वयं चैव पर्वतं रामकं

तथा' — महा० सभा० 31,68। इसे सहदेव ने दक्षिण की विजय-यात्रा में विजित किया था। महाभारत की कई प्रतियों में मुरचीपत्तन का पाठांतर मुरभीपत्तन है। मुरचीपत्तन का उल्लेख वाल्मीकि रामायण किष्किंधा० 42,13 में भी है— 'वेलातल निविष्टेसु पर्वतेषु वनेषु च मुरचीपत्तनं चैव रम्यं चैव जटापुरम्'। मुरचीपत्तन रोमन लेखकों का मुज़िरिस है। (दे० क्रगनोर, तिरुवाचीकुलम)

मुरल

संभवतः केरल प्रदेश का प्राचीन नाम है। कलचुरि राजा कर्णदेव द्वारा विजित देशों में मुरल भी था जैसा कि अल्हणदेवी के भेड़ाघाट अभिलेख से विदित होता है, 'पाडय चंडिमता मुमोच मुरलस्तत्याजगर्वग्रहम्', अर्थात कर्णदेव के पराक्रम के सामने पाड्य देशवासियों ने अपनी प्रखरता तथा मुरलवासियों ने अपना गर्व छोड़ दिया (दे० एपिग्राफिका इंडिया, जिल्द 2 पृ० 11)। संस्कृत के महाकवि राजशेखर ने कन्नौजाधिप महीपाल (9वीं शती ई०) को मुरल तथा कई अन्य प्रदेशों का विजेता कहा है।

मुरला

(1) भवभूति-रचित उत्तररामचरित में उल्लिखित एक नदी जो नर्मदा जान पड़ती है। भवभूति ने मुरला तथा तमसा को मानवी के रूप में चित्रित किया है। (दे० उत्तररामचरित, तृतीयांक)।

(2) केरल की नदी (मुरल=केरल)। इसका वर्णन कालिदास ने रघुवंश 4,55 में इस प्रकार किया है—'मुरलामारुतोद्धूतमगमत्कैतकं रजः, तद्योधवारबाणानामयत्नपटवासताम्'। टीकाकार ने मुरला की टीका में 'केरल देशेषु काचिन्नदी' लिखा है। कुछ विद्वानों के मत में मुरला संभवतः काली नदी है जिसके तट पर सदाशिवगढ़ बसा है।

मुरादाबाद (उ० प्र०)

इस नगर का प्राचीन नाम चौपाला है। पुरानी बस्ती चार भागों में बटी हुई थी—भादुरिया, दीनदारपुर, मानपुर और डिहरी। मुगल सूबेदार रुस्तमखां ने मुगल बादशाह शाहजहां के पुत्र मुरादबख्श के नाम पर चौपाला का नाम मुरादाबाद रखा था। यहां की जामा मसजिद इसी समय (1631) बनी थी।

मुचिपत्तन=मुरचीपत्तन दे० क्रगनोर,

मुर्शिदाबाद (बंगाल)

मध्यकाल में बंगाल की राजधानी कर्णसुवर्ण या कानसोना (सेनवंशीय नरेशों का मुख्य नगर) के स्थान पर बसा हुआ नगर। ढाके के नवाब मुर्शिदकुली खां ने यहां अपनी नई राजधानी बनाई थी और उसी के नाम से यह

नगर प्रसिद्ध हुआ। प्लासी के युद्ध (1757 ई०) तक बगाल के नवाबो की राजधानी मुर्शिदाबाद म रही। उस समय यह नगर समृद्धिशाली तथा बगाल का व्यापारिक केंद्र था। रेशमी वस्त्र, मिट्टी के बतन तथा हाथीदात का सुदर काम यहा की प्रसिद्ध व्यापारिक वस्तुए थी।

मुलतान (प० पाकि०)

जनश्रुति के अनुसार इस नगर का वास्तविक नाम मूलस्थान था। यह एक प्राचीन सूय मदिर के लिए दूर-दूर तक प्रसिद्ध था। भविष्यपुराण, 39 की एक कथा मे वर्णित है कि कृष्ण के पुत्र साम्ब ने दुर्वासा के शाप के परिणामस्वरूप कुष्ठ रोग से पीडित होने पर सूय की उपासना की थी और मूलस्थान मे सूयदेव का मदिर बनवाया था। उसने मगद्वीप से सूर्योपासना मे दक्ष सोलह मग परिवारो को बुलाया था। ये मग लोग शायद ईरान निवासी थे और शाकल द्वीप मे बसे हुए थे (दे० मगद्वीप)। इस सूर्य मदिर के खडहर मुलतान मे आज भी स्थित है। स्कदपुराण के प्रभासक्षेत्र-माहात्म्य, अध्याय 278 मे इस मदिर का देविका नदी के तट पर बताया गया है—'ततो गच्छेत् महादेविमूलस्थानमिति श्रुतम् देविकायास्तटे रम्ये भास्कर वारितस्करम'। देविका वतमान देह नदी है। युवानच्वाग के समय मे सिंधु और मुलतान पडोसी देश थे। अल्बेरूनी ने सौवीर देश का विस्तार मुलतान तक बताया है। एक प्राचीन किंवदती मे मुलतान को, विष्णु-भक्त प्रह्लाद का जन्म स्थान तथा हिरण्यकशिपु की राजधानी माना जाता है। प्रह्लाद के नाम से एक प्रसिद्ध मदिर भी यहा स्थित है।

मुषिक

'नैराज्य मुषिकजनपदानुकनकाह्वयोभाक्ष्यति' विष्णु० 4,24,67। इस उद्धरणमे मुषिक जनपद के कनक नाम के नरेश का उल्लेख है। मुषिक सभवत मूषिक का रूपातरण है। (दे० मूषिक)

मूगी (जिला औरगाबाद, महाराष्ट्र)

गोदावरी के वामतट पर स्थित है। इस ग्राम स पुरापाषाणयुगीन अवशेष प्राप्त हुए हैं जिन्ह औरगाबाद जिले म सबसे प्राचीन मानव बस्ती के चिह्न माना जाता है।

मूजवत

ऋग्वेद म उल्लिखित हिमालय का एक पवत शृग। इसे सोम का स्थान माना गया है। अथववेद ने गधारिया (गधार निवासी जाति) को मूजवतो के पाश्व म बताया है। ये मूजवत, अवश्य ही ऋग्वेद म वर्णित मूजवत् पवत के निकटस्थ रहे होंगे। मेकडॉनेल्ड (दे० ए हिस्ट्री ऑव सस्कृत लिटरेचर, पृ० 144) के

अनुसार यह पवत कश्मीर के दक्षिण पश्चिम मे स्थित पवतमाला का एक भाग था। सभवत महाभारत मे इसी को मुजवट या मुज पृष्ठ कहा गया है। मेकडॉनेल्ड के मत मे ऋग्वेद मे हिमालय के केवल इसी शृग का उल्लेख है।

मूलक

बुद्धपूर्वकाल मे मलक तथा अश्मक जनपद पडोसी देश थे। डॉ० भडारकर (कारमइकल व्याख्यान 1918, पृ० 53,54) के मतानुसार प्रारभिक पाली साहित्य मे मूलक देश को अश्मक के उत्तर मे बताया गया है और उत्तर पाली साहित्य म मूलक का उल्लेख अश्मक के एक भाग के रूप में ही किया गया है। गौतमी बलश्री के नासिक अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसके पुत्र शातवाहन नरेश गौतमीपुत्र क राज्य में यह देश सम्मिलित था। अश्मक देश से सबधित होने के कारण मूलक की स्थिति गोदावरी के तट पर स्थित पैठान क पाश्ववर्ती प्रदेश में मानी जा सकती है। पैठान या प्रतिष्ठान में अश्मक की राजधानी थी।

मूलसेतु (मद्रास)

रामनाथपुर से 12 मील दूर देवीपत्तन को ही मूलसेतु कहा जाता है। किंवदती है कि इस स्थान से श्रीराम ने लका जाने के लिए समुद्र पर पुल बाधना प्रारभ किया था। स्कदपुराण की कथा है कि इस स्थान पर धर्म पुष्करिणी नामक झील थी जहा महिषमर्दिनी देवी ने महिषासुरका वध किया था।

मूलस्थान=मुलतान

मूला

(1) पजाब की एक नदी जिसके तटवर्ती निवासी मौलेय कहलाते थे।

(2) पूना (महाराष्ट्र) के निकट बहने वाली नदी।

मूषिक

(1) इस जनपद का प्राचीन साहित्य में कई स्थाना पर उल्लेख है। श्री रायचौधरी के मत मे (दे० पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एशेंट इडिया पृ० 80) मूषिक-निवासियो को साख्यायन श्रौतसूत्र मे मूचीप या मूवीप कहा गया है। इनका नामोल्लेख मार्कडेयपुराण 57,46 मे भी है। सभवत मूषिक देश हैदराबाद (आध्र) के निकट बहने वाली मूसी नदी के काठे मे बसे प्रदेश का नाम था।

(2) अलक्षेंद्र (सिकदर) के भारत पर आक्रमण के समय (327 ई० पू०

मूषिको का जनपद जिसे ग्रीक लेखको ने मौसीकानोज लिखा है वर्तमान सिंध (पाकिस्तान) में स्थित था। इसकी राजधानी अलोर या अरोर (=रोरी) में थी। ग्रीक लेखको ने मूषिको के विषय में अनेक आश्चर्यजनक बातें लिखी है जिनमें निम्न उल्लेखनीय हैं—इनकी आयु 130 वर्ष की होती थी जो इन लेखको के अनुसार इनके संयमित भोजन के कारण थी। इनके देश में सोने-चादी की बहुत सी खानें थी किंतु ये इन धातुओ का प्रयोग नही करते थे। मूषिको के के यहा दासप्रथा नही थी। ये लोग चिकित्सा शास्त्र के अतिरिक्त किसी अन्य शास्त्र का पढना आवश्यक नही समझते थे। मूषिको के न्यायालयो मे केवल महान अपराधो का ही निपटारा होता था। साधारण दोषो के निर्णय के लिए न्यायालयो को अधिकार नही दिए गए थे (दे० स्ट्रैबो पृ० 15,34 35)। मूषिको का वास्तविक नाम शायद मुचुकर्ण था। विष्णुपुराण मे इन्हें ही संभवत मूषिक कहा गया है। दक्षिण के मूषिक उत्तरी मूषिको की ही एक शाखा थे।

मूसानगर (ज़िला कानपुर, उ० प्र०)

1954 की खुदाई मे इस स्थान से शुगकाल से मध्यकाल तक की कला-कृतियो के अनेक सुंदर अवशेष प्राप्त हुए हैं। मराठो के समय मे बना हुआ मुक्ता देवी का एक मंदिर भी इस स्थान पर यमुना के तट पर अवस्थित है।

मूसी

हैदराबाद (आ० प्र०) के निकट बहने वाली नदी जिसका नाम शायद मूषिको के नाम पर है (दे० मूषिक 1,2)। दक्षिण का मूषिक जनपद संभवत इसी नदी के आसपास स्थित था। नदी के एक ओर गोलकुडा और दूसरी ओर हैदराबाद है। गोलकुडा नरेश कुतुबशाह इसी नदी को पार करके अपनी [illegible] भागमती से मिलने के लिए उसके ग्राम मे जाया करता था। इसी [illegible] के स्थान पर, भागमती से विवाह करने के पश्चात्, उसने भागनगर की [illegible] की जो बाद मे हैदराबाद कहलाया। (दे० भागनगर)

मृगदाव=सारनाथ

'शक्ति एव गौरव से सुशोभित तथा सूर्य के [illegible] कांतिवान् [illegible] बुद्ध मृगदाव मे आए जहा कोकिलो की ध्वनि से [illegible] के बीच महर्षिगणो के आश्रम थे'—बुद्धचरित। (दे० [illegible])

मृग०व्याघेश्वर (ज़िला नासिक, महाराष्ट्र)

यह स्थान अब बाघ दन जान [illegible] श्री रामचद्रजी ने मारीच मृग [illegible] इस स्थान के निकट ही है।

मृगशिखावन

चीनी यात्री इत्सिंग ने इस स्थान पर महाराज श्रीगुप्त द्वारा एक मंदिर बनवाये जाने का उल्लेख किया है। उसके वृत्तांत से जान पड़ता है कि यह मंदिर लगभग 175 ई० में बना होगा। ऐलन (Allen) के मत में यह श्रीगुप्त समुद्रगुप्त का प्रपितामह महाराज गुप्त ही है जिसका गुप्तकालीन अभिलेखों में नामोल्लेख है। किंतु यह मत भ्रामक है क्योंकि महाराज गुप्त की तिथि इत्सिंग के श्रीगुप्त से प्रायः सौ वर्ष पीछे होनी चाहिए। मृगशिखावन का अभिज्ञान अनिश्चित है। संभवतः यह स्थान और मृगदाव या सारनाथ एक ही है।

मृत्तिकावती

'वत्सभूमिं विनिर्जित्य केवला मृत्तिकावतीम् मोहनं पत्तनं चैव त्रिपुरी कोसला तथा'—महा० वन० 254,10। यह नगरी कर्ण द्वारा जीती गई थी। इसकी स्थिति प्रयाग के दक्षिण और त्रिपुरी के उत्तर में रही होगी।

मेड्ढ दे० मड़ू

मेकल=मेखल

विंध्याचल पर्वतमाला के अंतर्गत अमरकंटक पहाड़ जो नर्मदा का उद्गम स्थान है। मेकल श्रेणी की स्थिति विंध्य और सतपुड़ा पर्वतमाला के बीच में है और यह इन दोनों को मेखला के रूप में बांधे हुए प्रतीत होती है। इस पर्वत का निकटवर्ती प्रदेश भी इसी नाम से प्रसिद्ध था। पौराणिक कथा के अनुसार राजा मेकल ने इस पर्वतीय प्रदेश में घोर तपस्या की थी जिसके कारण यह पर्वत तथा उसका क्षेत्र इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हो गया। इस स्थल को व्यास भृगु तथा कपिल आदि की तप स्थली भी माना जाता है। संभवतः मेकल का मेखल के रूप में उल्लेख कविवर राजशेखर ने कन्नौजाधिप महीपाल द्वारा विजित प्रदेशों में किया है। मेकल-पर्वत से शोण (=सोन) नदी भी निकली है। नर्मदा का उद्गम मेकल में होने के कारण इस नदी को मेकलसुता या मेकल-कन्या कहते हैं।

मेकलकन्यका, मेकलकन्या, मेकलसुता

नर्मदा का पर्याय (दे० मेकल)। मेकल-पर्वत से निसृत होने के कारण ही नर्मदा को मेकल की पुत्री कहा जाता है। 'रेवा तु नर्मदा सोमोद्भवा मेकल-कन्यका'-अमर कोश। तुलसीदास ने नर्मदा को मेकलसुता कहा है—'सुरसरि सरसई दिनकर कन्या, मेकलसुता गोदावरि धन्या'–रामचरितमानस, अयोध्या-कांड।

मेकोंग (कंबोडिया)

कंबोडिया की एक नदी। कुछ लोगों के मत मे मेकांग शब्द 'मागगा' से बना है। इस नदी का यह नाम भारतीय औपनिवेशिकों ने दिया था। मकोंग कंबोडिया निवासियों के लिए गगा की ही भाति महत्त्वपूर्ण है।

मेखल दे० मेकल

मेगुटी (ज़िला बीजापुर, मैसूर)

इस स्थान पर 634 ई० मे, चालुक्य वास्तु शैली मे निर्मित एक महत्वपूर्ण मदिर है। इसमे गभगृह के चतुर्दिक पटा हुआ प्रदक्षिणापथ है। इसका शिखर विकास की प्रारभिक अवस्था का द्योतक है (कजिंस आर्क्योलोजिकल सव रिपोट 1907-1908) पुरातत्त्व के विद्वानों का मत है कि मेगुटी का मदिर तथा बीजापुर ज़िले के अय चालुक्यकालीन मदिर, मुख्यत उत्तर तथा मध्य भारत के पूवगुप्तकालीन मदिरों की परपरा मे हैं। भेद केवल शिखर की उपस्थिति के कारण है जो प्राचीन परपरा के विकसित रूप का परिचायक है। (दे० कज़िंस-चालुक्यन आर्किटेक्चर ऑव दि कनारा डिस्ट्रिक्टस)

मेघकर=मेहकर (ज़िला खामगाव, महाराष्ट्र)

खामगाव से 50 मील दूर है। यह प्राचीन तीथ गगा के तट पर है। इस का वणन मत्स्यपुराण 22, 40, ब्रह्मपुराण 93, 46 तथा पद्मपुराण उत्तर० 175, 181, 4, 1 आदि म है। यहा के खडहरों से प्राप्त कई सुदर मूर्तिया लदन के सग्रहालय मे सुरक्षित हैं।

मेघनाव=मेघवाहन

पूव बगाल (पाकि०) की मेघना नदी जो ब्रह्मपुत्र की दक्षिणी शाखा का नाम है।

मेडता (राजस्थान)

जोधपुर से 100 मील दूर है। मेडता प्रसिद्ध भक्त कवियित्री मीराबाई का ज मस्थान माना जाता है। यहा राजपूत काल का एक किला है। 1562 ई० म इस दुग को अकबर ने जीता था। श्री न० ला० डे के अनुसार इसका प्राचीन नाम मार्तिकावत है।

मेदक (आ० प्र०)

यहा 300 फुट ऊँची पहाडी पर एक प्राचीन दुग स्थित है। मुबारकमहल नामक भवन इस दुग के भीतर है। इसके प्रवशद्वार पर एक द्विमुख पक्षी का चित्र उकेरा हुआ है जिसने अपनी चोच तथा चगुल मे हाथियों को पकड रखा है। 1641 ई० मे बनी हुई अरब खाँ की मसजिद भी यहाँ का प्राचीन

स्मारक है।

मेमिराकोट दे० कपिलवस्तु

मेरठ (उ० प्र०)

प्राचीन नाम मयराष्ट्र। किंवदंती के अनुसार इस नगर को महाभारतकाल में मयदानव ने बसाया था। मयदानव उस समय का महान् शिल्पी था तथा इसी ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में अद्भुत सभाभवन का निर्माण किया था। अर्जुन तथा कृष्ण ने खांडववन को जलाते समय यहां रहने वाले मयदानव की रक्षा करके उसे अपना मित्र बना लिया था (दे० आदिपर्व 233, सभा० 1)। संभवतः खांडववन की स्थिति वर्तमान मेरठ के निकटवर्ती क्षेत्र में थी। जान पड़ता है कि वास्तव में खांडववन दिल्ली के इंद्रप्रस्थ नामक स्थान के निकट (पुराने किले के आसपास) रहा होगा क्योंकि पांडवों की राजधानी इंद्रप्रस्थ, इसी वन को जला डालने पर जो स्वच्छ भूभाग प्राप्त हुआ था उसी में बसाई गई थी। किंतु यह भी संभव है कि यह वन वर्तमान दिल्ली से लेकर मेरठ तक के क्षेत्र में विस्तृत था।

11वीं शती ई० में दोर राजपूत हरदत्त ने मेरठ को जीतकर यहां एक किला बनवाया जिसे कुतुबुद्दीन ने 1191 में जीत लिया। यहां एक बौद्ध मंदिर के भी अवशेष मिले थे। शाहपीर की दरगाह को नूरजहां ने बनवाया था। जामा मसजिद, महमूद गजनी के वजीर हसन मेहदी ने बनवाई थी (1019 ई०)। इसकी मरम्मत हुमायूं ने करवाई थी।

मेरु

पौराणिक भूगोल में शायद उत्तरमेरु (उत्तरी साइबेरिया) के निकट स्थित पर्वत का नाम है। इसी को संभवतः सुमेरु कहा गया है—'भारतं प्रथमं वर्षं ततः किंपुरुषं स्मृतं हरिवर्षं तथैवान्यन्मेरोर्दक्षिणतो द्विज' विष्णु० 2,2, 12। इसके चारों ओर नौसहस्र योजन तक इलावृत नामक महाद्वीप है—'मेरोश्चतुर्दिशं तत्तु नवसाहस्रविस्तृतम्, इलावृतं महाभाग चत्वारश्चात्र पर्वताः' विष्णु० 2,2,15। विष्णुपुराण 2,8,22 के अनुसार या तो यहां दिन ही या रात्रि ही रहती है—'तस्मादिश्युत्तरस्या वै दिवारात्रिः सदैव हि, सर्वेषां द्वीपवर्षाणां मेरुरुत्तरतो यतः'। इसके आगे के श्लोक में 'मेरुप्रभा' (Aurora-Borealis) का वर्णन इस प्रकार है—'प्रभा विवस्वतो रात्रावस्तं गच्छति भास्करे, विशत्यग्निमतो रात्रौवह्निर्दूरात् प्रकाशते' अर्थात् रात्रि के समय सूर्य के अस्त हो जाने पर उसका तेज अग्नि में प्रविष्ट हो जाता है और वह रात्रि में दूर से

ही प्रकाशित होता है। वाल्मीकि रामायण मे भी मेरुप्रदेश या उत्तरकुरु मे होने वाले प्रकृति के इस विस्मयजनक व्यापार का वर्णन इस प्रकार है—'तमतिक्रम्य शैलेंद्रमुत्तर पयसा निधि, तत्र सोमगिरिर्नाम मध्येहेममयो महान। स तु देशो विसूर्योपि तस्य भासा प्रकाशते, सूर्यलक्ष्याभिविज्ञेयस्तपतेव विवस्वता'—किष्किंधा० 43,53 54 (दे० उत्तरकुरु)। महाभारत के वर्णन के अनुसार निषधपर्वत के उत्तर और मध्य मे मेरुपर्वत की स्थिति है। मेरु के उत्तर मे नील, श्वेत और शृंगवान पर्वत हैं जो पूर्व-पश्चिम समुद्र तक फले हैं। मेरु को महामेरु नाम से भी अभिहित किया गया है—'स ददर्श महामेरु शिखराणा प्रभु महत्, त काचनमय दिव्य चतुर्वर्ण दुरासदम, आयत शतसाहस्र योजनाना तु सुस्थितम, ज्वलन्तमचल मेरु तेजाराशिमनुत्तमम्' महा० सभा० 28 दाक्षिणात्य पाठ। मेरु को सुवर्णमय पर्वत शायद मेरुप्रभा की दीप्ति ही के कारण कहा गया है। मेरु के प्रदेश को महाभारत सभा० 28, दाक्षिणात्य पाठ मे इलावृत, कहा गया है—'मेरोरिलावत वर्ष सवत परिमडलम्'। यह साइबेरिया का उत्तरीभाग हो सकता है। इसी प्रदेश के निकट उत्तरकुरु की स्थिति थी। वास्तव मे हमारे प्राचीन सस्कृत साहित्य मे मेरु का अदभुत वर्णन, जो काल्पनिक होते हुए भी भौगोलिक तथ्यो से भरा हुआ है, सिद्ध करता है कि प्राचीन भारतीय, उस समय मे भी जब यातायात के साधन नगण्य थे, पृथ्वी के दूरतम प्रदेशो तक जा पहुचे थे। मत्स्यपुराण मे सुमेरु या मेरु पर देवगणो का निवास बताया गया है। कुछ लोगो का मत है कि पामीर पर्वत को ही पुराणो मे सुमेरु या मेरु कहा गया है।

मेरुप्रभ

द्वारका के दक्षिण भाग मे स्थित लतावेष्ट नामक पर्वत के चतुर्दिक स्थित उपवन का नाम—'लतावेष्ट समतात तु मेरुप्रभवन महत् भातितालवन चैव पुष्पक पुण्डरीकवत' महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ।

मेलरपत्तन दे० *जोसिया*

मेलात्तूर (जिला तजौर, मद्रास)

तजौर के निकट एक ग्राम जो प्राचीनकाल म दक्षिण भारत की विशिष्ट नृत्यशैली, भरत नाटयम् के लिए प्रसिद्ध था। यह ग्राम इस नृत्य का एक केंद्र समभा जाता था। इस नृत्यशैली के अन्य केंद्र शूलमगलम और उयूकाडू थे।

मेलुकोटे (मैसूर)

मैसूर नगर से 35 मील दूर है। यह प्रसिद्ध स्थान—प्राचीन यादव गिरि—आज भी अतीत के गौरव को अपने ऐतिहासिक अवशेषो म सजोए हुए है। इस

नगर की सड़कें जिन पर पत्थर जड़े हैं लगभग नौ सौ वर्ष प्राचीन हैं। दक्षिण के प्रसिद्ध दार्शनिक संत रामानुज को यहीं कल्याणी सरोवर के तट पर नारायण की मूर्ति प्राप्त हुई थी जो यहां के प्रमुख मंदिर में प्रतिष्ठापित है। यहां के प्राचीन स्मारक हैं—गोपालराय का विशाल तोरण जो 500 वर्ष पुराना होता हुआ भी आज भी शिल्प का अद्भुत उदाहरण है, प्राचीन दुर्ग की टूटी फूटी दीवारें, वेदपुष्करणी नामक सरोवर तथा अनेक शिलालेख। रामानुज इस स्थान पर लगभग बारह वर्ष तक रहे थे और यहां निवास करते हुए उन्होंने अपने दार्शनिक विचारों का प्रचार किया था। वे यहां 1089 ई० में राजा विष्णुवर्धन की शरण में आकर रहे थे। मार्च मास में वरामुडी नामक उत्सव यहां मनाया जाता है। इसमें देवता की मूर्ति को एक सात सौ वर्ष पुराने हीरक मुकुट से अलंकृत किया जाता है जिसे होयसलनरेश ने भेंट में दिया था। कहते हैं कि मुकुट में अमूल्य रत्न जड़े हुए हैं। (दे० तो तूर, यादवगिरि)

मेहकर=मेघकर

मेहनगर (जिला आजमगढ़, उ० प्र०)

दौलत और अभिमन के पुराने मकबरे के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

मैत्रेयवन

कोणार्क (उड़ीसा) के क्षेत्र का प्राचीन पौराणिक नाम। इसे पद्मक्षेत्र भी कहा गया है।

मैनपुरी (उ० प्र०)

यह चौहान राजपूतों के समय की नगरी है। तत्कालीन अवशेष भी यहां मिले हैं। एक प्राचीन जैन मंदिर भी है।

मैनाक

(1) कैलास पर्वत (तिब्बत) के उत्तर में स्थित एक पर्वत—'उत्तरेण कैलासं मैनाकं पर्वतं प्रति यियक्षमाणेषु पुरा दानवेषु मयाकृतम्' महा० सभा० 3,2। इस पर्वत पर दैत्यों द्वारा किए जाने वाले यज्ञ का वर्णन है। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के लिए, मयदानव मैनाक पर्वत पर से (बिंदुसर के पास से) एक विचित्र रत्न भांड, देवदत्त नामक शंख तथा एक गदा लेकर आया था, 'इत्युक्त्वा सोऽसुरः पार्थं प्रागुदीचीं दिशं गतः, अथोत्तरेण कैलासान्मैनाकं पर्वतं प्रति' सभा० 3,9। इस रत्न भांड के द्रव्य से ही उसने युधिष्ठिर का अद्भुत सभाभवन निर्मित किया था। मैनाक पर्वत पर असुरों के राजा वृषपर्वा का अधिकार था। महाभारत, वन 139,1 में मैनाक का उशीरबीज श्वेत तथा कालबीज नामक पर्वतों के साथ उल्लेख है—'उशीरबीजं मैनाकं गिरिं श्वेतं च

भारत, समतीतोऽसि कौंतेय कालशैल च पार्थिव'। वाल्मीकि रामायण किष्किधा काड मे भी इसी मैनाक का वणन है जहा इसे क्रौच पवत के पार बताया गया है। इसी प्रसग मे कैलास का उल्लेख है—'तत्तु शीघ्रमतिक्रम्य कातार रोम हृषणम, कैलास पाडुर प्राप्य हृष्टा यूय भविष्यथ। क्रौंच तु गिरिमासाद्य बिल-तस्य सुदुर्गमम, अप्रमत्तै प्रवेष्टव्य दुष्प्रवेश हि तत्स्मृतम। अवृष्य कामशैल च मानस विहगालयम् न गतिस्तत्र भूतानादेवाना न च रक्षसाम। स च सर्वविचेतव्य ससानुप्रस्थभूधर, क्रौंचगिरिमतिक्रम्य मैनाको नाम पवत किष्किधा० 43,20 25 28-29। महाभारत की कथा के अनुसार ही वाल्मीकि रामायण म मैनाक पर मयदानव का भवन बताया गया है—'मयस्यभवन तत्र दानवस्य स्वय कृतम, मैनाकस्तु विचेतव्य ससानुप्रस्थकदर' किष्किधा 43,30। वाल्मीकि ने इस *पवत पर अश्वमुखी स्त्रियो का निवास बताया है—'स्त्रीणामश्वमुखीना तु* निकेतस्तत्र तत्र तु'—किष्किधा० 43,31। सभव है मय से सबध होन के कारण ही इस पवत को मयनाक या मैनाक कहा गया हो (मय+नाक, उच्चलोक)।

(2) वाल्मीकि रामायण सुदर० (1,90) के अनुसार भारत और लका के मध्यवर्ती समुद्र म स्थित एक पवत। यह समुद्र के अदर डूबा हुआ था किंतु लका के लिए समुद्र पार करते हुए हनुमान् के विश्राम करन के लिए समुद्र ने इस पर्वत को जल स ऊपर उठा दिया था—'इति कृत्वा मति साध्वी समुद्रश्छ न मम्भसि हिरण्यनाभ मनाक मुवाच गिरिसत्तमम्' (इस वर्णन से जान पडता है कि मैनाक उसी पवतमाला का भाग है जो भारत के दक्षिणी भू छोर से लेकर समुद्र के अदर होती हुई लका तक चली गई है। प्रागैतिहासिककाल मे लका और दक्षिण भारत एक ही स्थल खड के भाग थे और दक्षिण की मलय पवतमाला लका तक फैली हुई थी। कालातर मे बगाल की खाडी और अरब-सागर न लका और भारत के बीच का सकीण स्थल माग काट दिया और इस पवत श्रेणी का अधिकाश भाग विशेष कर निचला भाग, जलमग्न हो गया। इसी कारण पौराणिक दतकथा मे भी मैनाक को पवतो के पक्षच्छेदन करने वाले इद्र के भय से समुद्र मे छिपा हुआ कहा गया है। अध्यात्मरामायण, सुदर० 1,26 म वाल्मीकि रामायण के अनुरूप ही मैनाक का इसी प्रसग मे वणन है—'समुद्रोऽप्याह मैनाक मणिकाचनपवतम गच्छत्येप महासत्वा हनुमान मारु-तात्मज'। श्रीमदभागवत 5,19 16 म मैनाक का त्रिकूटादि पवता के साथ उल्लेख है—'मैनाकस्त्रिकूटऋषभ कूटक'। तुलसीदास ने (रामचरित मानस, सुदर काड) भी हनुमान के लकाभिगमन प्रसग म मैनाक का उल्लेख किया है—'जलनिधि रघुपति दूत विचारी, तैं मैनाक होहि श्रमहारी'।

मनामती (पूव पाकि०)

कामिल्ला स चार मील दूर है। 1954 ई० के उत्खनन म इस स्थान पर एक प्राचीन बौद्ध मदिर तथा विहार क भग्नावशेष प्रकाश म आए थे। पुरातत्वज्ञो के मत म मैनामती म सभ्यता क चार विभिन्न स्तर मिले हैं जो ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूण हैं।

मसूर (मसूर)

मैसूर का नाम महिषासुर दैत्य क नाम पर प्रसिद्ध है। किंवदती है कि देवी चडी ने महिषासुर का वध इसी स्थान पर किया था। मैसूर के प्रात का महत्व अति प्राचीन काल से चला आ रहा है क्योकि मौर्य सम्राट् अशोक (तीसरी शती ई० पू०) के दो शिलालेख मैसूर राज्य म प्राप्त हुए हैं (दे० ब्रह्मगिरि, मासकी)। मैसूर नगर इस प्रात की पुरानी राजधानी है। नगर के पास चामुडी की पहाडी पर चामुडेश्वरी देवी का मदिर उसी स्थान पर है जहा देवी ने महिषासुर का वध किया था। 12वी शती म होयसल-नरेशो के समय मसूर राज्य म वास्तुकला उन्नति के शिखर पर पहुच गई थी जिसका उदाहरण बेलूर का प्रसिद्ध मदिर है। मसूर का प्राचीन नाम महीशूर भी कहा जाता है। महाभारत म सभवत मैसूर क जनपद का नाम माहिष या माहिषक है। (द० माहिष)

महर=महीधर

मोटामचिलिया (जिला हलार सौराष्ट्र, गुजरात)

इस स्थान पर उत्खनन स अनेक प्रागैतिहासिक अवशेष प्रकाश मे आए है। कुछ पुरातत्वविदो का मत है कि ये अवशेष अणुपाषाण तथा पुरापाषाण युगो की सभ्यता से सबधित हैं जिसका मूल स्थान बेबिलोनिया म था।

मोढमेरा (जिला महसाना, गुजरात)

10वी शती के मदिर क भग्नावशेष यहा उत्खनन द्वारा प्रकाश में लाए गए हैं। यह मदिर पूवसोलकीकालीन है।

मोढेरा (गुजरात)

यह प्रसिद्ध जन तीथ वतमान मुढेरा है। इसका उल्लेख तीथमाला चत्यवदन मे इस प्रकार है—'मोढरे दधिपद्र ककरपुरे ग्रामादि चत्यालये—

(द० मुढेरा)

मोतीतालाब (मसूर)

मैसूर से मेलुकोटे जानेवाले माग पर दोनो नगरो के बीच यह नील जल

से भरी झील स्थित है जिसका बाध नौसौ वर्ष प्राचीन माना जाता है। झील के निकट ही फ्रेंच रॉक्स नामक स्थान है जहा हैदरअली और टीपू के सहायक फ्रांसीसियो ने अपनी सेना का मुख्य शिविर बनाया था।

मोदागिरि=मुगेर

मोदाचल=मुगेर

मोदापुर

'मोदापुर वामदेव सुदामान सुसकुलम, कुलूतानुत्तराश्चैव तांश्च राज्ञ समानयत्'—महा० सभा० 27,11। मोदापुर को अर्जुन ने अपनी उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा मे विजित किया था। इसकी स्थिति कुलूत या कुलू की घाटी के अन्तगत जान पडती है।

मोदी (म० प्र०)

मालवा के क्षेत्र मे स्थित है। यहा पूव मध्यकालीन इमारतो के खडहर स्थित हैं।

मोमिनाबाद (महाराष्ट्र)

यहा प्राचीन जैन गुहा मदिर हैं जो अब अच्छी अवस्था मे नही हे (दे० आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑव वेस्टन इडिया जिल्द 3, पृ० 48 52)। इनका समय पूव मध्यकाल है।

(2) वृदावन (उ० प्र०) का औरगजेब द्वारा दिया गया नाम जो कभी प्रचलित न हो सका।

मोरग

इस देश का हिंदी के प्राचीन साहित्य तथा लोकगीतो मे कई स्थानो पर उल्लेख है। यह नेपाल की तराई के पूव मे, कूचबिहार के पश्चिम मे और पूर्णिया (बिहार) के उत्तर मे स्थित प्रदेश का नाम था। भूषण कवि ने शिवाबावनी, 42 मे इसका उल्लेख किया है—'मोरग कुमायू आदि बाधव पलाऊ सबै कहा लो गनाऊ जेते भूपति के गोत हैं।' शिवराजभूषण 250 म इसका उल्लेख इस प्रकार है—'मारग जाहु कि जाहु कुमायू सिरीनगरै कि कवित्त बनाए'। भूषण ने इन दोनो स्थाना पर मोरग का कुमायू (नैनीताल अल्मोडा का क्षेत्र) के साथ वणन किया है।

मोर (बुदेलखड)

बुदलानरेश छत्रसाल का जन्म इस स्थान पर 1648 ई० मे हुआ था। यह कटेरा नामक ग्राम से चार पाच मील दूर है। छत्रसाल के पिता चपतराय उस समय औरगजेब के साथ युद्ध कर रहे थे और उन्होन मोर पहाडी के वना मे

शरण ली था।

मोरध्वज (तहसील नजीबाबाद, ज़िला बिजनौर)

यहा एक प्राचीन दुर्ग के खंडहर हैं जो संभवत पहले बौद्ध स्तूप था। स्थानीय किंवदंती मे इस स्थान को राजा मयूरध्वज की कथा स संबधित बताया जाता है।

मोरना (ज़िला मुज़फ्फरनगर, उत्तर प्रदेश)

मुज़फ्फरनगर-बिजनौर मार्ग पर स्थित प्राचीन ग्राम है। शुकरताल (जहा परीक्षित ने शुकदेव से भागवत की कथा सुनी थी) यहा से पास ही है। स्थानीय किंवदंती के अनुसार मोरना वह स्थल है जहा पर परीक्षित को डसने के लिए जाते समय तक्षक नाग की धन्वंतरि से भेंट हुई थी और तक्षक ने धन का लाभ देकर वैद्यराज को परीक्षित का उपचार करने से रोक दिया था। इस स्थान से धन्वंतरि को मोड दिए जाने पर ही इस ग्राम का नाम 'मोरना' पड गया।

मोरवी (काठियावाड, गुजरात)

इस नगर का प्राचीन पौराणिक नाम मयूरध्वजपुरी कहा जाता है। स्थानीय जनश्रुति के अनुसार मूलराज सोलकी नामक सौराष्ट्र नरेश ने मोरवी मे एक सहस्र वेदपाठी ब्राह्मणो का उत्तर भारत से लाकर बसाया था। मूलराज की मृत्यु 997 ई० मे हुई थी। मोरवी नगर मच्छी नदी के तट पर बसा हुआ है। यहा का विशाल मणिमदिर एक परकोटे के भीतर स्थित है। यह स्थापत्य का सुदर उदाहरण है।

मोरहनापथरी—(ज़िला मिर्ज़ापुर, उ० प्र०)

लहोरियादह के निकट मोरहनापथरी नामक पहाडी म प्रागैतिहासिक गुफाए बनी है जो आदिकालीन मानवो के द्वारा की हुई चित्रकारी क लिए प्रसिद्ध है। (दे० लहोरियादह)

मोरा (ज़िला मथुरा, उत्तर प्रदेश)

इस ग्राम स महाक्षत्रप शोडास (80 57 ई० पू०) के समय का एक शिलापट्ट लेख प्राप्त हुआ था जो मथुरा के सग्रहालय मे है। इससे ज्ञात होता है कि इस ग्राम मे तोषा नामक किसी स्त्री ने एक मदिर बनवाकर पचवीरो की मूर्तिया स्थापित की थी। डा० ल्यूडर्स के मत मे इस लेख म जिन पचवीरो का उल्लेख है वे कृष्ण, बलराम आदि यदुवशीय योद्धा थे। लेख उच्चकोटि की सस्कृत म है और छद भुजगप्रयात है। इसी ग्राम स एक स्त्री की मूर्ति भी प्राप्त हुई है जो ल्यूडर्स क मत म तोषा की है। यही से तीन महावीरो

छोड़कर) की पूजा इन लोगों में प्रचलित थी। ये पशु, वृक्ष, जल आदि की उपासना करते थे। गेहूँ, जौ, चावल इत्यादि धान्यों तथा कपास की खेती का भी इन्हें ज्ञान था। ये घोड़े को छोड़कर (जो आर्यों के साथ भारत आया) प्राय सभी अन्य पशुओं का उपयोग करते थे।

मार्शल ने मोहेंजदारो की मुद्राओं तथा यहां से मिलने वाले अनेक अवशेषों को मेसोपोटेमिया की सुमेर-सभ्यता के तिथि सहित अवशेषों के अनुरूप देखकर उनकी तिथि का निर्धारण किया है और दोनों सभ्यताओं को समकालीन माना है। सभवत इन दोनों में व्यापारिक सबंध भी थे और सास्कृतिक आदान-प्रदान भी स्थापित था। मोहेंजदारो की सभ्यता को कुछ विद्वानों ने द्रविड सभ्यता माना है और कुछ विद्वानों ने इसे आर्यों की ही एक शाखा द्वारा निर्मित सभ्यता बताया है। यह विषय पर्याप्त विवादास्पद है। पिछले वर्षों में सिंधु घाटी की सभ्यता का विस्तार हरप्पा (जिला मोंटगोमरी, पजाब, पाकिस्तान) के अतिरिक्त रोपड (पजाब, भारत) रगपुर (गुजरात), कालीबगन (बीकानेर) तक पाया गया है और इसके महत्वपूर्ण अंगों पर नया प्रकाश पड़ा है।

माहन

'पत्तभूमि विनिर्जित्य केवलां मृत्तिकावतीम्, माहनं पत्तनं चैव त्रिपुरीं कोसलां तथा' महा० वन० 254, 10। मोहन को कर्ण ने अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसंग में जीता था। प्रसंग से यह नगर त्रिपुरी (जिला जबलपुर, मध्यप्रदेश) के निकट स्थित जान पड़ता है।

मोवहा (जिला हमीरपुर, बुदेलखड, उ० प्र०)

बुदेला नरेश छत्रसाल और औरंगजेब के सेनापति अब्दुल समद की भारी सेना में घनघोर युद्ध इस स्थान के निकट हुआ था। इसमें मुगलसेना की बुरी तरह पराजय हुई। छत्रसाल की ओर से बलदिवान, कुंवरसेन, मधरा और जगदराय सैन्य-सचालक थे। जगदराय ने वीरता से मुगलों का तोपखाना छीन लिया। छत्रसाल इस युद्ध में घायल तो हुए किंतु उन्होंने अंत में बड़ी बहादुरी से मुगलों के पैर उखाड दिए। महाकवि भूषण ने छत्रसाल-दशक में इसे बेतवा का युद्ध कहा है तथा इसका जीवत चित्र खींचा है। (मौदहा बेतवा के निकट है)—'अत्र गहि छत्रसाल खिज्यो खेत बेतवे के, उतत पटानन हू कीन्हीं झुकि झपटें। हिम्मत बडी कै कबडी कै खिलवारनलों दल दी हजारन हजार बार चपटें। भूषन भनत काली हुलसी असीसन को सीसन को ईस की जमाति जोर जपटें, समदलों समद की सेना त्यों बुदेलन की, सेलें समसेर भईं बाडव की लपटें। (समद=समुद्र और अब्दुलसमद)

मौदाकि

विष्णुपुराण 2, 4, 60 के अनुसार शाकद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप क राजा मौदाकि के नाम पर ही प्रसिद्ध है।

मौर्य (बर्मा)

इरावदी (इरावती) नदी के तट पर स्थित म्वीयन (Mweyin) का प्राचीन भारतीय नाम जिसका उल्लेख ब्रह्मदेश के प्राचीन अभिलेखो मे मिलता है। टॉलमी (Ptolemy) ने इसी को मारयूरा कहा है और इस प्रकार इस नाम की प्रचीनता कम से-कम द्वितीय शती ई० तक तो पहुँच ही जाती है। मौर्य का नामकरण भारतीय औपनिवेशिको ने किया था।

मौलाअली (आ० प्र०)

हैदराबाद से 6 मील दूर पहाडी पर स्थित एक विस्तीर्ण प्रागैतिहासिक समाधिस्थली है जहाँ लगभग 600 समाधियाँ हैं। इस स्थान पर पुरातत्त्व विभाग ने खुदाई करके मिट्टी के बर्तन, लोहे के औजार और मानव शरीर के पजरो के अवशेष प्राप्त किये है। पहाडी के दक्षिण मे गोलकुडा के सुलतान इब्राहीम कुतुबशाह चतुर्थ की बनवाई हुई मसजिद है। तुजुके कुतुबशाही से विदित होता है कि याकूत नामक एक व्यक्ति ने यहा एक दरगाह भी बनवाई थी। गोलकुडा के अतिम सुलतान तानाशाह के मत्री सैयद मुजफ्फर की पुत्री जो लवण-रहित भोजन करने क कारण फीकी बी कहलाती थी, इस दरगाह की सरक्षिका थी। इसकी समाधि दरगाह क उत्तरी प्रागण मे बनी है।

मौलिनी=काशी

यकृल्लोम

महाभारत के अनुसार यह देश शूरसेन (मथुरा) और मत्स्य (अल्वर जयपुर) के निकट स्थित था। विराटनगर (मत्स्य) जाते समय पाडव, यमुना के दक्षिण तट पर चलते हुए दशार्ण (मालवा) से उत्तर और पचाल से दक्षिण एव यकृल्लोम और शूरसेन प्रदेश के बीच से होते हुए वहा पहुँचे थे—'ततस्त दक्षिणा तीरमन्वगच्छन् पदातय। उत्तरेण दशार्णास्ते पचालान दक्षिणेन च। अतरेण यकृल्लोमान् शूरसनाश्च पाडवा, लुब्धा ब्रुवाणामत्स्यस्य विषय प्राविशन् वनात 5, 2 3 4। यकृल्लोम मथुरा और जयपुर के बीच के भूभाग मे स्थित रहा होगा। इस नाम का शाब्दिक अर्थ (यकृत् लोम) बडा विचित्र सा जान पडता है। सभवत यह शब्द किसी सस्कृतेतर भाषा के नाम का सस्कृत रूप है।

यजुर्होती=जुझौती (बुंदेलखंड)

यज्ञपुर=जाजपुर=जाजनगर (उड़ीसा)

वैतरणी नदी के तट पर स्थित है। कहा जाता है इसकी स्थापना उड़ीसा के राजा ययतिकेसरी ने छठी शती ई० में की थी। यह प्राचीन पौराणिक स्थान है जहां किंवदंती के अनुसार पृथ्वी यज्ञ वेदी के रूप में पूजित हुई थी। वैखानस का स्वयंभू नामक आश्रम इसी स्थान पर था। पीछे यज्ञपुर को विष्णु का गदाक्षेत्र भी माना गया। इस स्थान का उल्लेख महाभारत वनपर्व में पांडवों की तीर्थ यात्रा के प्रसंग में भी है। इसको महाभारत में विरजा-क्षेत्र भी कहा गया है (विरजा=रजोगुणहीन देवी)। विरजा ययाति केसरी की इष्टदेवी थी। 1421 ई० में मालवा के सुलतान होशंगशाह ने जाजनगर पर आक्रमण किया था। जाजपुर में वैतरणी के तट पर यज्ञवेदी के चिह्न आज भी देखे जा सकते हैं।

यमुना

गंगा की प्रमुख सहायक नदी जो हिमालय पर्वतमाला में स्थित यमुनोत्री (कुरसोली से 8 मील) से निकल कर प्रयाग (उत्तर प्रदेश) में गंगा में मिल जाती है। यमुना का सर्वप्रथम उल्लेख ऋग्वेद 10 75, 5 (नदी सूक्त) में है—'इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्त-यार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया'—इसके अतिरिक्त ऋग्वेद में अन्य दो स्थानों पर पर भी यमुना का नाम है तथा यह ऐतरेय ब्राह्मण 8 14, 8 में भी उल्लिखित है। वाल्मीकि-रामायण में यमुना का कई स्थानों पर वर्णन है—'वेगिनीं च कुलिंगाख्यां ह्लादिनीं पर्वतावृताम्, यमुनां प्राप्य संतीर्णो बलमाश्वासयत्तदा' अयो० 11, 6, 'ततः प्लवेनांशुमती शीघ्रगामूर्मिमालिनीम्, तीरजैर्बहुभिर्वृक्षैः संतेरु यमुनां नदीम्'—अयो० 55, 22, । 'नगरं यमुनाजुष्टं तथा जनपदाञ्शुभान् यो हि वंशः समुत्पाद्य पार्थिवस्य निवेशनं,' उत्तर० 62, 18 आदि। महाभारत में यमुना तटवर्ती अनेक तीर्थों का वर्णन है, यथा 'यमुना प्रभवं गत्वा समुपस्पृश्य यामुनम् अश्वमेधफलं लब्ध्वा स्वर्गलोके महीयते' वन 84, 44। कौरव पांडवों के पितामह भीष्म के पिता शांतनु ने यमुनातटवर्ती ग्राम में रहने वाले धीवर की पुत्री सत्यवती से विवाह किया था। यहां वे शिकार खेलते हुए आ पहुंचे थे, 'स कदाचिद् वनं यातो यमुनामभितो नदीम्' आदि 100 45। कृष्णद्वैपायन व्यास का जन्म सत्यवती के गर्भ से यमुना के द्वीप पर हुआ था—'आजगाम तरीं धीमांस्तरिष्यन् यमुनां नदीम्', 'ततो मामाह स मुनिर्गर्भमुत्सृज्य मामकम् द्वीपेऽस्या एव सरितः कन्यैव भविष्यसि' आदि० 104, 8, 13। इस घटना

का उल्लेख अश्वघोष ने बुद्धचरित 4, 76 में भी किया है—'काली चैव पुरा-कन्या जल प्रभवसभवाम्, जगाम यमुनातीरे जातराग पराशर'। कालिदास ने मथुरा के निकट कालिदकन्या या यमुना का सुदर वर्णन किया है—'यस्या वरोधस्तनचदनाना प्रक्षालनाद्वारिविहार काले, कालिदकन्या मथुरा गतापि गगोर्मिससक्त जलेवभाति' रघु० 6, 48, तथा प्रयाग म गगा यमुना सगम का उल्लेख भी बहुत मनोहर है—'पश्यानवद्याङ्गि विभातिगगा, भिन्नप्रवाहा यमुना तरगै' रघु० 13 57 आदि। श्रीमदभागवत, दशम स्कध मे श्रीकृष्ण के जन्म तथा उन की विविधलीलाओ के सबध मे तो यमुना का अनेक वार उल्लेख है जिसम से सवप्रथम यहा उदधत किया जाता है—'मघोनि वपत्यसकृद यमानुजा गभीरतायौघजवोर्मिफेनिला भयानकावतशताकुला नदी माग ददौ सिधुरिव श्रिय पते 10, 3, 50 (यमानुजा=यमुना)। इसी प्रसग के वर्णन मे विष्णुपुराण का निम्न उल्लेख कितना सुदर है—'यमुना चातिगभीरानाना वतशताकुलाम्, वसुदेवो वहन्विष्णु जानुमात्रवहा ययौ' विष्णु० 5, 3, 18। अध्यात्म रामायण, अयोध्या० 6, 42 मे श्रीराम-लक्ष्मण-सीता के यमुना पार करने का उल्लेख इस प्रकार है—'प्रातरुत्थाय यमुनामुत्तीर्य मुनिदारकै, कृताप्लवेन मुनिना दृष्टमार्गेण राघव'। महाभारत वन०, 324, 25-26 म अश्व नदी का चमण्वती मे, चमण्वती का यमुना म और यमुना का गगा मे मिलने का उल्लेख है। यमुना के रवितनया, सूयकन्या, कलिदकन्या आदि नाम साहित्य म मिलते हैं। इसे सूय की पुत्री तथा यम की वहिन माना गया है। कलिदपवत से निस्तृत होने से यह कालिंदी या कलिदकन्या कहलाती है।

(2) ब्रह्मपुत्र का एक नाम —(हिस्टारिकल ज्योग्रोफी ऑव ऐंशेट इडिया पृ० 34)

यमुनाचल (महाराष्ट्र)

शोलापुर से 24 मील दूर एक पहाडी जिस पर महाराष्ट्र केसरी शिवाजी की अधिष्ठात्री देवी तुलजा का प्राचीन मदिर स्थित है।

यमुनाप्रभव=दे० यमुना

महाभारत 84, 44 म उल्लिखित सभवत यमुना का उदगम स्थान है। इसे यमुनोत्री भी कहा जाता है।

यमुनोत्री

यमुना नदी का उद्गम स्थान जो गढवाल के पर्वतो म स्थित है। (दे० यमुनाप्रभव)

ययातिनगर=ययातिनगरी (उडीसा)

महानदी के तट पर स्थित है। यह सोनपुर के निकट है। प्राचीनकाल मे यह नगरी समृद्धिशाली थी जैसा कि धोई कवि के पवनदूत से ज्ञात होता है—'लीला नेतु पवनपदवीमुत्कलाना रतेश्चेत गच्छे ख्याता जगति नगरीमाख्यया ययाते'। यह उडीसा नरेश ययातिकेसरी के नाम पर प्रसिद्ध थी। डा० फ्लीट के अनुसार कटक ही प्राचीन ययातिनगरी है (एपिग्राफिका इडिका जिल्द 3, पृ० 223)। कुछ समय पूर्व उपर्युक्त स्थान (महानदी के तट पर, सोनपुर के निकट) से उद्योतकेसरी के तीन प्रस्तर लेख और एक ताम्रपट्ट लेख प्राप्त हुए हैं जिनमे उसकी अनेक पार्श्ववर्ती राजाओ पर विजय प्राप्त करने का वृतात उत्कीर्ण है।

ययातिपुर (जिला कानपुर, उ० प्र०)=जाजमऊ

(1) कानपुर से 3 मील दूर है। राजा ययाति के किले के अवशेष जाजमऊ की प्राचीनता के द्योतक हैं। किंतु श्री न० ला० डे के अनुसार यह किला राजा जोजत का बनवाया हुआ है। यह चदेलो का पूर्वज था। कानपुर की प्रसिद्धि के पूर्व जाजमऊ इस क्षेत्र का महत्वपूर्ण नगर था।

(2)=ययातिनगर

यल्लेश्वरम (जिला नलगोडा, ना० प्र०)

इस स्थान से बौद्ध तथा मध्यकालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। पुरातत्व विभाग द्वारा उत्खनन किए जाने पर यहा से बहुत कुछ मूल्यवान ऐतिहासिक सामग्री मिलने की सभावना है। यह स्थान शायद नागार्जुनीगिरि तथा गजुलीबडा का समकालीन था

यवद्वीप=जावा द्वीप

गुजरात के राजकुमार विजय ने सर्वप्रथम इस देश मे भारतीय उपनिवेश की सस्थापना की थी (603 ई०)। इसका *ब्रह्माडपुराण पूर्व० 51 मे उल्लेख है।*

यवननगर दे० जूनागढ

यवनपुर

(1)=जौनपुर

(2) 'अताखी चैव रोमा च यवनानापुर तथा, दूतैरेव वशे चक्रे कर चैनानदापयत'—महा० सभा० 31,72। सहदेव ने यवनो (ग्रीक लोगो) के यवनपुर नामक नगर को अपनी दिग्विजय यात्रा मे विजित करके वहा से कर ग्रहण किया था। इसका अभिज्ञान मिस्र के प्राचीन नगर एलेग्जेंड्रिया से किया गया है (अताखी=ऐंटिआक्स, रोमा=रोम)। इस श्लोक के

पाठांतर के लिए दे० अतारा

यव्यावती

गोमल नदी की सहायक मनोव का प्राचीन नाम।

यशोधरपुर=कबुपुरी

यष्टिवन (जिला गया, बिहार)

सूपातीथ के निकट तपोवन से दो मील वर्तमान जेठियान। गौतम बुद्ध ने यहाँ कई चमत्कार दिखाए थे और बिंबिसार का दीक्षा भी इसी स्थान पर दी गई थी। (दे० *ग्रियर्सन—नोट्स ऑन दि डिस्ट्रिक्ट ऑव गया)*

यादगिरि (जिला गुलबर्गा मैसूर)

इस स्थान पर वारंगल के यादव-नरेशों का बनवाया एक किला है जिसका जीर्णोद्धार बहमनी सुलतान फिरोजशाह ने करवाया था।

यादवगिरि=यादवाद्रि (मैसूर)

मैसूर से 30 मील दूर मेलूकोटे। यही तोन्नूर नामक ग्राम बसा हुआ है।

यादवस्थली (काठियावाड, गुजरात)

प्रभासपट्टन के निकट हिरण्या नदी के तट पर यह वह स्थान माना जाता है जहा द्वारका के अंत में श्रीकृष्ण के संबंधी यादव लोग परस्पर झगडे के कारण लडभिड कर नष्ट हो गए थे।

यादवाद्रि=यादवगिरि

यामुनपर्वत

'वारण वाटधान च यामुनश्चैव पर्वत, एष देश सुविस्तीर्ण प्रभूत धन-*धान्यवान'* महा० उद्योग 19,31, *'यमुनाप्रभवं गत्वा समुपस्पृश्य यामुनम् अश्वमेध* फल लब्ध्वा स्वर्गलोके महीयते,' वन०84,44। श्री वा० श० अग्रवाल ने इस पर्वत का अभिज्ञान हिमालय-पर्वतमाला मे स्थित बदरपूछ नामक पर्वत (जिला गढवाल, उ० प्र०) से किया है। बदरपूछ का संबंध महाभारत के प्रसिद्ध आख्यान से है जिसमे भीम और हनुमान की भेंट का वर्णन है। अनुशासन पर्व 68 3 4 मे यामुनगिरि को गंगा यमुना के मध्यभाग मे स्थित बताया है तथा इस पहाडी की तलहटी के निकट पर्णशाला नामक ग्राम का उल्लेख है,—*'मध्यदेशे महान ग्रामो ब्राह्मणानां बभूव ह। गंगायमुनयोर्मध्ये यामुनस्य-*गिरेरध। पर्णशालेतिविख्यातो रमणीयोनराधिप'।

यारकंद (नदी) दे० सीता

यिंगु=दे० इंदु

युगंधर

पाठांतर युवंधर। युगंधरे दधिप्राश्य उषित्वा चाच्युतस्थले तद्वद् भूतलये

स्नात्वा मधुनावस्तुमहसि' महा० वन० 129,9 । पाणिनि की अष्टाध्यायी 4,2,130 मे भी इसका नामोल्लेख है । श्री बी० सी० लॉ के अनुसार दक्षिण पजाब का जींद का प्रदेश ही युगधर है (किंतु दे० जयती) । युगधर को उपर्युक्त उद्धरण म दूषित स्थान बताया गया है । श्री चि वि वैद्य इसे यमुना नदी के तट पर मानते है ।

यूची देश दे० उत्तर ऋषिक

यथीडिमिया

प्राचीन रोम के *भूगोलशास्त्री टॉलमी* ने भारत के यूथीडिमिया या यूथीमिडिया नामक भारतीय नगर का उल्लेख अपने भूगोल के ग्रथ मे किया है । इस नगर का नाम ग्रीक-नरेश यूथीडिमोस के नाम पर प्रसिद्ध था । इसका समय दूसरी शती ई० पू० माना जाता है । स्ट्रेबो नामक ग्रीक लेखक के अनुसार यूथीडिमोम के पुत्र डिमिट्रियस ने ग्रीक राज्य की सीमा भारत तक विस्तृत की थी । यूथीडिमिया नगर का *अभिज्ञान शाकल या वर्तमान स्यालकोट* (पजाब, पाकि०) से किया गया है । मिलिंदपन्हो के नायक यवनराज मिनेंडर (जो बाद मे बौद्ध हो गया था) की राजधानी भी शाकल म थी । (दे० मक्रिडल एशेंटइंडिया एज डेसक्राइब्ड इन क्लासिकल लिटरेचर पृ० 200)

येडुपलू (जिला मेदक, आ० प्र०)

मजीरा नदी की सात सहायक नदियो के सगम पर अवस्थित यह नगर प्रकृति की सौंदय स्थली होने के साथ-साथ प्राचीन तीर्थ भी है । सगमस्थान पर धार्मिक मेला प्रतिवर्ष लगता है ।

योगेश्वर दे० जोगेश्वर

योनकराष्ट्र

प्राचीन गधार (युन्नान) के पूव और स्याम देश के पश्चिम मे स्थित एक प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक राज्य । इसकी स्थिति उमागशील के दक्षिण म थी । योनकराष्ट्र का उल्लेख स्थानीय पाली इतिहास-ग्रथो म है ।

योनि (नदी)

विष्णु पुराण 2,4,28 के अनुसार शाल्मल-द्वीप की एक नदी 'योनिस्तोया वितृष्णा च चद्रा मुक्ता विमोचनी, निवृत्ति सप्तमी तासा स्मृतास्ता पापशातिदा '

यौधेयदेश

झेलम और सिंधु नदी के बीच का भाग जहा प्राचीन काल म यौधय गण का राज्य था । कनिंघम के अनुसार यौधेय देश सतलज के दोनो तटा पर विस्तृत

था। (आर्कियोलोजिकल सर्वे रिपोर्ट जिल्द 14) समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे भी योधया का उल्लेख है।

रगना (महाराष्ट्र)

11वी शती के मध्य म महाराष्ट्र केसरी शिवाजी ने रगना म स्थित किले पर अपना अधिकार कर लिया था। इसस पहल यह बीजापुर के सुलतान के अधीन था।

रगपुर

(1) दे० पुडवधन

(2) (सौराष्ट्र, गुजरात) गोहिलवाड प्रात म सुक्भादर नदी के पश्चिम-समुद्र म गिरने के स्थान से कुछ ऊपर की ओर स्थित है। यहा 1935 तथा तथा 1947 मे उत्खनन द्वारा सिंध घाटी सभ्यता के अवशेप प्रकाश म लाए गए थे। पहली बार की खुदाई के अवशेपो से विद्वानो ने यह समझा था कि ये हरप्पा-सभ्यता के दक्षिणतम प्रसार के चिन्ह हैं जिनका समय लगभग 2000 ई० पू० होना चाहिए। 1944 के जनवरी मास मे यहाँ पुरातत्त्व विभाग ने पुन उत्खनन किया जिससे अनेक अवशेप प्राप्त हुए। इनम प्रमुख ये हैं—अल्कृत व चिकने मृदभाड, जिनपर हरिण तथा अन्य पशुओ के चित्र हैं, सोने तथा कीमती पत्थरो की बनी हुई गुरिया तथा धूप मे सुखाई हुई ईंटें। यहा से, भूमि की सतह के नीचे नालियो तथा कमरो के चिन्ह भी मिले हैं। इसी खुदाई से रगपुर मे अति प्राचीन अणुपाषाण युगीन सभ्यता के भी खडहर मिले हैं (प्राय 2000 1000 ई० पू०)। इस सभ्यता का मूल स्थान बेबिलानिया बताया जाता है। रगपुरी के निकटवर्ती अन्य कई स्थाना से सिंधु घाटी सभ्यता के अवशेप प्रकाश मे लाए गए है। (दे० नरमान, भगोल, मधुपुर, वेनीवडार तथा मोटामचिलिया)

(3) (जिला महबूबनगर आ० प्र०) प्राचीन वारगल-नरेशो के समय के मदिरो के अवशेपो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

रगमती

सौराष्ट्र (गुजरात) के उत्तर पश्चिमी प्रात हालार की एक नदी। इसकी एक शाखा को नागमती भी कहते हैं।

रजनी (जिला भीड, महाराष्ट्र)

भीड से 8 मील दूर दक्षिण की ओर स्थित है। अकबर के समकालीन इतिहास लेखक फरिश्ता ने लिखा है कि 1326 ई० मे दिल्ली का सुल्तान मुहम्मद तुगलक भीड के पास से होकर गुजरा था जहाँ उसने अपना एक

स्मारक भी बनवाया था। स्थानीय किंवदंती में इस स्थान को रजनी ग्राम के निकट कहा जाता है।

रतिपुर

रतिपुर को चंबल की उपशाखा गोमती पर स्थित महाराज रतिदेव का निवासस्थान माना जाता है। इसका वर्तमान नाम रिंतिपुर है (न० ला० डे०)

रक्तमृत्तिका (जिला मुर्शिदाबाद, बंगाल)

वर्तमान रांगामाटी। रक्तमृत्तिका इस जिले का अति प्राचीन स्थान है। यहां के निवासी महानाविक बुद्धगुप्त का एक अभिलेख जो चौथी शती ई० का है, मलाया प्रायद्वीप के वेलेजली जिले में प्राप्त हुआ था।

रक्षाभुवन (जिला भीड, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर 1763 ई० में रघुनाथराव और माधवराव ने नवाब निजाम अली को हराकर, पहले पूना में नवाब ने जो अग्निकांड किया था, उसका बदला चुकाया था। प्रधान मंत्री विट्ठल सुंदर और उसका भतीजा विनायकदास इस युद्ध में मारे गए थे।

रजतपीठपुर

उदीपी का प्राचीन नाम है।

रजाग्रौना (बिहार)

इस स्थान से पाटलिपुत्र की मूर्तिकला शैली के सुंदरतम उदाहरण प्राप्त हुए हैं जिसमें खंडित स्तंभ प्रमुख हैं। इनके निम्न भाग नितांत सादे तथा वर्गाकार हैं। मध्य में दोनों ओर दो बाहर निकले हुए प्रक्षेप हैं। निचले प्रक्षेप के ऊपर एक पट्टक है जो उभरे हुए चौखटे के अन्दर अंकित है। इस पर कैलास पर भगीरथ की शिवपूजा, गंगावतरण, अर्जुन का शिव से वरदान प्राप्त करना आदि दृश्यों का सुंदर अंकन है। प्रक्षेप से तनिक ऊपर अधवतलों में कीर्तिमुख तथा सुपर्ण जैसे परंपरागत विषयों को उत्कीर्ण किया गया है (दे० एज ऑव दि इम्पीरियल गुप्ताज, पृ० 192)।

रणथंभौर (जिला जयपुर, राजस्थान)

सवाई माधोसिंह नामक कस्बे से 6 मील दूर घने जंगलों के बीच राजस्थान का यह इतिहासप्रसिद्ध दुर्ग स्थित है। रणथंभौर का दुर्ग सीधी ऊंची खड़ी पहाड़ी पर लगभग 9 मील के घेरे में विस्तृत है। किले के तीन ओर प्राकृतिक खाई बनी है जिसमें जल बहता रहता है। किला सुदृढ़ और दुर्गम परकोटे से घिरा हुआ है। दुर्ग के दक्षिण की ओर 3 कोस पर एक पहाड़ी है जहां मामा भानजे की कब्रें हैं। संभवतः इस पहाड़ी पर से यवन सैनिकों ने इस किले को तीन बार

प्रयत्न किया होगा और उसी म यह सरदार मारे गए होगे। रणथभीर गढ के निर्माता का नाम अनिश्चित है। किंतु इतिहास मे सवप्रथम इस पर चौहानो के अधिकार का उल्लेख मिलता है। सभव है कि राजस्थान के अनेक प्राचीन दुर्गों की भांति इसे भी चौहानो ने ही बनवाया हो। जनश्रुति है कि प्रारभ म इस दुग के स्थान के निकट पद्मला नामक एक सरावर था। यह इसी नाम से आज भी किले के अदर स्थित है। इसके तट पर पद्मऋषि का आश्रम था। इ ही की प्रेरणा से जयत और रणधीर नामक दो राजकुमारा ने जो अचानक ही शिकार खेलते हुए वहाँ पहुँच गए थे इस किले को बनवाया और इसका नाम रणस्तभर रखा। किले की स्थापना पर यहाँ गणेशजी की प्रतिष्ठा की गई थी जिसका आह्वान राज्य भर मे विवाहो क अवसर पर किया जाता है।

किले का प्रारभिक इतिहास अनिश्चित है। राजपूत काल के पश्चात् से 1563 ई० तक यहाँ मुसलमानो का अधिकार था। इससे पहले बीच म कुछ समय तक मेवाड नरेशो क हाथ मे भी यह दुग रहा। इनम राणा हम्मीर प्रमुख है। इनके साथ दिल्ली के सुलतान अलाउद्दीन खिलजी का भयानक युद्ध हुआ जिसके फलस्वरूप रणथभौर की वीर नारिया पातिव्रत धम की खातिर चिता म जलकर भस्म हो गईं और राणा हम्मीर युद्ध म वीर गति को प्राप्त हुए (1301 ई०)। इस युद्ध का वृतात जयचद्र के हम्मीर महाका य मे है। 1563 ई० म बूदी के एक सरदार सामत सिंह हाडा न बेदला और कोठारिया के चौहानो की सहायता से मुसलमानो से यह किला छीन लिया और वह बूदी नरश सुजानसिंह हाडा के अधिकार मे आ गया। 4 वष बाद अकबर ने चित्तौड की चढाई क पश्चात् मानसिंह को साथ लेकर रणथभौर पर चढाई की। अकबर न परकोटे की दीवारो को ध्वस्त करने मे कोई कसर न छोडी किंतु पहाडियो के प्राकृतिक परकोटो और वीर हाडाओ क दुदमनीय शौय के आगे उसकी एक न चली। किंतु राजा मानसिंह ने छलपूवक राव सुजन को अकबर से सधि करने पर विवश किया। सुजन ने लोभवश किला अकबर को दे दिया किंतु सामत सिंह ने फिर भी अकबर के दात खट्टे करके मरने के पश्चात् ही किला छोडा। 1754 ई० तक रणथभौर पर मुगलो का अधिकार रहा। इस वष इसे मराठो ने घेर लिया किंतु दुर्गाध्यक्ष न जयपुर के महाराज सवाई माधासिंह की सहायता से मराठो के आक्रमण को विफल कर दिया और अपने वचनानुसार दुर्गाध्यक्ष ने किले को जयपुर नरेश को सौप दिया। तब से आधुनिक समय तक यह किला जयपुर रियासत के अधिकार मे रहा।

रतनपुर=रत्नपुर

(1) (जिला विलासपुर, म० प्र०) विलासपुर से 10 मील दूर, छत्तीसगढ के हैहय नरेशो की प्राचीन राजधानी है। 11 वी शती ई० के प्रारभ काल से ही प्राचीन चेदि राज्य के दो भाग हो गए थे—पश्चिमी चेदि, जिसकी राजधानी त्रिपुरी मे थी और पूर्वी चेदि या महाकोसल जिसकी राजधानी रत्नपुर थी। कहा जाता है कि रत्नपुर मे पौराणिक राजा मयूरध्वज की राजधानी थी। छत्तीसगढ के प्राचीन राजाओ का बनवाया एक दुर्ग भी यहा स्थित है। रत्नपुर मे अनेक प्राचीन मदिरो के अवशेष हैं। मदिरो की सख्या के कारण स्थानीय रूप से इस स्थान को छोटी काशी भी कहा जाता है। यह स्थान दुल्हरा नदी के तट पर है।

(2)=रत्नपुरी (जिला फैजाबाद, उ०प्र०)। सोहावल स्टेशन से 1 मील पर स्थित इस ग्राम को जैन तीर्थकर धर्मनाथ का स्थान माना जाता है। (दे० रत्नवाहपुर)

रत्नगिरि

राजगृह के निकट सप्तपर्वतो मे से एक का वर्तमान नाम है। (दे० राजगृह)

रत्नवाहपुर

कोसल देश का एक नगर जो घाघरा (सरयू) के तट पर स्थित था। विविधतीर्थ कल्प (जैन ग्रथ) मे कहा गया है कि इस नगर मे इक्ष्वाकुवशी राजा भानु के पुत्र धर्मनाथ ने जन्म लिया था। धर्मनाथ के सम्मान मे रत्नवाहनपुर मे एक नाग राजकुमार ने चैत्य बनवाया था और इसी जैन साधु की मूर्ति इस चैत्य मे नागो की मूर्तियो के बीच मे दिखाई पडती थी।

रत्नशैल

विष्णुपुराण 2,4,50 के अनुसार क्रौंचद्वीप का एक पर्वत—'क्रौचश्चवामनश्चैव तृतीयश्चाधकारक, चतुर्थो रत्नशैलस्य स्वाहिनी हय सन्निभ'

रत्नाकर

(1) भारत लका के बीच का समुद्र जो प्राचीन काल से ही सुदर रत्न विशेषत मोतियो के लिए प्रसिद्ध है। रघुवश, 13,1 मे कालिदास ने इसी समुद्र के लिए रत्नाकर शब्द का प्रयोग किया है—'रत्नाकर वीक्ष्य मिथ स जाया रामाभिधानो हरिरित्युवाच'। रघु० 13,17 मे इस समुद्र के तट पर सीपियो से भिन्न हुए मोतिया (पयस्तमुक्तापटल) का वर्णन है।

(2) जिला हुगली (प० बंगाल) की काना नदी जिसके तट पर खानाकुल कृष्णनगर बसा है।

रत्नावती (गुजरात)

पश्चिमी रेलवे के रातेज स्टेशन के निकट ही यह प्राचीन नगरी बसी हुई थी। यहाँ जैनों के कई प्राचीन मंदिर थे जिनके खंडहर आज भी देखे जा सकते हैं। रातेज संभवतः रत्नावती का ही अपभ्रंश है।

रथपातस्थली

तामिल महाकवि कंब के जन्मस्थान तेरलुंदुर का प्राचीन नाम।

रथावत

जैनसाहित्य के सर्वप्राचीन आगम ग्रंथ एकादश-अंगादि में उल्लिखित तीर्थ जिसका अब पता नहीं है।

रंधिया दे० लौरिया अरराज

रनसिंगनल्लूर=इरनियल

रमठ=रामठ=रमण

'सकृद्ग्रहा कुलत्थाश्च हूणाः पारसिकैः सह, तथैव रमठाश्चीनास्तथैव दशमालिका—महा० भीष्म 9,16, 'द्वारपालं च तरसा वशे चक्रे महाद्युति रामठान् हारहूणाश्च प्रतीच्याश्चैव ये नृपाः' महा० सभा० 32,12। द्वितीय उद्धरण में उल्लिखित द्वारपाल का अभिज्ञान खैबर दर्रे से और हारहूण का दक्षिणी पश्चिमी अफगानिस्तान से किया गया है। इसी आधार पर रमठ या रामठ को गजनी का प्रदेश माना गया है। रमठ का पाठांतर रमण है। संस्कृत कवि राजशेखर ने कन्नौजाधिप महीपाल (9 वीं शती ई०) द्वारा विजित प्रदेशों में रमठ की गणना की है। इनमें मुरल, मेखल, कलिंग, केरल, कुलूत और कुंतल भी हैं।

रमण

(1)=रमठ

(2) 'भाति चैत्ररथं चैव नंदनं च महावनम्, रमणं भावनं चैव वेणुमत् समंततः' महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ। इस उद्धरण में रमण नामक वन को द्वारका के उत्तर की ओर स्थित वेणुमान् पर्वत के निकट बताया गया है।

रमणक

'दक्षिणेन तु श्वेतस्य निषधस्योत्तरेण तु वर्षं रमणकं नाम जायंते तत्र मानवाः' महा० सभा० 8 2। श्वेत के दक्षिण तथा निषध के उत्तर में एक वर्ष या महाद्वीप।

रमसा (ज़िला कामरूप

असम के प्राचीन अहोम नरेशो ने इस ग्राम म अम्रातकेश्वर शिव का मदिर बनवाया था। मत्स्यपुराण के अनुसार मूल अम्रातकेश्वर का मदिर काशी मे स्थित था और वहा क आठ प्रधान शिवमदिरो म से था। इसकी प्रसिद्धि के कारण ही असम के राजाओ ने इसी नाम का मदिर अपने प्रात म बनवाया था। (दे० एज ऑव दि इम्पीरियल गुप्ताज, पृ० 116)

रमौल (बिहार)

कमतौल स्टेशन से लगभग 3 मील दूर छोटा सा ग्राम है। इसके निकट ही वटवृक्षा का एक वन है। कहा जाता है कि मिथिलानरेश जनक की सभा के रत्न महर्षि याज्ञवल्क्य का आश्रम इसी स्थान पर था। यानवल्क्य प्राचीन भारत के महान विचारक तथा मेधावी विद्वान थे।

रम्मानगरी=रामानगरी

काशी का एक नाम जो बौद्ध साहित्य म मिलता है।

रम्यकवष

पौराणिक भूगोल क वणन के अनुसार रम्यक, जबूद्वीप का एक भाग है जिसके उपास्य देव वैवस्वत मनु हैं। विष्णु 2,2,13 मे इसे जबूद्वीप का उत्तरी वष कहा गया है—'रम्यक चोत्तर वर्षं तस्यैवानु हिरण्मयम, उत्तरा कुरवश्चैव यथा वै भारत तथा'। महाभारत सभा० 28 से जान पडता है कि अर्जुन ने उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा क समय यहां प्रवेश किया था—'तथा जिष्णु रतिक्रम्य पवत नीलमायतम्, विवेशरम्यक वर्षं सकीर्णं मिथुनैं शुभैं'। यह देश सुदर नरनारियो से आकीण था। इसे जीत कर अजुन न यहां से कर ग्रहण किया था—'त देशमथजित्वा च करे च विनिवेश्य च'। उपयुक्त उद्धरणो से रम्यक वष की स्थिति उत्तरकुरु या एशिया के उत्तरी भाग या साइबेरिया के निकट प्रमाणित होती है। इसके उत्तर मे सभवत हिरण्मय वष था।

रम्यग्राम

'मारुध च विनिर्जित्य रम्यग्राममथोबलात' महा० 2,31,14। सहदेव ने अपनी दक्षिणी भारत की विजय-यात्रा म इस स्थान को विजित किया था। सदर्भ से यह मालवा के क्षेत्र म जान पडता है।

रवालसर (हिमाचल प्रदेश)

प्राचीन नाम रोयलेश्वर। यहा पुराने समय का बौद्ध मदिर है जिसम पद्मसभव नामक बौद्धभिक्षु की एक विशाल मूर्ति है। मदिर मे भित्तिचित्र भी हैं। पद्मसभव ने तिब्बत जाकर बौद्धधम का प्रचार किया था। जान

पडता है कि पद्मसभव इस स्थान पर कुछ समय तक रहे होंगे । इस स्थान का सबध महर्षि लोमश तथा पाडवो से भी बताया जाता है । गुरु गोविंदसिहजी यहा कुछ काल पर्यंत रहे थे । भारत से तिब्बत को जाने वाला प्राचीन मार्ग रवालसर हो कर ही जाता था। इस स्थान का एक पुराना नाम रेवासर भी है।

रागामाटी=रक्तमृतिका

रांतेज दे० रत्नावती

राजगढ़ (महाराष्ट्र)

तारण के दुर्ग से 6 मील दूर मोरवद नामक पर्वतशृंग पर स्थित इस किले की स्थापना 1646 ई० के लगभग छत्रपति शिवाजी द्वारा की गई थी। इस किले को बनवाने के लिए उन्हे तोरण दुर्ग से प्राप्त गडे हुए खजाने से काफी सहायता मिली थी।

राजगीर=राजगृह

राजगृह

(1)=राजगीर (बिहार) । बुद्ध के समकालीन मगध नरेश बिंबिसार ने शिशुनाग अथवा हर्यक वश के नरेशो की पुरानी राजधानी गिरिव्रज को छोडकर नई राजधानी उसके निकट ही बसाई थी (दे० गिरिव्रज) (2)। पहले गिरिव्रज के पुराने नगर से बाहर उसने अपने प्रासाद बनवाए थ जो राजगृह के नाम से प्रसिद्ध हुए। पीछे अनेक धनिक नागरिको के बस जाने से राजगृह के नाम स एक नवीन नगर ही बस गया । गिरिव्रज मे महाभारत के समय म जरासध की राजधानी भी रह चुकी थी। राजगृह के निकट वन मे जरासध की बैठक नामक एक बारादरी स्थित है जो महाभारतकालीन ही बताई जाती है। महाभारत वन० 84,104 म राजगृह का उल्लेख है जिसस महाभारत का यह प्रसग बौद्धकालीन मालूम होता है, 'ततो राजगृह गच्छेत् तीर्थसेवी नराधिप' । इससे सूचित होता है कि महाभारतकाल मे राजगृह तीर्थस्थान के रूप म माना जाता था। आगे के प्रसग से यह भी सूचित होता है कि मणिनाग तीर्थ राजगृह के अन्तर्गत था। यह सभव है कि उस समय राजगृह नागो का विशेष स्थान था (दे० मणियार मठ मणिनाग)। राजगृह का बौद्ध जातको मे कई बार उल्लेख है। मगलजातक (स० 87) मे उल्लेख है कि राजगृह मगधदेश म स्थित था । राजगृह के वे स्थान जो बुद्ध के समय मे विद्यमान थे और जिनसे उनका सबध रहा था, एक पाली ग्रथ मे इस प्रकार गिनाए गए है—गृध्रकूट गौतम न्यग्रोध, चौर प्रपात, सप्तपर्णिगुहा, काल-

शिला, शीतवन, सपर्शौडिक प्राग्भार, तपोदाराम, वेणुवनस्थित कलदक तडाग, जीवक का आम्रवन, मदकुक्षि तथा मृगवन। इनमे से कई स्थानो के खडहर आज भी राजगृह म देखे जा सकते ह। बुद्धचरित 10,1 मे गौतम का गगा को पार करके राजगृह मे जाने का वर्णन है—'स राजवत्स पृथुपीन वक्षास्तौसव्यमत्राधिकृतौ विहाय, उत्तीर्य गगा प्रचलत्तरगा श्रीमदगृह राजगृह जगाम'। जैन ग्रथ सूत्र कृताग मे राजगृह का सपन्न, धनवान् और सुखी नर नारियो के नगर के रूप म वर्णन है। एक अ य जैन सूत्र, अतकृत दशाग मे राजगृह के पुष्पोद्यानो का उल्लेख है। साथ ही यक्ष मुदगरपानि के एक मदिर की भी वही स्थिति बताई गई है। भास रचित 'स्वप्नवासवदत्ता' नामक नाटक मे राजगृह का इस प्रकार उल्लेख है—'ब्रह्मचारी, भो श्रूयताम्। राजगृहताऽस्मि। श्रुतिविशेषणार्थं वत्सभूमौ लावाणक नाम ग्रामस्तत्रोषितवानस्मि'। युवानच्वाग ने भी राजगृह के उन कई स्थानो का वर्णन किया है जिनसे गौतम बुद्ध का सबध बताया जाता है (दे० सोनभडार, पाडव, मदकुक्षि, पिप्पलगिरि, सप्तपर्णिगुहा, ऋषिगिरि, पिप्पलिगुहा)। वाल्मीकिरामायण मे गिरिव्रज की पाच पहाडियो का तथा सुमागधी नामक नदी का उल्लेख है—एषा वसुमती नाम वसोस्तस्य महात्मन एतेशैल्वरा पच प्रकाशन्ते समतत। सुमागधीनदी रम्या मागधान विश्रुताऽऽययौपचाना शलमुख्याना मध्य मालेव शोभते'। इन पहाडियो के नाम महाभारत मे ये हैं—पाडर, विपुल, वाराहक, चैत्यक, और मातग। पाली साहित्य म इन्हे वेभार, पाडव, वेपुल्ल, गिज्झकूट और इसिगिलि कहा गया है (दे० ए गाइड टू राजगीर, पृ० 1) [दे० महा० सभा० 21, दाक्षिणात्य पाठ—'पांडर विपुल चैव तथा वाराहकेऽपि च, चैत्यके च गिरिश्रेष्ठे मातग च शिलोच्चये' (दे० चत्यक)]। किंतु महाभारत, सभा० 21,2 मे इन्ही पहाडियो का विपुल, वराह, वृषभ, ऋषिगिरि तथा चैत्यक कहा गया है—'वैहारौ विपुलो शैलो वराहो वृषभस्तथा, तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यक पचमा'। इनके वर्तमान नाम ये हैं—वैभार, विपुल, रत्न, छत्ता और सोनागिरि। जन कल्पसूत्र के अनुसार महावीर ने राजगृह म 14 वर्षाकाल विताए थ। दे० गिरिव्रज (2)

(2) =गिरिव्रज। केकय देश म स्थित गिरिव्रज का भी दूसरा नाम राजगृह था [दे० गिरिव्रज (1)] इसका अभिज्ञान गिरजाक अथवा जलालपुर (पाकि०) से किया गया है। इस राजगृह का नामोल्लेख वाल्मीकि रामायण० अयो० 67,7 मे इस प्रकार है—'उभयौ ... परतपो, पुरे राजग हे रम्ये मातामहनिवाने' (टि० यह तथ्य ... बुद्ध-काल तथा

उसके पीछे राजगृह मगध की राजधानी का भी नाम था। इस राजगह का भी दूसरा नाम गिरिव्रज ही था)। विद्वानो का अनुमान है कि केकयदेशीय राजगह मे अलक्षेद्र से युद्ध करने वाले प्रसिद्ध महाराज पुरु (ग्रीकभाषा मे पोरस) की राजधानी थी।

(3) ब्रह्मदेश (बर्मा) म एक प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक नगर जिसका सभवत मगध के प्राचीन नगर राजगृह के नाम पर बसाया गया था। सुवर्णभूमि (बर्मा) मे भारतीय उपनिवेशो पर हिंदू तथा बौद्ध नरेशो ने अति प्राचीन काल से मध्य काल तक राज किया था तथा यहाँ सवत्र भारतीय सस्कृति का प्रचार एव प्रसार था। ब्रह्मदेश म अनेक प्राचीन भारतीय उपनिवेशो का नाम भारत के प्रमुख नगरो के नाम पर रखा गया था यथा वाराणसी, पुष्करावती, वैशाली, कुसुमपुर, मिथिला, अवती, चपापुर, कबोज आदि।

राजगोपालपेट (जिला करीकनगर, आ० प्र०)

मुगल सम्राट् औरगजेब की बनवाई हुई मसजिद यहा का उल्लेखनीय स्मारक है।

राजद्रह

उदयपुर (राजस्थान) मे स्थिति राजसागर झील। इसका जैन तीथ के रूप मे उल्लेख तीर्थमाला चैत्य वदन मे है—'विघ्यस्तभन शोट्ठु मीट्ठु नगरे राजद्रहे श्री नगे'। इस झील के निकट राजनगर स्थित था जिसके खडहरो मे 'दयालशाह का किला' नामक स्थान पर तीर्थंकर का मदिर है।

राजधानी (उ० प्र०)

राजधानी तथा उपधौली नामक ग्रामो मे जो कुसम्ही स्टेशन से 11 मील दक्षिण मे हैं विशाल प्राचीन खडहरो के अवशेष हैं। चीनी यात्री युवानच्वाग जो इस स्थान पर 640 ई० मे आया था, लिखता है कि यहाँ पर मौर्यों ने बुद्ध की मृत्यु के पश्चात उनके शरीर की भस्म पर एक स्तूप बनवाया था। शायद इसी स्तूप के खडहर यहाँ 30 फुट ऊँचे ईंटो के टीले के रूप म पडे हुए हैं।

राजनगर=**अहमदाबाद**

राजन्य

महाभारत, सभा० 52,14 मे वर्णित एक जनपद जिसके निवासी युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट लेकर उपस्थित हुए थे—'काश्मीराश्च कुमाराश्च, घोरका हसकायना शिविस्त्रिगत यौधेयाराजन्या मद्रकेकया:'। राजन्य जनपद के सिक्के जिला होशियारपुर (पजाब) से प्राप्त हुए है।

राजपिप्पली (ज़िला उदयपुर, राजस्थान)

चित्तौड की निकटवर्ती पहाडियो के बीच एक घना वन जहाँ मध्यकाल म गुहिल लोग निवास करते थे। 1567 ई० मे जब अकबर ने चित्तौड पर आक्रमण किया तो मेवाड-नरेश महाराणा उदयसिंह चितौड छोड कर राजपिप्पली के वन मे गुहिलो के साथ रहने लगे थे।

राजपुर

(1)=राजौरी। महाभारत द्रोण० 4-5 मे कर्ण का राजपुर पहुंच कर काबोजो (दे० कबाज) को जीतने का उल्लेख है—'स्वबाहुबलवीर्येण धात राष्ट्रजयैषिणा, कर्णराजपुर गत्वा काबोजा निर्जितास्तवया'। युवानच्वाग ने भी इस स्थान का अपने यात्रावृत्त म उल्लेख किया है। कनिघम ने राजपुर का अभिज्ञान पश्चिमी कश्मीर मे स्थित राजौरी से किया है। (ऐशेंट ज्योग्रेफी ऑव इडिया, 192 पृ० 148)

(2) महाभारत मे कलिगदेश की राजधानी का नाम भी राजपुर है—'श्रीमद्राजपुर नाम नगर तत्र भारत, राजान शतशस्तत्र कयार्थं समुपागमन् शांति, 4,3। यहा के राजा चित्रागद की कन्या का हरण दुर्योधन ने कर्ण की सहायता से किया था।

(3) (ज़िला बिजनौर, उ० प्र०) इस स्थान से प्रागैतिहासिक अवशेष विशेषकर तावे के अनेक उपकरण प्राप्त हुए हैं।

(4)=वीरपुर (कबोडिया)। प्राचीन भारतीय उपनिवेश चपापुरी के दक्षिणी प्रात-पाडुरग-की राजधानी।

राजमहल दे० उगमहल, और कजगल।

राजमहेंद्री (आ० प्र०)

गोदावरी नदी के वाम तट पर समुद्रतट स 30 मील दूर है। किंवदती के अनुसार गोदावरी की सात धाराओ मे स प्रतिम—वशिष्ठधारा राजमहेंद्री के निकट अतर्वेदी नामक स्थान म है। इसके निकट नरसापुर ग्राम बसा है। राजमहेंद्री म ई० सन् स बहुत पहले उडीसा की सर्वप्राचीन राजधानी थी। कहा जाता है इस उडीसा के प्रथम राजवश क राजामहेंद्रदेव न बसाया था जिसक नाम पर यह नगरी राजमहेंद्री कहलाई।

राजमाची (महाराष्ट्र)

यहाँ का दुर्ग 17 वी शती म बीजापुर रियासत क अधिकार म था। महाराष्ट्र-केसरी शिवाजी न इस दुर्ग को बीजापुर क सुल्तान स छीन लिया था। यह किला उत्तर महाल क उन नौ किलों म था जिनपर शिवाजी

ने अधिकार कर लिया था।

राजविहार

कपिशा (अफगानिस्तान का एक इलाका) में स्थित एक विहार जिसे निर्माण कुषानसम्राट् कनिष्क ने चीन के राजकुमार के निवास के लिए करवाया था। चीन के सम्राट् ने राजकुमार को कनिष्क से पराजित होने पर बंधक-रूप में भेजा था। इसका कनिष्क ने बहुत सम्मान किया और उसके निवास के लिए शीतकाल में भारत, शरद में गंधार तथा ग्रीष्म में कपिशा में स्थान नियत कर दिए थे। इसी राजकुमार के वैयक्तिक व्यय के लिए चीन भुक्ति नामक प्रदेश की आय प्रदान कर दी गई थी।

राजसदन (महाराष्ट्र)

जलिना स्टेशन से 14 मील दूर राजूर नामक कस्बे का प्राचीन नाम राजसदन कहा जाता है। यह प्राचीन गणपति क्षेत्र माना जाता है।

राजसीन=रायसेन

राजापुर

(1) (जिला बांदा, उ० प्र०) हिंदी के महाकवि तुलसीदास का जन्म स्थान। यह कस्बा यमुना तट पर बसा है और चित्रकूट के निकट है। नदी के किनारे पर तुलसीदास जी के नाम से प्रसिद्ध मंदिर है जो अब जीर्ण शीर्ण अवस्था में है। यहां महाकवि के हाथ की लिखी हुई रामचरितमानस की प्रति अबतक सुरक्षित है।

(2) अल्मोड़ा (उ०प्र०) का प्राचीन नाम।

राजिम (जिला रायपुर, म० प्र०)

यहाँ राजिम या राजीवलोचन भगवान रामचंद्र का प्राचीन मंदिर है, जो शायद 8 वीं या 9 वीं शती का है। यहाँ से प्राप्त दो अभिलेखों से ज्ञात होता है कि इस मंदिर के निर्माता राजा जगतपाल थे। इनमें से एक अभिलेख राजा वसंतराज से संबंधित है। किंतु लक्ष्मणदेवालय के एक दूसरे अभिलेख से विदित होता है कि इस मंदिर को मगध नरेश सूर्यवर्मा (8 वीं शती ई०) की पुत्री तथा शिवगुप्त की माता 'वासटा' ने बनवाया था। मंदिर के स्तंभ पर चालुक्य नरेशों के समय में निर्मित नरवराह की चतुर्भुज मूर्ति उल्लेखनीय है। वराह के वामहस्त पर भू देवी अवस्थित है। शायद यह मध्य-प्रदेश से प्राप्त प्राचीनतम मूर्ति है। राजिम से पांडुवंशीय कोसल-नरेश तीवरदेव का ताम्रदानपट्ट प्राप्त हुआ था जिसमें तीवरदेव द्वारा पैंठामभुक्ति में स्थित पिंपरिपद्रक ग्राम के निवासी किसी ब्राह्मण को दिए गए दान का वर्णन है। यह

दानपट्ट तीवरदेव के 7 वें वर्ष में श्रीपुर (सिरपुर) से प्रचलित किया गया था। फ्लीट के अनुसार तीवरदेव का समय 8 वीं शती ई० के पश्चात मानना चाहिए। एक स्थानीय दंतकथा के अनुसार इस स्थान का नाम राजिव या राजिम नामक एक तैलिक स्त्री के नाम से हुआ था। मंदिर के भीतर सती-चौरा है जिसका संबंध इस स्त्री से हो सकता है। राजिम में महानदी और पैरी नामक नदियों का संगम है। संगमस्थल पर कुलेश्वर महादेव का मंदिर है जो इतना सुदृढ़ है कि सैकड़ों वर्षों से नदी के निरंतर प्रवाह के थपेड़े सहता हुआ अडिग खड़ा है। राजिम या राजीव का प्राचीन नामांतर पद्मक्षेत्र भी कहा जाता है (राजीव=कमल)। पदमपुराण, पाताल० 27,58 59 में श्री रामचंद्रजी का इस स्थान (देवपुर) से संबंध बताया गया है।

राजुकोंडा (आं० प्र०)

1335-1336 ई० में बहमनी राज्य की अवनति के पश्चात प्राचीन आंध्र-प्रदेश नई स्वतंत्र रियासतों में बँट गया था। इनमें से एक रियासत पद्मवेलमा लोगों ने स्थापित की थी जिसकी राजधानी राजुकोंडा में थी। इसकी नींव रेचरला सिंगमनय ने डाली थी।

राजलमंडगिरि (पट्टीकोंडा तालुका, जिला कुरनूल, आं० प्र०)

1953 1954 में इस स्थान से मौर्य सम्राट अशोक का एक शिलालेख प्राप्त हुआ था। यह इस ग्राम में स्थित रामलिंगेश्वर के शिवमंदिर की चट्टान पर उत्कीर्ण है। इस अभिलेख में 15 पंक्तियां हैं किंतु वह खंडितावस्था में हैं। भारतीय पुरातत्व विभाग के अनुसार यह धर्मलिपि येरागुडी की 'अमुख्य' धर्मलिपि की एक प्रतिलिपि जान पड़ती है जो अब से 25 वर्ष पहले प्राप्त हुई थी।

राजूर

(1)=राजसदन

(2) (जिला आदिलाबाद, आं० प्र०) यादवनरेशों के शासनकाल के मंदिरों के लिए उल्लेखनीय है। यादव राज्य की समाप्ति 1320 ई० में अलाउद्दीन खिलजी के दक्षिण भारत पर आक्रमण के समय हुई थी।

राजौरी दे० राजपुर (1), कंबोज

राठ (जिला हमीरपुर उ० प्र०)

यहां मध्यकाल में चंदेल राजपूतों का राज्य था। राठ के चंदेलनरेश शीलादित्य की पुत्री इतिहास प्रसिद्ध दुर्गावती थी जिसका विवाह गढ़मंडला-नरेश राजा दलपतिशाह से हुआ था। वीरांगना दुर्गावती ने मुगल सम्राट

अकबर की सेनाओ से युद्ध करते हुए वीरगति प्राप्त की थी।

राडद्रह

प्राचीन जनतीर्थ जिसका उल्लेख तीर्थमाला चैत्यवदन म है—'वदे सत्यपुरे च वाहडपुरे, राडद्रह वायडे । इसका प्राचीन साहित्य म लाटह्रद नाम भी प्राप्त है। यह तीर्थ गुजरात म था किंतु इसका अभिज्ञान सदिग्ध है। 1209 वि० स० के एक अभिलेख म इस स्थान का गुजरात नरेश कुमारपाल के सामत राजा अल्हणदेव की जागीर के अ-गत बताया गया है।

राढ=राढ़ी

प्राचीन और मध्यकाल म, विशेषकर सेनवशीय नरेशो के शासनकाल म बगाल के चार प्रातो में से एक। य प्रात थे—वरेंद्र, बागरा, बग और राढ। कुछ विद्वानो ने जैन ग्रथ आयरगसुत्त मे उल्लिखित लाढ नामक प्रदेश का अभिज्ञान राढ से किया है किन्तु यह सही नही जान पडता (दे० भडारकर, अशोक, पृ० 37)। सिंहल देश म सात सौ साथियो के सहित जाकर बस जाने वाला राजकुमार विजय, राढ देश का ही निवासी माना जाता है। राढ, पश्चिमी बगाल का एक भाग, विशेषत बर्दवान कमिश्नरी का परिवर्ती प्रदेश था। (दे० लाढ)

राणपुर=राणकपुर (जिला जोधपुर, राजस्थान)

यह कस्बा मारवाड म, सादडी से 6 मील दूर है और दक्षिण की ओर अरावली पर्वतमाला से घिरा हुआ है। यहा का प्रसिद्ध स्मारक ऋषभदेव का चौमुखा मदिर (त्रैलोक्य दीपक प्रासाद) है जो शायद 15 वी शती मे बना था। यहा 1496 वि० स०=1439 ई० का धारणाक का एक अभिलेख मिला है। किंवदती है कि प्राचीन समय मे नदिया क रहने वाले धन्ना तथा रत्ना नामक दो सहोदर भाइयो ने राणपुर के मदिर का निर्माण करवाया था। यह मदिर बहुत ऊँचा तथा भव्य है। इसमे 1444 स्तभ है। कहा जाता है कि इस बनवाने म 96 लाख रुपए खर्च हुए थे। इसका जीर्णोद्धार हाल ही म 10 लाख रुपए की लागत से हुआ था।

राणीहाट (जिला टेहरी गढवाल, उ० प्र०)

श्रीनगर से तीन मील दूर अलकनदा के तट पर स्थित ग्राम है। राजराजेश्वरी के प्राचीन मदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। कहा जाता है कि पूर्वकाल मे इस मदिर के चतुर्दिक 360 अन्य मदिर भी थे। 11वीं और 12वी शती की अनेक मूर्तिया यहा मिली है।

राणोद (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

प्राचीन समय में शवमत का केंद्र था। 10 वी शती ई० के एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि राजा अवंतिवर्मन के गुरु पुरंदर द्वारा एक मठ यहां बनवाया गया था तथा उसका विस्तार व्योमशिव ने करवाया था। राणोद को इस अभिलेख में रानीपद्र कहा गया है। इस अभिलेख में उल्लिखित मठ वर्तमान खोखई मठ है।

रात्रि

विष्णुपुराण 2,4,55 के अनुसार क्रौंचद्वीप की एक नदी—'गौरी कुमुद्वती चैव सन्ध्या रात्रिर्मनोजवा, क्षान्तिश्चपुंडरीका च सप्तैता वर्षनिम्नगा।'

राधा=राधापुरी

पश्चिमी बंगाल की एक प्राचीन नगरी जिसका उल्लेख प्रबोधचंद्रोदय नाटक (अंक 2) में है। इसका संबंध गौड़ से बताया गया है। श्री रा० दा० बनर्जी ने इस अपसढ़ अभिलेख में उल्लिखित उत्तरकालीन गुप्तनरेश महासेन गुप्त के राज्य के अंतर्गत बताया है।

रानीगुफा (उड़ीसा)

भुवनेश्वर से चार पांच मील की दूरी पर रानीगुफा स्थित है। यह जैन गुहा मंदिरों के लिए प्रसिद्ध है। इस गुम्फा या गुफा का निर्माण तीसरी शती ई० पू० में हुआ जान पड़ता है। इस गुफा में जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ के जीवन से संबंधित कई दृश्य मूर्तिकारी के रूप में अंकित हैं। गणेशगुफा और हाथी-गुफा रानीगुफा के गुहासमूह के ही अंतर्गत हैं।

रानीताल दे० कवर

रानीपद्र—दे० राणोद

रापर (कच्छ, गुजरात)

कच्छ में मनफरा से 26 मील दूर है। यह स्थान एक प्राचीन विशाल जैन मंदिर के लिए उल्लेखनीय है। इस मंदिर में पहले चिंतामणि पार्श्वनाथ की मूर्ति प्रतिष्ठापित थी।

रापरी (तहसील शिकोहाबाद, जिला मैनपुरी, उ० प्र०)

यहां अलाउद्दीन खिलजी के जमाने की मसजिद है जिसे मलिक काफूर ने बनवाया था।

राप्ती

पूर्वी उत्तरप्रदेश की नदी। राप्ती संभवतः प्राचीन अचिरवती या इरावती का अपभ्रंश है। कुछ विद्वानों के मत में यह बौद्ध साहित्य की अचिरावती है।

(दे० वारवत्या, इरावती, अचिरावती)।

रामक

कृत्स्न कोलगिरिं चैव सुरभीपत्तन तथा, द्वीप ताम्राह्वय चैव पवत रामक तथा महा० सभा० 31, 68। यह शायद रामेश्वरम् की पहाड़ी है। यह स्थान लंका में स्थित एडम्स पीक भी हो सकता है। इसे बौद्धों ने सुमनकूट नाम दिया था। (दे० रामप्वत)

रामकेलि (बंगाल)

15 वीं शती ई० में बंगाल के शासक हुसैन शाह के मन्त्रिद्वय रूप और सनातन ने इस नगर को बसाया तथा यहा राममदिर का निर्माण करवाया था। रामकेलि के निकट इन्होंने कन्हाई नाटयशाला नामक कृष्णमदिर भी बनवाया था। रूप और सनातन कालांतर में चैतन्य महाप्रभु के शिष्य बनकर वृंदावन चले गये थे। चैतन्य भी स्वयं रामकेलि आए थे।

रामगगा (उ० प्र०)

मध्यकाल के मुसलमान इतिहासकारों ने इसी नदी को राहिब लिखा है। यह शायद वाल्मीकि रामायण अयोध्याकांड 71, 14 ('वासकृत्वा सर्वतीर्थे तीर्त्वाचोत्तरगा नदीम, अन्यानदीश्च विविध पार्वतीयरस्तुरगमैः)' में वर्णित 'उत्तरगा' नदी है। रामगगा कुमायू की पहाड़ियों से निकलकर गंगा में कन्नौज के पास गिरती है।

रामगढ़ (उ० प्र०)

(1) यह ग्राम उत्तरपूर्व रेलवे के राजवाड़ी स्टेशन से 7 मील दूर है। इसका संबंध महाभारत के राजा विराट से बतलाया जाता है। राजा वैरत (या विराट) का टूटा फूटा एक किला भी यहा स्थित है। किले और गंगा के बीच एक प्राचीन ताल है जिसे भक्तिन ताल कहते है। इसके पश्चिमी तट पर रामशाला मंदिर है जहा कई प्रसिद्ध संतों का निवासस्थान रहा है। यहा प्राचीनकाल के खडहरों के कई टीले है।

(2) दे० अलीगढ़

(3) दे० रामगिरि (2)

रामगाम=रामग्राम

बौद्ध साहित्य के अनुसार बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात उनके शरीर की भस्म के एक भाग के ऊपर एक महास्तूप रामगाम या रामपुर (दे० बुद्धचरित, 28 66) नामक स्थान पर बनवाया गया था। बुद्धचरित के उल्लेख से ज्ञात होता है कि रामपुर में स्थित आठवां मूल स्तूप उस समय विश्वस्त नागों द्वारा

रक्षित था और इसीलिए राजा अशोक ने उस स्तूप की धातुएं अन्य सात स्तूपों की भांति ग्रहण नहीं की। यह कोलिय क्षत्रियों का प्रमुख नगर था। रामग्राम कपिलवस्तु के पूर्व की ओर स्थित था। कुणाल जातक के भूमिका भाग से सूचित होता है कि रोहिणी या राप्ती नदी कपिलवस्तु और रामगाम जनपदों के बीच की सीमारेखा बनाती थी। इस नदी पर एक ही बांध द्वारा दोनों जनपदों को सिंचाई के लिए जल प्राप्त होता था। रामगाम की ठीक ठीक स्थिति का सूचक कोई स्थान शायद इस समय नहीं है किंतु यह निश्चित है कि कपिलवस्तु (नेपाल की तराई, जिला बस्ती की उत्तरी सीमा के निकट) के पूर्व की ओर यह स्थान रहा होगा। चीनी यात्री युवानच्वांग जिसने भारत का पर्यटन 630-645 ई० में किया था, अपने यात्रा क्रम में रामगाम भी आया था। [दे० रामपुर (1)]

रामगिरि

(1) कालिदास के मेघदूत में वर्णित यक्ष के निर्वासनकाल का स्थान—'कश्चित्कांताविरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः शापेनास्तं गमितमहिमा वर्षभोग्येन भर्तुः, यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु, स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु' पूर्वमेघ 1। रामगिरि का अभिज्ञान अनेक विद्वानों ने जिला नागपुर (महाराष्ट्र) में स्थित रामटेक से किया है। कालिदास के अनुसार इस स्थान के जल (सरोवर आदि) सीता के स्नान से पवित्र हुए थे तथा यहां की भूमि राम के पद चिह्नों से अंकित थी ('वंद्यैः पुंसां रघुपतिपदैरंकितं मेखलासु')। रामटेक में प्राचीन परंपरागत किंवदंती है कि श्रीराम ने वनवास-काल का कुछ समय इस स्थान पर सीता और लक्ष्मण के साथ व्यतीत किया था। रामगिरि के आगे मेघ की अलका यात्रा के प्रसंग में पहाड़ और नदियों का जो वर्णन कालिदास ने किया है वह भी भौगोलिक दृष्टि से रामटेक को मेघ का प्रस्थान बिंदु मानकर ठीक बैठता है। कुछ विद्वानों के मत में उत्तर-प्रदेश के अंतर्गत चित्रकूट ही को कालिदास ने रामगिरि कहा है किंतु यह अभिज्ञान नितांत संदिग्ध है क्योंकि चित्रकूट से यदि मेघ अलका के लिए जाता तो उसे ठीक उत्तर पश्चिम की ओर सरल रेखा में यात्रा करनी थी और इस दशा में उस मार्ग में मालदेश, आम्रकूट, नर्मदा, विदिशा आदि स्थान न पड़ते क्योंकि ये स्थान चित्रकूट के दक्षिण पश्चिम में हैं। कुछ अन्य विद्वानों ने भूतपूर्व सरगुजा रियासत (म० प्र०) के रामगढ़ से ही रामगिरि का अभिज्ञान किया है।

(2) (भूतपूर्व सरगुजा रियासत, म० प्र०) लक्ष्मणपुर से 12वें मील पर

रामगिरि नामक पहाड़ी है जिसे रामगढ़ कहते हैं। इसकी गुफाओं में अनेक भित्तिचित्र प्राप्त हुए हैं। एक गुफा में एक ब्राह्मी अभिलेख भी मिला है जिससे इसका निर्माण काल डॉ० ब्लाख के मत से तीसरी शती ई० पू० जान पड़ता है। कहा जाता है इसी स्थान पर उग्रादित्याचार्य ने, अपने वैद्यक ग्रंथ कल्याणकारक की रचना की थी। इसमें शायद, इन्हीं अलंकृत चैत्यगुहाओं का उल्लेख है। कुछ लोगों के मत में मेघदूत की रामगिरि यही है।

(3) (महाराष्ट्र) शिवाजी के राजकवि भूषण ने शिवराजभूषण, छंद 214 में जयसिंह के साथ संधि होने पर रामगिरि नामक दुर्ग का शिवाजी द्वारा मुगलों को दिए जाने का उल्लेख किया है। उन्हें यह स्थान कुतुबशाह (गोलकुंडा के सुल्तान) से मिला था। यह उल्लेख भी इसी छंद में है—'भूषन भनत भाग नगरी कुतुब साह दै करि गवायो रामगिरि से गिरीस को, सरजा सिवाजी जयसिंह मिरजा को लीबे सौगुनी बड़ाई गढ़ दीन्ह हैं दिलीस को'।

(4) (मैसूर) बंगलौर मैसूर रेलमार्ग पर मद्दूर स्टेशन से 12 मील पर यह पहाड़ी स्थित है। स्थानीय जनश्रुति के अनुसार सुग्रीव का मधुवन इसी स्थान पर था। पर्वत के शिखर पर कोदंड रामस्वामी का मंदिर है जहां राम-लक्ष्मण-सीता की मूर्तियां है।

रामग्राम=रामगाम

रामचौरा

टौंस नदी पर अयोध्या के निकट घाट। कहते है वन जाते समय राम-लक्ष्मण सीता ने तमसा नदी को इसी स्थान पर पार किया था। (दे० तमसा)

रामटेक

नागपुर से 20 मील दूर रमणीक और ऊंची पहाड़ियों पर स्थित है। कुछ विद्वानों के मत में यह मेघदूत में वर्णित रामगिरि है। यहां विस्तीर्ण पर्वतीय प्रदेश में अनेक छोटे छोटे सरोवर स्थित हैं जो शायद पूर्वमेघ में उल्लिखित—'जनकतनया स्नान पुण्योदकेषु' में निर्दिष्ट जलाशय हैं। किंवदंती है कि वनवास काल में राम लक्ष्मण सीता इस स्थान पर रहे थे। श्रीरामचंद्रजी का एक सुंदर मंदिर ऊंची पहाड़ी पर बना है। मंदिर के निकट विशाल वराह की मूर्ति के आकार में कटा हुआ एक शैलखंड स्थित है। रामटेक को सिंदूरगिरि भी कहते है। रामटेक के पूर्व की ओर सुरनदी या सूयनदी बहती है। इस स्थान पर एक ऊंचा टीला है जिसे गुप्तकालीन बताया जाता है। चंद्रगुप्त द्वितीय की पुत्री प्रभावती गुप्त ने रामगिरि की यात्रा की थी—इस तथ्य की जानकारी हमें रिद्धपुर के ताम्रपत्र लेख से होती है। प्राचीन जनश्रुति के अनुसार [illegible]

न शबुक का वध इसी स्थान पर किया था।

रामठ=रमठ

रामणा (काठियावाड, गुजरात)

वेट द्वारका से 56 मील दूर प्राचीन वैष्णव तीर्थ है।

रामणीयक द्वीप

महाभारत, आदि० 26,8 म वर्णित—'तदा भूरभवच्छ नाजलामिभिरनेकश, रामणीयकमागच्छन् मानासहभुजगमा'। श्री न० ल० डे के मत म यह वतमान आर्मिनिया देश है।

रामतीर्थ

'शुभ्र तीथवर तस्माद रामतीथ जगामह'—महा० शल्य० 49,7। महाभारत-काल म यह सरस्वती नदी क तट पर स्थित एक तीर्थ था जिसकी यात्रा बलराम जी ने सरस्वती के अ य तीर्थों की यात्रा क साथ की थी। महाभारत की कथा के अनुसार, यह तीथ परशुराम क नाम पर प्रसिद्ध था।

रामनगर

(1) (कोकण, महाराष्ट्र) शिवाजी के समय मे यह एक छोटा सा राज्य था। इसे सलहरि के युद्ध के पश्चात, 1672 ई० मे शिवाजी न जीत लिया था। इस काय म शिवाजी को अपन सनापति मोरोपत पिंगले से सहायता मिली थी। महाकवि भूषण ने इस घटना का उल्लेख किया है—'भूषन भनत रामनगर जवारि तेरे वैरपरवाह बहे रुधिर नदीन क'—शिवराजभूषण, 173।

(2) (ज़िला वाराणसी, उ० प्र०) काशी की सुप्रसिद्ध रियासत का मुख्य स्थान जो वाराणसी क सामने गगा के उस पार स्थित है। यह परचमध्यकालीन रियासत थी जो अब वाराणसी जिले म विलीन हो गई है। बौद्ध साहित्य म काशी का एक नाम रामानगरी मिलता है। सभव है रामनगर का इस नाम से सबध हो।

रामनाद (मद्रास)

रामनादनरेश, रामेश्वर द्वीप क परपरागत शासक माने जाते हैं। यह स्थान रामेश्वरम के माग म है। यहा स 5 मील दूर त्रिपुलानी और 10 मील पर देवीपाटन के प्रसिद्ध प्राचीन मदिर हैं।

रामपर्वत

'कृत्स्न कोलगिरिं चव सुरभीपत्तन तथा द्वीप ताम्राह्वय चैव पवत रामक तथा'—महा० सभा० 31,68। इस स्थान को सहदेव ने दक्षिण की दिग्विजय यात्रा म विजित किया था। प्रसग स यह स्थान रामेश्वरम की पहाडी जान

पड़ता है। इसका अभिज्ञान लंका में स्थित बौद्ध तीर्थ सुमनकूट या आदम की चोटी (Adam s Peak) से भी किया जा सकता है। प्राचीन किंवदंती के अनुसार इस पहाड़ी पर जो चरणचिह्न बने हैं वे भगवान राम के हैं। वे समुद्र पार करने के पश्चात लंका में इस पहाड़ी के पास पहुंचे थे और उनके पावन चरण-चिह्न इस पहाड़ी की भूमि पर अंकित हो गए थे। बाद में बौद्धों ने इन्हें महात्मा बुद्ध के और ईसाइयों ने आदम के चरणचिह्न मान लिया।

रामपुर

(1) (ज़िला बस्ती, उ० प्र०) मुंडेरवा रेल स्टेशन से 3 मील दक्षिण की ओर स्थित है। भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात उनके अस्थि अवशेषों के आठ भागों में से एक पर एक स्तूप बनाया गया था जिसे रामभार स्तूप कहा जाता था। संभवतः इसी स्तूप के खंडहर इस स्थान पर मिले हैं। किंवदंती है कि इसी स्तूप से नागाओं ने बुद्ध का दाँत चुरा लिया था जो लंका में कांडी के मंदिर में सुरक्षित है। रामपुर को कुछ विद्वान रामग्राम मानते हैं। रामपुर का उल्लेख बुद्धचरित 28,65 में है जहां रामपुर के स्तूप का विश्वस्त नागों द्वारा रक्षित होना कहा गया है। कहा जाता है कि इसी कारण अशोक ने बुद्ध की शरीर धातु अन्य सात स्तूपों की धातु की भांति, इस स्तूप से प्राप्त नहीं की थी।

(2) (भूतपूर्व रियासत उ० प्र०) रुहेलखंड की प्रायः 200 वर्ष प्राचीन रियासत जो अब उत्तर प्रदेश में विलीन हो गई है। इसके संस्थापक रुहेले थे। रामपुर के क्षेत्र का नाम युवानच्वांग ने गोविषाण लिखा है।

(3) (दक्षिण बर्मा) वर्तमान मोलमीन के निकट स्थित प्राचीन भारतीय उपनिवेश।

रामपुरवा

(1) (ज़िला चंपारन बिहार) गौनहा स्टेशन से एक मील दक्षिण की ओर यह ग्राम बसा है। यहां अशोक के दो खंडित प्रस्तर-स्तंभ स्थित हैं। इनके शीर्षों पर सिंह और वृष की प्रतिमाएं निर्मित हैं। पहले पर अशोक की धर्म-लिपियां अंकित हैं।

(2) (म० प्र०) उत्तरमध्यकालीन इमारतों के अवशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

रामप्पा दे० पालमपट

रामभार स्तूप दे० रामपुर (1), रामग्राम

रामवन (ज़िला रीवा, म० प्र०)

सतना-रीवा मार्ग पर सतना से 10 वें मील पर स्थित है। वाकाटक तथा

गुप्तनरेशों के समय के अनेक अवशेष रामवन में पाए गए हैं।

रामह्रद

महाभारत अनुशासन० में उल्लिखित एक तीर्थ जो विपाशा या ब्यास (पंजाब) के तट पर स्थित रहा होगा। इसको परशुराम कुंड भी कहते थे। यह विपाशा का ही कोई कुंड जान पड़ता है—'रामह्रद उपस्पृश्य विपाशायां कृतोदकः, द्वादशाहं निराहारः कल्मषात् प्रमुच्यते' अनुशासन० 25,47। (दे० शयणावत)

रामाधार दे० कुशीनगर

रामानगरी

बौद्ध साहित्य में काशी का एक नाम (पाली—रम्मानगरी)। संभवतः यह नाम वर्तमान रामनगर के रूप में आज भी जीवित है।

रामावती (बर्मा)

अराकान में स्थित रामी या रावी नामक स्थान। अराकान के प्राचीन इतिहास से सूचित होता है कि इस नगरी को वाराणसी के एक राजकुमार ने जिसने अराकान या वैशाली में प्रथम भारतीय राजवंश की नींव डाली थी, अपनी राजधानी बनाया था। जान पड़ता है कि रामावती वर्तमान रंगून के निकट स्थित थी। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि वाराणसी का बौद्ध साहित्य में एक नाम रामानगरी भी मिलता है और वाराणसी के एक राजकुमार द्वारा ब्रह्मदेश में रामावती नाम की नगरी का बसाया जाना अर्थपूर्ण है।

रामेश्वरम (मद्रास)

मनार की खाड़ी में स्थित द्वीप जहां भगवान् राम का लोक प्रसिद्ध विशाल मंदिर है। कहा जाता है कि इसी स्थान पर श्रीरामचंद्रजी ने लंका के अभियान के पूर्व शिव की आराधना करके उनकी मूर्ति की स्थापना की थी। वास्तव में यह स्थान उत्तर और दक्षिण भारत की संस्कृतियों का संगम है। पुराणों में रामेश्वरम का नाम गंधमादन है। मनारद्वीप उत्तर से दक्षिण तक लगभग ग्यारह और पूर्व से पश्चिम तक लगभग सात मील चौड़ा है। बस्ती के पूर्वी समुद्र तट पर लगभग 900 फुट लंबे और 600 फुट चौड़े स्थान पर रामेश्वरम का मंदिर बना है। इसके चतुर्दिक् परकोटा है जिसकी ऊंचाई 22 फुट है। इसमें तीन ओर एक एक और पूर्व की ओर दो गोपुर हैं। पश्चिम का गोपुर सात-खंडा है और लगभग सौ फुट ऊंचा है। अन्य गोपुर अर्धनिर्मित अवस्था में हैं और दीवार से अधिक ऊंचे नहीं हैं। रामेश्वरम् का मुख्य मंदिर 120 फुट ऊंचा है। तीन प्रवेशद्वारों के भीतर शिव के प्रख्यात द्वादश ज्योति-

लिंगों में से एक यहां स्थित है। मूर्ति के ऊपर शेषनाग अपने फनों से छाया करते हुए प्रदर्शित है। रामेश्वरम के मंदिर की भव्यता उसके सहस्रों स्तंभों वाले बरामदे के कारण है। यह 4000 फुट लंबा है। लगभग 690 फुट की अव्यवहित दूरी तक इन स्तंभों की लगातार पंक्तियां देखकर जिस भव्य तथा अनोखे दृश्य का आंखों को ज्ञान होता है वह अविस्मरणीय है। भारतीय वास्तु के विद्वान फर्ग्युसन के मत में रामेश्वरम मंदिर की कला में द्रविड़ शैली के सर्वोत्कृष्ट सौंदर्य तथा उसके दोषों दोनों ही का समावेश है। उनका कहना है कि तंजौर का मंदिर यद्यपि रामेश्वरम मंदिर की अपेक्षा विशालता तथा सूक्ष्म तक्षण की दृष्टि से उत्तमता में उसका दशमांश भी नहीं है किंतु संपूर्ण रूप से देखने पर उससे अधिक प्रभावशाली जान पड़ता है। रामेश्वरम् के निकट लक्ष्मणतीर्थ, रामतीर्थ, रामझरोखा (जहां श्रीराम के चरणचिह्नों की पूजा होती है), सुग्रीव आदि उल्लेखनीय स्थान हैं। रामेश्वरम से चार मील पर मंगलातीर्थ और इसके निकट विलुनी तीर्थ हैं। रामेश्वरम से थोड़ी ही दूर पर जटा तीर्थ नामक कुंड है जहां किंवदंती के अनुसार रामचंद्र जी ने लंका युद्ध के पश्चात अपने केशों का प्रक्षालन किया था। रामेश्वरम का शायद रामपर्वत के नाम से महाभारत में उल्लेख है। (दे० रामपर्वत, गंधमादन)

रायगढ़ (जिला कोलाबा, महाराष्ट्र)

1662 ई० में शिवाजी तथा बीजापुर के सुलतान में काफी संघर्ष के पश्चात संधि हुई थी जिससे शिवाजी ने अपना जीता हुआ सारा प्रदेश प्राप्त कर लिया था। इस संधि के लिए शिवाजी के पिता शाहजी कई वर्ष पश्चात पुत्र से मिलने आए थे। शिवाजी ने उन्हें अपना समस्त जीता हुआ प्रांत दिखाया था। उस समय शाहजी के सुझाव को मानकर रैरी पहाड़ी के उच्च शृंग पर शिवाजी ने रायगढ़ को बसाने का इरादा किया था। यहां उन्होंने एक किला तथा प्रासाद बनवाया और वे यहीं निवास करने लगे। इस प्रकार शिवाजी के राज्य की राजधानी रायगढ़ में ही स्थापित हुई। रायगढ़ चारों ओर से सह्याद्रि की अनेक पर्वत मालाओं से घिरा हुआ था और उसके उच्च शृंग दूर से दिखाई देते थे। महाकवि भूषण ने रायगढ़ के विषय में लिखा है—'दच्छिन के सब दुग्ग जिति दुग्ग सहार विलास सिव सेवक सिव गन पती कियो रायगढ़ वास, तँह नप राजधानी करी, जीति सकल तुरकान, सिव सरजा रुचि दान में, कीहो सुजस जहान'। शिवराजभूषण में—छंद 15 से छंद 24 तक रायगढ़ के वैभव विलास का विस्तृत वर्णन है। छंद

स्थापना सभवत 14वी शती के अतिम चरण में हुई थी। खलारी के कल्चुरि-नरेश राजा सिंहा ने प्रथम बार यहा अपनी राजधानी बनाई। रायपुर म एक मध्ययुगीन दुर्ग भी है जिसके ग्रदर कई प्राचीन मदिर हैं। यहा का सवश्रेष्ठ मदिर दूधाधारी महाराज के नाम स प्रसिद्ध है। इसम बहुत स भाग श्रीपुर या सिरपुर क कलावशेषो स निर्मित किए गए है। इनम मुख्य पत्थर के स्तभ हैं जिन पर हिंदू देवी देवताओ की अनेक मूर्तिया खुदी हुई है। मदिर के शिखर व निचले भाग म रामायण की कथा के कुछ सुदर दृश्य उत्कीर्ण है जो अधिक प्राचीन नही हैं। प्रदक्षिणापथ क गवाक्ष म नृसिंहावतार की मूर्ति तथा अन्य मूर्तिया स्थापित है। ये सिरपुर से लाई गई थी। य उच्चकोटि की मूर्तिकला के उदाहरण हैं। इस मदिर तथा सलग्न मठ का निर्माण दूधाधारी महाराज द्वारा भोसले राजाओ क समय मे किया गया था। इसम पहले छत्तीसगढ़ म तांत्रिक सप्रदाय का बहुत जोर था। दूधाधारी महाराज न प्रान्त की नवीन सास्कृतिक चेतना के उदबोधन मे प्रमुख भाग लिया और तांत्रिक सप्रदाय की भ्रष्ट परपराओ को वष्णव मत की सुरुचि सपन्न मान्यताओ द्वारा परिष्कृत करन म महत्त्वपूर्ण योग दिया था। रायपुर स राजा महासौदेवराज का सरभपुर नामक ग्राम स प्रचलित किया गया एक ताम्रदानपट्ट प्राप्त हुआ है जिसक अभिलेख स यह गुप्तकालीन सिद्ध होता है। इसम सौदेवराज द्वारा पूर्वराष्ट्र म स्थित श्रीसाहिक नामक ग्राम को दो ब्राह्मणो को दान म दिए जान का उल्लेख है।

(2) (जिला सुल्तानपुर, उ० प्र०) अमेठी के पास स्थित इस ग्राम म अनेक बौद्धकालीन अवशेष प्राप्त हुए है।

रायलसीमा (आ० प्र०)

यहा स्थित लेपाक्षी का मदिर वास्तुसौदय तथा भित्तिचित्रो के लिए उल्लेखनीय है।

रायसेन=राजसीन (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

मालव क्षेत्र म स्थित मध्यकालीन नगर। बाबर के समय म यहा का राजा शीलादित्य था जो ग्वालियर क विक्रमादित्य, चित्तौड के राणासागा, चदेरी के मदिनीराय तथा अन्य राजपूत नरेशो न साथ कनवा के युद्ध म बाबर से लडा था (1527 ई०)। टाड न अपने 'राजस्थान' म लिखा है कि शीलादित्य राणासागा स विश्वासघात करके बाबर से मिल गया था। 1543 ई० मे रायसेन के दुर्ग पर शेरशाह ने आक्रमण किया। उसन इस किले पर अधिकार तो कर लिया किंतु इसके बाद विश्वासघात करके उसने उत्त

('वारि पताल सो माची मही अमरावती की छबि ऊपर छाजें') से यह भी ज्ञात होता है कि रायगढ के दुर्ग की पानी से भरी हुई एक बहुत गहरी खाई भी थी। शिवाजी का राज्याभिषेक रायगढ मे, 6 जून, 1674 ई० को हुआ था। काशी के प्रसिद्ध विद्वान गागाभट्ट इस समारोह के आचार्य थे। शिवाजी की समाधि भी रायगढ मे ही है।

रायचूर (मैसूर)

दक्षिण का प्रसिद्ध प्राचीन नगर है। रायचूर का मुख्य ऐतिहासिक स्मारक यहा का दुर्ग है जिसे वारंगल नरेश के मन्त्री गोरे गगायरुड्डी वारु ने 1294 ई० मे बनवाया था। यह सूचना एक विशाल पाषाण फलक पर उत्कीर्ण अभिलेख से मिलती है। प्रारभ मे रायचूर मे हिंदू तथा जैन राजवशो का राज था। पीछे बहमनी सल्तनत का यहा कब्जा हो गया। 15वी शती के अत मे बहमनी राज्य की अवनति होने पर बीजापुर के सुल्तान ने रायचूर पर अधिकार कर लिया और तत्पश्चात औरगजेब द्वारा बीजापुर रियासत के मुगल साम्राज्य मे मिला लिए जाने पर यह नगर भी इस साम्राज्य का एक अग बन गया। इसी समय रायचूर के किले मे मुगल सेनाओ का शिविर बनाया गया था। किले के पश्चिमी दरवाजे के पास ही एक सुदर भवन के अवशेष हैं। किला दो प्राचीरो से घिरा हुआ है। भीतरी प्राचीर और उसके प्रवेश द्वार इब्राहीम आदिलशाह ने 1549 ई० के लगभग बनवाए थे। प्राचीरो के तीन ओर एक गहरी खाई है और दक्षिण की ओर एक पहाडी। ये दीवारे बारह फुट लबे और तीन फुट मोटे प्रस्तर खडो से बनी हैं। ये पत्थर बिना चूने या मसाले के परस्पर जुडे हुए हैं। रायचूर की जामा ममजिद 1618 ई० मे बनी थी। एक मीनार नाम की मसजिद महमूदशाह बहमनी के काल (919 हिजरी) मे बनी थी। यह सूचना एक फारसी अभिलेख से प्राप्त होती है जो इसकी देहली पर खुदा हुआ है। मसजिद मे केवल एक ही मीनार है जिसकी ऊचाई 65 फुट है। यह मसजिद के दक्षिण पूर्वी कोने मे स्थित है। इसमे दो मजिले हैं। मीनार ऊपर की ओर पतली है और शीर्ष पर बहमनी शैली के गुबद से ढकी हुई है। इस मसजिद के पास यतीमशाह की मसजिद तथा एक दरवाजा है। अन्य दरवाजो मे नौरगी दरवाजा हिंदूकालीन जान पडता है। इसके एक बुर्ज पर एक नाग राजा की मूर्ति है जिसके सिर पर पचमुखी सर्प का मुकुट है।

रायपुर (म० प्र०)

छत्तीसगढ (प्राचीन दक्षिण कोसल) के क्षेत्र का मुख्य नगर है। इसकी

स्थापना सम्भवत 14वी शती के अंतिम चरण म हुइ थी। खलारी के कल्चुरि-नरेश राजा सिंहा न प्रथम बार यहा अपनी राजधानी बनाई। रायपुर म एक मध्ययुगीन दुग भी है जिसके अदर कई प्राचीन मदिर है। यहा का सवश्रेष्ठ मदिर दूधाधारी महाराज के नाम स प्रसिद्ध है। इसम बहुत स भाग श्रीपुर या सिरपुर के कलावशेषा स निर्मित किए गए हैं। इनम मुख्य पत्थर के स्तम हैं जिन पर हिंदू दवी देवताओ की अनेक मूर्तिया खुदी हुइ है। मदिर के शिखर क निचले भाग म रामायण की कथा के कुछ सुदर दृश्य उत्कीण है जो अधिक प्राचीन नही हैं। प्रदक्षिणापथ के गवाक्ष म नसिंहावतार की मूर्ति तथा अन्य मूर्तिया स्थापित हैं। ये सिरपुर से लाई गई थी। य उच्चकोटि की मूर्तिकला क उदाहरण हैं। इस मदिर तथा सलग्न मठ का निमाण दूधाधारी महाराज द्वारा भोसले राजाओ क समय मे किया गया था। इसस पहले छत्तीसगढ मे तान्त्रिक सप्रदाय का बहुत जार था। दूधाधारी महाराज न प्रान्त की नवीन सास्कृतिक चेतना के उदबोधन मे प्रमुख भाग लिया और तान्त्रिक सप्रदाय की भ्रष्ट परपराओ को वष्णव मत की सुरुचि सपन्न मान्यताओ द्वारा परिष्कृत करन म महत्त्वपूण योग दिया था। रायपुर स राजा महासोदेवराज का सरभपुर नामक ग्राम स प्रचलित किया गया एक ताम्रदानपट्ट प्राप्त हुआ है जिसक अभिलेख से यह गुप्तकालीन सिद्ध होता है। इसम सोदेवराज द्वारा पूवराष्ट्र म स्थित श्रीसाहिक नामक ग्राम को दो ब्राह्मणो को दान म दिए जाने का उल्लेख है।

(2) (ज़िला सुल्तानपुर, उ० प्र०) अमठी के पास स्थित इस ग्राम मे अनेक बौद्धकालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं।

रावलसीमा (आ० प्र०)

यहा स्थित लेपाक्षी का मदिर वास्तुसौदय तथा भित्तिचित्रो के लिए उल्लेखनीय है।

रायसेन=राजसीन (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

मालव क्षेत्र मे स्थित मध्यकालीन नगर। बाबर के समय म यहा का राजा शीलादित्य था जो ग्वालियर के विक्रमादित्य, चित्तौड के राणासागा, चदरी क मदिनीराय तथा अन्य राजपूत नरेशो क साथ कनवा के युद्ध म बाबर से लडा था (1527 ई०)। टाड न अपने 'राजस्थान म लिखा है कि शीलादित्य राणासागा से विश्वासघात करके बाबर से मिल गया था। 1543 ई० मे रायसन के दुग पर शेरशाह न आक्रमण किया। उसन इस किले पर अधिकार तो कर लिया किंतु इसक बाद विश्वासघात करके उसने उस

दुगस्थ राजपूतो को मरवा डाला जिनकी रक्षा का वचन उसन पहले दिया था। इस बात से राजपूत शेरशाह के पक्के शत्रु बन गये और कालिजर के युद्ध म उहोन शेरशाह का डटकर सामना किया।

रावणह्रद

मानसरावर (तिब्बत) के निकट पश्चिम की ओर एक झील जिससे सतलज नदी निकलती है।

रावतपुर (जिला हमीरपुर, उ०प्र०)

मध्यकाल के च देल-नरेशो के समय के ध्वसावशेष इस स्थान पर पाये गए हैं।

रावल (जिला मथुरा, उ०प्र०)

यमुना तट के समीप छाटा सा ग्राम है जिसे श्रीकृष्ण की प्रेयसी राधा की ज मभूमि माना जाता है किंतु परपरागत अनुश्रुति म बरसाना को ही यह गौरव प्राप्त है।

रावली (जिला बिजनौर, उ०प्र०)

मालिनी और गगा का सगम-स्थान जो बिजनौर नगर से 6 मील उत्तर पश्चिम की ओर स्थित है। मालिनी नदी के तट पर कालिदास के अभिज्ञान शाकुतल म वर्णित कण्वाश्रम की स्थिति थी—(दे० मडावर)। स्थानीय जनश्रुति म कहा जाता है कि यह आश्रम रावलीघाट के समीप ही स्थित था। (दे० मालिनी)

रावी

पजाब की प्रसिद्ध नदी—प्राचीन इरावती। (दे० इरावती)

राहतगढ़ (जिला सागर, म०प्र०)

गढ़मडला नरेश सग्राम शाह (मृत्यु 1541 ई०) के बावनगढ़ा म से एक। अकबर न गढ़मडला की रानी वीरागना दुर्गावती के निधन के पश्चात उनके पुत्र वीरनारायण के उत्तराधिकारी चद्रशाह को गढ़मडला का राजा बनान के पश्चात् जो किले स लिए थ उनम स यह भी था।

राहिब

महमूद गजनी के इतिहासकारो न रामगगा नदी को राहिब लिखा है। कन्नौज के राजा त्रिलोचनपाल और महमूद गजनी म परस्पर युद्ध 1019 ई० म रामगगा के तट पर ही हुआ था। उस समय त्रिलोचनपाल कन्नौज के निकट बारी नामक स्थान पर रहता था।

रिढपुर (म०प्र०)

इस स्थान पर गुप्त सम्राट् समुद्रगुप्त का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था जिसमे समुद्रगुप्त के लिए प्रयुक्त 'तत्पादपरिगहीत' शब्दो से ज्ञात होता है कि उसके पिता चद्रगुप्त प्रथम ने समुद्रगुप्त की योग्यता को जानत हुए ही उस अपने राज्य का उत्तराधिकारी चुना था।

रीवां (म० प्र०)

प्राचीन नाम बाधवगढ है। यहा बुदेला क्षत्रिया का राज्य था।

रुचक

विष्णुपुराण 2, 2, 27 के अनुसार मेरुपवत के दक्षिण म स्थित एक पवत —'त्रिकूट शिशिरश्च पतगो रुचकस्तथा निषदाद्यादक्षिणतस्तस्य केसरपवता'।

रुद्रपुर (जिला गोरखपुर, उ० प्र०)

गौरी बाजार रेलवे स्टेशन से प्राय 10 मील दक्षिण की ओर इस छाटे स कस्व क पास सहनकोट नामक एक जीण शीण दुग स्थित है। इस स्थान का वणन चीनी यात्री युवानच्वाग न अपन यात्रावृत्त म किया है। इसकी यात्रा क समय 630 645 ई० है। इस स्थान पर एक बडा नगर बसा हुआ था। यहा एक धनी ब्राह्मण रहता था जो परम धार्मिक तथा चरित्रवान था। इसन भिक्षुको क स्वागत के लिए एक विशाल मदिर बनवाया था। युवानच्वाग इस स्थान पर कुशीनगर से वनारस जाते समय आया था। किले के पूव मे दूधनाथ का मदिर है। कुछ दूर पर एक वृक्ष के नीच 11 फुट ऊची विष्णु की मूर्ति स्थापित है। रुद्रपुर के चारो ओर हिंदू नरेशो के समय के अनेक मदिर है।

रुद्रप्रयाग = रुद्रावत (जिला गढवाल, उ० प्र०)

महाभारत वन० म तीथ वणन के प्रसग म उल्लिखित है—'रुद्रावत ततो गच्छेत तीर्थसेवी नराधिप, तत्रस्नात्वा नरो राजन स्वर्गलोक च गच्छति'—वन० 84, 37। रुद्रप्रयाग म मदाकिनी [(दे० मदाकिनी 3)] और गगा की मुख्य धारा अलकनदा का सगम है। गढवाल मे नदियो क सगम-स्थानो का बहुधा प्रयाग नाम से अभिहित किया गया है—यथा देवप्रयाग, कण प्रयाग, आदि।

रुद्रावत दे० रुद्रप्रयाग

रुनुकता (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा आगरा माग पर मथुरा से 10 मील पर स्थित छोटा-सा ग्राम है। इसका प्राचीन नाम रेणुका क्षेत्र कहा जाता है। किवदती है कि यहा महर्षि

जमदग्नि का आश्रम स्थित था। एक ऊंचे टील पर जमदग्नि और उनकी पत्नी रेणुका का मंदिर है। नीचे उनके पुत्र परशुराम के नाम पर प्रसिद्ध दूसरा मंदिर है। (रेणुका के नाम से संबद्ध अन्य स्थान के लिए दे० चद्रवट)। जनश्रुति है कि महाकवि सूरदास का जन्म इसी स्थान पर हुआ था। ये मुगल सम्राट अकबर के समकालीन थे। परासौली नाम के ग्राम में सूरदास का निवासस्थान बताया जाता है। रुनुक्ता में यमुना पूर्व दिशा की ओर बहते बहते एकाएक घूमकर कुछ दूर तक पश्चिम की ओर बहती है। (टि० सीही नामक ग्राम को भी सूरदास का जन्मस्थान माना जाता है।)

रुमा

सांभर झील (जिला अजमेर राजस्थान) के निकटवर्ती क्षेत्र का नाम। रुमा झील से मिलने वाले नमक को सुश्रुत आदि वैद्यक ग्रंथों में रोमक कहा गया है।

रुम्निनोदी दे० लुम्बिनीग्राम

रुहेलखंड (उ० प्र०)

अफगानिस्तान के निवासी रुहेला के नाम से प्रसिद्ध इलाका जिसमें बिजनौर मुरादाबाद, बरेली, शाहजहांपुर आदि जिले शामिल हैं। रुहेला का राज्य इस क्षेत्र में 18वीं शती में था किंतु 1764 ई० में मीरनपुर कटरा के युद्ध में रुहेले, नवाब अवध और अंग्रेजों की संयुक्त सेनाओं से पराजित हो गए और उनके राज्य की इति श्री हुई। रुहेलखंड के इलाके को प्राचीन समय में कटहर कहते थे। कुछ विद्वानों का मत है कि महाभारत सभा० 27, 17 में वर्णित लोह या रोह (=रोहित) नामक प्रदेश ही प्राचीनकाल में रुहेलों का मूल निवास स्थान था और उनका नाम इसी प्रदेश में रहने के कारण रोहेला या रुहेला हुआ था। लोह वर्तमान काफिरिस्तान का ही प्राचीन नाम था। (दे० लोह)

रूपनगर (राजस्थान)

औरंगजेब के समय में रूपनगर की रियासत में विक्रम सोलंकी का राज्य था। इनकी पुत्री चंचलकुमारी ने मुगल सम्राट की मानहानि की थी जिसके फलस्वरूप औरंगजेब ने रूपनगर पर आक्रमण किया। ठीक समय पर उदयपुर के महाराणा राजसिंह ने रूपनगर की सहायता की और मुगल सेना को पराजित होकर पीछे लौटना पड़ा। युद्ध के पश्चात चंचल और राजसिंह का विवाह हो गया।

रूपनाथ (जिला जबलपुर, म०प्र०)

स्लीमनाबाद से 14 मील पश्चिम की ओर एक छोटा सा रमणीक स्थान है। रूपनाथ शिव का प्राचीन मंदिर यहां स्थित है। अशोक का अमुख्य शिलालेख सं० 1 यहां एक चट्टान पर उत्कीर्ण है जिसका संस्कृत रूपांतर निम्नलिखित है— देवानां प्रिय एवं आह सातिरेकाणि सार्धद्वयानि वर्षाणि अस्मि अहं श्रावकः न तु बाढं प्रक्रांत, सातिरेक तु संवत्सरं यत् अस्मि संघं उपेत, व ढं तु प्रक्रांत । य अमुष्मिन्कालाय जंबूद्वीपे अमृषादेवा अभूवन् त इदानीं मृषा कृता । प्रक्रमस्य हि इदं फलम्। न तु इदं महत्तया प्राप्तव्यम्। क्षुद्रेण हि केनापि प्रक्रममाणेन शक्यं विपुलोऽपि स्वर्ग आराधयितुम्, एतस्मै अर्थाय च श्रावणं कृतं क्षुद्रका च उदारा च प्रक्रमन्ता इति। अंता अपि च जानंतु अयं प्रक्रमः किमिति चिरस्थितक स्यात्। अयं हि अर्थ वर्धिष्यते बाढं वर्धिष्यते। इमं च अर्थ पर्वतेषु लेखयत परत्र इह च। सति शिलास्तंभे शिलास्तंभे लेखित य । सर्वत्र विवसितव्यमिति। व्युष्टेन श्रावणं कृतं 256 सत्रविवासात ।' जान पड़ता है कि अशोक के समय में यह स्थान तीर्थरूप में मान्य था।

रूपनारायण

प्राचीन ताम्रलिप्ति या वर्तमान तामलुक के निकट बहने वाली नदी। प्राचीनकाल में ताम्रलिप्ति बंगाल की खाड़ी पर बसा हुआ एक बंदरगाह था किंतु अब यह स्थान समुद्र तट से प्रायः 60 मील दूर है। रूपनारायण नदी गंगा में मिलती है। तामलुक दोनों नदियों के संगम के निकट स्थित है।

रूपवाहिक, रूपवाहित

महाभारत में वर्णित एक जनपद जो चि० वि० वैद्य के मत में वर्तमान महाराष्ट्र एक भाग था—'कुंतयाऽऽरत्यश्चैव तथैवापरकुंतय, गोमंता मंडका सडा विदर्भा रूपवाहिका' भीष्म 9, 43।

रूपालनगर=रूपावती

रूपावती=रूपालनगर (गुजरात)

पश्चिम रेलवे के सोनीपुर रूपाल स्टेशन से रूपावती—वर्तमान रूपाल-नगर—केवल दो मील दूर है। स्थानीय किंवदंती है कि श्रीराम तथा पांडव अपने वनवासकाल में कुछ दिनों तक यहां रहे थे।

रेढ़ (जिला टोंक राजस्थान)

नवाई स्टेशन से 15 मील दक्षिण पूर्व में स्थित है। बनास की एक उपनदी इस ग्राम के निकट बहती है। यहां आहत टंके मुद्राएं (Punchmarked Coins)

सहित एक मृदभाड प्राप्त हुआ था जिसम माला क दान, शख, हाथीदात और कासे आदि की वस्तुए भी रखी थी। सिक्को स अल्क्षेंद्र (सिकदर) की लौटती हुई सेना के विरुद्ध युद्ध करन वाले एक राजवश क अस्तित्व के बार म सूचना मिलती है।

रेणु

रेहद नदी का प्राचीन नाम।

रेणुका

(1) (जिला सिरमूर, हिमाचल प्रदेश) पुराण प्रसिद्ध परशुराम की माता रेणुका से इस स्थान का सबध बताया जाता है।

(2) (जिला आगरा, उ० प्र०) आगरा स 12 मील पश्चिम की ओर परशुराम की माता के नाम स यह स्थान प्रसिद्ध है। रेणुका यमुना-तट पर बसा हुआ बहुत प्राचीन स्थान है जसा कि यहा क अनक मदिरा क ध्वसावशेषो स प्रमाणित होता है। (दे० रुनकता)

रेणुकागिरि (राजस्थान)

इसे रनागिरि भी कहते हैं। यह स्थान अल्वर-रिवाडी रेलपथ पर खरथल स्टेशन से पाच मील दूर है। कहा जाता है कि इस स्थान का सबध परशुराम की माता रेणुका स है। यहा बनामी पथ क प्रवतक सीतलदास की समाधि भी है।

रेणुकाद्रि=दे० सौदत्ती।

रेमुणा (बगाल)

बालासौर से 6 मील सप्तशरा नदी के तट पर स्थित है। कहते है कि पुरी जाते समय श्री चैतन्य इस स्थान पर ठहरे थे। यहा लागुला नरसिहदव ने गोपीनाथ का भव्य मदिर बनवाया था।

रेवा

नमदा का एक नाम। रेवा का शाब्दिक अथ उछलन कूदने वाली (नदी) है जो मूलत इसक पार्वतीय प्रदेश म बहनवाल भाग का नाम है। (रेव धातु का अथ उछलना कूदना है)। नमदा का अथ नम अथवा सुख प्रदायिनी है। वास्तव मे नमदा नाम इस नदी क उस भाग का निर्देश करता है जो मदान म प्रवाहित है। नमदा क अन्य नाम सोमोदभवा (सोमपवत स निस्मृत) और मेकलक या (मेकलपवत स निकलन वाली) भी है— रेवा तु नमदा सोमोदभवामेकलकन्यका'—अमरकोश। मेघदूत, (पूवमघ,२०) म कालिदास न रेवा का सुदर वणन किया है— स्थित्वा तस्मिन वनचरवधूभुक्तकुजे मुहूतम,

तोयोत्मगाददुनतरगतिस्तन्तर वरमतीण, रेवा द्रक्ष्यस्युपलविषम विध्यपाद विशीर्णाम, भक्तिच्छेदैरिव विरचिता भूतिमगे गजस्य'। रामटेक को मेघ का प्रस्थानबिंदु मानते हुए मेघ के यात्रा क्रम से सूचित होता है कि उपर्युक्त उद्धरण में जिस स्थान पर रेवा का वर्णन है वह वर्तमान होशंगाबाद (म० प्र०) के निकट रहा होगा। अमरकोश के उपर्युक्त उद्धरण से तथा मेघदूत के उल्लेखों से ज्ञात होता है कि नर्मदा और रेवा दोनों ही नाम काफी प्राचीन हैं। श्रीमद् भागवत 5 19,18 में रेवा और नर्मदा दोनों का नाम एक ही स्थान पर उल्लिखित है। इसका समाधान इस तथ्य से हो जाता है कि कहीं कहीं प्राचीन संस्कृत साहित्य में रेवा इस नदी के पूर्वी अथवा पर्वतीय भाग को और नर्मदा पश्चिमी अथवा मैदानी भाग को कहा गया है (दे० नर्मदा)। मेघदूत के उपर्युक्त उद्धरण से भी इस बात की पुष्टि होती है। प्राचीन काल की प्रसिद्ध नगरी माहिष्मती रेवा के तट पर बसी हुई थी जैसा कि रघुवंश 6,43 से स्पष्ट है। (दे० माहिष्मती)

रेवासर दे० रवाल्सर

रेहद (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

यह नदी विंध्याचल से निकलकर सोन में गिरती है। इसका प्राचीन नाम रेणु कहा जाता है।

रेहली (जिला सागर, म० प्र०)

गढमंडला नरेश संग्रामसिंह (मृत्यु 1540 ई०) के 52 गढों में से एक की स्थिति रेहली में बताई जाती है। संग्रामसिंह के पुत्र दलपतशाह से वीरांगना दुर्गावती का विवाह हुआ था।

रैहिक

इस देश का उल्लेख कविवर दंडी रचित दशकुमारचरित के 8वें उच्छ्वास में है। रैहिक नरेश ने विदर्भराज के विरुद्ध विद्रोह किया था। [illegible] जान पड़ता है कि यह देश मसूर और नासिक या पश्चिम-[illegible] के बीच में कोई छोटा जनपद होगा।

रैवतगिरि दे० रेणुकागिरि

रम्याश्रम

हरद्वार के निकट कुब्जमार। [illegible]

ररि (महाराष्ट्र)

17वीं शती में ररि का किला [illegible]

केसरी शिवाजी ने बीजापुर [illegible]

था। यह उत्तर महाराष्ट्र के उन नौ किलों में से था जिन पर शिवाजी ने अपना अधिकार स्थापित किया था।

रैवतक

(1) द्वारका (प्राचीन कुशस्थली) के पूर्व की ओर स्थित पर्वत जिसका उल्लेख महाभारत सभा० अध्याय 38 दाक्षिणात्य पाठ के अंतर्गत (तथा अन्य स्थानों पर भी) है—'भाति रैवतकः शैलो रम्यसानुर्महाजिरः, पूर्वस्यां दिशि रम्यायां द्वारकायां विभूषणम्'। इसके पास पांचजन्य तथा सर्वतु नामक उद्यानवन सुशोभित थे जो रंगबिरंगे फूलों से चित्रित वस्त्र की भांति सुंदर दीखते थे— 'चित्रकम्बलवर्णाभं पांचजन्यवनं तथा सर्वर्तुकवनं चैव भाति रैवतकं प्रति', 'कुशस्थली पुरी रम्या रैवतेनोपशोभिताम्,' महा० सभा० 14,50। सौराष्ट्र काठियावाड़ का गिरनार नामक पर्वत ही महाभारत का रैवतक है। महाभारत और हरिवंशपुराण से विदित होता है कि रैवतक के निकट यादवों की बस्ती थी और यह लोग प्रतिवर्ष संभवतः कार्तिकमास में धूमधाम से रैवतकमह नामक उत्सव मनाते थे जिसमें रैवतकपर्वत की प्रायः 25 मील की परिक्रमा की जाती थी। जैन ग्रंथ अंतकृत दशांग में रैवतक को द्वारवती के उत्तरपूर्व में स्थित माना गया है तथा पर्वत के शिखर पर नंदनवन नामक एक उद्यान की स्थिति बताई गई है। विष्णुपुराण 4,1,64 के अनुसार आनर्त का पुत्र रैवत नामक राजा था जिसने कुशस्थली (द्वारका का पूर्व नाम) में रह कर राज्य किया था, 'आनर्तस्यापि रैवतनामा पुत्रो जज्ञे योऽसावानर्तविषयं बुभुजे पुरीं च कुशस्थलीमध्युवास'। इसी रैवत के नाम पर रैवतक पर्वत प्रसिद्ध हुआ था। रैवत की पुत्री रेवती कृष्ण के भाई बलराम को ब्याही थी (दे० कुशस्थली)। रैवतक का नामोल्लेख श्रीमद्भागवत में भी है, 'द्रोणश्चित्रकूटो गोवर्धनो रैवतकः ककुभो नीलो गोकामुख इन्द्रकील'। महाकवि माघ ने शिशुपालवध 4,7 में रैवतक का सविस्तार काव्यमय वर्णन किया है। कवि ने रैवतक की क्षण क्षण में नवीन होने वाली सुंदरता का कितना भावमय वर्णन किया है—'दृष्टोऽपि शैलः स मुहुर्मुरारेरपूर्ववद् विस्मयमाततान, क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः' अर्थात् यद्यपि कृष्ण ने रैवतक को कई बार देखा था किंतु इस बार भी पहले कभी न देखे हुए के समान उसने उनका विस्मय बढ़ाया क्योंकि रमणीयता का सच्चा स्वरूप यही है कि वह क्षण क्षण में नई ही जान पड़ती है।

जैन ग्रंथ विविध तीर्थ कल्प में रैवतक तीर्थरूप में वर्णित है। यहां 22 वें तीर्थंकर नेमिनाथ ने छत्र शिला नामक स्थान के पास दीक्षा ली थी। यहीं

अवलोकन नाम के शिखर पर उन्हें कैवल्य-ज्ञान की प्राप्ति हुई थी। इस स्थान पर कृष्ण ने सिद्ध विनायक मंदिर की स्थापना की थी। काल मेघ, मेघनाद, गिरिविदारण, कपाट, सिंहनाद, खोडिक और रेवया नामक सात क्षेत्रपालों का यहीं जन्म हुआ था।

इस पर्वत में 24 पवित्र गुफाएं हैं जिनका जैन सिद्धों से संबंध रहा है। रैवतक का दूसरा नाम गिरनार भी है। रैवताद्रि का जैनस्तोत्र श्री तीर्थमाला-चैत्यवन्दन में भी उल्लेख है, 'श्री शत्रुंजय रैवताद्रि शिखर द्वीपे भृगौ पत्तने'।

(2) विष्णुपुराण 2 4 62 के अनुसार शाकद्वीप का एक पर्वत, 'पूर्वस्तत्रो-दयगिरिजलाधारस्तथापरः तथा रैवतकः श्यामस्तथैवास्तगिरिर्द्विज'।

रैवतोद्यान

रैवतक पर्वत के निकट एक उद्यान जो द्वारका के पास स्थित था 'एकदा रैवतोद्याने पपौ पानं हलायुधः' विष्णु 5 36,11।

रोजननगर

सिंहलद्वीप के प्राचीन इतिहास दीपवंश के अनुसार एक भारतीय नगर जहां के अंतिम राजा महिंद का नाम दीपवंश 3 14 में दी हुई वंशावलि में हैं।

रोणी

पाणिनि 4 2 78। यह स्थान जिला हिसार का रोडी हो सकता है।

रोदा (जिला सबरकंठ, गुजरात)

10वीं शती ई० के एक मंदिर के अवशेष इस स्थान से सन 1955 के प्रारंभ में प्राप्त हुए थे। यह मंदिर गुजरात के मध्यकालीन मंदिरों के अनुरूप ही जान पड़ता है।

रोधस्वती

श्रीमदभागवत 5-19 18 में उल्लिखित नदी, 'गोमती सरयू रोधस्वती सप्तवती' सूची में स्थिति के अनुसार यह सरयू की निकटवर्तिनी कोई नदी जान पड़ती है। संभव है यह राप्ती हो।

रोम, रोमक (दे० रोमा)

रोमा

'अंताखी चैव रोमा च यवनानां पुरं तथा, दूतैरेव वशेचक्रे करं चैनानदापयत' महा० सभा० 31 72। सहदेव ने रोम, अंतियोकस, तथा यवनपुर (मिस्र देश में स्थित एलेग्जेंड्रिया) नगरों को अपनी दिग्विजय-यात्रा के प्रसंग में जीत कर इन पर कर लगाया था। रोम अवश्य ही रोमा का रूपांतर है। (श्लोक के

पाठांतर के लिए दे० अलाखी)। रोम निवासियों का वर्णन सभा 51,17 में, युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में उपहार लेकर आने वाले विदेशियों के साथ भी किया गया है—'द्वयक्षांस्त्र्यक्षांल्ललाटाक्षान् नानादिग्भ्य समागतान् औष्णीकानन्तवासांश्च रोमकान् पुरुषादकान्'।

रोयलेश्वर=रवानसर=रोरुक।

रोरी

सक्कर (सिंध, पाकि०) से छ मील दूर। बुद्धकाल (6ठी शती ई० पू०) में रोरी का प्रदेश सौवीर या दक्षिण सिंधुदेश के अंतर्गत था। दिव्यावदान (पृ० 545) में रोरी या रोरुक के राजा रुद्रायण का उल्लेख है। इस नगर का नामांतर अलोर या अरोर है। यहां अलक्षेंद्र के भारत आक्रमण के समय मूषिकों का राज्य था। (दे० अलोर)

रोरुक=रोरी

रोह=लोह

रोहण (लंका)

महावंश 22,6,23,13 में उल्लिखित लंका का दक्षिणी और दक्षिणी पूर्वी भाग। दुवाचकण्णिका इसी का एक भाग था। यहीं चूलनाग पर्वत नामक बौद्ध-विहार स्थित था (महावंश, 34-90)।

रोहणखेड (बरार, महाराष्ट्र)

खामगांव से 8 मील पर स्थित है। राष्ट्रकूट नरेशों के समय में यह प्रख्यात नगर था। यहां प्राचीन मंदिरों के ध्वंसावशेष अब भी देखे जा सकते हैं। इन मंदिरों में शिव का मंदिर प्रमुख है। इसकी छत सपाट स्तंभ चतुष्कोण और षट्कोण और गर्भगृह पर्याप्त विस्तीर्ण है। तोरण पर बेलबूटों की नक्काशी बड़ी मनोहर है। मंदिर के निकट एक चट्टान पर एक भग्न अभिलेख है जिसमें केवल 'तदन्वय भूपति कूट' शब्द शेष हैं। इससे प्रकट होता है कि यह मंदिर राष्ट्रकूटों के समय का है। एलोरा का प्रसिद्ध कैलाश मंदिर जो राष्ट्रकूटों के समय में बना था, रोहणखेड के मंदिर से मिलता जुलता है। इस मंदिर के पाषाणों को सुदृढ रूप से जोड़ने के लिए उनके बीच-बीच में तांबे की शलाकाएं जड़ी हुई हैं। बरामदे में शेषशायी विष्णु की मूर्ति अंकित है जो कला की दृष्टि से बहुत सुंदर है। रोहणखेड व खड्डरा से मध्यकालीन जैन मूर्तियों के भी खंडित अवशेष प्राप्त हुए हैं। अपभ्रंश भाषा के कवि पुष्पदंत इसी स्थान के निवासी कहे जाते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि यही पुष्पदंत, महिम्नस्तोत्र के रचयिता थे।

रोहतक=रोहितक=रोहीतक (हरयाणा)

दक्षिण पंजाब का यह अति प्राचीन नगर है। इसका उल्लेख महा० सभा० 32, 4) मे इस प्रकार है (प्रसग नकुल की पश्चिम दिशा की दिग्विजय का है) —"ततो बहुधन रम्य गवाढय धनधान्यवत, कार्तिकेयस्य दयित रोहीतकमुपाद्रवत, तत्र युद्ध महच्चासीच्छूरैर्मत्तमयूरकै"। इस प्रदेश का यहा बहुत उपजाऊ बताया गया है तथा इसमे मत्तमयूरको का निवास बताया गया है जिनके इष्टदेव स्वामी कार्तिकेय थे (मयूर, कार्तिकेय का वाहन माना जाता है)। इसी प्रसग मे इसके पश्चात् ही शैरीषक (वर्तमान सिरसा) का उल्लेख है (दे० शरीषक)। उद्योग० 19, 30, म भी रोहितक को कुरुदेश क सन्निकट बताया गया है—दुर्योधन के सहायतार्थ जो सेनाए आई थी व रोहतक के पास भी ठहरी थी—'तथा रोहिताकारण्य मरुभूमिश्च केवला, अहिच्छत्र कालकूट गगाकूल च भारत'। रोहतक के पास उस समय वन प्रदेश रहा होगा जिसे यहा रोहिताकारण्य कहा गया है। कर्ण ने भी रोहितक निवासियो को जीता था 'भद्रान् रोहितकाश्चैव आग्रेयान मालवानपि' वन० 254, 20। प्राचीन नगर की स्थिति वर्तमान खोखराकोट के पास कही जाती है।

रोहतासगढ (बिहार)

सहसराम के निकट, कैमूर पहाड पर और सोन नदी के तट पर यह प्राचीन ग्राम है, जो अपने दुर्ग के लिए प्रसिद्ध है। कहा जाता है कि यह स्थान महाराज हरिश्चन्द्र के पुत्र रोहिताश्व के नाम पर प्रसिद्ध हुआ था। प्राचीनकाल म इनका एक मदिर भी यहा स्थित था जिसे औरगजेब के शासन काल मे तुडवा दिया गया था। रोहतासगढ से बगाल के महासामत शशाकदेव (7वी शती ई०, ये महाराज हर्ष के समकालीन थ तथा इ होने हर्ष के भाई राज्यवर्धन का युद्ध म वध किया था) का एक अभिलेख प्राप्त हुआ था। मुसलमानो के समय म यह नगर बगाल का दूसरा नाका समझा जाता था (पहला नाका चुनार मे था)। रोहतासगढ कुछ काल तक शेरशाह के अधिकार म रहा था। राजा मानसिंह ने 1597 ई० मे किले की मरम्मत करवाई थी। इस समय वे बगाल बिहार के सूबेदार थ। मानसिंह का अभिलेख किले के अदर पाया गया है। (दे० जर्नल ऑव एशियाटिक सोसायटी ऑव बगाल 1839, पृ० 354, 693)

रोहि=मही (2)

रोहिणी (उ० प्र०)

पूर्वी उत्तर-प्रदेश मे बहने वाली राप्ती की छोटी सहायक नदी। कुणाल-

जातक के अनुसार बुद्धकाल में शाक्यवंशीय तथा कोलिय वंशीय क्षत्रियों के राज्यों के बीच की सीमा रोहिणी नदी ही बनाती थी। दोनों राज्यों के खेतों की सिंचाई रोहिणी नदी के बांध से की जाती थी। एक बार 'ज्येष्ठमूल' मास में पानी की कमी के कारण, दोनों ओर के ग्रामवासियों में परस्पर काफी झगड़ा हुआ था जिसमें कोलियों ने शाक्यों पर यह दोषारोपण किया था कि उनके यहां राज परिवार में भाई बहिनों में परस्पर विवाह संबंध होता है।

रोहित

(1) विष्णुपुराण 2, 4, 29 के अनुसार शाल्मलद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा वपुष्मान् के पुत्र रोहित के नाम पर प्रसिद्ध हुआ था।

(2)=रोह, लोह।

(3)=रोहतासगढ़।

रोहितक दे० रोहतक

रोहिता

जैन ग्रंथ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति के अनुसार हिमालय की पद्मह्रद झील से निकलने वाली एक नदी। इसके अतिरिक्त इस झील से निकलने वाली अन्य नदियों में गंगा, सिंधु और हरिकान्ता की गणना की गई है।

रोहितांशकूटपुरी

जैन ग्रंथ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति 4, 80 में उल्लिखित महाहिमवत का एक शिखर।

रोहिननाला (बिहार)

उरैन, जिला मुंगेर से पांच मील उत्तर पश्चिम में स्थित वर्तमान रहुआ नाला। यह युवानच्वांग का लो इन नीला है। यहां बौद्धकाल के अनेक अवशेष हैं।

रोहिला (जिला हमीरपुर, उ० प्र०)

महोबा से दो मील दूर इस नगर की स्थापना चंदेल राजा राहिल ने 10वीं शती ई० में की थी। यहां उसने एक सुंदर मंदिर भी बनवाया था। मंदिर तो अब खंडहर बन गया है किंतु ग्राम प्राचीन नाम से अब भी विद्यमान है।

रोहीतक दे० रोहतक

रौप्यपीठपुर

उदीपी का प्राचीन नाम।

रोप्या

यमुना के निकट बहने वाली नदी—'एतच्चर्चीक्पुनस्य पार्गविचरता महीम प्रसरण महोपाल रोप्यायामभितोजस महा० वन० 129 7 इस प्रसग म यमुना का उल्लेख 129 2 मे है — अबरीषश्च नाभाग इष्टवान यमुनामनु । रोप्या पर स्थित उपर्युक्त स्थान (प्रसवण) अशुभ माना गया है तथा वहा एक रात्रि से अधिक ठहरना भी अपवित्र कहा गया है । इस कुरुक्षेत्र का द्वार बताया गया है— 'अत्रचात्र निवस्याम क्षपाभरतसत्तम, द्वारमेतत तु कौतय कुरुक्षत्रस्य भारत,' वन० 129, 11 । इस नदी का अभिज्ञान अनिश्चित है ।

लका

रामायण काल म रावण की राजधानी जिसकी स्थिति वतमान सिहल (सीलोन) या लका द्वीप म मानी जाती है । भारत और लका के बीच के समुद्र पर पुल बनाकर श्रीरामचद्र अपनी सेना को लका ले गए थे । वाल्मीकि रामायण क अनुसार, भारत के दक्षिणतम भाग मे स्थित महेद्र नामक पवत से कूदकर हनुमान् समुद्रपार लका पहुचे थे । रामचद्रजी की सेना न लका मे पहुच कर समुद्रतट के निकट सुवल पवत पर पहला शिविर बनाया था । लका और भारत के बीच क उथले समुद्र म जो जलमग्न पवत श्रणी है उसके एक भाग को वाल्मीकि रामायण मे मनाक कहा गया है । लका त्रिकूट नामक पवत पर स्थित थी । यह नगरी अपन एश्वय और वभव की पराकाष्ठा क कारण स्वण मयी कही जाती थी । वाल्मीकि न अरण्य० 55,7 9 और सुदर० 2,48 50 म लका का सुदर वणन किया है — 'प्रदोपकाले हनुमास्तूणमुत्पत्य वीयवान, प्रविवेश पुरी रम्या प्रविभक्ता महापथाम प्रासादमाला वितता स्तभ काचनसनिभ, शातकुभनिभजालैगधवनगरोपमाम, सप्तभौमाष्टभौमैश्च स ददश महापुरीम, स्थल स्फटिकमकीर्णे कातस्वरविभूषित, तैस्त शुशुभिरतानि भवा यत्र रक्षसाम।' सुदरकाड 3 म भी इस रम्यनगरी का मनोहर वणन है, जिसका मुख्य भाग इस प्रकार है—'शारदाम्बुधरप्रख्यैभवनरुपशोभिताम, सागरोपम निर्घोषा सागरानिलसेविताम् । सुपुष्टबलसपुष्टा यथैव विटपावतीम चारुतोरणनियूहा पाडुर द्वारतोरणाम । भुजगाचरिता गुप्ता शुभा भोगवतीमिव, ता सविद्युदघनाकीर्णा ज्योतिर्गणनिषेविताम्। चडमारुतनिर्ह्रादा यथा चाप्यमरावतीम्, शातकुभन महता प्राकारणाभिसवताम किंकिणाजालघोषाभि पताकाभिरलकृताम, आसाद्य सहसा हृष्ट प्राकारमभिपेदिवान् । वैदूर्यकृतसोपान स्फटिक मुक्ताभिमणिकुट्टिमभूषितै तप्तहाटक नियू है राजतामलपाडुर, वैदूर्यकृतसोपान स्फटिकान्तरपाशुभि, चारुसजवनोपतै खमिवोत्पतितै शुभै, क्रौंचबर्हिणसघुष्टैराजहसनिषेवित ,

तूर्याभरणनिर्घोषैः सर्वतः परिनादिताम्। वस्वौकसारप्रतिमां समीक्ष्य नगरीं ततः, समिवात्पतितां लंकां जहर्ष हनुमान् कपिः', सुंदर० 3,2-3 4 5 6-7 8 9 10 11-12। हनुमान ने सीता से अशोकवनिका में भेंट करने के उपरांत, लंका का एक भाग जलाकर भस्म कर दिया था। सुंदर० 54,8 9 और सुंदर० 14 में लंका के अनेक कृत्रिम वनों एवं तडागों का वर्णन है। राम ने रावण के वधोपरान्त लंका का राज्य विभीषण को दे दिया था। बौद्धकालीन लंका का इतिहास महावंश तथा दीपवंश नामक पाली ग्रंथों में प्राप्त होता है। अशोक के पुत्र महेंद्र तथा पुत्री संघमित्रा ने सर्वप्रथम लंका में बौद्ध मत का प्रचार किया था। (दे० सिंहल)

लंगूरगढ़ (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

लैंसडाऊन के पश्चिम में कुछ दूर पर स्थित है। यहां गढ़वाल की प्राचीन गढ़ी तथा कई राजप्रासाद स्थित थे जिनके खंडहर यहां आज भी देखे जा सकते हैं। प्राचीनकाल में यहां गढ़वाल की सेना का शिविर भी अवस्थित था। यहां की सेनाओं ने रुहेलों और गोरखों से कई बार वीरतापूर्ण मोर्चा लेकर गढ़वाल की रक्षा की थी।

लघंती

'लघंती गोमती चैव संध्या त्रिस्रोतसी तथा, एताश्चान्याश्च राजेंद्र सुतीर्था लोकविश्रुता', महा० सभा० 9,23। गोमती के निकट कोई नदी जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है।

लंजिका (जिला भंडारा म० प्र०)

यह स्थान कलचुरिनरेशों के समय के भग्नावशेषों के लिए उल्लेखनीय है।

लंपाक (अफगानिस्तान)

लंपाक का वर्तमान लमगान से अभिज्ञान किया गया है। हेमचंद्र के अभिधान चिंतामणि नामक कोश के उल्लेख से प्रकट होता है कि लंपाक में मुरुंड या शक लोग बसते थे—लंपाकास्तु मुरुंडाः स्युः। युवानच्वांग ने अपनी भारत यात्रा के दौरान में इस स्थान को देखा था। उन्होंने इस स्थान को कपीसीन से 100 मील पूर्व बताया है। (कपीसीन=कपिशा।)

लबन

विष्णुपुराण 2,4,36 के अनुसार कुशद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा ज्योतिष्मान के पुत्र के नाम पर प्रसिद्ध था।

लकनावरम (मुलुगतालुका, जिला वारंगल, आ० प्र०)

यह वारंगल नरेशों के समय में बनी हुई झील है जो रामप्पा के समान ही एक वृहत् सरोवर है। जैसे रामप्पा राम के नाम पर है वैसे ही यह लक्ष्मण के नाम पर प्रसिद्ध है। झील का जलसंग्रह क्षेत्र 75 वर्गमील है। इसमें से तीन नहरें काटी गई थी जिनसे तेरह सहस्र एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकती थी। इस झील का निर्माण तीन संकीर्ण घाटियों को बांध द्वारा रोक कर किया गया था।

लकहरघरी (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

लहोरियादह नामक ग्राम के पास इस नाम की पहाड़ी के क्रोड में प्रागैतिहासिक गुफाएं अवस्थित हैं, जिनकी भित्तियों पर प्राचीन चित्रकारी प्रदर्शित है। ये चित्र कई सहस्र वर्ष पूर्व इस क्षेत्र में बसने वाले आदिमानवों की कलाकृतियां हैं।

लकुंडी (मैसूर)

गदग स्टेशन से आठ मील पूर्व की ओर लाकोक्डी या प्राचीन लकुंडी की बस्ती है। यहां विश्वनाथ और मल्लिकार्जुन नामक शिवमंदिर स्थापत्य की दृष्टि से उच्चकोटि के माने जाते हैं। ये मंदिर बहुत प्राचीन हैं।

लक्षेट्टीपट्ट (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

इस स्थान पर 12वीं और 14वीं शतियों की हिंदू सैनिक किलाबंदियों के अवशेष उल्लेखनीय हैं।

लक्ष्मणटीला दे० लखनऊ

लक्ष्मणतीर्थ (मद्रास)

रामेश्वरम के मंदिर से लगभग 1 मील पश्चिम की ओर पावन के मार्ग के दक्षिण पार्श्व में लक्ष्मणकुंड नामक सरोवर है, जो लक्ष्मणतीर्थ कहलाता है। यहां रामेश्वरम के नाम के अनुरूप ही लक्ष्मणेश्वर शिव का मंदिर है। किंवदंती है कि यहां लक्ष्मण ने रामचंद्र जी के समान ही समुद्र पर सेतु बांधने से पहले शिव की आराधना की थी।

लक्ष्मणपुर दे० लखनऊ

लक्ष्मणवती दे० (1) लखनऊ (2) लखनौती

लक्ष्या

जिला ढाका (पूर्वी पाक०) की एक नदी जो ब्रह्मपुत्र की प्राचीन धारा से निकलनेवाली तीन छोटी छोटी नदियों से मिलकर बनी है।

लखनऊ (उ० प्र०)

गोमती-नदी के दक्षिणतट पर बना हुआ रमणीक नगर है। स्थानीय जन श्रुति के अनुसार इस नगर का प्राचीन नाम लक्ष्मणपुर या लक्ष्मणवती था और इसकी संस्थापना श्रीरामचंद्रजी के अनुज लक्ष्मण ने की थी। श्रीराम की राजधानी अयोध्या लखनऊ के निकट ही स्थित है। नगर के पुराने भाग में एक ऊंचा टीला है जिसे आज भी लक्ष्मणटीला कहा जाता है। हाल ही में लक्ष्मणटीले की खुदाई में वैदिककालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। यही टीला जिस पर अब औरंगजेब के समय में बनी मसजिद है, यहां का प्राचीनतम स्थल है। इस स्थान पर लक्ष्मण जी का प्राचीन मंदिर था जिसे इस धर्मांध सम्राट ने काशी, मथुरा आदि के प्राचीन ऐतिहासिक मंदिरों के समान ही तुड़वा डाला था। लखनऊ का प्राचीन इतिहास अप्राप्य है। इसकी विशेष उन्नति का इतिहास मध्ययुग के पश्चात ही प्रारम्भ हुआ जान पड़ता है क्योंकि हिंदू काल में, अयोध्या की विशेष महत्ता के कारण लखनऊ प्रायः अज्ञात ही रहा। सर्वप्रथम, मुगल सम्राट अकबर के समय में चौक में स्थित अकबरी दरवाजे का निर्माण हुआ था। जहांगीर और शाहजहां के जमाने में भी इमारतें बनीं, किंतु लखनऊ की वास्तविक उन्नति तो नवाबी काल में ही हुई। मुहम्मदशाह के समय में दिल्ली का मुगल साम्राज्य छिन्न भिन्न होने लगा था। 1720 ई० में अवध के सूबेदार सआदतखां ने लखनऊ में स्वतंत्र सल्तनत कायम करली और लखनऊ के प्रसिद्ध नवाबों की प्रख्यात परंपरा का आरंभ किया। उसके पश्चात लखनऊ में सफदरजंग, शुजाउद्दौला, आसफुद्दौला, सआदतअली, गाजीउद्दीन हैदर, नसीरुद्दीन हैदर, मुहम्मद अली शाह और अंत में लोकप्रिय नवाब वाजिदअलीशाह ने क्रमशः शासन किया। नवाब आसफुद्दौला (1775 1797 ई०) के समय में राजधानी फैजाबाद से लखनऊ लाई गई (1775 ई०)। आसफुद्दौला ने लखनऊ में बड़ा इमामबाड़ा, विशाल रूमी दरवाजा और आसफी मसजिद नामक इमारतें बनवाईं—इनमें अधिकांश इमारतें अकाल पीड़ितों की मजदूरी देने के लिए बनवाई गई थीं। आसफुद्दौला को लखनऊ निवासी 'जिसे न दे मौला, उसे दे आसफुद्दौला' कहकर आज भी याद करते हैं। आसफुद्दौला के जमाने में ही अन्य कई प्रसिद्ध भवन, बाजार तथा दरवाजे बने थे जिनमें प्रमुख ये हैं— दौलतखाना, रेजीडेंसी, बिबियापुर कोठी, चौक बाजार आदि। आसफुद्दौला के उत्तराधिकारी सआदत अलीखां (1798-1814 ई०) के शासनकाल में दिल्कुशामहल, बली गारद दरवाजा और लाल बारादरी का निर्माण हुआ। गाजीउद्दीन हैदर (1814 1827 ई०) ने मोती महल, मुबारक मंजिल

सआदतअली और खुर्शीदजादी के मकबरे आदि बनवाए। नसीरुद्दीन हैदर के जमाने में प्रसिद्ध छतर मंजिल और शाहनजफ आदि बने। मुहम्मद अलीशाह (1837 1842 ई०) ने हुसैनाबाद का इमामबाड़ा, बड़ी जामामसजिद और हुसैनाबाद की बारादरी बनवायी। वाजिदअलीशाह ने लखनऊ के विशाल एवं भव्य कैसरबाग का निर्माण करवाया। यह कलाप्रिय एवं विलासी नवाब यहां कई कई दिन चलने वाले अपने संगीतनाटकों का जिनमें इंद्रसभा नाटक प्रमुख था—अभिनय करवाया करता था। 1855 ई० में अंग्रेजों ने वाजिदअलीशाह को गद्दी से उतार कर अवध की रियासत की समाप्ति कर दी और उसे ब्रिटिश भारत में सम्मिलित कर लिया। 1857 ई० के भारत के प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम में लखनऊ की जनता ने रेजीडेंसी तथा अन्य इमारतों पर अधिकार कर लिया था किंतु शीघ्र ही पुनः राज्यसत्ता अंग्रेजों के हाथ में चली गई और स्वतंत्रता युद्ध के सैनिकों को कठोर दंड दिया गया।

लखनादौन (म० प्र०)

सिवनी जबलपुर मार्ग पर 38 वें मील पर स्थित है। इस ग्राम से अनेक प्राचीन मूर्तियां तथा अभिलेख मिले हैं। यह स्थान जैनमत से संबंधित जान पड़ता है क्योंकि विक्रमसेन के खंडित लेख से जान पड़ता है कि उन्होंने किसी तीर्थंकर का मंदिर यहां बनवाया था।

लखनौती=गौड़।

लखराम (गुजरात)

गुजरात के प्रसिद्ध नगर पाटन या अन्हलवाड़ा की स्थापना 746 ई० में इसी ग्राम के स्थान पर वनराज चावड़ा द्वारा की गई थी। यह ग्राम सरस्वती नदी के तट पर बसा हुआ था। (दे० अन्हलवाड़ा)

लखुरबाग (भूतपूर्व जसो रियासत, म० प्र०)

जसो से 15 मील पर एक पहाड़ी के क्रोड में यह प्राचीन ग्राम स्थित है। यहां गुप्तकालीन मूर्तियों के अवशेष पर्याप्त संख्या में मिले हैं। निकटस्थ क्षेत्र में प्राचीन जैन मूर्तियां प्रायः मिल जाती हैं। इस स्थान पर पहले अवश्य कई मंदिर रहे होंगे।

लमगान (अफगानिस्तान) दे० लंपाक

लचदरलेण (महाराष्ट्र)

धरसेव या उसमानाबाद के पास यह गुहामंदिर है जिसका निर्माण काल 500 600 ई० के लगभग माना जाता है। (दे० धरसेव)।

लच्छागिर (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

हंडियातास स्टेशन से 3 मील पर स्थित है। स्थानीय दंतकथाओं में इस स्थान का संबंध महाभारत में वर्णित लाक्षागृह से बताया जाता है जैसा कि ग्राम के नाम से इंगित होता है किंतु इसमें सत्य का अंश भी नहीं है क्योंकि महाभारत के प्रसंगानुसार लाक्षागृह हस्तिनापुर के निकट ही स्थित था। (दे० वारणावत)

लट्टूर=लट्टलूर (जिला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

दक्षिणभारत के प्रसिद्ध राष्ट्रकूट राजवंश का मूल निवास स्थान है। राजशक्ति प्राप्त होने पर राजा गोविंद तृतीय ने मण्यखेट (=मल्खेड) को अपनी राजधानी बनाया था। (दे० मण्यखेट, मल्खेड)

लतावेष्ट

द्वारका के दक्षिणी भाग में स्थित एक पर्वत जो पंचवर्ण होने के कारण इंद्रध्वज सा प्रतीत होता था—'दक्षिणस्यां लतावेष्टः पंचवर्णो विराजते, इंद्रकेतुप्रतीकाश: पश्चिमां दिशमाश्रित:'—महा० सभा० 38, दाक्षिणात्य पाठ। इस पर्वत के निकट मेरुप्रभ, तालवन और पुष्पक नामक वन थे—'लतावेष्टं समंतात्तु मेरुप्रभवनं महत्, भाति तालवनं चैव पुष्पकं पुंडरीकवत्'—महा० सभा० 38।

लद्दाख=लद्दाख दे० ललाटाक्ष।

लधुरा (जिला झांसी, उ० प्र०)

प्राचीन मंदिरों के भग्नावशेषों के लिए उल्लेखनीय है।

लमेटाघाट (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर के निकट नर्मदा के किनारे बसा हुआ छोटा सा ग्राम है जिसके प्राचीन ध्वंसावशेषों में पुरातत्व की बहुमूल्य सामग्री बिखरी पड़ी है।

ललाटाक्ष, ललाताक्ष

'द्व्यक्षांस्त्र्यक्षांल्ललाटाक्षान् (=ल्लाताक्षान) नानादिग्भ्य: समागतान्, औष्णीकानन्तवासांश्च रोमकान् पुरुषादकान्' महा० सभा० 51,17। इस प्रसंग में युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में विदेशों से भांति भांति के उपहार लेकर आनेवाले विभिन्न लोगों के वर्णन में ललाटाक्षों (या ल्लाताक्षों) का उल्लेख भी किया गया है। विद्वानों के मत में द्व्यक्ष बदख्शां, त्र्यक्ष तरखान तथा ललाटाक्ष लदाख या लद्दाख है। ऐसा प्रतीत होता है कि महाभारतकार ने यहां विदेशी नामों को संस्कृत में रूपांतरित करके लिखा है। वैसे इन शब्दों की टीकाकारों ने सार्थक बनाने का प्रयत्न किया है जैसे ललाटाक्ष को ललाट पर आंखों वाले

मनुष्य कहा गया है। उपर्युक्त श्लोक मे सभवत इन सभी विदेशी लोगो को पगडी धारण करने वाला कहा गया है। (दे० द्वयक्ष, त्र्यक्ष)

ललितगिरि (उडीसा)

तान्त्रिक बौद्ध धर्म के उत्कर्षकाल के अनेक ध्वसावशेष इस स्थान से प्राप्त हुए हैं। यह स्थान कटक के निकट है।

ललितपाटन (नेपाल)

मौर्यसम्राट अशोक ने अपनी नेपालयात्रा के समय (250 ई० पू०) इस नगर का नेपाल की प्राचीन राजधानी मजुपाटन के स्थान पर बसाया था। यह नगर आज भी कठमडू से 2½ मील दक्षिण पूर्व की ओर स्थित है। इसको ललितपुर भी कहा जाता है। ललितपाटन मे अशोक ने पाच बडे स्तूप बनवाए थे, एक नगर के मध्य मे और अन्य नगर के परकोटे के बाहर चारो कोनो पर। ये स्तूप अब भी विद्यमान हैं। उत्तरीकोण म स्थित स्तूप को स्थानीय बोली म जिपीतौडु कहते हैं (दे० सिलवेन लेवी— ले नेपाल' (फ्रेंच) जिल्द I, पृ० 263,331) इसी यात्रा के समय अशोक की पुत्री चारुमती ने अपने पति के नाम पर नेपाल म देवपाटन नामक नगर बसाया था।

ललितपुर

(1)=ललितपाटन।

(2)=लाटपौर[1] (कश्मीर)। इस प्राचीन नगर की सस्थापना कश्मीर के प्रतापी नरेश ललितादित्य मुक्तापीड ने 7वी शती म की थी। ललितादित्य की विजययात्राओ तथा उसके शासनकाल का वर्णन कल्हण ने राजतरगिणी म किया है।

(3) (उ० प्र०) यहा प्राचीन हिंदूमदिरो के ध्वसावशेषो पर एक मसजिद है जो बासा मसजिद कहलाती है। इस पर फिरोजशाह के समय का एक देवनागरी अभिलेख है। यह स्थान झासी के निकट है।

लवणपुर

वाल्मीकि रामायण से ज्ञात होता है कि लवणपुर लवणासुर की राजधानी का नाम था, जो वर्तमान मथुरा (उ० प्र०) के निकट स्थित थी। इसे मधुपुरी या मधुरा भी कहते थे। लवणासुर के वधोपरात शत्रुघ्न ने इसी के स्थान पर नई मथुरा नगरी बसाई थी। लवणपुर को कालिदास ने मधुघ्न कहा है। (दे० मधुपुरी, मधुरा, मधुघ्न)

लवणसागर

पौराणिक भूगोल के अनुसार यह सागर जम्बुद्वीप के चतुर्दिक् स्थित है

गई हैं। इनके अदर भित्तिया पर लाल, पीत और श्वेत रगो मे चार पाच सहस्र वर्ष प्राचीन चित्रकारी देखी जा सकती है। ये चित्र प्रागैतिहासिक काल म इस वन्य भूखड के आदिम निवासियो द्वारा बनाए गए थे। कुछ विद्वानो का मत है कि इस प्रकार के चित्र जादू-टोने से सबधित है। एक जगह सुसज्जित द्वार के भीतर एक विचित्र मनुष्य चित्रित है जिसका मुख पक्षी की चोच के आकार का है। उसके सामने बैठे हुए दो मनुष्य उसकी पूजा कर रहे है। इन चित्रो म सभ्यता के विकास के पूर्व के मानव का आचार विचार ज्ञात होता है। सभव है कि इनके तथा इस प्रकार के अन्य चित्रो के अध्ययन से वतमान आदि-वासियो के जीवन तथा प्रागैतिहासिक मनुष्यो के रहन-सहन म समानता की कुछ बातें मिल।

लाफा (जिला बिलासपुर, म० प्र०)

गडमडल नरेश राजा सग्रामसिंह (मृत्यु० 1541 ई०) के 52 गढो म से एक यहा था। सग्रामसिंह के पुत्र दलपतशाह से वीरागना दुर्गावती का विवाह हुआ था।

लागल

चीनी यात्री युवानच्वाग ने अपने यात्रावृत मे इस स्थान का उल्लेख किया है। कनिंघम के अनुसार यह स्थान मकराना (सिंध प० पाकि०) के सन्निकट रहा होगा।

लागली

'सरयूर्वारवत्याथ लागली च सरिद्वरा, करतोया तथात्रेयी लौहित्यश्च महानद' महा० सभा० 9,23। इस उल्लख के अनुसार यह सरयू के पूव म बहने वाली कोई नदी जान पडती है जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है।

लागूलिनी

कलिंग उडीसा की एक छोटी नदी जो ऋषिकुल्या के दक्षिण म बहती हुई बगाल की खाडी मे, चिकाकोल के नीचे गिरती है। इसे आजकल लागुलिया कहते हैं।

लाखामडल (जिला देहरादून, उ० प्र०)

चकरौता से 22 मील दूर स्थित है। यमुना नदी के निकट ही यह ग्राम बसा है। जनश्रुति है कि लाखो प्राचीन मूर्तिया इस स्थान से निकली थी जिसके कारण इसे लाखामडल कहा जाने लगा। यहा अब एक ही प्राचीन मदिर है जिसमे शिव, दुर्गा, कुबेर, लक्ष्मीनारायण, सूय आदि देवो की कलामय मूर्तिया है। मदिरो के बाहर छठी शती ई० की दो बडी मूर्तिया अवस्थित हैं।

इस के आगे क्रमानुसार विशालतर सागरों के नाम ये हैं—इक्षु, सुरा, घृत, दधि, दुग्ध और जल—'लवणेक्षु सुरासर्पिर्दधिदुग्धजलैः समम्, जंबुद्वीप समस्तानाम-तथा मध्यसंस्थित' विष्णु० 2,2,6।

लवणोत्स

कश्मीर का एक ग्राम जिसका उल्लेख यशस्करदेव के समय के इतिहास के प्रसंग में राजतरंगिणी में है। यहां एक रमणीय उद्यान स्थित था। नाम से इंगित होता है कि इस स्थान पर नमकीन पानी के सोते रहे होंगे। यशस्करदेव का समय संभवतः 9वीं 10वीं शती ई० है।

लवपुरी

(1) प्राचीन भारतीय उपनिवेश कंबुज (कंबोडिया) का एक भाग लोपबुरी, जो 10वीं शती ई० में कंबुज राज्य के अधिकार में आया था। इसका विस्तार दक्षिण में स्याम की खाड़ी से, उत्तर में कमफेंग फेट तक था। लवपुरी नाम ही की नगरी इस प्रदेश की राजधानी भी थी। (दे० द्वारवती 2)

(2)=लाहौर

लहरताल (वाराणसी, उ० प्र०)

वाराणसी से 3 मील दूर एक छोटी सी झील है जहां किंवदंती के अनुसार उत्तर भारत के प्रसिद्ध संत कवि कबीर का जन्म हुआ था। कहा जाता है कि वे एक विधवा ब्राह्मणी के पुत्र थे जो नवजात शिशु को लोकलाज से बचने के लिए इस ताल के किनारे डाल गई थी। दैवात् उधर से नीमा तथा नीरू नाम के जुलाहा दंपति जा रहे थे। वे इस बालक को ममतावश घर ले आए और उसे पालपोस कर बड़ा किया। लहरताल एक शांतिपूर्ण एवं रमणीक स्थान है और इसके निकट घने वृक्षों का उपवन है। इसके पास ही कबीर का एक पुराना मंदिर है। कबीर का जन्म संभवतः 1397 ई० में हुआ था।

लहोर (जिला अटक, प० पाकि०)

अटक के निकट एक छोटा सा ग्राम है जो संस्कृत के प्रसिद्ध वैयाकरण पाणिनि का जन्मस्थान शलातुर है। लहोर या लाहुर शलातुर का अपभ्रंश जान पड़ता है।

लहोरियादह (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

मिर्जापुर से रीवां जाने वाली सड़क ग्रेट दक्न रोड पर, मिर्जापुर से प्रायः 45 मील दूर इस छोटे से ग्राम के निकट, सड़क से कुछ दूर पर अनेक प्रागैतिहासिक गुफाएं अवस्थित हैं। सहबद्यापथरी, मोरहनापथरी, बागापथरी तथा लकहरपथरी नामक पहाड़ियों में इस प्रकार की लगभग सौ गुफाएं पाई

गई हैं। इनके अंदर भित्तियों पर लाल, पीले और श्वेत रंगों में चार पांच सहस्र वर्ष प्राचीन चित्रकारी देखी जा सकती है। ये चित्र प्रागैतिहासिक काल में इस प्रदेश के आदिम निवासियों द्वारा बनाए गए थे। कुछ विद्वानों का मत है कि इस प्रकार के चित्र जादू टोने से संबंधित हैं। एक जगह सुसज्जित द्वार के भीतर एक विचित्र मनुष्य चित्रित है जिसका मुख पक्षी की चोंच के आकार का है। उसके सामने बैठे हुए दो मनुष्य उसकी पूजा कर रहे हैं। इन चित्रों में सभ्यता के विकास के पूर्व के मानव का आचार विचार ज्ञात होता है। संभव है कि इनके तथा इस प्रकार के अन्य चित्रों के अध्ययन से वर्तमान आदिवासियों के जीवन तथा प्रागैतिहासिक मनुष्यों के रहन-सहन में समानता की कुछ बातें मिलें।

लाफा (जिला बिलासपुर, म० प्र०)

गढ़मंडल नरेश राजा संग्रामसिंह (मृत्यु० 1541 ई०) के 52 गढ़ों में से एक यहां था। संग्रामसिंह के पुत्र दलपतशाह से वीरांगना दुर्गावती का विवाह हुआ था।

लागल

चीनी यात्री युवानच्वांग ने अपने यात्रावृत में इस स्थान का उल्लेख किया है। कनिंघम के अनुसार यह स्थान मकराना (सिंध प० पाकि०) के सन्निकट रहा होगा।

लांगली

'सरयूर्वारवत्याथ लांगली च सरिद्वरा, करतोया तथात्रेयी लौहित्यश्च महानद' महा० सभा० 9,22। इस उल्लेख के अनुसार यह सरयू के पूर्व में बहने वाली कोई नदी जान पड़ती है जिसका अभिज्ञान अनिश्चित है।

लांगुलिनी

कलिंग उड़ीसा की एक छोटी नदी जो ऋषिकुल्या के दक्षिण में बहती हुई बंगाल की खाड़ी में, चिकाकोल के नीचे गिरती है। इसे आजकल लांगुलिया कहते हैं।

लाखामंडल (जिला देहरादून, उ० प्र०)

चकरौता से 22 मील दूर स्थित है। यमुना नदी के निकट ही यह ग्राम बसा है। जनश्रुति है कि लाखों प्राचीन मूर्तियां इस स्थान से निकली थीं जिसके कारण इसे लाखामंडल कहा जाने लगा। यहां अब एक ही प्राचीन मंदिर है जिसमें शिव, दुर्गा, कुबेर, लक्ष्मीनारायण, सूर्य आदि देवों की कलामय मूर्तियां हैं। मंदिरों के बाहर छठी शती ई० की दो बड़ी मूर्तियां अवस्थित हैं।

दक्षिण गुजरात का प्राचीन नाम जिसका गुप्त अभिलेखों में उल्लेख है। संस्कृत काव्य का लाटानुप्रास नामक अलंकार, लाट के कवियों द्वारा ही प्रचलित किया गया था। मंदसौर अभिलेख (472 ई०) में लाट देश से दशपुर में जाकर बसने वाले पट्टवाय शिल्पियों का उल्लेख है—'लाटविषयान्नगावृतशैलाज्जगति-प्रथितशिल्पा'। इस अभिलेख में लाट को 'कुसुमभरानततरुवरदेवकुलसभा विहाररमणीय' कहा गया है (दे० दशपुर)। बाण ने प्रभाकरवर्धन का 'लाटपाटवपाटच्चर' (लाट देश के कौशल को चुरा लेने वाला) कहकर उनकी लाट विजय का निर्देश किया है (हर्षचरित, उच्छ्वास 4)।

लाटपोर (कश्मीर)

प्राचीन ललितपुर। [दे० ललितपुर (2)]

लाटह्रद दे० राडह्रद।

लाढ

'आयरंग सुत' में उल्लिखित जनपद। कुछ विद्वानों ने इसका अभिज्ञान राढ (प० बंगाल) से किया है किंतु राढ नाम 11वीं शती ई० के पूर्व प्रचलित नहीं था (दे० भंडारकर, 'अशोक' पृ० 37)। आयरंगसुत में लाढप्रदेश को मार्गविहीन बताया गया है। इस सूत्र में लाढ के दो भाग सुब्भभूमि (सुह्म) और वज्जभूमि (वर्तमान मिदनापुर ज़िला प० बंगाल) का भी उल्लेख है। कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि लाढ शायद लाट का ही रूपांतर है।

लाबुग्रामक (लंका)

महावंश 10,72 में उल्लिखित है। इसका अभिज्ञान रिनिगल (प्राचीन अरिट्ठ) पर्वत के उत्तर पश्चिम में स्थित वर्तमान लबुनारुव से किया गया है।

लाभपुर

यह लवपुर या लाहौर है। (दे० एपिग्राफिका इंडिका, जिल्द 2 पृ० 38 39)

लावणनील (बिहार)

7वीं शती में भारत का भ्रमण करने वाले चीनी पर्यटक युवानच्वांग ने इस स्थान को चीनी भाषा में लोहपानिनीलो लिखा है। कनिंघम के अनुसार यह स्थान वर्तमान मुंगेर हो सकता है।

लावाणक

संस्कृत के प्रसिद्ध नाटककार भास के स्वप्नवासवदत्ता-नाटक में लावाणक नामक स्थान का उल्लेख है। (वत्सभूमौ लावाणक नाम ग्रामस्तत्रो पितवानसि अंक 1)। इसे वत्स-देश के अंतर्गत बताया गया है। वत्सनरेश

उदयन, आरुणि से पराजित होकर अपनी राजधानी कौशाम्बी को छोडकर, कुछ दिन तक लावाणक म रहा था। इसका लावणनील नामक नगर से अभिज्ञान करना सभव जान पडता है। (दे० लावणनील)

साहा (प० बगाल)

हुगली के पश्चिम मे बसे हुए भाग का प्राचीन नाम है। (दे० बगाल)

लाहुर

शलातुर का अपभ्रश। यह ग्राम सस्कृत क वैयाकरण पाणिनि की जन्भूमि माना जाता है। इसको लहार भी कहते ह। यह अटक और आहिंद (प० पाकि०) के निकट है। (दे० शलातुर, लाहौर)

लाहूल (हिमाचल प्रदेश)

महाभारत क समय यह प्रदेश उत्सवसकेत अथवा किन्नर देश क अतगत था। आज भी यहा पर प्रचलित विवाह आदि की प्रथाए प्राचीन काल के विचित्र रीति रिवाजो की ही परपरा म हैं। कुछ विद्वानो के मत मे महाभारत सभा० 27,17 म लाहूल को ही लाहित कहा गया है। लाहूल म 8वी शती ई० का बना हुआ त्रिलोकनाथ का मदिर स्थित है। इसम श्वेत सगमरमर की 3 फुट ऊची मूर्ति प्रतिष्ठित है। मदिर की पुस्तिका क लेख के अनुसार त्रिलोकनाथ अथवा बोधिसत्व की इस मूर्ति का प्रतिष्ठापन पद्मसभव नामक बौद्ध भिक्षु ने आठवी शती ई० म किया था। पद्मसभव न तिब्बत के राजा के निमत्रण पर भारत स तिब्बत जाकर बौद्धधम का प्रचार किया था। मदिर को हिंदू तथा बौद्ध दोनो ही पवित्र मानते हैं। भारत स तिब्बत को जाने वाला प्राचीन माग लाहूल होकर ही जाता है।

लाहौर (प० पाकि०)

रावी नदी क तट पर स्थित बहुत प्राचीन नगर है। जनश्रुति के अनुसार इस नगर का प्राचीन नाम लवपुर या लवपुरी था और इसे श्रीरामचद्र के पुत्र लव न बसाया था। कहा जाता है कि लाहौर क पास स्थित कुसूर नामक नगर को लव के बडे भाई कुश न बसाया था। वस वाल्मीकि रामायण से इस लोकश्रुति की पुष्टि स्पष्ट रूप से नही होती क्योकि इस महाकाव्य म श्रीराम द्वारा लव को उत्तर और कुश को दक्षिण कोसल का राज्य दिए जाने का उल्लेख है—'कोसलेपुकुश वीरमुत्तरेपु तथालवम' (उत्तर काड)। दक्षिण कोसल म कुश न कुशावती नामक नगरी बसाई थी। लव द्वारा किसी नगरी क बसाए जाने का उल्लेख रामायण म नही है। लाहौर का मुसलमानो के पूव का इतिहास प्राय अधकारमय और अज्ञात है। केवल इतना अवश्य पता

है कि 11वी शती म पहल यहा एक राजपूत वश की राजधानी थी। 1022 ई० म महमूदगजनी की सेनाआ ने लाहौर पर आक्रमण करक इस लूटा। समवत इसी काल के इतिहासकारा न लाहौर का पहली बार उल्लेख किया है। गुलामवश तथा परवर्ती राजवशो क शासनकाल मे भी कभी-कभी लाहौर का नाम सुनाई पड जाता है। 1206 ई० मे मु० गोरी की मृत्यु क पश्चात लाहौर पर अधिकार करने के लिए कई सरदारो म सघप हुआ जिसम अतत दिल्ली का कुतुबुद्दीन एबक सफल हुआ। तैमूर ने 14वी शती म लाहौर के बाजारो को लूटा और 1524 ई० मे बाबर न नगर को लूटकर जला दिया किंतु उसक बाद शीघ्र ही पुरान नगर क स्थान पर नया नगर बस गया। वास्तव म, लाहौर का अकबर क समय से ही महत्व मिलना शुरू हुआ। 1584 ई० के पश्चात अकबर कई वर्षो तक लाहौर म रहा और जहागीर ने तो लाहौर को अपनी राजधानी बनाकर अपने शासनकाल का अधिकाश वहीं बिताया। मुगलो क समय मे, उत्तर पश्चिमी सीमात पर होन वाल युद्धा क सुचारू सचालन के लिए भी लाहौर म शासन का केद्र बनाना आवश्यक हो गया था। इसक साथ ही जहागीर का कश्मीर घाटी के आकषक सौदय ने भी आगरा छोडकर लाहौर म रहने को प्रेरित किया क्योकि यहा स कश्मीर अपेक्षाकृत निकट था। शाहजहाँ का भी लाहौर का काफी आकषण था किंतु औरगजेब के समय म लाहौर के मुगलकालीन वभव विलास का क्षय प्रारभ हो गया। 1738 ई० म नादिरशाह ने लाहौर पर आक्रमण किया किंतु अपार धन राशि लकर उसने यहा लूट मार मचान का इरादा छाड दिया। 1799 ई० म पजाब केसरी रणजीत सिंह के समय मे लाहौर को फिर एक बार पजाब की राजधानी बनने का गौरव मिला। 1849 ई० म पजाब का ब्रिटिश भारत म मिला लिया गया और लाहौर को सूबे का मुख्य शासन कद्र बनाया गया। लाहौर के प्राचीन स्मारक हैं—किला, जहागीर का मकबरा, शालीमार बाग और रणजीत सिंह की समाधि। लाहौर का किला तथा इसके अतगत भवनादि मुख्य रूप म अकबर, जहागीर, शाहजहा और औरगजेब के बनवाए हुए हैं। हाथीपाव द्वार के अदर प्रवेश करन पर पहल लव के प्राचीन मदिर के दशन होते हैं। यहीं औरगजेब का बनवाया हुआ नौलखा भवन है जो सगममर का बना है। इसके आगे मुसम्मन बुज है जहा स महाराजा रणजीतसिंह रावी नदी का दृश्य दखा करते थे। पास ही शाहजहा के समय मे बना शीशमहल है। यहा रणजीतसिंह के उत्तराधिकारी ने सर जॉन लारेंस को कोहनूर हीरा भेंट म दिया था। क़िले के अदर अन्य उल्लेखनीय इमारतें ये हैं—बडी ख्वाबगाह,

दीवानेआम, मोती मसजिद, हजूरी बाग और बारादरी। हजूरी बाग से बादशाही मसजिद को जिसे 1674 ई० म औरगजेब ने बनवाया था, रास्ता जाता है। शाहदरा, जहा जहागीर का मकबरा अवस्थित है, रावी के दूसरे तट पर लाहोर स 3 मील दूर है। मकबरे के निकट ही नूरजहा के बनवाए हुए दिलकुशा उद्यान क खडहर हैं। मकबरा लाल पत्थर का बना हुआ है जिस पर सफेद सगमर्मर का काम है। इसम गुबद नही है। इसकी मीनारें अठकोण हैं। जहागीर की समाधि के चारो ओर सगमरमर की नक्काशीदार जाली के पर हैं। छत पर भी बहुत ही सुदर शिल्पकारी है। इस मकबरे को जहागीर की प्रिय बेगम नूरजहा ने बनवाया था। नूरजहा की समाधि जहागीर के मकबरे के निकट ही स्थित है। इस पर कोई मकबरा नही है और बेगम तथा उसकी एक मात्र सतान लाडली बेगम की कब्रें अनलकृत और सादे रूप मे सब ओर से खुले हुए मडप के अदर बनी हैं। ये शाहजहा के जमाने म बनी थी। शाहजहा का बनवाया हुआ शालीमार बाग कश्मीर के इसी नाम के बाग की अनुकृति है। यह लाहोर से 6 मील दूर है। रणजीतसिह की तथा उनकी आठ रानिया की समाधिया किले के निकट ही एक छतरी के नीचे बनी हुई हैं। य रानिया रणजीतसिह की मृत्यु के पश्चात सती हो गई थी।

शत्रुजय के एक अभिलेख म लवपुर या लाहोर को लामपुर कहा गया है।

लिगसुगुर (जिला रायपुर, मैसूर)

लिगसुगुर के तालुके मे अनेक प्रागैतिहासिक स्थल पाए गए हैं।

लिखुनिया (जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

सोन नदी की घाटी मे स्थित इस ग्राम के निकट कई प्रागैतिहासिक गुफाए हैं जिनमें तत्कालीन चित्रकारी प्रदर्शित है। इसमे घुडसवारो द्वारा पालतू हाथिया की सहायता से एक जगली हाथी को पकडने का दृश्य है तथा विशाल पक्षियो को जाल मे फसाने जैसे कई विषयो का जीवत चित्रो द्वारा अकन किया गया है।

लीलाजन

नीराजना या फल्गु नदी।

लुबिनीग्राम (नेपाल)

जिला बस्ती (उ० प्र०) के ककराहा नामक ग्राम से 14 मील और नेपाल-भारत सीमा से कुछ दूर पर नेपाल के अदर स्थित रुमिनीदेई नामक ग्राम ही लुबिनीग्राम है जो गौतमबुद्ध के जन्म स्थान के रूप म जगत्प्रसिद्ध है। नौतनवा स्टेशन से यह स्थान दस मील है। बुद्ध की माता मायादेवी कपिलवस्तु स

कोलियगणराज्य की राजधानी देवदह जाते समय लुंबिनीग्राम में एक शालवृक्ष के नीचे ठहरी थी (देवदह में माया का पितृगृह था), उसी समय बुद्ध का जन्म हुआ था। जिस स्थान पर जन्म हुआ था वहां बाद में मौर्य सम्राट अशोक ने एक प्रस्तरस्तंभ का निर्माण करवाया। स्तंभ के पास ही एक सरोवर है जिसमें बौद्धकथाओं के अनुसार नवजात शिशु को देवताओं ने स्नान करवाया था। यह स्थान अनेक शतियों तक वन्यपशुओं से भरे हुए घने जंगलों के बीच छिपा पड़ा रहा। 19वीं शती में इस स्थान का पता चला और यहां स्थित अशोक स्तंभ के निम्न अभिलेख से ही इसका लुंबिनी से अभिज्ञान निश्चित हो सका—'देवान पियेन पियदसिना लाजिना वीसतिवसाभिसितेन अतन आगाच महीयते हिदबुधेजाते साक्यमुनीति सिलाविगडभी चाकालापित सिलाथभेच उसपापिते—हिद भगवं जातेति लुम्मनिगाम उबलिके कटे अठभागिए च' अर्थात् देवानामप्रिय प्रियदर्शी राजा (अशोक) ने राज्याभिषेक के बीसवें वर्ष यहां आकर बुद्ध की पूजा की। यहां शाक्यमुनि का जन्म हुआ था अतः उसने यहां शिलाभित्ति बनवाई और शिला स्तंभ स्थापित किया। क्योंकि भगवान् बुद्ध का लुंबिनी ग्राम में जन्म हुआ था, इसीलिए इस ग्राम को बलि-कर से रहित कर दिया गया और उस पर भूमिकर का केवल अष्टम भाग (षष्ठांश के बजाय) नियत किया गया। इस स्तंभ के शीर्ष पर पहले अश्व मूर्ति प्रतिष्ठित थी जो अब नष्ट हो गई है। स्तंभ पर अनेक वर्ष पूर्व बिजली गिरने से नीचे से ऊपर की ओर एक दरार पड़ गई है। [चीनी पर्यटक युवानच्वांग ने भारत भ्रमण के दौरान (630–645 ई०) लुंबिनी की यात्रा की थी। उसने यहां का वर्णन इस प्रकार किया है—'इस उद्यान में सुंदर तड़ाग है जहां शाक्य स्नान करते थे। इससे 400 पग की दूरी पर एक प्राचीन साल का पेड़ है जिसके नीचे भगवान बुद्ध अवतीर्ण हुए थे। पूर्व की ओर अशोक का स्तूप था। इस स्थान पर दो नागों ने कुमार सिद्धार्थ को गर्म और ठंडे पानी से स्नान करवाया था। इसके दक्षिण में एक स्तूप है जहां इंद्र ने नवजात शिशु को स्नान करवाया था। इसके पास ही स्वर्ग के उन चार राजाओं के चार स्तूप हैं जिन्होंने शिशु की देखभाल की थी। इन स्तूपों के पास एक शिला स्तंभ था जिसे अशोक ने बनवाया था। इसके शीर्ष पर अश्व की मूर्ति निर्मित थी। स्तूपों के अब कोई चिह्न नहीं मिलते। अश्वघोष ने बुद्धचरित 1,6 में लुंबिनी वन में बुद्ध के जन्म का उल्लेख किया है। (यह मूलश्लोक विलुप्त हो गया है)। बुद्धचरित 1,8 में इस वन का पुनः उल्लेख किया गया है—'तस्मिन् वने श्रीमतिराजपत्नी प्रसूतिकालं समवेक्षमाणा, शय्यां वितानोपहितां प्रपेदे नारी सहस्रैरभिनन्द्यमाना।

लुनार (बरार, महाराष्ट्र)

लुनार नामक पहाडी पर एक ग्राम के निकट पर्वतो से घिरी हुई खारी पानी की झील है जिसके भीतर कई स्रोत हैं। झील शान्त ज्वालामुखी पहाड का मुख जान पडती है। स्थानीय किंवदती है कि यहा लवणासुर के रहने की गुफा थी और विष्णु ने इस असुर को इसी स्थान पर मारा था।

लुहारू=लोहागल (राजस्थान)

सीकर से 20 मील दूर राजस्थान का प्राचीन तीर्थ है। यह रामानद सप्रदाय का विशिष्ट स्थान है। यहा सूर्य का एक प्राचीन मदिर स्थित है। पर्वत के नीचे पुराणो म प्रसिद्ध ब्रह्मसर बताया जाता है। ऐसी प्राचीन अनुश्रुति प्रचलित है कि पाडवो ने महाभारत के युद्ध के पश्चात यहा की यात्रा की थी।

लैचा (जिला बूदी, राजस्थान)

1533 ई० म इस स्थान पर चित्तौड नरेश विक्रमाजीत और गुजरात के सुल्तान बहादुरशाह मे भारी युद्ध हुआ था। चित्तौड की सहायता के लिए बूदी, शोन गढा, दवर, तथा कई अ य ठिकानो ने अपनी सेनाए भेजी थी। युद्ध के मैदान मे बहादुरशाह की फौजो के आग तोपखाना लगा था जिसका सचालन लार्बी खा नामक गोलदाज कर रहा था। गोलो की बौछार से राजपूत सेना को बडी क्षति हुई। तोपें न होने से राजपूत केवल धनुषबाण और तलवारो से ही लडते रहे। राजपूत सरदारो न तोपो की मार से बचने के लिए अपनी सेना को पीछे हटाया और सयोग पाकर दाहिन और बाए से गुजरात की सेना पर बाणप्रहार करने का आदेश दिया। इसमे कुछ सफलता भी मिली किंतु गालो की बौछार के धुए से अधेरा हो जाने के कारण राजपूत सेना को बहुत कठिनाई का सामना करना पडा। अधकार की भीषणता मे अचानक ही बहादुरशाह की सेना ने गोलाबारी रोककर राजपूतो पर तलवार से हमला कर दिया जिसस उनकी सेना का भयकर सहार हुआ क्योंकि उन्हे अधेरे मे कुछ भी नही सूझ रहा था। उनका साहस टूट गया और वे युद्धस्थल से तेजी के साथ पीछे हट आए। लैचा के मैदान से भाग कर राजपूत सेना ने चित्तौड की रक्षा पर ही अपनी सारी शक्ति केन्द्रित कर दी।

लोकपाल (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

जोशीमठ से आग सातवें मील से लोकपाल के लिए माग जाता है। समुद्रतल से इसकी ऊचाई 14200 फुट है। सिखधर्म की परपरा के अनुसार यह गुरुगोविंदसिंह के पूवजन्म की तप स्थली है। लोकपाल म हेमकुड नामक

एक सरोवर है । पास ही लक्ष्मण जी का एक मंदिर तथा एक गुरुद्वारा है । लोकपाल के लिए संसार-प्रसिद्ध फूलों की घाटी से हो कर मार्ग गया है ।

लोकालोक

पौराणिक भूगोल के अनुसार यह पर्वत सबसे विशाल महाद्वीप पुष्कर के आगे स्थित है ।

लोकोकडी=लकुडी

लोथाल (जिला अहमदाबाद, गुजरात)

1954-1955 के उत्खनन में एक प्राचीन ढूह से हड़प्पा संस्कृति (=सिंधु-घाटी सभ्यता) के अवशेष प्राप्त हुए हैं । इनमें पांच हड़प्पा मुद्राएं भी हैं । इस उत्खनन से सिद्ध हो गया है कि ई० सन् से तीन चार सहस्रवर्ष प्राचीन हड़प्पा सभ्यता का विस्तार गुजरात तक तो अवश्य ही था ।

लाद्रवा, लोद्रवापुर (जिला जैसलमेर, राजस्थान)

मध्यकालीन मंदिरों के लिए यह स्थान प्रसिद्ध है । 1327 वि० सं०= 1280 ई० में बने हुए गणेशमंदिर में गणेशप्रतिमा एक चरणचौकी पर आसीन है जिस पर इस संवत् का अभिलेख अंकित है । इस अभिलेख में सच्चिकादेवी (महिषमर्दिनी देवी) की उपासना का भी उल्लेख है । 15वीं शती के जैन मंदिर की स्थापत्य कला भव्यता तथा सूक्ष्म शिल्प दोनों ही दृष्टियों से अनोखी है । मंदिर के प्रवेशद्वार तथा तोरण पर सूक्ष्म शिल्पकारी और अलंकरण तत्कालीन कला के अद्भुत उदाहरण हैं ।

लोध्रवन=लोधमूना वन (कुमायूं)

वाल्मीकि रामायण-किष्किंधा० 43 में उल्लिखित है—'लोध्रपद्मकखंडेपु देवदारुवनेपु च, रावण सह वैदेह्या मार्गितव्यस्ततस्ततः' ।

लोनी (जिला मेरठ, उ० प्र०)

पृथ्वीराज चौहान के समय (12वीं शती ई०) के ध्वंसावशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है ।

लोपबुरी दे० लवपुरी (1)

लोह

महाभारत सभा० 27,27 में इस देश का उल्लेख अर्जुन की उत्तर दिशा के देशों की दिग्विजय के संबंध में है—'लोहान परमकांबोजानृषिकानुत्तरानपि, सहितांस्तान महाराज व्यजयत् पाकशासनिः' । परमकांबोज संभवतः वर्तमान चीनी तुर्किस्तान (सीक्यांग) के कुछ भागों में रहने वाले कबीलों का देश था । इसी के निकट लोह प्रदेश की स्थिति रही होगी । श्री वा० श० अग्रवाल के

मत म लोह या रोह (अथवा लाहित, राहित) ददिस्तान के पश्चिम मे स्थित काफिरिस्तान या कोहिस्तान का प्रदेश है जो अफगानिस्तान की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर हिंदूकुश पवत तक विस्तृत है। रुहले जो मूलत इसी प्रदेश के निवासी थे, राह के नाम पर ही रुहने कहलाए। पाणिनि तथा भुवनकोश मे भी इस दश का नामोल्लेख है।

लोहगढ़ (महाराष्ट्र)

जुंनर के दक्षिण मे इद्रायण नदी की घाटी के पश्चिम की ओर लोहगढ एक सुदृढ दुग था। यह भाजा की पहाडी पर स्थित है। इसे छत्रपति शिवाजी ने बीजापुर क सुल्तान से छीन लिया था। यह उत्तर महाल के नौ किलो म से था जिन पर शिवाजी ने अधिकार कर लिया था। जयसिंह के साथ सधि हान पर यह क़िला शिवाजी ने औरगजेब को लौटा दिया। पीछे 1670 ई० म सिंहगढ की विजय के बाद शिवाजी के सेनापति मोरोपत न इसे फिर से जीत लिया।

लोहगाव (महाराष्ट्र)

इस ग्राम का सबध महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सतकवि तुकाराम (मृत्यु 1649 ई०) से बताया जाता है। यहा इनका एक प्राचीन स्मारक है। वारकर-सप्रदाय के भक्त दहू तथा लाहगाव की यात्रा करते हैं।

लोहना (बिहार)

दरभगा—निमली रेलमाग पर लाहना स्टेशन के निकट प्राचीन ग्राम जिसे कवि गाविंददास का जमस्थान माना जाता है। गोविंददास की पदावलिया बगाल म प्रसिद्ध हैं।

लोहबा (ज़िला गढवाल, उ० प्र०)

इस स्थान पर गढवाल के प्राचीन नरेशो के समय का एक गढ है जा अब खडहर हा गया है। गढवाल म इस प्रकार क अनेक गढो के खडहर है।

लोहा=लोह।

लोहाचल (हास्पेट तालुका, मैसूर)

वेल्लारी स 6 मील पूव की आर यह एक पहाडी है। सभवत इसका प्राचीन नाम क्रौंच था और वाल्मीकि रामायण म वर्णित क्रौंचारण्य शायद इसी के निकट स्थित था—'तत पर जनस्थानात त्रिकोश गम्य राघवौ, क्रौंचारण्य विविशतुगहन तौ महौजसौ'–अरण्य० 69 5। श्रीराम और लक्ष्मण सीताहरण के पश्चात् पचवटी से चलकर तीन कोस की यात्रा के पश्चात् यहा पहुचे थ। (दे० क्रौंचारण्य)

लोहानीपुर (पटना, बिहार)

यह पटना का उपनगर है। इस स्थान से मौर्यकालीन दिगंबर जैन मूर्तियां प्राप्त हुई हैं जिनका विवरण जैन ऐंटिक्वेरी भाग 5, अंक 3 में है। ये मूर्तियां 14 फरवरी 1937 ई० को मिली थीं। इनमें एक तीर्थंकर महावीर की मूर्ति है। यह चुनार के बलुवापत्थर के एक ही खंड में से कटी हुई है। मूर्ति पर बहुत सुंदर और चमकदार प्रमार्जन है जो मौर्यकालीन कला की विशेषता थी। लगभग दो सहस्र वर्ष प्राचीन होते हुए भी इस मूर्ति के प्रमार्जन में तनिक भी मैलापन नहीं दिखाई देता। कहा जाता है कि पटना संग्रहालय में सुरक्षित इस मूर्ति से अधिक सुंदर प्रमार्जित मूर्ति भारत भर में दूसरी नहीं है।

लोहार्गल

(1) दे० लुहारू।

(2) वराहपुराण 15, में उल्लिखित है। यह स्थान संभवतः कुमायूं में चंपावत के निकट लोहाघाट है। यह वैष्णवतीर्थ है।

लोहित

(1)=लोह (रोह)

(2)=लाहूल (हिमाचल प्रदेश)

तिब्बत भारत सीमा पर स्थित है। इसका उल्लेख महाभारत सभा० 27, 17 में अर्जुन की दिग्विजय यात्रा के संबंध में है—'ततः काश्मीरकान् वीरान्क्षत्रियान् क्षत्रियर्षभ, व्यजयल्लोहितं चैव मण्डलैर्दशभिः सह'। (दे० लाहूल)

लोहितगंगा

ब्रह्मपुत्र या लौहित्य नदी जो प्राग्ज्योतिष (=गोहाटी, असम) के निकट बहती है। महाभारत, सभा० 38 में नरकासुरवध प्रसंग में इसका नामोल्लेख है—'मध्ये लोहितगंगाया भगवान् देवकीसुतः औदकाया विरूपाक्ष जघान भरतर्षभ'। (दे० लौहित्य)

लौहित्य

वाल्मीकि रामायण अयो० 71, 15 में उल्लिखित है—'हस्तिपृष्ठकमासाद्य कुटिकामप्यवर्तत तनार च नरव्याघ्रो लौहित्ये च कपीवतीम्'। इस स्थान के पास भरत ने केकयदेश से अयोध्या आते समय कपीवती नदी को पार किया था। प्रसंग से यह स्थान अयोध्या से अधिक दूर नहीं जान पड़ता।

लौरियाअरराज (बिहार)

मोतीहारी से 18 मील दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित है। इस ग्राम से एक मील दूर अशोक का शिलास्तंभ है जिस पर मौर्य सम्राट के छः अभिलेख

अंकित हैं। यह स्तभ 37 फुट ऊचा है। इसका शीर्ष नष्ट हो गया है किंतु जान पडता है कि स्तभ पर पहले अवश्य ही किसी पशु (वृष,सिंह, अश्व या गज, जो बुद्ध की जीवन कथा से सबधित माने जाते हैं) की मूर्ति रही होगी। स्तभ का अभिलेख दो भागो मे उत्कीर्ण किया गया है, पहला उत्तर की ओर 18 पंक्तियो म और दूसरा दक्षिण की ओर 23 पंक्तियो मे।

लोरियानदन गढ़ (जिला चपारन, बिहार)

बतिया से 16 मील दूर है। यहा अशोक का एक शिलास्तभ है, जिसके शीर्ष पर सिंह की मूर्ति प्रतिष्ठित है। इस पर ब्राह्मी म 5 अभिलेख उत्कीर्ण हैं। बुद्ध के समय वृजिगण की नगरी अलप्पा या अल्लकप्प इसी स्थान पर थी जिसके विस्तीर्ण खडहर यहा दिखाई पडते हैं। वृजियो के आठ गोत्र थ। इनम से बुलियो की राजधानी इस स्थान पर थी। अशोक ने गौतम बुद्ध की जीवन कथाओ से सबद्ध इस नगरी के निकट शिलास्तभ स्थापित करके इसका महत्त्व बढाया था।

लौहित्य

ब्रह्मपुत्र नदी। कालिकापुराण के निम्न श्लोको मे ब्रह्मपुत्र या लौहित्य के साथ सबद्ध पौराणिक कथा का निर्देश है—'जातसप्रत्यय सोऽथ तीर्थमासाद्य त वरम्, वीर्थि परशुना कृत्वा ब्रह्मपुत्रमवःहयत। ब्रह्मकुडात्सुत. सोऽथ कासारे लोहिताह्वय, कैलासोपत्यकाया तु यापतत ब्राह्मण सुत। तस्य नाम विधिश्चक्रे स्वय लोहितगगकम् लौहित्यात्सरसो जाता लौहित्याख्यस्ततोऽभवत। स कामरूपमखिल पीठम्प्लाव्य वारिणा गोपय सर्वतीर्थाणि दक्षिण याति सागरम'। इस उद्धरण से ज्ञात होता है कि पौराणिक अनुश्रुति क अनुसार ब्रह्मकुड या लोहित्यसर (=मानसरोवर) से उत्पन्न होने के कारण ही इस नदी को ब्रह्मपुत्र और लौहित्य नामो से अभिहित किया जाता था। कैलास-पर्वत की उपत्यका से निकल कर कामरूप म बहती हुई यह नदी दक्षिण सागर (बंगाल की खाडी) मे गिरती है। इसे इस उद्धरण मे लोहितगगा भी कहा गया है। इस नाम का महाभारत मे भी उल्लेख है। ब्रह्मकुड या ब्रह्मसर मानसरोवर का ही अभिधान है। [टि० भौगोलिक तथ्य क अनुसार ब्रह्मपुत्र तिब्बत के दक्षिण पश्चिमी भाग की कुबी गागरी नामक हिमनदी से निस्सृत हुई है। प्राय सात सौ मील तक यह नदी तिब्बत के पठार पर ही बहती है जिसमे 100 मील तक इसका भाग हिमालय श्रेणी के समानातर है। तिब्बती भाषा में इस नदी को 'लिहाग और त्सागपो (पवित्र करन वाली) कहते हैं। इस प्रदेश म इसकी सहायक नदिया हैं—एकात्सागपो, क्योचू (ल्हासा इसी के तट पर है),

ल्यागचू और ग्यामदा। सदिया के निकट ब्रह्मपुत्र असम मे प्रवेश करती है। जहा यह गगा से मिलती है, वहा इसे यमुना कहते हैं। इसके आगे यह पद्मा नाम से प्रसिद्ध है और समुद्र मे गिरने के स्थान के समीप इसे मेघना कहा जाता है। वर्तमान काल मे ब्रह्मपुत्र के उद्गम तक पहुचने का श्रेय कैप्टन किंगडम वाडनामक यात्री का दिया जाता है। इन्होने नदी के उदगम क्षेत्र की यात्रा 1924 मे की थी।] महाभारत म भीम की पूर्व दिशा को दिग्विजय के सबध मे सुह्म देश के आगे लौहित्य तक पहुचने का उल्लेख है—'सुह्मानामधिप चैव ये च सागरवासिन, सर्वान म्लेच्छगणाश्चैव विजिग्ये भरतर्षभ, एन बहुविधान देशान विजित्य पवनात्मज, वसुतेभ्य उपादाय लौहित्यगमद्बली'—सभा० 30,25,26। कालिदास ने रघुवश 4,81 मे रघु की दिग्विजय के सबध म प्राग्ज्योतिषपुर (=गोहाटी, असम) के राजा के, रघु के लौहित्य को पार कर लेने पर, भयभीत होने का वणन किया है—'चकम्प तीर्णलौहित्येतस्मिन प्राग्ज्योतिषेश्वर तद्गजालानता प्राप्तैं सहकालागुरुद्रुमैं' इस श्लोक म लौहित्य नदी के तटवर्ती प्रदेश म कालागुरु के वृक्षो का वणन कालिदास न किया है जो बहुत समीचीन है। कभी कभी इस नदी की उत्तरी धारा को जो उत्तर असम मे प्रवाहित है लौहित्य और दक्षिणी धारा को जो पूव बगाल (पाकि०) मे बहती है ब्रह्मपुत्र कहा जाता था। ब्रह्मपुत्र का अथ ब्रह्मसर से और लौहित्य का अथ लोहितसर से निकलनेवाली नदी है। शायद नदी के अरुणाभ जल के कारण भी इसे लौहित्य कहा जाता था। लौहित्य नदी के तटवर्ती प्रदेश को भी लौहित्य नाम से अभिहित किया जाता था। उपर्युक्त महा० सभा० 30,26 मे लौहित्य, नदी के प्रदेश का भी नाम हो सकता है।

वक्षु

ऑक्सस (Oxus) या आमू नदी (दक्षिण रूस)। 'प्रमाणरागसपन्नान वक्षुतीरसमुद्भवान, बल्यय ददतस्तस्म हिरण्य रजत्त बहु' महा० सभा० 50,20—इस प्रसग म युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ मे वहा क निवासियो द्वारा भेंट म लाए गए तेज दौडने वाले रासभो ('रासभान दूरपातिन' सभा० 50 19) का भी उल्लेख है। रघुवश 4,67 मे सिंधुतीर विचेष्टन (विनीताध्व श्रमास्तस्य सिंधुतीरविचेष्टनै, दुधुर्वाजिन स्क धाल्लग्नकुकुमकेसरान') के स्थान म किसी किसी प्राचीन प्रति मे 'वक्षुतीर विचेष्टनै, पाठ है। यदि यह शुद्ध है तो कालिदास के समय म वक्षु नदी के प्रदेश का भारत क सम्राट अपन साम्राज्य का ही एक अग समझते थे—इस तथ्य को मान्यता प्रदान करनी पडेगी। वक्षु का रूपातर साहित्य म वक्षु या चक्षु भी मिलता है (दे० चक्षु)। अरबी मे इस

नदी को जिहुन कहते हैं।

वग

वग या वग वगाल का प्राचीन नाम है। महाभारत मे वग नरेश पर भीम की चढाई का उल्लेख है—'उभौ बलभृतौ वीरावुभौतीव्रपराक्रमौ निर्जित्याजौ महाराज वगराजमुपाद्रवत'—सभा० 30, 23। वग-निवासियो के युधिष्ठिर के राजसूय म कलिग और मगध के लोगो के साथ आगमन का वणन सभा० 52,18 म इस प्रकार है—'वगा कलिगा मगधास्ताम्रलिप्ता सपुड्रका दौवालिका सागरका पत्रोर्णा शैशवास्तथा'। कालिदास ने रघुकी दिग्विजय यात्रा के दौरान वग निवासियो का युद्ध में परास्त होने का वणन किया है—'वगानुत्खाय तरसा नेता नौसाधनोद्यतान, निचखान जयस्तभान्गगास्रोतोन्तरषु स'। अर्थात रघु ने अनेक नौकाओ के साधन से सपन्न वग निवासियो को बलात् विस्थापित करके गगा के स्रोतो के बीच बीच विजय स्तभ गडवाए'। महरौली के लोहस्तभ पर चद्र नामक नरश के अभिलेख में उसकी विजय का विस्तार वगदेश तक बताया गया है—'यस्योदवतयत प्रतीपमुरसा शत्रून समेत्यागतान्, वगव्वाहववर्तिना ऽ भिलिखिता खड्गेनकीर्तिभजे ' (नई खोजो के अनुसार इस अभिलेख का वग शायद सिंध देश का एक भाग था) प्राचीन काल में वग सामान्य रूप से पूरे बगाल का नाम था किंतु कभी कभी यह शब्द केवल पूर्वी बगाल के लिए ही व्यवहृत होता था। माधवचपू मे वग और गौड भिन्न प्रदेश माने गए है। सुह्म पश्चिमी दक्षिणी बगाल, (राजधानी—ताम्रलिप्ति) और समतट बगाल की खाडी के तटवर्ती प्रदेश का नाम था। राढ या राढी भी बगाल का एक भाग (बदवान कमिश्नरी) था। पुड गगा का मुख्य धारा पद्मा (ब्रह्मपुत्र गगा की सयुक्त धारा) के उत्तर मे स्थित प्रदश का नाम था। डाउसन (दि० क्लासिकल डिक्शनरी) के अनुसार प्राचीन काल मे वग भागीरथी के उत्तर म स्थित भाग का नाम था जिसमे जैसार और कृष्णनगर के जिले सम्मिलित थे।

जैन साहित्य म वग का कई स्थानो पर उल्लेख है। प्रनापणा सूत्र म वग का अग के साथ ही आयजना का श्रेष्ठ स्थान बताया गया है।

वचि=वजि।

वजि (केरल)

वजि म केरल या चेर की प्राचीन राजधानी थी। यह नगरी परियार नदी के तट पर स्थित थी। इसको वचि और करूर भी कहत थे। वजि का अभिज्ञान कोचीन से 28 मील पूर्वोत्तर म बसे हुए ग्राम तिरुकरूर से किया गया

है। (दे० करूर, तिरुवजिकलम)

वंजुला

मजीरा नदी का एक नाम।

वंश=वश

ऐतरेय ब्राह्मण तथा कौषीतकी उपनिषत् में इस देश का नाम (वश) कुरु-पचाल तथा उशीनर के प्रसग में उल्लिखित है। (तथा दे० शतपथ ब्राह्मण 12,2,2,13)। ओल्डनबर्ग के अनुसार वश या वंश वत्स के ही रूपांतर हैं। (दे०वत्स)

वंशगुल्म

विदर्भ का प्राचीन तीर्थ। इसका उल्लेख महाभारत वन० 85,9 में इस प्रकार है—'शोणस्य नर्मदायाश्च प्रभवे कुरुनन्दन, वंशगुल्म उपस्पृश्य वाजिमेधफल लभेत'। इस वर्णन से इसकी स्थिति अमरकंटक के निकट सिद्ध होती है क्योंकि अमरकंटक पर्वत से ही नर्मदा और शोण नदियां उद्भूत होती हैं। प्राचीन काल में विदर्भ का यहां तक विस्तार था तथा वंशगुल्म में इस देश की राजधानी थी। इस स्थान का अभिज्ञान वासिम (म० प्र०) से किया गया है।

वंशधारा (उड़ीसा)

उड़ीसा की प्राचीन राजधानी कलिंगनगर इसी नदी के तट पर बसी हुई थी। कलिंगनगर की स्थिति वर्तमान मुखलिंगम् (जिला गंजम) के सन्निकट थी (दे० पार्जिटर द्वारा संपादित मार्कडेय पुराण, 57,3)।

वकडी (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

14वीं व 16वीं शती ई० की दक्षिण भारतीय वास्तुशैली में निर्मित मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

वक्कलेरी (मैसूर)

इस ग्राम से चालुक्यवंशीय नरेश कीर्तिवर्मन द्वितीय (757 ई०) के कई ताम्रदानपट्ट प्राप्त हुए हैं। ये ताम्रपट्ट भीमरथी अथवा भीमा नदी के उत्तरी तट पर स्थित भण्डारगविट्टगे नामक स्थान (वर्तमान कौठेम) से प्रचलित किए गए थे। इनमें सुल्लीपूर ग्राम ([illegible] धारवाड़ के निकट) के दान में

वजिरा का अंतिम राजा साधीन कहा गया है। वजिरा संभवत वृज्जि या वज्जि का ही रूपांतर है जिसकी स्थिति बिहार में थी। (दे० वृज्जि)

वज़ीरिस्तान दे० वृजिस्थान।

वज्जि=वृजि, वृजिक।

वज्र

बुंदेलखंड का एक प्राचीन नाम (दे० श्री गो० ला० तिवारी बुंदेलखंड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० 1)।

वज्रयोगिनी (विक्रमणीपुर परगना, पूर्व बंगाल, पाकि०)

महान बौद्ध विद्वान् व पर्यटक दीपंकर श्रीज्ञान (10वीं शती ई०) का जन्म-स्थान। दीपंकर ने तिब्बत और सुमात्रा में जाकर बौद्ध धर्म का प्रचार किया था। कुछ समय तक ये विक्रमशिला विश्वविद्यालय के अध्यक्ष भी रहे थे।

वज्रासन

मूलत, बौद्ध गया में अश्वत्थ वृक्ष के नीचे उस स्थान का नाम जहां आसीन होकर गौतम को संबुद्धि प्राप्त हुई थी। कालांतर में बौद्धगया को ही वज्रासन कहा जाने लगा। इसका नाम, ज्ञान प्राप्त करने के लिए किए गए बुद्ध के वज्र-संकल्प का प्रतीक है।

वज्रि दे० वृजि।

वटाटवी

आटविक प्रदेश (मुख्यत मध्य प्रदेश का पहाडी और वन्य भाग) का एक पार्श्व जिसका उल्लेख एक प्राचीन अभिलेख में है। (दे० एपिग्राफिका इंडिका, 7, पृ० 126)

वटेश्वर=बटेसर (जिला आगरा, उ० प्र०)

आगरे से 44 मील और शिकोहाबाद से 13 मील दूर यह प्राचीन कस्बा यमुनातट पर बसा हुआ है। यह ब्रजमंडल की चौरासी कोस की यात्रा के अंतर्गत है। इसका पुराना नाम शौरिपुर है। किंवदंती के अनुसार यहां श्रीकृष्ण के पितामह राजा शूरसेन की राजधानी थी। (शौरि कृष्ण का भी नाम है)। जरासंध ने जब मथुरा पर आक्रमण किया तो यह स्थान भी नष्ट भ्रष्ट हो गया था। वटेश्वर-महात्म्य के अनुसार महाभारत युद्ध के समय बलभद्र विरक्त होकर इस स्थान पर तीर्थ यात्रा के लिए आए थे। यह भी लोकश्रुति है कि कंस का मृत शरीर बहते हुए बटेश्वर में आकर कंस किनारा नामक स्थान पर ठहर गया था। वटेश्वर को ब्रजभाषा का मूल उद्गम और प्रधान केंद्र माना जाता है (दे० भूषण विमर्श)। जैनों के 22वें तीर्थंकर स्वामी नेमिनाथ का

जन्म स्थल शौरिपुर ही माना जाता है। जैनमुनि गर्भकल्याणक तथा जन्म कल्याणक का इसी स्थान पर निर्वाण हुआ था, ऐसी जैन परंपरा भी यहां प्रचलित है। अकबर के समय में यहां भदौरिया राजपूत राज्य करते थे। कहा जाता है कि एक बार राजा बदनसिंह जो यहां के तत्कालीन शासक थे, अकबर से मिलने आए और उसे बटेश्वर आने का निमंत्रण देते समय भूल से यह कह गए कि आगरे से बटेश्वर पहुंचने में यमुना को नहीं पार करना पड़ता जो वस्तुस्थिति के विपरीत था। घर लौटने पर उन्हें अपनी भूल मालूम हुई क्योंकि आगरे से बिना यमुना पार किए बटेश्वर नहीं पहुँचा जा सकता था। राजा बदनसिंह बड़ी चिंता में पड़े और इस भय से कि कहीं सम्राट के सामने झूठा न बनना पड़े, उन्होंने यमुना की धारा को पूर्व से पश्चिम की ओर मुड़वा कर उसे बटेश्वर के दूसरी ओर कर दिया और इसलिए कि नगर को यमुना की धारा से हानि न पहुंचे, एक मील लंबे, अत्यंत सुदृढ़ और पक्के घाटों का नदी तट पर निर्माण करवाया। बटेश्वर के घाट इसी कारण प्रसिद्ध हैं कि उनकी लंबी श्रेणी अविच्छिन्नरूप से दूर तक चली गई है। उनमें बनारस की भांति बीच बीच में रिक्त स्थान नहीं दिखलाई पड़ता। बटेश्वर के घाटों पर स्थित मंदिरों की संख्या 101 है। यमुना की धारा को मोड़ देने के कारण 19 मील का चक्कर पड़ गया है। भदौरिया वंश के पतन के पश्चात् बटेश्वर में 17वीं शती में मराठों का आधिपत्य स्थापित हुआ। इस काल में संस्कृतविद्या का यहां काफी प्रचलन था जिसके कारण बटेश्वर का छोटी काशी भी कहा जाने लगा। पानीपत के तृतीय युद्ध (1761 ई०) के पश्चात वीरगति पाने वाले मराठों को नारूशंकर नामक सरदार ने इसी स्थान पर श्रद्धांजलि दी थी और उनकी स्मृति में एक विशाल मंदिर भी बनवाया था जो आज भी विद्यमान है। शौरीपुर के सिद्धि क्षेत्र की खुदाई में अनेक वैष्णव और जैन मंदिरों के ध्वंसावशेष तथा मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। यहां के वर्तमान शिवमंदिर बड़े विशाल एवं भव्य हैं। एक मंदिर में स्वर्णभूषणों से अलंकृत पार्वती की 6 फुट ऊंची मूर्ति है जिसकी गणना भारत की सुंदरतम मूर्तियों में की जाती है।

वटोदर दे० बड़ौदा

वणिजग्राम

वैशाली के निकट एक कस्बा जहां तीर्थंकर महावीर ने कई वर्षाकाल बिताए थे।

वत्स

इस जनपद की राजधानी कौशांबी (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०) थी।

ओल्डनबर्ग के अनुसार ऐतरेय ब्राह्मण म जिन वश लोगो का उल्लेख है वे इसी देश के निवासी थे। कौशाबी म इस जनपद की राजधानी प्रथम बार पाडवो के वशज निचक्षु ने बनाई थी। वत्स देश का नामोल्लेख वाल्मीकि रामायण मे भी है—'स लोकपालप्रतिप्रभावस्तीर्त्वा महात्मा वरदो महानदीम्, तत समृद्धाञ्छुभसस्यमालिन क्षणेन वत्सा मुदितानुपागमत्' अयो० 52,101। अर्थात् लोकपालो के समान प्रभाववाले रामचद्र, वन जाते समय, महानदी गगा को पार करके, शीघ्र ही धनधान्य से समृद्ध और प्रसन्न वत्स देश मे पहुचे। इस उद्धरण से सिद्ध होता है कि रामायण-काल म गगा नदी वत्स और कोसल जनपदो की सीमा पर बहती थी। गौतम बुद्ध के समय वत्सदेश का राजा उदयन था जिसने अवती-नरेश चडप्रद्योत की पुत्री वासवदत्ता से विवाह किया था। इस समय कौशाबी की गणना उत्तरी भारत के महान् नगरो मे की जाती थी। *अगुत्तरनिकाय के सोलह जनपदो मे वत्सदेश की भी गिनती की गई है।* वत्स देश के लावाणक नामक ग्राम का उल्लेख भास विरचित स्वप्नवासवदत्ता नाटक के प्रथम अक मे है—'ब्रह्मचारी भो श्रूयताम्। राजगृहतोऽस्मि। श्रुतिविशेषणार्थं वत्सभूमौ लावाणक नाम ग्रामस्तत्रोपितवानस्मि'। षष्ठ अक म राजा उदयन के निम्न कथन से सूचित होता है कि वत्सराज्य पर अपना अधिकार स्थापित करने मे उदयन को महासेन अथवा चडप्रद्योत से सहायता मिली थी—'ननु यदुचितान वत्सान् प्राप्तु नृपोऽत्र हि कारणम्'। महाभारत, सभा० 30,10 के अनुसार भीमसेन ने पूर्व दिशा की दिग्विजय के प्रसग मे वत्सभूमि पर विजय प्राप्त की थी—'सोमधेयाश्च निर्जित्य प्रययावुत्तरामुख, वत्सभूमि च कौन्तेयो विजिग्ये बलवान बलात'।

वनवास=वनवासी

महावश 12,4 मे उल्लिखित एक प्रदेश जिसका अभिज्ञान वर्तमान मैसूर राज्य के उत्तरी भाग (उत्तर कनारा) से किया गया है। इस उल्लेख से जान पडता है कि अशोक के शासनकाल मे मौग्गलिपुत्र ने रक्षित नामक स्थविर को बौद्धधर्म के प्रचारार्थ यहा भेजा था। महाभारत म सभवत इसी प्रदेश के निवासियो को वनवासी कहा गया है—'तिमिगल च स नृप वशेकृत्वा महामति, एकपादाश्च पुरुषान, केरलान वनवासिन' –सभा० 31,69। वायुपुराण 45,125 और हरिवश 95 मे भी इसका उल्लेख है। वनवासी या वनवास जनपद का उल्लेख शातकर्णी नरेशो (द्वितीय शती ई०) के अभिलेखो मे भी है। यहा इन आध्र राजाओ के अमात्य का मुख्य स्थान था। इस प्रदेश का वर्णन दशकुमार-चरित के 8वें उच्छवास मे भी आया है। बृहत्सहिता (14,12) मे वनवासी

को दक्षिण में स्थित बताया गया है।

वनायु

'दीर्घेष्वमी नियमिता पटमडपपु निद्राविहाय वनजाक्ष वनायुदस्या ववशोष्मणा मलिनयति पुरोगतानि, लेह्यानि सैधवशिला शकलानि वाहा' रघुवश, 5,73। कालिदास न इस सदभ म वनायुप्रदश के घोडा का उल्लेख किया है। कोशकार हलायुध ने 'पारसीका वनायुजा' कहकर वनायु को फारस या ईरान माना है। कुछ विद्वानों के मत मे वनायु अरब देश का प्राचीन भारतीय नाम है (दे० अरब)। वाल्मीकि रामायण (बाल० 6,22) मे वनायु के श्याम वण के अनक घोडो से अयोध्या को भरीपूरी बताया गया है—'काबोजविषये जातैर्बाह्लीकैश्च हयोत्तमैं वनायुजैनदीजैश्चपूर्णा हरिहयोत्तमै' । कालिदास का उपर्युक्त वणन की प्रेरणा अवश्य ही वाल्मीकि रामायण के उल्लेख से मिली होगी क्योंकि रघुवश म भी, वनायु के घोडो का वणन अयोध्या के प्रसग म ही है।

वनिजगाम=वणिजग्राम।

वनोशिला दे० जयतीक्षेत्र।

वप्रकेश्वर

वार्नियो द्वीप (इडानेशिया) के कोटी प्रदेश म स्थित मुआराकामन। चौथी शती ई० म यहा एक हिंदू राज्य स्थित था। यहा के शासक मूलवमन् ने 400 ई० क लगभग वप्रकेश्वर म बहुसुवणक नामक महायज्ञ किया था और बीस सहस्र गौएँ ब्राह्मणो को दान मे दी थी। यह सूचना इस स्थान से प्राप्त चार सस्कृत अभिलेखो स मिलती है।

वरदक (अफगानिस्तान)

यहा एक प्राचीन बौद्ध स्तूप स्थित है जिसम एक पीतल के घडे पर 6 ई० पू० का एक अभिलेख प्राप्त हुआ है। चीनी यात्री युवानच्वाग ने (630 645 ई० इनका भारत भ्रमण काल है) इस स्थान का उल्लेख वतमान गजनी से 40 मील पर किया है। युवानच्वाग के अनुसार यहा का राजा तुर्की बौद्ध था। इसे वरदस्थान भी कहा जाता था।

वरदा (म० प्र०)

वर्धा के पास बहने वाली नदी। इसका उल्लख महाभारत वन 85,35 म है—'वरदासगमे स्नात्वा गोसहस्रफल लभेत'।

वरदातट

वरदा नदी का तटवर्ती प्रदश अथवा विदभ जिसका उल्लेख अबुलफ़ज़ल न आईनअकबरी मे भी किया है। जान पडता है कि वरदा या वर्धा नदी क काठ

मे स्थित होने के कारण ही विदर्भ या बरार के प्रदेश को मुगलकाल मे वरदा कहा जाने लगा था।

वरघ‍नापेट (ज़िला वारगल, आ० प्र०)

यहा जफरुद्दौला का बनवाया हुआ किला है जो 18वी शती म बना था।

वरण

बुद्धचरित 21 25 म वर्णित एक नगर जहा वारण नामक यक्ष को बुद्ध न धम की दीक्षा दी थी। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है। (दे० बरन)

वरणा

पाणिनि 4,2,82 मे उल्लिखित है। इसको वरण वृक्ष के निकट बताया गया है। यह सिंधु और स्वात नदियो के बीच मे स्थित एक स्थान का नाम था। आश्वकायनो का निवास इसी भूमि मे था।

वरनगर दे० आनदपुर।

वरा

महाभारत भीष्म० मे उल्लिखित पेशावर के निकट बहनेवाली नदी बारा।

वराह

(1) गिरिव्रज (राजगृह) के समीप एक पहाडी—'वैहारो विपुल शैलो वराहो वृषभस्तथा, तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यकपचमा एते पच महाशृगा पवता शीतलद्रुमा रक्ष‍तीवाभिसहत्य सहतागा गिरिव्रजम' महा० सभा० 21 2-3। (दे० राजगृह)

(2) (मैसूर) शृगेरी से 9 मील दूर स्थित शृगगिरि का प्राचीन नाम। इस पवत से तुगा, भद्रा, नत्रावती और वाराही ये चार नदिया निकलती है।

वराहक्षेत्र=बडा चत्रा (जिला बस्ती, उ० प्र०)

टिनिच रेल स्टेशन से दो मील पूव और कुआनो नदी के दक्षिणी तट पर, रल के पुल से आधे मील पर एक ग्राम है जो जनश्रुति के अनुसार वराह-अवतार की स्थली है। कुछ लोगा के विचार मे पुराणो म वर्णित व्याघ्रपुर इसी स्थान पर बसा था। कहा जाता है यही बौद्ध साहित्य का कोलिया नामक स्थान है जहा सिद्धाथ की माता मायादवी के पिता कोलिय वशीय सुप्रबुद्ध की राजधानी थी। (दे० कोलिय् गणराज्य)

वराहपुरी (जिला बनासकाठा, राजस्थान)

यह ढीमा नामक ग्राम के निकट है। प्राचीन काल मे यहा वराह भगवान्

का मंदिर था जिसे मध्यकाल मे मुसलमानो ने नष्ट कर दिया । अब इस स्थान को धरणीधर कहते हैं । धरणीधर पुराणो के अनुसार वराह (शूकर) का ही पर्याय है ।

वराहमूल=बारामूला

वरुणद्वीप=वारुणद्वीप

'इंद्रद्वीपकशेरु च ताम्रद्वीप गभस्तिमत् गाधव गारुण द्वीप सौम्याक्षमिति च प्रभु' महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ । इस उल्लेख के अनुसार वारुण (या वरुण) द्वीप को अन्य द्वीपो के साथ, शक्तिशाली सहस्रबाहु ने जीत लिया था । यह द्वीप सभवत, बोर्नियो (इडोनीसिया) है । ताम्रद्वीप लका का ही नाम है । बोर्नियो का एक अन्य नाम सभवत वर्हिण भी था । माकडेय पुराण म वारुण के साथ भारत के व्यापार का उल्लेख है ।

वरुणा

(1) वाराणसी के निकट गगा से मिलने वाली एक छोटी नदी जिसे अब बरना कहते हैं । जनश्रुति है कि वरुणा और असी नदियो के बीच मे बसे होन के कारण वाराणसी का यह नाम हुआ था ।

(2) (म० प्र०) नमदा की सहायक नदी जो सोहागपुर स्टेशन (इटारसी-इलाहाबाद रेलपथ) से कुछ मील दूर नमदा मे मिलती है । सगम पर वारुणेश्वर-मदिर स्थित है और पास ही सिगलवाडा नामक ग्राम ।

वरुणिक दे० देवबरनार्क

वरूथ

'तोरण दक्षिणार्धेन जवूप्रस्थ समागतम्, वरूथ च ययौ रम्य ग्राम दशरथात्मज —वाल्मीकि० अयो० 71,11 । भरत केकय देश से अयोध्या जाते समय जवूप्रस्थ के निकट इस ग्राम से होकर निकले थे । प्रसग से जवूप्रस्थ तथा वरूथ की स्थिति गगा के पूव की ओर जान पडती है । यह दोनो स्थान सभवत वतमान रूहेलखड के अतगत रहे होगे । अयोध्या० 71,12 से यह भी ज्ञात होता है कि वरूथ के निकट एक रम्य वन भी स्थित था जहा भरत ने विश्राम किया था —'तत्र रम्ये वने वास कृत्वासौ प्राङ्मुखोययौ' ।

वरेंद्र

उत्तर बगाल का प्राचीन व मध्ययुगीन नाम । वरेंद्र सेनवंशीय नरेशों के शासनकाल मे बगाल के चार प्रातो (वग, वागरा, राढ़ी, वरेंद्र) का सपूर्ण भाग प्राय वर्तमान राजशाही डिवीजन मे स्थित था । भडारकर के अनुसार अशोक के शिलालेख स० 13 मे उल्लिखित पारिंद लोग वरेंद्र के ही निवासी थे ।

वकला (केरल)

निवेंद्रम से 20 मील उत्तर मे स्थित है। यहा समुद्र तट पर एक पहाडी के ऊपर जनार्दन विष्णु का एक प्राचीन मदिर है जिसके विषय मे किंवदती है कि 16वी शती मे हालड के एक दुघटनाग्रस्त जलयान चालक ने आपत्ति से छुटकारा मिलने पर इस मदिर को कृतज्ञतास्वरूप अपने जलयान के घटे का दान दे दिया था। इस मदिर के पुजारी की प्राथना से अवरुद्ध वायु चलने लगी और समुद्र मे फसे हुए जलयान की यात्रा सभव हो सकी।

वर्णु

वतमान बन्नू (प० पाकि०) जिसे चीनीयात्री युवानच्वाग ने फलन लिखा है।

वर्तोई

सौराष्ट्र (गुजरात) के पश्चिमी भाग मे बहने वाली नदी वेत्रवती। घुमली से प्राप्त ताम्रपत्रो मे वेत्रवती के नाम का उल्लेख है। वर्तोई वेत्रवती का ही अपभ्रश है।

वधन (जिला उदयपुर, राजस्थान)

प्राचीन काल म यहा मेरो का दुग था जिसे मेवाडनरेश महाराणा लाखा ने उनसे छीन लिया था।

वधमान

(1) (बगाल) बदवान का प्राचीन नाम। कुछ समय पूव तक यह एक प्राचीन रियासत थी। वधमानभुक्ति का नाम गुप्त-अभिलेखो म भी मिला है।

(2) (लका) महावश 15,92 मे उल्लिखित एक स्थान जो महामेघवन (अनुराधपुर के निकट) के दक्षिण की ओर स्थित था।

(3) हस्तिनापुर का नगरद्वार

(4) कथासरित्सागर 24 म उल्लिखित एक नगर जो वाराणसी और प्रयाग के बीच म स्थित था। इसका उल्लेख माकडेयपुराण और वेतालपचाशतिका म भी है।

वधमानकोटि (बिहार)

महाराज हप के समय के बासखेडा अभिलेख (628–629 ई०) म इस स्थान का उल्लेख है जो उस समय किसी 'विषय' का मुख्य स्थान रहा होगा। यह अभिलेख इसी स्थान से प्रचलित किया गया था। इसकी स्थिति बासखेडा के निकट रही होगी। (दे० बासखेडा)

वधमानपुर (काठियावाड, गुजरात)

झालावाड-प्रदेश के अतगत वतमान वाधवा। जैन हरिवश की निधि के वारे मे लिखते हुए जिनसेन ने इस नगर का उल्लेख किया है।

वधमानभुक्ति दे० वधमान (1)

वर्दा (नदी) दे० वरदा

वमक दे० भमक

वमती

पाणिनि 4,3,94 मे उल्लिखित यह स्थान वतमान वामियान (अफगानिस्तान) है। यहा के घोडो का वामतय कहा जाता था।

वलभी दे० वल्लभीपुर

वला दे० वल्लभीपुर

वल्लभीपुर (काठियावाड, गुजरात)

प्राचीन काल मे यह राज्य गुजरात के प्रायद्वीपीय भाग मे स्थित था। वतमान समय मे इसका नाम वला नामक भूतपूव रियासत तथा उसके मुख्य स्थान वलभी के नाम में सुरक्षित रह गया है। 770 ई० के पूव यह देश भारत मे विख्यात था। यहा की प्रसिद्धि का कारण वल्लभी विश्वविद्यालय था जो तक्षशिला तथा नालदा की परपरा मे था। वल्लभीपुर या वलभि से यहा के शासको के उत्तरगुप्तकालीन अनेक अभिलेख प्राप्त हुए हैं। बुदेलो के परपरागत इतिहास से सूचित होता है कि वल्लभीपुर की स्थापना उनके पूवपुरुष कनकसन ने की थी जो श्रीरामचद्र के पुत्र लव का वशज था। इसका समय 144 ई० कहा जाता है। जैन अनुश्रुति क अनुसार जन धम की तीसरी परिषद वल्लभीपुर म हुइ थी जिसके अध्यक्ष देवर्धिगणि नामक आचाय थे। इस परिषद् द्वारा प्राचीन जैन आगमो का सपादन किया गया था। जो सग्रह सपादित हुआ उसकी अनक प्रतिया बना कर भारत के बडे बडे नगरो मे सुरक्षित कर दी गयी थी। यह परिषद् छठी शती ई० मे हुई थी। जैन ग्रथ विविध तीर्थ कल्प के अनुसार वल्भि गुजरात की परम वैभवशाल्निी नगरी थी। वलभि नरेश शीलादित्य ने रकज नामक एक धनी व्यापारी का अपमान किया था जिसन (अफगानिस्तान के) अमीर या 'हम्मीर' को शीलादित्य के विरुद्ध भडका कर आक्रमण करने के लिए निमत्रित किया था। इस युद्ध म शीलादित्य मारा गया था।

वल्लारी

बिलारी मैसूर का प्राचीन नाम जो समवत वलिहारी का रूपातर है।

वल्लिमल्लई (उत्तर अर्काट,मद्रास)

गगनरेश राजमल्ल प्रथम द्वारा निर्मित जन गुहामदिरो के कारण यह स्थान

उल्लेखनीय है ।

ववनिया (कच्छ, गुजरात)

इस स्थान पर प्राचीनकाल के किसी अज्ञात बदरगाह के चिह्न मिले हैं। यहा समुद्रतल मे 15 फुट की गहराई से एक टूटे-फूटे पुराने जलयान के खड भी प्राप्त हुए थे । ऐसा विचार है कि यह बदरगाह भारत पर अरब आक्रमण के पूर्व अच्छी दशा में रहा होगा—(दे० अलग्जेंडर बर्नस, ट्रेवल्स इटू बुखारा—1835, जिल्द 1, अध्याय 11, पृ० 320-325)

वश दे० वश, वत्स ।

वशाति=वसाति ।

'वशातय शाल्वका केकयाश्च तथाम्बष्ठा य त्रिगर्ताश्च मुख्या' महा० उद्योग 30,23 । महाभारत सभा० 51, दाक्षिणात्यपाठ में भी वशाति या वसाति निवासियो का उल्लेख पाडवो के राजसूययज्ञ में उपायान लेकर उपस्थित होने वाले लोगो के सबध म है—'शैब्यो वसातिभि सार्धं त्रिगर्तोमालवै सह' । वशाति-जनपद का अभिज्ञान हिमाचल प्रदेश म स्थित सीबी से किया गया है । इस तथ्य की पुष्टि उपर्युक्त उद्धरणा मे इस प्रदेश के अन्य पार्श्ववर्ती जनपदो के उल्लेख से होती है ।

वश्या

वसीन का प्राचीन नाम जो एक कन्हेरी अभिलेख मे उल्लिखित है ।

वशिष्ठ पवत

महाभारत, आदि० 214, 2 के अनुसार इस पवत पर अर्जुन अपन द्वादश वप के वनवास काल म आए थे—'अगस्त्यवटमासाद्य वशिष्ठस्य च पवतम् भृगुतुगे च कौन्तेय कृतवाञ्छौचमात्मन' । यह स्थान हिमालय के पार्श्व में गगा-द्वार या हरद्वार क ऊपर कही स्थित था जैसा कि 214, 1 से सूचित होता है।

वसतगढ (राजस्थान)

आबू के निकट स्थित है । 9वी शती ई० मे जैनो का यह महत्त्वपूर्ण तीर्थ था । यहा के खडहरा स प्राप्त उस समय की अनेक धातु प्रतिमाए पीडवाडे के जैन मदिर म रख दी गई हैं ।

वसाति=वशाति ।

वसिष्ठा

गोदावरी की एक शाखा या उपनदी । (दे० गोदावरी)

वसुकुड

कुडग्राम का एक नाम । (दे० वैशाली)

वसुधानगर

पुराणों के अनुसार वरुणदेव का नगर जिसे सुखा भी कहते थे। (दे० डाउसन क्लासिकल डिक्शनरी 'वरुण')

वसुमती दे० गिरिव्रज (2)

वहिंदा=हकरा

मुसलमान इतिहास लेखकों के बयान से सूचित होता है कि मुसलमानों के भारत पर आक्रमण के समय बीकानेर, बहावलपुर और सिंध के वर्तमान मरु-स्थलीय भागों में उस समय हकरा या वहिंदा नाम की एक विशाल नदी प्रवाहित होती थी जो कालांतर में शुष्क होकर समाप्त हो गई। इस नदी के कारण यह मरुस्थलीय प्रदेश उस समय इतना सूखा बंजर नहीं था जितना कि अब है। इसका प्राचीन नाम अज्ञात है।

वागठ (कश्मीर)

वागठ का प्राचीन मंदिर वास्तुकला की दृष्टि से अनन्तनाग के प्रसिद्ध मार्तंड मंदिर की परंपरा में है।

वाई (महाराष्ट्र)

कृष्णा नदी के तट पर महाराष्ट्र का प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ है। बंगलौर पूना रेल मार्ग पर वाठर स्टेशन से यह 20 मील दूर है। वाई का संबंध महाराष्ट्र के 17वीं शती के प्रसिद्ध संत समर्थ रामदास से बताया जाता है। प्राचीन किंवदंती के अनुसार कृष्णा के तट पर वाई के निकटवर्ती प्रदेश में पहले अनेक ऋषियों की तप स्थली थी। कहा जाता है कि रामडीह नामक स्थान पर वनवास काल में श्रीरामचंद्र जी ने कृष्णा नदी में स्नान किया था। पांडव भी यहां अपने वनवास काल में कुछ समय तक रहे थे। वाई का प्राचीन नाम वैराज क्षेत्र है।

वाकाट=वाकाटपुर (भूतपूर्व ओडछा रियासत, म० प्र०)

काशीप्रसाद जायसवाल तथा फ्लीट के मतानुसार वाकाटक नरेशों का मूलस्थान। ये गुप्त सम्राटों के समकालीन थे और मध्य प्रदेश के कई स्थानों पर इनका राज्य था।

वाजना (ज़िला मथुरा, उ० प्र०)

इस ग्राम से गुप्तकाल के अनेक प्रमार्जित प्रस्तर खंड प्राप्त हुए हैं जो भांति भांति के अलंकरणों से युक्त हैं। इनमें त्रिरत्न और पूर्ण विकसित कमल-पुष्पों को नाला के द्वारा चोंच में पकड़े हुए हंसों का अंकन अतीव सुंदर है।

वाटधान

महाभारत, सभा० 32,8 में वर्णित एक स्थान जो संभवतः माध्यमिका,

(दे० चित्तौड) और पुष्कर (ज़िला अजमर) के निकट था। इस पर नकुल ने अपनी दिग्विजय यात्रा म अधिकार प्राप्त किया था— तथा माध्यमिकाश्चैव वाटधानान् द्विजानय पुनश्च परिवृत्याथ पुष्करारण्यवासिन'। डा० वा० श० अग्रवाल के मत म यह भटिंडा का इलाका है। (दे० 'कादविनी' अक्तूबर, 62)

वाडापल्ली (ज़िला नलगोडा, आ० प्र०)

इस स्थान पर मूसी और कृष्णा का सगमस्थल है जहा वारगल-नरेश प्रतापरुद्र का, 13वी शती के अत मे बनवाया हुआ प्राचीन किला है। दुग के भीतर नरसिंह स्वामी और अगस्त्येश्वर के प्रसिद्ध मदिर हैं। सगम से 400 फुट ऊपर पाताल गगातीर्थ है।

वाणियगाम (वाणिज्यग्राम)

वैशाली का एक उपनगर जहा वृज्जिवशी क्षत्रियो का निवासस्थान था। यहा विशजनो और कम्मकरो अर्थात वाणिज्य व्यवसाय करने वालो की प्रधानता थी।

वातापि (ज़िला बीजापुर)

शोलापुर स 141 मील दूर स्थित वतमान बादामी ही प्राचीन वातापि है। यह शोलापुर-गदग रेल माग पर स्थित है। बादामी की बस्ती दो पहाडियो के बीच मे है। वातापि का नाम पुराणो मे उल्लिखित है जहा इसका सबध वातापि नामक दैत्य से बताया गया है जिसे अगस्त्य ऋषि ने मारा था (दे० ब्रह्मपुराण—'अगस्त्यो दक्षिणामाशामाश्रित्य नभसि स्थित, तरुणस्यात्मजा योगी विध्यवातापि मदन')। छठी सातवी शती ई० मे वातापि नगरी चालुक्य वश की राजधानी क रूप म प्रसिद्ध थी। पहली बार यहा 550 ई० के लगभग पुलकेशिन प्रथम ने अपनी राजधानी स्थापित की। उसन वातापि म अश्वमध यन सपन्न करके अपने वश की सुदढ नीव स्थापित की। 608 ई० मे पुलकेशिन द्वितीय वातापि के सिंहासन पर आसीन हुआ। यह बहुत प्रतापी राजा था। इसने प्राय 20 वर्षों म गुजरात, राजस्थान, मालवा, कोकण, वेंगी आदि प्रदेश को विजित किया। 620 ई० के लगभग उसने उत्तर भारत के प्रसिद्ध नरेश महाराज हृष को भी हराया जिससे हृष की दक्षिण देशो के विजय की आकाक्षा फलीभूत न हो सकी। 630 ई० के आसपास नमदा के दक्षिण मे वातापि नरश की सवत्र दुदुभि बज रही थी और उसके समान यशस्वी राजा दक्षिण भारत म दूसरा नही था। मुसलमान इतिहास लेखक तबरी के अनुसार 625-626 ई० मे ईरान के बादशाह खुसरो द्वितीय न पुलकेशिन की राजसभा मे अपना दूत भेजकर उसके प्रति सम्मान प्रदर्शित किया था। शायद इसी घटना

दृश्य अजता के एक चित्र (गुहा स० 1) मे अकित किया गया है। वातापि नगरी इस समय अपनी समृद्धि के मध्याह्न काल म थी। किंतु 642 ई० म पल्लवनरेश नरसिंह वर्मन ने पुलकेशिन् को युद्ध म परास्त कर चालुक्य सत्ता का अत कर दिया। पुलकेशिन स्वय भी इस युद्ध मे आहत हुआ। वातापि को जीतकर नरसिंहवर्मन न नगर मे खूब लूटमार मचाई। पल्लवो और चालुक्यो की शत्रुता इसके पश्चात भी चलती रही। 750 ई० मे राष्ट्रकूटो न वातापि तथा परिवर्ती प्रदेश पर अधिकार कर लिया। वातापि पर चालुक्यो का 200 वप तक राज्य रहा था। इस काल म वातापि ने बहुत उन्नति की। हिंदू, बौद्ध और जैन तीनो ही सप्रदायो ने अनेक मदिरो तथा कलाकृतियो से इस नगरी को सुशोभित किया। 6ठी शती के अत मे मगलेश चालुक्य न वातापि म एक गुहामदिर बनवाया था जिसकी वास्तुकला बौद्ध गुहा-मदिरो जैसी है। वातापि क राष्टकूट-नरेशो में दतिदुग और कृष्ण प्रथम प्रमुख है। कृष्ण के समय में एलोरा का जगत प्रसिद्ध मदिर बना था किंतु राष्ट्रकूटो के शासनकाल में वातापि का चालुक्यकालीन गौरव फिर न उभर सका और इसकी ख्याति धीरे धीरे विलुप्त हो गई।

वाधवा दे० वधमानपुर

वामदेव

'मोदापुर वामदेव सुदामान सुमकुलम, उलूकानुत्तराश्चैव ताश्च राज समानयत'—महा सभा० 27, 11। अजुन ने अनक पवतीय दशो के साथ वामदेव पर भी अपनी दिग्विजय-यात्रा म विजय प्राप्त की थी। प्रसग से यह स्थान कुलू के पहाडी प्रदेश के अन्तगत जान पडता है।

वामन

विष्णुपुराण 2, 4 50 के अनुसार क्रौचद्वीप का एक पवत—'क्रौंचश्च वामनश्चैव तृतीयश्चान्धकारक, चतुर्थो रत्नशैलश्च स्वाहिनी हयसंनिभ'।

वामनगगा (म० प्र०)

यह नमदा की सहायक उपनदी है। भेडाघाट (जिला जबलपुर) के निकट दोनो का सगम है।

वामनपुकर दे० नवद्वीप

वायड, वायड (गुजरात)

प्रचीन जैन तीथ जिसका उल्लेख तीथ माला चत्यवदन मे है—'वद सत्यपुरे च बाहडपुरे राडद्रह वायडे"।

वारगल (आ० प्र०)

वारगल या वारकल—तेलगू शब्द ओरुकल या ओरुगल्लु का अपभ्रंश है जिसका अर्थ है 'एक शिला'। इससे तात्पर्य उस विशाल अकेली चट्टान से है जिस पर ककातीय नरेशों के समय का बनवाया हुआ दुर्ग अवस्थित है। कुछ अभिलेखों से ज्ञात होता है कि संस्कृत में इस स्थान के ये नाम तथा पर्याय भी प्रचलित थे—एकोपल, एकशिला, एकोपलपुरी या एकोपल्पुरम। रघुनाथ भास्कर के कोश में एकशिलानगर, एकशालिगर, एकशिलापाटन—ये नाम भी मिलते हैं। टॉलमी द्वारा उल्लिखित कोरुनकुला वारगल ही जान पड़ता है। 11 वीं शती ई० से 13 वीं शती ई० तक वारगल की गिनती दक्षिण के प्रमुख नगरों में थी। इस काल में ककातीय वंश के राजाओं की राजधानी यहां रही। इन्होंने वारगल का दुर्ग, हनमकोंडा में सहस्र स्तंभों वाला मंदिर और पालमपट का रामप्पा मंदिर बनवाए थे। वारगल का किला 1199 ई० में बनना प्रारम्भ हुआ था। ककातीय राजा गणपति ने इसकी नींव डाली और 1261 ई० में रुद्रमा देवी ने इसे पूरा करवाया था। किले के बीच में स्थित एक विशाल मंदिर के खंडहर मिले हैं जिसके चारों ओर चार तोरण द्वार थे। सांची के स्तूप के तोरणों के समान ही इन पर भी उत्कृष्ट मूर्तिकारी का प्रदर्शन किया गया था। किले की दो भित्तियां हैं। अंदर की भित्ति पत्थर की और बाहर की मिट्टी की बनी है। बाहरी दीवार 72 फुट चौड़ी और 56 फुट गहरी खाई से घिरी है। हनमकोंडा से 6 मील दक्षिण की ओर एक तीसरी दीवार के चिह्न भी मिलते हैं। एक इतिहास लेखक के अनुसार परकोटे की परिधि तीस मील की थी जिसका उदाहरण भारत में अन्यत्र नहीं है। किले के अंदर अगणित मूर्तियां, अलंकृत प्रस्तर खंड, अभिलेख आदि प्राप्त हुए हैं जो शिताबखां के दरबार भवन में संगृहीत हैं। इसके अतिरिक्त अनेक छोटे बड़े मंदिर भी यहां स्थित हैं। अलंकृत तोरणों के भीतर नरसिंह स्वामी, पद्माक्षी, और गोविंद राजुलुस्वामी के प्राचीन मंदिर हैं। इनमें से अंतिम एक ऊंची पहाड़ी के शिखर पर अवस्थित है। यहां से दूर दूर तक का मनोरम दृश्य दिखलाई देता है। 12 वीं 13 वीं शती का एक विशाल मंदिर भी यहां से कुछ दूर पर है जिसके आंगन की दीवार दुहरी तथा असाधारण रूप से स्थूल है। यह विशेषता ककातीय शैली के अनुरूप ही है। इसकी बाहरी दीवार में तीन प्रवेश-द्वार हैं जो वारगल के किले के मुख्य मंदिर के तोरणों की भांति ही हैं। यहां से दो ककातीय अभिलेख प्राप्त हुए हैं—पहला सातफुट लंबी वेदी पर और दूसरा एक तड़ाग के बांध पर अंकित है। वारगल पर प्रारम्भ में दक्षिण के

प्रसिद्ध आंध्रवंशीय नरेशों का अधिकार था। तत्पश्चात् मध्यकाल में चालुक्यों और ककातीयोंका शासन रहा। ककातीय वंश का सर्वप्रथम प्रतापशाली राजा गणपति था जो 1199 ई० में गद्दी पर बैठा। गणपति का राज्य गोंडवाना से कांची तक और बंगाल की खाडी से बीदर और हैदराबाद तक फैला हुआ था। इसी ने पहली बार वारंगल में अपनी राजधानी बनाई और यहां के प्रसिद्ध दुर्ग की नींव डाली। गणपति के पश्चात उसकी पुत्री रुद्रमा देवी ने 1260 से 1296 ई० तक राज्य किया। इसी के शासन-काल में इटली का प्रसिद्ध पर्यटक मार्कोपोलो मोटुपल्ली के बंदरगाह पर उतर कर आंध्रप्रदेश में आया था। मार्कोपोलो ने वारंगल का वर्णन करते हुए लिखा है कि यहां संसार का सबसे बारीक सूती कपड़ा (मलमल) तैयार होता है जो मकड़ी के जाले के समान दिखाई देता है। संसार में ऐसा कोई राजा या रानी नहीं है जो इस आश्चर्यजनक कपड़े के वस्त्र पहन कर स्वयं को गौरवान्वित न माने। रुद्रमादेवी ने 36 वर्ष तक बड़ी योग्यता से राज्य किया। उसे रुद्रदेव महाराज कहकर संबोधित किया जाता था। प्रतापरुद्र (शासन काल 1296-1326 ई०) रुद्रमा का दौहित्र था। इसने पांड्यनरेश को हराकर कांची को जीता। इसने छः बार मुसलमानों के आक्रमणों को विफल किया किंतु 1326 ई० में उलुगखां ने जो पीछे मु० तुगलक नाम से दिल्ली का सुलतान हुआ, ककातीयवंश के राज्य की समाप्ति कर दी। उसने प्रतापरुद्र को बंदी बनाकर दिल्ली ले जाना चाहा था किंतु मार्ग ही में नर्मदातट पर इस स्वाभिमानी और वीर पुरुष ने अपने प्राण त्याग दिए। ककातीयों के शासनकाल में वारंगल में हिंदू संस्कृति तथा संस्कृत और तेलगू भाषाओं की अभूतपूर्व उन्नति हुई। शैवधर्म के अन्तर्गत पाशुपत संप्रदाय का यह उत्कर्षकाल था। इस समय वारंगल का दूर दूर देशों से समृद्ध व्यापार होता था। वारंगल के संस्कृत कवियों में सर्वशास्त्र विशारद वीरभल्लातदेशिक, और नलकीर्तिकौमुदी के रचयिता अगस्त्य के नाम उल्लेखनीय हैं। कहा जाता है कि अलंकारशास्त्र के प्रसिद्ध ग्रंथ प्रतापरुद्रभूषण का लेखक विद्यानाथ यही अगस्त्य था। गणपति का हस्तिसेनापति जयप, नृत्यरत्नावली का रचयिता था। संस्कृत कवि शाकल्यमल्ल भी इसी का समकालीन था। तेलगू के कवियों में रंगनाथ-रामायणमु का रचयिता गोनबुद्धरेड्डी और बासवपुराणमु और पंडिताराध्यचरितमु का लेखक पल्कुरिकी सोमनाथ मुख्य हैं। इसी समय भास्कर रामायणमु भी लिखी गई। वारंगल-नरेश प्रतापरुद्र स्वयं भी तेलगू का अच्छा कवि था। इसने नीतिसार नामक ग्रंथ लिखा था। दिल्ली के तुगलक वंश की शक्ति क्षीण होने पर 1335-1336 के पश्चात् तेलंगाना में कापय नायक ने

स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया। इसकी राजधानी वारंगल में थी। 1442 ई० में वारंगल पर बहमनी-राज्य का आधिपत्य हो गया और तत्पश्चात् गोलकुंडा के कुतुबशाही नरेशों का। इस समय शिताबखां वारंगल का सूबेदार नियुक्त हुआ। उसने शीघ्र ही स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया किंतु कुछ समय उपरांत वारंगल को गोलकुंडा के साथ ही औरंगजेब के विस्तृत मुगल-साम्राज्य का अंग बनना पड़ा। मुगल-साम्राज्य के अंतिम समय में वारंगल को नई रियासत हैदराबाद में सम्मिलित कर लिया गया।

वारकमंडल (ज़िला फरीदपुर, बंगाल)

फरीदपुर दानपट्टों की मुद्राओं पर इस प्रदेश का उल्लेख इस प्रकार है—'वारक मंडलाधिकारणस्य' जिससे जान पड़ता है कि उत्तर गुप्तकाल में वारक मंडल एक आधुनिक जिले की भांति ही प्रशासन का एकक था। इसकी स्थिति फरीदपुर के आसपास ही रही होगी।

वारण

महाभारत उद्योग० 29, 31 में इस स्थान का उल्लेख इस प्रकार है—'वारणं वाटधानं च यामनुस्चैव पर्वतं, एष देश सुविस्तीर्ण प्रभूतधनधान्यवान्'। यहां दुर्योधन के सहायतार्थ आने वाली असंख्य सेनाओं के ठहरने के लिए जो स्थान नियत किए गए थे उनका वर्णन है। जान पड़ता है वारण, महाभारत में अन्यत्र उल्लिखित वारणावत ही है। वारणावत' का अभिज्ञान बरनावा (ज़िला मेरठ, उ० प्र०) से किया गया है। (दे० वारणावत)

वारणावत

महाभारत के अनुसार इस नगर में दुर्योधन ने लाक्षागृह बनवाकर पांडवों को जला डालने की चाल चली थी जो पांडवों की चतुराई के कारण सफल न हो सकी। वारणवत में शिव की पूजा के लिए जुड़े हुए 'समाज' अथवा मेले को देखने के लिए पांडव लोग धृतराष्ट्र की आज्ञा से गये थे—'धृतराष्ट्र-प्रयुक्तास्ते केचित् कुशलमंत्रिण, कथयाचक्रिरे रम्यं नगरं वारणावतम्। अयं समाज सुमहान् रमणीयतमो भुवि, उपस्थित पशुपतेर्नगरे वारणावते' महा० आदि० 142, 2-3, 'सर्वा मातृस्तथाऽऽपृच्छ्य कृत्वा चैव प्रदक्षिणम्, सर्वा प्रकृतयश्चैव प्रययुर्वारणावतम्'—आदि० 144,4। यहीं पुरोचन ने छद्म रूप से सन, राल, मूंज, बल्वज, बांस आदि पदार्थों से लाक्षागृह की रचना की थी—'शणसर्जरसव्यक्तमानीय गृहकर्मणि। मुंजबल्वजवंशादि द्रव्यं सर्वघृताक्षितम्, शिल्पिभि सुकृत ह्याप्तैर्विनीतैर्वेश्मकर्मणि, विश्वस्तं मामयं पापो दग्धुकाम पुरोचन'—आदि० 145, 15-16 महाभारत, उद्योग० 31-19 के अनुसार

वारणावत उन पाच ग्रामो मे से था जिन्हे युधिष्ठिर ने दुर्योधन से युद्ध को रोकने का प्रस्ताव करते हुए मागा था—'अविस्थल वृकस्थल माकन्दी वारणावतम, अवसान भवेत्वत्र किंचिदेक च पचमम'। वारणावत का अभिज्ञान जिला मेरठ (उ० प्र०) मे स्थित वरनावा नामक स्थान से किया गया है। वरनावा हिंडन और कृष्णी नदी के सगम पर, मेरठ नगर से 15 मील दूर है। जान पडता है कि महाभारत काल मे कौरवो की प्रसिद्ध राजधानी हस्तिनापुर का विस्तार पश्चिम मे वारणावत तक था। वारणावत के विषय मे एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि यहा, जैसा कि महाभारत, आदि 142, 3 से सूचित होता है, उस समय शिवोपासना से सबधित भारी मेला लगता था जिसे 'समाज' कहा गया है। इस प्रकार के 'समाजो' का उल्लेख अशोक के शिला-अभिलेख स० 1 मे भी है।

वारवत्या

'सरयूर्वारवत्याच लागती च सरिदवरा, करतोया तथात्रेयी लौहित्यश्च महानद' महा० सभा० 10 12। प्रसगानुसार, वारवती वर्तमान राप्ती जान पडती है। राप्ती का सामान्यत इरावती का अपभ्रश कहा जाता है। सभव है इसका शुद्ध नाम वारवत्या या वारवती ही हो।

वाराणसी

महाभारत मे काशी का नाम वाराणसी भी मिलता है—'समेत पार्थिव क्षत्र वाराणस्या नदीसुत, कन्यार्थमाह्वयद वीरो रथनैकेन सयुगे' शाति० 27, 9, 'ततो वाराणसी गत्वा अर्चयित्वा वृषभध्वजम, कपिलाह्रदे नर स्नात्वा राजसूयमवाप्नुयात' वन० 84,78। जैन ग्रथ प्रज्ञापणा सूत्र म भी वाराणसी का उल्लेख है। विविधतीर्थकल्प के अनुसार असी गगा और वरणा के तट पर स्थित होने के कारण यह नगरी वाराणसी कहलाती थी। वाराणसी के सबध म महाराज हरिश्चन्द्र की कथा, रूपातरण के साथ इस जैन ग्रथ म वर्णित है। वाराणसी के इस ग्रथ म पाच मुख्य विभाग बतलाए गए हैं—देव वाराणसी, जहा विश्वनाथ का मदिर तथा चौबीस जिनपट्ट स्थित हैं, राजधानी वाराणसी, यवनों का निवास स्थान, मदन वाराणसी और विजय वाराणसी। दतखात सरोवर के निकट तीर्थंकर पार्श्वनाथ का चैत्य स्थित था और उससे 6 मील पर बोधिसत्व मदिर। (दे० काशी, बनारस)

(2) ब्रह्मदेश का भारतीय औपनिवेशिक नगर जिसे सभवत वाराणसी से ब्रह्मदेश (बर्मा) जाने वाले भारतीय [illegible] ने बसाया था। ब्रह्मदेश में मध्यकाल से पूर्व अनेक भारतीय [illegible] गए थे।

वाराणसीकटक

कटक (उडीसा) के निकट महानदी और काठजूरी नदियो के बीच म केसरीवशीय नरेश नृपकेसरी द्वारा बसाया हुआ नगर। विडनासी नामक कस्बे से इस स्थान का अभिज्ञान किया गया है जहा प्राचीन दुग के खडहर स्थित हैं। नृपकेसरी का शासनकाल 920-951 ई० है (दे० महताव, हिस्ट्री आव उडीसा पृ० 66)

व.राहक

राजगह (बिहार) के निकट एक पहाडी [दे० राजगृह (1)]

वाराहतीथ दे० पयोष्णी।

वाराही (मैसूर)

वाराही नदा वराह पवत से निकल कर बगलौर की ओर बहती हुई पश्चिम सागर मे गिरती है। इसके उद्गम को प्रचीन काल से तीर्थ माना जाता रहा है।

वारिधार

श्रीमदभागवत पुराण 5, 19, 16 मे उल्लिखित एक पवत—'श्रीशलोवेंकटो महेन्द्रो वारिधारो विंघ्य'। सदभ से यह दक्षिण भारत का कोई पवत जान पडता है। सभव है यह किष्किधा का प्रस्रवण या प्रवपर्णगिरि हो क्योंकि वारिधार और प्रस्रवण (=प्रवपण) समानाथक जान पडत है।

वारिषेण

महाभारत सभा० 52 मे उल्लिखित है। यहा के निवासी युधिष्ठिर के राजसूय-यन मे उपायन लेकर उपस्थित हुए थे। वारिषेण वतमान बारीसाल (पूव बगाल, पाकि०) है।

वारुणद्वीप=वरुणद्वीप

वाणव

पाणिनि 4, 2, 77 मे उल्लिखित नगर जो वर्णुनद पर स्थित था। यह वतमान बन्नू (प० पाकि०) है। (दे० वर्णु)

वालवी=वलभी

वालीकण्डपुरम् (जिला त्रिशिरापल्ली, मद्रास)

प्राचीन शिवमदिर के लिए प्रसिद्ध है। यह स्थान शिवोपासना का केंद्र था।

वालुवाहिनी

स्कदपुराण मे उल्लिखित यमुना की सहायक नदा।

वाल्मीकि आश्रम

रामायण के रचयिता आदि कवि वाल्मीकि का आश्रम चित्रकूट (जिला बांदा, उ० प्र०) के निकट कामतानाथ से पद्रह सोलह मील दूर लालपुर पहाडी पर स्थित बछाई ग्राम मे बताया जाता है। सभवत गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस, अयोध्याकाड म इसी स्थान का वाल्मीकि का आश्रम कहा है— 'देखत बन सर सैल सुहाए, वाल्मीकि आश्रम प्रभु आए, रामदीख मुनिवास सुहावन, सुदर गिरि कानन जलपावन। सरनि सरोज (विटप बन) फूले, गुजत मजुमधुप रस भूले। खगमृग विपुल कोलाहल करहीं, विरहित बैर मुदित मन चरहीं'। किंतु वाल्मीकि रामायण, उत्तर०, 47, 15 के अनुसार वाल्मीकि का आश्रम गगा तट पर स्थित था, 'तदेतज्जाह्नवीतीरे ब्रह्मर्षीणा तपोवनम्'। सीता के विवासन के समय लक्ष्मण और सीता को यहा पहुचने मे गगा का पार करना पडा था—'गगा सतारयामास लक्ष्मणस्ता समाहित' उत्तर० 46,33। वाल्मीकि रामायण बाल० 2,3 से ज्ञात होता है कि वाल्मीकि का आश्रम तमसा नदी के तट पर और गगा के निकट स्थित था—'स मुहूर्तगते तस्मिन् देवलोक मुनिस्तदा जगाम तमसातीर जाह्नव्यास्त्वविदूरत'। इससे स्पष्ट है कि यह आश्रम तमसा और गगा के सगम पर स्थित था। रघुवश 14, 76 म भी कालिदास ने इस आश्रम को तमसा तट पर स्थित बताया है—'अनून्यतीरा मुनिसनिवेशैस्तमापह त्री तमसा वगाह्य'। कालिदास (रघु० 14,52) के अनुसार भी यहा पहुचने मे लक्ष्मण और सीता को गगा पार करनी पडी थी, 'रथात्सयन्त्रा-निगृहीतवाहात्ता भ्रातृजाया पुलिनेऽवताय गगा निषादाहृतनौ विशेषस्ततार सधामिवसत्यसध'। (दे० ढुंलव, परियर)

बाह्लीक

वाल्मीकि रामायण अयो० 68,18 19 मे विपाशानदी के पूर्व म वाल्हीकदेश का वर्णन है—'प्रवेक्ष्याजलिपानाश्च ब्राह्मणान्वेदपारगान, ययुमध्येन वाल्हीका सुदामानि च पर्वतम्, विष्णो पद प्रेक्षमाणा विपाशा चापि शाल्मलीम्'। (दे० वाह्लिक)।

वाविहपुर

यह वर्तमान वावीपुर है जो राधनपुर (गुजरात) के समीप है। इसकी जैन ग्रथ तीर्थमालाचैत्यवदन म तीर्थ के रूप में वदना की गई है। 'धारापद्रपुरे च वाविहपुरे कासद्रह चेडरे'।

वाशिम=वासिम।

वासण (गुजरात)

पश्चिम रेलवे के वासण स्टेशन से तीन मील दूर है। किंवदती के अनुसार

यहा दो सहस्र वर्ष प्राचीन वैद्यनाथ शिव का मदिर स्थित है जिसे उत्तर भारत का विशालतम मदिर माना जाता है ।

वासिम (जिला अकोला, बरार, महाराष्ट्र)

अकोला से 22 मील दूर है। कहा जाता है कि इस स्थान पर प्राचीन समय मे वत्सऋषि का आश्रम था, जिसके नाम पर ही इस स्थान को वासिम कहा जाता है। नगर के बाहर का स्थान प्राचीन पौराणिक पद्मक्षेत्र माना जाता है। कुछ विद्वानो के मत मे महाभारत म वर्णित वशगुल्म वासिम का ही प्रदेश है। (दे० वशगुल्म)

वाह्लिक=वाह्लीक (दे० वाहीक)

वाहीक

महाभारतकाल म यह पजाब के आरट्ट देश का ही एक नाम था। यहा के निवासियो को कर्णपर्व मे भ्रष्ट आचरण के लिए कुख्यात बताया गया है। इस नाम की उत्पत्ति इस प्रकार कही गई है—'वहिश्चनाम हीकश्च विपाशाया पिशाचकौ तयोरपत्य वाहीका नैषा सृष्टि प्रजापते' महा० कर्ण० 44,41 42 अर्थात विपाशानदी मे दो पिशाच रहते थे, वहि और हीक। इन्ही दोनो की सतान वाहीक कहलाती है। इस श्लोक मे अनार्य अथवा म्लेच्छ जाति के वाहीको या आरट्ट वासियो की काल्पनिक उत्पत्ति का वर्णन है। सभव है इन्हे वास्तविक पिशाच जाति से सबद्ध माना जाता हो। पिशाच जाति का प्राचीन ग्रथो मे वर्णन है। पैशाची भाषा म ग्रथो की रचना भी हुई है (गुणाढय ने अपनी कथाओ को इसी भाषा मे लिखा था)। यह भी माना जाता है कि आर्यों के आने के पूर्व कश्मीर मे पिशाच और नागजातियो का निवास था। जान पडता है कि वाहीक, बाह्लिक या बाह्लीक का ही रूपातर है जो मूलरूप से बल्ख या बैक्ट्रिया (अफगानिस्तान मे स्थित) का प्राचीन भारतीय नाम था। यही के लोग कालातर म पजाब और निकटवर्ती क्षेत्रो म आकर बस गए। ये अपने अनार्य रीति रिवाजो के कारण उस समय अनादर की दृष्टि से देखे जाते थे। वाहीको का मुख्य नगर शाकल (सियालकोट, पाकि०) था जहा जर्तिक (जाट ?) नाम के वाहीक रहते थे—'शाकल नाम नगरमापगा नाम निम्नगा, जर्तिकानामवाहीकास्तेषा वृत्त सुनिन्दितम्' महा० कर्ण० 44,10। वाहीक का अर्थ बाह्य या विदेशी भी हो सकता है (दे० कानूनगो—हिस्ट्री ऑव दि जाटस, पृ० 14) किंतु अधिक सभव यही जान पडता है यह शब्द, जिसकी काल्पनिक या लोक प्रचलित व्युत्पत्ति महाभारत के उपर्युक्त उद्धरण म बताई गई है, परतु वाह्लिक या फारसी बल्ख का ही रूपातरण है। (दे० वाह्लिक, बल्ख, आरट्ट)

विंझवन

पालीग्रंथों में उल्लिखित है । इसका शुद्ध रूप विंध्यवन जान पड़ता है। यह विंध्याटवी का प्रदेश है जिसमें मध्यप्रदेश के कुछ पूर्वी जिले सम्मिलित थे। कुछ विद्वानों के मत में पाली ग्रंथों में विंझवन, वद्यनाथ (पूर्वी बिहार) का नाम है ।

विंद

'ततस्तेनैव सहितो नर्मदामभितो ययौ, विंदानुविंदावावन्त्यौ सैन्येन महतावृतौ—महा० सभा० 31,10 । यह अवन्तिजनपद का एक नगर था। (दे० अनुविंद)

विंध्य = विंध्याचल पर्वत

विंध्य शब्द की व्युत्पत्ति विध धातु (बंधन करना) से कही जाती है। भूमि को वेध कर यह पर्वतमाला भारत के मध्य में स्थित है— यही मूल कल्पना इस नाम में निहित जान पड़ती है। विंध्य की गणना सप्त कुलपर्वतों में है (दे० कुलपर्वत)। विंध्य का नाम पूर्व वैदिक साहित्य में नहीं है । वाल्मीकि रामायण किष्किंधा० 60,4 6 में विंध्य का उल्लेख संपाती नामक गृध्रराज ने इस प्रकार किया है— अस्य विंध्यस्य शिखरे पतितोऽस्मि पुरानघ सूर्यतापपरीतांगो निदग्धः सूर्यरश्मिभि:, ततस्तु सागरान्शैलान् नदीः सर्वा सरांसि च, वनानि च प्रदेशांश्च निरीक्ष्य मतिरागता हृष्टपक्षिगणाकीर्णं कंदरोदरकूटवान्, दक्षिणस्योदधेस्तीरे विंध्योऽयमिति निश्चितः'। महाभारत, भीष्म० 9,11 में विंध्य को कुलपर्वतों की सूची में परिगणित किया गया है। श्रीमद्भागवत 5,19,16 में भी विंध्य का नामोल्लेख है—'वारिधारा विंध्य-शुक्तिमानृक्षगिरि पारियात्रो द्रोणश्चित्रकूटो गोवर्धनो रैवतक'—। कालिदास ने कुश की राजधानी कुशावती को विंध्य के दक्षिण में बताया है। कुशावती को छोड़ कर अयोध्या वापस आते समय कुश ने विंध्य को पार किया था, 'व्यलङ्घयद्विंध्यमुपायनानि पश्यन् पुलिन्दैरुपपादितानि,' रघु० 16,32 । विष्णुपुराण 3,11 में नर्मदा और सुरसा आदि नदियों को विंध्य पर्वत से उद्भूत बताया गया है—'नर्मदा सुरसाद्याश्च नद्यो विंध्याद्रिनिर्गताः'। पुराणों के प्रसिद्ध अध्येता पार्जिटर के अनुसार (दे० जर्नल ऑव दि रॉयल एशियाटिक सोसायटी, 1894, पृ० 258) मार्कंडेय पुराण, 57 में जिन नदियों और पर्वतों के नाम हैं उनके परीक्षण से सूचित होता है कि प्राचीन काल में विंध्य, वर्तमान विंध्याचल के केवल पूर्वी भाग का ही नाम था जिसका विस्तार नर्मदा के उत्तर की ओर भूपाल से लेकर दक्षिण बिहार तक था। इसके पश्चिमी भाग और अवली को

दडपाशिक, दडनायक, विषयपति, आदि ।

(2) (कबोडिया,) प्राचीन कबुज का एक भारतीय औपनिवेशिक नगर। कबुज मे हिंदू नरेशो ने प्राय तेरह सौ वर्ष तक राज्य किया था ।

विक्रमशिला (जिला भागलपुर, बिहार)

विक्रमशिला मे प्राचीन काल मे एक प्रख्यात विश्वविद्यालय स्थित था जो प्राय चार सौ वर्षों तक नालदा विश्वविद्यालय का समकालीन था। कुछ विद्वानो का मत है कि इस विश्वविद्यालय की स्थिति भागलपुर नगर से 19 मील दूर कोलगाव रेल स्टेशन के समीप थी । कोलगाव से तीन मील पूर्व गगातट पर बटेश्वरनाथ का टीला नामक स्थान है जहा अनेक प्राचीन खडहर पडे हुए हैं । इनसे अनेक मूर्तिया भी प्राप्त हुई हैं जो इस स्थान की प्राचीनता सिद्ध करती हैं । अन्य विद्वानो के विचार मे विक्रमशिला जिला भागलपुर मे पथरघाट नामक स्थान के निकट बसा हुआ था । बगाल के पालनरेश धर्मपाल ने 8 वी शती ई० मे इस प्रसिद्ध बौद्ध महाविद्यालय की नीव डाली थी । यहा लगभग 160 विहार थे जिनमे अनेक विशाल प्रकोष्ठ बने हुए थे । विद्यालय मे सौ शिक्षको की व्यवस्था थी । नालदा की भाति विक्रमशिला का महाविद्यालय भी बौद्ध ससार मे सर्वत्र सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था । इस महाविद्यालय के अनेक सुप्रसिद्ध विद्वानो मे दीपकरश्रीज्ञान प्रमुख थे । ये ओदत-पुरी के विद्यालय के छात्र थे और विक्रमशिला के आचार्य । 11 वी शती मे तिब्बत के राजा के निमत्रण पर ये वहा गए थे । तिब्बत मे बौद्ध धर्म के प्रचार प्रसार मे इनका योगदान बहुत महत्वपूर्ण समझा जाता है । 12 वी शती मे यह विश्वविद्यालय एक विराट् शिक्षा सस्था के रूप मे प्रसिद्ध था । इस समय यहा तीन सहस्र विद्यार्थियो की शिक्षा के लिए समुचित व्यवस्था थी । सस्था का एक प्रधान अध्यक्ष तथा छ विद्वानो की एक समिति मिलकर विद्यालय की परीक्षा, शिक्षा, अनुशासन आदि का प्रबध करती थी । 1203 ई० मे मुसलमानो ने जब बिहार पर आक्रमण किया, तब नालदा की भाति विक्रमशिला को भी उन्होने पूर्णरूपेण नष्ट-भ्रष्ट कर दिया और यह महान् विश्वविद्यालय जो उस समय एशिया भर मे विख्यात था, खडहरो के रूप मे परिणत हो गया ।

विजय (कबोडिया)

प्राचीन भारतीय उपनिवेश चपा का मध्यवर्ती भाग । 5 वी शती ई० मे प्रारभ मे यहा चपा के राजा धर्ममहाराज श्री भद्रवर्मन् का आधिपत्य था । विजय नामक नगर मे इस राज्य की राजधानी थी । श्रीविनय नामक प्रसिद्ध

बंदरगाह यही स्थित था।

विजयगढ(1 जिला मिर्जापुर, उ० प्र०)

एक अतिप्राचीन दुर्ग के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। किले के भाग में एक शिला पर प्रागैतिहासिक चित्रकारी अंकित है जिसमें एक योद्धा तथा सिंह की आकृतियाँ बनी हैं। किले की पहाड़ी पर 5 वीं शती ई० से 8 वीं शती ई० तक के बीस से अधिक अभिलेख उत्कीर्ण हैं।

(2) (जिला भरतपुर, राजस्थान) बयाना से 2 मील दक्षिण पश्चिम की ओर स्थित है। यहां से यौधेय-गण का एक शिलालेख (दूसरी शती ई०) प्राप्त हुआ है जिससे इस काल में यौधेयों के राज्य का प्रसार इस क्षेत्र में सिद्ध होता है। गिरनार स्थित रुद्रदामन् (लगभग 120 ई०) के अभिलेख में उसकी यौधेयों पर प्राप्त विजय का उल्लेख है। बाद में यौधेयों को गुप्तसम्राट समुद्रगुप्त से भी परास्त होना पड़ा था जैसा कि हरिषेण लिखित प्रयाग प्रशस्ति (पंक्ति 22) से ज्ञात होता है। विजयगढ के इस अभिलेख से इसके खंडित होने के कारण और अधिक ऐतिहासिक जानकारी न मिल सकी है। विजयगढ से वारिककुल के राजा विष्णुवर्धन का एक प्रस्तर स्तंभ लेख भी मिला है। इसमें संवत् 428 दिया हुआ है जो लिपि के आधार पर अभिलेख की परीक्षा करने से, विक्रम संवत (=372 373 ई०) जान पड़ता है। यदि यह तिथि अभिज्ञान ठीक हो तो वारिक विष्णुवर्धन को समुद्रगुप्त का समकालीन तथा उसका करद सामंत मानना पड़ेगा। इस अभिलेख में विष्णुवर्धन द्वारा पुंडरीक यज्ञों के पश्चात यूपस्तंभ के निर्माण करवाए जाने का उल्लेख है।

विजयनगर(1) (मैसूर)

दक्षिण भारत का मध्यकालीन प्रसिद्ध नगर जो विजयनगर राज्य का मुख्य नगर था। 15वीं और 16वीं शतियों में यह नगर समृद्धि तथा ऐश्वर्य की पराकाष्ठा को पहुंचा हुआ था। इस काल में ईरान के एक पर्यटक अब्दुल रज्जाक ने विजयनगर के सौंदर्य और वैभव को सराहते हुए लिखा है कि विजयनगर का सा सौंदर्य और कला वैभव उस समय संसार के किसी नगर में दृष्टिगोचर नहीं होता था। यहां के निवासियों को अब्दुल रज्जाक ने फूलों का प्रेमी बताते हुए लिखा है कि बाजार में जिधर जाओ फूल ही फूल बिकते हुए नजर आते हैं। विजयनगर के हिंदू राजाओं ने यहां 150 सुंदर मंदिर बनवाए थे। इस प्रसिद्ध राज्य की नींव 1336 ई० में हरिहर और बुक्का नामक भाइयों ने डाली थी और प्राय दो सौ वर्ष तक इस राज्य ने कई प्रतापी नरेशों

के शासनाधीन रहते हुए दक्षिण के बहमनी सुलतानों से निरंतर संघर्ष जारी रक्खा, जिसकी समाप्ति 1565 ई० के तालीकोट के युद्ध द्वारा हुई। इस महा-युद्ध में विजयनगर की बुरी तरह हार हुई, यहां तक कि उसका अस्तित्व ही समाप्त हो गया। फरिश्ता नामक इतिहास लेखक ने लिखा है कि विजयनगर की सेना में नौ लाख पैदल, पैंतालीस सहस्र अश्वारोही, दो सहस्र गजारोही तथा एक सहस्र बंदूकें थीं। विजयनगर की लूट प्रायः पांच मास तक जारी रही जैसा कि पुर्तगाली लेखक फरिआएसूजा के लेख से सूचित होता है। इस लूट में मुसलमानों को अपार संपत्ति तथा धनराशि मिली। प्रसिद्ध लेखक सिवेल 'ए फारगॉटन एंपायर' में लिखता है, 'तालीकोट के युद्ध के पश्चात विजेता मुसलमानों ने विजयनगर पहुंच कर पांच महीने तक लगातार आगजनी, तलवारों, कुल्हाडियों और लोहे की शलाकाओं द्वारा इस सुंदर नगर के विनाश का काम जारी रखा। शायद विश्व के इतिहास में इससे पहले एक शानदार नगर का इतना भयानक विनाश इतनी शीघ्रता से कभी नहीं हुआ था। वास्तव में, इस विनाशकारी युद्ध के पश्चात् विजयनगर की, जो अपने समय में संसार का सबसे अनोखा और अभूतपूर्व नगर था, जो दशा हुई वह वर्णनातीत है। विजयनगर की उत्कृष्ट कला के वैभव से भरे पूरे देवमंदिर, सुंदर और सुखी नर नारियों के कोलाहल से गूंजते भवन, जनाकीर्ण सड़कें, हीरे जवाहरातों की दूकानों से जगमगाते बाजार तथा उत्तुंग अट्टालिकाओं की निरंतर पंक्तियां, ये सभी बर्बर आक्रमणकारियों की प्रतीकारभावना की आग में जलकर राख का ढेर बन गए।'

विजयनगर के खंडहर हंपी नामक स्थान के निकट आज भी देखे जा सकते हैं। कुछ प्राचीन मंदिरों के अवशेषों से विजयनगर की वास्तुकला का थोड़ा बहुत परिचय हो सकता है—इस कला की अभिव्यक्ति यहां के मंडपों के आधारभूत स्तंभों में बड़ी सुंदरता से हुई है। स्तंभों के आधार चौकोन हैं। शीर्षों पर चारों ओर बारीक और घनी नक्काशी दिखाई पड़ती है जो कलाकार की कोमल कला भावना और उच्चकल्पना का परिचायक है। इन स्तंभों के पत्थरों को इतना कलापूर्ण बनाया गया है तथा इस प्रकार गढ़ा गया है कि उनको थपथपाने से संगीतमय ध्वनि सुनी जा सकती है। कहते हैं कि विजयनगर रामायण कालीन किष्किंधा नगरी के स्थान पर ही बसा हुआ था। (दे० हंपी)

(2)=विजयपुर (प० बंगाल)। कलकत्ता—मालदा मार्ग पर गंगा तट पर गोदागिरी के निकट 12वीं शती का ख्याति प्राप्त नगर है जहां गौड के सेन नरेशों ने लक्ष्मणावती के पूर्व अपनी राजधानी बनाई थी। विजयनगर वरेंद्र (वर्तमान राजशाही डिवीजन) में स्थित था। सेन नरेशों ने वरेंद्र पर अधिकार करने के

पश्चात विजयनगर मे अपनी राजधानी स्थापित की थी ।

विजयपुर

(1) आध्र के इक्ष्वाकु-नरेशो की प्रख्यात राजधानी नागार्जुनीकोड । इसे विजयपुरी भी कहते थे ।

(2) = विजयनगर (2)

विजयवाडा = बेजवाडा (आ० प्र०)

कृष्णा नदी के तट पर स्थित है । नदी के निकट ही पवत पर एक प्राचीन दुग है जो अब जीर्ण शीण अवस्था मे है । इसमे कई बौद्ध गुफाए पत्थर काट कर निर्मित की गई है ।

विजिजम (केरल)

त्रिवाकुर (ट्रावनकोर) का प्राचीन बदरगाह जो त्रिवेंद्रम से लगभग 7 मील दूर है । आजकल इस ग्राम म मछियारो की बस्ती है ।

विजिगापट्टम = विशाखापत्तन

विजित = विजितपुर (लका)

महावश 7 45 के अनुसार इस नगर की स्थापना राजकुमार विजय के एक सामत ने की थी । जन श्रुति मे इस नगर का अभिज्ञान अनुराधपुर से 24 मील कालवापी (कलवेव) झील के समीप स्थित वतमान विजितपुर से किया गया है । महावश 25, 19 24 मे भी इस नगर का उल्लेख है ।

विज्जलवीड

किवदती के अनुसार प्राचीन भारत के प्रसिद्ध गणितज्ञ भास्कराचाय का ज म सह्याद्रि मे स्थित विज्जलबीड नामक नगर मे हुआ था जो अब बीड कहलाता है । उनके ग्रथो मे भी इसका उल्लेख है ।

विटकपुर

कथासरित्सागर के अनुसार (25, 35, 26 115, 82, 316) यह नगर अगदेश (दक्षिण पूर्वी बिहार) मे समुद्र तट पर स्थित था ।

विडनासी दे० वाराणसीकटक

वितस्ता

वितस्ता झेलम (कश्मीर तथा पजाब म बहने वाली नदी) का प्राचीन वैदिक नाम है । ऋग्वेद के प्रसिद्ध नदीसूक्त (10,75,5) म इसका उल्लेख है — इम मे गग यमुन सरस्वति शुतुद्रि स्तोम सचता परुष्ण्या असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीय शृणुह्या सुषोमया' । महाभारत के समय यह नदी मानी जाने लगी थी— वितस्ता पश्य राजेद्र सवपापप्रमोचनीम्,

च्युपिताशीततोया सुनिर्मलाम्' वन० 130,20। भीष्म० 9,16 म इसका उल्लेख इरावती (=रावी) के सा र है—'नदीं वत्रवती चव कृष्णवेणा च निम्नगाम, इरावती वितस्ता च पयाष्णी देविकामपि'। श्रीमद्भागवत 5,19,18 म इसका नाम मरुदवृधा तया असिक्नी के साथ है, 'चद्रभागा मरुदवृधा वितस्तासिक्नी'। वितस्ता शब्द की व्युत्पत्ति, मोनियर विलियम्स के सस्कृत-अग्रेजी कोश मे 'तस' धातु से बताई गई है जिसका अथ है—उडेलना। पानी व अजस्र प्रवाह का नदी रूप मे (पवत से) नीचे गिरना—यही भाव इस नदी क नाम म निहित है। वितस्ता नाम का सबध वितस्ति (=हिंदी बीता) से भी जोडा जा सकता है जिसका अथ 'विस्तार' है। वितस्ता का कश्मीर मे स्थानीय रूप स व्यथ और पजाबी म वेहत या वेहट कहा जाता है। ये नाम वितस्ता के ही अपभ्रश रूप हैं। ग्रीक लेखको ने इसे हायडेसपीज (Hydaspes) कहा है जो वितस्ता का रूपातरण है। नदी का झेलम नाम मुसलमानो के समय का है जो इस नदी के तट पर बसे हुए झेलम नामक कस्बे के कारण हुआ है। इसी स्थान पर पश्चिम से पजाब मे आते समय झेलम नदी को पार किया जाता था (दे० झेलम)। राजतरगिणी म उल्लिखित वितस्तात्र नामक नगर शायद वितस्ता के तट पर ही बसा हुआ था।

वितस्तात्र

कश्मीर के प्रसिद्ध इतिहासलेखक कल्हण के अनुसार (दे० राज तरगिणी 1,102-106) सम्राट अशोक ने कश्मीर मे शुष्कलेत्र और वितस्तात्र नामक स्थानो पर अगणित स्तूप बनवाए थे। वितस्तात्र के धर्मारण्य विहार क भीतर अशोक ने जो चैत्य बनवाया था उसकी ऊचाई इतनी थी कि दृष्टि वहा तक पहुच ही नही पाती थी। वितस्तात्र का अभिज्ञान अनिश्चित है किंतु नाम से जान पडता है कि यह नगर वितस्ता या झेलम के तट पर स्थित होगा।

वितृष्णा

विष्णुपुराण 2,4,28 मे उल्लिखित शाल्मलद्वीप की एक नदी—'योनि-स्तोया वितृष्णा च चद्रा मुक्ता विमोचिनी '

विदभ

विध्याचल क दक्षिण मे अवस्थित प्रदेश जिसकी स्थिति वतमान बरार व परिवर्ती क्षेत्र म मानी गई है। विदभ अतिप्राचीन समय से दक्षिण क जनपदो म प्रसिद्ध रहा है। बृहदारण्यकोपनिषत म विदर्भी कौडिन्य नामक ऋषि का उल्लख है जो विदभ क निवासी रहे होगे। पौराणिक अनुश्रुति म कहा गया है कि किसी ऋषि के शाप से इस देश म घास या दभ उगनी बद हो गई थी

जिसके कारण यह विदर्भ कहलाया। महाभारत में विदर्भ देश के राजा भीम का उल्लेख है जिसकी राजधानी कुंडिनपुर में थी। इसकी पुत्री दमयंती निषध-नरेश नल की महारानी थी ('ततो विदर्भान् संप्राप्तं सायाह्ने सत्यविक्रमम्, ऋतुपर्णं जना राज्ञे भीमाय प्रत्यवेदयन्'—वन० 73,1)। विदर्भ नरेश भीष्मक की कन्या रुक्मिणी के हरण तथा कृष्ण के साथ उसके विवाह का वर्णन भी श्रीमद्भागवत में है। श्रीकृष्ण, रुक्मिणी की प्रार्थना-याचना के फलस्वरूप आनर्त देश (द्वारका) से विदर्भ पहुंचे थे—'आनर्तादेकरात्रेण विदर्भानगमद्धयैः' (श्रीमद्भागवत 10, 53,6)। महाभारत में भीष्मक को जो रुक्मिणी का पिता था विदर्भदेश का राजा कहा गया है। भोजकट में उसकी राजधानी थी। हरिवंश-पुराण, विष्णुपर्व 60,32 में भी विदर्भ की राजधानी भोजकट में बताई गई है। कालिदास के समय में विदर्भ का विस्तार नर्मदा के दक्षिण से लेकर (रघुवंश सर्ग 5 के वर्णन के अनुसार अज ने जिसकी राजधानी अयोध्या (उ० प्र०) में थी विदर्भराज भोज की कन्या इंदुमती के स्वयंवर में जाते समय नर्मदा को पार किया था) कृष्णा के उत्तरी तट तक था। रघुवंश 5,41 में अज का इंदुमती स्वयंवर के लिए विदर्भदेश की राजधानी जाने का उल्लेख है, —'प्रस्थापयामास ससैन्यमेनमृद्धां विदर्भाधिपराजधानीम्'। विदर्भ, उत्तरी और दक्षिणी भागों में विभक्त था। उत्तरी विदर्भ की राजधानी अमरावती और दक्षिण विदर्भ की प्रतिष्ठान में थी। मालविकाग्निमित्र, अंक 5 के निम्न वर्णन से सूचित होता है कि शुंगकाल में विदर्भ विषय नामक एक स्वतंत्र राज्य था—'विदर्भविषयाद भ्रात्रा वीरसेनेन प्रेषित लेख लेखकरै वाच्यमान शृणोति'। मालविकाग्निमित्र में विदर्भ राज और विदिशा के शासक अग्निमित्र (पुष्यमित्र शुंग का पुत्र) के परस्पर वैमनस्य और युद्ध का वर्णन है। विष्णु-पुराण 4,4,1 में विदर्भ राजतनया केशिनी का उल्लेख है जो सगर की पत्नी थी, 'काश्यपदुहिता सुमति विदर्भराजतनया केशिनी च द्वे भार्ये सगरस्यास्ताम्'। मुगलसम्राट अकबर के समकालीन अबुलफजल ने आइनेअकबरी में विदर्भ का नाम वरदातट लिखा है। संभवतः वरदा नदी (=वर्धा) के निकट स्थित होने के कारण ही मुगलकाल में विदर्भ का यह नाम प्रचलित हो गया था। 'बरार' तथा 'बीदर' नामों की व्युत्पत्ति भी विदर्भ से ही मानी जाती है।

विदिशा (1) (म० प्र०)

प्राचीन भारत की प्रसिद्ध नगरी जिसका अभिज्ञान वर्तमान भीलसा या बेसनगर से किया गया है। यह नगरी वेत्रवती नदी (=बेतवा) के तट पर बसी हुई थी। विदिशा का शायद सर्वप्रथम उल्लेख वाल्मीकि

रामायण, उत्तर० 108,10 मे है जिससे सूचित होता है कि शत्रुघ्न के पुत्र शत्रुघाती को विदिशा और सुबाहु को मधुरा या मथुरा का राजा बनाया गया था—'सुबाहुमधुरा लेभे, शत्रुघाती च वैदिशम्'। कालिदास ने भी इस तथ्य का उल्लेख रघुवश 15,36 म किया है—'शत्रुघातिनि शत्रुघ्न, सुबाहौ च बहुश्रुत मधुरा विदिशे सूनवो निदधे पूर्वजोत्सुक'। अशोक के समय म विदिशा दक्षिणापथ की मुख्य नगरी थी। अपने पिता के शासनकाल मे अशोक दक्षिणापथ का शासक था और विदिशा म ही रहता था। यही के एक धनवान् श्रेष्ठी की कन्या देवी से उसने विवाह किया था। बौद्ध साहित्य से सूचित होता है कि अशोक के पुत्र और पुत्री महेद्र और सघमित्रा, देवी ही की सतान थे (दे० महावश, 13,7—'फिर धीरे धीरे महद्र (अशोक का पुत्र स्थविर महेद्र) ने विदिशागिरि नगर म पहुच कर अपनी माता देवी के दशन किए और उन्ह विदिशा गिरि विहार म उतारा'। (यहा विदिशागिरि से साची की पहाडी निर्दिष्ट जान पडती है)। अशोक ने मगध सम्राट बनने के पश्चात् विदिशा क उपनगर साची मे अपना प्रसिद्ध स्तूप बनवाया था। इसके तोरण शुगकाल म बने थे। पुष्यमित्र शुग जिस समय मगध का सम्राट था (द्वितीय शती ई० पू०) तब विदिशा मे उसका पुत्र अग्निमित्र शासक के रूप मे रहता था। कालिदास ने मालविकाग्निमित्र नाटक म विदिशा को अग्निमित्र की राजधानी माना ह —'स्वस्ति। यज्ञशरणात्सेनापति पुष्यमित्रो वैदिशस्य पुत्रमायुष्मन्तमग्निमित्र स्नेहात्परिष्वज्येदमनुदशयति'—अक 5। विदिशा उस समय समृद्धशालिनी नगरी थी तथा यहा व्यापारिक साथ (काफले) निरतर जाते जात रहते थे—'इमा तथागत भ्रातृका मया साधमपवाह्य भवत् सवथापेक्षया पथिकसाथ विदिशागामिनमनुप्रविष्ट' वही अक 5। विदिशा का दशाण की राजधानी के रूप मे उल्लेख तथा उसके निकट बहनेवाली नदी वेत्रवती का सुदर वणन कालिदास न मेघदूत (पूवमेघ 26) मे इस प्रकार किया है—'तेषा दिक्ष प्रथितविदिशालक्षणा राजधानीम् गत्वा सद्य फलमतिमहत कामुकत्वस्य लब्ध्वा, तीरोपान्तस्तनित सुभग पास्यसि स्वादुयुक्तम्, सभ्रूभग मुखमिव पयो वेत्रवत्याश्चलोर्मि'। इस वणन से इस बात का प्रमाण मिलता है कि कालिदास क समय तक (सभवत 5वी शती ई० का पूव भाग) विदिशा 'प्रथित' अथवा प्रसिद्ध नगरी थी। महाकवि बाणभट (7वी शती ई०) ने कादबरी के प्रारभ मे ही अपनी कथा क पात्र राजा शूद्रक की राजधानी विदिशा मे वेत्रवती के तट पर बताई है—'वेत्रवत्या सरिता परिगतविदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत्'। विष्णुपुराण 3,64 म भी विदिशा का नामोल्लेख है—'विदिशाख्य पुर गत्वा तदवस्थ ददश तम'। गुप्तयुग

के पश्चात काफी समय तक विदिशा का इतिहास तिमिराच्छन्न रहा। 11वी शती मे अलबेरुनी ने विदिशा या भीलसा का नाम महावलिस्तान बताया है। मध्ययुग मे, विदिशा के बहुत दिनो तक मालवा के सुलतानो के शासनाधीन रहने के प्रमाण मिलते हैं। मुगलकाल म विदिशा (भीलसा) मालवा के सूब की छोटी सी नगरी मात्र थी। धर्मांध औरगजेब ने इस प्राचीन नगरी का नाम बदल कर आलमगीरपुर रखा था जो कभी प्रचलित न हुआ। 18वी शती म विदिशा मे मराठो का राज्य स्थापित हो गया और तब से आधुनिक काल तक यह भूतपूर्व ग्वालियर रियासत की एक छोटी किंतु महत्त्वपूर्ण नगरी बनी रहा। विदिशा के अनेक प्राचीन स्मारको मे विजयामडल या बीजमडल नामक मसजिद भी है जो 11वी शती के लगभग बने चर्चिका या विजयादेवी के मन्दिर को तोडकर उसी के मसाले से बनवाई गई थी। इसका प्रमाण मसजिद के एक स्तभ पर उत्कीर्ण सस्कृत लेख से मिलता है। बेसनगर (पाली वेस्सनगर) विदिशा की प्राचीन मुख्य नगरी का ही एक भाग था और भीलसा इस नगरी के मध्ययुगीन सस्करण का नाम है।

(2) विदिशा नामक नदी का उल्लेख महाभारत, सभा० 9,18 मे है—'कालिंदी विदिशा वेणा नर्मदा वेगवाहिनी'। निश्चय रूप से यह विदिशा या वर्तमान बेसनगर के पास बहने वाली बेस नदी का ही नाम है।

विदिशागिरि

यह महावश 13, म उल्लिखित है। विदिशागिरि या तो विदिशा नगरी ही है या उसके पास की साची की पहाडी।

विदुरकुटी दे० दारानगर।

विदेघ=विदेह।

विदेह

(1) उत्तरी बिहार का प्राचीन जनपद जिसकी राजधानी मिथिला म थी। स्थूलरूप से इसकी स्थिति वर्तमान तिरहुत के क्षेत्र मे मानी जा सकती है। कोसल और विदेह की सीमा पर सदानीरा नदी बहती थी। ब्राह्मण ग्रथो म विदेहराज जनक को सम्राट कहा गया है जिसस उत्तर वैदिक काल म विदेह राज्य का महत्त्व सूचित होता है। शतपथ ब्राह्मण म विदेघ (=विदेह) के राजा माठव का उल्लेख है जो मूलरूप स सरस्वती नदी के तटवर्ती प्रदेश म रहते थे और पीछे विदेह म जाकर बस गए थे। इन्होने ही पूर्वी भारत म आर्य सभ्यता का प्रसार किया था। शाखायन श्रौत सूत्र 16,29,5 मे जलजातु-

कण्व नामक विदेह, काशी और कोसल के पुरोहित का उल्लेख है। वाल्मीकि-रामायण मे सीता के पिता मिथिलाधिप जनक को वैदेह कहा गया है— ऐवमुक्त्वा मुनिश्रेष्ठ वदहो मिथिलाधिप' बाल० 65,39। सीता इसी कारण वैदेही कहलाती थी। महाभारत मे विदेह देश पर भीम की विजय का उल्लेख है तथा जनक का यहा का राजा बताया गया है जो निश्चयपूर्वक ही विदेह-नरेशा का कुलनाम था—'शमकान् वर्मकाश्चैव व्यजयत सान्त्वपूर्वकम, वैदेहक राजान जनक जगतीपतिम्'—सभा० 30,13। भास ने स्वप्नवासवदत्ता अक 6 मे सहस्रानीक के वैदेहीपुत्र नामक पुत्र का उल्लेख किया है जिससे ऐसा जान पडता है कि उसकी माता विदेह की राजकुमारी थी। वायुपुराण 88,7-8 मे निमि को विदेह नरेश बताया गया है। विष्णुपुराण 4,13 107 मे विदेहनगरी (मिथिला) का उल्लेख है—'वषत्रयान्त च वभ्रूग्रसेन प्रभृतिभिर्यादवैन तद्रत्न कृष्णानापहृतमिति कृतावगतिभिर्विदेहनगरी गत्वा वलदेवससम्प्रत्याय्यद्वार-कामानीत'। बौद्ध काल मे सभवत बिहार के वृजि तथा लिच्छवी जनपदो कीभाति ही विदेह भी गणराज्य बन गया था। जैन तीर्थंकर महावीर की माता त्रिशला को जैन साहित्य मे विदेहदत्ता कहा गया है। इस समय वैशाली की स्थिति विदेह राज्य मे मानी जाती थी जैसा कि आचरागसूत्र (आयरग सुत्त) 2,15,17 से सूचित हाता है, यद्यपि बुद्ध और महावीर के समय मे वैशाली लिच्छवी गणराज्य की भी राजधानी थी। तथ्य यह जान पडता है कि इस काल म विदेह नाम सभवत स्थूल रूप स उत्तरी बिहार के सपूर्ण क्षेत्र के लिए प्रयुक्त हाने लगा था। यह तथ्य दिग्घनिकाय म अजातशत्रु (जो वैशाली के लिच्छवीवश की राजकुमारी छलना का पुत्र था) के वैदेहीपुत्र नाम से उल्लिखित होने म भी सिद्ध होता है। (दे० मिथिला)

(2) (स्याम या थाइलैंड) प्राचीन गधार अथवा युन्नान का एक भाग। मिथिला यहा की राजधानी थी। इस उपनिवेश का बसाने वाले भारतीयो का बिहार-स्थित विदेह से अवश्य ही सबध रहा होगा।

(3) बुद्धचरित 21,10 क अनुसार अगदा क निकट एक पवत जहा बुद्ध ने पचशिख, असुर और दवो का धम-प्रवचन सुनाया था।

विदेहनगरी=मिथिला दे० विदह, मिथिला

विद्याधरपुरम (जिला गुट्टूर, आ० प्र०)

श्री री (Rhea) ने इस स्थान पर एक प्राचीन बौद्ध चत्य की खोज की थी। यह पश्चिमी भारत के चैत्यो क विपरीत सरचनात्मक रीति स बना है।

विद्युत्

विष्णुपुराण 2,41,43 में उल्लिखित कुशद्वीप की एक नदी, 'धूतपापा' शिवा चैव पवित्रा सम्मतिस्तथा, विद्युदभा मही चान्या सर्वपापहरास्त्विमा '

विद्रुम

विष्णुपुराण 2,4,41 में वर्णित कुशद्वीप का एक वर्षपर्वत—'विद्रुमो हेमशैलश्च द्युतिमान् पुष्पवास्तथा, कुशेशयो हरिश्चैव सप्तमो मदराचल' ।

विधनोल दे० विदनूर

विनत

वाल्मीकि रामायण अयो० 71,16 के अनुसार गोमती नदी के तट पर स्थित एक नगर जहा केकय देश से अयोध्या आते समय भरत ने इस नदी को पार किया था—'एकसाले स्थाणुमती विनते गोमती नदीम, कलिंगनगरे चापि प्राप्य सालवन तदा' । यह स्थान वर्तमान लखनऊ के निकट रहा होगा ।

विनशन

महाभारत के अनुसार विनशन तीर्थ—उस स्थान पर बसा था जहा सरस्वती नदी राजस्थान के मरुस्थल में विनष्ट या विलुप्त हो गई थी—'ततो विनशन राजन जगामाथ हलायुध , शूद्राभीरान् प्रति द्वेषाद्यत्र नष्टा सरस्वती' शल्य० 37,1 । वन० 81,111 में सरस्वती का यहा अतर्हित रूप से बहती बताया गया है— ततो विनशन गच्छेन्नियतो नियताशन, गच्छत्यन्तर्हिता यत्र मेरुपृष्ठे सरस्वती,' । वन० 130,4 में विनशन को निषादराष्ट्र का द्वार कहा गया है—'एतद्विनशन नाम सरस्वत्या विशाम्पते, द्वार निषादराष्ट्रस्य यथा दोषात् सरस्वती प्रविष्टा पृथिवी वीर मा निषादा हि मा विदु । सस्कृत के कवि राजशेखर ने विनशन से लेकर प्रयाग तक के प्रदेश को अतर्वेदि कहा है । विनशन विदुसर नामक तीर्थ हो सकता है जो सिद्धराज (जिला बडौदा, गुजरात) में स्थित है ।

विनाशिनी दे० बनास ।

विनीता

जैन ग्रथ आवश्यक सूत्र के अनुसार अयोध्या का एक नाम ।

विपापा

'शतद्रुच चद्रभागा च यमुना च महानदीम् दृषद्वती विपाशा च विपापा स्थूलवालुकाम्'—महा० भीष्म० 9,15 । इस नदी का अभिज्ञान सदिग्ध है किंतु उल्लेख से यह उत्तरभारत (सभवत पजाब) की कोई नदी जान पडती है ।

विपाश=विपाशा

(1) बियास नदी (पजाब) का वैदिक नाम । इसका उल्लेख ऋग्वेद मे

केवल एक बार 3,33,3 मे है—'अच्छासिंधु मातृतमामयास विपाशमुर्वी सुभगा मगामवत्समिवमातरासंरिहाणे समान योनिमनुसचरती'। बृहद्देवता 1,114 मे शुतुद्री या सतलज और विपाश का एक साथ उल्लेख है। वाल्मीकि रामायण अयो० 68,19 मे अयोध्या के दूतो की केकयदेश की यात्रा के प्रसग मे विपाशा (वैदिक नाम विपाश) को पार करने का उल्लेख है, 'विष्णो पद प्रेक्षमाणा विपाशा चापि शाल्मलीम्, नदीर्वापीतटाकानि पल्वलानि सरासि च'। महाभारत, वन० 130,8 मे भी विपाशा के तट पर विष्णुपदतीर्थ का वर्णन है —'एतद विष्णुपद नाम दृश्यते तीर्थमुत्तमम्, एषा रम्या विपाशा च नदी परम पावनी'। इसके आगे (130,9) विपाशा के नामकरण का कारण पौराणिक कथा के अनुसार इस प्रकार वर्णित है—'अत्र वै पुत्रशोकेन वसिष्ठो भगवानृषि, बदध्वात्मान निपतितो विपाश पुनरुत्थित' अर्थात वसिष्ठ पुत्रशोक से पीडित हो अपने शरीर को पाश से बाधकर इस नदी मे कूद पडे थे किंतु विपाश या पाशमुक्त होकर जल से बाहर निकल आए। महाभारत अनुशासन 3,12,13 म भी इसी कथा की आवृत्ति की गई है—'तथैवास्यभयाद बदध्वा वसिष्ठ सलिले पुरा, आत्मान मज्जयञ्श्रीमान विपाश पुनरुत्थित। तदाप्रभृति पुण्या ही विपाशाभूत् महानदी, विख्याता कर्मणातेन वसिष्ठस्य महात्मन'। दि मिहरान ऑव सिंध एड इट्ज़ ट्रिब्यूटेरीज़ के लेखक रेवर्टी का मत है कि बियास का प्राचीन मार्ग 1790 ई० मे बदल कर पूर्व की ओर हट गया था और सतलज का पश्चिम की ओर, और ये दोनो नदिया सयुक्त रूप से बहने लगी थी। रेवर्टी का विचार है कि प्राचीन काल मे सतलज बियास म नही मिलती थी। किंतु वाल्मीकि रामायण अयो० 71,2 म वर्णित है कि शतद्रु या सतलज पश्चिमी की ओर बहने वाली नदी थी ('प्रत्यक स्रोतस्तरगिणी,') (दे० शतद्रु)। अत रेवर्टी का मत सदिग्ध जान पडता है। बियास को ग्रीक लेखको ने हाइफेसिस (Hyphasis) कहा है।

(2) विष्णुपुराण 2,4,11 के अनुसार प्लक्षद्वीप की एक नदी 'अनुतप्ता शिखी चव विपाशात्रिदिवा क्लमा अमृता सुकृता चैव सप्तेतास्तत्र निम्नगा'।

विपुल=विपुलगिरि=विपुलाचल

(1) राजगृह (=राजगीर, बिहार) के सातपर्वतो म परिगणित है (दे० राजगृह 1)। इसका महाभारत, सभा० 2,1 दाक्षिणात्य पाठ म उल्लेख है — पाडरे विपुले चैव तथा वाराहकेऽपि च चत्यक च गिरिश्रेष्ठे मातगच शिलाच्चय'। पाली साहित्य मे इसे वेपुल्ल कहा गया है। विपुलगिरि या विपुलाचल जैन धर्म के अतिम शास्ता भगवान् महावीर के प्रथम प्रवचन की स्थली होने

के कारण भी प्रसिद्ध है। उन्होंने इस स्थान से बारह वर्ष की मौन तपस्या के उपरांत श्रावण कृष्ण की प्रतिपदा की पुण्य वेला में सूर्योदय के समय अपनी सर्वप्रथम 'देशना' की थी जिसमें उन्होंने कहा था—'सव्वे विजीवा इच्छंति, जीवउण मरिज्जउ, तम्हा पाणिवध समणा परिवज्जयंतिण–अर्थात् सभी प्राणी जीना चाहते हैं मरना कोई नहीं चाहता, इसलिए प्राणिवध घोर पाप है। जो श्रमण हैं, वे इसका परित्याग करते हैं। विपुलाचल का महत्त्व जैनधर्म में वही है जो सारनाथ का बौद्धधर्म में।

(2) पुराणों के अनुसार इलावृत के चार पर्वतों (विपुल, सुपार्श्व, मंदर, गंधमादन) में से पश्चिम की ओर का पर्वत–(दे० विष्णु पुराण 2,2,17—'विपुलः पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तरे स्मृतः।)

विमोचिनी

विष्णुपुराण 2,4 28 में वर्णित शाल्मलद्वीप की एक नदी—'योनिस्तोया वितृष्णा च चन्द्रा शुक्ला विमोचिनी, निवृत्ति सप्तमी तासां स्मृतास्ताः पापशांतिदा'।

विरजाक्षेत्र दे० यज्ञपुर।

विराटनगर दे० वैराट (1), (2) तथा उपप्लव्य

विराधकुंड (जिला बांदा, उ० प्र०)

इटारसी–इलाहाबाद रेलमार्ग पर स्थित टिकरिया स्टेशन से लगभग 2 मील दूर घने वन के बीच यह विस्तीर्ण खाई है जिसे किंवदंती में वह स्थान कहा जाता है जहां भगवान राम ने वन-यात्रा के समय विराध नामक राक्षस का वध किया था। यह राक्षस चित्रकूट के आगे दंडकवन के मार्ग में एक घने जंगल में रहता था—'निष्कूजमानशकुनिझिल्लिकागणनादितम, लक्ष्मणानुचरो रामोवनमध्य ददर्शह, सीतया सह काकुत्स्थस्तस्मिन घोरमृगायुते, ददर्श गिरिशृंगाभं पुरुषादं महास्वनम्। अधर्मचारिणौ पापौ को युवां मुनिदूषकौ, अहं वनमिदं दुर्गं विराधो नाम राक्षसः चरामि सायुधो नित्यमृषिमांसानि भक्षयन्। इयं नारी वरारोहा मम भार्या भविष्यति' वाल्मीकि० अरण्य 2,3 4 12 13। विराधकुंड से चित्रकूट अधिक दूर नहीं है।

विराधवन

विराध राक्षस के रहने का स्थान। यह वन चित्रकूट में स्थित था। (दे० विराधकुंड)

विरूपा

कटक (उडीसा) के निकट बहने वाली एक नदी। (दे० कटक)

विलासना दे० विलसड

विलासपुर (1) (हिमाचल प्रदेश)

जिला विलासपुर का मुख्य नगर, जिसकी नींव राजा दीपचद्र ने 1653 ई० मे डाली थी। उन्होने महाभारतकार महर्षि व्यास की स्मृति मे इस नगर को बसाया था और इसका मूल नाम व्यासपुर ही रखा था जो विगड कर विलासपुर बन गया। किंवदती है कि वेदव्यास ने इस स्थान के पास एक गुफा मे तपस्या की थी। सतलज के वामतट पर एक पहाडी के नीचे व्यासगुफा अभी तक स्थित है। मार्कंडेय का आश्रम भी यहा से चार मील दूर है। कहते हैं कि दोनो ऋषि एक सुरग द्वारा परस्पर मिलने आते जाते थे। विलासपुर के पास कई मदिर हैं—रवानम, रवेनसर, रघुनाथ मुरली मनोहर और काकरी। जनश्रुति है कि इन्हे पाडवो ने बनवाया था। पहाडी की चोटी पर नैनादेवी का मदिर है जिसे राजा वीरचद (697 780 ई०) ने बनवाया था। विलासपुर रोपड से 50 मील और शिमला से 37 मील दूर है। यूरोपीय यात्री विग्न ने 1838 ई० मे इस नगर के सौंदर्य तथा वैभव के बारे मे अपने सस्मरण लिखे थे। प्राचीन विलासपुर भाकरा नगल बाध के कारण अब जलमग्न हो चुका है।

(2) (म० प्र०) विलासपुर प्राचीनकाल मे मछियारो की छोटी सी बस्ती मात्र था। किंवदती के अनुसार इसे एक मछियारे की स्त्री विलास के नाम पर इस विलासपुर कहा जाने लगा था। रायपुर विलासपुर के जिले प्राचीन काल मे दक्षिण कोसल मे सम्मिलित थे।

विशल्या

महाभारत, सभा०, 9,20 के अनुसार एक नदी जिसका उल्लेख किंपुना तथा वैतरणी के साथ किया गया है—'किंपुना च विशल्या च तथा वैतरणी नदी'। वैतरणी उडीसा की नदी है। विशल्या इसी के समीप बहने वाली कोई नदी जान पडती है।

विशाखयूप

बदरीनाथ के पास हिमालय के क्रोड मे स्थित वन—'तस्मिन् गिरौ प्रस्रवणोपपन्नहिमात्तरीयारुणपाडुसानौ, विशाखयूप समुपेत्य चक्रुस्तदानिवास पुरुष प्रवीरा'—महा० वन० 177 16। वन० 177,15 मे यामुनपर्वत या यमुनोत्री का उल्लेख है।

विशाखा दे० विनोक

विशाखापट्टन=विजिगापट्टम् (आ० प्र०)

पौराणिक किंवदंती के अनुसार यह शिव के पुत्र कार्तिकेय का नगर है। विशाख कार्तिकेय का ही एक नाम है-(दे० अमरकोश-1,40—'बाहुलेयस्तार कश्चिद्विशाख शिखिवाहन षाण्मातुर शक्तिधर, कुमार क्रौंचदारण'। यह नगर अब एक विशाल समुद्रपत्तन है।

विशाल (लका)

महावश 15,126 मे वर्णित है। इसको मडद्वीप या लका की प्राचीन राज धानी कहा है। यह नगर महामेघवन से पश्चिम की ओर स्थित था।

विशालगढ (महाराष्ट्र)

सत्रहवी शती के मध्य मे छत्रपति शिवाजी ने विशालगढ के किले का बीजा पुर के सुल्तान से छीन कर अपने अधिकार मे ले लिया था।

विशाला

(1)=उज्जयिनी। दे० मेघदूत, पूर्वमेघ, 32—'प्राप्यावन्तीमुदयनकथा-कोविदग्रामवृद्धान् पूर्वोद्दिष्टामनुसरपुरी श्रीविशाला विशालाम्'।

(2) वाल्मीकि रामायण, बाल० 45,10 म उल्लिखित एक नगरी जो सभवत बौद्ध साहित्य मे प्रसिद्ध वैशाली (=बसाढ, जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) का ही रामायणकालीन नाम है। इस नगरी को राम-लक्ष्मण ने विश्वा-मित्र के साथ अयोध्या से जनकपुर जाते समय गगा को पार करने के पश्चात देखा था—'उत्तर तीरमासाद्य सपूज्यर्षिगण तत, गगाकूले निविष्टास्ते विशाला ददृशु पुरीम्'। विशाला नगरी के राजवश की कथा बाल० 45 मे है जिससे ज्ञात होता है कि इस नगरी को बसाने वाला राजा विशाल था जो अलबुषा नामक अप्सरा से उत्पन्न इक्ष्वाकु का पुत्र था। रामायण की कथा के समय यहा राजा सुमति का राज्य था—'अलम्बुषायामुत्पन्नो विशाल इति विश्रुत तेन चासीदिह स्थाने विशालेति पुरीकृता' 'तस्य पुत्रो महातेजा सप्रत्येप पुरीमिमाम्, आवसत्परमप्रख्य सुमतिर्नामदुर्जय' बाल० 47,17। विशाला पहुच कर राम-लक्ष्मण ने एक रात्रि के लिए सुमति (विशाल के पुत्र) का अतिथ्य ग्रहण किया था। अगले दिन विशाला से चलकर थोडी दूर पर स्थित मिथिला नगरी या जनकपुर पहुच कर राजा जनक की राजधानी म प्रवेश किया था—'तत परमसत्कार सुमते, प्राप्य राघवौ उष्य तत्र निशामेका जग्मतुर्मिथिला तत'। विष्णुपुराण 4,1,49 म भी विशाला नगरी का राजा विशाल द्वारा निर्मित बताया गया है और इसे अलम्बुषा अप्सरा का ही पुत्र माना है किंतु इसके पिता को यहा तृणबिंदु कहा गया है— ततश्चालबुषानाम

वराप्सरास्तृणबिंदु भेजे तस्यामभ्यस्य विशालो जज्ञे य पुरी विशाला निममे'। (दे० वैशाली)

(3)=बदरीनाथ

विशालिका (राजस्थान)

पुष्कर के निकट बहने वाली एक नदी। कहा जाता है कि विशालिका पुष्कर क्षेत्र की मुख्य नदी सरस्वती (जो महाभारतकाल ही म लुप्त हो गई थी) का अवशिष्ट अंश है। (दे० पुष्कर)

विशोक

चीनी यात्री युवानच्वांग (7वीं शती ई०) ने विशोक या विशाखा नामक नगर का वर्णन करते हुए लिखा है कि इस स्थान मे 20 बौद्ध विहार तथा 50 देवमंदिर थे। इस नगर की स्थिति विंसेंट स्मिथ ने ज़िला बाराबंकी (उ० प्र०) म मानी है। *युवानच्वांग ने इस नगर को साकेत (अयोध्या) के निकट बताया* है। चौथी शती ई० मे भारत जानेवाला चीनी यात्री फाह्यान विशाखा से आठ योजन चलकर श्रावस्ती पहुचा था और इस आधार पर कुछ विद्वान विशोक को अयोध्या या साकेत का ही कोई उपनगर मानते हैं।

विस्फीका (ज़िला दरभगा, बिहार)

मधुबनी के निकट यह ग्राम मैथिलकोकिल विद्यापति के निवासस्थान के रूप म विख्यात है। कहा जाता है कि 1400 ई० के लगभग महाराज शिवसिंह ने यह ग्राम विद्यापति को दान मे दे दिया था।

विश्वा

श्रीमद्भागवत मे उल्लिखित एक नदी—'वितस्ता असिक्नी विश्वेति महानद्य' 5,19,18। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है किंतु प्रसंगानुसार यह पंजाब की कोई नदी जान पडती है।

विश्वामित्र आश्रम

किंवदंती है कि महर्षि विश्वामित्र का आश्रम बक्सर (बिहार) म स्थित था। रामायण की कथा के अनुसार इसी आश्रम मे विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को लेकर आए थे जहा उन्होंने ताडका, सुबाहु आदि राक्षसो को मारा था। इस स्थान का गंगा सरयू संगम के निकट बताया गया है—'तौ प्रयान्तौ महावीर्यौ दिव्यां त्रिपथगां नदीम ददृशाते ततस्तत्र सरय्वा संगमे शुभे तत्रा श्रम पुण्यमृषीणां भावितात्मनाम्' बाल० 23,5 6-7। संगम के निकट गंगा को पार करने के पश्चात उन्होंने वह भयानक वन देखा था जहा ताडका का निवास था। वह वन मलद और कारुष जनपदों के निकट था। विश्वामित्र के आश्रम

को सिद्धाश्रम भी कहा जाता था ।

विश्वामित्री

यह नदी चापानेर (गुजरात) के निकट एक पहाडी से निकलती है और बडौदा के समीप चार अन्य नदियो के सगम स्थान पर उनसे मिल जाती है । (दे० चापानेर)

विपप्रस्थ=वृपप्रस्थ ।

विष्णुदेवी (जम्मू, कश्मीर)

जम्मू से उत्तर की ओर 39 मील दूर त्रिकूट पवत पर समुद्र तल से 6000 फुट की ऊचाई पर स्थित है । विष्णु या वैष्णव देवी का उल्लेख मार्कंडेयपुराण के अतगत दुर्गासप्तशती म है । इस स्थान पर देवी की मूर्तिया एक सकीण और अधेरी गुफा के अतिम छोर पर हे । मूर्तिया गायत्री, सरस्वती और महा लक्ष्मी की हैं जो विष्णु देवी के विभिन्न रूप माने जात हैं ।

विष्णुपद

(1) विपाशा (=वियास) के तट (पजाब म) पर स्थित एक प्राचीन तीर्थ जिसका उल्लेख रामायण तथा महाभारत मे है—'विष्णो पद प्रेक्षमाणा विपाशा चापि शाल्मलीम, नदी वापीतटाकानि पल्वलानि सरासि च'—वाल्मीकि रामा० अयो० 68,19 । महाभारत वन० 130,8 म भी इसी स्थान का वर्णन है—'एतद् विष्णुपद नाम दृश्यते तीर्थमुत्तमम, एपा रम्या विपाशा च नदी परमपावनी' ।

(2) गया (बिहार) की पहाडी । महाभारत, शाति० 29,35 में गय के राजा बृहद्रथ द्वारा विष्णुपद-पवत पर यज्ञ करवाए जाने का उल्लेख है—'अगस्य यजमानस्य तदा विष्णुपदे गिरौ' ।

(3) महरौली (दिल्ली) के लौह स्तभ पर उत्कीर्ण सस्कृत अभिलेख मे वर्णित स्थान विशेष जहा मूलत यह स्तभ प्रतिष्ठित था—'प्राशुविष्णुपदे गिरौ भगवतो विष्णोर्ध्वज स्थापित' । कहा जाता है कि यह विष्णुपद, विपाशा नदी के तट पर स्थित विष्णुपद ही है । दिल्ली के चौहान नरेश अनगपाल ने इस स्तभ को विष्णुपद स लाकर दिल्ली मे स्थापित किया था (दे० जयचद्र विद्यालकार, उत्कीर्ण लेखाजलि, पृ० 15, कुछ विद्वानो के मत मे इस स्तभ का मूल स्थान—विष्णुपदगिरि [illegible] मथुरा के समीप [illegible] पर्वत है । ये दोनो ही अभिज्ञान अभी तक प्रमाणित नहीं हो सके है । (दे० महरौली, दिल्ली)

विष्णुपुर (बिहार)

यहा स्थित एक [illegible]

कलकत्ता विश्वविद्यालय के आशुतोष संग्रहालय में सुरक्षित है। श्री डी० पी० घोष के मत में यह मूर्ति प्रायः 2000 वर्ष प्राचीन है और मौर्यकालीन हो सकती है। तड़ाग में जलमग्न रहने के कारण, मूर्ति के काष्ठ में अनेक सिकुड़नें पड़ गई हैं।

विष्णुमती (नेपाल)

काठमडू के निकट बहने वाली नदी जिसके तट पर पशुपतिनाथ का प्रसिद्ध मंदिर स्थित है। काठमडू विष्णुमती और बागमती के बीच में बसा हुआ है।

विहला

रैवतक (गिरनार) से निकलने वाली नदी।

विहारगाव

कार्ली का एक नाम। यह नाम यहां स्थित बौद्ध विहार तथा चैत्य के कारण ही हुआ था। (दे० कार्ली)

विहारबीज (लंका)

महावंश 17,59 60 में उल्लिखित एक ग्राम। यहां के निवासी पांच सौ युवकों ने एक साथ ही प्रव्रज्या ग्रहण की थी।

वीतभय

जैनग्रंथ 'प्रवचन सारद्धार' में सौवीर देश की राजधानी के रूप में वर्णित है। एक अन्य ग्रंथ—सूत्रप्रज्ञापणा में इसे सिंध देश में स्थित बताया गया है।

वीरक

'कारस्करान्माहिषकान् कुरंडान् केरलांस्तथा, कर्कोटकान वीरकांश्च दुर्धर्मांश्च विवर्जयेत'—महा० कर्ण० 44 43। इस उल्लेख में वर्णित जनपदों के निवासियों को महाभारत के समय में दूषित समझा जाता था क्योंकि संभवतः ये लोग अनार्यजातियों से संबंधित थे। प्रसंगानुसार वीरक दक्षिणभारत का कोई जनपद जान पड़ता है।

वीरनगर

'देविकायास्तटे वीरनगरं नाम वै पुरम्, समृद्धिमतिरम्यं च पुलस्त्येन निवेशितम्' विष्णु० 2 15,6। इस उद्धरण से सूचित होता है कि वीरनगर देविका नदी के तट पर स्थित था और इसकी स्थापना पुलस्त्य ऋषि ने की थी। प्राचीन साहित्य में देविका नाम की कई नदियों का उल्लेख है। एक गंडकी की सहायक नदी देविका नेपाल में थी, दूसरी सौवीर में, तीसरी मुलतान के निकट। वीरनगर की स्थिति इन्हीं नदियों में किसी के तट पर हो सकती है। संभवतः यह नेपाल का वीरनगर है (?)।

वीरपुर (1) (भूतपूर्व रियासत ओड़छा, म० प्र०)

ओड़छा नरेश वीरसिंहदेव ने जो अकबर और जहांगीर के समकालीन थे इस नगर को अपने नाम पर बसाया था। उन्होंने वीरसागर नामक तालाब भी यहां बनवाया था।

(2)=राजपुर (4)

वीरमत्स्य

'सरस्वती च गंगा च युग्मेन प्रतिपद्य च, उत्तरान् वीरमत्स्यानां भारुड प्राविशद्वनम्' वाल्मीकि रामा०, अयो० 71,5। वीरमत्स्य जनपद, भरत को केकय देश से अयोध्या आते समय सरस्वती और गंगानदियों के समीप मिला था। यह गंगा नदी संभवत: सरस्वती की कोई सहायक नदी हो सकती है क्योंकि भागीरथी गंगा को भरत ने यमुना पार करने के पश्चात् पार किया था जो भूगोल की दृष्टि से ठीक भी है। भरत ने यमुना को वीरमत्स्य पहुंचने के पश्चात पार किया था—'यमुनां प्राप्य संतीर्णो बलमाश्वासयत्तदा' (अयो० 71,6)। इस प्रकार वीरमत्स्य की स्थिति यमुना के पश्चिम की ओर पूर्वी पंजाब में माननी चाहिए। संभवत: वीरमत्स्य में वर्तमान जगाधरी का ज़िला या इसका कोई भाग सम्मिलित रहा होगा।

वीरावल (काठियावाड़, गुजरात)

यह छोटा सा बंदरगाह वही स्थान है जहां इतिहास-प्रसिद्ध सोमनाथ का मंदिर स्थित था। इस को 1024 ई० में महमूद गजनी ने तोड़ा था। प्राचीन मंदिर के खंडहर समुद्रतट पर एक ऊँचे टीले पर स्थित हैं। इस स्थान के निकट युद्ध में आहत गज़नी के सैनिकों की सैंकड़ों कब्रें दिखाई पड़ती हैं जिससे जान पड़ता है कि गजनी की सेना को काफी क्षति उठानी पड़ी थी और स्थानीय राजपूतों ने बड़ी वीरता से उसका सामना किया था। सोमनाथ का अपेक्षाकृत नया मंदिर जो पुराने के समीप है अहल्याबाई ने बनवाया था। वीरावल के पास ही प्रभास क्षेत्र है जिसे भगवान् कृष्ण का देहोत्सर्ग स्थल माना जाता है। वीरावल या वेरावल का प्राचीन नाम वेलाकूल कहा जाता है। (वेलाकूल का अर्थ समुद्रतट है)

वुलर

कश्मीर की झील। कहा जाता है कि वुलर शब्द शायद उल्लोल (ऊंची चंचल लहरियों वाली) का अपभ्रंश है। इस झील का प्राचीन नाम महापद्मसर था।

वृंद=वृंदारक

महाभारत सभा० 32,11 के एक पाठ के अनुसार वृंदारक पर नकुल ने अपनी पश्चिमी दिशा की दिग्विजय के प्रसग मे अधिकार किया था। श्री वा० श० अग्रवाल के मत मे वृंदारक या वृंद वतमान अटक (प० पाकि०) के निकट बुरिंदुबुनेर नामक स्थान है। इसके आगे द्वारपाल या (सभवत) खबर का उल्लेख है।

वृंदावन (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा से 6 मील, यमुना तट पर स्थित कृष्ण की लीलास्थली। हरिवंश-पुराण, श्रीमदभागवत, विष्णुपुराण आदि मे वृंदावन की महिमा वर्णित है। कालिदास ने इसका उल्लेख रघुवंश म इंदुमती स्वयवर के प्रसग म शूरसेनाधिप सुषेण का परिचय देते हुए किया है—'सभाव्य भर्तारममुयुवानमृदुप्रवालोत्तरपुष्पशय्ये, वृंदावने चैत्ररथादनूने निर्विश्यता सुदरि यौवनश्री' रघु० 6 50 इससे कालिदास के समय मे यहा मनोहारी उद्यानो की स्थिति का पता चलता है। श्रीमद्भागवत की कथा के अनुसार गोकुल से कस के अत्याचार से बचने के लिए नदजी कुटुंबियो और सजातीयो के साथ वृंदावन चले आये थे—'वनं वृंदावन नाम पशव्य नवकाननं गोपगोपीगवा सेव्य पुण्याद्रितृणवीरुधम। तत्तत्राद्यैव यास्याम शकटानयुङ्क्तमाचिरम्, गोधना यग्रतो या तु भवता यदि रोचते। वृंदावन सम्प्रविश्य सर्वकालसुखावहम्, तत्र चक्रु व्रजावास शकटैरर्धचन्द्रवत्। वृंदावन गोवर्धन यमुनापुलिनानि च, वीक्ष्यासीदुत्तमाप्रीती राममाधवयोर्नृप' श्रीमदभागवत, 10,11,28 29 35 36। विष्णुपुराण 5,6,28 मे इसी प्रसग का उल्लेख इस प्रकार है—'वृंदावन भगवता कृष्णेनाक्लिष्टकर्मणा शुभेण मनसाध्यात गवा सिद्धिमभीप्सता।' अन्यत्र वृंदावन म कृष्ण की लीलाओ का वर्णन भी है—यथा एकदा तु विना राम कृष्णो वृंदावन ययु विष्णु० 5,7,1, दे० विष्णु० 5,13,24 आदि। कहते है कि वतमान वृंदावन असली या प्राचीन वृंदावन नही है। श्रीमदभागवत 10 36 के वर्णन तथा अन्य उल्लेखो से जान पडता है कि प्राचीन वृंदावन गोवर्धन के निकट था। गोवर्धन धारण की प्रसिद्ध कथा की स्थली वृंदावन ही थी। अत वृंदावन गोवर्धन पर्वत के पास ही स्थित रहा होगा न कि वतमान वृंदावन के स्थान पर। महाप्रभु वल्लभाचार्य के मत मे मूल वृंदावन पारासौली (=परम रासस्थली) के निकट था। महाकवि सूरदास इसी ग्राम म दीर्घकाल तक रहे थे। कहा जाता है कि प्राचीन वृंदावन मुसलमानो के शासन काल म उनके निरतर आक्रमणो के कारण नष्ट हो गया था और कृष्णलीला की स्थली का कोई अभिज्ञान शेष नही रहा था। 15वीं

शती म महाप्रभु चैतन्यदेव ने अपनी व्रजयात्रा के समय व दावन तथा कृष्णकथा से सबधित अन्य स्थाना को अपने अतर्ज्ञान द्वारा पहचाना था । वतमान व दावन म प्राचीनतम मदिर राजा मानसिह का बनवाया हुआ है। यह मुगल सम्राट अकबर के शासनकाल म बना था। मूलत यह मदिर सात मजिलो का था। उपरले दो खड औरगजेब ने तुडवा दिए थे। कहा जाता है कि इस मदिर के सर्वोच्च शिखर पर जलने वाले दीप मथुरा से दिखाई पडते थे। यहा का विशालतम मदिर रगजी के नाम से प्रसिद्ध है । यह दाक्षिणात्य शैली मे बना हुआ है। इसके गोपुर बडे विशाल एव भव्य हैं। यह मदिर दक्षिण भारत के श्रीरगम के मदिर की अनुकृति जान पडता है । व दावन के अन्य प्रसिद्ध स्थान हैं–निधिवन (हरिदास का निवास कुज), कालियदह, सेवाकुज आदि ।

वृक

पाणिनि द्वारा उल्लिखित गणराज्य जिसकी स्थिति पजाब या उसके निकटवर्ती क्षेत्र म थी। सभव है यह वृकस्थल हो।

वृकप्रस्थ

बागपत (जिला मेरठ उ० प्र०) का प्राचीन नाम । (दे० बागपत, वृकस्थल)। कुछ लोगो का कहना है कि बागपत व्याघ्रप्रस्थ का अपभ्र श है ।

वृकस्थल=वृकप्रस्थ

यह स्थान उन पाच ग्रामो म था जिनकी माग पाडवो ने युद्ध के निवारणार्थ, दुर्योधन से की थी—'अविस्थलवकस्थल माकन्दी वारणावतम्, अवसान भवेत्वत्र किंचिदक तु पचमम'–महा० उद्योग० 31,19 । वकस्थल या वृकप्रस्थ का अभिज्ञान किंवदती के अनुसार बागपत (जिला मेरठ, उ० प्र०) से किया जाता है। (दे० बागपत)

वृजि=वृजिक (वृज्जि)

उत्तरविहार का बौद्धकालीन गणराज्य जिसे बौद्ध साहित्य म वृज्जि कहा गया है। वास्तव मे यह गणराज्य एक राज्य सघ का अग था जिसके आठ अन्य सदस्य (अट्ठकुल) थे जिनम विदेह, लिच्छवि तथा ज्ञातृकगण प्रसिद्ध थे। वजियो का उल्लेख पाणिनि 4,2,131 म है। कौटिल्य अथशास्त्र म वृजिका को लिच्छविको से भि न बताया गया है और वृजिया के सघ का भी उल्लेख किया गया है। युवानच्वाग न भी वजिदश का वैशाली से अलग बताया है (दे० वाटस 2 81) किंतु फिर भी वजियो का वशाली से निकट सबध था। बुद्ध के जीवनकाल म मगध सम्राट अजातशत्रु और वज्जिगणराज्य मे बहुत दिना तक सघष चलता रहा। महावग्ग के अनुसार अजातशत्रु के दो मत्रियो

वृ व=वृदारक

महाभारत सभा० 32,11 के एक पाठ के अनुसार वृदारक पर नकुल ने अपनी पश्चिमी दिशा की दिग्विजय के प्रसग म अधिकार किया था। श्री वा० दा० अग्रवाल के मत मे वृदारक या वृद वतमान अटक (प० पाकि०) के निकट है। इसके आग द्वारपाल या (सभवत) खबर का वुरिदुवुनेर नामक स्थान है। उल्लेख है।

वृदावन (जिला मथुरा, उ० प्र०)

मथुरा से 6 मील, यमुना तट पर स्थित कृष्ण की लीलास्थली। हरिवश पुराण, श्रीमदभागवत, विष्णुपुराण आदि मे वृदावन की महिमा वर्णित है। कालिदास न इसका उल्लेख रघुवश म इदुमती स्वयवर क प्रसग म शूरसनाधिप सुषेण का परिचय देते हुए किया है—'सभाव्य भर्तारममुयुवानमृदुप्रवालोत्तरपुष्पशय्य, वृदावने चैत्ररथादनून निविश्यता सुदरि यौवनश्री' रघु० 6,50 इससे कालिदास के समय मे यहा मनोहारी उद्यानो की स्थिति का पता चलता है। श्रीमद्भागवत की कथा के अनुसार गोकुल स कस के अत्याचार से बचने के लिए नदजी कुटुबियो और सजातीयो के साथ वृदावन चले आय थ—'वन वृदावन नाम पशव्य नवकानन गोपगोपीगवा सेव्य पुण्याद्रितृणवीरुधम। तत्तत्राद्यव यास्याम शकटानयुडक्तमाचिरम, गोधना यग्रता या तु भवता यदि रोचत। वृदावन सम्प्रविष्य सवकालसुखावहम्, तत्र चक्रु व्रजावास शकटैरधचद्रवत। वृदावन गोवधन यमुनापुलिनानि च, वीक्ष्यासीदुत्तमाप्रीती राममाधवयोन प श्रीमद्भागवत, 10,11,28 29 35 36। विष्णुपुराण 5,6 28 मे इसी प्रसग का उल्लेख इस प्रकार है—'वृदावन भगवता कृष्णेनाक्लिष्टकमणा शुभेन मनसाध्यात गवा सिद्धिमभीप्सता।' अ यत्र वृदावन म कृष्ण की लीलाओ का वणन भी है—'यथा एकदा तु विना राम कृष्णो व दावन ययु' विष्णु० 5,7,1, दे० विष्णु० 5,13,24 आदि। कहते ह कि वतमान वृदावन असली या प्राचीन वृदावन नही है। श्रीमदभागवत 10,36 क वणन तथा अन्य उल्लेखो से जान पडता है कि प्राचीन वृदावन गोवधन के निकट था। गोवधन धारण की प्रसिद्ध कथा की स्थली वृदावन ही थी। अत वृदावन गोवधन पवत के पास ही स्थित रहा होगा न कि वतमान वृदावन के स्थान पर। महाप्रभु वल्लभाचाय के मत मे मूल वृदावन पारासोली (=परम रासस्थली) के निकट था। महाकवि सूरदास इसी ग्राम म दीघकाल तक रहे थे। कहा जाता है कि प्राचीन वृदावन मुसलमानो के शासन काल म उनक निरतर आक्रमणा क कारण नष्ट हो गया था और कृष्णलीला की स्थली का कोई अभिज्ञान शेष नही रहा था। 15वीं

शती में महाप्रभु चैतन्यदेव ने अपनी व्रजयात्रा के समय वृंदावन तथा कृष्णकथा से संबंधित अन्य स्थानों को अपने अंतर्ज्ञान द्वारा पहचाना था। वर्तमान वृंदावन में प्राचीनतम मंदिर राजा मानसिंह का बनवाया हुआ है। यह मुगल सम्राट अकबर के शासनकाल में बना था। मूलतः यह मंदिर सात मंजिलों का था। ऊपरले दो खंड औरंगजेब ने तुड़वा दिए थे। कहा जाता है कि इस मंदिर के सर्वोच्च शिखर पर जलने वाले दीप मथुरा से दिखाई पड़ते थे। यहां का विशालतम मंदिर रंगजी के नाम से प्रसिद्ध है। यह दाक्षिणात्य शैली में बना हुआ है। इसके गोपुर बड़े विशाल एवं भव्य हैं। यह मंदिर दक्षिण भारत के श्रीरंगम् के मंदिर की अनुकृति जान पड़ता है। वृंदावन के अन्य प्रसिद्ध स्थान हैं–निधिवन (हरिदास का निवास कुंज), कालियदह, सेवाकुंज आदि।

वृक

पाणिनि द्वारा उल्लिखित गणराज्य जिसकी स्थिति पंजाब या उसके निकटवर्ती क्षेत्र में थी। संभव है यह वृकस्थल हो।

वृकप्रस्थ

बागपत (जिला मेरठ उ० प्र०) का प्राचीन नाम। (दे० बागपत, वृकस्थल)। कुछ लोगों का कहना है कि बागपत व्याघ्रप्रस्थ का अपभ्रंश है।

वृकस्थल=वृकप्रस्थ

यह स्थान उन पांच ग्रामों में था जिनकी मांग पांडवों ने युद्ध के निवारणार्थ, दुर्योधन से की थी—'अविस्थलवृकस्थल माकन्दी वारणावतम्, अवसान भवेत्वत्र किंचिदेक तु पंचमम्'–महा० उद्योग० 31,19। वृकस्थल या वृकप्रस्थ का अभिज्ञान किंवदंती के अनुसार बागपत (जिला मेरठ, उ० प्र०) से किया जाता है। (दे० बागपत)

वृजि=वृजिक (वृज्जि)

उत्तरबिहार का बौद्धकालीन गणराज्य जिसे बौद्ध साहित्य में वृज्जि कहा गया है। वास्तव में यह गणराज्य एक राज्य संघ का अंग था जिसके आठ अन्य सदस्य (अट्ठकुल) थे जिनमें विदेह, लिच्छवि तथा ज्ञातृकगण प्रसिद्ध थे। वृजियों का उल्लेख पाणिनि 4,2,131 में है। कौटिल्य अर्थशास्त्र में वृजिकों को लिच्छविकों से भिन्न बताया गया है और वृजियों के संघ का भी उल्लेख किया गया है। युवानच्वांग ने भी वृजिदेश को वैशाली से अलग बताया है (दे० वाटर्स 2 81) किंतु फिर भी वृजियों का वैशाली से निकट संबंध था। बुद्ध के जीवनकाल में मगध सम्राट् अजातशत्रु और वृज्जिगणराज्य में बहुत दिनों तक संघर्ष चलता रहा। महावग्ग के अनुसार अजातशत्रु के दो मंत्रियों

—सुनिध और वषकार (वस्सकार) ने पाटलिग्राम (पाटलिपुत्र) म एक किला वज्जियो के आकमणो को रोकने के लिए बनवाया था। महापरिनिब्बान सुत्त न मे भी अजातशत्रु और वज्जियो के विरोध का वणन है। वज्जि शायद वृजि का ही रूपातर है (दे० रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एशेंट इडिया—पृ० 255)। बुह्लर के मत म वज्जि का नामोल्लेख अशोक के शिलालख स० 13 मे है। जैन तीथकर महावीर वृज्जिगणराज्य के ही राजकुमार थ।

वृजिस्थान

युवानच्वाग ने इस स्थान का उल्लेख फो लि शतगना नाम स किया है। यह वतमान वज़ीरस्तान (प० पाकि०) है।

वृद्ध गौतमी

गोदावरी की एक शाखा। गादावरी की सात शाखा नदिया मानी गई हैं जिन्हे सप्तगोदावरी कहते हैं। (दे० गोदावरी)

वृषप्रस्थ

'कन्यातीर्थेऽश्वतीर्थे च गवा तीर्थे च भारत, कालकोटया वृषप्रस्थे गिरा-वुष्य च पाडवा बाहुदाया महीपाल चक्रु सर्वेऽभिषेचनम्'—महा० वन० 95, 3 4। कान्यकुब्ज, अश्वबीथ, कालकाटि आदि के साथ इस पवत का तीर्थरूप मे उल्लेख होने स यह बुदेलखड की कोई पहाडी जान पडती है। सभवत यह कालिजर के निकट स्थित है। वृषप्रस्थ का पाठातर विषप्रस्थ भी है।

वृषभ

महाभारत, सभा० 21 2 के अनुसार गिरिव्रज (=राजगृह, बिहार) के निकट एक पहाडी, वैहारो विपुल, शैलो वराहो वषभस्तथा तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यक पचमा' [(दे० राजगह (1)]

वृषभाद्रि (ज़िला मदुरै, मद्रास)

मदुरै या मदुरा म बारह मील उत्तर की ओर प्राचीन तीथ है। इसका वणन वाराह वामन ब्रह्माड तथा अग्निपुराण म है। कहा जाता है कि अपने वनवास काल मे पाडवो ने द्रौपदी के साथ इस पवत पर कुछ समय तक निवास किया था। वे जिस गुफा मे रहे थे वह आज भी पाडवशैया कहलाती है। वृष-भाद्रि पर एक प्राचीन दुग है तथा नूपुरगगा नामक एक विस्तृत जल स्रोत।

वृषभानपुर दे० बरसाना

वृष्णि

वृष्णि गणराज्य शूरसेन प्रदश म स्थित था। वृष्णियो का तथा अधकों का प्राचीन साहित्य म साथ-साथ उल्लेख है। श्रीकृष्ण वृष्णि वश स ही सबधित

थे। पाणिनि 4 1 114 तथा 6,2,34 में वृष्णियों तथा अंधकों का उल्लेख है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र (पृ० 12) में वृष्णियों के संघ राज्य का वर्णन है। महाभारत शांति० 81,29 में अंधक वृष्णियों का कृष्ण के संबंध में वर्णन है—'यादवा कुकुरा भोजा सर्वे चान्धकवृष्णय, त्वय्यासक्ता महाबाहो लोकालोकेश्वराश्च ये।' इसी प्रसंग में कृष्ण को संघमुख्य भी कहा गया है जिससे सूचित होता है कि वृष्णि तथा अंधक गणजातियों के राज्य थे—'भेदाद् विनाश संघाना संघमुख्योऽसि केशव' शांति० 81,25। वृष्णियों का हर्षचरित (कॉवेल, पृ० 193) में भी उल्लेख है। वृष्णि संघ का नाम एक सिक्के पर भी अंकित पाया गया है जिसका अभिलेख इस प्रकार है—'वृष्णि राजन्यगणस्य त्रुभरस्य।' यह सिक्का वृष्णि गणराज्य द्वारा प्रचलित किया गया था और इसकी तिथि प्रथम या द्वितीय शती ई० पू० है (दे० मजुमदार—कार्पोरेट लाइफ इन ऐंशेंट इंडिया—पृ० 280)

वेंकटाचल = वेंकटरमनाचलम् = शेषाचल

तिरुमला पहाड़ी की सातवीं चोटी का नाम जो समुद्रतल से 2500 फुट ऊंची है। यहां बालाजी का प्राचीन मंदिर है। यह पत्थर की बनी तीन दीवारों से परिवृत है और तीन ही गोपुर इसको सुशोभित करते हैं। बीच में सशिखर मंदिर है जिसका प्रांगण 410 फुट लंबा और 260 फुट चौड़ा है। कई प्रवेश-द्वारों के भीतर पहुंचकर सात फुट ऊंची बालाजी की पाषाण-मूर्ति दृष्टिगोचर होती है। बालाजी को दक्षिणी लोग वेंकटेश कहते हैं। पहाड़ी पर बालाजी के मंदिर से 3 मील दूर पापनाशिनी गंगा और दो मील पर कपिलधारा स्थित है। श्रीमद्भागवत 5,19,16 में वेंकटाचल का उल्लेख है—'श्रीशैलो वेंकटो महेंद्रो वारिधारा विंध्य' ।

वेंगी

समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में वर्णित स्थान जहां के शासक हस्तिवर्मन् को गुप्तसम्राट् ने परास्त किया था—'वैंगेयकहस्तिवर्मापालक्कउग्रसेनदैवराष्ट्रककुबेरकौस्थलपुरकधनंजयप्रभृति-सर्वदक्षिणापथ राजग्रहणमोक्षानुग्रहजनित-प्रतापोन्मिश्रमहाभाग्यस्य' । वेंगी का अभिज्ञान वेगी और पडडवेगी नामक स्थान से किया गया है जो कृष्णा और गोदावरी नदियों के बीच में स्थित एलोर नामक स्थान से सात मील उत्तर में है। दूसरी शती ई० में वेंगी के शालंकायन नामक नरेशों का पता चला है। टॉल्मी ने इन्हें ही सलकेनोई नाम से अभिहित किया है। इससे पहले यहां इक्ष्वाकुओं का राज्य था।

वेंडाली (लिंगसुगुर तालुका, जिला रायचूर, मैसूर)

इस स्थान से प्रागैतिहासिक अवशेष प्राप्त हुए हैं। प्राचीन समय में लोहा

—सुनिध और वषकार (वस्सकार) ने पाटलिग्राम (पाटलिपुत्र) में एक किला वृज्जियों के आक्रमणों को रोकने के लिए बनवाया था। महापरिनिब्बान सुत्तन्त में भी अजातशत्रु और वज्जियों के विरोध का वर्णन है। वज्जि शायद वजि का ही रूपांतर है (दे० रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री आव ऐंशेंट इंडिया—पृ० 255)। बुह्लर के मत में वज्जि का नामोल्लेख अशोक के शिलालेख सं० 13 में है। जैन तीर्थंकर महावीर वृज्जिगणराज्य के ही राजकुमार थे।

वृजिस्थान

युवानच्वांग ने इस स्थान का उल्लेख फो लि शतगना नाम से किया है। यह वर्तमान वजीरस्तान (प० पाकि०) है।

वृद्ध गौतमी

गोदावरी की एक शाखा। गोदावरी की सात शाखा नदियां मानी गई हैं जिन्हें सप्तगोदावरी कहते हैं। (दे० गोदावरी)

वृषप्रस्थ

'कन्यातीर्थेऽश्वतीर्थे च गवां तीर्थे च भारत, कालकोट्यां वृषप्रस्थे गिरा-वुप्य च पांडवाः बाहुदायां महीपाल चक्रुः सर्वेऽभिषेचनम्'—महा० वन० 95, 3 4। कान्यकुब्ज, अश्वतीर्थ, कालकोटि आदि के साथ इस पर्वत का तीर्थरूप में उल्लेख होने से यह बुंदेलखंड की कोई पहाड़ी जान पड़ती है। संभवतः यह कालिंजर के निकट स्थित है। वृषप्रस्थ का पाठांतर विषप्रस्थ भी है।

वृषभ

महाभारत, सभा० 21 2 के अनुसार गिरिव्रज (=राजगृह, बिहार) के निकट एक पहाड़ी, 'वैहारो विपुलः शैलो वराहो वृषभस्तथा, तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यक पंचमाः' [(दे० राजगृह (1)]

वृषभाद्रि (जिला मदुरै, मद्रास)

मदुरै या मदुरा से बारह मील उत्तर की ओर प्राचीन तीर्थ है। इसका वर्णन वाराह, वामन, ब्रह्मांड तथा अग्निपुराण में है। कहा जाता है कि अपने वनवास काल में पांडवों ने द्रौपदी के साथ इस पर्वत पर कुछ समय तक निवास किया था। वे जिस गुफा में रहे थे वह आज भी पांडवशैया कहलाती है। वृषभाद्रि पर एक प्राचीन दुर्ग है तथा नूपुरगंगा नामक एक विस्तृत जल स्रोत।

वृषभानपुर दे० बरसाना

वृष्णि

वृष्णि गणराज्य शूरसेन प्रदेश में स्थित था। वृष्णियों का तथा अंधकों का प्राचीन साहित्य में साथ साथ उल्लेख है। श्रीकृष्ण वृष्णि वंश से ही संबंधित

थे। पाणिनि 4 1,114 तथा 6,2,34 में वृष्णियो तथा अधको का उल्लेख है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र (पृ० 12) में वृष्णियों के सघ राज्य का वर्णन है। महाभारत शांति० 81,29 में अधक वृष्णियो का कृष्ण के सबध मे वर्णन है—'यादवा कुकुरा भोजा सर्वे चा धकवृष्णय, त्वय्यासक्ता महाबाहो लोकालोकेश्वराश्च ये।' इसी प्रसग मे कृष्ण का सघमुख्य भी कहा गया है जिससे सूचित होता है कि वृष्णि तथा अधक गणजातियों के राज्य थे—'भेदाद् विनाश सघाना सघमुख्योऽसि केशव' शांति० 81,25। वृष्णियो का हर्षचरित (कॉवेल, पृ० 193) में भी उल्लेख है। वृष्णि सघ का नाम एक सिक्के पर भी अंकित पाया गया है जिसका अभिलेख इस प्रकार है—'वष्णि राजन्यगणस्य भ्रुभरस्य।' यह सिक्का वृष्णि-गणराज्य द्वारा प्रचलित किया गया था और इसकी तिथि प्रथम या द्वितीय शती ई० पू० है (दे० मजुमदार—कार्पोरेट लाइफ इन ऐशट इडिया—पृ० 280)

वेंकटाचल = वेंकटरमनाचलम = शेषाचल

तिरुमला पहाड़ी की सातवी चोटी का नाम जो समुद्रतल से 2500 फुट ऊंची है। यहा बालाजी का प्राचीन मदिर है। यह पत्थर की बनी तीन दीवारो से परिवृत है और तीन ही गोपुर इसको सुशोभित करत हैं। बीच मे सशिखर मदिर है जिसका प्रागण 410 फुट लवा और 260 फुट चौडा है। कई प्रवेश द्वारो के भीतर पहुचकर सात फुट ऊची बालाजी की पाषाण-मूर्ति दृष्टिगोचर होती है। बालाजी का दक्षिणी लोग वेंकटेश कहते हैं। पहाडी पर बालाजी के मदिर से 3 मील दूर पापनाशिनी गगा और दो मील पर कपिलधारा स्थित है। श्रीमदभागवत 5,19,16 मे वेंकटाचल का उल्लेख है—'श्रीशैलो वेकटो महेद्रो वारिधारा विंध्य ' '।

वेंगी

समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति मे वर्णित स्थान जहा के शासक हस्तिवमन् को गुप्तसम्राट् ने परास्त किया था—'वैंगीयकहस्तिवर्मापालक्कउग्रसेनदवराष्ट्रककुबेरकौस्थलपुरकधनजयप्रभृति-सर्वदक्षिणापथ राजाग्रहणमोक्षानुग्रहजनित-प्रतापोन्मिश्रमहाभाग्यस्य च'। वेंगी का अभिज्ञान वेंगी और पेडवेंगी नामक स्थान से किया गया है जो कृष्णा और गोदावरी नदियो के बीच मे स्थित एलौर नामक स्थान से सात मील उत्तर मे है। दूसरी शती ई० मे वेंगी के शालकायन नामक नरेशो का पता चला है। टॉल्मी ने इन्ही सलकेनोई नाम से अभिहित किया है। इससे पहले यहा इक्ष्वाकुओ का राज्य था।

वेंडाली (लिंगसुगुर तालुका, जिला रायचूर, मैसूर)

इस स्थान से प्रागैतिहासिक अवशेष प्राप्त हुए हं। प्राचीन समय मे लोहा

गलाने की निर्माणियाँ भी यहां थीं जिनके खंडहर मिले हैं।

वेक्करई (केरल)

मलाबार के समुद्रतट पर स्थित बंदरगाह है जो ई० सन की प्रारंभिक शतियों में दक्षिण भारत और रोम साम्राज्य के बीच होने वाले व्यापार का महत्वपूर्ण केंद्र था। तत्कालीन रोमन इतिहास लेखक प्लिनी ने इसे वेकारे (Becare) और टॉलमी ने अपने भूगोल में इसे बकारई या बकरे (Bakarai, Barkare) नाम से अभिहित किया है। प्लिनी के अनुसार यह बंदरगाह मदुरा देश में स्थित था जहां पांड्य नरेश का राज्य था। वेक्करई कोट्टायम नगर के निकट स्थित था।

वेगवती

(1)=वेगा

(2) रैवतक या गिरनार पर्वत से निस्सृत नदी।

वेगा

मदुरा (मद्रास) के समीप बहनेवाली नदी। यह पश्चिमी घाट की पर्वत-माला से निस्सृत होकर मदुरा के दक्षिण पूर्व में रामेश्वरम के द्वीप के पास समुद्र में मिलती है। नदी स्थान स्थान पर लुप्त हो जाती है।

वेंगी दे० वेंगी।

वेठद्वीप

इस नगर का प्राचीन बौद्धसाहित्य में उल्लेख है। कुछ विद्वानों ने इसका अभिज्ञान बेतिया (जिला चंपारन) से किया है। मजुमदार शास्त्री (दे० ऐंशेंट ज्योग्रेफी ऑव इंडिया 1924, पृ० 714) के अनुसार यह कसिया का नाम है। धम्मपदटीका (हावर्ड ओरियंटल सिरीज, 28, पृ० 247) में वेठदीपक नामक एक राजा का उल्लेख है जिसका संबंध अल्लकप्प के राजा के साथ बताया है।

वेता=बेता दे० वेदश्रुति

वेणा

'स विजित्य दुराधर्षं भीष्मकं माद्रिनंदन कोसलाधिपं चैव तथा वेणातटाधिपं'—महा० सभा० 31 12, 'वेणा भीमरथी चैव नद्यौ पापभयापहे, मृगद्विजसमाकीर्णे तापसालयभूषिते'—महा० वन० 88,3। इस नदी (जिसका उल्लेख भीमरथी या भीमा के साथ है) का अभिज्ञान पेनगंगा से किया गया है। पेनगंगा भीमा के समान ही सह्याद्रि से निकलकर पूर्वसमुद्र में गिरती है। महाभारत में वेणा समुद्र संगम को पवित्र स्थली बताया गया है—'वेणायाः संगमे स्नात्वा

वाजिमेघफल लभेत्' वन० 85,34। सभवत इसे ही श्रीमदभागवत 5,19,18 मे वेण्या कहा गया है—'तुगभद्राकृष्णावेण्याभीमरथीगोदावरी'। यहा भी इसका भीमरथी के साथ उल्लेख है। यह वेनगगा या प्रवेणी भी हो सकती है।

वेणी

महाराष्ट्र की एक छोटी नदी। सतारा (महाराष्ट्र) से पाच मील पूव कृष्णा और वेणी के सगम पर माहुली नामक पुण्यतीथ बसा है। श्रीमदभागवत 5,19,18 मे वेणी का उल्लेख है—'वैहायसीकावेरीवेणीपयस्विनीशकरावती तुगभद्राकृष्णावेण्या '।

वेणुकटक

बुद्धचरित 21,8 के अनुसार इस स्थान पर बुद्ध ने नद की माता को प्रव्रजित किया था। यह स्थान राजगृह के निकट स्थित था। राजगृह बिहार मे स्थित राजगीर है।

वेणुका

विष्णुपुराण 2,4 66 के अनुसार शाकद्वीप की एक नदी—'इक्षुश्च वेणुका चैव गभस्तीसप्तमी तथा, अन्याश्च शतशस्तत्र क्षुद्रनद्योमहामुने'।

वेणुमत

द्वारका के उत्तर की ओर स्थित पवत —'उत्तरस्या दिशि तथा वेणुमन्तो विराजते, इदुकेतुप्रतीकाश पश्चिमादिशिमाश्रित '—महा० सभा० 38। यह पवत गिरनार पवत श्रेणी का कोई भाग जान पडता है।

वेणुमती

बुद्धचरित 23,62 म वर्णित स्थान जो वैशाली के निकट था। यहा गौतम बुद्ध ने आम्रपाली का आतिथ्य स्वीकार करने के पश्चात वर्षा व्यतीत की थी।

वेणुमान्

विष्णुपुराण 2,4,36 मे उल्लिखित कुशद्वीप का एक भाग या वप जा इस द्वीप के राजा ज्योतिष्मान् के पुत्र वेणुमान् के नाम पर प्रसिद्ध है।

वेणुवन=वेणुवनाराम

महावश 5,115 के अनुसार यह वन या उद्यान राजगृह (=राजगीर, बिहार) मे वैभार पर्वत की तलहटी म नदी के दोनो ओर स्थित था। इसे मगध सम्राट् बिबसार ने गौतम बुद्ध को समर्पित कर दिया था। इसे महावश 15,16 17 म वेणुवनाराम कहा गया है। सभवत बास के वृक्षो की अधिकता के कारण ही इस वेणुवन कहा जाता था। बुद्धचरित 16,49 के अनुसार 'तब वेणुवन म तथागत का आगमन सुनकर मगधराज अपने मत्रिगणो के साथ उनसे

आज्ञा से की गई थी। पहाड़ी 500 फुट ऊंची है और इसका क्षेत्रफल प्राय 265 एकड और घेरा दो मील के लगभग है। पहाड़ी के नीचे बने हुए मंदिर की बहुत ख्याति है और कहा जाता है कि अप्पर सबदर, अरुणागिरि, शकरर तथा अन्य महात्माओं ने यहां आकर भक्तवत्सलेश्वर तथा त्रिपुरसुंदरी के दर्शन किए थे। गिरिशिखर पर बना हुआ मंदिर भी बहुत प्रसिद्ध है। शिखर के नीचे की ओर जाते हुए एक गुफा मंदिर मिलता है—जो एक ही विशाल प्रस्तर खंड में से कटा हुआ है। इसी कारण इसे ओरुक्कल मंडप कहते हैं। इसके दो बरामदे हैं जिनमें से प्रत्येक चार भारी स्तंभों पर आधृत है। मंडप के भीतर पल्लवकालीन (7वीं शती ई० की) अनेक कलापूर्ण मूर्तियां हैं। वेदगिरि को ब्रह्मगिरि भी कहते हैं।

वेदवती

वेदवती दक्षिण भारत की नदी है जो भीमा के निकट ही बहती है। विंसेंट स्मिथ के अनुसार (अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 156,) कुंतलदेश (=कर्नाटक) वेदवती और भीमा के बीच में स्थित था। महाभारत भीष्म० 9,17 में वेदवती का उल्लेख है—'वेदस्मृता वेदवती त्रिदिवामिक्षुला कृमिम्'। श्री बी० सी० लॉ के अनुसार यह वरदा है। (दे० हिस्टॉरिकल ज्याग्रेफी ऑव ऐंशेंट इंडिया)

वेदश्रुति

वाल्मीकि रामायण के वर्णन के अनुसार श्रीराम-लक्ष्मण सीता ने अयोध्या से वन जाते समय कोसल देश की सीमा पर बहने वाली इस नदी को पार किया था—'एता वाचोमनुष्याणां ग्रामसंवासवासिनां शृण्वन्नतिययौवीर कोसलान् कोसलेश्वर। ततो वेदश्रुतिं नाम शिववारिवहां नदीम् उत्तीर्याभिमुख प्रायादगस्त्याध्युषितां दिशम्' अयो० 49,8 9। इससे पहले तमसा-तीर पर उन्होंने वनवास की पहली रात्रि व्यतीत की थी (अयो० 46,1)। वेदश्रुति के पश्चात् गोमती (अयो० 49,10) तथा स्यंदिका (अयो० 49,11) को उन्होंने पार किया था। वेदश्रुति इस प्रकार तमसा और गोमती के बीच में स्थित कोई नदी जान पडती है। श्री न० ला० डे के अनुसार यह अवध की वेता (वेता) नदी है।

वेदसा (महाराष्ट्र)

बंबई पूना रेलमार्ग पर वडगांव स्टेशन से 6 मील दूर यह ग्राम स्थित है। पहाड़ी पर कार्ली और भाजा के गुफा मंदिरों के समान ही बौद्ध गुफा मंदिर हैं जिनमें एक चैत्य गुफा भी सम्मिलित है।

वेदस्मृता

'वेदस्मृता वेदवती त्रिदिवामिक्षुला कृमिम्'—महा० भीष्म० 9,17 इस नदी का अभिज्ञान अनिश्चित है किंतु वेदस्मृति नामक किसी नदी को विष्णुपुराण 2,3,10 में पारियात्र (प० विंध्य) से निस्सृत बताया गया है—'वेदस्मृतिमुखाद्याश्च पारियात्रोदभवामुने'। वेदस्मृति का श्रीमद्भागवत 5,19,18 में भी उल्लेख है—'महानदीवेदस्मृतिऋषिकुल्यात्रिसामाकौशिकी'। संभवतः वेदस्मृता वेदस्मृति का ही नामांतर है।

वेदस्मृति दे० वेदस्मृता

वेदीप

बौद्ध किंवदंती के अनुसार वेदीप उन आठ स्थानों में से था जहां के नरेश भगवान बुद्ध के परिनिर्वाण के पश्चात् उनके शरीर की भस्म लेने के लिए कुशीनगर आए थे।

वेनगंगा दे० प्रवेणी

वेनाड

त्रिवांकुर (केरल) का प्राचीन नाम। 18वीं शती के मध्यकाल में राजा मार्तंडवर्मा ने वेनाड राज्य की सीमाएं बहुत विस्तृत कर ली थीं। रामीन नामक एक सैनिक ने इस कार्य में उसकी बहुत सहायता की थी। अपनी अभूतपूर्व विजयों के पश्चात् मार्तंडवर्मा ने केरलराज्य को त्रिवेंद्रम के अधिष्ठातृ देव श्रीपद्मनाभ के लिए समर्पित कर दिया था। इसके पश्चात् ही त्रिवांकुर राज्य की राजधानी त्रिवेंद्रम में स्थापित की गई और वेनाड का नया नाम त्रिवांकुर (ट्रावनकोर) प्रचलित हुआ। (दे० त्रिवांकुर, केरल)

वेनीवडार (काठियावाड, गुजरात)

इस स्थान पर उत्खनन द्वारा अनेक प्रागैतिहासिक अवशेष प्राप्त हुए हैं। पुरातत्त्व के विद्वानों का मत है कि ये अवशेष अणुपाषाण तथा पूर्वपाषाण युग की उस सभ्यता से संबंधित हैं जिसका मूलस्थान बेबिलोनिया में था।

वेमलवाडा (ज़िला करीमनगर, आ० प्र०)

इस स्थान पर एक विशाल झील के तट पर एक प्राचीन मंदिर स्थित है जहां यात्रा के लिए प्रतिवर्ष सहस्रों यात्री आते जाते रहते हैं।

वेरावल दे० वीरावल।

वेरीनाग (कश्मीर)

वेरीनाग का अर्थ विशाल नाग अथवा स्रोत है। झेलम नदी का उद्गम

यही स्रोत कहा जाता है। प्राचीन समय मे स्रोत के निकट शिव और गणेश के मदिर स्थित थे। मुगल सम्राट् जहागीर ने इन मदिरो को न छेडते हुए स्रोत क निकट ही एक सुदर इमारत बनवाई थी। इसकी नीव 1620 ई० मे पडी थी किंतु यह 1627 ई० म बनकर तैयार हुई थी। वेरीनाग नूरजहा को बहुत प्रिय था और अपने कश्मीर प्रवास मे वह प्राय यहा ठहरती थी। वरीनाग का स्रोत 52 फुट गहरा है और इसकी तलहटी के ऊपर दो वेदिकाए बनी हुई हैं। सन्निकट उद्यान के बाहर एक छोटा सा प्रासाद बना है।

वेरुल दे० इलौरा

वेललि=वेलिग्राम (जिला मगलूर, मैसूर)

इस छोटे से ग्राम मे जो उडुपी क्षेत्र के अतगत माना जाता है, माघ शुक्ल सप्तमी 1295 वि० स०=1238 ई० मे प्रसिद्ध दार्शनिक मध्वाचार्य का जन्म हुआ था। इनके पिता भागवगोत्रीय नारायण भट्ट थे तथा इनकी माता का नाम वेदवती था। माध्व का बचपन का नाम वासुदेव था। ये द्वैत सिद्धात के प्रतिपादक तथा भक्तिमार्ग के परिपोषक थे। इस स्थान को वेल्ले भी कहते हैं। यह उडुपी से सात मील दूर है।

वेलाकूल दे० वीरावल

वेलापुर=वेल्लूर

वेलिग्राम=वेललि

वेल्लूर (मद्रास)

प्राचीन नाम वेलापुर है। यह स्थान एक मध्ययुगीन दुर्ग के लिए प्रख्यात है जो 1274 ई० म बोम्मी रेड्डी ने बनवाया था। यह व्यक्ति भद्राचल से यहा आकर बस गया था। विजयनगर के नरेशो के समय इस स्थान की बहुत उन्नति हुई। 17वी शती के मध्य मे बीजापुर के सुल्तानो ने यहा आक्रमण करके दुर्ग का घेरा डाला। 1676 ई० म मराठो ने इस स्थान पर अधिकार कर लिया किंतु 1707 ई० मे मुगल सेनापति दाऊद न इसे उनसे छीन लिया। 1760 ई० म यहा अंग्रेजो का आधिपत्य हो गया। टीपू सुल्तान की मृत्यु के पश्चात् उसके परिवार के सदस्यो को यही किले म रखा गया। इन्होने किले मे स्थित भारतीय सैनिको को अंग्रेजो के विरुद्ध बगावत करने के लिए उकसाया था। वेल्लूर दुर्ग के अन्दर एक बहुत सुन्दर मदिर स्थित है जिसे अंग्रेजो की छावनी बनने से बहुत क्षति पहुची। इसके प्रवेश द्वार पर शार्दूल—दानवो और अश्वारोहियो की मूर्तिया हैं। मडपो के स्तभो की शिल्पकारी अनोखी जान पडती है। फर्ग्यूसन के मत मे यह मदिर 13वी या 14वी शती

का ज्ञान पड़ता है।

वेल्ले=वेललि

वैकक

विष्णुपुराण के अनुसार मेरु के पूर्व की ओर स्थित पर्वत—'शीताभश्च कुमुदश्च कुररी माल्यवांस्तथा वैककप्रमुखा मेरोः पूर्वतः केसराचलाः'—विष्णु० 2,2,26।

वैजयंत=वैजयंती

कर्नाटक (मैसूर) में स्थित नगर जिसका उल्लेख द्वितीय शती ई० के नासिक अभिलेख में है। शातवाहन गौतमीपुत्र के गोवर्धन (नासिक) में स्थित अमात्य को यह आदेश लेख वैजयंती के शिविर से प्रेषित किया गया था। वैजयंत जो वैजयंती का रूपांतर है, रामायणकालीन नगर था। वाल्मीकि रामायण अयो० 9,12 में इसका उल्लेख इस प्रकार है—'दिशामास्थाय कैकेयि दक्षिणां दंडकान्प्रति, वैजयन्तमिति ख्यातं पुरं यत्र तिमिध्वजः'। रामायण की इस प्रसंग की कथा में वर्णित है कि वैजयंत में, जो दंडकारण्य का मुख्य नगर था, तिमिध्वज या शंबर का राज्य था। इंद्र ने इससे युद्ध करने के लिए राजा दशरथ की सहायता मांगी। दशरथ इस युद्ध में गए किंतु वे घायल हो गए और कैकयी जो उनके साथ थी उनकी रक्षा करने के लिए उन्हें संग्राम स्थल से दूर ले गई। प्राणरक्षा के उपलक्ष्य में दशरथ ने कैकयी को दो वरदान देने का वचन दिया जो उसने बाद में मांग लिए।

वैडूर्य

विष्णुपुराण 2,2 28 के अनुसार मेरु के पश्चिम में स्थित एक पर्वत (केसराचल)—'शिखिवासाः सवैडूर्यः, कपिलो गंधमादनः, जारुधिप्रमुखास्तद्वत पश्चिमे केसराचलाः'।

वैतरणी

(1) कुरुक्षेत्र की एक नदी। वामनपुराण 39 6 8 में इसकी कुरुक्षेत्र की सप्तनदियों में गणना की गई है—'सरस्वती नदी पुण्या तथा वैतरणी नदी, आपगा च महापुण्या गंगा मंदाकिनी नदी। मधुस्रवा अम्लुनदी कौशिकी पापनाशिनी, दृषद्वती महापुण्या तथा हिरण्वती नदी'।

(2) उड़ीसा की नदी जो सिंहभूम के पहाड़ों से निकल कर बंगाल की खाड़ी में—धामरा नामक स्थान के निकट गिरती है। यह कलिंग की प्रख्यात नदी थी। महाभारत भीष्म 9,34 में इस प्रदेश की अन्य नदियों के साथ ही इसका भी उल्लेख है—'चित्रोत्पला चित्ररथा मंजुला वाहिनी तथा मंदाकिनी वैतरणी

कोषा चापि महानदीम'। पद्मपुराण, 21 म इसे पवित्र नदी माना है। बौद्ध ग्रथ सयुत्तनिकाय 1 21 मे इस यम की नदी कहा है—'यमस्स वेतरिणम'। पौराणिक अनुश्रुति म वैतरणी नामक नदी को परलोक मे स्थित माना गया है जिसे पार करने के पश्चात ही जीव की सद्गति सभव होती है।

वैताढ्य

विध्याचल पवत का एक नाम जिसका उल्लेख जैनग्रथ जबूद्वीपप्रज्ञप्ति म है। इसके द्वारा भारतवष को आर्यावत तथा दाक्षिणात्य—इन दो भागो मे विभाजित माना गया है। वताढ्य पवत के सिद्धायतन, तमिस्रा गुहा आदि नौ शिखर गिनाए गए है (जबूद्वीप प्रज्ञप्ति, 1,12)।

वैदूयपत्तन (आ० प्र०)

गोदावरी के तट पर स्थित है। इस कस्बे के निकट अरुणाश्रम नामक स्थान को दक्षिण के प्रसिद्ध दार्शनिक सत निबार्काचाय का ज मस्थान माना जाता है। इनका एक मात्र ग्रथ वेदात सूत्रा पर भाष्य, 'वेदात पारिजात सौरभ ही मिलता है। उ्होने द्वैताद्वैत सिद्धात का प्रतिपादन तथा भक्ति माग का सपोषण किया था। श्रीमदभागवत से इ्ह बहुत अनुराग था।

वदूय पवत=वदूय शिखर

(1) महाभारत वनपव मे धौम्य मुनि द्वारा वर्णित तीर्थों म इस पवत का उल्लेख है—'वैदूयशिखरा नाम पुण्यो गिग्वर शिव, नित्यपुष्पफलास्तत्र पादपा हरितच्छदा, तस्य शैल्स्य शिखरे सर पुण्य महीपत, फुल्लपदम महाराज देवगधवसेवितम्' वन० 89,6 7। इस प्रसग मे नमदा का वणन है जिसके कारण वदूयशिखर का भेडाघाट (भृगुक्षेत्र) के समीप स्थित सगमरमर की चट्टानो वाली पवतमाला स अभिज्ञान किया जा सकता है। वैदूय या बिल्लार शब्द श्वेत सगमरमर क लिए प्राचीन साहित्य मे प्रयुक्त हुआ है। उपयुक्त उद्धरण में वैदूयशिखिर पर जिस सरावर का वणन है वह शायद नर्मदा की वह गहरी झील है जो इन पहाडियो के बीच म नदी प्रवाह के रुक जान से बन गइ है। वन० 121,16 19 म भी वैदूय पवत का, नमदा और पयाष्णी के सबध मे वणन है—'स पयाष्णया नरश्रेष्ठ स्नात्वा वै भ्रातृभि सह, वैदूयपवत चैव नमदा च महानदीम्। देवानामेति कौतेय यथा राजा सलोकताम, वैदूय पवत दृष्ट्वा नमदामवतीय च'। (दे० भृगुक्षेत्र)

(2) महाहिमवत के आठ शिखरो म से एक, जिसका उल्लेख जन ग्रथ जबूद्वीप प्रज्ञप्ति म है।

वद्यनाथ (बिहार)

'वद्यास्थापूजित सत्य लिंगमेततपुरा मम, वैद्यनाथमितिख्यात सवकामप्रदायकम'—शिवपुराण। शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगो म इसकी गणना है। यहा शिव तथा पार्वती के लगभग 25 मदिर हैं। इस तीथ मे शिवपार्वती की सपृक्त पूजा की जाती है जिसके प्रतीक स्वरूप दानो मदिरो के शिखरो की मालाओ का एक साथ बाधा जाता है। वैद्यनाथ को भवरोगहर भी कहा जाता है। शिवपुराण के अनुसार देवताओ के वैद्य अश्विनीकुमार ने इस स्थान पर तप किया था। पद्मपुराण के पातालखड म भी इस तीथ का उल्लेख है। वैद्यनाथ क निकट कई स्थान प्रसिद्ध हैं, जिनम त्रिकूट, नदनपवत, तपोवन, शिवगगा आदि प्रमुख हैं। इन सबके विषय मे पौराणिक जनश्रुतिया प्रचलित है। त्रिकूट से मयूराक्षी नदी निकलती है।

वैद्युत

विष्णुपुराण 2,4,29 के अनुसार शाल्मल द्वीप का एक भाग या वष जो इस द्वीप के राजा वपुष्मान के पुत्र वैद्युत के नाम पर प्रसिद्ध है।

वभार

राजगृह (=राजगीर, बिहार) के निकट एक पवत जिसका नामोल्लेख महाभारत सभा० 21,2 म है—'वैभारो विपुलो शला वराहो वृषभस्तथा' [दे० राजगृह (1)]। इसका पाठातर वैहार है। पालीग्रथो म इस वेभार कहा गया है—दे० महावश 3,19। सप्तपर्णि (सोनभडार) नामक गुहा इसी पहाडी म स्थित थी। यहा बुद्ध की मृत्यु क पश्चात प्रथम धम सगीति का अधिवेशन हुआ था जिसम 500 भिक्षुओ ने भाग लिया था। जैन ग्रथ 'विविध तीथ कल्प' म राजगृह की इस पहाडी क त्रिकूट एव खडिक नाम क दो शिखरो का उल्लेख है। पहाडी पर होन वाली अनेक औषधियों का भी वणन है। इस ग्रथ क अनुसार सरस्वती नदी यहा प्रवाहित होती थी और मगध, रोचन आदि नाम क जो देवालय स्थित थ जिनम जैन अहतों की मूर्तिया थी। कहा जाता है कि यहां के देवालयो के निकट सिंह आदि हिंसक पशु भी सौम्यतापूवक रहत थ। प्राचीन समय म यहा रौहिणेय नामक महात्मा का निवास था।

वभ्राज

विष्णुपुराण 2,4,7 म उल्लिखित प्लक्षद्वीप के सप्तपवतो म स एक है 'गोमदश्चव च द्रश्च नारदो दुदुभिस्तथा, सोमक सुमनाश्चव वैभ्राजश्चव सप्तम'।

वरजा

बुद्धचरित 21,27 म बुद्ध का इस जनभिगा नगर म पहुंच कर शिष्

नामक व्यक्ति को धम की दीक्षा देन का उल्लेख है। यह नगर श्रावस्ती मथुरा मार्ग पर स्थित था और मथुरा के निकट ही था। यहा के ब्राह्मणो का बौद्ध साहित्य मे उल्लेख है। गौतम बुद्ध यहा ठहर थ और उन्होने इस नगर के निवासियो के समक्ष प्रवचन भी किया था।

वरत्य नगर

सस्कृत के प्रसिद्ध नाटककार भास के 'अविमारक' नाटक की पाश्वस्थली। यहा कुतिभोज की राजधानी थी। हषचरित म इस रतिदेव की राजधानी कहा गया है। यह मालवा का एक छोटा सा नगर था जिसकी स्थिति चबल की सहायक अश्वनदी के तट पर थी। इस भोज भी कहत थ।

वरय

विष्णुपुराण 2,4,36 के अनुसार कुशद्वीप का भाग या वप जो इस द्वीप के राजा ज्योतिष्मान् के पुत्र के नाम पर प्रसिद्ध है।

वरागिनी (ज़िला गढवाल, उ० प्र०)

गोपश्वर के नीचे कुछ ही दूर पर वैरागिनी नामक नदी प्रवाहित होती है जिसे प्राचीन काल स तीथ क रूप म मायता प्राप्त है।

वराज दे० बाई

वराट

जैन-ग्रथ सूत्र प्रज्ञापणा मे उल्लिखित एक नगर जिसे वत्स राज्य के अतगत बताया गया है।

वलाहग्रपुर दे० ढ्रुल्व।

वैशगढ़ दे० जिजला।

वशाली (ज़िला मुजफ्फरपुर बिहार)

(1) प्राचीन नगरी वैशाली(पाली—वैसाली) के भग्नावशेष वतमान बसाढ नामक स्थान के निकट जा मुजफ्फरपुर से 20 मील दक्षिण पश्चिम की ओर है, स्थित हैं। पास ही बखरा नामक ग्राम बसा हुआ है। इस नगरी का प्राचीन नाम विशाला था जिसका उल्लेख वाल्मीकि रामायण मे है (दे० विशाला)। गौतम बुद्ध के समय मे तथा उनसे पूव लिच्छवीगणराज्य की यहा राजधानी थी। यहाँ वज्जियो (लिच्छवियो की एक शाखा) का सस्थागार था जा उनका ससद सदन था। वज्जियो की यायप्रियता की बुद्ध ने बहुत सराहना की थी। वैशाली के सस्थागार मे सभी राजनीतिक विषयो की चर्चा होती थी। यहा अपराधियो के लिए दडव्यवस्था भी की जाती थी। कथित अपराधी का अपराध सिद्ध करने के लिए विनिश्चयमहामात्य, व्यावहारिक, सूत्रधार, अष्ट-

पास ही मकटह्रद नामक तडाग है। कहा जाता है कि इस बदरो के एक समूह ने बुद्ध भगवान के लिए खोदा था। मकटह्रद का उल्लेख बुद्धचरित 23,63 म है। यहा उन्होंने मार या कामदव को बताया था कि वे तीन मास मे निर्वाण प्राप्त कर लेग। तडाग के निकट कुताग्र नामक स्थान है जहा बुद्ध ने धमचक्र-प्रवतन के पाचवें वप म निवास किया था। बसाढ के खडहरो मे एक विशाल दुग क ध्वसावशेप भी स्थित ह। इसको राजा वैशाली का गढ कहते हैं। एक स्तूप क अवशप भी पाए गए हैं।

(2)=वेथाली (अराकान, बर्मा)। 8वी शती ई० मे धन्यवती के अराकान की प्राचीन हिंदू राजधानी के रूप म परित्यक्त होने पर, वैसाली—वतमान वेथाली—को अराकान की राजधानी बनाया गया था। यह कार्य महातैनचद्र द्वारा सपादित हुआ था। 11वी शती के प्रारभिक वर्षों मे इस राजवश के समाप्त होने पर वैसाली से भी राजधानी हटाली गई (1018 ई०)। वैसाली का अभिज्ञान वेथाली नामक ग्राम से किया गया है जहा के खडहरो से वैशाली के पूर्वगौरव की झलक मिलती है। इन खडहरो म प्राचीन भवनो तथा कलाकृतिया के अनेक ध्वसावशेप प्राप्त हुए हैं जिन पर गुप्तकालीन भारत की कला का स्पष्ट प्रभाव दिखाई पडता है। वेथाली म्रोहाग से आठ मील उत्तर पश्चिम की ओर स्थित है।

वसाली दे० वैशाली

वहायसी

(1) श्रीमद्भागवत 5,19,18 मे वर्णित नदी—'चन्द्रवसाताम्रपर्णीअवटोदा कृतमालावहायसीकावेरी—'। सदभ से यह दक्षिणभारत की नदी जान पडती है।

(2) दे० बदरीनाथ

वहार=वभार

वोक्खण=वारवन (अफगानिस्तान)

वृहत्सहिता नामक ज्योतिप ग्रथ मे (9,21,16,35) मे इस देश का गधार के साथ उल्लेख है। यहा के निवासियो को शूलिक कहा गया है। सभव है इस देश का वक्षु से सबध हो जसा कि नाम से प्रतीत होता है।

वोदामयूता दे० बदायू

व्याघ्रपल्लिक दे० वाह

व्याघ्रपल्लिक दे० वराहक्षेत्र

व्याधपुर

8वी शती ई० म दक्षिण कबोडिया या कबुज म स्थित छोटा सा राज्य

था। इस भारतीय उपनिवेश का उल्लेख कंबोडिया के प्राचीन इतिहास में है।
व्यासक्षेत्र दे० कालपी
व्यासगुफा (ज़िला गढ़वाल, उ० प्र०)

बद्रीनाथ से वसुधारा जानेवाले मार्ग पर पहाड़ में इस नाम की एक गुफा है। कहा जाता है कि भगवान् व्यास ने इसी गुफा में महाभारत तथा पुराणों की रचना की थी। पास ही गणेश गुफा है जिसका संबंध गणेशजी से जिन्होंने व्यासजी के महाभारत के लेखक का कार्य किया था, बताया जाता है। बादरायण व्यास का बदरीनाथ से संबंध प्रसिद्ध ही है। (दे० बदरीनाथ)
व्यासघाट (ज़िला गढ़वाल, उ० प्र०)

देवप्रयाग से 9 मील दूर है। यह स्थान नयालिका गंगा संगम के निकट है और इसे भगवान् व्यास की तपःस्थली माना जाता है।
व्यासटीला (ज़िला जालौन, उ० प्र०)

व्यासटीला कालपी के पास यमुना तट पर व्यासक्षेत्र के अंतर्गत स्थित है। कहा जाता है कि महाभारतकार भगवान् व्यास का यहां आश्रम था। यह स्थान उपेक्षित दशा में है। (दे० कालपी)
व्यासपुर (दे० विलासपुर)
व्यासस्थली

महाभारत वन० 83,96 97 में इस पुण्यस्थली का वर्णन दृषद्वती कौशिकी संगम के पश्चात् है—'ततो व्यासस्थली नाम यत्रव्यासेन धीमता पुत्रशोकाभितप्तेन देहत्यागेकृतामतिः। ततो देवैस्तु राजेन्द्र पुनरुत्थापितस्तदा'। प्रसंग से यह स्थान कुरुक्षेत्र (पंजाब) के निकट जान पड़ता है।
व्योमस्तंभ (आ० प्र०)

काकरवाड (प्राचीन काकुभकर) के निकट और कृष्णा नदी के दक्षिण तट पर स्थित एक पर्वत। व्योम स्तंभ का अर्थ आकाश का स्तंभ है जो इस पर्वत का सार्थक नाम जान पड़ता है। काकुभकर को प्राचीनकाल में तीर्थ की मान्यता प्राप्त थी और इसका संबंध महाप्रभु वल्लभाचार्य से बताया जाता है।
व्रज

मथुरा (उ० प्र०) तथा उसका परिवर्ती प्रदेश (प्राचीन शूरसेन) जो श्रीकृष्ण की लीलाभूमि होने के कारण प्राचीन साहित्य में प्रसिद्ध है। व्रज का विस्तार 84 कोस में कहा जाता है। यहां के 12 वनों और 24 उपवनों की यात्रा की जाती है। व्रज का अर्थ गोचर भूमि है और यमुना के तट पर प्राचीन समय में इस प्रकार की भूमि की प्रचुरता होने से ही इस क्षेत्र को व्रज कहा

जाता था। व्रज का वर्णन विशेषरूप से भारतीय मध्यकालीन भक्ति साहित्य मे प्रचुरता से है। वैसे इसका उल्लेख कृष्ण के सबध मे श्रीमदभागवत तथा विष्णुपुराणादि प्राचीन ग्रथो मे भी मिलता है—'जयति तेऽधिक जन्मना व्रज श्रयत इन्दिराशश्वदत्रहि' श्रीमदभागवत 10,31,1, 'विना वृषेण का गाव विना कृष्णेन को व्रज' विष्णु० 5, 7,27, 'तयोविहरतोरेव रामकेशवयोर्व्रजे' विष्णु० 5,10,1, 'तत्याज व्रजभूभाग सहरामेण केशव' विष्णु 5,18,32, 'प्रीति सस्त्रीकुमारस्य व्रजस्य त्वयि केशव' विष्णु० 5,13,6। हिंदी मे सूरदास आदि भक्तिकालीन कवियो ने तो व्रज की महिमा के अनत गीत गाए हैं। 'ऊधो मोहि व्रज बिसरत नाही' इस पद मे सूर के कृष्ण का व्रज के प्रति बालपन का प्रेम बडी ही मार्मिक रीति से व्यक्त किया गया है।

शकरगढ़ (म० प्र०)

भूतपूर्व नागौर रियासत मे उचहरा के निकट स्थित है। शकरगढ मे मुख्यत जैन सप्रदाय से सबधित अनेक ध्वसावशेष प्राप्त हुए हैं। पुरातत्वविद् रा० दा० बनर्जी को यहा से एक गुप्तकालीन मदिर के अवशेष भी मिले थे। यह मदिर देवगढ के प्रसिद्ध मदिर से पूर्व का है। इसके प्रवेशद्वार की पत्थर की चौखट पर सुदर नक्काशी की हुई है जो गुप्तकालीन मदिरो की विशेषता है। शकरगढ़ से प्राप्त होने वाले पत्थर का, इस क्षेत्र मे निर्मित होनेवाली अनेक मूर्तियो के बनाने मे प्रयोग किया जाता था।

शखकूट

विष्णुपुराण के अनुसार शखकूट पर्वत मेरु के उत्तर की ओर स्थित है—'शखकूटोऽथ ऋषभोहसो नागस्तथापर कलजाद्याश्चतथा उत्तर केसराचल' विष्णु० 2,2,29।

शखक्षेत्र

जगन्नाथपुरी के क्षेत्र का प्राचीन पौराणिक नाम। कहा जाता है कि इस क्षेत्र की आकृति शख के समान है। शाक्तो के अनुसार इसका नाम उड्डियान पीठ है।

शखतीर्थ

'उच्चावचास्तथा भक्ष्यान विप्रेभ्यो विप्रदाय स नीलवासास्तदागच्छच्छखतीर्थं महायशा' महा० शल्य० 37,19। इस उल्लेख के अनुसार शखतीर्थ की सरस्वती नदी के तटवर्ती तीर्थों मे गणना थी। इसकी यात्रा बलराम ने की थी। शखतीर्थ गगसात के उत्तर मे था।

शखेश्वर

वतमान शखेश्वर-पाश्वनाथ तीथ जो धनपुर (गुजरात) के निकट है। इसका नामोल्लेख जन स्तोत तीथमालाचैत्यवदन मे इस प्रकार है—'जीरापल्लिफलर्द्धि पारक नगे दीरोस शखेश्वरे'।

शखोद्धार (जिला भालवाड, राजस्थान)

चद्रभागा नदी के तट पर स्थित तीथ जिसका उल्लेख स्कदपुराण म है। स्कदपुराण की कथा के अनुसार अधक असुर को मारकर भगवान् ने जहा शख-ध्वनि की थी, यह वही स्थान है। यहा एक सूय मदिर स्थित है।

शबल

विष्णुपुराण 4,24, 98 म शबलग्राम म भविष्य के कल्कि अवतार हान का उल्लेख है 'शबलग्रामप्रधानब्राह्मणस्यविष्णुयशसोगृहेऽष्टगुणर्द्धिसमन्वित कल्किरूपी जगत्यानावतीय स्वधर्मेषु चाखिलमेव सस्थापयिष्यति'। कुछ लोगा के मत म शबल ग्राम वतमान सभल (जिला मुरादाबाद, उ० प्र०) है

शभुपुर

8वी शती ई० मे दक्षिण कबोडिया (कबुज) म एक छोटा सा राज्य जिसका उल्लेख कबोडिया के प्राचीन इतिहास म है। इस भारतीय उपनिवेश की स्थिति वतमान सभोर के निकट थी जो मिकोग नदी पर है। सभार, शभुपुर ही का अपभ्रश है।

शक्करवर्रा दे० शाल

शकस्थान

शको का मूल निवासस्थान जा ईरान के उत्तर पश्चिमी भाग तथा परिवर्ती प्रदेश म स्थित था। इस सीस्तान कहा जाता है। शकस्थान का उल्लेख महामायूरि 95, मथुरा सिंहस्तभ लेख और कदबनरश मयूरशमन के चद्रवल्ली प्रस्तर-लेख म है। मथुरा अभिलेख के शब्द हैं—'सवस सकस्तनस पुयइ' जिसका अथ, कनिघम के अनुसार 'शकस्तान निवासियो के पुण्याय' है। रायचौधरी (पालिटिकल हिस्ट्री ऑव ऐंशेट इडिया पृ० 526) के मत मे शकस्तान ईरान म स्थित था और शकवनीय चष्टन और रुद्रदामन क पूव पुरुष गुजरात काठियावाड मे इसी स्थान स आकर बसे थ। शको का उल्लेख रामायण (तैरासीत् सवृता भूमि शकैर्यवनमिश्रितै ' बाल० 54,21, 'काबाजयवना श्चैव शकानापत्तनानिच' किष्किधा०, 43 12), महाभारत ('पह्लवान बर्बराश्चैव किरातान यवनाञ्छकान्' सभा० 32 17), मनुस्मृति ('पौड्रकाश्चौड्रद्रविडा काबोजा यवना शका ' 10,44) तथा महाभाष्य (दे० इडियन एटिक्वेरी 1875,

पृ० 244) आदि ग्रंथों में है।

शकुनिकाविहार=दे० अश्वबोधतीर्थ

शक्रपुरी=इंद्रप्रस्थ

शक्रावतार

अभिज्ञानशाकुंतल, अंक 5 के उल्लेख अनुसार हस्तिनापुर जाते समय शक्रावतार के अंतर्गत शचीतीर्थ में गंगा के स्रोत में शकुंतला की अंगूठी गिरकर खो गई थी—'नूनं ते शक्रावताराभ्यंतरे शचीतीर्थसलिले वंदमानाया प्रभ्रष्ट मंगुलीयकम्'। यह अंगूठी शक्रावतार के धीवर को एक मछली के उदर से प्राप्त हुई थी— 'शृणुत इदानीम अहं शक्रावतारवासी धीवर '-अंक 6। शचीतीर्थ में गंगा की विद्यमानता का उल्लेख इस प्रकार है—'शचीतीर्थवंदमानाया सख्यास्ते हस्तादंगगास्त्रोतसि परिभ्रष्टम'—अंक 6। हमारे मत में शक्रावतार का अभिज्ञान जिला मुजफ्फरनगर (उ० प्र०) में गंगातट पर स्थित शुक्करताल नामक स्थान से किया जा सकता है। शुक्करताल, शक्रावतार का ही अपभ्रंश जान पड़ता है। यह स्थान मालन नदी के निकट स्थित मंडावर (जिला बिजनौर) के सामने गंगा के दूसरी ओर स्थित है। मंडावर में कण्वाश्रम की स्थिति परंपरा से मानी जाती है। मंडावर से हस्तिनापुर (जिला मेरठ) जाते समय शुक्करताल, गंगा पार करने के पश्चात् दूसरे तट पर मिलता है और इस प्रकार कालिदास द्वारा वर्णित भौगोलिक परिस्थिति में यह अभिज्ञान ठीक बैठता है। शुक्करताल का संबंध शुकदेव से बताया जाता है और यह स्थान अवश्य ही बहुत प्राचीन है। बहुत संभव है कि शक्रावतार का शक्र ही शुक्कर बन गया है और इस शब्द का शुकदेव से कोई संबंध नहीं है। [दे० माडर्न रिव्यू नवम्बर 1951, में ग्रंथकर्ता का लेख 'टापोग्राफी ऑव अभिज्ञानशाकुंतल')। महाभारत, वन० 84, 29 में उल्लिखित शक्रावर्त भी यही स्थान जान पड़ता है।

शक्रावर्त

महाभारत वन० 84,29 में शक्रावर्त नामक तीर्थ का उल्लेख गंगाद्वार या हरद्वार के पश्चात् है—'सप्तगंगे त्रिगंगे च शक्रावर्ते च तर्पयन देवान पितृंश्च विधिवत् पुण्यलोके महीयते'। संभवतः शक्रावर्त कालिदास द्वारा अभिज्ञान शाकुंतल में वर्णित शक्रावतार ही है। वर्तमान शक्रावतार या शुक्करताल (जिला मुजफ्फरनगर, उ० प्र०) हरद्वार से दक्षिण में, गंगा तट पर स्थित है।

शतद्रु=शतद्रू

सतलज नदी (पंजाब) का प्राचीन नाम। ऋग्वेद के नदीसूक्त में इसे

शतुद्रि कहा गया है—'इम मे गंगे यमुने सरस्वती शुतुद्रि स्तोम सचता परुष्ण्या असिक्न्यामरुद्वृधे वितस्तयर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया—10,75,5 । वैदिक काल मे सरस्वती नदी शुतुद्रि मे ही मिलती थी (दे० मेकडानल्ड—हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर, पृ० 142) । परवर्ती साहित्य मे इसका प्रचलित नाम शतद्रु या शतद्रू (सौ शाखाओं वाली) है । वाल्मीकि रामायण मे केकय से अयोध्या आते समय भरत द्वारा शतद्रु के पार करने का वर्णन है—'ह्लादिनी दूरपारा च प्रत्यक स्रोतस्तरंगिणीम शतद्रुमतरच्छ्रीमा नदीमिक्ष्वाकुनन्दन' अयो० 71 2 अर्थात श्रीमान इक्ष्वाकुनन्दन भरत ने प्रसन्नता प्रदान करने वाली, चौड़े पाट वाली, और पश्चिम की ओर बहने वाली नदी शतद्रु पार की । महाभारत भीष्म० 9,15 मे पंजाब की अन्य नदियो के साथ ही शतद्रु का भी उल्लेख है—'शतद्रुं चन्द्रभागा च यमुना च महानदीम्, दृषद्वती विपाशा च विपापा स्थूलवालुकाम' । श्रीमदभागवत 5,18,18 मे इसका चन्द्रभागा तथा मरुदवृधा आदि के साथ उल्लेख है—'सुषोमा शतद्रश्चन्द्रभागामरुदवृधा वितस्ता ।' विष्णुपुराण 2,3,10 मे शतद्रु को हिमवान पर्वत मे निसृत कहा गया है—'शतद्रूचन्द्रभागाद्या हिमवत्पादनिर्गता' । वास्तव मे सतलज का स्रोत रावणह्रद नामक झील है जो मानसरोवर के पश्चिम मे है । वर्तमान समय मे सतलज बियास (विपाशा) मे मिलती है किंतु 'दि मिहरान ऑव सिंध एंड इट्स ट्रिब्यूटेरीज' के लेखक रेवर्टी का मत है कि 1790 ई० के पहले सतलज, बियास मे नही मिलती थी । इस वर्ष बियास और सतलज दोनो के मार्ग बदल गए और वे सन्निकट आकर मिल गईं (दे० विपाशा) । शतद्रु वैदिक शुतुद्रि का रूपांतर है तथा इसका अर्थ शत धाराओं वाली नदी किया जा सकता है जिससे इसकी अनेक उपनदियो का अस्तित्व इंगित होता है । ग्रीक लेखको ने सतलज को हेजीड्रस (Hesidrus) कहा है किंतु इनके ग्रंथो मे इस नदी का उल्लेख बहुत कम आया है क्योंकि अलक्षेंद्र की सेनाएं बियास नदी से ही वापस चली गई थी और उन्हें बियास के पूर्व मे स्थित देश की जानकारी बहुत थोड़ी हो सकी थी ।

शतमाला दे० कृतमाला

शतशृंग

हिमालय के उत्तर मे स्थित पर्वत जहां महाभारत के अनुसार महाराजा पांडु, माद्री और कुंती के साथ जाकर रहने लगे थे । यहीं पांचो पांडवो की देवताओ के आह्वान द्वारा उत्पत्ति हुई थी । शतशृंग तक पहुँचने मे पांडु को चैत्ररथ (कुबेर का वन जो अलका के निकट था) कालकूट और हिमालय को पार करने के बाद गंधमादन, इंद्रद्युम्न सर तथा हंसकूट के उत्तर मे जाना पड़ा

था—'स चैत्ररथमासाद्य कालकूटमतीत्य च हिमवन्तमतिक्रम्य प्रययौ गधमादनम। रक्ष्यमाणो महाभूतै सिद्धैश्च परमर्षिभि उवास स महाराज समेषु विषमेषु च। इन्द्रद्युम्नसर प्राप्य हसकूटमतीत्यच, शतशृगे महाराज तापस समतप्यत महा० आदि० 118 48 49 50। शतशृगनिवासियो का पाडु के पाचो पुत्रो से बडा प्रेम था —'मुद परमिका लेभे ननन्द च नराधिप ऋषीणामपि सर्वेषा शतशृग निवासिनाम्' आदि० 122 24। यही असयम के कारण और किसी ऋषि के शाप के फलस्वरूप पाडु की मृत्यु हुई थी और उनका अतिम सस्कार शतशृग निवासियो को ही करना पडा था—'अहृतस्तस्य कृत्यानि शतशृगनिवासिन, तापसा विधिवच्चक्रुश्चारणाऋषिभि सह' (महा० आदि० 124,31 से आग दाक्षिणात्य पाठ)। प्रसगानुसार यह पवत हिमालय की उत्तरी शृ खला म स्थित जान पडता है। यहा से हस्तिनापुर तक के माग को महाभारतकार ने बहुत लबा बताया है 'प्रपन्ना दीर्घमध्वान सक्षिप्त तदमन्यत' आदि० 125,8।

शत्रुजय (काठियावाड, गुजरात)

पालीताना के निकट पाच पहाडियो म सबसे अधिक पवित्र पहाडी, जिस पर जना क प्रख्यात मदिर स्थित है। जैन ग्रथ 'विविध तीथकल्प' म शत्रुजय के निम्न नाम दिए हैं—सिद्धिक्षेत्र, तीर्थराज, मरुदेव, भगीरथ, विमलाद्रि बाहुबली, सहस्रकमल, तालभज कदब, शतपत्र, नगाधिराज, अष्टोत्तरशतकूट, सहस्रपत्र, धणिक, लौहित्य, कपर्दिनिवास, सिद्धिशेखर, मुक्तिनिलय, सिद्धिपवत, पुडरीक। शत्रुजय के 5 शिखर (कूट) बताए गए हैं। ऋषभसन और 24 जैन तीर्थंकरो म स 23 (नेमिश्वर को छोडकर) इस पवत पर आए थे। महाराजा बाहुबली ने यहा मरुदेव के मदिर का निर्माण किया था। इस स्थान पर पाश्व और महावीर के मदिर स्थित थे। नीचे नेमिदेव का विशाल मदिर था। युगादिश के मदिर का जीर्णोद्धार मत्रीश्वर बाणभट्ट ने किया था। श्रेष्ठी जावडि ने पुडरीक और कपर्दी की मूर्तिया यहा के जैन चैत्य म प्रतिष्ठापित करके पुण्य प्राप्त किया था। अजित चत्य के निकट अनुपम सरोवर स्थित था। मरुदेवी के निकट महात्मा शाति का चैत्य था जिसके निकट सात चादी की खानें थी। यहा वास्तुपाल नामक मत्री ने आदि अहत ऋषभदेव और पुडरीक की मूर्तिया स्थापित की थी।

इस जन ग्रथ मे यह भी उल्लेख है कि पाचो पाडवो और उनकी माता कुती ने यहा आकर परमावस्था का प्राप्त किया था। एक अन्य प्रसिद्ध जन स्तोत्र 'तीथमाला चैत्यवदन' म शत्रुजय का अनेक तीर्थों की सूची मे सवप्रथम उल्लेख किया गया है— श्री शत्रुजयरैवताद्रिशिखरे द्वीपे भृगा पत्तने'। शत्रुजय की

पहाडी पालीताना से 1½ मील दूर और समुद्रतल से 2000 फुट ऊंची है। इसे जैन साहित्य मे सिद्धाचल भी कहा गया है। पर्वतशिखर पर 3 मील की कठिन चढाई के पश्चात् कई जैनमदिर दिखाई पडते हैं जो एक परकोटे के अदर बने है। इनमे आदिनाथ, कुमारपाल, विमलसाह और चतुमुख के नाम पर प्रसिद्ध मदिर प्रमुख है। ये मदिर मध्यकालीन जैन राजस्थानी वास्तुकला के सुदर उदाहरण हैं। कुछ मदिर 11वी शती ई० के हैं किंतु अधिकाश 1500 ई० के आसपास बने थे। इन मदिरो की समानता आबू स्थित दिलवाडा मदिरो से की जाती है। कहा जाता है कि मूलरूप मे ये मदिर दिलवाडा मदिरो की ही भाति अलकृत तथा सूक्ष्म शिल्प और नक्काशी के काम से युक्त थे किंतु मुसलमानो के आक्रमणो से नष्ट भ्रष्ट हो गए और बाद मे इनका जीर्णोद्वार न हो सका। फिर भी इन मदिरो की मूर्तिकारी इतनी सघन है कि एक बार तीर्थकरो की लगभग 6500 मूर्तियो की यहा गणना की गई थी।

शत्रुजया (सौराष्ट्र, गुजरात)

गोहिलवाड प्रात मे बहने वाली एक नदी जिसके निकट शत्रुजय (जैन तीर्थ) स्थित है। इस नदी को आजकल शत्रुजी कहते है।

शबरी आश्रम दे० सुरावनम, पपासर

शरदडा

वाल्मीकि रामायण, अयो० 68,16 मे उल्लिखित एक नदी जो अयोध्या के दूतो को केकय देश जाते समय मार्ग मे मिली थी—'तं प्रसन्नोदका दिव्या नाना विहग सेविताम उपातिजग्मुर्वेगेन शरदडा जलाकुलाम्। प्रसग से यह सतलज के पास बहने वाली कोई नदी जान पडती है। डा० मोतीचद के अनुसार यह वर्तमान सरहिंद नदी है। 'वेद धरातल' नामक ग्रथ के पृ० 646 मे पर यह मत प्रकट किया गया है कि यह नदी शरावती या रावी है। पराशरतत्र मे शरदड देश का उल्लेख है। इसके दक्षिण पश्चिम मे भूलिंग देश स्थित था।

शरभगाश्रम

जिला बादा (उ० प्र०) मे इलाहाबाद मानिकपुर रेल मार्ग के जैतवारा स्टेशन से लगभग 15 मील दूर वनप्रात मे स्थित शरभग के नाम से प्रसिद्ध स्थान को शरभगाश्रम कहा जाता है दे० ऊर्कश्वर। यहा श्रीराम का एक मदिर स्थित है। शरभगाश्रम का उल्लेख वाल्मीकि तथा कालिदास के अतिरिक्त तुलसीदास ने भी किया है, 'पुनि आए जहं मुनि सरभगा, सुदर अनुज जानकी सगा'। यह स्थान विराध वन के निकट ही स्थित था (दे० विराधकुड)। अध्यात्म० अरण्य० 2,1 मे इसका वर्णन इस प्रकार है—'विराधे

स्वगन रामा लक्ष्मणेन च सीतया जगाम रभगस्य वन सवसुखावहम्'। रामायण की कथा के प्रमग स इसकी अवस्थिति का ऊनकेश्वर की अपेक्षा जिला बादा म मानना अधिक समीचीन जान पडता है। (द० सुतीक्ष्णाश्रम)

शरवती=सरावती=रावी

शरवन द० श्रावस्ती

शरावती (मैसूर)

शरावती नदी जिला निमोगा मे स्थित अबुतीथ नामक स्थान से निस्सृत हुई है। कहा जाता है कि यह सरिता श्रीराम के बाण मारने से प्रगट हुई थी। प्रसिद्ध जाग प्रपात इसी नदी मे है। अमरकोश 1,10 34 मे शरावती का नामोल्लेख है—'शरावती वेनवती चान्द्रभाग सरस्वती'। महाभारत भीष्म० 9,20 म इसका पयाष्णी (ताप्ती), वेणा (पेन गगा) भीमरथी (भीमा) और कावेरी क साथ वणन है—'शरावती पयाष्णी च वेणा भीमरथीमपि, कावेरी चुलुका चापि वाणी शतबलामपि'। शरावती का झरना जोग प्रपात या जेरुसाप्पा शिमोगा से 62 मील दूर है। इस जगत्प्रसिद्ध झरने की ऊचाई 830 फुट है।

शर्करा

पाणिनि, 4 2,83 मे उल्लिखित है जो सभवत वतमान सक्खर है। सक्खर पश्चिमी पाकिस्तान का प्रसिद्ध नगर है जहा सिंध नदी का प्रख्यात बाध है।

शर्करावर्ती

श्रीमद्भागवत 5,19,18 म दी हुई नदियो की सूची म उल्लिखित है—'च द्रवसाताम्रपर्णीअवटोदाकृतमालावैहायसीकावेरीवेणीपयस्विनीशकरावर्तातुगभद्रा'। सदभ स यह दक्षिण भारत की नदी (सभवत शरावती) जान पडती है।

शर्मक

पाठातर शमक। 'शर्मकान्भर्मकाश्चैव व्यजयत् सा स्वपूवकम, वदेहक च राजान जनक जगतीपतिम्' महा०, सभा० 30,131 सदभ से शर्मक देश की स्थिति पूर्वी उत्तर-प्रदेश और मिथिला या विदेह क बीच के भूभाग के अतगत जान पडती है। (दे० भर्मक)

शमक=शर्मक

शर्मणावत्

ऋग्वेद, 1,84,14 तथा पाणिनि 4,2 86 मे उल्लिखित है। श्री वा० श० अग्रवाल के अनुसार यह थानेसर क निकट रामह्रद है।

शलातुर

प्राचीन उदभाड या वतमान ओहिंद (प० पाकिस्तान) से लगभग छ सात मील दूर उत्तर-पश्चिम की ओर बसा हुआ ग्राम जिसे संस्कृत के वैयाकरण पाणिनि का जन्मस्थान माना जाता है और जिसे अब लाहुर कहते है। इनका जन्म 7वी शती या 8वी शती ई० पूव मे हुआ था। इनकी माता का नाम दक्षी था। सिंध नदी ओहिंद क निकट बहती है। प्रसिद्ध चीनी यात्री युवानच्वांग ने 630 ई० क आसपास इस नगर को देखा था। उसने इस पोलोतूलु लिखा है। युवानच्वांग ने शलातुर क निकट भीमादेवी का मंदिर देखा था जो शिव मंदिर क निकट था। यहा भस्म रमाने वाले तीर्थिक नामक साधुओं का निवास था।

शल्यकषण

वाल्मीकि रामायण अयो० 71,3 म उल्लिखित नगर जो प्रसगानुसार शतद्रु या सतलज क पूर्वी तट पर स्थित जान पडता है—'एलधाने नदीं तीर्त्वा प्राप्य चापरपर्वतान्, शिलामाकुर्वन्तीं तीर्त्वाऽऽग्नेयशल्यकर्षणम्' (दे० ऐल्धान)।

शशिमती (सौराष्ट्र, गुजरात)

हालार प्रदेश म प्रवाहित होने वाली नदी जिसे अब ससोई कहते है। ससोई शशिमती का अपभ्रंश है।

शहबाजगढ़ी (जिला पशावर, प० पाकि०)

मरदान से नौ मील दूर इस स्थान पर मौर्य सम्राट् अशोक के मुख्य शिलालेख जिनकी संख्या 14 है एक चट्टान पर उत्कीर्ण है। इनकी लिपि खरोष्ठी है जो ब्राह्मी का उत्तर पश्चिमी रूप है। इन्ही अभिलेखो की एक प्रतिलिपि मानसहरा मे पाई गई है जिसकी लिपि भी खरोष्ठी है।

शांकरी

स्कंदपुराण क अनुसार नर्मदा का एक नाम। नर्मदा नदी क तट पर शिव से संबद्ध कई प्राचीन तीर्थ स्थित है इसीलिए इस शांकर की नदी कहा गया है।

शांडिल्य

जैन सूत्र 'प्रज्ञापणा' म इस जनपद का उल्लेख है तथा यहा नंदिपुर नामक नगर की अवस्थिति बताई गई है।

शांतहय

विष्णुपुराण 2 4,5 के अनुसार प्लक्षद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप क राजा मघातिथि क पुत्र शांतहय क नाम पर प्रसिद्ध है।

शांति

श्री न० ला० डे क अनुसार साँची का नाम है।

शाकभरी=साभर (राजस्थान)

शाकभरी देवी के नाम पर प्रसिद्ध स्थान। इसका उल्लेख महाभारत, वन पर्व के तीर्थयात्रा प्रसग मे है—'ततो गच्छेत् राजे द्र देव्या स्थान सुदुर्लभम, शाकम्भरीति विख्याता त्रिषु लोकेषु विश्रुता' वन० 84,13, । इसके पश्चात शाकभरी देवी के नाम का कारण इस प्रकार बताया गया है—'दिव्य वर्षसहस्र हि शाकेन किल सुव्रता, आहार सकृत्वती मासि मासि नराधिप, ऋषयोऽभ्यागता स्तत्र देव्या भक्त्या तपोधना , आतिथ्य च कृत तेषा शाकेन किल भारत तत शाकम्भरीत्येवनाम तस्या प्रतिष्ठितम' वन० 84,14-15-16। शाकभरी या वर्तमान साभर जिला जयपुर (राजस्थान) मे सीकर के निकट है। साभर-झील जो पास ही स्थित है शाकभरी देवी के नाम पर ही प्रसिद्ध है। यहा शाकभरी का प्राचीन मदिर भी है। 12वी शती के अतिम चरण मे साभर के प्रदेश म चौहानो का राज्य था। अर्णोराज्य चौहान यहा के प्रतापी राजा थे। इनकी रानी देवल्देवी गुजरात के राजा कुमारपाल की बहन थी। एक छोटी-सी बात पर रुष्ट होकर कुमारपाल ने अर्णोराज पर आक्रमण कर दिया जिसके परिणाम-स्वरूप अर्णोराज को कैद कर लिया गया। किंतु उनके मत्री उदयमहत्ता और देवलदेवी के प्रयत्न से वे छूट गए और अत मे शाकभरी नरेश ने अपनी कन्या मीनलकुमारी का विवाह कुमारपाल के साथ कर दिया।

शाकल=शाकल नगर=स्यालकोट (प० पाकि०)

विद्वानो का मत है कि शाकल नाम का सबध 'शक' से है। यह स्थान सभवत शको अथवा शकस्थान के निवासी ईरानियो के निवास के कारण शाकल कहलाता था। ईरानी मगो का सबध भी शाकल से बताया जाता है (दे० मगद्वीप)। महाभारत म शाकल का मद्र देश मे स्थित माना गया है। इस नगर मे मद्राधिप शल्य का राज्य था। इन्हे नकुल ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे विजित किया था—'स चास्यगतभी राजन प्रतिजग्राह शासनम्, तत शाकल-मभ्येत्य मद्राणा पुटभेदनम्, मातुल प्रीतिपूर्वेण शल्य चक्रेवशे बली' सभा० 32, 14-15। मिलिंदपन्हा मे यवनराज मिलिंद अथवा मिनेंडर (द्वितीय शती ई० पू०) की राजधानी सागल या शाकल म बताई गई है। अलक्षेंद्र (अलेग्जेंडर) के इतिहासलेखको ने भी इस स्थान को सागल या सागल कहा है। यूनानी लेखको ने सागल को कठजाति के वीरक्षत्रियो का मुख्य स्थान बताया है और उनके शौर्य की बहुत प्रशसा की है (दे० सागल)। चीनी यात्री युवानच्वाग (7वी शती) ने इस नगर को देखा था। उसने इसे शेकालो लिखा है और हूण नरेश मिहिर-कुल की यहा राजधानी बताई है। कनिंघम ने सागल का अभिज्ञान जिला

गुजरावाला (पंजाब) में स्थित सगला नामक पहाड़ी से किया है। स्मिथ के अनुसार यह स्थान ज़िला झंग में स्थित चिनोट या शाहकोट है किंतु अनेक प्रमाणों के बल पर फ्लीट ने यह सिद्ध किया है कि शाकल वास्तव में स्यालकोट ही है (दे० चतुर्दश ओरियंटल कांग्रेस 1905, एलजीयस, भारत विभाग पृ० 164)। महाभारत काल में शाकल निवासियों के आचार व्यवहार को दूषित समझा जाता था—'शाकलं नाम नगरमापगानाम निम्नगा, जर्तिकानाम वाहीकास्तेषां वृत्तं सुनिंदितम्' महा० कर्ण 44,10। इस उद्धरण से सूचित होता है कि महाभारत के समय में वाहीकों की राजधानी शाकल में थी तथा वहां जर्तिक (जाट) नामक वाहीकों का निवास था। शाकल के निकट आपगा नामक नदी बहती थी। शाकल को महाभारत में शाकलद्वीप भी कहा गया है। कर्ण० 44 7 से यह भी विदित होता है कि वाहीक देश पंजाब की पांच नदियों से तथा छठी सिंधु से घिरा हुआ था और इसका एक नाम आरट्ट भी था। कलिंगबोधि जातक तथा कुरुजातक में भी सागल (शाकल) का मद्रदेश के नगर के रूप में उल्लेख है। स्यालकोट के आसपास का प्रदेश तो गुरु गोविंदसिंह के समय तक (17वीं शती) तक मद्रदेश कहलाता था। (दे० मालकम—स्केच ऑव दि सिक्खस, पृ० 55) (दे० मद्र)। किंवदंती के अनुसार भक्त पूरनमल स्यालकोट के निवासी थे। इस स्थान पर वह कूप भी स्थित है जिसमें पूरनमल को हाथ पांव काट कर डाल दिया गया था। कूप के निकट ही गुरु गोरखनाथ का मंदिर है। शाकल या सागल को सागलनगर भी कहते हैं। एक प्राचीन किंवदंती के अनुसार शाकल को महाभारतकालीन राजा शाल्व ने बसाया था तथा राजा शालिवाहन ने इस नगर को दुबारा बसा कर यहां एक दुर्ग का निर्माण किया था।

शाक्य

शाक्य गणराज्य बुद्ध काल में तथा उसके पूर्व, उत्तर प्रदेश के पूर्वोत्तर भाग तथा नेपाल की तराई के भूभाग में स्थित था। कपिलवस्तु यहां की राजधानी थी। गौतम बुद्ध के पिता शुद्धोदन इसी राज्य के गणमुख्य थे। शाक्य देश के संबंध से ही शुद्धोदन का वंश शाक्य नाम से प्रसिद्ध था और बुद्ध को 'शाक्यसिंह' कहा जाता था। कहा जाता है कि शाक या सागौन के वृक्षों के आधिक्य के कारण इस देश का अभिधान शाक्य हुआ था—'शाकवृक्षप्रतिच्छन्नं वासं यस्माच्च चक्रिरे, तस्मादिक्ष्वाकुवंश्यास्तेभुवि शाक्या इति स्मृता (अश्वघोषकृत सौंदरानंद, 1,24)। भद्दसाल जातक से सूचित होता है कि शाक्य प्रदेश कोसल-राज के अधीन था।

शातकर्णिप्राश्रम दे० पचाप्सरस

शातकर्णिक दे० सेतकर्निक

शातवाहन राष्ट्र=सातहनिरटठ (प्राकृत)

यह पल्लवनरेश शिवस्कदवमन के हीरहदगल्ली अभिलेख म उल्लिखित है। यही शातवाहन-नरेश सिरि पुलुमावि के एक अभिलेख म शातवाहनीहार नाम से वर्णित है। डा० सुथकर के अनुसार शातवाहनीहार मे मसूर राज्य क बिलारी ज़िले का अधिकाश भाग सम्मिलित था। सभवत यही प्रदश दक्षिण के सातवाहन नरेशो (प्रथम शती ई०) का मूलस्थान था।

कुछ वष पूव 10वी शती ई० क एक मदिर क अवशेष इस स्थान से प्राप्त हुए थे। उत्खनन कलकत्ता विश्वविद्यालय के श्री निमल कुमार बोस तथा बल्लभविद्यानगर के श्री अमृतपडया ने किया था।

शारदा (उ० प्र०)

यह नदी नदादेवी-पवत से निकल कर, फैज़ाबाद के नीचे सरयू मे मिल जाती है।

शारीपुर (जिला आगरा, उ० प्र०)

वटेसर (वटेश्वर) से 1 मील पर जनो का तीथ है जिसे जन जनश्रुति म नेमिनाथ का जन्मस्थान कहा जाता है।

शाल

शक सवत 40=118 ई० का एक खरोष्ठी अभिलेख शकरदर्रा (जिला केंपबेलपुर, पाकि०)से प्राप्त हुआ था जिसमे शाल नामक ग्राम का उल्लेख है। यह शालातुर या शलातुर का सक्षिप्त रूप जान पडता है। शलातुर महर्षि पाणिनि का जन्मस्थान माना जाता है। यह अभिलेख लाहौर सग्रहालय में है। इसी की एक प्रतिलिपि रावल नामक ग्राम (जिला मथुरा, उ० प्र०) से प्राप्त हुई थी जिसे कोई यात्री मथुरा ले आया था। (दे० मथुरा म्यूजियम गाइड, पृ० 24)

शालातुर=शलातुर

शालिहुडम (जिला श्रीकाकुलम, आ० प्र०)

वशधारा नदी क दक्षिण तट पर [illegible] के निकट एक ग्राम। यहां पर प्रथम या द्वितीय शती ई० में निर्मित एक [illegible] बौद्धस्तूप के अवशेष [illegible] हुए थे। इस स्तूप की खोज [illegible] ने 1919 ई० में की। इसके पश्चात लांगहर्स्ट ने 1920-21 में [illegible] विभाग की [illegible] नियमित उत्खनन किया। यह [illegible] 400 फुट [illegible]

अशोक कालीन ब्राह्मीलिपि का एक अभिलेख मिला था। स्तूप के निकट ही नीची पहाड़ी पर बौद्धकालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। इनमें मुख्यतः महायान संप्रदाय से संबद्ध बोधिसत्व की सुंदर मूर्तियां हैं। इनमें मंजुश्री व अवलोकितेश्वर की प्रतिमाएं उल्लेखनीय हैं।

शाल्मल द्वीप

पौराणिक भूगोल की संकल्पना के अनुसार पृथ्वी के सप्तद्वीपों में से एक है—'जंबूप्लक्षाह्वयौ द्वीपौ शाल्मलश्चापरो द्विज, कुश क्रौंचस्तथा शाक पुष्कर-श्चैव सप्तम' विष्णु० 2,2,5। शाल्मल द्वीप के सात वर्ष—श्वेत, हरित, जीमूत, रोहित, वैद्युत, मानस और सुप्रभ माने गए हैं। इक्षुरस का समुद्र इसको परिवृत करता है('शाल्मलेन समुद्रोऽसौ द्वीपेनेक्षुरसोदकः', विष्णु० 2,4,24)। इसके सात पर्वत हैं—कुमुद, उन्नत, बलाहक, द्रोणाचल, कंक, महिष, कुकुद्मान् और सात ही नदियां जिनके नाम हैं—योनि, तोया, वितृष्णा, चंद्रा, मुक्ता, विमोचनी और निवृत्ति। इसमें कपिल, अरुण, पीत और कृष्ण वर्ण के लोग रहते हैं—('कपिलाश्चारुणा पीता कृष्णाश्चैव पृथक्-पृथक्' विष्णु० 2,4,30)। शाल्मलि के एक महान् वृक्ष के यहां स्थित होने के कारण इस महाद्वीप को शाल्मल कहा जाता है ('शाल्मलि सुमहान् वृक्षो नाम्ना निर्वृतिकारक विष्णु० 2,4,33)। शाल्मल को महाभारत भीष्म० 11,3 में शाल्मलि कहा गया है' 'शाल्मलि चैव तत्वज्ञ क्रौंचद्वीपं तथैव च'। श्री नंदलाल डे के अनुसार यह असीरिया या चाल्डिया है।

शाल्व

अलवर (राजस्थान) के परिवर्ती प्रदेश का प्राचीन नाम, जिसका महाभारत में उल्लेख है। शाल्वराज ने, काशिराज की सबसे बड़ी कन्या अंबा का, जो उससे विवाह करने की इच्छुक थी, भीष्म द्वारा हरण किए जाने पर उनसे साथ युद्ध किया था, जिसका वर्णन आदि० 102 में है। शाल्वराज के पास सौभ नामक एक अद्भुत नगराकार विमान था जिसकी सहायता से उसने श्रीकृष्ण की द्वारका पर आक्रमण किया था (महा० वन० 14 से 22 तक)। बुद्धचरित 9,70 में शाल्वाधिपति द्रुम का उल्लेख है— 'तथैव शाल्वाधिपतिर्द्रुमाख्यो वनात्-ससूनुर्नगरं विवेश'। महा० वन० 294,7 के अनुसार, सावित्री के श्वसुर द्युमत्सेन शाल्वदेश के राजा थे— 'आसीच्छाल्वेषु धर्मात्मा क्षत्रियः पृथिवी-पतिः द्युमत्सेन इतिख्यातः पश्चादन्धो बभूव ह'। अलवर का प्राचीन नाम शाल्वपुर कहा जाता है। संभव है, अलवर, शाल्वपुर का अपभ्रंश हो। शाल्व [illegible] विष्णुपुराण 2 3 17 में भी उल्लेख है— सौवीरा: सैंधवा[illegible]

शाल्वा कारालवासिन । महाभारत में शाल्व को मार्तिकावतक का राजा कहा है। इस देश की स्थिति अलवर के परिवर्ती प्रदेश में मानी जाती है। किंवदंती में प्राचीन शाकल या वर्तमान स्यालकोट से भी राजा शाल्व का संबंध बताया जाता है।

शाल्वपुर दे० शाल्व

शाष्ठी=सालसट (महाराष्ट्र)

बंबईनगरी के निकट एक टापू। बसीन के टापू के साथ ही इसका नाम भारत में अंग्रेजी राज्य के इतिहास में कई बार आता है। बाजीराव पेशवा ने वेलजली से सहायक संधि करते समय बसीन और सालसट अंग्रेजों को दे दिए थे।

शाहगढ़

(1) (उ० प्र०) लखनऊ-काठगोदाम रेल मार्ग पर एक स्टेशन है जिसके निकट प्राचीन खंडहर स्थित हैं। इस स्थान के परकोटे का घेरा तीन मील के लगभग है। किंवदंती के अनुसार इस नगर की नींव राजा वेन ने डाली थी। स्थान की प्राचीनता यहां पाई जाने वाली बड़ी बड़ी ईंटों से सूचित होती है। शाहगढ़ का नगर कुछ समय पहले तक बसा हुआ था जैसा कि नेपाल के वर्मा-नरेशों के सिक्कों से ज्ञात होता है।

(2) (जिला सुल्तानपुर, उ० प्र०) इस स्थान से बौद्धकालीन भग्नावशेष प्राप्त हुए हैं।

(3) (जिला सागर, म० प्र०) गढ़मंडल-नरेश राजा संग्रामसिंह (मृत्यु, 1541 ई०) के 52 किलों में से एक। ये रानी दुर्गावती के श्वसुर थे।

शाहजहांपुर (उ० प्र०)

इस नगर को शाहजहां के राज्यकाल में बहादुरखां और दिलेरखां ने 1647 ई० में बसाया था।

शाहजी की ढेरी (पाकि०)

पेशावर के लाहौरी दरवाजे के बाहर स्थित इस प्राचीन टीले के खंडहरों से मुख्यतः कनिष्क कालीन (द्वितीय शती ई०) बौद्ध अवशेष प्राप्त हुए हैं। इनमें कनिष्क के काष्ठनिर्मित बृहद् स्तूप के चिह्न उल्लेखनीय हैं। यहां बहुत समय तक एक बौद्धविद्यालय स्थित था। [illegible] ई० तक इस स्तूप के [illegible] में उल्लेख मिलते हैं। तब तक यह ठीक [illegible] बना हुआ था। [illegible] गजनवी ने उसका नाम [illegible] के लिए [illegible] दिया। शाहजी की ढेरी से [illegible] मूर्तिकला के उदाहरण भी मिले हैं।

शाहपुर

(1) (जिला पटना, बिहार) इस स्थान से (फ्लीट के मतानुसार) हर्षसंवत 66=672 73 ई० का अभिलेख एक प्रस्तर मूर्ति पर उत्कीर्ण पाया गया है। यह परवर्ती गुप्तनरेश आदित्यसेन के समय का है। इसमें बलाधिकृत सालपक्ष द्वारा नालंद ग्राम (नालंदा) में सूर्य की एक मूर्ति की स्थापना का उल्लेख है। जान पड़ता है कि यह मूर्ति मूल रूप से नालंदा में स्थापित की गई थी।

(2) (जिला गुलबर्गा, मैसूर) इस स्थान पर आदिलशाही सुलतानों के मकबरे और वारंगल-नरेशों के बनवाए हुए एक किले के खंडहर स्थित हैं। फारसी अभिलेखों से ज्ञात होता है कि वर्तमान किला बहमनी तथा आदिलशाही सुल्तानों ने बनवाया था। यह संभव है कि इस किले को आरंभ में वारंगल के हिंदू राजाओं ने बनवाया था और इसका जीर्णोद्धार मुसलमान बादशाहों द्वारा किया गया। पहाड़ी पर एक प्राचीन मंदिर और एक मसजिद है जो अब नष्ट-भ्रष्ट दशा में है। कुछ प्रागैतिहासिक अवशेष भी यहां से मिले हैं।

(3)=सागर

शाहाबाद (जिला हरदोई उ० प्र०)

शाहजहां के समकालीन नवाब दिलेरखां के मकबरे के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। शाहाबाद का रेल स्टेशन आंजी कहलाता है।

शिखावल

पाणिनि की अष्टाध्यायी 4,2 89 में उल्लिखित है। श्री वा० श० अग्रवाल के अनुसार यह रीवा (मध्य प्रदेश) में स्थित सिहावल नामक स्थान है।

शिखिवासस्

विष्णुपुराण 2 2,28 के अनुसार मेरु के पश्चिम में स्थित एक महान पर्वत (केसराचल)—'शिखिवासा सवैडूर्य कपिलो गंधमादन, जारुधि प्रमुखा स्तद्वत्पश्चिमे केसराचला'।

शिखी

विष्णुपुराण 2,4,11 में उल्लिखित प्लक्षद्वीप की एक नदी, 'अनुतप्ता शिखी चैव विपाशा त्रिदिवा क्लमा अमृता सुकृता चैव सप्तैतास्तत्र निम्नगा'।

शिप्रा=सिप्रा

उज्जयिनी के निकट बहने वाली नदी। यह चंबल की सहायक नदी है। मेघदूत (पूर्वमेघ 33) में इस नदी का उज्जयिनी के संबंध में उल्लेख है, 'दीर्घीकुर्वनपटुमदकलकूजित सारसाना, प्रत्यूषेषु स्फुटित कमलामोदमैत्री कषाय यत्र स्त्रीणा हरति सुरतग्लानिमंगानुकूल शिप्रावात प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकार'

अर्थात् अवन्ती में शिप्रा पवन सारसों की मदभरी कूक को बढ़ाता है, उष काल में खिले कमलों को सुगंध के स्पर्श से कसैला जान पड़ता है, स्त्रियों की सुरत-ग्लानि को हरने के कारण शरीर को आनंददायक प्रतीत होता है और प्रियतम के समान विनती करने में बड़ा कुशल है। रघुवंश 6,35 में भी कालिदास ने इंदुमती स्वयंवर के प्रसंग में शिप्रा की वायु का मनोहर वर्णन किया है, 'अनेन यूना सह पार्थिवेन रम्भोरु कच्चिन्मनसा रुचिस्ते, शिप्रातरंगानिलकम्पितासु-विहर्तु मुद्यानपरम्परासु'। इंदुमती की सखी सुनंदा अवंतिराज का परिचय कराने के पश्चात् उससे कहती है—'क्या तेरी रुचि इस अवंतिनाथ के साथ (उज्जयिनी के) उन उद्यानों में विहरण करने की है जो शिप्रातरंगों से स्पृष्ट पवन द्वारा कंपित होते रहते हैं'?

शिबि

पंजाब का एक जनपद—'शिबीस्त्रिगर्तानम्बष्ठान् मालवान् पंचकर्पटान्, तथा माध्यमिकाश्चैव वाटधानान् द्विजानथ' महा० सभा० 32,7 8। यहां शिबि का त्रिगर्त (जलंधर दोआब) के साथ वर्णन है। इस जनपद को नकुल ने पश्चिम दिशा की विजय के प्रसंग में जीता था। शिबिपुर (या शिवपुर) नामक नगर का उल्लेख पतंजलि के महाभाष्य, 4,2,2 में है। इसका अभिज्ञान वोगल ने जिला झंग पंजाब पाकिस्तान में स्थित शोरकोट नामक स्थान के साथ किया है (दे० एपिग्राफिका इंडिका, 1921 पृ० 16)। 'शोर' शिवपुर का अपभ्रंश जान पड़ता है। शिबिपुर का उल्लेख शोरकोट से प्राप्त एक अभिलेख में हुआ है। यह अभिलेख 83 गुप्त संवत=402 3 ई० का है और एक विशाल तांबे के कड़ाव पर उत्कीर्ण है जो यहां स्थित प्राचीन बौद्धविहार से प्राप्त हुआ था। यह लाहौर के संग्रहालय में सुरक्षित है। शोरकोट के इलाके का आइनेअकबरी में अबुलफजल ने शोर लिखा है। यह लगभग निश्चित ही समझना चाहिए कि शिबि जनपद की अवस्थिति इसी स्थान के परिवर्ती प्रदेश में थी और शिबिपुर इसका मुख्य नगर था। शिबियों (सिबोई) का उल्लेख अलक्षेंद्र के इतिहास-लेखकों ने भी किया है और लिखा है कि इनके पास चालीस सहस्र पैदल सेना थी, और ये लोग वन्य पशुओं की खाल के कपड़े पहनते थे। शिबि-नरेश द्वारा अपने राजकुमार वेस्संतर को देश निकाला दिए जाने की कथा का वेस्संतरजातक में वर्णन है। उम्मदंतिजातक में शिबिदेश के अरिट्ठपुर तथा वेस्संतरजातक में इस जनपद के जेतुत्तर नामक नगर का उल्लेख है। ऋग्वेद 7,18 7 में संभवतः शिवियों का ही शिव नाम से उल्लेख है—'आ पक्थासो भलानसो भनन्तालिनासो विषाणिनः शिवासः। आयोऽनयत्सधमा आर्यस्य गव्या-

तृत्सुभ्यो अजगन्नयुधानृन्' । महाभारत में शिवि देश के राजा उशीनर की कथा है । श्येन से कपोत के प्राण बचाने में तत्पर राजा श्येन से कहता है—'राष्ट्रं शिवीनामृद्धं वै ददानि तव खेचर' वन० 131 21 रायचौधरी (पृ० 205) के अनुसार उशीनरदेश (उत्तर पश्चिम उ० प्र०) पहले शिबियों का मूल स्थान रहा होगा। बाद में ये लोग पश्चिम की ओर जाकर बस गए होंगे । शिबियों की स्थिति का पता सिंध में मध्यमिका (राजस्थान के निकट) और कावेरी-तट (दशकुमारचरित) पर भी मिलता है ।

शिबिपुर दे० शिबि

शिरिनेत=सिरनेत

गढ़वाल अथवा श्रीनगर का निकटवर्ती प्रदेश । शायद सिरनेत या शिरिनेत श्रीनगर का ही अपभ्रंश है ।

शिरीषवस्तु=श्रीशवस्तु

शिरोवन (मैसूर)

यह श्रीरंगपट्टन से 40 मील पूर्व में तलकाड नामक स्थान है जहां प्राचीन चेर देश की राजधानी थी । यह स्थान कावेरी के बालू में दबा पड़ा है ।

शिला

वाल्मीकि रामायण 2,71 14 में वर्णित एक नदी— ऐलधाने नदीं तीर्त्वा प्राप्य चापरपर्वतान, शिलामाकुर्वतीं तीर्त्वा आग्नेयं शल्यकर्षणम्' । यह सतलज की सहायक नदी जान पड़ती है । (दे० ऐलधान)

शिव

विष्णु 2,4,5 के अनुसार प्लक्षद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा मेधातिथि के पुत्र के नाम पर प्रसिद्ध है ।

शिवगंगा (मद्रास)

पूना से बंगलौर जाने वाली रेल शाखा पर निदवदा स्टेशन के निकट स्थित है । यहां एक छोटा-सा प्राचीन दुर्ग है जो इस स्थान का उल्लेखनीय स्मारक है । इसका सिंहद्वार चापाकार है । यहां का मंदिर जो ग्रेनाइट (ग्रेनाइट) के चार स्तंभों पर आधृत था, 955 में चक्रवात से गिर गया था। तत्पश्चात पुरातत्त्व विभाग ने मूल शिखर के समान ही एक नया शिखर बनाकर मंदिर का जीर्णोद्धार किया था । मंदिर के प्रांगण में भगवान राम के चरण चिह्न अंकित हैं जिन्हें रामपद्म कहा जाता है ।

शिवनेर (महाराष्ट्र)

1627 ई० में जुन्नार के इस गिरिदुर्ग में जो पहले अहमदनगर राज्य के

अधीन था, महाराष्ट्र केसरी छत्रपति शिवाजी का जन्म हुआ था। शिवाजी के पितामह मालोजी को अहमदनगर के सुल्तान ने शिवनेर तथा चाकण के दुर्ग जागीर में दिए थे। इस स्थान पर बालक शिवाजी अधिक समय तक न रह सके थे और उनका पालन-पोषण पूना के निकट अपने पिता की जागीर में हुआ था।

शिवपुर

(1) दे० शिवि

(2) = अहिच्छत्र

शिवपुरी

(1) = उज्जयिनी (दे० अवंती)

(2) (जिला टोंक, राजस्थान) किसी अनभिज्ञात नगर के खंडहर इस स्थान पर मिले हैं।

शिवराजपुर (जिला फतहपुर, उ० प्र०)

इस स्थान से हाल ही में महत्वपूर्ण प्रागैतिहासिक अवशेष मिले हैं जो ताम्रयुगीन कहे जाते हैं। यहां कई प्राचीन मंदिर भी हैं और इस स्थान को तीर्थरूप में मान्यता प्राप्त है। यह स्थान चरणदासी संप्रदाय का केंद्र था। सौ वर्ष प्राचीन एक हस्तलिखित ग्रंथ से विदित होता है कि प्रसिद्ध भक्त कवियित्री मीराबाई इस स्थान पर आयी थी। इस ग्रंथ में शिवराजपुर का माहात्म्य वर्णित है। मीराबाई की स्मृति में गिरधर गोपाल का मंदिर बना हुआ है।

शिववल्लभपुर

गढ़मुक्तेश्वर का एक प्राचीन पौराणिक नाम जिसका उल्लेख स्कंद पुराण में है।

शिवसमुद्रम (मैसूर)

सोमनाथपुर से 17 मील दूर, कावेरी की दो शाखाओं के मध्य में छोटा-सा द्वीप नगर है। गगन चक्की और बराचक्की नामक दो झरने द्वीप के निकट प्रकृति की रम्य छटा उपस्थित करते हैं। शिव और विष्णु के दो विराटकाय और अन्य मंदिर इस स्थान के मुख्य स्मारक हैं।

शिवसागर (असम)

यह स्थान मुक्तिनाथ शिव मंदिर के लिए उल्लेखनीय है। अहोम वंशीय राजा शिवसिंह ने यह मंदिर बनवाया था।

शिवसिंहपुर (जिला दरभंगा, बिहार)

मैथिलकोकिल विद्यापति के संरक्षक नरेश शिवसिंह की राजधानी के

रूप में प्रसिद्ध यह कस्बा दरभंगा से 4 मील दक्षिण की ओर स्थित है।

शिवा

विष्णुपुराण 2,4,33 में उल्लिखित कुशद्वीप की एक नदी 'धूपतापा शिवाचैव पवित्रा सम्मतिस्तथा विद्युदम्भा मही चान्या सर्वपापहरास्त्विमा'।

शिवालय

कहा जाता है कि सिवालिक (हरद्वार देहरादून, उ० प्र०) की पहाड़ियों का वास्तविक प्राचीन नाम शिवालय है क्योंकि इन पर्वतों में शिवोपासना के अनेक तीर्थ स्थित हैं।

शिवालिक=सिवालिक

शिवाली=उडुपि

शिवि=शिबि

शिशिर

(1) विष्णुपुराण, 2,2 27 के अनुसार मेरुपर्वत के दक्षिण में स्थित एक पर्वत—'त्रिकूट शिशिरश्चैव पतंगो रुचकस्तथा

(2) विष्णु० 2,4,5 के अनुसार प्लक्ष द्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस द्वीप के राजा मेधातिथि के पुत्र शिशिर के नाम पर प्रसिद्ध है।

शिशुपालगढ़ (उड़ीसा)

कलिंग की प्रसिद्ध प्राचीन राजधानी। भुवनेश्वर के निकट इस प्राचीन नगर के ध्वसावशेष स्थित हैं। यहां 1949 ई० में विस्तृत उत्खनन किया गया था। इस नगर का संबंध महाभारत के शिशुपाल से नहीं जान पड़ता क्योंकि इस का अस्तित्वकाल तीसरी शती ई० पू० से चौथी शती ई० तक है। शिशुपालगढ़ से तीन मील दूर धौली नामक स्थान है जो अशोक के शिलालेख (कलिंग-अभिलेख) के लिए प्रख्यात है। इस अभिलेख में इस स्थान का नाम तोसलि कहा गया है। उस समय इस स्थान के आसपास एक विशाल नगर स्थित होगा जैसा कि खंडहरों तथा निकटस्थ ऐतिहासिक स्थलों से सिद्ध होता है। श्री ह० कृ० महताब के मत में केसरीवंशीय नरेश शिशुपालकेसरी के नाम पर ही शिशुपालगढ़ का नामकरण हुआ होगा (हिस्ट्री ऑव उड़ीसा, पृ० 66)। शिशुपालगढ़ से छः मील दूर खंडगिरि और उदयगिरि की पहाड़ियां हैं जहां दो प्रसिद्ध गुफाओं में ई० सन के पूर्व के अभिलेख प्राप्त हुए हैं। हाथीगुफा नामक गुफा में कलिंगराज खारवेल का और वकुटपुर गुफा में उसकी रानी का अभिलेख अंकित है। ये गुफाएं तीसरी शती ई० पू० में आजीवक साधुओं के रहने के लिए अशोक ने बनवाई थीं जैसा कि उसके अभिलेख से जान पड़ता है। खारवेल

के लेख मे इस स्थान का नाम कलिंग नगर दिया हुआ है।

शोट्ठमिट्ठनगर=सहेत महेत (श्रावस्ती)

दे० जैनस्ताम्र तीर्थ माला चैत्यवंदन—'विध्यस्य भवशोट्ठमीट्ठनगरे राजद्रह-श्रीनगे।'

शीताभ

विष्णुपुराण 2,2,26 मे उल्लिखित मेरु पर्वत के पश्चिम मे स्थित एक पर्वत—'शीताभश्च कुमुदश्च कुररीमाल्वास्तथा, वैंकप्रमुखा मेरो पूर्वत केसराचला'।

शीलकूट (लंका)

महावंश 13,18,20 मे इसे मिश्रक पर्वत का शिखर कहा गया है। यह वर्तमान मिहिंताल की पहाड़ी का उत्तरी शिखर है।

शीलभद्र विहार (जिला गया, बिहार)

कावाडोल की पहाडी। युवानच्वांग ने इसे देखा था।

शुंडिक

महाभारत के वर्णन के अनुसार अंग, वंग, कलिंग, और मिथिला के निकट स्थित जनपद जिसे महारथी कर्ण ने अपनी दिग्विजय यात्रा मे विजित किया था, 'अंगान् वंगान् कलिंगाश्च शुंडिकान् मिथिलानथ, मागधान् कर्कखंडाश्च निवेश्य विषयेऽऽत्मन'।

शुकुलिदेश

गुप्त अभिलेखों मे उल्लिखित एक 'देश'। गुप्तकाल मे 'देश' साम्राज्य का एक बडा विभाग था जिसके अंतर्गत विषय तथा भुक्तियां थी। (दे० राय चौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव एंशेंट इंडिया, पृ० 471) शुकुलिदेश का अभिज्ञान अनिश्चित है। संभव है इसकी स्थिति गुजरात मे भड़ौच के निकट रही हो जहां शुक्लतीर्थ है।

शुक्करताल दे० शक्रावतार

शुक्तिमती

(1) महाभारत काल मे चेदिदेश (बुंदेलखंड तथा जबलपुर का भूभाग) की राजधानी। इसे शुक्तिसाह्वय भी कहा गया है (महा० आश्वमेधिक० 83 2)। चेदिदेश का राजा शिशुपाल था जिसका वध श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ मे किया था। चेतियजातक मे वर्णित सोत्थिवती (नगरी) जिसे चेदि या चेतिराज्य की राजधानी कहा गया है शुक्तिमती का ही पाली रूप है। जान पड़ता है शुक्तिमती नदी के नाम पर ही नगरी का नाम भी प्रसिद्ध

हो गया था।

(2) शुक्तिमती नामक नदी (=केन) चेदिदेश की इसी नाम की राजधानी के पास बहती थी—'पुरोपवाहिनीं तस्य नदीं शुक्तिमतीं गिरः' महा० आदि० 63,35। इस नदी को चेदिराज उपरिचर की राजधानी के पास बहती हुई बताया गया है। पार्जिटर के अनुसार शुक्तिमती नदी बांदा (उ० प्र०) के निकट बहने वाली केन नदी है (जर्नल आव एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल, 1895, पृ० 255)। (दे० शुक्तिमान)

शुक्तिमान्

प्राचीन भारत के सप्तकुल पर्वतों में इसकी भी गणना है—'महेन्द्रो मलयः सह्यः शुक्तिमानृक्षपर्वतः, विंध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वताः' विष्णु० 2,3,3। महाभारत में इस पर्वत पर भीमसेन द्वारा विजय प्राप्त करने का वर्णन है—'एवं बहुविधान् देशान् विजित्ये भरतर्षभ, भल्लाटमभितो जिग्ये शुक्तिमंतं च पर्वतम्' सभा० 30,5। श्रीमद्भागवत 5,19,16 में भी इसका उल्लेख है—'विंध्यः शुक्तिमानृक्षगिरिः पारियात्रो द्रोणश्चित्रकूटो गोवर्धनो रैवतकः'—इस पर्वत का सतपुड़ा या महादेव पर्वत-माला से अभिज्ञान किया जा सकता है। विष्णु 2,3,14 में शुक्तिमान से उड़ीसा की ऋषिकुल्या नामक नदी का उद्भूत माना है—'ऋषिकुल्या कुमार्याद्याः शुक्तिमत्पादसंभवाः'—इस उल्लेख से विदित होता है कि यह पर्वत विंध्याचल के पूर्वी भाग का कोई पर्वत है जिससे निस्सृत होकर ऋषिकुल्या उड़ीसा में बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है। शुक्तिमान पर्वत का शुक्तिमती नाम की नदी और इसी नाम की नगरी से संबंध जान पड़ता है।

शुक्तिसाह्वय

'ततः स पुनरावर्त्य हयः कामचरो बली। आससाद पुरीं रम्यां चेदीनां शुक्तिसाह्वयाम्' महा० आश्वमेधिक० 83,2। [दे० शुक्तिमती (1)]

शुक्राचार्य आश्रम दे० देवयानी, कोपरगांव

शुक्लतीर्थ (महाराष्ट्र)

भड़ौंच से 10 मील पूर्व नर्मदा के उत्तरी तट पर प्राचीन तीर्थ है। यहां के अधिष्ठातृ देव शुक्लनारायण हैं। किंवदंती है कि चंद्रगुप्त मौर्य और चाणक्य शुक्लतीर्थ की यात्रा पर आए थे। यहां कवि, ओंकारेश्वर और शुक्र नामक पवित्र कुंड हैं। एक मील दूर मंगलेश्वर के सामने नर्मदा नदी के टापू में कबीर-वट नामक वटवृक्ष है जिसका संबंध संत कबीर से बताया जाता है।

सुतुद्रि=शतद्रु

सतलज नदी का ऋग्वैदिक नाम। परवर्ती साहित्य मे इसे शतद्रु कहा गया है। (दे० शतद्रु)

शुभ्रकूट (लका)

महावश 15,131 म वर्णित मडद्वीप या सिंहल देश का एक पर्वत जहा कश्यप बुद्ध बीस सहस्र अर्हतो के साथ आकाश मार्ग से आकर उतरे थे।

शुष्कक्षेत्र

कश्मीर के प्रसिद्ध इतिहास लेखक करहण के वर्णन से ज्ञात होता है कि मौर्य सम्राट अशोक ने अपनी कश्मीर यात्रा के समय, शुष्कक्षेत्र और वितस्तात्र नामक स्थानो पर अनेक स्तूपो का निर्माण करवाया था (राजतरंगिणी 1,102-106)। सभव है इसकी स्थिति वर्तमान श्रीनगर के पास रही हो [illegible] किंवदती मे श्रीनगर का बसाने वाला भी अशोक ही माना जाता है।

शूकरक्षेत्र=सारो (जिला बुलदशहर, उ० प्र०)

इसका पुराना नाम उकला भी है। कहा जाता है कि [illegible] वराह (=शूकर) अवतार इसी स्थान पर हुआ था। [illegible] है कि वराह अवतार की कथा की सृष्टि [illegible] विश्वासो के आधार पर हिंदू धर्म [illegible] ऐतिहासिक तथ्य है कि आक्रमणकारी हूणों के [illegible] गुप्तकाल म आए थे, यहा आकर [illegible] हिंदू [illegible] हो कर एक हो गए।

हास से सूचित होता है कि इसे सिकंदर लोदी ने नष्ट कर दिया था। नगर के उत्तर पश्चिम की ओर वराह का मंदिर है जिसमें वराह-लक्ष्मी की मूर्ति की पूजा आज भी होती है। पाली साहित्य में इसे सोरय्य कहा गया है। (दे० सोरों)

शूरसेन

उत्तरी भारत का प्रसिद्ध जनपद जिसकी राजधानी मथुरा में थी। इस प्रदेश का नाम संभवतः मधुरापुरी (मथुरा) के शासक, लवणासुर के वधोपरांत, शत्रुघ्न के अपने पुत्र शूरसेन के नाम पर रखा था। उन्होंने पुरानी मथुरा के स्थान पर नई नगरी बसाई थी जिसका वर्णन वाल्मीकि रामायण के उत्तर-कांड में है (दे० मथुरा)। शूरसेन जानपदीयों का नाम भी वाल्मीकि रामायण में आया है— तत्र म्लेच्छान् पुलिन्दांश्च शूरसेनांस्तथैव च, प्रस्थलान् भरतांश्चैव कुरूंश्च सह मद्रकैः किष्किंधा 43,11। वाल्मीकि रामा० उत्तर० 70 6 में मथुरा को शूरसेना कहा गया है, 'भविष्यति पुरी रम्या शूरसेना न संशय'। महाभारत में शूरसेन जनपद पर सहदेव की विजय का उल्लेख है— 'स शूरसेनान् कात्स्न्येन पूर्वमेवाजयत् प्रभु, मत्स्यराजं च कौरव्यो वशचक्रे बलाद् बली' सभा० 31,2। कालिदास ने रघुवंश 6,45 में शूरसेनाधिपति सुषेण का वर्णन किया है—'सा शूरसेनाधिपतिं सुषेणमुद्दिश्य लोकान्तरगीतकीर्तिम्, आचारशुद्धोभयवंशदीपं शुद्धान्तरक्ष्या जगदे कुमारी'। इसकी राजधानी मथुरा का उल्लेख कालिदास ने इसके आगे 6 48 में किया है। श्रीमद्भागवत में यदुराज शूरसेन का उल्लेख है जिसका राज्य शूरसेन-प्रदेश में कहा गया है। मथुरा उसकी राजधानी थी—'शूरसेनो यदुपतिर्मथुरामावसन् पुरीम्, माथुराञ्छूर-सेनांश्च विषयान् बुभुजे पुरा, राजधानी ततः साभूत् सर्वयादवभूभुजाम्, मथुरा भगवान् यत्र नित्यं सन्निहितो हरिः' 10,1,27 28। विष्णुपुराण में शूरसेन के निवासियों को ही संभवतः शूर कहा गया है और इनका आभीरों के साथ उल्लेख है —'तथापरान्ताः सौराष्ट्राः शूराभीरास्तथार्बुदाः' विष्णु० 2,3,16।

शूर्पारक=सोपारा

महाभारत शांति० 49,66 67 के अनुसार शूर्पारक देश को महर्षि परशुराम के लिए सागर ने रिक्त कर दिया था— ततः शूर्पारकं देशं सागरस्तस्य निर्ममे, सहसा जामदग्न्यस्य सोऽपरान्तमहीतलम्'। शूर्पारक वर्तमान सोपारा (बसीन तालुका, ज़िला थाना, बंबई) का तटवर्ती प्रदेश है और महाभारत के उपर्युक्त अवतरण से जान पड़ता है कि पहले यह भूभाग सागर के अंतर्गत था। यह अपरांत का ही एक भाग था। शूर्पारक पर सहदेव की विजय का वर्णन भी

महा० सभा० 31,65 म है, 'तत स रत्नमादाय पुन प्रायाद युधाम्पति तत शूर्पारक चैव तालाकटमथापि च'। वन० 188,8 म पाडवो की शूर्पारक यात्रा का उल्लेख है। अशोक के 14 मुख्य शिलालेखो म से केवल 8वा यहा एक शिला पर अकित है जिससे मौर्यकाल मे इस स्थान की महत्ता सूचित होती है। उस समय यह अपरान्त का समुद्रपत्तन(बदरगाह) रहा होगा। शूपारक (सुप्पारक)-जातक म *भरुकच्छ के व्यापारियो की दूर दूर के विचित्र समुद्रो की यात्रा करन* का रोमाचकारी वणन है (दे० अग्गिमालो नलमाली)। इस जातक स सूचित होता है कि शूर्पारक भृगुकच्छ प्रदश का बदरगाह था। इस जातक म भरुकच्छ के राजपुत्र का नाम सुप्पारककुमार कहा गया है। बुद्धचरित 21,22 म बुद्ध का शूर्पारक जाना वर्णित है।

शूरमगलम (जिला तजोर, मद्रास)

तजौर के निकट एक ग्राम जो दक्षिण भारत की विशिष्ट नृत्यशैली भरत-नाट्यम् क लिए प्राचीन समय म प्रसिद्ध था। यह ग्राम इस नृत्य का एक केद्र समझा जाता था। इस नृत्य क अन्य केद्र मेलात्तर तथा उथूकाडू थे।

श्रृगऋषि (जिला मुगर, बिहार)

मुगर से 20 मील दक्षिण पश्चिम की ओर एक पहाडी। रामायण म प्रसिद्ध श्रृग मुनि क नाम पर यह प्रसिद्ध है। यहा शिवरात्रि को मेला लगता है। 1766 ई० म यहा पर रहन वाले अग्रेजी सैनिको मे गदर हो गया था जो श्वत गदर (White mutiny) के नाम से मशहूर है। दे० ऋषिकुड

श्रृगगिरि

दे० श्रृगरी (2)

श्रृगभरी (मैसूर)

कई विद्वानो के मत मे श्री शकराचाय का ज मस्थान यही ग्राम था जो कर्नाटक प्रदेश म तुगभद्रा नदी के तट पर स्थित है किंतु अधिकाश लोगो का मत है कि शकर का ज म उडुपि नामक स्थान मे हुआ था।

श्रृगवान्

पौराणिक भूगाल क अनुसार मेरु के उत्तर की ओर एक पवत श्रेणी जो पूव पश्चिम की ओर समुद्र तक विस्तृत है। श्रृगवान को विष्णु० 2,2,10 म *श्रृगी कहा गया है—'नील श्वेतश्च श्रृगी च उत्तरे वषपवता'*। महाभारत क अनुसार श्रृगवान के तीन शिखर हैं एक मणिमय, दूसरा सुवणमय और तीसरा सवरत्नमय। वहा स्वयप्रभा दवी नित्य निवास करती हैं। श्रृगवान के उत्तर-समुद्र के निकट ऐरावतवप है जहा सूय तापरहित है। वहा के मनुष्य कभी

बूढ़े नहीं होते—'शृंगाणि च विचित्राणि श्रीण्यव मनुजाधिप, एक मणिमय तत्र तथैक रौक्ममद्भुतम्, सवरत्नमय चैव रत्नैर्दवशाभितम। तत्र स्वय प्रभादवी नित्य वसति शाडिली, उत्तरेणतु शृगस्य समुद्रान्त जनाधिप। वरमरावत नाम तस्माच्छृगमत परम, न तत्र सूयस्तपति न जीयन्त च मानवा' भीष्म० 8,8 9 10 11। जैन ग्रथ जबूद्वीप प्रज्ञप्ति म शृगवान की जबूद्वीप क 6 उप पवनो मे गणना की गई है।

शृगवेरपुर

रामायण मे वर्णित वह स्थान है जहा वन जाते समय श्रीराम, लक्ष्मण और सीता एक रात्रि के लिए ठहरे थ। इसका अभिज्ञान सिंगरौर (जिला इलाहाबाद उ० प्र०) से किया गया है। यह स्थान गगा तीर पर स्थित था त था यहीं रामचद्रजी की भेंट गुह निषाद से हुई थी—'समुद्रमहिषी गगा सारसक्रौंच-नादिताम, आससाद महाबाहु शृगवेरपुर प्रति। तत्रराजा गुहो नाम रामस्या-त्मसम सखा, निषादजात्यो बलवान स्थपतिश्चेति विश्रुत' वाल्मीकि० राम० अयो० 50 26 33। यही उन्होंने नौका द्वारा गगा को पार किया था और अपने सारथी सुमत को वापस अयोध्या भेज दिया था। भरत भी जब राम से मिलने चित्रकूट गए थे तो वे शृगवेरपुर आए थे—'ते गत्वा दूरमध्वान रथ यानाश्वकुजरै समासेदुस्ततो गगा शृगवरपुर प्रति' अयो० 83,19। अध्यात्मरामायण अयो० 5 60 म भी श्रीराम का शृगवेरपुर म गगा के तट पर पहुचना वर्णित है—'गगातीर समागच्छच्छृगवेराविदूरत गगा दृष्ट्वा नमस्कृत्य स्नात्वा सान द-मानस'। यहा श्रीराम शीशम के वृक्ष के नीचे बैठे थ—'शिशपावृक्षमूले स निषसाद रघूत्तम'—अध्यात्म० अयो० 5 61। भरत का शृगवरपुर पहुचना, अध्यात्म रामायण म इस प्रकार वर्णित है—'शृगवरपुर गत्वा गगाकूल समन्तत उवास महती सेना शत्रुघ्नपरिणोदिता' अयो० 8,14। कालिदास न रघुवश मे निषादाधिपति गुह के पुर (शृगवेरपुर) म श्रीराम क मुकुट उतार कर जटाए बनाने तथा यह देखकर सुमत के रो पडने के दृश्य का मार्मिक वणन किया है—'पुर निषादाधिपतरिद तद्यस्मि मया मौलिमणि विहाय, जटासु बद्धास्वरुदत्सुमत्र कैकेयिकामा फलितास्तवेति' रघु० 13,59। भवभूति न उत्तररामचरित 1,21 म राम से अपने जीवनचरित सबधी चित्रो के वणन के प्रसग म शृगवेरपुर का वणन इस प्रकार कराया है—'इगुदीपादप साय शृगवरपुरे पुरा, निषाद पतिना यत्र स्निग्धनासीत्समागम'। तुलसीदास ने भी रामचरितमानस, अयोध्याकाड मे सिंगरौर या शृगवेरपुर का इन्हीं प्रसगो मे उल्लेख किया है—'सीता सचिव सहित दोउ भाई, शृगवेरपुर पहुचे जाई,' 'अनुज सहित

सिर जटा बनाए, देखि सुमन्त्र नयन जल छाए,' 'केवट कीन्ह बहुत सेवकाई, सो जामिनि सिंगरौर गवाई,' 'सई तीर बसि चले बिहान, शृंगबेरपुर सब नियराने,' 'शृंगबेरपुर भरत दीख जब, भे सनेह वश अंग विकल सब'। महाभारत में शृंगबेरपुर का तीर्थरूप में उल्लेख है—'ततो गच्छेत राजेन्द्र शृंगवेरपुरं महत् यत्र तीर्णो महाराज रामो दाशरथिः पुरा' महा० वन० 85,65।

वर्तमान सिंगरौर (जान पड़ता है तुलसीदास को शृंगवेरपुर का सिंगरौर होना पता था जैसा 'सो' जामिनि सिंगरौर गवाई' से प्रमाणित होता है) अयोध्या (उ० प्र०) से 80 मील है। यह कस्बा गंगा के उत्तरी तट पर एक छोटी पहाड़ी पर बसा हुआ है। प्रयाग से यह स्थान 22 मील उत्तर पश्चिम की ओर है। उस स्थान को जहां राम लक्ष्मण सीता ने रात्रि व्यतीत की थी रामचौरा कहते हैं। घाट के पास दो सुंदर शीशम के वृक्ष खड़े हैं, लोग कहते हैं ये उसी महाभाग वृक्ष की संतान हैं जिसके नीचे श्रीराम ने सीता और लक्ष्मण के समेत रात्रि व्यतीत की थी (तुलसी ने इसी संबंध में लिखा है—'तब निषाद पति उर अनुमाना, तरु शिंशपा मनोहर जाना, लै रघुनाथहिं ठांव दिखावा, कहेउ राम सब भांति सुहावा', 'जहं शिंशपा पुनीत तरु रघुवर किय विश्राम, अति सनेह सादर भरत कीन्ह दंड प्रनाम'। वाल्मीकि० अयो० 50, 28 में इस वृक्ष का इंगुदी (हिंगोट) कहा गया है—'सुमहानिंगुदीवृक्षो वसामोऽत्रैव सारथे'। भवभूति ने भी (दे० ऊपर) इसे इंगुदी ही कहा है। अध्यात्मरामायण तथा रामचरितमानस में इस वृक्ष को शीशम लिखा है। शृंगवेरपुर में गंगा को पार करके रामचंद्रजी उस स्थान पर उतरे थे जहां लोकश्रुति के अनुसार आजकल कुरई नामक ग्राम स्थित है। कहा जाता है कि इस स्थान पर शृंगी ऋषि का आश्रम था जिनसे राजा दशरथ की कन्या शांता ब्याही थी। शांता के नाम पर प्रसिद्ध एक मंदिर भी यहां स्थित है। यहां एक छोटा सा राममंदिर बना है। शृंगबेरपुर के आगे चलकर श्रीरामचंद्रजी प्रयाग पहुंचे थे।

शृंगी=शृंगवान

शृंगेरी

(1) (ज़िला कदूर, मैसूर) बिरूर स्टेशन से 60 मील दूर तुंगनदी के वामतट पर छोटा सा ग्राम है। इसका नाम यहां से 9 मील दूर शृंगगिरिपर्वत के नाम पर ही शृंगगिरि पड़ा था जिसका अपभ्रंश शृंगेरी है। कहा जाता है यहां शृंगी ऋषि का जन्म हुआ था। एक छोटी पहाड़ी पर शृंगी के पिता विभांडक का आश्रम स्थित बताया जाता है। 8वीं शती इस में स्थान पर महान् दार्शनिक शंकराचार्य ने अपने चार पीठों में से एक स्थापित किया

था। चार पीठ नासिक, शृंगरी, पुरी, तथा द्वारका म स्थित है। (शृंगीऋषि से सबधित स्थानो के लिए दे० ऋषिकुंड ऋषितीर्थ, शृंगऋषि)

(2) शृंगरी के निकट स्थित पर्वत। इसे वराह पवत भी कहते हैं। यहा से तुगा, भद्रा, नेत्रवती, और वाराही नामक चार नदिया निकलती हैं।

शेखावटी (राजस्थान)

जयपुर जिल का वह भाग जिसम सीकर का ठिकाना सम्मिलित है। कहा जाता है कि इस इलाके का सरदार राव शेखाजी ने बसाया था जिनक नाम पर ही यह प्रसिद्ध है।

शेरगढ़

(1) दे० सीहो

(2) (उ० प्र०) शेरशाह क नाम पर बसाया हुआ यह कस्बा लखनऊ काठगोदाम रलमार्ग के देवरानिया स्टेशन से 7 मील दूर स्थित है। यहा पहले शेरशाह का बनवाया हुआ एक दुग भी था जो लगभग 1540 मे निर्मित हुआ था। अब इस प्राचीन नगर के खडहर यहा के निकटवर्ती चार ग्रामो म विस्तृत हैं। (दे० कबर)

शेरीसाजी = प्रतापुर

शेषाचल दे० वेंकटाचल

शैरीषक

महाभारत सभा० 32, 6 म वर्णित स्थान जिसे नकुल ने अपनी पश्चिम दिशा की दिग्विजय यात्रा म जीता था—'शैरीषक महोत्थं च वशे चक्रे महा द्युति, आक्रोश चैव राजर्षि तेन युद्धमभून्महत्।' शैरीषक का अभिज्ञान वतमान सिरसा से किया जाता है। इसस पहले सभा० 32, 4 मे रोहीतक या वतमान रोहतक का उल्लेख है। सिरसा, दिल्ली के निकट स्थित है।

शेरीस

वतमान सेरया (जिला अहमदाबाद, गुजरात)। जैन स्तोत्र तीर्थमाला चैत्यवदन म इसका नामोल्लेख इस प्रकार है—'जीरापल्लिफलर्द्धिपारकनगे शैरीसशखेश्वर।'

शैल

राजगृह की प्राचीन सात पहाडियो म से एक का वतमान नाम। महा भारत सभा० 21, दाक्षिणात्य पाठ मे शायद इसे ही शिलोच्चय कहा है। (दे० राजगृह)

शैलोदा

वाल्मीकि रामायण मे इस नदी का उल्लेख उत्तरकुरु के सबध म है—'त तु दशमतिक्रम्य शलोदानाम निम्नगा, उभयास्तीरयोस्तस्या कीचवा नाम वेणव किष्किधा० 43 37 । महाभारत सभा० 28, दाक्षिणात्य पाठ म भी इसका वणन है, 'मेरुमदरयोमध्ये शैलोदामभितो नदीम, य ते कीचकवेणूना छाया रम्यामुपासत । खशान्झखाश्चनद्योतान प्रघसानदीघवेणिकान् पशुपाश्च कुलिदाश्च तगणान परतगणान ।' यह नदी मेरु और मदराचल पवतो के मध्य मे स्थित कही गई है और उसके दोनो तटो पर कीचक नाम के बासो के वन बताए गए है । वाल्मीकि ने भी इसके तट पर कीचक वृक्षो का वणन किया है (दे० ऊपर)। कीचक चीनी भाषा का शब्द कहा जाता है। नदी के तट पर खश, प्रघस कुलिद, तगण, परतगण आदि लोगो का निवास बताया गया है । ये लोग युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ मे 'पिपीलक सुवण' लाए थे—'तद् वै पिपीलिक नाम उद्धृत यत् पिपीलिकैं जातरूप द्रोणमेयमहापु पुजशो नृपा' सभा० 52, 4 । पिपीलक-सुवण के बारे म किवदती का उल्लेख मेगस्थनीज (चद्रगुप्त मौय की सभा के यवनदूत) ने भी किया है । यह किवदती प्राचीन व्यापारिक जगत म तिब्बती सुवण के बारे मे प्रचलित थी । श्री० वा० श० अग्रवाल ने शलोदा नदी का अभिज्ञान वतमान खोतन नदी स किया है । इस नदी के तट पर आज भी यशव या अश्मसार की खान है जिसे शायद प्राचीन काल मे सुवण कहा जाता था । खोतन नदी पश्चिमी चीन तथा रूस की सीमा के निकट बहती है।

शवालगिरि=रामटेक

शोण=महाशोणा=हिरण्यवाह

यह वतमान सोन नदी है जो पटना के निकट गगा म मिलती है। यह नदी नमदा के उद्गम से चार पाच मील दूर गोडवाना पवत श्रेणी (शोण भद्र) से निकलती है और प्राय 600 मील का माग तय करके गगा म गिर जाती है । महाकवि बाणभट्ट ने हषचरित (प्रथम उच्छ्वास) मे अपना जन्म-स्थान शोण तथा गगा के सगम के निकट प्रीतिकूट नाम ग्राम बताया है । अपनी पूवजा पौराणिक देवी सरस्वती के मत्यलोक मे अवतीण होने के स्थान को शोण के निकट वर्णित करते हुए बाण ने शोण को दडकारण्य और विध्य से उद्गत नदी माना है और उसका उद्भव चद्रपवत बताया है। इसी चद्र का पर्याय सोम है और यही नमदा का उदभव है क्योकि साहित्य म नमदा को सोमोद्भवा कहा गया है । यह अमरकटक की एक श्रेणी है । शोण का उल्लेख सभवत शोणा के रूप मे, महा० भीष्म० 9,29 मे है —'कौशिकी निम्नगा शोणा बाहु-

दामथ चद्रमाम्'। कालिदास ने रघुवंश में शोण और भागीरथी के संगम का उपमारूप में वर्णन किया है जो मगध की राजधानी पाटलिपुत्र के निकट होने के कारण प्रख्यात रहा होगा—'तस्या स रक्षार्थमनल्पयोधमादिश्य पित्र्य सचिव कुमार, प्रत्यग्रहीत्पार्थिववाहिनी ता भागीरथीशोणइवोत्तरंग' रघु० 7,36, अर्थात अज इंदुमती की रक्षार्थ अपने पिता के सचिव को नियुक्त करके उसी प्रकार अपने (प्रतिद्वंद्वी) राजाओं की सेना पर टूट पड़ा जिस प्रकार गंगा पर उत्ताल तरंगों वाला शोण। मेगस्थनीज ने, जो चंद्रगुप्त मौर्य की सभा में रहने वाला यवन दूत था, पाटलिपुत्र या पटने को गंगा तथा इरानोबोआस (Erano-baos) के संगम पर स्थित बताया है। इरानोबोआस हिरण्यवाह (शोण का एक नाम) का ही ग्रीक उच्चारण है। शोण को महाशोण या महाशोणा नाम से भी अभिहित किया जाता था। 'गडकीञ्च महाशोणा सदानीरा तथैव च' महा० सभा० 20,27। श्रीमद्भागवत में शोण का सिंधु के साथ उल्लेख है—'सिंधुरध शोणश्च नदो महानदी'—शोण शब्द का अर्थ गहरा लाल रंग है जो इस नदी के जल का विशेषण हो सकता है।

शोणप्रस्थ दे० सोनपत

शोणभद्र

शोणनदी का उद्गम (दे० शोण)। हर्षचरित उच्छ्वास 1,में बाण ने शोण के उदगम को चंद्रनवत कहा है।

शोणितपुर

(1) प्राचीन किंवदंती के अनुसार महाभारत में ऊषा अनिरुद्ध उपाख्यान के संबंध में वर्णित ऊषा के पिता बाणासुर की राजधानी। कहा जाता है कि कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध ने ऊषा का हरण इसी स्थान पर किया था और यहीं उनका बाणासुर से युद्ध हुआ था। महा० सभा० 38 में बाणासुर को शोणितपुर का राजा कहा गया है—'तस्माल्लब्ध्वा वरान बाणो दुर्लभान् स सुरैरपि, स शोणितपुरे राज्य चकाराप्रतिमो बली'। इस पुरी का वर्णन इसी अध्याय में (दाक्षिणात्यपाठ) इस प्रकार है—'अथासाद्य महाराज तत्पुरी दम्गुदच त, ताम्र-प्राकार सवीतां रूप्यद्वारैश्च शोभिताम्, हेमप्रासाद सम्बाधा मुक्तामणिविचित्रिताम उद्यानवनसम्पन्ना नृत्तगीतैश्च शोभिताम्। तोरण पक्षिभि कीर्णा पुष्करिण्या च शोभिताम ता पुरी स्वर्गसकाशा हृष्टपुष्ट जनाकुलाम'। विष्णु पुराण 5,33,11 में भी बाणासुर की राजधानी शोणितपुर में बताई गई है—'त शोणितपुरे नीत श्रुत्वा विद्याविदग्धया'। शोणितपुर का अभिज्ञान कुछ विद्वानों ने असम की वर्तमान राजधानी गौहाटी से किया है। इसको प्राग्ज्योतिषपुर

भी कहा जाता था। श्रीमदभागवत 10,62,4 मे ऊपा अनिरुद्ध की कथा के प्रसग म शोणितपुर को वाणासुर का राजधानी बताया गया है 'शोणिताख्य पुरे रम्ये स राज्यमकरोत पुरा, तस्य शभा प्रसादेन किंकरा इव तऽमरा'। ऊपा की सखी सोते हुए अनिरुद्ध को द्वारका से योग क्रिया द्वारा उड़ाकर शाणितपुर ले आई थी 'तत्र सुप्त सुपर्यके प्राद्युम्नि योगमास्थिता गृहीत्वा शोणितपुर सख्यै प्रियमदशयत श्रीमदभागवत 10 62,23।

(2) = सोजत

(3) (महाराष्ट्र) इटारसी से 30 मील दूर सोहागपुर रेल स्टेशन के निकट स्थित है। स्थानीय जनश्रुति म इस स्थान का वाणासुर की राजधानी बताया जाता है (दे० शोणितपुर 1)। नमदा नदी ग्राम के निकट बहती है।

शोरकोट (जिला झग मधियाना, पाकि०)

प्राचीन शिबिराष्ट्र की स्थिति शोरकोट के निकट ही कही जाती है। शोर कोट के इलाके को अबुलफजल ने आइनअकबरी मे शोर कहा है। शोर शिबिपुर का अपभ्रंश जान पडता है।

शोरापुर (जिला गुलबर्गा, मैसूर)

प्राचीन समय में यहा स्थित दुग बदेर नरेश सनकस ने बनवाया था किंतु उसका अब कोई चिह्न नही है। वतमान किले के एक प्रवेशद्वार पर औरगजेब का 1116 हिजरी का एक अभिलेख है। नगर म शोरापुर के राजा के महल हैं। उत्तर की ओर एक टीले पर टेलर मजिल नामक कनल मीडोज टेलर का निवास स्थान है। टेलर ने अपनी प्रख्यात पुस्तक 'कन्फेशंस आव ए ठग' और माई लाइफ' मे 19वी शती के पूर्वार्ध क भारत की अव्यवस्थापूर्ण दशा का सुदर चित्रण किया है। कृष्णा नदी के तट पर मनोरम झरनो के निकट छाया भगवती का मदिर है। यहा दूर दूर से प्राकृतिक सौदय के पुजारी आते हैं।

शोलापुर (मैसूर)

नगर के दक्षिण म एक झील के बीच म सिद्धेश्वर का मदिर है। एक मील दूर एक प्राचीन किले के अवशेष है।

शोरिपुर दे० सौरीपुर

शौयपुर

जन उत्तराध्ययन सूत्र मे वसुदेव को यहा का राजा बताया गया है। रोहिणी और देविकी इसकी रानिया थी और राम और केशव इनके पुत्र। स्पष्ट ही है कि यह कहानी श्रीकृष्ण की कथा का जनरूप है। यह नगर शूरसेन या मथुरा ही जान पडता है।

श्याम

विष्णुपुराण 2,4 62 मे उल्लिखित शाकद्वीप का एक पवत—'पूवस्तत्रा दयगिरिजलाधारस्तथापर तथा रैवतक श्यामस्तथैवास्तगिरिर्द्विज।'

श्यामप्रयाग (जिला गढवाल, उ० प्र०)

उत्तराखड का सुदर नीथ। यहा दो नदियो का सगम, पहाडो से घिरा होने के कारण श्यामवण दिखाई पडता है।

श्येनी दे० केन

श्योराजपुर (जिला कानपुर, उ० प्र०)

इस स्थान से हाल ही मे उत्तरप्रदेश की सवप्राचीन मूर्तिकला के उदाहरण मिले हैं। ये ताम्रनिर्मित मानवाकृतिया हैं जो ताम्रपाषाणयुगीन (लगभग 3000 वष प्राचीन) हैं। ताम्रपाषाणयुग सिंधु घाटी सभ्यता का समकालीन माना जाता है। नई खोजो से सिद्ध होता है कि सिंधु घाटी सभ्यता केवल सिंध-पजाब तक ही सीमित नहीं थी, किंतु उसका प्रसार समस्त उत्तर भारत, राजस्थान और गुजरात तक था। उत्तर प्रदेश म इसके अवशेष बहादुराबाद (हरद्वार के निकट) म भी मिले है।

श्रमणगिरि

(1) (बिहार) राजगृह के निकट पाच पवतो म परिगणित ऋषिगिरि का एक नाम। यहा बौद्धकाल मे श्रमणो का निवास होने के कारण इस पहाडी को श्रमणगिरि कहते थे। स्वणगिरि इसी का उच्चारणभेद है।

(2)=सोनागिरि(मध्य प्रदेश)। ग्वालियर झासी रेल माग पर सोनागिरि स्टेशन के निकट छोटी पहाडी है जहा प्राचीन काल मे अनेक जैन मुनिया या श्रमणो का निवास स्थान था। पहाडी के शिखर पर 77 तथा इसके नीचे 17 जैन मदिर आज भी अवस्थित हैं। ये मध्ययुगीन बुदेलखड की वास्तुकला के उदाहरण हैं। इस पहाडी को सिद्ध क्षेत्र कहा जाता है।

श्रमणबेलगोला=श्रवणबेलगोला (मसूर)

चद्रगिरि तथा इद्रगिरि नामक पहाडियो के मध्य मे स्थित यह ऐतिहासिक स्थान प्राचीन काल मे जैन धम व सस्कृति का महान केंद्र था। यहा का ससार प्रसिद्ध स्मारक गोम्मटेश्वर की विराट 57 फुट ऊची मूर्ति है जो एक ही पत्थर से काट कर इस स्थान पर बनवाई गई है। यह गग नरेशो (लगभग 1000 ई०) की कीर्ति की अचल पताका है। जैन किंवदती के अनुसार सम्राट चद्रगुप्त मौय वृद्धावस्था म राजपाट त्याग कर दक्षिण भारत चले आए थे और जन धम म दीक्षित होकर इसी स्थान (चद्रगिरि) पर रहने लगे थे। उपयुक्त दोनो

हो पहाडियो पर प्राचीन ऐतिहासिक अवशेष बिखरे पडे हैं। बडी पहाडी इद्रगिरि पर ही गोम्मटेश्वर की मूर्ति स्थित है। यह पहाडी 470 फुट ऊची है। पहाडी के नीचे कल्याणी नामक झील है जिसे धवलसरोवर भी कहते थे। बेलगोल कन्नड का शब्द है जिसका अर्थ धवलसरोवर है। यहा से प्राय 500 सीढियो पर चढकर पहाडी की चोटी पर पहुचा जा सकता है। गोम्मटेश्वर की मूर्ति मध्ययुगीन मूर्तिकला का अप्रतिम उदाहरण है। फुर्ग्युसन के मत मे मिस्र देश को छोडकर ससार मे अन्यत्र इस प्रकार की विशाल मूर्ति नही बनाई गई। इसका निर्माण 983 ई० मे गगनरेश रचमल्ल के प्रधान मत्री चामुडराय ने करवाया था। कहा जाता है कि मूर्ति उदारहृदय बाहुबली (ऋषभदेव के पुत्र) की है जिन्होने अपने बडे भाई भरत के साथ हुए घोर सघर्ष के पश्चात् जीता हुआ राज्य उन्ही को लौटा दिया था। इस प्रकार इस मूर्ति मे शक्ति तथा साधुत्व और बल तथा औदार्य की उदात्त भावनाओ का अपूर्व सगम प्रदर्शित किया गया है। इस मूर्ति का अभिषेक विशेष पर्वों पर होता है। इस विषय का सर्वप्रथम उल्लेख 1398 ई० का मिलता है। इस मूर्ति का सुदर वर्णन 1180 ई० मे बोप्पदेव कवि द्वारा रचित एक कन्नड शिलालेख मे है। श्रवण-बेलगोल मे प्राप्त दो स्तभलेखों मे पश्चिमी गग राजवश के प्रसिद्ध राजा नोलबातक, मारसिंह, (975 ई०) और जैन प्रचारक मल्लीषेण (1129 ई०) के विषय मे सूचना प्राप्त होती है। एक अन्य अभिलेख मे प्रथम विजयनगर-नरेश बुक्काराय का उल्लेख है, जिसने वैष्णवो तथा जैनो के पारस्परिक विरोधो को मिटाने की चेष्टा की थी और दोनो सप्रदायो को समान अधिकार दिए थे।

श्रावस्ती

बौद्ध काल की परम समृद्धिशाली नगरी और कोसल जनपद की राजधानी श्रावस्ती के खडहर जिला गोंडा (उ० प्र०) मे सहेत महेत नामक ग्राम के निकट स्थित है। यह स्थान बलरामपुर रेलस्टेशन से 7 मील दक्षिण-पश्चिम मे पक्की सडक पर स्थित है। श्रावस्ती राप्ती नदी के तट पर बसी हुई थी। वाल्मीकि रामायण उत्तर० 107, 17 मे वर्णन है कि रामचद्रजी ने (दक्षिण-) कोसल का अपने पुत्र कुश को और उत्तर कोसल का लव को राजा बनाया था—'कोसलेषुकुश वीरमुत्तरेषुतथा लवम्, अभिषिच्य महात्मानावुभौराम कुशीलवौ'। उत्तर० 108 5 के अनुसार लव की राजधानी श्रावस्ती मे थी, 'श्रावस्तीति पुरीरम्या श्राविता च लवस्यह अयोध्या विजना कृत्वा राघवोभरतस्तथा अर्थात् मधुपुरी मे शत्रुघ्न को सूचना मिली कि लव के लिए श्रावस्ती नामक नगरी

राम ने बसाई है और अयोध्या को जनहीन करके (उन्होंने स्वर्ग जाने का विचार किया है)। इस वर्णन से प्रतीत होता है कि श्रीराम के स्वर्गारोहण के पश्चात अयोध्या उजड़ गई थी और कोसल की नई राजधानी श्रावस्ती में बनाई गई थी। बौद्धकाल में श्रावस्ती के पश्चात अयोध्या का उपनगर साकेत, कोसल का दूसरा प्रमुख स्थान था। कालिदास ने रघुवंश में लव को शरावती नामक नगरी का राजा बनाया जाना लिखा है—'स निवेश्य कुशावत्यां रिपुनागांकुशं कुशम्, शरावत्यां सतां सूक्तैर्जनिताश्रुलवं लवम्, रघु० 15, 97। इस उल्लेख में शरावती, निश्चय रूप से श्रावस्ती का ही उच्चारण-भेद है। श्रावस्ती की स्थापना पुराणों के अनुसार, श्रवस्त नाम के सूर्यवंशी राजा ने की थी (दे० 'युग युग में उत्तर प्रदेश' पृ० 40)। लव ने यहां कोसल की नई राजधानी बनाई और श्रावस्ती धीरे धीरे उत्तर कोसल की वैभवशालिनी नगरी बन गई।

सहेत महेत के खंडहरों से जान पड़ता है कि इस नगर का आकार अर्धचंद्राकार था। गौतम बुद्ध के समय यहां कोसल नरेश प्रसेनजित की राजधानी थी। बुद्ध के जीवन से संबंधित अनेक स्थलों के खंडहर यहां उत्खनन द्वारा प्रकाश में लाए गये हैं। इन स्थलों का पाली ग्रंथों के अतिरिक्त चीनी-यात्री फाह्यान और युवानच्वांग ने भी उल्लेख किया है। इनमें प्रसेनजित के मंत्री सुदत्त के तथा क्रूर दस्यु अंगुलीमाल (जो बाद में बुद्ध के प्रवचनों से प्रभावित होकर उनके धर्म में दीक्षित हो गया था) के नाम से प्रसिद्ध स्तूपों के तथा जेतवन बिहार के खंडहर मुख्य हैं। जेतवन विहार को सुदत्त या अनाथपिंडक ने बुद्ध के जीवनकाल ही में बनवाया था। सुदत्त ने इस उपवन की भूमि को राजकुमार जेत से, उस पर स्वर्ण मुद्राएं बिछाकर, खरीदा था और फिर इस उपवन को बुद्ध को दान कर दिया था। जेत ने इन स्वर्ण मुद्राओं को प्राप्त कर इस धन से श्रावस्ती में सात तलों का एक प्रासाद बनवाया था जो चंदन, छत्र और तोरणों से सुसज्जित था। इसमें चारों ओर फूल ही फूल बिखरे रहते थे और इतना अधिक प्रकाश किया जाता था कि रात भी दिन ही प्रतीत होती थी। फाह्यान लिखता है कि एक दिन एक मूषक एक दीपक की बत्ती को उठा कर इधर उधर दौड़ने लगा जिससे इस महल में आग लग गई और यह सत मंजिला भवन जलकर राख हो गया। बौद्धों के विश्वास के अनुसार इस दुर्घटना का कारण वास्तव में जेत की लालची मनोवृत्ति ही थी जिसके वशीभूत होकर उसने बुद्ध के निवास स्थान के लिए भूमि देने में आनाकानी की थी और उसके लिए इतना अधिक धन मांगा था। जेतवन के खंडहरों में बुद्ध के निवासगृह गंधकुटी तथा कोसंबकुटी नामक दो विहारों के अवशेष देखे जा सकते हैं। बुद्ध श्रावस्ती

मे नौ वर्ष रहे थे और यहां रहते हुए उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण प्रवचन दिए थे। सहेत महेत के दक्षिण पश्चिम की ओर जेतवन विहार से आधा मील दूर सोमनाथ नाम का एक ऊंचा दूह (स्तूप) है। जेतवन से एक मील दक्षिण-पूर्व मे एक दूसरा टीला है जिसे ओराझार कहा जाता है। यह वही स्थान है जहां मिगार श्रेष्ठी की पुत्रवधू विशाखा ने अपार धन राशि व्यय करके पूर्वराम नामक विहार बनवाया था। बौद्ध और जैन साहित्य मे श्रावस्ती को सावत्थी या सावित्थपुर कहा गया है। महापरिनिब्बान सुत्त (दे० सक्रेड बुक्स आव दी ईस्ट, पृ० 99) मे श्रावस्ती और साकेत की गणना भारत के प्रमुख सात नगरो मे की गई है। जैन ग्रंथ 'उपासकदशा' मे श्रावस्ती की शरवन नामक बस्ती या सन्निवेश का उल्लेख है जहां आजीवक संप्रदाय के मुख्य उपदेष्टा गोसाल मखलिपुत्र का जन्म हुआ था। जैन ग्रंथ विविधतीर्थकल्प मे श्रावस्ती का जैनतीर्थ के रूप मे वर्णन किया गया है। श्री संभवनाथ की मूर्ति से विभूषित एक चैत्य यहां था जिसके द्वार पर एक रक्ताशोक दिखाई देता था। एक बौद्ध मंदिर भी यहां स्थित था जहां देवताओ के सामने घोडो की बलि दी जाती थी। इसी स्थान पर भगवान संभवस्वामी का कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ था। श्री महावीर स्वामी ने एक बार वर्षाकाल यहां व्यतीत किया था और अनेक प्रकार की तपस्याएं की थी। महाराज जितशत्रु का पुत्र भद्र भी यहां आकर साधु हो गया था और तत्पश्चात् उसे परम ज्ञान प्राप्त हुआ था।

जैन साहित्य मे श्रावस्ती को चंद्रपुरी और चंद्रिकापुरी भी कहा गया है क्योंकि इसे तीर्थंकर चंद्रप्रभानाथ की जन्मभूमि माना गया है। तीर्थंकर संभवनाथ की भी यही जन्मभूमि है। कल्पसूत्र के एक उल्लेख से सूचित होता है कि अंतिम तीर्थंकर महावीर ने मखलिपुत्र गोसाल से श्रावस्ती मे, संबंध विच्छेद होने के बाद, सर्वप्रथम भेंट की थी। महावीर यहां कई बार आए थे।

चीनी यात्री फाह्यान और युवानच्वांग ने श्रावस्ती का विस्तृत वर्णन किया है। फाह्यान के समय (5 वीं शती का पूर्वार्ध) मे श्रावस्ती उजाड हो चली थी और यहां केवल दो सौ कुटुंब निवास करते थे। फाह्यान लिखता है कि यहां बुद्ध के समय प्रसेनजित् का राज्य था और तथागत से संबंधित स्मारक अनेक स्थलो पर बने हुए थे। उसने सुदत्त के विहार का भी वर्णन किया है और इसके मुख्य द्वार के दोनो ओर दो स्तंभो की स्थिति बताई है जो संभवतः अशोक के बनवाए हुए थे। इनके शीर्ष पर वृषभ तथा चक्र की प्रतिमाएं जटित थी। फाह्यान को देखकर और उसे चीन से आया जान श्रावस्ती के निवासी विस्मित हुए थे क्योंकि उससे पहले उनके नगर मे चीन से कभी कोई नही आया था।

फाह्यान ने श्रावस्ती में 98 विहार देखे थे। युवानच्वांग के समय (7 वीं शती के पूर्वार्ध) में तो यह नगरी सर्वथा ही खंडहरों के रूप में परिणत हो गई थी और उसने केवल एक ही बौद्ध विहार को वहां स्थित पाया था। वास्तव में गुप्तकाल में उत्तर-पूर्व भारत के बौद्ध धर्म के सभी प्राचीन केंद्र अव्यवस्थित तथा उजाड़ हो गए थे।

जैन जनश्रुति से तथा महेत महेत के खंडहरों के अवशेषों से विदित होता है कि श्रावस्ती में जैनों का पर्याप्त समय तक प्रभाव रहा था। यहां कई प्राचीन जैन मंदिरों के खंडहर मिले हैं। श्रावस्तीभुक्ति नामक भुक्ति का नामोल्लेख गुप्त अभिलेखों से प्राप्त होता है। गुप्तकाल में इसकी स्थिति श्रावस्तीनगरी के परिवर्ती प्रदेश में ज़िला गोंडा के आसपास रही होगी।

श्रीकंठ

हर्षचरित में उल्लिखित जनपद, जहां प्रभाकरवर्धन (हर्ष का पिता) की राजधानी स्थाण्वीश्वर या स्थानेश्वर (=थानेसर) स्थित थी। इसका विस्तार पूर्वी पंजाब, पश्चिमी उत्तरप्रदेश तथा दिल्ली राज्य के कुछ भाग में था। हर्षचरित, तृतीय उच्छ्वास, में इस जनपद की समृद्धि तथा वैभव का काव्यात्मक वर्णन किया गया है। बाण ने इस देश में ईख, धान तथा गेहूं की खेती का उल्लेख भी किया है, इसके अतिरिक्त तरह तरह के द्राक्षा तथा दाड़िम के उद्यान यहां की शोभा बढ़ाते थे। वहां के गांवों की धरती बेलों के निकुंजों से श्यामल दीखती थी। पद-पद पर ऊंटों के झुंड थे। सहस्रों कृष्ण मृगों से वह देश चित्र-विचित्र लगता था। (दे० हर्षचरित, हिंदी अनुवाद, सूर्यनारायण चौधरी, पृ० 119)।

श्रीक्षेत्र

(1) (बर्मा) दक्षिण ब्रह्मदेश में एक प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक राज्य जिसका अभिज्ञान प्रोम के निकट स्थित हमाजा (Hmauza) से किया गया है। इसकी स्थापना प्यूस (Pyus) लोगों ने की थी जो हिंदू धर्म के अनुयायी थे। चीनी यात्री युवानच्वांग के अनुसार श्रीक्षेत्र राज्य पूर्वी भारत की सीमा के बाहर प्रथम विशाल हिंदू राज्य था। यहां से प्राप्त प्यूस अभिलेखों से विदित होता है कि इस राज्य की समृद्धि का युग तीसरी शती ई० से सातवीं शती ई० तक था। नवीं शती के पश्चात श्रीक्षेत्र राज्य की पूर्ण अवनति हो गई थी।

(2)=पुरी (उड़ीसा)

श्रीदेव=सीतेप (थाईलैंड)

स्याम या थाईलैंड का प्राचीन भारतीय औपनिवेशिक नगर। तृतीय चतुर्थ

दाता ई० की अनेक भारतीय कलाकृतियां यहां उत्खनन द्वारा प्रकाश में लाई गई हैं। इनमें यक्षिणी की एक सुंदर मूर्ति भी है जिसमें भारत की गुप्तकालीन कला की पूरी पूरी झलक दिखाई पड़ती है। श्रीदेव का अभिज्ञान वर्तमान सोतेप से किया गया है। सीतर श्रादेव का ही अपभ्रंश है।

श्रीनग=श्रीशैल (श्रीपर्वत)

जैन तीर्थ के रूप में इसका उल्लेख तीर्थमालाचैत्यवंदन में है—'विंध्य स्थमन गोटठमीटठ नगरे राजग्रह श्रीनग।'

श्रीनगर

(1) (जिला गढ़वाल, उ० प्र०) गढ़वाल की प्राचीन राजधानी। यह नगर गंगा के तट पर स्थित है। 1894 ई० में बिरही नदी की बाढ़ में यह नगर बह गया था। नए वर्तमान श्रीनगर को 1895 ई० में पॉ नामक अंग्रेज ने प्राचीन नगर के निकट ही बसाया था। श्रीनगर के आस पास कई प्राचीन मंदिर हैं।

(2) (कश्मीर) झेलम के तट पर स्थित कश्मीर की राजधानी जिसकी नींव, कल्हणरचित राजतरंगिणी, 1,5,104 (स्टाइन का अनुवाद) के अनुसार मौर्य-सम्राट अशोक ने डाली थी। उसने कश्मीर की यात्रा 245 ई० पू० में की थी। इस तथ्य को देखते हुए श्रीनगर लगभग 2200 वर्ष प्राचीन नगर ठहरता है। अशोक का बसाया हुआ नगर वर्तमान श्रीनगर से प्रायः 3 मील उत्तर में बसा हुआ था। प्राचीन नगर की स्थिति को आजकल पांडरेथान अथवा प्राचीन स्थान कहा जाता है। महाराज ललितादित्य यहां का प्रख्यात हिंदू राजा था। इसका शासनकाल 700 ई० के लगभग था। इसने श्रीनगर की श्रीवृद्धि की तथा कश्मीर के राज्य का दूर दूर तक विस्तार भी किया। इसने झेलम पर कई पुल बंधवाए तथा नहरें बनवाई। श्रीनगर में हिंदू नरेशों के समय के अनेक प्राचीन मंदिर थे जिन्हें मुसलमानों के शासनकाल मे नष्ट-भ्रष्ट करके उनके स्थान पर दरगाहें तथा मसजिदें इत्यादि बना ली गई थीं। झेलम के तीसरे पुल पर महाराज नरेंद्र द्वितीय का 180 ई० के लगभग बनवाया हुआ नरेंद्र-स्वामी का मंदिर था। यह नरपीर की जियारतगाह के रूप में परिणत कर दिया गया था। चौथे पुल के निकट नदी के दक्षिणी तट पर पांच शिखरों वाला मंदिर महाश्रीमंदिर नाम से विख्यात था, इसे महाराज प्रवरसेन द्वितीय ने अपार धन राशि व्यय कर निर्मित करवाया था। 1404 ई० में कश्मीर के शासक शाह सिकंदर की बेगम की मृत्यु होने पर उसे इस मंदिर के आंगन में दफना दिया गया और उसी समय से यह विशाल मंदिर मकबरा बन गया। कश्मीर का प्रसिद्ध सुलतान जैनुल्आबदीन, जिसे कश्मीर का अकबर कहा जाता

है, इसी मंदिर के प्रांगण में दफनाया गया था। यह स्थान मज़ारशाही के नाम से प्रसिद्ध हुआ। कहा जाता है कि नदी के छठे पुल के समीप, दक्षिणी तट पर महाराज युधिष्ठिर के मंत्री स्कंदगुप्त द्वारा बनवाया एक अन्य मंदिर था। इस पीर बाबू को जियारतगाह के रूप में परिणत कर दिया गया। 684 693 ई० में महाराज चंद्रापीड द्वारा बनवाया हुआ त्रिभुवन स्वामी का मंदिर भी समीप ही स्थित था। इस पर टागा बाबा नामक एक पीर ने अधिकार करके इसे दरगाह का रूप दे दिया। सुलतान सिकंदर ने 1404 ई० में जामा मसजिद बनाने के लिए महाराज तारापीड़ द्वारा 693 697 में निर्मित एक प्रसिद्ध मंदिर तोड़ डाला और उसकी सारी सामग्री मसजिद में लगा दी। 1623 ई० के लगभग बेगम नूरजहां ने, जब वह जहांगीर के साथ कश्मीर आई, सुलेमान पर्वत के ऊपर बना हुआ शंकराचार्य का मंदिर देखा और इसकी पैड़ियां में लगे हुए बहुमूल्य पत्थर के टुकड़ों को उखड़वाकर उन्हें अपनी बनवाई हुई मसजिद में लगवा दिया। केवल शंकराचार्य का मंदिर ही अब श्रीनगर का प्राचीन हिंदू स्मारक कहा जा सकता है। किंवदंती के अनुसार इस मंदिर की स्थापना दक्षिण के प्रसिद्ध दार्शनिक शंकराचार्य ने 8वीं शती ई० में की थी। जहांगीर तथा शाहजहां के समय के शालामार तथा निशात नामक सुंदर उद्यान, तथा इसी काल की कई मसजिदें श्रीनगर के प्रमुख ऐतिहासिक स्मारक हैं। कहा जाता है निशातबाग नूरजहां के भाई आसफखां का बनवाया हुआ था। शालीमार का निर्माण जहांगीर और उसकी प्रिय बेगम नूरजहां ने किया था। मुगलों ने कश्मीर में 700 बाग लगवाए थे।

(3) दे० बिलग्राम

श्रीनिवास दे० नवासा

श्रीपर्वत दे० नागार्जुनीकोंड

श्रीपाद दे० मुमनकूट

श्रीपुर

(1) दे० बयाना

(2) यह वर्तमान सिरपुर या सीरपुर (जिला रायपुर, म० प्र०) है जो रायपुर से 40 मील दूर महानदी के तट पर स्थित है। ऐतिहासिक जनश्रुति से विदित होता है कि भद्रावती के सोमवंशी पांडव नरेशों ने भद्रावती को छोड़कर श्रीपुर बसाया था। ये राजा पहले बौद्ध थे किंतु पीछे शैवमत के अनुयायी बन गए। श्रीपुर में गुप्तकाल में तथा परवर्ती काल में बहुतसमय तक दक्षिण कोसल अथवा महाकोसल की राजधानी रही। इस स्थान पर ईंटों के बने गुप्त-

कालीन मंदिरों के अवशेष हैं जो सोमवंश के नरेशों के अभिलेखों (एपिग्राफिका इंडिका जिल्द 11, पृ० 184 197) से 8वीं शती के सिद्ध होते हैं। ये परौली और भीतरगांव के गुप्तकालीन मंदिरों की परंपरा में हैं। श्री कुमारस्वामी ने भूल से इन मंदिरों को छठी शती का मान लिया था (ए हिस्ट्री ऑव आर्ट इन इंडिया एंड इंडोनीसिया)। 1954 ई० के उत्खनन में भी यहां उत्तर गुप्तकालीन मंदिर के अवशेष मिले हैं। यहां की उत्तर गुप्तकालीन कला की विशेषता जानने के लिए विशाल लक्ष्मण मंदिर का वर्णन पर्याप्त होगा—इसका तोरण 6'×6' है जिस पर अनेक प्रकार की सुंदर नक्काशी की गई है। इसके ऊपर शेषशायी विष्णु की सुंदर प्रतिमा अवस्थित है। विष्णु की नाभि से उद्भूत कमल पर ब्रह्मा आसीन हैं और विष्णु के चरणों में लक्ष्मी स्थित है। पास ही वाद्य ग्रहण किए हुए गंधर्व प्रदर्शित हैं। तोरण लाल पत्थर का बना है। मंदिर के गर्भगृह में लक्ष्मण की मूर्ति है। यह 26 ×16 है। इसकी कटि में मेखला, गले में यज्ञोपवीत, कानों में कुंडल और मस्तक पर जटाजूट शोभित हैं। यह मूर्ति एक पांच फनों वाले सर्प पर आसीन है जो शेषनाग का प्रतीक है। मंदिर मुख्यत ईंटों से निर्मित है किंतु उस पर जो शिल्प प्रदर्शित है उससे यह तथ्य बहुत आश्चर्यजनक जान पड़ता है क्योंकि ऐसी सूक्ष्म नक्काशी तो पत्थर पर भी कठिनाई से की जा सकती है। शिखर तथा स्तंभों पर जो बारीक काम है वह भारतीय शिल्पकला का अद्भुत उदाहरण है। गुप्तकालीन भित्ति-गवाक्ष इस मंदिर की विशेषता है। मंदिर की ईंटें 18 ×8 हैं। इन पर जो सुकुमार तथा सूक्ष्म नक्काशी है वह भारत भर में बेजोड़ है। ईंटों के मंदिर गुप्तकाल में वास्तु में बहुत सामान्य थे। लक्ष्मण देवालय के निकट ही राम मंदिर है किंतु यह अब खंडहर हो गया है। सिरपुर का एक अन्य मंदिर गंधेश्वर महादेव का है जो महानदी के तट पर स्थित है। इसके दो स्तंभों पर अभिलेख उत्कीर्ण हैं। कहा जाता है चिमनाजी भोंसले ने इस मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया था एवं इसकी व्यवस्था के लिए जागीर नियत कर दी थी। यह मंदिर वास्तव में सिरपुर के अवशेषों की सामग्री से ही बना प्रतीत होता है। सिरपुर से बौद्धकालीन अनेक मूर्तियां भी मिली हैं जिनमें तारा की मूर्ति सर्वांगसुंदर है। श्रीपुर का तीवरदेव के राजिम-ताम्रपट्ट लेख में उल्लेख है (दे० राजिम)। 14वीं शती के प्रारंभ में, यह नगर वारंगल के काकतीय नरेशों के राज्य की सीमा पर स्थित था। 1310 ई० में अलाउद्दीन खिल्जी के सेनापति मलिक काफ़ूर ने वारंगल की ओर कूच करते समय श्रीपुर पर भी धावा किया था जिसका वृत्तांत अमीर खुसरो ने लिखा है। श्रीपुर को उस समय सीरपुर कहा जाता था।

श्रीपरंबुदूर (मद्रास)

मद्रास से 26 मील दूर श्रीरामानुजाचार्य के जन्मस्थान के रूप में प्रख्यात है। यहां इनका भाष्यकारस्वामी के नाम से प्रसिद्ध मंदिर स्थित है जिसके सामने सौ स्तंभों का मंडप है। यह रामानुज के जन्मस्थल का निर्देशक समझा जाता है। मंदिर की भित्तियों पर आचार्य तथा उनके 95 शिष्यों की मूर्तियां अंकित हैं।

श्रीप्रस्थ दे० बयाना

श्रीभोज=श्रीविजय (सुमात्रा)

7वीं शती ई० में इस देश की राजधानी भोज नामक नगर में थी। इस तथ्य का उल्लेख चीनी यात्री इत्सिंग ने किया है जो सुमात्रा होते हुए भारत (672 ई० में) पहुंचा था।

श्रीमाल दे० भिनमाल

श्रीरंगपट्टन (मैसूर)

मैसूर से 9 मील दूर कावेरी नदी के टापू पर स्थित है। पौराणिक किंवदंती है कि पूर्व काल में इस स्थान पर गौतम ऋषि का आश्रम था। श्रीरंगपट्टन का प्रसिद्ध मंदिर अभिलेखों के आधार पर 1200 ई० का सिद्ध होता है। 18वीं शती के उत्तरार्ध में मैसूर में हैदरअली और तत्पश्चात उसके पुत्र टीपू सुल्तान का राज्य था। टीपू के समय मैसूर की राजधानी इसी स्थान पर थी। उस समय हैदर की मराठों तथा अंग्रेजों से अनबन रहती थी। 1759 ई० में मराठों ने श्रीरंगपट्टन पर आक्रमण किया किंतु हैदरअली ने नगर की सफलतापूर्वक रक्षा की। 1799 में टीपू की मैसूर की चौथी लड़ाई में पराजय हुई, फलस्वरूप मैसूर रियासत पर अंग्रेजों का अधिकार हो गया। टीपू श्रीरंगपट्टन के दुर्ग के बाहर लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। श्रीरंगपट्टन की भूमि पर प्रत्येक स्थान पर आज भी इस भयानक तथा निर्णायक युद्ध के चिह्न दिखाई पड़ते हैं। अंग्रेजों की सेना के निवासस्थान की टूटी हुई दीवारें, सैनिक चिकित्सालय के खंडहर, भूमिगत तहखाने तथा अंग्रेज कैदियों का आवास—ये सब पुरानी कहानियों की स्मृति को नवीन बना देते हैं। टीपू की बनवाई हुई जामामसजिद यहां के विशाल भवनों में से है। दुर्ग के बाहर काष्ठनिर्मित 'दरिया दौलत' नामक भवन टीपू ने 1784 में बनवाया था। कावेरी के रमणीक तट पर एक सुंदर उद्यान के बीच में यह ग्रीष्म प्रासाद स्थित है। इसकी दीवारें, स्तंभ, महराब और छतें अनेक प्रकार की नक्काशी से अलंकृत हैं। बीच बीच में सोने का सुंदर काम भी दिखाई देता है जिससे इसकी शोभा दुगनी हो गई है। बहिर्भित्तियों पर

युद्धस्थली क दश्य तथा युद्ध यात्राओ के मनोरजक चित्र अकित है। द्वीप के पूर्वी किनारे पर टीपू का मकबरा अथवा गुबज स्थित है। यह भी एक सुदर उद्यान के भीतर बना है। इसे टीपू ने अपनी माता तथा पिता हैदरअली के लिए बनवाया था किंतु अग्रजो ने टीपू की कब्र भी इसी मे बनवा दी।

श्रीरगम (मद्रास)

त्रिचनापल्ली (त्रिशिरापल्ली) से 8 मील दूर स्थित है। 17वी शती ई० का एक विशाल, भव्य विष्णु-मदिर यहा का उल्लेखनीय स्मारक है। मदिर का शिखर स्वर्णिम है। मदिर के चतुर्दिक् परकोटा खिचा हुआ है जिसमे लगभग 18 गोपुर बने हैं। दो गोपुर अतिविशाल हैं। परकोटे के भीतर अ य मदिर भी हैं। मदिर के कुल सात घेरे हैं जिनमे से चार के अदर नगर बसा हुआ है। सबसे बाहर का प्रागण सबसे अधिक भव्य जान पडता है क्योकि इसमे एक सहस्र स्तभो की एक शाला है। मदिर के शेष गिरिराव मडपम म अदभत नक्काशी प्रदर्शित ह। यह मडप अश्वमूर्तियो वाले स्तभो पर आधत है। इस मदिर के गोपुर अलग अलग देखने पर काफी प्रभावशाली दिखाई दते हैं, किंतु सपूर्ण मदिर की पृष्ठभूमि मे इनका प्रभाव कुछ घट सा जाता है। कहा जाता है कि यह मदिर भारत का सबसे बडा तथा विशाल मदिर है। वृदावन (उ० प्र०) का श्रीरगजी का मदिर दक्षिण के इसी मदिर की अनुकृति जान पडता है।

श्रीराज्य

(1) मैसूर का एक भाग जहा गग वशीय नरेशो का राज्य था। इसम श्रवणबेलगोला तथा परिवर्ती प्रदेश भी सम्मिलित थे। सेरी वणिज जातक का सेरीजनपद यही हो सकता है।

(2) सुमात्राद्वीप (इडोनेसिया) म स्थित भारतीय उपनिवेश। इसे श्रीविजय या श्रीविषय भी कहते थ।

श्रीवन=दे० भद्दिलपुर

श्रीवधन (जिला पूना, महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र क नायक बालाजी विश्वनाथ के सुपुत्र बाजीराव (दूसरे पेशवा) का जन्मस्थान। इस होनहार बालक का, जिसने महाराष्ट्र की शक्ति की दुदुभि सारे भारत मे बजाई, जन्म 1699 ई० म हुआ था। पिता की मृत्यु के पद्रह दिन पश्चात् ही इन्हे पेशवा की गद्दी पर साहू न आसीन कर दिया था। इन्होने हिंदू जाति क सगठन का सुदृढ बनान का बहुत प्रयास किया। इनक समय म महाराष्ट की राज्यसत्ता की धाक उत्तरी हिंदुस्तान मे भी छाई हुई थी

यहा तक कि दिल्ली का मुगल सम्राट भी इनका वशवर्ती बन गया था।

श्रीवर्धनपुर

सिंहल मे स्थित बौद्ध तीर्थ काडी

श्रीविजय

सुमात्रा (इडोनेसिया) द्वीप म बसा हुआ सर्वप्रथम भारतीय उपनिवेश जिसका वर्तमान नाम पेलबग है। इस राज्य की स्थापना चौथी शती ई० मे या उसस भी पहले हुई थी (द० सेरी)। सातवी शती मे श्रीविजय या श्रीभोज वैभव के शिखर पर था। 671 ई० मे चीनी यात्री इत्सिग श्रीभोज (= श्रीविजय) होत हुए भारत आया था। उसने यहा की राजधानी भोज लिखी है। इस समय इसके अधीन एक अन्य हिंदूराज्य मलयु तथा निकटवर्ती द्वीप बाका भी थे। 684 ई० म श्रीविजय पर बौद्ध राजा श्रीजयनाग या जयनाश का राज्य था। 686 ई० म इस राजा या उसके उत्तराधिकारी न जावा के विरुद्ध सैनिक अभियान भेजा था और एक घोषणा प्रचारित की थी जिसकी दो प्रतिलिपिया प्रस्तर-लेखो के रूप मे आज भी सुरक्षित हैं। चीनी यात्री इत्सिग क लेख के अनुसार श्रीविजय बौद्ध सस्कृति तथा शिक्षा का केंद्र था। श्रीविजय के राजा के पास व्यापारिक जलयानो का एक बेडा था जिसस भारत और श्रीविजय के बीच व्यापार होता था। 7वी शती ई० म मलय प्रायद्वीप म भी श्रीविजय की राज्यसत्ता स्थापित हो गयी थी। श्रीविजय का नामातर श्रीविषय है।

श्रीविनय (कबाडिया)

यह अनाम या प्राचीन चपापुरी के विजय नामक प्रात म स्थित बदरगाह था। (दे० विजय)।

श्रीविल्लीपुत्तूर (मद्रास)

यह स्थान एक प्राचीन मदिर क लिए उल्लेखनीय है। इस मदिर मे देवी सरस्वती की मूर्ति को खडा हुआ प्रदर्शित किया गया है जो यहा की विशेषता है।

श्रीविषय = श्रीविजय

श्रीशवत्थु

बलाहास्सजातक म इस नगर का उल्लेख इस प्रकार है— अतीते तम्बपण्णि दीपे सिरीसवत्थ नाम यक्खनगर अहोसि' अर्थात ताम्रपर्णी द्वीप म श्रीश या शिरीषवस्तु नाम का यक्षनगर था। ताम्रपर्णी द्वीप लका तथा भारत क सकीर्ण समुद्र म स्थित जाफना द्वीप का प्राचीन नाम था। इस प्रकार इस नगरी की

स्थिति इस द्वीप पर ही रही होगी। यहा के आदिम निवासियों को ही यक्ष कहा गया प्रतीत होता है। कुछ विद्वानो का मत है कि सिंहल-द्वीप या लका का ही नाम ताम्रपर्णी था।

श्रीशल दे० नागार्जुनीकोड

श्रीस्थल

वर्तमान सिद्धपुर (गुजरात) का प्राचीन नाम। इसे धर्मारण्य भी कहते है। (दे० धर्मारण्य, सिद्धपुर)

श्रीहट्ट

सिलहट (आसाम) का प्राचीन नाम। चैतन्यमहाप्रभु के पूर्वज यही के निवासी थे। उनके पितामह भरद्वाजवशीय उपेद्रमिश्र और पिता जगन्नाथ मिश्र थे। जगन्नाथ मिश्र श्रीहट्ट छोडकर नवद्वीप मे जाकर बस गए थे। यही चैतन्य का जन्म हुआ था।

श्रुघ्न

यमुना के पश्चिमी तट के निकट स्थित नगर। गुप्तकाल म इस स्थान के बौद्ध भिक्षुओ की विद्वत्ता की ख्याति दूर दूर तक थी। यहा के अभिधम और दर्शन के पडितो के पास पढने के लिए देश के अनेक भागो से विद्यार्थी आते थे। चीनी यात्री युवानच्वाग के वर्णन से प्रतीत होता है कि श्रुघ्न की स्थिति हरियाणा के उत्तर पूर्वी भाग म थी। युवानच्वाग ने इस स्थान को मतिपुर (मडावर, जिला बिजनौर, उ० प्र०) तथा जलधर (पूर्वी पजाब) के बीच मे बताया है। चीनी यात्री यहा के बौद्ध विहार म कई मास तक निरतर ठहरकर जयगुप्त नामक विद्वान के पास अध्ययन करता रहा था।

श्रृगारभुक्ति दे० मगधभुक्ति

श्रेष्ठपुर

कबुज (कबोडिया) की प्राचीन राजधानी। (दे० कबुज)

श्वभ्र

श्वभ्रमती या साबरमती नदी (गुजरात) का तटवर्ती प्रदेश। रुद्रदामन् के गिरनार अभिलेख म इस प्रदेश का रुद्रदामन् द्वारा जीते जाने का वर्णन है 'स्ववीर्यार्जितानमनुरक्तसर्वप्रकृतीना आनर्तसुराष्ट्रश्वभ्रभरुक सिंधुसौवीर—'

श्वभ्रमती

साबरमती नदी (गुजरात) का प्राचीन नाम। यह नदी मीरपुर के निकट नदिकुड से निकलकर कैबे की खाडी म गिरती है। श्वभ्र अथवा साबरमती के तटवर्ती प्रदेश का उल्लेख रुद्रदामन् के गिरनार अभिलेख मे है।

श्वेत

(1) = श्वेतवर्ष

(2) = श्वेत गिरि। 'श्वेतगिरिं प्रवेक्ष्यामो मंदरं चैव पर्वतम्, यत्रमणिवरो यक्षः कुबेरश्चैव यक्षराट्' महा०, वन० 139,5। इसे मंदराचल के निकट बताया गया है। यक्षराज कुबेर का निवास कहे जाने से जान पड़ता है कि श्वेतगिरि कैलास पर्वत का ही एक नाम था। कैलास के हिमधवल शिखरों की श्वेतता का वर्णन संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध ही है (दे० कैलास)। कैलास का उल्लेख महा० वन० 139,11 में कुछ आगे इसी प्रसंग के अंतर्गत है।

जैन ग्रंथ 'जंबू द्वीप प्रज्ञप्ति' में श्वेतगिरि की जंबूद्वीप के 6 वर्षपर्वतों में गणना की गई है। विष्णुपुराण 2,2,10 में मेरु के उत्तर में तीन पर्वत-श्रेणियां बताई गई हैं—नील, श्वेत तथा शृंगी, 'नीलः श्वेतश्च शृंगी च उत्तरे वर्षपर्वताः' यह श्वेतवर्ष का मुख्य पर्वत है। महाभारत का श्वेतगिरि तथा विष्णुपुराण का श्वेत एक ही जान पड़ते हैं। श्वेतगिरि का अभिज्ञान कुछ विद्वान् हिमालय में स्थित धवलगिरि या धौलागिरि से भी करते हैं। श्वेतगिरि को महाभारत में श्वेतपर्वत भी कहा गया है। मत्स्य-पुराण में दैत्य दानवों को श्वेतपर्वत का निवासी बताया गया है।

(2) (मद्रास) त्रिचनापल्ली से प्रायः 13 और श्रीरंगम से 10 मील पर स्थित तिरुवेल्लार का प्राचीन नाम। यह दक्षिण भारत में लक्ष्मी विष्णु की उपासना का केंद्र है।

श्वेतपर्वत

'श्वेतपर्वतमासाद्य यविनात् पुरुषर्षभ' महाभारत सभा० 27,29, 'स श्वेत पर्वत वीर समतिक्रम्य वीर्यवान्, देश किंपुरुषावास द्रुमपुत्रेण रक्षितम्' महा० सभा० 28,1। श्वेतपर्वत श्वेतगिरि ही का पर्याय जान पड़ता है। इसका अभिज्ञान धवलगिरि या धौलागिरि नामक हिमालय शृंग से किया गया है। श्वेतपर्वत के उत्तर में हिरण्यकवर्ष की स्थिति बताई गई है। हिरण्यक (हिरण्मय) मंगोलिया या दक्षिणी साइबेरिया का प्रदेश जान पड़ता है।

श्वेतपुर (बिहार)

यहां महाराज हर्ष के शासनकाल में वैशाली के प्रदेश के अंतर्गत एक प्रख्यात बौद्धविहार स्थित था। चीनी यात्री युवानच्वांग ने यहां से महायान संप्रदाय का एक ग्रंथ प्राप्त किया था।

श्वेतपर्वत = श्वेत

विष्णुपुराण के अनुसार शाल्मलद्वीप का एक वर्ष या भाग जो इस द्वीप के

राजा वपुष्मान् के पुत्र श्वेत के नाम से प्रसिद्ध है। इसी वर्ष में संभवत श्वेत-पर्वत या श्वेतगिरि की स्थिति थी। यदि श्वेतगिरि का अभिज्ञान धवलगिरि या धौलागिरि से निश्चित समझा जा सके तो श्वेतवर्ष की स्थिति धौलागिरि के पर्वतीय प्रदेश या तिब्बत में मानी जा सकती है। (दे० श्वेतगिरि, श्वेतपर्वत)
श्वेतारण्य दे० तिरुवकाडु

षोडशजनपद

बौद्ध साहित्य (अंगुत्तरनिकाय आदि) में बुद्ध के जीवन काल में (छठी शती ई० पू०) प्रसिद्ध सोलह जनपदों के नाम मिलते हैं जो ये हैं—अंग मगध काशी, कोसल, वज्जि, मल्ल, चेदि, वत्स, कुरु, पंचाल, मत्स्य, शूरसेन, अश्मक, अवंति, गंधार और कंबोज।

सकस्स दे० सांकाश्य

सकश्या (ज़िला एटा, उ० प्र०)

बौद्धकालीन प्रसिद्ध नगर जिसका अभिज्ञान संकिसा बसंतपुर नामक ग्राम से किया गया है। यह स्थान फर्रुखाबाद के निकट है। (दे० सांकाश्य)

संकाश्य=सांकाश्य

संकिश=सांकाश्य

संकिसा=सांकाश्य

संकेत (ज़िला, मथुरा उ० प्र०)

नंदगाँव बरसाना मार्ग पर प्राचीन स्थान है जहाँ किंवदंती के अनुसार राधा तथा कृष्ण की प्रथम भेंट हुई थी। यह स्थान उन दोनों के मिलन का संकेत स्थल माना जाता है और आजकल तीर्थरूप में मान्य है।

संख्यावती

विविध तीर्थकल्प नामक जैन ग्रंथ में अहिच्छत्रा (अहिक्षेत्र), (पंचाल देश की महाभारतकालीन राजधानी) का नाम संख्यावती बताया गया है। इसमें वर्णित है कि एक समय जब तीर्थंकर पार्श्वनाथ संख्यावती में ठहरे हुए थे तो कमठदानव ने उनके ऊपर घोर वर्षा की। उस समय नागराज धरणींद्र ने उनके ऊपर अपने फनों को फैलाकर उनकी रक्षा की और इसीलिए इस नगरी का नाम अहिच्छत्रा हो गया। इस ग्रंथ के विवरण से सूचित होता है कि इस नगरी के पास प्राचीनकाल में बहुत से घने वन थे और उनमें नाग जाति का निवास था। यह अनुश्रुति युवानच्वांग के वृत्तांत से भी पुष्ट होती है। (दे० अहिक्षेत्र)
सगल दे० सागल

संगारेड्डी (ज़िला मेदक, आ० प्र०)

हैदराबाद से 37 मील दूर है। इस नगर के चारों ओर आंध्र के प्राचीन

राजवश के नरश सदाशिवरेड्डी द्वारा बनाई हुई प्राचीर स्थित है। नगर का नाम सदाशिव न अपन पुत्र सगारेड्डी के नाम पर रखा था। यहा श्री रामस्वामी का मदिर उल्लेखनीय है। इस तालुके म प्रागैतिहासिक समाधिस्थल, मिट्टी की मूर्तिया, पत्थर तथा लोह क औजार, रोम के सम्राटा तथा आध्र-नरेशा के सिक्के, मिट्टी के बतन तथा मुद्राए और हाथीदात, अस्थि, शीशे तथा कीमती पत्थरो की बनी वस्तुए प्राप्त हुई हैं। इनक अतिरिक्त एक स्तूप, चैत्य, विहार तथा भट्टियो और निर्माणियो क खडहर भी काफी सख्या मे प्राप्त हुए हैं।

सग्रामपुर

(1) (विहार) चपारन के निकट स्थित है। इस ग्राम का किंवदती के अनुसार वाल्मीकि का आश्रम कहा जाता है।

(2) (जिला उ नाव, उ० प्र०)

मोरावा से जब्रला जान वाले माग पर एक मील दक्षिण की ओर मौरावा से छ मील दूर है। स्थानीय जनश्रुति है कि रामायण की कथा मे वर्णित श्रवणकुमार, दशरथ द्वारा इसी स्थान पर मृत्यु को प्राप्त हुआ था। यहा एक तडाग क तट पर श्रवणकुमार की मूर्ति बनी हुई है। कहा जाता है यह वही तडाग है जहा श्रवण अपने अधे माता पिता क लिए जल लेन के लिए आया था। किंतु वाल्मीकि रामायण म इस घटना की स्थली सरयू क तट पर बताई गई है—'तस्मि नतिमुखेकाल धनुष्मानिपुमानरथी व्यायामकृतसकल्प सरयू-म गा नदीम्' अयोध्या० 63,20।

(3) (जिला दमोह, म० प्र०)

सिंगौरगढ स प्राय चार मील दूर वह स्थल है जहा गढमडला की वीरा-गना रानी दुर्गावती और मुगल सम्राट अकबर की सेनाओ म घोर युद्ध हुआ था जिसके फलस्वरूप रानी वीरता पूवक लडती हुई मारी गई थी। अकबर की सेना आसफखा की अध्यक्षता म थी। रानी दुर्गावती का स्मारक उनकी मृत्यु के स्थान पर अभी तक वतमान है। यह ग्राम राजा सग्रामसिह के नाम पर प्रसिद्ध है जो रानी दुर्गावती क श्वसुर थे। इनकी मृत्यु 1540 ई० म हुई थी।

सजन=सजयती

सजयती

महाभारत, सभा० 31,70 मे उल्लिखित दक्षिण भारत की नगरी जिस पर सहदेव न अपनी दक्षिण दिशा की दिग्विजय यात्रा म विजय प्राप्त की थी

--'नारी सजयती च पाखंड करहाटकम् दूतैरेव वशे चक्रे कर चैनानदापयत् ।' सजयती का अभिज्ञान वर्तमान सजन या सजान से किया गया है जो जिला थाना, महाराष्ट्र में स्थित है। कहा जाता है कि इसी स्थान पर खुरासान से भारत आनेवाले पारसियों का सर्वप्रथम उपनिवेश 735 ई० में बसाया गया था (इंडियन एंटिक्विटी, 1912 पृ० 174)

सजान=सजयती

सधिमान् पर्वत

श्रीनगर (कश्मीर) के निकट शंकराचार्य की पहाड़ी।

सध्या

(1) महाभारत सभा० 9,23 के अनुसार तीर्थरूप में मान्यता प्राप्त नदी —'लघंती गोमती चैव सध्या त्रिस्रोतसी तथा एताश्चान्याश्च राजेंद्र सुतीर्था लोकविश्रुता'। प्रसंग से यह गोमती (उ० प्र०) के निकट बहने वाली कोई नदी जान पड़ती है।

(2) विष्णुपुराण में उल्लिखित क्रौंच द्वीप की एक नदी 'गौरी कुमुद्वती चैव सध्या रात्रिर्मनोजवा क्षांतिश्च पुंडरीका च सप्तैता वर्ष निम्नगा'।

सप्तलुरि (लंका) दे० जंबुकोल

सभल (जिला मुरादाबाद, उ० प्र०)

संभल प्राचीन तीर्थ है। पुराणों में सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग में इसके नाम क्रमश: सत्यव्रत, महदगिरि, पिंगल और संभल या शंबल वर्णित हैं। पुराणों के अनुसार कलियुग के अंत में भगवान कल्कि का जन्म शंबल नामक ग्राम में होगा जिसका अभिज्ञान लोकविश्वास में इसी नगर से किया जाता है। यह टॉलमी द्वारा उल्लिखित सबलक है। (दे० शंबल)

सभार दे० शभुपुर

सम्पत्ति

'विष्णुपुराण 2,4,63 में उल्लिखित कुशद्वीप की एक नदी, 'धूतपापा शिवा चैव पवित्रा सम्मतिस्तथा, विद्युदम्भा मही चान्या सर्व पापहरास्त्विमा'

सम्मेतशिखर

जैन साहित्य में पारसनाथ पर्वत का एक नाम (दे० पारसनाथ 2)

सविल=सौंदे

सवेद्य

महाभारत वन० 85,1 में वर्णित तीर्थ—'अथ सध्या समासाद्य सवेद्य तीर्थमुत्तमम उपस्पृश्य नरोविद्या लभते नात्र संशय' अर्थात सध्या के समय श्रेष्ठ

तीर्थ सवेद म जाकर स्नान करने से मनुष्य को विद्या का लाभ होता है, इसम सदेह नही है। इस तीर्थ का अभिज्ञान सदिया (बगाल) से किया गया है। मवेद के आग वन० 85,2-3 मे लौहित्य और करतोया का उल्लेख है।

सई=स्यदिका

अयोध्या के निकट बहने वाली एक नदी जिसका वणन रामायण म है। सई गोमती मे गिरती है। इसका उद्गम कुमायू की पहाडियो मे है। (दे० स्यदिका)

सकगर (जिला झासी, उ० प्र०)

राजपूतो के शासनकाल के मदिरादि के अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

सक्खर दे० शकरा

सगर (महाराष्ट्र)

मध्यरेल के बबई रायचूर रेलमाग पर यादगिरि स्टेशन से 21 मील पर स्थित वतमान शाहपुर। इसी के निकट सगराद्रि नामक पवत है।

सगराद्रि (महाराष्ट्र)

बबई-रायचूर रेलमाग पर यादगिरि स्टेशन के निकट एक पहाडी जो पुराण प्रसिद्ध राजा सगर के नाम पर प्रसिद्ध है। सागर का बनवाया हुआ यहा एक दुग स्थित था। बीजापुर के सुलतानो ने भी यहा किला बनवाया था। सगराद्रि की तलहटी म सगर नामक प्राचीन नगर स्थित है जिसे अब शाहपुर कहते है।

सचौर=सत्यपुर

सज्जनगढ (जिला सतारा, महाराष्ट्र)

इस स्थान पर महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सत तथा शिवाजी के गुरु समथ रामदास प्राय रहा करते थे। उन्होने यहा एक मठ भी स्थापित किया था। शिवाजी प्राय समर्थ से मिलने सज्जनगढ आया करते थे। उन्हे अपने जीवन के कई महत्त्वपूण निणयो के लिए इसी स्थान पर रामदास से भेंट करने के उपरात प्रेरणा मिली थी। सज्जनगढ का दुग परलोग्राम के पास पहाडी के ऊपर है। समथ के मठ के भीतर श्रीराम का मदिर स्थित है। दुग के दक्षिण कोण म अगलाई देवी का मदिर है। कहा जाता है देवी की प्रतिमा समर्थ को अगापुर की नदी से प्राप्त हुई थी।

सज्जनालय

स्याम म स्थित सुखोदय राज्य की एक राजधानी। (दे० सुखोदय)

सनधारा (जिला भोपाल, म० प्र०)

साची के निकट इस स्थान से एक प्राचीन बौद्ध स्तूप के भीतर से सम्राट अशाक के समकालीन सारिपुत्र उपतिस्या और महामौग्गलायन नामक प्रसिद्ध धमप्रचारको के अस्थि अवशेष प्राप्त हुए थे। इन्ही के अवशेष साची स्तूप से भी मिले थे।

सतपुडा

विंध्याचल के दक्षिण मे स्थित महान पवत श्रेणी। सतपुडा शब्द सप्तपुत्र का अपभ्रश कहा जाता है। कुछ विद्वानो का मत है कि सतपुडा पर्वत की सात श्रेणिया है जिनके कारण ही इसे सप्तपुत्र का अभिधान दिया गया था। महाभारत म इस पवत को नमदा और ताप्ती के बीच मे वर्णित किया गया है।

सतलज दे० शतद्रु

सतियपुत्रदेश

अशोक के शिलालेख 13 म उल्लिखित सतियपुत्रो का देश, जो अशोक के साम्राज्य क बाहर किंतु उसके प्रत्यत या पडोस मे स्थित था। यह वतमान केरल के उत्तर म था। इसका एक नाम कूपक भी था।

सनियाधारा=सन्निधारा

सत्यपथ (जिला गढवाल, उ० प्र०)

इस तीथ के विषय मे स्कदपुराण केदारखड मे निम्न उक्ति है—'पर सत्यपथ तीथ त्रिपुलोकपु दुर्लभम, तत्र स्नात्वा महाभागे विष्णुसायुज्य माप्नुयात'। सत्यपथ बदरीनारायण से 17½ मील उत्तर मे स्थित है। इसकी ऊचाई समुद्रतल से 14440 फुट है। यहा एक त्रिकोण झील है जिसे सत्यसरोवर कहते हैं।

सचोर=सत्यपुर

सत्यपुर (जिला पालनपुर, राजस्थान)

जन तीथकर महावीर का एक प्राचीन मदिर यहा स्थित है। प्राचीनकाल म यह जनो का महत्त्वपूण स्थान था। यह नगर प्राचीन गुजरात म स्थित था। इसका जैन ग्रथ 'विविधतीथ कल्प' मे जनतीथ के रूप म वणन है। इसके अनुसार यहा 24 वें तीथकर महावीर का एक मदिर था जिसे किसी मुसलमान सुल्तान ने गुजरात पर आक्रमण के समय तोडना चाहा था। मालवा के राजा न भी सत्यपुर पर आक्रमण किया था किंतु उसकी सेना को ब्रह्मशाति नामक य न परास्त कर दिया था और इस प्रकार सत्यपुर की रक्षा हुई थी। जन स्तोत्र तीथमालाचैत्यवदन म भी इस नगर का उल्लेख है। सत्यपुर वतमान

सचौर है जो जिला पालनपुर म दीस रलस्टेशन से 80 वें मील पर स्थित है। (प्राकृत ग्रथो म इसे सच्चौर कहा गया है, 'वदे सत्यपुरे च वाहड्पुरे राडद्रह वायडे')। महावीरस्वामी के शिष्य द्वारा रचित जगचितामणि चत्यवदन म भी इसका नामोल्लेख है।

सत्यव्रत

(1) दे० सभल

(2) काची का पौराणिक नाम सत्यव्रतक्षेत्र कहा जाता है।

सदानीरा

प्राचीन कोसल और विदेह राज्य की सीमा पर बहने वाली नदी। शतपथ-ब्राह्मण से ज्ञात होता है कि वदिक काल म बहुत समय तक आय जगत की प्राच्यसीमा का निर्देश यह नदी करती रही (शतपथ 9,4)। इसके पूव म दलदल का प्रदेश था जहा वैदिककालीन आर्यों की पहुच बहुत काल तक नही हुई। तत्पश्चात् माठव विदेह नामक प्रसिद्ध ऐश्वयशाली राज्य स्थापित हुआ जिसके राजा रामायणकाल म विदेह जनक हुए। इस नदी का अभिज्ञान सामा न्यत गडकी से किया जाता है जो नेपाल के पहाडा स निकलती है और पटना के समीप गगा मे गिरती है किंतु महाभारत सभा० 20,27 म गडकी और सदानीरा को भिन्न माना गया है—'गडकीच महाशोणा सदानीरा तथैव च एकपवतके नद्य क्रमेणैत्याव्रजन्त ते'। इस उल्लेख मे यह नदी राप्ती हो सकती है। पाजिटर के अनुसार सदानीरा राप्ती का ही प्राचीन नाम है, न कि गडकी का (दे० गडकी)। महा० सभा० 9,4 मे भी सदानीरा का उल्लेख है, 'सदा नीरामधृष्या च कुशधारा महानदीम्'। अमरकोश 1,10 33 म करतोया को सदानीरा का पर्याय कहा है।

सदिया दे० सवेद्य

सनकानिक

गुप्तकालीन गणराज्य जिसकी स्थिति सभवत मध्यभारत मे थी। सनका निको का उल्लेख समुद्रगुप्त की प्रयागप्रशस्ति म है 'मालवानुजनायनयौधय मद्रकाभीरप्रजुन सनकानिककाक (खाक) खरपरिक ,

सनातन

'मतगवाप्या य स्नायादेकरात्रेणमिद्धयति विगाहतिह्यनालबमधक वै सनातनम्' महा० अनुशासन० 25,32। इस तीर्थ का उल्लेख नमिपारण्य के ठीक पूव है जिससे इसकी स्थिति नैमिषारण्य (उ० प्र०) के निकट मानी जा सकती है।

सन्निहती

'मासि मासि नरव्याघ्र सनिहत्या न सशय तीर्थसनिहनादेव सनिहत्यति विश्रुता' महा० वन० 83,195 अर्थात् प्रत्येक मास की अमावस्या को (पृथ्वी के सभी तीर्थ) सन्निहती मे आते है और तीर्थों के समूह के कारण ही इस स्थान को सन्निहती कहा जाता है। यह कुरुक्षेत्र का तीर्थ है जिसका अभिज्ञान सन्निहती ताल से किया जाता है जो कुरुक्षेत्र (पजाब) मे स्थित है।

सपादलक्ष

शिवालिक पर्वतश्रेणी (देहरादून हरद्वार, उ० प्र० की गिरिमाला) के निकट स्थित एक प्रदेश का प्राचीन नाम। सपालदक्ष का अर्थ सवालाख है, सिवालिक या शिवालित शब्द को इसी का अपभ्रश माना जा सकता है। डा० भडारकर के अनुसार दक्षिण के चालुक्य राजपूत मूलत सपादलक्ष प्रदेश की राजधानी अहिच्छत्र के निवासी थे। (इडियन एटिक्विरी, 11)

सप्तगगा

शिवपुराण 2,13। गगा, गोदावरी, कावेरी, ताम्रपर्णी, सिंधु, सरयू और नर्मदा।

सप्तग्राम=सात गाव

सप्तद्वीप

जबु, प्लक्ष, शाल्मली, कुश, क्रौच, शक एव पुष्कर—ये पौराणिक सप्त-द्वीप है।

सप्तपर्णिगुहा

महावश 3,19 राजगृह के निकट वैभारपर्वत की एक गुहा। यही बुद्ध के निर्वाण के पश्चात प्रथम धर्म-सगीति का अधिवेशन हुआ था जिसमे 500 भिक्षुओ ने भाग लिया था।

सप्तपर्वत दे० कुलपर्वत

सप्तपुरी

पुराणो मे वर्णित सात मोक्षदायिका पुरियो मे काशी, काची माया, अयोध्या, द्वारका, मथुरा और अवतिका की गणना की गई है—'काशी काची चमाया-ख्यात्वयोध्याद्वारवत्यपि, मथुराऽवन्तिका चता सप्तपुर्योऽत्र मोक्षदा', अयोध्या-मथुरामायाकाशीकाचीत्वन्तिका, पुरी द्वारावतीचैव सप्तैत मोक्षदायिका'।

सप्तवती

श्रीमदभागवत 5,19,18 मे उल्लिखित एक नदी, 'सरयूरोधस्वती सप्तवती सुष मा शतद्रू'—इसका अभिज्ञान अनिश्चित है। यह सिंधु नदी का नाम हो

-ता है क्योंकि यह नदी सप्तनदियो की सयुक्त धारा बनकर समुद्र म गिरती
। (दे० सप्तसिधु)

सप्तशरा (बगाल)

बालासोर स छ मील दूर यह नदी बहती है। यहाँ इसके तट पर रमुणा नामक ग्राम है जहा श्री चैतन्यमहाप्रभु पुरी जात समय आए थे।

सप्तसागर

लवण, क्षीर, सुरा, घृत, इक्षु, दधि एव स्वादु—ये पौराणिक सप्तसागर हैं।

सप्तसारस्वत

'सप्तसारस्वत तीथ ततोगच्छेन्नराधिप, यत्र मकणक सिद्धा महर्षिर्लोक विश्रुत' महा० वन० 83,115,116, 'सप्तसारस्वते स्नात्वा अर्चयित्वा त येतु माम, न तेपा दुलभ किंचिदिहलोके परत्र च' महा० वन० 83 133। यह स्थान सरस्वती नदी के तट पर स्थित था।

सप्तसिधु दे० सिधु

सप्तिपारा (जिला मयूरभज, उडीसा)

स्थानीय किवदती के अनुसार यह महाभारतकाल का मत्स्यदेश है किंतु यह तथ्य नही जान पडता क्योंकि मत्स्यदेश का अभिज्ञान जयपुर व अलवर (राजस्थान) के कुछ भागो के साथ निश्चित रूप से हो चुका है। इस किंवदती का आधार निम्न विवेचन से स्पष्ट हो जाता है—दिब्बिड ताम्रपत्रो (एपिग्राफिया इडिका 5,108) स सूचित होता है कि मत्स्य निवासियो की एक शाखा मध्यकाल मे विजिगापटम् प्रदेश (आध्र) मे जाकर बस गई थी। उत्कल नरेश जयत्सेन ने अपनी पुत्री प्रभावती का विवाह इसी परिवार के कुमार सत्यमातड से किया और उस ओडडवाडी (उडीसा का एक भाग) का शासक नियुक्त किया। 23 पीढियो के पश्चात् 1269 ई० म इसी के वशज अर्जुन का यहा राज्य था। इससे अनुमान किया जाता है कि किस प्रकार मत्स्य देश की प्राचीन अनुश्रुतिया व परपराए सकडो मील के व्यवधान को पारकर उडीसा जा पहुची। इसीलिए पाडवो के अज्ञातवास स सबद्ध कथाए भी सप्तिपारा म आज तक परपरा से प्रचलित चली आ रही है।

सफीदो दे० सर्वदेवी

सबरीमलाई (केरल)

प्राचीन स्थानीय अनुश्रुति क अनुसार इसी स्थान पर वनवास काल म भगवान् राम न शबरी से भेंट की थी। शबरी के आश्रम की स्थिति के कारण

हो इस स्थान को सबरीमलाई कहा जाता है। यह किंवदंती अधिक विश्वसनीय नहीं जान पड़ती क्योंकि वाल्मीकि रामायण में शबरी के आश्रम को पंपासर के पास बनाया गया है जो किष्किंधा के निकट था। पंपा के पास पर्वत में एक गुहा को शबरीगुफा कहा भी जाता है जो सुरावन नामक स्थान के निकट है। किष्किंधा होस्पट तालुका, मैसूर में स्थित है। सबरीमलाई में मकर-सक्रांति के दिन केरल के लोकप्रिय देवता अयप्पन की पूजा होती है।

सबलगढ़ (तहसील नजीबाबाद, जिला बिजनौर, उ० प्र०)

शाहजहां के समकालीन नवाब सबलखां ने इस कस्बे को बसाया था। पुरानी गढ़ी के खंडहर आज भी यहां पाए जाते हैं।

समगा दे० मधुविला

समंतपंचक

'प्रजापतेरुत्तरवेदिरुच्यते सनातनं राम समंतपंचकम्, समीजिरे यत्र पुरा-दिवौकसो वरेण सत्रेण महावरप्रदा, पुरा च राजर्षिवरेण धीमता, बहूनि वर्षाण्य-मितेन तेजसा, प्रकृष्टमेतत् कुरुणा महात्मना ततः कुरुक्षेत्रमितीह पप्रथे' महा० शल्य० 53 1-2। उपर्युक्त अवतरण से विदित होता है कि महाभारत काल में समंतपंचक कुरुक्षेत्र का ही दूसरा नाम था। यह सरस्वती नदी के तट पर स्थित था तथा इसकी यात्रा बलराम ने सरस्वती के अन्य तीर्थों के साथ की थी। श्रीमद्भागवत 10,82,2 में इसका उल्लेख है—'तज्ज्ञात्वा मनुजा राजन् पुरस्तादेव सर्वत, समं तपंचक क्षेत्र ययुः श्रेयोविधित्सया'। यहां श्रीकृष्ण सूर्यग्रहण के अवसर पर आए थे।

समतट

प्राचीन तथा मध्यकाल में पूर्वीबंगाल के समुद्रतटवर्ती प्रदेश का नाम। समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में इस प्रदेश का उल्लेख गुप्त साम्राज्य के प्रत्यंत देशों में है—'समतट डावक कामरूपनेपालकर्तृपुरादिप्रत्यंतनृपतिभिः'। डावक के साथ समतट भी समुद्रगुप्त के साम्राज्य की पूर्वी सीमा पर स्थित था। चीनी यात्री युवानच्वांग ने अपनी भारत यात्रा के समय (615 645 ई०) इस स्थान में 30 बौद्ध विहार और 100 से ऊपर देवमंदिर देखे थे। समतट प्रदेश की राजधानी मध्यकाल में करमत (वर्तमान कंत) नामक स्थान पर थी जो कोमिल्ला (पूर्व पाकिस्तान) से 12 मील पश्चिम की ओर स्थित है। 16वीं शती में यहां अराकान के चंद्रवंशी राजाओं का शासन था।

समथर

बुंदेलखंड की भूतपूर्व छोटी रियासत। 1733 ई० में दतिया के राजा

इंद्रजीत के समय में दतिया की गद्दी के लिए झगड़ा हुआ था। उस समय इंद्रजीत की न हे शाहशूजर ने बहुत सहायता की थी जिसके उपलक्ष म इसके पुत्र मदनसिंह को समथर के किले की किलेदारी और राजधर की पदवी मिली थी। पीछे से इसके पुत्र देवीसिंह को पांच गांवों की जागीर भी दे दी गई थी। इस समय बुंदेलखंड पर मराठों की चढ़ाइयां प्रारंभ हो गई थी और शीघ्र ही समथर के जागीरदार स्वतंत्र बन बैठे।

समनगढ़ (जिला आदिलाबाद, आंध्र)

यहां मुसलिम सैनिक वास्तुशैली में बना हुआ 17वीं शती का किला स्थित है।

समरकंद (दक्षिण रूस)

प्राचीन साहित्य म उल्लिखित मारकंड है।

समस्थान दे० पारदूर

समापा

अशोक के धौली जोगड़ा शिलालेख में तोसली के साथ ही समापा का उल्लेख है। जान पड़ता है कि तोसली तो कलिंग की राजधानी थी और समापा कलिंग का एक मुख्य स्थान था। यहां स्थित महामात्रों को कड़ी चेतावनी देकर अशोक ने उन लोगों को मुक्त करने का आदेश दिया था जिन्हें इन प्रशासकों ने अकारण ही कारागार में डाल रखा था (दे० तोसली)। समापा की स्थिति संभवत जिला पुरी, उड़ीसा म थी।

समुद्रतटपुरी

'कोशला ध्र पुड्रताम्रलिप्तिसमुद्रतटपुरी च देवरक्षितो रक्षिता' विष्णु० 4 24,64। इस उद्धरण म उल्लिखित समुद्रतटपुरी शायद वर्तमान जगन्नाथपुरी ही है। यहां के देवरक्षित नामक राजा का इस स्थान पर उल्लेख है।

समुद्रनिष्कुट

'इंद्रकृष्टैवर्तयन्ति धान्यैर्ये च नदीमुखै समुद्रनिष्कुटेजाता पारेसिंधु च मानवा, ते वैरामा पारदाश्च आभीरा कितवै सह विविधि बलिमादाय रत्नानि विविधानि च' महा० सभा० 51,11 अर्थात युधिष्ठिर की राजसभा म समुद्रनिष्कुट तथा सिंधु के पार रहने वाले तथा मेघों के और नदी के जल से उत्पन्न धान्यों द्वारा जीविका प्राप्त करने वाले वैराम, पारद, आभीर तथा कितव कर के रूप म अनेक प्रकार की भेंट लेकर उपस्थित हुए। समुद्रनिष्कुट संभवत कच्छ काठियावाड़ (सौराष्ट्र) के छोटे से प्रायद्वीप का नाम है। निष्कुट गृहोद्यान का पर्याय है और सौराष्ट्र प्रायद्वीप की समुद्र के भीतर

स्थिति का परिचायक है।

समोद्‌भवा

=नमदा। (दे० हिस्टारिकल ज्याग्रेफी ऑव एशेंट इंडिया, पृ० 36)। यह सोमोद्‌भवा का रूपातर है।

सम्मेतशिखर

सम्मतशल या सम्मेतशिखर का नामोल्लेख तीथमाला चैत्यवदन मे इस प्रकार है 'वदेऽष्टापदगुडरगजपदेसम्मेतशैलाभिधे।' [दे० पारसनाथ (2)]

सरथौली (जिला शाहजहापुर, उ० प्र०)

इस स्थान से ताम्रयुगीन अवशेष प्राप्त हुए है।

सरभपुर (जिला रायपुर, म० प्र०)

अरग के निकट एक स्थान जा अरग दानपट्ट तथा रायपुर दानपट्ट अभिलेखा के आधार पर पूव राष्ट्र का मुख्य नगर जान पडता है। ये दोनो अभिलेख गुप्तकालीन हैं। (द० अरग, रायपुर)

सरभू

बौद्ध साहित्य (मिलिदप हो, चूलवग्ग, विनयपिटक) मे सरयू का रूपा तरित नाम।

सरयू

अयोध्या (उ० प्र०) के निकट वहन वाला प्रसिद्ध नदो। रामायणकाल मे कासल जनपद की यह प्रमुख नदी थी, 'कोसलो नाम मुदित स्फीतो जनपदो महान्, निविष्ट सरयूतीरे प्रभूतधनधा यवान। अयोध्या नाम नगरी तत्रा सोल्लाकविश्रुता मनुना मानवे द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम' वाल्मीकि० 5,19। अयोध्या से कुछ दूर पर सरयू क तट पर घना वन स्थित था जहा अयोध्या-नरेश आखेट के लिए जाया करत थे। दशरथ ने इसी वन म आखेट के समय भूल से, श्रवण का जा सरयू स अपने अधे माता पिता के लिए जल लेन क लिए आया था वध कर दिया था, 'तस्मिन्नति सुखकाले धनुष्मानिपुमान्रथी व्यायामकृतसकल्प सरयूम वगा न्दीम, निपान महिप रात्रौगज वाभ्यागतमृगम, अ यद वा श्वापद किंचिज्जिघासुरजितेन्द्रिय', 'अपश्यमिपुणा तीरे सरयवास्ता पम हतम्, अवकीर्णजटाभार प्रविद्धकलशोदकम्' अयोध्या० 63,20-21 36। सरयू नदी का ऋग्वेद म उल्लेख है और यह कहा गया है कि यदु और तुवसस न इस पार किया था (ऋग्० 4,30,18, 10,64,9, 5,53 9)। पाणिनि न अष्टाध्यायी (6,4,174) म सरयू का नामाल्लेख किया है। पद्मपुराण उत्तर खड 35 38 म इसका माहात्म्य वर्णित है। सरयू अयोध्यावासियो की बडी

पचविंश ब्राह्मण (प्रौढ या ताडय ब्राह्मण) म सरस्वती और दृषद्वती नदियो क
तट पर किए गए यज्ञो का सविस्तार वणन है जिससे ब्राह्मणकाल मे सरस्वती
के प्रदेश की पुण्यभूमि के रूप मे मान्यता सिद्ध होती है। शतपथ ब्राह्मण म
विदेघ (=विदेह) के राजा माठव का मूल स्थान सरस्वती नदी के तट पर
बताया गया है और कालातर मे वैदिक सभ्यता का पूव की ओर प्रसार होने
के साथ ही माठव के विदेह (विहार) मे जाकर बसने का वणन है। इस कथा स
भी सरस्वती का तटवर्ती प्रदेश वैदिक काल की सभ्यता का मूल केंद्र प्रमाणित
होता है। वाल्मीकि रामायण म भरत के केकय देश से अयोध्या आने के प्रसग म
सरस्वती और गगा का पार करने का वणन है—'सरस्वतीं च गगा च युग्मेन
प्रतिपद्य च, उत्तरान् वीरमत्स्याना भारुण्ड प्राविशद्वनम' अयो० 71,5। सरस्वती
नदी के तटवर्ती सभी तीर्थों का वणन महाभारत मे शल्यपव के 35 वें स 54 वें
अध्याय तक सविस्तार दिया गया है। इन स्थानो की यात्रा बलराम ने का
थी। जिस स्थान पर मरुभूमि मे सरस्वती लुप्त हो गई थी उसे विनशन कहते
थे—'ततो विनशन राजन् जगामाथ हलायुध शूद्राभीरान् प्रतिद्वेषाद यत्र नष्टा
सरस्वती महा० शल्य० 37,1 इस उल्लेख म सरस्वती के लुप्त होन के स्थान के
पास आभीरो का उल्लेख है। यूनानी लेखको न अलक्षेंद्र के समय इनका राज्य
सक्खर रारी (सिंध, पाकि०) मे लिखा है। इस स्थान पर प्राचीन एतिहासिक
स्मृति के आधार पर सरस्वती को अर्तहित भाव स बहती माना जाता था,
'ततो विनशन गच्छेन्नियतो नियताशन गच्छत्यर्तहिता यत्र मरुपृष्ठे सरस्वती
(दे० विनशन)। महाभारतकाल म तत्कालीन विचारो के आधार पर यह
किवदती प्रसिद्ध थी कि प्राचीन पवित्र नदी (सरस्वती) विनशन पहुचकर
निषाद नामक विजातियो के स्पश दोष से बचने के लिए पृथ्वी म प्रवेश कर
गई थी—'एतद विनशन नाम सरस्वत्या विशाम्पते द्वार निषादराष्ट्रस्य येषा
दोषात मरस्वती। प्रविष्टा पृथिवी वीर मा निषादा हि मा विदु'। सिद्धपुर
(गुजरात) सरस्वती नदी के तट पर बसा हुआ है। पास ही बिंदुसर नामक
सरोवर है जा महाभारत का विनशन हो सकता है। यह सरस्वती मुख्य सरस्वती
ही की धारा जान पडती है। यह कच्छ मे गिरती है किंतु माग मे कई स्थानो पर
लुप्त हो जाती है। सरस्वती' का अथ है सरोवरो वाली नदी जो इसक छोडे हुए
सरोवरो से सिद्ध होता है। महाभारत मे अनेक स्थानो पर सरस्वती का उल्लेख
है। श्रीमदभागवत म (5 19,18) यमुना तथा दषद्वती के साथ सरस्वती या
उल्लख है—'मदाकिनीयमुनासरस्वतीदषद्वती गोमतीसरयू'। मेघदूत (पूवमघ
51) म कालिदास ने सरस्वती या ब्रह्मावत के अतगत वणन किया है 'कृत्वा
तासामभिगममपा सौम्य सारस्वतीनामन्त शुद्धस्त्वमपि भविता वणमात्रेण

कृष्ण'। सरस्वती का नाम कालांतर म इतना प्रसिद्ध हुआ कि भारत की अनेक नदियों को इसी के नाम पर सरस्वती कहा जाने लगा (दे० नीचे)। पारसियों के धर्मग्रंथ जेंदावस्ता मे सरस्वती का नाम हरहवती मिलता है।

(2) प्रयाग के निकट गंगा यमुना संगम म मिलने वाली एक नदी जिसका रंग लाल माना जाता था। इस नदी का कोई उल्लेख मध्यकाल के पूर्व नहीं मिलता और त्रिवेणी की कल्पना काफी बाद की जान पड़ती है। जिस प्रकार पंजाब की प्रसिद्ध सरस्वती मरुभूमि म लुप्त हो गई थी उसी प्रकार प्रयाग की सरस्वती के विषय म भी कल्पना कर ली गई कि वह भी प्रयाग मे अंतर्हित भाव से बहती है (दे० प्रयाग)। गंगा यमुना के संगम के संबंध म केवल इन्हीं दो नदियों के संगम का वृत्तांत रामायण, महाभारत, कालिदास तथा प्राचीन पुराणों म मिलता है। परवर्ती पुराणों तथा हिंदी आदि भाषाओं के साहित्य म त्रिवेणी का उल्लेख है ('भरत वचन सुनि माझ त्रिवेनी, भई मृदुबानि सुमंगल देनी' —तुलसीदास) कुछ लोगों का मत है कि गंगा यमुना की संयुक्तधारा का ही नाम सरस्वती है। अन्य लोगों का विचार है कि पहले प्रयाग म संगम स्थल पर एक छोटी सी नदी आकर मिलती थी जो अब लुप्त हो गई है। 19 वी शती म, इटली के निवासी मनूची ने प्रयाग के किले की चट्टान से नीले पानी की सरस्वती नदी को निकलते देखा था। यह नदी गंगा यमुना के संगम म ही मिल जाती थी। (दे० मनूची, जिल्द 3, पृ० 75)

(3) (सौराष्ट्र) प्रभास पाटन के पूर्व की ओर बहने वाली छोटी नदी जो कपिला म मिलती है। कपिला हिरण्या की सहायक नदी है जो दोनों का जल लेती हुई प्राची सरस्वती मे मिलकर समुद्र मे गिरती है।

(4) (महाराष्ट्र) कृष्णा की सहायक पंचगंगा की एक शाखा। कृष्णा-पंचगंगा संगम पर अमरपुर नामक प्राचीन तीर्थ है।

(5) (जिला गढवाल, उ० प्र०) एक छोटी पहाड़ी नदी जो बदरीनारायण मे वसुधारा जाते समय मिलती है। सरस्वती और अलकनंदा (गंगा) के संगम पर केशवप्रयाग स्थित है।

(6) (बिहार) राजगीर, (राजगृह) के समीप बहने वाली नदी जो प्राचीन काल मे तपोदा कहलाती थी। इस सरिता म उष्ण जल के स्रोत थे। इसी कारण यह तपोदा नाम से प्रसिद्ध थी। तपोद तीर्थ का, जो इस नदी के तट पर था, महाभारत वनपर्व म उल्लेख है। गौतमबुद्ध के समय तपोदाराम उद्यान इसी नदी के तट पर स्थित था। मगध-सम्राट् बिंबिसार इसके जल मे स्नान करते थे। (दे० तपोदा)

(7) केरल की एक नदी जिसके तट पर होनावर स्थित है।

(8)=प्राची सरस्वती

(9) (जिला परभणी, महाराष्ट्र) एक छोटी नदी जो पूर्णा की सहायक है। सरस्वती पूर्णा सगम पर एक प्राचीन सुदर मदिर स्थित है।

सरस्वतीपत्तन (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

शिवपुरी के निकट वनप्रातर म स्थित है। सुरवाया ग्राम के निकट गढी मे पूर्वकाल म किसी धार्मिक सम्प्रदाय के साधुओ का निवास स्थान था। गढी के अतगत अनेक मध्यकालीन मदिर है जिनमे शिखर का अभाव उल्लेखनीय है। इनकी छता म कही-कही अपूव मूर्तिकारी दिखाई पडती है। सुरवाया ग्राम ही प्राचीन सरस्वतीपत्तन कहा जाता है।

सरहिंद (पूव पजाब)

पूव मध्यकालीन नगर है। दिल्ली पर अधिकार करन के लिए सरहिंद को विदेशी आक्रमणकारी महत्त्वपूण नाका समझते थ। शाहबुद्दीन गौरी ने इस नगर को 1192 ई० म जीता था किंतु तत्पश्चात पृथ्वीराज चौहान न इसे उसकी सेनाओ से छीन लिया। औरगजेब के शासनकाल म सरहिंद के सूबेदारा ने सिखो के दसवे गुरु गोविदसिंह के दो पुत्रो को मुसलमान न बनने के कारण जीवित ही दीवार म चुनवा दिया था। फलस्वरूप 1761 म सिक्खो ने नगर को मुसलमानो से छीन कर नष्ट कर दिया। उपयुक्त घटना के पश्चात सरहिंद सिक्खो के लिए महत्त्वपूण स्थान बन गया और प्रत्येक सिक्ख यहा की इटो को घर ले जाना धार्मिक कृत्य समझने लगा। सरहिंद का परिवर्ती क्षेत्र वैदिक काल म सरस्वती नदी के तटवर्ती प्रदश के अतगत था। यह आय सभ्यता की मुख्य पुण्यभूमि मानी जाती थी। (दे० सैरध्र, सरीध्र)

सरहिंद (नदी) दे० शरदडा

सरहुत (जिला, बादा, उ० प्र०)

पाषाणयुगीन शिला-चित्रकारी के उदाहरण इस स्थान के निकटवर्ती वन-प्रदश से प्राप्त हुए हैं।

सरालक

पाणिनि की अष्टाध्यायी 4,3,93 म उल्लिखित है। यह स्थान सभवत जिला लुधियाना (पजाब) म स्थित सहराल है।

सरिसावा (जिला दरभगा, बिहार)

लोहना के निकट एक ग्राम जिसे वाचस्पति मिश्र शकर मिश्र, भूतनाथ मिश्र प्रभृति दार्शनिक विद्वानो का जन्मस्थान कहा जाता है।

सरीला (बुंदेलखण्ड)

अंग्रेजी शासन काल के अंत तक एक छोटी सी रियासत थी। महाराज छत्रसाल के पौत्र पहाड़सिंह को विरासत में जैतपुर का राज्य मिला था। पहाड़सिंह के पुत्र गजसिंह ने जैतपुर की रियासत में से सरीला अपने भाई अमानसिंह को जागीर में दिया था। कालांतर में यहां स्वतन्त्र रियासत स्थापित हो गई।

सपदेवी=दे० सवदेवी

सर्पावाट दे० सौगंधिक वन

सर्वतीर्थ

वाल्मीकि-रामायण अयोध्या० 71,14 में वर्णित एक स्थान जहां केकय से अयोध्या आते समय भरत कुछ समय के लिए ठहरे थे—'वास कृत्वा सर्वतीर्थे तीर्त्वा चोत्तरगां नदीम् अन्यानदीश्च विविधैः पार्वतीयैस्तुरंगमैः'। इससे सूचित होता है कि सर्वतीर्थ किसी उत्तर की ओर बहने वाली नदी के तट पर बसा हुआ था। यह उज्जिहाना नगरी के पूर्व में स्थित था।

सवदेवी

महाभारत, वन० 83,14 15 में वर्णित तीर्थ (पाठांतर सपदेवी)। 'सवदेवीं समासाद्य नागानां तीर्थमुत्तमम्। अग्निष्टोममवाप्नोति नागलोकं च विंदति। ततोगच्छेत धर्मज्ञ द्वारपालं तरन्तुकम्'। श्री वासुदेवशरण अग्रवाल के मत में यह वर्तमान सफीदा (पश्चिमी पाकिस्तान) है। द्वारपाल शब्द संभवतः खैबर दर्रे के लिए प्रयुक्त हुआ है। द्वारपाल का उल्लेख सभा० 32 12 में भी पश्चिमोत्तर में स्थित प्रदेशों के साथ है। सफीदों सवदेवी का ही फारसी रूपांतरण प्रतीत होता है।

सवतुक

रैवतक पर्वत के निकट स्थित वनोद्यान—'चित्रकम्बलवर्णाभं पांचजन्यवनं तथा, सवतुकवनं चैव भाति रैवतकं प्रति' महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ। यह वन द्वारका के समीप था।

सलहेरि

सलहेरि का किला सूरत के निकट स्थित था। शिवाजी के प्रधान सेनापति मोरोपंत ने इसे 1671 ई० में जीत लिया था। 1672 में दिल्ली के सेनापति दिलेरखां ने इसे घेर लिया और मराठा तथा मुगल सेनाओं में भयंकर युद्ध हुआ। मुगलसेना की बुरी तरह से हार हुई और वह तितर बितर हो गई। मुगलों के मुख्य सेनानायकों में से 22 मारे गए और अनेक बंदी हुए। महाकवि भूषण ने शिवराज भूषण में कई स्थानों पर इस युद्ध का उल्लेख किया है—

'साहितनँ सरजा सुमान सलहरिपास किन्ही कुरुखेत खीभि मीर अचलनसो' छद, 96। इसी युद्ध मे मुगलो की ओर से लडने वाला अमरसिंह चदावत भी मारा गया था जिसका उल्लेख उपयुक्त छद म इस प्रकार है, 'अमर के नाम के बहाने गो अमनपुर, चदावत लरि सिवराज क बलन सो'।

सलातुर=शलातुर

सलिलराज

सिंध नदी के समुद्र मे गिरने का स्थान (दे० महा० वन०42, पद्मपुराण स्वग 11)।

सलीमगढ़

दिल्ली मे यमुना के पुल के निकट स्थित है। इस किले की स्थापना 1546 ई० म शेरशाह क पुत्र सलीमशाह ने हुमायू क आक्रमणो का रोकने के लिए की थी। शाहजहा ने दिल्ली का प्रसिद्ध लालकिला सलीमगढ के किले के दक्षिण म बनवाया था।

सलेमाबाद दे० परशुरामपुरी

सवाईमाधोसिंह (राजस्थान)

सवाईमाधोसिंह नाम के स्टेशन के निकट ही यह पुराना नगर बसा हुआ है। इसे जयपुर नरेश सवाई माधोसिंह ने बसाया था। ऐसा प्रतीत होता है कि रणथभोर का प्रसिद्ध गढ हाथ आने पर ही इसके निकट यह नगर महाराज ने बसाया था। प्राचीन नगर यद्यपि अब जीर्णशीर्ण दशा मे है किंतु बसाया यह काफी विस्तार से गया था। रणथभोर का इतिहास-प्रसिद्ध दुर्ग यहा से प्राय छ मीलदूर है। सवाई माधोपुर म तीन जैन मदिर और एक चैत्यालय है।

ससोई=शशिमती

सहजाति (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०)

इस बौद्धकालीन नगर का अभिज्ञान वर्तमान भीटा नामक कस्बे के साथ किया गया है। बौद्धकाल के अनेक अवशेष इस स्थान से प्राप्त हुए हैं। एक मुहर पर 'सहजातिय निगमस' शब्द अंकित है जिससे इस स्थान का प्राचीन काल मे व्यापारिक महत्त्व सिद्ध होता है। (दे० रिपोर्ट, पुरातत्त्व विभाग 1911 12, पृ० 38) निगम व्यापारिक सघ को कहते थे। राइस डेवीज़ के अनुसार सहजाति गगा नदी के तट पर व्यापारिक नगर था। (बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 103) अगुत्तरनिकाय नामक पाली ग्रथ म इस नगर को चेदि (पाली चेति) जनपद का नगर बताया गया है—'आयस्मा महाचुडा चेतिसु विहरति सहजातियन'। महावश 4,23 मे भी सहजाति का उल्लेख है।

सहनकोट दे० रुद्रपुर
सहवइया पथरी दे० लहोरियादह
सहराल दे० सरालक
सहलाटवी

आटविक (अटवी) प्रदेश का एक भाग जिसका उल्लेख लूडस की लिस्ट के अभिलेख स० 1995 म है।

सहसराम (तहसील और जिला शाहाबाद, बिहार)

सहसराम में दिल्ली के सुलतान शेरशाह सूरी (1540 1545 ई०) तथा उसक पिता के मकबरे स्थित है। शेरशाह का ज मस्थान सहसराम ही है। उसका मकबरा एक विस्तीण तडाग के अदर बना है। यह भवन अठकोण है। इसम एक बाहरी बरामदा है। गुबद भीतरी दीवारो पर आधत है। मकबरे के चारो ओर एक वर्गाकार चबूतरा है जिसके कोना पर छोटे छोटे मडप बने हुए हैं। गुबद के शीर्ष के चतुर्दिक् अठकोणस्तभाकार रचनाए हैं जिससे मकबरे की बहीरेखा की सुदरता द्विगुणित हो जाती है। सहसराम के पूव की ओर चदनपीर की पहाडी को एक गुफा म अशोक का लघु शिलालेख स० 1 उत्कीण है।

सहसवा (जिला बदायू)

प्राचीन नाम सहस्रबाहुनगर कहा जाता है।

सहस्रधारा (जिला माडला म० प्र०)

नमदा नदी के प्रपात के कारण उल्लेखनीय है। कहा जाता है इसी स्थान पर सहस्रबाहु ने नमदा के प्रवाह को अपनी हजार बाहुओ स रोक लिया था।

सहस्रबाहुनगर=सहसवा

सहस्रावत (जिला जबलपुर, म० प्र०)

नमदा के तट पर प्राचीन तीथ है। इसका वतमान नाम सुनाचार घाट है। सहस्रावत का शाब्दिक अथ सहस्र भवरो वाला स्थान है जो नदी की गभीरता को प्रकट करता है।

सहेठ महेठ दे० श्रावस्ती
सह य=सह्याद्रि

पश्चिमी घाट की पवत-शृखला। सह्य की गिनती पुराणा म उल्लिखित सप्तकुलपवतों मे की गई है—'महेन्द्रो मलय सह्य शुक्तिमानृक्षपवत विन्ध्यश्च पारियात्रश्चसप्तैते कुलपवता' विष्णु० 2,3,3। विष्णु० 2,3,12 म गोदावरी, भीमरथी, कृष्णवेणा (कृष्णा) आदि नदियो को सह्याद्रि से निस्सृत माना है—

'गोदावरी भीमरथी कृष्णवेण्यादिकास्तथा सह्यपादोदभूता नद्य स्मृता पापभयापहा'। सप्तकुलपर्वतों का परिचायक उपर्युक्त श्लोक महाभारत (भीष्म० 9,11) म भी ठीक इसी प्रकार दिया हुआ है। श्रीमदभागवत 5,19,16 म सह्य की गणना अन्य भारतीय पर्वतों के साथ की गई है—'मलयो मगलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूटऋषभ कूटक कोल्लक सह्यो देवगिरिऋष्यमूक'। रघुवश 4, 52,53 म सह्याद्रि का उल्लेख रघु की दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे है—'असह्य विक्रम सह्य दूरा मुक्तमुदन्वता नितम्बमिव मदि या स्रस्तागुकमलघयत, तस्यानीक विसपदिभरपरा तजयोद्यतै रामास्त्रोत्सारितोऽप्यासीत्सह्यलग्न। इवाणव' इस उद्धरण मे सह्याद्रि का अपरान्त की विजय के सबध मे वणन किया गया है। श्री चि० वि० वैद्य के अनुसार सह्याद्रि का विस्तार त्र्यबकेश्वर (नासिक के समीप पवत) स मलाबार तक माना गया है। इसके दक्षिण म मलय गिरिमाल स्थित है। वाल्मीकि युद्ध० 4 94 मे सह्य तथा मलय का उल्लेख है, 'ते सह्य समतिक्रम्य मलयच महागिरिम, आसेदुरानुपूर्व्येण समुद्र भीमनि स्वनम'।

साक

ग्वालियर (म० प्र०) के निकट बहने वाली एक नदी जो ग्वालियर के प्रसिद्ध तोमर नरेश मानसिंह (15 वी शती) की रानी मगनयनी के जन्मस्थान राई नामक ग्राम के पास बहती थी। ग्वालियर के प्रदेश की लोक कथाओ म मगनयनी के सबध मे साक का भी उल्लेख मिलता है। उस यह नदी बहुत प्रिय थी।

साकाश्य

(1) प्राचीन भारत म पचाल जनपद का प्रसिद्ध नगर जो वतमान सकिसा-बसतपुर (जिला एटा, उ० प्र०) है। यह फरुखाबाद के निकट स्थित है। साकाश्य का सवप्रथम उल्लेख सभवत वाल्मीकि आदि० 71,16-19 म है जहा साकाश्य-नरेश सुधन्वा का जनक की राजधानी मिथिला पर आक्रमण करने का उल्लेख है। सुधन्वा सीता स विवाह करने का इच्छुक था। जनक के साथ युद्ध मे सुधन्वा मारा गया तथा साकाश्य के राज्य का शासक जनक ने अपने भाई कुशध्वज को बना दिया। उर्मिला इन्ही कुशध्वज की पुत्री थी, 'कस्यचित्त्वथ कालस्य साकाश्यादागत पुरात, सुधन्वा वीयवान् राजा मिथिलामवरोधक। निहत्य त मुनिश्रेष्ठ सुधन्वान नराधिपम्, साकाश्य भ्रातर शूरमभ्यषिञ्च कुशध्वजम्'। महाभारत काल म साकाश्य की स्थिति पूव पचालदेश में थी और यह नगर पचाल की राजधानी काम्पिल्य स अधिक दूर नही था। गौतम

बुद्ध के जीवन काल मे साकाश्य ख्यातिप्राप्त नगर था। पाली कथाओ के अनुसार यही बुद्ध त्रयस्त्रिंश स्वर्ग से अवतरित होकर आए थे। इस स्वर्ग म वे अपनी माता तथा तैंतीस देवताओ को अभिधम्म की शिक्षा देने गए थे। पाली-दतकथाओ क अनुसार बुद्ध तीन सीढियो द्वारा स्वर्ग स उतरे थे और उनके साथ ब्रह्मा और शक्र भी थे। इस घटना से सबध होने क कारण बौद्ध, साकाश्य को पवित्र तीर्थ मानत थे और इसी कारण यहा अनेक स्तूप एव विहार आदि का निर्माण हुआ था। यह उनके जीवन की चार आश्चर्यजनक घटनाओ म से एक मानी जाती है। साकाश्य ही म बुद्ध ने अपने प्रमुख शिष्य आनद के कहने से स्त्रियो की प्रव्रज्या पर लगाई हुई रोक को तोडा था और भिक्षुणी उत्पलवर्णा को दीक्षा देकर स्त्रियो के लिए भी बौद्ध सघ का द्वार खोल दिया था। पालि-ग्रथ अभिधानप्पदीपिका म सकस्स (साकाश्य) की उत्तरी भारत के बीस प्रमुख नगरो मे गणना की गई है। पाणिनि न 4,2,80 म साकाश्य की स्थिति इक्षुमती नदी पर कही है जो सकिसा क पास बहने वाली ईखन है। 5 वी शती म चीनी यात्री फाह्यान ने सकिसा के जनपद के सख्यातीत बौद्ध विहारो का उल्लेख किया है। वह लिखता है कि यहा इतन अधिक विहार थे कि कोई मनुष्य एक-दो दिन ठहर कर तो उनकी गिनती भी नही कर सकता था। सकिसा के सघाराम म उस समय छ या सात सौ भिक्षुओ का निवास था। युवानच्वाग ने 7वी शती म साकाश्य म स्थित एक 70 फुट ऊचे स्तभ का उल्लेख किया है जिसे राजा अशोक न बनवाया था। इसका रग बैंजनी था। यह इतना चमकदार था कि जल मे भीगा सा जान पडता था। स्तभ के शीर्ष पर सिंह की विशाल प्रतिमा जटित थी जिसका मुख राजाओ द्वारा बनाई हुई सीढियो की ओर था। इस स्तभ पर चित्र विचित्र रचनायें बनी थी जो बौद्धो के विश्वास के अनुसार केवल साधु पुरुषो को ही दिखलाई देती थी। चीनी यात्री ने इस स्तभ का जो वर्णन किया है वह वास्तव म अद्भुत है। यह स्तभ साकाश्य की खुदाई मे अभी तक नही मिला है। विषहरी देवी के मदिर के पास जो स्तभ शीर्ष रखा है वह सम्भवत एक विशाल हाथी की प्रतिमा है न कि सिंह की और इस प्रकार उसका अशोकस्तभ का शीर्ष होना सदिग्ध है। युवानच्वाग ने साकाश्य का नाम कपित्थ भी लिखा है। सकिसा के उत्तर की ओर एक स्थान कारेवर तथा नागताल नाम से प्रसिद्ध है। प्राचीन किंवदती के अनुसार कारेवर एक विशाल सर्प का नाम था। लोग उसकी पूजा करते थे और इस प्रकार उसकी कृपा से आसपास का क्षेत्र सुरक्षित रहता था। ताल के चिह्न आज भी हैं। इसकी परिक्रमा बौद्ध यात्री करते है। जन मतानुसार

साकाश्य का तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथ की ज्ञान-प्राप्ति का स्थान मानते है। संकिसा ग्राम आजकल एक ऊँचे टील पर स्थित है। इसके आस पास अनेक टीले हैं जिन्हे गौटपाकर, फाटमुना, कोटद्वारा, ताराटीला, गौतरताल आदि नामों से अभिहित किया जाता है। इसका उत्खनन होने पर इस स्थान से अनेक बहुमूल्य प्राचीन अवशेषों के प्राप्त होने की आशा है। प्राचीन साकाश्य पर्याप्त बड़ा नगर रहा होगा क्योंकि इसकी नगर-भित्ति के अवशेष जो आज भी वर्तमान हैं, प्राय 4 मील के घेरे में हैं।

(2) (वर्मा) ब्रह्मदेश का प्राचीन भारतीय नगर। इस देश में अति प्राचीन समय से लेकर मध्यकाल तक अनेक भारतीय उपनिवेशों को बसाया गया जहाँ हिंदू एवं बौद्ध नरेशों का राज्य था। संकाश्य या साकाश्य नामक नगर, संभवत भारत के इसी नाम से प्रसिद्ध प्राचीन नगर के नाम पर बसाया गया था।

साख (जिला फतहपुर, उ० प्र०)

यह ग्राम बौद्धकालीन जान पड़ता है। यहाँ पाँच प्राचीन मठ हैं जिनमें से एक बौधायन के मंदिर के नाम से प्रसिद्ध है। संभव है यह साख वही स्थान है जिसका उल्लेख चीनी यात्री फाह्यान ने अपने यात्रा वृत्त में किया है।

सागल

यह नगर अलक्षेंद्र को अपने भारत पर आक्रमण के समय (327 ई० पू०) रावी नदी को पार करने पर, 3 दिन की यात्रा के पश्चात मिला था। नगर एक परकोटे के अंदर स्थित था। इसी स्थान पर कठ आदि कई गणतंत्र राज्यों ने मिलकर अलक्षेंद्र का डटकर सामना किया था। इस स्थान का अभिज्ञान अभी तक ठीक प्रकार से नहीं किया जा सका है। कनिंघम ने इस आधार पर कि शाकल और सागल एक ही हैं, संगलटिब्बा से इसका अभिज्ञान किया था किंतु 'रिपोर्ट ऑन-संगलटिब्बा' (पंजाब प्रेस लाहौर, 1906) में सी० जो० रोजर्स ने इस अभिज्ञान को गलत साबित किया था। स्मिथ के अनुसार यह स्थान गुरुदासपुर जिले में रहा होगा। इस नगर को अलक्षेंद्र की सेना ने पूर्णरूपेण विध्वंस कर दिया था इसलिए उसके अवशेष मिलने की कोई संभावना नहीं है (दे० शाकल)। केंब्रिज हिस्ट्री ऑव इंडिया, जिल्द 1, पृ० 371 में सागल की स्थिति अमृतसर से पूर्व वर्तमान जांदियाल के पास मानी गई है। श्री वा० श० अग्रवाल के मत में पाणिनि ने 4-2 75 में इसी का सकल नाम से उल्लेख किया है।
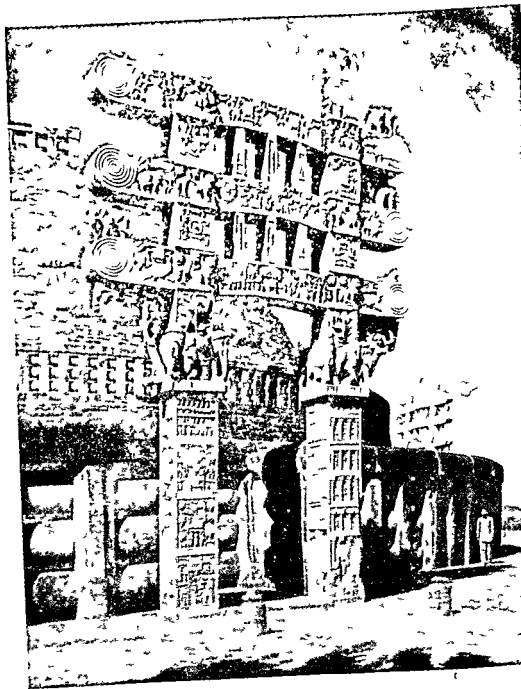
सांची स्तूप का पूर्वी तोरण द्वार
(भारतीय पुरातत्त्व विभाग के सौजन्य से)

सांची (म० प्र०)

यह प्रसिद्ध स्थान, जहा अशोक द्वारा निर्मित एक महान स्तूप, शुगो के शासनकाल म निर्मित इस स्तूप के भव्य तोरणद्वार तथा उन पर की गई जगत्-प्रसिद्ध मूर्तिकारी भारत के प्राचीन वास्तु तथा मूर्तिकला के सर्वोत्तम उदाहरणो मे हैं, बौद्धकाल को प्रसिद्ध ऐश्वयशालिनी नगरी विदिशा (भीलसा) के निकट स्थित है। जान पडता है कि बौद्धकाल म साची, महानगरी विदिशा की उपनगरी तथा विहार स्थली थी। सर जॉन मार्शल के मत म (दे० ए गाइड टु साची) कालिदास ने नीचगिरि नाम स जिस स्थान का वणन मेघदूत म विदिशा के निकट किया है, वह साची की पहाडी ही है।

कहा जाता है कि अशोक ने अपनी प्रिय पत्नी देवी के कहने पर ही साची मे यह सुदर स्तूप बनवाया था। देवी, विदिशा के एक श्रेष्ठी की पुत्री थी और अशोक ने उस समय उससे विवाह किया था जब वह अपने पिता के राज्यकाल मे विदिशा का कुमारामात्य था।

यह स्तूप एक ऊची पहाडी पर निर्मित है। इसके चारो ओर सुदर परिक्रमा-पथ है। बालु प्रस्तर के बने चार तोरण स्तूप के चतुर्दिक स्थित हैं जिन के लवे लवे पट्टको पर बुद्ध के जीवन से सबधित, विशेषत जातका म वर्णित कथाओ का मूर्तिकारी के रूप मे अद्भुत अकन किया गया है। इस मूर्तिकारी मे प्राचीन भारतीय जीवन के सभी रूपो का दिग्दशन किया गया है। मनुष्यो के अतिरिक्त पशु पक्षी तथा पेड पौधो के जीवत चित्र इस कला की मुख्य विशेपता हैं। सरल तथा सामान्य सौदय की उद्भावना ही सांची की मूर्तिकला की प्रेरणात्मक शक्ति है। इस मूर्तिकारी मे गौतम बुद्ध की मूर्ति नही पाई जाती क्योकि उस समय तक (शुग काल,द्वितीय शती ई० पू०) बुद्ध का दवता के रूप म मूर्ति बनाकर नही पूजा जाता था। कनिष्क के काल म महायान धम के उदय होने के साथ ही बौद्ध धम मे गौतम बुद्ध की मूर्ति का प्रवेश हुआ। सांची म बुद्ध की उपस्थिति का आभास उनके कुछ विशिष्ट प्रतीको द्वारा किया गया है, जस उनके गृहपरित्याग का चित्रण अश्वारोही स रहित, केवल दौडते हुए घोडे के द्वारा, जिस पर एक छत्र स्थापित है, किया गया है। इसी प्रकार बुद्ध को सबोधि का आभास पीपल के वृक्ष के नीचे खाली वज्रासन द्वारा दिया गया है। पशु पक्षियो के चित्रण मे सांची का एक मूर्तिचित्र अतीव मनोहर है। इसम जानवरो के एक चिकित्सालय का चित्रण है जहा एक तोते की विकृत आख का एक वानर मनोरजक ढग स परीक्षण कर रहा है। तपस्वी बुद्ध को एक वानर द्वारा दिए गए पायस का चित्रण भी अद्भुत रूप स किया गया है।

एक कटोरे में खीर लिए हुए एक वानर का अश्वत्थ वृक्ष के नीचे वज्रासन के निकट धीरे धीरे आने तथा खाली कटोरा लेकर लौट जाने का अंकन है जिसमें वास्त विकता का भाव दिखाने के लिए उसी वानर की लगातार कई प्रतिमाएं चित्रित हैं। सांची की मूर्तिकला दक्षिण भारत की अमरावती की मूर्तिकला की भांति ही पूर्व बौद्ध कालीन भारत के सामान्य तथा सरल जीवन की मनोहर भांकी प्रस्तुत करती है। सांची के इस स्तूप में से उत्खनन द्वारा सारिपुत्र तथा मोग्गलायन नामक भिक्षुओं के अस्थिअवशेष प्राप्त हुए थे जो अब स्थानीय संग्रहालय में सुरक्षित हैं। सांची में अशोक के समय का एक दूसरा छोटा स्तूप भी है, इसमें तोरण द्वार नहीं हैं। अशोक का एक प्रस्तर स्तंभ जिस पर मौर्य सम्राट का शिलालेख उत्कीर्ण है यहां के महत्त्वपूर्ण स्मारकों में से है। यह स्तंभ भग्नावस्था में प्राप्त हुआ था।

सांची से मिलने वाले कई अभिलेखों में इस स्थान को काकनादबोट नाम से अभिहित किया गया है। इनमें से प्रमुख 131 गुप्त संवत (=450-51) ई० का है जो कुमारगुप्त प्रथम के शासनकाल से संबंधित है। इसमें बौद्ध उपासक सनसिद्ध की पत्नी उपासिका हरिस्वामिनी द्वारा काकनादबोट में स्थित आर्यसंघ के नाम कुछ धन के दान में दिए जाने का उल्लेख है। एक अन्य लेख एक स्तंभ पर उत्कीर्ण है जिसका संबंध गोसुरसिंहबल के पुत्र विहारस्वामिन् से है। यह भी गुप्तकालीन है।

सांभर दे० शाकंभरी

साकित (जिला एटा, उ० प्र०)

यह स्थान मकतदेव चौहान का बसाया हुआ है। 1285 ई० में यहां बलबन ने मसजिद बनवाई थी।

साकेत

अयोध्या (उ० प्र०) के निकट, पूर्व बौद्धकाल में बसा हुआ नगर जो अयोध्या का एक उपनगर था। वाल्मीकि रामायण से ज्ञात होता है कि श्रीराम के स्वर्गारोहण के पश्चात अयोध्या उजाड़ हो गई थी। जान पड़ता है कि कालांतर में, इस नगरी के, गुप्तकाल में फिर से बसने के पूर्व ही साकेत नामक उपनगर स्थापित हो गया था। वाल्मीकि रामायण तथा महाभारत के प्राचीन भाग में साकेत का नाम नहीं है। बौद्ध साहित्य में अधिकतर, अयोध्या के उल्लेख के बजाय सर्वत्र साकेत का ही उल्लेख मिलता है, यद्यपि दोनों नगरियों का साथ साथ वर्णन भी है (दे० राइस डेवीज—बुद्धिस्ट इंडिया, पृ० 39)। गुप्त-काल में साकेत तथा अयोध्या दोनों ही का नाम मिलता है। इस समय तक

अयोध्या पुन बस गई थी और चद्रगुप्त द्वितीय ने यहा अपनी राजधानी भी बनाई थी। कुछ लोगो के मत म बौद्धकाल मे साकेत तथा अयोध्या दोनो पर्यायवाची नाम थे किंतु यह सत्य नही जान पडता। अयोध्या की प्राचीन बस्ती इस समय भी रही होगी किंतु उजाड होन के कारण उसका पूवगौरव विलुप्त हो गया था। वेबर क अनुसार साकेत नाम के कई नगर थ (इडियन एटिक्वेरी, 2, 208)। कनिघम ने साकेत का अभिज्ञान फाह्यान व शाचे (Shache) और युवानच्वाग की विशाखा नगरी स किया है किंतु अब यह अभिज्ञान अशुद्ध प्रमाणित हो चुका है। सब बातो का निष्कर्ष यह जान पडता है कि अयोध्या की रामायणकालीन बस्ती क उजड जान के पश्चात बौद्धकाल क प्रारभ म (6ठी 5वी शती ई० पू०) साकेत नामक अयोध्या का एक उपनगर बस गया था जो गुप्तकाल तक प्रसिद्ध रहा और हिंदू धम क उत्कषकाल म अयोध्या की बस्ती फिर से बस जान क पश्चात धीरे धीरे उसी का अग बन कर अपना पृथक् अस्तित्व खो बैठा। ऐतिहासिक दृष्टि म साकेत का सवप्रथम उल्लेख शायद बौद्ध जातककथाओ म मिलता है। नदियमिग जातक मे साकेत का कोसल-राज की राजधानी बताया गया है। महावग्ग 7 11 म साकेत का श्रावस्ती स 6 कोस दूर बताया गया है। पतजलि न द्वितीय शती ई० पू० म साकेत न यौक (यवन) आक्रमणकारियो का उल्लेख करत हुए उनक द्वारा साकेत के आक्रात होन का वणन किया है, 'अरुनद् यवन साकेतन् [illegible] यवनो [illegible]'। अधिकाश विद्वानो के मत म पतजलि न यहा [illegible] ([illegible]) के भारत आक्रमण का उल्लेख किया है। [illegible] 5,31 म [illegible] की राजधानी को साकेत कहा है—[illegible] द्वावप्यभूताम- [illegible] सत्वौ, गुरुप्रदेयाधिकनि[illegible]। [illegible] 13,62 मे राम की राजधानी [illegible] से अभिहित किया गया है

आनुषंगिक रूप से, इस तथ्य से, कालिदास का समय गुप्तकाल ही सिद्ध होता है।

सागर

(1) (जिला गुलबर्गा, मसूर) बहमनी और आदिलशाही शासनकाल में सागर की राजनैतिक तथा धार्मिक दृष्टि से दक्षिण के महत्त्वपूर्ण नगरों में गिनती थी जैसा कि यहां की विशिष्ट दुर्गरचनाओं, प्रवेशद्वारों दरगाहों तथा विशाल जामा मसजिद के अवशेष से ज्ञात होता है।

(2) (म० प्र०) दक्षिण बुंदेलखंड के एक भाग पर मुगलकाल में कुछ समय तक निहालसिंह राजपूत के वंशजों का राज्य रहा था। इसी वंश के नरेश उदानशाह ने 1650 ई० में सागर नगर बसाया था। कहा जाता है कि सागर के पास का परकोटा नामक ग्राम भी इसी ने बसाया था। गढ़पहरा नामक नगर छत्रसाल के आक्रमण के पश्चात् उजाड़ हो गया था और वहां के निवासी सागर आकर बस गए थे।

सागरकुक्षि

'ततः सागरकुक्षिस्थान् म्लेच्छान् परमदारुणान् पह्लवान् बर्बरांश्चैव किरातान् यवनाञ्छकान्। ततो रत्नान्युपादाय वशे कृत्वा च पार्थिवान् न्यवर्तत कुरुश्रेष्ठो नकुलश्चित्रमार्गवित्' महा० सभा० 32,16 17। नकुल ने अपनी दिग्विजय यात्रा में सागरकुक्षि में स्थित म्लेच्छ तथा बर्बरों को परास्त किया था। यह स्थान सिंधु नदी के मुहाने के निकट का प्रदेश हो सकता है (श्री वा श अग्रवाल)। इसका अभिज्ञान इस मुहाने के निकट छोटे छोटे टापुओं से किया जा सकता है, जो कराची (पाकिस्तान) के निकट समुद्र में स्थित हैं। (दे० सागरद्वीप)

सागरद्वीप

'ततः शूर्पारकं चैव तालाकटमथापि च, वशेचक्रे महातेजा दंडकांश्च महाबल, सागरद्वीपवासांश्च नृपतीन् म्लेच्छयोनिजान् निषादान् पुरुषादांश्च कर्णप्रावरणानपि' महा० 31,66। सागरद्वीप निवासियों और निषाद आदि विजातियों पर अपनी दिग्विजय यात्रा में सहदेव ने विजय प्राप्त की थी। रायचौधरी के मत में यह सिंध का दक्षिणी समुद्रतट या कच्छ हो सकता है। शायद इसी का उल्लेख यूनानी लेखकों (स्ट्रैबो) ने साइगर्डिस (Siegerdis) के नाम से किया है जो सागरद्वीप का ग्रीक रूपांतरण जान पड़ता है।

सागलनगर दे० शाकल

साचौर=सत्यपुर

साणा (सौराष्ट्र, बबई)

साणा प्राचीन बब्बर जनपद या वर्तमान काठियावाड के अतर्गत स्थित है। यहा एक पहाडी म कटी हुई 62 गुफाए है जो सभवत जैन भिक्षुओ के निवास के लिए निर्मित की गई थी।

सातगाव (जिला हुगली, पश्चिम बगाल)

प्रारभिक ई० शतियो मे रोम के साथ व्यापार के लिए यह बदरगाह प्रसिद्ध था। रोमन इसे गगा की राजधानी (Ganges regia) कहते थे।

सातहनिरट्ठ=शातवाहन राष्ट्र

सादापुरवेवक

जिला मेदक (आध्र) का मध्यकालीन नाम। गोलकुडा नरेशो के शासन-काल मे बदल कर यह नाम गुलशनाबाद कर दिया गया था। हैदराबाद के शासको के समय इसका नाम पुन एक बार बदल गया और तेलगू शब्द मेथुकु (चावल का प्याला) के आधार पर इसे मेदक कहा जाने लगा। यह तालुका चावल की उपज के लिए प्रसिद्ध है।

सानोउडयार (जिला अलमोडा, उ० प्र०)

स्थानीय जनश्रुति के अनुसार यह स्थान शाडिल्य ऋषि का तप स्थल है और उन्ही के नाम पर इस स्थान का नामकरण हुआ था।

साबरमती

प्राचीन नाम श्वभ्रमती और गिरिकर्णिका। (दे० श्वभ्र)

साबितगढ़ दे० अलीगढ

सामूगढ (जिला आगरा, उ० प्र०)

1658 मे शाहजहा की मृत्यु के पश्चात उसके पुत्रो म राजसिंहासन के लिए घोर सघर्ष हुआ। औरगजेब और मुराद की सयुक्त सेनाओ ने आगरे पर चढाई की और शाहजहा के ज्येष्ठ पुत्र दारा को सामूगढ के मैदान म होने वाले भारी युद्ध मे हराया। दारा की सेना की भयानक पराजय हुई जिसके कारण यह अभागा राजकुमार दर दर का फकीर बन गया और अत मे औरगजेब द्वारा पकडा और मारा गया।

सारगगढ दे० पटिया

सारगनाथ दे० सारनाथ

सारगपुर (म० प्र०)

उत्तरमध्यकालीन भवनो के अवशेष के लिए यह स्थान प्रसिद्ध है।

था। उसने सारनाथ मे चार बड़े स्तूप और पाच विहार देखे थे। 6ठी शती ई० मे हूणो ने इस स्थान पर आक्रमण करके यहा के प्राचीन स्मारको को घोर क्षति पहुचाई। इनका सेनानायक मिहिरकुल था। 7वी० शती ई० के पूर्वार्ध मे, प्रसिद्ध चीनी यात्री युआनच्वाग ने वाराणसी और सारनाथ की यात्रा की थी। उस समय यहा 30 बौद्ध विहार थे जिनमे 1500 थेरावादी भिक्षु निवास करते थे। युवानच्वाग ने सारनाथ मे 100 हिंदू देवालय भी देखे थे जो बौद्ध धर्म के धीरे धीरे पतनोन्मुख होने तथा प्राचीन धर्म के पुनरोत्कर्ष के परिचायक थे। 11वी शती मे महमूद गजनवी ने सारनाथ पर आक्रमण किया और यहा के स्मारको को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। तत्पश्चात 1194 ई० मे मुहम्मद गोरी के सेनापति कुतुबुद्दीन ने तो यहा की बचीखुची प्राय सभी इमारतो तथा कलाकृतियो को लगभग समाप्त ही कर दिया। केवल दो विशाल स्तूप ही छ शतियो तक अपने स्थान पर खड़े रहे। 1794 ई० मे काशी नरेश चेतसिंह के दीवान जगतसिंह ने जगतगज नामक वाराणसी के मुहल्ले को बनवाने के लिए एक स्तूप की सामग्री काम मे ले ली। यह स्तूप ईटो का बना था। इसका व्यास 110 फुट था। कुछ विद्वानो का कथन है कि यह अशोक द्वारा निर्मित धमराजिक नामक स्तूप था। जगतसिंह ने इस स्तूप का जो उत्खनन करवाया था उसमे इस विशाल स्तूप के अदर से बलुवा पत्थर और सगमरमर के दो बर्तन मिले थे जिनमे बुद्ध के अस्थि अवशेष पाए गए थे। इन्हे गगा मे प्रवाहित कर दिया गया।

पुरातत्व विभाग द्वारा यहा जो उत्खनन किया गया उसमे 12वी शती ई० मे यहा होने वाले विनाश के अध्ययन से ज्ञात होता है कि यहा के निवासी मुसलमानो के आक्रमण के समय एकाएक ही भाग निकले थे क्योकि विहारो की कई कोठरियो मे मिट्टी के बर्तनो मे पकी दाल और चावल के अवशेष मिले थे। 1854 ई० मे भारत सरकार ने सारनाथ को एक नील के व्यवसायी फर्ग्युसन से खरीद लिया। लका के अनागरिक धर्मपाल के प्रयत्नो से यहा मूलगधकुटीविहार नामक बौद्ध मदिर बना था। सारनाथ के अवशिष्ट प्राचीन स्मारको मे निम्न स्तूप उल्लेखनीय है—चौखडी स्तूप इस पर मुगल सम्राट् अकबर द्वारा अकित 1588 ई० का एक फारसी अभिलेख खुदा है जिसमे हुमायू के इस स्थान पर आकर विश्राम करने का उल्लेख है। (चौखडी स्तूप के निर्माता का ठीक ठीक पता नही है। कनिंघम ने इस स्तूप का उत्खनन द्वारा अनुसधान किया भी था किंतु कोई अवशेष न मिले), धमेख अथवा धर्ममुख स्तूप—पुरातत्व विद्वानो के मतानुसार यह स्तूप गुप्तकालीन है और भावी बुद्ध मैत्रेय के सम्मानार्थ बनवाया गया था। किंवदती है कि यह वही स्थल है जहा मैत्रेय

सारनाथ (जिला वाराणसी, उ० प्र०)

वाराणसी से 4 मील उत्तर की ओर बसा हुआ इतिहास प्रसिद्ध स्थान है जो गौतम बुद्ध के प्रथम धर्मप्रचार (धर्मचक्रप्रवर्तन) के लिए जगद्विख्यात है। बौद्धकाल में इसे ऋषिपत्तन (पाली—इसीपत्तन) भी कहते थे क्योंकि नगर विद्या के केंद्र काशी के निकट होने के कारण यहां भी ऋषि मुनि निवास करते थे। ऋषिपत्तन के निकट ही मृगदाव नामक मृगों के रहने का वन था जिसका संबंध बोधिसत्व की एक कथा से भी जोड़ा जाता है। बोधिसत्व ने अपने किसी पूर्वजन्म में, जब वे मृगदाव में मृगों के राजा थे, अपने प्राणों की बलि देकर एक गर्भवती हरिणी की जान बचाई थी। इसी कारण इस वन का सार—या सारंग (मृग)—नाथ कहने लगे। रायबहादुर दयाराम साहनी के अनुसार शिव को भी पौराणिक साहित्य में सारंगनाथ कहा गया है और महादेव शिव की नगरी काशी की समीपता के कारण यह स्थान शिवोपासना की भी स्थली बन गया। इस तथ्य की पुष्टि सारनाथ में, सारंगनाथ नामक शिवमंदिर की वर्तमानता से होती है। एक स्थानीय किंवदंती के अनुसार बौद्धधर्म के प्रचार के पूर्व सारनाथ शिवोपासना का केंद्र था। किंतु, जैसे गया आदि और भी कई स्थानों के इतिहास से प्रमाणित होता है बात इसकी उलटी भी हो सकती है, अर्थात् बौद्धधर्म के पतन के पश्चात् ही शिव की उपासना यहां प्रचलित हुई हो। जान पड़ता है कि जैसे कई प्राचीन विशाल नगरों के उपनगर या नगरोद्यान थे (जैसे प्राचीन विदिशा का सांची, अयोध्या का साकेत आदि) उसी प्रकार सारनाथ में मूलतः ऋषियों या तपस्वियों के आश्रम स्थित थे जो उन्होंने काशी के कोलाहल से बचने के लिए, किंतु फिर भी महान नगरी के सान्निध्य में, रहने के लिए बनाए थे।

गौतमबुद्ध गया में संबुद्धि प्राप्त करने के अनंतर यहां आए थे और उन्होंने कौंडिन्य आदि अपने पूर्व साथियों को प्रथम बार प्रवचन सुनाकर अपने नये मत में दीक्षित किया था। इसी प्रथम प्रवचन को उन्होंने धर्मचक्रप्रवर्तन कहा जो कालांतर में, भारतीय मूर्तिकला के क्षेत्र में सारनाथ का प्रतीक माना गया। बुद्ध ही के जीवनकाल में काशी के श्रेष्ठी नंदी ने ऋषिपत्तन में एक बौद्ध विहार बनवाया था (दे० विनयवग्ग वग्ग 16 बुद्धघोष रचित टीका)। तीसरी शती ई० पू० में अशोक ने सारनाथ की यात्रा की और यहां कई स्तूप और एक सुंदर प्रस्तरस्तंभ स्थापित किया जिस पर मौर्य सम्राट की एक धर्मलिपि अंकित है। इसी स्तंभ का सिंहशीर्ष तथा धर्मचक्र भारतीय गणराज्य का राजचिह्न बनाया गया है। चौथी शती ई० में चीनी यात्री फाह्यान इस स्थान पर आया

था। उसने सारनाथ मे चार बडे स्तूप और पाच विहार देखे थे। 6ठी शती ई० मे हूणो ने इस स्थान पर आक्रमण करके यहा के प्राचीन स्मारको का घोर क्षति पहुचाई। इनका सेनानायक मिहिरकुल था। 7वी० शती ई० के पूर्वार्ध मे, प्रसिद्ध चीनी यात्री युवानच्वाग ने वाराणसी और सारनाथ की यात्रा की थी। उस समय यहा 30 बौद्ध विहार थे जिनमे 1500 थेरावादी भिक्षु निवास करते थे। युवानच्वाग ने सारनाथ मे 100 हिंदू देवालय भी देखे थे जो बौद्ध धर्म के धीरे धीरे पतनोन्मुख होने तथा प्राचीन धर्म के पुनरुत्कर्ष के परिचायक थे। 11वी शती मे महमूद गजनवी ने सारनाथ पर आक्रमण किया और यहा के स्मारको को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। तत्पश्चात 1194 ई० मे मुहम्मद गोरी के सेनापति कुतुबुद्दीन ने तो यहा की बचीखुची प्राय सभी इमारतो तथा कलाकृतियो को लगभग समाप्त ही कर दिया। केवल दो विशाल स्तूप ही छ शतियो तक अपने स्थान पर खडे रहे। 1794 ई० मे काशी नरेश चेतसिंह के दीवान जगतसिंह ने जगतगज नामक वाराणसी के मुहल्ले को बनवाने के लिए एक स्तूप की सामग्री काम मे ले ली। यह स्तूप इटो का बना था। इसका व्यास 110 फुट था। कुछ विद्वानो का कथन है कि यह अशोक द्वारा निर्मित धर्मराजिक नामक स्तूप था। जगतसिंह ने इस स्तूप का जो उत्खनन करवाया था उसमे इस विशाल स्तूप के अंदर से बलुवा पत्थर और सगमरमर के दो बर्तन मिले थे जिनमे बुद्ध के अस्थि अवशेष पाए गए थे। इन्हे गगा मे प्रवाहित कर दिया गया।

पुरातत्त्व विभाग द्वारा यहा जो उत्खनन किया गया उसमे 12वी शती ई० मे यहा होने वाले विनाश के अध्ययन से ज्ञात होता है कि यहा के निवासी मुसलमानो के आक्रमण के समय एकाएक ही भाग निकले थे क्योकि विहारो की कई कोठरियो मे मिट्टी के बर्तनो मे पकी दाल और चावल के अवशेष मिले थे। 1854 ई० मे भारत सरकार ने सारनाथ को एक नील के व्यवसायी फर्ग्युसन से खरीद लिया। लका के अनागरिक धर्मपाल के प्रयत्नो से यहा मूलगधकुटीविहार नामक बौद्ध मदिर बना था। सारनाथ के अवशिष्ट प्राचीन स्मारको मे निम्न स्तूप उल्लेखनीय है—चौखडी स्तूप इस पर मुगल सम्राट् अकबर द्वारा अकित 1588 ई० का एक फारसी अभिलेख खुदा है जिसमे हुमायू के इस स्थान पर आकर विश्राम करने का उल्लेख है। (चौखडी स्तूप के निर्माता का ठीक ठीक पता नही है। कनिंघम ने इस स्तूप का उत्खनन द्वारा अनुसधान किया भी था किंतु कोई अवशेष न मिले), धमेख अथवा धममुख स्तूप—पुरातत्त्व विद्वानो के मतानुसार यह स्तूप गुप्तकालीन है और भावी बुद्ध मैत्रेय के सम्मानार्थ बनवाया गया था। किंवदती है कि यह वही स्थल है जहा मैत्रेय

को गौतम बुद्ध ने उसके भावी बुद्ध बनने के विषय म भविष्यवाणी की थी (आर्कियालाजिकल रिपाट 1904-5)। खुदाई म इसी स्तूप के पास अनेक खरल आदि मिले थे जिससे सभावना होती है कि किसी समय यहा औषधालय रहा होगा। इस स्तूप म से अनेक सुदर पत्थर निकले थे।

सारनाथ के क्षेत्र की खुदाई से गुप्तकालीन अनेक कलाकृतिया तथा बुद्ध प्रतिमाए प्राप्त हुई हैं जो वतमान सग्रहालय म सुरक्षित हैं। गुप्तकाल म सारनाथ की मूर्तिकला की एक अलग ही शैली प्रचलित थी, जो बुद्ध की मूर्तियो के आत्मिक सौंदय तथा शारीरिक सौष्ठव की सम्मिश्रित भावयोजना के लिए भारतीय मूर्तिकला के इतिहास म प्रसिद्ध है। सारनाथ म एक प्राचीन शिव मदिर तथा एक जैन मदिर भी स्थित हैं। जैन मदिर 1824 ई० म बना था, इसमे श्रियासदव की प्रतिमा है। जन किवदती है कि ये तीथकर सारनाथ से लगभग दो मील दूर स्थित सिंह नामक ग्राम म तीर्थंकर भाव को प्राप्त हुए थे। सारनाथ स कई महत्त्वपूण अभिलेख भी मिल हैं जिनमे प्रमुख काशीराज प्रकटादित्य का शिलालेख है। इसमे बालादित्य नरेश का उल्लेख है जो फ्लीट के मत मे वही बालादित्य है जो मिहिरकुल हूण के साथ वीरतापूवक लडा था। यह अभिलेख शायद 7वी शती के पूव का है। दूसरे अभिलेख में हरिगुप्त नामक एक साधु द्वारा मूर्तिदान का उल्लेख है। यह अभिलेख 8वी शती ई० का जान पडता है।

सारस्वत

सरस्वती का तटवर्ती प्रदेश (दे० पचगौड)

सालनू (जिला मडी, हिमाचल प्रदेश)

मडी जिले का सब प्राचीन अभिलेख इस स्थान पर एक शिला पर उत्कीण है। यह चौथी या पाचवी शती ई० का जान पडता है।

सालसट=दे० शाष्ठी, परिमुद

सावित्री

महाबलेश्वर की पहाडियो (सह्याद्रि) से निकलने वाली एक नदी जिसको प्राचीन समय से तीथ रूप म मा यता है।

सासनी (जिला अलीगढ)

अलीगढ स 14 मील दूर है। यहा एक पुराना मिट्टी का किला है।

सिंगपुरम=सिंहपुरम्

सिंगरौर दे० शृगवेरपुर

सिंगारपुरी (महाराष्ट्र)

नीरा नदी के दक्षिण में सतारा से प्राय 45 मील पूर्व मे स्थित है। महाराष्ट्र केसरी शिवाजी के समय यहा का राजा सूयराव था जो शिवाजी के साथ सदा कूटनीति की चालें चला करता था। सिंगारपुरी को 1664ई० म शिवाजी ने अपने अधिकार मे कर लिया। कविवर भूषण ने इस स्थान का उल्लेख शिवराज भूषण, छद 207 म इस प्रकार किया है—'जावलिवार सिंगारपुरी औ जवारिको राम के नेरि का गाजी, भूषन भौंसिला भूपति त सब दूर किए करि कीरति ताजी'।

सिंगौरगढ (जिला दमोह, म० प्र०)

गढमडला की रानी वीरागना दुर्गावती के श्वसुर राजा सग्रामशाह (मृत्यु 1540) क 52 गढो म सिंगौरगढ की भी गणना थी। सग्रामशाह के पुत्र और दुर्गावती क पति दलपतशाह ने मदनमहल (जबलपुर के निकट) को छोडकर सिंगौरगढ म अपनी राजधानी बनाई थी। उन्होने यहा के किले को बढाकर उसे सुदृढ बनाया था। यह किला परिहार राजपूतो के समय मे निर्मित हुआ था। गौंड राजाओ के समय के अवशेष भी यहा से प्राप्त हुए हैं।

सिंघाना (म० प्र०)

पूवमध्यकालीन इमारतो के अवशेष यहा से प्राप्त हुए हैं।

सिंदिमान

अलक्षेंद्र के भारत पर आक्रमण के समय (327 ई० पू०) सिंध नदी के निकट बसा एक नगर जिसका अभिज्ञान कुछ विद्वानो ने वतमान सिहवान से किया है, किंतु यह अभिज्ञान सदिग्ध है (दे० स्मिथ, अर्ली हिस्ट्री ऑव इडिया, पृ० 106)। यहा के राजा का नाम ग्रीक लेखको ने साबोस (Sambos) बताया है। यह अलक्षेंद्र के आक्रमण के समय नगर छोडकर चला गया था।

सिंद्रो (म० प्र०)

केलभर से 7 मील पर स्थित है। प्राचीन दिगबर जैन मदिर में पद्मावती देवी की 3 फुट ऊची मूर्ति है जिसके मस्तक पर तीर्थंकर पाश्वनाथ की मूर्ति आसीन है। मूर्ति पर सर्वत्र उच्चकोटि के शिल्प का प्रदशन है। इसके साथ ही मूर्ति के शरीर पर विविध आभूषणो का वि यास विशेषरूप से शोभनीय जान पडता है।

सिंदूरगिरि

रामटेक (जिला नागपुर, महाराष्ट्र) की पहाडियो का एक नाम। इन पहाडियो मे लाल रग का पत्थर मिलता है जिसका सिंदूर का सा वण है।

किंवदंती है कि नृसिंह अवतार में हिरण्यकशिपु के रक्त से यह स्थान लाल रंग का हो गया था।

सिंध=सिंधु

सिंधु

(1) सिंध नदी हिमालय की पश्चिमी श्रेणियों से निकल कर कराची के निकट समुद्र में गिरती है। इस नदी की महिमा ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर वर्णित है—'त्वंसिंधो कुभया गोमती क्रुमुमेहत्न्वा सरथं याभिरीयसे' 10,75 6। ऋग्० 10,75,4 में सिंधु में अन्य नदियों के मिलने की समानता बछड़े से मिलने के लिए आतुर गायों से की गई है—'अभित्वा सिंधो शिशुमिन्नमातरो वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः'। सिंधु के नाद को आकाश तक पहुंचता हुआ कहा गया है। जिस प्रकार मेघों से पृथ्वी पर घोर निनाद के साथ वर्षा होती है उसी प्रकार सिंधु दहाड़ते हुए वृषभ की तरह अपने चमकदार जल को उछालती हुई आगे बढ़ती चली जाती है—'दिवि स्वनो यततं भूम्या पर्यनन्तं शुष्ममुदियर्तिभानुना। अभ्रादिव प्रस्तनयन्ति वृष्टयः सिंधुर्यदेति वृषभो न रोरुवत्' ऋग्० 10 75,3।

सिंधु शब्द से प्राचीन फारसी का हिंदू शब्द बना है क्योंकि यह नदी भारत की पश्चिमी सीमा पर बहती थी और इस सीमा के उस पार से आने वाली जातियों के लिए सिंधु नदी को पार करने का अर्थ भारत में प्रवेश करना था। यूनानियों ने इसी आधार पर सिंध को इंडस और भारत को इंडिया नाम दिया था। अवेस्ता में हिंदू शब्द भारतवर्ष के लिए ही प्रयुक्त हुआ है (दे० मेक्डानल्ड—ए हिस्टी ऑव संस्कृत लिटरेचर, पृ० 141)। ऋग्वेद में सप्तसिंधव का उल्लेख है जिसे अवेस्ता में हप्तहिंदू कहा गया है। यह सिंधु तथा उसकी पंजाब की छः अन्य सहायक नदियों (वितस्ता, असिक्नी, परुष्णी, विपाशा, शुतुद्रि, तथा सरस्वती) का संयुक्त नाम है। सप्तसिंधु नाम रोमन सम्राट आगस्टस के समकालीन रोमनों को भी ज्ञात था जैसा कि महाकवि वर्जिल के Aeneid, 9,30 के उल्लेख से स्पष्ट है—Ceu septum surgens, sedatis omnibus altus per tacitum—Ganges'

सिंधु की पश्चिम की ओर की सहायक नदियां—कुभा सुवास्तु, क्रुमु और गोमती का उल्लेख भी ऋग्वेद में है। सिंधु नदी की महानता के कारण उत्तर वैदिक काल [illegible] का नाम [illegible] गया था। आज भी सिंधु नदी के प्रदेश [illegible] कहते हैं (मेक्डानेल्ड, पृ०

143) वाल्मीकि रामायण बाल० 43,13 में सिंधु को महा नदी की संज्ञा दी गई है, 'सुचक्षुश्चैव सीता च, सिंधुश्चैव महानदी, तिस्रश्चैता दिश जग्मु प्रतीचीं सु दिश शुभा'। इस प्रसंग में सिंधु की सुचक्षु (=वक्षु) तथा सीता (=तरिम) के साथ गंगा की पश्चिमी धारा माना गया है। महाभारत, भीष्म 9 14 में सिंधु का, गंगा और सरस्वती के साथ उल्लेख है, 'नदी पिबंति विपुला गंगा सिंधु सरस्वतीम गोदावरी नर्मदा च बाहुदा च महानदीम'। सिंधु नदी के तटवर्ती ग्रामणीयों को नकुल ने अपनी पश्चिमी दिशा की दिग्विजय यात्रा में जीता था, 'गणानुत्सवसंकेतान् व्यजयत पुरुषर्षभ सिंधुकूलाश्रिता ये च ग्रामणीया महाबला' सभा० 32,9। ग्रामणीय या ग्रामणेय लोग वर्तमान यूसुफजाइयों आदि कबीलों के पूर्वपुरुष थे। उत्सवजीवी ग्रामीणीयों (उत्सध जीवा=लुटेरा) को पूगग्रामणीय भी कहा जाता था। ये कबीले अपने सरदारों के नाम से ही अभिहित किए जाते थे, जैसा कि पाणिनि के उल्लेख से स्पष्ट है 'स एषा ग्रामणी'। श्रीमद्भागवत 5,19,18 में शायद सिंधु को सप्तवती कहा गया है, क्योंकि सिंधु सात नदियों की संयुक्त धारा के रूप में समुद्र में गिरती है।

महारौली स्थित लौहस्तंभ पर चंद्र के अभिलेख में सिंधु के सप्तमुखों का उल्लेख है (दे० सप्तसिंधु)। रघुवंश 4 67 में कालिदास ने रघु की दिग्विजय के प्रसंग में सिंधु तीर पर सेना के घोड़ों के विश्राम करते समय भूमि पर लोटने के कारण उनके कंधों से संलग्न केसरलवों के विकीर्ण हो जाने का मनोहर वर्णन किया है, 'विनीताध्वश्रमास्तस्य सिंधुतीरविचेष्टनैः दुधुवुर्वाजिनः स्कंधाल्लग्नकुंकुमकेसरान'। इस वर्णन से यह सूचित होता है कि कालिदास के समय में केसर सिंधु नदी की घाटी में उत्पन्न होता था। महाभारत में वर्णित सागरद्वीप शायद सिंध नदी का दक्षिणी समुद्र तट है। जैनग्रंथ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति में सिंधु नदी को चुल्लहिमवान् के एक विशाल सरोवर के पश्चिम की ओर से निस्सृत माना है और गंगा को पूर्व की ओर से।

(2) सिंध नदी के सिंचित प्रदेश—वर्तमान सिंध (पाकि०) का प्रांत। रघुवंश 15,87 में सिंध नामक देश का रामचंद्रजी द्वारा भरत को दिए जाने का उल्लेख है, 'युधाजितश्च संदेशात्स देशं सिंधुनामकम ददौ दत्तप्रभावाय भरताय भृतप्रजः'। इस प्रसंग में यह भी वर्णित है कि युधाजित (भरत का मामा, केकय नरेश) से संदेश मिलने पर उन्होंने यह कार्य सम्पन्न किया था। संभव है कि सिंध देश उस समय केकय देश के अधीन रहा हो। सिंधु पर अधिकार करने के लिए भरत ने गंधर्वों को हराया था—'भरतस्तत्र गंधर्वा

'युधि निर्जित्य गन्धर्वान् आतोद्यग्राहयामास समत्याजयदायुधम' रघु० 15.88 अर्थात भरत ने युद्ध में (सिंधु देश के) गंधर्वों को हराकर उन्हें शस्त्र त्याग कर वीणा ग्रहण करने पर विवश किया। वाल्मीकि रामायण उत्तर० 100-101 में भी यही प्रसंग सविस्तर वर्णित है 'सिंधोरुभयतः पार्श्वे देशः परमशोभनः तं च रक्षन्ति गंधर्वाः सायुधा युद्धकोविदाः' उत्तर 100,11)। इससे सूचित होता है कि सिंधु नदी के दोनों ओर के प्रदेश को ही सिंधु देश कहा जाता था। इसमें गंधार या गंधर्वों का प्रदेश भी सम्मिलित रहा होगा। यह तथ्य इस प्रकार भी सिद्ध होता है कि भरत ने इस देश को जीतकर अपने पुत्रों को तक्षशिला और पुष्कलावती (गंधार देश में स्थित नगर) का शासक नियुक्त किया था। तक्षशिला सिंधु नदी के पूर्व में और पुष्कलावती पश्चिम में स्थित थी। ये दोनों नगर इन दोनों भागों की राजधानी रहे होंगे। सिंध के निवासियों को विष्णु 2,3,17 में सैंधवा कहा गया है—'सौवीराः सैंधवाहूणाः शाल्वाः कोशलवासिनः'। सिंधु देश में उत्पन्न लवण (सैंधव) का उल्लेख कालिदास ने रघु० 5,73 में इस प्रकार किया है—'वक्त्रोष्मणा मलिनयन्ति पुरोगतानि, लेह्यानि सैंधवशिलाशकलानि वाहाः' अर्थात सामने रखे हुए सैंधव लवण के लेह्य शिलाखंडों को घोड़े अपने मुख की भाप से धुंधला कर रहे हैं। सौवीर सिंधु देश का ही एक भाग था। महरौली (दिल्ली) में स्थित चंद्र के लौहस्तंभ के अभिलेख में चंद्र द्वारा सिंधु नदी के सप्तमुखों को [illegible] का उल्लेख है—तीर्त्वा [illegible] जिता वाह्लिका तथा इस प्रदेश में वाह्लिकों की स्थिति बताई गई है (दे० दिल्ली)। यूनान के लेखकों ने अलक्षेंद्र के भारत आक्रमण के संबंध में सिंधु देश के नगरों का उल्लेख किया है। साइगरडिस (Sigerdis) नामक स्थान शायद सागर द्वीप है जो सिंधु देश का समुद्रतट या सिंधु नदी का मुहाना जान पड़ता है। अलक्षेंद्र की सेना सिंधु नदी तथा इसके तटवर्ती प्रदेश में होकर ही वापस लौटी थी। हर्षचरित, चतुर्थ उच्छ्वास में बाण ने प्रभाकरवर्धन को 'सिंधुराजज्वर' कहा है जिससे सिंधु देश पर उसके आतंक का बोध होता है। अरबों के सिंध पर आक्रमण के समय वहां दाहिर नामक ब्राह्मण-नरेश का राज्य था। यह आक्रमणकारियों से बहुत ही वीरता के साथ लड़ता हुआ मारा गया था। इसकी वीरांगना पुत्रियों ने बाद में, अरब सेनापति मुहम्मद बिनकासिम से अपने पिता की मृत्यु का बदला लिया और स्वयं आत्महत्या करली। सिंध पर मुसलमानों का अधिकार 1845 ई० तक रहा जब यहां के अमीरों को जनरल नेपियर ने मियानी के युद्ध में हराकर इस प्रांत को ब्रिटिश राज्य में मिला लिया।

3 —सिंध नदी। यह नदी विन्ध्य श्रेणी से (सिरोज (म० प्र०) के उत्तर से) निकलकर, इटावा और जालौन (उ० प्र०) के बीच यमुना में मिल जाती है। श्रीमद्भागवत में इसका नर्मदा, चर्मण्वती और शोण आदि के साथ उल्लेख है—'नर्मदा चर्मण्वती सिंधुरन्ध शोणश्च नदो महानदी '। मेघदूत (पूर्वमेघ, 31) में कालिदास ने सिंधु का इस प्रकार वर्णन किया है—'वेणीभूतप्रतनुसलिला सावतीतस्य सिंधुः पाण्डुच्छायातटरुहतरुभ्रंशिभि जीर्णपर्णैः, सौभाग्य ते सुभग विरहावस्थया व्यंजयन्ती, कार्श्येन त्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्य '। मेघ के यात्रा क्रम के अनुसार यह यमुना की सहायक प्रसिद्ध सिंधु हो सकती है, किंतु मेघ को, विदिशा से उज्जयिनी के मार्ग में, इस सिंध के मिलने की संभावना अधिक नहीं जान पड़ती क्योंकि वर्तमान भीलसा (प्राचीन विदिशा) से उज्जैन तक जाने वाली सीधी रेखा से यह नदी पर्याप्त उत्तर में छूट जाती है। यह अधिक संभव जान पड़ता है कि कालिदास ने इस स्थान पर सिंधु से कालीसिंध नामक नदी का निर्देश किया है। यह नदी भी विंध्याचल की पहाड़ियों से निकल कर उज्जैन से थोड़ी दूर पश्चिम की ओर बहती हुई कोटा के उत्तर में चंबल में मिल जाती है। सिंधु नदी के वर्णन के पश्चात् श्री 32 वें पद में कालिदास ने अवंती या उज्जैन का उल्लेख किया है जो इस नदी के कालीसिंध के साथ अभिज्ञान से ही ठीक जंचता है। यमुना की सहायक सिंध तो उज्जैन से काफी दूर—150 मील के लगभग उत्तर पश्चिम की ओर विदिशा–उज्जैन के सीधे मार्ग से बाहर छूट जाती है। काली सिंध ही उज्जैन से ठीक पूर्व की ओर इसी मार्ग पर पड़ती है।

4 —काली सिंध। (दे० सिंधु 3)

सिसपावन

सेतव्या के निकट एक नगर जिसका उल्लेख दीघनिकाय (2,316) में है। बौद्ध स्थविर कुमारकस्सप यहां रहते थे।

सिंहगढ़ (जिला पूना, महाराष्ट्र)

यह प्रसिद्ध किला महाराष्ट्र के प्रख्यात दुर्गों में से था। यह पूना से लगभग 17 मील दूर नैऋत्य-कोण में स्थित है और समुद्रतट से प्राय 4300 फुट ऊंची पहाड़ी पर बसा हुआ है। इसका पहला नाम कोंडाणा था जो संभवतः इसी नाम के निकटवर्ती ग्राम के कारण हुआ था। दंतकथाओं के अनुसार यहां पर प्राचीन काल में कौंडिन्य अथवा शृंगी ऋषि का आश्रम था। इतिहासज्ञों का विचार है कि महाराष्ट्र के यादव या शिलाहार नरेशों में से किसी ने कोंडाणा के किले को बनवाया होगा। मुहम्मद तुगलक के समय में यह नागनायक नामक राजा

के अधिकार मे था । इसने तुगल्क का आठ मास तक सामना किया था । इसके पश्चात अहमदनगर के संस्थापक मलिक अहमद का यहा कब्जा रहा और तत्पश्चात वीजापुर के सुलतान का । छत्रपति शिवाजी ने इस किले को बीजापुर से छीन लिया था । शायस्ताखा को परास्त करने की योजनाए शिवाजी ने इस किले मे रहत हुए ही बनाई थी और 1664 ई० मे सूरत की लूट के पश्चात् वे यहीं आकर रहने भी लगे थे । अपने पिता शाहजी की मृत्यु के पश्चात उनका अंतिम सस्कार भी उन्होने यही किया था । 1665 ई० मे राजा जयसिंह की मध्यस्थता द्वारा शिवाजी ने औरगजेब से सधि करके यह किला मुगल सम्राट् को (कुछ अन्य किलो के साथ) दे दिया पर औरगजेब की धूर्तता के कारण यह सधि अधिक न चल सकी और शिवाजी ने अपने सभी किलो को वापस ले लेने की योजना बनाई । उनकी माता जीजाबाई ने भी कोडाणा के किले को ले लेने के लिए शिवाजी को बहुत प्रोत्साहित किया । 1670 ई० मे शिवाजी के बाल मित्र मावला सरदार तानाजी मालुसरे अधेरी रात मे 300 मावालियो को लेकर किले पर चढ गये और उन्होने इसे मुगलो से छीन लिया किंतु इस युद्ध मे वे किले के सरक्षक उदयभानु राठौड के साथ लडते हुए वीरगति को प्राप्त हुए । मराठा सैनिको ने अलाव जलाकर शिवाजी को विजय की सूचना दी । शिवाजी ने यहा पहुच कर इसी अवसर पर ये प्रसिद्ध शब्द कहे थे कि 'गढग्राला सिंह गेला' अर्थात गढ तो मिला किंतु सिंह (तानाजी) चला गया । उसी दिन से कोडाणा का नाम सिंहगढ हो गया । सिंहगढ की विजय का वर्णन कविवर भूषण ने इस प्रकार किया है—'साहितनै सिवसाहि निसा मे निसक लियो गढ सिंह सोहानो, राठिवरो को सहार भयो, लरिके सरदार गिर्यो उदैभानो, भूषन यो घमसान भो भूतल घेरत लोथिन मानो मसानो, ऊचे सुछज्ज छटा उचटी प्रगटी परभा परभात की मानो' । इस छद मे शिवाजी की सूचना देने के लिए ऊचे स्थानो पर बनी फूस की झोपडियो मे आग लगा कर प्रकाश करने का भी वर्णन है ।

सिंहद्वीप

तीर्थमाला चैत्यवदन नामक जैन स्तोत्र ग्रथ मे सिंहलद्वीप को ही संभवत सिंहद्वीप कहा गया है । बौद्धो की तीर्थस्थली होने के अतिरिक्त यह प्राचीन जैन तीर्थ भी था । इसकी पुष्टि विविधतीर्थकल्प नामक प्राचीन जैन ग्रथ से होती है । किंतु उपर्युक्त स्तोत्र मे झेलम (पाकिस्तान) के निकट सिंहपुर नामक प्राचीन जैनतीर्थ का भी उल्लेख हो सकता है । यह उल्लेख इस प्रकार है—'सिंहद्वीप धनेर मगल्पुरे चाजजाहरे श्रीपुर' ।

सिंह्पानीय दे० सुहानिया

सिंहपुर

(1) सारनाथ के निकट एक छोटा सा ग्राम है। जैन किंवदंती में कहा जाता है कि तीर्थंकर श्रियांसदेव को इसी स्थान पर तीर्थंकर भाव प्राप्त हुआ था। इनके नाम से प्रसिद्ध मंदिर सारनाथ में स्थित है।

(2) महावंश 6,35 के अनुसार कुमार सिंहबाहु ने लाटदेश के इस नगर को बसाया था। इसका अभिज्ञान सौराष्ट्र (बंबई) में वला (प्राचीन वलभि) के निकट वर्तमान सिहोर से किया गया है।

(3) (पश्चिम पाकि०) इस नाम के नगर का वर्णन युवानच्वांग के यात्रा-वृत्त में है। उसने इस स्थान को तक्षशिला से प्रायः 85 मील पर कश्मीर के मार्ग में देखा था। वह लिखता है कि सिंहपुर और तक्षशिला के बीच में डाकुओं का बहुत भय था। शायद यह नगर नमक की पहाड़ियों (Salt Ranges) के प्रदेश में स्थित था और वहां का मुख्य स्थान था। इसी सिंहपुर का उल्लेख महाभारत सभा० 27 20 में है—'ततः सिंहपुरं रम्यंचित्रायुधसुरक्षितम्, प्राधमद् बलमास्थाय पाकशासनिराहवे'। इस नगर को अभिसारी तथा उरगा को जीतने के पश्चात् अर्जुन ने अपनी दिग्विजययात्रा के प्रसंग में जीता था। यहां सिंहपुर के राजा का नाम चित्रायुध दिया हुआ है। अभिसारी तक्षशिला के निकट स्थान था तथा उरगा वर्तमान हजारा (पश्चिम पाकि०) है। यह जैन तीर्थ भी था।

(4) दे० सीहपुर

सिंहभूम (बिहार)

यह जिला छोटा नागपुर के अंतर्गत स्थित है। मयूरभंज के निकट बामनघाटी में रोम सम्राट् कोंस्टेंटाइन के स्वर्ण के सिक्के मिले थे जिससे यह सूचित होता है कि प्राचीन काल में ताम्रलिप्ति के बंदरगाह से एक व्यापारिक मार्ग यहां होकर उत्तर की ओर जाता था। बेनूसागर नामक स्थान पर 9 10वीं शती ई० के मंदिरों के अवशेष हैं। सिंहभूम जिले में तांबे के सिक्के बनाने के कारखाने थे।

सिंहल

(1) लंका का बौद्धकालीन नाम। सिंहल के प्राचीन बौद्ध (पाली) इतिहास ग्रंथ महावंश में उल्लिखित किंवदंती के अनुसार लंका के प्रथम भारतीय नरेश की उत्पत्ति सिंह से होने के कारण इस देश को सिंहल कहा जाता था। सिंहल के बौद्धकालीन इतिहास का सविस्तार वर्णन महावंश में है। इस ग्रंथ में वर्णित है कि मौर्य सम्राट अशोक के पुत्र महेंद्र और संघमित्रा ने सिंहद्वीप पहुंचकर

वहा प्रथम बार बौद्ध मत का प्रचार किया था। गुप्तकाल मे समुद्रगुप्त की सत्ता का प्रभाव सिंहल तक माना जाता था और हरिषेण रचित प्रयाग प्रशस्ति मे सैंहलको का गुप्त-सम्राट के लिए भेंट आदि लेकर उपस्थित होना वर्णित है—'दैवपुत्र शाहीशाहानुशाहीशकमुरण्डै सैंहलक आदिभि'। बोधगया म प्राप्त एक अभिलेख मे यह भी सूचित होता है कि समुद्रगुप्त के शासनकाल म सिंहल-नरेश मेघवर्णन ने इस पुण्यस्थान पर एक विहार बनवाया था। मध्यकाल की अनेक लोककथाओ म सिंहल का उल्लेख है। जायसी रचित पद्मावत म सिंहल की राजकुमारी पद्मावती की प्रसिद्ध कहानी वर्णित है। लोककथाओ म सिंहल देश को धनधान्यपूर्ण रत्नप्रसविनी भूमि माना गया है जहा की सुदरी राज-कुमारियो से विवाह करने के लिए भारत के अनेक नरेश इच्छुक रहते थे। सिलोन सिंहल का ही अग्रेजी रूपान्तर है। लका के अतिरिक्त सिंहल के पार-समुद्र, ताम्रद्वीप, ताम्रपर्णी तथा धमद्वीप आदि नाम भी बौद्ध साहित्य म प्राप्त होते हैं।

(2) कलिंग का एक नगर जिसका वर्णन महावस्तु मे है। (दे० कलिंग)

सिंहाचलम् (मद्रास)

वाल्टेयर स्टेशन से प्राय तीन मील की दूरी पर पहाड के ऊपर नृसिंह-स्वामी का प्राचीन मदिर है। पर्वत पर 988 सीढिया हैं। मदिर से 100 गज की दूरी पर गगाधारा नामक तीर्थ है। किंवदती के अनुसार यह स्थान नृसिंहा-वतार की स्थली है।

सिंहेश्वर (बिहार)

दौरामधुरा नामक स्टेशन से 3 मील दूर स्थित है। कहा जाता है कि यहा प्राचीन समय मे शृगी मुनि का आश्रम था। मुगेर यहा से 20 मील दूर है।

सिंहेश्वरी दे० अहल्याश्रम

सिउनी (म० प्र०)

मध्यकालीन जैन मदिरो क अवशेषो के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है। वाकाटक महाराज प्रवरसेन द्वितीय का ताम्रदानपट्ट यहा से प्राप्त हुआ था जो उनके शासन के 18 वें वर्ष म जारी किया गया था। इसमे ब्रह्मपूरक नामक ग्राम को दान मे दिए जाने का उल्लेख है। इसम अन्य कई ग्रामो का वर्णन भी है जिनमे से काल्लट्पुर भी है।

सिकदरा (उ० प्र०)

आगरे से छ मील दूर अकबर का समाधि स्थान। स्थान का नाम सिकदर

लोदी के नाम पर प्रसिद्ध है। अकबर का मकबरा गुबद रहित है। कहते हैं मुगल सम्राट ने स्वय ही इसका नक्शा बनवाया था। इसके वास्तु मे हिंदू एव बौद्ध कला शलियो का सम्मिश्रण है। औरगजेब के समय म मथुरा आगरा क्षेत्र के जाटो न जब विद्रोह किया तो उन्होने अकबर के मकवरे म स्थित उसकी कब्र को खोद डाला और हड्डिया निकाल कर उन्हे जला दिया।

सिगौली (बिहार)

मातीहारी के पश्चिम मे स्थित है। इस स्थान पर 1816 ई० मे नेपाल-युद्ध के पश्चात् नेपालियो और अग्रेजो मे सधि हुई थी जिससे उत्तरी भारत का बडा पहाडी इलाका अग्रजो को मिल गया।

सित नवासल (मद्रास)

मूलनाम सभवत 'सिद्धण्णवास अर्थात 'सिद्धो का डेरा' है। यह स्थान पडडुक्कोटा स 9 मील दूर है। यहा पथरीली पहाडियो मे शैलकृत्त जैन गुहा-मदिर स्थित है। तीसरी शती ई० पू० का एक ब्राह्मी अभिलेख भी यहा उपलब्ध हुआ है। इसमे इन गुफाओ का जैन मुनियो के निवास के लिए निर्मित किया जाना उल्लिखित है। गुफाओ म अजता की शैली के पल्लवकालीन (7वी शती ई०) भित्तिचित्र भी प्राप्त हुए है।

सिद्धटेक (जिला पूना, महाराष्ट्र)

भीमा (=भीमरथी) के तट पर स्थित अष्टविनायको मे से एक है। यह महाराष्ट्र के वीर सनानी हरिपत फडक का जन्मस्थान भी है। कहा जाता है ये कभी किसी युद्ध म नही हारे। निजाम की सेनाए कई बार यहा आकर परास्त हुई। ग्राम के चतुर्दिक् एक परकोटा है जिस पर सदा नगाडा बजता रहता था। कहा जाता है कि बादामी का किला जीतने के पहले हरिपत फडके ने सिद्धटक के गणेश की मनौती की थी कि यदि जीत जाऊगा ता किले को तोडकर उसकी सामग्री से सिद्धटेक का परकाटा बनाऊगा। यह चहारदीवारी उनक वचन की पूर्ति के प्रमाणस्वरूप आज भी स्थित है।

सिद्धण्णवास दे० सित्तनवासल

सिद्धपुर

(1) (जिला बडौदा, गुजरात) इस नगर की स्थापना पाटण (गुजरात) के प्रसिद्ध राजा सिद्धराज ने 12वी शती ई० म की थी। नगर सरस्वती नदी क तट पर बसा हुआ था। यह नदी आबू पहाड स निकल कर कच्छ की खाडी म गिरती है किंतु माग म अनेक स्थानो पर लुप्त हो जाती है। किंवदती है कि कौरवो क विनाश के पश्चात् प्रायश्चित रूप म भीम न इसी स्थान पर सरस्वती

नदी म स्नान किया था । इस स्थान का प्राचीन नाम श्रीस्थल अथवा धर्मारण्य कहा जाता है (दे० धर्मारण्य) । पाटण नरश सिद्धराज ने इसके प्राचीन नाम को परिवतन करके सिद्धपुर कर दिया था । इस नगर म गुजरेश्वर मूलराज सोलकी और उसके पुत्र सिद्धराज जयसिंह द्वारा निर्मित विशाल शिवमदिर था जिसे रुद्रमहालय कहते थे । यह सरस्वती तट पर स्थित था । इसे अलाउद्दीन खिलजी ने गुजरात पर आक्रमण के समय तोड दिया था और अब केवल इसके खडहर दिखाई पडते हैं । मूल मदिर के स्थान पर मसजिद बनवाई गई थी । हिंदू काल के कई अन्य मदिर भी यहा स्थित हं । सिद्धराज स 1 मील के लगभग बिंदुसर नामक सरोवर है जहा किवदती के अनुसार स्नान करन से कपिल की माता देवहूति का शरीर सुदर हो गया था । यह महाभारत म वर्णित विनशन नामक तीथ हो सकता है । हाल ही मे पूव सोलकीकालीन (10वी शती ई०) मदिर के अवशेष यहा से उत्खनन द्वारा प्राप्त हुए है । इसका श्रेय निमल कुमार बोस तथा अमृतपाडया को है । सिद्धराज को मातृ श्राद्ध का तीर्थ माना जाता है।

(2) (मैसूर) इस स्थान पर अशोक का लघु शिलालेख एक चट्टान पर उत्कीण है । कुछ विद्वानो का मत है कि इस अभिलेख मे वर्णित इसिला नामक नगरी जो इस प्रदश की मौर्यकालीन राजधानी थी, सिद्धपुर नगर के स्थान पर ही रही होगी ।

सिद्धाचल

जैन साहित्य में शत्रुजय का नाम है ।

सिद्धायतन

(1) जैन सूत्र ग्रथ जबुद्वीप प्रज्ञप्ति में वर्णित महाहिमवत का एक शिखर (2) वैताढय पवत (विंध्याचल) का एक शिखर (3) चुल्लहिमवत का एक शिखर।

सिप्रा=शिप्रा

सिमरागढ़ (बिहार)

घोडा [illegible] रेल स्टेशन स 5 मील पर नेपाल मे स्थित है । यह स्थान रा[illegible] [illegible] थी । इन्ही शिवसिंह और इनकी रानी ल[illegible] [illegible] ति ने अपने काव्य में वणन किया है ।

सि[illegible]

सिर[illegible]

सिरसागढ़ (बदेलखड, म० प्र०)

पहूज नदी के तट पर स्थित है। यह स्थान 12वी शती ई० मे चदेल राज्यसत्ता का केंद्र था। पृथ्वीराज चौहान ने परिमददेव(परमाल) पर आक्रमण करते समय प्रथम युद्ध यही किया था। सिरसागढ की लडाई का वणन आल्हाकाव्य का महत्त्वपूर्ण अश है।

सिराम दे० मलखेड

सिरालादेगाव (मधोल तालुका, जिला नदेड, महाराष्ट्र)

इस स्थान से हिंदूकाल के भवना के अवशेष प्राप्त हुए है।

सिरौंज (जिला भोपाल, म० प्र०)

भोपाल के पास पुराना कस्बा है। यह मुगलकाल म काफी प्रसिद्ध था। सिरौज के लिए मध्य रेल के गजवसादा स्टेशन स माग जाता है। 1738 ई० मे मराठो न इस स्थान पर निजाम को हराया था। कविवर भूषण ने सिरौंज का कई बार उल्लेख किया है और लिखा है कि शिवाजी के डर से भाग कर मुसलमान सरदार सिरौंज मे आकर शरण लेने थे—'भूषण सिरौंज लो परावने परत फेर दिल्ली पर परत परिंदन की छार हैं', सहर सिरौंज लो परावने परत हैं'।

सिलहट=श्रीहट्ट

सिवालिक

देहरादून हरद्वार की पहाडिया का माम जो सामा यन शिवालिक या शिवालय का अपभ्रश माना जाता है। किंतु इसका एक नाम सपादलक्ष भी ज्ञात होता है। सपादलक्ष का हिंदी अथ सवालाख है जो सिवालिक या सवालक से मिलता जुलता है।

सिहवान दे० सिंदिमान

सिहावल दे० शिखावल

सिहावा (जिला रायपुर, म० प्र०)

महानदी के उदगम स्थान धमतरी से 44 मील दूर ह। किवदती है कि इस स्थान पर पूवकाल मे शृगी आदि सप्तऋषिया की तपोभूमि थी जिनके नाम से प्रसिद्ध कई गुफाए पहाडी के उच्चशिखरो पर अवस्थित है। यहा के खडहरो से छ मदिरा के अवशेप प्राप्त हुए हैं। पाच मदिरो का निर्माण चद्रवशी राजा कण ने 1114 शक सवत्=1192 ई० के लगभग करवाया था जैसा कि यहा से प्राप्त निम्न अभिलेख से स्पष्ट है, 'तीर्थदवहृदे तन कृत प्रासादापचकम स्वीय तत्र द्वय जात यत्र शकरकशवो। पितृभ्या प्रददो चायत् कारयित्वा

द्वयनव सदन देवदेवस्य मनोहारि त्रिशूलिन । रणकेसरिणे प्रादानृपायक सुरालय, तद्वशक्षीणता ज्ञात्वामातृस्नेहेन कणराट चतुदशोत्तरेसेयमेकादशशते शके वद्धता सवता नित्य नृसिहकविताकृति ' (एपिग्राफिका इडिका, भाग 9, पृ० 182) । इस अभिलेख से सूचित होता है कि इस स्थान का नाम देवहृद था और इसे तीथ रूप मे मान्यता प्राप्त थी । महाभारत अनुशासन 25,44 मे भी एक देवहृद का करवीरपुर के साथ उल्लेख है ।

सीता

वतमान तरिम नदी जो पश्चिमी चीन के सिकियाग प्रात मे बहती है । इसकी एक शाखा यारकद नगर क निकट है (दे० एशेंट खोतान–स्टाइन पृ० 27 35 42) । यह शाखा तिब्बत क उत्तरी पर्वतो म से निकलती है । सभवत इसका उद्गम गगा के उदगम मानसरोवर के निकट ही है और इसीलिए हमारे प्राचीन साहित्य मे इस नदी को गगा की ही एक पश्चिमी शाखा माना गया है । शायद सीता का सवप्रथम उल्लख वाल्मीकि रामायण बाल० 43 13 म है—'सुचक्षुश्चैव सीता च सिधुश्चैव महानदी । तिस्र प्राची दिश जग्मु गगा शिवाजला शुभा ' अर्थात सुचक्षु, सीता और सिंधु पुण्यजला गगा की तीन पश्चिमगामिनी शाखाए है । महाभारत भीष्म० 6,48 म भी सीता को गगा की धारा माना है—'वस्वौकसारा नलिनी पावनी च सरस्वती, जम्बूनदी च सीता च गगा सिधुश्च सप्तमी' । विष्णुपुराण के अनुसार सीता भद्राश्ववष की एक नदी है जो गगा ही की एक शाखा है— विष्णुपादविनिष्क्रांता प्लावयित्वेन्दुमडलम, समन्ताद ब्रह्मण पुर्यांगगा पतति वे दिव । सा तत्र पतिता दिक्षु चतुर्धा प्रतिपद्यत, सीता चालकनन्दा च चक्षुभद्रा च वै क्रमात ' । पूर्वेण शैलात्सीता तु शैल यात्य तरिक्षगा, ततश्च पूववर्षेण भद्राश्वेनेति साणवम्'—इस उद्धरण के अनुसार सीता, पूर्व की ओर स एक पवत से दूसरे पर प्रवाहित होती हुई भद्राश्व को पारकर समुद्र में मिल जाती है ।

सीताखोहर दे० टडवा

सीतानगर (ज़िला दमोह, म० प्र०)

दमोह से 17 मील पर सुनार नदी क तट पर स्थित है । सुनार, बेक और कोपर नदियो का सगमस्थल निकट ही है । यह प्राचीन तीथ है । कहा जाता है यहा वाल्मीकि का आश्रम था जहा सीता अपन दूसरे वनवास काल म रही थी । सगम पर मढकालेश्वर शिव का प्राचीन मदिर स्थित है ।

सीतापुरी दे० चित्रकूट

सीतामढ़ी (जिला मुजफ्फरपुर, बिहार)

प्राचीन जनश्रुति मे सीतामढ़ी को जनकनन्दिनी सीता का जन्मस्थान माना जाता है। यह ग्राम लखनदेई नदी के तट पर अवस्थित है। सीतामढ़ी से एक मील पर पुनउडा नाम के गाव के पास एक पक्का सरोवर तथा मदिर स्थित है। कहते हैं कि सीता का जन्म इसी स्थान पर हुआ था।

सीतेप=श्रीदेव

सीबी दे० वशाति

सीरपुर=सिरपुर [दे० श्रीपुर (2)]

सीस्तान दे० शकस्थान

सीहपुर

चेतियजातक के अनुसार चेदिराज उपचर के पुत्र ने चेदिजनपद मे इस नगर का बसाया था। इसका शुद्ध नाम सिहपुर हो सकता है।

सीही

16 वी शती मे गोसाईं गोकुलनाथ द्वारा लिखित ग्रथ 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' के अनुसार इस स्थान को महाकवि सूरदास का जन्मस्थान माना गया है और इसे दिल्ली के निकट बताया गया है। 1647 ई० मे इस ग्रथ के सपादक कठमणि शास्त्री ने लिखा था कि सीही गाव का सीहोरा और शेरगढ़ नाम से प्राचीन ग्रथो म उल्लेख मिलता है। वर्तमान सीही दिल्ली से 10 12 मील दूर (दिल्ली मथुरा रेल मार्ग पर जिला गुडगाव (पजाब) के बल्लभगढ़ कस्बे से एक मील) स्थित है। किंवदती है कि प्राचीन काल म इस स्थान पर जनमेजय ने नागयज्ञ किया था। प्राचीन बस्ती अब एक बृहत् टीले के रूप मे है जिसे ग्रामवासी खेडा कहते ह। यहा की मिट्टी म जले हुए लोहे के अनुरूप धातु परतु पाई जाती है जिसे ग्रामीण कीटी कहते है और उनका विश्वास है कि यह जले हुए सर्पों के अस्थिसचय जसी कोई वस्तु है। वास्तविकता यह है कि टीले के नीचे पुरानी इमारतो के चिह्न मिलते हैं और स्थान काफी प्राचीन जान पड़ता है। नगर मे पहले लोहा फूकने का कारखाना स्थित था क्योकि लोहे की भट्टिया के अवशेष भी यहा मिले हैं। लोहे के अवशेषो के आधार पर ही उपयुक्त किंवदती गढ़ी गई प्रतीत होती है। अष्टछाप नामक ग्रथ म भी सीही को सूरदास का जन्मस्थान बताया गया है और इसकी दिल्ली से दूरी चार कोस कही गई है।

सीहोरा दे० सीही

शतपथ, करवीर, तथा कुसभि नामक वन स्थित थे।

सुकुमार

(1) महाभारत सभा 29,10 म उल्लिखित एक पवत जिसे भीम ने पूव दिशा की दिग्विजय क प्रसग म जीता था, 'ततः दक्षिणमागम्य पुलिन्दनगर महत्, सुकुमार वशेचक्रे सुमित्र च नराधिपम्'। जान पडता है कि यहा पुलिन्द-नगर को ही सुकुमार नाम स अभिहित किया गया है। इसके पूव ही अश्व मेघनगर की विजय का उल्लेख है जो सभवत चबल की उपनदी अश्व के तट पर या मकुब्ज या कन्नौज के निकट बसा हुआ था। सुकुमार या पुलिन्दनगर इसके दक्षिण की ओर रहा होगा। यहा के राजा सुमित्र का इसी प्रसग म नामोल्लेख है। महाभारत काल मे पुलिंद नामक जाति विंध्याचल की तराई म बेतवा के दोनो तटो के समीप निवास करती थी। सुमित्र शायद पुलिंदजातीय था। सहदेव ने अपनी दक्षिण दिशा की दिग्विजय मे भी सुकुमार पर अधिकार किया था—'सुकुमार वशे चक्रे सुमित्र च नराधिपम् तथैवापरमत्स्याश्च व्यजयत् स पटच्चरान' सभा० 31,4। अपरमत्स्य का प्रदेश मथुरा और राजस्थान के बीच का भाग था। सुकुमार का इसी के पश्चात उल्लेख है।

(2) विष्णु० 2,4,60 क अनुसार शाकद्वीप का एक भाग या वष जो इस द्वीप के राजा भव्य क पुत्र सुकुमार के नाम पर ही सुकुमार कहलाता है।

सुकुमारी

(1) 'नद्यश्चात्र महापुण्या, सवपापभयापहा, सुकुमारी कुमारी च नलिनी धेनुका च या इक्षुश्चवेणुका चैव गभस्ती सप्तमी तथा अन्याश्च शतस्तत्रक्षुद्रनद्यो महामुने' विष्णु० 2,4,65 66। इस उद्धरण से विदित होता है कि सुकुमारी शाकद्वीप की सप्त महानदियो मे से है। [दे० सुकुमार, (2)]

2=कुमारी नदी (मत्स्यपुराण 113)

सुकृता

विष्णुपुराण 2, 4, 11 के अनुसार प्लक्षद्वीप की एक नदी, 'अनुतप्ता शिखी चैव विपाशा त्रिदिवा क्लमा, अमृता सुकृता चैव सप्तैतास्तत्र निम्नगा'।

सुकुट्ट

यह स्थान महाभारत म उल्लिखित है। वा० श० अग्रवाल के अनुसार यह वतमान सुकेत (हिमाचल प्रदेश) है। (दे० कादबिनी, अक्तूबर 1962)

सुकेत (हिमाचल प्रदेश)

सुकेत शुकदेव की पुण्यभूमि कही जाती है। शुकदेव वाटिका नामक एक उद्यान शुकदेव के नाम पर यहा स्थित भी है जहा से, किंवदती के अनुसार,

एक सुरंग हरद्वार जाती है। सुकेत नाम को शुकदेव का ही अपभ्रंश रूप कहा जाता है। (दे० सुकट्ट)

सुख

विष्णुपुराण 2,45 के अनुसार प्लक्षद्वीप का एक 'वर्ष' जो इस द्वीप के राजा मेधातिथि के पुत्र सुख के नाम पर प्रसिद्ध है।

सुखा

वरुण की नगरी। इसे वसुधा नगर भी कहते हैं।

सुखोदय (थाईलैंड)

उत्तरी स्याम (थाईलैंड) में 13वीं शती में स्थापित हिंदू राज्य। इसका संस्थापक इंद्रादित्य नामक एक थाई हिंदू सरदार था। इसने कंबुज नरेश के विरुद्ध विद्रोह करके एक स्वतंत्र राज्य स्थापित किया था जिसकी राजधानी सुखोदय (सुखोथाई) नामक नगर में थी। इसने सुखोदय राज्य की सीमाओं का दूर दूर तक विस्तार किया। इसके पुत्र रामकामहेंग के राज्यकाल में सुखोदय की और भी अधिक उन्नति हुई। यह बौद्ध था। इस राज्य की दूसरी राजधानी सज्जनालय नामक नगर में थी। रामकामहेंग के एक अभिलेख में तत्कालीन सुखोदय के संबंध में काफी सूचना मिलती है। आरंभ में सुखोदय राज्य का एक नाम स्याम या स्याम (चीनी भाषा में 'सीएन') भी था जो कालांतर में पूरे देश का ही नाम हो गया।

सुगंधगिरि (मद्रास)

कुंभकोणम से दक्षिण पूर्व 6 मील पर तिरुनारैयूर ही प्राचीन सुगंधगिरि है जो विष्णु की उपासना का प्राचीन केंद्र है।

सुग्ध

बुखार और समरकंद के प्रदेश का, जिसमें वर्तमान अफ़गानिस्तान का उत्तरी तथा रूस का दक्षिणी भाग सम्मिलित है, प्राचीन भारतीय नाम।

सुचक्षु

वाल्मीकि रामायण में वर्णित एक नदी जो विष्णुपुराण की चक्षु या प्रसिद्ध नदी आक्सस (वक्षु, वक्षू) ही जान पड़ती है। इसको सीता (=तरिम नदी) और सिंधु के साथ गंगा की पश्चिमगामिनी शाखा माना गया है। जान पड़ता कि प्राचीन भारतीयों के मत में सुचक्षु का मूल स्रोत गंगा के उद्गम के पास ही स्थित था, 'सुचक्षुश्चैव सीता च सिंधुश्चैव महानदी तिस्रः प्राचीं दिशं जग्मुः गंगा शिवजला शुभा' वाल्मीकि० बाल० 43,13 (दे० सीता, चक्षु, वक्षु)

सुचींद्रम (केरल)

त्रिवेंद्रम से कन्याकुमारी जाने वाले मार्ग पर स्थित है। यहां स्थित प्राचीन मंदिर दूर दूर तक प्रसिद्ध है। सुचींद्रम से कई महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक अभिलेख भी मिले हैं। मंदिर की प्रस्तर मूर्तिकारी विशेष रूप से सराहनीय है।

सुतीक्ष्णाश्रम (जिला बांदा, उ० प्र०)

इलाहाबाद-मानिकपुर रेल मार्ग पर जैतवारा स्टेशन से प्राय 20 मील और शरभंगाश्रम से सीधे जाने पर 10 मील पर स्थित है। वाल्मीकिरामायण में चित्रकूट से आगे जाने पर अनेक मुनियों के आश्रमों से होते हुए राम लक्ष्मण-सीता के ऋषि सुतीक्ष्ण के आश्रम में पहुंचने का उल्लेख है। यहां वे वनवास काल के 10वें वर्ष के व्यतीत होने पर पहुंचे थे—'रमतश्चानुकूल्येन ययुः संवत्सरा दश, परिसृत्य च धर्मज्ञो राघव सह सीतया। सुतीक्ष्णास्याश्रमपदं पुनरेव जगाम ह, स तमाश्रममागम्य मुनिभिः परिपूजित। तत्रापि न्यवसद्राम किंचित्कालमरिंदम, अथाश्रमस्थो विनयात्कदाचित्तं महामुनिम्' अरण्य० 11, 27-28 29। यहां से वे सुतीक्ष्ण के गुरु अगस्त्य के आश्रम में पहुंचे थे। रघुवंश, 13,41 में पुष्पकविमानारूढ राम सुतीक्ष्ण का वर्णन इस प्रकार करते हैं, 'हविर्भुजा मेधवतां चतुर्णां मध्ये ललाटतपसप्तसप्ति असौ तपस्यत्यपरस्तपस्वी नाम्ना सुतीक्ष्ण चरितेन दान्त'। सुतीक्ष्णाश्रम के आगे शरभंगाश्रम का तथा फिर चित्रकूट का वर्णन रघु०13 में होने से सुतीक्ष्णाश्रम की स्थिति उपर्युक्त अभिज्ञान के अनुसार ठीक समझी जा सकती है, क्योंकि चित्रकूट इस स्थान से अधिक दूर नहीं होना चाहिए। चित्रकूट भी जिला बांदा में ही है। अध्यात्मरामायण, अरण्य० 2,55 में सुतीक्ष्ण के आश्रम का इस प्रकार वर्णन है—'सुतीक्ष्णास्याश्रम प्रागात्प्रख्यातमृषिसंकुलम्, सर्वतुर्गुण सम्पन्न सर्वकालसुखावहम'। तुलसीदास ने रामचरितमानस, अरण्यकांड दोहा 9 के आगे सुतीक्ष्ण-राम मिलन का मधुर वर्णन किया है। (दे० शरभंगाश्रम)

सुदर्शन

(1)=काशी

(2) महाभारत भीष्मपर्व 5,6 के अनुसार एक भूखंड जिसका प्रतिबिंब चंद्रमा में दिखाई देता है—'एवं सुदर्शनद्वीपो दृश्यते चंद्रमंडले' भीष्म० 5,16।

(3) वाल्मीकि रामायण, किष्किंधा० 43,16 में उल्लिखित हिमालय की उत्तरी श्रेणियों का कोई शिखर 'तमतिक्रम्य शैलेंद्र, हेमगर्भं महागिरिम, तत सुदर्शन नाम पर्वत गन्तुमर्हथ।

(4) =सुदर्शन सरोवर (दे० गिरनार)

सुवस्तु दे० काशी

सुदामा

(1) वाल्मीकि रामायण, अयो० 68,18 में इस पर्वत का उल्लेख है। इसके पास से होते हुए अयोध्या के दूत केकय देश गए थे—'अवेक्ष्याञ्जलिपानाश्च ब्राह्मणान्, वेदपारगान्, ययुर्मध्येन वाह्लीकान् सुदामानं च पर्वतम्'। इस पर्वत का उल्लेख महाभारत सभा० 27,17 में भी है। इसे अर्जुन ने उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में विजित किया था—'मोदापुरं वामदेवं सुदामानं सुसंकुलम्, उलूकानुत्तरांश्चैव तांश्च राज्ञः समानयत'। प्रसंगानुसार यह पर्वत कुलू की पहाड़ियों का कोई [illegible] है। यहीं सुसंकुल जनपद की भी स्थिति थी। (दे० मोदापुर)

सुनकोसी

उत्तर पूर्व भारत की नदी। इसमें ताम्रा और अरुणा नदियां मिलती हैं। इसी स्थान पर वाकामुख तीर्थ था।

सुनाचारघाट दे० सहस्रावत

सुपर्णा

गोदावरी की एक दक्षिणी शाखा।

सुपार्श्व

विष्णुपुराण 2,2,17 के अनुसार इलावृत के चार पर्वतों में से है जो इस भूखंड के पश्चिम में स्थित है—'विपुल पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तर स्मृत'।

सुप्रभ

विष्णुपुराण 2,4 29 के अनुसार शाल्मलद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस महाद्वीप के राजा वपुष्मान् के पुत्र सुप्रभ के नाम पर प्रसिद्ध है।

सुप्रभा

पुष्कर (जिला अजमेर, राजस्थान) के निकट बहने वाली एक नदी जो पुष्कर की प्रसिद्ध नदी सरस्वती ही की एक धारा मानी जाती है।

सुप्रात

मेसोपाटेमिया की फरात (Euphrates) नदी का संस्कृत नाम।

सुबाहुपुर

'अतीत्य दुर्गं हिमवत्प्रदेश पुर सुबाहोददृशुर्न वीरा' महा० वन० 177, 12। हिमालय पर्वत में बदरीनारायण के निकट नगर जिसकी स्थिति वर्तमान टिहरी गढवाल के क्षेत्र में थी। यहां अपनी हिमालय यात्रा में पांडव कुछ समय ठहरे थे।

सुभूमिक

महाभारत के अनुसार सुभूमिक तीर्थ सरस्वती नदी के तट पर स्थित था। यह विनशन से उत्तर में था—'सुभूमिक ततोऽगच्छत् सरस्वत्यास्तटेवरे तत्र-चाप्सरस शुभ्रा नित्यकाल्मतन्द्रिता' महा०शल्य० 37,3। इस तीर्थ की, बलराम ने सरस्वती के अन्य तीर्थों के साथ यात्रा की थी। इसकी स्थिति राजस्थान के उत्तरी या पंजाब के दक्षिणी भाग में मानी जा सकती है।

सुमनकूट

सिंहल के प्राचीन इतिहास ग्रंथ महावंश 1,33 में उल्लिखित है। यह लंका में स्थित श्रीपाद या आदम की चोटी (Adam's Peak) का नाम है। महावंश के वर्णन के अनुसार गौतमबुद्ध जंबूद्वीप से सिंहल आते समय इस चोटी

(4) =सुदर्शन सरोवर (दे० गिरनार)

सुवस्सन दे० काशी

सुदामा

(1) वाल्मीकि रामायण, अयो० 68 18 में इस पर्वत का उल्लेख है। इसके पास से होते हुए अयोध्या के दूत केकय देश गए थे—'अवक्ष्याञ्जलिपानाश्च ब्राह्मणान् वेदपारगान्, ययुर्मध्येन बाह्लीकान् सुदामानं च पर्वतम्'। इस पर्वत का उल्लेख महाभारत सभा० 27,17 में भी है। इसे अर्जुन ने उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में विजित किया था—'मोदापुरं वामदेवं सुदामानं सुसंकुलम्, उलूकानुत्तरांश्चैव तांश्च राज्ञः समानयत्'। प्रसंगानुसार यह पर्वत कुलू की पहाड़ियों का कोई भाग जान पड़ता है। यहीं सुसंकुल जनपद की भी स्थिति थी। (दे० मोदापुर, वामदेव, उलूक)

(2) सुदामा नाम की नदी केकय-देश की राजधानी राजगृह या गिरिव्रज के पास बहती थी। भरत ने अयोध्या जाते समय इसे पार किया था, 'स प्राङ्मुखो राजगृहादभिनिर्याय वीर्यवान् ततः सुदामां द्युतिमान् संतीर्यावेक्ष्य तां नदीम्,' वाल्मीकि रामा०, अयो० 71, 1

सुदामापुरी

पोरबंदर (काठियावाड़, बंबई) का प्राचीन नाम सुदामापुरी कहा जाता है। श्रीमद्भागवत में वर्णित सुदामा और कृष्ण की कथा के अनुसार निर्धन ब्राह्मण सुदामा जो द्वारकापति कृष्ण का बालमित्र था उनके पास बड़े संकोच से अपनी दरिद्रता के निवारण के लिए गया था जिसके फलस्वरूप कृष्ण ने सुदामा की पुरी को उसके अनजाने में ही द्वारका के समान समृद्धशालिनी बना दिया था—'इति तच्चिन्तयन्नन्तः प्राप्तो निजगृहान्तिकम्, सूर्यानलेन्दुसंकाशैर्विमानैः सर्वतोवृतम्, विचित्रोपवनोद्यानैः कूजद्द्विजकुलाकुलैः प्रोत्फुल्लकुमुदाम्भोजकह्लारोत्पलवारिभिः, जुष्टम् स्वलङ्कृतैः पुंभिः स्त्रीभिश्च हरिणाक्षिभिः किमिदं कस्य वा स्थानं कथं तदिदमित्यभूत्' श्रीमद्भागवत 10,81,21-22-23। पोरबंदर की स्थिति द्वारका के निकट होने के कारण इसको सुदामापुरी मानना संगत जान पड़ता है।

सुधम्मवती (बर्मा)

थाटन का प्राचीन भारतीय नाम। ब्रह्मदेश की प्राचीन ऐतिहासिक कथाओं के अनुसार सुधम्मवती 59 भारतीय नरेशों की राजधानी रही थी। थाटन सुधम्मवती का ही अपभ्रंश कहा जाता है।

सुनकोसी

उत्तर पूर्व भारत की नदी। इसमे ताम्रा और अरुणा नदिया मिलती हैं। इसी स्थान पर काकामुख तीर्थ था।

सुनाचारघाट दे० सहसायत

सुपर्णा

गोदावरी की एक दक्षिणी शाखा।

सुपार्श्व

विष्णुपुराण 2,2,17 के अनुसार इलावृत के चार पर्वतो मे से है जो इस भूखड के पश्चिम मे स्थित हैं—'विपुल पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तर स्मृत'।

सुप्रभ

विष्णुपुराण 2,4 29 के अनुसार शाल्मलद्वीप का एक भाग या वर्ष जो इस महाद्वीप के राजा वपुष्मान् के पुत्र सुप्रभ के नाम पर प्रसिद्ध है।

सुप्रभा

पुष्कर (जिला अजमेर, राजस्थान) के निकट बहने वाली एक नदी जो पुष्कर की प्रसिद्ध नदी सरस्वती ही की एक धारा मानी जाती है।

सुप्रात

मेसोपोटेमिया की फरात (Euphrates) नदी का सस्कृत नाम।

सुबाहुपुर

'अतीत्य दुर्गं हिमवत्प्रदेश पुर सुबाहोददशुन वीरा' महा० वन० 177, 12। हिमालय पवत म बदरीनारायण के निकट नगर जिसकी स्थिति वतमान टिहरी गढवाल के क्षेत्र मे थी। यहा अपनी हिमालय यात्रा मे पाडव कुछ समय ठहरे थे।

सुभूमिक

महाभारत के अनुसार सुभूमिक तीथ सरस्वती नदी के तट पर स्थित था। यह विनशन से उत्तर म था—'सुभूमिक ततोऽगच्छत् सरस्वत्यास्तटवरे तत्र-चाप्सरस शुभ्रा नित्यकालमतद्रिता' महा०शल्य० 37,3। इस तीथ की, बलराम ने सरस्वती के अन्य तीर्थों के साथ यात्रा की थी। इसकी स्थिति राजस्थान के उत्तरी या पजाब के दक्षिणी भाग मे मानी जा सकती है।

सुमनकूट

सिंहल के प्राचीन इतिहास ग्रथ महावश 1,33 म उल्लिखित है। यह लका मे स्थित श्रीपाद या आदम की चोटी (Adam's Peak) का नाम है। महावश के वणन के अनुसार गौतमबुद्ध जबूद्वीप से सिंहल आते समय इस चोटी

पर उतरे थे। यह कथा काल्पनिक है। यहां दो चरण चिह्न अवस्थित हैं जि ह् बौद्ध बुद्ध के पावों न निशान मानते है और ईसाई आदम के। प्राचीन समय-मे द ह् भगवान राम के चरण चिह्न माना जाता था। यह पवत वाल्मीकि रामायण का सुवेल हो सकता है। महाभारत, सभा० 31,68 म इसे शायद रामक या रामपवत कहा गया है।

सुमनस्

विष्णुपुराण 2 4,7 म उल्लिखित प्लक्षद्वीप का एक पवत, 'गोमदश्चैव च द्रश्च नारदो दुदुभिस्तथा, सामक सुमनाश्चैव वैभ्राजश्चैव सप्तम'।

सुमागधी

वाल्मीकि रामायण बाल०32 9 म वर्णित एक नदी जिसे मगध देश मे स्थित गिरिव्रज या राजगह के निकट और पाच पहाड़ो के बीच म बहती हुई कहा गया है—'सुमागधी नदी रम्या मागधा विश्रुतापयौ, पचाऽऽना शलमुख्यानाम मध्ये मालेव शोभत'। इस नदी का अभिज्ञान वैभार पहाडी के नीचे जरासध की रणभूमि के निकट से बहने वाल नाले '(रणभूमि का नाला)' से किया गया है। (गाइड टु राजगीर पृ० 17) [द० गिरिव्रज (2) राजगृह]।

सुमाना दे० श्रीविजय, सौम्याक्ष

सुमेरपुर (ज़िला हमीरपुर, उ० प्र०)

यहाँ रेलस्टेशन के निकट चदल राजपूतो के समय (12वी शती ई०) के भग्नावशेष स्थित है। 12वी शती मे यहा परिमददेव (परमाल) का राज्य था जिसे पृथ्वीराज चौहान ने हराया था।

सुमेरु दे० मेरु

सुरगिरि

=देवगिरि (दौलताबाद)। इसका प्राचीन जैन तीथ के रूप मे उल्लेख (तीथ माला चैत्यवदन म) इस प्रकार है—'वदे स्वणगिरौ तथा सुरगिरौ श्रीदेवकी पत्तने'।

सुरनदी

(1) रामटेक (ज़िला नागपुर महाराष्ट्र) के पूर्व मे बहने वाली नदी जिसे सूयनदी भी कहा जाता है।

(2) =गगा

सुरभीपत्तन

महाभारत, सभा० 31 68 म वर्णित है। इसको सहदेव ने अपनी दक्षिण की दिग्विजय यात्रा म जीता 'कृत्स्न कोलगिरिं चैव सुरभीपत्तन तथा द्वीप

ताम्राह्वय चैव पवत रामक तथा'। प्रसग से यह स्थान कोलाचल के निकट कोई वदरगाह (पत्तन) जान पडता है। महाभारत के कुछ सस्करणो मे इसका पाठातर मुरचीपत्तन है जो वतमान क्रगनोर (केरल) का वदरगाह है (दे० मुरचीपत्तन, क्रगनोर, तिरूवाचीकुलम)

सुरवल=सुरौल

सुरवाया दे० सरस्वतीपत्तन

सुरसरि

(1)=गगा। 'सुरसरि सरसई दिनकर कन्या,' 'सुरसरिधार नाम मदाकिनि' तुलसीदास। पुराणो म गगा को देवनदी माना गया है।

(2) गुजरात की छोटीसी नदी जो ऋषितीथ क निकट सावरमती म मिल जाती है।

सुरसा

श्रीमदभागवत 5,19,18 म नदियो की सूची म उल्लिखित है जहा इसका नामोल्लेख रेवा (नर्मदा का पूर्वी पहाडी भाग) और नमदा (नमदा का पश्चिमी मैदानी भाग) के बीच मे है। विष्णुपुराण 2,3,11 के अनुसार यह नदी नमदा नदी के समान विन्ध्याचल से निकलती है, 'नमदा सुरसाद्याश्च नद्यो विध्याद्रि निगता'। यह नमदा के निकट प्रवाहित होने वाली कोई नदी है। सुरसा का अथ सुदर रस या जलवाली नदी है।

सुराष्ट्र

काठियावाड (गुजरात, वम्बई) तथा निकटवर्ती प्रदश का प्राचीन नाम। इसे सौराष्ट्र भी कहते थे। महाभारत, सभा० 31,62 मे सहदेव द्वारा सुराष्ट्राधिप पर विजय पाने का उल्लेख है। 'वशे चक्रे महाबाहु सुराष्ट्रधिपति तदा, सुराष्ट्रविषयस्थश्च प्रेषयामास रुक्मिणे । रुद्रदामन् के गिरिनार अभिलेख (150 ई० के लगभग) म सुराष्ट्र को क्षत्रप रुद्रदामन् द्वारा विजित प्रदेश बतलाया है 'स्ववीर्यार्जितानामनुरक्तसवप्रकृतीना आनत सुराष्ट्रश्वभ्रमरुकच्छ सिंधुसौवीरकुकुरापरा तनिषदादीनाम्'। (दे० सौराष्ट्र)

सुरासागर

पौराणिक भूगोल की कल्पना के अनुसार पृथ्वी के सप्तसागरो मे स है, 'एते द्वीपा समुद्रैस्तु सप्तसप्तभिरावृत्ता लवणेक्षु सुरासर्पिदधिदुग्धजलै समम्'—विष्णु० 2 2 6।

सुरोर (म० प्र०)

मध्य रेल्वे क जुकेही रल स्टेशन से 14 मील दूर एक ग्राम है जहा मुइनुद्दीन

महमूद के समय का एक शिला अभिलेख, जिसकी तिथि जेठ सुदी 11,1385 वि० स०=1328 ई० है, पाया गया है। यह स्थान सतीचौरा है।

सुरावनम्

किष्किंधा के निकट शबरी के आश्रम के रूप में यह स्थान प्रसिद्ध है। यहां श्रीराम लक्ष्मण के मंदिर में शबरी की मूर्ति भी स्थित है (दे० किष्किंधा, सबरीमलाई)। शबरी का आश्रम पंपासरोवर के निकट था (शबरी के आश्रम का वाल्मीकि रामायण में जो उल्लेख है उसके लिए दे० पंपासर)। अध्यात्म-रामायण में शबरी और राम के मिलन की कथा अरण्यकांड, दशम सर्ग में सविस्तर दी हुई है जिसका कुछ अंश इस प्रकार है—'त्यक्त्वा तद्विपिनं घोरं सिंहव्याघ्रादि। दूषितम् शनैराश्रमपदं शबर्या रघुनन्दनः। शबरी राममालोक्य लक्ष्मणेन समन्वितम् आयान्तमाराद्धर्षेण प्रत्युत्थायाचिरेण सा। सपूज्य विधिवद्राम स सौमित्रि सपत्नीं, सगृहीतानि दिव्यानि रामार्थं शबरीमुदा। फलानि अमृतकल्पानि ददौ रामाय भक्तितः, पादौ सपूज्य कुसुमैं सुगंधैं सानुलेपनै' अरण्य० 10,4 5 8 9। तुलसीदास रामचरितमानस अरण्यकांड में लिखते हैं—'ताहि देई गति राम उदारा सबरी के आश्रम पगुधारा। सबरी देख राम गृह आए मुनि के बचन समुझि जिय भाए। सरसिज लोचन बाहु विशाला, जटा मुकुट सिर उर बन माला। कंद मूल फल सुरस अति, दिए राम कहु आनि, प्रेम सहित प्रभु खाए बारबार बखानि'।

सुरौल=सुरवल दे० औरादेई

सुलतानगंज (जिला भागलपुर बिहार)

गंगातट पर यह संभवत बौद्धकालीन स्थान है। कई विहारों तथा एक स्तूप के अवशेष यहां से प्राप्त हुए हैं। बुद्ध की एक विशाल ताम्र प्रतिमा यहां के अवशेषों में उल्लेखनीय है। इस मूर्ति की कला शैली नालंदा से प्राप्त धातु-मूर्तियों से मिलती जुलती है। यह मूर्ति अब बर्मिंघम (इंगलैंड) के संग्रहालय में सुरक्षित है। रा० दा० बनर्जी ने इस मूर्ति को मूर्तिकला की पाटलिपुत्र शैली में निर्मित माना है।

सुलतानपुर दे० कुशभवनपुर

सुवर्णगिरि

अशोक के लघुशिला लेख सं० 1 में वर्णित नगरी जो मौर्यकाल में दक्षिणापथ की राजधानी थी। इस प्रांत का शासक कुमारामात्य सुवर्णगिरि में ही रहता था। कुछ विद्वानों ने सुवर्णगिरि का मासकी से अभिज्ञान किया है जहां अशोक का उपयुक्त शिलालेख उत्कीर्ण है। हुल्टज के मत में अशोक के

समय की सुवर्णगिरि मासकी के दक्षिण में स्थित सोनगिरि नामक स्थान भी हो सकता है। खानदेश के प्रदेश में कोंकण और खानदेश के उत्तरवर्ती मौर्यों के अभिलेख प्राप्त भी हुए हैं (दे० राय चौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 257)। जान पड़ता है कि सुवर्णगिरि, मैसूर के उस भाग (दे० कोलर) में स्थित थी जो सोने की खानों के लिए प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध रहा है और इस दृष्टि से मासकी से ही इस नगरी का अभिज्ञान अधिक समीचीन जान पड़ता है।

सुवर्णगोत्र

युवानच्वांग ने इस स्थान पर स्त्री राज्य का वर्णन किया है। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है। (दे० मुकर्जी, हर्ष, पृ० 41)

सुवर्णग्राम

(1)=सोनार गाँव

(2) ब्रह्मदेश (युनान) के पूर्व और स्याम (थाईलैंड) के पश्चिम में स्थित प्राचीन भारतीय उपनिवेश जिसका उल्लेख स्याम के प्राचीन पाली इतिहास-ग्रंथों में है। इसके उत्तर में खेमराष्ट्र स्थित था।

सुवर्णद्वीप=सुवर्णभूमि

दूरपूर्व के देशों तथा द्वीपों का प्राचीन सामूहिक नाम। इनमें ब्रह्मदेश (बर्मा) मलय प्रायद्वीप के देश तथा इंडोनेशिया के द्वीप—जावा, सुमात्रा बोर्नियो, बाली आदि सम्मिलित थे। प्राचीन काल में, चौथी पाँचवीं शती ई० पूर्व में तथा निकटवर्ती काल में इस भूभाग की समृद्धि की भारत के व्यापारियों में बड़ी चर्चा थी जैसा कि अनेक जातक कथाओं से सूचित होता है (दे० मजूमदार-हिंदू कोलोनीज इन दी फार ईस्ट, पृ० 8)। सुवर्णभूमि और भारत के बीच सक्रिय व्यापार का वर्णन बौद्ध साहित्य में है। चीनी यात्री फाह्यान के वर्णन से भी ज्ञात होता है कि गुप्तकाल के प्रारंभिक वर्षों में भारत से सिंहल तथा वहाँ से जावा आदि देशों के लिए नियमित रूप से व्यापारिक जलयान चलते थे। कथासरित्सागर में सुवर्णद्वीप और भारत के परस्पर व्यापार का उल्लेख मिलता है। इस ग्रंथ में सानुदास की साहसपूर्ण कथा बहुत रोचक है। इस कथा से यह भी सूचित होता है कि सुवर्णद्वीप की नदियों के रेत में से सोने के कण निकाले जाते थे। बौद्ध साहित्य में केवल दक्षिणी ब्रह्मदेश थाटन और पीगू को प्रायः सुवर्ण-भूमि के नाम से अभिहित किया गया है। सिंहल के बौद्ध इतिहास ग्रंथों तथा बुद्धघोष के ग्रंथों से सूचित होता है कि सम्राट अशोक के शासन और उत्तर

नामक दो बौद्ध प्रचारकों ने (जिन्हें मोग्गलिपुत्त ने नियुक्त किया था) सुवर्ण-भूमि के निवासियों को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया था (दे० महावंश 12,6)। इसी प्रदेश से सर्वप्रथम बौद्ध बनने वाले दो व्यापारी तपुस और भल्लुक भारत जाकर बुद्ध के आठ केश लाए थे जिन्हें उन्होंने रंगून के निकट श्वेदेगुन पगोडा में सुरक्षित किया था।

सुवर्णप्रस्थ

संभवतः सोनीपत का प्राचीन नाम।

सुवर्णभूमि दे० सुवर्णद्वीप

सुवर्णमाली (लंका)

यह स्थान महावंश 27,4 में उल्लिखित है। इसका वर्तमान नाम सवन-वलि कहा जाता है।

सुवर्णमुखी

(1) (मद्रास) तिरुपदी स्टेशन से 1 मील दक्षिण में है। नदी के किनारे प्राचीन मंदिर स्थित है जिसके गोपुर की भित्तियों पर सुंदर तथा सूक्ष्म शिल्प प्रदर्शित है।

(2) (आ० प्र०) कालहस्ती के निकट बहने वाली नदी। नदीतट की पहाड़ी कैलाशगिरि कहलाती है।

सुवर्णरेखा

(1) (ज़िला मयूरभंज, उड़ीसा) मयूरभंज के उत्तरी भाग में बहने वाली एक नदी जिसके निकट बंगाल के सेन राजाओं की प्रथम राजधानी काशीपुरी बसी हुई थी। (दे० काशीपुरी)

(2) जूनागढ़ (गुजरात) के निकट प्रवाहित होने वाली नदी, वर्तमान सोनरेखा। सुवर्णरेखा (दे० सुवर्णसिकता) और पलाशिनी (वर्तमान पलाशियो) का उल्लेख गिरनार की चट्टान पर अंकित सम्राट् स्कंदगुप्त के प्रसिद्ध अभिलेख में है। इस वर्णन के अनुसार इन दोनों नदियों का पानी रोककर सिंचाई के लिए झील बनाई गई थी। 453 ई० में उसका बांध घोर वर्षा के कारण टूट गया और तब स्कंदगुप्त के अधीन सौराष्ट्र के शासक चक्रपालित ने इसका जीर्णोद्धार करवाया था।

सुवर्णसिकता

सौराष्ट्र की नदी जिसका वर्णन पलाशिनी के साथ रुद्रदामन के गिरनार-अभिलेख में है—'सुवर्णसिकतापलाशिनी प्रभृतीनां नदीनामतिमात्रोद्वृत्तवेग'। इसका अभिज्ञान सुवर्णरेखा या वर्तमान सोनरेखा से किया गया है जो जूनागढ़

के निकट बहती है। (पलाशिनी वतमान पलाशियाँ है)। सुवर्णरेखा का उल्लेख गिरनार स्थित स्कदगुप्त के अभिलेख मे भी है। मडलीक काव्य मे भी सुवर्णसिकता को सुवर्णरेखा कहा गया है (नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग 3, पृ० 336)

सुवस्तु=सुवास्तु दे० स्वात

सुवेल

लका मे समुद्रतट पर स्थित एक पर्वत जहा सेना सहित समुद्र पार करने के उपरात श्रीराम कुछ समय के लिए शिविर बना कर ठहरे थे—'ततस्तम क्षोभ्यबल लकाधिपतये चरा सुवेले राघव शले निविष्ट प्रत्यवेदयन्' वाल्मीकि० रामा० युद्ध० 31, 1 अर्थात तब रावण को उसके दूतो ने विशाल सेना से सपन्न राम के सुवेल पवत पर आगमन की सूचना दी। अध्यात्मरामायण 4, 8 के अनुसार 'तेनैवजग्मु कपयो योजनाना शतद्रुतम्, असख्याता सुवेलाद्रि रुरुधु प्लवगोत्तमा' अर्थात् उसी पुल पर से वानरसेना सौ योजन समुद्रपार चली गई और फिर असख्य वानर वीरो ने सुवेल पर्वत को घेर लिया। तुलसीदास ने भी (रामचरितमानस, लका, दोहा 10 के आगे) सुवेल का इसी प्रसग मे इस प्रकार वर्णन किया है—'यहा सुवेल शल रघुवीरा, उतरे सेन सहित अति भीरा'। सुवेल बौद्ध साहित्य मे वर्णित सुमनकूट और वतमान एडम्स पीक नामक पवत हो सकता है। इस पवत पर दो चरण चिह्न बने है जो प्राचीन काल मे भगवान राम के पैरो के निशान समझे जाते थे। महाभारत वनपव म इसी पवत का शायद रामक पवत या रामपवत कहा गया है।

सुषोमा

श्रीमद्भागवत 5,18,18 मे उल्लिखित नदी—'सुषोमा शतद्रूश्चन्द्रभागामरुद्वृधा वितस्ता'। प्रसगानुसार यह इरावती (रावी) या बियास (विपाशा) हो सकती है।

सुसकुल

'मोदापुर वामदेव सुदामान् सुसकुलम, उलूकानुत्तराश्चवताश्च रान समानयत' महा० 27,11। यह कुलू की पहाडियो का कोई भाग जान पडता है। (दे० सुदामा)

सुसारी (म० प्र०)

यहा पूवमध्यकालीन भवनो के अवशेष प्राप्त हुए हैं।

सुसुनिया दे० पुष्करण (1)

सुहागपुर (बुंदेलखंड, म० प्र०)

मध्यकालीन विशाल मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

सुहानिया (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

भूतपूर्व रियासत ग्वालियर का एक प्राचीन नगर जिसका नाम ग्वालियर के दुर्ग में स्थित सासबाहु मंदिर के एक अभिलेख के अनुसार सिहपानीय है। तोमर राजपूतों का बनवाया हुआ 11वीं शती का एक विशाल शिवमंदिर यहां अभी तक स्थित है।

सुह्म

बंगाल के दक्षिणी समुद्रतट के प्रदेश का प्राचीन नाम (पाठांतर सुह्य)। पौराणिक कथाओं के अनुसार राजा बलि के चतुर्थ पुत्र सुह्म के नाम पर यह जनपद प्रसिद्ध हुआ था। दंडी के दशकुमारचरित में ताम्रलिप्ति को सुह्म प्रदेश के अंतर्गत बतलाया गया है जिससे इस देश की स्थिति का ज्ञान होता है। ताम्रलिप्ति नगरी जिला मिदनापुर (बंगाल) में समुद्रतट के निकट स्थित थी। इसका अभिज्ञान वर्तमान तामलुक से किया गया है किंतु महाभारत सभा० 30,24 25 में ताम्रलिप्ति और सुह्म का अलग अलग उल्लेख है—'समुद्रसेनं निर्जित्य चन्द्रसेनं च पार्थिवम् ताम्रलिप्तं च राजानं कर्वटाधिपतिं तथा। सुह्मानामधिपं चैव ये च सागरवासिनः सर्वान्म्लेच्छगणांश्चैव विजिग्ये भरतर्षभः।' फिर भी इस उल्लेख से सुह्म का बंगाल सागर के निकट स्थित होना सिद्ध होता है। कालिदास ने भी रघुवंश में सुह्म का वंग के पश्चिम में उल्लेख किया है—'अनम्राणां समुद्धर्तुस्तस्मात्सिंधुरयादिव, आत्मासरक्षितः सुह्मैर्वृत्तिमाश्रित्य वैतसीम्'—रघु० 4,35। इसके आगे 4,36 में वंग का उल्लेख है। टीकाकार वल्लभ ने 'सुह्मैः' पद की 'ब्रह्मदेशीयैः राजभिः' टीका की है जो ठीक नहीं जान पड़ती। बुद्धचरित 21,13 में बुद्ध द्वारा सुह्म निवासियों के बीच अंगुलिमाल ब्राह्मण को विनीत किए जाने का उल्लेख है। यहां वे पाटलिपुत्र से चलकर अंगदेश होते हुए आए थे। धोयी कवि के पवनदूत (5,36) में भागीरथी को सुह्म में प्रवाहित माना है।

(2) महाभारत सभा० 27 21 में अर्जुन की उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में सुह्म का उल्लेख इस प्रकार है—'ततः सुह्मांश्चचोलांश्च किरीटी पांडवर्षभः, सहितः सर्वसैन्येन प्रामथत् कुरुनंदनः'। चोल का अभिज्ञान चोलिस्तान से किया गया है जो वक्षु या ऑक्सस नदी के दक्षिण में स्थित है। चोलिस्तान से संबंधित होने के कारण सुह्म इसी के पार्श्ववर्ती प्रदेश में स्थित रहा होगा। बंगाल के समुद्रतट का भी एक नाम सुह्म साहित्य में मिलता है

(दे० सुह्म) जो भारत की उत्तरी-पश्चिमी सीमा के परे स्थित इसी नाम के जनपद से अवश्य ही भिन्न है। महा० सभा० 27,21 में 'सुह्म' पाठ की शुद्धता अनिश्चित है।

सूकरक्षेत्र=शूकरक्षेत्र

सुक्तिमति=शुक्तिमती (दे० कृ० द० वाजपेयी—'मथुरा परिचय,' पृ० 15)

सूरजकुंड

दिल्ली से प्राय 15 मील दक्षिण की ओर पूर्वमध्यकालीन एक नगर के खंडहर इस स्थान पर हैं। इस नगर की स्थापना 1000 ई० के लगभग तोमर-नरेश अनगपाल ने की थी। सूरजकुंड इस क्षेत्र का सर्व प्राचीन स्मारक है। महाराज पृथ्वीराज चौहान की राजधानी 12वी शती मे इसी स्थान पर बसे हुए नगर मे थी। पृथ्वीराज की इष्टदेवी जोगमाया का मंदिर जो सूरजकुंड से कुछ दूर स्थित है मूलरूप में पृथ्वीराज के समय का ही बताया जाता है।

सूरत (गुजरात)

पौराणिक किंवदंती म सूरत का प्राचीन नाम सूर्यपुर ह। एक प्राचीन कथा के अनुसार ताप्ती या तापी नदी जो सूरत के निकट ही गिरती है, सूर्य कन्या मानी गई है। सूर्यपुर जो बाद मे सूरत कहलाया सूर्य-कन्या ताप्ती के संबंध के कारण ही इस नाम से अभिहित किया गया था। किंतु कई विद्वानों के मत मे सूरत सुराष्ट्र या सोरठ का अपभ्रंश रूप है क्योकि प्राचीन समय मे सूरत, सौराष्ट्र का मुख्य बंदरगाह तथा नगर था। एक किंवदंती के अनुसार 15वी शती के अंत म गोपी नामक एक हिंदू वणिक ने इस नगर की नींव ताप्ती क मुहाने पर डाली थी। यह भी कहा जाता है कि कुस्तुनतुनिया के सम्राट् के हरम से भाग कर यहा आई हुई सूरत नाम की एक महिला के नाम पर ही नगर का नाम सूरत पडा था। इस संबंध मे यह भी जनश्रुति प्रचलित है कि गोपी ने किसी ज्योतिषी के कहने से इस व्यापारिक बस्ती का नाम सूर्यपुर रखा था जो बाद म गुजरात के किसी मुसलमान सूबेदार ने बदलकर सूरत कर दिया(सूरत कुरान के अध्याय को कहते हैं)। 1540 ई० म बने हुए एक किले के खंडहर यहा आज भी देखे जा सकते हैं। इसकी दीवारें आठ फुट चौडी हैं। अंग्रेजी इस्टइंडिया कंपनी ने प्रथम बार 1608 ई० मे यहा पदार्पण किया था किंतु पहली स्थायी व्यापारिक कोठी 1612 म बनी। इसकी स्थापना टॉमस एल्डवर्थ ने की थी। इस कार्य के लिए उसे मुगल-सम्राट् जहांगीर स फ़र्मान प्राप्त करना पडा था जो पुर्तगालियो पर बेस्ट नामक अंग्रेज द्वारा विजय करन के उपरांत सरलता से मिल गया था। मुगल-सम्राट पुर्तगालियो से सदा रुष्ट

रहते थे। 16वीं शती तक तो यहां उस समय के सभ्य संसार के प्राय सभी देशों के निवासी देखे जा सकते थे। अरब, यहूदी, पारसी, फ्रेंच, अंग्रेज, तुर्क और आर्मीनी व्यापारियों की भीड उस समय सूरत मे क्रय विक्रय करती हुई देखी जा सकती थी। औरंगजेब के समय मे एक मुगल सूबेदार सूरत मे रहता था। इस समय महाराष्ट्र मे शिवाजी का प्रभाव बढ रहा था और उन्होंने तीन बार सूरत की कोठी को लूट कर अनंत धन राशि प्राप्त की जिसकी सहायता से उन्हें अपने महान् कार्य को सम्पन्न करने मे सफलता मिली। भूषण ने 'दिल्ली दलन दबाय करि शिव सरजा निदशक, लूट लिया सूरत शहर बंककरि अति डंक' (शिवराजभूषण) लिखकर सूरत की लूट का निर्देश किया है। 1669 ई० तक सूरत का व्यापारिक महत्त्व अक्षुण्ण रहा। इस वर्ष यहां के अंग्रेजी अधिकारी जिरेल्ड आंजियर (Gerald Aungier) ने सूरत को छोड कर बंबई मे अपना व्यापारिक केंद्र स्थापित करने का प्रस्ताव रखा जो शीघ्र ही कार्यान्वित हुआ। सूरत का किला (दे० ऊपर) एक तुर्की सरदार खुदावंद खां ने बनवाया था। सूरत मे अंग्रेजो और मुगलो के सौदों अरब सूबेदारों के झंडे साथ साथ फहराते थे। सूरत के बंदर से ही पहली बार जहांगीर के समय मे तंबाकू भारत मे लाया गया था जिसके कारण खाने वाले तंबाकू का नाम सुर्ती प्रचलित हुआ। सुर्ती शब्द उत्तरप्रदेश मे अब भी चलता है।

सूरसेन = शूरसेन

सूर्यनाथ (जिला औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

इस स्थान के विषय मे किंवदंती है कि यहां रावण की भगिनी शूर्पनखा का निवास स्थान था। इसकी भेंट राम लक्ष्मण और सीता से नासिक के निकट पंचवटी मे हुई थी।

सूर्यनदी दे० सुरनदी (1)

सूर्यपुर दे० सूरत

सुलेमान

सिंध नदी के पश्चिम मे स्थित पर्वत श्रेणी। (दे० पारियात्र)

सेंग

कन्नौज (उ० प्र०) मे 18 मील दूर यह स्थान शृंगी ऋषि के आश्रम के रूप मे प्रसिद्ध है। शृंगी ऋषि ने राजा दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ संपन्न किया था। सेंग शृंगी ऋषि का ही अपभ्रंश कहा जाता है।

सेंधव (म० प्र०)

14वीं शती के पश्चात की इमारतों के ध्वंसावशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

सेहुडा (बुंदेलखड)

दतिया से 36 मील दूर काली सिंध के तट पर स्थित प्राचीन स्थान है। यहा मुगलकाल मे बुदेलो का राज्य था। छत्रसाल पर जब कालपी के सूबेदार शाह बगश ने आक्रमण किया तो सेहुडा के जागीरदार पृथ्वीसिंह ने उसकी सहायता की थी। दुर्गासप्तशती का हिंदी मे अनुवाद करने वाले विद्वान् कवि अनन्य का यही निवास स्थान था। ये छत्रसाल के समकालीन थे।

सेक

'सेकानपरसेकाश्च व्यजयत सुमहाबल' महा० सभा० 319। सहदेव ने दक्षिण दिशा की विजययात्रा मे इस देश पर और इसके पार्श्ववर्ती अपरसेक पर विजय प्राप्त की थी। प्रसगानुसार इसकी स्थिति चबल और नमदा के मध्यवर्ती प्रदेश म माननी उचित होगी।

सेतकर्णिक=शातकर्णिक

बौद्धविनयपिटक मे इस नगर का नामोल्लेख है (सक्रेड बुक्स ऑव दि ईस्ट 17,38)। इसकी स्थिति मज्झिम या मध्यदेश की दक्षिणी सीमा पर बताई गई है। नगर का नाम शातकर्णि नरेशो के नाम पर प्रसिद्ध जान पडता है। अभिज्ञान अनिश्चित है।

सेतव्य=सेतव्या

बौद्धकाल का एक व्यापारिक नगर जो श्रावस्ती से राजगृह (मगध) जाने वाले वणिक्पथ पर स्थित था (दे० कृ० द० वाजपेयी—युग युग मे उत्तर-प्रदेश, पृ० 6)। इस नगर का सेतव्या के रूप मे उल्लेख बौद्ध ग्रथ पायासि सुत्तन्त म है जिससे इसकी प्राचीनता का प्रमाण मिलता है। यह नगर उत्तर प्रदेश के पूर्वी या बिहार के पश्चिमी भाग म स्थित था। डा० मोतीचद (दे० सार्थवाह) का विचार है कि यह स्थान शायद जिला गोडा (उ० प्र०) मे स्थित बालापुर के खडहरो के स्थान पर बसा हुआ था। जैन ग्रथ राजप्रश्नीय सूत्र मे भी इस नगरी का उल्लेख है।

सेयविया

जैन लेखको के वर्णन के अनुसार यह नगर केकय देश (पजाब) मे स्थित था। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है (दे० इडियन एटिक्वेरी, 1891 पृ० 375)। सेयविया शाब्दिक रूप से सेतव्या का अर्धमागधी अपभ्रश जान पडता है

किंतु दोनों नगरों की स्थितियों का विभेद इन क्षेत्रों के एक समझने में कठिनाई उपस्थित करता है।

सेरी

सेरीवनिज जातक में इस जनपद का उल्लेख है। कुछ विद्वानों का मत है कि सेरी श्रीराज्य का अपभ्रंश है जो मसूर के गंग राज्य का बोधक है। रायचौधरी के मत में सेरी श्रीविजय या श्रीविषय (सुमात्रा) का भी पर्याय हो सकता है।

सरींध्र दे० सरहिंद

सैरौन (बुंदेलखंड)

मध्यकालीन बुंदेलखंड की वास्तुकला के अवशेषों के अवशेष इस स्थान से प्राप्त हुए हैं।

सैतवाहिनी

'करतोया सदानीरा बाहुदा सैतवाहिनी'–अमरकोश 1,10,33। इस उल्लेख में संभवतः सैतवाहिनी को बाहुदा नदी का ही पर्याय बताया गया है। (दे० बाहुदा)

सैदपुरभीतरी=भीतरी

सैनी (जिला मेरठ, उ० प्र०)

इस ग्राम का पूरा नाम मुजफ्फरनगर सैनी है जो मेरठ से 6 मील दूर स्थित है। इस ग्राम के बीच में ऊंचे स्थान पर एक स्तंभ है जिसे डा० फ्यूरर ने प्राचीन हस्तिनापुर के महान द्वार का अवशेष बताया है। (दे० हस्तिनापुर)

सैरंध्र दे० सरहिंद

सोजत (जिला जोधपुर, राजस्थान)

रेलस्टेशन बिलाड़ा से 16 मील दूर स्थित है। स्थानीय किंवदंती है कि बाणासुर की पुत्री ऊषा का विवाह इसी स्थान पर हुआ था जो बाणासुर की राजधानी शोणितपुर के नाम से विख्यात था। इस प्रकार की किंवदंती अन्य स्थानों के विषय में भी प्रचलित है। (दे० शोणितपुर)

सोंधवाड़ (राजस्थान)

डग, गंगधार और पचपहाड़ तहसीलों के सम्मिलित इलाके का प्राचीन राजस्थानी नाम।

सोंधी दे० दशपुर

सोत्थिवती दे० शुक्तिमती

सोवनी (जिला ग्वालियर, म० प्र०)

इस स्थान पर एक गुप्तकालीन मंदिर के खंडहर पाए गए हैं। एक शिव-मूर्ति तथा द्वारपालों की कई प्रतिमाएं जो गुप्तकाल की मूर्तिकला के सुंदर उदाहरण हैं, ध्वंसावशेषों से प्राप्त हुई हैं। द्वारपालों की प्रतिमाओं को देखकर एरण में स्थित मंदिर के अवशेषों से प्राप्त विशाल विष्णु की मूर्ति का ध्यान आ जाता है (दे० आर्कियोलाजिकल सर्वे रिपोर्ट 1925 26 चित्र 3)

सोनगिरि दे० सुवर्णगिरि

सोनपत=सोनीपत (पंजाब)

प्राचीन नाम संभवतः शोणप्रस्थ या सुवर्णप्रस्थ है। यहां से कन्नौजाधिप हर्षवर्धन (606 647 ई०) की एक ताम्रमुद्रा प्राप्त हुई है जो किसी ताम्रदानपट्ट से संनद्ध रही होगी। दानपट्ट अप्राप्य है। इस मुद्रा पर हर्ष की वंशावली का उल्लेख इस प्रकार है—महाराज राज्यवर्धन (पत्नी—महादेवी), महाराज आदित्यवर्धन (पत्नी—महासेन गुप्ता), परम भट्टारक महाराजाधिराज प्रभाकरवर्धन (पत्नी—यशोमती), राज्यवर्धन, हर्षवर्धन। प्रभाकरवर्धन को आदित्य अथवा सूर्य का उपासक तथा वर्णाश्रमधर्म का संरक्षक कहा गया है।

सोनपुर

(1) (बिहार) यह स्थान गंगा शोण के संगम पर बसा हुआ है। संगम के एक ओर पाटलिपुत्र (पटना) तथा दूसरी ओर सोनपुर अवस्थित है। इसका पौराणिक नाम हरिहरक्षेत्र है। कहा जाता है कि हरिहरमंदिर की स्थापना विश्वामित्र के साथ जनकपुर जाते समय रामचंद्रजी ने की थी। गंडकी नदी का भी गंगा के साथ संगम सोनपुर के निकट ही होता है। तेल नदी भी पास ही बहती है जिसके तट पर सुवर्णमेरु महादेव का मंदिर है। इसके कारण ही संभवतः सोनपुर का यह नाम हुआ था। कहते हैं एक धनी व्यापारी ने सुवर्णमेरु का मंदिर बनवाया था। हरिहरक्षेत्र को पौराणिक कथा में वर्णित गजग्राह युद्ध की स्थली माना गया है किंतु श्रीमद्भागवत 8, 2, 1 में इस कथा की घटना स्थली त्रिकूट नामक पर्वत पर मानी गई है, 'आसीद गिरिवरो राजस्त्रिकूट इति विश्रुत, क्षीरादेनावृत श्रीमान् योजनायुत्तमच्छ्रित'। बिहार में त्रिकूट नामक पर्वत वैद्यनाथ के निकट है किंतु वह सोनपुर से काफी दूर है।

(2) महानदी (उड़ीसा) पर बसा हुआ नगर। इसके निकट ही प्राचीन ययाति नगरी स्थित थी।

सोनभंडार (बिहार)

राजगृह के निकट वैभार पहाड़ी के दक्षिणी क्रोड में उत्खनित दो गुहाएं

कस्सपगोत्त तथा कोडनीपुत्त मज्झिम के अस्थि अवशेष प्राप्त हुए थे। ये सब स्थविर मोग्गलिपुत्त तिस्सा द्वारा बौद्धधर्म के प्रचारार्थ हिमालयप्रदेश मे भेजे गए थे। दुदुभिसार का नाम बौद्ध साहित्य मे अन्यत्र भी मिलता है। (इस प्रसग के लिए दे० दीपवश 8, 10)

सोनीपत=सोनपत

सोनीपेट (ज़िला करीमनगर, आ० प्र०)

मुगल सम्राट् औरगजेब द्वारा 17वी शती के अत मे बनवाई हुई एक विशाल मसजिद के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

सोपारा दे० शूर्पारक

सोम दे० सोमोद्भवा

सोमक

विष्णुपुराण 2,4,7 मे वर्णित प्लक्षद्वीप के सात मर्यादा-पर्वतो म से एक—'गोमेदश्चैव चन्द्रश्च नारदो दुदुभिस्तथा, सोमक सुमनाश्चैव वभ्राजश्चैव सप्तम।'

सोमकुवका दे० कुडधानी।

सोमगिरि

उत्तरकुरु या मेरु प्रदेश का स्वर्णिम प्रभा से मडित एक पर्वत जिसका उल्लेख वाल्मीकि रामायण के किष्किधाकाड मे है (दे० उत्तरकुरु, मेरु)। इस उल्लेख से ऐसा जान पडता है कि इस पर्वत को मेरुप्रभा (Aurora Borealis) नामक प्रकृति के अद्भुत दृश्य से सबधित माना जाता था। यह दृश्य उत्तर मेरुप्रदेश मे आज भी सामान्य रूप से देखा जाता है।

सोमतीर्थ

कालिदास रचित अभिज्ञान शाकुतल प्रथम अक मे इस तीर्थ का उल्लेख है। जिस समय दुष्यत शकुतला से मिले थे कण्व ऋषि सोमतीर्थ की यात्रा के लिए गए थे—'इदानीमेवदुहितर शकुतलाम् अतिथिसत्काराय सदिश्य दैवमस्या प्रतिकूल शमयितु सोमतीर्थं गत'। सभवत प्रभासपाटन (काठियावाड, गुजरात) के निकट सोमनाथ के प्राचीन तीर्थ को ही कालिदास ने सोमतीर्थ कहा है। किंतु यह गढवाल की पहाडियो मे स्थित सोमप्रयाग नामक तीर्थ भी हो सकता है (दे० सोमनदी), जो कण्वाश्रम (=मडावर, जिला बिजनौर, उ० प्र०) के निकट ही है। पौराणिक किंवदती के अनुसार कुरुक्षेत्र म भी एक तीर्थ इस नाम का था जहा कार्तिकेय ने तारकासुर को मारा था (महा० शल्य० 44, 52)।

तीसरी चौथी शती ई० म एक जैन साधु द्वारा बनवाई गई थी जैसा कि एक अभिलेख स ज्ञात होता है, 'निर्वाण लाभाय तपस्वी योग्यशुभे गुहे हृत प्रतिमा प्रतिष्ठे आचार्यरत्न मुनिवैरदेव विमुक्तय कारयद् दीघतेजा ' (?) । यह अभिलेख, लिपि क आधार पर, तीसरी या चौथी शती ई० का जान पडता है। कुछ विद्वानो का मत है कि वैभार पर्वत की सप्तपर्णि-गुहा सोनभडार का ही दूसरा नाम है (दे० कनिंघम—आर्कियोलाजिकल सर्वे रिपोर्ट जिल्द 3, पृ० 140) । सप्तपर्णि गुहा मे प्रथम धम-सगीति का अधिवेशन बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् हुआ था जिसम 500 भिक्षुओ ने भाग लिया था । किंतु उपर्युक्त अभिलेख से यह उपकल्पना गल्त प्रमाणित हो गई है । (दे० गाइड टु राजगीर, पृ० 17) (दे० वैभार)

सोनरेखा=सुवर्णरेखा (2)

सोनगढ़ (जिला आदिलाबाद, आ० प्र०)

यहा 18वी शती का बना हुआ एक किला है जो मुसल्मि सनिक वास्तुशैली के अनुसार बना है । इस स्थान पर प्रागैतिहासिक श्मशानो तथा नवपाषाण युगीन हथियारो तथा उपकरणो के अवशेष भी प्राप्त हुए हैं।

सोनागिरि

(1) (म० प्र०) मध्यकालीन बुदेलखड की वास्तुशैली म बने कई स्मारकों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है । इस पहाडी को सिद्धक्षेत्र माना जाता है । इसे श्रमणगिरि भी कहते हैं । [दे० श्रमणगिरि (2)]

(2) दे०राजगृह

सोनारगांव

(बगाल, पूर्वपाकिस्तान) 1200 ई० म गौडाधिप लक्ष्मणसेन ने जिनकी राजधानी लखनौती मे थी, मुहम्मद बखतियार खिलजी द्वारा धोखे से परास्त किए जाने पर, लखनौती को छोडकर सोनारगाव (सुवर्णग्राम) म अपनी राज धानी बनाई थी । यह नगर ढाके के निकट स्थित था। सेन-वंशी की राजधानी यहा 13वीं शती ई० तक रही थी।

सोनारी (जिला भूपाल, म० प्र०)

साची के निकट स्थित है । यहा अशोक के समय के स्तूप हैं । इनमे से एक म स स्फटिक मजूषा प्राप्त हुई थी जिसके अदर एक छोटे से पत्थर पर एक ब्राह्मी लेख उत्कीर्ण पाया गया था । इससे सूचित होता है कि इस मजूषा म हिमवत् प्रदेशीय गोतीपुत्र दुदुभिसार (दुदुभिसार) क अस्थि अवशेष सुरक्षित थे । अन्य दो मजूषाओ म से जो स्तूप स प्राप्त हुई थी, कोटीपुत्र

कस्सपगोत्त तथा कोडनीपुत्त मज्झिम के अस्थि अवशेष प्राप्त हुए थे। ये सब स्थविर मोग्गलिपुत्त तिस्सा द्वारा बौद्धधम के प्रचाराथ हिमालयप्रदेश मे भेजे गए थे। दुदुभिमार का नाम बौद्ध साहित्य मे अन्यत्र भी मिलता है। (इस प्रसग के लिए दे० दीपवश 8, 10)

सोनीपत=सोनपत

सोनीपेट (जिला करीमनगर, आ० प्र०)

मुगल सम्राट औरगजेब द्वारा 17वी शती के अत मे बनवाई हुई एक विशाल मसजिद के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

सोपारा दे० शूर्पारक

सोम दे० सोमोद्भवा

सोमक

विष्णुपुराण 2,4,7 मे वर्णित प्लक्षद्वीप के सात मर्यादा-पर्वतो म से एक—'गोमेदश्चैव चन्द्रश्च नारदो दुदुभिस्तथा, सोमक सुमनाश्चैव वभ्राजश्चैव सप्तम।'

सोमकुदका दे० कुडधानी।

सोमगिरि

उत्तरकुरु या मेरु प्रदेश का स्वर्णिम प्रभा से मडित एक पवत जिसका उल्लेख वाल्मीकि रामायण के किष्किधाकाड मे है (दे० उत्तरकुरु, मेरु)। इस उल्लेख से ऐसा जान पडता है कि इस पवत को मेरुप्रभा (Aurora Borealis) नामक प्रकृति के अद्भुत दृश्य से सबधित माना जाता था। यह दृश्य उत्तर मेरुप्रदेशमे आज भी सामान्य रूप से देखा जाता है।

सोमतीर्थ

कालिदास रचित अभिज्ञान शाकुतल प्रथम अक मे इस तीर्थ का उल्लेख है। जिस समय दुष्यत शकुतला से मिले थे कण्व ऋषि सोमतीर्थ की यात्रा के लिए गए थे—'इदानीमेवदुहितर शकुतलाम् अतिथिसत्काराय सदिश्य दैवमस्या प्रतिकूल शमयितु सोमतीर्थं गत'। सभवत प्रभासपाटन (काठियावाड, गुजरात) के निकट सोमनाथ के प्राचीन तीर्थ को ही कालिदास ने सोमतीर्थ कहा है। किंतु यह गढवाल की पहाडियो मे स्थित सोमप्रयाग नामक तीर्थ भी हो सकता है (दे० सोमनदी), जो कण्वाश्रम (=मडावर, जिला बिजनौर, उ० प्र०) के निकट ही है। पौराणिक किवदती के अनुसार कुरुक्षेत्र मे भी एक तीर्थ इस नाम का था जहा कार्तिकेय ने तारकासुर को मारा था (महा० शल्य० 44 52)।

सोमनदी (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

केदारनाथ के नीचे की पहाड़ियों पर बहने वाली छोटी नदी। सोमनदी और वासुकीगंगा के संगम पर सोमप्रयाग तीर्थ स्थित है। (दे० सोमतीर्थ)

सोमधेय

महाभारत में वर्णित जनपद जिसे भीमसेन ने पूर्व दिशा की दिग्विजय यात्रा में विजित किया था, 'सोमधेयाश्च निर्जित्य प्रययावुत्तरामुखः, वत्सभूमिं च कौन्तेयो विजिग्ये बलवान् बलात' महा० सभा० 30,10। यह वत्स जनपद (कौशांबी जिला प्रयाग, उ० प्र० का परिवर्ती प्रदेश) के संनिकट, दक्षिण की ओर स्थित था।

सोमनाथ=सोमनाथपाटन=पाटण (काठियावाड़, गुजरात)

पश्चिमी समुद्रतट पर स्थित शिवोपासना का प्राचीन केंद्र। यह प्रभासक्षेत्र के भीतर स्थित है जो भगवान् कृष्ण के देहोत्सर्ग का स्थान (भालक तीर्थ) है। यहां से दो मील के लगभग सरस्वती, हिरण्या और कपिला नामक तीन नदियों का संगम या त्रिवेणी है। वीरावल बंदरगाह संनिकट स्थित है। सोमनाथ का मंदिर भारतीय इतिहास में प्रसिद्ध रहा है। अनेक बार इसे मुसलमान आक्रमणकारियों तथा शासकों ने नष्ट-भ्रष्ट किया किंतु बार बार इसका पुनरुत्थान होता रहा। सोमनाथ का आदि मंदिर कितना प्राचीन है यह ठीक ठीक कहना कठिन है किंतु, महाभारतकालीन प्रभासक्षेत्र से संबद्ध होने के कारण इसकी प्राचीनता सर्वमान्य है। कुछ विद्वानों का मत है कि अभिज्ञान शाकुंतल में उल्लिखित सोमतीर्थ, सोमनाथ का ही निर्देश करता है। किंतु सोमनाथ के विषय में सर्वप्राचीन ऐतिहासिक उल्लेख अन्हलवाड़ा पाटण के शासक मूलराज (842-997 ई०) के एक अभिलेख में है जिसमें कहा गया है कि इसने चूडासम राजा ग्रहरिपु को हराकर सोमनाथ की यात्रा की थी। 1025 ई० में गजनी के *सुल्तान महमूद* ने इस मंदिर पर आक्रमण किया। उसने मंदिर के विषय में अनेक किंवदंतियां सुनी थीं। मह द अत्यधिक धर्मांध तथा धनलालुप व्यक्ति था और इस मन्दि आक्र उसकी यही दोनों मनोवृत्तियां सक्रिय थीं। ों से उसे काफी कठिन मोर्चा लेना पड़ा औ (स्थानीय ति के अनुसार इन सैनि है)। परन्तु मंदि मूर्ति को घ ही के

लौटने के मार्ग को घेरने के लिए बढ़ा चला जा रहा था। महमूद गजनी के द्वारा विनष्ट किए जाने के पश्चात सोमनाथ के मंदिर का पुनर्निर्माण संभवत गुर्जर नरेश भोजदेव ने करवाया था जैसा कि इनकी उदयपुर प्रशस्ति से सूचित होता है। मेरुतुंगाचार्य रचित प्रबंध चिंतामणि में भीमदेव के पुत्र कर्णराज की पत्नी मयणल्लदेवी की सोमनाथ की यात्रा का उल्लेख है। 1100 ई० में इसके पुत्र सिद्धराज ने भी यहां की यात्रा की थी। भद्रकाली मंदिर के अभिलेख (1169 ई०) से भी ज्ञात होता है कि जयसिंह के उत्तराधिकारी नरेश कुमारपाल ने सोमनाथ में एक मेरुप्रासाद बनवाया था। इस लेख में उस पौराणिक कथा का भी जिक्र है जिसमें कहा गया है कि यहां सोमराज ने सोने, कृष्ण ने चांदी और भीम ने पत्थरों का मंदिर बनवाया था। देवपाटन की श्रीधर प्रशस्ति (1216 ई०) से यह भी विदित होता है कि भीमदेव द्वितीय ने यहां मेघध्वनि नामक एक सोमेश्वर मंडप का निर्माण करवाया था। सारंगदेव की, 1292 ई० में लिखित प्रशस्ति में उसके द्वारा सोमेश्वर मंडप के उत्तर में पांच मंदिर और गंड त्रिपुरांतक द्वारा दो स्तंभों पर आधृत एक तोरण बनवाए जाने का उल्लेख है। 1297 ई० में अलाउद्दीन खिलजी के सरदार अल्पखां ने सोमनाथ पर आक्रमण किया और इस प्रसिद्ध मंदिर को जो अब तक पर्याप्त विशाल बन गया था नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। तत्पश्चात् पुन महिपालदेव (1308 1325 ई०) ने इसका जीर्णोद्धार करवाया। इसके पुत्र खंगार (1325-1351 ई०) ने मंदिर में शिव की प्रतिमा की प्रतिष्ठापना की। इससे पूर्व, मंदिर पर 1318 ई० में एक छोटा आक्रमण और हुआ था जिसका उल्लेख कजिंस ने 'सोमनाथ एंड अदर मेडिईवल टेम्पल्स इन काठियावाड' नामक ग्रंथ में (पृ० 25) किया है। किंतु इससे कहीं अधिक भयानक आक्रमण 1394 ई० में गुजरात के सूबेदार मुजफ्फरखां ने किया और मंदिर का प्राय भूमिसात कर दिया। किंतु जान पड़ता है कि शीघ्र ही अस्थायी रूप में मंदिर फिर से बन गया था क्योंकि 1413 ई० में मुजफ्फर के पौत्र अहमदशाह द्वारा सोमनाथ मंदिर का पुन ध्वंस किए जाने का वर्णन मिलता है। 1459 ई० में गुजरात के शासक महमूद बेगड़ा ने धर्मांधता के आवेश में मंदिर को अपवित्र किया जिसका उल्लेख दीवान रणछोडजी अमर की तारीखे सोरठ में है। यह मंदिर इस प्रकार निरंतर बनता बिगड़ता रहा। 1699 ई० में मुगल सम्राट औरंगजेब ने भारत के अन्य प्रसिद्ध मंदिरों के साथ ही इस मंदिर को विनष्ट करने के लिए भी फरमान निकाला किंतु मीरात अहमदी नामक फारसी ग्रंथ से ज्ञात होता है कि 1706 ई० तक स्थानीय हिंदू लोग इस मंदिर में बादशाह की आज्ञा

की अवहेलना करके बराबर पूजा करते रहे। इस बार मंदिर के स्थान पर मसजिद बनाने का हुक्म धर्मांध औरंगजेब ने जारी किया किंतु मीराते अहमदी में जो 1760 ई० के आसपास लिखी गई थी, मंदिर के मसजिद के रूप में प्रयोग किए जाने का कोई हवाला नहीं है। 1707 ई० में औरंगजेब के मरने के पीछे धीरे धीरे मुसलमानों का प्रभुत्व इस प्रदेश से सदा के लिए समाप्त हो गया और 1783 ई० में अहल्याबाई होलकर ने सोमनाथ में, जहां इस समय मराठों का प्रभाव था मुख्य मंदिर के निकट ही एक नया मंदिर बनवाया। 1812 ई० में बड़ौदा के गायकवाड़ ने जूनागढ़ के नवाब से सोमनाथ के मंदिर का अधिकार अपने हाथ में ले लिया। लेफ्टीनेंट पोस्टँस के लेख से ज्ञात होता है कि 1838 ई० में मंदिर की छत को वीरावल के बंदरगाह के रक्षार्थ तोपें रखने के काम में लाया गया था। 1922 ई० में मंदिर के मंडप की छत नष्ट हो चुकी थी। 1947 ई० में भारत के स्वतंत्र होने के साथ ही सोमनाथ के अविनाशी मंदिर के पुनर्निर्माण का कार्य फिर से प्रारंभ किया गया।

सोमनाथ मंदिर की समृद्धि तथा कला-वैभव महमूद गजनी के आक्रमण के समय अपनी पराकाष्ठा को पहुंच हुए थे। तत्कालीन मुसलमान लेखकों के अनुसार मंदिर का गर्भगृह, जहां मूर्ति स्थापित थी, अगाऊ [illegible] से सजा था और द्वार पर कीमती पर्दे लगे हुए थे (कमीलुत्तवारीख, जिल्द 9, पृ० 241)। गर्भगृह के सामने 200 मन का स्वर्ण शृंखला छत से लटकी हुई थी जिसमें [illegible] की घंटियां लगी थीं जो पूजा के समय निरंतर बजती रहती थीं। गर्भ-[illegible] के पास ही एक प्रकोष्ठ में [illegible] रत्नों का भंडार भरा हुआ था। मंदिर के व्यय के लिए दस सहस्र ग्रामों की जागीर लगी हुई थी। मंदिर में [illegible] सहस्र पुजारी थे। चंद्रग्रहण के समय मंदिर में विशेष रूप से पूजा होती थी क्योंकि मंदिर के अधिष्ठातृ देव शिव का चंद्रमा के स्वामी (सोमनाथ) के रूप में इस स्थान पर पूजा की जाती थी। (यह शिव के द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक लिंग है)। मंदिर में [illegible] की [illegible]

[illegible] भी रहती थी [illegible] गंगा [illegible] [illegible]
[illegible] था। कहा जाता है कि [illegible] [illegible] [illegible] के
[illegible] के लिए [illegible] मंदिर की [illegible]
[illegible] किया है (" [illegible]
[illegible]
[illegible] किया। किंतु [illegible]
[illegible]

शिवमंदिरों की परंपरा थी। मूर्ति को नष्ट करते समय, अपार धनराशि के बदले उसे अछूता छोड़ देने की प्रार्थना पुजारियों द्वारा किए जाने पर धर्मांध महमूद ने उत्तर दिया था कि वह मूर्ति विक्रेता न होकर मूर्तिभंजक कहलवाना अधिक पसंद करेगा। मंदिर के भीतर मूर्ति के अधर में लटके होने की बात भी मुसलमान लेखकों ने कही है। संभव है कि शिवलिंग के ऊपर छत से लटकनेवाली जल्हरी के वर्णन के कारण ही बाद के मुसलमान इतिहास लेखकों को यह भ्रम उत्पन्न हुआ हो। महमूद के साथ आए समकालीन इतिहास लेखकों ने ऐसा कोई निश्चित उल्लेख नहीं किया है किंतु यह भी संभव है कि मूर्ति, छत तथा भूमि पर लगे विशाल एवं शक्तिशाली चुंबकों द्वारा अधर में स्थित की गई हो। यदि यह तथ्य हो तो इसे तत्कालीन हिंदू विज्ञान का अपूर्व कौशल मानना पड़ेगा। वैसे मंदिर के विषय में अनेक कपोल-कल्पनाएं बाद के लेखकों ने की हैं जिनमें शेखदीन द्वारा रचित कविता मुख्य है (द० वाटसन का लेख—इंडियन एंटिक्वेरी, जिल्द 8,1879, पृ० 160)

सोमनाथपुर (मैसूर राज्य)

मैसूर से 13 मील पूर्व कावेरी के तट पर स्थित है। श्रीरंगपट्टन यहां से 15 मील दूर है। भगवान केशव का सुंदर मंदिर इस छोटे से ग्राम का सर्वांग सुंदर स्मारक है। इसे 1268 ई० में मैसूर के होयसलवंशीय नरेश नरसिंह तृतीय के एक सेनापति सोमदेव ने बनवाया था। इस तथ्य का उल्लेख मंदिर के प्रवेश-द्वार पर अंकित है। सोमदेव ने मंदिर के चतुर्दिक एक ग्राम भी बसाया था और अनेक घरों को बनवाकर उन्हें ब्राह्मणों को दान में दे दिया था। अभिलेख के अनुसार यहां के घरों में विद्या की इतनी अधिक चर्चा थी कि ग्राम के तोते भी शास्त्रार्थ करनेमें चतुर थे। यह मंदिर होयसल वास्तुकला का पूर्ण विकसित उदाहरण है और इस प्रदेश के हेलबिड तथा बेलूर के मंदिरों की भांति ही कला की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। मंदिर एक विशाल चौक के अंदर स्थित है। चतुर्दिक बने हुए बरामदे में 64 काष्ठ थे किंतु अब इनका कोई चिह्न नहीं हैं। मंदिर का आधार तारकाकार है। इसमें तीन गर्भगृह अवस्थित हैं। बहिर्भित्तियों पर चारों ओर रामायण, महाभारत तथा पुराणों की अनेक कथाएं मूर्तिकारी के रूप में उत्कीर्ण है। इस मूर्तिकारी का शिल्प, कलाकौशल और रचना विन्यास तत्कालीन दक्षिण के मंदिरों की शैली के अनुसार ही अद्भुत रूप से सुंदर है। मंदिर में स्तंभों के शीर्षों के रूप में जो संरचनाएं या ब्रेकेट हैं वे लावण्यमयी नारियों की मानवाकार प्रतिमाओं से बनी हैं जो आज भी दर्शक के हृदय पर मूर्तिकला के उदात्त सौंदर्य की अमिट छाप डालती हैं। इन्हें देखकर अंग्रेजी कवि कीट्स

की प्रसिद्ध पंक्ति A thing of beauty is a joy for ever याद आती है। मंदिर के तीनों शिखरों का बाह्य भाग प्राय 30 फुट तक घनी मूर्तिकारी से भरा पूरा है। मंदिर के मध्यवर्ती गर्भगृह की भीतरी छत गढ़े हुए पत्थरों के नक्काशीदार टुकड़ों को जोड़कर बनाई गई है। केशवमंदिर की मूर्तिकारी के विषय में विल डयूरेंट Will Durant लिखता है—'the gigantic masses of stone are here carved with the delicacy of lace'—अर्थात् विशालकाय भारी भरकम पत्थरों पर यहां सूक्ष्म और बारीक नक्काशी इसी प्रकार की गई है मानो सुन्दर बेल बूटे काढ़ गए हों।

सोमनाथ स्तूप दे० श्रावस्ती

सोमपुरी (बंगाल)

पहाड़पुर के निकट स्थित इस नगरी की ख्याति का कारण एक मध्यकालीन बौद्ध विहार है। विहार के साथ ही साथ यह शिक्षा का केंद्र भी था जहां दूर-दूर से बौद्ध विद्यार्थी अध्ययनार्थ आते थे।

सोमप्रयाग (जिला गढ़वाल, उ० प्र०)

केदारनाथ से बद्रीनाथ जाने वाले मार्ग पर प्राचीन तीर्थ जो सोमनदी तथा मंदाकिनी के संगम पर स्थित है। (दे० सोमतीर्थ)

सोमरथ (जिला मिर्जापुर उ० प्र०)

मिलती है।

सौंदत्ती (महाराष्ट्र)

धारवाड़ से 25 मील दूर प्राचीन तीर्थ है। यहां रेणुकाद्रि पर्वत पर दत्तात्रेय का स्थान कहा जाता है। पर्वत परशुराम की माता के नाम पर प्रसिद्ध है। रेणुकाद्रि से 5 मील दूर मलप्रभा नामक नदी बहती है।

सौंदे

बंबई रायचूर रेल मार्ग पर जेऊर स्टेशन से 7 मील दूर यह ग्राम स्थित है जो कालभैरव के प्राचीन मंदिर के लिए विख्यात है। यह प्राचीन सवित नामक तीर्थ है।

सौगंधिक वन

(1) यह प्राचीन तीर्थ वर्तमान सरांघाट है जो नर्मदा के तट पर स्थित है।

(2) महाभारत, वनपर्व के तीर्थयात्रा प्रसंग में इस स्थान का वर्णन निम्नलिखित है—'सौगंधिकवनं राजंस्ततोगच्छेत मानव, तद्वनं प्रविशन्नेव सर्वपापैः प्रमुच्यते। ततश्चापिसरिच्छ्रेष्ठा नदीनामुत्तमानदी, प्लक्षाद्देवी स्रुता राजन् महापुण्या सरस्वती, तत्राभिषेकं कुर्वीत वल्मीकान्निःसृते जले' वन० 84, 4, 67। इस वर्णन से ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्थान सरस्वती नदी के उद्गम के निकट स्थित था। सौगंधिकवन से छः शम्यानिपात पर (प्रायः आधा मील दूर) ईशानाध्युषित नामक तीर्थ था।

सौपर्णिका (मैसूर)

कुल्लूर के निकट बहने वाली नदी। कुल्लूर में मूकाम्बिका देवी का सिद्ध-पीठ है जिसकी स्थापना आदि शंकराचार्य ने 8वीं शती ई० में की थी।

सौभद्र

दक्षिण समुद्रतट के पंचनारी तीर्थों में से एक है। (दे० नारीतीर्थ)

सौभ=सौभनगर

महाभारत में कृष्ण के शत्रु शाल्व के नगर को सौभ कहा गया है। शाल्व ने शिशुपाल के वध के उपरांत उसका बदला लेने के लिए द्वारका पर आक्रमण किया था। सौभ को श्रीकृष्ण ने घोर युद्ध के पश्चात् नष्ट कर दिया था—'शाल्वस्य नगरं सौभं गतोऽहं भरतर्षभ, निहन्तुं कौरवश्रेष्ठ तत्र मे शृणु कारणम्' वन० 14,2। शाल्व को सौभराट भी कहा गया है—'मया किल रणे योद्धं कांक्षमाणं स सौभराट्' वन० 14,11 किंतु महाभारत के वर्णन से यह भी जान पड़ता है कि सौभ वास्तव में एक विशालकाय विमान था जो नगर की भांति ही जान पड़ता था। इसी में स्थित रहकर उसने द्वारकापुरी पर आक्रमण

से ही आक्रमण किया था, 'अरुध्यत्ता सुदुष्टात्मा सवत पाडुनदन, शाल्वो वैहायस चापि तत पुर व्यूह्य विष्ठित' अर्थात् उस दुष्टात्मा शाल्व ने द्वारका को चारो तरफ से घेर लिया। वह स्वय उस आकाशचारी नगर (सौभविमान) पर व्यूह रचना करके स्थित था। सौभ को सुदर्शनचक्र से कृष्ण ने नष्ट कर दिया था, 'तत् समासाद्य नगर सौभ व्यपगतत्विषम् मध्येन पाटयामास क्रकचो दार्विवोच्छ्रितम'। कुछ विद्वानो के मत म सौभनगर म मार्तिकावतक देश की राजधानी थी किंतु उपर्युक्त विवरण से ज्ञात होता है कि यह नगर वास्तव मे एक विशाल गगनविहारी विमान था जिसकी विशेषता यह थी कि यह आकाश मे एक स्थान पर ठहरा रह सकता था और कामगामी (इच्छाचारी) था, 'सौभ कामगम वीर मोहूय मम चक्षुषी' वन० 22,9, 'एवमादि महाराज विलप्य दिवमास्थित कामगेन स सौभेन क्षिप्त्वा मा कुरुनदन' वन० 14,15। (दे० शाल्व, शाल्वपुर)

सौम्याक्षद्वीप

महाभारत, सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ के अनुसार एक द्वीप जिसे शक्तिशाली सहस्रबाहु ने जीता था, 'इन्द्रद्वीप कशेर च ताम्रद्वीप गभस्तिमत गाधर्व वारुण द्वीप सौम्याक्षमिति च प्रभु'। इसमे सभवत ताम्रद्वीप लका और वरुण बोर्नियो है। सौम्याक्ष इडोनिशिया का कोई द्वीप (सुमात्रा) हो सकता है। इद्र-द्वीप सभवत सुमात्रा का वह भाग था जिसकी राजधानी इद्रपुरी थी।

सोरथ (बिहार)

मधुबनी से सात आठ मील पश्चिम की ओर एक प्रसिद्ध ग्राम है, जहा वार्षिक मेले मे मैथिल ब्राह्मण अपने बालको का विवाह ठहराने के लिए एकत्र होते है। सोरथ बौद्धकालीन स्थान प्रतीत होता है। दो विशालकाय दूहो के खडहर ग्राम के चतुर्दिक एक मील तक विस्तृत हैं। ये सभवत बौद्ध स्तूप थे।

सौराष्ट्र=सुराष्ट्र

वर्तमान काठियावाड प्रदेश जो समुद्र के भीतर आम्राकार भूमि पर स्थित है। महाभारत के समय द्वारकापुरी इसी देश मे स्थित थी। सुराष्ट्र या सौराष्ट्र को सहदेव ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग म विजित किया था (दे० सुराष्ट्र)। विष्णु पुराण मे अपरात के साथ सौराष्ट्र का उल्लेख है—'तथापराता सौराष्ट्रा शूराभीरास्तथार्बुदा' विष्णु० 2 3 16। विष्णु० 4 24 68 मे सौराष्ट्र म शूद्रो का राज्य बताया गया है, 'सौराष्ट्र विषयाश्च शूद्राद्याभोक्ष्यति'। इतिहास प्रसिद्ध सोमनाथ का मदिर सौराष्ट्र ही की विभूति था। रैवतकपर्वत गिरनार पर्वतमाला का ही एक भाग था। अशोक, रुद्रदामन् तथा गुप्तसम्राट स्कदगुप्त

के समय के महत्त्वपूर्ण अभिलेख जूनागढ के निकट एक चट्टान पर अंकित हैं, जिससे प्राचीन काल मे इस प्रदेश के महत्व पर प्रकाश पडता है। रुद्रदामन के अभिलेख म सुराष्ट्र पर शकक्षत्रपो का प्रभुत्व बताया गया है (दे० सुराष्ट्र तथा गिरनार)। जान पडता है अलक्षेंद्र के पजाव पर आक्रमण के समय वहा निवास करने वाली जाति कठ जिनने यवन सम्राट् के दात खट्टे कर दिए थे कालातर मे पजाब छोडकर दक्षिण की ओर आ गई और सौराष्ट्र मे बस गई जिससे इस देश का एक नाम काठियावाड भी हो गया। इतिहास के अधिकाश काल मे सौराष्ट्र पर गुजरात नरेशो का अधिकार रहा और गुजरात के इतिहास के साथ ही इसका भाग्य बधा रहा। सौराष्ट्र के कई भागो के नाम हमे इतिहास म मिलते हैं। हालार (उत्तर पश्चिमी भाग), सोरठ (पश्चिमी भाग), गोहिल्वाड (दक्षिण पूर्वी भाग) आदि। सोरठ और गोहिल्वाड के बीच का प्रदेश बबडिया वाड या बबर देश कहलाता था। इसी भूभाग मे बबर शेर या सिंह पाया जाता है। सौराष्ट्र के बारे मे एक प्राचीन कहावत प्रसिद्ध है—'सौराष्ट्रे पचरत्नानि नदीनारीतुरगमा चतुथ सोमनाथश्च पचमम हरिदशनम्', इस श्लोक म सौराष्ट्र की मनोहर नदिया—जैसे चद्रभागा, भद्रावती प्राची सरस्वती, नशिमती, वेत्रवती, पलाशिनी और सुवणसिक्ता, घोघा आदि प्रदेशो की लोक कथाओ म वर्णित सुदर नारियो, सुदर अरबी जाति क तेज घोडा और सोमनाथ और कृष्ण की पुण्यनगरी द्वारका क मदिरो को सौराष्ट्र के रत्न बताया गया है।

सौरीपुर (जिला आगरा, उ० प्र०)

बटेश्वर या बटेसर का प्राचीन नाम है जो शौरिपुर का अपभ्रश है। शौरि यादवो का नाम था। इस स्थान पर यदुवश मे जैनो के 22 वें तीर्थंकर नेमिनाथ का जन्म हुआ था। जैन साहित्य मे मथुरा को भी सौरीपुर कहा गया है (दे० उत्तराध्ययन)। किंतु ढाल सागर नामक एक जैन ग्रथ म ही दोनो को भिन्न बताया गया है।

सौवण्णकुडड

प्राचीन काल मे इस नगर मे बना हुआ ऊनी कपडा बहुत प्रसिद्ध था। इसका अभिज्ञान अनिश्चित है।

सौवीर

गुजरात, दक्षिणी सिंध (पाकि०) तथा दक्षिणी पजाब के प्रदेश का प्राचीन नाम। महाभारत काल मे दक्षिण सिंधु देश को सौवीर कहा जाता था। सिंधु-राज जयद्रथ को सौवीर का राजा भी कहा गया है। सभापव 51 मे सिंधु देश के घोडो तथा सौवीर के हाथियो का युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ म उपहार

के रूप में दिए जाने का साथ साथ ही उल्लेख है—'सैंधवाना सहस्राणि हयाना पचविंशतिम अददात् सैंधवो राजा हेममाल्यैरलकृतान्। सौवीरो हस्तिभिर्युक्तान रथाश्च त्रिशतावरान, जातरूपपरिष्कारान मणिरत्नविभूषितान्। विष्णुपुराण म भी सौवीर और सिधु निवासियो का साथ ही वर्णन है–'सौवीरा सैंधवा हूणा शाल्वा कोशलवासिन'। रोरुकनगर (वतमान रोरी, सिंधु, पाकि०) सौवीर म ही स्थित था (दे० दिव्यावदान पृ० 545)। यहा के राजा रुद्रायण का दिव्यावदान म उल्लेख है। मिलिंदप हो (सेक्रेड बुक्स ऑव दि ईस्ट 36, पृ० 269) से सूचित होता है कि सौवीर म सिंध के समुद्रतट का प्रदेश भी सम्मिलित था (सिंधु देश, सिंधु नदी के पश्चिम की अन्तभूमि का नाम था)। सौवीर म समुद्रतट के पश्चिम की ओर मुलतान तक का प्रदेश भी शामिल था जैसा कि अलबेरुनी के साक्ष्य (1,302) से सिद्ध होता है। अलबेरूनी ने सौवीर का मुलतान और जहरावार प्रदेशो का नाम बताया है। उसकी सूचना का स्रोत वाराहमिहिर सहिता जान पडती है। जैन ग्रथ पवचन सारद्धार मे इस देश की राजधानी का नाम वीतभय दिया हुआ है। एक अन्य जैन सूत्र व्याख्याप्रज्ञप्ति मे यह नाम वीतहव्य ह जो राजा केशी क समय म बिल्कुल उजाड हो गया था। शकक्षत्रप रुद्रदामन के गिरनार अभिलेख मे उसके द्वारा सौवीर को विजित किए जाने का उल्लेख है—'आनतसुराष्ट्रश्वभ्रमरुकच्छ सिंधुसौवीरकुकुरापरान्त निषादादीना समग्राणा (दे० गिरनार)। अग्निपुराण मे देविका नदी (जो मुलतान या मूलस्थान के निकट बहती थी) का सबध सौवीर स बताया गया है—'सौवीरराजस्यपुरा मैत्रेयोभूत पुरोहित, तेन चायतन विष्णो कारित देविकातटे'—अग्नि० अध्याय 200। इससे अलबेरुनी द्वारा वर्णित तथ्य प्रमाणित होता है। ग्रीक लेखको न सौवीर को सोफीर या ओफीर लिखा है। पाणिनि के अनुसार सौवीर के गोत्रो म उत्पन्न व्यक्तियो के नामो मे आयनि प्रत्यय लगता था जैसे मिमत म उत्पन्न मैमतायनि, फाटाहृत मे उत्पन्न फाटाहृतायनि। सिंधी लोगो के नामो मे अभी तक 'आनी' शब्द लगता है जैसे कृपलानी, वास्वानी आदि।

स्कदगुप्तवट

बिहार (जिला पटना, बिहार) के निकट एक ग्राम जिसका उल्लेख बिहार से प्राप्त स्कदगुप्त के समय क अभिलेख मे है (दे० बिहार)

स्तभतीथ=खभात

जैन स्तोत्र तीथमालाचैत्य वदन मे इस तीर्थ का नामोल्लेख है— विंध्यस्थभन शीट्ठमीटठनगरे राजद्रह श्रीरग।'

रत्नकूट दे० गौरीशिखर

स्त्रीराज्य

महाभारत,शांति० 4 7 में स्त्रीराज्य के अधिपति शृगाल का उल्लेख है—'शृगालश्च महाराज स्त्रीराज्याधिपतिश्च'। यह कलिंगराज चित्रांगद की पुत्री के स्वयंवर में गया था। स्त्रीराज्य का उल्लेख कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी है। स्त्रीराज्य की स्थिति का ठीक ठीक पता नहीं है। चीनी यात्री युवानच्वांग ने सुवर्णगोत्र नामक स्थान पर स्त्रियों के शासन का वर्णन अपने यात्रावृत्त में किया है। विक्रमांकदेवचरित, 18,57 तथा गरुडपुराण 55 में इसे सुवर्णगोत्र कहा गया है। जैमिनीभारत, 22 में स्त्रीराज्य की शासिका प्रमीला और अर्जुन के युद्ध का उल्लेख है। श्री न० ला० डे० के अनुसार स्त्रीराज्य में गढ़वाल-कुमायूं का एक भाग सम्मिलित था।

स्थाणुमती

(1) वाल्मीकि रामायण अयो० 71,16 के अनुसार गोमती (उ० प्र०) के पश्चिम की ओर बहने वाली नदी जिसे भरत ने केकय देश से अयोध्या आते समय एकसाल नामक स्थान के निकट पार किया था, 'एकसाले स्थाणुमतीं विनतें गोमतीनदीम, कलिंगनगरे चापि प्राप्य सालवनं तदा'।

(2) बुद्धचरित 21,9 के अनुसार बुद्ध ने कूटदत्त ब्राह्मण को इस स्थान पर प्रव्रजित किया था। यह ग्राम राजगृह के निकट था।

स्थाण्वीश्वर दे० स्थानेश्वर

स्थानेश्वर

जिला करनाल, हरियाणा में स्थित वर्तमान थानेसर प्राचीन स्थानेश्वर या स्थाण्वीश्वर है। कहा जाता है कि इस स्थान के परिवर्ती प्रदेश में अनेक बार निर्णायक युद्धों द्वारा भारत के भाग्य का निपटारा हुआ है। महाभारत के युद्ध की स्थली कुरुक्षेत्र इसी के निकट है। पृथ्वीराज चौहान और मुहम्मद गोरी की सेनाओं में दो बार युद्ध इसी स्थान के पास तरायन के रणस्थल में हुए जिनके फलस्वरूप मुसलमानी सल्तनत की नींव भारत में जमी। पानीपत का मैदान भी जहां भारतीय इतिहास के तीन प्रसिद्ध युद्ध हुए थे, इसी इलाके में अंतर्गत है। बाणभट्ट ने हर्षचरित में कन्नौजाधिप महाराजाधिराज हर्ष (606 636 ई०) के पिता प्रभाकरवर्धन की राजधानी स्थानेश्वर (स्थाण्वीश्वर) ही में बतायी है। बाण ने इसे श्रीकंठ जनपद का प्रमुख स्थान माना है। उसके काव्यमय वर्णन के अनुसार इस देश (श्रीकंठ) में स्थाण्वीश्वर नामक एक छोटासा देश है 'यह देश जगती के नवयौवन के समान, उद्यानपंक्तियों के

मनोहर पुष्पो के पराग से रमणीय जान पडता है। स्वर्ग की तरह इस के प्रांत भाग मरुतो के द्वारा उद्वीजित चमरीगाय व बालव्यजनो के समान धवल दिखाई देते हैं। कृतयुग के शिविर की तरह इसकी दसो दिशाएं यज्ञ की प्रज्वलित सहस्रो अग्नियो से प्रदीप्त दिखाई देती हैं। उत्तरकुरुदेश के प्रतिद्वंद्वी के समान वह कलकल ध्वनि करती विशाल नदियो (या सेनाओ) से भरा पूरा है', इत्यादि (द० हर्षचरित, हिंदी अनुवाद सूर्यनारायण चौधरी पृ० 122)। बाणभट्ट ने यहा की जिस समृद्धि का वर्णन किया है उसकी पुष्टि चीनी यात्री युवानच्वांग के यात्रावृत्त से भी होती है। हर्ष ने अपने राज्य का पूर्व की ओर विस्तार होने के कारण अपनी राजधानी स्थाण्वीश्वर से हटाकर कन्नौज मे बनाई थी। इस स्थान पर सिद्धशिव-मंदिर को हर्ष ने अपने चक्रवर्ती सम्राट बनने के उपलक्ष्य म बनवाया था। महमूद गजनी ने 1014 मे स्थानेश्वर पर आक्रमण किया और इस प्रसिद्ध शिवमंदिर की शिलाओ से एक मसजिद बनवाई जो थानेसर के पश्चिम म आज भी विद्यमान है। अल्बेरूनी ने शायद थानेसर को ही गुडदेश नाम से अभिहित किया है। मुहम्मद गौरी और सिकंदर लोदी ने भी इस स्थान पर हमले किए थे। 1567 ई० मे सूर्यग्रहण के अवसर पर अकबर ने यहा (कुरुक्षेत्र) की यात्रा की थी। मुलतान दिल्ली के राजपथ पर स्थित होने के कारण आक्रमणकारियो के प्रभाव से यह स्थान मुश्किल से बच पाता था। तैमूरलंग ने भी इस धनी नगर को लूट कर नष्टभ्रष्ट कर दिया था। थानेसर का एक रोचक स्थान शेखचिल्ली का रोजा है। कहते है इसे शाहजहा ने बनवाया था। शेखचिल्ली की हास्यकथाएं भारत भर मे प्रसिद्ध है।

स्थाण्वीश्वर (स्थाणु ईश्वर) शिव का नाम है। जान पडता है कि इस नगर म प्राचीन काल से ही शिव की उपासना का केंद्र था जैसा कि बाणभट्ट के वर्णन से सिद्ध भी होता है। (हर्षचरित, तृतीय उच्छ्वास)

स्थिरपुर (राजस्थान)

पालनपुर कडला (गाधीधाम) रेल्मार्ग पर देवराज स्टेशन के निकट प्राचीन जैन तीर्थ। यहा पूर्वकाल म विशाल जिनालय था जो मुसलमानो के आक्रमणो के फलस्वरूप नष्ट हो गया। आजकल भी यहा के खडहरो से अनेक जैन मूर्तिया प्राप्त होती हैं। स्थिरपुर का वर्तमान नाम थराद है जो प्राचीन नाम का ही अपभ्रंश जान पडता है।

स्थूलकोष्ठक

बुद्धचरित 21,26 मे वर्णित अनभिज्ञात नगर—'तब स्थूलकोष्ठ नगर मे तथागत बुद्ध ने राष्ट्रपाल नामक व्यक्ति को धर्म की दीक्षा दी, जिसका धन

राजा की संपत्ति के बराबर था'।

स्यदिका

पूर्वी उत्तर प्रदेश में बहने वाली सई नदी का प्राचीन नाम। यह गोमती की सहायक नदी है। इसका उद्गम भवाली से नीचे कुमायू की पहाड़ियों में है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार श्रीरामचंद्र ने अयोध्या से वन जाते समय इस नदी को गोमती के पश्चात पार किया था —'गोमती चाप्यतिक्रम्य राघव-शीघ्रगैर्हयः मयूरहंसाभिरुतां ततार स्यदिकां नदीम्' वाल्मीकि अयो० 49,11। इस नदी को पार करने के पश्चात्, गंगातट पर, शृंगवेरपुर से पहले, श्रीराम ने पीछे छूटे हुए अनेक जनपदों वाले और मनु द्वारा इक्ष्वाकु को प्रदत्त, समृद्ध कोशल जनपद की भूमि सीता को दिखाई थी— स महीं मनुना राज्ञा दत्तामिक्ष्वाकवे पुरा, स्फीतां राष्ट्रवृतां रामो वैदेहीमन्वदर्शयत्'—अयो० 49,12। इस वर्णन से सूचित होता है कि स्यदिका, कोशलजनपद की सीमा पर बहती थी (किंतु अयोध्या 49,8 9 से यह भी जान पड़ता है कि वेदश्रुति नामक नदी भी कोसल की सीमा के निकट बहती थी)। भरत की चित्रकूट-यात्रा के संबंध में वाल्मीकि ने इस नदी का उल्लेख नहीं किया है। अध्यात्म-रामायण में स्यदिका का कोई वर्णन राम के वनगमन के संबंध में नहीं है। तुलसीदास ने रामचरितमानस, अयोध्याकांड 188 दोहे के आगे, सई का उल्लेख किया है, 'सई तीर बसि चले बिहाने, शृंगवरपुर सब नियराने'। तुलसी ने गोमती और गंगा के बीच में सई का वर्णन किया है जो भौगोलिक दृष्टि से ठीक है और वाल्मीकि के उपर्युक्त स्यदिका विषयक उल्लेख से मिल जाता है। सई लगभग 230 मील लंबी नदी है। यह जौनपुर से लगभग 10 मील दूर गोमती में मिलती है।

स्याम

थाईलैंड का प्राचीन भारतीय नाम। स्याम में भारतीय हिंदू उपनिवेश ई० सन् की प्रारंभिक शतियों में (संभव है इससे पूर्व भी) स्थापित किए गये थे। भारत से संबंधित सर्वप्राचीन अवशेष भारतीय शिल्पियों की बनाई मूर्ति है जो प्राचायाम नामक स्थान पर मिली है। वह द्वितीय शती ई० या उससे कुछ पूर्व की बताई जाती है। इस देश में हिंदू राज्य का उत्कर्षकाल 13वीं शती तक बना रहा। इस शती में यहां के प्राचीन निवासियों या थाई लोगों ने देश पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। स्याम का एक महत्त्वपूर्ण हिंदू राज्य द्वारावती नामक था जिसकी राजधानी लवपुरी (लापबुरी) में थी।

स्यालकोट दे० शाकल

स्रुघ्न

चीनी यात्री युवानच्वांग को यह जनपद स्थानेश्वर (थानेश्वर, जिला करनाल, पंजाब) से मतिपुर (मंडावर, जिला बिजनौर, पश्चिमी उ० प्र०) आते समय मिला था। वाटर्स के अनुसार इसकी स्थिति यमुना के प्राचीन प्रवाह-पथ पर थी। इस प्रकार इस देश को (7वीं शती के पूर्वार्ध में) सहारनपुर (उ० प्र०) के पश्चिम की ओर यमुना के निकटवर्ती क्षेत्र में स्थित माना जा सकता है। श्री न० ला० डे के अनुसार जिला देहरादून की कालसी स्रुघ्न में स्थित थी।

स्लीमनाबाद (जिला जबलपुर, म० प्र०)

जबलपुर कटनी मार्ग पर 39वें मील के निकट स्थित है। इस कस्बे को 1832 ई० के लगभग कर्नल स्लीमेन ने, जिन्होंने तत्कालीन ठगी की प्रथा का अंत करने में महत्त्वपूर्ण कार्य किया था, बसाया था। इसके लिए उन्होंने कोहका नामक ग्राम की भूमि प्राप्त की थी (दे० जबलपुर ज्योति)। यहां एक प्राचीन शिवमंदिर स्थित है।

स्वभोगनगर दे० एरण

स्वभ्र=श्वभ्र

स्वभ्रमती=श्वभ्रमती (साबरमती नदी)

स्वयंप्रभागुहा (मद्रास)

दक्षिण रेल के कलयनल्लूर स्टेशन से 1 मील दूर स्थित एक पहाड़ी में 30 फुट लंबी गुहा है जिसे किंवदंती के अनुसार रामायण में उल्लिखित स्वयंप्रभा की गुहा कहा जाता है। कथा इस प्रकार है—सीता के अन्वेषण के समय वानरों को एक स्थान पर बहुत प्यास लगी। एक गुहा (=ऋक्षबिल) में से जल-विहंगमों को निकलते देखकर उन्होंने यहां जल का अनुमान किया। गुफा के अंदर प्रवेश करने पर उन्हें स्वयंप्रभा नाम की तपस्विनी के दर्शन हुए, जिसने इन्हें अपनी योगशक्ति से समुद्रतट पर पहुंचा दिया। इस कथा का वर्णन वाल्मीकि रामायण के किष्किंधाकांड सर्ग 50,51,52 में किया गया है—दे० ऋक्षबिल। स्वयंप्रभा ने अपना परिचय वानरों को इस प्रकार दिया था—'शाश्वत कामभोगश्च गृहं चेदं हिरण्मयम्, दुहितामेरु सावर्णेरहं तस्याः स्वयं प्रभा' किष्किंधा 51,16 तथा दे० 'तस्या अहं सखी विष्णुतत्परा मोक्षकांक्षिणी नाम्ना स्वयंप्रभा दिव्यगंधर्वतनयापुरा' अध्यात्म०, किष्किंधा, 6,53।

स्वराष्ट्र

संभवत सुराष्ट्र या सौराष्ट्र (काठियावाड) का नाम भेद। इसका ,उल्लेख महाभारत, भीष्म० 9,48 मे इस प्रकार है—'अटवीशिखराश्चैव मेरुभूताश्च मारिष, उपावृत्तानुपावृत्ता स्वराष्ट्रा केकयास्तथा'।

स्वर्गद्वार

मुहम्मद तुगलक (1325 51 ई०) ने कड़ा के निकट (जिला इलाहाबाद, उ० प्र०) इस नाम का एक नया नगर बसाया था। यहा उसने दोआब के अकालपीडित लोगो को ले जाकर बसाया और अयोध्या से अन्न मगवाकर उन्हे बाटा था।

स्वर्गपुरी (जिला पुरी, उडीसा)

हाथीगुफा के निकट एक गुफा जहा खारवेल (चौथी शती ई० पू०) की रानी का एक अभिलेख है। इस गुफा को, इमी रानी ने जो हस्तिसिंह की पुत्री थी बनवाया था।

स्वर्गरोहिणी

केदारनाथ (जिला गढवाल, उ० प्र०) के निकट बहने वाली एक नदी। कहा जाता है यह वही नदी है जिसके किनारे किनारे पाडव अपने अतिम समय मे हिमालय की पहाडियो मे गलने के लिए गए थे।

स्वर्णगिरि

(1)=सुवर्णगिरि

(2) मारवाड (राजस्थान) मे स्थित वर्तमान जलोर। इस जैन तीर्थ का तीर्थमाला चैत्यवदन मे इस प्रकार उल्लेख है—'वदे स्वर्णगिरौ तथा सुरगिरौ श्रीदेवकीपत्तने'।

स्वर्णगोत्र=सुवर्णगोत्र

स्वर्णग्राम=सुवर्णग्राम (दे० सोनारगाव)

स्वर्णद्वीप=सुवर्णद्वीप

स्वर्णप्रस्थ=सुवर्णप्रस्थ

स्वर्णभूमि=सुवर्ण भूमि

स्वर्णमाली=सुवर्णमाली

स्वर्णरेखा=सुवर्णरेखा

स्वर्णसिकता=सुवर्णसिकता

स्वात

(1) सिंधु नदी (सिंध, पाकिस्तान) मे पश्चिम की ओर से मिलने वाली उप-

नदी जिसका वैदिक नाम सुवास्तु है। सुवास्तु का अर्थ सुंदर वास्तु या भवनो से अलंकृत तटप्रदेश वाली नदी हो सकता है। सुवास्तु को ग्रीक लेखक एरियन ने सोआस्टस (Soastus) कहा है। स्वात मे काबुल (वैदिक कालीन कुभा) नदी मिलती है। सगम पर रामायणकालीन पुष्कलावती नामक नगरी बसी हुई थी।

(2) स्वात या सुवास्तु नदी का तटवर्ती देश जिसे सातवी शती ई० मे चीनी यात्री युवानच्वाग ने उद्यान नाम से अभिहित किया है। स्वात की काली मिट्टी से गधार कला की अधिकाश मूर्तिया निर्मित हुई थी। पेशावर सग्रहालय मे इनका अच्छा सग्रह है।

हपी (मैसूर)

प्रसिद्ध मध्यकालीन विजयनगर राज्य के खडहर हपी के निकट [illegible] खडहरो के रूप मे पडे हुए है। कहते है कि पपपति के कारण ही इस स्थान का नाम हपी हुआ है। स्थानीय लोग 'प' का उच्चारण 'ह' करते हैं और [illegible] को हपपति (हपपथी) कहते है। हपी हपपति का ही लघुरूप है। [illegible] शिव के नदी की खडी हुई मूर्ति है। हपी म सबसे ऊचा मदिर [illegible] का है। यह विजयनगर के ऐश्वर्य तथा कलावैभव के [illegible] है। मदिर के कल्याणमडप की नक्काशी इतनी [illegible] है कि देखते ही बनता है। मदिर का भीतरी भाग 55 फुट लबा है [illegible] ऊँची वेदिका बनी है। विट्ठल भगवान का रथ [illegible] कटा हुआ है। मदिर के निचले भाग म सर्वत्र [illegible] के कथनानुसार यद्यपि मडप की छत कभी पूरी नहीं [illegible] और इसके स्तभो म से अनेक को मुसलमान [illegible] नष्ट कर दिया था तो भी यह मदिर दक्षिणभारत का [illegible] कहा जा सकता है। फर्ग्युसन ने भी इस मदिर मे की हुई [illegible] की [illegible] प्रशसा की है। कहा जाता है कि पटरपु के [illegible] इस मदिर की [illegible] देखकर यहा आकर फिर पढरपु [illegible] है। [illegible] का मदिर [illegible] ही स्थित है। इसका [illegible] यह मदिर राजपरिवार की [illegible] के लिए बनवाया गया था। [illegible] की दीवारो पर रामायण के [illegible] इस मदिर के स्तभ [illegible] (दे० विजयनगर)

हस

विष्णुपुराण के [illegible]

कूटाऽथ ऋषभो हंसो नागस्तथापर, कालञ्जाद्याश्चनया उत्तरे केसराचला' 2,2,29।

हंसकायन

महाभारत, सभा० 52,14 म उल्लिखित एक प्रदेश जहा के निवासी युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ मे भेंट की सामग्री लेकर उपस्थित हुए थे— 'काश्मीराश्च कुमाराश्च घोरका हंसकायना, शिबित्रिगर्तयौधेया राजन्या मद्र केकया'। कुछ विद्वानो ने हंसकायन का अभिज्ञान कश्मीर के उत्तर पश्चिम मे स्थित हुंजा प्रदेश से किया है जो प्रसग से ठीक जान पडता है।

हंसकूट

(1) द्वारका के निकट स्थित पर्वत, 'हंसकूटस्ययत्शृगमिन्द्रद्युम्नसरा महत' महा० सभा० 38 दाक्षिणात्य पाठ। यह गिरनार पर्वतमाला का ही कोई भाग जान पडता है।

(2) हिमालय के उत्तर मे स्थित पर्वत। यह, उत्तर कुरु प्रदेश मे स्थित शतशृग पर्वत के दक्षिण मे स्थित था, 'इन्द्रद्युम्नसर प्राप्य हंसकूटमतीत्य च शतशृगे महाराज तापस समतप्यत'। इस पर्वत पर इन्द्रद्युम्न सरोवर स्थित था।

हंसमार्ग

हंसो के भारत मे आने का मार्ग—हुंजा (काश्मीर) के इलाके के दर्रे।

हंसावती

पीगू (दक्षिण वर्मा) का प्राचीन भारतीय नाम। यहा भारतीय औप निवेशिको ने पाचवी छठी शती ई० पू० मे ही बस्तिया स्थापित करली थी।

हकरा दे० वहिंदा

हजारा दे० उरसा

हटा (जिला दमोह, म० प्र०)

गढमडल नरेश राजा सग्राम सिंह (मृत्यु 1541 ई०) के 52 गढो मे से एक। यहा की गढी काफी प्रचीन थी।

हड्डी दे० अस्थि

हत्यिगाम=हत्थीगाम=हस्तिग्राम

हत्यिपुर

हस्तिनापुर का एक पाली नाम। लका के बौद्धकालीन इतिहासग्रथ दीपवश 3,14 के अनुसार यहा का अतिम राजा कबलवसन था।

हनमकोडा (जिला वारगल, आ० प्र०)

वारगल का उपनगर। यहा ककातीयनरेशो के समय मे बना हुआ मदिर

दक्षिण भारत के सर्वोत्कृष्ट मंदिरों में परिगणित किया जाता है। इस मंदिर की स्थापना महाराज गणपति ने की थी। इसका उल्लेख प्रतापचरित्र नामक ग्रंथ में है। चालुक्यकालीन मंदिरों की भांति ही इसका आधार ताराकार है और इसमें सूर्य, विष्णु तथा शिव के तीन देवालय हैं। देवालयों में मूर्तियां नहीं हैं किंतु कटे हुए पत्थरों की जालियों में इन देवताओं की मूर्तियां निर्मित हैं। मंदिर के सामने काले पत्थर का बना हुआ नंदी स्थित है। यह मूर्ति एक ही पत्थर में से काटी गई है। मंदिर के एक तेलगू कन्नड अभिलेख से ज्ञात होता है कि इसका निर्माण 1164 ई० में हुआ था। इस अभिलेख में काकातीयनरेश गणपति की वंशावली तथा तत्कालीन घटनाओं का विवरण है।

हप्तहिंदू=सप्तसिंधु दे० सिंधु (1)

हमीरपुर (उ० प्र०)

इस नगर को राजा हमीरदेव ने बसाया था। इनका किला खंडहर के रूप में यहां आज भी है।

हयमुख

साकेत के निकट इस स्थान पर चीनी यात्री युवानच्वांग ने 1000 बौद्ध भिक्षुओं की उपस्थिति का वर्णन किया है। यह संभवतः कान्यकुब्ज के निकट अश्वतीर्थ नामक स्थान था। कनिंघम ने इसका अभिज्ञान डोडीखेडा नामक स्थान से किया है जो प्रयाग से 104 मील उत्तर पश्चिम में है। बील (Beal) ने इस अभिज्ञान को नहीं माना है (रेकार्ड्स ऑव वेस्टर्न कंट्रीज 1,229)

हरकेल

बंगाल या पूर्वी बंगाल (दे० हेमचंद्र, अभिधान चिंतामणि)

हरगांव (जिला सीतापुर, उ० प्र०)

स्थानीय किंवदंतियों के अनुसार इस प्राचीन कस्बे की नींव अयोध्यानरेश महाराज हरिश्चंद्र ने डाली थी। एक खेडे के खंडहर भी यहां मिले हैं। इसके ऊपर पहले एक मंदिर था जिसका स्थान अब एक मसजिद ने ले लिया है। मंदिर के पास एक सरोवर है जिसके बारे में कहा जाता है कि इसे पांडवों ने एक रात में बनवाया था। स्थानीय अनुश्रुति में इस स्थान को राजा विराट का नगर माना जाता है। कस्बे के दक्षिण की ओर कीचक की समाधि बताई जाती है। यह किंवदंती निस्सार मालूम पड़ती है। (दे० विराटनगर)

हरद्वार=हरिद्वार (उ० प्र०)

सिवालिक पहाड़ियों के क्रोड में बसा हुआ प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थ। यहां पहाड़ियों से निकल कर भागीरथी गंगा पहली बार मैदान में आती है। गंगा के

उत्तरी भाग मे बने हुए बदरीनारायण तथा केदारनाथ नामक विष्णु और शिव के प्रसिद्ध तीर्थों के लिए इसी स्थान से मार्ग जाता है और इसीलिए इसे हरिद्वार अथवा हरद्वार दोनों ही नामों से अभिहित किया जाता है। हरद्वार का प्राचीन पौराणिक नाम माया या मायापुरी है जिसकी सप्त मोक्षदायिनी पुरियों मे गणना की जाती थी (दे० माया)। हरद्वार का एक भाग आज भी मायापुरी नाम से प्रसिद्ध है। संभवतः माया का ही चीनी यात्री युवानच्वांग ने मयूर नाम से वर्णन किया है (दे० मयूर)। महाभारत मे हरद्वार को गंगाद्वार कहा गया है। इस ग्रंथ मे इस स्थान का प्रख्यात तीर्थों के साथ उल्लेख है (दे० गंगाद्वार)। किंतु हरद्वार नाम भी अवश्य ही प्राचीन है क्योंकि हरिवंशपुराण मे हरद्वार या हरिद्वार का तीर्थ रूप मे वर्णन है—'हरिद्वारे कुशावर्ते नीलके भिल्लपर्वते। स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते'। इसी प्रकार मत्स्यपुराण मे भी,—'सर्वत्र सुलभा गंगा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा, हरिद्वारे प्रयागे च गंगासागरसंगमे'। किंतु युवानच्वांग के समय तक (7वी शती ई०) हरद्वार का मायापुरी नाम ही अधिक प्रचलित था। मध्यकाल मे इस स्थान की कई प्राचीन बस्तियों को जिनमे मायापुरी, कनखल ज्वालापुर और भीमगोडा मुख्य हैं सामूहिक रूप मे हरद्वार कहा जाने लगा था। हरद्वार को सदा से ही ऋषियों की तपोभूमि माना जाता रहा है। कहा जाता है कि स्वर्गारोहण के पूर्व लक्ष्मणजी ने लक्ष्मण-झूला स्थान के निकट तपस्या की थी।

हरनदी दे० हिंडोन

हरयाणा=हरियाना

दक्षिणी पंजाब मे रोहतक गुड़गांव का परवर्ती प्रदेश जिसमे मूलतः दिल्ली भी शामिल है। अब इस नाम का एक नया राज्य बन गया है। 1327 के एक अभिलेख मे ढिल्लीका या दिल्ली को हरियाना के अंतर्गत बताया गया है—'देशोऽस्ति हरियानाख्य पृथिव्यां स्वर्गसंनिभ, ढिल्लिकाख्यापुरी यत्र तोमरैरस्ति निर्मिता'। कुछ विद्वानों के मत मे हरयाणा या हरियाना शब्द, 'अहीराना' का अपभ्रंश है। इस प्रदेश मे प्राचीन काल से ही अच्छी चरागाह भूमि होने के कारण अहीरो या आभीर जाति के लोगों का निवास रहा है।

हरि

(1) विष्णुपुराण 2,4,41 मे उल्लिखित एक पर्वत जो कुशद्वीप मे स्थित है—'विद्रुमो हेमशैलश्च द्युतिमान् पुष्पवांस्तथा, कुशेशयो हरिश्चैव सप्तमो मंदराचल'।

(2)=हरिवर्ष

हरिकांता

जैन ग्रंथ जंबुद्वीपप्रज्ञप्ति के अनुसार (4,34,35) हिमालय की पद्मह्रद झील से निकलने वाली एक नदी। हरिकांता के अतिरिक्त इस झील से निकलने वाली अन्य नदियों में गंगा, रोहिता और सिंधु की गणना की गई है।

हरिकातानकीसुरी

जैन ग्रंथ जंबुद्वीपप्रज्ञप्ति (4,80) में उल्लिखित महाहिमवत का एक शिखर।

हरिकेल=हरकेल

हरिणी

नर्मदा की सहायक नदी। इन दोनों का संगम सारल ग्राम के निकट है जहां किंवदंती के अनुसार आदि शंकराचार्य आए थे।

हरिण्या (जिला गोरखपुर उ० प्र०)

गंडक की सहायक नदी। बौद्धसाहित्य के अनुसार गौतम बुद्ध का दाह-संस्कार इसी नदी के तट पर हुआ था। यह नदी जो अब प्रायः सूखी रहती है कसिया या प्राचीन कुशीनगर के निकट बहती है। इसे अतीत्वती भी कहते थे जो हिरण्यवती का ही प्राकृत रूपांतरण जान पड़ता है।

हरित

विष्णुपुराण 2,4,29 के अनुसार शाल्मलद्वीप का एक वर्ष या भाग जो इस द्वीप के राजा वपुष्मान के पुत्र हरित के नाम पर प्रसिद्ध है।

हरिदासपुर (जिला अलीगढ़, उ० प्र०)

अलीगढ़ के निकट इस ग्राम में, 1512 ई० में प्रसिद्ध वैष्णव संगीतज्ञ तथा संत हरिदास का जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम आशुधीर था। अकबर की राजसभा का प्रख्यात संगीतकार तानसेन तथा तत्कालीन अन्य कई महान गायक बैजू बावरा, गोपालराय, रामदास आदि, हरिदास के ही शिष्य कहे जाते हैं। हरिदास की समाधिस्थली वृंदावन में स्थित निधिवन है।

हरिद्वार=हरद्वार

हरिपुंजय

उत्तरी स्याम (थाईलैंड) में स्थित प्राचीन भारतीय राज्य जिसका वृत्तांत स्याम की पाली इतिहास कथाओं चामदेवीवंश तथा जिनकालमालिनी (15वीं-16वीं शती ई०) में मिलता है। इनसे ज्ञात होता है कि हरिपुंजय की स्थापना

661 ई० में ऋषि वासुदेव ने की थी। दो वर्ष पश्चात् इनका निमंत्रण पाकर चामदेवी, जो लवणपुरी की राजकुमारी थी, यहां आई थी। इसके साथ अनेक बौद्ध भिक्षु भी आए थे जिन्होंने हरिपुंजय में बौद्ध धर्म का प्रचार किया।

हरिपुर

(1) (जिला देहरादून, उ० प्र०) देहरादून से 35 मील दूर कालसी के सन्निकट स्थित ग्राम। इस स्थान से 1860 ई० में फॉरेस्ट का अशोक की 14 धर्मलिपियों की संपूर्ण प्रति एक शिला पर उत्कीर्ण प्राप्त हुई थी जो अब कालसी शिलालेख कहलाता है। हरिपुर में यमुना हिमालय के उच्च शृंगों से उतरकर नीचे आती है। यमुना पर हरिपुर की स्थिति गंगा पर हरद्वार जैसी ही है।

(2) (जिला कांगड़ा, पंजाब) यह छोटा सा कस्बा, प्राचीन अंबिकेश्वर के मंदिर तथा राजपूतों के समय में निर्मित सुदृढ़ दुर्ग के लिए उल्लेखनीय है।

हरियाना दे० हरयाणा

हरिवर्ष

प्राचीन भूगोल के अनुसार जंबूद्वीप का एक भाग या वर्ष। विष्णुपुराण के वर्णन में जंबूद्वीप के अधीश्वर राजा आग्नीध्र के नौ पुत्रों में हरिवर्ष का भी नाम है। इसके नाम पर ही संभवतः हरिवर्ष भूखंड का नाम प्रसिद्ध हुआ (विष्णु० 2,1,16)। यहां निषध पर्वत स्थित था। हरिवर्ष को मेरुपर्वत के दक्षिण की ओर माना गया है। इसके तथा भारत के बीच में किंपुरुषवर्ष स्थित था—'भारतं प्रथमं वर्षं ततः किंपुरुषस्मृतम्, हरिवर्षं तथैवान्यं मेरोर्दक्षिणतो द्विज'—विष्णु० 2 2 12। महाभारत सभा० में हरिवर्ष को मानसरोवर, गंधर्वों के देश और हेमकूट पर्वत (कैलास) के उत्तर में स्थित माना गया है। अर्जुन ने अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसंग में इस देश को भी विजित किया था। यहां उन्होंने बहुत से मनोरम नगर, सुंदर वन तथा निर्मल जलवाली नदियां देखी थीं। यहां के स्त्री-पुरुष बहुत सुंदर थे तथा भूमि रत्नप्रसवा थी। यहीं अर्जुन ने निषध पर्वत को भी देखा था—'सरो मानसमासाद्य हाटकानभितः प्रभु, गंधर्वरक्षितं देशमजयत् पांडवस्ततः, हेमकूटमासाद्य न्यविशत् फाल्गुनस्तथा, तं हेमकूटं राजेंद्र समतिक्रम्य पांडव, हरिवर्षं विवेशाथ, सैन्येन महतावृतः तत्र पार्थो ददर्शाथ बहूनि हि मनोरमान् नगरांश्च वनानश्चैव नदीश्च विमलोदकाः, तान् सर्वांश्च दृष्ट्वा मुदायुक्तो धनंजय, यशोनेत्रे परत्नानि लेभे च सुबहूनि च ततो निषधमासाद्य गिरिस्थानजयत् प्रभु'—सभा० 28,5 तथा आगे दाक्षिणात्य पाठ। महाभारत, भीष्म० 6,8 में हेमकूट के पार हरिवर्ष की स्थिति बताई गई है— हेमकूटात

पर चव हरिवर्षं प्रचक्षते'। हेमकूट को कैलास पर्वत माना गया है—'हेमकूटस्तु सगुहान कैलासो नाम पर्वत' भीष्म 6,41। प्रसग से हरिवर्ष उत्तरी तिब्बत तथा दक्षिणी चीन का समीपवर्ती भूखड जान पड़ता है। शायद यह वर्तमान सिक्यांग का प्रदेश है जो पहले चीनी तुर्किस्तान कहलाता था। महाभारत म हरिवर्ष के उत्तर म इलावत का उल्लेख है जिसे जबूद्वीप का मध्य भाग बताया गया है।

हरिवर्षपर्वत

जैनसूत्रग्रथ जबूद्वीप प्रज्ञप्ति म वर्णित महाहिमवन का एक शिखर (4 80)।

हरिहर

(1) (मैसूर) यह स्थान एक सुदर चालुक्यकालीन मदिर क लिए उल्लेखनीय है जो तत्कालीन वास्तु का अच्छा उदाहरण है। इसकी विशालता तथा भव्यता परम प्रशसनीय है। हरिहर चीतलदुर्ग के निकट बबई मैसूर राज्यो की सीमा पर स्थित है।

(2) =हरिहर क्षत्र या गगा शोण सगम का परिवर्ती प्रदेश (बिहार) जहा मानपुर नगर स्थित है। यह प्राचीन तीर्थ माना जाता है।

हरिहरपुर (बगाल)

1633 म राल्फ कार्टराइट ने इस स्थान तथा बालासोर मे प्रथम बार अंग्रेजो की व्यापारिक कोठिया स्थापित की थी। 1658 मे हरिहरपुर की कोठी ईस्ट इडिया कपनी के आदेश द्वारा मद्रास के अधीन कर दी गई थी।

हरिहरालय

प्राचीन कबुज (कबोडिया) का एक नगर जहा 9 वीं शती ई० म हिंदू नरेश जयवर्मन द्वितीय की राजधानी कुछ समय तक रही थी।

हुनहल्ली (मैसूर)

चालुक्य नरेशो के समय म चालुक्य वास्तुशैली के अनुसार निर्मित मदिर यहा का उल्लेखनीय स्मारक है। चालुक्य शैली की मुख्य विशेषता मदिर का तारावृति आधार है।

हृषगिरि दे० हर्षनाथ

हर्षनगरी=हर्षनाथ

हर्षनाथ (ठिकाना सीकर, जिला जयपुर, राजस्थान)

इस प्राचीन नगर के अवशेष सीकर के निकट स्थित हैं। स्थानीय अनुश्रुति के अनुसार यह नगर पूर्वकाल मे 36 मील क घेरे म बसा हुआ था। एक प्राचीन कहावत भी प्रचलित है—'जगमालपुरा हर्षनगरी, जीमें हाठ हजार मढ गुदडी

['यमं तत्राव यदी रतरी' । आजकल हर्षनाथ नामक ग्राम हर्षगिरि पहाड़ी की तलहटी में बसा हुआ है और सीकर से प्राय आठ मील दक्षिण पूर्व में है। हर्षगिरि पहाड़ी समुद्रतल से 3000 फुट ऊंची है और इस पर लगभग 900 वर्ष से अधिक प्राचीन मंदिरों के खंडहर स्थित हैं। इन्हीं में से एक पर लाल पत्थर पर उत्कीर्ण लेख प्राप्त हुआ है जो शिवस्तुति से प्रारंभ होता है और पौराणिक कथा के रूप में लिखा गया है। लेख में हर्षगिरि और मंदिर का वर्णन है और कहा गया है कि मंदिर के निर्माण का कार्य आषाढ़ शुक्ल 13, सोमवार 1013 वि० सं० (=956 ई०) को प्रारंभ होकर विग्रहराज चौहान के समय में आषाढ़ कृष्ण 15, 1030 वि० सं० (=973 ई०) को पूरा हुआ था। यह लेख संस्कृत में है और इसे रामचंद्र नामक कवि ने निबद्ध किया है। मंदिर के भग्नावशेषों में अनेक सुंदर कलापूर्ण मूर्तियां तथा स्तंभ आदि प्राप्त हुए हैं जिनमें से अधिकांश सीकर के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

हर्षपुर (मेवाड़, राजस्थान)

मेवाड़ में एक प्राचीन स्थान जिसका उल्लेख इंडियन एंटिक्वेरी, 1910, पृ० 187 में है। विंसेंट स्मिथ के अनुसार यह नगर मेवाड़ अथवा मारवाड़ के किसी हर्ष नामक नरेश के नाम पर प्रसिद्ध हुआ होगा। संभवत यह वही हर्ष है जिसका उल्लेख तिब्बत के बौद्ध इतिहासकार तारानाथ ने किया है। (दे० अर्ली हिस्ट्री ऑव इंडिया, पृ० 361)

हलसी (मैसूर)

छठी शती ई० में हलसी के जैन मत के अनुयायी कदंब-नरेशों ने पल्लवों तथा मैसूर नरेश गंग को परास्त कर दक्षिण महाराष्ट्र में अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित किया था।

हलीशहर (बंगाल)

कंचनपल्ली से दो मील दूर चैतन्य महाप्रभु के गुरु ईश्वरीपुरी का जन्म स्थान। बंगला के प्रसिद्ध कवि मुकुंदराम कविकंकण ने इस स्थान का नाम कुमारहट्टा भी लिखा है। चैतन्यदेव यहां तीर्थयात्रा के लिए आए थे। चैतन्य के शिष्य श्रीवास पंडित यहीं के निवासी थे। चैतन्य के विषय में पदावली लिखकर प्रसिद्ध हो जाने वाले कवि वासुदेव घोष का भी हलीशहर या कुमार-हट्टा से संबंध था। कुमारहट्टा में वैष्णव संप्रदाय के साथ ही साथ शाक्तमत का भी काफी प्रचार था। काली के प्रसिद्ध भक्त कवि रामप्रसाद सेन भी यहीं के रहने वाले कहे जाते हैं। यहां रामप्रसाद के सिद्धि प्राप्त करने का स्थल, पंचवट आज तक सुरक्षित है। रामप्रसाद की काली विषयक सुंदर भावमयी

कविता आज भी बगाल म बडे प्रेम स गाई जाती है।

हलोल (गुजरात)

चापानेर का एक उपनगर जो 16वीं शती ई० म समृद्ध अवस्था म था (दे० चापानेर)

हल्दीघाटी (जिला उदयपुर, राजस्थान)

उदयपुर से नाथद्वारा जाने वाली सडक मे कुछ दूर हटकर पहाडियो के बीच वह इतिहास प्रसिद्ध स्थान है जहा 1576 ई० मे महाराणा प्रताप और मुगलसम्राट अकबर की सेनाओ के बीच घोर युद्ध हुआ था। इस स्थान को गोगदा भी कहा जाता है। अकबर के समय के राजपूत नरेशो मे मेवाड के महाराणा प्रताप ही एसे थे जिन्हे मुगलसम्राट की मैत्रीपूर्ण दासता पसन्द न थी। इसी बात पर उनकी आमेरपति मानसिंह से भी अनबन हो गई जिसके फलस्वरूप मानसिंह के भडकाने से अकबर ने स्वय मानसिंह और सलीम की अध्यक्षता मे मेवाड पर आक्रमण करने के लिए भारी सेना भेजी। हल्दीघाटी की लडाई 20 जून 1576 ई० का हुई थी। इसम राणाप्रताप ने अप्रतिम वीरता दिखाई थी। उनका परम भक्त सरदार झाला इसी युद्ध मे वीरगति को प्राप्त हुआ। स्वय प्रताप के दुर्धष भाले से गजासीन सलीम बाल बाल बच गया। किन्तु प्रताप की छोटी सेना मुगलो की विशाल सेना के सामने अधिक सफल न हो सकी और प्रताप अपने घायल किन्तु बहादुर घोडे चेतक पर युद्ध क्षेत्र से बाहर आ गए जहा चेतक ने प्राण छोड दिए। इस स्थान पर इस स्वामिभक्त घोडे की समाधि आज भी देखी जा सकती है। इस युद्ध मे प्रताप की 22 सहस्र सेना म से 14 सहस्र काम आई थी। इसम पाच सौ वीर सैनिक राणाप्रताप के सम्बधी थे। मुगल सेना की भी भारी क्षति हुई तथा उसके भी 500 के लगभग सरदार मारे गए थे। सलीम के साथ जो सेना आई थी उसके अलावा एक सेना वक्त पर सहायता के लिए सुरक्षित रखी गई थी और इस सेना द्वारा मुख्य सेना की हानिपूर्ति बराबर होती रही थी। इसी कारण मुगलो के हताहतो की ठीक ठीक सख्या इतिहासकारो ने नही लिखी है। इस युद्ध के पश्चात राणाप्रताप को बडी कठिनाई का समय व्यतीत करना पडा था किन्तु उन्होने कभी साहस न छोडा और अत मे अपने खोए हुए राज्य का अधिकाश मुगलो से वापस छीन लिया।

हसनगाव (जिला उसमानाबाद, महाराष्ट्र)

यह स्थान नालदुग से 40 मील उत्तर पश्चिम मे है। यहा पहाडी मे कटी हुई दो विशाल गुफाए है जिनमे हिन्दू मूर्तिया स्थापित थी। इन गुफाओ का निर्माणकाल 7वी 8वी शती हो सकता है।

हसनाकोल (जिला गया, बिहार)

इस स्थान से 9वी शती ई० मे बनी, काले पत्थर की तीन सुदर मूर्तिया प्राप्त हुई थी जो आजकल पटना सग्रहालय मे है। इनमे एक बड़े आकार की प्रतिमा बुद्ध की है। दूसरी अवलोकितेश्वर और तीसरी मैत्रेय की है। इन सभी मूर्तियो की निर्मिति मे विवरण के प्रदर्शन की ओर विशेष ध्यान दिया गया है।

हसुआ (जिला फतहपुर, उ० प्र०)

इस स्थान पर 17वी शती क महात्मा चददास की समाधि है। य हिदी के कवि थे। इनका लिखा ग्रथ भक्तविहार हाल मे ही मे प्रकाश म आया है।

हस्तकवप्र

भावनगर (गुजरात) के निकट हाठब। इसका टॉलमी क अष्टकप्र से अभिज्ञान किया गया है—(दे० बाबे गजेटियर जिल्द 1, भाग 1, पृ० 539)

हस्तिकुडी दे० हस्तोडी

हस्तिग्राम

(1) पाली हत्थि या हत्थीग्राम। बौद्धकाल का एक व्यापारिक नगर जो श्रावस्ती से राजगृह जाने वाले वणिक्पथ पर वैशाली के निकट स्थित था। यहा वृज्जिवशीय क्षत्रियो की राजधानी थी। अगुत्तरनिकाय 4, 212 मे उग्र क्षत्रियो का सम्बध हत्थीग्राम से बताया गया है। जान पडता है यह व्यापारिक नगर के रूप मे भी ख्यातिप्राप्त था।

(2)=हस्तिनापुर

हस्तिनापुर=हास्तिनपुर (जिला मेरठ, उ० प्र०)

मेरठ से 22 मील उत्तरपूव मे गगा की प्राचीन धारा के किनार बसा हुआ है। हस्तिनापुर महाभारत के समय मे, कौरवो की वभवशालिनी राजधानी के रूप मे भारत भर मे प्रसिद्ध था। प्राचान नगर गगातट पर स्थित था किन्तु अब नदी यहा से कई मील दूर हट गई है। गगा की पुरानी धारा जिसे बूढी गगा कहते है, यहा क प्राचीन टीलो के समीप बहती है। पौराणिक किवन्ती के अनुसार नगर की स्थापना पुरुवशी बृहत्क्षत्र के पुत्र हस्तिन ने की थी और उसी क नाम से यह नगर हस्तिनापुर कहलाया। हस्तिन क पश्चात अजामीढ, दक्ष, सवरण और कुरु क्रमानुसार हस्तिनापुर म राज्य करत रह। कुरु के वश मे ही शातनु और उनके पौत्र पांडु तथा धतराष्ट्र हुए जिनके पुत्र पाडव व कौरव कहलाए। महाभारत के युद्ध के समय हस्तिनापुर बड़ा विशाल नगर था। महाभारत आदिपव मे इसका वर्णन इस प्रकार है—

'नगर हास्तिनपुर शनैं प्रविविशुस्तदा। पाडवानागताञ्छ्रुत्वा नागरास्तु कुतूहलात, भडयाचक्रिरेतत्र नगर नागसाह्वयम। मुक्तपुष्पावकीर्ण तज्जलसिक्त तु सनश, धूपित दिव्यधूपन मडनैश्चापि सवतम। पताकोच्छ्रितमाल्य च पुरमप्रतिमप्रभो, शखभेरीनिनादैश्चनागरादिरनि स्वनै। कौतूहलन नगर दीप्यमानमिवाभवत, तत्र ते पुरुषव्याघ्रा दु खशोकविनाशना' आदि० 20', 14—दाक्षिणात्य पाठ, 15। कहा जाता है कि महाभारत के समय हस्तिनापुर राज्य की उत्तरी सीमा शुक्करताल (जिला मुजफ्फरनगर), दक्षिणी सीमा पुष्पवटी (=पूठ, जिला बुलदशहर) और पश्चिमी सीमा वारणावत (=बरनावा, जिला मेरठ) तक थी। पूव की ओर गगा प्रवाहित होती थी। गढमुक्तश्वर शायद यहा का एक उपनगर था और मेरठ या मयराष्ट्र भी इसकी परिसीमा क भीतर स्थित था (दि मानुमेटल ऐंटिक्विटीज एण्ड इसक्रिपशस ऑव एन डब्ल्यू प्राविसज, 1891)। मेरठ से 15 मील उत्तर पूव म स्थित मवाना (मुहाना) नामक ग्राम को हस्तिनापुर का प्रमुख द्वार कहा जाता ह (दे० हस्तिनापुर, शिक्षा विभाग, उ० प्र०, पृ० २)। महाभारत आदि० 125, 9 मे हस्तिनापुर के वधमान नामक पुरद्वार का उल्लेख है। पाडु की मृत्यु के पश्चात शतशृग म हस्तिनापुर आते समय कुती अपने पुत्रो सहित इसी द्वार स राजधानी म प्रविष्ट हुई थी—'सात्वदीर्घेण कालेन सम्प्राप्ता कुरुजागलम्, वधमानपुरद्वारमाससाद यशस्विनी।' महाभारत के युद्ध के पश्चात हस्तिनापुर की पूव गरिमा समाप्त हो गई। विष्णुपुराण से ज्ञात होता है कि बलराम ने कौरवो पर क्रोध करके उनके नगर हस्तिनापुर का अपन हल की नोक से खीच कर गगा म गिराना चाहा था किंतु पीछे उह क्षमा कर दिया किन्तु उसके पश्चात हस्तिनापुर गगा की ओर कुछ झुका हुआ सा प्रतीत होन लगा था—'बलदेवस्ततोगत्वा नगर नागसाह्वयम बाह्योपवनमध्यऽभूनविवशततपुरम'। विष्णु० 5, 35,8, 'अद्याप्याघूर्णिताकार लक्ष्यते तत्पुर द्विज, एष प्रभावो रामस्य बलशौर्योपलक्षण' विष्णु० 5, 35, 37। इससे ज्ञात पडता है कि हस्तिनापुर को गगा की धारा से भय कौरवो के समय म ही उत्पन्न हो गया था। परीक्षित के वशज निचक्षु (या निचक्नु) के समय म तो वास्तव मे ही गगा ने हस्तिनापुर को बहा दिया और उसे इस नगर का छोडकर वत्स देश की प्रसिद्ध नगरी कौशाम्बी मे जाकर बसना पडा था—'अधिसीमकृष्णात् निचक्नु यो गगया पहृते हस्तिनापुर कौशाम्ब्या निवत्स्यति' विष्णु० 21, 78 (दे० पार्जिटर—डायनेस्टजी ऑव दि कलि एज, प० 5)। पुरातत्वको की खोजो स भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। उत्खनन से ज्ञात होता है कि हस्तिनापुर की सबप्राचीन

बस्ती 1000 ई० पू० से पहले की अवश्य थी और यह कई शतियों तक स्थित रही। दूसरी बस्ती 900 ई० पू० के लगभग बसाई गई थी जो 300 ई० पू० के लगभग तक रही। तीसरी बस्ती 200 ई० पू० से लगभग 200 ई० तक विद्यमान थी और अंतिम 11वीं से 14वीं शती तक। इस प्रकार हस्तिनापुर इतिहास में कई बार बना और बिगड़ा। परवर्तीकाल में जैन तीर्थ के रूप में इस नगर की ख्याति बनी रही। प्राचीन संस्कृत साहित्य में इस नगर के हास्तिनपुर (पाणिनि 4, 2, 101), गजपुर, नागपुर नागसाह्वय, हस्तिग्राम, आसन्दीवत और ब्रह्मस्थल आदि नाम मिलते हैं। कहा जाता है कि हाथियों की बहुतायत के कारण इस प्रदेश का प्रथम नाम गजपुर था, पीछे राजा हस्तिन के नाम पर यह हस्तिनापुर कहलाया और महाभारत के युद्ध के पश्चात नागजाति का प्रभुत्व होने से यह नगर नागपुर या नागसाह्वय कहलाया। ये सब पर्यायवाची नाम हैं। आसन्दीवत का बौद्ध साहित्य (दे० अवदान, 2 पृ० 359) में उल्लेख है। संभव है विष्णुपुराण के उपर्युक्त उल्लेख के अनुसार गंगा की ओर झुके हुए होने के कारण ही यह नाम पड़ा हो (आसंदी=कुर्सी)। इस उल्लेख में इसे कुरुरट्ठ (कुरुराष्ट्र) की राजधानी बताया गया है। वसुदेवहिंडि नामक ग्रंथ में ब्रह्मस्थल नाम भी मिलता है। यह जैन ग्रंथ है। कालिदास ने अभिज्ञान शाकुंतल में दुष्यंत की राजधानी के रूप में हस्तिनापुर का उल्लेख किया है। दुष्यंत से गंधर्वविवाह होने के पश्चात शकुंतला ऋषिकुमारों के साथ कण्वाश्रम से दुष्यंत की राजधानी हस्तिनापुर गई थी 'अनुसूये त्वरस्व, त्वरस्व, एतेखलु हस्तिनपुरगामिनः ऋषयः शब्दाय्यन्ते' अंक 4। हस्तिनापुर के पूर्व की ओर गंगा के पार उस समय विस्तृत घना वन प्रदेश था जहां दुष्यंत आखेट के लिए गया था और जहां मालिनी के तट पर कण्वाश्रम में उसकी भेंट शकुंतला से हुई थी। यह वन गढ़वाल (उ० प्र०) की तराई के क्षेत्र में स्थित था तथा इसका विस्तार जिला बिजनौर तथा गढ़वाल के इलाके में था। वर्तमान हस्तिनापुर नामक ग्राम में, जो इसी नाम से आज तक प्रसिद्ध है, प्राचीन नगर के खंडहर, ऊंचे नीचे टीलों की श्रृंखलाओं के रूप में दूर दूर तक फैले हैं। मुख्य टीला विदुर का टीला या उलटाखेड़ा कहलाता है। इसकी खुदाई से अनेक प्राचीन अवशेष प्रकाश में आए हैं।

जैन परम्परा में हस्तिनापुर का काफी महत्त्व रहा है। जैन ग्रंथ विविध तीर्थकल्प के अनुसार महाराज ऋषभदेव (प्रथम तीर्थंकर) ने अपने सम्बंधी कुरु को कुरुक्षेत्र का राज्य दे दिया था। इन्हीं कुरु के पुत्र हस्ति ने हस्तिनापुर को भागीरथी के किनारे बसाया था। हस्तिनापुर में शांति कुंथु और अरनाथ तीर्थंकरों का जन्म हुआ

था। ये क्रमश 16वें, 17वें और 18वें तीर्थकर थे। 5वें, 6ठे और 7वें तीर्थकरों ने यहां 'केवल ज्ञान' प्राप्त किया। हस्तिनापुरनरेश बाहुबली के पौत्र श्रेयांश के निवासस्थान पर ऋषभदेव ने प्रथम उपवास का पारण किया था। विष्णुकुमार नामक जैन साधु जिन्होंने नमुचि नामक दैत्य को वश में किया था, हस्तिनापुर ही के निवासी थे। इनके अतिरिक्त सनत्कुमार, महापद्म, सुभूम और परशुराम का जन्म भी हस्तिनापुर में हुआ था। यहां चार चैत्यों का भी निर्माण किया गया था।

हस्तिमती

साबरमती (गुजरात) की सहायक नदी (दे० पद्मपुराण उत्तर 55)

हस्तिसोम

महानदी की सहायक नदी हस्तु जिसका पद्मपुराण, स्वर्गखंड में उल्लेख है।

हस्तु=हस्तिसोम

हस्तोडीपुर

जैन स्तोत्र तीर्थमाला चैत्यवंदन में उल्लिखित प्राचीन जैन तीर्थ, 'हस्ताडी-पुरपाडलादक्षपुरे चारूप पंचासरे'। कुछ विद्वानों के मत में यह हस्तिकुंडी नामक तीर्थ है जो बीजापुर से 2 मील दूर है। (दे० ऐंशेंट जैन हिम्ज पृ० 56)

हागल (महाराष्ट्र)

इस स्थान पर चालुक्य नरेशों के समय (7वीं 8वीं शती) का एक विशाल मंदिर स्थित है जिसकी विशेषता इसका ताराकृति आधार है। यह चालुक्य-वास्तुकला का सुंदर उदाहरण है।

हांसी (हरयाणा)

यह मध्यकालीन नगर है। पाणिनि ने इसे ही शायद असिका कहा है। इसकी स्थापना पृथ्वीराज चौहान के मातामह आनंदपाल ने की थी (12वीं शती ई०)। मुसलमान इतिहास लेखकों के ग्रंथों में इस नगर का उल्लेख है। इब्नबतूता ने नगर की समृद्धि और अपार जनसंख्या का उल्लेख किया है।

हाजीपुर (बिहार)

गंगा गंडक के संगम के निकट स्थित है। इस नगर को शमसुद्दीन इल्यास या हाजी इलियास ने 14वीं शती के मध्यकाल में बसाया था। पुराने किले में इलियास की बनवाई मसजिद है जो अपनी तीन मीनारों के लिए उल्लेखनीय हैं। गंडक के पुल निकट हाजी इलियास की कब्र है। यह नगर पटने के समीप ही स्थित है।

हाटक

महाभारत सभा० 28,3 मे उल्लिखित स्थान जिसे यक्षों का देश कहा गया है। इस पर उत्तर दिशा की दिग्विजय के प्रसग मे अर्जुन ने विजय प्राप्त की थी—'त जित्वा हाटक नाम देश गुह्यकरक्षितम पाकशासनिरव्यग्र सहसैन्य समासदत'। यह स्थान कालिदास के मेघदूत की अलका के निकट ही स्थित होगा। मानसरोवर यहा से समीप ही था—'सरोमानसमासाद्यहाटकानभित प्रभु, गधर्वरक्षित देशमजयत पाडवस्ततः सभा० 28 5। यह तिब्बत म स्थित वर्तमान मानसरोवर और कैलास का निकटवर्ती प्रदेश था। यहा गुह्यकों (यक्षों) तथा गधर्वों की बस्ती थी। श्री० वी० सी० ला के मत म हाटक, वर्तमान अटक (पश्चिम पाकि०) है। न० ला० डे के अनुसार यह हूण देश का नाम है।

हाटकेश्वर (गुजरात)

मेहसाणा से 21 मील दूर प्राचीन तीर्थ है जिसे अब वडनगर कहते है। इसका उल्लेख स्कदपुराण 27,76 म है—आनर्तविषये रम्य सर्वतीर्थमय शुभम, हाटकेश्वरज क्षेत्र महापातकनाशनम। (दे० वडनगर)

हाठब=हस्तकवप्र

हाथीगुफा (जिला भुवनेश्वर, उडीसा)

भुवनेश्वर से 4-5 मील दूर एक पहाडी म यह प्राचीन गुहा (गुफा) स्थित है। इस गुफा मे कलिंग नरेश खारवेल का एक पाली अभिलेख उत्कीर्ण है जिसका ठीक ठीक निर्वचन अद्यावत एक समस्या बना हुआ है। फिर भी जो सूचना इस अभिलेख से मिलती है वह स्थूल रूप से यह है कि खारवेल ने (जिसका समय ई० सन से पूर्व माना जाता है) बहपतिमित (बृहस्पतिमित्र) को हराया, वह मगध के नद राजा से प्रथम जैन तीर्थकर की मूर्ति (जो नद पहले कलिंग से ले गया था) वापस लाया और उसने एक प्राचीन नहर का पुनर्निर्माण करवाया। अभिलेख मे कहा गया है कि यह नहर नद राजा के बाद तिवससत तक काम मे न आई थी (पचमे च दानि वसे नदराज तिवससत ')। मुख्य विवाद 'तिवससत' शब्द पर है। रा० दा० बनर्जी के मत म इसका अर्थ 300 है, किंतु अन्य विद्वानो के अनुसार इसे 103 समझना चाहिए। निर्वचन भेद के कारण राजा खारवेल के समय म 200 वर्षों का अतर पड जाता है। फिर भी पहला मत आजकल अधिक ग्राह्य माना जाता है। हाथीगुफा अभिलेख के अध्ययन में का० प्र० जायसवाल ने महत्त्वपूर्ण योग दिया।

हापुड (जिला मेरठ उ०प्र०)

दार राजपूत हरदत्त का बसाया हुआ है। यहा औरगजेब के समय की

एक मसजिद है जिस पर 1081 हिजरी=1703 ई० का अभिलेख खुदा है। कहा जाता है कि गयासुद्दीनतुगलक ने इस शहर में कुछ नागा लोगों को देखकर इसका नाम हयापुर रख दिया था। फ्यूरर (Fuhrer) ने हापुड का अर्थ फलोद्यान किया है किंतु संभवत 'हापुड' हरपुर का बिगड़ा हुआ रूप है।

हामटा (जिला कांगड़ा, हिमाचलप्रदेश)

जगतसुख से कुछ दूर स्थित है। इसका प्राचीन नाम हेमगिरि कहा जाता है। अर्जुन गुफा जो पहाड़ी में है, अर्जुन से संबद्ध बताई जाती है। इसमें अर्जुन की मूर्ति देखी जा सकती है। संभव है उत्तर दिशा की दिग्विजययात्रा के प्रसंग में अर्जुन यहां आए हों। कांगड़ा के अनेक देशों को उन्होंने विजित किया था। (दे० मोदापुर, वामदेव, सुदामा, कुलूत, पंचगण, देवप्रस्थ)

हारहूण

(पाठांतर हारहूर)। महाभारत सभा० 32,12 के अनुसार इस जनपद को नकुल ने पश्चिम दिशा की दिग्विजय में विजित किया था—'द्वारपालं च तरसा वशे चक्रे महाद्युतिः, रामठान् हारहूणाश्च प्रतीच्याश्चैव ये नृपाः'। इस उल्लेख में द्वारपाल संभवत खैबर और रमठ गजनी (अफगानिस्तान) है। हारहूण या हारहूर को वा० श० अग्रवाल ने अफगानिस्तान की नदी अरगंदाबीन माना है जो इस देश के दक्षिण पश्चिमी भाग में बहती है। यदि यह अभिज्ञान ठीक है तो इस प्रसंग में हारहूण को इस नदी का तटवर्ती प्रदेश समझा जा सकता है (दे० बृहत्संहिता 14,33)। संभव है इस स्थान का हूणों से संबंध हो।

हारावती

भूतपूर्व कोटा बूंदी (राजस्थान) रियासत का संयुक्त नाम। हारावती का नामकरण हारसिंह के नाम पर हुआ था जिन्होंने इस राज्य की नींव डाली थी। इन्हीं के नाम पर हारावती के शासक हाडा कहलाते थे।

हारीत आश्रम

उदयपुर (राजस्थान) से 6 मील दूर एकलिंग नामक स्थान। कहा जाता है कि यहां हारीत संहिता के प्रणेता महर्षि हारीत का आश्रम था।

हालार

सौराष्ट्र का उत्तर पश्चिमी भाग। (दे० सौराष्ट्र)

हालेबिड (मैसूर)

होयसल वंश की राजधानी द्वारसमुद्र का वर्तमान नाम (दे० द्वारसमुद्र)। हालेबिड के वर्तमान मंदिरों में होयसलेश्वर का प्राचीन मंदिर प्रख्यात है।

हाटक

महाभारत सभा० 28,3 मे उल्लिखित स्थान जिसे यक्षों का देश कहा गया है। इस पर उत्तर दिशा की दिग्विजय के प्रसंग मे अर्जुन ने विजय प्राप्त की थी—'त जित्वा हाटक नाम देश गुह्यकरक्षितम, पाकशासनिरव्यग्र सहसैन्य समासदत'। यह स्थान कालिदास के मेघदूत की अलका के निकट ही स्थित होगा। मानसरोवर यहा से समीप ही था—'सरोमानसमासाद्यहाटकानभित प्रभु, गंधर्वरक्षित देशमजयत पाण्डवस्तत सभा० 28 5। यह तिब्बत म स्थित वर्तमान मानसरोवर और कैलास का निकटवर्ती प्रदेश था। यहा गुह्यको (यक्षो) तथा गधर्वो की बस्ती थी। थी० बी० सी० लॉ के मत मे हाटक, वर्तमान अटक (पश्चिम पाकि०) है। न० ला० डे के अनुसार यह हूण देश का नाम है।

हाटकेश्वर (गुजरात)

मेहसाणा से 21 मील दूर प्राचीन तीर्थ है जिसे अब बडनगर कहते है। इसका उल्लेख स्कदपुराण 27,76 म है—आनर्तविषय रम्य सर्वतीर्थमय शुभम्, हाटकेश्वरज क्षेत्र महापातकनाशनम। (दे० बडनगर)

हाटब=हस्तकवप्र

हाथीगुफा (जिला भुवनेश्वर, उडीसा)

भुवनेश्वर से 4 5 मील दूर एक पहाडी मे यह प्राचीन गुहा (गुफा) स्थित है। इस गुफा मे कलिंग नरेश खारवल का एक पाली अभिलेख उत्कीर्ण है जिसका ठीक ठीक निर्वचन अद्यावत एक समस्या बना हुआ है। फिर भी जो सूचना इस अभिलेख से मिलती है वह स्थूल रूप से यह है कि खारवल ने (जिसका समय ई० सन से पूर्व माना जाता है,) बहपतिमित (बृहस्पतिमित्र) को हराया, वह मगध के नद राजा से प्रथम जैन तीर्थकर की मूर्ति (जो नद पहले कलिंग से ले गया था) वापस लाया और उसने एक प्राचीन नहर का पुनर्निर्माण करवाया। अभिलेख मे कहा गया है कि यह नहर नद राजा के बाद तिवससत' तक काम मे न आई थी (पचम च दानि वसे नदराज तिवससत ')। मुख्य विवाद 'तिवससत शब्द पर है। रा० दा० बनर्जी के मत म इसका अर्थ 300 है किंतु अन्य विद्वानो के अनुसार इस 103 समझना चाहिए। निर्वचन भेद के कारण राजा खारवेल के समय मे 200 वर्षों का अतर पड जाता है। फिर भी पहला मत आजकल अधिक ग्राह्य माना जाता है। हाथीगुफा अभिलेख के अध्ययन म का० प्र० जायसवाल ने महत्त्वपूर्ण योग दिया।

हापुड (जिला मेरठ उ०प्र०)

दार राजपूत हरदत्त का बसाया हुआ है। यहा औरगजेब के समय की

एक मसजिद है जिस पर 1081 हिजरी=1703 ई० का अभिलेख खुदा है। कहा जाता है कि गयासुद्दीनतुगलक ने इस शहर में कुछ नागा लोगों को देखकर इसका नाम हयापुर रख दिया था। फ्यूरर (Fuhrer) ने हापुड़ का अब फला धान किया है किंतु सभवत 'हापुड़' हरपुर का बिगडा हुआ रूप है।

हामटा (जिला कागडा, हिमाचलप्रदेश)

जगतसुख से कुछ दूर स्थित है। इसका प्राचीन नाम हमगिरि कहा जाता है। अर्जुन गुफा जो पहाडी मे है, अर्जुन मे सबद्ध बताई जाती है। इसमे अर्जुन की मूर्ति देखी जा सकती है। सभव है उत्तर दिशा की दिग्विजययात्रा के प्रसग मे अर्जुन यहा आए हो। कागडा के अनेक देशो का उ होने विजित किया था। (दे० मायापुर, वामदेव, सुदामा, कुलूत, पचगण, देवप्रस्थ)

हारहूण

(पाठातर हारहूर)। महाभारत सभा० 32,12 के अनुसार इस जनपद को नकुल ने पश्चिम दिशा की दिग्विजय म विजित किया था—'द्वारपाल च तरसा वशे चक्रे महाद्युति, रामठान् हारहूणाश्च प्रतीच्याश्चैव ये नपा'। इस उल्लेख मे द्वारपाल सभवत खैबर और रमठ गजनी (अफगानिस्तान) है। हारहूण या हारहूर को वा० श० अग्रवाल ने अफगानिस्तान की नदी अरगदा वीन माना है जो इस देश के दक्षिण पश्चिमी भाग म बहती है। यदि यह अभिमान ठीक है तो इस प्रसग मे हारहूण का इस नदी का तटवर्ती प्रदेश समझा जा सकता है (दे० बृहत्संहिता 14,33)। सभव है इस स्थान का हूणो से सबध हो।

हारावती

भूतपूर्व कोटा बूदी (राजस्थान) रियासत का सयुक्त नाम। हारावती का नामकरण हारसिंह के नाम पर हुआ था जिन्होने इस राज्य की नीव डाली थी। इन्ही के नाम पर हारावती के शासक हाडा कहलाते थे।

हारीत आश्रम

उदयपुर (राजस्थान) से 6 मील दूर एकलिंग नामक स्थान। कहा जाता है कि यहा हारीत सहिता के प्रणेता महर्षि हारीत का आश्रम था।

हालार

सौराष्ट्र का उत्तर पश्चिमी भाग। (दे० सौराष्ट्र)

हालेबिड (मैसूर)

होयसल वश की राजधानी द्वारसमुद्र का वर्तमान नाम (दे० द्वारसमुद्र)। हालेबिड के वर्तमान मदिरों मे हायसलेश्वर का प्राचीन मदिर [illegible]

संभवत 1140 ई० में यह मंदिर बनना प्रारंभ हुआ था। वेलूर के मंदिर की भांति ही इसकी भित्ति पर चतुर्दिक् सात लंबी पंक्तियों में अद्भुत मूर्तिकारी की गई है। इन पंक्तियों के ऊपर देवताओं की अनेक अकेली मूर्तियां भी हैं। मूर्तिकारी में तत्कालीन भारतीय जीवन के अनेक कलापूर्ण चित्र जीवित हो उठे हैं। राजा और प्रजा के सामान्य दैनिक जीवन की सुंदर झांकियां यहां देखी जा सकती हैं। अश्वारोही पुरुष, किसी नवयौवना का दर्पणादि प्रसाधन सामग्री से विभूषित शृंगार कक्ष, पशुपक्षियों तथा फूल-पौधों से सुशोभित उद्यान इत्यादि के मूर्ति चित्र यहां के कलाकारों की अविस्मरणीय रचनाएं हैं। इनमें मानवीय गुणों से समन्वित जिस उच्चकोटि की मूर्तिकला का सौंदर्य प्रदर्शित है वह शायद वेलूर के अतिरिक्त अन्यत्र दुर्लभ है। होयसलेश्वर का मंदिर ताराकार आधार पर बना है। इसकी ऊंचाई 160 फुट और चौडाई 122 फुट है। कहा जाता है कि होयसलनरेश विष्णुवर्धन ने इसको बनवाना प्रारंभ किया था किंतु 100 वर्ष तक काम होने के पश्चात 1240 ई० में भी यह पूरा न हो सका था। यह मंदिर शिखर रहित है। विष्णुवर्धन पहले जैन संप्रदाय का अनुयायी था किंतु रामानुजाचार्य के प्रभाव से 1117 ई० में उसने वैष्णवधर्म अंगीकार कर लिया था। हालेबिड का दूसरा मंदिर केदारेश्वर शिव का है जो अब जीर्ण शीर्ण हो गया है। यह चालुक्य वास्तुशैली में निर्मित है। इसका आधार भी ताराकार है। प्राचीन समय में इस मंदिर की गणना चालुक्य वास्तुकला के सर्वोत्कृष्ट उदाहरणों में की जाती थी। हालेबिड जैनों का भी विख्यात तीर्थ है। 1133 ई० में बोप्पा ने यहां अपने पिता गंगराज की स्मृति में 23 वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का मंदिर बनवाया था। इसमें तीर्थंकर की 14 फुट ऊंची प्रतिमा है। इस मंदिर के 14 स्तंभ कसौटी पत्थर के बने हैं। एक अन्य मंदिर में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की मूर्ति है। इसे 1138 ई० में हुगडे मल्लिमय्या ने बनवाया था। तृतीय जैन मंदिर 1204 ई० का है जिसमें भगवान शांतिनाथ की 14 फुट ऊंची मूर्ति प्रतिष्ठित है। कहा जाता है कि किसी समय हालेबिड में 700 जैन मंदिर थे।

हास्तिनपुर दे० हस्तिनापुर

हिंगलाजगढ़ (म० प्र०)

पूर्वमध्यकालीन भवनों के अवशेषों के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है।

हिंगुल

बिलोचिस्तान के प्रदेश का एक प्राचीन भारतीय नाम। यह प्रदेश हींग के उत्पादन के लिए प्राचीन समय से ही प्रसिद्ध है। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ

मे हिंगुल निवासी भेंट लेकर उपस्थित हुए थे (महा० सभा० 51)। यह स्थान सती के 52 पीठो मे से है।

हिंगोली (जिला परभणी, महाराष्ट्र)

लार्ड बैंटिक के शासनकाल मे(1833 ई०) ठगी की प्रथा के उत्सादनार्थ जो महाअभियान आरम्भ किया गया था उसका आरभ इसी स्थान से हुआ था। हिंगोली तालुके म कई स्थानो पर नवपाषाणयुगीन प्रस्तर उपकरण तथा हथियार प्राप्त हुए हैं।

हिंडोन (जिला मेरठ, उ० प्र०)

हिंडान नदी मेरठ जिले मे बहती है। इसका प्राचीन नाम हरनदी कहा जाता है। हाल ही म मेरठ बागपत सडक पर इस नदी के तट के निकटवर्ती क्षेत्र मे अनेक प्राचीन अवशेष मिले है।

हिंदु दे० इदु, सिंधु (1)

हिद्दा दे० अस्थि

हिमकूट = हिमवान = हिमालय

हिमवान = हिमालय

भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित ससार की सर्वोच्च पर्वत शृखला। वास्तव मे वैदिक काल से ही हिमवान् भारतीय सस्कृति का प्रेरणा स्रोत रहा है। ऋग्वेद मे हिमवान शब्द का बहुवचन मे (हिमवन्त) प्रयोग किया गया है जिससे हिमालय की बृहत पर्वत शृखला का बोध होता है। हिमालय के मूजवत शिखर का भी ऋग्वेद मे उल्लेख है। अथर्ववेद म दो अन्य शिखरो का वर्णन है—त्रिककुद और नावप्रभ्रशन 19, 39, 8। वाल्मीकि रामायण मे गगा को हिमवान की ज्येष्ठ दुहिता कहा गया है, 'गगा हिमवतो ज्येष्ठा दुहिता पुरुषर्षभ' बाल० 41, 18, 'तदा हैमवती ज्येष्ठा सर्वलोक नमस्कृता तदा सातिमहद्रूप कृत्वावेग च दु सहम' बाल० 43, 4। वाल्मीकि को हिमवान् पर्वत के जगल मे निवास करने वाली विविध जातियो का भी ज्ञान था 'काम्बोजयवनाश्चैव शकानापत्तनानिच, अन्वीक्ष्य वरदाश्चैव हिमवन्त विचिन्वथ' किष्किधा० 43 12। महाभारत, वनपर्व मे पाडवो की हिमालय यात्रा का बडा मनोरम वर्णन है। इसके कैलास, मैनाक तथा गधमादन नामक शिखरो की कठोर यात्रा पाडवो ने की थी, 'अवेक्षमाण कैलास मैनाक चैव पर्वतम, गधमादनपादाश्च श्वेत चापि शिलोच्चयम। उपर्युपरि शैलस्य बह्वीश्च सरित शिवा, पृष्ठ हिमवत पुण्य ययौ सप्तदशेऽहनि' वन०, 158, 1 पाडव अतिम समय म हिमालय पर गलने के लिए चले गए थे तथा उनका

भी शतश्रृंग नामक हिमालय के शिखर पर ही हुआ था। हिमालयपर्वत में बसे हुए अनेक तीर्थों का वर्णन महाभारत में है। वास्तव में इस महाकाव्य के अध्ययन से महाभारतकार की हिमालय के प्रति अगाध आस्था का बोध होता है। कालिदास का भी हिमालय से अद्भुत प्रेम था। कुमारसंभव के प्रथम सर्ग में नगाधिराज हिमालय का सुंदर काव्यमय वर्णन है। इसमें हिमालय को पृथ्वी का मानदण्ड कहा है—'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य, स्थितः पृथिव्या इव मानदंडः' कुमारसंभव 1, 1। इस सर्ग में कालिदास ने हिमालय की अनन्तरत्नप्रभवता, अप्सराओं के अलंकरण-प्रसाधन में सहायक रंगीन बादल, पर्वत के क्रोड़ में संचरणशील मेघों की छाया, हिमाचलवासी किरातों द्वारा गजमुक्ताओं के सहारे सिंह मार्ग का अन्वेषण, विद्याधर-सुंदरियों का प्रणयपत्रलेखन, कीचक वंशों में वायु का वेणुवादन, देवदारु वृक्षों के क्षीर से सुगंधित शिखर, मणिप्रदीप्त गिरि गुहाएँ, किन्नरियों की मंथरगति, पर्वत गुहा में छिपा हुआ अंधकार, चंद्रकिरणों के समान धवलपुच्छ वाली चमरियां और मृगान्वेषी किरात—इन सभी दृश्यों और घटनाओं के बड़े ही मनोरम और यथार्थ चित्र खींचे हैं। मेघदूत में कालिदास ने हिमालय को प्रालेयाद्रि ('प्रालेयाद्रेरुपतटमतिक्रम्य तांस्तान् विशेषान्' पूर्वमेघ 59) तथा गंगा का 'प्रभव' तथा तुषारगौर पर्वत माना है—'आसीनानां सुरभितशिलं नाभिगंधैर्मृगाणां तस्या एव प्रभवमचलं प्राप्य गौरं तुषारैः' पूर्वमेघ, 54। विष्णुपुराण में शतद्रु, चिनाब आदि नदियां हिमालय से संभूत कही गई है, 'शतद्रूचन्द्रभागाद्या हिमवत्पादनिर्गताः' विष्णु० 2 3 10। अन्य पुराणों में भी हिमालय के विषय में असंख्य उल्लेख हैं। हिमवान् नाम वैदिक है तथा सर्वप्राचीन प्रतीत होता है। हिमालय नाम परवर्ती काल में प्रचलित था। कालिदास ने उसका प्रयोग किया है (दे० ऊपर 'हिमालयो नाम नगाधिराज')। जैन ग्रंथ जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति में हिमवान की जंबूद्वीप के छः वर्षपर्वतों में गणना की गई है और इस पर्वतमाला के महाहिमवत और चुल्लहिमवत नाम के दो भाग बताए गए हैं। महाहिमवत पूर्वसमुद्र (बंगाल की खाड़ी) तक फैला हुआ है और चुल्लहिमवत पश्चिम और दक्षिण की ओर वर्षधर पर्वत के नीचे वाले सागर (अरब सागर) तक विस्तृत है। इस ग्रंथ में गंगा और सिंधु नदियों का उद्गम चुल्लहिमालय में स्थित सरोवरों में माना गया है। महाहिमवत के 8 और चुल्ल के 11 शिखरों का उल्लेख इस जैन ग्रंथ में है।

हिमाचल=हिमालय

हिमालय दे० हिमवान्

हिरण्मय

महाभारत के भूगोल के अनुसार जम्बूद्वीप का एक विभाग—'दक्षिणेन तु नीलस्य निषधस्योत्तरेणतु वर्ष हिरण्मय यत्र हैरण्वती नदी। यत्र चाय महाराज पक्षिराट पतगोत्तम, यक्षानुगा महाराज धनिन प्रियदर्शना। महाबलास्तत्र जना राजन् मुदितमानसा, एकादशसहस्राणि वर्षाणा ते जनाधिप, आयु प्रमाण जीवन्ति शतानि दश पच च, श्रृगाणि च विचित्राणि त्रीण्येव मनुजाधिप। एक मणिमय तत्र तथैक रौक्ममद्भुतम् सर्वरत्नमय चैक भवनरुपशोभितम तत्र स्वय प्रभादेवी नित्य वसति शाडिली' महा० भीष्म० 9, 5 6 7 8 9 10। विष्णुपुराण 2, 2, 13 म हिरण्मय को रम्यक के उत्तर और उत्तरकुरु के दक्षिण मे बताया गया है—'रम्यकचोत्तर वर्ष तस्यवानु हिरण्मयम, उत्तरा कुरव श्चैव तथा वै भारत तथा'। इस प्रकार इसकी स्थिति साइबेरिया के दक्षिण भाग या मगोलिया के परिवर्ती प्रदेश म मानी जा सकती है।

हिरण्यकवर्ष

महाभारत सभापर्व, 28 दाक्षिणात्यपाठ के अनुसार अपनी उत्तर दिशा की दिग्विजय यात्रा के प्रसग म अर्जुन हिरण्यकवर्ष पहुचे थे। यह रम्यकवर्ष के उत्तर मे स्थित था जिससे यह भीष्म० 9 म वर्णित हिरण्मयवर्ष का ही पर्याय जान पडता है—'सश्वेत पर्वत राजन समतिक्रम्य पाडव, वर्ष हिरण्यक नाम विवेशाथ महीपते। स तु देशेषु रम्येषु तु तत्रोपचक्रमे, मध्ये प्रासादवृ देषु नक्षत्राणा शशी यथा। महापथेषु राजेद्रसर्वतोया तमर्जुनम प्रासादवरश्रृगस्था, परया वीरशोभया, ददृशुस्ता स्त्रिय सर्वा पार्थमात्मयशस्करम'।

हिरण्यपर्वत

मुगेर का एक प्राचीन नाम जिसका उल्लेख युवानच्वाग ने किया है।

हिरण्यपुर

महाभारत वन० 173 म दानवो के हिरण्यपुर नामक नगर का उल्लेख है। यहा कालकेय तथा पौलोम नामक दानवो का निवास माना गया है—'हिरण्यपुरमित्येव ख्यायते नगर महत रक्षित कालकेयैश्च पौलोमैश्च महासुरै' वन० 173, 13। आगे, वन० 173, 26 27 म कहा गया है कि सूर्य के समान प्रकाशित होने वाला दैत्यो का आकाशचारी नगर उनकी इच्छा के अनुसार चलने वाला था और दैत्य लोग वरदान के प्रभाव से उसे सुखपूर्वक आकाश मे धारण करते थे—'तत पुर खचर दिव्य कामग सूर्यप्रभम दैतेयैर्वरदानेन धार्यते स्म यथासुखम'। यह दिव्य नगर कभी पृथ्वी पर आता तो कभी पाताल म चला जाता, कभी ऊपर उडता, कभी तिरछी दिशाओ मे चलता और कभी

शीघ्र ही जल मे डूब जाता था, 'अ नभूमौ निपतति पुनश्च प्रतिष्ठ्त, पुनस्तियक प्रयात्यागु पुनरप्सु निमज्जति'। यहा के निवासी दानवो का वध अर्जुन ने किया था। महाभारत के अनुसार यह नगर समुद्र के पार स्थित था। पाताल देश के निवातकवच नामक दैत्यो को हराकर लौटते समय अजुन यहा आए थे (वन० 173)। आग हिरण्यपुर का उल्लेख महाभारत उद्योग० 100 1 2 3 म इस प्रकार है 'हिरण्यपुरमित्येतत ख्यात पुरवर महत, दत्याना दानवाना च मायाशतविचारिणाम, अनल्पेन प्रयत्नेन निर्मित विश्वकमणा, मयेन मनसा सृष्ट पातालतलमाश्रितम। अत्र मायासहस्राणि विकुर्वाणा महौजस दानवा निवसन्ति स्म शूरा दत्तवरा पुरा'। इसी प्रसग (उद्योग 100 9 10-11 12 13 14 15) म हिरण्यपुर का सविस्तर वणन है—'पश्य वेश्मानि रौक्माणि मातले राजतानि च, कमणा विधियुक्तेन युक्तान्युपगतानि च। वैदूय मणिचित्राणि प्रवालरुचिराणि च, अर्कस्फटिकशुभ्राणि वज्रसारोज्ज्वलानि च। पार्थिवानीव चाभान्ति पद्मरागमयानि च शैलानीव च दृश्यन्त दारवाणीव चाप्युत। सूयरूपाणि चाभान्ति दीप्ताग्निसदृशानि च मणिजालविचित्राणि प्राशूनि निबिडानि च। नैतानि शक्य निर्देष्टु रूपतोद्रव्यतस्तथा गुणतश्चैव सिद्धानि प्रमाणगुणवन्ति च। आक्रीडान पश्यदैत्यानातथव शयनान्युत। रत्नवन्ति महार्हाणि भाजना यासनानि च। जलदाभास्तथाशैलास्तोयप्रस्रवणानि च कामपुष्पफलाश्चापि पादपान कामचारिण'। श्लोक 1 2 3 म सूचित होता है कि यह नगर मयदानव द्वारा निर्मित किया गया था। यह सभव है कि हिरण्यपुर उत्तरी अमेरिका मे स्थित वतमान मेक्सिको (Mexico) की प्राचीन 'माया' जाति का कोई नगर रहा हो। दो तथ्य यहा इस विषय म विशेष रूप से विचारणीय है। हिरण्यपुर को पाताल देश म स्थित बताया गया है जो अमरिका ही जान पडता है क्योकि पृथ्वी पर अमेरिका भारत के सवथा ही नीचे या दूसरी ओर (पश्चिमी गोलाध) म है। दूसरी बात यह है कि हिरण्यपुर को मय दानव द्वारा निर्मित बताया गया है और यहा के निवासियो को सहस्रो मायाओ (मायासहस्राणि') [illegible] वाल लोगो [illegible] रूप म वणन है। यह बात विचारणीय है कि [illegible] नाम माया' था, तथा महाभारत म वर्णि[illegible] रहने वाले तथा अनक प्रकार की [illegible] साम्य दिखाई देता है। इस [illegible] सारगर्भित जान पडता [illegible] का है वह भी प्राचीन [illegible] गया है

कि अर्जुन ने इस देश में जाकर यहां के दानवों को पराजित किया था। भार तीयों का इस देश से सम्बंध इस बात से भी प्रकट होता है कि मानव शास्त्र के अनुसार मेक्सिको के प्राचीन निवासियों की जाति, उनकी रूपाकृति, उनके कितने ही धार्मिक रीति रिवाज (जैसे राम सीता का उत्सव) तथा उनकी भाषा के अनेक शब्द भारतीय जान पड़ते हैं। कुछ विद्वानों का तो यह निश्चित मत है कि माया लोग भारत से ही आकर मेक्सिको में बसे थे (दे० श्रीचमन लाल कृत 'हिंदू अमेरिका')।

हिरण्यवती

(1) =उज्जयिनी

(2) [दे० गंडकी, इरावती (2)] बुद्धचरित के वर्णन से यह नदी राप्ती जान पड़ती है।

(3) वामनपुराण में वर्णित कुरुक्षेत्र की एक नदी—'सरस्वती नदी पुण्या तथा वैतरणी नदी, आपगा च महापुण्या गंगा मंदाकिनी नदी मधुस्रवा अम्बु नदी, कौशिकी पापनाशिनी दृषद्वती महापुण्या तथा हिरण्यवती नदी' 39, 6-7 8।

हिरण्यवाह दे० शोण

हिरण्यबिंदु

इसे, महाभारत वन० 87, 20 में कालंजर (कालिंजर) की पहाड़ी पर स्थित एक तीर्थ माना गया है—'हिरण्यबिंदु कथितो गिरौ कालंजरे महान'।

हिरण्या

सौराष्ट्र की एक छोटी नदी जो प्रभासपाटन के निकट पूर्व की ओर बहती हुई पश्चिमी समुद्र में गिरती है। हिरण्या में कपिला और कपिला में प्राची सरस्वती नदी मिलती है। हिरण्या नदी के तट पर तीनों नदियों के संगम के निकट देहोत्सर्ग नामक तीर्थ स्थित है जिसके कुछ आगे चलकर यादवस्थली है जहां यादव परस्पर लड़भिड़ कर नष्ट हो गए थे। देहोत्सर्ग भगवान कृष्ण के स्वर्ग सिधारने का स्थान है। यहीं उन्हें जरा नामक व्याध ने मृग के धोखे से बाण द्वारा आहत किया था। (दे० प्रभास)

हिरण्याक्षी (गुजरात)

खेडब्रह्मा रेल स्टेशन के निकट यह नदी बहती है। निकट ही हिरण्याक्षी, कोसंबी और मीनाक्षी नदियों का संगम है जहां भृगु का प्राचीन आश्रम स्थित

कहा जाता है ।

हिसार (हरयाणा)

इस नगर को फिरोजशाह तुगलक (राज्याभिषेक 1351 ई०) ने बसाया था । कहा जाता है हिसार के पास के वनों में फीरोज आखेट के लिए प्रायः आया करता था और उसने यहां एक दुर्ग (हिसार=दुर्ग) बनवाया था जहां कालांतर में आबादी हो गई । हिसार के पास अग्रोहा नामक स्थान है जो प्राचीन अग्रोदक कहा जाता है । यह नगर महाभारतकालीन माना जाता है । अलक्षेंद्र के आक्रमण के समय (327 ई० पू०) इस स्थान पर आग्रेयगण का राज्य था । वा० शा० अग्रवाल का विचार है कि पाणिनि 4, 2, 54 में उल्लिखित 'एपुकारिभक्त' हिसार का ही प्राचीन नाम है । इसे कुरु प्रदेश का एक बड़ा नगर कहा गया है ।

हुजा दे० हंसकायन

हुगली (बंगाल)

कलकत्ते के निकट इस स्थान पर 1651 ई० में ईस्ट इंडिया कंपनी के अंग्रेजी व्यापारियों ने एक व्यापारिक कोठी बनाई थी । इस कार्य में जेबराइल बाऊटन नामक अंग्रेज सज्जन ने जो बंगाल के तत्कालीन मुगल सूबेदार का पारिवारिक चिकित्सक था, बहुत सहायता दी थी । 1658 में यह कोठी मद्रास के अधीन कर दी गई थी ।

हुच्चमल्लीगुडी (जिला बीजापुर, मैसूर)

चालुक्यकालीन मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है । मंदिर में मध्यस्थ गर्भगृह तथा उसके चतुर्दिक् संवृत प्रदक्षिणापथ है । मंदिर शिखरसहित है यद्यपि शिखर अविकसित अवस्था में है । अपनी विशिष्ट शैली के कारण इस मंदिर को उत्तरभारतीय गुप्तकालीन मंदिरों की परम्परा में माना जाता है । यह मंदिर लगभग 600 ई० का है । (दे० हेनरी कजिंस आर्कियालोजिकल सर्वे रिपोर्ट, 1907 8) ।

हुवाचकण्णिका (लंका)

महावंश, 34, 90 में उल्लिखित राहणप्रांत का एक भाग । यहां चूलनाग पर्वत विहार स्थित था ।

हुविनाहडगट्ट (जिला बिल्लारी, मैसूर)

एक मध्यकालीन मंदिर के लिए यह स्थान उल्लेखनीय है । मंदिर के

स्तभो की शिल्प कला तथा उन पर की हुई नक्काशी सराहनीय है।

हुष्कपुर

कनिष्क के उत्तराधिकारी हुविष्क या हुष्क (111 138 ई०) का बसाया हुआ नगर। उसकी स्थिति कश्मीर घाटी मे स्थित बारामूला के गिरिद्वार (दर्रे) के ठीक बाहर पश्चिम की ओर थी। उस काल में यह स्थान कश्मीर का पश्चिमी द्वार कहलाता था (दे० स्टाइन —राजतरगिणी 5, 168 171)। चीनी यात्री युवानच्वाग हुष्कपुर के विहार मे 631 ई० के लगभग पहुचा था। वह यहा कई दिन ठहरा था। विहार से वह नगर म भी गया था जहा उसने पाच सहस्र भिक्षु देखे थे। बारामला गिरिद्वार के निकट हुष्कपुर के खडहर और एक छोटा सा उष्कर नामक गाम जो हुष्कपुर का स्मारक है, स्थित हैं। उष्कूर म एक प्राचीन स्तूप के चिह्न देखे जा सकते हैं। उष्कूर, हुष्कपुर का ही अपभ्रश है।

हेमकूट

महाभारत के अनुसार हरिवर्ष के दक्षिण मे स्थित एक पर्वत। इस पर्वत को पार करने के पश्चात् अर्जुन अपनी दिग्विजय यात्रा के प्रसग मे हरिवर्ष पहुचे थे—'सरोमानसमासाद्यहाटकानभित प्रभु गधर्वरक्षित देशमजयत पाडवस्तत। हेमकूटमासाद्य न्यविशत् फाल्गुनस्तथा, त हृष्ट्वा राजेन्द्र समतिक्रम्य पाडव। हरिवर्ष विवेशाथ सैन्येन महता वृत' सभा० 28 5 तथा दाक्षिणात्य पाठ। इसमे हेमकूट तथा मानसरोवर का सान्निध्य भी सूचित होता है। वास्तव मे भीष्म० 6, 41 म तो हेमकूट का कैलास का पर्याय ही कहा गया है, 'हेमकूटस्तु सुमहान कैलासो नाम पर्वत', भीष्म० 6, 41। मत्स्यपुराण मे हेमकूट पर अप्सराओं का निवास बताया गया है। विष्णुपुराण 2, 2, 10 मे मेरुपर्वत के दक्षिण म हिमवान हेमकूट और निषध नामक पर्वतो की स्थिति बताई गई है—'हिमवान हेमकूटश्च निषधश्चास्य दक्षिणे। श्री चि० वि० वैद्य के मत मे हेमकूट पर्वत वर्तमान कराकोरम है किन्तु श्री एच० बी० त्रिवेदी के अनुसार हेमकूट पर्वतश्रेणी का विस्तार पश्चिम कश्मीर म है (इडियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली 12, पृ० 534 540)। किन्तु जैसा महाभारत के उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है हेमकूट कैलास या उसके निकट की हिमालय श्रेणी का ही नाम जान पडता है। जैन ग्रथ जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति मे हेमकूट को जबूद्वीप के छ वर्षपर्वतो मे से एक माना गया है।

हेमगर्भ

तमतिक्रम्य शैलेन्द्र हेमगर्भ महागिरिम तत सुदर्शननाम पर्वत गन्तुमर्हथ

वाल्मीकि रामा० किष्किंधा 43, 16। प्रसंग से यह पर्वत हेमकूट जान पड़ता है।

हेमगिरि

(1) दे० हामटा

(2) स्वर्णनिर्मित पर्वत अथवा हेमकूट। यह हिमालय का पर्याय भी हो सकता है, 'किंतेन हेमगिरिणा रजताद्रिणा वा' सुभाषित०।

हेमपर्वत=हेमशैल

(1) विष्णु० 2, 4 41 में उल्लिखित कुशद्वीप का एक पर्वत—'विद्रुमो हेमशैलश्च द्युतिमान् पुष्पवांस्तथा, कुशेशयोहरिश्चैव सप्तमो मंदराचल'। महाभारत, भीष्म० 12 9 10 में भी कुशद्वीप के सम्बन्ध में इस पर्वत का उल्लेख है—'कुशद्वीपतु राजेंद्र पर्वतो विद्रुमैश्चित सुधामा नाम दुधर्षो द्वितीयो हेमपर्वत'

(2)=हेमकूट

हैदराबाद

(1) (आ० प्र०) दक्षिण की भूतपूर्व रियासत तथा उसका मुख्य नगर। ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक प्राचीन न होते हुए भी पिछले दो सौ वर्षों से दक्षिण की राजनीति में इस नगर का प्रमुख भाग रहा है। काकतीयनरेश गणपति ने वर्तमान गोलकुंडा की पहाड़ी पर एक कच्चा किला बनवाया था। 14वीं शती में इस प्रदेश में मुसलमानों का अधिकार होने के पश्चात् बहमनी राज्य स्थापित हुआ। 1482 ई० में बहमनी राज्य के एक सूबेदार सुलतान कुलीकुतुबुलमुल्क ने इस कच्चे किले को पक्का बनवाकर गोलकुंडा में अपनी राजधानी बनवाई। कुतुबशाही वंश के पांचवें सुलतान कुलीकुतुबशाह ने, 1591 ई० में गोलकुंडा से अपनी राजधानी हटाकर नई राजधानी मूसी नदी के दक्षिणी तट पर बनाई जहां हैदराबाद स्थित है। राजधानी गोलकुंडा से हटाने का कारण था वहां की खराब जलवायु तथा जल की कमी। यह नया हराभरा तथा खुला स्थान सुलतान ने यों ही एक दिन वहां आखेट करते हुए पसंद कर लिया था। उसने इस नए नगर का नाम अपनी प्रेमिका भागमती के नाम पर भागनगर रखा। मूसी नदी के पास एक गांव चिचेलम, जहां भागमती रहती थी, नए नगर के भावी विकास का केंद्र बना। सुंदरी भागमती को कुतुबशाह ने बाद में हैदरमहल की उपाधि प्रदान की और तत्पश्चात भागनगर भी हैदराबाद कहलाने लगा। कुतुबशाह फारसी का अच्छा कवि था तथा स्वभाव से बड़ा उदार। अपनी प्रेमिका का स्मारक होने के कारण हैदराबाद को उसने बहुत सुंदरता से बसाया था। चिचेलम ग्राम के स्थान पर चारमीनार नामक भवन बनवाया

गया जिसके ऊपर एक हिंदू मंदिर स्थित था। गिरधारी प्रसाद द्वारा रचित हैदराबाद के इतिहास से सूचित होता है कि चारमीनार के ऊपर एक कलापूर्ण फव्वारा भी था। हैदराबाद के अनेक भवनों में खुदादाद नामक महल कुतुबशाह को बहुत प्रिय था। इसके विषय में उसने अपनी कविता में लिखा है कि यह महल स्वर्ग के समान ही सुंदर तथा सुघराई था। यहां उसकी बारह बेगम तथा प्रेमिकाएं रहती थीं। हैदराबाद का नक्शा त्रिकोण था। इसमें गोलकुंडा की सारी आबादी को लाकर बसाया गया था। नगर शीघ्र ही उन्नति करता चला गया। टॉवर्नियर नामक फ्रांसीसी यात्री ने, जो यहां, नगर के निर्माण के थोड़े ही समय पश्चात् आया था, लिखा है कि नगर को बहुत ही कलापूर्ण ढंग से बनाया तथा नियोजित किया गया था और उसकी सड़कें भी बहुत चौड़ी थीं। नगर में चार बाजारों का निर्माण किया गया था जिनके प्रवेश-द्वारों पर चार कमान नामक तोरण बनवाए गए थे। इनके दक्षिण की ओर चारमीनार स्थित है। इसका प्रयोजन अभी तक निश्चित नहीं किया जा सका है। 1597 98 में विशाल जामा मसजिद बनकर तैयार हुई। इसी समय में आस पास मूसी नदी का पुल, राजप्रासाद (जो पुरानी हवेली के पास था), गुलजार हौज, खुदादाद महल (जो दक्खन के सूबेदार इब्राहीमखां के समय में जलकर भस्म हो गया) और नदीमहल (जिसका पता अब नहीं मिलता) इत्यादि बने। हैदराबाद शीघ्र ही अपने सौंदर्य और वैभव के कारण जगत्प्रसिद्ध नगर हो गया। फारस के शाह के राजदूत तथा तहमास्पशाह का पुत्र यहां कई वर्षों तक रहते रहे। 1617 ई० में जहांगीर के दो राजदूत मीर-मक्की तथा मुंशी जादवराय यहां नियुक्त थे। हैदराबाद पर मुगल सम्राट औरंगजेब की बहुत दिनों से कुदृष्टि थी। उसने 1657 ई० में गोलकुंडा पर चढ़ाई करके किले को हस्तगत कर लिया और हैदराबाद का नगर भी उसके हाथ में आ गया। मुगल साम्राज्य की अवनति होने पर मुहम्मदशाह रंगीले के शासनकाल में दक्खन का सूबेदार निजामुलमुल्क आसफखां स्वतंत्र हो गया और 1724 ई० में उसने हैदराबाद की स्वतंत्र रियासत कायम कर ली। उन दिनों मराठों की बढ़ती हुई शक्ति के कारण निजाम की दशा अच्छी न थी, किंतु 18वीं शती के अंत में अंग्रेजों से 'सहायक संधि' करने के उपरांत निजाम अंग्रेजों के नियंत्रण में आ गया और उसकी रियासत की रक्षा स्वतंत्रता बेच कर हुई। हैदराबाद में कई ऐतिहासिक मंदिर भी स्थित हैं। इनमें श्याम-सिंह का मंदिर प्रसिद्ध है। इसे तृतीय निजाम सिकन्दरशाह के समय में उसके अश्वसेनापति श्यामसिंह ने बनवाया था। यह मंदिर बालाजी का है। इसके

लिए निजाम ने जागीर भी निश्चित की थी। इस मंदिर के द्वार पर अश्व प्रतिमाएं बनी हैं। हैदराबाद की रेजीडेंसी 1803 से 1808 ई० तक बनी थी। इसको कप्तान एचीलीज किरपैट्रिक (बाद में हशमतजंग बहादुर के नाम से प्रसिद्ध) ने बनवाया था। किरपैट्रिक ने अपनी मुसलमान बेगम खैरुन्निसा के लिए रेजीडेंसी के अंदर रंगमहल बनवाया था। हुसैन सागर झील जो 1½ मील लम्बी है, 1560 ई० के लगभग इब्राहीम कुली कुतुबशाह द्वारा बनवाई गई थी। पुराने समय में इस झील के तट पर दो सरायें थीं जिनमें परस्पर गूंज द्वारा बातचीत की जा सकती थी। विशाल मक्का मसजिद को गोलकुंडा के सुलतान मुहम्मद कुतुबशाह ने बनवाना प्रारम्भ किया था और यह औरंगजेब के समय में 1687 ई० में पूरी हुई थी। फ्रांसीसी सरदार रेमंड का मकबरा मुसरनगर की पहाड़ी पर है। निजाम की ओर से यह सरदार खुर्दा (कुदला) की लड़ाई में मराठों से लड़ा था। इस मकबरे के पास वेंकटेश्वर का अति प्राचीन मंदिर है। सिकंदराबाद, हैदराबाद के निकट फौजी छावनी है। 1806 ई० में अंग्रेजों की सहायक सेना प्रथम बार आकर यहां रहने लगी थी। सिकंदराबाद को सिकन्दरजाह तृतीय निजाम ने बसाया था। यहीं 19वीं शती में सर रोनल्ड रॉस ने मलेरिया के मच्छर की खोज की थी। (दे० गोलकुंडा)

(2) (सिंध पाकि०) कहा जाता है कि वर्तमान हैदराबाद के स्थान पर प्राचीन समय में पाटशिला नामक नगर बसा हुआ था। (दे० पाटशिला)

हैमवतपर्वत

जैन ग्रंथ जंबुद्वीपप्रज्ञप्ति (4, 80) में उल्लिखित महाहिमवतपर्वत का एक शिखर।

हैमवतवर्ष

पौराणिक भूगोल के अनुसार हेमकूट के दक्षिण में स्थित प्रदेश। यह हिमालय पर्वत माला से घिरा हुआ प्रदेश है जिसमें तिब्बत आदि स्थित हैं। यह हिमवान (हिमालय) के नाम पर ही प्रसिद्ध था।

हैमवती (नदी)

(1)=ऋषिकुल्या

(2)=रावी

(3)=सतलज (शतद्रु)

हैरण्यक वर्ष=हिरण्यक वर्ष

हैरण्वती

हिरण्मय वर्ष की नदी, 'दक्षिणेन तु नीलस्य निषधस्योत्तरेणतु वर्ष हिरण्मय

यत्र हैरण्वती नदी । यह साइबेरिया या मगोलिया की कोई नदी हो सकती है। (दे० हिरण्मय)

हैहय

खानदेश और दक्षिणी मालवा का भाग । यह कार्तवीर्यार्जुन का शासित प्रदेश था । माहिष्मती इस प्रदेश की राजधानी थी । (दे० माहिष्मती)

होडल

दिल्ली मथुरा रेल मार्ग पर दिल्ली से 53 मील दूर है । 1720 ई० मे दिल्ली के मुगल सम्राट मुहम्मदशाह रंगीले और सैयद अब्दुल्ला की सेनाओ मे इस स्थान के निकट युद्ध हुआ था । इस युद्ध मे भरतपुर का सस्थापक चूडामन जाट भी अब्दुल्ला की ओर से लडा था । अब्दुल्ला की सेना पूरी तरह नष्ट हो गई थी । अब्दुल्ला तथा उसके भाई हुसैन को परवर्ती मुगलकालीन इतिहास के लेखको ने नृपकर्ता कहा है क्योकि इन्होने दिल्ली के तख्त पर एक के बाद एक कई बादशाओ को मनचाहे ढग से बिठाकर राज्यशक्ति स्वय अपने हाथ मे रखी थी । भरतपुर के राजा सूरजमल ने होडलनिवासी चौधरी काशी की पुत्री से विवाह किया था जो आगे चलकर रानी किशोरी या हँसिया रानी कहलाई । रानी किशोरी का भरतपुर राज्य के इतिहास मे प्रमुख स्थान है । उसने भरतपुर को कई बार आकस्मिक राजनीतिक दुर्घटनाओ से बचाया था ।

होनहल्ली (लिंगसुगुर तालुका, जिला रायचुर, मैसूर)

यहा लोहा गलाने के प्राचीन कारखाना के अवशेष प्राप्त हुए हैं, जिसमे इस स्थान पर मध्यकाल मे लोहा गलाने तथा ढालने के उद्योग की विद्यमानता सिद्ध होती है ।

होमनाबाद (जिला बीदर, मैसूर)

यहा 19वी शती के पूर्वार्ध मे दाक्षिणात्य सत मानिकप्रभु का निवासस्थान माना जाता है । उन्होने सब धर्मों की एकता पर बहुत जोर दिया था और उनके शिष्य सभी मतो तथा जातियो मे पाये जाते थे । मानिक प्रभु का मठ होमनाबाद मे आज भी देखा जा सकता है । यहा उनके शिष्य सत की परम्परा को बनाए हुए हैं ।

होलकोंडा (जिला गुलबर्गा, मैसूर)

मध्यकाल मे निर्मित मध्य पाच सुंदर मकबरे यहाँ स्थित है किन्तु ये भवन किसके स्मारक हैं यह अभी तक अनिश्चित है ।

ह्रीपुरी

जैन सूत्रग्रंथ जंबुद्वीप प्रशप्ति में उल्लिखित महाहिमवत का एक शिखर।

ह्लादिनी

वाल्मीकि० रामा० अयो० 71, 2 के अनुसार केकय से अयोध्या आते समय भरत ने इस नदी को पार किया था—'ह्लादिनी दूरपारा च प्रत्यक्स्रोत स्तरंगिणीम्, शतद्रुमतरच्छ्रीमान् नदीमिक्ष्वाकुनंदन'। यह नदी सतलज के पूर्व में बहती थी।

[illegible] की रचना [illegible]
[illegible] है।
[illegible] है।

सदर्भ-ग्रथ

Ancient Geography of India—A Cunningham

Geographical Dictionary of Ancient India—N L Dey

Historical Geography of Ancient India—B C Law

Geographical Essays—B C Law

Vedic Index—Macdonald

Imperial Gazetter of India

District Gazetters

Epigraphia Indica

Corpus Inscriptionum Indicarum

South Indian Inscriptions

Inscriptions—Luders

The Historical Inscriptions of Southern India—Madras University 1932

Annual Reports of Archaeological Survey of India

Reports of Archaeological Survey in different States

Ethnic Settlements of Ancient India—S B Chaudhuri

An Ancient Chinese Dictionary of Indian Geographical names translated and Published by International Academy of Indian Culture, Lahore

Here & There in India—Parkhurst

Encyclopaedia Brittanica

Cyclopaedia of India—Balfour

Sanskrit Dictionary—Wilson

Sanskrit English Dictionary—Monier Williams

Sanskrit English Dictionary—Apte
Upayana Parva—Dr Motichand
भारत के तीर्थ व नगर
तीर्थांक (कल्याण)
व्रजभूमि—रामनारायण मिश्र
मध्यभारत—गिरीन्द्र अवस्थी

प्रादेशिक

सार्थवाह—डॉ० मोतीचन्द
कालिदास का भारत—भ० श० उपाध्याय
पाणिनिकालीन भारतवर्ष – वा० श० अग्रवाल
भारत में आधुनिक पुरातत्व अन्वेषण
विश्वकोश—का० ना० प्र० सभा
मराठी ज्ञानकोश
Mohenjadaro—J Marshall
Guide Books & Monographs on Ajanta, Ellora, Elephanta, Ahichhatra, Rajgir, Vidisha, Hastinapur, Taxila, Sanchi, Khajuraho, Kanouj, Mathura, Sarnath, Nalanda, Delhi, Agra Fatehpur Sikri, etc etc (Archaeological Departments of Government of India and State governments)
'See India' series—Bhopal, Gwalior, Mysore, etc etc (Government of India)
Descriptive notes on Places on Oudh Tirhut Railway (issued by former O T Railway)
Buddhist Shrines of India (Government of India)
Somnath, the Shrine Eternal—K M Munshi
Somnath and other Medieval temples in Kathiawad—Cousens
History and Legend in Hydrabad
Highlands of Central India – Forsythe
A Guide to Mathura Museum
A Guide to the Sarnath Museum
History of Orissa—Mehtab
Lists of Ancient Monuments of Bengal, 1895

Notes on the District of Gaya—Grierson
Notes on the Sangal Tibba (News Press—Lahore 1906)
Annals and Antiquities of Rajasthan—Todd
राजपूताने का इतिहास—गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
दिल्ली की कहानी—डॉ० परमात्मा शरण
युगयुगा मे उत्तर प्रदेश—कृ० द० वाजपेयी
सयुक्त प्रात की पहाडी यात्राएँ
व्रज की कला—कृ० द० वाजपेयी
बुदलखड का सक्षिप्त इतिहास – गो० ला० तिवारी
मध्यप्रदेश का कलात्मक वैभव—भारतीय हिन्दी परिषद, प्रयाग
मध्यभारत (भूतपूव मध्यभारत शासन का प्रकाशन)
त्रिपुरी का इतिहास—व्योहार राजेन्द्र सिंह
जबलपुर-ज्योति
खडहरो के वैभव—मुनि कातिसागर
बेलूर-दीपिका

अनुसधान विषयक तथा अन्यान्य पत्र पत्रिकाएँ

Journal of the Royal Historical Society
Journal of the Asiatic Society of Bengal
Journal of U P Historical Society
Journal of the Bihar and Orissa Research Society
Annals of the Bhandarkar Research Institute, Poona
Bulletin of Deccan College Research Society, Poona
Indian Antiquary
Indian Culture
Proceedings of the History Congress
Proceedings of Oriental Congress
Proceedings of Indian Science Congress (Archaeology Section)
नागरी प्रचारिणी सभा पत्रिका
Modern Review
Calcutta Review
धर्मयुग, कादम्बिनी, सरस्वती आदि

साहित्य

वैदिक एवं सामान्य संस्कृत-साहित्य

ऋग्वेद
अथर्ववेद
ब्राह्मण-ग्रंथ (ऐतरेय, शतपथ, पंचविंश, गोपथ आदि)
उपनिषद (छांदोग्य, कौषीतकी आदि)
वाजसेनीय संहिता
निरुक्त—यास्क
अष्टाध्यायी—पाणिनि
महाभाष्य—पतंजलि
गार्गी-संहिता
बृहत संहिता—वराहमिहिर
कौटिल्य अर्थशास्त्र
बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र
मनुस्मृति
सिद्धांत शिरोमणि—(कोलब्रुक की टीका)
वाल्मीकि रामायण, टीका—चंद्रशेखर शास्त्री, काशी, संवत् 1988
महाभारत (गीता प्रेस)
पुराण—(विष्णु, श्रीमद्भागवत, पद्म, स्कंद, अग्नि, ब्रह्माण्ड, वायु, शिव, वराह, मत्स्य, ब्रह्म, भविष्य, मार्कण्डेय, हरिवंश आदि)
रघुवंश—कालिदास
अभिज्ञान शाकुंतल—कालिदास
कुमारसंभव—कालिदास
मालविकाग्निमित्र—कालिदास
हर्षचरित—बाण
कादम्बरी—बाण
कर्पूरमंजरी—राजशेखर
पवनदूत—धोयी कवि
पुरुषपरीक्षा
रंभामंजरी नाटक
दशकुमारचरित—दंडी
शिशुपालवध—माघ

स्वप्नवासवदत्ता—भास
कथासरित्सागर—सोमदेव
वररुचि का काव्य
उत्तररामचरित—भवभूति
महावीरचरित—भवभूति
मालतीमाधव—भवभूति
राजतरंगिणी—कल्हण
विक्रमांकदेवचरित—बिल्हण
[illegible]

बौद्ध-साहित्य

बुद्धचरित—अश्वघोष
सौंदरानन्द—अश्वघोष
महावंश
दीपवंश
दिव्यावदान
बोधिसत्वावदान कल्पलता
जातककथाएँ (पाली)
मज्झिमनिकाय
अंगुत्तरनिकाय—(R Morris)
मिलिन्दपन्ह—(Trechner)
धम्मपद टीका—(Harvard Oriental Series)
आयरंगसुत्त
अभिधानदीपिका
संगीति सुत्तन्त
निर्वाणकाड
जातकमाला—आर्यशूर

जैन-साहित्य

निर्वाणकाड
प्रज्ञापना सूत्र
पुरातन प्रबोध संग्रह

जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति
विविधतीर्थकल्प
तीर्थमाला चत्यवदन
सूत्रकृताग
भगवतीसूत्र
प्रवचनसारद्धार
उत्तराध्ययनसूत्र
कल्पसूत्र
कथाकोशप्रकरण – जिनश्वर सूरि
धर्मोपदेश माला
वसुदेवहिंडि
अटठकथा
एकादशअगादि
Ancient Jain Hyms—Charlotte Krause (1952)
Some Jain Canonical Sutras—B C Law

प्राकृत-साहित्य

गौडवहो

हिन्दी साहित्य

रामचरितमानस तुलसीदास
पदमावत — जायसी
रामचंद्रिका —केशवदास
शिवराजभूषण — भूषण
शिवाबावनी — भूषण
छत्रसालदशक—भूषण
माधवानलकामकदला
गढकुडार—व० ला० वर्मा
मृगनयनी—व० ला० वर्मा

बंगाली-साहित्य

श्रीचैतन्यचरितामृत—(हिंदी अनुवाद—गीता प्रेस)

फारसी-अरबी साहित्य

अलउतवी का महमूद गजनी विषयक विवरण
रेह्ला - इब्नबतूता।
किताबुलहिंद—अलबेरूनी
आइने अकबरी—अबुलफजल
तारीखे फरिश्ता—फरिश्ता
History of India as told by her own Historians—Elliot and Dowson

विविध

Political History of Ancient India—Raichaudhuri
History of Ancient India—R S Tripathi
Early History of India—V Smith
Cambridge History of India
Dynasties of the Kali Age—Pargiter
Chronology of the Purans—Pargiter
Ancient Indian Colonies in the Far East—R C Majumdar
Ancient India as described by Megasthenese & Arrian—Mccrindle
The Periplus of the Erythraean Sea (Schoff)
Geography—Ptolemy
Travels of Fa Hian—Beal
On Yuanchwang's Travels in India—Watters
Asoka—D R Bhandarkar
Asoka—R K Mookerji
Hindu Civilization—R K Mookerji
Harsha—R K Mookerji
Harsha—G C Chatterji
The Age of the Imperial Guptas—R D Banerji
Some Ksatriya Tribes—B K Law
Buddhaghosh—B C Law
Buddhist India—Rhys Davids
Indian Architecture—Fergusson
History of Indian and Indonesian Art—A K Coomaraswami
Chalukyan Architecture of Canarese Districts—Cousens
History of Medieval India—Ishwari Prasad
Akbar the Great Mughal—V Smith

Jahangir—Beni Prasad
Shahjahan—Banarsi Prasad Saksena
Aurangzeb—J N Sarkar
Fall of the Mughal Empire—J N Sarkar
Later Mughals - Irvine
Story of my Life - Meadows Taylor
Highlands of Central India—Forsythe
The Indian Borderland—Holdisch
A Forgotten Empire—Sewell
History of Bengali Literature—D C Sen
A History of Sanskrit Literature—Macdonald
Gupta Coins—J Allen
Travels into Bokhara—Alexander Burns, 1835
Hindu America—Chaman Lal
Mahabharata—C V Vaidya

टिप्पणी—(1) ग्रंथनिर्देश की प्रक्रिया का उदाहरण —
वाल्मीकि रामायण (वाल्मीकि० कांड, सर्ग, श्लोक)।
महाभारत (महा० पर्व, अध्याय, श्लोक)।
विष्णुपुराण (विष्णु० अंश, अध्याय, श्लोक)।
श्रीमद्भागवत (श्रीमद्भागवत स्कंध, अध्याय, श्लोक)।
रघुवंश (रघु० सर्ग श्लोक)।
इसी प्रकार अन्य।

निर्दिष्ट ग्रंथ में कांड, पर्व, स्कंध आदि को अध्याय आदि से कॉमा (,) द्वारा तथा श्लोकों या छंदों को परस्पर हाइफन (-) द्वारा पृथक किया गया है।

(2) ई० = ईसवी।
ई० पू० = ईसवी पूर्व।
वि० सं० = विक्रम संवत।
आ०प्र० = आंध्र प्रदेश।
उ०प्र० = उत्तर प्रदेश।
म०प्र० — मध्य प्रदेश।
मद्रास राज्य अब तमिलनाडु कहलाता है।